पं० श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

मनस्विता, प्रखरता और तेजस्विता

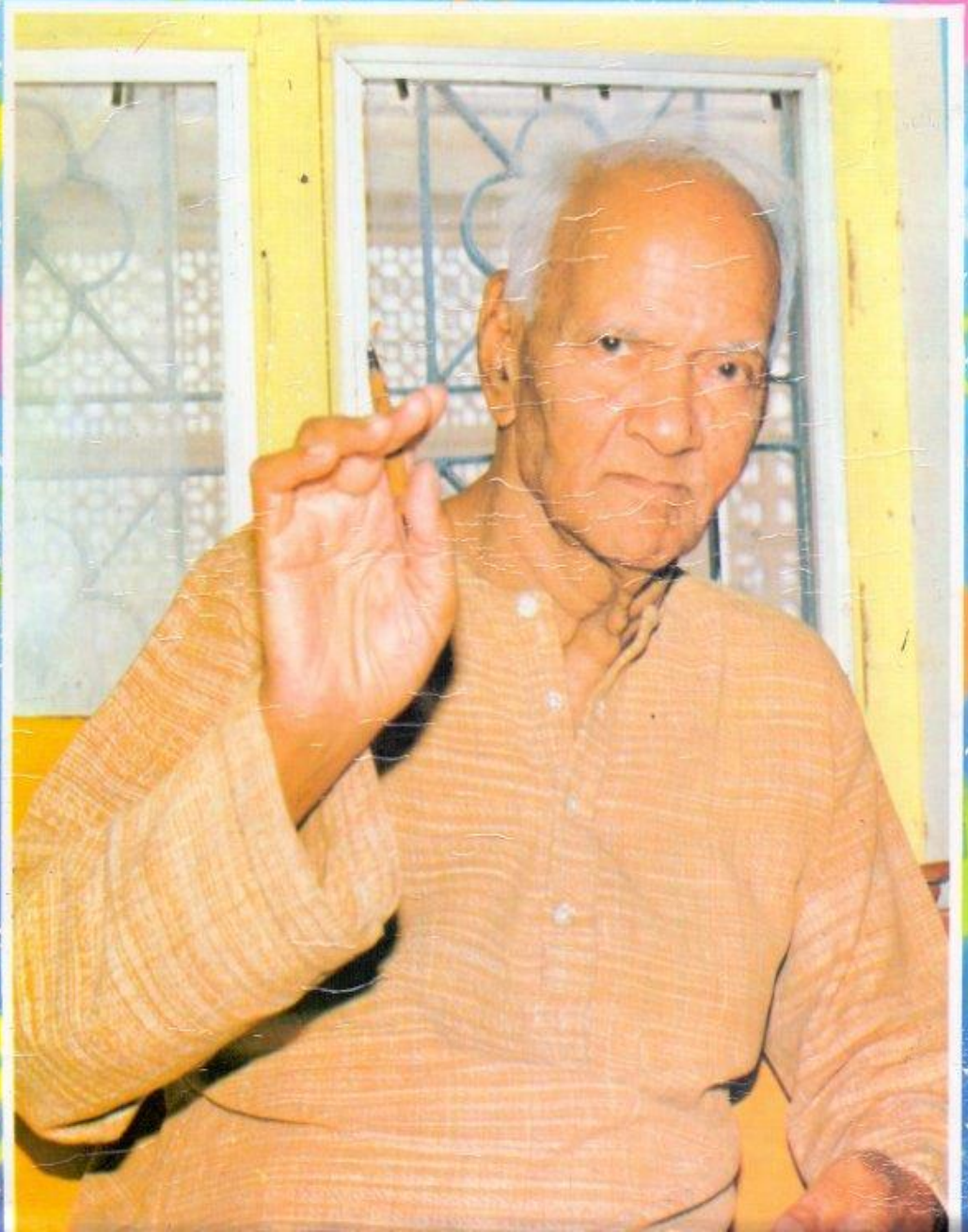

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनस्विता, प्रखरता और तेजस्विता

प्रकाशक :

अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकाशक
अखण्ड ज्योति संस्थान
मथुरा-२८१ ००३

© सर्वाधिकार सुरक्षित

द्वितीय संस्करण १९९८

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

मूल्य १२५)

मुद्रक
जनजागरण प्रेस, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

समर्पणम्

ॐ वन्दे भगवतीं देवीं श्रीरामञ्च जगद्गुरुम् ।
पादपद्मे तयोः श्रित्वा प्रणमामि मुहुर्मुहुः ।।

मातृवत् लालयित्री च पितृवत् मार्गदर्शिका ।
नमोऽस्तु गुरुसत्तायै श्रद्धा-प्रज्ञा युता च या ।।

भगवत्याः जगन्मातुः, श्रीरामस्य जगद्गुरोः ।
पादुकायुगले वन्दे, श्रद्धाप्रज्ञास्वरूपयोः ।।

नमोऽस्तु गुरवे तस्मै गायत्रीरूपिणे सदा ।
यस्य वागमृतं हन्ति विषं संसारसंज्ञकम् ।।

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

असम्भवं सम्भवकर्तुमुद्यतं प्रचण्डझञ्झावृतिरोधसक्षमम् ।
युगस्य निर्माणकृते समुद्यतं परं महाकालममुं नमाम्यहम् ।।

त्वदीयं वस्तु गोविन्द ! तुभ्यमेव समर्पये ।

विराट गायत्री परिवार एवं उसके संस्थापक-संरक्षक एक संक्षिप्त परिचय

इतिहास में कभी-कभी ऐसा होता है कि अवतारी सत्ता एक साथ बहुआयामी रूपों में प्रकट होती है एवं करोड़ों ही नहीं, पूरी वसुधा के उद्धार-चेतनात्मक धरातल पर सबके मनों का नये सिरे से निर्माण करने आती है। परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य को एक ऐसी ही सत्ता के रूप में देखा जा सकता है जो युगों-युगों में गुरु एवं अवतारी सत्ता दोनों ही रूपों में हम सबके बीच प्रकट हुई, अस्सी वर्ष का जीवन जीकर एक विराट् ज्योति प्रज्ज्वलित कर उस सूक्ष्म ऋषि चेतना के साथ एकाकार हो गयी जो आज युग परिवर्तन को सन्निकट लाने को प्रतिबद्ध है। परमवंदनीया माताजी शक्ति का रूप थीं जो कभी महाकाली, कभी माँ जानकी, कभी माँ शारदा एवं कभी माँ भगवती के रूप में शिव की कल्याणकारी सत्ता का साथ देने आती रही हैं। उनने भी सूक्ष्म में विलीन हो स्वयं को अपने आराध्य के साथ एकाकार कर ज्योतिपुरुष का एक अंग स्वयं को बना लिया। आज दोनों सशरीर हमारे बीच नहीं हैं किन्तु, नूतन सृष्टि कैसे ढाली गयी, कैसे मानव गढ़ने का साँचा बनाया गया, इसे शान्तिकुंज, ब्रह्मवर्चस, गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान एवं युगतीर्थ आँवलखेड़ा जैसी स्थापनाओं तथा संकल्पित सृजन सेनानीगणों के वीरभद्रों की करोड़ों से अधिक की संख्या के रूप में देखा जा सकता है।

परमपूज्य गुरुदेव का वास्तविक मूल्यांकन तो कुछ वर्षों बाद इतिहासविद, मिथक लिखने वाले करेंगे किन्तु, यदि उनको आज भी साक्षात कोई देखना या उनसे साक्षात्कार करना चाहता हो तो उन्हें उनके द्वारा अपने हाथ से लिखे गये उस विराट परिमाण में साहित्य के रूप में युग संजीवनी के रूप में देखा सकता है जो वे अपने वजन से अधिक भार के बराबर लिख गये। इस साहित्य में संवेदना का स्पर्श इस बारीकी से हुआ है कि लगता है लेखनी को उसी की स्याही में डुबोकर लिखा गया हो। हर शब्द ऐसा जो हृदय को छूता, मन को व विचारों को बदलता चला जाता है। लाखों-करोड़ों के मनों के अंत:स्थल को छूकर उसने उनका कायाकल्प कर दिया। रूसो के प्रजातंत्र की, कार्लमार्क्स के साम्यवाद की क्रान्ति भी इसके समक्ष बौनी पड़ जाती है। उनके मात्र इस युग वाले स्वरूप को लिखने तक में लगता है कि एक विश्वकोश तैयार हो सकता है, फिर उस बहुआयामी रूप को जिसमें वे संगठनकर्ता, साधक, करोड़ों के अभिभावक, गायत्री महाविद्या के उद्धारक, संस्कार परम्परा का पुनर्जीवन करने वाले, ममत्व लुटाने वाले एक पिता, नारी जाति के प्रति अनन्य करुणा बिखेरकर उनके ही उद्धार के लिए धरातल पर चलने वाला नारी जागरण अभियान चलाते देखे जाते हैं, अपनी वाणी के उद्बोधन से एक विराट् गायत्री परिवार एकाकी अपने बलबूते खड़े करते दिखाई देते हैं तो समझ में नहीं आता, क्या-क्या लिखा जाये, कैसे छन्दबद्ध किया जाय, उस महापुरुष के जीवनचरित को।

आश्विन कृष्ण त्रयोदशी विक्रमी संवत् १९६७ (२० सितम्बर, १९११) को स्थूल शरीर से आँवलखेड़ा ग्राम जनपद आगरा जो जलेसर मार्ग पर आगरा से पन्द्रह मील की दूरी पर स्थित है, में जन्मे श्रीराम शर्मा जी का बाल्यकाल-कैशोर्य काल ग्रामीण परिसर में ही बीता। वे जन्मे तो थे एक जमींदार घराने में, जहाँ उनके पिता श्री पं. रूपकिशोर जी शर्मा आप-पास के, दूर-दराज के राजघरानों के राजपुरोहित, उद्भट विद्वान, भागवत कथाकार थे. किन्तु, उनका अंत:करण मानव मात्र की पीड़ा से सतत विचलित रहता था। साधना के प्रति उनका झुकाव बचपन में ही दिखाई देने लगा। जब वे अपने सहपाठियों को, छोटे बच्चों को अमराइयों में बिठाकर स्कूली शिक्षा के साथ-साथ सुसंस्कारिता अपनाने वाली आत्मविद्या का शिक्षण दिया करते थे, छटपटाहट के कारण हिमालय की ओर भाग निकलने व पकड़े जाने पर उनने संबंधियों को बताया कि हिमालय ही उनका घर है एवं वहीं वे जा रहे थे। किसे मालूम था कि हिमालय की ऋषि चेतनाओं का समुच्चय बनकर आयी यह सत्ता वस्तुत: अगले दिनों अपना घर वहीं बनाएगी। जाति-पाँति का कोई भेद नहीं। जातिगत मूढ़ता भरी मान्यता से ग्रसित तत्कालीन भारत के ग्रामीण परिसर में एक अछूत वृद्ध महिला

की जिसे कुष्ठ रोग हो गया था, उसी के टोले में जाकर सेवा कर उनने घरवालों का विरोध तो मोल ले लिया पर अपना व्रत नहीं छोड़ा। उस महिला ने स्वस्थ होने पर उन्हें ढेरों आशीर्वाद दिये। एक अछूत कहलाने वाली जाति का व्यक्ति जो उनके आलीशान घर में घोड़ों की मालिश करने आता था, एक बार कह उठा कि मेरे घर कथा कौन कराने आएगा, मेरा ऐसा सौभाग्य कहाँ। नवनीत जैसे हृदय वाले पूज्यवर उसके घर जा पहुँचे एवं कथा पूरे विधान से कर पूजा की, उसको स्वच्छता का पाठ सिखाया, जबकि सारा गाँव उनके विरोध में बोल रहा था।

किशोरावस्था में ही समाज सुधार की रचनात्मक प्रवृत्तियाँ उनने चलाना आरम्भ कर दी थीं। औपचारिक शिक्षा स्वल्प ही पायी थी किंतु, उन्हें इसके बाद आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि जो जन्मजात प्रतिभासम्पन्न हो वह औपचारिक पाठ्यक्रम तक सीमित कैसे रह सकता है। हाट-बाजारों में जाकर स्वास्थ्य-शिक्षा प्रधान परिपत्र बाँटना, पशुधन को कैसे सुरक्षित रखें तथा स्वावलम्बी कैसे बनें, इसके छोटे-छोटे पैम्फलेट्स लिखने, हाथ की प्रेस से छपवाने के लिए उन्हें किसी शिक्षा की आवश्यकता नहीं थी। वे चाहते थे, जनमानस आत्मावलम्बी बने, राष्ट्र के प्रति स्वाभिमान उसका जागे, इसलिए गाँव में जन्मे इस लाल ने नारी शक्ति व बेरोजगार युवाओं के लिए गाँव में ही एक बुनताघर स्थापित किया व उसके द्वारा हाथ से कैसे कपड़ा बुना जाय अपने पैरों पर कैसे खड़ा हुआ जाय यह सिखाया।

पंद्रह वर्ष की आयु में वसंत पंचमी की वेला में सन् १९२६ में उनके घर की पूजास्थली में, जो उनकी नियमित उपासना का तब से आगार थी, जबसे महामना पं. मदनमोहन मालवीय जी ने उन्हें काशी में गायत्री मंत्र की दीक्षा दी थी, उनकी गुरुसत्ता का आगमन हुआ अदृश्य छायाधारी सूक्ष्म रूप में। उनने प्रज्ज्वलित दीपक की लौ में से स्वयं को प्रकट कर उन्हें उनके द्वारा विगत कई जन्मों में सम्पन्न क्रिया-कलापों का दिग्दर्शन कराया तथा उन्हें बताया कि वे दुर्गम हिमालय से आये हैं एवं उनसे अनेकानेक ऐसे क्रियाकलाप कराना चाहते हैं, जो अवतारी स्तर की ऋषिसत्ताएँ उनसे अपेक्षा रखती हैं। चार बार कुछ दिन से लेकर एक साल तक की अवधि तक हिमालय आकर रहने, कठोर तप करने का भी उनने संदेश दिया एवं उन्हें तीन संदेश दिए- १. गायत्री महाशक्ति के चौबीस-चौबीसं लक्ष्य के चौबीस महापुरश्चरण जिन्हें आहार के कठोर तप के साथ पूरा करना था। २. अखण्ड घृतदीप की स्थापना एवं जन-जन तक इसके प्रकाश को फैलाने के लिए समय आने पर ज्ञानयज्ञ अभियान चलाना, जो बाद में अखण्ड ज्योति पत्रिका के १९३८ में प्रथम प्रकाशन से लेकर विचार-क्रान्ति अभियान के विश्वव्यापी होने के रूप में प्रकटा तथा ३. चौबीस महापुरश्चरणों के दौरान युगधर्म का निर्बाह करते हुए राष्ट्र के निमित्त भी स्वयं को खपाना, हिमालय यात्रा भी करना तथा उनके संपर्क से आगे का मार्गदर्शन लेना।

यह कहा जा सकता है कि युग निर्माण मिशन, गायत्री परिवार, प्रज्ञा अभियान, पूज्य गुरुदेव जो सभी एक-दूसरे के पर्याय हैं, की जीवन यात्रा का यह एक महत्त्वपूर्ण मोड़ था, जिसमें भावी रीति-नीति का निर्धारण कर दिया। पूज्य गुरुदेव अपनी पुस्तक 'हमारी वसीयत और विरासत' में लिखते हैं कि- ''प्रथम मिलन के दिन समर्पण सम्पन्न हुआ। दो बातें गुरुसत्ता द्वारा विशेष रूप से कही गईं- संसारी लोग क्या करते हैं और क्या कहते हैं, उसकी ओर से मुँह मोड़कर निर्धारित लक्ष्य की ओर एकाकी साहस के बलबूते चलते रहना एवं दूसरा यह कि अपने को अधिक पवित्र और प्रखर बनाने की तपश्चर्या में जुट जाना- जौ की रोटी व छाछ पर निर्वाह कर आत्मानुशासन सीखना। इसी से वह सामर्थ्य विकसित होगी जो विशुद्धतः परमार्थ प्रयोजनों में नियोजित होगी। वसंत पर्व का यह दिन गुरु अनुशासन का अवधारण ही हमारे लिए नया जन्म बन गया। सद्गुरु की प्राप्ति हमारे जीवन का अनन्य एवं परम सौभाग्य रहा।''

राष्ट्र के परावलम्बी होने की पीड़ा भी उन्हें उतनी ही सताती थी जितनी कि गुरुसत्ता के आदेशानुसार तपकर सिद्धियों के उपार्जन की ललक उनके मन में थी। उनके इस असमंजस को गुरुसत्ता ने ताड़कर परावाणी से उनका मार्गदर्शन किया कि युगधर्म की महत्ता व समय की पुकार देख-सुनकर तुम्हें अन्य आवश्यक कार्यों को छोड़कर अग्निकाण्ड में पानी लेकर दौड़ पड़ने की तरह आवश्यक कार्य भी करने पड़ सकते हैं। इसमें स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के नाते संघर्ष करने का भी संकेत था। १९२७ से १९३३ तक का समय उनका एक सक्रिय स्वयं सेवक-स्वतंत्रता सेनानी के रूप में बीता, जिसमें घरवालों के विरोध के बावजूद

पैदल लम्बा रास्ता पार कर वे आगरा के उस शिविर में पहुँचे, जहाँ शिक्षण दिया जा रहा था, अनेकानेक मित्रों-सखाओं-मार्गदर्शकों के साथ भूमिगत हो कार्य करते रहे तथा समय आने पर जेल भी गये। छह-छह माह की उन्हें कई बार जेल हुई। जेल में भी वे जेल के निरक्षर साथियों को शिक्षण देकर व स्वयं अँग्रेजी सीखकर लौटे। आसनसोल जेल में वे श्री जवाहरलाल नेहरू की माता श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू, श्री रफी अहमद किदवई, महामना मदनमोहन मालवीय जी, देवदास गाँधी जैसी हस्तियों के साथ रहे व वहाँ से एक मूलमंत्र सीखा जो मालवीय जी ने दिया था कि जन-जन की साझेदारी बढ़ाने के लिए हर व्यक्ति के अंशदान से, मुट्ठी फण्ड से रचनात्मक प्रवृत्तियाँ चलाना। यही मंत्र आगे चलकर एक घण्टा समयदान, बीस पैसा नित्य या एक दिन की आय एक माह में तथा एक मुट्ठी अन्न रोज डालने के माध्यम से धर्मघट की स्थापना का स्वरूप लेकर लाखों-करोड़ों की भागीदारी वाला गायत्री परिवार बनाता चला गया, जिसका आधार था प्रत्येक व्यक्ति की यज्ञीय भावना का उसमें समावेश।

स्वतंत्रता की लड़ाई के दौरान कुछ उग्र दौर भी आये, जिनमें शहीद भगतसिंह को फाँसी दिये जाने पर फैले जनआक्रोश के समय श्री अरविन्द के किशोर काल की क्रान्तिकारी स्थिति की तरह उनने भी वे कार्य किये, जिनसे आक्रान्ता शासकों के प्रति असहयोग जाहिर होता था। नमक आन्दोलन के दौरान वे आततायी शासकों के समक्ष झुके नहीं, वे मारते रहे परन्तु, समाधि स्थिति को प्राप्त राष्ट्र देवता के पुजारी को बेहोश होना स्वीकृत था पर आन्दोलन से पीठ दिखाकर भागना नहीं। बाद में फिरंगी सिपाहियों के जाने पर लोग उठाकर घर लेकर आये। जरारा आन्दोलन के दौरान उनने झण्डा छोड़ा नहीं जबकि, फिरंगी उन्हें पीटते रहे, झण्डा झीनने का प्रयास करते रहे। उनने मुँह से झण्डा पकड़ लिया, गिर पड़े, बेहोश हो गये पर झण्डे का टुकड़ा चिकित्सकों द्वारा दाँतों में भींचे गये टुकड़े के रूप में जब निकाला गया तब सब उनकी सहनशक्ति देखकर आश्चर्यचकित रह गये। उन्हें तब से ही आजादी के मतवाले उन्मत्त श्रीराम मत्त नाम मिला। अभी भी आगरा में उनके साथ रहे या उनसे कुछ सीख लिए अगणित व्यक्ति उन्हें मत्तजी नाम से ही जानते हैं। लगानबन्दी के आँकड़े एकत्र करने के लिए उनने पूरे आगरा जिले का दौरा किया व उनके द्वारा प्रस्तुत वे आँकड़े तत्कालीन संयुक्त प्रान्त के मुख्यमंत्री श्रीगोविन्द वल्लभ पंत द्वारा गाँधीजी के समक्ष पेश किये गये। बापू ने अपनी प्रशस्ति के साथ वे प्रामाणिक आँकड़े ब्रिटिश पार्लियामेण्ट भेजे, इसी आधार पर पूरे संयुक्त प्रान्त के लगान माफी के आदेश प्रसारित हुए। कभी जिनने अपनी इस लड़ाई के बदले कुछ न चाहा उन्हें सरकार ने अपना प्रतिनिधि भेजकर पचास वर्ष बाद ताम्रपत्र देकर शांतिकुंज में सम्मानित किया। उसी सम्मान व स्वाभिमान के साथ सारी सुविधाएँ व पेंशन उनने प्रधानमंत्री राहत फण्ड के नाम समर्पित कर दीं। वैरागी जीवन का सच्चे राष्ट्र संत होने का इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है?

१९३५ के बाद उनके जीवन का नया दौर शुरू हुआ, जब गुरुसत्ता की प्रेरणा से वे श्री अरविन्द से मिलने पाण्डिचेरी, गुरुदेव ऋषिवर रवीन्द्रनाथ टैगोर से मिलने शांति निकेतन तथा बापू से मिलने साबरमती आश्रम, अहमदाबाद गये। सांस्कृतिक, आध्यात्मिक मोर्चे पर राष्ट्र को कैसे परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त किया जाय, यह निर्देश लेकर अपना अनुष्ठान यथावत् चलाते हुए उनने पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश किया, जब आगरा में 'सैनिक' समाचार पत्र के कार्यवाहक संपादक के रूप में श्रीकृष्णदत्तपालीवाल जी ने उन्हें अपना सहायक बनाया। बाबू गुलाब राय व पालीवाल जी से सीख लेते हुए सतत स्वाध्यायरत रहकर उनने अखण्ड ज्योति नामक पत्रिका का पहला अंक १९३८ की वसंत पंचमी पर प्रकाशित किया। प्रयास पहला था, जानकारियाँ कम थीं अत: पुन: सारी तैयारी के साथ विधिवत् १९४० की जनवरी से उनने परिजनों के नाम पाती के साथ अपने हाथ से बने कागज से बने कागज पर पैर से चलने वाली मशीन से छापकर 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका का शुभारंभ किया जो पहले तो दो सौ पचास पत्रिका के रूप में निकली, किन्तु क्रमश: उनके अध्यवसाय घर- घर पहुँचाने, मित्रों तक पहुँचाने वाले उनके हृदयस्पर्शी पत्रों द्वारा बढ़ती-बढ़ती नवयुग के मत्स्यावतार की तरह आज दस लाख से भी अधिक संख्या में विभिन्न भाषाओं में छपती व एक करोड़ से अधिक व्यक्तियों द्वारा पढ़ी जाती है।

पत्रिका के साथ-साथ 'मैं क्या हूँ' जैसी पुस्तकों का लेखन आरम्भ हुआ। स्थान बदला, आगरा से मथुरा आग गये, दो-तीन घर बदलकर घीयामण्डी में जहाँ आज अखण्ड ज्योति संस्थान है, आ बसे। पुस्तकों

का प्रकाशन व कठोर तपश्चर्या, ममत्व विस्तार तथा पत्रों द्वारा जन-जन के अंत:स्थल को छूने की प्रक्रिया चालू रही। साथ देने आ गयीं परमवंदनीया माताजी भगवती देवी शर्मा, जिन्हें भविष्य में अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका अपने आराध्य इष्ट गुरु के लिए निभानी थी। उनके मर्मस्पर्शी पत्रों ने, भाव भरे आतिथ्य, हर किसी को जो दु:खी था- पीड़ित था, दिये गये ममत्व भरे परामर्श ने गायत्री परिवार का आधार खड़ा किया, इसमें कोई सन्देह नहीं। यदि विचारक्रांति में साहित्य ने मनोभूमि बनायी तो भावात्मक क्रान्ति में ऋषियुगल के असीम स्नेह ने ब्राह्मणत्व भरे जीवन ने शेष बची भूमिका निभायी।

'अखण्ड ज्योति' पत्रिका लोगों के मनों को प्रभावित करती रही, इसमें प्रकाशित 'गायत्री चर्चा' स्तम्भ से लोगों को गायत्री व यज्ञमय जीवन जीने का संदेश मिलता रहा, साथ ही एक आना से लेकर छह आना सीरज की अनेकानेक लोकोपयोगी पुस्तकें छपती चली गयीं। इस बीच हिमालय के बुलावे भी आये, अनुष्ठान भी चलता रहा जो पूरे विधि-विधान के साथ १९५३ में गायत्री तपोभूमि की स्थापना, १०८ कुण्डी यज्ञ व उनके द्वारा दी गयी प्रथम दीक्षा के साथ समाप्त हुआ। गायत्री तपोभूमि की स्थापना के निमित्त धन की आवश्यकता पड़ी तो परमवंदनीया माताजी ने जिनने हर कदम पर अपने आराध्य का साथ निभाया, अपने सारे जेवर बेच दिये, पूज्यवर ने जमींदारी के बाण्ड बेच दिये एवं जमीन लेकर अस्थायी स्थापना कर दी गयी। धीरे-धीरे उदारचेताओं के माध्यम से गायत्री तपोभूमि एक साधना पीठ बन गयी। २४०० तीर्थों के जल व रज की स्थापना वहाँ की गयी, २४०० करोड़ गायत्री मंत्र लेखन वहाँ स्थापित हुआ, अखण्ड अग्नि हिमालय के एक अति पवित्र स्थान से लाकर स्थापित की गयी जो अभी तक वहाँ यज्ञशाला में जल रही है। १९४१ से १९७१ तक का समय परमपूज्य गुरुदेव का गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान में सक्रिय रहने का समय है। १९५६ में नरमेध यज्ञ, १९५७ में सहस्रकुण्डी यज्ञ करके लाखों गायत्री साधकों को एकत्र कर उनने गायत्री परिवार का बीजारोपण कर दिया। कार्तिक पूर्णिमा १९५८ में आयोजित इस कार्यक्रम में दस लाख व्यक्तियों ने भाग लिया, इन्हीं के माध्यम से देशभर में प्रगतिशील गायत्री परिवार की दस हजार से अधिक शाखाएँ स्थापित हो गयीं। संगठन का अधिकाधिक कार्यभार पूज्यवर परमवंदनीया माताजी पर सौंपते चले गये एवम् १९५९ में पत्रिका का संपादन उन्हें देकर पौने दो वर्ष के लिए हिमालय चले गये, जहाँ उन्हें गुरुसत्ता से मार्गदर्शन लेना था, तपोवन नंदनवन में ऋषियों से साक्षात्कार करना था तथा गंगोत्री में रहकर आर्ष ग्रन्थों का भाष्य करना था। तब तक वे गायत्री महाविद्या पर विश्वकोश स्तर की रचना गायत्री महाविज्ञान के तीन खण्ड लिख चुके थे, जिसके अब तक प्राय: पैंतीस संस्करण छप चुके हैं। हिमालय से लौटते ही उनने महत्वपूर्ण निधि के रूप में वेद, उपनिषद्, स्मृति, आरण्यक, ब्राह्मण, योगवाशिष्ठ, मंत्र महाविज्ञान, तंत्र महाविज्ञान जैसे ग्रन्थों को प्रकाशित कर देव संस्कृति की मूलथाती को पुनर्जीवन दिया। परमवंदनीया माताजी ने उन्हीं वेदों को पूज्यवर की इच्छानुसार १९९१-९२ में विज्ञानसम्मत आधार देकर पुनर्मुद्रित कराया एवं वे आज घर-घर में स्थापित हैं।

युग निर्माण योजना व 'युग निर्माण सत्संकल्प' के रूप में मिशन का घोषणा पत्र १९६३ में प्रकाशित हुआ। तपोभूमि एक विश्वविद्यालय का रूप लेती चली गयी तथा अखण्ड ज्योति संस्थान एक तप-पूत की निवास स्थली बन गया, जहाँ रहकर उनने अपनी शेष तप साधना पूरी की थी, जहाँ से गायत्री परिवार का बीज डाला गया था। तपोभूमि में विभिन्न शिविरों का आयोजन किया जाता रहा, पूज्यवर स्वयं छोटे-बड़े जन सम्मेलनों के द्वारा विचार क्रान्ति की पृष्ठभूमि बनाते रहे, पूरे देश में १९७०-७१ में पाँच १००८ कुण्डी यज्ञ आयोजित हुए। स्थायी रूप से विदाई लेते हुए एक विराट सम्मेलन (जून १९७१) में परिजनों को विशेष कार्य-भार सौंप परमवंदनीया माताजी को शांतिकुंज, हरिद्वार में अखण्ड दीप के समक्ष तप हेतु छोड़कर स्वयं हिमालय चले गये। एक वर्ष बाद वे गुरुसत्ता का संदेश लेकर लौटे एवं अपनी आगामी बीस वर्ष की क्रिया-पद्धति बतायी। ऋषि परम्परा का बीजारोपण, प्राण प्रत्यावर्तन, संजीवनी व कल्प साधना सत्रों का मार्गदर्शन जैसे कार्य उनने शांतिकुंज में सम्पन्न किये।

सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थापना अपनी हिमालय की इस यात्रा से लौटने के बाद ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान की थी, जहाँ विज्ञान और अध्यात्म के समन्वयात्मक प्रतिपादनों पर शोध कर एक नये धर्म वैज्ञानिक धर्म के मूलभूत आधार रखे जाने थे। इस सम्बन्ध में पूज्यवर ने विराट परिमाण में साहित्य लिखा, अदृश्य जगत के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अनुसंधान से लेकर मानव की प्रसुप्त क्षमता के जागरण तक, साधना से सिद्धि एवं दर्शन-विज्ञान के तर्क, तथ्य, प्रमाण के आधार पर प्रस्तुतीकरण तक। इसके लिए एक विराट ग्रन्थागार बना व एक सुसज्जित प्रयोगशाला। वनौषधि उद्यान भी लगाया गया तथा जड़ी-बूटी, यज्ञ विज्ञान तथा मंत्र शक्ति पर प्रयोग हेतु साधकों पर परीक्षण प्रचुर परिमाण में किये गये। निष्कर्षों ने प्रमाणित किया कि ध्यान साधना, मंत्र चिकित्सा व यज्ञोपैथी एक विज्ञानसम्मत विधा है। गायत्री नगर क्रमशः एक तीर्थ, संजीवनी विद्या के प्रशिक्षण का, एकेडमी का रूप लेता चला गया एवं जहाँ ९-९ दिन के साधना प्रधान, एक-एक माह के कार्यकर्त्ता निर्माण हेतु युगशिल्पी सत्र सम्पन्न होने लगे।

कार्यक्षेत्र में विस्तार हुआ। स्थान-स्थान पर शक्तिपीठें विनिर्मित हुईं, जिनके निर्धारित क्रियाकलाप थे- सुसंस्कारिता व आस्तिकता संवर्धन एवं जन-जाग्रति के केन्द्र बनना। ऐसे केन्द्र जो १९८० में बनना आरंभ हुए थे, प्रज्ञासंस्थान, शक्तिपीठ, प्रज्ञामण्डल, स्वाध्याय-मण्डल के रूप में पूरे देश व विश्व में फैलते चले गये। ७६ देशों में गायत्री परिवार की शाखाएँ फैल गयीं, ४६०० से अधिक भारत में निज के भवन वाले संस्थान विनिर्मित हो गये, वातावरण गायत्रीमय होता चला गया।

परमपूज्य गुरुदेव ने सूक्ष्मीकरण में प्रवेश कर १९८५ में ही पाँच वर्ष के अंदर अपने सारे क्रिया-कलापों को समेटने की घोषणा कर दी। इस बीच कठोर तपसाधना कर मिलना-जुलना कम कर दिया तथा क्रमशः क्रिया-कलाप परमवंदनीया माताजी को सौंप दिये। राष्ट्रीय एकता सम्मेलनों, विराट दीप यज्ञों के रूप में नूतन विधा को जन-जन को सौंप कर राष्ट्र देवता की कुण्डलिनी जगाने हेतु उनने अपने स्थूल शरीर छोड़ने व सूक्ष्म में समाने की, विराट से विराटतम होने की घोषणा कर गायत्री जयन्ती २ जून, १९९० को महाप्रयाण किया। सारी शक्ति वे परमवंदनीया माताजी के दे गये व अपने व माताजी के बाद संघशक्ति की प्रतीक लाल मशाल को ही इष्ट-आराध्य मानने का आदेश देकर ब्रह्मबीज से विकसित ब्रह्मकमल की सुवास को देवसंस्कृति दिग्विजय अभियान के रूप में आरंभ करने का माताजी को निर्देश दे गये।

एक विराट श्रद्धांजलि समारोह व शपथ समारोह जो हरिद्वार में सम्पन्न हुए, में लाखों व्यक्तियों ने अपना समय समाज के नवनिर्माण, मनुष्य में देवत्व के उदय व धरती पर स्वर्ग लाने का गुरुसत्ता का नारा साकार करने के निमित्त देने की घोषणा की। परमवंदनीया माताजी द्वारा भारतीय-संस्कृति को विश्वव्यापी बनाने, गायत्री रूपी संजीवनी घर-घर पहुँचाने के लिए पूज्यवर द्वारा आरम्भ किये गये युग संधि महापुरश्चरण की प्रथम व द्वितीय पूर्णाहुति तक विराट अश्वमेध महायज्ञों की घोषणा की गयी। वातावरण के परिशोधन, सूक्ष्मजगत के नवनिर्माण एवं सांस्कृतिक व वैचारिक क्रान्ति ने सारी विश्ववसुधा को गायत्री व यज्ञमय, वासंती उल्लास से भर दिया। स्वयं परमवंदनीया माताजी ने अपनी पूर्व घोषणानुसार चार वर्ष तक परिजनों का मार्गदर्शन कर सोलह यज्ञों का संचालन स्थूल शरीर से किया व फिर भाद्रपद पूर्णिमा १९ सितम्बर, १९९४ महालय श्राद्धारंभ वाली पुण्य वेला में अपने आराध्य के साथ एकाकार हो गयीं। उनके महाप्रयाण के बाद, दोनों ही सत्ताओं के सूक्ष्म में एकाकार होने के बाद मिशन की गतिविधियाँ कई गुना बढ़ती चली गयीं एवं जयपुर के प्रथम अश्वमेध यज्ञ (नवम्बर ९२) से छब्बीसवें अश्वमेध यज्ञ शिकागो (यू. एस ए. जुलाई ९५) तक प्रज्ञावतार का प्रत्यक्ष रूप सबको दीखने लगा है।

गुरुसत्ता के आदेशानुसार सतयुग के आगमन तक १०८ महायज्ञ देवसंस्कृति को विश्वव्यापी बनाने हेतु सम्पन्न होने हैं। युग संधि महापुरश्चरण की अंतिम पूर्णाहुति उसी के बाद होगी। प्रथम पूर्णाहुति नवम्बर १९९४ में कार्त्तिक पूर्णिमा के अवसर पर युगपुरुष पूज्यवर की जन्मभूमि आँवलखेड़ा में मनायी गई। उनके द्वारा लिखे गये समग्र साहित्य के वाङ्मय का जो एक सौ आठ खण्डों में फैला है, विमोचन भी यहीं सम्पंन्न हुआ। विनम्रता एवं ब्राह्मणत्व की कसौटी पर खरे उतरने वाले वरिष्ठ प्रज्ञापुत्र ही उनके उत्तराधिकारी कहे जाएँगे, यह गुरुसत्ता का उद्घोष था एवं इस क्षेत्र में बढ़-चढ़कर आदर्शवादी प्रतिस्पर्धा करने वाले अनेकानेक परिजन अब उनके स्वप्नों को साकार करने आगे आ रहे हैं। 'हम बदलेंगे-युग बदलेगा' का उद्घोष दिग-दिगन्त तक फैल रहा है एवं इक्कीसवीं सदी उज्ज्वल भविष्य, सतयुग की वापसी का स्वप्न साकार होता चला जा रहा है, यह स्पष्ट दिखाई दे रहा है। ❑❑❑

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भूमिका

चमत्कारों को, जो हम दैनन्दिन जीवन में भौतिक-आध्यात्मिक जगत में होते देखते हैं, असंभव-सा मान बैठते हैं एवं कार्य-कारण से उसकी संगति नहीं बिठा पाते, वस्तुतः संकल्पशक्ति रूपी कल्पवृक्ष की परिणति ही मानना चाहिए। कल्पनाएँ तो रंगीन स्वप्न हैं-मनोरंजन मात्र पूरा कर पाती हैं। ऊँची उड़ानें उड़ने और रंग-बिरंगे सपने देखने वालों की कोई कमी नहीं है। मनोरथ पूरा न होने पर ऐसे व्यक्ति खिन्न व निराश देखे जाते हैं। महत्त्वपूर्ण सफलताएँ सदैव दृढ़ संकल्प-शक्ति के आधार पर ही मिलती हैं, भले ही उन्हें उस व्यक्ति की जीवट के आधार पर मिली उपलब्धि माना जाय अथवा एक चमत्कार।

परमपूज्य गुरुदेव पं. श्री राम शर्मा जी आचार्य ने सदैव विधेयात्मक चिंतन-सुदृढ़ मनोबल बढ़ाने की दिशा में प्रेरणा देने वाला साहित्य सृजन किया एवं लिखा कि आदमी की प्रखरता व तेजस्विता जो बहिरंग में दृष्टिगोचर होती है, इसी मनस्विता की-दृढ़ संकल्पशक्ति की ही एक फलश्रुति है। वे लिखते हैं कि जैसे किसान बीजों को रोपता है एवं अंकुर उगने से लेकर फसल की उत्पत्ति तक एक सुनियोजित क्रमबद्ध प्रयास करता है, उसी प्रकार संकल्प भी एक प्रकार का बीजारोपण है। किसी लक्ष्य तक पहुँचने के लिए एक सुनिश्चित निर्धारण का नाम ही संकल्प है। अभीष्ट तत्परता बरती जाने पर यही संकल्प जब पूरा होता है तो उसकी चमत्कारी परिणति सामने दिखायी पड़ती है। उज्ज्वल भविष्य के प्रवक्ता परमपूज्य गुरुदेव नवयुग के उपासक के रूप में संकल्पशक्ति के अभिवर्द्धन से तेजस्वी-प्रतिभाशाली समुदाय के उभरने की चर्चा वाङ्मय के इस खण्ड में करते हैं।

संकल्पशीलता को व्रतशीलता भी कहा गया है। व्रतधारी ही तपस्वी और मनस्वी कहलाते हैं। मनःसंस्थान का नूतन नवनिर्माण कर पाना संकल्प का ही काम है। संकल्पवानों के, प्राणवानों के संकल्प कभी अधूरे नहीं रहते। सृजनात्मक संकल्प ही व्यवहार में सक्रियता एवं प्रवृत्तियों में प्रखरता का समावेश कर पाते हैं। परमपूज्य गुरुदेव बार-बार संकल्पशीलता के इस पक्ष को अधिक महत्ता के साथ प्रतिपादित करते हुए एक ही तथ्य लिखते हैं कि आज यदि नवयुग की आधारशिला हमें रखनी है तो वह संकल्पशीलों के प्रखर पुरुषार्थ से उनकी तेजस्विता एवं मनस्विता के आधार पर ही संभव हो सकेगी। ऐसे व्यक्ति जितनी अधिक संख्या में समाज में बढ़ेंगे, परिवर्तन का चक्र उतना ही द्रुतगति से चल सकेगा।

यह एक निर्धारित एवं सुविख्यात तथ्य है कि जिन विचारों से मनोभूमि पर स्थायी प्रभाव पड़ता है और जिनसे अन्तःकरण पर अमिट छाप पड़ती है, वे पुनरावृत्ति के कारण स्वभाव का एक अंग बन जाते हैं। विधेयात्मक चिन्तन की बारम्बार पुनरावृत्ति करने व उन विचारों को क्रमबद्ध रीति से सजाने की कला जिन्हें आती है, वे अपना भाग्य, दृष्टिकोण और वातावरण परिवर्तित कर सकते हैं और इसी प्रक्रिया की फलश्रुति, जीवन में अपरिमित सफलताओं के रूप में मिलती है। जीवन वस्तुतः संकल्प बीज की एक लहराती हुई हरी-भरी फसल के समान है। सफल जीवन जीने की आकांक्षा यदि साकार करनी हो, तो पहले अपने मनःक्षेत्र में सकारात्मक बीजों का आरोपण करना चाहिए। संकल्पशक्ति की साधना और आत्मनिरीक्षण से व्यक्तित्व को इच्छित ऊँचाई तक पहुँचाया जा सकता है, इसमें जरा भी संशय किसी को नहीं होना चाहिए।

विधेयात्मक इच्छाशक्ति एवं निषेधात्मक चिन्तन की परिणतियों के अनेकानेक दैनन्दिन जीवन के उदाहरणों के साथ पूज्यवर ने प्रतिपादित करने का प्रयास किया है कि विचारों की शक्ति से ही मानवी क्रियाकलापों का सारा बहिरंग स्वरूप निखर कर आता है। सिकन्दर, गैरीसन, डार्विन, चाणक्य, महाराणा प्रताप, विंस्टन चर्चिल से लेकर परमहंस योगानन्द तक के उदाहरणों द्वारा उनने संकल्पशक्ति की महत्ता प्रतिपादित करने का प्रयास किया है।

जीवट या जीवनी-शक्ति का बाहुल्य ही मनुष्य को प्राणवान, स्फूर्तिवान, ओजस्वी, प्रतिभाशाली बनाता है। साहस, पराक्रम, उत्साह और स्फूर्ति का समन्वय ही जीवट के रूप में जाना जाता है। यदि यह हो तो सामान्य काया भी कम समय में ऊँचे स्तर के कार्य सम्पन्न कर सकती है। शरीरगत तत्परता एवं मनोगत तत्परता का जहाँ योग होता है, वहाँ व्यक्तित्व में एक चमत्कारी जादुई जीवट उभर कर आ जाती है एवं यही बाह्य जीवन की सारी सफलताओं की मूल धुरी कहलाती है। इसी जीवट के अभाव में एक बलिष्ठ-सा दीखने वाला व्यक्ति भी भद्दा मोटा अजगर बनकर ज्यों-त्यों कर जीवन गुजारता हुआ समय काटकर धरती से चला जाता है। ओजस्विता के बीजांकुर वस्तुतः हर किसी के अंतराल में हैं, आवश्यकता उन्हें जगाने भर की है।

सावित्री . जगदीश प्रसाद

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मनोबल, संकल्प-शक्ति, इच्छाशक्ति, साहस, पराक्रम-पुरुषार्थ सभी जिस एक गंगोत्री से निकलते एवं किसी व्यक्ति के प्रभावशाली, आकर्षक तेजोवलय या आभामण्डल के रूप में दीखते हैं, वह उसके अंदर ही विचारों की विधेयात्मक सामर्थ्य के रूप में विद्यमान है। इन्हीं सब पक्षों पर उस खण्ड में विस्तार से प्रकाश डाला गया है। इसी खण्ड में व्यवस्था बुद्धि की गरिमा एवं आकृति से मनुष्य की पहचान विषय को भी समाविष्ट किया गया है।

वस्तुतः जीवन जीने की कला का पारखी मनुष्य यदि '**श्रद्धामयोऽयं पुरुषः यो यच्छ्रद्धः स एव सः**' का मूल भाव समझ ले तो उसे किसी प्रकार की कठिनाई जीवन व्यापार में नहीं होगी। मनुष्य जैसा चिन्तन व दृढ़ निश्चय कैंरता है, वह वैसा ही बनता चला जाता है, यह आज तक का इतिहास बताता है। हम सदा ही प्रखर इच्छाशक्ति का संपादन कर स्वयं को मनस्वी, तेजस्वी एवं प्रखर बनाए रखें तो लौकिक एवं पारलौकिक सभी सफलताएँ हमारे कदमों पर होंगी, मनोविज्ञान का यह मूल मर्म जो व्यावहारिक भी है, इस खण्ड में विस्तार से पढ़ा जा सकता है।

–ब्रह्मवर्चस

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय-सूची

१. तुच्छ से महान बनाने वाला बल—मनोबल १.१

मनुष्य और उसकी महान शक्ति १.१
प्रतिभा और संकल्प शक्ति का केन्द्र—मानवी मन १.३
इच्छाशक्ति की साधना से अदृश्य दर्शन १.५
जो कुछ चाहें, वह सब पायें १.७
इच्छाशक्ति की महिमा १.९
इच्छाशक्ति की प्रचण्ड क्षमता १.१०
इच्छा-शक्ति के चमत्कार १.११
इच्छाशक्ति द्वारा असम्भव को सम्भव बनाया जा सकता है १.१३
संकल्प के अभाव में शक्ति निरर्थक है १.१४
चमत्कारों की जननी—संकल्प शक्ति १.१४
संकल्प-शक्ति के साक्षी पिरामिड १.१५
मनस्विता की प्रचण्ड शक्ति १.१६
विभूतियों की गंगोत्री : संकल्प शक्ति १.१७
मानवी काया की दैत्योपम क्षमताएँ १.२०
ऐसे होते हैं—दैत्य १.२२
दृढ़ संकल्प की सुनिश्चित परिणति १.२३
जिनसे मौत भी डर गई १.२५
संकल्प शक्ति कुंजी है, प्रगति पुरुषार्थ की १.२६
संकल्प बल और स्वस्थता १.२७
मनुष्य हर परिस्थिति में ढल सकता है १.२९
संकल्प शक्ति सर्वोपरि १.३१
बाधाओं से टकराये जो, उसे इंसान कहते हैं १.३२
प्रतिकूलताओं की भट्टी में तपकर निखरता है व्यक्तित्व १.३३
असम्भव को सम्भव बनाने वाला पुरुषार्थ १.३५
दस हजार मील की समुद्र-यात्रा १.३६
सफलता का श्रेय संकल्पवानों को १.३७
पुरुषार्थ ने भाग्य पलट दिया १.३८
अपना संकल्प जगाइये, आप में बड़ी शक्ति है १.४०
वह जो शरीर सहन नहीं कर सकता १.४१
सुदृढ़ संकल्प बल के सहारे आरोग्य प्राप्ति १.४३
संकल्प ही सफलता में परिणत होते हैं १.४४
संकटों से विचलित न हों १.४७
निहत्थे व्यक्ति ने शेर को मार गिराया १.४८
संकल्प और पुरुषार्थ का समन्वय: असम्भव को सम्भव बनाता है १.४९
जब मृत्यु ने भी हार मान ली १.५०
संकल्प शक्ति मृत्यु को भी टाल सकती है १.५२
अपने को तुच्छ एवं नगण्य न समझें १.५३
बलिष्ठता और समर्थता की साकार विभूतियाँ १.५५
मानवी पराक्रम सम्भावनाएँ उलटने में समर्थ १.५७
काश हम दिशा बदल सकें १.५९
संकल्प शक्ति का कल्पवृक्ष १.६१
वे तीन—जो दुर्भाग्य से लड़े और जीते १.६२
तन्मे मनः शिव-संकल्पमस्तु १.६२
मानवी काया काँच की नहीं, अष्टधातु से बनी है १.६४
संकल्प शक्ति के अद्भुत चमत्कार १.६७
सफलता की कुंजी है : संकल्प शक्ति १.६८
यदि दृढ़ हो संकल्प बल तो १.७१
संकल्प सिद्धि हेतु एक विज्ञान सम्मत प्रक्रिया १.७२
मानवी जिजीविषा में छिपी अपरिमित शक्ति १.७३
जिजीविषा की चमत्कारी सामर्थ्य १.७५
जिजीविषा की अजेय सामर्थ्य १.७५
सम्पत्ति की खोज में जल-थल और नभ का मानवी मंथन १.७८
सफलता का प्रवेश द्वार—पुरुषार्थ १.८०
मनोबल ही जीवन शक्ति है १.८२
मनोबल : एक विभूति, एक प्रत्यक्ष वरदान १.८३
मनोबल की सामर्थ्य १.८५
मनोबल द्वारा आतंक का शमन १.८६
मनोबल से पदार्थों का स्थानान्तरण १.८७
मनोबल अनेकानेक सफलताओं की कुंजी १.८९
मनोबल की प्रचण्ड शक्ति एवं उसकी परिणति १.९२

२. अंतरंग की समर्थता ही सफलता की कुंजी है २.१

पराक्रम भीतर से उफनता है २.१
अन्तर्जगत का प्रबलतम पुरुषार्थ २.३
शक्ति का स्रोत हमारे अन्दर है २.४
शक्ति का स्रोत संघर्ष ही तो है २.६
आत्मविश्वास की शक्ति २.७
मल्लाह का साहस २.९

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिकूलताओं की चुनौती स्वीकार कीजिये २.९
अपंग लंगड्या की आत्मिक सामर्थ्य २.११
सत्साहस की सामर्थ्य २.१२
साहसी को साधन अपने आप मिलते हैं २.१३
ऐसी सबलाएँ ही भारत-भूमि की शोभा हैं २.१४
युवक का साहस २.१४
नरभक्षी पर साहस ने विजय पायी २.१५
साहस के रहते अपंगता बाधक नहीं २.१६
विकलांगता प्रगति में बाधक न बन सकी २.१८
शारीरिक बाधा पर साहस की विजय २.१८
अपंग जिसने समर्थों को पीछे छोड़ दिया २.१९
अवगति का कारण अभाव नहीं अनुत्साह २.२०
जिन्दगी मौत से ज्यादा मजबूत है २.२१
जो मौत से लड़े और अन्ततः विजयी हुए २.२२
प्रतिकूलताओं के रहते हुए भी प्रगति सम्भव है २.२३
कठिनाइयों से डरिये मत २.२४
अजीब लोग और उनके विचित्र संकल्प २.२५
साहस सबसे बड़ा साधन २.२६
साहस हो, तो सिंह भी पालतू कुत्ते जैसे सौम्य बनाये जा सकते हैं २.२८
क्रूरता को सौजन्य जीत सकता है २.३१
वे साहसी बालक-जिनकी सर्वत्र प्रशंसा है २.३३
साहस और सूझ-बूझ के धनी २.३५
साहस एवं पुरुषार्थ की परिणति २.३६
न करिये कबिरा गरब २.३९
संकल्प, श्रम और मनोयोग के चमत्कार २.३९
चमत्कारों की जननी संतुलित श्रमनिष्ठा २.४०
परावलम्बन छोड़ें, आत्मावलम्बन अपनायें २.४१
हमें संकटों का भी सामना करना होगा २.४२
परिस्थितियों पर जीवन विजय पाता रहा है २.४४
मानवी पुरुषार्थ की एक संकल्प भरी यात्रा २.४५
दैवी अनुकम्पा एवं संकल्पशक्ति का चुम्बकत्व २.४७
मन के हारे हार है, मन के जीते जीत २.४८
सुख चाहिए किन्तु दुःख से डरिये मत २.५०
हम मुसीबतों से घबराएँ नहीं २.५२
कठिनाइयाँ हमारे व्यक्तित्व को प्रखर बनाती हैं २.५३
अपने भाग्य-भविष्य का निर्माण हम स्वयं ही करते हैं २.५६
भाग्य अपने हाथों बनाइये २.५८
दुर्भाग्य सौभाग्य बना २.६०
प्रगति में लगन का योगदान २.६१
मानवी क्षमता का कोई पारावार नहीं २.६३
अध्यवसाय से अर्जित प्रामाणिकता २.६३
संकल्पशक्ति ही पहुँचाती है साधक को लक्ष्य तक २.६५
साधक की तन्मयता २.६६
समग्र सफलताओं का मूलभूत आधार २.६७
क्या मनुष्य क्रमशः घटता ही चला जायगा २.६९
बौने शरीर से भले हों, मन से नहीं २.७१
युग-भेद से मानव देह का अपकर्ष २.७२
बलिष्ठ दैत्य बनें, कि प्रतिभा-सम्पन्न देव २.७४
मनुष्य देवता और दैत्य २.७५
धर्म युद्ध में लड़ने वाले सच्चे शूरवीर २.७७
हमारी वीरता अक्षुण्ण रहनी चाहिये २.७८
आत्मबल का मूल उद्गम केन्द्र २.७९
मनोबल की न्यूनता २.८०
संकल्प शक्ति की दुर्बलता २.८०
आन्तरिक सामर्थ्य की प्रधानता २.८०
प्राणशक्ति की महिमा २.८१
गायत्री की प्राण-विद्या २.८१
आत्मबल की दिव्य प्रेरणा २.८१

३. संकल्प शक्ति और उसकी अद्भुत परिणतियाँ ३.१

जिल्दसाज से महान वैज्ञानिक ३.१
गुप्त मन की विराट शक्ति ३.२
संकल्प ने परिस्थितियों को परास्त किया ३.३
नाविक लड़के का उत्साह ३.३
कैसा बीज, कैसे फल ३.४
प्रबल संकल्प शक्ति की प्रचण्ड प्रतिक्रियाएँ ३.५
निर्बल इच्छाशक्ति की हानियाँ ३.६
शारीरिक शक्ति से कई गुनी अधिक इच्छाशक्ति ३.७
संकल्प शक्ति का आकर्षण ३.१०
संकल्प की दृढ़ता—विचारों की गहराई से ३.१३
मन को रोकें नहीं संकल्पवान बनायें ३.१३

४. सुनिश्चित संकल्पों की महान उपलब्धियाँ ४.१

कठिनाइयों से डरें नहीं—लड़ें ४.१
आत्मविश्वासी सदैव सफल होता है ४.२
साहसी ही जीवन को सार्थक बनाते हैं ४.५
आशा ही जीवन और निराशा ही मौत है ४.६
जिन्दगी को जिन्दादिली से जीयें ४.८

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिकूलताओं को चुनौती देती मानवी जीवट ४.१०
मनुष्य के लिए कुछ भी असंभव नहीं ४.१२
उत्साह एवं मनोबल अवरोधों को भी हटा सकते हैं ४.१३

५. प्रतिभावानों का अजेय अस्त्र—इच्छाशक्ति ५.१

सामान्य से असामान्य बनाने वाली शक्ति ५.१
मनुष्य में छिपी इच्छाशक्ति की सामर्थ्य ५.२
संकल्प बल—एक ईश्वरीय अनुदान ५.३
मनःशक्ति का ही है यह चमत्कार ५.५
मनोबल की शक्ति : एक दैवी विभूति ५.६
मनोबल की संजीवनी संकल्प शक्ति का कल्पवृक्ष ५.७
सन्तुलन खोया नहीं ५.८
जिजीविषा की चमत्कारी शक्ति ५.९
साहस ही बनाता है मनुष्य को अपराजेय ५.१०

६. संकल्प शक्ति के अद्भुत चमत्कार ६.१

हमारे संकल्पों का प्रवाह ६.१
विजय का संकल्प ६.१
संकल्प शक्ति की साधना ६.२
संकेतों द्वारा परिवर्तन ६.४
हमारी दबी हुई मनोवृत्तियाँ ६.५
संकेत का प्रभाव कहाँ पड़ता है ? ६.७
रात्रि में अव्यक्त का निर्माण ६.१२
दैनिक जीवन में संकेत का प्रयोग ६.१४
स्वयं अपने आपको संकेत देना ६.१६
तुम दास हो या स्वामी ६.१९
आत्महीनता की प्रवृत्ति एक रोग है ६.२१
आत्महीनता से मुक्ति के उपाय ६.२७
अभय होने का अमोघ उपाय ६.३०

७. मनोबल बढ़ायें—कठिनाइयों पर विजय पायें ७.१

धैर्यवान पुरुष सिंह ७.१
हारिये मत, जीतने की ही बात सोचिये ७.१
आदमी की वास्तविक शक्ति ७.३
मुगलों के छक्के छुड़ाये ७.४
मनोबली हिन्दू सिपाही ७.५
महाराज रणजीतसिंह का मनोबल ७.६
सामान्य जनता के मनोबल के चमत्कार ७.७
भारतीय जनता का मनोबल ७.८
एक पत्रकार का मनोबल ७.९
श्री चक्रवर्ती का अद्भुत मनोबल ७.१०
एक अजीब अनुभव ७.१०

८. पराक्रम और पुरुषार्थ जीवन के अविच्छिन्न अंग बनें ८.१

प्रतिकूलताएँ वस्तुतः विकास में सहायक ८.१
कठिनाइयों से डरिये मत, जूझिये ८.३
आत्मविश्वास क्या नहीं कर सकता? ८.७
उत्साह एवं सक्रियता चिरयौवन के मूल आधार ८.९
साहस का शिक्षण—संकटों की पाठशाला में ८.११
जो अपनी सहायता करने को तत्पर हों, उन्हें कोई नहीं रोक सकता ८.१५

९. प्रचण्ड पुरुषार्थ ही एकमात्र अवलम्बन ९.१

भाग्य तो पुरुषार्थ की छाया भर है ९.१
भाग्यवाद के नाम पर पनपती विकृतियाँ ९.४
पुरुषार्थ ही समृद्धि का राजमार्ग ९.६
अवसर ढूँढ़िए, परिश्रम कीजिए महानता आपके कदम चूमेगी ९.९
प्रगति पथ के दो अवरोध, जिनसे बचना ही चाहिए ९.१५
इन्होंने तो कभी शिकायत नहीं की ९.१७
समय अमूल्य है, इसकी महत्ता समझें ९.१९
सफलता का एक ही आधार—समय का सुनियोजन ९.१२

१०. साहसी जीतता है १०.१

हम न तो डरपोक बनें, न कायर कहलाएँ १०.१
कायरता छोड़िये, साहस अपनाइए १०.२
कठिनाइयों से लड़ें और अपना साहस बढ़ायें १०.३
दृढ़ भावनाओं से जीवन-निर्माण १०.५
साहसी बनिये—आप जरूर सफल होंगे १०.६
जीवन के उतार-चढ़ावों पर उद्विग्न न हों १०.८
परिस्थितियों के दास नहीं स्वामी बनें १०.१०
आपत्तियाँ आयें तो उनसे डरिये मत १०.१२
आपत्तियों से डरिये नहीं, लड़िये १०.१३
साहस का देवता और उसकी उपासना १०.१५
विपत्तियों को कैसे जीता जाय ? १०.१६
कठिनाइयाँ क्या हैं ? १०.१८
विपत्ति से बढ़कर हितैषी नहीं १०.२०
जीवन में कठिनाइयाँ भी आवश्यक हैं १०.२१
कठिनाइयाँ आपकी सहायक भी तो हैं १०.२२
दुःख से डरिये नहीं, उसका सामना कीजिये १०.२५

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विपत्तियों से डरकर नहीं लड़कर ही हम बढ़ सकते हैं १०.२६
अडिग निष्ठा के साथ कार्यक्षेत्र में उतरें १०.२८
महान वे बनते हैं जो कठिनाइयों से डरते नहीं १०.३०
हम किसी से क्यों डरें ? १०.३२
हम किसी से भी न डरें १०.३४
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्तोतिष्ठ परंतप १०.३५
हम धैर्य और साहस के साथ ही आगे बढ़ें १०.३६
जीवन से भागो नहीं, समझदारी से जियो १०.३८
चलते रहो-चलते रहो १०.४०
साहस का यह अभाव ही आत्महीनता १०.४३
भय का कारण और निवारण १०.४४
मन को दुर्बल न बनने दें १०.४५

११. मनस्विता के क्षेत्र में चिन्तन की भूमिका ११.१
चिन्तन-क्रम व्यवस्थित हो ११.१
न आत्म-विश्वास खोयें, न भयाक्रान्त रहें ११.२
आत्म-विश्वास ही सफलता का मूल-मन्त्र ११.३
प्रतिकूलताओं से जूझें, सन्तुलन बनाये रखें ११.५
स्वयं को दुर्भाग्यग्रस्त मत मानिए ११.६
प्रतिकूलताएँ कभी बाधक नहीं बनतीं ११.८
दृष्टिकोण बदला तो सब कुछ बदल गया ११.९
सफलता आपका जन्म-सिद्ध अधिकार है ११.१०

१२. व्यवस्था-बुद्धि की महिमा और गरिमा १२.१
क्षमता का अभाव कहीं भी है नहीं १२.१
शारीरिक और मानसिक कायाकल्प कैसे सम्भव हो १२.३
बुद्धि की तीक्ष्णता और सक्रियता को पैनी रखें १२.५
सूझ-बूझ का सुनियोजित विस्तार हो १२.७
अपनों को उत्कृष्टता के ढाँचे में भी ढाला जाय १२.९
महत्त्वाकांक्षा व्यवस्था बुद्धि की १२.११

१३. प्रबन्ध-व्यवस्था—एक विभूति, एक कौशल १३.१
इस अभाव की पूर्ति करनी होगी १३.१
अपने को इंजन स्तर का बनाया जाय १३.४
सुव्यवस्था और सुनियोजन १३.७
सामूहिक क्रिया-कलापों का संचालन १३.१०
तनाव से जूझना भी एक अनिवार्यता १३.१३
अधिक सतर्कताओं का समुच्चय १३.१६

१४. आकृति देखकर मनुष्य की पहचान १४.१
चेहरा आन्तरिक स्थिति का दर्पण है १४.१
बाल १४.४
नेत्र १४.६
भौंहें १४.८
नाक १४.९
दाँत १४.१०
होठ १४.११
गर्दन १४.११
कान १४.१२
मस्तक १४.१३
गाल १४.१४
कंधे १४.१४
पीठ १४.१४
छाती १४.१४
पेट १४.१५
बाहें १४.१५
रहन-सहन १४.१५

१५. हस्तरेखा विज्ञान १५.१
आकृति से प्रकृति का अनुमान १५.१
हाथ १५.३
हथेली १५.५
उँगलियाँ १५.५
अँगूठा १५.७
नाखून १५.८
नाखूनों में दाग १५.८
शंख-चक्र १५.८
तिल १५.८
ग्रह—विचार १५.९
हाथ की रेखाएँ १५.१०
रेखाओं के फल १५.११
कुछ अन्य चिन्ह १५.१४

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तुच्छ से महान बनाने वाला बल—मनोबल

मनुष्य और उसकी महान शक्ति

परमाणु शक्ति के सम्बन्ध में आधुनिक वैज्ञानिकों का कथन है कि जब उसकी सम्पूर्ण जानकारी मनुष्य को हो जायेगी तो सारे ग्रह, नक्षत्रों की दूरी ऐसी हो जायेगी जैसे पृथ्वी पर एक गाँव से दूसरा गाँव, किन्तु इसकी जानकारी का भी अधिष्ठाता मनुष्य है, अतः उसकी शक्ति का अनुमान लगाना भी असम्भव है। मनुष्य में वह सारी शक्तियाँ विद्यमान हैं जिनसे इस संसार का विनाश भी हो सकता है और निर्माण तो इतना अधिक हो सकता है कि उसका एक छोटा-सा रूप इस सुरम्य धरती को ही देख सकते हैं।

मनुष्य विधाता की रचना का सर्वश्रेष्ठ चमत्कारिक प्राणी है। अव्यवस्थित धरती को सुव्यवस्थित रूप देने का श्रेय उसे ही प्राप्त है। ज्ञान, विज्ञान, भाषा, लिपि, स्वर आदि की जो विशेषताएँ उसे प्राप्त हैं, उनसे निःसन्देह उसकी महत्ता ही प्रतिपादित होती है। मनुष्य इस संसार का समग्र सम्पन्न प्राणी है। महर्षि व्यास ने इस सम्बन्ध में अपना मत व्यक्त करते हुए लिखा है—

गुह्य ब्रह्म तदिदं ब्रवीमि नहिं मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित्।।

"मैं बड़े भेद की बात तुम्हें बताता हूँ कि मनुष्य से बढ़कर इस संसार में और कुछ भी नहीं है।" वह सर्वशक्ति-सम्पन्न है। जहाँ चाहे उलट-फेर कर दे, जहाँ चाहे युद्ध-मारकाट मचा दे। जी में आये तो शान्ति और सुव्यवस्था स्थापित कर दे। कोई भी कार्य ऐसा नहीं जो मनुष्य की सामर्थ्य से बाहर हो। धन, पद, यश आदि कोई वैभव ऐसा नहीं जिसे वह प्राप्त न कर सकता हो।

भगवान राम और कृष्ण भी मनुष्य ही थे, किन्तु उन्होंने अपनी शक्तियों का उत्कर्ष किया और नर से नारायण बनकर विश्व में पूजे जाने लगे। मनुष्य अपने पौरुष से—विद्या, बुद्धि और बल से—वैभव प्राप्त कर सकता है। देवत्व की उच्च कक्षा में प्रतिष्ठित हो सकता है, वह भगवान बन सकता है। उसकी शक्ति से परे इस संसार में कुछ भी तो नहीं है। शास्त्रकार का कथन है **"यद्ब्रह्माण्डे तत्पिण्डे"** अर्थात् जो कुछ भी इस संसार में दिखाई देता है वह सभी बीज रूप से मनुष्य के शरीर में, पिण्ड में विद्यमान है।

मनुष्य दीन, हीन और पददलित तभी तक है, जब तक वह अपने आपको पहचानता नहीं। तुलसीदास जी जब तक निकृष्ट जीवन व्यतीत करते रहे तब तक वे शोक-संताप में डूबे रहे, किसी ने उन्हें जाना तक नहीं; बेचारे मारे-मारे इधर से उधर घूमते रहे। किन्तु जैसे ही उनकी आन्तरिक शक्तियाँ प्रकाशित हुईं, तुलसीदास जी अमृत पुत्र हो गये, जन-जन की वाणी में समा गये, सन्त बन गये, महात्मा हो गये। वाल्मीकि, अंगुलिमाल आदि की कथाएँ सर्वविदित हैं। विल्वमंगल सूरदास के नाम से प्रसिद्ध हुए, इसके मूल में मानवीय अन्तःकरण का विकास ही सन्निहित है। वे शक्तियाँ, वह सामर्थ्य प्रत्येक मनुष्य में हैं। अन्तर केवल इतना है कि लौकिक कामनाओं से घिरा हुआ इन्सान पारलौकिक सम्भावनाओं का विचार तक नहीं करता, इसी कारण वह छोटा है, तुच्छ है, निकृष्ट है।

अपने प्रभाव से मनुष्य चेतनाविहीन प्राणियों को भी नवजीवन देने की शक्ति रखता है। उसने देश, समाज और राष्ट्र तक बदल डाले हैं। मनुष्य सामाजिक जीवन का निर्माता है, उससे राष्ट्र को बल मिलता है। मानवीय शक्ति की एक चिनगारी से युग परिवर्तित हुए हैं, हो रहे हैं और यह क्रम आगे भी युग-युगान्तरों तक चलता रहेगा। वह जिधर चलता है, दिशाएँ चलने लगती हैं; रुकता है तो सारा संसार निष्प्राण हो जाता है। मनुष्य ही संसार की गति, जीवन और प्राण है। वह न होता तो सारा संसार ऊबड़-खाबड़, अस्त-व्यस्त और जड़वत् पड़ा होता। धरती पर यही प्राण बिखराता और विभिन्न प्रकार के खेल रचाया करता है।

वैज्ञानिक आविष्कारों और औद्योगिक संस्थाओं की ओर दृष्टि घुमाने से उसकी महत्ता की बात और भी पुष्ट होती है। लगता है चाहे जब अणु-आयुधों का प्रयोग करके वह सारी धरती को तहस-नहस कर डाले। यह भी सम्भव है कि वह इस शक्ति का उपयोग रचनात्मक कार्यों में करने लगे। तब तो स्वर्ग के सभी बहुमूल्य पदार्थ यहीं प्राप्त करने में कोई मुश्किल शेष न रहेगी। मनुष्य के अन्दर भगवान का तेज, सृष्टि का सत्व, सिद्धियों के स्रोत देखकर उसे प्रभु का प्यारा कहने को मन करता है। लगता है, इन्हीं विशेषताओं के कारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संसार के दूसरे प्राणी शारीरिक शक्तियों में प्रबल होते हुये भी उसे शीश झुकाते हैं।

इतना होते हुए भी मनुष्य की यह दलित और गलित अवस्था देखकर एकाएक उसकी शक्तियों पर विश्वास नहीं होता। इसका एक ही कारण है कि लोग सुख-प्राप्ति के साधनों में भटक जाते हैं और अपनी शक्तियों से वंचित बने रहते हैं। सुख और शक्ति का मूल है। मनुष्य की आत्मा। जब तक वह आत्म-साक्षात्कार नहीं कर लेता तब तक उसकी शक्ति ऐसी ही है जैसे घर में अपार सोना गढ़ा है, पर वह किस स्थान पर, कितनी गहराई पर गड़ा है, इस ज्ञान के अभाव में उस सोने की कोई महत्ता नहीं।'' आत्मा ही सिद्धियों की जननी है। ब्रह्म तादात्म्य का कारण और माध्यम भी वही है। उसे पहचाने बिना मनुष्य शक्तिवान् नहीं हो सकता। इसके लिये मनुष्य को साधना, स्वाध्याय, संयम एवं पारमार्थिक जीवन का अभ्यास करना पड़ता है, तब उस शक्ति का अभ्युदय होना संभव हो सकता है।

आत्म-ज्ञान प्राप्त करने के लिये कुल, देश और काल का कोई बंधन नहीं है। अपनी श्रद्धा, निष्ठा, विश्वास, लगन और तत्परता के बल पर हीन कुल में उत्पन्न व्यक्ति भी आत्मोद्धार कर सकता है। अजामिल, गुह, रैदास और कबीर आदि सन्तों के जीवन से यह प्रमाणित होता है कि आत्म-ज्ञान प्राप्त करने के लिये वर्ण-व्यवस्था बाधक नहीं। जीवन-शोधन के द्वारा नीच कुल में उत्पन्न व्यक्ति भी सवर्णों जैसी ही आध्यात्मिक स्थिति प्राप्त कर सकता है। इसी प्रकार सतयुग, द्वापर, कलियुग की सीमाएँ भी इस मार्ग में रुकावट नहीं डालती है। हमारे पूर्व पुरुष अनन्त शक्तियों के स्वामी थे। यह उत्तराधिकार किसी न किसी रूप में हमें भी प्राप्त है और आगे भी यह क्रम सदैव इसी भाँति चलता रहेगा। संस्कृति, शिक्षा और सदाचार के अनुरूप कुल और काल में—आत्मज्ञानी पुरुषों में न्यूनाधिक्य तो हो सकता है किन्तु यह परिस्थितियाँ इनसे प्रतिबन्धित नहीं हैं।

आत्म-परिष्कार निःसंदेह एक प्रकार का तप है। इससे कई व्यक्ति अपनी असमर्थता प्रकट करने लगते हैं। बचाव के लिये लोग यह कहा करते हैं ''हमारी तो अब अवस्था नहीं रही। या हम अब बुड्ढे हो गये, अब तो मन भी नहीं लगता। या हम तो अभी नवयुवक हैं, अभी हमारे हँसने-खेलने के दिन हैं। धर्म-कर्म की बातें तो वृद्धावस्था में चलती हैं'' आदि-आदि। पर इसलिये वस्तुस्थिति बदलती नहीं। आत्मा जन्म-मरण रहित है। उसे न बुढ़ापा आता है, न मृत्यु होती है। प्रत्येक परिस्थिति में वह एक-सा होता है। ऐसा न होता तो ध्रुव पाँच वर्ष की अवस्था में पूर्णता प्राप्त न करते। जगद्गुरु शंकराचार्य ने इकत्तीस वर्ष की अवस्था में ही वह कार्य पूरा कर दिखाया था जो कोई सौ वर्ष का भी व्यक्ति नहीं कर सकता था। सन्त ज्ञानेश्वर ने १५ वर्ष की अवस्था में गीता की सुप्रसिद्ध ज्ञानेश्वरी टीका लिखी थी। अमरीका के प्रख्यात आविष्कारक एडिसन १३५ वर्ष के बाद तक सृष्टि के महत्त्वपूर्ण रहस्य खोजने में लगे रहे और सफलता पाई। आत्मोन्नति के मार्ग में आयु का कम या ज्यादा होना बाधक नहीं है, आवश्यकता केवल अपने संस्कारों के जागरण की होती है।

उन्नतिशील होना पूर्णतया भाग्य पर भी निर्भर नहीं है। विचारपूर्वक देखने से यह पता चलता है कि परमात्मा से जो साधन मनुष्यों को मिले हैं, वे प्रायः समान हैं, हर किसी को दो हाथ, दो पाँव, नाक, आँख, मुख आदि एक जैसे मिले हैं। विचार, विद्या आदि के साधन भी प्रत्येक मनुष्य अपनी लगन के अनुसार प्राप्त कर सकता है। भाग्यवादी सिद्धान्त कायरों और कापुरुषों का है। पुरुषार्थ एक भाव है और उसका कर्त्ता पुरुष है अर्थात् मनुष्य अपने भाग्य का निर्माण अपने पौरुष से करता है। अपनी पूर्व असमृद्धि से किसी को अपनी क्षुद्रता स्वीकार नहीं कर लेनी चाहिये। बलवान आत्माएँ प्रतिकूल दिशा में भी उन्नति करती हैं। मनुष्य के व्यक्तित्व का सच्चा परिष्कार तो कठिनाइयों में ही होता है।

बाह्य साधनों के अभाव का रोना भी अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है। आपके पास फाउन्टेनपेन नहीं है तो क्या इससे लिखने का काम रोक देना चाहिये ? आप होल्डर से भी काम चला सकते हैं, कलम या पेन्सिल ही इस्तेमाल करलें तो क्या हर्ज है ? मनुष्य साधनों का दास नहीं है, वह साधन स्वयं बनाता है। धन स्वतः पैदा नहीं होता; किया जाता है। इसलिये निर्धनता पर आँसू बहाना हम अकर्मण्यता मानते हैं। उद्योगी पुरुष तो हजार हाथ कुआँ खोदकर भी पानी निकाल लेते हैं। आत्म-शोधन भी किसी साधन के अभाव में रुकता नहीं। यदि अपना मनोबल कमजोर न हो तो गई-गुजरी अवस्था में भी आत्म-कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया जा सकता है।

अपनी इच्छाशक्ति दृढ़ हो तो स्थान, संगठन आदि के अत्यन्त छोटे अभाव भी आत्मोत्थान में बाधा पहुँचा नहीं सकते। संसार के अधिकांश महापुरुषों ने तो आत्म-ज्ञान प्राप्त करने के लिये अपनी सुख-सुविधाओं का त्याग भी कर दिया था। एक दृष्टि से भौतिक सम्पन्नता आध्यात्मिक विकास में बाधक मानी गई है क्योंकि इससे मनुष्य की चेष्टाएँ अन्तर्मुखी नहीं हो पातीं। मनुष्य सांसारिक विषय-वासनाओं में ही फँसा रहता है। हमारे ऋषियों ने इसीलिये यज्ञीय जीवन की परम्परा को जन्म दिया है। वे स्वयं त्यागमय जीवन जीते थे, ऐसा ही आदेश वे हमें भी दे गये हैं। उनके ऐसा करने का एक ही उद्देश्य था कि मनुष्य अपनी आवश्यकताएँ बढ़ाकर आत्म-कल्याण के मार्ग से कहीं विचलित न हो जाय।

योग-वाशिष्ठ में कहा गया है कि मनुष्य अपनी आत्मा के दर्शन अपनी ही शक्तियों को प्रयुक्त करके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करें, कोई बाह्य शक्ति आपकी सहायता नहीं कर सकती—

यद्यदासाद्यते किञ्चित्केनचित्क्वचिदेव हि।

स्वशक्तिसंप्रवृत्या यल्लभ्यते नान्यतः क्वचित्।

अर्थात् मनुष्य यदि कुछ प्राप्त करता है तो अपनी ही शक्तियों के द्वारा। बाहरी साधन सीमित सहायता मात्र दे सकते हैं। इसी प्रकार **सन्त इमर्सन** का कथन है "मनुष्य अपनी सहायता आप ही कर सकता है।"

जिन सद्गुणों के आधार पर मनुष्य उन्नति के पथ पर अग्रसर होता है, उनमें से प्रमुख है—आत्म-विश्वास। अँग्रेजी के प्रमुख कवि **टेनिसन** ने लिखा है "जीवन शक्ति-सम्पन्न हो सकता है, यदि हममें आत्म-विश्वास, आत्म-ज्ञान और आत्म-संयम हो।" मनुष्य व्यर्थ ही लौकिक कामनाओं में डूबा रहता है। इससे उसका कोई भी प्रयोजन पूरा नहीं होता। मनुष्य का ध्येय इससे शरीर सुख तक ही सीमित हो जाता है। किन्तु जब वह यह विचार करने लगता है कि शरीर जड़ और चेतन शक्तियों का सम्मिश्रण है, तो उसकी आध्यात्मिक आस्था जाग्रत होती है। इसी का नाम आत्म-विश्वास है। इसी से आत्म-क्षुद्रता का निवारण होता है।

संकल्प कर लेने मात्र से ही सफलता नहीं मिल सकती। इसके लिये क्रियाशील होना पड़ता है और संयमित जीवन द्वारा शारीरिक शक्तियों को गतिशील रखना पड़ता है। सौन्दर्य लहरी में जगद्गुरु शंकराचार्य ने लिखा है—

शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं।

न चेदेवं देवो न खलु कुशलः स्पन्दितुमपि।।

अर्थात् संकल्प सिद्धि के लिये कर्म करना पड़ता है कर्म का आधार शक्ति है, तभी सामर्थ्य बनती है। शक्ति न हो तो क्रियाशीलता भी न रहेगी।

इस प्रकार मनुष्य जब धीरे-धीरे अपने दोष-दुर्गुणों को हटाकर श्रेष्ठ संस्कारों को धारण करने लगता है तो उसके जीवन में, दृष्टिकोण में स्वभावतया परिवर्तन होने लगता है। भोग-विलास की लालसा मिट जाती है और आत्मज्ञान की इच्छा बलवान होती जाती है। वैसे ही साधन भी मिलते जाते हैं और जीवन-क्रम सरलतापूर्वक लक्ष्य प्राप्ति की ओर अग्रसर होने लगता है। यह साधन बाह्य नहीं होते, वरन् आन्तरिक विशेषताएँ ही होती हैं। सत्य, अहिंसा, प्रेम, त्याग, सेवा, आशा, उत्साह, धैर्य, स्वाध्याय, संयम, सदाचार आदि के द्वारा उसका परिष्कार होकर शुद्ध, निर्मल तथा पवित्र आत्मा के दर्शन होने लगते हैं।

यही वह स्थिति होती है जहाँ सम्पूर्ण शक्तियाँ आकर केन्द्रीभूत हो जाती हैं और **"अहं ब्रह्मास्मि, अयमात्माब्रह्म"** की शक्तिशाली भूमिका पर मनुष्य पदार्पण कर जाता है। मनुष्य जिस उद्देश्य को लेकर इस धरती पर आता है उसकी पूर्ति हो जाती है और वह अनन्त सिद्धियों का स्वामी बनकर सुखोपभोग करता है। जिन्हें सुख की कामना हो उन सबके लिये भी यही रास्ता है कि अपना पौरुष जाग्रत करें, शक्तिशाली बनें। तभी सच्चा सुख मिल सकता है।

प्रतिभा और संकल्प शक्ति का केन्द्र—मानवी मन

मनोमय कोश मस्तिष्क के मन और बुद्धि संस्थानों से सम्बन्धित है। उसकी साधना हमारी बुद्धि, कल्पना, स्मरण शक्ति आदि के क्षेत्रों को सुविकसित करती है। कालिदास, वरदराज जैसे मन्दमति प्रयत्न-पुरुषार्थ से विद्वान, बुद्धिमान बने थे। यह अनगढ़ को सुगढ़ बनाने की प्रक्रिया है। इसे प्रशिक्षण द्वारा विकसित करने का उपाय सर्वविदित है। अध्यात्म प्रयत्नों द्वारा इस प्रयोजन को किस प्रकार पूरा किया जाय, उसी के प्रयोग में मनोमय कोश की साधना सहायता करती है।

इस साधना का दूसरा क्षेत्र है—साहसिकता का संकल्प-शक्ति का अभिवर्धन। चिन्तन में उत्कृष्टता और क्रियाकलाप में आदर्शवादिता का समावेश करने वाली वे सद्विचारणाएँ भी इसी क्षेत्र में विकसित होती हैं जो चरित्रनिष्ठा विकसित करने के लिए उत्तरदायी हैं।

शिक्षा के आधार पर ज्ञान सम्पदा, बौद्धिक तीक्ष्णता एवं क्रिया कुशलता बढ़ाने के प्रयत्न होते हैं। इसके साथ संकल्प-शक्ति का महत्त्व भी समझा जाना चाहिए, वे उपाय भी अपनाये जाने चाहिए, जिनके आधार पर व्यक्ति संकल्पवान बनता है और प्रगति के पथ पर अग्रसर होने में सफल होता है। मनोमय कोश को जाग्रत करने के उपाय जो भी हों पर संकल्प-शक्ति का उदय उसी क्षेत्र से होता है।

प्रगति-पथ पर अग्रसर होने के लिए—अभावों और असुविधाओं से लड़ने के लिए, प्रतिकूलताओं को अनुकूलता में बदलने के लिए, न केवल साधन सामग्री की अभिवृद्धि आवश्यक है, वरन् यह और भी अधिक अभीष्ट है कि मानवी संकल्प-शक्ति को बढ़ाया जाय। मात्र साधनों की बहुलता से तो मनुष्य विलासी और आलसी भी बनता चला जायेगा। इससे उसकी अकर्मण्यता, अशक्तता और अदक्षता ही बढ़ेगी। प्रगति के इतिहास में साधनों एवं परिस्थितियों का उतना योगदान नहीं है जितना कि विचारणा और आकांक्षा का। संकल्प इन्हीं के समन्वय को कहते हैं। संकल्प की प्रखरता ही प्रगति का पथ प्रशस्त करती है। जहाँ इसकी कमी होगी, वहाँ प्रगति का रथचक्र उतना ही अवरुद्ध एवं दलदल में फँसा दिखाई पड़ेगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

१.४ मनस्विता, प्रखरता और तेजस्विता

विकासवाद के अनुसार, सृष्टि के आरम्भ में एककोशीय एवं बहुकोशीय जन्तुओं की शरीर रचना बहुत ही सरल थी। प्राचीनतम प्राणी 'प्रोटोजोन्स' वर्ग के थे। वे एक कोशीय थे। अमीबा, यूग्लीना, पैरामीशियम, वर्टीमेला का आरम्भ इसी रूप में हुआ। पीछे उनमें संकल्प-शक्ति जगी, वे सुरक्षा और सुविधा की आवश्यकता अनुभव करने लगे। इसके लिए उन्हें पारस्परिक सहयोग का उपाय सूझा और उसके लिए सम्मिलित प्रयास करने में जुट गये। 'बालकाक्स' वर्ग के जीव छोटे परिवार बनाकर रहने लगे। उनने मिल-जुलकर काम करने की व्यवस्था बनाई। कर्त्तव्य और उत्तरदायित्व बाँटे। इनमें से कुछ आहार जुटाने में, कुछ सुरक्षा सम्भालने में, कुछ वंशवृद्धि करने में, कुछ सुविधा सम्पादन में, कुछ व्यवस्था संचालन में लग गये। आदिम काल की वर्ण-व्यवस्था यहीं से आरम्भ हुई। सहयोग के आधार पर न केवल सुविधा बँटी, वरन् उनका निज का स्वरूप एवं अस्तित्व भी विकसित होता चला गया। एककोशीय जन्तुओं ने अपना काय-कलेवर बहुकोशीय 'मल्टी सेल्यूलर' वर्ग के जन्तुओं में विकसित कर लिया। वे सरल से जटिल होते गये। इसी चेतनात्मक स्फुरणा को प्रकृति की मौलिक क्रिया माना गया है। विकास के मूल में यही तत्व काम कर रहा है। इसी को संकल्प शक्ति का चमत्कार भी कह सकते हैं।

एककोशीय जीवों की तुलना में बहुकोशीय जीवों की काया काफी समुन्नत, बनावट की दृष्टि से जटिल बनती गई। स्पंज, हाइड्रा, जेलीफिश, कोरल, एनीमोन आदि बहुकोशीय जीवों की स्थिति तक पहुँचने पर भी उनके शरीरों में भोजन और मल विसर्जन के लिए एक ही छिद्र था। इन दो प्रयोजनों के लिए दो द्वार तो आगे चलकर बने। विकास का रथ इसी मार्ग पर बढ़ता चला गया है। हड्डियाँ विकसित हुईं, मेरुदण्ड बने, बिना खोपड़ी वाले जीवों के शरीर में मस्तिष्कीय चेतना की उपयोगिता देखते हुए खोपड़ी के मजबूत किले बनकर खड़े हो गये। जलचरों ने थल में रहना सीखा। उनमें से कुछ तो हवा में उड़ने की हिम्मत करने लगे। यही विकास क्रम उद्भिज, स्वेदज, अंडज, जरायुज प्राणियों में अग्रसर हुआ है। प्राणियों की अनेक क्षमताएँ उनके काय विकास के साथ-साथ बढ़ती चली आई हैं। इन्द्रियों की क्षमता और अवयवों की संरचना का क्रम गाड़ी के दो पहियों की तरह साथ-साथ बढ़ा है। इसी मार्ग पर चलते हुए आदिमकालीन एककोशीय जीवन वर्तमान स्थिति तक पहुँचा है। दोनों परिस्थितियों में जमीन-आसमान जैसा अन्तर देखा जा सकता है।

विकास की इस प्रक्रिया के आधारभूत कारण खोजने में वैज्ञानिकों ने अपने-अपने ढंग से प्रयत्न किये हैं और अपने-अपने दृष्टिकोण-निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं। **लेमार्क** और **ह्यूगोडिब्रीज** ने इस सम्बन्ध में बहुत कुछ खोजा और बताया है। अपनी शताब्दी में **चार्ल्स डार्विन** ने बहुत ख्याति प्राप्त की है। प्रायः सभी प्रगतिशील देशों में इस सन्दर्भ में काफी खोजें हुई हैं। इन प्रतिपादनों में जीवतत्त्व को मात्र रासायनिक पदार्थ मानकर विज्ञानवेत्ता एक विचित्र उलझन में फँस गये हैं। 'प्रोटोप्लाज्मा' में काय-कलेवर को बनाने और चलाने की क्षमता तो है, पर क्रमिक विकास की ओर बढ़ सकने जैसी क्षमता उसमें किसी भी प्रकार सिद्ध नहीं होती। फिर विकास क्रम किस प्रकार निरन्तर अग्रसर होता चला आया ?

नये वैज्ञानिक प्रतिपादनों के अनुसार प्रोटोप्लाज्मा के समतुल्य ही एक-दूसरे जीवतत्त्व की सत्ता स्वीकार की गई है। वह है—'ईडोप्लाज्मा'। वंश परम्परा में अब इन दोनों का समान योगदान माना जाने लगा है। वंशानुक्रम की मात्र रासायनिक पदार्थों के आधार पर व्याख्या अधूरी और असमाधानकारक ही रही है। अभिरुचियाँ, आस्थाएँ, मान्यताएँ रसायनों के माध्यम से बनी रहने और परिष्कृत होते चलने का कोई तुक नहीं बैठता। 'ईडोप्लाज्मा' के संयोग से वह बात बनती है। यह दोनों तत्त्व एक नहीं हैं। उनकी सत्ता स्वतन्त्र है। वे एक-दूसरे के पूरक भर हैं। यहाँ प्रोटोप्लाज्मा को पदार्थ सत्ता का और ईडोप्लाज्मा को—चेतना का प्रतिनिधित्व करते हुए पाया जाता है। गतिशीलता, समर्थता, आकांक्षा स्थिति के अनुरूप परिवर्तन, प्रजनन उत्साह, सुरक्षा के लिए संघर्ष, खाद्य पदार्थों को ऊर्जा के रूप में बदल लेना आदि कितने ही कार्य ऐसे हैं जिन्हें प्रोटोप्लाज्मा के हाथ से छीन लिया गया है और उनका श्रेय ईडोप्लाज्मा को दिया गया है। परमाणु निर्धारित हलचलें करते रह सकते हैं, पर वे उत्साह एवं परिवर्तन की स्फुरणा अपने भीतर से प्रकट नहीं कर सकते। जीवाणु की यही मौलिक विशेषताएँ हैं, जिनसे उसे पदार्थ वर्ग में रासायनिक संगठनों में गिन लेने मात्र से समाधान नहीं हो सकता।

जीवन तत्त्व की रासायनिक व्याख्याएँ कभी बड़े उत्साह के साथ की जाती थीं, पर अब वह जोश ठण्डा पड़ गया है और जीवन सत्ता के सम्बन्ध में स्वतन्त्र रूप से सोचने और खोजने की आवश्यकता अनुभव की जा रही है। मूर्धन्य जीव विज्ञानी **ई. के. लेन कास्टर** का कथन है—"भौतिक जगत में चल रही हलचलों के साथ जीवन सत्ता का तालमेल नहीं बैठता। उस निरूपण के पक्ष में प्रस्तुत किये गये प्रतिपादन ओछे पड़ते हैं। जीवन का एक स्वतन्त्र विज्ञान होना चाहिए। पदार्थ विद्या के बटखरों से उसकी नाप-तौल ठीक प्रकार हो सकना सम्भव नहीं दीखता।"

पदार्थ में केवल अस्तित्व है। उसमें न तो जीवन है और न हलचल। वनस्पति में अस्तित्व के साथ-साथ जीवन भी है। प्राणियों में अस्तित्व, जीवन और अनुभूति तीनों हैं। किन्तु विवेचना बुद्धि और स्वतन्त्र इच्छा की न्यूनता है। जीवन-निर्वाह के परम्परागत अनुभवों और आवश्यकताओं के अनुरूप ही उनके चिन्तन की गाड़ी एक बनी-बनाई पटरी पर लुढ़कती जाती है। मनुष्य की

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चेतना सुविकसित स्तर पर पहुँची हुई इसीलिए मानी जाती है कि उसकी संकल्प शक्ति, विवेचनात्मक क्षमता ने काफी प्रगति करली है जबकि अन्य जीवधारी शारीरिक दृष्टि से अपेक्षाकृत अधिक बलिष्ठ होते हुए भी चेतना के क्षेत्र में पिछड़े हुए हैं। जड़ और चेतन की आणविक हलचलों में समानता हो सकती है। पर यह सम्भव नहीं दीखता कि पदार्थ कभी चेतन के समतुल्य प्रगति कर सकने में समर्थ हो सकेगा। क्या धातुएँ कभी पक्षियों की तरह आकाश में उड़ने, चहचहाने तथा अण्डे देने में समर्थ हो सकेंगी ? जीवन को रासायनिक सिद्ध करने के प्रयत्नों से काम चलता न देखकर कोल्बिन, हैमरीज, किचनर, अरर्हेनिस आदि वैज्ञानिकों ने अपने-अपने शब्दों में यह कहा है—'जीवन किसी अन्य लोक से भूलता, भटकता पृथ्वी पर आ पहुँचा है, पर वह है पदार्थ से भिन्न। यों उसकी सत्ता पदार्थ के समन्वय से ही चिन्तनात्मक प्रयोजन पूरे कर सकती है।'

इससे एक कदम आगे बढ़कर **पास्ट्यूर** और **टैण्डाल** ने कहा है—''जीवन पदार्थ से नहीं जीवन से ही उत्पन्न होता है, हो सकता है।'' विकास इतिहास की पृष्ठभूमि का पर्यवेक्षण करते हुए वे कहते हैं—आदिम काल में 'सैल' किसी दबाव से नहीं स्वेच्छा से वंश वृद्धि करते थे। पीछे वे नर और मादा के रूप में बँट गये। संयोग का आनन्द लेना और उत्तरदायित्व सम्भालना शुरू किया। ऐसी-ऐसी अनेक उलट-पुलट करते-करते जीवधारी वर्तमान स्थिति तक बढ़ते चले आये हैं। यह स्फुरणा का ही चमत्कार है। यही वह मौलिक अन्तर है जो जड़ और चेतन के बीच भिन्नता की दीवार खड़ी करता है।

आइन्स्टीन कहते थे—'अणुसत्ता पर किसी अविज्ञात चेतना का अधिकार और नियन्त्रण है। पदार्थ मौलिक नहीं है उसका उद्भव चेतना की प्रतिक्रिया से ही सम्भव हुआ है। आज यह तथ्य प्रयोगशाला में सिद्ध नहीं होते तो भी मेरा विश्वास है कि आज न सही कल यह सब सिद्ध होकर ही रहेगा।

जीवन का मूल स्वरूप उसकी चिन्तन स्फुरणा के साथ जुड़ा हुआ है। विचारणा और आकांक्षा के समन्वय से जो 'संकल्प' उठता है, उसी में प्रगति की समस्त सम्भावनाएँ सन्निहित हैं। विकासवादी प्रगति पर दृष्टिपात करने पर हमें इसी निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है। वे एक जैसी परिस्थितियों में रहने पर भी एक की प्रगति, दूसरे की यथास्थिति और तीसरे की अवगति का अन्तर देखकर इसी निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि यह संकल्प शक्ति की न्यूनाधिकता का ही प्रभाव है। साधनों के अभाव में भी लोग आगे बढ़ते हैं। सहयोग के बिना भी प्रगति करते हैं। इसके पीछे उनकी प्रखर संकल्प-शक्ति ही काम करती है। आगे बढ़ने वालों के पीछे साधन भी बनता है और सहयोग भी जुटता है। मोटर दौड़ती है तो उसके पीछे धूलिकण और पत्ते भी उड़ते चले आते हैं। संकल्प ही मानव जीवन की सर्वोपरि शक्ति है। उसके सहारे सामान्य स्थिति से आगे बढ़कर असामान्य स्तर तक पहुँचा जा सकता है। अन्धकार में प्रकाश उत्पन्न करने की, निराशा में आशाजनक सम्भावनाएँ प्रस्तुत करने की क्षमता उसी में है। ऊँचे उठने और आगे बढ़ने के लिए साधन जुटाने और सहयोग बनाने की आवश्यकता सभी मानते हैं, पर यह भुला नहीं दिया जाना चाहिए कि ये उपलब्धियाँ प्रचण्ड संकल्प-शक्ति उभारे बिना मिल नहीं सकतीं। किसी प्रकार संयोगवश मिल भी जायँ तो स्थिर नहीं रह सकतीं। प्रगति का मूल-मन्त्र 'संकल्प' को मानकर चला जाय और सर्वप्रथम उसी के उपार्जन, अभिवर्धन का प्रयत्न किया जाय तो यह निश्चित रूप से व्यावहारिक एवं बुद्धिमत्तापूर्ण प्रयास माना जायेगा।

मनःसंस्थान ज्ञान, अनुभव एवं कौशल का ही नहीं, प्रतिभा का भी क्षेत्र है। उत्कृष्टता के प्रति आस्था के बीज भी इसी भूमि में जमते हैं। संकल्प शक्ति का उद्गम केन्द्र यही है। मनोमय कोश की साधना द्वारा यदि इन विभूतियों को जाग्रत एवं उपलब्ध किया जा सके तो उस दिशा में किया गया प्रयत्न सामान्य कार्यों की दौड़-धूप से कम नहीं, अधिक ही लाभदायक और बुद्धिमत्तापूर्ण सिद्ध होगा।

इच्छाशक्ति की साधना से अदृश्य दर्शन

किसी वस्तु की इच्छा करना एक बात है और इच्छा के साथ शक्ति का संयोजन करना इससे सर्वथा भिन्न बात है। इच्छा तो प्रायः सभी व्यक्ति किया करते हैं कि हम धनवान हो जायें, विश्वभर में हमारी कीर्ति फैल जाय और जो भी हम चाहें वह तुरन्त प्राप्त हो जाय। लेकिन कितने व्यक्तियों की इच्छाएँ पूरी होती हैं ? वस्तुतः इच्छा के साथ शक्ति का संयोग ही उनकी पूर्ति के आधार खड़ा करता है। इस शक्ति के कारण ही संकल्प मात्र से परमात्मा ने सृष्टि कर डाली। माण्डूक्यकारिका में कहा गया है—**इच्छामात्रं प्रभोः सृष्टिः** (यह सृष्टि प्रभु की इच्छा मात्र है) क्योंकि प्रभु की इच्छाशक्तिसम्पन्न और समर्थ है।

इस तथ्य को सोदाहरण समझाते हुए काशी के प्रसिद्ध सन्त और सिद्धयोगी स्वामी विशुद्धानन्द ने अपने एक शिष्य से कहा, शिष्य के साथ दो अन्य व्यक्ति भी थे, उन्होंने तीनों शिष्यों की जिज्ञासा का समाधान करते हुए कहा—देखो ! इच्छाशक्ति के विषय में, मैं तुम्हें एक प्रयोग बताता हूँ। तुम तीनों अपने हाथ की मुट्ठी बाँध लो और उसमें रखने लायक किसी भी वस्तु की इच्छा करो।'' तीनों शिष्य मुट्ठी बाँधकर स्वामीजी के निर्देशानुसार मनचाही वस्तु की इच्छा करने लगे। कुछ देर बाद स्वामीजी ने कहा—'मुट्ठी खोलकर देखों ! तुम्हारी वस्तु मुट्ठी में आ गयी है या नहीं। तीनों शिष्यों ने मुट्ठी खोल कर देखा तो वह पहले जैसी ही खाली

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिली।' बाबा ने फिर कहा—एक बार और मुट्ठी बाँधो तथा पुनः अपनी इच्छित वस्तु का चिन्तन करो। तुम लोगों ने यह तो देख लिया कि मात्र इच्छा से कुछ नहीं होता। अब मैं तुम्हारी इच्छा में शक्ति का संचार करता हूँ। तीनों शिष्यों ने फिर मुट्ठियाँ बन्द कर लीं। बाबा के कहने पर जब उन्होंने मुट्ठियाँ खोलीं तो पाया कि तीनों की मुट्ठियों में इच्छित वस्तुएँ हैं।

इस घटना की व्याख्या में सिद्धयोगी ने अपने शिष्यों को बताया—तुम्हारी इच्छा और मेरी शक्ति दोनों मिलकर ही इच्छाशक्ति के रूप में परिणत हो गयीं। जब तुम स्वयं अपनी शक्ति का विकास कर लोगे तो तुम्हें इस शक्ति-संचार की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।

जहाँ कहीं भी कभी चमत्कारी घटनाओं के विवरण मिलते हैं, इच्छाशक्ति ही उनके मूल में विद्यमान रहती है। अमेरिका के 'मिशिगन पैरासाइकिक रिसर्च सेण्टर' ने इस प्रकार की कितनी ही घटनाओं के विवरण संकलित किये और उनकी वास्तविकता की जाँच की। रिसर्च सेण्टर द्वारा खोज के लिए चुनी गई घटनाओं में से कई निराधार और झूठ थीं परन्तु ऐसी भी कितनी ही घटनाएँ निकलीं, जिनसे इच्छाशक्ति के चमत्कारों तथा उसके विकास सम्बन्धी नियमों के बारे में नयी जानकारियाँ मिलीं।

न केवल अमेरिका वरन् रूस में भी जहाँ स्थूल से परे किसी वस्तु या शक्ति का अस्तित्व पहली ही प्रतिक्रिया मे झूठ, मिथ्या और फ्रॉड समझा जाता है, ऐसे कई व्यक्ति हैं जो अपनी इच्छाशक्ति की अद्भुत सामर्थ्य का वैज्ञानिक परीक्षण करवाने में भी निस्संकोच आगे आये। रूस की महिला श्रीमती मिखाइलोवा अपनी अतीन्द्रिय सामर्थ्य के लिए विख्यात हैं। एक रात्रि भोज में, जिसमें प्रसिद्ध रूसी पत्रकार वादिम मारिन भी उपस्थित थे, लोगों के आग्रह पर मिखाइलोवा ने कुछ चमत्कार प्रस्तुत कर उपस्थित लोगों को हैरत में डाल दिया। वादिम मारिन ने अपने पत्र को ताजे अंक में उस प्रदर्शन के बारे में लिखा—'वहाँ मेज पर कुछ दूर एक डबलरोटी रखी थी। उन्होंने उसकी ओर निर्निमेष दृष्टि से देखना आरम्भ किया। कुछ ही क्षणों के पश्चात् डबलरोटी उनकी ओर सरकने लगी, जैसे ही डबलरोटी उनके निकट आयी, वैसे ही श्रीमती मिखाइलोवा ने झुककर थोड़ा मुँह खोला और वह डबलरोटी उनके खुले मुँह में पहुँच गयी।

रूस के ही एक, दूसरे मनोश्चिकित्सक **डॉ. बैन्शनोई** अपनी अलौकिक शक्ति के लिए विख्यात हैं। वे किसी भी वस्तु पर केवल दृष्टि केन्द्रित कर उसे अपने स्थान से हटा सकते हैं और किसी खाली पात्र को दूध या किसी अन्य वस्तु से परिपूर्णतः कर सकते हैं। इन बातों पर रूस में अभी तक बहुत कम विश्वास किया जाता है। इसलिए कुछ वैज्ञानिकों ने बैन्शनोई की परीक्षा लेने का कार्यक्रम बनाया। वैज्ञानिकों ने हर तरह से डा. बैन्शनोई के प्रत्येक कार्यक्रम की परीक्षा ली और उनको बारीकी से जाँचा परन्तु कहीं कोई धोखा-धड़ी या हाथ की सफाई नहीं दिखाई दी।

डॉ. नन्डोर फीडोर ने एक पुस्तक लिखी है 'बिटवीन टू वर्ल्डस्' इस पुस्तक में उन्होंने कितनी ही ऐसी घटनाओं का उल्लेख किया है, जिनके मूल में स्थूल मानवीय सामर्थ्य से परे कोई शक्ति काम करती थी। एक प्रसिद्ध मनोविज्ञानवेत्ता सिगमण्ड फ्रायड को परामानसिक शक्तियों पर विश्वास नहीं था। डा. फीडोर ने लिखा है कि एक बार उनके पास जुंग नामक व्यक्ति आया, जुंग को फ्रायड ने चुनौती दी तो उसने अपनी अलौकिक शक्ति का प्रदर्शन किया। जुंग अपने ही स्थान पर खड़ा रहा पर कमरे की वस्तुएँ इस तरह काँपने लगीं जैसे कमरे में भारी भूकम्प आ गया हो। कमरे की सारी पुस्तकें उड़-उड़कर फर्श पर इस तरह जमा हो गयीं जैसे किसी समझदार व्यक्ति ने इन्हें उठाकर करीने से रखा हो।

अमेरिका के यूरी गैलर ने इच्छाशक्ति के माध्यम से लोहे के सरियों को मोड़ने, छुरी और चम्मचों को तोड़ने के कई सफल प्रयोग किये हैं और उनके परीक्षणों को कई चोटी के पत्रकारों, वैज्ञानिकों तथा बुद्धिजीवियों ने देखा है। अन्य प्रदर्शनकर्त्ताओं की भाँति यूरी गैलर को भी सन्देह की दृष्टि से देखा गया, परन्तु ऐसा कोई छिद्र अब तक दिखाई नहीं दिया है जिसके आधार पर यूरी गैलर को फ्रॉड या धोखा कहा जा सके।

भारतीय महर्षियों ने इन शक्तियों को इच्छा-शक्ति के साधारण चमत्कार कहा है। महर्षि पतंजलि ने मन को शुद्ध और अन्तःकरण को पवित्र बनाकर चित्त की एकाग्रता साधने मात्र से अणिमा, महिमा, लघिमा आदि सिद्धियाँ प्राप्त होने की बात कही है। अध्यात्म को विज्ञान की दृष्टि से देखने, समझने और विश्लेषण करने वाले व्यक्तियों ने ही इन चमत्कारों को साधारण इच्छाशक्ति की सफलता बताया है। वस्तुतः मनुष्य की प्रवृत्ति उसी ओर होती है जिसकी उसे इच्छा, आकांक्षा रहती है। परन्तु इच्छाओं में बल तथा शक्ति इसलिए नहीं आ पाती कि वे बिखरी हुई रहती हैं। सूर्य की बिखरी हुई रश्मियों को एक स्थान पर केन्द्रित कर दिया जाय तो उससे बड़े-बड़े कार्य किये जा सकते हैं। धूप देखने में सामान्य लगती है, परन्तु उसे केन्द्रित कर सौर ऊर्जा के माध्यम से फैक्ट्रियाँ चलाने की बात सोची जा जा रही है और ऊर्जा के उत्पादन का कार्य सूर्य की किरणों के केन्द्रियकरण द्वारा ही सम्भव बनाया जायेगा।

बिखरी हुई इच्छाओं को यदि केन्द्रित किया जाय और दृढ़ संकल्प-शक्ति को जगाया जा सके तो शारीरिक असमर्थता या अंगहीनता भी मनुष्य के कार्य व्यापार में कोई बाधा नहीं पहुँचा सकती है। रूस की एक नेत्रहीन युवती जो अंधी है, केवल इच्छाशक्ति के बल पर ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कागज पर लिखे अक्षरों को पढ़ने में समर्थ हो सकी है। वह पुस्तक पर छपे हुए अक्षरों को छूती हुई जाती है और बताती चलती है कि यहाँ यह लिखा है। ठीक आँख वाले व्यक्तियों की तरह रोजा कुलेशौवा अंधी होते हुए भी पन्ने पलटकर पुस्तक पढ़ देती है। आरम्भ में लोगों ने समझा कि रोजा अंधी नहीं है वरन् उन्हें बेवकूफ बना रही है। पर ऐसी कोई बात नहीं थी। उसकी इस शक्ति का परीक्षण करने के लिए सितम्बर १९६२ में मनोविशेषज्ञों की एक बैठक बुलाई गयी; उनके सामने रोजा की आँखों पर पट्टी बाँधकर उससे एक छपा हुआ कागज पढ़ने को कहा गया। रोजा ने कागज हाथ में लिया और शब्दशः इस प्रकार पढ़कर सुना दिया जैसे वह आँखें खोलकर पढ़ रही हो। वैज्ञानिकों ने समझा शायद काली स्याही से छपे अक्षरों और सफेद कागज के बीच ऊष्मा का जो अन्तर है उसके आधार पर अँगुलियाँ भेद कर लेती हों। परन्तु जब ऊष्मा वहन करने वाला तत्त्व निकाल दिया गया तो भी रोजा को पढ़ने में कोई कठिनाई नहीं हुई।

रोजा ने यह क्षमता अकस्मात अर्जित नहीं कर ली। उसने बताया कि बचपन में जब वह स्कूल जाने योग्य हुई थी तभी उसकी दृष्टि जाती रही थी। अपनी हम-उम्र बालिकाओं को स्कूल की बातें करते हुए सुनकर उसे बड़ा दुःख होता और वह सोचती—काश ! मैं भी स्कूल जा सकी होती। वह जब अपनी सहेलियों को पढ़ते हुए सुनती तो उसे लगता कि नेत्रों के अभाव में वह संसार के अमूल्य ज्ञान-भण्डार से वंचित रह गयी है, क्योंकि वह उस राशि के संचित कोष से तो कोई लाभ नहीं उठा पा रही है।

यह आकांक्षा उसके अन्तःकरण में इतने प्रबल रूप में उठने लगी कि वह छपी हुई पुस्तकों के पन्नों को पलटकर, उन पर हाथ फेरकर ही मन को समझाने का प्रयत्न करती। परन्तु इससे असंतोष और बढ़ता ही जाता था। एक दिन यकायक ही बैठे-बैठे जब वह एक पुस्तक के पन्ने उलट रही थी तो उसे लगने लगा कि वह अक्षरों को देखने लगी और उसकी दृष्टि अँगुलियों में आकर केन्द्रित हो गयी है।

इसके बाद वह जब भी पन्ने पलटने लगती तो उसे एक-एक अक्षर अपनी अँगुलियों से दिखाई देने लगता। कल्पनाओं और विचारों के चित्र खींचने में सफलता प्राप्त करने वाले टैड सीरियस ने भी इस सिद्धि को प्राप्त करने में इच्छाशक्ति का ही उपयोग किया। अमेरिका के टैड सीरियस को कल्पनाओं के फोटोग्राफ उतरवाने में मिली सफलता के कारण विश्वास की जो ख्याति मिली है, वह संसार में शायद ही किसी व्यक्ति को सफलता प्राप्त करने के कारण प्राप्त हुई हो। टैड सीरियस ने इस प्रकार के अनेक प्रदर्शन किये। वह प्रायः किसी व्यक्ति को किसी वस्तु या दृश्य पर अपना ध्यान केन्द्रित करने के लिए कहता है और उस व्यक्ति की ओर ध्यान से देखकर कैमरे का बटन दबा देता है।

टैड सीरियस ने एक बार दौड़ती हुई कार की कल्पना का चित्र खींचा। हूबहू चित्र वैसा ही आया। चित्र में दौड़ती हुई दो कारें दिखाई दे रही थीं। एक कार सामने थी और दूसरी उसके पीछे। पिछली कार का पहिया तथा विण्ड स्क्रीन सहित अगला हिस्सा दिखाई दे रहा था। आगे वाली कार के चित्र में एक विशेषता यह थी कि उस पर वह आँख भी स्पष्ट दिखाई दे रही थी जिसमें से होकर कार का चित्र फोटो प्लेट पर पहुँचा था।

डेनवर के मनोवैज्ञानिक **डॉ. जूले आइसेन वैड** ने 'दि वर्ल्ड ऑफ टैड सीरियस' नामक एक पुस्तक लिखी है जो टैड सीरियस पर कई परीक्षण करने के बाद लिखी है। इस पुस्तक में उन्होंने एक स्थान पर लिखा है—मैंने सब प्रकार की चालाकी या धूर्तता को विफल करने के लिए टैड को एकदम निर्वस्त्र करके उसके विचार चित्र से कैमरे द्वारा फोटो लिए। उसे धातु के बन्द कमरे में खड़ा करके फोटो खींचे, परन्तु फोटो सदा साफ आये। यह सिद्ध हो गया कि टैड किसी प्रकार की कोई चालाकी नहीं करता।

इस सिद्धि का रहस्य पूछने पर टैड ने बताया कि वे अपनी कल्पनाओं का चित्र उतारने के लिए कैमरे के सामने जा बैठते और संकल्प करते कि वे अपनी कल्पना को कैमरे पर प्रक्षिप्त कर रहे हों। महीनों तक इसमें असफलता मिली, सैकड़ों रीलें बिगड़ीं। पर तब भी हताश हुए बिना वे अपनी साधना में लगे रहे और अन्ततः अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हुए।

उपनिषदों ने कहा है—**'संकल्पचोयं पुरुषः'** यह पुरुष संकल्पमय है। मनुष्य अपनी इच्छानुसार जन्म चुनता है, इच्छानुकूल मृत्यु को प्राप्त करता है और इच्छा हो तो परम ब्रह्म को भी प्राप्त कर लेता है। फिर क्या कारण है कि साधारण-सी इच्छाओं को भी पूरा न किया जा सके। इच्छाओं के साथ शक्ति का संयोजन कर मनचाही वस्तुएँ, सफलताएँ प्राप्त करने का विज्ञान अलग है। लेकिन इस सिद्धि को तत्त्वदर्शियों ने आत्मकल्याण के मार्ग में बाधक ही माना है। उनकी दृष्टि में यह बहिर्मुखी साधना है, जबकि आत्मकल्याण के इच्छुकों को अपनी ही ओर अवर्मुखी होना चाहिए तथा समस्त इच्छाओं, वासनाओं को परम चेतना में विलीन कर परम प्राप्तव्य को प्राप्त करना चाहिए।

जो कुछ चाहें, वह सब पायें

अध्यात्म मान्यताओं के अनुसार सभी प्राणियों में एक ही चेतना का अस्तित्व विद्यमान है। शरीर की दृष्टि से वे भले ही अलग-अलग हों पर वस्तुतः आत्मिक दृष्टि से सभी एक हैं। इस सन्दर्भ में परामनोविज्ञान की मान्यता है विश्व-मानस एक अथाह और असीम जलराशि की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तरह है। व्यक्तिगत चेतना उसी विचार महासागर (यूनिवर्सल माइण्ड) की एक नगण्य-सी तरंग है, इसी के माध्यम से व्यक्ति अनेक विधि चेतनाएँ उपलब्ध करता है और अपनी विशेषताएँ सम्मिलित करके फिर उसे वापस उसी समुद्र को समर्पित कर देता है।

अब तक इस तरह की अध्यात्म मान्यताओं को कल्पित और मनगढ़न्त समझा जाता था। पर जबसे मनुष्य की अतीन्द्रिय क्षमता के वैज्ञानिक प्रमाण मिलने लगे हैं, तब से परामनोविज्ञान भी इस दिशा में सक्रिय हुआ और जो निष्कर्ष प्राप्त हुए उनसे उपरोक्त अध्यात्म मान्यताओं की ही पुष्टि होती है। विदेशों में इस विषय पर काफी खोजबीन हुई है तथा अनेकों प्रयोग-परीक्षण और अतीन्द्रिय क्षमताओं के प्रदर्शन किये गये हैं। कुछ वर्ष पूर्व ही मैक्सिको (अमेरिका) में **डॉ. राल्फ एलेक्जेंडर** ने इच्छा शक्ति की प्रचण्ड क्षमता का सार्वजनिक प्रदर्शन किया। इस प्रदर्शन में प्रायः सभी प्रतिष्ठित पत्रों के प्रतिनिधि और अन्यान्य वैज्ञानिक, तार्किक, बुद्धिजीवी तथा सम्भ्रान्त नागरिक आमन्त्रित किये गये थे। प्रदर्शन यह था कि आकाश में छाये बादलों को किसी भी स्थान से किसी भी दिशा में हटाया जा सकता है और उसे कैसी भी शक्ल दी जा सकती है। इतना ही नहीं, बादलों को बुलाया और भगाया जा सकता है।

नियत समय पर प्रदर्शन आरम्भ हुआ। उस समय आकाश में एक भी बादल नहीं था। पर डॉ. राल्फ ने देखते-देखते घटाएँ बुलादीं तथा दर्शकों की माँग के अनुसार पूर्व घोषणा सहित बादलों के टुकड़े अभीष्ट दिशाओं में बिखेर देने तथा उनकी चित्र-विचित्र शक्लें बना देने का सफल प्रदर्शन किया। इस अद्भुत प्रदर्शन की चर्चा उन दिनों अमरीका के प्रायः सभी अखबारों में मोटे हैडिंग देकर छपी थी। उपरोक्त प्रदर्शन पर टिप्पणी करते हुए एक प्रसिद्ध विज्ञानी **ऐलेन एग्रागेट** ने 'साइकोलोजी' पत्रिका में एक विस्तृत लेख छापकर यह बताया कि मनुष्य की इच्छाशक्ति अपने ढंग की एक सामर्थ्यवान विद्युतधारा है और उसके आधार पर प्रकृति की हलचलों को प्रभावित कर सकना पूर्णतया सम्भव है। इसे जादू नहीं समझना चाहिए।

इच्छाशक्ति द्वारा वस्तुओं को प्रभावित करना अब एक स्वतन्त्र विज्ञान बन गया है, जिसे 'साइकोकिनस्सिस' कहते हैं। इस विज्ञान पक्ष का प्रतिपादन है कि ठोस दीखने वाले पदार्थों के भीतर भी विद्युत अणुओं की तीव्रगामी हलचलें जारी रहती हैं। इन अणुओं के अन्तर्गत जो चेतना तत्त्व विद्यमान हैं उन्हें मनोबल की शक्ति-तरंगों द्वारा प्रभावित, नियन्त्रित और परिवर्तित किया जा सकता है। इस प्रकार मौलिक जगत पर मनःशक्ति के नियन्त्रण को एक तथ्य माना जा सकता है।

अमेरिका के ही ओरीलिया शहर में **डा. एलेग्जेंडर** ने एक शोध संस्थान खोल रखा है, जहाँ वस्तुओं पर मनःशक्ति के प्रभावों का वैज्ञानिक अध्ययन विधिवत् किया जा रहा है। कई शोधकर्त्ता और विद्यार्थी इस संस्थान में शोध निरत हैं। एक व्यक्ति के विचार दूरवर्ती दूसरे व्यक्ति तक भी पहुँच सकते हैं और वस्तुओं को ही नहीं, व्यक्तियों को भी प्रभावित कर सकते हैं। यह तथ्य अब असन्दिग्ध हो चला है। अनायास घटने वाली घटनाएँ ही इसकी साक्षी नहीं हैं, वरन् प्रयोग करके भी यह सम्भव बनाया जा सकता है कि यदि इच्छाशक्ति आवश्यक परिमाण में विद्यमान हो या दो व्यक्तियों के बीच पर्याप्त घनिष्ठता हो तो विचारों के वायरलैस द्वारा एक-दूसरे से सम्पर्क सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है और अपने मन की बात कही-सुनी जा सकती है।

इच्छा और संकल्प-शक्ति के आधार पर असम्भव लगने वाले दुष्कर कार्य भी किये जा सकते हैं। सन् १९०२ में बंगाल के एक हठयोगी साधु ने प्रतिज्ञा की कि वह १० वर्षों तक अपना बायाँ हाथ उठाये ही रहेगा, कभी नीचे नहीं गिरायेगा और सचमुच ही वह लगातार १० वर्षों तक बिना हिलाये अपना बायाँ हाथ ऊँचा किये रहा। हठयोगी साधु का नाम था अगस्तिया। साधु अगस्तिया के हाथ में इस बीच एक चिड़िया ने घोंसला भी बना लिया और उसमें अण्डे भी दिये। हाथ इतना स्थिर रखा जाता था कि चिड़िया को भी सम्भवतः यह भ्रम हो गया कि वह किसी पेड़ पर रहती है। सो उसने बड़े मजे के साथ योगी के उठाये हुए हाथ की हथेली पर घोंसला बना लिया। योगी अगस्तिया के हाथ की हड्डियाँ सीधी और मजबूत हो गईं। इतने समय तक हाथ उठाये रहने के कारण हड्डियाँ इतनी सख्त हो गईं कि उनका मुड़ना बन्द हो गया और इस तरह एक प्रकार से हाथ बेकार ही हो गया। पर योगी का कहना था कि इस प्रतिज्ञा के पालन में उसे जरा भी कष्ट नहीं हुआ। योग की ऐसी साधनाओं के पीछे कोई विशेष सिद्धान्त नहीं है। है भी तो इतना मात्र ही कि तितिक्षा के अभ्यास द्वारा अपनी इच्छाशक्ति को प्रखर बनाया जाय।

शरीर में यदि एक नन्हीं सी सुई भी चुभ जाती है तो बड़ा कष्ट होता है, किन्तु सिंगापुर के एक भारतीय योगी ने अपने शरीर में ५० भाले आर-पार घुसेड़ लिये तथा इस स्थिति में भी वह लोगों से हँस-हँसकर बात-चीत करता रहा। लोगों ने कहा—यदि आपको कष्ट नहीं हो रहा है, तो आप थोड़ा चलकर दिखाइये। इस पर योगी ने तीन मील चलकर भी दिखा दिया। उन्होंने बताया कि कष्ट दरअसल शरीर को होता है, आत्मा को नहीं। इस योगी का उल्लेख—''एवण्डर बुक ऑफ स्ट्रेज फैक्ट्स'' नामक प्रसिद्ध पुस्तक में भी किया गया है, साथ ही योगी का यह अभिवचन भी कि यदि अनुभव अपने आप को आत्मा में स्थित कर ले तो जिन्हें सामान्य लोग यातनाएँ कहते हैं, वह कष्ट भी साधारण खेल जैसे लगने लगते हैं।

विन्ध्याचल के एक योगी गणेश गिरि ने अपने होठों के आगे ठोड़ी वाले हिस्से में थोड़ी गीली मिट्टी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रखकर उसमें सरसों के बीज बो दिये। जब तक सरसों के पौधे उगकर बड़े नहीं हो गये और उनकी जड़ों ने खाल चीरकर अपना स्थान मजबूत नहीं कर लिया तब तक वे धूप में चित्त लेटे रहे। साहिब उल्लाह शाह नामक लाहौर का एक मुसलमान फकीर ६०० पौंड से भी अधिक वजन की मोटी साँकलें पहने रहता था। वृद्ध हो जाने पर भी इतना वजन अभ्यास के कारण भार नहीं बना। पंजाब में आज भी यह फकीर साँकल वाला और जिगलिंग के नाम से याद किया जाता है। उसकी मृत्यु के बाद साँकलों की तौल की गई तो वह ६७० पौंड निकलीं।

अन्य देशों में भी अभ्यास द्वारा इच्छाशक्ति बढ़ाने और उसे प्रखर बना लेने के रूप में ऐसी कई विचित्रताएँ देखने को मिल जाती हैं, जो इस बात का प्रतीक हैं कि मनुष्य कुछ विशेष परिस्थितियों में ही शान्त, सन्तुलित, सुखी और सन्तुष्ट भले ही रहता हो परन्तु इच्छाशक्ति को बढ़ाया जाय तथा अभ्यास किया जाय तो वह अपने को चाहे जिस रूप में बदल सकता है। इंका जाति के राजा अहाहुल्लाया ने अपने कानों में वजनदार छल्ले डालकर उन्हें १५ इंच तक बढ़ा लिया था। उसका सारा शरीर मनुष्यों जैसा होते हुए भी कान हाथी के समान लगते थे। राजा रणजीत सिंह के दरबार में प्रसिद्ध भारतीय योगी संत हरदास ने जनरल वेंटुरा के सम्मुख अपनी जीभ को निकालकर माथे का वह हिस्सा जीभ से छूकर दिखा दिया था जो दोनों भौंहों के बीच होता है। सन्त हरिदास बता रहे थे कि जीभ को मोड़कर गरदन के भीतर जहाँ चिड़िया होता है, उस छेद को बन्द कर लिया जाय तो योगी मस्तिष्क में अमृत का पान करता है, ऐसा योगी अपनी मृत्यु को भी जीत लेता है। अँग्रेज जनरल का कहना था कि जीभ इतनी लम्बी हो ही नहीं सकती। इस पर सन्त हरदास ने अपनी जीभ को आगे निकालकर दिखा दिया। उन्होंने बताया कि कुछ विशेष औषधियों द्वारा जीभ को सूँतकर इस योग्य बना लिया जाता है।

भारतीय योगी चाँगदेव की योग गाथाएँ भारत-भर में प्रसिद्ध हैं। एक-एक बार करके उन्होंने १४ बार अपनी मृत्यु को वापस लौटाया था। उनकी आयु १४०० वर्ष थी, ऐसा कहा जाता है। ईसामसीह के समय से लेकर बारहवीं शताब्दी में सन्त ज्ञानेश्वर के समय तक उनकी गाथाओं के उल्लेख मिलते हैं। वह शेर की सवारी किया करते थे और शेर को हाँकने के लिए जहरीले साँप का चाबुक लिए रहते थे। एक बार उन्हें हवा में स्थिर रहने की चुनौती दी गई। तब उन्होंने हजारों लोगों के सामने प्रवचन करने का प्रस्ताव किया। एक-एक कर चौबीस चौकियाँ रखी गईं और सबसे ऊपरी चौकी पर बैठकर उन्होंने प्रवचन देना आरम्भ किया। पीछे उनके पूर्व आदेशानुसार शिष्यों ने एक-एक करके चौकी नीचे से हटाना आरम्भ किया और इस प्रकार सभी चौकियाँ हटाली गयीं। पर चाँगदेव वैसे ही २४वीं चौकी जितनी ऊँचाई पर बैठकर प्रवचन देते रहे। लोगों ने उनकी जय-जयकार की तो बोले, भाइयो ! इसमें मेरा कुछ भी बड़प्पन नहीं। योग क्रियाओं के अभ्यास द्वारा मनुष्य चाहे तो पक्षियों की तरह हवा में उड़ सकता है और सितारों की तरह हवा में अधर लटककर संसार का दृश्य देखता रह सकता है।

अब तक इस प्रकार की घटनाओं को कपोल-कल्पित समझा जाता था, पर ऐसे कई प्रामाणिक तथ्य मिले हैं, जिनके आधार पर यह प्रतिपादित किया गया है कि मनुष्य अपनी बढ़ी हुई इच्छाशक्ति को बढ़ाकर इस संसार के सिरजनहार की तरह समर्थ और शक्तिमान बन सकता है। क्योंकि अलग-थलग एकाकी इकाई दिखाई पड़ने पर भी वह है तो उसी का अंश।

इच्छाशक्ति की महिमा

इच्छाएँ अनन्त हैं—यह सत्य है, पर यह भी मिथ्या नहीं है कि यदि इच्छाएँ नहीं होतीं, तो मनुष्य आज भी पाषाणकालीन आदिम युग में ही पड़ा रहता। आज जो उसकी स्थिति है, वह उसकी इच्छा के कारण ही है और आने वाले समय में जो उसकी दिव्यता प्रकट होने वाली है, वह भी उसी की इच्छा के कारण होगी। मनुष्य चाहे तो अपनी इच्छा से पतन-पराभव के गर्त में गिर सकता है और चाहे तो दिव्य व महान बन सकता है। सब कुछ उसकी अपनी इच्छाओं का ही खेल है।

यह सारा संसार भी इच्छाओं का ही मूर्त रूप है—एकमात्र ईश्वर की इच्छा का ही स्फुरण है। आनन्द के केन्द्र परमात्मा के हृदय में एक भावना उठी—''**एकोहं बहुस्यामि**'' और इसी का मूर्तिमान रूप यह मंगलमय संसार बनकर तैयार हो गया। अपनी इच्छाशक्ति से उसने मनुष्य सहित सम्पूर्ण चराचर की सृष्टि कर दी और मनुष्य को विविध शक्तियों से सम्पन्न कर उसके कर्त्तव्य का खेल देखने के लिए स्वयं उसके हृदय गुहा में अवस्थित हो गया, साथ ही उसे क्रियाशील बनाने के लिए इच्छाओं के साथ सुख-दुःख का द्वन्द्व देकर संचालित कर दिया। इस तरह मनुष्य जो भी कुछ करता-धरता है, उसके मूल में इच्छाशक्ति ही प्रधान रहती है।

प्रख्यात जर्मन दार्शनिक **आर्थर शॉपेनहावर** ने अपने प्रमुख ग्रन्थ—''द वर्ल्ड ऐज विल एण्ड आइडिया'' अर्थात् 'संकल्प और भावरूप में जगत' उक्त तथ्य का प्रतिपादन करते हुए कहा है कि संसार एवं उसकी समस्त जड़-चेतन वस्तुओं-प्राणियों में इच्छाशक्ति की प्रबलता ही देखी जाती है। इच्छा, प्रयत्न, भावना, अभिलाषा, आकांक्षा सबके सब इसी के रूपान्तरण हैं। एक तत्त्व दूसरे तत्त्व से इसी शक्ति से मिलता-आकर्षित होता है। उनके अनुसार मानवी काया के निर्माण से पूर्व भी यह इच्छा शक्ति विद्यमान थी और उसी से प्रेरित होकर शरीर का निर्माण हुआ है। आत्मा की जैसी इच्छा होती है, वैसे ही शरीर में परिवर्तन होते आये हैं। काया के निर्माण में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समग्र रूप में इसी शक्ति को सक्रिय देखा जाता है। उन्होंने मनुष्य को "आध्यात्मिक प्राणी" कहा है और स्पष्ट किया है कि आत्मिकी का आश्रय लेकर चाहे तो वह अपनी इच्छाशक्ति को परिष्कृत करके देवमानव, महामानव स्तर तक विकसित हो सकता है, किन्तु अन्य प्राणियों के साथ अध्यात्म विद्या का कोई सम्बन्ध न होने के कारण वह वैसा नहीं कर पाते। मनुष्य की विवेक-बुद्धि साथ दे, तो वह इच्छाशक्ति के आधार पर मृत्यु पर भी विजय प्राप्त कर सकता है। कारण इच्छा, आकांक्षा का नियन्त्रण विवेक द्वारा ही होता है।

मनुष्य इच्छाएँ करे, यह उचित ही नहीं आवश्यक भी है। इसके बिना प्राणि जगत निश्चेष्ट एवं जड़वत् लगने लगेगा, किन्तु इसका एक विषाक्त पहलू भी है और वह है इनकी अति और उनका अनुचित स्तर की होना। मनुष्य जीवन को क्लेशकारी, कष्टदायक परिणामों की ओर ले जाने में अति और अनुचित इच्छाओं का ही प्रमुख हाथ है। स्वामी रामतीर्थ का कथन है कि "मनुष्य के भय और चिन्ताओं का कारण उसकी अपनी इच्छाएँ हैं। इच्छाओं की प्यास कभी पूर्णरूप से सन्तुष्ट नहीं हो पाती।" उत्तराध्ययन ९/४८ एवं आचारांग सूत्र १/२/५ में भी यही कहा गया है कि इच्छाएँ आकाश के समान हैं। उन पर विजय पाना मुश्किल है। बात भी ऐसी ही है। आज जो हम सोचते हैं, उसके पूर्ण हो जाने पर अन्य अनेकों कामनाएँ उठ खड़ी होती हैं। यह वह आग है जो तृप्ति की आहुति से और प्रखर हो उठती है। एक पर एक अनियन्त्रित इच्छाएँ यदि मन में उठती रहें तो मानव जीवन नारकीय यन्त्रणाओं से भर जाता है।

मनुष्य इस धरती पर एक महान लक्ष्य लेकर अवतरित हुआ है और उसी के अनुरूप उसे सदिच्छाओं को बलवती बनाना है। सुखी रहने और समुन्नत बनने का यही राजमार्ग है। वेदव्यास महाभारत, शांतिपर्व १७७/४८ में कहते हैं कि मनुष्य जिन-जिन इच्छाओं को छोड़ देता है उस-उस ओर से सुखी हो जाता है। यदि इच्छा अभिलाषा की दिशा को भोग से मोक्ष की ओर, स्व से पर की ओर अथवा पीड़ा, पतन निवारण की ओर मोड़ा जा सके, तो स्वर्गीय आनन्द का अहर्निशि रसास्वादन किया जा सकता है। संभवतः इसलिए दक्षिण के महान सन्त **तिरुवल्लुवर** ने अपनी कृति 'तिरुक्कुरल' में लिखा है कि योगी वही है, जो सांसारिक इच्छाओं को वशवर्ती कर, औरों की हित-कामना में रत हो जाय। परमार्थ ही जिनकी वृत्ति है, उन महामानवों में सदैव दुःखों से-पीड़ा से सन्तप्त प्राणियों के कष्ट निवारण की भाव भरी सदिच्छा ही कार्यरत देखी जाती है। इसीलिए तो वे अभिनन्दनीय, अभिवन्दनीय होकर इतिहास-पुरुष बन जाते हैं।

इच्छाशक्ति की प्रचण्ड क्षमता

जीवन की सफलता-असफलता, उत्कर्ष-अपकर्ष, उन्नति-अवनति, उत्थान-पतन; सब मनुष्य की इच्छाशक्ति की सफलता और निर्बलता के ही परिणाम हैं। सबल, दृढ़ इच्छाशक्ति-सम्पन्न लोगों को अभद्र विचार, कुकल्पनाएँ, भयानक परिस्थितियाँ, उलझनें भी विचलित नहीं कर सकतीं। वे अपने निश्चय पर दृढ़ रहते हैं। उनके विचार स्थिर और निश्चित होते हैं। उन्हें बार-बार नहीं बदलते। प्रबल इच्छाशक्ति से शारीरिक कष्ट भी उन्हें अस्थिर नहीं कर सकते। ऐसे व्यक्ति हर परिस्थितियों में अपना रास्ता निकालकर आगे बढ़ते रहते हैं। अपने व्यक्तिगत हानि-लाभ से भी प्रभावित नहीं होते।

दृढ़ इच्छाशक्ति मानसिक क्षेत्र का वह दुर्ग है जिसमें किसी भी बाह्य परिस्थिति, कल्पना, कुविचारों का प्रभाव नहीं हो सकता। दृढ़ इच्छाशक्ति-सम्पन्न व्यक्ति जीवन के भयंकर झंझावातों में भी अजेय चट्टान की तरह अटल और स्थिर रहता है। ऐसा मनुष्य सदैव प्रसन्न और शान्त रहता है। जीवन का सुख, स्वास्थ्य, सौन्दर्य, प्रसन्नता, शान्ति उसके साथ रहते हैं।

पितामह भीष्म अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति के बल पर सारे शरीर के बाणों से छिदे रहने पर भी छः माह तक शरशैय्या पर पड़े रहे और चेतन बने रहे। दूसरे इस तरह के व्यक्ति भी होते हैं जो अपने तनिक से घाव-चोट में चिल्लाने लगते हैं, बेहोश हो जाते हैं, कई तो भय के कारण मर तक जाते हैं। सत्यव्रती हरिश्चन्द्र अपने जीवन की कठिन परिस्थितियों को परीक्षा की घड़ी में अपनी दृढ़ इच्छाशक्ति के कारण निभा सके थे। दूसरी ओर कई लोग जीवन की सामान्य-सी परिस्थितियों में रो देते हैं। हार बैठते हैं। जीवन की सम्भावनाओं का अन्त कर डालते हैं।

महाराणा प्रताप जिन्होंने वर्षों जंगलों की खोहों में जीवन बिताया, बच्चों सहित नंगे-भूखे-प्यासे भटकते रहे, किन्तु इसके बावजूद भी दृढ़ इच्छाशक्ति के सहारे वह अजेय वीर शक्तिशाली मुगल सल्तनत को चुनौती देता रहा और झुका नहीं। थोड़ी ही संख्या में दुबले-पतले क्रान्तिकारियों ने भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन को जो तूल दिया और विश्वव्यापी ब्रिटिश सत्ता को चुनौती दी। वह उन वीरों की दृढ़ इच्छाशक्ति का ही परिणाम था। फाँसी की सजा सुनने पर भी जिनका वजन बढ़ा, फाँसी के तख्ते पर पहुँचकर जिन्होंने अपनी मुस्कराहट से मौत के भययुक्त स्वाँग का गर्व चूर कर दिया, यह सब उनकी दृढ़ इच्छाशक्ति की ही करामात थी।

संसार में जितने भी महान कार्य हुए, वे मनुष्य की प्रबल इच्छाशक्ति का संयोग पाकर ही हुए। दृढ़ इच्छाशक्ति-सम्पन्न व्यक्ति ही महान कार्यों का संचालन करता है। वही नवसृजन, नवनिर्माण, नवचेतना का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शुभारम्भ करता है तथा अपने और दूसरों के कल्याण, विकास एवं उत्थान का मार्ग खोजता है।

निर्बल इच्छाशक्ति वाले मनुष्य अपने या दूसरों के लिए कोई उपयोगी कार्य नहीं कर सकते। ऐसे लोगों के मन में अनेकों सन्देह, कुकल्पनाएँ, कुविचार पैदा होने लगते हैं। उनके निश्चय बार-बार बदलते हैं। एक काम को अधूरा छोड़कर, दूसरे को हाथ में लेते हैं फिर दूसरे को छोड़कर तीसरे को करने लगते हैं। छोटी-छोटी कठिनाइयों में उलझकर ही परेशान होने लगते हैं। निर्बल इच्छाशक्ति से अपने और दूसरों के अकल्याण की भावनाएँ निर्बाध गति से आने-जाने लगती हैं। परीक्षा में बैठने पर असफलता का भय सताने लगता है। व्यापार करने पर घाटे के भय से चिन्तित एवं परेशान होने लगते हैं। अँधेरे में चलने पर भूत, चोर, गुण्डे का डर खाने लगता है। घर में कोई बीमार पड़ जाय तो सोचा जाता है कहीं मर नहीं जाय। इस तरह दुर्बल इच्छाशक्ति के कारण मनुष्य तरह-तरह की आशंका-शंका कल्पित भय, चिन्ता, परेशानियों से परेशान, दुःखी, उद्विग्न एवं अशान्त रहता है। हीन भावनाओं से ग्रस्त हो निराशा, अवसाद, ईर्ष्या, घृणा, द्वेष से युक्त हो जाता है।

इच्छाशक्ति की दुर्बलता से कई लोग अपने आपको कल्पित रोगों से ग्रस्त समझकर परेशान होने लगते हैं और हर उपचार में कोई न कोई मीनमेख निकालते हैं। रोग घट रहा हो तो भी उन्हें कहीं फिर न बढ़ जाय, यह डर लगा रहता है। यदि परीक्षण किया जाय तो वास्तविक रोगियों की संख्या कम मिलेगी और इस तरह के कल्पित रोगों से ग्रस्त लोग अधिक मिलेंगे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि इच्छाशक्ति की दुर्बलता से आजकल प्रत्येक व्यक्ति अपने आप को किसी न किसी रोग से ग्रस्त ही समझता है। कई तो इतने परेशान रहते है कि मानो वे किसी भयंकर रोग से पीड़ित हैं और वस्तुतः बात ऐसी नहीं होती। दृढ़ इच्छाशक्ति के सहारे बड़े-बड़े रोगों के आक्रमण से भी बचा जा सकता है और अपने स्वास्थ्य को सुरक्षित रखा जा सकता है।

मनुष्य के सभी विचार, भाव, क्रिया स्वयं उसी तक सीमित नहीं रहते। इनका प्रभाव समस्त वातावरण पर भी पड़ता है। रेडियो-स्टेशन के ट्रान्समीटर से छोड़ी हुई ध्वनि तरंगें सर्वत्र फैल जाती हैं। ठीक इसी तरह व्यक्ति के क्रिया-कलाप, हाव-भावों का भी प्रसार होकर वातावरण पर प्रभाव पड़ता है। ये संक्रामक होते हैं और दृश्य या अदृश्य रूप में एक व्यक्ति से चलकर दूसरों तक फैल जाते हैं। दृढ़ इच्छाशक्ति-सम्पन्न व्यक्ति जिस समाज में होंगे, वह समाज भी शक्तिशाली, दृढ़ और महत्त्वपूर्ण होगा। कायर, डरपोक, दुर्बल इच्छाशक्ति वाले व्यक्ति समाज में अपनी दुर्बलताओं का संचार करते हैं।

नेपोलियन बोनापार्ट के सिपाही अपने आपको नेपोलियन समझकर लड़ते थे। प्रत्येक सिपाही में नेपोलियन की इच्छाशक्ति काम करती थी। नेताजी सुभाषचन्द्र बोस के नेतृत्व में आजाद हिन्द फौज के तनिक से सैनिकों ने हथेली पर जान रखकर अँग्रेजी शासन से लड़ाई की। लोकमान्य तिलक ने भारतवर्ष को स्वराज्य मन्त्र की दीक्षा दी—"स्वतन्त्रता हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और हम उसे लेकर रहेंगे।" और यही नारा प्रत्येक भारतीय का प्रेरक मन्त्र बन गया। एक दिन इसी मन्त्र ने हमें स्वतन्त्रता रूपी सिद्धि प्रदान की। यह मन्त्र कोई शाब्दिक व्याख्या मात्र नहीं था वरन् इसमें तिलक की दृढ़ इच्छाशक्ति का अपार चैतन्य सन्निहित था। मनुष्य की इच्छाशक्ति का प्रभाव चेतन जगत पर ही नहीं, वरन् अचेतन पदार्थों पर भी पड़ता है। अपनी इच्छाशक्ति के बल पर ही मनुष्य पत्थर, धातु आदि की मूर्ति में भगवान का साक्षात्कार करता है। प्रबल इच्छाशक्ति के द्वारा मनुष्य जड़, चेतन, प्रकृति को भी प्रभावित कर सकता है।

निर्बल इच्छाशक्ति वाले व्यक्ति समाज में भीरुता, कायरता, सन्देह, कुकल्पनाओं का संचार करते हैं। जिस देश में कर्णधार नेताओं की इच्छाशक्ति दुर्बल होगी तो वह वहाँ की प्रशासनिक मशीनरी और फिर जनता तक में फैल जायेगी। जैसे अपने बारे में अहितकर बातें सोचने पर दुष्परिणाम पैदा होते हैं, उसी तरह जिसके लिए बुरी बात सोची जायेगी, वह भी बुराई से प्रभावित हुए बिना नहीं रहेगा। यदि उसकी इच्छाशक्ति दुर्बल होगी तो वह सहज ही दूसरे द्वारा कुकल्पित दुर्भावनाओं का शिकार हो जायेगा। भूतों के भय से डरने वाले अपने संक्रामक विचारों से दूसरों में भी भूत के भय की भावना पैदा कर देते हैं। घृणा करने वाले दूसरों में भी घृणित विचारों का प्रसार कर देते हैं। लड़ाई के मैदान से भाग जाने वाला एक सिपाही कई सिपाहियों में मैदान छोड़ने की भावना पैदा कर देता है। इच्छाशक्ति की दुर्बलता भी उतनी ही संक्रामक है जितनी सबलता। जहाँ सबल इच्छाशक्ति के व्यक्तियों का बाहुल्य होगा, वह समाज उन्नति, प्रगति की ओर सहज ही उठ जायेगा। जहाँ दुर्बल इच्छाशक्ति के लोग होंगे, वह समाज पतन की ओर अग्रसर हो जायेगा।

हमें अपनी इच्छाशक्ति बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए। साहस और धैर्य का अभ्यास करने से बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ भी सहज हो जाती हैं और पराक्रमी व्यक्ति आसानी से उन पर विजय प्राप्त कर लेते हैं। भीरु पुरुष तो कठिनाइयों में जितने त्रस्त होते हैं, उससे अधिक उनकी आन्तरिक दुर्बलता ही कष्ट देती रहती है। मानव जीवन में दृढ़ इच्छाशक्ति एक अत्यन्त मूल्यवान सम्पत्ति है और इसे हम अधिकाधिक मात्रा में सम्पादित करें, यही उचित है।

इच्छा-शक्ति के चमत्कार

मनुष्य की आन्तरिक शक्तियों में इच्छाशक्ति का बड़ा महत्त्व है। यही वह शक्ति है जो मनुष्य में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नव-जीवन और नवीन स्फूर्ति का संचार करती है। जीवन की समग्र क्रियात्मकता इसी शक्ति पर निर्भर है। इच्छाशक्ति की प्रेरणा से ही मनुष्य अपने लक्ष्य की प्राप्त के लिए कार्य में जुटा रहता है। इच्छा का लगाव जिस विषय से हो जाता है, मनुष्य की सारी शक्तियाँ उसी ओर को झुक जाती हैं। इच्छा की तीव्रता, विपरीतता में भी अपना मार्ग निकाल लेती है।

जिस समय मनुष्य की इच्छाएँ मर चुकी हैं, समझना चाहिए कि वह मनुष्य मर चुका है। श्वाँस लेते हुए एक शव के समान ही वह सारे कार्य किया करता है। नष्ट मनुष्य की जिन्दगी में कोई आकर्षण शेष नहीं रहता, कोई रुचि नहीं रहती। अरुचिपूर्ण जीवन का अभिशाप नरक से भी अधिक कष्टदायक होता है। इच्छाएँ ही जीवन को गति देती हैं, संघर्ष की शक्ति और परिश्रम की प्रेरणा प्रदान करती हैं।

किसी वस्तु की प्राप्ति की लालसा को इच्छा कहते हैं। इस लालसा की तीव्रता को इच्छाशक्ति कहते हैं। किसी वस्तु के अभाव में जो एक वेदनापूर्ण अनुभूति होती है, वही इच्छा की तीव्रता है, जिसकी न्यूनाधिकता के अनुपात से ही इच्छा में शक्ति का सम्पादन होता है।

मनुष्यों की इच्छा अनेकों प्रकार की हो सकती है। वे अच्छी और बुरी दोनों प्रकार की हो सकती हैं। मनुष्य की इच्छाएँ उसकी आन्तरिक अवस्था की द्योतक है। जिस मनुष्य की इच्छाएँ स्वार्थपूर्ण हैं, वह अच्छा आदमी नहीं। उसकी इच्छाओं में सात्विक शक्ति नहीं होती, जिसके बल पर बड़ी-से-बड़ी उपलब्धि प्राप्त की जा सकती है।

अन्याय एवं अनीतिपूर्ण इच्छाएँ रखने वाला भले ही किसी संयोग, युक्ति अथवा परिस्थितियों का लाभ उठाकर अपना स्वार्थ सिद्ध कर ले, तब भी यह न मानना चाहिए कि इसने इच्छाशक्ति के बल पर अपनी वांछा को पूर्ण कर लिया है या यों कहना चाहिए कि यह उसकी इच्छाशक्ति की तीव्रता है, जिससे यह अपने लक्ष्य में सफल हो चुका है। सफल होने के लिए अनीतिपूर्ण योजनाएँ भी सफल होती रहती हैं। इतिहास में तो ऐसे अनेकों अत्याचारियों, अन्यायियों एवं बर्बरों के उदाहरण पाये जाते हैं, जिन्होंने अपनी अन्यायपूर्ण इच्छाओं को पूरा कर लिया है, साम्राज्य स्थापित किये हैं, विजय प्राप्त की हैं।

कहा जा सकता है कि यह उन अत्याचारियों की इच्छाशक्ति का परिणाम है कि वे ऐसी-ऐसी विकट विजयों को प्राप्त कर सके हैं। किन्तु यदि वास्तव में तात्विक दृष्टि से देखा जाए तो पता चलेगा कि वे विजय अत्याचारियों की तीव्र इच्छाशक्ति का फल नहीं था, बल्कि विजितों की निर्बल इच्छाशक्ति का परिणाम था। जब किसी एक वर्ग की विजयेच्छा नष्ट हो जाती है तभी आक्रमण की, अनीतिपूर्ण होने पर भी विजय-वांछा पूर्ण हो जाती है।

अन्यायी की इच्छाओं में स्वयं अपनी कोई इच्छा नहीं होती, वे वास्तव में अहंकार द्वारा ही प्रेरित हैं। यदि अन्यायी के अहंकार का हरण कर लिया जाये, उसे ध्वस्त कर दिया जाये तो वह विश्व का सबसे निर्बल और निरीह प्राणी हो जाता है। यही कारण है कि अहंकार का उन्माद उतरते ही उसकी सारी शक्तियाँ ठीक उसी प्रकार समाप्त हो जाती हैं, जिस प्रकार नशे की उत्तेजना उतरते ही कोई मद्यप मुर्दे की तरह निर्जीव हो जाता है। उसका सारा जोश-खरोश, वेग-आवेग आदि आन्दोलनपूर्ण क्रियाएँ खत्म हो जाती हैं और वह एक साधारण-से साधारण व्यक्ति के हाथ कुत्ते की मौत मारा जाता है।

अनीतिपूर्ण इच्छाओं में कोई स्थायित्व नहीं होता। वे बरसाती नदी की भाँति उफनती हैं और शीघ्र ही ठण्डी पड़ जाती हैं। अन्यायी इच्छाओं से अभिभूत होता है। उनसे उत्तेजित होता है, उसे पूरी करने के लिए व्याकुल रहता है और उनके वेग में एक शक्ति का भी अनुभव करता है। किन्तु फिर भी अहंकार का लाख आवरण डालने पर भी वह इस विचार से मुक्त नहीं हो पाता कि उसकी इच्छाएँ अनुचित हैं। वह स्वयं अपनी दृष्टि में अपराधी बना रहता है और बाहर अन्यों से भी भयभीत रहता है। यही कारण है कि उसकी इच्छाओं में न तो कोई शक्ति रहती है और न वे जीवन-लक्ष्य बनकर स्थायित्व प्राप्त कर पाती हैं। प्रतिकूल परिस्थिति आने पर वह इच्छाओं को छोड़ देता है, उनमें परिवर्तन कर लेता है और कभी-कभी तो उनकी भयंकरता से वह जीवन के रणक्षेत्र से ही भाग खड़ा होता है। अत्याचारी अथवा अन्यायी की सफलता वस्तुतः उसकी इच्छाओं की पूर्ति नहीं होती बल्कि उसके उस अहंकार की ही परितुष्टि होती है, जिसके आवेग से वह त्रस्त, दुःखी एवं विकल रहता है।

सदिच्छुक का कर्त्तव्य बुद्धि के तर्क-विवेक की भर्त्सना एवं आत्मा के धिक्कार से प्रभावित नहीं होता बल्कि उनका सहयोग पाकर उसकी इच्छाएँ और भी अधिक बलवती एवं सुनिश्चित हो जाती हैं। इसके अतिरिक्त आत्म-कल्याण और परोपकार की भावना के कारण वह दिनोंदिन सदाचारी, सच्चरित्र एवं सत्यमूर्ति बनकर दूसरों की सद्भावना, सहयोग तथा सहायता प्राप्त करता हुआ अधिकाधिक शक्ति-सम्पन्न होता जाता है। सदिच्छाएँ स्वयं शक्तिमती होने के साथ-साथ दूसरों से भी शक्ति संचय करती रहती हैं।

विरोध करना लोगों का आज स्वभाव बन गया है। यहाँ पर क्या अच्छे कार्य और क्या बुरे, विरोध सबका ही किया जाता है, बल्कि वास्तव में यदि देखा जाय तो पता चलेगा कि बुराई से अधिक भलाई को विरोध का सामना करना पड़ता है। इसका कारण यह नहीं है कि भलाई भी बुराई की तरह ही विरोध की पात्र है, बल्कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समाज की दुष्प्रवृत्तियाँ अपने अस्तित्व के प्रति खतरा देखकर भड़क उठती है और विरोध के रूप में सामने आ जाती हैं। चूँकि सत्प्रवृत्तियाँ विरोध-भाव से शून्य होती हैं इसलिए वे बुराई का विरोध करने से पूर्व सुधार का प्रयत्न करती हैं। ध्वंसात्मक न होने के कारण वे बुराई के विरोध को भयंकरता के रूप में उपस्थित नहीं करतीं, जिससे ऐसा नहीं दीखता कि बुराई का विरोध हो रहा है। दुष्प्रवृत्तियों के उफान को, किसी ध्वंसात्मक संघर्ष को बचाने के लिये सत्प्रवृत्तियाँ किसी सीमा तक उसकी उपेक्षा करती हुई यह प्रतीक्षा किया करती हैं, कदाचित् यह स्वयं सुधर जाये। किन्तु जब ऐसा नहीं होता तो सत्प्रवृत्तियाँ अपने ढंग से आगे बढ़ती हैं और बुराई को दूर करने का प्रयत्न करती हैं। ध्वंसात्मक होने के कारण दुष्प्रवृत्तियाँ सत्प्रवृत्तियों के विरोध में एक संघर्ष खड़ा कर देती हैं, जिससे सत्प्रवृत्तियों को अधिक विरोध दृष्टिगोचर होता है। इसके विपरीत सत्प्रवृत्तियों के द्वारा संघर्ष के स्थान पर सुधार का प्रयत्न करने के कारण बुराई का विरोध होते नहीं दीखता, जबकि सत्प्रवृत्तियों का विरोध अधिक फलदायक तथा स्थायी होता है।

जहाँ तक इच्छाओं का सम्बन्ध है, सदिच्छाएँ ही इच्छाओं की सीमा में आती हैं इसके विपरीत जो असद् इच्छाएँ हैं वे वास्तव में इच्छाएँ न होकर दुष्प्रवृत्तियों का आवेग ही है। सदिच्छाओं की शक्ति अपरिमित है। कोई अच्छा कार्य करने अथवा उदात्त लक्ष्य प्राप्त करने की कामना रखने वाला लाख विरोधों एवं असुविधाओं के होने पर भी अपने ध्येय पर पहुँच ही जाता है।

सदाशयी में एक स्थायी लगन होती है, जिससे वह अपने ध्येय के प्रति निष्ठावान् होकर अपनी समग्र शक्तियों को लगाकर प्रयत्न में लगा रहता है। इच्छा एवं प्रयत्न की एकता उसमें एक अलौकिक सहायता-स्रोत का उद्घाटन कर देती है, जिससे उसके प्रयत्नों में निरन्तरता, तीव्रता और अमोघता बढ़ती जाती है और वह क्षण-क्षण ध्येय की ओर उत्तरोत्तर अग्रसर होता जाता है।

सदिच्छावान् व्यक्ति में आशा, उत्साह, साहस और सक्रियता की कमी नहीं रहती और जिसमें इन सफलतावाहक गुणों का समावेश होगा, असफलता उसके पास आ ही नहीं सकती। असद् इच्छायें जहाँ अपने विषैले प्रभाव से मनुष्य की शक्ति का नाश करती हैं, वहाँ सदिच्छाएँ उनमें नवीन स्फूर्ति, नया उत्साह और अभिनव आशा का संचार किया करती हैं।

एक इच्छा, एक निष्ठा और शक्तियों की एकता मनुष्य को उसके अभीष्ट लक्ष्य तक अवश्य पहुँचा देती है। इसमें किसी प्रकार के सन्देह की गुन्जाइश नहीं।

इच्छाशक्ति द्वारा असम्भव को सम्भव बनाया जा सकता है

व्यक्ति किसी कार्य-विशेष में सफलता पाने के लिए कृत संकल्प हो जाय और अभ्यास-प्रयास उस दिशा में निरन्तर जारी रखे तो कोई कारण नहीं कि वह सफल न हो सके। शरीर क्रिया क्षेत्र में आये दिन योगाभ्यासियों द्वारा ऐसे ही क्रिया-कौतुक प्रदर्शित किये जाते रहे हैं, जिन्हें देखने से सहज विश्वास तो नहीं होता, पर वैज्ञानिक निरीक्षण-परीक्षणों के दौरान वे बिल्कुल सही पाये गये और उनकी इस क्रिया-कुशलता को सर्वसम्मति से स्वीकारा गया।

ऐसा ही एक प्रयोग-परीक्षण ''हारवर्ड इंस्टीट्यूट फॉर साइकिक एंड कल्चरल रिसर्च'' की ओर से **डॉ. थेरेस ब्रोसे** नामक एक फ्रांसीसी शरीर विज्ञानी के संरक्षण में आयोजित किया गया। इसके लिए वे अपने मित्र **डॉ. माइलोवेनोविच** के साथ योग की विलक्षणताओं की शोध करने के लिए भारत आए। अपने प्रयोगों के दौरान उनने अपने सन्देहों के निवारणार्थ कई प्रकार की जाँच-पड़ताल के आधार पर जो निष्कर्ष निकाले, उसमें दिल की धड़कन बिल्कुल बन्द कर लेने का दावा भी उनने सही पाया। ऐसे योगी तो काफी संख्या में मिले जो सामान्यतया ७२ बार प्रति मिनट की धड़कन को ३० तक घटा लेते हैं। ३ दिन से २८ दिन तक बिना साँस लिए, बिना अन्न-जल ग्रहण किए, बिना मल-मूत्र विसर्जन किए समाधिस्थ रहने वाले योगियों में से अधिकांश के दावे सही पाए गए। उनके संज्ञाशून्य होने की बात उनका हाथ बर्फ में दबाए रहने और आग का स्पर्श कराने पर भी परीक्षाएँ खरी उतरीं। एक योगी संकल्प-बल से जिस भी अंग से कहा जाता उसी से पसीना निकाल सकते थे। इससे उनने पूर्वार्त्त अध्यात्म के मर्म को समझा व पाश्चात्य जगत में भारत के वास्तविक स्वरूप को प्रकट किया। यही नहीं, एक बार लन्दन में एक भारतीय योगी ने सन् १९२८ में ऐसा ही सार्वजनिक प्रदर्शन किया था। उसने नाड़ी की गति को न्यूनतम २० और अधिकतम १२० करके डॉक्टरों को आश्चर्यचकित कर दिया। वह अपनी माँस-पेशियों और त्वचा को इतनी कड़ी कर लेता था कि सामान्य हथियारों का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था।

साम्राज्ञी मेरी लुईस के बारे में कहा जाता है कि वे अपनी इच्छानुसार अपने कानों को बिना हाथ से छुए किसी भी दिशा में मोड़ सकती थीं और आगे-पीछे हिला सकती थीं। इसी प्रकार एक फ्रांसीसी अभिनेता इस बात के लिए प्रसिद्ध था कि वह अपनी इच्छानुसार अपने बालों का नचा सकता था। बालों को गिराने-उठाने, इधर-उधर घुमाने व घुँघराले बनाने की क्रिया में उसे महारत हासिल थी। अक्सर वह अपनी इस अद्भुत क्षमता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का प्रदर्शन करके धन कमाया करता था। एक बाल को घुँघराला और ठीक उसके बगल के दूसरे बाल को चपटा कर देना, उसके लिए सामान्य बात थी। विभिन्न प्रकार के परीक्षण कर **डॉ. आगस्ट क्रैवेनीज** ने बताया कि उसने सिर की त्वचा को माँस-पेशियों तथा तन्तुओं को अपनी इच्छाशक्ति के आधार पर असाधारण रूप से विकसित और संवेदनशील कर लिया है।

इस प्रकार के अगणित प्रयोग आये दिन देखने को मिलते ही रहते हैं। यह तो स्थूल अंगों के नियमन, नियन्त्रण सम्बन्धी सामान्य प्रयोग मात्र हैं। आम मान्यता मनुष्य को यहीं तक सीमित स्वीकारती है वह इसे हाड़-माँस का बना काय-कलेवर भर मानती है, पर वस्तुतः ऐसी बात नहीं है। जो दृश्यमान है उसके अतिरिक्त भी उसमें बहुत कुछ छिपा पड़ा है। वह चेतना का विशाल भाण्डागार है। यदि उस चेतना को सुनियोजित-नियन्त्रित कर किसी दिशा विशेष में लगाया जा सके, तो व्यक्ति पहले से भी असामान्य और विलक्षण करतब दिखा सकता है। भगवान ने यह ऊर्जा भण्डार इसी हेतु हमें प्रदान किया है कि हम उसका सदुपयोग कर लाभान्वित हो सकें।

संकल्प के अभाव में शक्ति निरर्थक है

संकल्प को सफलता की जननी कहा गया है। यह इच्छाशक्ति का ही सघन रूप है। इच्छा-आकांक्षा ही घनीभूत होकर व्यक्ति को कर्ममार्ग पर अग्रसर करती है और उसे अपने अभीष्ट लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रेरित करती है। किसी भाप से चलने वाली रेलगाड़ी को पटरी पर दौड़ाने के लिए भाप आवश्यक है। यद्यपि उसके साथ चालक की इच्छा-आकांक्षा और नियन्त्रण दक्षता भी आवश्यक है। चालक की कुशलता और दक्षता को इच्छाशक्ति का प्रतिरूप कहें तो अकेले रेलगाड़ी और चालक का होना ही पर्याप्त नहीं है। उसके लिए वाष्प से उत्पन्न की गई शक्ति जिसके कारण कि रेल के पहियों में गति आती है, का होना भी अति आवश्यक है।

यह सच है कि संकल्प के अभाव में शक्ति का कोई महत्त्व और मूल्य नहीं है, उसी प्रकार यह भी सच है कि शक्ति के अभाव में संकल्प भी पूरे नहीं होते। केवल संकल्प करते रहने वाला निरुद्यमी व्यक्ति उस आलसी व्यक्ति की तरह कहा जायेगा जो अपने पास गिरे हुए आम को उठाकर मुँह में भी रखने की कोशिश नहीं करता और इच्छा मात्र से आम का स्वाद ले लेने की आकांक्षा करता है।

संकल्प के साथ शक्ति को संयुक्त करना एक कला है और इसमें बहुत थोड़े लोग ही पारंगत हो पाते हैं। इसका कारण है—परिश्रम और प्रयोगों के प्रति निरपेक्ष बने रहना। बहुत से लोग मानस शास्त्र के सिद्धान्त पढ़-पढ़कर यह विश्वास करने लगते हैं कि हम जो कुछ भी चाहते हैं वह हार्दिक आकांक्षा होने पर हमें स्वतः ही प्राप्त हो जायेगा, जबकि सचाई यह है कि केवल वे ही इच्छाएँ पूरी होती हैं, जिनके साथ सशक्त प्रयास भी जुड़े हों। यहाँ शक्ति का अर्थ उद्देश्य के प्रति दृढ़ निष्ठा, उसे पूरा करने के लिए आवश्यक प्रयास, मार्ग में आने वाली कठिनाइयों और बाधाओं से संघर्ष का मनोबल और साहस है। इनके बिना संकल्प कभी भी शक्ति नहीं बन पाते। उनके अनुसार मन के लड्डू भले ही फोड़े जाते रहें।

शक्ति—जो संकल्प को परिणामदायक बनाती है उसे अर्जित करना एक साधना है। अपनी आकांक्षाओं को पूरा करने के लिए आवश्यक उत्साह ही उस साधना का नाम है। कभी न ठण्डा पड़ने वाला उत्साह ही हमें लक्ष्य तक पहुँचाता है। पानी को भाप बनाने के लिए २१२ डिग्री फारनेहाइट तक गर्म करना आवश्यक है। इससे पहले पानी कभी वाष्पीभूत नहीं होता। २०० डिग्री तक गर्म किया जायेगा। २११.९ डिग्री तक पानी भाप नहीं बनेगा। उसका एक निर्धारित क्वथनांक है और उस क्वथनांक पर पहुँचकर ही पानी भाप बनता है। उसी प्रकार उत्साह का भी एक उच्चतम आवश्यक स्तर है और उस स्तर तक पहुँचने के पूर्व असफल होने की ही सम्भावना रहती है, सफल होने की नहीं।

उत्साह में, उस स्तर की अभिवृद्धि के लिए क्या किया जाना चाहिए ? और इस स्तर की अभिवृद्धि का क्या मापदण्ड है ? लक्ष्य के प्रति ईमानदारी, भविष्य के प्रति आशापूर्ण दृष्टिकोण और मार्ग में आने वाली सभी कठिनाइयों से जूझने का साहस। संक्षेप में उद्यम, आशा और साहस—ये तीन ही वे प्राथमिक कसौटियाँ हैं, जिनके आधार पर अपने उत्साह को परखा जा सकता है और संकल्प के साथ शक्ति को संयुक्त किया जा सकता है।

निष्कर्षतः सफलता की प्राप्ति के लिए दृढ़ संकल्प के साथ उद्यम, आशा और साहस का होना आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य भी है। अन्यथा खयाली फुलाव के अतिरिक्त और कुछ भी प्राप्त नहीं होगा।

चमत्कारों की जननी—संकल्प शक्ति

फ्रांस के सुप्रसिद्ध फिल्म अभिनेता पियरी मिसी में जहाँ अभिनय सम्बन्धी अनेक विशेषताएँ थीं, वहाँ उसमें कई अभूतपूर्व चमत्कारिक विशेषताएँ भी थीं। वह अपनी इच्छानुसार ही शरीर के किसी भी हिस्से का कोई भी बाल हिला सकता था। बाल की नोक को खड़ा कर सकता था, उन्हें पानी और आँधी के कारण गिरी हुई फसल की तरह लिटा सकता था। इतना ही नहीं, कोमल सपाट बालों को वह जब चाहे अपनी इच्छाशक्ति द्वारा ही घुँघराले बना सकता था।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसकी इन विशेषताओं ने अनेक विद्वान, विचारकों वैज्ञानिकों को कौतूहल में डाला और सोचने को विवश किया, ऐसी कौन-सी शक्ति है जो इस तरह की नियन्त्रण में न आ सकने वाली शक्ति को भी नियन्त्रित कर सकती है ? अनेक लोगों ने परीक्षण किये पर कोई निष्कर्ष नहीं निकल पाया। इसी बीच **डॉ. आगस्ट कैबेनीज** को पियरी मिसी की इन विशेषताओं का पता चला तो उन्होंने भी जाकर परीक्षण किये। उन्होंने अपने जीवन-संस्मरण में उक्त घटना का उल्लेख करते हुए लिखा है कि—इस तरह की विशेषता का कारण मिसी की कोई शारीरिक विलक्षणता नहीं अपितु उसका मानसिक संकल्प मात्र है। उसने अपनी सुदृढ़ इच्छाशक्ति द्वारा बाल की पेशियों को इतना असाधारण रूप से विकसित कर लिया है कि उनसे कोई भी मनमाना काम ले सकता है। यह घटना इस बात का प्रतीक है कि मनुष्य अपनी इच्छाशक्ति द्वारा संकल्प द्वारा इससे भी अद्भुत कार्य कर सकता है, उदाहरण के लिए सूक्ष्म दृश्य संस्थानों को विकसित कर दूरदर्शन, कर्णेन्द्रिय को विकसित कर दूरश्रवण, घ्राणेन्द्रिय को विकसित कर इच्छानुसार घ्राण का सुख ले सकता है।

उपनिषद्कार मन की अपार शक्ति से परिचित थे तभी उन्होंने लिखा है—

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवेति।

दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवःसंकल्पमस्तु।।

—शिव संकल्पोपनिषद्।१।

अर्थात्—जो मन जागता हुआ तथा सोता हुआ भी बहुत दूर तक जाया करता है तथा जो सभी इन्द्रियों में इस प्रकार चमकता है जैसे आकाश में स्थित तारों के मध्य चन्द्र। हमारा वह मन, हे परमेश्वर ! शुभ संकल्प वाला हो।

ऊपर दिये गये उदाहरण की तरह ही मन की सुदृढ़ इच्छाशक्ति-संकल्प शक्ति का दूसरा प्रमाण थी—अब्बेविले (फ्रांस) की एक १२ वर्षीय लड़की एन्नेट फ्रेलान। इस अद्भुत लड़की ने भारतीय योगियों जैसी अद्भुत पराशक्ति प्राप्त की थी। उसने अधिकांश मौन रहने का नियम बनाया था, कभी बोलती भी तो अत्यन्त सारगर्भित, संक्षिप्त और आवश्यकता से अधिक नहीं। वह कहा करती थी कि मनुष्य के बोलने का जितना प्रभाव होता है, उससे अधिक प्रभाव उसके गहरे विचारों का होता है। वह इस कथ्य को प्रत्यक्ष प्रमाणित भी करती थी।

कभी कोई व्यक्ति प्रश्न पूछता तो वह एकाग्रचित्त हो जाती, फिर जो पूछा जाता उसका उत्तर उभरे लाल बड़े-बड़े अक्षरों में उसकी बाहों में तथा कन्धों में लिख जाता। इच्छाशक्ति से उत्पन्न यह लेखन कुछ देर दृष्टव्य रहके धीरे-धीरे बिना कोई छाप छोड़े ही गायब हो जाते।

मानसिक संकल्प की ऐसी अद्भुत क्षमताओं का ज्ञान था, तभी सृष्टिकार ने लिखा है—**"मनोह्यात्मा मनो हि ब्रह्म मन उपास्येति"**

—छान्दोग्य।

अर्थात्—यह मन ही आत्मा है, मन ही लोक और मन ही ब्रह्म है। इसलिये तुम मन की ही उपासना करो।

संकल्प-शक्ति के साक्षी पिरामिड

साधनों की स्वल्पता, परिस्थितियों की प्रतिकूलता तथा प्रवीणता की न्यूनता रहते हुए भी प्रचण्ड संकल्प शक्ति और अदम्य साहसिकता के बल पर मनुष्य क्या कर सकता है ? इसके जीते-जागते प्रमाण मिस्र के महान पिरामिड हैं, जिनकी विशालता देखने पर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है।

यह आश्चर्य तब और भी अधिक बढ़ जाता है जब उस क्षेत्र में वे साधन कहीं भी दीख नहीं पड़ते जिनके माध्यम से इस निर्माण कार्य को सम्पन्न किया गया है। इतना ही नहीं, यह भी देखने की बात है कि उस जमाने की आवश्यकता, वास्तुकला तथा यान्त्रिक साधनों का प्रचलन न होने पर भी यह सब किस प्रकार बन पड़ा होगा।

विश्व का सर्वोत्तम आश्चर्य मिस्र के पिरामिड, मानव कौशल के कीर्ति स्तम्भ हैं। मिस्र के निवासी इस चेओप्स के गुम्बज को "खूफू का हौरीजन" के नाम से पुकारते हैं। वर्तमान में इसी को महान पिरामिड के नाम से जाना जाता है। गत पचास शताब्दियों में—लगभग २७०० ई. पू. चेओप्स ने पूर्ण कीर्ति-स्तम्भ के निर्माण की योजना बनाई।

इस दीर्घकाय गुम्बज के निर्माण हेतु केरियो के कोलाहलपूर्ण शहर में ५ मील दक्षिण पूर्व गीजा के पठार पर सहस्रों राजगीर, पत्थर खोदने वाले एवं असंख्यों श्रमिकों ने ३० साल तक घोर श्रम किया।

इसमें संलग्न पत्थरों में से कितनों का ही वजन ढाई से पन्द्रह टन तक है। महान पिरामिडों में २५ लाख अवरोध हैं। फिर भी मनुष्य ने इसके पत्थरों को काटा और निर्माण कार्य हेतु आगे बढ़ते गये। लीवर, रौलर एवं रेखे के सिवाय उनको कोई अतिरिक्त मदद नहीं प्राप्त हुई। उन शिल्पकारों के पास कोई मापक यन्त्र नहीं थे। फिर भी पिरामिडों के कोने अपने में पूर्ण हैं, सीधे कोणों की दिशाओं में बने हुए हैं। आश्चर्यजनक यथार्थ के साथ परिधि के चार चिन्ह (कुतुबनुमा) निर्मित हैं। दो अन्य पिरामिड चेओप्स के उत्तराधिकारियों के गीजा समूह में हैं तथा ८० पिरामिड नील नदी के पश्चिमी किनारे तक फैले हुए हैं।

आधुनिक अनेक खण्डों की ऊँची इमारतों के निर्माण के समान पिरामिडों की संरचना में बड़ी संगठित समरूपता परिलक्षित होती है। नदी की ओर से पत्थर के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक विशाल रास्ते का निर्माण हुआ, जो पठार के किनारे से आधा मील झुका हुआ है। इसके पृथक् निर्माण में पूरे १० वर्ष लग गये। श्रमिकों के एक समूह द्वारा इसी ढाल की सहायता से विशालकाय प्रतिमाओं को बिना पहिये की गाड़ी में रखकर नाव के द्वारा नील नदी पर लाया गया। पत्थरों की एक लम्बी एवं मुश्क बैंत की असामान्य मोटाई की रस्सी के द्वारा सुरक्षित रखा गया।

समाधि स्थल एवं चित्रशाला के अन्तः भाग की रेखाएँ तथा अस्वान की चट्टानें मिस्र में नील नदी के प्रथम झरने पर निर्मित की गयी थीं। इन्हें माल ढोने वाली नावों की मदद से ६०० मील की दूरी तक पहुँचाया गया। कलाकारों ने उसकी चमक के लिए मूसल आदि का भी उपयोग किया होगा ऐसा प्रतीत होता है।

प्रवीण चित्रकार, कलाकार, मूर्तिकार, राजगीर एवं चित्रकला सम्बन्धी व्यक्ति जीवन-पर्यन्त रहे। लेकिन अकुशल श्रमिकों ने वर्ष में केवल तीन माह ही कार्य किया। जब पतझड़ ऋतु में नील नदी बाढ़ग्रस्त होती तभी यह एक लाख से करीब कृषक श्रमिक अपनी फसलों के बोने के पश्चात् कार्य का इन्तजार करते थे।

पिरामिड के हृदय में १४० फीट ऊँचा रेगिस्तान है। चोटी के नीचे राजा का कक्ष बना हुआ है। एक तहखाने में ३४ फीट लम्बी, १७ फीट चौड़ी और १९ फीट ऊँची स्वच्छ चमकदार पत्थर रेखाएँ खिंची हुई हैं। हजारों टन राजगीरी सहायता ऊपर उपस्थित होते हुए भी इनमें उत्पीड़क एवं व्याकुल कर देने वाली चीखों का आभास होता है। कमरे के आखिरी तल पर पत्थर की कब्र बनी है, जो चेओप्स के स्वयं का विश्रामगृह माना जाता है।

इस निर्माण में सबसे बड़े आश्चर्य की बात वे अविज्ञात ध्वनियाँ हैं जो पिरामिडों में थोड़ा भीतर प्रवेश करते ही सुनाई देने लगती हैं। खोजने पर कहीं से वे सूत्र नहीं मिलते जो बता सकें कि यह विचित्र आवाजें आखिर आती कहाँ से हैं।

कभी-कभी वहाँ शहद की मक्खियों के उड़ने की तरह जोर-जोर की भिनभिनाहट होती है। कई बार वे टिड्डी दल के उड़ने जैसी प्रतीत होती हैं। कई बार वहाँ ऐसा लगता है मानो पत्थर की चट्टानों को किसी बड़े जोर से चीरा जा रहा हो। कभी हाँफने, कभी कराहने, कभी चिल्लाने और कभी गीत गाने जैसी स्वर लहरियाँ वहाँ गूँजती हुई प्रतीत होती हैं कि कदाचित् निर्माण कार्य अभी भी चल रहा है और श्रमिक तरह-तरह से कोलाहल कर रहे हैं। मसाला पीसने, टाँकी से पत्थर तोड़ने तथा छोटे हथौड़े और बड़े घन चलाने की आवाजें भी सुनाई पड़ती हैं।

इस प्रकार के ध्वनि प्रवाह सम्भवतः उसी समय के हैं जब यह निर्माण कार्य चलता रहा होगा। इमारतों की रहस्यमयी संरचना ने उस समय की आवाज को सोख लिया होगा और वे ग्रामोफोन रिकार्डों की तरह समय-समय पर अपनी प्रतिध्वनि प्रकट करते होंगे।

पिरामिडों को बने हजारों वर्ष बीतने को आते हैं, पर उनके पीछे छिपी अदम्य संकल्प-शक्ति का चमत्कार अभी भी अपनी कहानी आप कहते देखा जा सकता है।

मनस्विता की प्रचण्ड शक्ति

पार्सल का पैकिट ही दृष्टिगोचर होता है। इसके भीतर क्या है ? यह पता लगाने के लिए उसके भीतर के भाग को खोलना और देखना होता है। शरीर एक प्रकार से पार्सल का पैकिंग है। उसकी चमड़ी के रंग और नख-शिख की बनावट मात्र का परिचय बाहरी देखभाल से मिल सकता है। इसके भीतर क्या है ? इसका पता ऊपरी देखभाल से नहीं लग सकता। हो सकता है उसके भीतर बहुमूल्य रत्न बन्द हों और यह भी हो सकता है कि चमकीले लिफाफे के भीतर किसी मसखरे ने उसमें ऐसे ही कुछ कूड़ा-कबाड़ भर दिया हो।

मनुष्य का वास्तविक मूल्यांकन उसके मन-मस्तिष्क की जाँच-पड़ताल कर लेने से होता है। हो सकता है कि कोई विषकन्या नख-शिख से सुसज्जित होकर प्राण-हरण के लिए बैठी हो। यह भी हो सकता है कि अष्टावक्र जैसे किसी अपंग के कलेवर में ज्ञान का भण्डार भरा पड़ा हो। चाणक्य काले कुरूप थे तो भी उनकी मेधा शक्ति ने छिन्न-भिन्न भारत को चक्रवर्ती विशाल भारत में बदल दिया था। कीमत अन्तराल की होती है। बाहरी कलेवर तो दिखावा मात्र होता है, कई बार तो छलावा भी।

चेतन की कई परतें हैं। उनमें मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार का प्रमुख रूप से प्राधान्य होता है। मनोविज्ञान की भाषा में इनका विवेचन चेतन, अचेतन, अवचेतन, सुपरचेतन आदि के रूप में किया जाता है। वस्तुतः यही वह खजाना है जिसमें एक से एक बहुमूल्य रत्नों का भण्डार भरा-पूरा रहता है। उसमें देवत्व के दर्शन होते हैं। पर कभी-कभी ऐसा भी होता देखा गया कि इस देव सिंहासन पर कोई दुर्दान्त दस्यु अपना कुचक्र डाले और इस प्रकार अपनी शक्ति का प्रदर्शन करे मानो विनाश के देवता के रूप में उसका अवतार हुआ हो। रावण, कुंभकरण, दुर्योधन, जरासंध, वृत्रासुर, महिषासुर, भस्मासुर आदि के रूप में ऐसों की ही रोमांचकारी चर्चा होती रहती है। यह विकृति का विवेचन है। वस्तुतः अन्तराल देवलोक है। स्वर्ग-मुक्ति से लेकर ऋद्धि-सिद्धियों के खजाने इसी में भरे रहते हैं। आत्मा के रूप में परमात्मा का निवास भी इसी मानस-मन्दिर में निरन्तर विराजमान रहता है। ऋषि, मनीषी, तपस्वी, सन्त, सुधारक, शहीद जैसे महामानव इसी क्षेत्र की उत्पत्ति हैं।

मोटे शब्दों में इस चेतना केन्द्र को मनस या मानस कहते हैं। यही वह निकटतम लोक है जिसमें स्वर्ग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और नरक थोड़े से फासले पर ही विद्यमान रहते हैं। यह सत्ता जब तक शरीर में विद्यमान है, तभी तक वह जीवित है, अन्यथा प्राण के निकलते ही अच्छा-खासा शरीर कुछ ही क्षणों में सड़-गलकर अपनी सत्ता समेटने की तैयारी कर लेता है।

काम करता तो शरीर दिखाई पड़ता है पर वस्तुतः वह जड़ होने के कारण निष्क्रिय होता है। साइकिल को सवार की इच्छानुसार अपनी गति और दिशा निर्धारित करनी पड़ती है। उसी प्रकार दृश्यमान कायिक हलचलें मन के संकेतों का अनुसरण करती हैं। दोषारोपण या गुणगान शरीर के रूप में गाये जाने वाले का होता है पर वास्तविकता दूसरी है। कठपुतली की समस्त हरकतें परदे के पीछे छिपे बैठे बाजीगर की होती हैं। उसी प्रकार मन का सूत्र संचालक दृश्यमान अनेकों बुरी-भली हरकतें करता रहता है।

यह व्यक्ति का मन ही है, जिसमें विचारों का उद्‌गम उमड़ता रहता है और वह ऐसा विचित्र रूप धारण करता है कि आश्चर्य से चकित रह जाना पड़ता है। इसकी विचित्रताएँ देखते ही बनती हैं। यदि पतन की दिशा में मुड़ चले तो उसकी स्थिति पशु, पामर और पिशाच से भी बदतर हो जाती है। यदि वह ऊँची उठ चले तो इसी हाड़-माँस के पुतले की ऐसी उच्चस्तरीय स्थिति बन जाती है कि उस पर देव समुदाय को भी निछावर किया जा सके। विचार-संस्थान काम न दे तो व्यक्ति मूर्ख, सनकी, विक्षिप्त, बेतुका, गया-गुजरा जैसा बनकर रह जाता है, भले ही उसके अंग-अवयव अपनी जगह पर सही और सुशोभित ही क्यों न हों।

मस्तिष्क सही रहने पर कितने ही विद्वानों ने रोगशैय्या पर पड़े-पड़े असाध्य कष्ट सहते-सहते महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों की संरचना की है। उनके नेतृत्व में जितने महत्त्वपूर्ण काम चलते रहे हैं, उन्हें कितने ही विद्वान एक साथ मिलकर नहीं चला सकते थे। संसार में ऐसे अगणित प्रतिभा के धनी हुए हैं, जिनने घोर अभावों के बीच किसी प्रकार दिन गुजारते हुए भी प्रगतिपथ पर अनवरत गति से कदम बढ़ाये और ऐसे काम कर दिखाये, जो सुसम्पन्नों की कल्पना में भी नहीं आ सकते थे। प्रगति और अवगति की दोनों दिशाएँ मानसिक स्तर की उत्कृष्टता पर निर्भर रहती हैं।

रेल की पटरियों के मोड़ इंजन और डिब्बों को किसी भी दिशा में घसीट ले जाते हैं। इंजन तो मात्र दौड़ता भर है, डिब्बे तो मात्र अनुगमन भर करते हैं वस्तुतः दिशा निर्धारण उस माध्यम से होता है जहाँ से कि पटरियों को जोड़ने और खोलने का उपक्रम सम्पन्न किया जाता है। इसी अन्तर के कारण एक रेल पूर्व को तो दूसरी दक्षिण को चल पड़ती है और उन दोनों के बीच कुछ ही समय में असाधारण दूरी का अन्तर बन जाता है। पहाड़ की चोटी पर होने वाली वर्षा का पानी, जिस ओर को ढलानों पर बह चलता है, उसकी धारा भी उसी दिशा वाले समुद्र में जा मिलती है। आरम्भ एक जगह से होने पर उसका अन्त उस प्रकार का होता है, जिसे असाधारण ही कहा जा सकता है। यह मार्ग-परिवर्तन कहाँ से होता है ? इसका उत्तर एक ही हो सकता है—मन के रुझान से।

समझा यह जाता है कि वातावरण से, संगति से, शिक्षा से मनुष्य का मन बदल जाता है और वह सुसंस्कृत बनने की ओर अग्रसर होने लगता है। पर यह बात आंशिक रूप से तभी सच निकलती है, जब मन ढीला-पोला हो और गीली मिट्टी की तरह किसी भी ढाँचे में ढलते समय आना-कानी न करे। पर जब निजी उत्कण्ठा प्रबल होती है तो वह सारे आवरणों को तोड़-मरोड़कर रख देती है और वही करा लेती है, जिसके लिए प्रबल उत्कण्ठा जड़ जमाये बैठी होती है। रावण पुलस्त्य ऋषि का नाती था। उसकी वंश-परम्परा में सभी सज्जन होते आये थे। पर रावण की अपनी इच्छाशक्ति इतनी प्रबल निकली कि उसने वंश-परम्परा की, वातावरण की, शिक्षा-दीक्षा की कुछ भी परवाह न की और उस दिशा में चल पड़ा जिसके सम्बन्ध में कोई आशा-अपेक्षा नहीं की जा सकती थी। यहाँ मनोबल की प्रबलता सर्वोपरि सिद्ध होती है। इसके विपरीत कितने ही ऐसे व्यक्ति भी हुए हैं जिनके न पूर्वजों का कोई इतिहास था और न वे स्वयं किसी समुन्नत वातावरण में पले, फिर भी मन की एक उमंग ने उन्हें कुछ से कुछ बना दिया। आम्बपालि,, अंगुलिमाल की जिन्दगी हेय स्तर की बीती जब उनने करवट बदली तो कायाकल्प जैसा परिवर्तन उपस्थित हो गया। वे सन्त ही नहीं बने, वरन् ऐसी स्थिति में पहुँच गये जहाँ से वे अनेकों को सन्मार्ग की ओर घसीटकर ले जाने में सफल होते रहे। कबीर, रैदास आदि की परिस्थितियाँ ऐसी नहीं थीं, जिसके कारण उन्हें उच्चकोटि के सन्त और समाज-सुधारक बनने का अवसर मिलता। उनकी निजी मानसिक प्रचण्डता अपने आप में एक ऐसी शक्ति है जो अपने अनुकूल वातावरण बना लेती और सहयोग जुटा लेती है तथा प्रतिकूलताओं से जूझकर उन्हें अनुकूलता में बदल लेती है।

विभूतियों की गंगोत्री : संकल्प शक्ति

मनुष्य की सामर्थ्य एवं उपलब्धियाँ अन्यान्य भौतिक साधनों की तुलना में अधिक मूल्यवान हैं। अध्यात्मवादियों से लेकर आधुनिक मनोविज्ञानियों तक सभी ने माना है कि मनुष्य के संकल्प, इच्छा एवं आकांक्षा शक्ति के जीवन्त स्रोत हैं तथा बाह्य भौतिक साधनों की तुलना में अधिक महत्त्वपूर्ण हैं। उनके अनुरूप ही व्यक्ति का स्तर बनता है। इच्छाशक्ति यदि संकल्प का रूप धारण कर ले तो मनुष्य ऐसे अनेकों चमत्कृत करने वाले परिणाम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर सकता है, जिस पर सहसा लोगों को विश्वास करना कठिन पड़ सकता है। किसी व्यक्ति का स्वस्थ होना, किसी का जीवनभर रोगी बने रहना, किसी का प्रखर बुद्धि वाला होना, किसी का मन्दबुद्धि होना, किसी का सफलता के उच्च शिखर पर पहुँच जाना और दूसरे का जीवनभर परमुखापेक्षी बने रहना, उस संकल्प बल की क्षीण या प्रबल इच्छाशक्ति के प्रतिफल हैं, जो मनुष्य को कुछ से कुछ बना देती है।

प्रख्यात जर्मन दार्शनिक आर्थर शोपेनहावर ने अपनी कृति ''द वर्ल्ड ऐज विल एण्ड आइडिया'' में कहा है कि इच्छाशक्ति वह सार्वभौम एवं सृजनात्मक शक्ति है जो सृष्टि के कण-कण में विद्यमान सृष्टा का सक्रिय पक्ष है। समस्त क्रियाओं का मूल यही है। सत्रहवीं शताब्दी के प्रसिद्ध योरोपीय अध्यात्मवेत्ता जोसेफ ग्लानविक कहा करते थे कि सृष्टि के समस्त क्रिया व्यापार में ईश्वरीय संकल्प शक्ति के ही दर्शन होते हैं। उनके अनुसार इच्छाशक्ति की चमत्कारी सामर्थ्य को उसकी ओजस्विता-तेजस्विता को जानना और उसका अभिवर्धन कर सदुपयोग करना विरलों को ही आता है। संकल्प शक्ति की विस्तृत चर्चा करते हुए ब्रिटिश मनोविज्ञानी **एवलिग एफ.** ने अपनी पुस्तक ''डायरेक्टिंग मेण्टल एनर्जी'' में कहा है कि यह वह क्षमता है जो शरीर और मन की गतिविधियों का निर्धारण और नियमन करती है। साथ ही उस प्रेरक शक्ति को जन्म देती है जो मनुष्य के समस्त क्रिया-कलापों का दिशा-निर्देशन करती है। संकल्प बल के आधार पर ही मनुष्य अपनी सामर्थ्य को कई गुना बढ़ा पाता है।

विश्व में ऐसे अनेकों उदाहरण विद्यमान हैं, जिनसे मनुष्य की प्रचण्ड इच्छाशक्ति, संकल्पशक्ति और उनके द्वारा विकसित अभ्यासों की उपलब्धियाँ प्रमाणित होती हैं। कितने ही लोग संकल्प शक्ति के आधार पर अपने अंगों को मनमाने ढंग से मोड़ने-मरोड़ने में पारंगत होते हैं, तो कितने ही जड़-चेतन दोनों में हलचल उत्पन्न करने और इच्छानुरूप उन्हें परिचालित करने में समर्थ होते हैं।

पिछले दिनों क्यूबा में रहने वाला ''एवेलिनो पेरेज'' नामक एक व्यक्ति व्यक्तियों और वैज्ञानिकों के आकर्षण और शोध का बहुचर्चित विषय बन गया था। पेरेज की विशेषता यह थी कि वह इच्छानुसार अपनी एक आँख या एक साथ दोनों आँखों को पुतलियों से दो इन्च बाहर निकाल लेता था और उन्हें वापस बैठा लेता था। इससे उसकी देखने की शक्ति में किसी भी तरह का दबाव नहीं पड़ता था। हुआ यह था कि बचपन से ही उसकी आँखें बड़ी कमजोर थीं। उसने अपने ही आप आँखों को इधर-उधर घुमाकर व्यायाम प्रारम्भ किया और माँस-पेशियाँ जो आँखों के गोलों को चलाती हैं, को लचीला बनाने की क्षमता विकसित कर ली। इसी तरह इटली निवासी वेनदेतो सुनियो नामक एक नवयुवक अपनी आँखों से आग की लपटों का काम लेने के लिए ख्याति प्राप्त कर चुका है। संकल्पपूर्वक वह जहाँ भी दृष्टि जमाता है वहीं अग्नि की चिनगारियाँ प्रकट हो जाती है और वस्तुएँ जलने लगती हैं। उसकी इस विशेषता का पर्यवेक्षण कितनी ही प्रयोगशालाओं में मूर्धन्य वैज्ञानिकों द्वारा हो चुका है। बोल्वर हैम्पटन के समीपस्थ शहर सैजले का रहने वाला आर. फिलिप्स नामक एक व्यक्ति कान से धुआँ निकालने की कला का प्रदर्शन करने के लिए प्रसिद्ध है। है तो यह सब प्रकृति के विरुद्ध किन्तु ऐसा होता कैसे है ? व क्यों, यह विज्ञान की समझ से परे है। पिछले दिनों कितने ही पत्र-पत्रिकाओं ने उसकी इच्छाशक्ति के प्रदर्शन का सचित्र विवरण प्रकाशित किया था।

ग्रीस के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक लेखक **डॉ. लायल वाटसन** ने अपनी पुस्तक ''सुपरनेचर'' में कहा है कि इच्छा शक्ति द्वारा मनुष्य जड़ पदार्थों में भी हलचल उत्पन्न कर सकता है। उनने नेल्या मिखाइलोवा नामक एक रूसी महिला का वर्णन किया है जो अपनी प्रचण्ड इच्छाशक्ति के प्रदर्शन के लिए प्रसिद्ध थी। १९२७ में जन्मी मिखाइलोवा १४ वर्ष की उम्र में रूस की रेड आर्मी में भर्ती हो गई थी। उसमें सहसा असामान्य इच्छाशक्ति उस समय विकसित हो गई जब वह युद्ध के दिनों में सैनिक रूप में मोर्चे पर लड़ते हुए शत्रु के गोले से गंभीर रूप से आहत होकर अस्पताल में आरोग्य लाभ कर रही थी। इसका विस्तृत वर्णन वैज्ञानिक लेखक द्वय **एस. ओस्ट्रैण्डर** एवं **एल. स्नोडर** ने अपनी कृति ''साइकिक डिस्कवरीज बिहाइण्ड दी आयरन कर्टेन'' में किया है। उनके अनुसार नेल्या अस्पताल में एक दिन काफी परेशान एवं असंतुलित थी और कमरे में चहलकदमी कर रही थी तभी अचानक उसके मस्तिष्क में अपने अंतस्थ शक्तिपुंज का एक चित्र कौंधा। इसके पश्चात् उसे पाने के लिए वह अपनी संकल्प शक्ति को प्रखर बनाने में जुट गयी। इच्छा शक्ति की प्रबलता के कारण जहाँ उसकी शारीरिक, मानसिक स्थिति सुधरती गई, वहीं उसके चारों ओर अनेकों परिवर्तन घटित होने लगे। जिस किसी वस्तु पर वह ध्यान एकाग्र करती, उसी में हलचल उत्पन्न हो जाती।

नेल्या की प्रबल इच्छा शक्ति का परीक्षण वैज्ञानिक स्तर पर भी किया गया। मास्को स्टेट यूनिवर्सिटी के सुप्रसिद्ध जीव विज्ञानी **एडवर्ड नौमोव** ने इसका परीक्षण-विश्लेषण करने के लिए नेल्या को अपनी प्रयोगशाला में आमन्त्रित किया और एक मेज पर माचिस की कई डिब्बियाँ बेतरतीब तरीके से बिखेर दीं। नेल्या मिखाइलोवा ने उनके ऊपर चक्राकार हाथ घुमाया और देखते ही देखते सभी माचिसें रेल के डिब्बों की तरह एक के पीछे दूसरी, दूसरे के पीछे तीसरी आदि क्रम से चक्कर काटने लगीं और फिर एक-एक करके मेज के किनारे से नीचे फर्श पर गिरती गईं। सन्देह निवारण के लिए प्रयोग को दुहराया गया। इस बार इन्हें एक पारदर्शी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाली से ढक दिया गया। नेल्या ने अपने संकल्प बल से माचिसों को दुबारा उसी क्रम से घुमाया और फर्श पर गिरा दिया। एक दूसरे प्रयोग में वैज्ञानिक नौमोव ने एक जार में ५ सिगरेट रखे और उनमें से एक निश्चित सिगरेट को अलग करने तथा उसे गोलाई में घुमाने के लिए नेल्या को कहा। उसने ऐसा ही कर दिखाया।

''साइकिक पावर बिहाइण्ड आयरन कर्टेन'' पुस्तक में ही यह वर्णन भी है कि एक बार सोवियत लेखक बदिम मारीन के साथ भोजन करते समय नेल्या ने मेज पर थोड़ी दूर पड़े रोटी के टुकड़े पर अपना ध्यान एकाग्र किया तो वह टुकड़ा खिंचकर उसके पास आ गया। फिर उसने झुककर मुँह खोला तो वह टुकड़ा उछलकर उसके मुँह में समा गया। दो सोवियत लेखकों ने भी उसकी विलक्षण इच्छाशक्ति का परीक्षण किया था और इसका विस्तृत विवरण मास्को से प्रकाशित होने वाले प्रमुख समाचार-पत्र 'प्रावदा' के १७ मार्च, १९६८ के अंक में ''ह्वेन एपिल्स फाल'' नामक शीर्षक से प्रकाशित किया था। उनके अनुसार नेल्या ने अपनी इच्छाशक्ति से टेबल पर रखी वस्तुओं को एक सिरे से दूसरे सिरे पर पहुँचा दिया था।

सम्मोहन शक्ति आदि के प्रयोगों की आशंका को निर्मूल करने के लिए उपरोक्त सभी परीक्षण बहुत सावधानीपूर्वक नियन्त्रित परिस्थितियों में किये गये थे। सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक **जे. बी. राइन** ने अपनी पुस्तक ''एक्स्ट्रा सेन्सरी परसेप्शन'' में लिखा है कि लेनिनग्रांड स्थित यूटोमस्की इन्स्टीट्यूट के विख्यात न्यूरोफिजियोलाजिस्ट **डॉ. गेनेडी सर्जेव** ने भी मिखाइलोवा को अपनी प्रयोगशाला में जाँचा-परखा था। उनका ई. ई. जी., ई. एम. जी. एवं मैग्नेटोएनसेफेलोग्राम (एम. ई. जी.) लिया गया और पाया गया था कि उनका शरीर चारों ओर से चुम्बकीय क्षेत्र से घिरा था, उससे प्राण ऊर्जा की सशक्त किरणें निकल रहीं थीं। सर्जेव के अनुसार मिखाइलोवा जहाँ अपनी दृष्टि केन्द्रित करती थी, वहाँ एक प्रकार के चुम्बकीय तरंगों का घेरा बन जाता था। इसी के माध्यम से वह उन वस्तुओं को आकर्षित या विकर्षित कर लेती थी। इस तथ्य की पुष्टि 'लेनिनग्रांड इन्स्टीट्यूट ऑफ न्यूरोलॉजी' के वैज्ञानिकों ने भी अपने विभिन्न परीक्षणों के आधार पर की थी कि नेल्या ने अपने संकल्प बल से अपने आपको एक जीता-जागता शक्तिशाली चुम्बक बना लिया था। उसकी मस्तिष्कीय तरंगें असमान्य रूप से ५० गुनी अधिक शक्तिशाली थीं। यह तरंगें सामने की अपेक्षा मस्तिष्क के पिछले भाग (पेराइटो ऑक्सीपीटल कार्टेक्स) से अधिक मात्रा में निकलती थीं।

इच्छाशक्ति सचमुच एक महान दैत्य है। अच्छे हों या बुरे परिणाम, संकल्प शक्ति को जुटाकर मनुष्य अतिमानव बन सकता है। विश्वविख्यात गुह्य विज्ञानी यूरीगेल अपनी प्रचण्ड इच्छाशक्ति के लिए प्रसिद्ध रहे हैं। वे अपनी नेत्र दृष्टि से कठोर से कठोर मजबूत लौह शलाकाओं को मोड़ देते थे। पिछले कई वर्षों से वह इस तरह के आश्चर्यजनक करिश्मों का प्रदर्शन कर रहे हैं। विभिन्न वैज्ञानिकों ने उनकी क्षमता को जाँचा-परखा और सही पाया है। यद्यपि कुछ वैज्ञानिकों ने उनकी उपलब्धियों को विवादास्पद भी माना है। इंग्लैण्ड की प्रसिद्ध पत्रिका 'सण्डेपीपुल' में प्रकाशित घटना के अनुसार यूरीगेलर ने एक प्रदर्शन में एक बार इजराइल में दौड़ते हुए घोड़े को रोक दिया था।

निश्चय ही मनुष्य को ईश्वर प्रदत्त दिव्य अनुदानों में इच्छाशक्ति का स्थान सर्वोपरि है। भौतिक एवं आध्यात्मिक जीवन में सफलताओं का मूल बीज दृढ़ इच्छाशक्ति को ही माना गया है। समस्त शक्तियों का उद्भव प्रबल संकल्प बल के द्वारा ही होता है। ''द इमोशन्स एण्ड विल'' नामक अपनी पुस्तक में ब्रिटिश मनोविज्ञानी बेन अलेक्जेण्डर ने कहा है कि संकल्प बल की प्रचण्डता मानवी व्यक्तित्व को उच्च सोपानों पर पहुँचा देती है। उनके अनुसार मनुष्य में अनेकों कमजोरियाँ होती हैं, जिनसे पिण्ड छुड़ाने के लिए मनोबल को ऊँचा रखना एवं इच्छाशक्ति को प्रखर बनाना पड़ता है। सफलता वहीं मिलती है, जहाँ इच्छाशक्ति की प्रचण्डता होती एवं तदनुरूप प्रयास किये जाते हैं। प्रबल इच्छाशक्ति मस्तिष्क को अपने ढाँचे में ढाल लेती है और उसी के अनुरूप शारीरिक मानसिक गतिविधियाँ परिचालित होने लगती हैं।

''ह्वाट मेक्स ए लाइफ सिग्नीफिकेण्ट'' नामक पुस्तक में सुप्रसिद्ध मनःशास्त्री **विलियम मोक्स** ने कहा है कि मनुष्य के भीतर अति-मानवी सामर्थ्य विद्यमान हैं, जिन्हें करतलगत कर सकना हर किसी के लिए सम्भव है। इसका आरम्भिक क्रियात्मक चरण है, ढर्रे की गतिविधियों को उलटने तथा दूरदर्शितायुक्त महानता के मार्ग का अवलम्बन करने के लिए अपने संकल्पों को परिपुष्ट तथा दृढ़ करना, इच्छाशक्ति को प्रखर बनाना। संकल्प की दृढ़ता पशुवत् अभ्यस्त स्वभावों से छुटकारा पाने तथा आत्म-विजय प्राप्त करने का प्रमुख आधार है। इसका सम्पादन तथा अभिवर्धन निरन्तर के अभ्यास से सम्भव है। जो जितना अधिक संकल्पवान है, वह उतना ही अधिक समर्थ है। आकांक्षा-संकल्प, दृढ़ता जब सत्प्रवृत्तियों का पक्षधर बन जाती है तो अतिमानवी सामर्थ्य हस्तगत करने का मार्ग क्रमशः प्रशस्त होने लगता है।

यह समझा जाना चाहिए कि संकल्प बल को बाजीगरी या कौतुक भरे स्वाँग में नियोजित करने से लोगों को आश्चर्य भले ही लगे, मनोरंजन भले ही होता हो, परन्तु आध्यात्मिक प्रगति का लक्ष्य नहीं सधता। जब अंतः शक्ति-सामर्थ्य को एक लक्ष्य पर नियोजित कर कुछ श्रेष्ठ कर पाने, कर दिखाने का सत्साहस किया जाता है तो ऋद्धि-सिद्धियाँ अपना सारा वैभव भण्डार उस पर बरसा देती हैं, उसे निहाल कर देती हैं। यही मानव का लक्ष्य भी होना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मानवी काया की दैत्योपम क्षमताएँ

भारतीय पुराणों में भीम और दुर्योधन, कुम्भकरण और कंस, रावण और बाली, हनुमान और मेघनाद के सुदृढ़ शरीर और वज्र की काया के अनेकों प्रसंग भरे पड़े हैं। किन्तु उन्हें पढ़कर ऐसा लगता है कि ये मात्र अतिशयोक्ति और कोरी गप्प हैं। हाथियों द्वारा रौंदा जाना, विष बुझे बाणों का असर न होना; क्या रहस्य था। इसके विषय में कोई विज्ञान-सम्मत तर्क नहीं मिलता, किन्तु इसी शताब्दी के आरम्भ में अमेरिका के एक व्यक्ति रिचर्ड ने यह सिद्ध कर दिया है व वैज्ञानिकों को यह मानने पर विवश कर दिया है कि पहले ऐसी सुदृढ़ देह वाले बलशाली योद्धा अवश्य रहे होंगे।

रिचर्ड नामक एक व्यक्ति ने अपनी काया की क्षमता को इतना विकसित कर लिया था कि बड़े से बड़े हथौड़े, भारी वजनी लकड़ी के लट्ठे, हाथी और तोप के गोले, उसका कुछ नहीं बिगाड़ पाते थे। न्यूयार्क टाइम्स के सुर्खी भरे समाचारों में रिचर्ड के प्रदर्शन का विवरण प्रकाशित हुआ था। उसमें बताया गया कि ६४ वर्षीय रिचर्ड, जो अच्छा-खासा लम्बा-चौड़ा मजबूत था, का पन्द्रह फुट लम्बी और १ फीट मोटी लकड़ी पेट पर दे मारने पर भी कुछ नहीं बिगाड़ सकी। सेन फ्रांसिस्को के ६ भारी भरकम पहलवान घूँसे मारते थक गये, किन्तु रिचर्ड ऐसे बैठा रहा, जैसे उसकी मालिश की जा रही हो अथवा सहलाया जा रहा हो। १९६४ में १०० पौण्ड वजन तक के गोले को उठाने का उसे अभ्यास था। १९६६ में उसने एक प्रदर्शन में तोप के मुँहाने के सामने खड़े होकर १५० पौण्ड वजन का गोला दगवाया। रिचर्ड अविचलित खड़ा रहा और टेबिलटेनिस की गेंद की तरह गोला टकराया और छिटककर अलग जा गिरा। इस प्रकार रिचर्ड को "इस्पात" का आदमी कहा जाने लगा। रिचर्ड को यह विद्या कहाँ से हाथ लगी ? इसके उत्तर में उसने कहा कि वह बचपन में सन् १९२४-२५ में हरिद्वार, ऋषिकेश, प्रयाग और वाराणसी गया, जहाँ भारतीय योगियों ने उसे योग साधना बताई जिसके अभ्यास से यह चमत्कारी परिणाम वे सब देख सके हैं।

पोर्टलैण्ड (ओरगन) की ८ वर्षीय लड़की सड़क पर खेल रही थी, खेल में वह इतनी मस्त थी कि उसे पता भी न चला कि उधर से सड़क पीटने वाला इन्जन दौड़ा आ रहा है। वह गिर पड़ी। ३ टन वजन का रोलर पहिया उसके पैरों पर से निकल गया। इन्जन आगे बढ़कर रुक गया। ड्राइवर यह देखकर भौंचक्का रह गया कि वह लड़की उठकर खड़ी हो गई है और जिस लड़के के साथ खेल रही थी, उसे पकड़कर खिलखिलाकर हँस रही है, जैसे कुछ हुआ ही न हो।

शून्य डिग्री से. ग्रे. तापमान पर कोई व्यक्ति १० मिनट से अधिक नहीं ठहर सकता किन्तु मेजर डोनमैल्ड एक घण्टे तक नंगे बदन, बर्फ के शिलाखण्डों पर लेटे रहे और बाद में कपड़े पहनकर चलते बने।

शरीर में इतना लचीलापन है कि वह किसी भी दबाव को सहन कर सकता है। किसी भी ढाँचे में ढल सकता है। किसी भी प्रतिकूलता के लिए अभ्यस्त बनाया जा सकता है। गर्भाशय मूलतः बहुत छोटा होता है, पर परिपक्व भ्रूण को धारण करते समय वह अपने मूल आकार की तुलना में पचास गुना बढ़ चुका होता है। पेट में उतना ही स्थान है, जितने में कि स्थापित अवयव अपनी-अपनी गतिविधियाँ चला सकें और सिकुड़-बटुरकर यथाक्रम बैठे रह सकें। किन्तु जब गर्भ बढ़ता है तो आँतें आमाशय आदि कम स्थान में गुजारा करते हैं और भ्रूण के लिए पर्याप्त जगह देकर भी अपनी गतिविधियों मे कमी नहीं आने देते। समूचे शरीर के सम्बन्ध में यही बात लागू होती है। उसका कोई भी अवयव अभ्यास से अपनी सामान्य क्षमता से कई गुने पराक्रम को बिना किसी कठिनाई के देखा जा सकता है।

मैसूर क्षेत्र के दक्षिण कनारा जिले का निवासी चालीस वर्षीय वेनारी बेंकट रामन कुछ समय पूर्व तक विचित्र प्रदर्शन के लिए प्रसिद्ध था। उसने अपनी दाढ़ी में मधुमक्खियों का छत्ता जमा रखा था। उसमें मक्खियाँ भली प्रकार जीवन-निर्वाह करती थीं।

सरसंर्जिग—अफ्रीका के हब्शियों में अपने ओठ बढ़ाने की प्रथा है। इसके लिए वे लकड़ी की तश्तरियाँ बनाकर उनसे ओठों को बाँध देते हैं। ओठ जितना बढ़ते जाते हैं, बड़ी तश्तरियाँ बाँध दी जाती हैं और इस प्रकार कई स्त्रियाँ तो अपने ओठ १४-१५ इन्च अर्थात् सवा फुट व्यास की ढक्कनदार तश्तरी की तरह बढ़ा लेती हैं।

साधारणतया आग अपने सम्पर्क में आने वाले हर पदार्थ को गरम करती और जलाती है। किन्तु ऐसा भी हो सकता है कि शरीर बड़े तापमान में बिना जले अपनी स्थिति बनाये रह सके। इसी प्रकार जम जाने वाले शीत में भी उसका अस्तित्व लम्बे समय तक बना रहे ऐसी अवरोधक शक्ति का विकास हो सकता है।

दक्षिण जापान के कई बौद्ध मन्दिरों में ऐसे धर्मानुष्ठान होते हैं, जिनमें छः फुट लम्बी दहकती हुई कोयलों से सजाई हुई बेदी पर नंगे पैरों चलकर उसे पार करना पड़ता है। पुरोहित आगे चलता है और अनुयायी पीछे। जो लोग इस रास्ते को हँसते हुए पार कर लेते हैं वे सच्चे जैन विश्वासी माने जाते हैं।

ऐसी अग्नि-परीक्षा मलेशिया के कई क्षेत्रों में धर्मानुष्ठानों के रूप में प्रचलित है। होली के अवसर पर भारत के कई स्थानों में पुरोहित लोग जलती हुई ऊँची लपटों में होकर नंगे पाँवों और नंगे शरीर पार निकलने का प्रदर्शन करते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बाली द्वीप में एक धर्मानुष्ठान होता है—संघ यंग। इसमें पुरोहित धधकते अंगारों पर नंगे पैरों झूम-झूमकर नाचते हुए निकलते हैं। साथ में उसी तरह, कुछ प्रशिक्षित बच्चों की मण्डली भी निकलती है।

२४ फरवरी १९७८ को उदयपुर (राजस्थान) में भारतीय लोक कला मण्डल का समारोह था। उसमें एक हठयोगी ने जलती आग में प्रवेश किया और घण्टों नृत्य करता रहा। पेट्रोल छिड़क-छिड़ककर कितनी ही बार आग भड़काई जाती रही योगी का नृत्य चलता ही रहा। इस प्रदर्शन से पूर्व योगी के शरीर पर किसी विशेष रासायनिक पदार्थ आदि न होने की आशंका का भली प्रकार निराकरण कर लिया गया था।

कभी-कभी ऐसे प्रदर्शन भी देखे गये हैं, जिससे मनुष्य को एक अच्छा-खासा दैत्य कहा जा सके। जादू के हाथ की सफाई—नजरबन्दी के खेलों की चर्चा को बाल-विनोद कहा जा सकता है किन्तु असंख्य कुशल परीक्षकों को जाँच की चुनौती देते हुए खुलेआम किये जाने वाले परीक्षण जहाँ हो चुके और दृश्य को किसी प्रकार की जालसाजी न होने की बात जब घोषित की गई तो उन्हें शरीर की विस्मयकारी विलक्षणता ही कहा जायेगा।

सन् १९६८ में फूजी टेलीविजन कम्पनी जापान के डाइरेक्टर्स भारत आये। दिल्ली में उन्हें पता चला कि भारत में एक ऐसा व्यक्ति है जो काँच, लोहा, ताँबा, पिन, कंकड़, पत्थर चाहे जो कुछ खा सकता है तो भी उसकी शारीरिक क्रियाओं में रत्ती भर भी फर्क नहीं पड़ता। उन्होंने उस व्यक्ति को दिल्ली बुलवाया। स्वागत में जहाँ अन्य अतिथि स्वादयुक्त भोजन पाते हैं, चाय नाश्ता करते हैं, वहाँ इस बेचारे को कीलें, पिनें, टूटे फ्लास्क और काँच के गिलास खाने को दिये गये। उसने वही बड़े प्रेम से खाये और जापानियों को दंग करके रख दिया। जापानी उन्हें साढ़े तीन माह के लिए जापान ले गये। उस पर तरह-तरह के प्रयोग किये, पर कोई रहस्य न जान सके। आखिर इस मनुष्य दैत्य के पेट में क्या है ? जो वह मोटर-ठेले खा जाने तक की क्षमता रखता है।

क्वीवलैण्ड (यू. एस. ए.) के वैज्ञानिक जॉर्ज क्रॉयल ने इस सम्बन्ध में अपना एक शोध प्रबन्ध सन् १९३३ में मैन फिश के मूर्धन्य चिकित्सक परिषद के सम्मुख प्रस्तुत किया था। उसमें उनने कहा था कि आवश्यक नहीं कि आहार मात्र मुँह से ही ग्रहण किया और गले से उतारकर पाचन तन्त्र में पचाया ही जाय। वह साँस द्वारा आकाश में फैली हुई वायुभूत खाद्य सामग्री से भी उपलब्ध किया जा सकता है। जीवन धारण करने के लिए जिस प्रोटोप्लाज्मा की जरूरत है, उसे उपलब्ध करने के लिए शरीर में अन्य भी ऐसे छिद्र या चुम्बक केन्द्र हैं, जो आहार की पूर्ति प्रचलित चबाने और पचाने की प्रक्रिया की पूर्ति अन्य उपायों से कर सकें।

सन् १९७२ में सम्वाददाता निकोलाई स्वितेको के अनुसार खार्कोव की श्रीमती ओल्गा ब्लिज नोवा की ९ वर्षीया पुत्री में विलक्षण सामर्थ्य पाई गई। 'सोवियत विज्ञान एकादमी' के समक्ष उसके परीक्षण के प्रयोग किए गए। आँखों पर पट्टी बँधी हुई अवस्था में उसने बिछी हुई शतरंज को काली एवं सफेद गोटों को अलग-अलग छाँचकर रख दिया। रंग-बिरंगे कागजों की कतरनों को रंगों के अनुसार बारी-बारी से छाँटकर अलग कर दिया। परिचित लोगों के फोटो भी पहचान लिए। साथ ही बच्चों की रंग-बिरंगी पुस्तकों को हाथ से छूकर पढ़कर भी सुनाया। इतना ही नहीं, ५ सेंटीमीटर दूर रखी चीजों को उसने उँगली के पोरवों की सहायता से पढ़ लिया। कुछ चीजों का सही परिचय तो उसने पैर की उँगलियों से छूकर ही बता दिया।

रूस के वैज्ञानिकों का ध्यान तब से इस दिशा में अधिक गया है और उन्होंने उस सम्बन्ध में लगातार शोध कार्य किया है। मनोविज्ञान शाखा के वरिष्ठ शोधकर्त्ता प्रो. **कोन्स्टाटिन प्लातोनोव** ने कहा है—'मानवीय चेतना विद्युत की व्यापकता को देखते हुए इस प्रकार की अनुभूति अप्रत्याशित नहीं है। नेत्रों में जो शक्ति काम कर रही है, वही अन्यत्र ज्ञान-तन्तुओं में विद्यमान है, उसे विकसित करने पर मस्तिष्क को वैसी ही जानकारी मिल सकती है, जैसी आँखों से मिलती है।' **प्रो. एलेक्जोदर स्मिर्नोव** ने कहा है—'यह कोई अलौकिक बात नहीं है, वरन् सामान्य विज्ञान-सम्मत सिद्धान्तों का ही एक दिलचस्प प्रतिपादन है। एक अंग की चेतना दूसरे अंगों में भी काम कर सकती है।'

ऐसे पराक्रमी न केवल श्रम-शक्ति के क्षेत्र में चमत्कार दिखाते हैं, वरन् उतना पुरुषार्थ उपलब्ध करने के लिए आहार भी बड़ी मात्रा में खाते-पचाते देखे गये हैं। इसमें उनकी बलिष्ठता का पता चलता है। बड़ी मात्रा में भोजन करना ही नहीं, उसे पचा लेना भी उदरदरी की भीतरी समर्थता है। वही जब बाहरी कामों में आती है तो सिद्ध करती है कि न केवल खाने में वरन् करने में भी उसका उतना ही बढ़ा-चढ़ा चमत्कार है। अधिक खाने-पचाने को भी यदि एक पुरुषार्थ माना जा सके तो ऐसे उदाहरण भी समय-समय पर दृष्टिगोचर होते रहे हैं हो सकते हैं।

ग्रीस का क्रोटोना कामिलो नामक पेटू अधिक खा जाने और पचा जाने के लिये प्रसिद्ध था। वह १५० पौण्ड माँस एक दिन में खा जाता था। डेट्रायट निवासी एडिको नामक एक रेलवे मजदूर उसका भी ताऊ निकला। उसने ६० सुअरों के माँस से बनी हुई टिकियाँ एक दिन में खाकर पचाईं। इसके बाद भी उसने कुछ जामुन की कचौड़ियाँ खाकर और दिखाई। उसकी सामान्य खुराक इतनी थी, जितनी पाँच व्यक्तियों के सामान्य परिवार के लिये एक हफ्ते के लिये पर्याप्त होती। उसने शादी इसलिए नहीं की कि जो कमाता था, वह अपने पेट के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिए ही कम पड़ता। घर वालों को क्या खिलाता। वेतन से एडिको का काम न चलता तो उसके मित्र सहायता करते थे ताकि वह भूखा न मरे।

दक्षिण अफ्रीका के केपेटाइन नगर में एक प्रीतिभोज था। भोजन सामग्री तैयार थी। आगन्तुकों को कौतुक सूझा। प्रसिद्ध पेटू मेलायन लकड़हारे को बुलाया गया और तय हुआ कि पहले उसे भोजन कराया जाय बाद में जो बचे और मेहमान लोग बाँट खायें। मेलायन आया। उसे भरपेट खा लेने की छूट दी गई। सोलह आदमियों के लिए बनाई गई पूरी सामग्री उसने चट कर ली और तब उठा जब रसोईघर में कुछ शेष नहीं बचा। अतिथियों को दुबारा बनी चाय पीकर भूखे ही वापस लौटाना पड़ा।

आहार प्रतिद्वन्द्वता में उन दिनों फैगोन ने बाजी मारी। रोम के राजा आकेलियान ने इस सम्बन्ध में एक प्रतियोगिता नियोजित की कि देखें कौन अधिक खा और पचा सकता है ? कितने ही प्रतिद्वन्द्वी सम्मिलित हुए, पर बाजी फैगोन ने ही जीती। जो शास्त्र का ही एक बड़ा अधिकारी था। उसने भरे दरबार में एक पूरा सूअर—एक भेड़, १०० डबलरोटियाँ तथा एक पीपा शराब गले उतार ली। देखभाल रखे जाने पर पाया कि उसने उतना खाया ही नहीं वरन् पचा भी लिया।

शरीर का प्रचलित क्रम एक चिर अभ्यस्त ढर्रे के अनुसार चलता है। आदिम काल से लेकर उसमें अनेक प्रकार के हेर-फेर हुए हैं। फलतः मनुष्य की प्रकृति और जीवनचर्या पद्धति में भारी परिवर्तन होते रहे हैं। कभी कच्चे माँस पर एवं सूखे बीजों पर गुजारा करने वाला मनुष्य अब इस परिपाटी का अभ्यस्त नहीं रहा, अब उसका पेट पकाये आहार का अभ्यस्त है। भविष्य में यदि प्रवाह बदले तो यह अभ्यास किसी ऐसी पद्धति को भी अपना सकता है, जो इन दिनों असम्भव जैसी प्रतीत होती है।

शरीर की सभी प्रत्यक्ष गतिविधियाँ मन के इशारे पर चलती हैं। रक्ताभिषरण, श्वाँस-प्रश्वाँस, आकुंचन-प्रकुंचन, निमेष-उन्मेष आदि स्वसंचालित समझी जाने वाली गतिविधियाँ भी अचेतन मन की प्रेरणा पर निर्भर हैं। मन और शरीर का वर्तमान तालमेल एक परम्परा के अनुरूप चल रहा है। यह बदली भी जा सकती है। मन का अंकुश यदि अवयवों, जीवकोशों को दूसरे ढाँचे में ढलने के लिए बाधित करे तो वे उस निर्देश को पालने से इन्कार नहीं कर सकते। शरीरगत परमाणुओं के सम्बन्ध में वैज्ञानिकों का कहना है कि निर्जीव पदार्थों में पाये जाने वाले अणु परमाणुओं की तरह हठीले नहीं हैं, वरन् मन के निर्देशन पर चलने वाले लचीले स्वभाव के हैं। यदि कोई अपने शरीर को वर्तमान प्रचलन से भिन्न प्रकार की प्रक्रिया ढालने के लिए दबाव डाले तो वह उस अनुशासन से सर्वथा इन्कार न करेगा। थोड़ी-सी ननुनच के बाद भी उसे स्वीकार कर लेगा।

जीव-विज्ञान के प्रसिद्ध विद्वान रिची काल्डर ने इस तथ्य का प्रतिपादन इस तरह किया है—इलेक्ट्रॉन हमारा दास है, क्योंकि वे मानवीय प्रतिक्रियाओं में अधिक तेजी से चलते हैं, ये मानवीय नेत्र से भी अधिक देख सकते हैं, मानवीय स्पर्श से अधिक हर्ष अनुभव कर सकते हैं। मानवीय कान से अधिक तेज सुन सकते हैं, मस्तिष्क की अपेक्षा शीघ्र और ठीक गिनती कर सकते हैं। हमारे सामने दूर आस्वादन (टेलीगेस्टेशन), दूर श्रवण (टेलीआडीशन) दूर घ्राण ग्रहण (टेलीआल्फेक्शन) सुगन्धित पदार्थ जैसी सामर्थ्यें भी हैं। वह इन्हीं दास इलेक्ट्रॉनों की लीला है। नियन्त्रण मोटरों (सर्वोमोटर) के द्वारा इलेक्ट्रॉन किसी रौलिंग मिल के हजारों टन इस्पात को पाव भर वजन की तरह उठा देता है, जबकि वह पदार्थगत मन है। इसके सहारे यदि मानव के जीवकोशों में अवस्थित मन (चेतना कणों) की शक्ति का अनुमान लगाएँ तो वहाँ तक सम्भवतः हमारी बुद्धि न पहुँचे। इस तथ्य से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि ऐसी कोई विधा हो सकती है, जिसके द्वारा कोई व्यक्ति अपनी विशेष शक्ति का उपयोग कर अपने आप को अप्रचलित ढाँचे में ढाल सके और अपने प्रभाव-क्षेत्र में भारी उथल-पुथल उत्पन्न कर सके।

ऐसे होते हैं—दैत्य

मनुष्य की जीवनी-शक्ति का पारावार नहीं। यदि वह शारीरिक दृढ़ता बढ़ाने में ही अपने को लगा दे तो ऐसा दैत्य बन सकता है, जिसे देखकर लोग आश्चर्य से चकित रह जायँ।

बंगाल प्रान्त के व्यूर गाँव में जन्मी एक बालिका चार-पाँच आदमियों के बराबर भोजन करती थी। बड़ी होने पर शादी की गई तो ससुराल वालों ने बुरा-भला कहा, जिससे खिन्न होकर उसने बिना कुछ खाये रहने का निश्चय किया। यह नियम ७० वर्ष जीवित रहने तक सध गया। उसने १४ वर्ष की आयु से आहार त्याग दिया था। यह उसकी संकल्प शक्ति की बदौलत ही सम्भव हो सका।

वस्तुओं को तेजी से दूरी तक फेंकने वालों में मैक्लेन वर्ग जर्मनी का एडोल्फ प्रख्यात था। एक प्रदर्शन में उसने चाँदी के सिक्के बीस फीट दूर खड़े होकर बेतूल के पेड़ में खींचकर मारे। सिक्के इतनी गहराई तक जा घुसे कि उन्हें खोदकर निकालना पड़ा।

शून्य डिग्री से. ग्रे. तापमान पर कोई भी १० मिनट से अधिक नहीं ठहर पाता। किन्तु मेजर डोन मोल्ड एक घण्टे तक नंगे बदन बर्फ की शिला पर लेटे रहे और फिर सहज रूप से कपड़े पहनकर चलते बने।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्विटजरलैण्ड और लोशेन स्टैज के मध्य २३५ वर्ष तक सीमा विवाद चला और झंझट चलता रहा। अन्ततः एक बूढ़े सूझ-बूझ वाले लकड़हारे जौनकास्टवुड ने इस विवाद को सुलझाया। लकड़हारा बहुत बलिष्ठ व्यक्ति था; उसने कहा १०४० पौण्ड भारी इस पत्थर को पीठ पर लादकर जहाँ तक वह चला जायेगा, वहीं पर विभाजन रेखा मान ली जानी चाहिए, इस पर दोनों पक्ष सहमत हो गये। भारी चट्टान को लादकर बूढ़ा १ मील ४५०० फीट दूरी तक गया और आगे भार न वहन करने से थककर चूर होकर गिर पड़ा, जहाँ वह पत्थर गिरा, उसी स्थान को विभाजन चिन्ह माना गया।

बर्फीली पहाड़ियों पर रहने वाले ''लैप'' जाति के लोग बर्फीली खाइयाँ पार करने के लिए छलाँग लगाने का अभ्यास करते हैं। उनमें युवा लोग १२५ फीट तक लम्बी छलाँग लगाते देखे गये हैं।

की वैस्ट ''अफ्रीका'' निवासी पीटर जेकाक्स के हाथ इतने मजबूत थे कि वह अपने हाथों की दोनों हथेलियों पर दो जवान आदमी बिठाकर सड़कों पर लिये-लिये फिरता था।

कोरिया का नाटे कद का ''मॉस'' नामक पहलवान मात्र ४ फीट १ इंच का बौना था किन्तु सामर्थ्यों से भरा-पूरा। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त पहलवानों को चुटकी बजाते पछाड़ देता, कठोर से कठोर ईंटों को हथेली में दबाकर चूर्ण बना डालता। पहलवान कुश्ती लड़ने से कतराने लगे। हारे हुए पहलवानों ने मॉस को एक साँड से कुश्ती लड़ने की चुनौती दी। पहले तो मॉस ने इन्कार कर दिया। किन्तु बार-बार चिढ़ाये जाने पर वह तैयार हो गया। १३ मन का साँड दंगल में शराब पिलाकर उतारा गया। किन्तु आत्म-विश्वासी मॉस ने पहली बार में ही जमकर ऐसा घूँसा मारा कि साँड चारों खाने चित्त आ गिरा और उठकर ऐसा भागा कि यदि रोकथाम के लिए बाड़ न लगाई गई होती तो दर्शकों को ही कुचल देता।

गुन्नार हैमण्डसन् आइसलैण्ड द्वीप समूह के क्षेत्र में समुद्री डाकुओं का सरदार था। लड़ते समय उन दिनों लोह के रक्षा कवच पहनने का रिवाज था। वह भी उस भारी परिधान को समय-समय पर धारण करता। इस वजन से लदा होने पर भी वह खड़े आदमी को छलाँग लगाकर पार जा सकता था। इतना ही नहीं, वह उल्टी छलाँग भी इतनी ही ऊँची पीठ की दिशा में लगा सकता था। पीठ पीछे खड़े हुए आदमी को भी उल्टी छलाँग लगाकर पार करने में उसे कोई कठिनाई नहीं होती थी।

बैल्जियम का राजा **रोमन्सन पंचम** युद्ध के समय लोहे का कवच पहनता था। जो प्रायः चालीस पौण्ड भारी था। वह कवच पहने जमीन से उछलकर ऊँचे कद के घोड़े पर सवार होता था। सहारा लेकर जीन पर वह कभी चढ़ा ही नहीं।

जर्मनी का भीमकाय मैक्ससिक वजन उठाने की कला में अपने समय का दैत्य माना जाता था। यह स्वयं तो १४७ पौण्ड भारी था। पर २०० पौण्ड भारी वजन को आसानी से उठाकर दिखा देता था। एक प्रदर्शन में २०० पौण्ड भारी मनुष्य को अपने सिर से ऊँचा उठाकर दिखाया। यह प्रदर्शन एक बार नहीं पूरे सोलह बार उसने एक हाथ से किया। दूसरे हाथ में उसने पानी से लबालब भरा गिलास थामा और दिखाया कि एक हाथ से वजन उठाने में उसे कुछ भी असाधारण कठिनाई नहीं उठानी पड़ती है। यदि ऐसा होता तो दूसरे हाथ के लबालब भरे गिलास का कुछ बूँद पानी तो फैलता।

इंग्लैण्ड में भी एक ऐसी महिला जन्मी थी, जिसके शरीर पर ज्वलनशील पदार्थों का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता था। 'नाइट्रिक एसिड' को कुछ देर मुँह में रखकर जब उसने एक लोहे पर थूका तो उसमें लपटें निकलने लगीं। उबलते तेल को मुँह में रखे रहना, पिघले मोम को पानी की तरह मुँह में रखकर ऊपर से सील करवा देना, उबलते जस्ते को मुँह में डालकर उसे सिक्के के रूप में बदल देना, उसके लिए नितान्त आसान था। उसके विविध ऐसे प्रदर्शनों से यह सिद्ध हो गया था कि उसका शरीर एकदम ज्वलनशील नहीं है, न ही ज्वलनशीलता का उस पर किंचित प्रभाव पड़ता है।

प्रस्तुत उदाहरण मनुष्य में प्रसुप्त दैत्योपम क्षमताओं की झाँकी दिखाते हैं। अपनी कमजोरी पर निरन्तर रोने-कलपने वाले मनुष्य को ये प्रेरणा देते हैं व प्रमाणित करते हैं कि अभ्यास से सामान्य सी काया में अप्रतिम सामर्थ्य का जखीरा एकत्र किया जा सकता है।

दृढ़ संकल्प की सुनिश्चित परिणति

मनुष्य को बुद्धिबल एवं साधनों के अतिरिक्त संकल्प बल का इतना बड़ा अनुदान मिला है जिसके द्वारा वह असम्भव को भी सम्भव करके दिखा सकता है। ब्रह्म की इच्छा 'एकोऽहम् बहुस्यामि' की हुई। उभरे उस प्रचण्ड संकल्प की परिणति चराचर सृष्टि बनकर सामने आयी। मनुष्य उस सत्ता का अंश ही तो है। संकल्प शक्ति इस प्रकार उसे विरासत में मिली है। लेकिन प्रायः अधिकांश व्यक्ति उसका उपयोग नहीं कर पाते, न ही उसकी सामर्थ्य से परिचित ही होते हैं।

संकल्प बल ही है, जिसके आधार पर महान लक्ष्य को लेकर साहसिक यात्राएँ सम्पन्न की गयी हैं। नेपोलियन ने इसी के सहारे अजेय आल्पस पर्वत को सेना सहित पैदल पार कर संसार में अनौखा कीर्तिमान स्थापित किया। शेरपा तेनसिंह और हिलेरी ने संसार के सर्वोच्च पर्वत शिखर गौरीशंकर (एवरेस्ट) पर जा पहुँचने का दुस्साहस किया था और वहाँ अपनी विजय-पताका फहराते हुए यह उद्घोष किया था कि इस संसार में कुछ भी ऐसा दुष्कर कार्य नहीं है, जिसे संकल्प, बल से निरस्त न किया जा सके।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्मिक क्षेत्र में उच्चस्तरीय लक्ष्य तक जा पहुँचने वालों में ध्रुव और सप्तऋषियों की गणना होती है, जो अभी भी आकाश में ज्योतिपुञ्ज बनकर चमकते हैं। दिशासूचक ध्रुव और आत्मबल की सर्वोच्च सिद्धि करने वाले ऋषि-मण्डल अभी भी अपनी गरिमा की ओर जनसाधारण का ध्यान आकर्षित करते हैं और कहते हैं कि सामान्य स्थिति में जन्मे और पले मनुष्य को हमारी तरह अजस्र श्रेय साधने में निश्चित रूप से सफलता मिल सकती है पर आवश्यकता मात्र एक ही वस्तु की है और वह है—साहसिक सत्संकल्प की।

पूर्व अभ्यासों, आदतों एवं कुसंस्कारों को बदलना कठिन तो है पर इतना नहीं जिसे प्रचण्ड संकल्प-शक्ति के सहारे निरस्त न किया जा सके। तुलसीदास, सूरदास युवाकाल तक कामुकता तथा नैतिकता मर्यादाओं की दृष्टि से हेय जीवन जीते रहे किन्तु जब उनने अपने को बदल डालने का दृढ़ निश्चय कर लिया तो पुरानी आदतों तथा मान्यताओं को बदलते देर न लगी। आन्तरिक परिवर्तन प्रस्तुत करने में दृढ़ संकल्प के अतिरिक्त और कोई शक्ति काम नहीं करती। सामान्य लोग असमंजस में पड़े रहते तथा आत्म-नियन्त्रण में सफलता न मिलने का रोना-रोते रहते हैं पर दृढ़ संकल्प का आश्रय लेने वाले मनस्वी के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है। वाल्मीकि तथा अंगुलिमाल से डाकू सन्त बने हैं। किसी समय का महान क्रूर जैसे शासक अशोक जब बदला तो उसने धर्म चक्र प्रवर्त्तन की मूर्धन्य भूमिका निभायी। वासना के दलदल में पड़ी आम्बपाली बदली तो बौद्ध धर्म के महान प्रचारिका बन गयी। आन्तरिक परिवर्तन से वह परम साध्वी कहलायी तथा ऋषियों से श्रद्धा के साथ सराही गयी। अजामिल सदन जैसे अगणित व्यक्तियों के समय-समय पर ऐसे ही आन्तरिक परिवर्तन उनकी संकल्प शक्ति के माध्यम से ही सम्भव हो सके हैं।

असफलताएँ सिर्फ यह सिद्ध करती हैं कि सफलता के लिए जो तत्परता बरती जानी चाहिए, उसमें कहीं कोई कमी रह गयी है। मनस्वी हारते नहीं। वे हर असफलता के बाद दूने साहस चौगुने उत्साह के साथ अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते हैं। अब्राहिमलिंकन १७ बार पराजित होने के उपरान्त चुनाव जीत पाये थे। कठिनाइयों के साथ पग-पग पर संघर्ष करते हुए आगे ही बढ़ते चले गये। जॉर्ज वाशिंगटन अमरीका के श्रद्धा पात्र राष्ट्रपति बने। जन्म से ही उन्हें घोर गरीबी का सामना करना पड़ा पर अपने ही पुरुषार्थ के सहारे आगे बढ़ते गये।

व्रतशील अपने संकल्पों के प्रति दृढ़ रहते तथा हर हालत में उन्हें पूरा करते हैं। भीष्म ने आजीवन ब्रह्मचारी रहने का व्रत लिया और उसे पूरा कर दिखाया। गिरता शरीर नहीं मन है। मनोबल ऊँचा रहने पर मानसिक दुर्बलताओं की दाल नहीं गलती। पशु प्रवृत्तियाँ भी सिर पर चढ़ बैठने का साहस नहीं करती हैं। भागीरथ को गंगावतरण अभीष्ट था। वे प्रचण्ड तपश्चर्या में संलग्न होकर उसे पूरा करने में सफल हुए। जगतगुरु शंकराचार्य की आरम्भिक परिस्थितियाँ ऐसी नहीं थीं जिनमें उनके द्वारा किसी बड़े उपक्रम की आशा की जा सके, किन्तु उन्होंने अपनी प्रचण्ड प्रतिभा का उपयोग किसी महान प्रयोजन में करने का निश्चय किया और उसमें सफल रहे।

कोलम्बस अपनी नाव लेकर भारत की खोज में निकला। समुद्र यात्रा की प्राणघातक चुनौतियों का सामना करते हुए नयी दुनिया अमेरिका को खोज निकालने में सफल हो सका। यह उसके प्रचण्ड संकल्प की ही परिणति थी। अन्धी, गूँगी, बहरी हेलन-केलर का विद्या का मूर्ति भाण्डागार बन सकना, सत्रह विश्वविद्यालयों से डाक्टर का सम्मान दिला सकना, उसकी संकल्प शक्ति का ही चमत्कार है। इसके विपरीत साधन-सम्पन्न छात्र भी अपनी असफलता का रोना-रोते रहते हैं। इसमें अन्य कारण कम और मनोबल की दुर्बलता ही प्रमुख अवरोध उत्पन्न कर रही होती है।

प्रख्यात् अँग्रेजी साहित्यकार **एच. जी. वेल्स** की माता घरों में बर्तन माँजने की मजूरी करके अपना और अपने बच्चे का पेट पालती थी। ऐसी विकट परिस्थितियों में भी वे बड़े उत्साह से शिक्षा अर्जन के हर अवसर ढूँढ़ते रहे और उस प्रयास से उच्चकोटि के साहित्यकार बने। वैज्ञानिक एडीसन की जीवनगाथा भी वेल्स से मिलती-जुलती है। ढूँढ़ने पर ऐसे अन्य भी प्रमाण देश-विदेश में मिल सकते हैं जिसमें विषम परिस्थितियों से जूझते हुए मनस्वी लोगों ने इतनी बड़ी-बड़ी सफलताएँ पायी हैं जिन्हें चमत्कार कहा जा सकता है। वस्तुतः संकल्प शक्ति ऐसा दैवी अनुदान है, जिसकी अनुकम्पा से लाभान्वित हो सकना हर किसी के लिए सम्भव है।

नर हो या नारी—बालक हो या वृद्ध—स्वस्थ हो या रुग्ण—धनी हो या निर्धन, परिस्थितियों से कुछ बनता-बिगड़ता नहीं, महत्त्व शक्ति का है। मनस्वी अपने लिए परिस्थितियाँ स्वयं बनाते तथा सफल होते हैं। समय और श्रम कितना लगा, उसमें अन्तर हो सकता है, पर आत्म निर्माण के लिए प्रयत्नशील व्यक्ति अपनी आकांक्षा को प्रयत्नों के अनुरूप देर-सबेर पूरा कर लेते हैं। नर की तुलना में नारी की परिस्थितियाँ कई दृष्टियों से न्यून मानी जाती हैं पर यह मान्यता वहीं तक सही है जहाँ तक कि उनका मनोबल गया-गुजरा बना हुआ है। अपनी गरिमा को समझकर यदि वे संकल्प-शक्ति को जगा लें तो कोई कारण नहीं है कि वे पुरुष से किसी क्षेत्र में पीछे रहें।

विद्वान कैयट व्याकरण-शास्त्र की संरचना में लगे थे। उनकी पत्नी भामती मूँज की रस्सी बँटकर उससे गुजारे का प्रबन्ध करती थी। साम्यवाद के जनक कार्ल-मार्क्स भी कुछ कमा नहीं पाते थे। यह कार्य उनकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पत्नी 'चैनी' करती थी। पुराने कपड़े खरीदकर उनमें से छोटे बच्चों के कपड़े बनाती तथा फेरी लगाकर बेचती थी। आदर्शों के लिए पतियों को इस प्रकार कष्ट उठाकर भी प्रोत्साहित करने एवं सहयोग देने में उनका उच्चस्तरीय संकल्प बल ही कार्य करता था। बंगाल के निर्धन विद्वान प्रतापचन्द्र राय ने अपनी सारी शक्ति और सम्पत्ति को लगाकर महाभारत का अनुवाद कार्य हाथ में लिया, पर बीच में ही चल बसे। उनकी पत्नी ने अवशेष कार्य को अपना संस्कृत ज्ञान बढ़ाकर पूरा किया।

संकल्प-शक्ति के रूप में मनुष्य को मिला वरदान, इतना सामर्थ्यवान है कि भौतिक अथवा आत्मिक, किसी भी क्षेत्र में प्रगति-मार्ग में सम्पन्न होने वाली प्रत्येक बाधा को पैरों तले रौंदकर आगे बढ़ाता तथा सफलताओं को मनुष्य के कदमों में बिछाता देखा जा सकता है।

जिनसे मौत भी डर गई

मनुष्य के जीवन में भली-बुरी दोनों ही प्रकार की परिस्थितियाँ आती हैं। सामान्य व्यक्ति उनसे प्रभावित होता, अनुकूल में प्रसन्न एवं प्रतिकूल में खिन्न होता दिखायी देता है। असामान्य व्यक्ति दोनों में ही एकरस रहते और उन्हें सहर्ष स्वीकार करते हैं। प्रतिकूलताओं में वे घबड़ाते नहीं, वरन् अपना सन्तुलन बनाये रखते हैं। कितने ही व्यक्ति छोटे-छोटे आघातों को भी सहन नहीं कर पाते। साहस एवं सन्तुलन के अभाव में सामने आये संकट का सामना नहीं कर पाते। थोड़े प्रयत्न, पुरुषार्थ से प्रस्तुत संकटों को टाला जा सकता था। उनसे भी जूझ पाने में असमर्थ होते हैं। जबकि कितने ही साहसी, जीवट सम्पन्न व्यक्ति जीवन-मरण के तुल्य संकटों में भी धैर्य नहीं खोते, साहस एवं सन्तुलन बनाये रखते हैं तथा भविष्य के प्रति आशान्वित रहते हैं।

ऐसे ही जीवट वाले व्यक्ति मौत को भी चुनौती देते, उन्हें खेल-खिलवाड़ समझकर जूझते हैं। उनके प्रचण्ड पुरुषार्थ, साहस एवं जीवन के प्रति अदम्य प्रेम को देखकर थोड़े समय के लिए मृत्यु को भी सिर झुकाना और अपने इरादे में परिवर्तन करना पड़ता है। परिस्थितियों को उनके समक्ष नतमस्तक होना होता है। मृत्यु के निकट पहुँचकर वे भी अपना अस्तित्व बनाये रखने में सफल होते हैं।

सच तो यह है कि परिस्थितियाँ मनुष्य को उतना प्रभावित नहीं कर सकतीं जितना कि उसकी स्वयं की मनःस्थिति। अन्तर का जीवट, साहस बना रहे तो हर स्थिति का सामना किया जा सकता तथा सामने आये अवरोधों को टाला जा सकता है। यह न हो तो साहस के बलबूते अपना सन्तुलन बनाये रखा जा सकता है। अनेकों ऐसे व्यक्तियों के उदाहरण समय-समय पर मिलते हैं, जिन्होंने विषम परिस्थितियों में भी असामान्य सूझ-बूझ एवं साहस का प्रदर्शन किया और मृत्यु को भी टाल सकने में सफल हुए।

जर्मनी के लेफ्टीनेन्ट कुर्त एंजील की घटना उल्लेखनीय है। जुलाई, १९५७ में एक दिन उनके जहाज ने उड़ान भरी। कुर्त एंजील पैराटूपद-विंग के कमाण्डर थे। जर्मनी के आवेरहठान के निकट उनके विमान में आग लग गई। १५०० फीट की ऊँचाई से उन्हें छलाँग लगाने के अतिरिक्त कोई चारा नहीं था। पैराशूट की रस्सियाँ ढीली-ढाली होने के कारण उससे भी विशेष सहयोग न मिल सका। असन्तुलित अवस्था में ९० किलोमीटर प्रति घण्टे की गति से नीचे की ओर चले। गति अधिक होने के कारण पृथ्वी पर अपने ही भार से दो फीट नीचे धँस गये। कुछ समय बाद होश आने पर उन्होंने शरीर में असह्य पीड़ा का अनुभव किया। लगा कि पीठ का खून जम गया हो। एंजील की सीने की पसलियाँ टूट गईं। एक फेफड़ा फट गया तथा रीढ़ की हड्डी भी टूट गई। खोजी दल उनके क्षतिग्रस्त शरीर को एम्बुलेन्स पर लादकर निकटवर्ती हॉस्पिटल में लें आया। डाक्टरों के परीक्षण के उपरान्त घोषणा की कि लेफ्टीनेन्ट एंजील के बचने की सम्भावना नहीं है। उसके गुर्दे खराब हो चुके हैं। शरीर में पीठ एवं रीढ़ की हड्डियाँ बुरी तरह टूट गई हैं। फेफड़ा फट गया है। डाक्टरों की इस घोषणा एवं शरीर की असह्य पीड़ा में भी एंजील ने हिम्मत नहीं हारी। डाक्टरों से उसने बड़े साहस एवं विश्वास के साथ कहा, "मैं मर नहीं सकता। अभी मुझे बहुत काम करने हैं। आप सभी अपना कर्त्तव्य पूरा करें।" डाक्टरों को उनके इस साहस, अटूट विश्वास पर आश्चर्य हुआ और प्रेरणा भी मिली। निरन्तर दो माह तक मृत्यु से जूझते हुए वह अपने को साहस एवं संकल्प के सहारे बचा सकने में सफल हुए। चिकित्सकों ने एंजील का मृत्यु की गोद से लौट आना एक असामान्य घटना माना। उसकी जिजीविषा एवं साहस की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

आशा ही जीवन और निराशा ही मौत है। प्रस्तुत संकटों के समक्ष हिम्मत हारकर घुटने टेक देना कायरता का प्रतीक है। कई बार तो लोग भावी आशंकाओं से अथवा संकट का नाम सुनकर भी इतना घबड़ा जाते हैं कि उन्हें अधिक क्षति उठानी पड़ती है। कथा प्रचलित है कि एक बार यमराज ने एक दूत को दस हजार व्यक्तियों को मारकर लाने का आदेश दिया। दूत वापिस लौटा तो उसके साथ बीस हजार व्यक्ति थे। यमराज द्वारा पूछे जाने पर दूत ने बताया कि उसने मारा तो दस हजार व्यक्तियों को ही था। पर अतिरिक्त दस हजार भयभीत होकर अपने आप बेमौत मर गये। अनेकों व्यक्ति प्रतिकूलताओं में अपना साहस एवं सन्तुलन गँवा बैठते तथा असमय मृत्यु की गोद में जा पहुँचते हैं। जबकि जीवन को हँसकर पार करने वाले भीषण संकटों में भी अपना मनोबल बनाये रखते और अदम्य साहस का परिचय देते हैं।

८ जुलाई, १९७५ को जर्मनी निवासी २४ वर्षीय नवयुवक भूरे घास की गठरी बनाने वाली अपनी नई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खरीदी हुई मशीन का परीक्षण कर रहा था। घर से तीन किलोमीटर दूर खेत में वह कार्य कर रहा था। अन्धेरा होने को आया, उसने मशीन को ठीक करने के लिए हाथ बढ़ाने पर उसका दाहिना हाथ पट्टे में फँस गया। उसने बायाँ हाथ बढ़ाया, पर दुर्भाग्यवश वह भी फँस गया। खींचने के प्रयास में हाथ की हड्डियाँ टूट गईं। कन्धों तक दोनों हाथ की हड्डियाँ पिस गईं। भूरे की पत्नी इधर घर पर उसके आने का इन्तजार कर रही थी। अधिक देर होने पर खोज-खबर लेने वह खेत पर पहुँची। दूर से ही उसे भूरे की चीख सुनायी पड़ी। दौड़ते हुए उसने खेत पर जाकर जो हृदय-विदारक दृश्य देखा, उसको देखकर उसके रोंगटे खड़े हो गये। भूरे जीवन-मरण के मध्य मशीन से चिपटा जूझ रहा था। पर इतने पर भी उसका सन्तुलन यथावत् बना था। पत्नी को मशीन बन्द करने का निर्देश दिया। पर दुर्भाग्य ने यहाँ भी पीछा नहीं छोड़ा। कुछ तकनीकी गड़बड़ी होने से मशीन बन्द न हो सकी। दौड़ती हुई वह निकट के फार्म पर किसी को सहयोग के लिए बुलाने गई। कुछ व्यक्ति सहयोग के लिए पहुँचे। अथक प्रयत्न के बाद भी भूरे को मशीन से छुड़ाया न जा सका। इतने में सूचना दिये जाने पर डाक्टर एवं ऐम्बुलेन्स भी पहुँच गई। भूरे को मशीन से अलग करने के लिए हाथ काटने के अतिरिक्त अन्य कोई रास्ता नहीं था। डाक्टर भी इस हृदय-विदारक स्थिति को देखकर दहल गये। पर भूरे ने साहस नहीं खोया।' सन्तुलित स्वर में उसने कहा, 'डाक्टर ! मेरे दोनों हाथ काटकर अलग करो। डाक्टर हिचकिचाये, पर भूरे की जान इससे कम में नहीं बच सकती थी। उसने पुनः डाक्टरों को हाथ काटने का निर्देश दिया। पूरे चार घण्टे तक वह मशीन से जूझता रहा। हाथ कटने के बाद डेढ़ माह तक उसे अस्पताल में रहना पड़ा। चिकित्सकों से उसने कृत्रिम हाथ लगाने का अनुरोध किया, जिससे वह कृषि कार्य को पूर्ववत् कर सके। निरन्तर अभ्यास से उसने कृत्रिम हाथों के सहारे इतना कुछ सीख लिया जिससे खेती के तथा स्वयं से जुड़े आवश्यक कार्यों को कर सके। मनोबल, साहस एवं सन्तुलन न होता तो मशीन में चार घण्टे मृत्यु से जूझने के बाद वह नहीं बच पाता। पर उस विषम स्थिति में भी उसने जिस जीवट का परिचय दिया, वह प्रेरणास्पद है।

संकट तथा प्रतिकूल परिस्थितियाँ तो प्रत्येक मनुष्य के जीवन में आते हैं और प्रभावित भी करते हैं, पर वे मानवी सामर्थ्य से सशक्त नहीं हो सकते। जीवन के प्रति आशा एवं उत्साह बना रहे, साहस एवं पुरुषार्थ का क्रम जुड़ा रहे तो संकट भी टल जाते हैं और परिस्थितियाँ भी ऐसे जीवट-सम्पन्न व्यक्ति के समक्ष नत-मस्तक होती हैं।

संकल्पशक्ति कुंजी है, प्रगति पुरुषार्थ की

१४ अगस्त, १९६४ का दिन था। अमरीका के साहित्य जगत की एक उभरती प्रतिभा नारमन कजिन्स को अनायास ही एक ऐसी व्याधि ने अपने पाश में जकड़ लिया, जिसका कोई उपचार न उन दिनों चिकित्सक के पास था, न आज है। वह थी हड्डियों के बीच के कार्टिलेज की डिजेनरेटीव व्याधि, जिसने उन्हें २४ घण्टों में बिस्तर पर लेटने को विवश कर दिया। एक सप्ताह में सभी जोड़ संधियाँ ऐसे जकड़ गए कि वे पीड़ा में कराहने लगे, निद्रा कोसों दूर भाग गई एवं जोड़ लगभग बँध से गए।

चिकित्सकों के समझाने के बावजूद कि इसका कोई उपचार नहीं है, वे पीड़ानाशक व माँस-पेशियों के तनाव को कम करने वाली औषधियाँ लेते रहे, यदि कष्ट अधिक न हो तो मालिश करने दें। वे यह मानने को राजी नहीं हुए कि उनकी व्याधि असाध्य है। अब वे बिस्तर से उतर नहीं सकेंगे व जीवनभर जो अधिक लम्बा नहीं है, ऐसी ही स्थिति रहेगी। उन्होंने अपने चिकित्सकों से दृढ़ मनोबल के साथ कहा कि—"मैं जल्दी हार मानने वाला नहीं हूँ। मैं जानता हूँ कि यह बीमारी एड्रीनल ग्रन्थि के रसस्राव क्षीण हो जाने से हुई है। यदि तनाव व शारीरिक दबाव ऐसा कर सकता है तो क्यों पुनः विधेयात्मक भाव तरंगों द्वारा एड्रीनल को प्रभावित कर इन्हीं हारमोन्स को उत्सर्जित करना सम्भव नहीं हो सकता ?" उनके तर्क में दम तो था, पर ऐसा कभी कोई कर पाया हो, ऐसा कोई केस चिकित्सकों के पास नहीं था। उन्होंने कहा—यदि आपकी इच्छाशक्ति इतनी ही प्रबल है तो कोशिश कर देखें।

कजिन्स की मान्यता थी कि पॉजिटीव इमोशन्स, प्रसन्नता की-प्रफुल्लता की भावना, हल्का-फुल्का मस्ती भरा जीवन जीने की आकांक्षा द्वारा पॉजिटिव विद्युतधाराओं को शरीर में दौड़ा सकना सम्भव है। यदि भावनात्मक स्थिति को पलटा जा सकता है तो एड्रीनल ग्रन्थि की कार्य-पद्धति को उलटना क्यों सम्भव नहीं है, जो कि तनाव, अवसाद के लिये उत्तरदायी मानसिक हारमोन्स का रसस्राव करती है। उन्होंने सोचा कि हँसी, उन्मुक्त हँसी, खुले दिल से हँसी ही दूसरी श्रेष्ठ चिकित्सा है। कैण्डिड कैमरा नामक एक हास्य धारावाहिक उन्होंने उसी दिन अपने टी. वी. पर देखना आरम्भ किया एवं हँसी में साथ देने के लिए अपने मस्त मित्रों को भी आमन्त्रित किया। इस प्रयोग के बाद १० मिनट की हँसी ने उन्हें दो घण्टे की पीड़ा मुक्त नींद में सुला दिया। अब वे अस्पताल से घर पहुँच गए, जहाँ वे स्वतन्त्रता से कॉमिक, मूवीज, टेलीविजन प्रोग्राम देख सकते थे तथा हास्य प्रधान चुटकुलों की पुस्तकें पढ़-पढ़कर खुद ही हँसते रह सकते थे। इस प्रयोग के ८ दिन बाद उनके एक अँगूठे, घुटने से दर्द गायब हो गया व बिना दवा के वे ५ से ६ घण्टे सोने लगे। तीन सप्ताह बाद चिकित्सकों ने उन्हें प्यूर्टोरिको के समुद्री बीच पर व्यायाम करते पाया। उनके एक्सरे किये गए, पता चला कि ऊतक नये सिरे से बनने लगे हैं। ४ माह बाद वे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साइकिल चलाते हुए स्वस्थ स्थिति में कार्यालय आये। उनने बाद में अपने संस्करणों में लिखा कि "मेरी जिजीविषा, जीने की अदम्य आकांक्षा ने मुझे हँसने व विधेयात्मक चिन्तन के लिए प्रेरित किया व इसी ने असम्भव को सम्भव कर दिखाया। इच्छाशक्ति से मैंने शरीर की रसायन प्रक्रिया को बदल डाला। वस्तुतः जीवन जीने का नाम है व जीने के लिये जरूरी है संकल्प शक्ति, जो किसी भी अवरोध से जूझ सकती है।"

यह एक उदाहरण है एक ऐसे व्यक्ति का जिसने अपनी स्वयं की इच्छाशक्ति का सुनियोजन कर अपनी असाध्य व्याधि से मोर्चा लिया एवं एक कुशल सैनिक की भाँति जीतकर दिखाया। वस्तुतः इच्छा-शक्ति के साथ प्राणि समुदाय की स्थिति का इतिहास जुड़ा है। एककोषीय अमीबा के रूप में पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति हुई मानी जाती है। एक से बहुत होने की परब्रह्म की आकांक्षा को वह जीव अपने व्यवहार में उतारता गया। वह न केवल अपने को खण्डित करते-करते एक से बहुत हुआ वरन् उसने अपनी आकृति, प्रकृति में भी बढ़ोत्तरी आरम्भ कर दी। अनेक जल-चरों की सृष्टि इसी क्रम में हुई। इतने पर भी प्रगति-क्रम रुका नहीं। वे जलचर ही क्रमशः थलचर और नभचर की स्थिति में विकसित, परिवर्तित होते गये। यह क्रम मनुष्य की सर्वांगपूर्ण सत्ता तक जा पहुँचने तक चलता चला आया। इतने पर भी उस उपक्रम का अन्त नहीं हुआ। मनुष्य, वनस्पति और प्राणिजगत का भाग्य विधाता कहा जाता है। अब उसने प्रकृति का अधिष्ठाता बनने की बात भी ठानी है। वैज्ञानिक शोधों की प्रक्रिया इसी कारण तीव्र से तीव्र होती चली जा रही है। यह संकल्प-शक्ति का ही चमत्कार है।

जिनकी मनोदशा चेतना क्षेत्र की ओर मुड़ी उनने धर्म का, दर्शन का, अध्यात्म का, परलोक का, देवी-देवताओं तक का सृजन कर डाला। अतीन्द्रिय क्षमताओं से सम्पन्न होकर सिद्ध पुरुष बने और ऋद्धि-सिद्धियों के रूप में अपनी विभूतियों का परिचय देने लगे। जन सामान्य के मार्गदर्शन के लिए अपनी सूझ-बूझ को समग्र जताने लगे। आदिम मनुष्य और आज के विकसित व्यक्ति की तुलना की जाय तो जमीन-आसमान जैसा अन्तर प्रतीत होगा। इस प्रगति के मूल में सदा से एक ही तत्त्व काम करता रहा है और वह है, उत्कण्ठा से, जिज्ञासा से, भरा-पूरा संकल्प बल। उसके अभाव में प्राणि-जगत की प्रगति का कोई आधार ही न बन सका होता। सभी नर-वानरों की तरह किसी प्रकार शरीर रक्षा के साधन जुटाने भर तक सीमित होकर रह गये होते। अभी भी वन्य प्रदेशों में पाए जाने वाले कबीलों की स्थिति ऐसी ही है। उनके सामने कोई ऐसा उद्देश्य या कार्यक्रम नहीं होता, जिसे अपनाकर अपेक्षाकृत अच्छी स्थिति तक पहुँचा जा सके। यही कारण है कि वे आदिम युग के वन मनुष्य की तुलना में बहुत थोड़ी ही प्रगति कर सके हैं। उत्तरी ध्रुव पर बसे एस्कीमो लोगों के रहन-सहन को देखकर इस तथ्य को भली प्रकार समझा जा सकता है कि इच्छाशक्ति का अभाव कितनी कठिन परिस्थितियों में भी यथावत् बने रहने के लिए बाधित किये रहता है।

मनुष्य ने भाषा और लिपि के अभिनव आधार खड़े करके परस्पर विचार-विनमय का द्वार खोला। यह उपलब्धियाँ अनायास ही हस्तगत नहीं हो गईं। वरन् इसके लिए पीढ़ियों तक समझदार लोग भरपूर प्रयत्न करते रहे। यदि उस सम्बन्ध में उत्सुकता न उमड़ी होती तो मनुष्य भी अन्य वानर जातियों की तरह किसी प्रकार थोड़े संकेतों और शब्दों के सहारे पारस्परिक सम्बन्धों को मात्र चला सका होता। आग का आविष्कार, पहियों का विज्ञान, वस्त्र निर्माण, आच्छादन, पशुपालन अपने युग की जिज्ञासाओं से उभरे पुरुषार्थ भरे कृत्य थे, जिनने आज की प्रगति का पथ प्रशस्त किया।

निषेध, अनुपयुक्त कल्पनाओं, जल्पनाओं और महत्त्वाकांक्षाओं का ही किया गया है क्योंकि उन्हीं के कारण मनुष्य का बहुमूल्य समय, श्रम, कौशल बर्बाद होता रहता है। वे ही कुमार्ग पर भटकातीं और अनेक संकटों को खींचकर बुलाती हैं। श्रेष्ठ इच्छाएँ, आकांक्षाएँ तो न केवल आवश्यक हैं, वरन् श्रेयस्कर भी हैं। वेदान्त दर्शन के प्रथम सूत्र में जिज्ञासा को सद्ज्ञान संचय का प्रथम और प्रमुख उपाय माना गया है। जिस प्रकार ज्ञान संचय में जिज्ञासा की प्रमुख भूमिका होती है, उसी प्रकार इच्छा-आकांक्षाओं को अभीष्ट प्रसंगों की दिशा में बढ़-चलने का प्रमुख आधार माना गया है। संकल्प का भारतीय संस्कृति के कर्मकाण्डों में प्रथम और प्रमुख स्थान है। किसी भी धर्मकृत्य में सर्वप्रथम संकल्प पढ़ा जाता है। यदि यही संकल्प जीवन्त रूप में जीवन में उतर आए तो असम्भव को सम्भव कर दिखाने वाला पुरुषार्थ परिणति रूप में दृष्टिगोचर होता है। आत्म-क्षेत्र में लागू किया जाने पर यह न केवल गहरी घुसी दुष्प्रवृत्ति को निकाल बाहर करता है, वरन् असाध्य मानी जाने वाली किसी व्याधि से भी मुक्त करने योग्य आत्मबल भी जुटा सकता है। परमाणु नाभिक की तरह अपने अन्दर असीम सामर्थ्य सँजोये हुए है, आवश्यकता मात्र संकल्प-शक्ति को जगाने भर की है।

संकल्प बल और स्वस्थता

सभी रोग भावना से सम्बन्धित नहीं होते। कुछ ऐसे शारीरिक कष्ट होते हैं, जिन्हें मनोवैज्ञानिक रूप से दूर किये बिना भी उनसे उत्पन्न तकलीफों से छुटकारा पाया जा सकता है।

एक फ्रांसीसी प्रौढ़ जो कि काफी हृष्ट-पुष्ट और स्वस्थ था, चालीस की अवस्था में 'आक्राइटीस' रोग से आक्रान्त हो गया। कुछ दिनों तक इसके ग्रस्त रहने के उपरान्त असीम पीड़ा शुरू हुई, लेकिन कुछ ही दिनों में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वह दौर समाप्त हो गया और वह विक्रेता के रूप में यात्रा पर निकल पड़ा।

अन्त में उसे घड़ी का सहारा लेना पड़ा। पैर और उँगलियों के जोड़ों में भयंकर गाँठें पड़ गईं। एक यात्रा में उसकी पत्नी भी उसके साथ थी। उसकी हालत बहुत ही दयनीय थी। आज वह गलियों में लड़खड़ाता हुआ चल रहा था तथा चलने में अपनी असमर्थता जाहिर कर रहा था।

तभी अचानक एक नवयुवक उनके सामने से गुजरा। वह काफी प्रसन्न था तथा सीटी बजाते हुए जा रहा था। उसके हाथ नहीं थे। उनकी जगह उसने हुक लगा रखा था। महिला ने अपने पति का उस ओर ध्यान आकर्षित किया। उसे देखकर उनके दिमाग में एक ऐसे युवक का चित्र उभरा जिसके समक्ष अपना सारा का सारा जीवन अभी भी पड़ा हुआ हो, जिनके हाथों को काट दिया गया हो और उनकी जगह हुक लगे हों। फिर भी वह खुश हो।

युवक को अति प्रसन्न देखकर उस व्यक्ति ने भी दृढ़ संकल्प लिया कि मैं भी अब किसी से कोई शिकायत नहीं करूँगा। इसके बाद उसे अनेक प्रकार की बीमारियाँ हुईं। उसका यकृत बढ़ गया। उसने अपनी नेत्र ज्योति खो डाली, उँगलियाँ इतनी मुड़ गईं कि बटन लगाना भी दूभर हो गया। फिर भी उसके मुँह से आह तक नहीं निकली।

अब वह काफी खुश था। उसका मनोबल दृढ़ था। हालांकि उसकी शारीरिक समस्याओं का निदान नहीं हो पाया था। उसकी मुड़ी उँगलियाँ पूर्ववत् थीं। यकृत अभी भी बढ़ा हुआ था, लेकिन उसने उन सभी समस्याओं का हल ढूँढ़ निकाला था।

जिन्हें ईश्वर पर विश्वास होता है, वे समस्याओं के रहते हुए भी उनकी तकलीफों पर विजय प्राप्त कर लेते हैं।

इस रोगी ने ऋणात्मक विचारणाओं को अपने से बिलकुल निकाल दिया। अतः आक्राइटीस रोग यद्यपि रहा अवश्य, पर उसके लिए वैसा कष्टसाध्य नहीं रहा।

दृढ़-संकल्प और विधेयात्मक कथन भी स्वास्थ्य पर चमत्कारिक असर डालते हैं। यदि प्रतिदिन स्वास्थ्य के प्रति दृढ़तापूर्वक विधेयात्मक कथन यथा—"मैं निरोग हूँ, स्वस्थ हूँ। कभी भी रोगी नहीं बनूँगा।" आदि-आदि कहा जाय तो बहिरंगों एवं अन्तरंगों पर उसका अनुकूल प्रभाव पड़ता है और सचमुच व्यक्ति आजीवन स्वस्थ बना रहता है। इसके विपरीत यदि निषेधात्मक कथन कहा जाय तो स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ग्रन्थियाँ एवं अन्य अन्तरंग स्वाभाविक रूप से अपना काम नहीं कर पाते। फलतः शारीरिक विकार उत्पन्न होने लगता है।

"सायकोसोमैटिक मेडीसिन अकादमी" के भूतपूर्व अध्यक्ष एवं फिजीसियन अल्फ्रेड जे. केन्टर ने यहाँ तक सचेत किया है कि हमें स्वास्थ्य के प्रति अर्ध-धनात्मक कथन भी नहीं कहना चाहिए। यथा—"मैं आज बीमार नहीं पड़ूँगा।" इसके बदले हमें पूर्ण धनात्मक कथन का प्रयोग करना चाहिए, जैसे मैं आज अच्छा हो जाऊँगा।"

डॉ. केन्टर का कहना है कि ये सभी वैज्ञानिक तथ्यों पर आधारित है। यदि ऐसे दृढ़-संकल्प को अपनाकर अपने दैनिक जीवन में उसे व्यवहार में लाया जाय तो सेहत अच्छी हो जायेगी, जीवन-अवधि बढ़ जायेगी, स्फूर्ति और ताजगी का आभास होगा, खुशहाली बढ़ जायेगी एवं मानव जीवन का सबसे बड़ा उपहार—'शान्ति' मिलेगी।

एक व्यक्ति की एक दुर्घटना में मृत्यु हो गई। जब उसका शव परीक्षण किया गया तो उसमें बहुत तरह की शिकायतें पायी गईं। उसके दिल और वृक्क खराब थे। टी. बी. और अल्सर से भी वह ग्रस्त था। इतना सब होने के बावजूद भी वह ८४ वर्ष की आयु में पहुँच चुका था। उसके बारे में डाक्टरों का कहना था कि इसे ३० वर्ष पहले मर जाना चाहिए था। उसकी उत्तरजीविता के राज के बारे में जब उसकी पत्नी से पूछताछ की गई तो उसने बताया कि वे हमेशा इस बात पर दृढ़ रहते थे कि "हमारा आने वाला कल बहुत अच्छा होगा।"

इस प्रकार संकल्प-शक्ति के द्वारा रोगों पर नियन्त्रण रखा जा सकता है एवं दीर्घायु बना जा सकता है। अच्छी भावना-संकल्प एवं व्यवहार को अपने दैनिक जीवन में अपनाकर कोई भी आजीवन स्वस्थ रह सकता है।

आशावादी चिन्तन के निम्न सिद्धान्तों को जो कि तथ्यपरक हैं, अपनाकर स्वास्थ्य-लाभ किया जा सकता है—

१. दृढ़तापूर्वक यह स्वीकारना चाहिए कि मैं स्वस्थ हूँ।

२. अपने मन-मस्तिष्क में अपना चित्र एक अच्छे व्यक्ति के रूप में बनाये रखना चाहिए।

३. अद्भुत जीवनी शक्ति प्रदान करने के कारण भगवान का प्रतिदिन बार-बार धन्यवाद करना चाहिए।

४. मन को बेकार की चिन्ताओं एवं परेशानियों से मुक्त रखने का हर सम्भव प्रयत्न करना चाहिए। बैर-भाव, शत्रुता, पश्चात्ताप, हीनता, नैराश्य आदि को मन से निकालकर उनकी जगह अच्छे स्वास्थ्यकर विचार लाने चाहिए।

५. वैसी कोई भी चीज हमें अपने अन्दर नहीं लानी चाहिए जो शरीर के विभिन्न तन्त्रों को कमजोर कर दे।

६. अपना शारीरिक वजन उतना ही रखना चाहिए जितना डाक्टर के अनुसार होना चाहिए।

७. नियमित व्यायाम अच्छे स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। इसके चयन में इस बात का ध्यान रखना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चाहिए कि कौन-सा व्यायाम हमारे लिए रुचिकर है। किसी ऐसे व्यायाम का चयन नहीं करना चाहिए जो अपने लिए उबाऊ हों, जिससे हम उसमें अनियमित बन जायँ।

८. अपनी शारीरिक जाँच नियमित रूप से करवाते रहना चाहिए।

९. ''आत्मा अथवा मन को आरोग्य किये बिना शरीर को आरोग्य करने की कोशिश नहीं करनी चाहिए।'' यह प्लेटो का प्रसिद्ध कथन है। सचमुच मन को अस्वास्थ्यकर विचारों से मुक्त कर ही हम अच्छा स्वास्थ्य प्राप्त कर सकते हैं।

स्वास्थ्य का ठीक रहना नित्य के जीवन व्यापार के लिये अनिवार्य है। स्वस्थ शरीर ही सही चिन्तन कर पाता है एवं सही चिन्तन ही स्वस्थ काया के लिये उत्तरदायी है। यह एक प्रतिष्ठित प्रामाणित तथ्य है। बहिरंग उपचार पर तो अधिकांश पद्धतियाँ, मन एवं विशेषज्ञ जोर देते चले आये हैं। पर अन्तरंग जिसे स्थूल का पोषण करने वाला मूल केन्द्र कहा जा सकता है, पर कारगर होने वाली पद्धति के लिये समुचित प्रयास चिकित्सा जगत में नहीं किये गये।

अन्तरंग के दो पक्ष हैं—एक मन अर्थात् संकल्प शक्ति तथा दूसरा अन्तःकरण, आस्थाओं का मूल उद्गम केन्द्र। मन की इन्द्रिपरक (ग्यारहवीं इन्द्रिय) एवं अतीन्द्रिय सामर्थ्य को अब वैज्ञानिक भी मानने लगे हैं। परन्तु इसका सूक्ष्म पक्ष और भी बलवान एवं सामर्थ्यों से भरपूर है। यह जीवनी शक्ति का मानसिक पक्ष है जिसके बल पर प्रतिकूलताओं में भी शरीर न केवल जीवित बना रहता है वरन् स्वास्थ्य को कदापि प्रभावित नहीं होने देता। जीवनेच्छा, जिजीविषा के नाम से जानी जाने वाली यह शक्ति प्रत्येक के भीतर विद्यमान है। जो इसे पहचानकर इसका उपयोग कर लेता है, वह ऐसे असम्भव काम कर बैठता है, जिन्हें नादान लोग चमत्कार कह बैठते हैं। वस्तुतः वह मनःशक्ति का ही एक स्वरूप है।

प्रसिद्ध विचारक **नारमन वीसेन्ट पील** कहते हैं, स्वस्थ रहने के लिए यह जरूरी है कि व्यक्ति अपनी जीवनी शक्ति की असीम सामर्थ्य को दृढ़ता से स्वीकार करे। इसे जीवन की रचनात्मक शक्ति भी कहा जा सकता है। विचारों की विधेयात्मक सामर्थ्य का उपयोग कर कई असाध्य रोगी मृत्यु के मुख से निकलते देखे गये हैं। विडम्बना यह है कि अधिकाधिक व्यक्ति ठीक इसके विपरीत, निषेधात्मक चिन्तन में निरत दिखाई देते हैं। उनका एक ही रोना रहता है कि वे मजबूर हैं, अक्षम हैं, परिस्थितियों के कारण कार्य कर पाने में असमर्थ हैं एवं ये परिस्थितियाँ ही उनकी समस्त विपत्तियों का, यहाँ तक कि कुस्वास्थ्य का भी प्रधान कारण हैं। पश्चिम में भौतिक सुख-सुविधाओं के बावजूद सर्जनात्मकता का अभाव कुस्वास्थ्य का कारण बनता चला जा रहा है। सर पील के अनुसार ''जो कुछ भी मनुष्य कहता है, वह उसके विचारों में होता है एवं जो कुछ भी विचारों में होता है, वह निश्चय ही जीवन में क्रियान्वित होता है। जो व्यक्ति वय की दृष्टि से वृद्ध होते हुए भी यह कहता है कि अभी तो मैं स्वस्थ हूँ, युवा हूँ, निश्चित मानिये, उसे 'जरा' स्पर्श भी नहीं कर सकती।'' पर होता उल्टा ही है। तीस वर्ष पार करते-करते ही आज का नवयुवक दैनिक जीवन के तनावों का सामना करने में स्वयं को असमर्थ मान 'प्रिमेच्योर एजींग' बुढ़ापे से ग्रस्त होता चला जाता है। यही कारण है कि प्राचीनकाल में वृद्धावस्था में पाये जाने वाले सारे रोग अब ३०-३५ वर्ष के आस-पास ही दृष्टिगोचर होने लगे हैं।

ईसाई धर्मगुरुओं का कहना कि भगवान ने स्वयं मनुष्य के जीवन में श्वाँस फूँकी है। हमारा यह कर्त्तव्य होना चाहिए कि हम अपने प्रत्येक दिन का शुभारम्भ इस घोषणा से करें कि ''मैं ईश्वर का ही एक अंश हूँ।'' जब ईश्वर प्रदत्त जीवन मेरे अन्दर स्पन्दित हो रहा है, मैं ईश्वर के गुणों से अभिपूरित हूँ तो फिर निराशाग्रस्त होकर उसकी अवमानना क्यों करूँ ? जब तक उस आनन्द-प्रदायक सृष्टा की इच्छा होगी, मेरा आयुष्य काल चलता रहेगा। क्यों न मैं इस अवधि को पूरी क्षमता से जीकर पूरा करूँ ?

मनुष्य हर परिस्थिति में ढल सकता है

मनुष्य के बराबर न कोई कोमल है, न कठोर। अभ्यास से वह कष्टसाध्य जीवन जी सकता है और उन्हीं परिस्थितियों में प्रसन्न भी रह सकता है। भगवान ने मानवी शरीर की संरचना इस प्रकार की है कि उसे जिस भी ढाँचे में ढाला जाय, उसी में ढल जाता है। विलासी को अनेकानेक प्रकार की सुविधाएँ चाहिए। उनमें कमी पड़ने पर तिलमिलाते देखे गये हैं, पर ऐसे लोगों की कमी नहीं जो कठिनाइयों में रहने का अभ्यास कर लेने पर उसी में प्रसन्नतापूर्वक जीवन बिता देते हैं।

शून्य से नीचे रहने वाली ठण्डक के क्षेत्र में ऐस्किमो जाति के लोगों की पीढ़ियाँ बीत गईं। उनने अपने आप को उन्हीं परिस्थितियों में ऐसा 'फिट' कर लिया है कि छोड़ने का आग्रह भी स्वीकार नहीं करते। अपने को औरों से कम सुखी भी नहीं मानते।

एस्किमो संसार के असामान्य आदिवासी जीवन जीने वाले अपने सांस्कृतिक, भाषाई एवं जातीय एकता के लिए प्रख्यात हैं। एस्किमो का अर्थ होता है—कच्चा माँस खाने वाला। एस्किमो अपने को सारी धरती का 'प्रमुख एवं वास्तविक' मनुष्य मानते हैं। इनकी विभिन्न जातियाँ साइबेरिया, नोम, अलास्का, कनाडा, ग्रीनलैण्ड तथा आर्कटिक एरिया के अधिकांश भाग में बेरिंग स्ट्रेट से ग्रीनलैण्ड—समुद्र से लगे टुण्ड्रा प्रान्त तक फैली हुई हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

घने जंगलों में बसे एस्किमो मानवी सभ्यता में जीवन संघर्ष में सबसे अग्रणी माने जाते हैं। संघर्ष ही इनकी जीवनगाथा है। इनूपिक और यूपिक इनकी दो भाषाएँ हैं।

आर्कटिक क्षेत्र में जहाँ बर्फ का साम्राज्य है, शून्य से भी कम तापमान रहता है। ऐसे विषम वातावरण में भी एस्किमो हँसते-खेलते जीवन व्यतीत कर लेते हैं। मानवी काया के अनुकूलन का यह सबसे अनौखा उदाहरण है। ऊँचे आर्कटिक क्षेत्रों में जहाँ ग्रीष्म ऋतु नाममात्र की होती है, वर्ष का अधिकांश भाग हिमानी तूफानों से भरा होता है। भारी-भरकम फर के कोट पहने एस्किमो बर्फ के मकानों में रहते और बर्फ में धँसी सील, बालरस और ध्रुवीय भालुओं का शिकार करके अपना जीवनयापन करते हैं। प्रशान्त महासागर तथा बेरिंग के किनारे बसे एस्किमो सील, साल्मन के अतिरिक्त ह्वेल का भी शिकार करते हैं। विशिष्ट आकार के हारपून, मत्स्य भाला तथा स्प्रिंग बेंत की सहायता से एस्किमो अपने शिकार को मारते हैं। बसन्त या ग्रीष्म ऋतु में यात्रा के समय रेनडियर—कुत्तों की सहायता से झुण्ड वाले जानवरों—कैरिबो का शिकार करते हैं। इन जानवरों के चमड़े कपड़े का और माँस भोजन का काम देते हैं। कैरिबो उन जानवरों का समूह होता है जो बसन्त ऋतु में नदियों, झीलों को पार कर उत्तर की ओर माइग्रेट करते हैं।

एस्किमो अपने निवास के लिए बर्फ की चट्टानों को काटकर गुफानुमा मकान बनाते हैं। बर्फ काटने का काम ३ फीट लम्बे, २ फीट ऊँचे और ८ इंच मोटे हाथी दाँत से बने तलवार की आकार के 'बर्फ चाकू' से करते हैं। स्थायी निवास के लिए १५ फीट चौड़े और १२ फीट ऊँचे 'स्नो हाउस' का निर्माण करते हैं। अस्थायी यात्रा पर रहने वाले लोग ७ फीट व्यास वाले तथा ५ फीट ऊँचे स्नो हाउस बनाकर कड़ाके की ठण्ड से अपनी जीवन-रक्षा करते हैं।

गर्मियों में यात्रा के लिए एस्किमो कायाक एवं डमिआक नामक नावों का प्रयोग करते हैं। कायाक में केवल एक ही व्यक्ति बैठकर शिकार को जाता है। डमिआक नाव पर पूरा परिवार बैठकर एक स्थान से दूसरे स्थान को यात्रा करता एवं शिकार करता है। ठण्ड के दिनों में जमी हुई बर्फ पर यात्रा करने का मुख्य साधन स्लेज गाड़ियाँ होती हैं, जिन्हें कुत्ते खींचते हैं।

एस्किमो परिवार में घर का बड़ा-बूढ़ा व्यक्ति ही उस परिवार का मुखिया होता है। उसका निर्णय सबको मान्य होता है। आवश्यकता पड़ने पर मुखिया दैनिक जीवन की समस्याओं पर परिवार के अन्य सदस्यों, महिलाओं और बड़े बच्चों से सलाह-मशविरा भी करता है। पुरुष एवं बच्चे शिकार को जाते और महिलाएँ घर-गृहस्थी का कार्य सम्भालती हैं। वृद्ध महिलाओं को बच्चों की रखवाली का काम सौंपा जाता है। शादी-विवाह, खून के रिश्ते में ही किये जाते हैं। पारिवारिकता की स्नेह-सौजन्यता-उदारता उस समय देखने को मिलती है, जब खाद्य संकट अथवा अकाल का सामना करना पड़ता है। खाद्य संकट की विषम परिस्थितियों में सभी शिकारी अपने मारे हुए शिकार को आपस में मिल-बाँटकर खाते हैं। उस समय किसी की उपेक्षा नहीं की जाती।

एस्किमो दम्पत्ति अपने बच्चों के प्रति सदैव जागरूक रहते हैं। यदाकदा ही बच्चों को दण्ड देते हैं। आठ वर्ष की उम्र तक बच्चे यह भली प्रकार जान जाते हैं कि उनका जीवन कितना संघर्षमय है और तदनुरूप अपने से बड़ों का अनुसरण करने लगते हैं तथा उनके कामों में हाथ बँटाने लगते हैं। ये लोग यौवन आरम्भ होते ही लड़कियों की शादी कर देते हैं परन्तु बीस वर्ष की आयु से पहले लड़कों का विवाह नहीं करते।

एस्किमो लोगों की मृत्यु दुर्घटनाओं के कारण अधिक होती है। ये मृत्यु को दार्शनिक रूप से भी स्वीकार करते हैं। कुछ क्षेत्रों में बीमार या वृद्ध व्यक्तियों को बिना किसी पश्चात्ताप के मार दिया जाता है। मृतक व्यक्ति को घर से बाहर निकालकर ऐसे स्थान पर रख दिया जाता है, जिससे मृतात्मा रास्ता भटक जाय और फिर से मकान के अन्दर प्रवेश करके किसी को नुकसान न पहुँचा सके। किसी व्यक्ति की मृत्यु हो जाने पर एस्किमो संक्षिप्त शोक ही मनाते हैं, व्यर्थ का कुहराम नहीं मचाते।

एस्किमो आत्मा की अमरता और पुनर्जीवन पर विश्वास करते हैं। उनकी मान्यता है कि पशु अथवा मनुष्य की मृत्यु के बाद उसकी आत्मा शान्त हो जाती है और कुछ समय बाद फिर से उसी जाति में नया जन्म धारण करती है। प्रत्येक जाति की एक ''गार्जियन स्प्रिट'' होती है। ईश्वर, देवता, दैत्य, दानव पर भी एस्किमो विश्वास करते हैं। उनका विश्वास है कि देवता आधे मनुष्य तथा आधे जानवर तत्त्व से बने होते हैं। अपनी आध्यात्मिक रक्षा करने के लिए एस्किमो तन्त्र-मन्त्र, ताबीज आदि का उपयोग करते तथा किसी अतीन्द्रिय क्षमता-सम्पन्न शैमन का आश्रय लेते हैं। शैमन बीमारियाँ दूर करने तथा भविष्य बताने का कार्य करते हैं।

सर्वथा विपरीत परिस्थितियों में रहकर भी कैसे प्रफुल्लता, उल्लास से भरा जीवन जिया जा सकता है ? एस्किमो प्रजाति उसका प्रत्यक्ष उदाहरण है। बहुसंख्यक व्यक्ति अपना सारा जीवन इसी दारोमदार में लगा देते हैं। किन्तु इनके बिना भी प्रतिकूलताओं के बीच भी शारीरिक अनुकूलन एवं मानसिक समस्वरता बनाए रखकर जीना सम्भव है। सम्भव है आर्य जब मध्य एशिया से भारतवर्ष में आये, तब ऐसे ही प्रतिकूल वातावरण में रहे हों। हिमालय की वर्तमान परिस्थितियाँ ऐसी ही हैं जिनमें योगीजन निवास करते हैं। वास्तविकता यही है कि मनुष्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हर हालात में स्वयं को ढाल सकता है, बशर्ते वह मनोबल का धनी हो।

संकल्प शक्ति सर्वोपरि

मनुष्य शरीर में सबसे अधिक संवेदनशील अवयव मस्तिष्क है। वह मात्र सोचने-विचारने के ही काम नहीं आता, वरन् उसमें उत्पन्न होने वाली विद्युत सम्पूर्ण शरीर का क्रिया संचालन करती है। अचेतन मस्तिष्क से सम्बन्धित असंख्यों तार शरीर के प्रत्येक घटक तक पहुँचते हैं। उसकी सुव्यवस्था रखते हैं, आवश्यक आदेश देते हैं तथा समस्याओं का समाधान करते हैं।

यह शरीर चर्चा की बात हुई, इसके अतिरिक्त सचेतन भाग द्वारा विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मन और बुद्धि द्वारा निर्णय किये जाते हैं और उनकी पूर्ति के लिए योजना बनाने और उन्हें कार्यान्वित करने का उत्तरदायित्व उठाया जाता है। इसके प्रखर होने पर ही मनुष्य प्रतिभावान बनता है और अनेक सफलताएँ, अर्जित करता है। बाह्य मस्तिष्क का स्तर मन्द होने पर मनुष्य मूर्ख कहलाता है और उसका चिन्तन अटपटा रहता है।

जीवन के हर क्षेत्र को मस्तिष्क प्रभावित करता है। उसके स्तर के अनुरूप शारीरिक स्वास्थ्य में उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। मनोविकार स्वास्थ्य को गिराने और व्यक्तित्व को अटपटा बनाने के प्रधान कारण होते हैं। इसी प्रकार किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व की, गुण, कर्म स्वभाव की दिशाधारा इसी आधार पर बनती है कि मस्तिष्क को किस प्रकार प्रशिक्षित एवं अभ्यस्त किया गया।

यों कोई व्यक्ति आकांक्षाओं के अनुरूप अपने मनोबल को विकसित कर सकता है और तदनुरूप साधन जुटा सकता है और उस दिशा में सहायक सिद्ध होने वाले व्यक्तियों के साथ सम्पर्क बना सकता है। पर यह अपवाद रूप ही होता है। आम बात यह है कि सम्पर्क और वातावरण से मनुष्य प्रभावित होता है और साथी, सहयोगी, कुटुम्बी जिस मार्ग पर चलते हैं, उसी का अनुकरण होने लगता है। सत्संग की ही तुलना में स्वाध्याय भी प्रभावशाली होता है। यदि उन्नतिशील बनाने वाले तथ्यों से भरा-पूरा साहित्य मिलता रहे और उसमें प्रस्तुत किये गये विवेकपूर्ण तथ्यों को विवेकपूर्वक अपनाया जाता रहे तो भी सम्वेदनशील मस्तिष्क उसी प्रकार ढाँचे में ढलने लगते हैं जैसे कि वातावरण प्रभावित करता है।

प्रकृति भी ऋतुओं के—वय के अनुरूप मनुष्य में कई परिवर्तन करती रहती है। कामवासना, मनोरंजन के लिए उमंग यों हारमोनों से सम्बन्धित है किन्तु संचित संस्कार भी भले-बुरे कामों के लिए उत्साह प्रदान करते हैं। मस्तिष्क माता के गुण-कर्मों से अत्यधिक प्रभावित होता है। इसलिए कहा जाता है कि सुसन्तति प्राप्त करने की आकांक्षा की पूर्ति के लिए जननी का स्तर ऊँचा उठाया जाना चाहिए। उसके स्वास्थ्य, शिक्षण के अतिरिक्त ऐसा वातावरण दिया जाना चाहिए जिसमें प्रसन्नता के साथ-साथ नैतिकता की प्रेरणा भी मिलती रहे। सुयोग्य सन्तान के लिए जननी का स्तर उठाने का प्रयत्न करना चाहिए। दूध पीने की तरह वह स्वभाव की विशेषताएँ भी बहुत कुछ माता से ही प्राप्त करता है।

यह मानसिक विकास का प्रथम अध्याय है। दूसरे अध्याय में स्कूली प्रशिक्षण को महत्त्व दिया जाता है। पाठ्यक्रम के सहारे विविध-विधि जानकारियों की आवश्यकता है। किन्तु अध्यापकों और साथियों के स्वभाव से बनने वाला वातावरण भी मानसिक विकास में कम सहायक नहीं होता। इसलिए जिन्हें बुद्धिमान बनना है, उन्हें ऐसे वातावरण में पढ़ाया जाना चाहिए जहाँ मूर्खतापूर्ण बातें न होती हों।

मानव मन की भिन्नताओं और विशेषताओं में प्रकृतिगत सूक्ष्म प्रवाहों का भी प्रभाव पड़ता है। हर मस्तिष्क की संरचना देखने पर एक जैसी लगते हुए भी उसके न्यूरोन घटकों के आकार-प्रकार में बहुत अन्तर होता है। जिस प्रकार हथेली की लकीरें और पोरवों पर रहने वाले अंकनों में प्रत्येक मनुष्य की स्थिति भिन्न होती है, उसी प्रकार मस्तिष्कीय न्यूरोन, जीवकोष तथा विद्युत कम्पनों में भिन्नता रहती है। मस्तिष्क में दो प्रधान ग्रन्थियाँ हैं। एक पिट्यूटरी, दूसरी पीनियल। इनसे हारमोन स्तर के स्रावों का प्रवाह बहता रहता है। उसकी न्यूनाधिकता और दिशाधारा के अनुरूप मनुष्य की अभिरुचि तथा प्रतिभा प्रवाहित होती है। वंशानुक्रम से पीढ़ियों के मिले उत्तराधिकार भी इसी क्षेत्र में विद्यमान रहते हैं। ग्रह-नक्षत्रों के विकिरण मस्तिष्क पर एक प्रकार का प्रभाव डालते हैं तो दूसरे पर दूसरे प्रकार का। ऐसे ही अनेक कारणों से हर मस्तिष्क दूसरों से भिन्न स्तर का होता है। इन सब कारणों को देखते हुए लगता है कि मस्तिष्क एक प्रकृतिगत देन है और उसी आधार पर मनुष्य मूर्ख या बुद्धिमान होता है। स्वभाव और चिन्तन की दृष्टि से भी वह इन्हीं कारणों से प्रभावित रहता है। यह तथ्य बताते हैं कि सौन्दर्य और कुरूपता की तरह मस्तिष्कीय विलक्षणताएँ भी प्राकृतिक कारणों एवं जन्मजात संस्कारों से प्रभावित होती हैं। इतने पर भी वातावरण एवं संकल्प का अपना महत्त्व है। वह इन सब प्राकृतिक कारणों को बदल सकने में समर्थ है। कालिदास, वरदराज आदि के उदाहरण ऐसे हैं जिनमें उनकी आरम्भिक स्थिति देखते हुए अनुमान होता था कि ये सदा मूर्ख रहेंगे। विद्याध्ययन में भी इन्हें सफलता न मिलेगी। पर जब उनने संकल्पपूर्वक विद्वान बनने का निश्चय किया तो प्राकृतिक संरचना को उलटकर उनने तीक्ष्णता अर्जित करली और सामान्यजनों की अपेक्षा अधिक ऊँचे स्तर के विद्वान् बन गये। इससे प्रतीत होता है कि संरचना और वातावरण का प्रभाव कैसा ही क्यों न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो, मनुष्य उसमें आश्चर्यजनक परिवर्तन कर सकता है। सुधारना ही नहीं बिगाड़ना भी सम्भव है।

जिस प्रकार औषधियों का शरीर के विभिन्न अवयवों पर प्रभाव पड़ता है, उसी प्रकार संकल्प भी शरीर के ढाँचे को स्वास्थ्य को ही नहीं, मानसिक क्षमता को भी प्रभावित करता है और स्वभाव तक में आश्चर्यजनक परिवर्तन लाता है। जिस प्रकार आहार का शरीर-क्रम के साथ भारी सम्बन्ध है, उसी प्रकार आकांक्षा, चिन्तन-प्रक्रिया और संकल्प-शक्ति मनःसंस्थान को प्रभावित करती है। उसकी संरचना का कितना ही महत्त्व क्यों न हो, वातावरण से, प्रकृति प्रवाहों से वह कितना ही प्रभावित क्यों न रहता हो, पर इस सबमें इतनी शक्ति नहीं है कि वह निश्चयपूर्ण संकल्पों के दबाव से अस्वीकार कर सके। शरीर के अन्यान्य अवयवों को हम इच्छानुसार मोड़ने-मरोड़ने में एक सीमा तक ही सफल हो सकते हैं पर मस्तिष्क के सम्बन्ध में बात दूसरी है उसे सुधारा, बदला भी नहीं, उलटा तक जा सकता है। इस दृष्टि से वह जितना सशक्त और महत्त्वपूर्ण है, उतना ही कोमल भी है। वह शरीर में सबसे ऊँचे स्थान पर अवस्थित है। इतने पर भी वह संकल्प-शक्ति से ऊपर नहीं है। संसार में ऐसे अगणित व्यक्ति हुए हैं, जिनका आरम्भिक जीवन साधारण ही नहीं हेय स्तर का भी था, किन्तु जब उनने अपने आपे को उच्चस्तरीय बनाने का निश्चय कर लिया तो अभ्यस्त आदतें जो परिवर्तन स्वीकारने में आना-कानी करती थीं, संकल्प शक्ति के दबाव से आमूल-चूल परिवर्तित हो गईं। सामान्य व्यक्ति असामान्य बन गये। इसीलिए मानव जीवन में इच्छाशक्ति का महत्त्व मस्तिष्कीय संरचना से भी अधिक माना गया है।

बाधाओं से टकराये जो, उसे इंसान कहते हैं

सफलता सर्वप्रिय है। इसकी प्राप्ति सुगमता से नहीं होती है। प्रत्येक कार्य करके उन पर विजय प्राप्त करें। बिना विघ्न के हुआ कार्य जीवन को आनन्द से पूर्ण नहीं कर सकता है। हमें आनन्द की प्राप्ति कार्य के प्रारम्भ करने से ही होने लगती है तथा मार्ग में विघ्न होने पर और आनन्द आयेगा। बिना कष्ट उठाये मिली हुई सफलता ऐसी लगती है जैसे हमने कोई वस्तु मुफ्त में प्राप्त की हो। ऐसी वस्तु आनन्ददायक नहीं होती। सोने का महत्त्व इसलिए अधिक है क्योंकि वह आसानी से प्राप्त नहीं होता। लोहा अधिक उपयोगी होने पर भी पर्याप्त मात्रा में मिलता है। लोहा सोने से सस्ता है।

कठिनाई से प्राप्त वस्तु हमें अधिक आनन्द देती है। उसका हमारे मन पर स्थायी प्रभाव पड़ता है। दुर्लभ वस्तु आनन्द और सुख प्रदान करने वाली होती है। वह कठिनाइयों से टकराने का इतिहास लिए रहती है। वह इस बात की कसौटी का परिणाम है कि हममें ऐसा कार्य करने की क्षमता है। कठिनाई मानव के गुणों की परख का साधन है। दुर्लभता से प्राप्त वस्तुएँ ही सफलता की द्योतक हैं। ऐसी वस्तुओं के विषय में ही पुस्तकों में लिखा जा सकता है, प्रवचन दिये जा सकते हैं, जो वस्तुएँ सरलता से प्राप्त हो जायें, उनके विषय में लिखना अपने समय को व्यर्थ करना है। कोई वस्तु महत्त्वपूर्ण इसीलिए है कि उसकी प्राप्ति में बाधाएँ आयीं, जिन्हें दूर करना पड़ा था। इन्हीं की प्राप्ति के आनन्द से यह संसार रसमय बना है तथा मनुष्य इसे छोड़ने को तैयार नहीं होता।

कठिनाइयाँ संसार में गतिशीलता बनाये हुए हैं। इन्हीं के कारण मनुष्य को समय-समय पर अपनी कार्य-कुशलता का परिचय देने का अवसर प्राप्त होता है। मनुष्य की सजगता और सावधानी का कारण भी कार्य के मार्ग में आने वाली बाधाएँ ही हैं। जीवन में बार-बार ठोकरें खाकर ही मनुष्य अनुभवी होता है। बार-बार संघर्ष करने से त्रुटियों में सुधार होकर योग्यता में वृद्धि हो जाती है। कष्टों से मनुष्य दृढ़ तथा साहसी बनता है। हथियार पत्थर पर रगड़ने से पैने होते हैं। हीरे में चमक आ जाती है। कठिनाइयों की आवृत्ति से मनुष्य में चेतनता आ जाती है। मनुष्य में जो शक्तियाँ छिपी रहती हैं, प्रयोग में न आने के कारण जिन शक्तियों की अभिव्यक्ति नहीं होती, वे प्रत्यक्ष में आकर कार्य में सहायक हो जाती हैं।

जीवन में कार्य करने की जागरूकता तथा उससे प्राप्त आनन्द तभी स्थायी रहता है, जबकि कार्य में कष्टों का समावेश हो। इतिहास में प्रसिद्ध व्यक्तियों ने कष्ट सहे तो उनके सामान्य कार्य भी उनको अमर कर गये, वरना वे सामान्य रह जाते। जैसे—प्रताप, शिवाजी, गाँधी, जवाहर आदि कष्ट सहने के कारण महान बने। वे इनके बिना सामान्य मनुष्य होते। जागरूकता और परिश्रम से किये गये कार्य बिना कष्ट उठाये नहीं पूरे हुए। कष्ट के द्वारा प्रभु मनुष्य की परीक्षा लेते हैं। जो मनुष्य इस परीक्षा में सफल होते हैं, उन्हें आनन्द मिलेगा। परीक्षा से डरने वाले उन्नति नहीं कर सकते, उनकी इच्छाएँ पूरी नहीं होतीं।

सफलता की पूर्ति धीरे-धीरे कार्य करने से होती है। इस बीच में उन्हें कष्टों से बार-बार टकराना पड़ता है। ये विघ्न कई प्रकार से मनुष्य के सामने आते हैं। दैवी प्रकोप अकस्मात् कठिनाई के रूप में सामने आते हैं। हम भूलों से भी कठिनाइयाँ अनुभव करते रहते हैं। आकस्मिक कठिनाइयाँ हमारे कार्य-पथ को सुगम नहीं रहने देतीं और प्रायः हम कार्य छोड़ने तक को प्रस्तुत हो जाते हैं। कठिनाई वास्तव में वह नहीं होती जो हम समझते हैं बल्कि वह हमारे अविवेक का प्रतीक होती है। अविवेकी मनुष्य उसको इस रूप में देखता है। वास्तव में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परिस्थितियाँ ही कठिनाई का परिवर्तित रूप होती हैं। हम अपनी बुराई के अनुसार कुछ का कुछ समझ जाते हैं। छोटी-सी बात हमें वृहद रूप में दिखलाई देने लगती है। हमारा घुराना अभ्यास हमें बार-बार ऐसा सोचने पर विवश कर देता है।

स्वभाव परिवर्तन से हम कठिनाई पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। स्वभाव शीघ्र बदलना सरल नहीं होता। स्वभाव बनने में भी पर्याप्त समय लगता है, इसी प्रकार स्वभाव को बदलने में भी समय लगेगा। अतः हमें धैर्य, साहस और दृढ़ता का प्रयोग करना चाहिए। भूल होने पर सावधानी से कार्य करना चाहिए। पत्थर और रस्सी जाते-आते वहाँ पर निशान बना देती हैं। धैर्य के साथ परिस्थितियों के अनुसार अपने को ढालने का प्रयत्न करें तो आसानी हो जायेगी, हम सफल हो जायेंगे। आकस्मिक परिस्थितियों को आने से रोकना हमारे वश की बात नहीं है। परन्तु उसे सहन करने के लिए अनुभव और अभ्यास की आवश्यकता है।

आकस्मिक कठिनाई उपस्थित होने पर हम उसे नहीं रोक सकते परन्तु उसके रूप को समझ सकते हैं। तेज धूप घास को जला डालती है। परन्तु हमेशा के लिए घास समाप्त नहीं होती, वर्षा होने पर वह फिर हरी-भरी हो जायेगी। ईश्वर ने जिसे जीवन दिया है वह जीयेगा, उसे कोई मार नहीं सकता। प्रकृति का रहस्य बड़ा विचित्र है। वह विपत्ति की विरोधी सुविधा भी अपने आप प्रदान करती है। बीमारी के बाद आरोग्य प्रदान करने के लिए भूख दी है जो जल्दी ही क्षति-पूर्ति कर देती है। ग्रीष्म के बाद वर्षा, ठण्ड के बाद गर्मी, रात्रि के बाद दिन तथा अन्धकार के बाद प्रकाश का दर्शन होता है। रोग, शोक आदि स्थायी नहीं हैं उन्हें तो आने की गति से ही जाना है और फिर क्षति-पूर्ति भी होती है।

आपत्ति का आना दुःखदायी है। परन्तु मन पर उसकी प्रतिक्रिया का विशेष महत्त्व है। विपत्ति के बाद घबराहट होना विशेष रूप से भयावह है जो हमारी जीवन-शक्ति को खींच लेती है। इससे भविष्य में शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक संतुलन बिगड़ जाता है। आकस्मिक विपत्तियाँ बड़े-बड़े महान पुरुषों पर भी छाई रहीं। सामान्य मनुष्य की तो बात ही क्या है ? इस संसार में विरोधी भावों का आवागमन तो चलता ही रहता है। ये तो मनुष्य के कर्मों का फल देने, मनुष्य को जाग्रत करने, उसके कार्यों में साहस और बल भरने के लिए आती हैं। समय पर इनके कारण कार्य का क्रम बदलना पड़ जाय तो कोई हानि नहीं। हमें अपने को स्थिति के अनुकूल बदल लेना चाहिए।

पहले संपन्न थे, अब अभावग्रस्त हैं तो हमें समाज द्वारा किये गये उपहास से दुःखी नहीं होना चाहिए क्योंकि उपहासकर्त्ता विवेकशील प्राणी नहीं होते। उन्हें इस कार्य को करने की फुरसत नहीं है। मूर्ख आदमी के उपहास को हम रोक नहीं सकते और उसके उपहास का कोई मूल्य भी नहीं है। इन विपत्तियों द्वारा होने वाली क्षति से हम चाहें तो बच सकते हैं। वास्तविक क्षति विपत्तियों से नहीं उसके पश्चात् होने वाली विपत्ति से होती है। कठिनाई से वीरतापूर्वक लड़ना इसका एक उपाय है। वीर ही विपत्ति को हँसते-हँसते झेलते हैं। वीर अपने भविष्य को उज्ज्वल देखता है। इसलिए वह धड़ काटने वाली तलवार का मुकाबला करता है। मरूँगा तथा स्वर्ग को प्राप्त करूँगा अथवा पृथ्वी को भोग करूँगा, इस भावना से उसके सामने हमेशा उत्साह तथा आशा का संचार होता रहता है। धैर्य, साहस और प्रयत्न उसके बुरे समय के साथी होते हैं। उसका इनके रहते कुछ नहीं बिगड़ सकता।

बुरे समय में मानसिक संतुलन बनाये रखने वाले व्यक्ति दृढ़ रहते हैं और कठिनाइयों को हँसते-हँसते झेलते रहते हैं। मानसिक संतुलन से शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य ठीक रहता है। मित्र और शत्रु सीमा में रहते हैं। उसको अपनी भूलों रूपी दुर्घटनाएँ नहीं सता सकतीं। विवेकशील व्यक्ति दुर्भाग्य का दुखड़ा नहीं रोता।

हमें लज्जा बुरे काम से करनी चाहिए, सद्गुण प्रेरित कर्मों पर गर्व करना चाहिए। संसार में महापुरुषों ने संकटों को हँसते-हँसते झेला। मुसीबतों के थपेड़े उन्हें अपने स्थान से डिगा न सके और अन्त में वे सफल हुए। निर्भय, निसंकोच तथा ग्लानिरहित होकर कार्य में लगे रहना चाहिए। घबराना नहीं चाहिए, तभी हम कठिनाइयों पर विजय पायेंगे। विघ्नों का आना तो आवश्यक है। उनका साहस से मुकाबला करते हुए अपने मनोबल को ऊँचा रखना चाहिए। जिससे एक वीर का जीवन जी सकें।

प्रतिकूलताओं की भट्टी में तपकर निखरता है व्यक्तित्व

प्रगति-पथ पर आगे बढ़ने के लिए मार्ग में आये विघ्न-बाधाओं का साहस एवं पुरुषार्थ द्वारा मुकाबला करना पड़ता है। मुसीबतों, कठिनाइयों से जो घबरा जाते हैं, उनका सफलता की मंजिल तक पहुँच पाना सन्देहास्पद ही बना रहता है। पर जो प्रतिकूलताओं से जूझते हुए अपनी योग्यता-प्रखरता बढ़ाते हैं, उन्हें श्रेय, सम्मान एवं सफलता मिलने में कोई सन्देह नहीं रह जाता। संसार में वैज्ञानिकों-अनुसंधानकर्त्ताओं से लेकर महापुरुषों तक में से अधिकांश को अपने जीवनकाल में विपन्न परिस्थितियों से जूझना पड़ा है।

विश्वविख्यात ज्योतिर्विद् और खगोल शास्त्री एरिग्मे बड़े ही दुर्दिन भरी परिस्थितियों में पले और बड़े हुए थे। बचपन में उन्हें दो समय की रोटी कड़ी मेहनत- मजूरी करने के उपरान्त ही मिल पाती थी। पूरे परिवार का भार उन्हीं पर था। ऐसी स्थिति में स्कूल जाने का अवसर भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बहुत कम मिल पाता था। आगे बढ़ने तथा महानता अर्जित करने की इच्छा सदैव झकझोरती रहती थी, पर विपन्नता ऐसी थी जो उन्हें रोजी-रोटी कमाने में ही व्यस्त रखती थी। किशोरावस्था इसी उधेड़-बुन में व्यतीत हो रही थी कि अपनी योग्यता किस प्रकार बढ़ाई जाय ? किसी तरह एक पुस्तक विक्रेता के यहाँ टूटी-फूटी किताबों पर जिल्द चढ़ाने का काम मिल गया। एक दिन वे किसी पुरानी किताब पर जिल्द चढ़ाने का काम कर रहे थे कि पास में रखी रद्दी कागज की ढेरी पर हाथ से लिखा हुआ एक कागज का टुकड़ा दिखाई दिया। उसे उठाकर वे पढ़ने लगे। वह कागज एक पत्र की नकल था जो डी. एलम्बर्ट नामक व्यक्ति ने अपने किसी मित्र को लिखा था । उस पर लिखा हुआ था—"आगे बढ़ो श्रीमान ! आगे बढ़ो ! जैसे-जैसे तुम आगे बढ़ोगे, तुम्हारी कठिनाइयाँ अपने आप दूर होती चली जायेंगी और तुम देखोगे कि उन कष्ट-कठिनाइयों के बीच में ही प्रकाश उदित हुआ है और जिसने उत्तरोत्तर तुम्हारा मार्ग आलोकित किया है।"

एरिग्मे के लिए वह पंक्तियाँ मार्गदर्शक बन गईं। उन्हें जीवन में नया प्रकाश मिला। अब तो दुकान पर मरम्मत के लिए जितनी भी पुस्तकें आतीं, वह उन्हें पढ़ डालते। इसका परिणाम यह हुआ कि आगे चलकर वे विश्वविख्यात स्तर के ज्योतिर्विद्, खगोलवेत्ता एवं विविध विषयों के विद्वान बन गये।

वस्तुतः प्रतिकूलताएँ एवं विपत्तियाँ जीवन की कसौटी हैं, जिनमें मनुष्य के व्यक्तित्व का रूप निखरता है। इनसे खुलकर निबटने से इच्छाशक्ति प्रबल होती है और बड़े काम करने की क्षमता प्राप्त होती है। मुसीबतों में मनुष्य की आन्तरिक शक्तियाँ एकत्रित और संगठित होकर काम करती हैं। सज्जन की कोई भी साधना कठिनाइयों में होकर निकलने पर ही पूर्ण होती है।

अतः ऐसी परिस्थितियों की परवाह न करके जो व्यक्ति इस निश्चय से कार्य में जुटे रहते हैं कि उन्हें अपना उद्देश्य पूरा करना ही है, इसके लिए कितना ही उद्योग एवं परिश्रम क्यों न करना पड़े, वे अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेते हैं। इस सम्बन्ध में प्रसिद्ध गणितज्ञ श्री निवास रामानुजम् का उदाहरण सर्वविदित है। मद्रास के एक बहुत ही गरीब घराने में उनका जन्म हुआ था। पढ़ने-लिखने में कमजोर थे। अँग्रेजी विषय में अच्छे नम्बर न आने के कारण अगली कक्षा में प्रवेश नहीं मिला। १५ वर्ष की आयु में ही पढ़ाई बन्द हो गई। निराशा और हताशा की इन्हीं घड़ियों में उनके हाथ कहीं से गणित की कोई पुस्तक लग गई। उस पुस्तक के सहारे ही उनने गणित का अभ्यास बढ़ाया और इस विषय में इतनी पारंगतता प्राप्त कर ली कि कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय ने उन्हें अपने यहाँ अध्ययन के लिए आमन्त्रित किया। इसके बाद प्रयत्न और पुरुषार्थ के बल पर उनकी जीवन पुस्तक में सफलता के अध्याय जुड़ते गये। आज जब भी विश्वभर में किसी स्थान पर गणित के विकास में योगदान की चर्चा चलती है तो रामानुजम् का नाम सर्वप्रथम लिया जाता है। जिनने अल्पायु में ही अपनी विलक्षण प्रतिभा से सारे विश्व को प्रभावित किया था।

सच तो यह है कि विघ्न-बाधाएँ मानवी पुरुषार्थ की परीक्षा लेने आती हैं। व्यक्तित्व भी अधिक प्रखर, परिपक्व विपरीत परिस्थितियों में ही बनता है। लायोन्स नगर में एक भोज आयोजित था। नगर के सभी प्रमुख विद्वान्, साहित्यकार एवं कलाकार आमन्त्रित थे। प्राचीन ग्रीस की पौराणिक कथाओं के चित्रों से सम्बन्धित एक विवाद की गुत्थी किसी से भी नहीं सुलझ रही थी। तभी गृहस्वामी ने अपने एक नौकर को बुलाया और सम्बन्धित विवाद को निपटाने के लिए कहा। सभी को आश्चर्य हुआ कि भला नौकर क्या समाधान देगा ? किन्तु नौकर ने सम्बन्धित विषय पर जो तर्क, तथ्य प्रस्तुत किये, उससे न केवल विवाद समाप्त हुआ, वरन् सभी विद्वान उसकी तार्किक विवेचना को सुनकर हतप्रभ रह गये। उनमें से एक विद्वान ने नौकर से पूछा—"महाशय आपने किस विद्यालय में शिक्षा प्राप्त की है ? नौकर ने बड़ी ही विनम्रता से उत्तर दिया—"श्रीमान् कई स्कूलों से शिक्षा प्राप्त की है, किन्तु मेरा सबसे अधिक प्रभावशाली शिक्षण 'विपत्ति' रूपी पाठशाला में हुआ है। विपत्तियों से जूझने वाला यही बालक आगे चलकर **जीन जेक रूसो** के नाम से प्रख्यात हुआ, जिसकी क्रान्तिकारी विचारधारा ने प्रजातन्त्र को जन्म दिया।

सुप्रसिद्ध विद्वान् विलियम काबेट ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि "प्रतिकूलताएँ" मनुष्य के विकास में सबसे बड़ी सहचरी हैं। आज मैं जो कुछ भी बन पाया हूँ, विपन्न परिस्थितियों के कारण ही सम्भव हो सका है। जीवन की अनुकूलताएँ सहज ही उपलब्ध होतीं तो मेरा विकास न हो पाता। काबेट के आरम्भिक दिन कितनी विपत्ति एवं गरीबी में बीते, यह उनके जीवन-चरित्र को पढ़कर जाना जा सकता है।

अभाव, अवरोध, मुसीबतें वस्तुतः अभिशाप उनके लिए हैं जो परिस्थितियों को ही सफलता, असफलता का कारण मानते हैं। अन्यथा आत्मविश्वास एवं लगन के धनी ध्येय के प्रति दृढ़ व्यक्तियों के लिए तो वे वरदान सिद्ध होती हैं। भट्टी में तपने के बाद सोने में निखार आता है। प्रतिकूलताओं से जूझने से व्यक्तित्व निखरता और परिपक्व बनता है। गिने-चुने अपवादों को छोड़कर विश्व के अधिकांश महापुरुषों का जीवन-चरित्र पढ़ने पर यह पता चलता है कि वे अभावग्रस्त परिस्थितियों में पैदा हुए, पले। पर उन्होंने जीवन की विषमताओं को वरदान माना। संघर्षों को जीवन बनाने तथा पुरुषार्थ को जगाने का एक सशक्त माध्यम समझा। फलतः वे बाधाओं को चीरते हुए सफलता के शिखर पर चढ़े। उन्होंने यह सिद्ध कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिया कि परिस्थितियाँ मानवी विकास में बाधक नहीं बन सकतीं, अवरोध प्रचण्ड पुरुषार्थ के समक्ष टिक नहीं सकते।

संसार में ईसा, सुकरात, कार्लमार्क्स आदि ऐसे ही महापुरुष हुए हैं, जिनको जीवन भर असफलताओं, संकटों तथा विरोधों का सामना करना पड़ा। किन्तु वे एक क्षण को न तो ध्येय से विचलित हुए और न निराश। वे निरन्तर पुरुषार्थरत एवं प्रयत्नशील रहे। फलतः उन्हें लोगों ने अपने जीवन का आदर्श बनाया।

दार्शनिक सुकरात का जन्म एक निर्धन मूर्तिकार के घर हुआ था। पिता की छत्र-छाया उठ जाने के बाद माँ के साथ गरीबी में दिन व्यतीत करते हुए भी वह अध्ययन में लगे रहे। मेहनत-मजदूरी करते हुए वह अपने अध्यवसाय में निरत रहे। घर का खर्च चलाने का भी अतिरिक्त दायित्व बाल्यावस्था में ही उनके ऊपर आ गया, पर गरीबी उनके विकास में बाधक नहीं बन सकी। अपने पुरुषार्थ एवं मनोयोग से एक दिन वे दर्शनशास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान् बने।

इसी तरह कार्लमार्क्स का जन्म भी गरीबी में हुआ। मरते दम तक विपन्नताओं ने उनका पीछा नहीं छोड़ा। इस निपट निर्धनता में भी वे वैचारिक साधना करते रहे और एक दिन समाज की नई व्यवस्था ''साम्यवाद'' के प्रणेता बने। जीवनभर संघर्षरत रहते हुए भी उन्होंने ''कैपिटल'' जैसे विश्वविख्यात ग्रन्थ की रचना की। इस कार्य में उनकी पत्नी मेरी ने उनकी पूरी मदद की।

अनुकूलताएँ एवं साधन-सुविधा न होते हुए भी कितने ही निर्धन बच्चे विद्वान, ज्ञानी एवं महामानव बने, इससे भारतीय इतिहास के पन्ने भरे पड़े हैं। ज्ञानेश्वर, तुकाराम, कालिदास, सूरदास, तुलसीदास से लेकर विद्यासागर, प्रेमचन्द, महावीर प्रसाद द्विवेदी, निराला आदि का जीवन उठाकर देखा जाय तो वह कठिनाइयों और विपन्नताओं का एक जीता-जागता इतिहास मिलेगा। ये संकटों की तनिक भी परवाह किये बिना अपने पथ पर अविचल और अबाध गति से बढ़ते रहे। फलतः सफल हुए और अभिनन्दनीय बने।

आपदाएँ, मुसीबतें मानव जीवन के लिए खराद का काम करती हैं। उनसे लड़ने और विजय प्राप्त करने से मनुष्य के जीवन में जिस आत्मबल का विकास होता है, वह एक अमूल्य सम्पत्ति होती है। जिसको पाकर अपार सन्तोष होता है। अवरोधों से संघर्ष पाकर जीवन में एक ऐसी तेजी उत्पन्न होती है जो मार्ग में आये समस्त झाड़-झंखाड़ों को काटकर दूर कर देती है।

स्वामी विवेकानन्द की जीवन-गाथा इसका प्रमाण है। अपने पिता की मृत्यु के बाद नरेन्द्र को भारी विपत्तियों का सामना करना पड़ा। कई-कई दिनों तक भूखा सोना पड़ा। रोजगार की तलाश में दर-दर भटकने पर भी कहीं सफलता नहीं मिली। संन्यास लेने के बाद कठिनाइयों का अवरोध और बढ़ता गया। अमेरिका के शिकागो शहर में होने वाले सर्वधर्म सम्मेलन में भाग लेने गये तो पहला दिन बहुत ही कष्टमय बीता। वोस्टन शहर के जिस होटल में रात्रि काटने के लिए गये, वहाँ सीढ़ी पर पैर रखते ही दरबान ने काले भारतीय कहकर भगा दिया। सड़क की ओर बढ़े तो बर्फ गिरने लगी। जायें तो जायें कहाँ ? भूखे प्यासे तो थे ही। आँखों के सामने अँधेरा छा गया। पैर भी जवाब दे रहे थे। पर करते क्या ? आगे बढ़ना ही जिनके जीवन का लक्ष्य ठहरा। वे आगे बढ़ते गये और एक रेलवे गोदाम के पास जा पहुँचे। गोदाम बन्द था। अतः बाहर पड़े लकड़ी के एक बड़े पैकिंग बाक्स में घुसकर जैसे-तैसे रात काटी। सुबह बाहर निकले तो ठंडक के मारे शरीर सुन्न पड़ गया था। एक महिला ने उन्हें अपने घर ले जाकर भोजन एवं गर्म कपड़े की पूरी व्यवस्था की। दूसरे दिन उन्हें गन्तव्य स्थल पर पहुँचाया, जहाँ ११ सितम्बर, १८९३ को हजारों श्रोता उनके भाषण से मन्त्र-मुग्ध हो उठे थे। नगर में स्थान-स्थान पर उनके चित्र लगाये गये, जिसके नीचे मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा था—स्वामी विवेकानन्द। ऐसा नहीं कि संसार में सारे महापुरुष असुविधापूर्ण परिस्थितियों में ही जन्मे और पले हों। ऐसे अनेक महामानव हुए हैं जिनका जन्म बहुत ही सम्पन्न परिस्थिति में हुआ। वे चाहते तो जीवनभर सम्पन्नतापूर्ण परिस्थिति में रहते और कठिनाइयों से बचते हुए बहुत से काम कर सकते थे। किन्तु उन्होंने वैसा नहीं किया, वरन् असुविधापूर्ण परिस्थितियों को स्वेच्छापूर्वक वरण किया। बुद्ध, महावीर, अरविन्द, गाँधी आदि महापुरुष ऐसे ही थे जिन्होंने जान-बूझकर कंटकाकीर्ण मार्ग चुना। संकट पर संकट आते गये, पर वे अविचल भाव से उनका सामना करते हुए अपने गन्तव्य पथ की ओर बढ़ते ही गये और अंततः अपने उद्देश्य में सफल हुए।

ऐसे अनेक उदाहरण हैं जो यह बताते हैं कि प्रगति प्रतिकूलताओं के बीच जीते हुए प्राप्त की जाती है। ऐसे अपवाद ही होते हैं, जिन्हें सब कुछ बिना परिश्रम के प्राप्त हो जाता है। सुख, समृद्धि, प्रतिभा, कीर्ति, यश प्रखर पुरुषार्थ के ही चमत्कार हैं, इसे हमेशा याद रखा जाना चाहिए।

असम्भव को सम्भव बनाने वाला पुरुषार्थ

मनुष्य शरीर की सामर्थ्य एवं इच्छाशक्ति की प्रबलता को कई पुरुषार्थियों ने कसौटी पर कसा है एवं इस क्षमता से, जिजीविषा से, अपने साहस-पराक्रम—'एडवेंचर' के माध्यम से अनेकानेकों को प्रेरणा भी दी है। हाड़-माँस का यह पिण्ड क्या कुछ नहीं कर दिखा सकता, इसके उदाहरण विगत इतिहास में भी एवं पिछले कुछ दशकों में भी देखने को मिले हैं। वस्तुतः यह दैवी अनुदान सबको सहज रूप से मिला है। आत्मविस्मृति के कारण इसे प्रयोजन रूप में अधिसंख्यक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं ला पाते तथा किसी तरह जीवन शकट खींचते, अपनी यात्रा पूरी करते रहते हैं।

सर फ्रांसिस विचेस्टर को कौन नहीं जानता ? जिन्होंने सारे विश्व की परिक्रमा ढलती आयु में मात्र एक शरकण्डे की नाव से की। यह तो बहुचर्चित साहसी की बात हुई। पर कुछ ऐसे भी हैं जिनके दुस्साहसी विवरण कहीं छपे नहीं, किसी ने उन्हें जाना नहीं। एलेन गेरबा नामक एक फ्रांसीसी युवक ने किसी उपन्यास में स्लोकम नामक नाविक की छोटी-सी हाथ की बनी नाव द्वारा विश्वयात्रा के विषय में पढ़ा था। इसी से वह प्रेरित, उत्साहित हुआ। उसने सोचा—जब पहले हाथ से बनी एक कमजोर नाव से स्लोकम ने यात्रा कर ली तो वह एक मजबूत नाव के सहारे क्या एक छोटी यात्रा अकेले नहीं कर सकता है ? उसने सोचा कि वह अपनी नाव से जिब्राल्टर से न्यूयार्क तक की ४२०० मील की यात्रा अकेले ही पूरी करेगा।

जिब्राल्टर भूमध्य सागर व अटलांटिक महासागर के मिलन बिन्दु पर स्थित है एवं एक ब्रिटानी उपनिवेश है। यहाँ से न्यूयार्क तक का मार्ग अटलांटिक पार कर बड़े जलयानों के लिए तो ३००० मील का है, पर इस महासागर में जो तूफानी हवाएँ चलती हैं, उनसे बचने के लिये छोटी नावों को १२०० मील का अतिरिक्त चक्कर काटकर जाना पड़ता है। इसीलिये मार्ग इतना लम्बा हो जाता है। बड़े जलयान उन दिनों तीन माह में इस मार्ग को पार कर जाते थे। पर गेरबा ने लगातार चलने के लिए चार माह लायक खाद्य सामग्री एकत्र कर ली और एकाकी यात्रा का ही सरंजाम जुटाया। उसके इस निश्चय पर अधिकांश ने उसे निरुत्साहित ही किया तथा इस खतरे में न पड़ने की सलाह दी। दृढ़ संकल्प के धनी इस युवक ने किसी की न सुनी और अपनी यात्रा आरम्भ कर ही दी।

वह एक सिविल इन्जीनियर तो था ही। उसने अपनी नौकरी से लम्बी छुट्टी ली एवं ६ जून, १९२२ को अपनी लम्बी यात्रा पर निकल पड़ा।

यात्रा कुछ ही आगे बढ़ी होगी कि तूफानों ने नाव की पाल के चिथड़े उड़ा दिये। हिलोरें इतनी तेज थीं कि उसे अपनी खाद्य सामग्री तक बचाने में सारा श्रम नियोजित करना पड़ा। अपना स्टोव वह तीन दिनों तक जला ही नहीं पाया, खाना कैसे पकाता ? तूफान थमा, २ दिन और शांति से बीते कि वर्षा ने जोर मारना आरम्भ कर दिया। वर्षा के पानी ने सोने-जागने की, आहार-सफाई की व्यवस्थाएँ पूरी तरह अस्त-व्यस्त कर दीं। कई बार ऐसे अवसर भी आये कि नाव उलटने का खतरा पैदा हो जाता था। उसने एक बार नाव की पाल पर—बल्ली पर चढ़कर अपनी जान बचाई। जिन्दगी और मौत के बीच घमासान लड़ाई होती रही, पर यात्रा जारी रही। समुद्री रोगों का आक्रमण हुआ, कई बार लगा—कहीं वह रास्ता भटक कर टेढ़ी दिशा में तो नहीं चल पड़ा है, पर सारी प्रतिकूलताओं से जूझता हुआ वह अपने लक्ष्य की ओर अनवरत गति से बढ़ता ही गया।

उसकी नाव १०१ दिन बाद जब न्यूयार्क के लाँग आयलैण्ड बन्दरगाह पर पहुँची तो उपस्थित भीड़ ने हर्षोल्लास से उसका स्वागत किया। वह पहला व्यक्ति था, जिसने इतने कम समय में मात्र कुछ साधनों के सहारे अटलांटिक पार करने का दुस्साहस कर दिखाया था। अभिनन्दन किये जाने पर प्रसन्नता से अभिभूत रुँधे गले से वह मात्र इतना ही कह पाया—"मनुष्य के लिए असम्भव को सम्भव कर दिखा पाना कुछ कठिन नहीं है। मैं उत्साह और साहस के समन्वय से मानवी क्षमता और जिजीविषा की अजेय सामर्थ्य के प्रति मानव-समाज का ध्यान आकर्षित करना चाहता था। मुझे प्रसन्नता है कि मुझ जैसे छोटे अकिंचन प्राणी ने यह कर दिखाया। यह कोई बहुत बड़ा चमत्कार नहीं है, पिण्ड की सामान्य सामर्थ्य का सदुपयोग भर है।"

दस हजार मील की समुद्र-यात्रा

१९ नवम्बर, १९६६ को ९३ वर्षीया श्रीमती एगिली करेल अपने ६१ वर्षीय बेटे, उसकी पत्नी और दो बेटियों के साथ एक ४० फुट लम्बी डोंगी में बैठकर १० हजार मील की यात्रा करके केन्या से सकुशल आकलैण्ड पहुँची। इस साहसिक यात्रा के साथ मनुष्य के अदम्य उत्साह का जहाँ इतिहास जुड़ा हुआ है, वहाँ कठिन परिस्थितियों और संघर्षों में भी धैर्य न छोड़ने का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत है।

श्रीमती एमिली केन्या में रहती थीं। वहाँ उनका घर और निजी जायदाद थी। किसी प्रकार का कोई अभाव न था। मनुष्य जीवन के साथ आखिर उतार-चढ़ाव तो लगे ही हैं। उनसे अब तक किसे छुटकारा मिल पाया है ? एमिली के जीवन में आकस्मिक तूफान आया। केन्या की सरकार बदलने के साथ-साथ उनका भाग्य-सितारा भी डूब गया। उनकी सारी धन-सम्पत्ति छीन ली गई और बेटे का फार्म भी सरकार ने ले लिया।

परिस्थितियों से घबड़ा जाने वाले लोग उल्टा-सीधा कर डालते हैं। पर साहसी लोगों की पहचान तो कठिनाइयों में ही होती है। जो लोग बुरी से बुरी परिस्थिति में भी अपना मानसिक सन्तुलन नहीं बिगाड़ते और धैर्य से काम लेते हैं, वे अन्ततः न केवल बाधाएँ पार कर लेते हैं वरन् पहले जैसी स्थिति प्राप्त करने में भी सफल होते हैं।

९३ वर्षीय वृद्धा और उनका ६१ वर्षीय बेटा दोनों ही लगभग पूरे वृद्ध। घर के और सब लोग बुरी तरह हताश हुए, ऐसे समय वृद्धा ने अपनी जिन्दादिली नहीं छोड़ी। एमिली ने अपनी परिस्थितियों पर गम्भीरता से विचार किया और देखा कि यहाँ रहना उनके हित में नहीं है और बाहर जाने का भी कोई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधन न था। समस्या के निदान के लिए उन्होंने मुसीबतों के अन्तिम दौर में साहस को साथी बनाया और अपनी ४०० फुट लम्बी डोंगी पर सवार होकर आकलैण्ड के लिये चल पड़े।

१० हजार मील की समुद्री यात्रा सो भी डोंगी से, बड़ा ही खतरनाक काम था। समुद्र में जोर के तूफान आते हैं, जिनमें बड़े-बड़े जहाज तक डूब जाते हैं। बड़ी-बड़ी मछलियों के आघात भी कम नहीं होते। डोंगी के डुबा देने के लिये तो यही काफी होते हैं। पर निस्सहाय मरने अथवा प्रताड़ित होने की अपेक्षा साहसपूर्वक प्रयत्न करना ही उन्होंने उचित समझा और विश्वासपूर्वक अपनी डोंगी समुद्र में तैरा दी।

जहाँ जोखिम उठाने की हिम्मत होती है, सफलता की सम्भावनाएँ भी वहीं निवास करती हैं। ऐसे अवसर देखे गये हैं जब लोगों की सारी धन-सम्पत्ति नष्ट हो गई पर वे घबराये नहीं फिर हिम्मत से बढ़े और पहले से भी अच्छी स्थिति पाई। मृत्यु शैय्या पर पड़े भीषण रोग के रोगियों ने विश्वास, आशा और उत्साह के बल पर जीवन पाया। जिन्हें रामायण की चौपाई भी वेद की ऋचा लगती थी उन्होंने उपनिषद् और स्मृतियाँ कंठस्थ कीं। बात सिर्फ इतनी है कि मनुष्य में हिम्मत, आत्मविश्वास, सफलता की भावना बनी रहनी चाहिये।

आत्मविश्वास के सहारे छोड़ी गई नाव तूफानों और बवंडरों से टकराती हुई आगे बढ़ती रही और कई दिन तथा रातों की यात्रा करते हुए आखिर वे अपने गन्तव्य स्थल पर जा पहुँचे। परिस्थितियों से घबड़ा गये होते तो बेचारों का पता नहीं क्या हाल होता ? हिम्मत न छोड़ी तो किनारे जा लगे। आकलैण्डवासियों ने उत्साहपूर्वक इन पुरुषार्थियों का स्वागत किया और अब वे अच्छी स्थिति में भी बताये जाते हैं।

सफलता का श्रेय संकल्पवानों को

मनुष्य की सम्भावनाएँ असीम हैं। उसके अन्तर्गत छिपी हुई क्षमता का पूरी तरह मूल्यांकन किया जा सकना कठिन है। महामानवों के अगणित इतिहास इस बात के साक्षी हैं कि साधनहीन परिवारों में उत्पन्न होना तथा विपरीत परिस्थितियों का घेरा मनुष्य की प्रगति में देर तक बाधक नहीं रह सकता, यदि उसमें आगे बढ़ने की अदम्य आकांक्षा विद्यमान हो।

देखा जाता है कि लोग ऐसी ही दीन-हीन परिस्थितियों में पड़े हुए हेय और गया-गुजरा, असफल-जीवन जीते रहते हैं। किसी तरह मौत के दिन पूरे करते हैं, न कोई आशा न उमंग, न कोई योजना न दिशा। मानो वे पेट पालने और बच्चे पैदा करने भर के लिए जन्मे हों। उसी जंजाल के समेटने के लिये कुछ करते रहने के लिए विवशता में फँसे पड़े हों।

क्षमता रहते हुए भी इस प्रकार का नीरस जीने का कारण है—आकांक्षाओं का अवसाद, प्रगति के लिये उत्साह का अभाव और आशाजनक भविष्य चिन्तन की उपेक्षा। कुछ योजना ही सामने न हो तो प्रयत्न किस प्रकार सम्भव होंगे और प्रयत्नों के बिना सफलता का आनन्द कैसे मिलेगा ? योजना बनने के लिए कुछ बनने और कुछ करने की इच्छा होनी चाहिए। यह इच्छा भी मात्र कल्पना-जल्पना बनकर रह जाय तो निरर्थक है। इच्छा जब उत्कट होती है तब उसे आकांक्षा कहते हैं और आकांक्षा की पूर्ति के लिये अपने सारे मनोयोग और पुरुषार्थ को नियोजित करने का नाम है—संकल्प। जब प्रगति के पथ पर संकल्पपूर्वक बढ़ा जाता है तो प्रतिकूलता अनुकूलता में बदलती है और अँधेरे में प्रकाश उत्पन्न होता है।, आरम्भ में जो बात बहुत कठिन लगती थी, वह उतनी ही सरल होती चली जाती है।

श्रुति कहती है—**'संकल्पमयोऽयंपुरुषो'** अर्थात् व्यक्ति संकल्पों की प्रतिमूर्ति है। उसके पुरुषार्थ की सार्थकता संकल्प की उत्कृष्टता पर निर्भर है। जब अभीष्ट प्रयोजन के लिये साहसपूर्वक कमर बाँध ली जाती है और निश्चय कर लिया जाता है कि कठिनाइयों का धैर्य और साहसपूर्वक सामना करते हुए उनके निराकरण के लिये तत्पर रहा जायेगा तो फिर वह निष्ठा भरी मनुष्य की सामर्थ्य देखते ही बनती है। मनुष्य की संकल्प शक्ति संसार का सबसे बड़ा चमत्कार है। उसके आधार पर छोटे स्तर पर खड़ा हुआ व्यक्ति ऊँचे से ऊँचे स्थान तक पहुँच सकता है।

असफलताओं के पीछे एक ही प्रधान कारण रहता है कि जितनी तत्परता और जितने मनोयोगपूर्वक प्रयत्न किया जाना चाहिए था, उतना नहीं हुआ। असफलता यही उपदेश देने आती है कि लक्ष्य तक पहुँचने के लिए अधिक हिम्मत, अधिक बहादुरी और अधिक निष्ठा की जरूरत थी जो पिछली बार पूरी नहीं की जा सकी। अगली बार अधिक सतर्कता और मेहनत के साथ तत्पर होना चाहिए ताकि सम्भावना संदिग्ध रहने का कोई कारण शेष न रह जाये।

अँग्रेजी कहावत है कि 'परमात्मा उनकी मदद करता है जो अपनी मदद आप करते हैं।' संस्कृत में एक उक्ति है—'उद्योगी पुरुषों को ही लक्ष्मी मिलती है।' निस्संदेह प्रबल पुरुषार्थ पहाड़ों को काटकर अपना रास्ता बना लेता है। प्रयत्न की प्रबलता को देखकर अनेक सहयोगी खड़े हो जाते हैं और साधनों के अभाव की आवश्यकता पूरी करते हैं। यह प्रबल प्रयत्न उन्हीं के द्वारा सम्भव है जिनकी संकल्प शक्ति उत्कट हो। 'जहाँ चाह वहाँ राह' एक तथ्य है जो मनस्वियों द्वारा अनेक बार आजमाया जा चुका है। रामायण का यह प्रतिपादन अक्षरशः सही है—जिहि कर जिहि पर सत्य सनेहू, सो तेहि मिलत न कछु संदेहू। सच्चा स्नेह अर्थात् तीव्र आकांक्षा। तीव्र आकांक्षा अर्थात् दृढ़तापूर्वक अभीष्ट पथ पर तब तक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चलते रहने का अडिग संकल्प, जब तक कि मंजिल तक पहुँच न जाया जाय।

अगणित संभावनाओं का पुञ्ज मनुष्य इसीलिए पिछड़ा पड़ा रहता है कि उसकी संकल्प-शक्ति क्षीण होती है। जैसी-तैसी परिस्थिति में पड़े रहने में ही जिसे संतोष हो, जो उच्च स्थिति प्राप्त करने और आगे बढ़ने के लिये आतुर नहीं है, उसे प्रगति-पथ पर अग्रसर करने वाली परिस्थितियाँ अनायास नहीं मिल सकतीं। थाली में परोसी रोटी भी जब-तक ग्रास तोड़ने और चबाने का पुरुषार्थ न किया जाय, पेट में अपने आप नहीं पहुँचती। पुरुषार्थ के प्रतिफल ही समृद्धि और सफलता के रूप में सामने आते रहते हैं। पर यह पुरुषार्थ अनायास ही नहीं हो जाता। परिश्रम करने में जो कष्ट उठाना पड़ता है, उसे सहन करने के लिए शरीर और मन सहज ही तैयार नहीं हो जाते हैं, इसके लिये संकल्प का चाबुक चाहिए। इसके बिना आलस्य और प्रमाद का किसी प्रकार दिन गुजारने वाला ढर्रा ही अभ्यस्त बना रहता है। उसे बदलने के लिये जिस उथल-पुथल की आवश्यकता पड़ती है, उसे सुदृढ़ संकल्प ही पूरा कर सकता है।

ऐसी घटनाओं से इतिहास के अगणित पृष्ठ भरे पड़े हैं जिनमें योग्यता, साधन एवं परिस्थिति के अनुकूल न होने पर भी हिम्मत के धनी लोगों ने अपनी इच्छाशक्ति का सहारा लेकर किसी बड़े प्रयोजन के लिये कदम बढ़ाया और उपहासों और अवरोधों के बावजूद जब वे अभीष्ट मार्ग पर चलते ही रहे तो आरम्भ में कठिन ही नहीं, असम्भव लगने वाला लक्ष्य सरल होता चला गया।

जो अवरोधों की आशंका को बढ़ा-चढ़ाकर देखते हैं और केवल कठिनाइयों का ही लेखा-जोखा लेते रहते हैं, उनकी सारी शक्ति उस उधेड़बुन में ही नष्ट हो जाती है। निराशात्मक चित्र खींचने में ही उनकी सारी कल्पना निरस्त हो जाती है। इतने कम साधनों में इतनी प्रगति कैसे हो सकती है ? इन परिस्थितियों में आगे बढ़ सकना कैसे सम्भव है ? ऐसे लेखा-जोखा बताते रहने वालों को ये विदित ही नहीं है कि मनुष्य के अदम्य साहस और उत्कट संकल्प में कितना बल है। ऐसे लोग यदि महामानवों के जीवन-क्रम पढ़ें तो उन्हें पता चलेगा कि मात्र अवरोध ही सब कुछ नहीं, उनके कारण ही प्रगति अवरुद्ध नहीं पड़ी रहती। मनुष्य की इच्छाशक्ति की कमी ही वह प्रमुख कठिनाई है, जिसके कारण प्रसुप्त क्षमताएँ, अद्भुत सम्भावनाएँ उभरकर आगे नहीं आने पातीं। यदि अदम्य साहस का परिचय दिया जाय तो उन साधनों का इकट्ठा होना आरम्भ हो जाता है, जिनकी सफलता के लिये आवश्यकता थी। असफलताओं के इतिहास में संकल्प-शक्ति का सबसे बड़ा योगदान है। संकल्प-शक्ति असमर्थों को समर्थ बना सकती है और असफलता की आशंका को सफलता की सम्भावना में परिवर्तित कर सकती है।

अपने दोष-दुर्गुणों से निबटने में संकल्प ही प्रधान रूप से सहायक होता है। यह क्षमता जिसने उत्पन्न कर ली, वह अपने उन दोषों पर विजय प्राप्त कर सकता है, जो आगे बढ़ने वालों के मार्ग को सबसे अधिक रोकते हैं। यह विचार सही नहीं है कि साधन अथवा सहयोग के अभाव में काम रुका पड़ा रहता है। वास्तव में साधन और सहयोग अनायास ही नहीं टपकते, उन्हें उपलब्ध करने के लिये आकर्षक व्यक्तित्व चाहिए। आकर्षक व्यक्तित्व में यह विशेषता होती है कि वह साथी-समर्थक और सहायकों को कहीं से भी खींचकर अपने पास इकट्ठे कर लेता है। यह आकर्षक व्यक्तित्व उत्पन्न करने के लिये अपने आलस्य, प्रमाद, अनुत्साह, कटु व्यवहार, निराशा, भय, अधीरता आदि दुर्गुणों को दूर करना पड़ता है। इसके बिना न व्यक्तित्व में चमक आती है और न प्रामाणिकता प्रकट होती है।

मनुष्य की सबसे बड़ी क्षमता उसकी संकल्प-शक्ति है। कल्पना और इच्छा मात्र से काम नहीं चलेगा। शेखचिल्ली की तरह दिवास्वप्न देखते रहने से कुछ प्रयोजन सिद्ध नहीं होता। हमें संकल्पवान् होना चाहिए। सोच-समझकर लक्ष्य निर्धारित करना और फिर मनोयोग एवं पुरुषार्थ से एकत्रित इस प्रयोजन में लगा देना, यही संकल्प की प्रखरता का चिह्न है। सफलता उन्हें वरण करती है जो धैर्यवान् हैं, देर तक अभीष्ट की पूर्ति का इन्तजार कर सकते हैं और तब-तक निर्धारित पथ पर चलते रहने की हिम्मत रखते हैं, जब तक कि मंजिल तक पहुँच न जाया जाय। विजयश्री ऐसे ही धैर्यवान, पुरुषार्थी लोगों को नसीब होती है।

पुरुषार्थ ने भाग्य पलट दिया

अमेरिका के प्रसिद्ध सामयिक पत्र 'न्यूयार्क ट्रिब्यून' का संचालक एक गरीब किसान का लड़का था। घर पर पिता के न रहने के बाद जब पेट पालने की भी दिक्कत हो गई तो वह १९-२० साल की आयु में अपने पुराने कपड़ों की गठरी सिर पर रखकर पैदल रोटी की तलाश में न्यूयार्क की तरफ चल पड़ा। उसका साहस देखकर उसके पास-पड़ौसियों ने समझाते हुए कहा—'होरेस ! कहाँ दुनिया में भटकने के लिये जा रहा है। घर रहकर मेहनत-मजदूरी कर और गरीबी में अपनी गुजर-बसर कर। परदेश में कहीं खो जायेगा।'' होरेस अपनी धुन का पक्का था। वह क्यों रुकने लगा ? वह पड़ौसियों की सहानुभूति को धन्यवाद देकर और यह कहकर कि—''मुझे तो अब यह देखना है कि गरीबी और पुरुषार्थ में कौन ज्यादा शक्तिशाली है ? जब परमात्मा ने हाथ-पैर दिये हैं और उनमें ताकत भी, तो यह बात किसी तरह भी समझ में आने वाली नहीं है कि इतना दुःखी और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभावग्रस्त जीवन बिताया जाय। रास्ते में पड़े रोड़े को लोग हटाते हैं। घर में रुके पानी का अवरोध दूर करते हैं, तब जीवन के विकास-पथ पर अड़ी इस गरीबी को क्यों न दूर किया जाए ? यह प्रश्न अपना कोई उत्तर नहीं रखता। अलबिदा, मेरे शुभचिन्तको ! कभी-कभी मुझे याद कर लेना।''

होरेस चला गया और लोग उसे देखते रहे। उसके इस उत्साह तथा दृढ़ निश्चय को देखकर और उसके मुख पर इससे प्रकट आभा की चमक को देख लोगों को ऐसा आभास हुआ जैसे होरेस किसी गरीब किसान का साधारण लड़का नहीं बल्कि जीवन-सफर का एक वीर योद्धा है, जो विजय-वरण के लिये जा रहा है।

सोचना होगा, उन लोगों को—जो गरीबी और साधनहीनता का रोना लिए बैठे रहते हैं। वे जीवन में कुछ कर दिखाने के लिए उठ खड़े होंगे कि जब गरीब और अत्यन्त गरीब किसान का एक ग्रामीण बालक यह हिम्मत बाँध सकता है, विश्वास और उत्साह रख सकता है, तब वह खुद क्यों नहीं कुछ करें ? वही हाथ, वही पैर और वही शक्ति जब परमात्मा ने उनको भी दी है तब यही कहना होगा कि गरीबी को भाग्य अथवा भगवान समझने वाले और कुछ नहीं, निराशा तथा निष्क्रियता के रोगी हैं और दरिद्रतापूर्ण जीवन जीने के इतने अभ्यस्त हो चुके हैं कि दूसरी तरफ सोच सकने की उनकी शक्ति लुंज हो गई है।

होरेस न्यूयार्क आया। बड़ा भारी शहर, बड़ी व्यस्तता, बड़ा कोलाहल और बड़ी भाग-दौड़। कोई भी कम हिम्मत, निर्बल मन और निरुद्देश्य व्यक्ति होता तो वह उस विशाल नगर में पहुँचकर घबरा जाता और यही सोचने लगता कि यहाँ आकर बड़ी गलती की। यहाँ पर कोई भी अपना परिचित और कोई भी तो ऐसा स्थान नहीं है। किसके पास जाऊँ या कहाँ पर ठहरूँ ? अवश्य ही यह अनजानी व्यस्तता उसे अपने में डुबोकर अस्तित्वहीन बनाकर ही छोड़ेगी।

किन्तु होरेस के सोचने का ढंग भिन्न था—''अहहः कितना काम है, कितने अवसर हैं, कितने मनुष्य और उनके बीच बहने वाला कितना पैसा है ? इतनी भरी भीड़ में किसी एक से परिचय कर लेना, इतनी व्यस्तता एवं आवश्यकता में कोई छोटा-मोटा काम पा लेना कोई बड़ी बात नहीं है। मैं ठीक स्थान पर आया हूँ, अपने ध्येय में अवश्य सफल हो जाऊँगा।''

होरेस एक से मिला, दो से मिला, दो-चार-छः से मिला—किन्तु इन्कार-ही-इन्कार। यही था कि उसका विश्वास हिल जाता, आशा धूमिल हो जाती। किन्तु वह निराश अथवा हतोत्साहित होने तो नहीं आया था। वह तो आया था—जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन लाने, उज्ज्वल भविष्य के द्वार खोलने और जान-बूझकर संघर्ष लेने, जिससे मनुष्य का विकास-पथ प्रशस्त होता है और एक ऐसी लोकप्रियता प्राप्त होती है जो हजारों-लाखों में एक बना देती है।

इन्कार क्यों होता है ? यह सोचकर उसने अपनी ओर देखा कि उसके कपड़े गन्दे और अस्त-व्यस्त थे। दोपहर भर न कुछ खाया और न कुछ काम किया। एक बड़े नल के नीचे अपनी और अपने कपड़ों की खूब सफाई की और शाम को एक नए उत्साह, नई ताजगी और नई आशा से काम की तलाश में निकला। उसने तरक्की की और जाने मिलने का पहला कदम 'आत्म-व्यवस्था' को ठीक कर लिया। पहले ही स्थान पर उसे अखबार बेचने (हाकर) वाले का काम मिला।

होरेस ने अपना काम शुरू किया और इस आकर्षक ढंग से समाचारों की आवाज लगा-लगाकर सुबह-शाम अखबार बेचना शुरू किया कि न चाहते हुए भी लोग अखबार खरीद लेते थे। कुछ ही समय में वह इतना लोकप्रिय हो गया कि अखबार की एजेन्सी चलाने की स्थिति में आ गया। उसने २० वर्ष की आयु में एजेन्सी का काम किया और जब २५ साल की आयु में इस विचार से काम छोड़ा कि स्वयं अपना एक अखबार निकालेगा। तब उसके पास कुछ पैसे ही नहीं, इतनी योग्यता भी थी जिससे कि बखूबी काम चलाया जा सकता था।

कोई काम करने के लिये उसकी जानकारी जरूरी है। होरेस को अखबार निकालना था। प्रेस और पत्रकारिता का ज्ञान सीखना था। निदान उसने उस दिशा में एक छोटे से कम्पोजीटर के पद से काम सीखना शुरू किया। अपनी तन्मयता, तत्परता तथा जिज्ञासा के आधार पर उसने शीघ्र ही कम्पोजीटरी में दक्षता और पत्रकारिता के अन्य गुणों को प्राप्त कर लिया। प्रेस तथा पत्र का पूरा काम सीख जाने पर उसे एक प्रेस मालिक के साथ साझा मिल गया और अखबार का काम शुरू हो गया। उसका 'लौग केबिन' अखबार निकला और सैकड़ों से बढ़ता-बढ़ता ९० हजार प्रतियों तक निकलने लगा और वह एक सफल पत्रकार बन गया। अखबार की इस उन्नति से होरेस के साझीदार की नीयत खराब हो गई और उसने उससे सम्बन्ध-विच्छेद कर लेने को कहा। होरेस ने जरा भी बुरा न माना और खुशी से तैयार हो गया। उसे अपनी योग्यता एवं परिश्रम पर पूरा विश्वास था। अनेक मित्रों ने राय दी कि वह साझीदार के विरुद्ध मुकदमा दायर करे। किन्तु उसने यह कहकर अपना दूसरा काम जमा लेने का उपक्रम शुरू कर दिया कि जितना समय और पैसा वह मुकदमे में खराब करेगा उतने में दूसरा अखबार चला लेगा, हुआ भी ऐसा ही।

होरेस ने शीघ्र ही 'न्यूयार्क ट्रिब्यून' की स्थापना की और परिश्रम करने लगा। अखबार तेजी से चल निकला। शीघ्र ही उसकी बिक्री इतनी बढ़ गई कि उसे छापने के लिये एक ओटोमेटिक मशीन लगानी पड़ी और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वह न्यूयार्क ही नहीं, पूरे अमेरिका का माना हुआ सफल तथा धनवान पत्रकार बन गया।

यह है एक गरीब किसान के बिना पढ़े-लड़के की संक्षिप्त कहानी, जिसे पढ़कर ऐसा कौन हो सकता है जो अब भी यह कह सके कि गरीबी अनुन्नत जीवन जीने के लिये एक ऐसी मजबूरी है, जिसको दूर नहीं किया जा सकता। होरेस की इस संक्षिप्त उन्नति-कथा को देखने से तो ऐसा पता चलता है कि जैसे उसके हाथ में पारस का गुण आ गया था, जिससे कि उसकी छुई मिट्टी सोना बनती चली जाती थी। बीच में न तो उसे कोई अवरोध आया और न निराशा की परिस्थितियाँ। किन्तु नीचे से ऊपर उठने में कितना खून-पसीना एक करना पड़ता है, इसे वे पुरुषार्थी तथा पराक्रमी व्यक्ति ही जानते हैं, जिनमें उन्नति करने का हौसला होता है और उसको पूरा करने के लिए जीवन-संग्राम में उतर पड़ते हैं। इस उन्नति, इस विकास और इस सफलता के लिये जीवन-संघर्ष में कितना सुख, कितनी शांति और कितना सन्तोष होता है ? यह तो सदुद्देश्य लेकर उतरने वाले योद्धा ही जान सकते हैं।

ऐसे न जाने कितने पुरुषार्थी पुरुष इस संसार में हो गये हैं और होते रहेंगे, जो गरीबी को ईश्वर का अभिशाप नहीं, बल्कि अपनी निज की कमी मानते हैं और उसे ललकार कर जीवन-क्षेत्र से भगाकर निराशा के रोगी और अकर्मण्यता के दास आलसियों के लिए उदाहरण बनते रहते हैं और अनेक उनके जीवन से शिक्षा एवं प्रेरणा लेकर आगे बढ़ते, चढ़ते और निर्धन से धनवान, निम्न से उच्च बनते रहते हैं।

अपना संकल्प जगाइये, आप में बड़ी शक्ति है

शारीरिक अंग-प्रत्यंग और इन्द्रियाँ संसार में सबको समान रूप से मिली हैं। किन्तु फिर भी मनुष्य के जीवन-क्रम और गतिविधियों में भारी अन्तर पाया जाता है। जय-पराजय, सफलता-असफलता, जीवन और मृत्यु के द्वन्द्व निरन्तर चलते रहते हैं, जो व्यक्ति अपने आन्तरिक क्षेत्र में फैली हुई संकल्प-शक्ति का प्रयोग नहीं करते, उन्हें पराजय, असफलता और मृत्यु प्राप्त होती है। पर जिनके संस्कारों में दृढ़ता, तीव्र मनोबल और सुदृढ़ संकल्प-शक्ति विद्यमान है; जय, जीवन और सफलता सदैव उनकी दासी बनकर काम करती हैं। संकल्पवान पुरुष ही जीवन-संग्राम में विजय करते हैं, कमजोर इच्छाशक्ति वालों का साथ प्रकृति भी नहीं देती है।

उपरोक्त पंक्तियों में हमारा अभिप्राय गरीबी या अमीरी के साथ उन्नति या जीवन की असफलता का सम्बन्ध जोड़ने का नहीं है। हमारा अभिप्राय केवल यह बताने का है कि जहाँ जिस वातावरण में संकल्प की कमी रहेगी, वहाँ विभूतियाँ न हो सकेंगी। जहाँ दृढ़इच्छा शक्ति होगी, तीव्र आकांक्षा या अभिरुचि होगी वहाँ पैसे का, साधन और सहयोग का अभाव भले ही हो, पर धीरे-धीरे अनुकूल वातावरण एकत्रित हो जायेगा और मनोवांछित सिद्धि मिलकर रहेगी।

पुराणों में ऐसा वर्णन आता है कि स्वर्ग में एक कल्पवृक्ष है, जिसके पास जाने में कोई भी कामना अपूर्ण नहीं रहती है। ऐसा एक कल्पवृक्ष इस पृथ्वी में भी है वह है—संकल्प का कल्पवृक्ष। जब किसी लक्ष्य की, ध्येय की, कामना की पूर्ति का हम संकल्प लेते हैं तो सजातीय विचारों, सुझावों की एक शृंखला दौड़ी हुई चली आती है और अपने लिए उपयुक्त रास्ता बनाना सुगम हो जाता है। बरसात का पानी उधर ही दौड़ता है जिधर गड्ढे होते हैं। सफलता के लिए अपेक्षित परिस्थितियाँ ढूँढ़ लाने की शक्ति संकल्प में है।

संध्या, उपासना, दान, अनुष्ठान, यज्ञ, पुरश्चरण आदि में आचार्य यजमान को संकल्प ग्रहण कराते हैं। उससे उनके उद्देश्य में कोई नवीनता भले ही न आती हो पर सारी मानसिक चेष्टाएँ एक ही लक्ष्य की ओर लग जाती हैं। फलस्वरूप आने वाली बाधा, कठिनाई का विचार पहले ही आ जाता है, जिससे प्रतिकूल परिणाम से बच जाते हैं। मानसिक शक्तियों का विकेन्द्रीकरण इतना महत्त्वपूर्ण होता है कि उसे जिस कार्य में लगा दिया जाय, उधर ही आशाजनक सफलता मिलने लगती है।

संकल्प क्रिया-शक्ति में तन्मय की प्रतिष्ठा का नाम है। "यह मेरा संकल्प है" का अर्थ है, अब मैं इस कार्य में प्राण, मन और समग्र शक्ति के साथ संलग्न हो रहा हूँ। इस प्रकार की विचारणा, दृढ़ता ही सफलता की जननी है। संकल्प तप का, क्रिया-शक्ति का विधायक है इसी से उसमें अनेकों सिद्धियाँ और वरदान समाहित हैं।

जिन विचारों से मनोभूमि में स्थायी प्रभाव पड़ता है और जिनसे अन्तःकरण में अमिट छाप पड़ती है, वे पुनरावृत्ति के कारण स्वभाव के एक अंग बन जाते हैं। ऐसे विचारों का अपना एक विशेष महत्त्व होता है। इन विचारों को क्रमबद्ध रीति से सजाने की क्रिया जिन्हें ज्ञात होती है, वे अपना भाग्य, दृष्टिकोण और वातावरण परिवर्तित कर सकते हैं और इस परिवर्तन के फलस्वरूप जीवन में कोई विशेष दृश्य या स्थिति उत्पन्न कर सकते हैं।

आवश्यकता को आविष्कार की जननी कहा जाता है। जब किसी बात की तीव्र इच्छा होती है तो उसे पूर्ण करने के लिए साधनों की तलाश आरम्भ होती है। अतः कोई न कोई उपाय भी निकल ही आता है। वह इच्छा यदि प्रेरक है, उसे पूरा करने की भूख यदि भीतर से उठी है और उसके पीछे पर्याप्त प्राण और जीवन लगा हुआ है कि "मैं इस वस्तु को प्राप्त करके रहूँगा, चाहे कितनी ही बाधाएँ क्यों न आयें, प्रयत्न निरन्तर जारी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रखूँगा चाहे कितने ही निराश करने वाले अवसर क्यों न आयें।'' इस प्रकार के संकल्प की यदि मन में गहरी और सुदृढ़ स्थापना हो जाय तो लक्ष्य तक पहुँचना बहुत सरल हो जाता है। दूसरे के लिये कठिन जान पड़ने वाला कार्य भी उस संकल्पवान के लिये सामान्य क्रिया से अधिक नहीं रह जाता।

बराबर आगे बढ़ते रहने के लिये, बराबर नई शक्ति प्राप्त करते रहना भी आवश्यक है। उन्नति का क्रम टूटना नहीं चाहिये, आगे बढ़ने से रुकना या हिचकिचाना नहीं चाहिये। पर यह तभी सम्भव है जब हमारा संकल्प, हमारा उद्देश्य अटूट साहस, श्रद्धा एवं शक्ति से ओत-प्रोत हो। आधे मन से, उदासीन होकर काम करने वाला फूहड़ कहा जाता है। उसे कोई विशेष सफलता मिल भी नहीं पाती।

''अगर मुझे अमुक सुविधाएँ मिलतीं तो मैं ऐसा करता।'' इस प्रकार की कोरी कल्पनाएँ गढ़ने वाले आत्म-प्रवंचना किया करते हैं। भाग्य दूसरों के सहारे विकसित नहीं होता। आपका भार ढोने के लिए इस संसार में कोई दूसरा तैयार न होगा। हम यह यात्रा अपने पैरों से ही पूरी कर सकते हैं। दूसरे का अवलम्बन लेंगे तो हमारा जीवन कठिन हो जायेगा। हमारे भीतर जो एक महान चेतना कार्य कर रही है उसकी शक्ति अनन्त है, उसी का आश्रय ग्रहण करें तो प्रत्यक्ष आत्म-विश्वास जाग जायेगा। तब तुम दूसरों के भरोसे भी नहीं होंगे। संकल्प का ही दूसरा रूप है आत्म-विश्वास। वह जाग्रत हो जाय तो अपना विकास तेजी से, अपने आप पूरा कर सकेंगे। आज हम जैसे कुछ हैं, अपने जीवन को जिस स्थिति में रखे हुये हैं अपने निजी विचारों के परिणाम हैं। जैसे विचार होंगे. भविष्य का निर्माण भी उसी तरह ही होगा।

संकल्प का सम्बन्ध सत्य और धर्म से होता है। उसका प्रयोग अधर्म और अत्याचार के लिये नहीं हो सकता। अधर्म पतन की ओर ले जाता है पर यह संकल्प का स्वभाव नहीं है। अधर्म से धर्म की ओर, अन्याय से न्याय की ओर, असत्य से सत्य की ओर, कायरता से साहस की ओर, कामुकता से संयम की ओर, मृत्यु से जीवन की ओर अग्रसर होने में संकल्प की सार्थकता है। आचार्यों ने उसे इसी रूप में लिया है। भारतीय धर्म में अनुशासन की इस उद्दात्त परम्परा का ध्यान रखते हुए ही गुरुजन **''सत्यं वद''**, **''धर्मं चर''** का संकल्प अपने शिष्यों से कराते रहे हैं। आध्यात्मिक तत्त्वों की अभिवृद्धि की तरह ही भौतिक उन्नति की नैतिक आकांक्षा को बढ़ाना भी संकल्प के अन्तर्गत हीं आता है। अपने स्वार्थों के लिये अधर्माचरण शुरू कर दिया जाता है, वहाँ संकल्प का लोप हो जाता है और वह कृत्य अमानुषिक, आसुरी, हीन और निकृष्ट बन जाता है। संकल्प के साथ जीवन-शुद्धता की अनिवार्यता भी जुड़ी हुई है। संकल्प की इस परम्परा में अपनी उज्ज्वल गाथाओं को ही जोड़ा जा सकता है। निकृष्टता से, पाप से, स्वार्थ की संकीर्णता और अत्याचार द्वारा संकल्प-जयी नहीं बना जा सकता।

अनमनस्कता, उदासीनता और मुर्दादिली को छोड़कर ऊँचे उठने की कल्पना मनःक्षेत्र को सतेज करती है। इससे साहस, शौर्य, कर्मठता, उत्पादन शक्ति, निपुणता आदि गुणों का आविर्भाव होता है। इन गुणों में शक्तियों का वह स्रोत छुपा हुआ है, जिससे सन्तोष, सुख और आनन्द का प्रतिक्षण रसास्वादन किया जा सकता है। निकृष्टता मनुष्यों में दुर्गुण पैदा करती है, जिससे चारों ओर से कष्ट और क्लेश के परिणाम ही दिखाई दे सकते हैं। संकल्प को इसीलिये जीवन की उत्कृष्टता का मन्त्र समझना चाहिये। उसका प्रयोग मनुष्य जीवन के गुण विकास के लिये होना चाहिये।

अपने को असमर्थ, अशक्त एवं असहाय मत समझिये। ''साधनों के अभाव में हम किस प्रकार आगे बढ़ सकेंगे ?'' ऐसे कमजोर विचारों का परित्याग कर दीजिये। स्मरण रखिये ! शक्ति का स्रोत साधनों में नहीं संकल्प में है। यदि उन्नति करने की, आगे बढ़ने की इच्छाएँ तीव्र हो रही होंगी तो आप को जिन साधनों का आज अभाव दिखलाई पड़ता है, कल वे निश्चय ही दूर हुये दिखाई देंगे। संकल्प में सूर्य-रश्मियों का तेज है, वह जाग्रत चेतना का शृंगार है, विजय का हेतु और सफलता का जनक है। संकल्प से प्राप्त मन के बल द्वारा स्वल्प साधनों में भी मनुष्य अधिकतम विकास कर सकता है और मस्ती का जीवन बिता सकता है।

उन्नति की आकांक्षा रखना मनुष्य का स्वाभाविक गुण है। उसे आगे बढ़ना भी चाहिये। पर यह तभी सम्भव है जब मनुष्य का संकल्प बल जाग्रत हो। जो लोग अपने को दीन, हीन, असफल और पराभूत समझते हों, संकल्प उनके लिये अमोघ अस्त्र है। संकल्प के द्वारो प्रत्येक मनुष्य जय, जीवन और सफलता प्राप्त कर सकता है।

वह जो शरीर सहन नहीं कर सकता

प्रेम व प्रसन्नता का अभाव। शरीर में जितने भी रोग होते हैं, हम यह तो नहीं कह सकते कि उनका सम्बन्ध कितने प्राचीन समय और पिछले जन्मों से होता है पर यह निश्चित है कि शरीर में रोग और विजातीय द्रव्य, जिससे बीमारी और दुर्बलता का विकास होता है, अधिकांश मनोविकारों की देन होते हैं। चिन्ता, द्वेष, क्षोभ, दम्भ, पाखण्ड, अभिमान, असत्य भाषण, चुगली, निराशा, तृष्णा, कुत्सा का सदैव मस्तिष्क में छाये रहना, यही वह कारण हैं, जिनसे रोग पैदा होते हैं। शरीर और सब कुछ सह सकता है पर यही वह दूषित तत्त्व हैं, जो स्वास्थ्य और आरोग्य को नष्ट कर डालते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यदि मनुष्य अपने मस्तिष्क में रचनात्मक और प्रसन्नतादायक विचार रखकर जीवन-यापन कर सके तो वह सम्पूर्ण आयु स्वस्थ और नीरोग जीवन जी सकता है। औषधि की आवश्यकता को भी वह निरस्त कर सकता है।

नैपोलियन सेंट हेलेना में था, तब उसके पेट में दर्द रहा करता था। डॉक्टरों ने निरीक्षण करके बताया पेट का कैंसर या गैस्टिक अल्सर है। औषधि प्रारम्भ हुई। बहुत दिन तक दवा लेते रहने के बाद भी पेट ठीक न हुआ। एक दिन उसे ऐसा लगा कि दवा पेट ठीक नहीं कर सकती। लेकिन क्यों ? उसने यह जानने का निश्चय किया। डाक्टर दवा लेकर आया तो उसने कहा—"महोदय ! यह दवा आज आप भी लें तो मैं अच्छा हो जाऊँ।" डाक्टर हैरान था कि बोनापार्ट कह क्या रहे हैं। पर वीरवर नैपोलियन की बात न मानने की हिम्मत उसमें नहीं थी। बेचारे ने दवा पी, थोड़ी देर में उसकी तबियत खराब हो गई। नैपोलियन ने कहा—"जो दवा डाक्टर को अच्छा नहीं कर सकती, वह मुझे तीन जन्म में भी अच्छा नहीं कर सकती। उसे उन दिनों सैनिकों के विद्रोह का भीतरी भय बना रहता था, उस भय को उसने निकाल दिया और मृत्यु को निश्चित समझकर पुनः प्रसन्न रहने लगा। डाक्टरों ने उसकी दुबारा परीक्षा की तो वे हैरान थे कि उसके रोग का पता ही न था। कहावत हो गई—"नैपोलियन से रोग भी भय खाते हैं" पर सही बात यह थी कि उसके मनोबल ने उन अवांछनीय तत्त्वों को मार दिया, जो पेट की बीमारी के रूप में उछल रहे थे।

अमेरिका में एक सर्वेक्षण में पाया गया कि पेट के बीमारों में से अधिकांश मानसिक दुश्चिन्ताओं से ग्रस्त होते हैं। आर्थिक कारणों को लेकर जो लोग चिन्तित रहते हैं, उन्हें पेट के विकार प्रायः हमेशा बने रहते हैं। वैवाहिक जीवन सुखमय न हो, परिवार में कलह रहती हो, ऐसे लोगों को पेट की बीमारियाँ घेरे रहती हैं। १६ प्रतिशत पेट के रोगी वह होते हैं, जो सांसारिक संघर्षों के प्रति अपना मनोबल खो चुके होते हैं।

द्वितीय महायुद्ध के समय एक बार जर्मन सैनिकों ने मित्र राष्ट्रों की सेनाओं पर तीव्र हमले प्रारम्भ किये। उससे सैनिकों का मनोबल टूट गया और उनमें से अधिकांश पेट के रोगी होकर बिस्तरों में पड़ गये। डाक्टरों ने रिपोर्ट दी कि सिपाहियों का हौंसला टूट जाने से उन्हें हर समय दुश्चिन्ताएँ घेरे रहती हैं। उससे वे कभी अधिक खा जाते हैं, कभी उन्हें ध्यान ही नहीं रहता कि खाया या नहीं ? जब तक ध्यान आता है, तब तक स्वाभाविक भूख मिट चुकी होती है। पेटों में कोई व्रण नहीं और कोई कीटाणु नहीं, पानी भी जाँच करके ही दिया जाता था, केवल हिम्मत हारने का ही परिणाम था कि सैकड़ों सैनिक पेट के बीमार हो गये।

भगवान ने मनुष्य शरीर ऐसा बनाया है कि यदि उसे खराब न किया जाये, उसमें मानसिक चिन्ताओं, कामनाओं, काम-वासना आदि दूषित विचारों का रोपण न किया जाये तो बड़े से बड़े प्राकृतिक परिवर्तन मौसम के झटके और भूल से ग्रहण किये हुये विषैले खाद्य भी शंकर और मीरा के द्वारा विषपान के समान पचाये जा सकते हैं। मन खराब न हो तो तन कभी बिगड़ेगा नहीं, मौसम और परिस्थितियों में चाहे कितने ही जबर्दस्त परिवर्तन क्यों न होते रहें।

एक बार अमेरिका में १० अमेरिकी उड़ाकों ने उड़ान भरी। उन्हें किसी प्रकार के तूफान की आशंका नहीं थी, इसलिये उन्होंने 'आइस कैप' भी नहीं बाँधी थी। दुर्भाग्य से ग्रीनलैण्ड में वे एक बर्फीले तूफान में फँस गये। ८८ दिन तक वे इसी अवस्था में पड़े रहे। शीत से बचने के लिये उनके पास पर्याप्त वस्त्र भी नहीं थे। तापमान शून्य से भी ४० डिग्री कम था। १० दिन बाद जब खोजी विमानों ने आकाश से झाँक कर देखा तो वे सभी सैनिक खेलने और आमोद-प्रमोद में मस्त थे। जहाज उतर नहीं सकते थे, इसलिए १०वें दिन उन्हें आहार गिराना प्रारम्भ किया था। ८८ दिन तक वे ऐसे ही रहे और जब तूफान शांत हुआ, वे बाहर निकाले गये तो स्वास्थ्य परीक्षण से यह पाया गया कि इतनी भयंकर सर्दी के बाद भी उनके शरीर में स्वास्थ्य की खराबी के कोई लक्षण नहीं थे।

फिलफीडिया (अमेरिका) की एक नर्स हेमेना का विवाह हुए कुछ ही दिन हुए थे कि वह एकाएक बीमार पड़ गई। उस समय भी वह सदैव प्रसन्न और हँसमुख रहती थी। उसका पति जब भी उसे मिलने जाता। उदास होकर जाता पर वहाँ से लौटता तो एक अजीब गुदगुदी लेकर आता। पत्नी उसे छेड़े और मजाक किए बिना न रहती। डाक्टर भी उसकी बेढब मस्ती से प्रभावित हुए बिना न रहे। किसी ने उसे अप्रसन्न नहीं देखा।

एक दिन अचानक उसका ज्वर बढ़ना प्रारम्भ हुआ। १०७ डिग्री तक पहुँचते-पहुँचते डाक्टरों ने घोषणा कर दी कि इसके मस्तिष्क को क्षति पहुँचेगी। यदि मृत्यु से बच भी गई तो निश्चित रूप से पागल हो जायेगी, पर ज्वर इतने पर भी नहीं थमा। ११० डिग्री तक पहुँचकर उसने साँस ली। फिर बुखार उतरना प्रारम्भ हुआ। तापमान सामान्य हो जाने पर डाक्टरों ने परीक्षण किया तो वे हैरान थे कि उसके शरीर पर इतने बुखार का भी कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

डा. पाल एच. नेमविट ने ऐसी अनेक घटनाओं का संकलन कर लिखा है कि "मनुष्य शरीर से बढ़कर सहनशील और टिकाऊ यन्त्र" अभी तक बना नहीं। यदि उसे हमेशा प्रसन्नता और आमोद-प्रमोद से चिकनाया जाता रहे तो न कभी जंग लगे, न ज्वर आये। आये भी तो उसका बाल भी बाँका न कर पाये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य भूलों का पुतला है। अब तक सम्भव है, भूलें बहुत हुई हों, उनके जो दण्ड प्रकृति द्वारा हमें मिल रहे हैं, या मिलने वाले हैं, उन्हें तो हम साहसपूर्वक सहन करके काट दें पर आगे के लिए यह उचित है कि मन में दुश्चिन्ताओं का, मनोविकारों का बोझ न पड़ने दें। कहते हैं मनुष्य खाना नहीं शक्ति और सौन्दर्य खाता है। जब वह भोजन शान्ति, सन्तोष और प्रसन्नता में करता है। शरीर पोषण के लिये शक्ति पेट में बनती है। शक्ति और ओजस् के कण जो सारे शरीर में बिखरे घूमते हैं, वह भी पेट के कारखाने में ही बनते और विकीर्ण होते हैं, यदि मानसिक दुश्चिन्ताओं का प्रकोप हो तो शक्ति का स्रोत अस्तव्यस्त हो जाता है, पाचन और शक्ति चूसने की क्रिया पर दूषित प्रभाव पड़ता है। जाँच करने पर आमाशय में कोई खराबी नहीं मिलेगी तो भी शरीर अस्वस्थ रहेगा। ऐसे व्यक्तियों के लिये भावनाओं का प्रतिदान ही रामवाण औषधि है। उन्हें हर घड़ी प्रसन्न रहने, औरों के साथ मीठा-मधुर व्यवहार करने का प्रयत्न करना चाहिए, ताकि बदले में वही उसे भी मिले। मानसिक प्रसन्नता ही जीवन है जबकि मनोविकार बोझ। जिसे शरीर कभी भी स्वीकार नहीं करता।

फिनलैण्ड की एक युवती बहुत बीमार थी। डाक्टरों ने जाँच करके बताया, उसे कैन्सर है। वह अविवाहित थी और गर्भाशय में रोग था, जिसे डाक्टरों ने असाध्य कह दिया था। युवती का जीवन अन्धकार में भटक रहा था। गौनर मैंटन नामक एक कवि उसके पड़ौस में रहता था। उसे इस लड़की से सहानुभूति थी। प्रायः उसे देखने जाया करता था। लड़की को उसका आना अच्छा लगता। वह उससे प्रेम भी करती थी। पर उसे यह विश्वास नहीं था कि मुझ रोगी से वह कभी विवाह करेगा। युवक की करुणा भी धीरे-धीरे प्रेम में बदल गई। उसने अपनी ओर से विवाह का प्रस्ताव रखा। स्वीकृति मिल गई और विवाह भी हो गया।

असाध्य लड़की जो सदैव बिस्तर पर लेटी रहती थी, चलने-फिरने लगी। यही नहीं, वह कुछ ही दिन में गर्भवती भी हो गई। जून १९६७ की बात है कि उसके पुत्र पैदा हुआ। उन्हीं डाक्टरों ने, जिन्होंने उसे असाध्य घोषित कर दिया था, फिर उसकी जाँच की, लड़के की भी मेडिकल जाँच की तो वे यह देखकर आश्चर्यचकित रह गये कि युवती और नवजात शिशु में से किसी को भी रोग का धब्बा तक नहीं था। फिनलैण्ड में कुछ दिन इस घटना की बड़ी चर्चा हुई। लोगों ने अनुभव किया मनुष्य की उच्च-भावनाओं में जबर्दस्त जीवन-शक्ति है। शरीर की सम्पूर्ण सहनशीलता इन भावनाओं का ही परिणाम है।

बच्चा बीमार पड़ जाये तो उसकी माँ रात-रात भर जागती रहती है और बिना कुछ खाये-पिये उसकी सेवा सुश्रुषा करती रहती है। उस अवस्था में अकारण किसी और को रखा जाये तो वह एक रात के जगने में ही ढीला पड़ जाये पर माँ कई-कई रात जगकर भी स्वस्थ और क्रियाशील बनी रहती है।

'साउथ ऑफ सहारा' पुस्तक में लेखक कमाण्डर अटिलियो गट्टी ने प्रसिद्ध नीग्रो जाति वाटुसी का जिक्र छेड़ते हुए लिखा है कि यह लोग संसार के सबसे अधिक लम्बे, स्वस्थ और क्रियाशील लोग होते हैं। यह लोग माँस नहीं खाते, शाकाहारी होने पर भी उनके गजब के स्वास्थ्य पर लेखक को आश्चर्य हुआ तो वह कुछ दिन इनके बीच रहा। वाटुसी लोगों के जीवन-क्रम का अध्ययन करके लेखक ने लिखा है कि वाटुसी जब बच्चे होते हैं, तभी से उन्हें उछलने, कूदने, खेलने, नाचने और सदैव प्रसन्न रहने का अभ्यास कराया जाता है। खिलाड़ी होना इस जाति के लिए आवश्यक है। इसके लिये परिवारों में ही एक ६ वर्षीय शिक्षण चलता है, जो ८ वर्ष की आयु से १४ वर्ष की आयु तक चलता है। परिणाम यह होता है कि हँसी-खुशी उनकी जिन्दगी में ढल जाती है। यह निश्चिन्तता ही उन्हें आजीवन नीरोग रखती है और शक्ति इतनी होती है कि २० मील जाकर शाम को फिर घर वापिस आ जायें, पर थकावट का कहीं नामों-निशान भी न हो। इतनी जबर्दस्त सहनशक्ति और निरोगिता का रहस्य और कुछ नहीं, भावनाओं की मस्ती है। यदि वही न हो तो लाखों की सम्पत्ति होकर भी मनुष्य सुखी नहीं रख सकता। प्रेम, प्यार, आशा, उत्साह और प्रसन्नता के अभाव को शरीर सहन नहीं कर सकता। इनके न होने पर रोग और बीमारी ही सम्भव है। दुश्चिन्ताओं से घिरे लोगों को भाग्य में मिलता भी यही है।

सुदृढ़ संकल्प बल के सहारे आरोग्य प्राप्ति

कभी माना जाता था कि कष्टसाध्य और चिरस्थायी बीमारियाँ भी छुटपुट रोगों की तरह शरीरगत खराबियों के कारण उत्पन्न होती हैं, पर अब यह माना जाने लगा है कि मन का शरीर पर पूरा नियन्त्रण है और स्वस्थता, रुग्णता के लिए भी वही उत्तरदायी है। अन्तर्द्वन्द्व, रुग्ण मानसिकता, अशुद्ध चिन्तन ही मस्तिष्क को असंतुलित करता और शरीर को ऐसे चित्र-विचित्र रोगों से व्यथित करता है, जो चिकित्सा करते-कराते भी काबू में नहीं आते।

अशुद्ध चिन्तन, अस्वस्थ भावनाएँ विभिन्न शारीरिक रोगों का कारण बनती हैं। देखा गया है कि कोई मानसिक कष्ट होने पर सारा शरीर शिथिल हो जाता है और क्रियाशक्ति में स्पष्टतः अस्तव्यस्तता दीखने लगती है। भय, चिन्ता, शोक, निराशा जैसे प्रसंगों पर किसी भी मनुष्य का चेहरा उदास और सारा शरीर शिथिल देखा जा सकता है। क्रोध, अपमान, द्वेष, प्रतिशोध की स्थिति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में किस प्रकार अंग-प्रत्यंगों में उत्तेजना दीख जाती है, इसे किसी आवेशग्रस्त पर छाये हुए भावोन्माद को देखकर सहज ही देखा-समझा जा सकता है। प्रसन्न और निश्चिन्त रहने वाले स्वस्थ रहते और दीर्घजीवी बनते हैं। इसके विपरीत क्षुब्ध रहने वाले अकारण दुर्बल होते जाते हैं और अकाल मृत्यु से असमय मरते हैं। यह तथ्य स्पष्ट करते हैं कि शरीर संस्थान पर आहार-विहार का, जलवायु का जितना प्रभाव पड़ता है, उससे कहीं अधिक भाव संस्थान का प्रभाव पड़ता है। विचारणा, भावना की शुद्धता, उत्कृष्टता ही समग्र स्वास्थ्य का मूलाधार है।

इस सन्दर्भ में चिकित्सा मनोविज्ञानियों ने गहन खोजें की हैं और पाया है कि प्रेम, मैत्री, दया, करुणा और परोपकारी विचारणाओं से ओत-प्रोत व्यक्ति स्वस्थ रहते और दीर्घजीवी होते हैं। इसके विपरीत विकृत चिन्तन एवं भावना क्षोभ से ग्रस्त मनुष्य अनेकानेक रोगों से घिरा रहता है। ''इन्फ्लुएन्स ऑफ द माइण्ड अपॉन द बॉडी'' नामक अपनी कृति में सुप्रसिद्ध चिकित्सा मनोविज्ञानी **डॉ. अलबर्ट ड्यूक** का मत है कि विक्षिप्तता, मूढ़ता, अंगों का निकम्मा हो जाना, पाण्डु रोग, केश-पतन, घबराहट, मूत्राशय के रोग, चर्मरोग, फोड़े-फुन्सी, एग्जिमा आदि अनेक स्वास्थ्यनाशक रोग मानसिक विकारों एवं भावनात्मक उद्वेलनों के परिणाम मात्र हैं। मानसिक क्षोभ, भावनात्मक उद्वेलन, निषेधात्मक चिन्तन; यह सभी सूक्ष्म शरीर की विकृतियाँ हैं, जिनका स्थूल शरीर पर सीधा प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार परिष्कृत दृष्टिकोण, स्वस्थ उदात्त चिन्तन, आदर्शवादी विचारधारा सूक्ष्म शरीर को तेजस्वी प्रखर बनाती हैं और उसका श्रेष्ठ प्रभाव स्थूल शरीर पर भी स्पष्ट देखा जा सकता है।

''ऐन आयरन विल'' नामक पुस्तक के लेखक एवं अमेरिका के प्रख्यात अध्यात्मवेत्ता **डॉ. मॉरडन** का यह कथन अक्षरशः सत्य है और भारतीय अध्यात्मोपचार की पुष्टि करता है कि ''मनुष्य अपने विचार उच्चस्तरीय बना ले, नये कर ले, चरित्र को ऊँचा उठा ले तो अपने शरीर का कायाकल्प कर सकता है।'' जब मन-मस्तिष्क की धुलाई, सफाई वैज्ञानिक उपकरणों से हो सकती है और प्राणियों एवं मनुष्यों को वशवर्ती बनाया और मनचाही दिशा में मोड़ा-मरोड़ा जा सकता है तो कोई कारण नहीं कि अध्यात्म साधना के उपचार प्रयोगों से मनोमयकोष को अधिक परिष्कृत और सबल-संपन्न न बनाया जा सके।

मनःसंस्थान अर्थात् मनोमयकोष ज्ञान, अनुभव एवं कौशल का ही नहीं, प्रतिभा का भी क्षेत्र है। उत्कृष्टता के प्रति आस्था के बीज इसी भूमि में उगते हैं। संकल्प शक्ति का उद्गम केन्द्र यही है। समूचे काय-कलेवर को अपने अंचल में यही समेटे हुए है। इस क्षेत्र के अस्त-व्यस्त और विकृत स्थिति में बने रहने पर उसकी प्रतिक्रिया शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य पर विनाशकारी प्रभाव डालती है। मनःक्षेत्र का शोधन व सशक्त किये जाने की साधना उसकी धुलाई-सफाई कर समग्र स्वास्थ्य का आधार ही नहीं खड़ी करती, वरन् उसे समुन्नत, सुसंस्कृत बनाने एवं प्रतिभा-प्रखरता से सुसज्जित करने का काम भी बहुत हद तक पूरा करती है।

संकल्प ही सफलता में परिणत होते हैं

आत्म-विश्वास को जीवन की पतवार समझा जा सकता है। इसी के सहारे जीवन रूपी नाव कठिनाइयों के मझधार से निकल पाने में सक्षम होती है। अगणित उलझन, समस्याओं एवं प्रतिकूलताओं में भी विश्वास की अमोघ शक्ति मनुष्य को प्रेरणा देती और बल का संचार करती है। आत्म-विश्वासी ही हर क्षेत्र में सफल होते हैं। संसार में जितने भी महान कार्य हुए हैं, उनमें परिस्थितियों की अनुकूलता का भय, आत्म-विश्वास का सबसे बड़ा योगदान रहा है। आत्म-विश्वासी के मार्ग में आयी कठिनाइयाँ और उलझनें उसे ध्येय पथ से विचलित नहीं कर पातीं।

जो अपने आप में अटूट विश्वास लिये चल रहा है। जीवन में प्रकाश देने वाले सभी दीपक बुझ जायँ किन्तु मनुष्य के अन्तर में विश्वास की ज्योति जलती रहे तो वह घोर अन्धकार में भी अपना पथ स्वयं ढूँढ़ लेगा। आत्म-विश्वास की ज्योति के समक्ष संसार से सभी अन्धकार तिरोहित हो जाते हैं।

संसार में जितने भी महान कार्य हुए, वे सब विश्वास की ही कृति हैं। महात्मा गाँधी के प्रबल विश्वास ने ही देश की आजादी का स्वप्न साकार किया। तिलक ने कहा था ''स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है और हम उसे लेकर रहेंगे।'' उनका यह दृढ़ विश्वास कालान्तर में मूर्त हुआ लिंकन ने अपनी डायरी के पन्नों पर लिखा, साथ ही लोगों से कहा—''मैंने अपने भगवान को वचन दिया है कि दासों की मुक्ति के कार्य को मैं अवश्य पूरा करूँगा।'' अनेकों विरोधों के बावजूद भी लिंकन ने वह महान कार्य सम्पन्न किया। कोलम्बस को विशाल सागर के पार किसी किनारे का विश्वास था। उसने अपनी साहसिक यात्रा करके अन्ततः अमेरिका की खोज कर ही ली।

विश्वास सफल जीवन का मूलतन्त्र है। **टालस्टाय** ने लिखा है, ''विश्वास जीवन की शक्ति है।'' **शेक्सपीयर** ने कहा था ''विश्वास क्या नहीं कर सकता? विश्वास हमें अथाह सागर में भी मार्ग ढूँढ़ निकालता है। वह हमें गगनचुम्बी पहाड़ों को लाँघने की शक्ति और प्रेरणा देता है। विश्वास जीवन के समस्त वरदानों का आधार है। **स्वेट मार्टेन** ने लिखा है—''विश्वास ही जीवन के उस मार्ग की खोज करता है , जो हमें मंजिल तक पहुँचा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सके।'' महात्मा गाँधी ने कहा है—''विश्वास हमारी जीवन नैया को तूफानी सागर में भी खेता है। विश्वास पर्वतों को डिगा देता है। विशाल सागर को लाँघ सकता है। विश्वास कोई कोमल पुष्प नहीं, जो साधारण वायु के झोंके से ही गिर जाय। वह हिमालय की तरह अडिग रहता है।'' सीता की खोज में गये वानर-भालू समुद्र तट पर हारकर बैठ गये। कौन इसके पार जाकर सीता का पता लगावे ? स्वयं हनुमान भी इसी चिन्ता में थे। किन्तु जामवन्त ने उनके विश्वास को जाग्रत करते हुए कहा—''हनुमान ! तुम इस समुद्र को लाँघ सकते हो।'' और आत्म-विश्वास के जाग्रत होते ही हनुमान उस विशाल सागर को खेल की तरह पार कर गये। संसार के समरांगण में, जीवन के संघर्ष में वही व्यक्ति स्थिर रह सकता है, जिसमें अदम्य विश्वास है।

जहाँ विश्वास है, वहाँ जीवन के समस्त अभाव, अभिशाप, दीनता, दारिद्र्य, गरीबी आदि निष्प्रभाव हो जाते हैं। ये जीवन के विकास-क्रम में बाधक नहीं बनते। संसार के अधिकांश महापुरुषों का जीवन इसी तथ्य का प्रतिपादन करता है। जिन्हें बढ़ने के लिए तनिक भी सहारा नहीं था, उन्होंने अपने आत्मबल के सहारे जीवन की महान सफलताएँ अर्जित कीं। अनेकों व्यक्ति अपने विश्वास के आधार पर असाधारण बन गये।

किसी भी क्षेत्र में सफलता अर्जित करने के लिए, आगे बढ़ने के लिए विश्वास का होना आवश्यक है। किसी भी ध्येय की पूर्ति के पीछे विश्वास की सत्ता नहीं होगी तो वह अपने आरम्भ काल में ही अस्त हो जायेगा। विश्वास के अभाव में मनुष्य जीवन शुष्क, नीरस, निर्जीव-सा बन जाता है। जड़ता अपने जाल में जकड़ लेती है। विश्वास के अभाव में राज-पथ पर भी मनुष्य एक कदम आगे नहीं बढ़ सकता।

विश्वास कहीं अन्यत्र ढूँढ़ी जाने वाली वस्तु या किसी की कृपा का वरदान नहीं। यह हमारे अन्तर में ही विराजमान सनातन सत्य है। आत्म-चेतना अजर-अमर, सर्वशक्ति सम्पन्न, दिव्य स्वरूप ही हमारे विश्वास का आधार हो सकता है। इस तरह आत्म-देव का परिचय प्राप्त कर उन्हीं के हाथों जीवन की पतवार सौंप देना, अपनी शक्ति और सामर्थ्य पर भरोसा रखकर निर्द्वन्द्व हो जीवन-रण में अपना कर्त्तव्यपालन करते रहना ही विश्वास का अवलम्बन लेना है। मनुष्य अपने आप में अक्षय शक्ति और निधियों का स्वामी है। मनुष्य के अन्तर में शक्ति समृद्धि का अजय स्रोत होता है। इसका परिचय होने पर दृढ़ विश्वास का अभ्युदय होता है।

चेतना के प्रतिबिम्ब में अपने अन्तर की शक्ति एवं दिव्य गुणों का परिचय प्राप्त कर उन पर दृढ़ आस्था रखने पर विश्वास का जन्म होता है। ऐसे आत्म-निर्माण जीवन-शोधन अपने में दिव्य गुणों के अभ्यास से ही सम्भव है। यह निश्चित है कि हमारे विश्वास का आधार आत्म-देव का, अपने अन्तर में स्थिति सनातन सत्य का परिचय प्राप्त करना ही है।

सामान्य तौर पर अहंकार भी विश्वास जैसा लगता है। किन्तु अहंकार का आधार भौतिक पदार्थ, स्थूल सामग्री और मनोविकार होते हैं। स्वामी रामतीर्थ ने इसी तथ्य को प्रकट करते हुए बताया है—''विश्वास राम भी है और रावण भी। आत्म-निष्ठा केन्द्रित विश्वास राम है तो अहंकार पर आधारित विश्वास रावण।'' महर्षि वशिष्ठ ने भी अपना मत व्यक्त करते हुए बताया है, ''विश्वास कुल रानी तो अहंकार बाजारू वेश्या। मूल रूप में एक स्त्री सेवा करती हुई परमार्थ जीवन व्यतीत करती है तो दूसरी खुद डूबती है और साथ दूसरों को भी डुबाती है।'' अहंकार प्रेरित विश्वास विनाश, शोषण, पीड़ा, निर्दयता का कारण बनता है। हिटलर, मुसोलिनी, सिकन्दर, नैपोलियन आदि में भी विश्वास कम नहीं था किन्तु वह अहंकार पर आधारित था और यह विश्वास उनके और जन-समाज के लिये अहित ही सिद्ध हुआ। अहंकार पर आधारित विश्वास क्लेश, अशान्ति, विनाश दुर्गति उत्पात का ही कारण बनता है जबकि आत्मनिष्ठा पर आधारित विश्वास कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी मनुष्य को सन्तोष, प्रसन्नता, सुख-शान्ति, निर्मलता प्रदान करता है। हममें अटूट विश्वास तो हो, किन्तु उसका पोषण अन्तर-चेतना, आत्मा के दिव्य गुण, शक्ति, सामर्थ्य आदि के द्वारा हो, न कि हमारे अहंकार से। आत्मनिष्ठा पर आधारित विश्वास ही अपनी शर्तें पूरी कर जीवन को उत्कृष्ट बनाता है।

विश्वास मनुष्य के सभी गुण और शक्तियों को केन्द्रित करता है। उन पर अपना नियन्त्रण रखता है। केन्द्रित और नियन्त्रित शक्तियाँ जब किसी ध्येय की पूर्ति में जुट जाती हैं तो असम्भव ही सम्भव हो जाता है। मनुष्य सामान्य से असामान्य बन जाता है। संसार में जो भी महान कार्य हुए हैं, उनकी नींव विश्वास और संगठित शक्तियों की सक्रियता पर आधारित थी।

विश्वास मनुष्य को सभी प्रकार के भय, सन्देह, शंकाओं से मुक्त कर देता है। वस्तुतः भय, शंका, सन्देह आशंका वहीं होती है जहाँ अशक्ति, कमजोरी, अभाव आदि होते हैं। आत्म-विश्वास मनुष्य में अदम्य शक्ति, साहस भर देता है और मनुष्य की ये मानसिक कमजोरियाँ तिरोहित हो जाती हैं। विश्वास की ज्योति जलते ही मनोभूमि पर छाई हुई अन्धकार की काली घटाऐं छिन्न-भिन्न हो जाती हैं। आत्मविश्वासी को मौत का भी डर नहीं रहता और उसे कोई आशंका, सन्देह आदि उद्वेलित नहीं करते हैं।

हमें जीवन को महान, उत्कृष्ट, उपयोगी बनाने के लिये, जीवन-संग्राम में विजयी होने के लिये, संसार में अमर कृति छोड़ने के लिये आत्म-विश्वास की ज्योति अपने हृदय मन्दिर में जलानी होगी। अपने अन्तर के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिव्य गुणों और शक्ति का परिचय प्राप्त करना होगा। क्षण-क्षण आत्मदेव की अनुभूति जगानी पड़ेगी। विश्वास के सहारे ही हम संसार के दुर्द्धर्ष पथ पर जीवन-रथ को आगे बढ़ा सकेंगे और लक्ष्य की प्राप्ति कर सकेंगे। "विश्वास ? विश्वास ! अपने आप में विश्वास, ईश्वर में विश्वास, अपने आत्म-देव की अपार शक्तियों में विश्वास—यही जीवन की सफलता और महानता का रहस्य है।" स्वामी विवेकानन्द के इन उद्‌गारों को जीवन में चरितार्थ करना होगा, तभी हम महानता की चोटी पर पहुँच सकेंगे।

"मनुष्य अमृतपुत्र है, परमात्मा युवराज है। पर धरती पर अपने पिता की फुलवारी में वह खुशियाँ मनाने, सैर करने आया है, आनन्द मनाने आया है। मानव महान है, क्योंकि उसमें महानता के अधिपति आत्म-देव का निवास है।" हमें मानव जीवन की इस बुनियाद, महान गौरव पर विश्वास करना होगा। हम देखेंगे तब कोई भी रुकावट हमारा रास्ता नहीं रोक सकेगी। तथाकथित गरीबी, दुर्भाग्य हमें परास्त नहीं कर सकेंगे। कठिनाइयाँ, उलझनें, समस्याएँ उसी तरह भाग खड़ी होंगी, जैसे प्रकाश के सम्मुख अन्धकार।

वेद भगवान ने कहा है—"हे मनुष्य ! यह जीवन अमृत की लड़ी है। तेरे प्राण, तेरा जीवन नित्य नई आभा लिये आ रहा है। हे मनुष्य ! तू प्रेरणा का केन्द्र है, तू प्रकाश का धारण करने वाला है। तू प्रकाश है ! तू प्रकाश !! तू प्रकाश !!! तू अमर ज्योति है ! तू दिव्य ज्योति है ! यदि हमें जीवन के महान लाभों से सम्पन्न होना है तो आत्म-विश्वास का सम्बल लेना ही पड़ेगा। इसके सिवा कोई चारा नहीं। आत्म-विश्वास के अभाव में तो मनुष्य का शरीर, मन ही साथ नहीं देता और न दुनिया वाले ही सहायता करते हैं।

शक्ति, वृद्धि के लिये आदमी को आत्म-विश्वासी होना पड़ता है। आत्म-विश्वास में वह शक्ति भरी होती है जो मनुष्य को सफलता के उच्च शिखर तक पहुँचा देती है। ऐसा मनुष्य न तो किसी के उपहास की परवाह करता है और न विघ्न-बाधाओं से डरता, घबड़ाता है। आत्म-विश्वास मानव जीवन का बल है, जो संसार में बड़ा कार्य कम साधनों के द्वारा भी सरलतापूर्वक सम्पन्न करा देता है।

इमर्सन ने कहा है—"अपने ऊपर विश्वास करो—आपका हृदय शक्ति से भर जायेगा।" हजारों-लाखों वर्षों से लोग बाह्य उपकरणों का भरोसा करते रहे हैं, आज भी करते हैं। किन्तु जिन्होंने अपनी आत्मिक शक्तियों को पहचाना, उन्होंने कुछ ऐसी विभूतियाँ प्राप्त कीं कि लोग उन्हें जननायक, विजयी और महान मानने के लिये विवश हुए। ऐसे मनुष्यों ने सदैव अपनी नैसर्गिक सरलता और मौलिक गरिमा का आह्वान किया, जिससे उनमें वह तेजी आई, वह स्फूर्ति, वह शक्ति पैदा हुई—कि बड़े-बड़े पहाड़ उनके आगे झुक गये। सफलताओं ने स्वयं आगे बढ़कर उन्हें विजयमाला पहनाई। मुगल सम्राट् बाबर, विश्व-विजेता नैपोलियन, जर्मन के प्रधानमन्त्री बिस्मार्क आदि ऐसे ही महापुरुषों में थे, जिन्होंने आत्म-विश्वास के बल पर आश्चर्यजनक सफलताएँ प्राप्त कीं।

यह कभी भी मत सोचिये कि आप अकेले हैं, आपकी शक्ति और सामर्थ्य बिल्कुल छोटी है, आपका ज्ञान, शारीरिक क्षमता सब कुछ स्वल्प है। इससे आपमें दीनता और हीनता की मारक भावनाएँ पैदा होंगी जो आपको भविष्य को अन्धकारमय बना देंगी। सोचिये आपके पास क्या नहीं ? आप साहसी हैं, कर्मशील हैं, पौरुष दिखाने की क्षमता है। आपका शरीर मोटा या तगड़ा न सही, स्वस्थ तो है, नीरोग तो है। महात्मा गाँधी का वजन तो कुल ९६ पौण्ड था। फिर आप यह क्यों मान रहे हैं कि आपकी शक्ति सीमित है। इन शक्तियों का थोड़ा उपयोग तो कीजिये तब आपको पता चलेगा कि आप कितने बलशील हैं। आप भी जार्ज हर्बर्ट के इस मन्त्र को अपने जीवन में धारण करके तो देखें—"बेखटके अकेले रहो। अपना आदर आप करो और देखो कि तुम्हारी आत्मा की क्या दशा है ? जिसके हृदय में यह ज्ञान प्रकाशित है, वह अपनी सम्पूर्ण शक्तियों को एक ही केन्द्रबिन्दु पर जुटाकर आश्चर्यजनक लाभ तो प्राप्त कर ही सकता है।

आत्म-विश्वास का अर्थ है अपनी परिस्थितियों और समस्याओं का हल अपने आप में ढूँढना। आप वक्यों दूसरे लोगों से सहायता की याचना करते हैं। उनके पास भी तो वही उपकरण हैं, जो परमात्मा ने आपको भी दिये हैं तो क्यों नहीं अपने हाथ-पाँव चलाते। अपनी बुद्धि का उपयोग क्यों नहीं करते ? बाहरी मनुष्य आपको सहायता देकर ऊँचा उठा नहीं सकता। इसके लिए आपको अपनी ही शक्तियों का सहारा पकड़ना पड़ेगा। प्रत्येक दिशा में आत्म-विश्वास जाग्रत करना पड़ेगा।

इसका अभिप्राय यह नहीं कि आप सहयोग और संगठन की वृत्ति से अलग होने का प्रयास करने लगें। या आप औरों से सीख और उचित परामर्श भी लेने का परित्याग कर दें। सामाजिक जीवन में यह किसी प्रकार भी सम्भव नहीं है। इसे तो मानसिक दुराग्रह या आत्मिक दुर्बलता ही कहा जायेगा। आत्म-विश्वास का अर्थ यह है कि हम अपने स्वाभिमान को दुर्बल न होने दें। आत्महीनता की निराशापूर्ण भावनाएँ मनुष्य को भाग्यवाद की ओर प्रेरित करती हैं, जिससे लोगों में अकर्मण्यता का संचार होने लगता है। आत्म-विश्वास का उपदेश करने का यह उद्देश्य नहीं कि मनुष्य दैववाद के भ्रामक सिद्धान्त का प्रतिपादन करने लगे। अपितु परमात्मा की दी हुई शक्तियों को सदैव क्रियाशील रखने का नाम ही आत्म-विश्वास है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आध्यात्मिक आस्थाओं से संसार में पग-पग पर सुरक्षा, निर्माण और सुख की परिस्थितियाँ दिखाई देती हैं। आत्मा स्वयं पूर्ण है, वह अनन्त शक्तियों का भण्डार है। इनके आश्रय में जाने वाला व्यक्ति ही इन शक्तियों का अधिकार प्राप्त करता है। जो इसका सदुपयोग करता है, उसी का जीवन व्यवस्थित रहता है। दृढ़ इच्छाशक्ति, अटूट परिश्रम, अनन्त धैर्य किसी भी बाह्य उपकरण से कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। आप जीवन के व्यवहार में इन्हें प्रयुक्त करिये। आपका भविष्य अवश्य उज्ज्वल बनेगा।

आत्म-विश्वास मनुष्य की सम्पूर्ण शक्तियों को एक स्थान पर संगठित करता है। संगठित शक्तियों को जीवन के जिस क्षेत्र में उतार देते हैं, वहीं भारी उथल-पुथल मच जाती है। दूसरे लोग भी हमारा भरोसा करने लग जाते हैं। इसका श्रेय शक्तियों के संगठन को होता है। चित्त की एकाग्रता के प्रबल होने से मस्तिष्क की सम्पूर्ण कार्य-कारणी शक्तियाँ विकसित होती हैं और उसी क्षेत्र में काम करने लग पड़ती हैं। आत्म-विश्वास ही हमारी गुप्त शक्तियों के जागरण का मूल मन्त्र है।

आत्म-विश्वास और दृढ़ प्रतिज्ञा के बिना मनुष्य परिस्थितियों का दास बना रहता है। हर घड़ी किसी न किसी सुयोग की चिन्ता में डूबा रहता है। कहीं से जमीन में गढ़ा धन मिल जाय, कोई ऐसा आशीर्वाद दे दिया कि परीक्षा में उत्तीर्ण हो जायें, शादी-विवाह, रोजी-रोजगार आदि के लिये जो किसी घटना या संयोग की ताक में बैठे रहते हैं, उनकी आत्मिक शक्तियों में ऐसा जंग लग जाता है, जो जीवनभर छुटाये नहीं छूटता। अन्ततोगत्वा बुरे परिणाम, दुःखद परिस्थितियाँ और असफलता के प्रेत-पिशाच उन्हें आ घेरते हैं। तब पछतावा ही हाथ लगता है। पुरुषार्थ और प्रयत्न के क्षण तो तब तक समाप्त हो जाते हैं।

"किसी महापुरुष ने कहा है कि अपना महत्त्व समझो और विश्वास रखो कि तुम दुनिया के सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति हो।" इस कथन में आत्म-शक्ति की महिमा का ही प्रतिपादन किया गया है। जो प्रत्येक व्यक्ति के अन्तर में सुषुप्तावस्था में विद्यमान है। आवश्यकता इतनी भर है कि हम उसे समझें और जाग्रत करने का प्रयास करें। उसका अभ्यास हर छोटे कार्य से हो सकता है। जो भी काम हाथ में लें, पूरे विश्वास के साथ उसमें जुट जायँ। मनोयोग एवं पुरुषार्थ के सम्मिलित योगदान से कार्यों में अभीष्ट सफलता मिलती है और अपनी सामर्थ्य भी बढ़ती है। अपने ऊपर विश्वास दृढ़ होता है। आत्म-विश्वास की जागृति ऐसी उपलब्धि है, जिसके सहारे बड़े से बड़े और कठिन से कठिन कार्यों का भी सम्पादन सुगमतापूर्वक किया जा सकता है।

संकटों से विचलित न हों

इस संसार में अवांछनीयताओं व उत्कृष्टताओं दोनों का समावेश है। यहाँ पाप व अनीति अधिक और पुण्य नीति स्वल्प रहे होते तो अब तक दुनिया का नामोनिशां न रहता। आग दुनिया में है तो सही, पर पानी से अधिक नहीं। इतने पर भी देखने में यह आता है, अध्यात्म तन्त्र से जुड़े धर्मपरायण व्यक्ति ही अधिक संकट पाते हैं। दुष्टता का प्रत्याक्रमण बढ़ता जाता है, घटता नहीं। प्राणों का संकट एकाएक आ चढ़ बैठता है। कभी-कभी यह अपने निजी सम्बन्धियों से लेकर आत्मीयों का अहित कर बैठता है। असुरता अजेय बनती दीख पड़ती है एवं देवत्व मोटी दृष्टि से पराजित होता दिखाई देता है। साधारण बुद्धि वाले मनुष्य इसमें कार्य-कारण की कुछ संगति बिठा नहीं पाते व नाना प्रकार की शंकाएँ उनके मन में उठती रहती हैं। इसका समाधान पाने हेतु कुछ प्रसंगों को पहले समझना होगा।

देवासुरं संग्राम में ऐसे कई घटनाक्रम घटित हुए हैं, जब असुरता देवत्व पर हावी हुई है। अच्छे काम में अड़चन डालने वाले असुर सदैव देव समुदाय को अपने मार्ग का रोड़ा मानकर उन पर आक्रमण करते आए हैं। देव शक्तियाँ चाहे वे अवतार के रूप में हों अथवा महामानव के रूप में, धर्म के पथ पर जागरूक हो प्रतिशोध करती रही हैं। किसी को अपनी जान गँवाकर, किसी को कष्ट सहन करके, किसी को प्रिय का वियोग-बिछोह सहकर तथा किसी को प्रखर संघर्ष द्वारा व्यापक विध्वंस करके यह माहौल बनाना पड़ा है कि देवत्व सदैव जाग्रत रहेगा।

ईसा जीवनभर कष्ट सहते रहे। आज तीन चौथाई आबादी विश्वभर में उन्हें मानती है। अन्तिम समय में मात्र आठ शिष्य उनके साथ थे, उनमें से भी एक ने धोखा दिया व अन्ततः वे सूली पर चढ़ा दिये गये। उनके मरने के बाद भी क्रिश्चियन धर्म नहीं मरा।

गृहकलह से लेकर शत्रुओं की दुरभि संधियाँ प्रसिद्ध दार्शनिक सुकरात को जीवनभर त्रास देती रहीं। हमेशा प्रसन्नता से जीने वाले इस महामानव ने जहर का प्याला पीकर मौत स्वीकार कर ली किन्तु सिद्धान्तों से समझौता नहीं किया।

क्या महात्मा गाँधी ने किसी का कुछ बिगाड़ा था जो उन्हें स्वतन्त्रता की लक्ष्य-सिद्धि के बाद भी गोली खानी पड़ी। लाला लाजपतराय लाठियाँ खाकर व सैकड़ों निर्दोष व्यक्ति गोलियों द्वारा जलियाँवाला काण्ड के समय मारे गए। दीनदयाल उपाध्याय जैसे सन्त हृदय व्यक्ति की किसी से क्या दुश्मनी हो सकती थी कि वे एक आक्रमण का शिकार बनते। स्वामी दयानन्द ने किसी का क्या बिगाड़ा था कि कोई व्यक्ति उनका विश्वस्त बनकर उनकी जान ले बैठा। वस्तुतः इन सभी प्रकरणों में प्रत्यक्ष को नहीं, परोक्ष को कारण समझा जाना चाहिए एवं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए कि सत्य व धर्म की रक्षा के लिए आदर्श, कर्त्तव्यपालन के अतिरिक्त धर्मपरायणों, आस्तिकों, समाज के लिए समर्पित जीवन जीने वालों को अपनी जान की कीमत पर वह काम करना पड़ा है, जो शायद वैसे सम्भव न हो पाता। इसका कारण यह नहीं कि असुरता इसमें जीतती व देवत्व की हार होती रही है। दैवी चेतना का कुछ विधान है यह कि कुछ कारण न होते हुए भी महामानवों को अग्नि परीक्षा से गुजरना पड़ा है व अपनी आहुति देनी पड़ी है।

सत्य व धर्म का अवलम्बन लेने वाले समाज समर्पित व्यक्तियों के जीवन में एक ऐसी समानता देखने में आती है, जो त्रासदी से भरी है। वह है उन पर जीवनभर कष्टों का आना। न केवल कटुवचनों के हमलों के रूप में, रोगों के प्रत्याक्रमण के रूप में, वरन् आक्रमणों के रूप में भी। एक सामान्य व्यक्ति यह सोच सकता है कि धर्म एवं न्याय के पक्षधर कभी किसी का बुरा न चाहने वालों के साथ ऐसा क्यों कर होता है ? क्या विधाता के यहाँ ऐसी कोई भी व्यवस्था नहीं कि आसुरी शक्तियाँ ऐसे भले मानसों को कोई कष्ट नहीं पहुँचाएँ।

इस असमंजस का एक ही समाधान है कि दैवी व्यवस्था बड़ी विलक्षण है। बड़े काम बड़ों द्वारा खतरे उठाकर ही सम्पन्न किये जाते हैं। वे आत्मबल संपन्न होते हैं व बड़ी से बड़ी क्षति पर भी साहस नहीं खोते। ऐसे लोग होते तो गिने-चुने ही हैं, पर दैवी कृपा, लोक सम्मान जनशक्ति के सहयोग व अनुग्रह के रूप में उन पर हमेशा बरसती है। प्रकृति का नियम अटल है। परोक्ष जगत में क्या हो रहा है—हम नहीं जानते पर उस महासत्ता पर विश्वास कर अपनी आस्तिकता को तो सतत् पोषण देते रह सकते हैं।

निहत्थे व्यक्ति ने शेर को मार गिराया

शिवालिक पहाड़ियों के बीच बसे हुए थुयना गाँव के श्री पृथ्वीसिंह जब घायल दशा में अस्पताल पहुँचे तो एक तमाशा बन गये। झुण्ड के झुण्ड लोग उन्हें देखने के लिये आने लगे। आकर्षण श्री पृथ्वीसिंह अथवा उनके जख्मों में नहीं था। पृथ्वीसिंह को आकर्षण का केन्द्र बना दिया था उनके साहस भरी इस घटना ने, जिसके कारण वे घायल हुए थे।

जहाँ-जहाँ लोगों ने यह सुना कि अस्पताल में एक ऐसा जख्मी व्यक्ति आया है, जिसने दो घण्टे तक अकेले और निहत्थे एक भयंकर शेर से युद्ध किया और आखिर उसे मार गिराया—वहीं से लोग चल-चलकर आने और श्री पृथ्वीसिंह को घेरने लगे। लोगों ने इच्छा प्रकट की कि पृथ्वीसिंह अपने उस अपूर्व साहस की घटना लोगों को सुनायें। डाक्टर ने उस समय लोगों को हटा दिया और कहा कि इस समय उन्हें आराम और मरहम-पट्टी की जरूरत है। आप लोग परसों आकर घटना सुन सकते हैं, तब तक ये काफी स्वस्थ हो जायेंगे। घटना सुनने की हमको भी उत्सुकता है।

परसों आया और उत्सुक लोग भी आ गये। श्री पृथ्वीसिंह ने कहना शुरू किया—मुझे सदा से अपनी तन्दुरुस्ती का बहुत ख्याल रहा है। इसके लिये मैं जो व्यायाम करता हूँ वह तो करता हूँ, लेकिन सबेरे पास की पहाड़ियों पर हवाखोरी के लिये जरूर जाता हूँ। उधर, जिधर मैं घूमने जाया करता था, किसी जानवर की कभी शंका नहीं थी। इसलिये हाथ में कुछ लेकर जाने की जरूरत ही नहीं थी। उस दिन भी नित्य की तरह मैं सूर्योदय से पहले घूमने गया। मैं निश्चिन्त चला जा रहा था कि इतने में दाहिनी तरफ से चट्टान की आड़ से गुरगुराहट की आवाज आई। मैं जरा ठिठका और ध्यान से देखने लगा लेकिन कुछ दिखलाई न दिया। मैं फिर बढ़ने लगा। चार-पाँच कदम ही चला हूँगा कि वही आवाज फिर सुनाई दी। पीछे मुड़कर देखा, तो देखा कि एक भयंकर शेर हमले की तैयारी में खड़ा है।

विकट परिस्थिति थी। निःसन्देह मौत का सामना था। शेर के हथियार तो उसके मुँह और पंजों में होते ही हैं लेकिन मैं बिल्कुल निहत्था था। पहले तो मैं किसी तरफ बच भागने की सोची लेकिन तुरन्त ही ख्याल आया कि यह विचार मिथ्या है। शिकार पर खड़े शेर से बचकर भागा भी कैसे जा सकता है ? शेर ने दो बार दुम को लहराया और धीरे-धीरे मेरी तरफ बढ़ा। आपत्ति को सिर आया देखकर मैंने अपना साहस सँभाला और भगवान का नाम लेकर लाँग चढ़ाते हुए कहा—"आ भाई ! अब तू आ ही गया तो हम भी जूझने को तैयार हैं। मुझे तैयार होते ही शेर ने मुझ पर छलाँग लगा दी। मैं तो पदैती खेला हुआ था। परन्तु पैतरा काटकर उसकी उछाल बचा दी। अब तक मैं सारा माया-मोह भूलकर शत्रु के साथ केन्द्रित हो चुका था। शेर फिर उछला और अबकी बार मेरे ऊपर आ गया और हम दोनों गुत्थम-गुत्था हो गये। मैंने बाँहों की ओट देकर उसका जबड़ा अपने दोनों हाथों से पकड़ लिया और उसे चीर देने के लिये भरपूर जोर लगाया। निश्चय ही उसके किनारे कुछ फट गये थे। वह फिर जोर से गुर्राया और अपना जबड़ा छुड़ाने की कोशिश करने लगा। मैं समझ गया कि यहीं पर इसकी कमजोरी है। निदान मैं बार-बार उसका जबड़ा फाड़ डालने के लिये भरपूर जोर लगाने लगा। थोड़ी देर तक थोड़ा संघर्ष होता रहा और बाद में उसने जोर का झटका देकर अपना जबड़ा छुड़ा लिया। उसका झटका खाकर मैं दूर जा पड़ा। संयोग से उस जगह मुझे एक बड़ा-सा पत्थर मिल गया। उसे उठाकर तुरन्त उठ खड़ा हुआ। शेर ने फिर हमला किया और मैंने एक ओर बचकर वह बड़ा-सा पत्थर उसकी नाक पर मारा। शेर तिलमिला गया।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जब तक वह दुबारा हमला करने के योग्य हो, तब तक मैंने सम्पूर्ण बल के साथ उसकी नाक पर पत्थर के ३ वार और किये। उसकी नाक फट गई और उससे बेतहाशा खून बहने लगा। वह अपना खून जीभ से चाटता हुआ फिर मुँह फैलाकर मुझ पर आया कि मैंने एक भरपूर वार उसकी थूथली पर किया, पत्थर उसके कई दाँत तोड़कर उसके मुँह में अटक गया। बस ! फिर क्या था ? मैंने उसको पकड़कर जमीन पर गिरा दिया और गला दबाकर अन्त कर दिया। संघर्ष से निपटने के बाद मुझे पता चला कि जहाँ शेर मुझे मुँह से तो घायल न कर सका, वहाँ उसने पंजों से काफी जख्मी कर दिया है। यह तो आप सब देख ही रहे हैं। लोगों ने श्री पृथ्वीसिंह की साहसिक घटना सुनी और उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। एक सप्ताह में ठीक होकर वे अस्पताल से घर आ गये।

संकल्प और पुरुषार्थ का समन्वय असम्भव को सम्भव बनाता है

मनुष्य की संकल्प शक्ति और कर्मठता का यदि समन्वय हो सके तो वह सम्मिलित चेतना शक्ति इतनी समर्थ होती है कि कुछ भी कर सके, असम्भव को भी सम्भव बना सके।

ध्रुव प्रदेशों को अगम्य माना जाता रहा है। अत्यधिक शीत से भरा हुआ यह हिमाच्छादित क्षेत्र अन्न, जल; निवास सभी दृष्टि से भारी जटिल है। ऋतुओं की विलक्षणता, आकाश में चमकने वाले प्रकाश की अद्भुतता, चुम्बकीय प्रवाहों के कारण दिशा-भूल होने की सम्भावना आदि जटिलताओं को सुलझाते हुए वहाँ पैर जमा सकना लगभग इतना ही कठिन है जिसे लगभग असम्भव के इर्द-गिर्द समझा जा सके।

इतने पर भी दुस्साहसी लोग वहाँ जा ही पहुँचे और वहाँ रहकर इस धरती की गतिविधियों सम्बन्धी अनेकों महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ ढूँढ़कर ला सकने में सफल हो गये।

ध्रुव अभियान कितने कठिन हैं ? इसकी कल्पना करने मात्र से रोमांच हो उठता है पर मानवी दुस्साहस तो अजेय शक्ति है, वह असम्भव को सम्भव बनाती रही है। उसने ध्रुवीय क्षेत्र में पहुँचने, रहने और काम करने की कठिनाइयों को भी सरल बना दिया है और वैज्ञानिक लोग वहाँ डेरे डालकर रह रहे हैं।

उत्तरी ध्रुव पर इटली का शोधकर्त्ता गाइडो मोंजीनो विशेष तैयारी के साथ पहुँचा था और उसने कितनी ही नई-नई जानकारियाँ उस क्षेत्र की संग्रहीत की थीं। इसमें ६२ वर्ष पहले राबर्ट पियरी उस क्षेत्र में प्रथम पदार्पण कर चुका था।

ग्रीनलैण्ड की खाड़ी पार करके एक अमेरिकी जलयान पैनहट्टन उस ध्रुव की विशद् खोज करने के लिए सन् ६९ में गया था। उस पर ९५ नाविक, वैज्ञानिक और पत्रकार सवार थे। दो बर्फ तोड़ने वाले छोटे जहाज और मार्गदर्शन के लिए कई हैलिकोप्टर साथ थे। उसने १६००० किलोमीटर क्षेत्र का पर्यवेक्षण करके कितनी ही उपयोगी जानकारियाँ इकट्ठी कीं।

दक्षिणी ध्रुव के विशेष शोधकर्त्ता एमण्डसन और स्काट के नाम पर उस क्षेत्र में दो मंजिली तीन इमारतें बनाई जा रही हैं। वे एक विशिष्ठ एलम्यूनियम की चादरों से इस प्रकार बनाई जा रही हैं कि शून्य से ४३ अंश नीचे की विकट सर्दी और तूफानी अन्धड़ों के बीच भी वहाँ रह सकना सम्भव हो सके। ऊपर एक सुरक्षात्मक गुम्बद होगा, नीचे प्रयोगशालाएँ तथा निवास-सुविधा के कमरे तथा आवश्यक उपकरण रहेंगे। सर्दी में १६ और गर्मी में ५० शोधकर्त्ता रह सकेंगे।

दक्षिणी ध्रुव पर उस क्षेत्र की शोध करने के लिए मैकमुकड़ो शिविर बहुत समय तक लगातार काम करता रहा है। वैज्ञानिकों का एक दल वहाँ इसी कार्य के लिए बनाई गई प्रयोगशाला में विविध प्रकार के अनुसन्धान करता रहा है।

इस क्षेत्र में सबसे पहला शोधकर्त्ता नार्वे का नागरिक रोआल्ड एमंडसन अपने चार साथियों सहित सन् १९१७ में पहुँचा था। इसके बाद एक अँग्रेज रोवर स्कॉट ने भी यहाँ पहुँचने की हिम्मत दिखाई। ८१६०००० वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैली, दस हजार फुट मोटी बर्फ की चादर से ढका, यह सुविस्तृत प्रदेश कितना ठण्डा, कितना नीरव, कितना स्तब्ध है, यह देखकर पहुँचने वाले के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। बर्फ के पहाड़ में कन्दरा बनाकर वहीं कोई झोंपड़ी खड़ी की जा सकती है और शोधकर्त्ता ऐसे ही आश्रय स्थल में अपना गुजारा कर सकता है।

इस क्षेत्र में किये गये प्रयोगों में एक महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष यह है कि जीव-जन्तुओं में समय को पहचानने की जो अतीन्द्रिय चेतना है, उस पर देश-काल का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। दक्षिणी ध्रुव की प्रयोगशालाओं में हैमस्टर्स चूहे तथा कुछ किस्म के पौधे पहुँचाये गये और देखा गया है कि उनकी समय सम्बन्धी आदतों पर वहाँ की परिस्थितिभिन्नता का कुछ असर पड़ता है या नहीं। पाया गया कि वे प्राणी और पौधे अपनी आदतों के अनुसार ही काम करते रहे। पौधे ठीक उतने ही समय में फूले-फले, जितने में कि वे पहले फूलते-फलते थे। चूहे, छछूँदर, तिलचट्टे जो सामान्यतया रात्रि में सक्रिय रहते हैं और दिन में सोते हैं। ध्रुवीय क्षेत्र की विचित्र परिस्थितियों में—घुप्प अँधेरे में रखे गये, पर वे यह भली प्रकार जानते रहे कि कब दिन है और कब रात ? उन्होंने अपनी पुरानी आदतें रात्रि के बिल्कुल सही समय पर ही आरम्भ कीं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

घुमक्कड़ पक्षी लम्बी उड़ानें हर साल अपने नियत दिन, समय तथा मुहूर्त में आरम्भ करते पाये जाते हैं। सोचा जाता था कि यह पंचांग बोध सम्भवतः उन्हें सूर्य की गर्मी एवं मौसम की स्थिति के आधार पर होता होगा। पृथ्वीचक्र की परिक्रमा के साथ जो चुम्बकीय उतार-चढ़ाव आते हैं, वे उन्हें समय ज्ञान कराते होंगे। इसकी यथार्थता ध्रुवीय क्षेत्र में ही परखी जा सकती है, जहाँ की परिस्थिति सामान्य भू-भागों से सर्वथा भिन्न होती है। वहाँ पृथ्वी की भ्रमणशीलता का प्रभाव नगण्य रह जाता है अस्तु, वहाँ जीवधारी सहज ही भ्रम में पड़ सकते हैं। पर देखा गया है कि वैसा कुछ नहीं हुआ। प्राणियों की अपनी समय सम्बन्धी पहचान करने वाली चेतना में किसी प्रकार का कोई अन्तर नहीं पड़ा। ड्रोसोफिला फल मक्खी तथा न्यूरोसपोरा फुर्द समय सम्बन्धी ज्ञान के लिए प्रसिद्ध हैं। उनने दक्षिणी ध्रुव में पहुँचकर अपनी समय सम्बन्धी आदतों में तनिक भी अन्तर नहीं आने दिया।

जीवों की चेतना भौतिक प्रकृति पर निर्भर समझी जाती है पर ध्रुवीय पर्यवेक्षण ने सिद्ध कर दिया है कि प्राणियों की अपनी चेतन प्रकृति है और वह बाह्य जगत के परिवर्तनों से बहुत अधिक प्रभावित नहीं होती। जैसा कि दक्षिण ध्रुव पर भेजे गये प्राणी वहाँ की भिन्न परिस्थितियों में भी अपनी अन्तःचेतना के आधार पर पूर्व निर्धारित स्वभाव एवं क्रिया-कलाप अपनाये रहे।

यह तो नमूने की एक वैज्ञानिक उपलब्धि है ऐसी-ऐसी अनेक जानकारियाँ प्राप्त हुई हैं, जिनके सम्बन्ध में पिछले दिनों तक हम पूर्णतया अँधेरे में थे। उदाहरण के लिए, ध्रुव क्षेत्र का निरन्तर गरम होते जाना और वहाँ की बर्फ का पिघलते जाना। यह एक ऐसा संकट है जिसके कारण समुद्र की जल-सतह बहुत ऊपर उठ जायेगी और तटवर्ती विशाल भू-भाग को जलाशय के रूप में बदल देगी। समय रहते हम ऊँची जगहों पर अपनी महत्त्वपूर्ण गति-विधियाँ उठा ले जा सकते हैं।

अब से पचास करोड़ वर्ष पहले दक्षिणी ध्रुव सहारा के ठीक मध्य में, उस क्षेत्र में अवस्थित था जहाँ आजकल नाइजरिया और लीविया की सरहदें मिलती हैं। इस तथ्य का रहस्योद्घाटन कोलम्बिया विश्वविद्यालय के प्राध्यापक रोड्स फेयुर ब्रिसा ने वाशिंगटन में अमेरिकी भू-भौतिकी समिति के समक्ष अपनी नई खोजों के आधार पर प्रस्तुत किया है। ध्रुवीय क्षेत्रों में जिन प्रमाणों को पाया जाना चाहिए उनमें से अधिकांश उस क्षेत्र में मिलते हैं। ध्रुवों के स्थान परिवर्तन से यह सिद्ध होता है कि पृथ्वी समय-समय पर करवटें बदलती रही है। उत्तरी ध्रुव क्षेत्र का पर्यवेक्षण करने के लिए सन् १९६१ में अमेरिकी वैज्ञानिकों ने अलास्का में एक तैरती प्रयोगशाला स्थापित की थी। उन्होंने दो मील लम्बा, डेढ़ मील चौड़ा, ७० फुट मोटा एक हिमिखण्ड उस क्षेत्र में देखा जो अलास्का से १३० मील उत्तर में था और ग्रीनलैण्ड की ओर तैरता जा रहा था। उस पर वैज्ञानिकों ने अड्डा जमाया। उसका नाम 'आकलिस' रखा। उस पर ऐसी झोंपड़ियाँ खड़ी कीं जो ७० मील की गति से चलने वाले अन्धड़ों का दबाव बर्दाश्त कर सकें। एक जनरेटर बिठाया गया और सारे द्वीप में बिजली की व्यवस्था की गई। शोध संचालक थे, मैक्स सी. ब्रीवर। हिमि द्वीप पर सवारी गाँठकर चार वर्ष तक पर्यवेक्षण करने का यह अद्भुत प्रयोग था। इस अवधि में द्वीप ने तैरते-तैरते ७५०० मील की यात्रा की। ग्रीनलैण्ड और आइसलैण्ड के बीच डेनमार्क की खाड़ी में वह गलकर समाप्त हुआ तो शोध संस्थान को भी उस पर से अपना डेरा उठाने के लिए विवश होना पड़ा।

अमेरिका की मुख्य भूमि में वायुयान द्वारा वहाँ खाद्य-सामग्री तथा अन्य आवश्यक वस्तुएँ पहुँचाई जाती थीं। इसके लिए एक हवाई पट्टी भी वहाँ बना ली गई थी। इस शोध-संस्थान में काम करने वाले अन्य लोग तो अपने घर आते-जाते रहे पर ३५ वर्षीय जान्स्टन को वह द्वीप इतना सुहावना लगा कि उसने उसे तभी छोड़ा जब वह स्वयं अपने आपको छोड़ रहा था।

ध्रुव अभियान में हस्तगत हुई उपलब्धियों का अपना महत्त्व है। उसका सबसे बड़ा प्रतिपादन यह है कि मनुष्य की शक्ति के सामने कोई भी कठिनाई ठहर नहीं सकती। यदि वह अपने संकल्प और पुरुषार्थ का समन्वय कर सके तो वह कर दिखा सकता है, जिसे पिछले दिनों असम्भव समझा जाता रहा है।

जब मृत्यु ने भी हार मान ली

जीने की अदम्य आकांक्षा एक ऐसी प्रचण्ड प्रेरक शक्ति है, जो आपत्तिकालीन परिस्थितियों में भी मनुष्य की रक्षा करती है। यह जितनी ही प्रबल होगी, मनुष्य उतना ही अधिक जीवट सम्पन्न होगा तथा संघर्षों में समर्थ होगा। जीवन में प्रतिकूल परिस्थितियाँ भी आती हैं और आकस्मिक विपदाएँ भीं। पर वे एक समान सबको प्रभावित नहीं कर पातीं। अधिकांश व्यक्ति प्रतिकूलताओं में इतने अधिक निराश हो जाते हैं कि प्रस्तुत संकटों का सामना भी नहीं कर पाते। निवारण के लिए जो उपाय किए जा सकते थे, उससे भी वंचित रह जाते हैं। परिस्थितियाँ और भी दुरूह बन जाती हैं। इसके विपरीत थोड़े से व्यक्ति ऐसे भी होते हैं जो विकट से विकट परिस्थितियों में भी नहीं घबड़ाते। ऐसे अवसरों पर उनका साहस और मनोबल देखते ही बनता है। आन्तरिक जीवट के धनी उन व्यक्तियों के सामने आने से कई बार मृत्यु भी घबड़ाती है। लगता है प्रस्तुत संकटों से जीवन रक्षा सम्भव नहीं है पर कितनी बार मौत को भी अपना इरादा बदलकर खाली हाथ लौटना पड़ा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रेडियोएक्टिव पदार्थों तथा किरणों को सबसे अधिक घातक माना जा रहा है। इनका दुष्प्रभाव मनुष्य ही नहीं, समूचे वातावरण पर स्थायी रूप से पड़ता है तथा दीर्घकाल में अपने समीपवर्ती परिकर के जीवधारियों एवं वनस्पतियों को हानि पहुँचाता है। अस्तु, जहाँ-कहीं भी परमाणु संयन्त्र लगाये जाते हैं, रेडियो विकिरण से सुरक्षा के लिए पूरी सतर्कता बरती जाती है। रेडियोएक्टिव किरणों की बौछार की चपेट में खुलेआम कोई व्यक्ति आ जाय तो प्रायः उसकी मृत्यु सुनिश्चित है। पर एक घटना ऐसी भी प्रकाश में आयी है कि जिसने विश्व के मूर्धन्य वैज्ञानिकों को अचम्भित किया है तथा यह सोचने पर बाध्य किया कि मनुष्य की आन्तरिक जीवट की सामर्थ्य किसी भी भौतिक शक्ति की तुलना में कहीं अधिक है। प्रख्यात मासिक पत्रिका 'रीडर्स डाइजेस्ट में एटॉमिक मैन' शीर्षक से प्रकाशित स्टेनले एल. एंगलवर्ट के लेख के अनुसार २९ अगस्त, १९७६ की रात को हैनफोर्ड साइड स्थित आणविक अनुसंधान एवं उत्पादन केन्द्र में एक भीषण दुर्घटना घटी, जो अत्यन्त रोमांचकारी थी।

एटमबम्बों के लिए प्लूटोनियम-२३९ और ऐमेरिशियम-२४१ का प्रयोग होता है। ऐमेरिशियम २४१ कृत्रिम विधि से प्लूटोनियम-२३९ से तैयार की जाती है जो अपने मूल स्रोत की तुलना में पचास गुनी अधिक सामर्थ्यवान और उतनी ही विकिरणशील होती है। चौसठ वर्षीय हैरल्ड मैक नामक व्यक्ति की ड्यूटी ऐसे ही संयंत्र के निकट लगी हुई थी, जहाँ से कि ऐमेरिशियम का उत्पादन होता था। नियमानुसार सुरक्षा के लिए उसने रेडियोप्रूफ वस्त्र पहन रखे थे। एक अन्य साथी भी ड्यूटी पर था। दोनों साथी आपस में बातें कर रहे थे कि इतने में संयंत्र से कुछ खतरनाक संकेत मिलने लगे। कहीं से भाप रिसने की आवाज आने लगी, जिसका अर्थ था कि जिस पाइप से होकर रेडियोएक्टिव पदार्थ भाप के रूप में निकल रहा था उसमें छेद हो जाना।

बगल में ही फोन करने का स्थान था। दूसरा मित्र खतरे की सूचना उच्चाधिकारी को देने पहुँचा ताकि शीघ्र सुरक्षा की व्यवस्था हो सके। इधर मैक ने संयन्त्र के ग्लब बाक्स के सूराखों में हाथ डाला तो उन्हें असाधारण रूप से गरम पाया जो खतरे का सूचक था। थोड़ी ही देर बाद संयन्त्र के स्तम्भ के निचले सिरे से किसी स्थान से एक दूसरी आवाज फूटने लगी। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि स्तम्भ में हुए छिद्र पर दबाव बढ़ता जा रहा है और शीघ्र खम्भा फट सकता था। बाहर निकलने के लिए एक दरवाजा थोड़ा-सा खुला था पर तब तक इतनी अधिक गैस भर चुकी थी कि कुछ भी स्पष्ट रूप से नहीं दिखाई पड़ता था। थोड़े ही क्षणों बाद प्रत्याशित खतरा प्रस्तुत हुआ। मैक दरवाजे की ओर आगे बढ़े, इसके पूर्व ही तेज आवाज के साथ स्तम्भ पाइप फूट गया। सुरक्षा के लिए मैक ने नकाब और वस्त्र पहन रखे थे, उनके चिथड़े उड़ गये। नाइट्रिक एसिड की वर्षा से उसका पूरा शरीर भीग गया, जिस की सान्द्रता पूरे शरीर को मर्मान्तक पीड़ा दे रही थी। चेहरे, कन्धे, गर्दन आदि पर रेडियोधर्मी उबलता पदार्थ और काँच के टुकड़े बरसने लगे। अत्यन्त विकिरणशील ऐमेरिशियम का घातक धुँआ श्वाँस के रास्ते फेफड़े में भरने लगा। कुछ ही क्षणों में वह इतना रेडियोधर्मी धुँआ निगल गया जो कि कुछ ही सेकण्डों में एक व्यक्ति को मारने में पर्याप्त था। अर्ध मूर्च्छित अवस्था में वह अपने शरीर को किसी तरह खींचते हुए उस गलियारे तक ले जाने का प्रयत्न कर रहा था जहाँ कि रेडियोधर्मी गैस की पहुँच अत्यल्प थी। तब तक खतरे की घंटी बज चुकी थी। सुरक्षा कर्मचारी वहाँ पहुँच गये थे।

बेहोशी की हालत में रेडियोमानीटरों तथा परिचारकों ने उसे विकिरण संदूषण से मुक्ति दिलाने वाले तालाब के निकट पहुँचाया। खून से सने रेडियोधर्मी मैक के वस्त्रों को फाड़कर फेंक दिया तथा कुण्ड में देरी तक स्नान कराया। एम्बुलैन्स में उसे रिकलैण्ड स्थित हैनफोर्ड एनवायर मैण्टल फाउन्डेशन के चिकित्सालय में लाया गया। चिकित्सकों की पूरी टोली इस अद्भुत दुर्घटना से ग्रस्त रोगी के उपचार में जुट गयी। चेहरे, कन्धे, गर्दन आदि में धातु, काँच एवं रेजिन के जो कण धँस गये थे उन्हें चिमटियों के सहारे निकाला गया। तब तक मैक होश में आ चुका था।

फाउन्डेशन के मूर्धन्य चिकित्सक डॉ. बाइटेस्टाइन ने परीक्षण के उपरान्त यह कहा कि आज तक इतनी अधिक एमेरिशियम किसी भी मनुष्य के शरीर में नहीं पहुँची है जितनी कि मैक के शरीर में। सामान्य स्वस्थ व्यक्ति ऐमेरिशियम की जितनी मात्रा से मर सकते हैं, उससे पाँच सौ गुनी अधिक मैक के शरीर में पहुँच चुकी है। इस स्थिति में भी मैक का किसी तरह जीवित रहना एक आश्चर्यजनक बात है।

शरीर में घुसे रेडियोधर्मी विजातीय तत्त्वों को निकालने के लिए मूर्धन्य चिकित्सकों से परामर्श लिया गया। सभी आधुनिक चिकित्साविधियाँ अपनायी गयीं। महीनों तक उपचार चलता रहा। समय-समय पर शरीर में रेडियोधर्मिता मापने के लिए रेडियोधर्मी मापक यन्त्र का प्रयोग किया गया, पर हर बार मापक की सुई स्कैनिंग मीटर का अन्तिम अंक लाँघकर नाचने लगती। जिसका अर्थ था कि मैक के शरीर में अभी भी रेडियोएक्टिव तत्वों की प्रचुर मात्रा मौजूद थी जो सामान्यतः अत्यन्त घातक मानी जाती है।

उपचार में संलग्न विशेषज्ञगण यह सोचकर चिन्तातुर थे कि मैक यदि किसी तरह बच भी जाता है, तो उसका शरीर इस योग्य नहीं होगा कि वह किसी काम आ सके। विकिरण के दुष्प्रभाव से कितने ही असाध्य रोग हो सकते हैं। पर सभी यह देखकर हतप्रभ थे कि वैसा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ भी नहीं हुआ। शरीर एवं चेहरे पर दुर्घटना के दाग स्थायी रूप से बन गये थे।

एगलवर्ट का कहना है कि अमरीका के अनेकों पत्र-पत्रिकाओं ने मैक को अणु-मानव कहकर सम्बोधित किया। यह भी एक विचित्र विडम्बना है कि मैक के निकटवर्ती अधिकांश साथी उससे मिलने से कतराते हैं। इस डर से कि कहीं उसके शरीर में मौजूद रेडियोएक्टिव तत्त्वों के विकिरण का दुष्प्रभाव न पड़ जाय। कुछ मित्र हाथ मिलाने से कतराते हैं। यह पूछे जाने पर कि इतनी अधिक मात्रा विकिरण की पहुँचने के बाद भी कैसे जीवित बच गया ? मैक ने उत्तर दिया कि मुझे यह पूरा विश्वास था कि मैं मरूँगा नहीं। मेरी इच्छा सदा सशक्त बनी रही। उसी से मुझ में सदा आशा, प्रेरणा और बल का संचार होता रहा।

प्रायः अधिकांश व्यक्ति अपनी आन्तरिक शक्ति को नहीं पहचानते, न ही उसे उभारने का प्रयास करते हैं। उस अन्तः शक्ति का सम्बल लिया जा सके तो सचमुच ही बड़े से बड़े संकटों का सामना किया जा सकता है।

संकल्प शक्ति मृत्यु को भी टाल सकती है

प्रायः देखने-सुनने में आता है कि अमुक व्यक्ति के प्राण अपने प्रिय पुत्र, पुत्री अथवा ऐसे ही किसी अन्य घनिष्ट सम्बन्धी के न आने तक तब तक रुके रहे, जब तक मृत्यु शैय्या पर पड़े व्यक्ति ने उसके अन्तिम दर्शन न कर लिये और दर्शन के उपरान्त शान्तिपूर्वक वह मृत्यु की गोद में चिरनिद्रा में सो गया। तो क्या इस प्रकार मृत्यु को कुछ समय तक टाला जा सकता है ? मनोवैज्ञानिकों के अनुसार उत्तर होगा हाँ, ऐसा सम्भव है। यदा-कदा मरणासन्न व्यक्तियों के मामले में यही बात देखने को मिलती है।

ऐसा क्यों व कैसे होता है ? इस सम्बन्ध में डीलावेयर के मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि मरणासन्न व्यक्ति का जब किसी सगे-सम्बन्धी से घनिष्ट लगाव हो जाता है, तो उसे देखने की अन्तिम इच्छा एक प्रकार का संकल्प का रूप धारण कर लेती है और यह सर्वविदित तथ्य है कि जब एक बार दृढ़ संकल्प उभर पड़ता है, तो न सिर्फ परिस्थितियाँ वरन् शरीर, मन, प्राण भी उसके अनुरूप बनने, ढलने लगते हैं।

गीता में इसी बात को दूसरे रूप में समझाया गया है कि व्यक्ति जैसा सोचता है वैसा ही बनता चला जाता है। यहाँ भी आशय यही है कि व्यक्ति का सतत एक दिशा में किया गया चिन्तन इतना प्रबल व शक्तिशाली बन जाता है कि वह उसके अवचेतन मन की गहराइयों तक उतर जाता है और अपना काम करने लगता है एवं व्यक्ति को उसी चिन्तन-चेतना के ढाँचे में ढालना आरम्भ कर देता है, जैसा उसका निज का होता है। प्रकारान्तर से यह भी मनोवैज्ञानिकों की उसी अवधारणा को परिपुष्ट करता है कि संकल्प के अनुसार मन, प्राण, शरीर भी प्रभावित होते हैं। संकल्प जैसा हुआ, प्रभाव भी वैसा ही उत्पन्न करता है। रामकृष्ण परमहंस के बारे में कहा जाता है कि जब वह दक्षिणेश्वर में रहकर हनुमान की साधना कर रहे थे, तो उस दौरान उनके हाव-भाव और आचरण बन्दरों की भाँति ही हो गये थे। वैसे ही उछलकर पेड़ों पर चढ़ जाते जैसे कोई बन्दर। बाद में जब वे राधा भाव में रहने लगे, तो उनके विचार-व्यवहार तो प्रत्यक्षतः महिलाओं जैसे हो ही गये थे, शारीरिक संरचना में भी अनेक स्त्रैण लक्षण उभर आये थे।

इस प्रकार जब यह प्रमाणित हो चुका है कि विचारों का मनुष्य पर बड़ा असर पड़ता है और हमें प्रभावित किये बिना नहीं रहता, तो मनोवैज्ञानिक इस दिशा में शोधरत हुए कि ऐसे संकल्पों द्वारा मृत्यु को भी कुछ समय तक टाला जा सकता है क्या ? अनुसन्धान के दौरान उत्तर सर्वथा सकारात्मक प्राप्त हुआ। शोधकर्मी दल का इस सम्बन्ध में कहना है कि व्यक्ति यदि किसी कार्य के प्रति अत्यन्त गम्भीर, उत्साही और उसे पूरा कर डालने के प्रति प्रबल आकांक्षा रखता हो, तो आसन्न मृत्यु को भी तब तक टाला जा सकता है, जब तक कार्य पूरा न हो जाय, पर दूसरी ओर वे यह भी कहते हैं कि यह सब आडम्बर स्तर का नहीं होना चाहिए, वरन् मरने वाले की यही तीव्र अभीप्सा होनी चाहिए, तभी वह क्रियान्वित हो सकेगी, अन्यथा उक्त भाव अपना परिणाम प्रस्तुत किये बिना ही रह जायेगा।

अध्ययन के दौरान इस बात की पुष्टि भी हो गई। कैलिफोर्निया यूनिवर्सिटी (सैन डियेगो) के समाजशास्त्रियों ने सन् १९६० से लेकर १९८७ तक प्रत्येक वर्ष वहाँ के चीनी, अमेरिकनों पर इस आशय के अध्ययन और प्रति वर्ष उनकी मृत्यु-दर का विशेष अवलोकन किया। उन्होंने पाया कि चीनियों के एक प्रमुख पर्व के ठीक बाद बूढ़ी चीनी महिलाओं की मृत्यु आश्चर्यजनक ढंग से बहुत बड़े पैमाने पर होती है। उल्लेखनीय है कि चीनी समुदाय का यह एकमात्र ऐसा पर्व है, जिसमें परिवार के सभी सदस्य उसे साथ-साथ मनाने के लिए उक्त अवसर पर अवश्य इकट्ठे होते हैं। इस पर्व में परिवार की बूढ़ी महिलाओं पर भोजन एवं व्यंजन-निर्माण का विशेष दायित्व होता है। वे इससे भावनात्मक स्तर पर इतनी गहराई से जुड़ी होती हैं कि महीनों पूर्व इसकी तैयारियाँ शुरू कर देती हैं और पर्व के दिन अत्यन्त खुश नजर आती हैं, पर इसके उपरान्त एक सप्ताह के अन्दर-अन्दर ऐसी वृद्ध महिलाओं का बड़े स्तर पर शरीरान्त होते देखा जाता है। इस सम्बन्ध में अध्ययन दल का कहना है कि इस दौरान परिवार के सभी सदस्यों के देखने की इच्छा और सौंपा गया विशेष दायित्व वृद्धाओं के अवचेतन मन में इतना गहरा उतर जाता है कि वह एक तीव्र स्व-संकेत का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

काम करता है और यहाँ तक उनके प्राणों को भी शरीर त्यागने से रोके रखता है । पर्व के उपरान्त जब उनकी यह इच्छाएँ पूरी हो जाती हैं एवं और कोई आकांक्षा शेष रह नहीं जाती तो फिर मृत्यु उन्हें अपनी गोद में सुला लेती है। ज्ञातव्य है कि उत्सव के पश्चात् प्रति वर्ष बड़े पैमाने पर मृत्यु सिर्फ वृद्ध चीनी महिलाओं की ही होती देखी जाती है। वृद्ध चीनी पुरुष अथवा गैर चीनी महिलाओं के साथ ऐसी अप्रत्याशित बात अध्ययन के दौरान नहीं देखी गई अथवा देखी गई, तो छिट-पुट सामान्य घटना के रूप में। इस बारे में अनुसन्धानकर्त्ताओं का कहना है कि चूँकि चीनी पुरुषों एवं गैर चीनी महिलाओं का उत्सव से भावनात्मक सम्बन्ध नहीं होता, इसलिए उनकी मृत्यु भी उसके लिए रुकी नहीं रहती और पूरे वर्ष स्वाभाविक ढंग से समय-समय पर होती रहती है।

इस प्रकार इस अध्ययन से उसे पहेली का भी उत्तर मिल गया कि क्यों किसी सम्बन्धी के लिए मरणासन्न व्यक्ति के प्राण अटके पड़े रहते हैं। इससे यह भी सुनिश्चित हो गया कि जीवन में यदि कोई महत्त्वपूर्ण व आवश्यक कार्य शेष रह गया हो और कर्त्ता का उसके प्रति सूक्ष्म स्तर का गहन तादात्म्य हो तो उसे पूरा होने तक मृत्यु को टाला भी जा सकता है।

कई अवसरों पर ऐसे समय में दैवी सहयोग भी प्राप्त होता है। इसके प्रमाण भी उपलब्ध हैं। मैडम ब्लैवटस्की जब अपना महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ ''सीक्रेट डॉक्ट्रीन्स'' लिख रही थीं तो वह जीवन के अन्तिम पड़ाव पर थीं। दुर्भाग्यवश अभी वह आधा ही ग्रन्थ लिख पायी थीं कि मृत्यु शैय्या पर आ पड़ीं। साथ रहने वाली देवात्माओं ने संदेश दिया कि मृत्यु सुनिश्चित है, किन्तु साथ में आश्वासन यह भी था कि घबरायें नहीं, आप सत्साहित्य सृजन जैसे पुण्य कार्य में संलग्न हैं, अतः हम आपका पूरा सहयोग करेंगे। ऐसा ही हुआ। ग्रन्थ जब तक पूरा नहीं हो गया तब तक वह जीवित रहीं और उसके पूरा होते ही दिवंगत हो गईं। इससे यह भी सिद्ध होता है कि कार्य यदि लोकमंगल के निमित्त किया जा रहा हो और दुर्भाग्यवश अधूरा रह जाय एवं लेखक का असामयिक बुलावा आ जाय तो देवसत्ताएँ उस बुलावे को भी कार्य के पूरा होने तक टालने में समर्थ सहयोग करती हैं।

''इच्छा मृत्यु'' भीष्म को मिली थी। हर किसी को यह वरदान अपनी इच्छाशक्ति के आधार पर मिल सकता है। यदि हम मरने का चिन्तन करें तो मौत जल्दी आ धमकेगी। यदि सौ वर्ष तक कर्म करते हुए जीने की इच्छा रखें तो मौत दूर ही रहेगी। मनुष्य सदैव ऊँचा सोचे व श्रेष्ठ चिन्तन करे तो वह जीवन मृत्यु का नियन्त्रण भी अपने हाथ में ले सकता है। आखिर है भी तो वह सृष्टा का ज्येष्ठ पुत्र।

अपने को तुच्छ एवं नगण्य न समझें

आत्महीनता का भाव मनुष्य की उन्नति में बहुत बाधक होता है। जो भी व्यक्ति दीन-हीन और प्रगतिहीन स्थिति में पड़े दिखलाई देते हैं, वे सब किसी न किसी प्रकार की आत्महीनता से ग्रसित होते हैं। कोई अपने को निर्बल समझ रहा होगा, कोई विद्या-बुद्धि से रहित, कोई साधन हीनता का रोना रो रहा होगा तो कोई परिस्थितियों और भाग्य को कोस रहा होगा। इस प्रकार की सारी निराशा आत्महीनता का ही लक्षण होता है।

आत्महीनों के विचार बड़े प्रतिगामी होते हैं। वे अपने अन्तःकरण में नाना प्रकार के भ्रम, न्यूनताएँ, निर्बलताएँ, कुकल्पनाएँ, आशंकाएँ और भीतियाँ पाले रहते हैं। उन्हें संसार का हर आदमी अपने से अधिक सक्षम और योग्य मालूम होता है। हर काम अपनी शक्ति से बाहर का विदित होता है। उनके विचार सदैव विपरीत दिशा में ही दौड़ते हैं। उनके सोचने का ढंग इस प्रकार का होता है कि मानो परमात्मा ने उन्हें इस योग्य ही नहीं बनाया कि वे संसार में आगे बढ़कर संघर्ष कर सकें और अपने लिये सम्मानपूर्ण स्थान अर्जित कर सकें। उनको यदि उन्नति और प्रगति के लिए उत्साहित किया जाता है तब भी वे भयभीत हो उठते हैं। सोचते हैं यदि हमने अमुक साहसपूर्ण कोई काम हाथ में लिया तो हो सकता है कि कोई नई आपत्ति खड़ी हो जाये और हम किसी संकट में पड़ जायें। अमुक काम हमारे बलबूते का नहीं, भला हम उसे किस प्रकार कर सकते हैं ? आत्महीन व्यक्ति किसी साहसपूर्ण प्रगति पथ पर चलने से बुरी तरह डरता रहता है। ऐसा कायर और शंकालु व्यक्ति निश्चय ही कोई उन्नति नहीं कर सकता। उसे गई बीती स्थिति में ही जीवन काटने को विवश होना पड़ता है।

आशा, आकांक्षा, आत्म-विश्वास और आत्मबल जिनको उन्नति और प्रगति का आधार माना गया है, आत्महीन व्यक्ति में इनका सर्वथा अभाव रहता है। उन्नति की आशा और आकांक्षा करने का अधिकार तो उसी को हो सकता है जो अपने को किसी भी कार्य को करने और कोई भी संकट उठा सकने के योग्य समझता है। जिसे यह विश्वास होता है कि वह जिस काम में हाथ डालेगा उसे पूरा करके रहेगा। उसमें आ पड़ने वाले किसी भी संकट को उठा लेने के योग्य साहस, धैर्य और क्षमता है। इस विश्वास के अतिरिक्त जो कार्य करने में रुचि रखता है, साहस और उत्साह रखता है, अपनी कमियाँ दूर करने और योग्यताएँ बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील रहता है, उन्नति और प्रगति की आशा, आकांक्षा करने का वही अधिकारी होता है। जिसने योग्यताओं, अनुभवों तथा शिक्षाओं से आत्म-विश्वास और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सदाचरण द्वारा आत्मबल संचित नहीं किया है, वह उन्नति और प्रगति की आशा, आकांक्षा करने का अधिकारी किस प्रकार हो सकता है ? आत्महीन व्यक्ति में इन सारे गुणों का अभाव होता है अस्तु उसका उन्नति और प्रगति की आशा, आकांक्षा से वंचित रहना स्वाभाविक ही है।

आशा और आकांक्षा उन्नति का मूल आधार हैं। जिसमें यह आकांक्षा ही न होगी कि मुझे भी आगे बढ़ना चाहिए, उन्नति और प्रगति करनी चाहिए, उसे न तो उसकी प्रेरणा होगी और न वह उस दिशा में सक्रिय होगा। उन्नति और प्रगति भी संसार में कोई आवश्यक बात है—यह उसे याद ही न आयेगा। आकांक्षा ही मनुष्य की क्रियाशीलता को प्रेरित तथा उत्साहित करती है। तथापि यदि उन्नति और प्रगति की आकांक्षा तो हो किन्तु उसे प्राप्त कर सकने की आशा न हो तब भी मनुष्य की क्रियाशीलता गतिमान नहीं होने पाती। वह सोचता है जब वांछित स्थिति पा सकने की आशा नहीं है, कोई सम्भावना नहीं है तो उसके लिए प्रयत्न करना ही बेकार है। बात भी ठीक है कि जिसे यह आशा न हो कि वह परीक्षा में पास हो जायेगा—वह उसमें बैठेगा ही क्यों ? आशा का आधार पाकर ही मनुष्य सारे काम करता है। आशा से रहित अकेली आकांक्षा मनुष्य को उन्नति तथा प्रगति के लिए प्रेरित तथा सक्रिय नहीं बना सकती, आत्महीन व्यक्ति में न तो आकांक्षा का ही उदय होता है और न उसे सफलता में आशा होती है। निदान उन्नति और प्रगति के सहनीय शब्द उसके नाम के साथ जुड़ना सम्भव नहीं हो सकता।

आत्महीनता कोई प्रकृति-प्रदत्त दोष नहीं होता। यह वास्तव में एक मानसिक रोग होता है, जो मनुष्य की अनेक असावधानियों से पैदा हो जाता है। उनमें से एक असावधानी तो अयोग्यता होती है। यह अयोग्यता कार्य कुशलता, कार्य क्षमता, विद्या, बुद्धि, आचार-विचार, आहार-विहार अथवा व्यवहार-बर्ताव की ही क्यों न हो आत्म-हीनता का भाव पैदा कर देती है। जिस आदमी ने अभ्यास और लगनपूर्वक अपने कार्य में कुशलता, दक्षता और योग्यता प्राप्त करने की सावधानी नहीं बरती है, उसे उस विषय में न तो आत्मविश्वास प्राप्त होगा और न वह दक्ष और कुशल व्यक्तियों के साथ समकक्षता अनुभव कर सकता है। उसका उस दिशा में आत्महीनता अनुभव करना स्वाभाविक ही है। वह कितने ही दम्भ अथवा अहंकार का सहारा क्यों न ले, आत्महीनता के भाव से बच नहीं सकता।

जिसमें विद्या, बुद्धि की कमी है। किसी बात को सोच सकने, समझ सकने और ठीक से व्यक्त कर सकने की योग्यता नहीं है, वह जहाँ भी जायेगा उचित स्थान तथा आदर न पा सकेगा। लोग स्वभावतः उसे निम्न दृष्टि से देखेंगे, जिसकी प्रतिक्रिया उस पर आत्महीनता के भाव के रूप में ही होगी। जिसके विचार दूषित होंगे, आचरण निम्नकोटि का होगा वह दूसरों की दृष्टि से ही नहीं स्वयं अपनी दृष्टि में गिरा रहेगा। वह सभ्य और शालीन समाज में आता-जाता भी यही अनुभव करता रहेगा कि वह इसमें आने-जाने योग्य नहीं है। उसके अन्दर का चोर निश्चय ही उसे आत्महीन बना देगा।

आहार-विहार का भी मनुष्य की आत्मा पर बड़ा प्रभाव पड़ेगा। यदि एक बार दूसरे लोग किसी के आहार-विहार पर दृष्टि न भी डालें तो भी उसकी अपनी दृष्टि से तो वह बच ही नहीं सकता। वह किस प्रकार रहता है, क्या खाता-पीता और पहनता है। इस विषय में उसका स्तर क्या है ? आदि बातें भी मनुष्य में आत्म-गौरव, आत्महीनता का भाव पैदा कर देती हैं। जिसका रहन-सहन निकृष्ट और अपने अनुरूप न होगा। उसमें आत्महीनता का भाव रहता ही है। आलस्य के कारण जो गन्दगी से रहता है, अपने स्तर से ऊँचा-नीचा खाता-पहनता है, तो उसे निम्न स्तर में लज्जा और ऊँचे स्तर पर दम्भ की आत्महीनता पैदा हो जायेगी। अयोग्य आहार-विहार और अयोग्य रहन-सहन की असावधानी आत्महीनता का बहुत बड़ा कारण है।

मनुष्य के आत्म-गौरव और आत्महीनता के सम्बन्ध में व्यवहार, बर्ताव का बहुत हाथ रहता है। जो अशिष्ट, असभ्य और अशालीन व्यवहार का अभ्यस्त है। व्यवहार करने में यथायोग्य की सावधानी नहीं बर्तता तो निश्चय ही उसे अपमानित, लांछित तथा तिरस्कृत होना पड़ता है। तिरस्कार अथवा अपमान का सगा सम्बन्ध है। जो समाज अथवा परिवार आदि में तिरस्कृत अथवा अनादृत होता रहता है, उसे आत्महीनता का शिकार बनने से कोई नहीं बचा सकता, निश्चय ही उसकी आत्मा मलीन हो जायेगी, उसका आत्म-तेज नष्ट हो जायेगा और वह आत्महीनता का रोगी बन जायेगा। व्यवहार-बर्ताब की असावधानी आत्महीनता का बड़ा कारण है।

आत्महीनता उत्पन्न होने का एक कारण होता है दूसरों से अपनी तुलना करना। बहुत से लोगों का स्वभाव होता है कि वे दूसरे लोगों के धन-वैभव, कारबार, मान-सम्मान और पद-प्रतिष्ठा पर बहुत दृष्टि रखते हैं और अनजान में ही प्रभावित होकर उन्हें बड़ा आदमी मान लेते हैं। यहाँ तक तो गनीमत होती है किन्तु जब इससे आगे बढ़कर उनकी स्थिति से अपनी तुलना करके उहापोह में पड़ जाते हैं तभी उनमें आत्महीनता के अंकुर उगने लगते हैं। उनके इस प्रकार सोचने का ढंग कि देखो अमुक आदमी के पास कितनी धन-दौलत है, उसका कारबार, पद-प्रतिष्ठा कितनी जोर से चल रहा है। समाज में उसे कितनी पद-प्रतिष्ठा मिली है। कैसे शान-शौकत से रह रहा है। संसार के सारे सुख उसके पास हैं। भगवान की कृपा है। बड़ा भाग्यवान आदमी है और एक मैं हूँ न धन, न दौलत, न मान, न सम्मान, न कार, न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रोजगार। थोड़ी सी आदमनी है। पेट भर रोटी खा लो और संन्तोष करो। अपने-अपने भाग्य की बात है। हमारे भाग्य में जब गरीबी लिखी हो तो हो भी क्या सकता है ? उसमें स्वभावतः आत्महीनता की भावना पैदा कर देता है। किसी की उच्च स्थिति से अपनी साधारण स्थिति की स्पृहा के साथ तुलना करने का अर्थ है कि अपने लिए आत्महीनता की भूमिका बनाना।

यदि किसी से तुलना न करके भी केवल अपने अभावों, कमियों और कष्टों का भी चिन्तन किया जाता रहे, तब भी आत्महीनता का भाव उत्पन्न हो जाता है। मैं गरीब हूँ, मेरे घर का खर्च ही पूरा नहीं पड़ता है। मैं ज्यादा कमा ही नहीं पाता, अपने पर कोई न कोई आपत्ति और उलझन आती ही रहती है—आदि विचार मनुष्य को आत्महीन बना देते हैं। मनुष्य अपने प्रति जितने हीन और ओछे विचार रखेगा, वह उतना ही आत्महीन बन जायेगा। विचारों का स्थिति पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। यदि कोई मनुष्य यथार्थ रूप से गरीब न हो अच्छा-खासा खाता-पीता हो किन्तु लोभ, लालच अथवा भय-दुराव आदि के कारण अपने को निरन्तर गरीब समझता अथवा कहता रहे तो निश्चय ही एक दिन परिस्थितियाँ इस प्रकार से घूम जायेंगी कि वह गरीब हो जायेगा। यदि परिस्थितियाँ न भी घूमें तो भी पैसा होते हुए भी अपने को गरीब और दीन-हीन मानने व कहने वाला यों ही दीन ही होता है। जो अपनी स्थिति और वैभव का अनुभव न कर सके और दूसरों को उसको समझने से वंचित रखे, वह दीन-हीन ही तो होता है। ऐसे निम्न और निकृष्टवृत्ति वाले अवश्य ही आत्महीनता के रोगी बन जाते हैं।

यह और इस प्रकार की अनेक न्यूनताओं और असावधानियों के कारण लोगों में आत्महीनता का भाव आ जाता है। यदि उसे तत्परतापूर्वक जल्दी ही दूर न कर दिया जाये तो वह प्रौढ़ होकर एक मानसिक रोग में बदल जाता है। आत्महीनता का भाव नैसर्गिक न होकर मनुष्य का अपना पैदा किया हुआ होता है। यह भाव उन्नति और प्रगति में बहुत बाधक होता है। अस्तु इसे अपने पास न तो आने देना और न रखना चाहिए।

आत्महीनता से बचकर रहना कोई कठिन बात नहीं है। थोड़ी-सी सावधानी बरतने से इससे आसानी से बचा जा सकता है। उसमें से एक तो यह है कि अपने कार्य और क्षेत्र में दक्षता तथा कुशलता प्राप्त कर ली जाये। सबके साथ यथायोग्य व्यवहार किया जाए। इसके अतिरिक्त दो विशेष बातें यह हैं कि न तो कभी किसी की उच्च स्थिति से अपनी सामान्य स्थिति की तुलना की जाये और न अपना, न अपने कार्यों तथा भाग्य की अवमानना करने के साथ अपनी क्षमताओं में अविश्वास और अपनी स्थिति का अवमूल्यन ही किया जाये। अपने को महत्त्वहीन और अभागा समझने वाले लोग अवश्य ही आत्महीनता के शिकार बन जाते हैं। इन दुष्प्रवृत्तियों से सावधान रहकर जीवन में विश्वास और आदर भाव से अपना कर्त्तव्य किया और अपनी स्थिति में प्रसन्न रहकर चला जाए तो आत्महीनता का कोई प्रश्न ही न रह जाये।

बलिष्ठता और समर्थता की साकार विभूतियाँ

औसत आदमी की श्रमशक्ति गधे, घोड़े से कम है। सफर करने, बोझ उठाने, काम में जुटने की दृष्टि से गधे, घोड़े, बैल आदि की तुलना में मनुष्य कहीं पीछे है। बन्दर की औलाद कहने वाले उसके शरीर की क्षमता का मूल्यांकन उस रूप में करते रह सकते हैं, किन्तु यदि सामान्य को असामान्य वाले कौशल हस्तगत हो सकें तो फिर उस नगण्य-सी क्षमता में असंख्य गुना अभिवृद्धि हो सकती है। बीज के अन्तराल में विद्यमान शक्ति आमतौर से प्रसुप्त स्तर की ही रहती है। किन्तु उसे जगा दिया जाय तो अंकुर फूटने, पौधा बनने, वृक्ष रूप लेने तथा फल-फूलों से लद जाने की परिणति भी प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर हो सकती है।

पौराणिक और ऐतिहासिक काल में ऐसे अगणित व्यक्ति हुए हैं, जिनकी शारीरिक क्षमता असाधारण मानी जाती है। हनुमान का पहाड़ उखाड़ना, समुद्र छलाँगना, भीम का हाथियों के झुण्ड गेंद की तरह आकाश में उछालना, यदि किसी की समझ में न आता हो तो पृथ्वीराज चौहान के शब्दवेधी वाण का स्मरण किया जा सकता है। प्रो. राममूर्ति किसी जमाने में अपने सीने पर हाथी खड़ा करते थे और मोटी चट्टान हथौड़ों से तुड़वाते थे। उन दिनों उन्हें भी बजरंगी कहा जाता था। ऐसे उदाहरण संसार के कोन-कोने में समय-समय पर देखे जाते रहे हैं।

अरब का खलीफा इब्ने अबीतालिब अपने समय का सर्वाधिक बलिष्ठ शासक था। उसका जीवनकाल सन् ६०२ से ६६१ तक था। खैबर की लड़ाई में उसकी ढाल टूट गई। बचाव के लिए उसने किले के एक छोटे फाटक को एक ही घूँसे में उखाड़ लिया और उसी का ढाल की तरह प्रयोग किया। यह छोटा फाटक भी ८५० पौण्ड भारी था। लड़ाई जीतने के बाद उस फाटक को उठाने का अन्य बलवान साथियों ने भी प्रयत्न किया, पर सात सरदारों में से कोई भी उसे उठाने में सफल न हो सका।

भुजाओं की मजबूती का वैसा उदाहरण अभी तक दूसरा सुनने को नहीं मिला, जैसा कि लाक्सन फ्रांस के मडटेव रिहार्ट ने प्रस्तुत किया। वह ठगों के एक गिरोह का सरदार था। एक बार दो साथियों में माल के बँटवारे को लेकर मुठभेड़ हो गई। दोनों एक बड़ी मेज पर चढ़कर चाकुओं से परस्पर आक्रमण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करने लगे। रिहार्द को और तो कुछ न सूझा, उसने उस पत्थर से बनी भारी मेज को सिर पर उठा लिया, जिस पर खड़े होकर वे दोनों लड़ रहे थे। मेज समेत वह दोनों का बोझ लादकर कमरे से आँगन तक गया और मेज पटककर दोनों को गिरा दिया। इस चमत्कार को देखकर लड़ने वाले हतप्रभ रह गये और उस दैत्य से बचने के लिए भाग खड़े हुए।

विगोरीज, फ्रांस के एक शिकारी वैरन क्रिस्टोफ टर्सन के घोड़े की टाँग आखेट की उछल-कूद से टूट गई। घोड़े को उस दयनीय स्थिति में छोड़ना टर्सन ने उचित न समझा। उसने उस ४२० पौण्ड भारी घोड़े को कन्धे पर उठाया और डेढ़ मील दूरी तक उतना भार वहन करते हुए पशु चिकित्सक के पास पहुँचाया।

गुन्नार हैमण्डरसन आइसलैण्ड द्वीपसमूह के क्षेत्र में समुद्री डाकुओं के सरदार थे। लड़ते समय उन दिनों लोहे का रक्षा कवच पहनने का रिवाज था। वह भी उस भारी परिधान को समय-समय पर धारण करता। इस वजन से लदा होने पर भी वह खड़े आदमी को छलाँगकर पार जा सकता था। इतना ही नहीं वह उल्टी छलाँग पीठ की दिशा में भी इतनी ही ऊँची लगा सकता था। पीठ पीछे खड़े हुए आदमी को भी उल्टी छलाँग लगाकर पार करने में उसे कोई कठिनाई नहीं होती थी।

वाइजैन्टिव का राजा रोमैनस पंचम युद्ध के समय लोहे का तकब पहनता था, जो प्रायः चालीस पौण्ड भारी था। वह तकब पहने जमीन पर से उछलकर ऊँचे कद के घोड़े पर सवार होता था। सहारा लेकर जीन पर वह कभी चढ़ा ही नहीं।

बर्फीली पहाड़ियों पर रहने वाले 'लैप' जाति के लोग बर्फीली खाइयाँ पार करने के लिए छलाँग लगाने का अभ्यास करते हैं। उनमें से युवा लोग १२.५ फुट तक की लम्बी छलाँग लगाते देखे गये हैं।

अपने सैनिकों का साहस बढ़ाने के लिए मिश्र के एक बादशाह वैवर्स ने एक अजीब उपाय सोचा और अजीब रवैया अपनाया। वह ३८ पौण्ड भारी लोहे का कवच पहनकर रोज नील नदी की तेज धार को पार करता और उसी भार से लदकर वापस आता। यह रवैया उसने पूरे १७ वर्षों तक जारी रखा।

अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन तथा जेरियाट्रिक्स सोसायटी के भूतपूर्व अध्यक्ष डॉ. एडवर्ड बोर्ड के अनुसार मनुष्य इन सात भूलों से बचकर विश्वासपूर्वक शतायु बन सकता है—

(१) आहार सम्बन्धी मर्यादाओं का उल्लंघन (२) अत्यधिक या अत्यन्त परिश्रम (३) अस्त-व्यस्त दिनचर्या (४) नशेबाजी (५) कामवासना सम्बन्धी असंयम (६) अधिक मानसिक तनाव (७) स्वच्छता-शुचिता की उपेक्षा।

डॉ. केनिथ रोंसले ने अधिक्र सूक्ष्म प्रयोगों के बाद प्रतिपादन यह किया कि यदि मनुष्य शरीर के कोशों में कोई गड़बड़ी न आये, तो गुर्दे २०० वर्ष और हृदय ३०० तक जीवित रखे जा सकते हैं। इसके बाद उन्हें बदला भी जा सकता है। हृदय प्रतिरोपण के प्रयोग तो बहुत ही सफल हुए हैं। इसके अतिरिक्त चमड़ी, फेफड़े और हड्डियों को तो क्रमशः १००० वर्ष और ४००० वर्षों तक भी जीवित रखा जा सकता है।

भारतीय धर्म-ग्रन्थों में 'जीवेम् शरदः शतम्', 'हम सौ वर्ष के आयुष्य का उपभोग करें,' की कामना की गई है। वह उस समय के संयमित और प्राकृतिक दिनचर्या को देखते हुए अत्युक्ति नहीं थी। सूत्रस्थान अध्याय २७ में आचार्य चरक ने मनुष्य की आयु ३६००० रात्रियाँ होने का उल्लेख किया है। यदि मनुष्य हँसी-खुशी, परिश्रम और सादगी का आचरण करें तो इतनी आयु का होना कठिन बात नहीं है।

ऐसे सैकड़ों उदाहरण हैं, जिनसे इस कथन की पुष्टि होती है। सन् १७५० में हेगरी का बोविन १७२ वर्ष की आयु में मरा तब उसकी विधवा पत्नी १६४ वर्ष की थी और सबसे बड़े बेटे की उम्र ११५ वर्ष की थी। वियना के सोलियन साबा १३२ वर्ष की आयु के होकर मरे थे; उन्होंने ९८ वर्ष की आयु में सातवीं शादी की थी।

'नॉर्थ चाइना हैरल्ड' में उत्तर चीन के शांग चूआन ग्राम के निवासी वानशियन जिच नामक वृद्ध की आयु के सम्बन्ध में अनेकों विश्वस्त प्रमाणों का संग्रह प्रकाशित करते हुए यह सिद्ध किया गया है कि वह २५५ वर्ष तक जिया। उसका भोजन पूर्ण शाकाहारी था और दिन में दो बार ही जो कुछ खाना होता, खाता था।

लन्दन के सटू लियोवार्ड चर्च में रखे जन्म-मृत्यु तिथि रजिस्टर में एक ऐसे व्यक्ति का नाम भी अंकित है, जिसका जन्म १५८८ में हुआ था और मृत्यु १७९५ में २०७ वर्ष की आयु में। जब उसकी मृत्यु हुई उसके पूर्व उसके दीर्घ जीवन का रहस्य जानने के लिए लोग बड़ी संख्या में बराबर उससे सम्पर्क करते रहते थे।

आगस्तामाइने निवासी जॉन मिल्ले वृद्धावस्था में भी जवान रहे और मरते समय तक यौवन का आनन्द लूटते रहे। उनने ८० वर्ष की आयु में एक १८ वर्षीया युवती से विवाह किया। उससे उसे दस बच्चे हुए और ४४ वर्ष तक सधवा रही। मिल्ले १२४ वर्ष की उम्र में मरे। तब तक उनके सफेद बाल फिर से लौटकर काले हो गये थे।

इन उदाहरणों से इस तथ्य की पुष्टि होती है कि मनुष्य की प्रस्तुत क्षमताएँ असाधारण हैं। इन्हें प्रयत्नपूर्वक पराक्रम द्वारा या संयोगवश जगने का अवसर मिले तो यही नगण्य सा शरीर ऐसे अद्भुत पराक्रम प्रस्तुत कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकता है; जिसे देखते हुए सामान्यजनों को भी आश्चर्यचकित रह जाना पड़े।

मानवी पराक्रम सम्भावनाएँ उलटने में समर्थ

सम्भावित कठिनाई की जानकारी प्राप्त होना आवश्यक है। इसी अनुमान के आधार पर मनुष्य बचाव का प्रबन्ध करते और उसमें बहुत हद तक सफल होते हैं। जो अनजान रहते हैं तथा प्रमाद बरतते हैं, उन्हें योग्यतम की सुरक्षा वाला नियम तोड़-मरोड़कर रख देता है। शीत प्रकोप से अपरिचित और बचाव के उपाय करने में असमर्थ मक्खी, मच्छर जैसे कृमि-कीटकों में से असंख्यों को हर वर्ष प्राणदण्ड सहना पड़ता है। इसके विपरीत जो जागरूक हैं, वे प्रकृति प्रवाह की अवांछनीयता से अपने आपको बचाते और सुखपूर्वक जीवित रहते हैं।

ठण्डे देशों की चिड़ियाँ उन दिनों लम्बी यात्रा करके भारत जैसे उष्ण देशों में चली आती हैं और मौसम बदलते ही अपने देशों को लौट जाती हैं। हिम प्रदेशों के भालू, अजगर, कन्दराओं में लम्बी तानकर सोते रहते हैं और गर्मी आते ही जग पड़ते हैं। ऐसे ही प्रयास अन्य प्राणियों द्वारा भी किये जाते रहते हैं। यह विपत्ति के पूर्वाभास से अवगत होकर तदनुरूप उपाय बरतने का उपक्रम है। इसे आत्म-रक्षा और बुद्धिमत्ता का संयुक्त उपाय कहना चाहिए, जिसे जीवन का महत्त्व समझने वाले सभी प्राणी अपनाते हैं।

मनुष्य शरीर संरचना की दृष्टि से अन्य प्राणियों की तुलना में दुर्बल पड़ता है। उसकी आवश्यकताएँ और महत्त्वाकांक्षाएँ भी अपेक्षाकृत अधिक बढ़ी-चढ़ी हैं। इसलिए प्रकृति प्रवाह के साथ तालमेल बिठाने को उसे और भी अधिक प्रयास करने होते हैं। इसके लिए खतरों की सम्भावना के प्रति उसे अधिक अनुमान लगाने पड़ते हैं। यह प्रवृत्ति न रही होती तो संकट सिर पर आ खड़ा होने के उपरान्त कुछ करते-धरते न बन पड़ता। मकड़ी, दीमक, चींटी जैसे छोटे कीड़े-मकोड़े तक खतरों की पूर्व जानकारी अपनी अन्तःक्षमता के आधार पर प्राप्त करते हैं और विपत्ति आने से पूर्व ही प्रयत्नों में तत्परतापूर्वक जुटते हैं। भूकम्प जैसे दुर्घटनाओं से पूर्व कुत्ते, बिल्ली जैसे प्राणी जिस प्रकार सुरक्षा प्रयास करते हैं, वह देखने ही योग्य है।

मनुष्य के सम्मुख खतरे कम नहीं हैं। उन्हें जानने के कारण ही वह अनेकों कठिनाइयों से बचने के प्रयास करता है और बहुत कुछ सफल भी होता है। रात्रि में उसे कम दीखता है। अस्तु उसे ठोकर लगने से लेकर निशाचरों तक से उस अवधि में अनेक खतरों की आशंका रहती है। अस्तु बचाव का ध्यान रखते हुए प्रकाश जलाने, मकान बनाने, चौकसी करने जैसे उपाय अपनाये जाते हैं। शीत ऋतु की चपेट से प्राण बचाने के लिए भी आवश्यक वस्त्रों से लेकर आग जलाने तक के संरजाम जुटाये जाते हैं। मूसलाधार वर्षा से सिर छिपाने का प्रबन्ध न हो तो शरीर से लेकर संचित साधनों में से कुछ भी बच सकना सम्भव न होगा।

ऋतु प्रभाव, आक्रमणों का भय, अभावजन्य संकट, प्रकृति प्रकोप जैसे संकटों का अनुभवजन्य ज्ञान रहने से लोग उनसे बचने और समय रहते सुरक्षा प्रबन्ध करने में सफल रहते हैं। आकस्मिक विपत्तियों के सम्बन्ध में भी यही बात है। युद्ध, महामारी, बाढ़, भूकम्प, तूफान, दुर्भिक्ष जैसे संकट न जाने कब, किस रूप में, कहाँ आ धमकें ? इसकी पूर्व जानकारी प्राप्त करने के सम्बन्ध में विज्ञजनों द्वारा निरन्तर माथा-पच्ची की जाती रहती है। बदलते मौसम की जानकारी देने वाली वैज्ञानिक प्रयोगशालाएँ इस सन्दर्भ में बहुमूल्य उपकरणों का प्रयोग करती हैं। उन संग्रहीत पूर्व सूचनाओं के आधार पर सुरक्षा के प्रयत्न चल पड़ते हैं, उस आधार पर संकटों से निपटने में बहुत कुछ उपाय भी बन पड़ता है। युद्धकाल में राडार प्रभृति उपकरणों से शत्रु के आक्रामक वायुयानों का पता चलता है और उस आधार पर तत्काल रोकथाम का प्रबन्ध होता है। यह पूर्वाभास विज्ञान के विकसित स्वरूप का ही प्रतिफल है।

अदृश्य जगत के अन्तर्ग्रही प्रभावों और मानवी गतिविधियों से प्रभावित अदृश्य वातावरण से सम्बन्धित ज्योतिर्विज्ञान की तरह ही प्रत्यक्ष जगत की परिस्थितियों पर अवलम्बित सम्भावना विज्ञान भी है। इसी आधार पर विकास की योजना बनती है और रोकथाम के कार्यक्रम बनते हैं। यदि अनुमानों में कोई तथ्य न रहा होता तो भविष्य निर्धारण की दृष्टि से कोई महत्त्वपूर्ण कदम उठ ही नहीं सकता था। अनिश्चितता की स्थिति में दाव लगाना तो मात्र जुआरी, सट्टेबाजों का ही काम है। बुद्धिमत्ता की यह विशेषता है कि वह भूत से शिक्षा ग्रहण करती—वर्तमान का विवेचन, विश्लेषण करती और भविष्य का ऐसा अनुमान लगाती है जो सत्य और तथ्य के इर्द-गिर्द ही चक्कर काटता है। भविष्य की योजनाओं का सारा ढाँचा इसी आधार पर खड़ा किया जाता है। संसार के राजनेता, अर्थशास्त्री, समाज संचालक, विज्ञानवेत्ता, बुद्धिजीवी प्रायः इन्हीं पूर्वानुमानों का महत्त्व स्वीकारते हुए भी भावी प्रयासों की रूपरेखा विनिर्मित करते हैं। इसी वर्ग में मौसम विज्ञानियों एवं अन्तरिक्ष वैज्ञानिकों को भी गिना जा सकता है।

भविष्यचिन्तक एवं भविष्य वक्ता वर्ग में, खगोलवेत्ता ज्योतिषी—अदृश्य जगत के पर्यवेक्षक अध्यात्म तत्त्वदर्शी तथा तथ्यों के सूक्ष्म विवेचक, बुद्धिजीवी, दूरदर्शी यह तीन वर्ग प्रमुख हैं। इनकी निर्धारणाओं एवं घोषणाओं पर बहुत कुछ विश्वास भी किया जाता है। लोग तदनुरूप अपनी भावी योजनाएँ बनाने में भी संलग्न होते हैं। इतने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर भी इस मूलभूत मान्यता पर विश्वास किया जाता है कि सम्भावनाओं का अनुमान अटल या अकाट्य नहीं है। उनमें परिस्थितिवश भी हेर-फेर हो सकता है और मानवी पुरुषार्थ से उसमें असाधारण उलट-पुलट होने की सम्भावना हो सकती है। भूलते-भटकते वे लोग हैं, जो भविष्य अनुमान को, कथन को अकाट्य मान बैठते हैं। इस भ्रम-जंजाल के कारण ही लोग निराश होते पाये जाते हैं अथवा किसी अप्रत्याशित लाभ की कल्पना करते हुए आकाश से सोना बरसने जैसी कल्पना करते रहते हैं। शेखचिल्ली को ऐसा ही चिन्तन अपनाने पर उपहासास्पद बनना पड़ा था। उत्तम भविष्य की सम्भावना का फलित होना भी बरते गये पराक्रम पर निर्भर है। इसी प्रकार अनिष्ट का निराकरण भी प्रयत्न-परायणता पर बहुत कुछ निर्भर है। सम्भावनाओं का अनुमान कितना ही सही क्यों न हो उनका निर्धारण किन्हीं के द्वारा भी क्यों न किया गया हो। समझा जाना चाहिए कि उनके साथ मानवी पराक्रम की शर्त अनिवार्य रूप से जुड़ी हुई है। पत्थर की लकीर यहाँ कुछ भी नहीं है।

विशेषज्ञ विलक्षणों के कितने ही निर्धारणों में पिछले दिनों भारी परिवर्तन सम्भव हो सके। अनिष्ट टल गये और सुयोग के अकल्पनीय अवसर उपलब्ध हुए। इस प्रकार पूर्व निर्धारणों के बदल जाने में उन भविष्य वक्ताओं को दोषी नहीं ठहराया जा सकता। उन दिनों परिस्थितियाँ ठीक वैसी ही थीं जैसी कि बताई गईं। किन्तु समय रहते लोग चेते—अभीष्ट हेर-फेर में प्राणपण से जुटे और सम्भावना के साथ जूझते हुए अन्ततः उसे बदलकर ही रहे। इस प्रकार वे भविष्यवाणियाँ यथावत् घटित न होने पर भी पूर्व सूचना देने के रूप में अतीव उपयोगी ही सिद्ध हुईं। यदि वह कथन सामने न होता तो बेखबर लोग गफलत में ही पड़े रहते और उसी विपत्ति में पिस मरते जो दूरदर्शियों ने सम्भावनाओं के रूप में व्यक्त की थीं। इस प्रकार वे भविष्यवाणियाँ गलत सिद्ध होने पर भी वस्तुतः सही सिद्ध होने की अपेक्षा कहीं अधिक महत्त्वपूर्ण समझी गईं।

अंकशास्त्रियों ने धरती की उर्वरता, बढ़ती हुई जनसंख्या और वर्षा असन्तुलन का विवेचन करते हुए इन दिनों भयंकर खाद्य संकट उत्पन्न होने की भविष्यवाणियाँ की थीं। पर वैसा कुछ हुआ नहीं। क्योंकि उस चेतावनी को गम्भीरतापूर्वक लिया गया और उत्पादन के लिए भूमि बढ़ाने से लेकर खाद-पानी के नये आधार ढूँढ़ निकालने के अप्रत्याशित प्रयत्न किये। फलतः खाद्य संकट टल गया और स्थिति ऐसी न बनी जिसके कारण दुर्भिक्ष पड़ने-भूखों मरने का त्रास सहना पड़ता।

विश्व के मूर्धन्य तथ्यान्वेषी विचारकों में से प्रमुख लेस्टर ब्राऊन, एर्लिच एवं हार्डिन ने एक स्वर से उन १६ वर्षों में निर्वाह साधनों की कमी की दृष्टि से अत्यधिक भयंकर घोषित किये थे जो इस वर्ष समाप्त हो गये। ऐसी दशा में मोटी दृष्टि से उन कथनों का उपहास उड़ाया और असत्य ठहराया जा सकता है। इतने पर भी सचाई अपनी जगह पर अडिग है। यदि रोकथाम के असाधारण प्रयत्न न चले होते तो विलक्षणों के अनुसार वह विपत्ति निश्चित रूप से उतरती, जिसे चेतावनी के रूप में प्रकट किया गया था।

सन् १६०० में इंग्लैण्ड के अंकशास्त्रियों ने जलाऊ लकड़ी का भयंकर अभाव होने की घोषणा की थी और इस कारण उस देश की जनता तथा सरकार बुरी तरह भयभीत हो उठी। पर समय आने पर वह संकट टल गया क्योंकि कोयलों का नया विकल्प खोज लिया गया। अतएव न घरेलू ऊर्जा की कमी पड़ी और न ईंधन के अभाव में कारखाने बन्द हो जाने की विपत्ति टूटी। अठारहवीं सदी में भी इंग्लैण्ड के प्रख्यात अर्थशास्त्री और उच्च पदासीन तथ्यान्वेषी विलियम स्टैनली जीवेन्स ने ऊर्जा संकट की नये सिरे से घोषणा की थी और देश में उद्योग-अवरोध आने की आशंका व्यक्त की थी। उस चेतावनी की गम्भीरता को देखते हुए इंग्लैण्ड ने महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों पर पैर पसारे और वहाँ से खनिज तेलों के दोहन का नया आधार हस्तगत कर लिया। अब आशंका के विपरीत इंग्लैण्ड न केवल अपनी ईंधन आवश्यकता पूरी करता है वरन् तेल और कोयले का निर्यात भी करता है। जीवेन्स का कथन असत्य सिद्ध होने पर भी उन्हें किसी ने झूठा नहीं ठहराया वरन् संकट की सामयिक चेतावनी देने और साथ ही उससे उबरने का उपाय बताने के लिए उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा ही की गई।

सन् १८८० में जनसंख्या वृद्धि और सस्ते मछली तेल की कमी से तेल संकट इंग्लैण्ड के सामने आया। वह तेल महँगा हो जाने से घरों में अन्धेरा रहने की आशंका व्यक्त की गई। विशेषज्ञों की उस चेतावनी से कोई घबराया नहीं वरन् दूसरे तेलों के उत्पादन का एक नया माहौल बना। फलतः अलसी, अरंडी, सरसों, तिल आदि का उत्पादन तो अत्यधिक मात्रा में किया ही गया इसके अतिरिक्त देवदारू, चीड़ जैसे पेड़ों से भी तेल निकाला जाने लगा। यहाँ तक कि ऐसे चट्टान खोज निकाले गये। जिनसे केरोसिन ऑयल निकला। आज मिट्टी के तेल का सर्वत्र प्रचलन है। इस खोज का श्रेय ह्वेल मछली का तेल न मिलने की संकट चेतावनी के साथ जोड़ा जा सकता है।

सन् १९७३ में विशेषज्ञों ने यह तथ्य उजागर किया था कि खनिज तेल की समाप्ति सन्निकट है। पैट्रोल पम्प सूखे पड़े होंगे। पैट्रोल अत्यधिक महँगा होने पर भी सीमित मात्रा में ही मिलेगा। इस घोषणा से अन्य सभी तो चिन्तित थे, पर बड़े व्यापारियों ने पैट्रोल महँगा होने की सम्भावना को ध्यान में रखते हुए तेल कुँओं के साथ लम्बे अनुबन्ध कर लिये। बाद में जब समुद्रों और रेगिस्तानों से तेल निकाला जाने लगा तो संकट टल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गया। पैट्रोल की कमी न पड़ी और अनुबन्ध करने वाले व्यापारी दिवालिया हो गये।

अमेरिका में यह चर्चा बहुत दिनों तक व्यवसायी वर्ग में होती रही है कि अगले दिनों खाद्यान्न की कमी पड़ेगी और उस विश्व संकट से वह देश अनेक प्रकार के लाभ उठा सकेगा, पर समय की कसौटी पर वह बात खरी नहीं उतरी। सर्वत्र खाद्यान्न अधिक उत्पादन की सतर्कता बढ़ी फलतः अनाज और भी अधिक सस्ते हो गये। इस सन्दर्भ में सन् १९६७ में प्रकाशित पाल पैड काक की पुस्तक 'फैमाइन १९७५' बहुचर्चित रही, जिसमें इस अवधि से संसार भर में भयंकर अकाल पड़ने और करोड़ों-अरबों के भूख से मरने की सम्भावना व्यक्त की गई थी। ऐसी ही एक पुस्तक १९६८ में प्रकाशित पाल एर्लिच की 'पाप्युलेशन बाम्ब' है, जिसमें दो दशकों के अन्तर्गत जनसंख्या इतनी बढ़ जाने की बात कही गई थी कि मानवी निर्वाह साधनों में भयंकर संकट उत्पन्न होगा और लोग मक्खियों की मौत मरेंगे। किन्तु समय की कसौटी पर वह आशंका भी सही सिद्ध नहीं हुई। जनसंख्या की बढ़ोत्तरी पर मनुष्य द्वारा तथा प्रकृति द्वारा कितने ही अंकुश लगे और जितनी बढ़ोत्तरी हुई, वह परिस्थिति में खप गई। सन् १९७१ से १९८० के बीच खाद्यान्न की भारी कमी रहने की घोषणाएँ विश्व के मूर्धन्य विशेषज्ञों ने की थीं वे सभी गलत सिद्ध हुईं।

इस अवधि में उत्पादन पहले की अपेक्षा कहीं अधिक मात्रा में हुआ। इस प्रकार लेस्टर ब्राउन की "सस्टेनेबल सोसायटी" घोषणा एक प्रकार से असत्य ही सिद्ध हुई। बाद में इन्हीं लेखक महोदय ने "सीड्स ऑफ चेलैंज" ग्रन्थ में यह बताया कि पूर्व घोषित भविष्य कथन क्यों असत्य सिद्ध हुआ।

पाल एर्लिच ने कुछ भयंकर कथन अगणित तथ्यों की साक्षी देते हुए घोषित किये थे। उनमें उनने निकट भविष्य में अकाल, महामारी, युद्ध के अतिरिक्त समुद्र सूखने, मछलियों की कमी पड़ने और ५० मिलियन मनुष्यों के भूखों मरने की सम्भावना व्यक्त की थी। घोषित समय निकल गया। सन् १९८० तक इन संकटों में से एक भी भयावह स्तर का नहीं उभरा। इस प्रकार दावे के साथ किये गये—सप्रमाण भविष्य कथन असत्य सिद्ध होते रहे हैं।

युग सन्धि के इन बीस वर्षों के सम्बन्ध में कितने ही दिव्यदर्शियों, महामनीषियों द्वारा ऐसी भविष्यवाणियाँ की जाती रही हैं। धर्मशास्त्रों, आप्त पुरुषों, दिव्यदर्शियों, महामनीषियों ने एक स्वर से इस अवधि में अनेकानेक संकटों की सम्भावनाएँ व्यक्त की हैं। कारण गिनाते और प्रतिफलों की संगति बिठाने पर वे कथन हर दृष्टि से तथ्यपूर्ण भी दीखते हैं। इतने पर भी यह नहीं मान बैठना चाहिए कि जो कहा गया वह पत्थर की लकीर है और उसे टाला या बदला नहीं जा सकता। मानवी पराक्रम इस संसार में सर्वोपरि है। वह किन्हीं भी भली-बुरी सम्भावनाओं को बदलने में समर्थ है। वह राम को सिंहासनारूढ़ होने के स्थान पर वनवास भी भिजवा सकता है। कैकयी और मन्थरा की दुरभिसन्धि ने वातावरण उलट दिया। इसी प्रकार हनुमान ने वह कर दिखाया जिसे असम्भव के स्थान पर सम्भव की स्थापना कहा जा सकता है।

भूतकाल में अवतारी महामानवों ने वह कर दिखाया, जिसे सामान्य दृष्टि से अप्रत्याशित और असम्भव ही समझा जाता था। इस बार भी ऐसा हो सकता है, युग सन्धि की बेला में जहाँ एक ओर विनाश-विभीषिकाएँ सामने हैं वहाँ दूसरी ओर सतयुग की वापसी वाले युग परिवर्तन की उज्ज्वल भविष्य की सम्भावना भी विद्यमान है। निराशा की कोई आवश्यकता नहीं। संसार की कोई भली-बुरी सम्भावना या परिस्थिति ऐसी नहीं है, जिसे मानवी पराक्रम सुधारकर बदल न सके।

विनाश के आसुरी तत्त्व जहाँ इन दिनों अपना मरण देखकर विभीषिकाएँ उत्पन्न करने में कमी नहीं रहने दे रहे हैं। वह देवत्व की तत्परता शान्ति और प्रगति की स्थापना के लिए भी कम नहीं है। हमें निराशा के अन्धकार में भी प्रगति की स्वर्णिम किरणों का सपना सँजोना चाहिए और उसे फलित होने के लिए सृजनात्मक पराक्रम का पूरा-पूरा उपयोग करना चाहिए।

काश हम दिशा बदल सकें

क्या मनुष्य ने नीचता और नृशंसता ही सीखी है ? क्या उसका पराक्रम स्वार्थपरता और विनाश-विग्रह के लिए ही है ? यह बातें तभी सच मालूम पड़ती हैं जब भूतकाल में हुए इस प्रकार के उदाहरणों की खोज करते हैं। खोजने से क्या नहीं मिल जाता ? यहाँ जमीन में साँप, बिच्छू, कँतर और कानखजरे ही भरे पड़े हैं ? इस प्रश्न का उत्तर सकारात्मक ही नहीं नकारात्मक भी मिलता है, यदि ऐसे ही घिनौने जन्तुओं से धरती भरी पड़ी होती तो यहाँ कृषि-उद्यान किस प्रकार उगा पाते ? और बहुमूल्य खनिजों की सम्पदा कहाँ से उपलब्ध होती ? यदि दुष्ट-दुराचारी ही इस संसार में भरे होते तो ऋषि, तपस्वियों और वीर-बलिदानियों की कथा-गाथाएँ हमें सुनने को कहाँ से मिलतीं। यह सही है कि कभी कंस, रावण, जरासन्ध जैसे भी यहाँ उत्पन्न हुए और अनाचारों की भरमार करते रहे हैं। पर जनक, हरिश्चन्द्र, अश्वपति, भागीरथ जैसे राजवंशी भी इसी वसुधा को गौरवान्वित करते रहे हैं।

भविष्य को अन्धकारमय देखने के लिए विज्ञान के सिर पर अनेक दोष मढ़े जा सकते हैं पर शल्य चिकित्सा जैसे-अनुसन्धानों में मृत प्रायों को जीवन भी उसी आधार पर मिला है। संचार और परिवहन के—सिंचाई और मुद्रण की अनेक उपयोगी धाराएँ भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसी के माध्यम से हस्तगत हुई हैं। भविष्य को अन्धकारमय देखने के लिए अनेकों कारण और प्रमाण दृष्टिगोचर होते हैं किन्तु सृजन और सहयोग के सभी आधार नष्ट हो गये हों सो बात भी नहीं है।

मनुष्य जाति ज्वार भाटों की अभ्यस्त है। उसे ढेरों समय अन्धकार में गँवाना पड़ता है, पर सदा रात्रि ही नहीं होती। सूरज, चन्द्रमा का प्रकाश हमारी कार्य पद्धति को समुन्नत बनाने के लिए कारगर भी होता है। इतिहास में विनाश के दुर्दिनों की ही भरमार नहीं दीखती, वरन् ऐसा भी होता रहा है कि उपयोगी कठिन कार्य भी मनुष्य ने ही कर दिखाये हैं। स्वर्ग से धरती पर गंगा उतारने, समुद्र छलाँगने, गोवर्धन उठाने जैसे मिशन दूसरी घटनाओं के रूप में इस प्रकार भी प्रस्तुत हुए हैं कि मनुष्य की अपार सामर्थ्य और सूझ-बूझ का परिचय भी प्राप्त किया जा सकता है।

स्वेज और पनामा की नहरें मनुष्य की अनौखी पुरुषार्थ-परायणता है। थल में जल भर देने के इन प्रयासों में कितनी जनशक्ति, कितनी धनशक्ति एवं कितनी कार्य-कुशलता का नियोजन हुआ है और उनके कारण संसार को कितनी सुविधाओं का लाभ मिला है, इसे हम सहज ही देख सकते हैं। चीन की दीवार और मिश्र के पिरामिड, मनुष्य की बुद्धिमत्ता और असाधारण सूझ-बूझ को कार्यान्वित कर दिखाने के प्रमाण हैं। मनुष्य जब सृजन की दिशा में सोचता है, तो उसे इतना अद्भुत सोचने और विकट पराक्रम प्रदर्शित करते हुए देखा जाता है, जिसके कारण कि आश्चर्यचकित रह जाना पड़े। जलचरों की तरह समुद्र में किलोल करने और पक्षियों की तरह आकाश में स्वछन्द बिचरते मनुष्य को देखते हैं तो यह विश्वास करते नहीं बनता कि उसे मात्र विनाश ही विनाश आता है। वह इस धरित्री को नरक बनाने के लिए ही उत्पन्न हुआ है। उसने हत्या की कला में प्रवीणता प्राप्त करने के लिए युद्ध-कौशल भर सीखा है। वह अनादि काल से सृजन भी सोचता रहा है और विश्वास करना चाहिए कि उसकी इस सृजन क्षमता का सर्वथा समापन ही नहीं होने जा रहा है। उसने श्रम और सहयोग की विशिष्टता को सर्वथा भुला दिया है।

बहुत लम्बा समय नहीं हुआ। नीदरलैण्ड ने समुद्र को पीछे धकेलते-धकेलते उससे २,०५०,००० हैक्टर जमीन हथिया ली और अपने देश का क्षेत्रफल ८ प्रतिशत बढ़ा लिया। इस भूमि पर प्रायः ढाई लाख लोग न केवल रहते वरन् खेती-बाड़ी, व्यवसाय, उद्यान, निवास आदि के साधन खड़े कर लिये हैं।

यह कार्य अनायास ही नहीं हो गया। उसके लिए उन्हें समुद्र से लड़ना पड़ा। जिसने १९१६ में प्रलयंकर बाढ़ बनकर एमस्टरडम का सारा उत्तरी इलाका उदरस्थ कर लिया था और खारा पानी भरकर उस भूमि को बेकार बना दिया था। इस प्रकार मात खाते रहने की अपेक्षा उस देश के निवासियों ने निश्चय किया कि समुद्र को मजा चखाना चाहिए। तब कोई अगस्त मुनि तीन चुल्लू में सागर सोखने नहीं आये और न किसी लक्ष्मण ने धनुष-बाण उठाकर उसे क्षमा माँगने के लिए बाधित किया। वरन् मनुष्य का कौशल ही आगे आया जिसका कर्तृत्व देखकर आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है। जूडर की खाड़ी में १५ से ५० किलोमीटर की चौड़ाई में प्रायः १३० किलोमीटर धँसकर असाधारण बाँध बाँधा गया। यह समुद्र तल से ६ मीटर ऊँचा है। इसकी नींव १८० मीटर चौड़ी है। बाँध बनाते समय सन् १९१६ से १९२० तक समुद्र के साथ आँख-मिचौनी खेलनी पड़ी, जैसे ही भाटा पीछे हटता बजरी, सीमेण्ट आदि का इतनी मुस्तैदी से बजन डाला जाता कि जब तक ज्वार वापस लौटे, तब तक डाला हुआ मसाला पत्थर जैसी मजबूती पकड़ ले। मिलिक, इन्जीनियर, नाविक एक मुस्तैद सेना की तरह छापा मारते और समुद्री उछालों की कमर तोड़ देते। यह प्रयास बिना नागा पूरे ४ वर्ष तक चला और वह प्रयोजन सिद्ध हो गया, जिसकी योजना बनाने वालों को स्वप्नदर्शी कहा जाता था। इस टकराव में प्रायः आधा श्रम, आधा मसाला समुद्र ने बर्बाद कर दिया तो भी अन्ततः उसे हार ही माननी पड़ी। सन् १९२० में बाँध बनकर तैयार हो गया। उसका सिरा इतना चौड़ा और इतना मजबूत है कि उस पर ट्रकों, बसों और कारों की निरन्तर धमा-चौकड़ी मची रहती है।

इस निर्माण कार्य में जो साधन, उपकरण एवं धन-जन का भारी प्रबन्ध करना पड़ा, उसे उस छोटे से देश के निवासियों ने किस प्रकार जुटाया होगा और बीच-बीच में आने वाली निराशाजनक कठिनाइयों का किस प्रकार सामना किया होगा। इसका सुविस्तृत विवरण पढ़ने पर पता चलता है कि मनुष्य की सृजनात्मक शक्ति भी कितनी प्रचण्ड है ? आवश्यकता उसे नियोजित करने भर की है।

संसार में अभावों की शिकायत बहुत की जाती है। जनसंख्या की तुलना में जमीन कम पड़ने की बात भी कही जाती है। पर कभी सृजन के क्षेत्रों पर दृष्टि नहीं जाती। अफ्रीका का इतना बड़ा क्षेत्र वीरान पड़ा है, जिसे सहयोगपूर्वक समुन्नत किया जाय तो न केवल उस देश के निवासियों को भारत जैसे एक समूचे देश का उसमें अभिनव निर्वाह हो सकता है। ब्रह्मपुत्र के प्रभाव से बने हुए दलदलों को यदि पर्वतीय चूरे से पाटा जा सके तो एक नया वर्मा बस सकने जितनी भूमि हस्तगत हो सकती है।

पारस्परिक भय और अविश्वास यदि बड़े देश अपने मन से निकाल सकें और मिल-जुलकर प्रस्तुत शक्तियों को विकास कार्यों में लगा सकें तो पिछड़ी हुई और दरिद्र, दुर्बल दुनिया उतनी ही समृद्ध दृष्टिगोचर हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकती है जैसी कि आज जापान, जर्मनी आदि दृष्टिगोचर होते हैं।

अन्तरिक्षीय कार्यक्रम का उद्देश्य अगले दिनों आकाश को कुरुक्षेत्र बनाना और प्रतिद्वन्द्वियों को भूनकर खाक बना देना है। यदि यह इरादे बदले जा सकें और युद्ध-आयुधों में लगने वाली राशि एवं कुशलता को जन-साधारण की कठिनाइयों से उबारने में लगाया जा सके तो एक पंचवर्षीय हो जाने में न केवल आर्थिक समस्याओं का समाधान हो सकता है वरन् प्रगति के लिए जिन साधनों की आवश्यकता है, उन्हें जुटा सकना नितान्त सरल हो सकता है।

बाद दिशा बदलने भर की है। विश्व विजय की महत्त्वाकांक्षाओं को विश्व निर्माण के लिए नियोजित किया जा सके तो सर्वत्र खुशहाली उत्पन्न हो सकती है, जिसके आधार पर सभी बिना किसी टकराव के जीवनोपयोगी समस्त साधन प्राप्त कर सकें और उन्हें मिल-बाँटकर खाते हुए हँसती-हँसाती जिन्दगी जी सकें। इस दिशा परिवर्तन में उतना जोखिम नहीं है, जितना कि विनाश पर उतारू मनःस्थिति में अपनी प्रतिपक्षी में तथा अगणित निर्दोषों की न पूरी हो सकने वाली क्षति की सम्भावना है।

आज सबसे बड़ी आवश्यकता मानवी चिन्तन की दिशा बदलने की है। विद्वत्ता, बुद्धिमत्ता की कहीं कमी नहीं। सफलता के एक से एक बड़े कीर्तिमान प्रस्तुत करने वालों की सामर्थ्य और प्रतिभा भी कम नहीं आँकी जा सकती। वैभव भी कम नहीं। जितना धन सरकारों के, सम्पन्नों के पास है, वह इसके लिए पर्याप्त है कि संसार के दो-तिहाई वन-मानुषों और पिछड़ों को उनकी स्थिति से उबारकर देवोपम न बन पड़े तो भी बुद्धिमान मनुष्यों की तरह सुविधा-सम्पन्न जीवन तो जी ही सकते हैं।

जिस परिवर्तन को लाने की आज महती आवश्यकता अनुभव की जा रही है, उसे उपलब्ध करने का राजमार्ग एक ही है कि मनुष्य आपा-धापी और छीन-झपट का विचार छोड़कर मिल-जुलकर रहने और सहयोगपूर्वक आगे बढ़ने का मन बनाये और उसी के लिए योजनाबद्ध कदम उठाये।

मनुष्य के पास न साधनों की कमी है, न सूझ-बूझ की। उसका सहयोगपूर्ण पराक्रम यदि सृजन की दिशा में नियोजित हो सके, तो कोई कारण नहीं कि सर्वत्र संव्याप्त चिन्ता, आशंका, उद्विग्नता से छुटकारा न मिल सके। स्नेह-सहयोग की प्रवृत्ति अपनाई जा सके और जो अभाव इन दिनों खलते हैं उन्हें पूरा करने के लिए नीदरलैण्ड निवासियों जैसा संकल्प किया जा सके तो हर क्षेत्र में, हर स्तर की चमत्कारी प्रगति का आश्चर्य देखा जा सकता है।

संकल्प शक्ति का कल्पवृक्ष

हमारे दूरदृष्टा ऋषि-मुनियों ने विचारों की महत्ता पर बहुत अधिक बल दिया है। वृहदारण्यकोषनिषद में कहा गया है कि इच्छा प्रधान व्यक्ति जैसा संकल्प करता है, वैसा ही कर्म करता है। जैसा कर्म करता है, वैसा ही बन जाता है। वस्तुतः जैसे हमारे विचार होते हैं, वैसा ही हमारा स्वभाव, हमारा आचार भी ढल जाता है। हमारा चेहरा, हमारा शरीर, हमारा स्वास्थ्य, हमारी सफलता-असफलताएँ सभी कुछ हमारे विचारों की प्रतिच्छायाएँ हैं। अँग्रेजी में एक कहावत है—"तुम वह नहीं हो, जो तुम अपने विषय में सोचते हो कि तुम यह हो, अपितु तुम जैसे विचार करते हो, वास्तव में तुम वही हो।" यदि हम अपने विचारों को उन्नत बना सकें, विचार शक्ति पर नियन्त्रण रख सकें तो हमारे जीवन की अनगिनत समस्याओं, कष्टों और असफलताओं का स्वतः ही निदान हो जाये।

विचारों के नियन्त्रण से वे बड़ी से बड़ी शक्तियाँ प्राप्त की जा सकती हैं, जो सहज ही लोगों को चमत्कृत कर दें। विचारों का संयमन और ध्यान की एकाग्रता यह दो इतने बड़े जादू हैं कि समस्त पृथ्वी का कायाकल्प करने की शक्ति स्वयं में रखते हैं। संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं, उन सबकी सफलता का मूलमन्त्र उन्नत विचार शक्ति और दृढ़ संकल्प बल ही है। उनके जीवन में अगणित कष्ट, कठिनाइयाँ आयीं परन्तु इन दो शक्तियों के बल पर उन्होंने उन सब पर विजय प्राप्त की। ईश्वरीय प्रतिभा लेकर तो विरले ही व्यक्ति आते हैं। संकल्प और साहस के अभाव में वह प्रतिभा भी धूमिल पड़ जाती है। कष्ट, कठिनाइयाँ किसके जीवन में नहीं आतीं ? जो मन को निग्रहीत कर कठिनाइयों में जीना सीख लेता है, संसार में वही महान और अनुकरणीय बनता है। यदि हम महापुरुषों के जीवन चरित्र का अध्ययन करें तो पायेंगे कि उन्होंने कठिनाइयों को सहकर ही विजयश्री का वरण किया है। ईसा, सुकरात, गाँधी और दयानन्द ने अपने सिद्धान्तों के प्रचार और प्रसार के लिये क्या नहीं सहा ? आज मरकर भी वे यश-काया से अजर-अमर हैं क्योंकि उन्होंने विचारशक्ति और संकल्पबल के द्वारा तूफानों-झंझावातों को हँसते-हँसते सहकर विश्व को नूतन प्रकाश दिखलाया। इसी प्रकार अन्य लोगों के उदाहरण भी हमारे सम्मुख हैं। कार्ल-मार्क्स जब अपने विश्वप्रसिद्ध ग्रन्थ "कैपीटल" की रचना में पूरी तरह से डूबे थे, तब उनके घर में खाना खाने को एक पैसा तक नहीं था। गोर्गी सारे दिन साहित्य सृजन में लगे रहते और जब क्षुधा बहुत व्याकुल करती तो कूड़े के ढेर में डबलरोटी के टुकड़े ढूँढ़ते थे। ग्राहमबेल ने जब टेलीफोन का आविष्कार किया था, तब अन्तिम राशि तक उसमें लगा दी थी और भूख की भी परवाह न कर वे अपने अन्वेषण में जुटे रहे थे। वज्रमूर्ख कालिदास संकल्प शक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के बल से ही विश्ववन्द्य महाकवि बने थे। वस्तुतः हममें से कोई भी कार्ल मार्क्स, गोर्गी, कालिदास आदि से कम नहीं है। जो हाथ-पैर और प्रतिभाएँ, क्षमताएँ भगवान ने उन्हें दी थीं, वही हमें भी दी है। अन्तर इतना ही है कि उन्होंने अपने दृढ़ निश्चय को, आगे बढ़ने के भाव को निरन्तर बनाये रखा, कभी निराशा और कायरता को प्रश्रय नहीं दिया परन्तु हम छोटी-छोटी बाधाओं में भी हार मानकर, थककर और निराशा से चूर होकर बैठ जाते हैं। अपने विचारों को ऊँचा उठाइये। अपनी संकल्प शक्ति को जगाइये। कायरता और निराशा, कुण्ठाओं के विचारों को पास न फटकने दीजिए। कौन ऐसा कार्य है जो आपके लिए असम्भव है ? अपने पौरुष और कर्मठता पर विश्वास रखिये—पूरी शक्ति से लक्ष्य की ओर बढ़ जाइये। अन्धकार से प्रकाश की ओर जाइये। तभी आप मनुष्य कहलाने के अधिकारी हैं। इसी में मनुष्य की गरिमा भी है।

वे तीन—जो दुर्भाग्य से लड़े और जीते

मनुष्य को स्वयं अपनी क्षमताओं की सही जानकारी नहीं होती। कभी-कभी विशेष परिस्थितियों में यदि मनुष्य धैर्य एवं साहस न खो दे—तो उनका परिचय मिलता है। जिस घटना विशेष के कारण मनुष्य की अपराजेय शक्तियों का परिचय मिलता है। वह भले ही प्रत्यक्ष के रूप में उपयोगी न हों किन्तु मनुष्य की शक्ति की कसौटी के रूप में ही उनकी महत्ता बढ़ जाती है। जो घटना साहसिकता एवं धैर्य के विहीन व्यक्तियों के लिए दुर्घटना बन सकती है, वही मनोबल सम्पन्न मनुष्य के गौरव की दुंदुभी बन जाती है।

फिजी में रहने वाले तीन भारतीय नागरिकों ने ऐसी ही एक परीक्षा में सफल होकर मानवता की गरिमा बढ़ाई। दो सप्ताह तक भयंकर जीवों से भरे समुद्र में एक छोटी नौका पर धैर्यपूर्वक बिना आहार के वे बने रहे।

जहाँ मछली सामान्य आहार के रूप में प्रयुक्त होती है, वहाँ बहुत लोगों की आजीविका समुद्र में मछली पकड़ने से ही चलती है। बहुधा यन्त्र एवं पाल से नियन्त्रित छोटी नाव (लाँच) पर १-२ दिन का आहार रखकर लोग गहरे समुद्र में मछली पकड़ने निकल जाते हैं। दूर तक जाकर लौटने में आने-जाने में ही बहुत समय लग जाता है, अस्तु, एक दिन में लौटें तो मछली पकड़ने को कम समय मिल पाता है। इसी कारण २-३ दिन की व्यवस्था बनाकर ही निकलना उपयुक्त होता है।

६ नवम्बर को तीन भारतीय युवक सर्वश्री सुरेन्द्र प्रसाद, नरअली एवं चन्द्रिका प्रसाद २३ फुट लम्बी नाव पर 'लाबासा' बन्दरगाह से मछली शिकार के लिये निकले। उनके पास १० पौण्ड चावल तथा लगभग ८ गैलन पीने के पानी की व्यवस्था थी। उन्होंने लगभग ३६ घण्टों में ५०० पौण्ड के करीब मछलियाँ पकड़ीं। ८ तारीख को जब उनने लौटने का उपक्रम किया तो अपने आपको प्रकृति के पंजों में असहाय फँसा हुआ पाया। उनके पाल की डोरी मछली पकड़ अभियान में टूट चुकी थी तथा इन्जन के भी कुछ पुर्जे बेकार हो गये थे। उन्होंने लंगर डालकर लहरों में नाव को अधिक न भटकने देने का प्रयास किया, तो ज्ञात हुआ कि वह इतने गहरे समुद्र में पुहँच चुके हैं कि लंगर कार्य नहीं कर सकते हैं।

भयंकर परिस्थिति थी। शार्क मछलियों से भरा तूफानी समुद्र, लहर के थपेड़ों से हवा में उड़ते पत्ते की तरह डोलती नाव और उसमें असहाय तीन मनुष्य। उन्होंने किसी प्रकार नौका का संतुलन बनाये रखा। पर लहर के थपेड़े उन्हें कहाँ से कहाँ पहुँचा दे रहे हैं, यह उन्हें ज्ञान न था। चारों ओर पानी के अतिरिक्त कुछ दिखता हो तो अनुमान भी लगे। किन्तु उन तीनों साहस के धनी नौ जवानों ने सन्तुलन बनाये रखा। क्या होगा, कैसे होगा ? की कल्पना में शक्ति व्यय करने की अपेक्षा अपनी सीमा के अन्दर पूरा प्रयास करना उन्होंने श्रेयस्कर समझा।

लहरों में भटकती नाव में ९ तारीख को उनकी खाद्य सामग्री समाप्त हो गई। पकड़ी हुई मछलियों पर भी कब तक गुजारा करते ? ११ तारीख तक सड़ जाने के कारण उन्हें समुद्र में फेंक देना पड़ा। रहे-सहे साधन भी समाप्त हो गये थे। अब प्रकृति की निष्ठुरता तथा मनुष्य के धैर्य के बीच सीधा संघर्ष था। ऐसे में यदि निराशा उन पर हावी हो जाती तो उनका अस्तित्व ही समाप्त हो जाता। किन्तु उन बहादुरों ने प्रकृति की चुनौती का डटकर मुकाबला किया। उनका संकल्प था कि दो-दो चुल्लू समुद्री पानी से गला तर रखकर भी जब तक सम्भव है, खिलाड़ियों की तरह इस स्पर्धा का मजा लेंगे और अन्त में उनका साहस विजयी हुआ। दो सप्ताह हो जाने पर उनके शरीर बहुत कुछ क्षीण हो गये थे। कहीं से कोई सहायता की आशा नहीं थी। किन्तु दैवयोग से एक खोजी जहाज द्वारा उनका उद्धार हो गया।

किनारे पर उनका स्वागत हुआ। पत्रकारों ने विशेष भेंट की तथा अपनी साहसिकता प्रमाणित करके मनुष्य का गौरव बढ़ाने वाले चारों वीरों का यशगान किया गया। संभावित दुर्घटना कीर्ति पताका बन गई।

तन्मे मनः शिव-संकल्पमस्तु

''१९ वर्षीय एक फ्रांसीसी युवती ने एक युवक से विवाह सम्बन्ध निश्चित किया। युवक भी उसे प्यार करता था अतएव विवाह की स्वीकृति तो उसने दे दी किन्तु साथ ही यह वचन भी ले लिया कि वह अभी कुछ दिन धन कमायेगा तब विवाह करेगा। युवती जानती थी कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गृहस्थ संचालन की सुविधाएँ धन से ही प्राप्त होती हैं अतएव उसने सहर्ष अनुमति दे दी। युवक अमेरिका चला गया और रोजगार शुरू कर दिया।''

३ वर्ष में उसने पर्याप्त धन कमा लिया किन्तु इस बीच एक मुकदमा लग गया और उसे मुकदमे में उलझना पड़ गया। युवक ने पत्र द्वारा प्रेयसी को सूचना भेज दी कि वह कम से कम १० वर्ष नहीं लौट पायेगा, युवती ने उत्तर में लिखा—तुम जब भी लौटेंगे तभी विवाह करूँगी, मृत्युपर्यन्त तुम्हारी प्रतीक्षा करूँगी, युवक ठीक १५ वर्ष बाद लौटा और यह देखकर आश्चर्यचकित रह गया कि जिस युवती को १५ वर्ष में ३४ वर्ष की अधेड़ हो जाना चाहिये उसके नाक-नक्शे, शरीर-स्वास्थ्य में बिल्कुल अन्तर नहीं, पहले जैसी ताजगी, मानो उसे अमेरिका गये कुछ सप्ताह से अधिक न बीते हों। विवाह सम्पन्न हुआ। दोनों सुख से रहने लगे पर युवक का विस्मय अभी तक भी दूर नहीं हुआ था, सो उसने एक दिन युवती से पूछ ही तो लिया रहस्य ?

उक्त घटना का चित्रण करते हुए अमरीकी वैज्ञानिक और लेखक डॉ. बैनेट अपनी पुस्तक ''वृद्धावस्था-कारण और निवारण (ओल्ड एजः इट्स काज एण्ड प्रिव्हेन्शन'') में लिखते हैं कि मनुष्य शरीर समुद्री लहर की तरह है, जिसमें से कूड़ा-कचरा हर घड़ी फेंका जाता रहता है और जल को शुद्ध रखा जाता रहता है। ८० दिन पीछे शरीर का एक भी कोश (सेल) पुराना नहीं रह जाता। जिस तरह जीर्ण और पुराना हो जाने पर मकान को बदल दिया जाता है और अधिक पक्की ईंटों से बनाकर नया कर देते हैं, उसी प्रकार परमात्मा ने शरीर की व्यवस्था की है। हर पुराना कोश बदल जाता है और प्रकृति उसके स्थान पर स्वस्थ कोश स्थापित करती रहती है फिर मनुष्य बूढ़ा क्यों हो जाता है ? बैनेट ने वर्षों इस बात पर विचार किया, मनन-चिन्तन और अन्य परीक्षण किये तब कहीं उसका उत्तर उसकी समझ में आया। वह उत्तर उन्होंने इस घटना के माध्यम से देते हुए आगे लिखा है कि एक दिन युवक ने पूछ ही लिया अपनी नव विवाहिता से—तुम्हारे शरीर में अन्तर क्यों नहीं पड़ा ?

युवती अपने पति को एक ६ फुट आदमकद शीशे के पास ले गई और उसके सामने खड़ी होकर बोली—यह है रहस्य मेरे स्वास्थ्य का। जिस दिन आप मेरे पास से विदा हुए, मैंने संकल्प लिया कि आप जब लौटेंगे आपको इसी अवस्था में मिलूँगी। मैं प्रतिदिन प्रातःकाल सोकर उठती तो पहले इस शीशे के पास आती। इसी तरह इसके सामने खड़ी होकर अपने चेहरे को देखकर प्रसन्न होती और मस्तिष्क में एक विचार उठाती कि कल जैसी थी ठीक वैसी ही अब भी हूँ, मुझ में कुछ भी परिवर्तन नहीं होगा। फिर मैं काम पर लग जाती। दिन भर काम करती, हँसती-खेलती पर मन में अपने सवेरे वाले स्वस्थ चेहरे की ही कल्पना करती रहती और उससे हर क्षण एक नई स्फूर्ति अनुभव करती रहती। मैंने मन में सदैव अपने आपको १९ वर्ष का बनाकर रखा, उसी का प्रतिफल है कि १५ वर्ष बीत जाने पर भी मैं ज्यों की त्यों स्वस्थ हूँ।

इस घटना द्वारा डॉ. बैनेट ने एक नये विज्ञान और अभूतपूर्व भारतीय मान्यता को नई स्थापना दी है और लिखा है, मनुष्य का मन जैसा होगा वैसा ही वह बनेगा। मनुष्य का मन बड़ा समर्थ है। वह मिट्टी को सोना और सोने को हीरे में बदल सकने की सामर्थ्य से परिपूर्ण है।

जिस तरह मनुष्य ने शरीर को भोग की वस्तु समझकर उसने अपने आपको महान आध्यात्मिक सुख-सम्पदाओं से विमुख कर लिया, यह दुर्भाग्य ही है कि वह मन जैसी अत्यन्त प्रचण्ड शक्ति का उपयोग केवल लौकिक स्वार्थों और इन्द्रिय भोगों तक सीमित रखकर उसे नष्ट करता रहता है। मन भौतिक शरीर की चेतन शक्ति है—आइन्सटीन के शक्ति-सिद्धान्त के अनुसार न कुछ भार वाले एक परमाणु में ही प्रकाश की गति × प्रकाश की गति अर्थात्—186000 × 186000 कैलोरी शक्ति उत्पन्न होगी। १ पौण्ड पदार्थ की शक्ति १४ लाख टन कोयला जलाने से जितनी शक्ति मिलेगी। इतनी होगी। यद्यपि पदार्थ को पूरी तरह शक्ति में बदलना सम्भव नहीं हुआ तथापि यदि इस शक्ति को पूरी तरह शक्ति में बदलना सम्भव होता तो एक पौण्ड कोयले में जितना द्रव्य होता है, उसे शक्ति में बदल देने से सम्पूर्ण अमेरिका के लिये १ माह तक के लिये बिजली तैयार हो जाती है। मन शरीर के द्रव्य की विद्युत शक्ति है। मन की एकाग्रता जितनी बढ़ेगी, शक्ति उतनी ही तीव्र होगी। यदि सम्पूर्ण शरीर को इस शक्ति में बदला जा सके तो १२० पौण्ड भार वाले शरीर की विद्युत-शक्ति अर्थात् मन की सामर्थ्य इतनी अधिक होगी कि वह पूरे अमरीका को लगाकर १० वर्ष तक विद्युत देता रह सके। इस प्रचण्ड क्षमता से ही भारतीय योगी, ऋषि, महर्षि शून्य आकाश में स्फोट किया करते थे और वे किसी को एक अक्षर का उपदेश दिये बिना, अपनी इच्छानुसार अपने संकल्पबल से समस्त भूमण्डल की मानवीय समस्याओं का संचालन और नियन्त्रण किया करते थे। शेर और गाय को एक ही घाट पर पानी पिला देने की प्रचण्ड क्षमता इसी शक्ति की थी। मन को ही वेद में **''ज्योतिषां ज्योति''** अर्थात् प्रकाश का भी महाप्रकाश कहा है। डॉ. बैनेट ने उसे एक महान-विद्युत शक्ति (माइण्ड इज ए ग्रेट इलेक्ट्रिकल फोर्स) से सम्बोधित किया है।

खेद है कि मनुष्य इतनी अतुल शक्ति-सम्पत्ति का स्वामी होकर भी परमुखापेक्षी और दीन-हीन जीवन जीता है। मन एक शक्ति है, यदि उसे विकृत और घृणित रखा जाता है तो सिवाय इसके कि दूषित परिणाम सामने आयें और क्या हो सकता है ? अमेरिका के रोगियों का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनो-विश्लेषण करने से पाया गया है कि यों तो अधिकांश सभी रोगी मानसिक दृष्टि से अस्वस्थ थे किन्तु पेट के अधिकांश शत-प्रतिशत मरीज दूषित विचारों वाले व्यक्ति थे। डॉ. कैनन ने अध्ययन करके लिखा है कि ''आमाशय'' का सीधा सम्बन्ध मस्तिष्क के ''आटोनोमिक'' केन्द्र से होता है। आटोनोमिक केन्द्र के दो भाग होते हैं—(१) सिम्पैथेटिक (२) पैरा सिम्पैथेटिक यह दोनों अंग पेट की क्रियाएँ संचालित करते हैं। पाचन रस उत्पन्न करते हैं। यदि रोगी मानसिक चिन्ताओं और आवेगों से पीड़ित होगा तो निश्चित ही उसकी पेट की क्रियाओं में विपरीत प्रभाव पड़ेगा और उसका पेट हमेशा खराब रहेगा। इसलिये सामान्य स्वास्थ्य के लिये ही—मनुष्य का अच्छे और विधायक विचारों वाला होना अत्यावश्यक है।

सन् १९२३ में किये गये डॉ. क्रेन्स डेलमार और डॉक्टर राओ की शोधें शरीर और मन के सम्बन्धों पर विस्तृत प्रकाश डालती हैं। उनका कहना है कि शरीर में कोई रोग उत्पन्न नहीं हो सकता, जब तक कि मनुष्य का मन स्वस्थ है। जाँच के दौरान जो महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष हाथ लगे वह बताते हैं कि ''स्नायुशूल'' उन्हें होता है, जो आवश्यकता से अधिक खुदगर्ज तथा हिंसक होते हैं। ''गठिया'' का मूल कारण ईर्ष्या है। निराश और हमेशा दूसरों से दोष देखने वाले लोग ही कैंसर के शिकार होते हैं। सर्दी उन्हें अधिक लगती है जो दूसरों को तंग किया करते हैं। हिस्टीरिया और गुल्म चोर, ठग और निराश व्यक्तियों को होता है। अजीर्ण झगड़ालू लोगों को होता है। तात्पर्य यह कि हर बीमारी मनुष्य की मानसिक विकृति का परिणाम होती है। आज जो संसार में रोग-शोक की भयानक बाढ़ उपज पड़ी है, उसका कारण न तो कोई विषाणु है और न ही बाहरी वातावरण, उसका कारण तो विकृति और बुरे विचारों के रूप में हर व्यक्ति के मन के अन्दर बैठा हुआ होता है। यदि मनुष्य अपने मन को ऊर्ध्वगामी बना ले, उसकी महान शक्ति को पहचान ले तो वह कुछ से कुछ बन सकता है। उत्तम स्वास्थ्य तो उसका अत्यन्त स्थूल लाभ है। **''मन एव मनुष्याणां कारणं बंध-मोक्षयो''** अर्थात् बंधन और मुक्ति का कारण भी यह मन ही है।

डॉ. बैनेट ने स्वयं अपना उदाहरण इस पुस्तक में प्रस्तुत किया है। उन्होंने पुस्तक में अपनी दो फोटो छापी हैं। एक ५० वर्ष की उम्र की, दूसरी ७० वर्ष की आयु की, ७० वर्ष की आयु वाले फोटो में कोई झुर्री नहीं, कोई सिकुड़न और बुढ़ापे के लक्षण नहीं जबकि ५० वर्ष की आयु वाले फोटो को देखने से लगता है कि यह व्यक्ति बूढ़ा ही नहीं, रोगी भी होगा, धँसी आँखें पिचके गाल, सूखा चेहरा ?

यह अन्तर कहाँ से आ गया ? उसका उत्तर देते हुये श्री बैनेट स्वीकार करते हैं कि उन्होंने मन के महत्त्व को ५० वर्ष की आयु में तब जाना जब शरीर बिल्कुल कृश हो गया था। मैंने ५० वर्ष का जीवन बुरी मनःस्थिति से दूषित कर्मों का जिया। स्वास्थ्य इतना खराब हो गया कि एक क्षण की जिन्दगी भी १० मन पत्थर से दबी जान पड़ने लगी, तभी मैंने डॉ. मारडन, जोकि अमरीका के एक महान अध्यात्म-परायण व्यक्ति हैं, के विचार पढ़े-उन्होंने अपनी पुस्तक ''लौह इच्छाशक्ति'' (इन आइरन विल) में लिखा है—''मनुष्य अपने विचार नये कर ले। अपने विचार और चरित्र बदल ले तो वह अपने शरीर को नया कर सकता है।'' इस स्वाध्याय ने मुझे औषधि का वरदान दिया। मैंने अपने आपको स्वस्थ अनुभव करने, सदैव प्रसन्न रहने, सेवा, सहयोग, प्रेम, मैत्री, दया, करुणा और परोपकार का जीवन जीने का अभ्यास प्रारम्भ कर दिया और उसका जो सुफल मिला वह मेरी ७० वर्ष वाली फोटो में पाठक स्पष्ट देख सकते हैं।

डॉ. बैनेट की बात को सबसे पहले भारतीय तत्त्वदर्शियों ने जाना। उन्होंने पहले ही लिख दिया है—**''संकल्पं मातसं देवी चतुर्वर्गप्रदायकम्''** अर्थात् मन के संकल्प में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष दिलाने वाली सभी शक्तियाँ भरी पड़ी हैं। उसकी शुद्धता और उसकी विधेयक शक्ति की जानकारी होने पर ही वे प्रातःकाल प्रार्थना किया करते थे—

यस्मान्न ऋते किंचन कर्म क्रियते।
तन्मे मन शिव संकल्पमस्तु।। **(यजुर्वेद)**

अर्थात् जिसके बिना संसार का कोई भी कर्म नहीं हो सकता, वह मेरा मन शिव संकल्प वाला हो।

आज के रोग-शोक, आज की सामाजिक विकृतियों का कारण कोई बाह्य नहीं, लोगों के मनों का दूषित हो जाना है। इसलिये आज की प्रमुख समस्या बेरोजगारी, आबादी, खाद्यान्न आदि नहीं मन की विकृति है, जब तक उसे न सुधारा जायेगा, संसार से संकट कम करने की बात सोचना व्यर्थ और निरर्थक होगा।

मानवी काया काँच की नहीं, अष्टधातु से बनी है

पोर्टलैण्ड में एक आठ वर्षीय बालक सड़क कूटने वाले तीन टन भारी इंजन के नीचे आ गया। उसकी कमर से नीचे का भाग बुरी तरह पिस गया। किसी को उसके बचने की आशा न थी, पर जीवन शक्ति ने काम किया और एक वर्ष तक अस्पताल में रहकर वह अच्छा हो गया। पैर चलने लायक तो न हो सके पर जीवन रक्षा तो हो ही गई।

न्यूयार्क की पन्द्रह मंजिल ऊँची इमारत से एक दो वर्ष का नन्हा टामी पेइवा गिरा। उसकी हड्डियाँ टूट गईं फिर भी वह मरा नहीं।

केलीफोर्निया विश्वविद्यालय के भौतिक प्राध्यापक डाक्टर क्रेग टेलर ने स्वयं अपने ऊपर प्रयोग करके यह सिद्ध किया कि संसार के सबसे अधिक गरम क्षेत्र में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहकर भी औसत स्वास्थ्य वाला आदमी १०० दिन तक जी सकता है। यदि स्नायु संस्थान अपेक्षाकृत अधिक समर्थ हों तो २०० दिन तक जिया जा सकता है। आमतौर से अत्यधिक गर्मी वाले स्थान के बारे में अब तक यह मान्यता प्रचलित है कि वहाँ कोई २४ घण्टे से अधिक नहीं जी सकता। डाक्टर टेलर ने २२० डिग्री तक की गर्मी देर तक सहन करके दिखाई और वे २५० डिग्री तामपान को भी १४ मिनट तक सहन करने में सफल रहे।

कितना शीत मनुष्य शरीर सह सकता है ? इसका परीक्षण मेजर डोनमल्ड ने बर्फीले पानी की शीत एक घण्टे तक सहकर दिखाया। वे कहते हैं, यदि शीतरक्षक सूट पहन रखा हो तो, शीत से मृत्यु नहीं हो सकती।

इंग्लैण्ड का एक विमान चालक टेड ग्रीनवे को, द्वितीय महायुद्ध के दौरान विपत्ति में फँस गया। उसके दो और साथी भी थे। भयंकर शीत प्रदेश के बर्फीले प्रदेश में उसे भूखे-प्यासे १० दिन गुजारने पड़े। कपड़े भी गरम न थे। इतनी विपत्ति का सामना करते हुए उस प्रदेश को पास करते हुए वे लोग बच सकने की स्थिति में पहुँचे।

अमेरिका के युद्ध रोमांच इतिहास में यह घटना जुड़ी हुई है कि उसकी एक सैनिक टुकड़ी ग्रीनलैण्ड के बर्फ से ढके क्षेत्र में फँस गई और नितान्त सादे कपड़े पहने, ८८ दिन बिताकर बाहर आ सकने में सफल हुई। १० दिन तो उस टुकड़ी को बिना भोजन के रहना पड़ा।

मनुष्य के शरीर का तापमान ९८.६ डिग्री होता है। यदि वह १९ डिग्री घट जाय अर्थात् ७९ के करीब रह जाय तो जीवन संकट उत्पन्न हो जायेगा। इसी तरह ९ डिग्री बढ़ जाय अर्थात् तापमान १०७ पर जा पहुँचे तो भी मृत्यु हो जायेगी। बुखार में तापमान अधिक न बढ़ने पाये, इससे इसके लिए डाक्टर सिर पर बर्फ रखते हैं। इस प्रतिपादन को झुठलाने वाली एक नर्स है, जिसने ११० डिग्री बुखार से कई दिनों तक लड़ाई लड़ी और आखिर वह अच्छी हो गई। डाक्टर कह चुके थे कि इसका बचना सम्भव नहीं। यदि बच भी गई तो इतनी गर्मी उसके दिमाग को विक्षिप्त अवश्य कर देगी। पर नर्स ने न मौत को अपने पास फटकने दिया, न पागल मन को। अमेरिका के बुकलिंस पुशाबक नामक अस्पताल की इस नर्स ने मानवी जीवन शक्ति को मृत्युञ्जयी सिद्ध करते हुए नया प्रतिपादन प्रस्तुत किया कि मृत्यु से जीवन अधिक सामर्थ्यवान है।

आयरिश स्वाधीनता यज्ञ के उद्गाता टेरेन्स मेकस्विनी ने जेल में अनशन किया और तिहत्तर दिन तक निराहार रहकर मौत से जूझते रहे। भारतीय स्वाधीनता के सेनानी यतीन्द्रनाथ दास बिना आहार किये ६८ दिन की लम्बी अवधि तक मौत से लड़ते रहे।

आपरेशनों के दर्म्यान कितने ही लोगों को एक फेफड़ा, एक गुर्दा, जिगर का एक भाग, आँतों का बड़ा भाग आदि काटकर अलग कर दिये जाते हैं पर जो शेष बचा रहता है, उतने से ही शरीर अपना काम चलाता रहता है और जीवित रहता है।

सामान्य मनुष्य शरीर का तापमान ३६.६ अंश शतांश होता है। खून में शक्कर की मात्रा ०.१ होती है। रक्तचाप साधारण स्थिति में १००-१४० मिली मीटर मर्कयुरी कीलम रहता है।

यह ३६.६ तापमान भीतर के अवयवों का ही होता है। ठण्ड के दिनों में हाथ-पैरों का ताप तो ३३ से भी कम रहता है। फिर भी सारा कार्य यथावत् चलता रहता है। पर इससे अधिक भीतरी गर्मी नहीं गिरनी चाहिए और वह ४५ से आगे भी नहीं बढ़नी चाहिए अन्यथा जीवन संकट उत्पन्न हो जायेगा।

परिस्थितिवश यदि ताप घटता-बढ़ता है तो उसका नियन्त्रण करने के लिए शरीर के भीतर ही हीटर एवं कूलर जैसी व्यवस्था मौजूद है। अपना सचेतन नाड़ी संस्थान तापमान को सन्तुलित रखने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहता है। माँशपेशियाँ ऊष्मा उत्पन्न करने का काम करती हैं। उन्हीं में ऊष्मा बनती, पकती और बढ़ती है। इनके अतिरिक्त हृदय, फुप्फुस, वृक्क, यकृत, आँतें आदि अंग भी एक प्रकार से भट्टी की तरह जलते और गर्मी पैदा करते हैं।

शरीर दिन-रात में १६० से लेकर १८० लाख कैलोरी ऊष्मा नित्य बाहर फेंकने का क्रम चलाता है। बिजली के घरेलू हीटर भी प्रायः इतना ही ताप उत्पन्न करते हैं, जब गर्मी कम पड़ती है, तो ठण्ड लगने लगती है। दाँत किट-किटाते हैं, अंग काँपते हैं यह अतिरिक्त क्रिया-कलाप प्रकृति द्वारा अतिरिक्त गर्मी उत्पन्न करने के लिए घर्षणात्मक हलचल पैदा करने के लिए आरम्भ किया जाता है।

हमारा रक्त एक अच्छा ऊष्मा वाहक है। ताप को एक स्थान से दूसरे स्थान तक भेजने के लिए रक्त संचार पद्धति की द्रुतगामिता ही अभीष्ट प्रयोजन पूरा करती है। यह रक्त दौड़ता न हो तो गर्मी जहाँ बनती है वहीं बनी रहती। ताप उत्पन्न करने वाले अवयव जलने लगते और शेष को शीत निवारण कठिन पड़ जाता। रक्त दौड़ने का ही काम ही नहीं करता, वह स्वयं गर्मी भी पैदा करता है और गरम भी रहता है। उसकी यह विशेषता हीटर और कूलर के दोनों प्रयोजन पूरे करती है। जब देह को गर्मी लगती है, तो रक्त की दौड़ शरीर से गर्मी बाहर फेंकने लग जाती है और जब ठण्ड प्रतीत होती है तो यह गर्मी भीतर संचित रहकर अंगों को गरम करती है। गर्मी में पसीना निकलना शीतलता उत्पन्न करता है। शीत में ताप संचय का क्रम चलता है और अपना रक्त ही आवश्यक गर्मी की व्यवस्था बना देता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरीर का ऊष्मा संचालन केन्द्र मस्तिष्क नहीं वरन् रीढ़ की हड्डी के ऊपर मस्तिष्क के नीचे स्थित है। यह स्व संचालित है। रक्त निरन्तर इसके चारों ओर बहता रहता है। रक्त प्रवाह का नियन्त्रण भी यहीं से होता है। किस अंग को कितना रक्त आवश्यक है, उसका लेखा-जोखा और वितरण प्रबन्ध करना इसी केन्द्र का काम है। बाहरी सर्दी-गर्मी बढ़ने पर यह ताप नियन्त्रण केन्द्र विशेष रूप से सक्रिय होता है और परिस्थिति के अनुरूप अपने को ढालकर सारे शरीर की स्थिति ऐसी बना देता है, जिसके आधार पर शीत-ताप की घट-बढ़ का सामना किया जा सके। सारे शरीर में फैले हुए—त्वचा के साथ गुँथे हुए, पतले रेशों जैसे सचेतन ज्ञान तन्तु— इस केन्द्र को शीत-ताप की स्थिति की जानकारी निरन्तर पहुँचाते रहते हैं। वह निर्णय करता है कि परिस्थिति का सामना करने के लिए किस अवयव को क्या करना चाहिए। इसका निर्देश सेना संचालक की तरह होता है, जिसे अवयव तत्काल शिरोधार्य करते हैं। सचेतन मस्तिष्क को अन्तरंग की इस महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया का पता भी नहीं चलता पर अचेतन निरन्तर वह व्यवस्था जुटाता रहता है जिससे जीवन संचार की सारी गतिविधियाँ भली प्रकार सम्पन्न होती रहें।

यह ऊष्मा संचालक नाड़ी संस्थान इतना संवेदनशील है कि डाक्टर लोग आपरेशन के समय रीढ़ की हड्डी में सुई लगाकर इसे किंचित अचेत कर देते हैं। बस बात की बात में देह सुन्न हो जाती है। प्रयोगाशालाओं में इस केन्द्र की छेड़-छाड़ से कैसी जादू जैसी प्रतिक्रियाएँ हो सकती हैं यह दिखाया जाता है। किसी पशु का यह केन्द्र विद्युत संचार करके तनिक-सा उत्तेजित कर दिया जाय तो वह घोर शीत की स्थिति में भी गर्मी से व्याकुल हो उठेगा। इसके विपरीत यदि प्रचण्ड गर्मी की स्थिति में उस केन्द्र को शिथिल कर दिया जाय तो प्राणी ठण्ड से काँपने लगेगा।

मनुष्य शरीर सामर्थ्यों का पुंज है। उसमें प्रगति की समस्त सम्भावनाएँ विद्यमान हैं। यदि उन शक्ति स्रोतों को समझ लिया जाय और प्रयत्नपूर्वक आत्मोन्नति के लिए कटिबद्ध हुआ जाय, तो प्रतीत होगा कि प्रगति के लिए आवश्यक वे सभी विशेषताएँ अपने भीतर विद्यमान हैं, जिनका पहले अभाव प्रतीत होता था।

विचारशील लोग प्रगति के साधन बाहर नहीं ढूँढ़ते वरन् भीतर खोजते हैं। उनके दोष-दुर्गुण सुधारते हैं और अस्त-व्यस्त स्वभाव एवं समयक्रम को इस प्रकार क्रमबद्ध करते हैं कि अभीष्ट दिशा में बढ़ चलने का सहज ही पथ-प्रशस्त होता चला जाय। भाग्योदय की समस्त सम्भावना मनुष्य के परिष्कृत व्यक्तित्व मे सन्निहित रहती हैं। जिसने इस तथ्य की वास्तविकता समझ ली उसे सबसे पहले अपने को सम्भालने, सुधारने पर ध्यान करना पड़ता है।

जहाँ प्रगति की अगणित सम्भावनाएँ अपने भीतर विद्यमान हैं, वहाँ यह भी एक भारी रहस्य है कि अवरोधों को, प्रतिकूलताओं को सहन करने की भी अपने में अनन्त सामर्थ्य मौजूद है। शरीर और मन की बनावट कुछ ऐसी विचित्र है कि उसे साधारण आघात-अवरोध झुका नहीं सकते। हिम्मत के धनी और धैर्यवान व्यक्ति मानसिक सन्तुलन बनाये रहते हैं और आगत संकटों से दिल्लगी-मजाक करते हुए आगे का रास्ता बनाते रहते हैं। मनस्वी व्यक्ति को कोई विपत्ति झुका नहीं सकती। संकट सभी पर आते हैं। वे सदा जमे ही नहीं रहते, वरन् उड़ते हुए बादलों की तरह टलते-बदलते रहते हैं। आज जो विपत्ति आई है, कल उसका हल भी सामने आयेगा जिनका यह विश्वास है, उन्हें देर तक प्रतिकूलताओं से खिन्न नहीं रहना पड़ता। एक रास्ता बन्द होने पर वे दूसरी राह खोज निकालते हैं।

मन की तरह शरीर की रचना भी ऐसी भी है कि साधारण बीमारियाँ या दुर्घटनाएँ कुछ बहुत अनर्थ नहीं कर सकतीं। तितीक्षा शक्ति अपनी काया में इतनी अधिक सँजोई हुई है कि मृत्यु जैसा संकट उत्पन्न होने पर भी जीवन रक्षा की आशा की जा सकती है। विधाता ने यह काया काँच की नहीं बनाई, जो जरा-सा आघात लगने पर टूट-फूट जाय। सच तो यह है कि यह अष्टधातु की बनी है और इस अन्दाज से विनिर्मित हुई है कि बड़े से बड़े आघात सह सके। हमें विपत्तियाँ नहीं मारतीं, मारती हैं बुजदिली और पश्तहिम्मती। जो डरते हैं, वे मरते हैं। घबराहट का प्रभाव पेट में छुरा घोपे जाने से अधिक बुरा होता है। छुरेबाजी के शिकार दर्जनों घावों को सहन करके अस्पताल से हँसते-कूदते बाहर निकलते हैं जबकि घबराने वाले को एक फुन्सी ही भय और आतंक का कारण बन जाती है और प्राण लेकर हटती है।

तितीक्षा शक्ति बढ़ाने पर भारतीय धर्म में बहुत जोर दिया गया है। तप साधनाओं में अधिकतर का उद्देश्य तितीक्षा ही है। कष्ट की स्थिति आने पर भी मन को असन्तुलित न होने देने का अभ्यास ही तप साधना का मूलभूत प्रयोजन है। व्रत, उपवास, माघ स्नान, धूनी तपना, मौन, कठोर आसन, रात्रि जागरण आदि के पीछे इस अभ्यास की परिपक्वता ही प्रयोजन है, जिसके द्वारा कठिन समय आने पर हिम्मत न हारने का मनोबल यथा-स्थान बना रहे।

दुर्बलता शरीर में नहीं मन में है। यदि मन को सँभाले-सँजोये रहा जाय, तो शरीर के बारे में यह निश्चित कहा जा सकता है कि वह सहज ही टूटने के लिए नहीं बनाया गया है। वह कठोरतम परिस्थितियों को सहनकर सकने में सक्षम है। यदि मन की साहसिकता बनी रहे तो मानवी काया की समर्थता अपने ढंग की अनौखी ही पाई जायेगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भगवान ने हमें इतना समर्थ और सहन शक्ति सम्पन्न शरीर दिया है। यह अपना काम है कि उसकी सुदृढ़ता को अनुपयुक्त आहार-विहार से नष्ट करने पर उतारू न हों। यह अपना काम है कि अवरोधों से लड़ने की क्षमता को अक्षुण्ण बनाये रहने के लिए तितीक्षापरक तप साधनायें करते रहें। यह अपना काम है कि मनोबल ऊँचा रखें, हिम्मत न हारें, निराशा को पास न फटकने दें और एक रास्ता बन्द होने पर दूसरा रास्ता खोजें, खोलें और यदि मानसिक दुर्बलता से बचा रहा जाय तो शरीर हारी-बीमारियों से लड़ते-झगड़ते लम्बी जिन्दगी जी सकता है और अवरोधों से दिल्लगी-मजाक करते हुए सफल और समर्थ जीवन की दिशा में बढ़ता रह सकता है।

संकल्प शक्ति के अद्भुत चमत्कार

दक्षिणी अटलांटिक महासागर के कुछ नाविक अपनी नौकायें जलतरण कराने वाले थे, तभी उन्होंने देखा एक मादा कछुआ, जिसकी लम्बाई लगभग पाँच फुट और वजन कोई ९०० पौण्ड था, एसंशन द्वीप की ओर जा रही है। 'एसंशन' कुल पाँच मील क्षेत्रफल का छोटा-सा द्वीप है। नाविक कछुये के पीछे चलते चले गए। मादा टापू पर पहुँची। एक छोटा-सा गड्ढा खोदा उसमें १०० अण्डे दिए और उन्हें रेत से ढँक दिया। अण्डों को सुरक्षित जानकर वह वहाँ से फिर लौट पड़ी। अब वह हजार मील की यात्रा कर ब्राजीलियन समुद्र तट पर पहुँच गई। इधर अण्डे अपने आप पकते रहे।

ढाई-तीन वर्ष बाद वही मादा फिर गर्भवती हुई और फिर उसी 'एसंशन' द्वीप की ओर चल पड़ी। ठीक उसी दिशा में चलती हुई वह मादा कछुआ उसी गड्ढे के पास पहुँची, फिर वहीं अण्डे दिए। बिना किसी यन्त्र के इतनी दूर के स्थान तक पहुँचना आश्चर्य का विषय था। जब वैज्ञानिकों ने उसकी खोज की तो उन्होंने और भी आश्चर्यजनक रहस्यों का पता लगाया।

उन्होंने देखा कि कछुआ अण्डे रखने के इस स्थान को एक विशेष प्रकार की गंध और विद्युत चुम्बकीय तरंगों से पहचानती है, यह तरंगें उसके मस्तिष्क से निकलती थीं और उसे न केवल उस स्थान तक पहुँचा देती थीं, वरन् उसकी विद्युत चुम्बकीय शक्ति के द्वारा वह अपने इन अण्डों को हजार मील की दूरी होने पर भी पकाती रहती थी। यदि यहा मादा मर जाय तो फिर उसका दिया हुआ एक भी अण्डा न पकेगा। मानसिक शक्ति का यह चमत्कार पहली बार वैज्ञानिकों की समझ में आया।

शरीर में स्थित आत्मा के व्यवहार के लिए यद्यपि पाँच कर्मेन्द्रियाँ और पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ हैं। पर वह स्थूल होने से केवल भौतिक प्रयोजन ही पूरा करती हैं। इनकी क्षमता सीमित है। ग्यारहवीं इन्द्रिय शक्ति या मन है। जिसके द्वारा आत्मा अपनी इच्छायें और संकल्प व्यक्त करती है। यह मन इतनी जबर्दस्त शक्ति है कि आत्मा को भी इच्छाओं के जाल में बाँधकर लोक-लोकान्तरों में बाँधे फिरती है। मन की इस चंचलता को वश में करना संकल्प के ही बूते की बात है। संकल्प आत्मा की जय शक्ति है। आत्मज्ञ पुरुष इसीलिये संकल्पवान भी होते हैं या यों कहें कि संकल्पशील अर्थात् प्रत्येक सत्य का निष्ठापूर्वक पालन करने वाले ही आत्मा को जानते हैं, **''संशयात्मा विनश्यति''** अर्थात् जिनके संकल्प डाँवाडोल होते हैं, वे तो अपना ही विनाश करते हैं।

भारतवर्ष में ऐसी अनेक कथाएँ प्रचलित हैं, जिनमें किन्हीं महापुरुषों द्वारा वर्षा रोक देना, बहते हुए जल-प्रवाह को खण्डित कर देना, पत्थर खण्ड को उठा देना आदि का व्याख्यान होता है। सर आडियार ने एक दक्षिणी साधु गोविन्द स्वामी का वर्णन करते हुए लिखा है कि—जल से भरे हुए घड़े को जब स्वामी जी आदेश देते तो वह पृथ्वी से डेढ़ फुट तक ऊँचा उठ जाता था। महर्षि गालब ने प्यासे आश्रमवासियों को मरते देखा तो पर्वत को फाड़कर जल देने का आदेश दिया। कहते हैं उन्होंने जैसे ही अपना संकल्प व्यक्त किया, पहाड़ के भीतर से जलधारा फूट निकली।

यह स्थान जयपुर में आज भी 'गलता जी' के नाम से बना हुआ है। पहाड़ की अदृश्य खोहों से वर्ष भर जल निःसृत होता रहता है। पहाड़ के ऊपरी सिरे से कहाँ से जल निकलता है, यह बड़े आश्चर्य की बात है पर यह है सत्य कि वहाँ वर्ष भर पानी निकलता रहता है। हजारों भक्त दर्शनार्थी प्रति दिन वहाँ जाते और स्नान करते हैं।

इन गाथाओं को जब तक भारतीय योगियों तक ही सीमित माना गया, तब तक वैज्ञानिक और दूसरे पढ़े-लिखे तर्कशील लोग उसे कपोल-कल्पना कहते रहे पर पिछले दिनों जब रूस की एक महिला ने भी अपनी इच्छाशक्ति का प्रदर्शन किया और केवल अपनी दृढ़ इच्छा से घड़ी की सुइयों को आगे-पीछे कर दिया, तब वैज्ञानिकों का ध्यान तेजी से आकृष्ट हुआ और उन्होंने खोज करके यह पाया कि जिस समय एकाग्र भाव से किसी क्रिया का चिन्तन किया जाता है, तो मन से विद्युत चुम्बकीय तरंगें फूट पड़ती हैं। ठीक विद्युतधारा के समान इसमें भी धन और ऋण (पॉजिटिव एण्ड निगेटिव) आयन होते हैं। इन तरंगों में इच्छाशक्ति के अनुरूप लम्बाई कुछ फीट से हजारों मील दूर तक की हो सकती है, जितनी तीव्र इच्छाशक्ति होगी, वह उतनी ही दूरवर्ती पदार्थ को भी प्रभावित कर रही होगी। इन प्रारम्भिक जानकारियों को लेकर आज पश्चिमी देशों में व्यापक खोज प्रारम्भ कर दी गई है, जबकि हमारे देशवासी ध्यान की एकाग्रता जैसी महत्त्वपूर्ण योग प्रणाली को भूलते जा रहे हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संकल्प आत्मा की शक्ति है, जिसका व्यवहार मन द्वारा स्फुट कार्यों में होता रहता है और उसके लाभ भी वैसे ही फुटकर मिलकर रह जाते हैं। साधारण लोगों को किसी भी उद्यम-उद्योग में इसीलिए कोई उल्लेखनीय सफलता नहीं मिल पाती, क्योंकि उनका ध्यान विशृंखलित और अधूरा होता है पर वही काम जब दत्तचित्त पूरे मन से किया जाता है, तो मानसिक विद्युत तेजी से प्रकीर्ण होने लगती है और उस कार्य से सम्बन्धित अनेकों ऐसी सूक्ष्म बातें सूझने लगती हैं, जिनसे सफलता की सम्भावना भी बहुत अधिक बढ़ जाती है।

आत्मा यदि यह गुण छोड़ दे तो शरीर जीवित न रहे, इसलिए विचार प्रणाली अत्यावश्यक है। मस्तिष्क सम्बन्धी आपरेशनों की सबसे बड़ी बाधा यही है कि उससे लगातार उत्पन्न होने वाली विद्युत तरंगें रुक जाती हैं। इन तरंगों को रुकना नहीं चाहिए और न ही उसमें गड़बड़ी आनी चाहिये। आशंकित मस्तिष्क में विद्युत प्रक्रिया अस्त-व्यस्त हो जाती है अर्थात् सोचने, समझने की शक्ति का ह्रास हो जाता है पर यदि मन को इतना वशवर्ती बना लिया गया हो कि यह विद्युत धारा अपनी ही दिशा में बहती रहे, चोट या घाव की ओर वह न मुड़े, तो उसे कष्ट और पीड़ा का भान ही न हो। न्यूकैसिल के योगी ने कुछ दिन पूर्व सलीब पर जीवित चढ़कर यह दिखा दिया कि कष्ट विचार प्रणाली की अस्त-व्यस्तता मात्र है, यदि अपना संकल्प दृढ़ हो तो उसे किसी भी प्रिय वस्तु पर आरोपित करके अप्रिय कल्पना को ही ठुकराया जा सकता है।

लोकमान्य तिलक के अँगूठे का आरेपशन होना था। डॉक्टर क्लोरोफार्म लेकर पहुँचे। "इसे सुँघाकर बेहोश करेंगे, ताकि आपरेशन में आपको कष्ट न हो।" डॉक्टरों के यह कहने पर तिलक हँसे और बोले—"उसकी आवश्यकता नहीं, तुम मुझे गीता की एक प्रति ला दो।" डॉक्टरों ने उन्हें गीता दे दी। कुछ ही क्षणों में गीता पढ़ने में वे इस तरह तल्लीन हो गये कि उन्हें कब आपरेशन हो गया, इसका पता ही न चला।

अपना संकल्प इतना दृढ़ हो कि हम कोई और वस्तु सोचें ही नहीं, तो अनेक निराधार भय और कल्पनाओं को दूर किया जा सकता है। एक ही दिशा का सूक्ष्म से सूक्ष्म ज्ञान भी प्राप्त किया जा सकता है।

अब इस बात को डाक्टर और वैज्ञानिक भी जानने लगे हैं। उनकी जानकारी तो यहाँ तक पहुँच चुकी है कि यदि किसी व्यक्ति का अपना मनोबल काम न दे तो उसे कछुये की तरह का कोई अधिक संकल्पशील व्यक्ति सम्मोहित (हिप्नोटाइज) करके भी काम निकाल सकता है। इण्डियानापोलिस (अमेरिका) के एक अस्पताल में एक ऐसा व्यक्ति आया जिसके सिर में गोली लगी थी। व्यक्ति बहुत घबराया हुआ था, इसलिए सीधे मस्तिष्क का आपरेशन नहीं हो सकता था। फलस्वरूप उस व्यक्ति को सम्मोहित करके गहरी निद्रा में लाया गया। निद्रा की अवस्था में ज्ञान-शून्य विचार शृंखला चलती रहती है, इसलिये मृत्यु का भय नहीं रहता। आपरेशन अच्छी तरह सम्पन्न हुआ। अन्त में डाक्टरों ने लिखा कि ऐसी सुविधा उन्हें और किसी भी आपरेशन में नहीं हुई।

यह संकल्प शक्ति अत्यन्त स्थूल लाभ है। ध्यान और जप के माध्यम से, प्राणायाम और प्रत्याहार आदि योग साधनाओं के माध्यम से सिद्ध होने वाला संकल्प तो इतना सूक्ष्म और शक्तिशाली है कि आत्मा उससे अपनी घोर से घोर शत्रुओं से रक्षा, प्रहार, दूर-दर्शन, दूर श्रवण आदि अलौकिक प्रयोजन सम्पन्न कर सकती है। यह आत्मा अपना वैभव संकल्प शक्ति द्वारा ही प्रकट करता है। इस अनुभव के आधार पर ही वेद में कहा गया है—

यो वः शुष्मो हृदयेष्वन्तराकूतिर्या वो मनसि प्रविष्टा।

तान्सीवयामि हविषा घृतेन मयिसजाता रमतिर्वो अस्तु॥

—अथर्ववेद, ६/७३/२,

अर्थात्—हृदय का बल और मन का संकल्प एक कार्य में लगते हैं तो प्रत्येक कार्य उत्तम रीति से पूर्ण हो सकता है। हृदय और मन का एक भाव होकर सबके मन में स्नेहपूर्ण भाव जगने लगें तो लोगों में जो जातीयता होती है, वह विलक्षण संघ बल उत्पन्न करती है। अर्थात् संकल्प-शक्ति से ही राष्ट्र, जाति और संस्कृति अजेय बनते हैं।

सफलता की कुंजी है : संकल्प शक्ति

सृष्टा ने मनुष्य को अपनी ही अनुकृति का बनाया है और वे समस्त विभूतियाँ उसके भीतर कूट-कूटकर भर दी हैं जिन्हें जगाने और सदुपयोग कर सकने की क्षमता वाले पूरी तरह लाभान्वित होते और महामानवों जैसा अनुकरणीय जीवन जीते हैं, वे जैसा भी चाहते हैं, वैसी ही परिस्थितियाँ अपने लिए गढ लेते हैं। बहुधा लोग समझते हैं कि भली-बुरी परिस्थितियों के लिए विधाता, ग्रह-नक्षत्र आदि कोई और उत्तरदायी है, पर तथ्य दूसरा ही है। मनुष्य के भीतर शुभ-अशुभ सब कुछ भरा पड़ा है। उसमें से इच्छानुसार कुछ भी चुना, अपनाया और बढ़ाया जा सकता है। यह अपनी उसी इच्छा-आकांक्षा पर निर्भर है जो कल्पना, कामना से ऊँचे स्तर का ही नहीं, साहस, विवेक और कर्मनिष्ठा से भी भरी-पूरी हो। इसी मनःस्थिति को 'संकल्प' कहते हैं। महानता का उच्च पद प्रदान कर सकने में सदुद्देश्यों के लिए 'संकल्प' करने से बढ़कर और कोई क्षमता इस संसार में है नहीं। कठिनाई तभी तक रहती है, जब तक अपना निश्चय दुर्बल है। यदि महानता की दिशा में चल पड़ने के लिए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संकल्पपूर्वक निर्णय ले लिया जाय और तदनुरूप अपनी गतिविधियों को भी बलपूर्वक आदर्श के साथ जोड़ दिया जाय तो दिशा मिल जाती है। धारा बहने लगती है और उस क्रमिक गमन के फलस्वरूप श्रेष्ठता-महानता के उच्च पद तक जा पहुँचना सरल हो जाता है।

योगवाशिष्ठ ३/७०/३० में उल्लेख है कि सब कुछ अपने संकल्प द्वारा ही साधित होता है। छोटा या महान बन सकना उसी पर निर्भर है। संकल्प ही व्यक्ति के समूचे ढाँचे को विनिर्मित करते हैं। इसी आत्मनिर्माण के आधार पर परिस्थितियों का निर्माण होता चला जाता है। शास्त्र कहते हैं कि ब्रह्म ने संकल्प किया कि अकेलापन उन्हें अखरता है, वे अपने को अनेक बनाकर अपने आपके साथ क्रीड़ा-कल्लोल किया करेंगे। **'एकोऽहंबहुस्याम'** की श्रुति इसी रूप से इस नियति की उत्पत्ति का वर्णन करती है। जीवविज्ञानी अपने समस्त अन्वेषण के आधार पर चेतना के विकास का एक ही आधार बताते हैं कि प्राणी के भीतर आकांक्षा उत्पन्न हुई और अनुकूल कल-पुर्जे उनके शरीर तथा मन में उगते चले आये। आकांक्षा में असाधारण चुंबकत्व होता है। उनकी आकर्षण शक्ति अपने क्षेत्र में ग्रह-तारकों को परस्पर बाँधे रहने वाली चुम्बकीय शृंखला से कम सामर्थ्यवान् नहीं है। प्राणियों में जब-जब जितने परिमाण में आकांक्षाएँ, जितनी अधिक आकुलता के साथ उत्पन्न हुई हैं, तब-तब उतनी ही मात्रा में अनुकूल क्षमता भीतर से विकसित हुई है, पुरुषार्थ जागा है और उसी अनुपात से बाह्य जगत से साधन-सामग्री क्रमशः खिंचती-घिसटती चली आयी है। प्राणि जगत का यह संक्षिप्त तथ्य इतिहास है। विकास के गर्भ में उफनते इसी आधार को हम हर क्षेत्र की प्रगति में सँजोया-समाया देखते हैं।

जीवशास्त्रियों के अन्वेषण इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि इस धरती पर जब जीवन आरम्भ हुआ तब वह एककोशीय अमीवा जैसी सूक्ष्म प्राणियों की स्थिति में था। उनमें से जिनमें प्रगति की जितनी आकांक्षा भड़की, संकल्प उभरा उसी अनुपात से उनकी शारीरिक बनावट और मानसिक क्षमता विकसित होने लगी और वे अपनी मूल स्थिति की अपेक्षा तेजी से अधिक साधन सम्पन्न बनने लगे। अपने पुरुषार्थ से उन्होंने सुविधा-सामग्री खोजी और अनुकूल परिस्थितियों का सृजन किया। जिन प्राणियों में यह आकांक्षा-संकल्प क्षमता जितनी तीव्र थी, उन्हें उसी अनुपात से आगे बढ़ने और साधन सम्पन्न बनने का अवसर मिलता चला गया। जिनमें उत्साह और साहस कम था, उनकी प्रगति उतनी ही मंद बनी रही। साधनों की न सृष्टि आदि में कमी थी, न अब है। प्रश्न पुरुषार्थ का था, संकल्प का था। नियति ने आरम्भ से ही प्राणियों को सुविधा प्रदान करने में उदार नीति अपनायी है और वह अन्त तक अपने उदार उपक्रम को अपनाये रहेगी। जीवाणु समष्टिगत चेतना का प्रतिनिधि होने के कारण जन्मजात रूप से अधिपति और अधिकारी है। प्रकृति का परमाणु सदा से उसका इच्छानुवर्ती, अनुचर रहा है और सदा तक अपनी निष्ठावान स्वामिभक्ति का परिचय देता रहेगा। जीवन की सत्ता इस सृष्टि में सर्वोपरि है, उसकी माँग यदि गहरी हो तो उसकी पूर्ति में प्रकृति बाधक नहीं बनती। नियति रोड़े नहीं अटकाती। मात्र साहस की जाँच-पड़ताल करने के लिए अड़चनों के चौकीदार कुछ-कुछ पूछताछ और रोक-टोक करते रहते हैं। परिस्थितियों ने कभी किसी मनस्वी के मार्ग में इतनी कठिनाई उत्पन्न नहीं की, जिसके कारण उसे अपना संकल्प बदलने और साहस छोड़ने को विवश होना पड़े।

यह जीव-जगत की प्रगति का विकासवादी शोधकर्ताओं द्वारा किया गया पर्यवेक्षण और निकाला हुआ निष्कर्ष है। प्रगति का कारण परिस्थितियों को समझा भले ही जाता हो, पर तथ्य तक पहुँचने वाले जानते हैं कि चमत्कार उत्पन्न करने की परिपूर्ण क्षमता मनःस्थिति में ही भरी पड़ी है। जड़-जगत की मूल सत्ता ''एनर्जी'' है। जीव-जगत में यही कार्य संकल्प शक्ति करती है। प्राणियों का भूतकाल तत्त्वतः उनकी तत्कालीन मनःस्थिति का ही लेखा-जोखा है। आज भी जो जिस स्थिति में रह रहा है, वह अपने ही संकल्पों का दण्ड-पुरस्कार भोगता है। भविष्य में भी जिसका जो बनेगा, उसमें उथली मान्यताओं, साधनों और परिस्थितियों को श्रेय या दोष देते रह सकते हैं। पर वस्तुतः जो कुछ होने जा रहा है, उसमें मनुष्यों की भले-बुरे संकल्प-आकांक्षाएँ ही विकास या विनाश के आधार खड़े करेंगी। मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है। इस सत्य के पीछे एक ही तथ्य काम करता है कि संकल्प शक्ति की प्रचण्ड ऊर्जा से वह सुसंपन्न है। वह ऊर्जा इतनी प्रखर है कि सामान्य दीखने वाला व्यक्ति उसके सहारे महामानवों की ऐतिहासिक भूमिका निभाने में सहज ही समर्थ बन जाता है।

इसका एक निकटतम और हस्तामलकवत् प्रत्यक्ष प्रमाण अपना युग निर्माण अभियान है। उसका शुभारम्भ कैसे हुआ ? इसका आदिम इतिहास बहुत कम लोगों को मालूम है। एक तपःपूत व्यक्ति के अंतःकरण में युग परिवर्तन की, नव निर्माण की, मनुष्य में देवत्व और धरती पर स्वर्ग के अवतरण की स्फुरणा अवतरित हुई। अवतरित इस अर्थ में कि उसके साथ प्रचण्ड उत्साह, साहस और दृढ़ निश्चय की समन्वित शक्ति भी जुड़ी हुई थी। यह स्फुरणा देर तक अपनी अवतरण भूमि पर निःचेष्ट नहीं बैठी रही, वरन् उसने अग्रगमन की, गतिशील होने की ऐसी हलचल उत्पन्न कर दी जिसे दूसरे शब्दों में आकुलता कह सकते हैं। यह आकुलता न तो अन्धी थी और न अनिश्चित। उसने अपना एक स्वरूप और कार्यक्रम बनाया। दिशाधारा का निश्चय किया। उसी की परिपक्वता का प्रमाण यह युग निर्माण अभियान है। इस क्रान्तिकारी तूफान का प्रथम दर्शन अपने सर्वविदित बहुचर्चित ''युग निर्माण के सत्संकल्प'' में हुआ। सर्वप्रथम यही है, अपने मिशन अभियान का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अरुणोदय प्रभात दर्शन। इसके बाद का सारा घटनाक्रम लगभग वैसा ही है जैसा कि मत्स्यावतार की विशाल विस्तार प्रक्रिया, जिसे परिजन प्रत्यक्ष देख ही रहे हैं। विचारपूर्ण दृढ़ निश्चय जब कर्मनिष्ठा के साथ जुड़ते हैं तो उनकी अग्रगामी गतिशीलता आँधी-तूफान जैसी होती है। वह अभावों और अवरोधों को उखाड़ती-पछाड़ती आगे बढ़ती है। उसका रास्ता रोक सके, ऐसा कोई दुर्गम और दुस्तर अवरोध इस संसार में है नहीं। ईश्वर के ज्येष्ठ पुत्र का ही नाम मनुष्य है। उसमें अपने पिता की सारी क्षमताएँ बीज रूप में विद्यमान हैं। जब परमात्मा के संकल्प से सृष्टि का सृजन हो सकता है तो जीवात्मा के प्रखर परिवेश में काम करने वाले देवताओं का संकल्प क्यों अधूरा होगा ?

प्रगति की दिशा में आगे बढ़ने तथा सफलता पाने के लिए छोटे-बड़े सभी कामों में संकल्पों की आवश्यकता पड़ती है। महान कार्यों में तो इस उपक्रम को और भी अधिक दृढ़तापूर्वक अपनाना पड़ता है। बीजारोपण की उपमा संकल्प से दी जा सकती है। संकल्प का तात्पर्य कल्पना की रंगीन उड़ानों से ऊँचा उठकर किसी लक्ष्य तक पहुँचने के लिए सुनिश्चित निर्धारण करना है। इसके उपरान्त उसे पूरा करने के लिए जो लम्बी मंजिल पार करनी है, जो साधन जुटाने हैं, उनका स्वरूप सामने आता है। पर प्रायः लोग अनेक मनोरथों के लिए मन चलाते रहते हैं, जिन्हें मनोकामना कहा जाता है। उसमें कल्पना भर होती है, सुखद प्रतिफल का लालच भर मनः क्षेत्र में छाया रहता है। रंगीन कल्पनाओं की उड़ानें उड़ते रहने वाले ललचाते तो रहते हैं, पर अभीष्ट को प्राप्त करने का कोई आधार नहीं पाते और इच्छा पूर्ण न होने का रोना रोते रहते हैं। इसका कारण एक ही है कि इच्छा मात्र निष्प्राण-निर्जीव इच्छा बनकर रह गयी। वह संकल्प के रूप में विकसित न हो सकी, जबकि संकल्प के साथ मानसिक साहस और साहसिक पुरुषार्थ जुड़ जाने पर साधन जुटने और सहयोग मिलने का सिलसिला इस प्रकार चलने लगता है मानो प्रगति पहले से ही सुनिश्चित बनी हुई हो। लोग इसी को दैवी वरदान, परिस्थितियों का अनुदान, विधि-विधान आदि न जाने क्या-क्या नाम देते हैं, पर असल में वे और कुछ नहीं मात्र प्रचण्ड संकल्प के फलितार्थ भर होते हैं। संकल्पवान हर परिस्थिति का सामना करने के लिए साहस उभारते हैं। आन्तरिक और परिस्थितिजन्य अवरोधों से जूझने का पराक्रम करते हैं। फलतः असमंजस हटता है और पुरुषार्थ की गतिशीलता प्रखर होती चली जाती है। लक्ष्य तक पहुँचने का यही राजमार्ग है। सुप्रसिद्ध मनीषी विक्टर ह्यूगो के शब्दों में 'मनुष्यों में शक्ति की कमी नहीं होती, होती है तो केवल संकल्प की कमी। अगर वह संकल्प कर ले तो क्या कुछ नहीं कर सकता ? नैपोलियन के अनुसार इस प्राणवान संकल्प शक्ति के सामने सचमुच ही असम्भव नाम का शब्द उसके अपने शब्द कोष में है ही नहीं।

संकल्प का अपना विज्ञान है। उसे कर्म का बीजारोपण कह सकते हैं। मनुस्मृति, २/३ में कहा गया है—

संकल्पः मूलः कामो वै यज्ञः संकल्पसंभवाः।
व्रतानि यमधर्माश्च सर्वे संकल्पजाः स्मृता।।

अर्थात् इच्छा का मूल संकल्प है। यज्ञ संकल्प से होते हैं। सब व्रत, यम, धर्म आदि संकल्प से ही होते हैं। यही कारण है कि धर्म परम्परा में संकल्प को प्रमुखता दी गयी है। संध्यावंदन से लेकर ब्रह्मभोज तक के धर्मकृत्यों के आरम्भ में पुरोहित अपने यजमानों से संकल्प कराते हैं। हाथ में जल, अक्षत, पुष्प लेकर अमुक धर्मकृत्य संपन्न करने की घोषणा को संस्कृत भाषा की शब्दावली में जोर-जोर से उच्चारित किया जाता है। इससे वह कृत्य प्रतिष्ठा का प्रश्न बन जाता है। पूर्वजों का उल्लेख करके उस संकल्प के साथ उनकी प्रतिष्ठा भी जोड़ ली जाती है। संकल्प विस्मरण न होने लगे, इसलिए पुरोहित उस उद्घोष के साथ वंश परम्परा, गोत्र, वर्तमान तिथि, मास का भी हवाला देते हैं। इतना कर लेने पर एक मनोविज्ञान सम्मत सुदृढ़ मनःस्थिति उत्पन्न होती है। संकल्प कृत्य न करने पर धर्मानुष्ठान अधूरे माने जाते हैं। श्रावणी पर्व पर जो उपक्रम किया जाता है, उसमें हेमाद्रि संकल्प ही प्रधान है। अपने गायत्री महायज्ञों में भी संकल्प घोषणा की परम्परा को यथावत् मान्यता दी गयी है। श्रेष्ठता की दिशा में बढ़ते और किसी महान प्रयास को सफलता के लक्ष्य तक पहुँचाने के लिए संकल्प कृत्य नितांत आवश्यक है।

श्रेष्ठता की साधना 'संकल्प' से ही सम्भव होती है। संकल्प को ही व्रत कहते हैं। व्रतधारी ही तपस्वी और मनस्वी कहलाते हैं। लक्ष्य की ओर शब्दबेधी बाण की तरह सनसनाते हुए चल पड़ने की क्षमता उन्हीं में होती है। जागरूक पुरुषार्थ का प्रथम चरण संकल्प ही है। अतएव हममें से प्रत्येक को प्रस्तुत विषम घड़ी में कुछ न कुछ सृजनात्मक संकल्प अवश्य करना चाहिए। 'संकल्प' ही ऐसा मोड़ है, जिसमें श्रद्धा को कर्मठता में परिणत हुआ देखा जा सकता है। कल्पना, मान्यता, विचारणा, श्रद्धा आदि की परिधि मस्तिष्क के छोटे से क्षेत्र में ही उमड़ती-घूमती रहती है, किन्तु संकल्प को बिजली की तरह कड़कते और बादल की तरह बरसते देखा जाता है। बीच-बीच में संकल्प की परिपक्वता की परीक्षा तो छुट-पुट कठिनाइयों के माध्यम से होती रहती है और सोने की तरह तपाये जाने की विपत्ति भी झेलनी पड़ती है, पर इससे हमारा मनोबल टूटना नहीं, वरन् और अधिक प्रखर होना चाहिए और अपने गौरव की रक्षा के लिए स्वाभिमानी, शूर सैनिक की तरह बड़े से बड़ा दाँव लगाने में कोई संकोच नहीं करना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विशेष दैवी अनुग्रह ऐसे ही लोगों को मिलते हैं। महाकाल की युगांतरीय चेतना जिन्हें नवसृजन के लिए अनुदान प्रस्तुत करने की प्रकाश प्रेरणा दे रही है, उन्हें समय निरर्थक नहीं गँवाना चाहिए और अपनी सजीवता का परिचय देना चाहिए। इसका एक ही उपाय है, एक ही प्रमाण है—देव संस्कृति के पुनर्जीवन के सृजन प्रयोजनों के प्रस्तुत कार्यक्रमों को पूरा करने का संकल्प करना चाहिए और उसे पूरा करने के लिए तत्परतापूर्वक जुट जाना चाहिए।

यदि दृढ़ हो संकल्प बल तो

व्यक्ति और समाज में यदि दृढ़ इच्छाशक्ति हो, तो कई बार वे उन हानियों को टालने में सफल होते हैं, जो न सिर्फ उनके लिए, वरन् पर्यावरण के लिए भी घातक बन सकते थे।

ऐसा ही एक उदाहरण कर्नाटक के हुन्सूर गाँव के निवासियों ने प्रस्तुत किया। ज्ञातव्य है कि उक्त राज्य के शिमोगा जिले का सागरजोग क्षेत्र कभी बहुत हरा-भरा था। वहाँ एक बड़े भाग में जंगल स्थित था, जो अप्राप्य जड़ी-बूटियों एवं जीव-जन्तुओं से समृद्ध था। अपनी अद्भुत वन सम्पदा के कारण कभी उसकी बड़ी ख्याति थी, किन्तु समय के साथ-साथ जंगल घटता-मिटता गया। यह देखकर स्थानीय लोगों को बड़ी चिन्ता हुई। वे उसे बचाने के लिए तत्पर हुए। इसी का परिणाम आश्चर्यजनक सफलता के रूप में हुन्सूरवासियों को मिला है और अब भी वहाँ एक छोटा; किन्तु सघन और हरा-भरा जंगल सुरक्षित बचा हुआ है। इसे देखने के लिए देश-विदेश के पर्यावरण प्रेमी आते और उनके प्रयासों को सराहते नहीं अघाते हैं।

हुन्सूर ग्राम लगभग १५० परिवार का एक छोटा गाँव है। यहाँ के निवासी अधिकांशतः छोटे किसान और मजदूर हैं। वन्य रक्षा के लिए ग्रामवासियों की अपनी निजी व्यवस्था है। इसके अन्तर्गत हर परिवार को बारी-बारी से निर्धारित अवधि तक उसकी सुरक्षा-व्यवस्था सँभालनी पड़ती है। इसमें चूक होने या मुस्तैदी में कमी पड़ने पर जुर्माने का भी प्रावधान है। यह जुर्माना जंगल की देख-रेख करने वाली समिति को प्राप्त होता है, जो समय-समय पर वन्य-विस्तार योजना पर खर्च होता रहता है।

समिति में नौ सदस्य तथा एक अध्यक्ष होता है। गाँव के सभी वर्गों के प्रतिनिधि इसमें शामिल किये जाते हैं। किसी भी विवाद अथवा विषय में समिति का निर्णय अन्तिम एवं मान्य होता है। हर दो वर्ष पर समिति का नये सिरे से चुनाव एवं गठन होता है। इस चुनाव में प्रत्येक बार नये भागीदारों की नियुक्ति की जाती है।

वन्य रक्षा सम्बन्धी समिति के अपने नियम हैं, जो हर ग्रामवासी पर समान रूप से लागू होते हैं। इस नियम के अनुसार हर परिवार वर्ष में एक बार जंगल से ईंधन प्राप्त कर सकता है। इसके अतिरिक्त यदि किसी व्यक्ति को आवास निर्माण हेतु लकड़ी चाहिए, तो इसके लिए समिति से मंजूरी प्राप्त करनी पड़ती है। समिति इसकी जाँचकर यह पता लगाती है कि माँग कितनी सही और अनिवार्य है। माँग की वैधता साबित होने के बाद जंगल का सर्वेक्षण किया जाता है और देखा जाता है कि बेकार लकड़ी कितनी है। इसमें से आवश्यकता भर प्रार्थी को दे दी जाती है। जंगल के उत्पाद जैसे-फल-फूल, जड़ी-बूटियाँ, शहद आदि के उपयोग के लिए हर ग्रामीण स्वतन्त्र होता है। इसके लिए किसी प्रकार की अनुमति की आवश्यकता नहीं पड़ती।

लगभग ५० हेक्टेयर में फैले इस सघन वन का नाम 'हुन्सूर कानू' है। सन् १९६५ से पूर्व यह जंगल हुन्सूर गाँव की सम्पदा थी। बाद में सरकार ने उसे अपने कब्जे में ले लिया। तत्पश्चात् अर्थलाभ की दृष्टि से उसका दोहन आरम्भ हुआ। उससे बहुमूल्य लकड़ियाँ काटी जाने लगीं और विभिन्न प्रयोजनों के निमित्त उसका उपयोग होने लगा। लकड़ियाँ काटने के लिए निविदाएँ निकलने लगीं और हर वर्ष उसे ठेकेदारों के अधीन कर सरकार पैसा कमाने लगी। अनेक वर्षों तक ऐसा होते रहने के कारण पेड़-पौधे घटने लगे। जंगल उजड़ने से ग्रामवासियों को गहरा आघात लगा। उनने सरकारी तन्त्र से लोहा लेने और बर्बादी से वन की रक्षा करने का संकल्प लिया। इसी के अन्तर्गत उनने ठेकेदारों का वन में प्रवेश निषिद्ध घोषित कर दिया। इसके लिए सरकार और ग्रामीणों के बीच काफी संघर्ष हुआ, पर ग्रामवासियों की दृढ़ता के आगे सरकार को झुकना पड़ा। परमिट बाद में रद्द कर दिया गया।

आगे भी समय-समय पर इस प्रकार के दृश्य उभरते रहे, पर हर मौके पर गाँव वालों के प्रबल प्रतिरोध के कारण वन की रक्षा होती रही। अन्ततः हारकर वन से छेड़-छाड़ करने की अपनी नीति को सरकार ने त्याग दिया और वन की सुरक्षा ग्राम समिति के सुपुर्द कर दी।

तब से लेकर अब तक वह जंगल हुन्सूर गाँव के अधीन फलता-फूलता रहा है। समय-समय पर प्रकृति प्रेमी और पर्यावरणविद वहाँ की यात्रा करते रहे हैं और उसकी सुषमा एवं ग्रामीणों के समर्पण की प्रशंसा मुक्त कंठ से करते रहे हैं।

संकल्प यदि सबल हो और परिस्थितियों से हम हार न मान बैठे हों, जुझारूपन जीवित हो और जीवट अक्षुण्ण, तो प्रतिकूलता को अनुकूलता में बदल लेना सम्भव ही नहीं, सरल भी बन जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संकल्प सिद्धि हेतु एक विज्ञान सम्मत प्रक्रिया

मन्त्र-जप को, व्रत-संकल्प को प्रबल-प्रखर बनाने का एक सशक्त माध्यम माना गया है। अतः भौतिक जीवन में उसकी आवश्यकता महसूस की जाती है। यों तो जपयोग कहने का तात्पर्य सामान्यता अध्यात्म साधना और ईश्वर-उपासना से लिया जाता है, पर जानने योग्य तथ्य यह है कि अध्यात्म क्षेत्र में जितनी इसकी महत्ता, उपयोगिता है, उससे कोई कम भौतिक क्षेत्र नहीं है।

भौतिक जीवन को समृद्ध बनाने में भी इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका है, कारण कि किसी व्यक्ति की सफलता, विफलता का मुख्य हेतु अस्थिर और अव्यवस्थित चित्त वृत्तियाँ होती हैं। जो इन्हें संयमित कर लेता अथवा शुभ-अशुभ, भाव-संकल्पों के आधार पर अच्छों को सुरक्षित रख बुरों को निकाल बाहर करता है, जीवन में वही सफल हो पाता है। सामान्य जीवन में जपयोग यही कार्य सम्पन्न करता है। वह अनावश्यक संकल्पों को शमित और शुभ संकल्पों को पोषण देकर सुदृढ़ बनाता और अन्ततः उसकी सिद्धि में सहयोग करता है।

वस्तुतः मानवी चित्त भाव-संकल्पों का विशाल भाण्डागार है। उसमें अनेकानेक प्रकार के शुभ-अशुभ संकल्प भरे पड़े होते हैं, पर अधिकांश लोगों में इसकी स्थिति अव्यवस्थित स्टोर रूम जैसी होती है। वे जिन संकल्पों को पोषण देकर उगाना-बढ़ाना चाहते हैं, प्रायः वे अधिक समय टिक नहीं पाते और जिन्हें बार-बार हटाने-मिटाने की कोशिश करते हैं, वे स्थायी बने रहते हैं। इसी प्रकार जो बातें स्मृति में लगातार बनी रहनी आवश्यक होती हैं, वह विस्मृत हो जाती हैं और अनावश्यक, अनुपयोगी बातें बरबस याद आती रहती हैं। ऐसे लोग किसी एक संकल्प पर अपने चित्त को स्थिर नहीं रख पाते। प्रयास तो करते हैं, पर अगले ही पल में कई अन्य विचार उमड़ने-उमड़ने लगते हैं, जिससे आरम्भिक संकल्प गौण हो जाता है एवं क्षुद्र, लौकिक विचार प्रमुख बन जाते हैं।

ऐसे अस्थिर चित्त को एकाग्र करने का एक कारगर उपाय जप है। इसके माध्यम से अंतः के समस्त संकल्प-विकल्पों को निकाल बाहर कर मन को एक निश्चित वृत्ति में लगाकर उसे उस उद्दण्ड भूत की तरह साधा जा सकता है, जो काम नहीं मिलने पर साधने वाले को ही मार डालने की बात करता है। कुछ लोगों का विश्वास है कि एक अन्य उपाय द्वारा भी मन को सुसंस्कृत बनाया जा सकता है। उनका कहना है कि यदि अंतस् की वृत्तियों पर कड़ी नजर रखकर सूक्ष्म दृष्टि से उसके शुभाशुभ का निर्धारण कर लियां जाय, तो इतने भर से चित्त व्यवस्थित हो जायेगा, किन्तु इस विचार में कोई प्राण नजर नहीं आता। इससे इतना तो सम्भव हो सकता है कि भली-बुरी वृत्तियों की जानकारी मिल जाय, पर इससे अस्त-व्यस्तता समाप्त हो जायेगी—ऐसा नहीं कहा जा सकता।

शास्त्रों में नाम, स्मरण का अमोघ उपचार सुझाया गया है। आप्त वचनों के अनुसार इसमें इतनी विलक्षण शक्ति है कि वह चित्त को सदा निर्धारित संकल्प पर स्थिर रखता है। आर्षग्रन्थों में इसकी महिमा का बखान किया गया है, जिसके पीछे अनुभवगम्य, आध्यात्मिक और तर्कसिद्ध, बौद्धिक दोनों आधार हैं। अनुभवगम्य इसलिए कि आत्मा की गति सदा सत् संकल्पों की ओर होती है। इस कार्य में भगवान की ओर से भी सहायता मिलती है। यदि इच्छाशक्ति दृढ़ रही तो उस संकल्प को जीवन में उतरते देखा जा सकता है। दूसरे शब्दों में प्रबल संकल्प सदा सिद्ध होकर रहते हैं। उनकी सिद्धि प्रत्यक्ष गतिविधियों पर जितनी निर्भर है, उससे कहीं अधिक महत् सत्ता की परोक्ष इन्द्रियातीत शक्ति पर अवलम्बित है। यह सत्ता मात्र संकल्प के अनुरूप बुद्धि विकसित ही नहीं करती, वरन् किसी अगोचर विधि द्वारा स्थिति के अनुरूप परिस्थिति भी निर्मित करती है। जप द्वारा इसी का सफल क्रियान्वयन सहज संभव हो पाता है।

वन-उपवन के वृक्ष-वनस्पतियों को यह नहीं विदित होता कि वे बादलों को अपनी ओर आकर्षित कर उन्हें बरसने के लिए किस प्रकार बाधित करते हैं। पर उन्हें इतना अवश्य पता होता है कि इससे पूर्व उनने इसकी आवश्यकता महसूस की थी।

ठीक यही बात मनुष्य के सम्बन्ध में भी है। उसे यह नहीं ज्ञात होता है कि ऐसी प्रतिकूल परिस्थिति अनुकूल कैसे बनेगी ? और उसकी इच्छा-पूर्ति कैसे सम्भव हो सकेगी ? यदा-कदा परिस्थितियाँ इतनी विकट होती हैं कि उन्हें देखकर व्यक्ति को नैराश्य घेरने लगता है, पर मन यदि दृढ़व्रती हो, तो न केवल उसके स्वयं के प्रयत्न-पुरुषार्थ से, वरन् अन्य अनेक माध्यमों से भी उसे ऐसी सहायता प्राप्त होने लगती है कि प्रतिकूलता धीरे-धीरे अनुकूलता में बदलने लगती है। जिस किसी के जीवन में ऐसी स्थिति उत्पन्न हुई हो, आत्म-निरीक्षण करने पर उसे इसकी सत्यता का आभास अवश्य होने लगता है। सम्भव है, वह इस प्रक्रिया की वैज्ञानिकता से अनभिज्ञ हो और इसे पूर्णतः भगवद् कृपा, अपना सौभाग्य अथवा देव-अनुकंपा मान बैठा हो, पर वास्तविकता यह है कि यह उसके दृढ़ संकल्प, तीव्र अभीप्सा और परमसत्ता के अनवरत स्मरण का ही परिणाम है।

वस्तुतः जब किसी व्रत का, उच्चस्तरीय उद्देश्य का बारंबार स्मरण किया जाने लगता है, तो वह व्यक्ति के मन-मस्तिष्क में इस तरह छा जाता है कि तब जो क्रिया-प्रयास बन पड़ते हैं, उनमें न्यूनाधिक मात्रा में उसकी अभिव्यक्ति अवश्य होती है। इस प्रकार ध्यान उस ओर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लगा रहने और लगातार प्रयत्न बन पड़ने से उसकी संसिद्धि सम्भव हो जाती है। छोटे शब्दों अथवा वाक्यों से अभिव्यक्त होने वाले व्रत-संकल्पों का स्मरण तो इस विधि द्वारा संभव है, पर लम्बे-चौड़े संकल्पों का निरन्तर स्मरण कैसे बन पड़े ? इसके लिए शार्टहैण्ड में जिस प्रकार कई-कई वाक्यों को कुछ ही शब्द-संकेतों द्वारा व्यक्त कर देने की व्यवस्था है, वही प्रक्रिया अपनाने का निर्देश विशेषज्ञ यहाँ देते हैं। इस प्रकार सुविधानुसार अपने संकल्प का कोई छोटा प्रतीक-प्रतिनिधि शब्द गढ़ा जा सकता है और उसका लगातार स्मरण करते रहकर उस व्रत को परिपुष्ट किया जाता रह सकता है। इसी को मन्त्र-जप कहा गया है। अध्यात्म जगत में इसके लिए ऊँ, हरि ऊँ, हरि ऊँ तत्सत्, सोऽहम् जैसे शब्दों का प्रयोग किया जाता है। यही शब्द भौतिक जगत में संकल्प परिपुष्टि के लिए प्रयुक्त किये जा सकते हैं। यही इसका वैज्ञानिक तरीका है। यह कहना उपयुक्त न होगा कि जो कोई खुदा, अल्लाह, राम आदि का नाम जप रह है, वह 'ईश्वर' का ही स्मरण कर रहा है वरन् उसकी इस प्रक्रिया का वैज्ञानिक अर्थ मात्र इतना है कि उससे वह मन के किसी संकल्प की सिद्धि प्राप्त कर रहा है। यदि कोई निर्धन जीभ से मात्र राम-नाम जपता है, तो यह समझा जा सकता है कि इसमें उसकी धन की कामना निहित है या दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि वह ''ऐश्वर्य'' की कामना हेतु जप कर रहा है। इसी प्रकार यदि कोई व्यापारी नाम-जप करता है, तो इसमें उसकी व्यापार-सफलता का उद्देश्य छिपा हो सकता है या यों कहा जाय कि वह 'सफलता' का जप करता है। दोनों के प्रयत्न-पुरुषार्थ भी किसी लौकिक संकल्प की पूर्ति के लिए नियोजित होते हैं।

यहाँ जानने योग्य यह है कि अध्यात्म मार्ग का जपयोग प्रस्तुत जपयोग प्रक्रिया से नितांत भिन्न है। अध्यात्म पथ के पथिकों को इसके लिए कोई शान्त-एकान्त तलाशकर भगवद् सत्ता का स्मरण और उसमें अपना विलय-विसर्जन करना पड़ता है। इस स्थिति में जपयोग आत्मोन्नति की विशेष साधना बन जाता है, किन्तु सामान्य व भौतिक जपयोग में यह सब कुछ करने की आवश्यकता नहीं पड़ती। यहाँ इसके द्वारा मात्र उस संकल्प को प्रबल बनाये रखना पड़ता है, जिसकी संसिद्धि हम चाहते हैं। आजकल इसी जप का एक स्वरूप 'नारों' या 'जयघोषों' के रूप में देखा जा सकता है। यह इसका आधुनिक संस्करण है। सार्वजनिक आन्दोलनों में अपने लक्ष्य पर जनता का ध्यान एकाग्र करने के लिए एक 'नारा' बना लिया जाता है, ताकि अन्त तक जनता उस ध्येय प्राप्ति के लिए अपना संघर्ष जारी रख सके। यह वस्तुतः जपयोग का ही एक प्रकार है। इसकी तुलना निस्संदेह उस 'राम-धुन' के साथ की जा सकती है, जो भक्त-मंडलियों में गाई, गुनगुनाई जाती है। चूँकि वहाँ इसका उद्देश्य मात्र भक्ति-भावना का उत्पादन करना होता है, अतः इससे अधिक कोई परिणाम वहाँ प्राप्त भी नहीं हो पाता, मगर नारों में निश्चित प्रयोजन, लक्ष्य व संकल्प का प्रमाण-परिचय स्थूल रूप में परिणति प्रस्तुत कर ही देते हैं।

इस प्रकार जपयोग अथवा नामस्मरण की प्रक्रिया स्थिर चित्त वृत्ति और संकल्प सिद्धि का एक वैज्ञानिक आधार है। यह सभी के लिए समान रूप से उपयोगी और लाभकारी हो सकता है। जिस संकल्प संकेत के साथ यह क्रिया आरम्भ होती है, उसकी सिद्धि सुनिश्चित हो जाती है। विभिन्न व्यक्ति एक ही नाम का जपकर भिन्न-भिन्न प्रकार के संकल्पों की सिद्धि को प्राप्त होते हैं, यही इस जपयोग की सबसे बड़ी विशेषता है।

मानवी जिजीविषा में छिपी अपरिमित शक्ति

व्यक्ति में यदि साहस और सूझबूझ हो, तो वह असम्भव को भी सम्भव कर सकता है और कई बार सरल-सम्भव लगने वाला कार्य सिर्फ इसलिए कठिन प्रतीत होने लगता है, क्योंकि परिस्थिति के अनुरूप साहस और सूझबूझ नहीं सँजोये जा सके।

घटना ७ जुलाई, १९७७ की है। फ्लोरिडा की ''क्रश्डस्टोन कम्पनी'' में स्क्रिवेंस नामक एक बुलडोजर आपरेटर पिछले २५ वर्षों से सेवारत था। वह एक साहसी और परोपकारी व्यक्ति था। किसी को संकट में पड़ा देख उसकी ओर झपट पड़ता और स्वयं को जोखिम में डालकर उसकी हर सम्भव सहायता, अपनी प्रत्युत्पन्नमति से करने की कोशिश करता। अपने कार्यकाल के दौरान वह इस प्रकार के अनेक कारनामे दिखा चुका था एवं करीब एक दर्जन लोगों को मौत के मुँह में जाने से रोका था। इनमें से लगभग आधी दर्जन घटनाओं में उसकी अपनी भी जान के लाले पड़ गये थे, किन्तु ''सत्साहसियों की भगवान सहायता करते हैं।'' इस उक्ति को चरितार्थ करते हुए वह हर बार बचता और दूसरों को बचाता रहा। इससे सभी उसका सम्मान करते थे।

उक्त दिन वह अपने नियमित कार्य में लगा था। उसके साथ २५ वर्षीय शैली तथा बोझ उठाने वाली मशीन के आपरेटर जान बांच व रोजर भी अपने-अपने कार्य में संलग्न थे। सभी आधा इंची रोड़ी के २० मीटर ऊँचे टीले को निपटाने में जुटे थे। जमीन के अन्दर कन्वेयर बेल्ट चल रही थी। बेल्ट गिट्टी को मालगाड़ी के डिब्बों तक पहुँचा रही थी। शैली का काम इस बात की देखरेख करना था कि इन गिट्टियों के साथ कोई मिट्टी का ढेला न चला जाय। यदि ऐसा होता, तो तुरन्त वह उस ढेले को उठाकर बाहर फेंक देता।

उस रोज भी अपने इसी काम में निमग्न था। शाम के पाँच बज चुके थे। बजरी के ढेर पर चढ़ा, उसने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देखा कि गिट्टियों के साथ मिट्टी का एक बड़ा ढेला चला जा रहा है। वह उस ओर लपका। नीचे खड्ड में गिट्टी काटने वाला शंकु यन्त्र चल रहा था। एक सप्ताह पूर्व ही शंकु उपकरण सम्बन्धी एक सुरक्षा गोष्ठी हुई थी, जिसमें शैली और उसके साथियों को चेतावनी दी गई थी कि उक्त मशीन से लगभग एक मीटर दूर रहा जाय, पास न आया जाय। नजदीक आना मौत को दावत देने के समान हो सकता है, क्योंकि टीले से बजरी गिरते समय कोई आदमी उस खड्ड में गिर पड़े, तो उसका जीवित बच पाना मुश्किल ही था। यद्यपि अब तक कोई ऐसी दुर्घटना हुई नहीं थी, फिर भी अधिकारियों ने इस बात की जानकारी कराना जरूरी समझा था।

शैली रोड़ी के ढेर पर चढ़ा जब निगरानी कार्य कर रहा था, तो उस वक्त उसके दिमाग में यह बात भलीभाँति थी कि सुरक्षा-दृष्टि से स्वयं को शंकु यन्त्र से दूर रखना है, किन्तु मिट्टी के ढेले को पकड़ने के फेर में उस दिन उसके पैर कुछ ज्यादा ही बढ़ गये और एक टाँग शंकु के ऊपर की गिट्टी पर जा पड़ी। भार के कारण उपकरण का मुँह फैल गया। बजरी तेजी से धसक पड़ी, इसके साथ वह स्वयं भी उसमें अंदर धँसता चला गया।

शैली से कुछ ही फासले पर स्क्रिवेंस बुलडोजर चलाकर फैली हुई गिट्टी इकट्ठी कर पास ला रहा था। अचानक संकट में पड़ जाने के कारण शैली की चीखें निकल गईं। स्क्रिवेंस ने स्थिति की गम्भीरता को समझा और तत्काल बुलडोजर से कूद पड़ा। चीखते हुए उसने जान ब्रांच से कन्वेयर बन्द करवाने को कहा एवं स्वयं विपदाग्रस्त की ओर दौड़ चला। अब तक शैली कमर से ऊपर तक धँस चुका था। जब तक स्क्रिवेंस गिट्टी के विशाल ढेर तक पहुँचता और कुछ सहायता करता, तब तक उसके साथी के कँधे पूरी तरह ढेर के अन्दर जा चुके थे। स्क्रिवेंस निकट पहुँचकर अपने मित्र को और अधिक भीतर जाने से रोकने का पुरजोर प्रयास करने लगा, पर सारी कोशिश निरर्थक प्रतीत हो रही थी। शैली पल-पल गिट्टी में डूबता ही चला जा रहा था और इसके साथ स्क्रिवेंस खुद भी धँसा जा रहा था। बजरी ओले के समान दोनों के ऊपर गिर रही थी और वे शनैः-शनैः भूमिगत होते जा रहे थे। अब रोड़े शैली के सिर को ढँक चुके थे और स्क्रिवेंस की गर्दन से ऊपर ठुड्डी को स्पर्श करने का प्रयास कर रहे थे। स्क्रिवेंस बार-बार अपनी गर्दन हिला और ठुड्डी चलाकर उन्हें वहाँ टीला खड़ा करने से रोकने का असफल प्रयत्न कर रहा था। इसी बीच सौभाग्यवश कन्वेयर बेल्ट रुक गई, किन्तु पत्थरों की बौछार अब भी जारी थी और स्क्रिवेंस की गर्दन की हलचल भी। जीवन और मृत्यु के मध्य भीषण संघर्ष चल रहा था, उसमें जीवन विजयी हुआ।

अंततः सैलाब थमा, तो स्क्रिवेंस का उत्साह द्विगुनित हो उठा। शैली का स्पर्श उसे सतत् हो रहा था। वह बाहर आ जाने का अपने प्रकार का भरपूर प्रयास कर रहा है—इसका भी उसे स्पष्ट आभास मिल रहा था, पर वह तो एक प्रकार से गिट्टियों के ढेर में मानो चिन गया था, फिर उसका एकाकी पुरुषार्थ भला पर्याप्त कैसे हो सकता था ? इस बात को स्क्रिवेंस अच्छी तरह अनुभव कर रहा था, अतः कोई बाहरी सहायता मिलने तक वह अपने मित्र को किसी प्रकार जिन्दा रखना चाहता था, अतएव अनथक रूप से वह अपने दोनों हाथों को चलाये जा रहा था और शैली के नथुनों के आगे से रोडियों को हटा रहा था, ताकि साँस के लिए उसे पर्याप्त हवा मिल सके। इसमें वह काफी हद तक सफल भी रहा, पर आखिर ऐसा स्क्रिवेंस कब तक कर सकता था ? धीरे-धीरे उसके हाथ थकने और रुकने लगे, तभी उस टीले पर लोगों के चढ़ने की आहटें सुनायी दीं, वह आश्वस्त हुआ। कुछ लोग शंकु के कगार के करीब आकर झाँकने लगे। इससे भार के कारण बजरी और गिरने लगी। स्क्रिवेंस चिचियाया-किनारे से दूर हटो, अन्यथा हम जल्द ही मर जायेंगे।

सुपरवाइजर एलविन राइमर ने चिल्लाया "हम बजरी हटा रहे हैं स्क्रिवेंस ! घबराना मत। जल्द ही तुम दोनों को बाहर निकाल लेंगे।" इसके साथ ही २५ मीटर के फासले से गिट्टी हटाने का कार्य प्रारम्भ हुआ। ३० आदमी मिलकर तेजी से फावड़ों के सहारे टीले को खोदने लगे। लगभग साढ़े तीन घण्टे के भगीरथ श्रम से उन दोनों को उस मौत की कब से निकाला जा सका। इस बीच करीब ३०० टन गिट्टी हटायी गई।

दोनों को तुरन्त अस्पताल ले जाया गया। शैली अब भी जिन्दा था और अर्धचेतन अवस्था में न जाने क्या-क्या बड़बड़ाये जा रहा था, जबकि स्क्रिवेंस पूर्णतः चैतन्य था। दोनों की टाँगें बुरी तरह सूजी हुई थीं।

दो सप्ताह के उपचार के बाद शैली एकदम स्वस्थ हो गया, जबकि स्क्रिवेंस को तीसरे दिन ही अस्पताल से छुट्टी दे दी गई। वह बिल्कुल स्वस्थ नजर आ रहा था और इस बात से प्रसन्न था कि शैली की जीवन रक्षा हो गई। कुछ सप्ताह के विश्राम के बाद दोनों फिर से काम पर वापस आ गये। स्क्रिवेंस को उसके साहसिक कार्य के लिए "कार्नेगी हीरो फंड कमीशन" का सर्वोच्च पुरस्कार प्रदान किया गया, जबकि जोसेफ ए. होम्ज सेफ्टी एसोसिएशन ने उसे "मेडल ऑफ ऑनर" से सम्मानित किया।

ऐसे घटनाक्रम अनेकों घटते रहते हैं, जब व्यक्ति संकटों में घिरकर अपना मनोबल खो बैठता है। वह औरों की तो क्या अपनी रक्षा भी नहीं कर पाता। अप्रत्याशित मौत, हार्टअटैक एक अनहोनी के भय से अनगिनत व्यक्ति जान गँवाते रहते हैं पर जिजीविषा मनुष्य का एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसा सद्गुण है, जो उसे प्रतिकूलताओं में भी अपरिमित शक्ति व साहस प्रदान करते हुए उसे ऐसा कुछ करा लेता है कि जिसे नितांत असम्भव कहा जा सके। यदि व्यक्ति अपने अन्दर की इस विभूति को जगा सके, आत्मबल सम्पन्न बन सके तो कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी वह संकटों से जूझता हुआ-प्रतिकूलताओं को चुनौती देता हुआ अपने मनःसंतुलन को बनाये रख सकता है व स्वस्थ-प्रसन्न जीवन जी सकता है। यही सफल जीवन की रीति-नीति है। हममें से हर किसी पर कभी भी किसी तरह की विपत्ति आ सकती है। कोई अप्रत्याशित घटना भी हो सकती है व कोई सम्भावित परिस्थितिजन्य। पर तनिक भी मानसिक समस्वरता को गँवाए, सन्तुलन खोए बिना यदि व्यक्ति निश्चित जीवन जीता चले तो वह दुर्द्धर्ष से दुर्द्धर्ष परिस्थिति पर भी मोर्चा जमा सकता है। इतनी शक्ति मनुष्य के मन में है और हम हैं कि मन की ताकत को न जाने क्यों पहचान पाते नहीं हैं।

जिजीविषा की चमत्कारी सामर्थ्य

अरे ! यह किसने किया ? कम से कम यह मनुष्य द्वारा तो सम्भव नहीं। सामान्य आदमी ऐसे आश्चर्यजनक वाक्य कहते सुने जाते हैं। किन्तु मनोबल के धनी इन आश्चर्यचकित कहने वाले कामों को करते देखे जा सकते हैं। ये उद्‌गार पश्चिम जर्मनी के एक युवक कुर्त एंजील पर पूरी तरह सही उतरते हैं, जिसका सारा जीवन ही ऐसे कारनामों से भरा पड़ा है।

एंजील का बचपन से शौक था, दुस्साहस भरे काम करना। दुस्साहस ऐसा नहीं कि किसी को पीड़ा पहुँचाए या किसी को डरा-धमकाकर अपना वर्चस्व बनाए। बल्कि ऐसा दुस्साहस जिसकी सामान्य स्थिति में मनुष्य कल्पना भी न कर सके। ऐसे रोमांचक कारनामों में उसे उड़ते वायुयानों से पैराशूट बाँधकर छलाँग लगाना सर्वाधिक प्रिय था और एक बार पैराट्रपिंग पुरस्कार भी जीत चुका था। तेज गति से उड़ते विमानों पर से छलाँग लगाकर उसने कई बार लोगों को रोमांचित किया।

घटना उस समय की है, जब कुर्त एंजील ने पहली बार रोमांचक प्रदर्शन किया था। इससे पहले वह अभ्यास ही करता रहा था। उसकी अभ्यास पारंगता तथा प्रत्युत्पन्नमति को देखकर अधिकारियों ने एंजील को छाताधारी दल के नेतृत्व का अवसर प्रदान किया।

जिस वायुयान में वह व उसके दल के अन्य सदस्य सवार थे, उस वायुयान ने पहले ओवहैजन के इर्द-गिर्द वाले क्षेत्र में उड़ान भरी। फिर एकदम ऊँचाई पकड़ना आरम्भ किया। करीब १५०० फीट की ऊँचाई पर विमान पहुँच गया। इतनी ऊँचाई पर पहुँचे विमान के पिछले हिस्से से कितने ही पैराशूटधारी कूद पड़े।

वह कूद तो गया पर पैराशूट नहीं खुल सका। उसमें कहीं कोई गड़बड़ी आ गई थी और बजाए खुलने के पैराशूट रस्सियों सहित उसके घुटने तथा बदन के इर्द-गिर्द लिपट गया था। कुर्त ने लुढ़कते हुए उन रस्सियों को काट डाला। प्राणों पर प्रत्यक्ष संकट था।

लेकिन जैसे-जैसे वह रस्सियाँ काटता जा रहा था, वैसे-वैसे रस्सियाँ उसके शरीर पर लिपटती जा रही थीं। वह नब्बे किलोमीटर प्रति घण्टे की गति से जमीन पर गिरता जा रहा था, पर इतने पर भी उसने होशोहवास नहीं खोए थे। पैराशूट से बुरी तरह लिपटे हुए वह जमीन पर गिरा। इस बुरी तरह गिरा कि वह अपने ही भार से पीठ के बल लगभग दो फुट की गहराई में जमीन में धँस गया था। फिर भी उसके होशोहवास कायम थे। एक तीखी जलन शरीर में महसूस होती जा रही थी और उसे बेसुध किए दे रही थी जैसे शरीर का सारा खून निचुड़कर पीठ में इकट्ठा होता जा रहा था। उसने हिलना चाहा पर हिल न सका। आँखों में बचपन से अब तक की कितनी ही स्मृतियाँ तैर गईं। कुर्त के मन में संकल्प उठा। अभी मुझे अपने देश के लिए, परिवार के लिए जिन्दा रहना है। मैं जीवित रहूँगा और ठीक होने पर इससे भी अधिक ऊँचाई से छलाँग लगाऊँगा।

इन संकल्पों के साथ ही उस पर न जाने कब बेहोशी आ गई। होश आया तो वह अस्पताल में था। कहीं दूर से आती डॉक्टर की आवाज उसके कानों में पड़ी, "एक फेफड़ा फट गया है, पसलियाँ टूट गई हैं, रीढ़ की हड्डी बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो गई है, दाहिना गुर्दा पिस चुका है। अब इसे किसी भी तरह बचाया नहीं जा सकता।

लेकिन आश्चर्य कि इस घटना के नौ सप्ताह बाद ही कुर्त एंजील उस अस्पताल से स्वस्थ होकर निकला। उसका जवाब था, 'मुझे पूर्ण विश्वास था कि मैं बचूँगा।' भला मैं अपना काम पूरा किए बिना मर कैसे सकता हूँ ? स्वस्थ होने के बाद उसने छलाँग लगाई और सिद्ध कर दिया कि मनोबल से मौत भी डरती है।

जिजीविषा की अजेय सामर्थ्य

प्राणी यों प्रकृति की विपरीत चपेट में आकर अक्सर अस्तित्व गँवा बैठता है। नियति के उग्र परिवर्तनों का सामना नहीं कर पाता और विपरीत परिस्थिति के सामने अपने को निरीह, असमर्थ अनुभव करता है। पर ऐसा तभी होता है जब वह उस आपत्ति का सामना करने के लिए पहले से ही तैयार न हो।

यदि प्राणी को विपरीत, अनभ्यस्त परिस्थिति में रहने को विवश होना पड़े तो वह अपने अस्तित्व की रक्षा करने के लिए क्रमशः ऐसे परिवर्तन उत्पन्न कर लेता है—ऐसी विशेषता का उत्पादन कर लेता है, जिसके आधार पर वह प्राणघातक समझी जाने वाली परिस्थितियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से भी तालमेल बिठा ले और अपना अस्तित्व कायम रख सके, सुविधापूर्वक निर्वाह कर सके।

जीवाणुओं की असह्य तापमान पर मृत्यु हो जाती है। वे अधिक उष्णता एवं शीतलता सहन नहीं कर सकते, यह मान्यता अब पुरानी पड़ चली है। पानी खौलने से अधिक गर्मी और २७० आ. से. नीचे शीत पर जीवाणुओं की मृत्यु हो जाने की बात ही अब तक समझी जाती रही है। इसका कारण यह था कि शरीर में पाया जाने वाला ग्लिसरोद रसायन असह्य तापमान पर नष्ट हो जाता है और जीवाणु दम तोड़ देते हैं। अब वे उपाय ढूँढ़ निकाले गये हैं कि इस रसायन को ताप की न्यूनाधिकता होने पर भी बचाया जा सके और जीवन को अक्षुण्ण रखा जा सके।

अत्यधिक और असह्य शीतल जल में भी कई प्रकार के जीवित प्राणी निर्वाह करते पाये गये हैं। इनमें से प्रोटोजोआ, निमैटोड, क्रस्टेशिया, मोलस्का आदि प्रमुख हैं।

येलोस्टोन की प्रयोगशाला में लुईव्राक और टामस नामक दो सूक्ष्म जीव-विज्ञानी-माइक्रोवायोलाजिस्ट यह पता लगाने में निरत हैं कि जीव सत्ता के कितने न्यून और कितने अधिक तापमान पर सुरक्षित रह सकने की सम्भावना है। वे यह सोचते हैं कि जब पृथ्वी अत्यधिक उष्ण थी, तब भी उस पर जीवन सत्ता मौजूद थी। क्रमशः ठण्डक बढ़ते जाने से उस सत्ता ने क्रमिक विकास-विस्तार किया है, पर इससे क्या—अति प्राचीनकाल में जब जीवन सत्ता थी ही तो वह विकसित अथवा अविकसित स्थिति में अपनी हलचलें चला ही रही होगी, भले ही वह अब की स्थिति की तुलना में भिन्न प्रकार की अथवा पिछड़े स्तर की ही क्यों न रही हो। विकसित प्राणी के लिए जो तापमान असह्य है वह अविकसित समझी जाने वाली स्थिति में कामचलाऊ भी हो सकता है।

यदि यही तथ्य हो तो फिर जीवन की मूल मात्रा को शीत, ताप के बन्धनों से युक्त माना जा सकता है और गीताकार के शब्दों में यह कहा जा सकता है कि आत्मा को न आग जला सकती है, न पवन सुखा सकता है, न जल डुबा सकता है। पञ्चभूतों की प्रत्येक चुनौती का सामना करते हुए वह अपना अस्तित्व सुरक्षित रख सकने में पूर्णतया समर्थ है।

समुद्र तट के सभी पर्वतीय क्षेत्रों में पाई जाने वाली धूसर रंग की मक्खी 'एफिड्रिल' को ४५° से ५१° से. के बीच तापमान वाले गर्म जल में प्रवेश करते देखा गया है। यह प्राणियों के जीवित रहने को असम्भव बनाने वाली गर्मी है। सामान्यतया धरती की सतह पर १२° से. तापमान रहता है। प्राणियों को उतना ही सहन करने का अभ्यास होता है। अधिक उष्ण या अधिक ताप के वातावरण में रहने वाले जन्तुओं को विशिष्ट स्थिति के अभ्यस्त ही कह सकते हैं।

एफिड्रिड मक्खी के अतिरिक्त कुछ जाति के वैक्टीरिया भी ऐसे पाये गये हैं, जो खौलते पानी के ९२° सेन्टीग्रेड तापमान में भी मजे से जीवित रहते हैं। अमेरिका के येलोस्टोन नेशनल पार्क में स्थित गर्म जल के झरने प्रायः इसी तापमान के हैं और उनमें जीवित वैक्टीरिया पाये गये हैं। इन गर्म झरनों अथवा कुण्डों में एक प्रकार की काई की मोटी परत जमी रहती है, जिसे हिन्दी में शैवाल कहा जाता है। अँग्रेजी में इसका नाम एल्गी है। इसमें जीवन रहता है। आमतौर से वह ७५° से. तक गर्म जल में मजे का निर्वाह करती है। वैक्टीरिया उसी के सहारे पलते हैं। एफिड्रिड मक्खी का प्रमुख भोजन यह एल्गी ही है। उसे प्राप्त करने के लिए वह उस असह्य तापमान के जल में डुबकी लगाती है और बिना जले, झुलसे अपना आहार उपलब्ध करती है।

यह तो हुई छोटे जीवों की बात, अब अधिक कोमल समझे जाने वाले मनुष्यों की बात आती है, वह भी प्रकृति की असह्य कही जाने वाली स्थिति में निर्वाह करने के लिए अपने को ढाल सकता है। उत्तरी ध्रुव प्रदेश में रहने वाले एक्सिमो लोग अत्यधिक शीत भरे तापमान में रहते हैं। भालू, हिरन और कुत्ते भी उस क्षेत्र में निवास करते हैं। वनस्पतियाँ और वृक्ष न होने पर पेट भरने के लिए माँस प्राप्त कर लेते हैं। इसके लिए उनने बर्फ की मोटी परतें तोड़कर नीचे बहने वाले समुद्र में से मछली पकड़ने की अद्भुत कला सीख ली है। आयुध साधन रहित होते हुए भी हिरन, भालू और कुत्तों का भी वे शिकार करना सीख गये हैं और लाखों वर्ष से उस क्षेत्र में निर्वाह कर रहे हैं।

दूसरे जीवों की तुलना में मनुष्य को अनेक अनुदान ऐसे उपलब्ध हैं, जिन्हें असाधारण ही कह सकते हैं। बुद्धि की विशेषता, इच्छाशक्ति, भाव संवेदना, लक्ष्य निर्धारण, स्मृति जैसी मस्तिष्कीय विशेषताएँ ऐसी हैं, जो अन्य प्राणियों को बहुत ही स्वल्प मात्रा में मिली हैं। उसके देखने तथा सुनने की शक्ति अत्यधिक संवेदनशील है। घ्राण व्यक्ति तो अन्य प्राणियों में अधिक है पर वे मनुष्य जैसी उच्चस्तरीय दृष्टि एवं श्रवण शक्ति का वरदान नहीं ही पा सके हैं। मनुष्य की मस्तिष्कीय संरचना की अन्य किसी प्राणी से तुलना नहीं की जा सकती। उसकी बनावट अपने आप में विलक्षण है।

अन्य प्राणी प्रकृति के आक्रमण को एक सीमा तक ही सहन कर सकते हैं और अधिक दबाव पड़ने पर दम तोड़ देते हैं पर मानवी काया का निर्माण इतना लोचदार है कि वह विपन्न परिस्थितियों में भी निर्वाह कर सकता है और अपने आपको इस प्रकार ढाल सकता है, जिससे प्रकृति का दबाव उसे चुनौती न दे सके।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

'न्यूरोफिजियोलाजिकल बेसिस ऑफ माइण्ड' ग्रन्थ में उदाहरणों और प्रमाणों में यह बताया गया है कि मनुष्य का सामान्य निर्वाह १.५° में होता है पर वह १० हजार फुट से अधिक ऊँचाई पर जहाँ टेम्प्रेचर—१५° सेन्टीग्रेड होता है तथा ऑक्सीजन की कमी से असुविधा पड़ती है वहाँ भी कुछ ही दिनों के अभ्यास से सरलतापूर्वक निर्वाह करने लगता है। यहाँ तक कि २० हजार फुट पर जहाँ २५° सेन्टीग्रेड तापमान रहता है, वहाँ भी जिन्दा रह सकता है और २५ हजार से अधिक ऊँचाई पर जहाँ ४५° सेन्टीग्रेड शीत होता है, सामान्य बुद्धि के हिसाब से मनुष्य का जीवित रह सकना सम्भव नहीं, पर उसकी लोच ऐसी है, जो वहाँ भी जिन्दा बनाये रह सकती है।

हिमालय पर रहने वाले हिम-मानव की जीवनचर्या भी कम रहस्यमय नहीं है। यह प्राणी मनुष्य जैसी आकृति, प्रकृति का है। उसे रींछ और मनुष्य का सम्मिश्रण कह सकते हैं। अत्यन्त शीत भरे हिमाच्छादित प्रदेश में उतनी ऊँचाई पर वह रहता है, जहाँ साँस लेने के लिए ऑक्सीजन के सिलेण्डर पीठ पर बाँधकर पर्वतारोही जाया करते हैं और खुली हवा में साँस लेना मृत्यु को निमन्त्रण देना मानते हैं। लम्बे समय से वह एकाकी जीवन जीता चला आ रहा है। युगीय सभ्यता से दूर रहते हुए भी उसने अपने रहस्यमय जीवन-क्रम को किसी प्रकार अक्षुण्ण बनाये ही रखा है।

हिमालय के उत्तुङ्ग शिखरों पर रहने वाला हिम-मानव अपने अस्तित्व के समय-समय पर अगणित परिचय देता रहा है। पर अभी तक उसे पकड़ने के प्रयास सफल नहीं हो सके। इस अद्भुत प्राणी के सम्बन्ध में अधिक जानने के लिए उसे निकट से देखना, समझना आवश्यक है। यह तभी हो सकता है जब वह पकड़ में आवे। किन्तु अति बुद्धिमान समझे जाने वाले मनुष्य को भी यह हिम-मानव अभी तक चकमा ही देता आया है, उसके पकड़ने के प्रयत्नों को निष्फल ही बनाता रहता है। इतने पर भी हिम-मानव का अस्तित्व प्रायः असंदिग्ध ही समझा जाता है।

सन् १९७० की २५ मार्च को अन्नपूर्णा शिखर पर चढ़ाई करने और उस क्षेत्र की सबसे ऊँची चोटी पर विजयपताका फहराने के उद्देश्य से ब्रिटिश पर्वतारोहियों का एक दल अपनी दुस्साहस भरी यात्रा कर रहा था। दल के लोग केम्प में विश्राम कर रहे थे। चन्द्रमा की चाँदनी सारे हिमाच्छादित प्रदेश को आलोकित कर रही थी। अभी वे लोग सोने भी न पाये थे कि हाथी जैसी भयानक आकृति अपनी लम्बी परछाई सहित उधर घूमती हुई दिखाई दी। खतरे की आशंका से वे लोग बाहर निकल आये और राइफलें तान लीं। गौर से देखने पर पाया गया कि यह प्राणी ठीक वैसा ही है जैसा कि हिम-मानव का वर्णन करते हुए समय-समय पर कहा या सुना जाता रहा है। आधा घण्टे तक उसकी हरकतें दल ने शान्तिपूर्वक देखीं। उनका उद्देश्य मारना नहीं जानना था। सो उन्होंने आँखें भरकर देखा। थोड़ी देर में वह उछल-कूद करता हुआ पर्वत शृंखलाओं की ओट में गायब हो गया।

रात को पहरा देने की पद्धति अपनाकर बारी-बारी से दल के लोग सोये तो सही, पर आक्रमण का आतंक रात भर छाया रहा। प्रातःकाल वे लोग तलाश करने गये कि कुछ वास्तविकता भी थी या कोई भ्रम ही था। उन लोगों ने मनुष्य जैसे किन्तु बहुत बड़े साइज के पद चिन्ह देखे, जिनके उन लोगों ने फोटो लिये। वे फोटो तत्कालीन कई प्रमुख पत्रों में उस देखे हुए विवरण के साथ प्रकाशित भी हुए।

इससे पूर्व सन् १९५८ में एक अमेरिकी पर्वतारोही दल विशेषतया हिम-मानव को जीवित अथवा मृतक किसी भी स्थिति में पकड़ने का उद्देश्य लेकर ही आया था। इस दल के एक सदस्य प्रो. टेम्बा अपने साथ कुछ शेरपा लेकर एक क्षेत्र खोज रहे थे। उनने आश्चर्य के साथ उसे एक झरने के किनारे बैठे देखा, वह पानी में से मेंढक और मछलियाँ बीन-बीनकर बिना चबाये निगल रहा था। प्रो. टेम्बा ने उस रात में फ्लेश लाइट जलाई तो क्रुद्ध हिम-मानव उनकी ओर दौड़ा। शेरपा समेत वे बड़ी कठिनाई से अपनी जान बचाकर वापिस लौटने में सफल हुए।

सन् १९५८ में इटली के प्रख्यात पत्रकार गाडविन हिम-मानव की खोज में अपने दल समेत हिमाच्छादित चोटियों पर घूमे। एक जगह उनकी मुठभेड़ हो ही गई। राइफल का घोड़ा दबाने की अपेक्षा उनने कैमरे का बटन दबाना अधिक उपयुक्त समझा। कुछ ही मिनट सामने रहकर वह विशालकाय प्राणी भाग खड़ा हुआ। उसे पकड़ा या मारा तो न जा सका, पर फोटो बहुत साफ आये। उसके पैरों के निशानों के भी फोटो उनने लिये और अपने देश जाकर उन चित्रों को छापते हुए हिम-मानव के अस्तित्व की सृष्टि की।

तिब्बत और चीन की सीमा पर किसी प्रयोजन के लिए गये एक चीनी कप्तान ने भी हिम-मानव से सामना होने का विवरण अपने फौजी कार्यालय में नोट कराया था।

स्विटजरलैण्ड का एक पर्वतारोही दल एवरेस्ट पर चढ़ाई करने के लिए आया था। उनके साथ पन्द्रह पहाड़ी कुली थे। दल का एक कुली थोड़ा पीछे रह गया। उस पर हिम-मानव ने आक्रमण कर दिया। चीख-पुकार सुनकर अन्य कुली उसे बचाने दौड़े और घायल स्थिति में उसे बचाया।

सन् १८८७ में कर्नल वेडैल के नेतृत्व में एक ब्रिटिश पर्वतारोही दल भारत आया था। उसने सिक्किम क्षेत्र में यात्रा की थी। १६ हजार फुट ऊँचाई पर उनने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बर्फीली चोटियों पर पाये गये हिम-मानव के ताजे पद चिन्हों के फोटो उतारे थे।

वनस्पति विज्ञानी प्रो. हेनरी ल्यूस जिन दिनों वनस्पति शोध के सन्दर्भ में हिमाच्छादित प्रदेशों में भ्रमण कर रहे थे, तब उन्होंने मनुष्याकृति के विशालकाय प्राणी को आँखों से देखा था। वह तेजी से एक ओर से आया और दूसरी ओर के पहाड़ी गड्ढों में कहीं गायब हो गया। ठीक इसी से मिलती-जुलती घटना सन् १९२१ में एवरेस्ट चढ़ाई पर निकले, कर्नल हावर्ड व्यूरी की है, उनके सामने से भी वैसा ही वन-मानुष से मिलता-जुलता प्राणी निकला था। उस क्षेत्र में आने-जाने वाले बताते हैं कि वह अकेले-दुकेले आदमियों और जानवरों को अक्सर मारकर खा जाता है।

भारतीय हिम-यात्री ए. एन. तोम्वाजी ने सिक्किम क्षेत्र में हिम-मानव देखने का विवरण बताया था। स्विटजरलैण्ड के डायरन फर्थ ने भी सन् १९२५ में उसे आँखों से देखा था। नार्वे के दो वैज्ञानिक थोरवर्ग और फ्रसिर्स्ट किसी अनुसन्धान के सम्बन्ध में सिक्किम क्षेत्र में गये थे। उन पर हिम-मानव ने हमला कर दिया और कन्धे नोंच डाले। गोलियों से उसका मुकाबला करने पर ही वे लोग बच सके। गोली उसे लगी नहीं किन्तु डरकर वह भाग तो गया ही। सन् १९५१ में एक ब्रिटिश यात्री एरिक शिपटन ने भी हिम-मानव के पैरों के निशानों के बर्फीले क्षेत्र से फोटो खींचे थे। ऐसे ही फोटो प्राप्त करने वालों में डॉ. एडमण्ड हिलेरी का भी नाम है। सन् १९५४ में कंचनजंघा चोटियों पर सर जानहंट के दल ने २० हजार फुट ऊँचाई पर हिम-मानव के पद चिन्हों के प्रमाण एकत्रित किये थे। वे निशान प्रायः १८ इञ्च लम्बे थे। न्यूजीलैण्ड के पर्वतारोही जॉर्जलोंव ने उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर हिम-मानव के अस्तित्व को असंदिग्ध बताया था।

सन् १९५५ में इंग्लैण्ड के दैनिक पत्र 'डेलीमेल' ने अपना एक खोजी दल मात्र हिम-मानव सम्बन्धी अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए भेजा था। दल ने बहुत समय तक हिमाच्छादित प्रदेशों में दौरे किये। इस बीच उन्होंने हिम-मानव देखा या पकड़ा तो नहीं, पर ऐसे अनेक प्रमाण, अवशेष एवं चित्र संग्रह करके उस पत्र में छपाये, जिनसे हिम-मानव सम्बन्धी सब श्रुतियाँ सारगर्भित सिद्ध होती हैं।

असह्य माने जाने वाले शीत और ताप से प्राणियों का विशेषतया मनुष्य जैसे कोमल प्रकृति जीवधारी का निर्वाह होते रहने के उपरोक्त प्रमाण यह सिद्ध करते हैं कि प्रतिकूलताएँ कितनी ही बड़ी क्यों न हों, जीव उन सबसे लड़ सकने में समर्थ है ? उसका संकल्प बल ऐसी परिस्थितियाँ पैदा कर सकता है, जिसमें असह्य को सह्य और असम्भव को सम्भव बनाया जा सके। न केवल प्रकृति से जूझने में, वरन् पग-पग पर आती रहने वाली कठिनाइयों को निरस्त करने में भी संकल्प बल की प्रखरता का तथ्य सदा ही सामने आता रहता है।

सम्पत्ति की खोज में जल-थल और नभ का मानवी मंथन

धरती की खोज भी अभी जारी है और यह तलाशा जा रहा है कि भू-गर्भ की सम्पत्ति को कहाँ तक और किस हद तक मनुष्य की सुख-सुविधा के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है ? धरती की ऊपरी सतह वनस्पतियाँ उगाने एवं मिट्टी, पत्थरों के अनुदानों तक सीमित है। मूल्यवान धातुएँ, रसायनें, तेल, गैस, कोयला आदि गहराई में उतरने पर निकलते हैं। इसलिए भूतल की मोटी जानकारियाँ प्राप्त कर लेने के उपरान्त अधिक ध्यान इस ओर दिया जा रहा है कि भू-गर्भ में दबी सम्पदा को उखाड़कर ऊपर लाया जाय और उससे मानवी समृद्धि का भण्डार बढ़ाया जाय।

मनुष्य की क्षुधा बहुत अधिक है। धरती की सम्पत्ति उसकी तुलना में कम पड़ती है। इसलिए समुद्र की खोज गहराई तक की जा रही है। समुद्र मंथन द्वारा १४ रत्न प्राप्त करने के लिए विज्ञान अब फिर तुल गया है। अनुमान है कि जो कुछ धरती पर है, उससे बहुत अधिक समुद्र में है। कुछ समय पहले तक नौकानयन और मत्स्यचयन के दो ही काम समुद्र से लिये जाते थे, अब खाद्य, धातुएँ, रसायन, निवास आदि अनेक प्रयोजनों के लिए समुद्र को टटोलने, खोजने, खखोलने का निश्चय किया गया है। यह कार्य पिछले दिनों जिस उत्साह और संकल्प के साथ आरम्भ किया गया था अब उसमें और भी अधिक वृद्धि कर दी गई है।

१५ अगस्त, १९३४ का दिन समुद्री शोध के इतिहास में एक अविस्मरणीय दिन माना जायेगा। उस दिन बरमूधा द्वीप के नांसच बन्दरगाह के समीप खड़े एक जलयान से दो वैज्ञानिक समुद्र-तल में उतरे और महत्वपूर्ण दृश्य प्रत्यक्ष देखकर आये। यह वैज्ञानिक थे, डाक्टर वीब और डाक्टर वार्टन। उनका वाहन एक दस फुट ऊँचा और प्रायः उतना ही लम्बा-चौड़ा फौलाद का बना सन्दूक था, जिसमें पारदर्शी खिड़कियाँ लगी थीं। इसके भीतर ऑक्सीजन की तुम्बियाँ, कैमरा, टेलीफोन, बिजली के उपकरण थे। यह सन्दूक जहाज पर लोहे की रस्सी से बँधा था और मशीनों द्वारा नीचे उतारा जा रहा था। वे लोग ३०२८ फुट गहराई तक नीचे उतरे और जो कुछ उन्होंने समुद्र के गर्भ में देखा, उसे टेलीफोन से सुनाया। इस टेलीफोन सम्वाद को लाउडस्पीकरों द्वारा उत्सुक जनता को सुनाया जाता रहा।

यह आँखों देखा हाल प्रायः उसी ज्ञान की पुष्टि करता था, जो इससे पहले ही जाना जा चुका था। अन्तर इतना ही था कि पिछले ज्ञान को अन्यान्य शोध उपकरणों से जाना गया था और यह सब कुछ आँखों देखे हाल-समाचार की तरह मुँह से बोलकर सुनाया जा रहा था।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस डुबकी में अद्भुत बात एक ही थी, समुद्री जीवों में से अनेको ऐसे थे। जिनके शरीर से बड़ी चमकदार प्रकाश किरणें निकलती थीं और उस घने अन्धकार में जलते हुए बिजली के बल्बों की तरह भ्रमण करती थीं। कुछ मछलियाँ तो कई प्रकार के रंगों की आभा फैलाती थीं। आग उगलने वाली, बिजली के झटके देने वाली, रोशनी फैलाने वाली और तरह-तरह की रंग-बिरंगी आभा बिखेरने वाली इन मछलियों को देखकर ऐसा लगता था, मानो सघन अन्धकार में आकाश के नक्षत्रों की तरह कुछ जल-जन्तु प्रकाश की आवश्यकता पूर्ण करते हुए विचरण कर रहे हैं।

समुद्र द्वारा अपने उदर में निगल लिये गये टिटहरी के अण्डों की कथा सर्वविदित है। टिटहरी ने समुद्र से लड़ाई मोल ली थी, अपनी चोंच में भरकर समुद्र में मिट्टी डालना और उसे सुखाकर अपने अण्डे वापिस लाने का दृढ़ संकल्प आखिर सफल ही हुआ था। अगस्त मुनि ने उसके न्यायोचित संकल्प को पूरा करने में सहायता की थी, यह पुराण गाथा सर्वविदित है।

उसी प्रयत्न की पुनरावृत्ति हमारे दुस्साहसी समुद्र शोधक कर रहे हैं। उन्होंने निश्चय किया है कि समुद्र ने जो कुछ धरती की सम्पदा उदरस्थ की है, उसे वे उगलवाकर रहेंगे। इस सन्दर्भ में फिलहाल दो कार्यक्रम हाथ में लिये गये हैं—एक यह कि समुद्र के गर्भ में किसी समय के जो सुन्दर नगर, द्वीप और भूखण्ड डूबे पड़े हैं, उनकी सांस्कृतिक सम्पदा को—धन सम्पत्ति को तलाश करके बाहर लाया जाय ताकि उन परिस्थितियों का पता लगाया जा सके, जिनके कारण इन भूखण्डों को समुद्र ने निगला। इसके अतिरिक्त पुरातन इतिहास की एक कड़ी भी इस खोज में जुड़ सकती है। साथ ही जो सम्पदा वहाँ दबी पड़ी है, उसे भी मनुष्य के उपभोग के लिए प्रस्तुत किया जा सकेगा।

दूसरा चरण समुद्र के गर्भ में डूबे हुए जहाजों को खोज निकालना था। पुराने जहाज निर्माण वस्तुकला—डूबने से समुद्र की दुर्दान्त हलचलें और उनका सामना न कर सकने की इन यानों को दुर्बलता भी इस प्रयास में खोजी जा सकेगी। जहाज अवश्य ही कुछ न कुछ सम्पत्ति लेकर डूबे होंगे और उसमें से कम से कम बहुमूल्य धातुएँ तो अभी भी उपयोग के लायक होंगी। इन सब उपलब्धियों के लिए समुद्र तल को मँझारा जा रहा है। इसके लिए सुव्यवस्थित अभियान देर से चल रहा है। पुरात्त्वतेत्ता राबर्ट एफ. मार्क्स ने इस मिशन के लिए अपना पूरा जीवन ही लगा दिया। यह दुस्साहसी गोताखोर अपनी छोटी पनडुब्बी यू. एस. एस. मार्नटर में निर्वाह तथा खोज के लिए आवश्यक सामग्री लेकर संसार के प्रमुख समुद्रों की खोज प्राण हथेली पर रखकर करता रहा। उसकी खोज बेकार नहीं गई, वरन् बहुत कुछ ऐसा उसने खोज निकाला, जिसके लिए संसार भर में उसकी प्रशंसा हुई। सन् १९५७ अखबारों में सर्वत्र उसकी साहसपूर्ण खोजों के सम्बन्ध में लम्बे विवरण प्रकाशित हुए थे।

मार्क्स ने "पोर्ट रायल" नामक अत्यन्त सुरम्य ब्रिटिश द्वीप को खोज निकाला। इसकी कला और सम्पत्ति किसी समय इतनी बढ़ी-चढ़ी थी कि अँग्रेज उस पर गर्व करते थे। ७ जून, १९७२ में एक भयंकर भूकम्प और तूफान आया, जिसके कारण धरती धँसकी और द्वीप समुद्र के गर्त में चला गया। तब से उसकी गहराई में प्रवेश करने की न किसी ने हिम्मत की और न आवश्यकता समझी। मार्क्स ने गोताखोरी के साधन जुटाकर वह सामग्री प्रस्तुत की है, जिससे उस समय के कला-कौशल, सभ्यता स्तर का पता चलता है और उन परिस्थितियों पर प्रकाश पड़ता है, जो उसे डुबो देने का कारण थीं।

इसी प्रकार मार्क्स ने डूबे हुए दो स्पेनिश जहाज के कङ्कालों को समुद्री कब्रिस्तान में से उखाड़कर उनकी पूरी तरह खानातलाशी लेली है। इनमें से एक जहाज 'अवर लेडी ऑफ दि मीराकल' सन् १९४१ में मैक्सिको की खाड़ी में डूबा था। दूसरा यूकाटन की खाड़ी में। इनका सामान ऊपर लाने में पूरे तीन वर्ष तक लगातार प्रयत्न किया गया। इस दुस्साहस पर टिप्पणी करते हुए वाशिंगटन की एक शोध संस्था स्मिथ सोनियल इन्स्टीट्यूट ने कहा था—"अब तक के समुद्रीय पुरातत्त्व अन्वेषण में मार्क्स के प्रयत्न अद्भुत हैं।"

यह श्रेय धुन के धनी मार्क्स ने सहज ही प्राप्त नहीं कर लिया, वरन् हर घड़ी उसे भयानक खतरों से जूझना पड़ा है। उसने अपने कुछ संस्करणों में दिल दहलाने वाली घटनाओं का उल्लेख किया है।

"पोर्ट रायल के निकटवर्ती समुद्र का पानी बहुत गन्दला है। दो-तीन इन्च से आगे की कोई चीज उसमें नहीं देखी जा सकती। झुण्ड बनाकर घूमने वाली भयंकर जेली मछलियों का पता तब चलता है, जब वे मात्र दो-तीन इन्च दूर रह जाती हैं। इसके अतिरिक्त अन्य जल-पिशाच भी बड़ी मात्रा में और चित्र-विचित्र आकृतियों में घूमते रहते हैं। जिनकी पकड़ में आने के बाद फिर किसी का बच निकलना कदाचित ही सम्भव हो सकता है। शार्क मछली हमला कर बैठे तो फिर समझना चाहिए कि गोताखोर का ढेर हो गया। ऐसे खतरनाक समुद्रों में देर तक साँस लेने के लिए ऑक्सीजन के बड़े-बड़े थैले ले जाने पड़ते थे। वह तरीका काफी सिर-दर्दी का था। इसलिए नया 'एक्वानाट' यन्त्र बनाया गया। जिसमें ऑक्सीजन के थैले समुद्र की सतह पर तैरते रहने और नली द्वारा गोताखोर तक हवा पहुँचाने की सुविधा बन सकी। अन्य यन्त्र भी ऊपर तैरते हैं, इससे हल्का-फुल्का गोताखोर अधिक तेजी और चुस्ती-फुर्ती के साथ अपना काम करते रहने में समर्थ हो सके। ऐसे-ऐसे कई अनोखे आविष्कार मार्क्स करता रहा और अत्यन्त कष्टसाध्य एवं खतरे से भरी जिन्दगी जीकर वह मनुष्य जाति की ज्ञान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शृंखला में एक नई कड़ी जोड़ने के लिए अनवरत प्रयत्न करता रहा।

संसार के सभी समुद्रों में सबसे गहरी खाइयाँ पाँच गिनी गई हैं। इनकी गहराई ६००० मीटर तक है। गहराई में पानी का दबाव बहुत बढ़ जाता है। एक वर्ग सेंटी मीटर पर यह दबाव लगभग एक टन होता है। इतना दबाव सामान्य प्राणी सहन नहीं कर सकते। इतने पर भी इन गहरी खाइयों में लगभग १५० जातियों के जल-जीव निवास करते हैं और आसानी से निर्वाह करते हुए अपना वंश वृद्धि क्रम चलाते हैं। इन जीवों की रीढ़ की हड्डी नहीं होती। घोर अन्धेरे में रहने के कारण उनकी आँखें भी नहीं होतीं। दबाव को सहन करने योग्य उनके शरीर हैं। सामान्य जल-जीवों की तुलना में वे पाँच गुने बड़े हैं।

पृथ्वी पर वायुमण्डल का दबाव घटने-बढ़ने से जीवधारियों के शरीर बड़े या छोटे होते हैं। इस तथ्य की नई जानकारी समुद्र तल से मिली है और सोचा जा रहा है कि यदि प्राणियों की नस्लें छोटी या बड़ी बनानी हों तो इसके लिए वायु का कृत्रिम दबाव उत्पन्न करके वैसा किया जा सकता है। धरती पर रहने वाले पशुओं की तरह जलचरों से न केवल माँस का वरन् और भी कई प्रकार के सहयोग लेने का रास्ता ढूँढ़ लिया गया है। समुद्र की तली खोदकर बहुमूल्य खदानें निकाली जानी हैं और पानी को उबाल, छानकर जल सम्पत्ति का बहुत बड़ा भण्डार किस प्रकार उपलब्ध किया जाय। यह तैयारी बहुत हद तक पूरी कर ली गई है।

भविष्य में जो युद्ध लड़े जायेंगे, उनका प्रधान क्षेत्र थल नहीं जल होगा। जल में छिपी हुई पनडुब्बियाँ उतनी आसानी से देखी-जानी नहीं जा सकतीं, जितनी कि थल पर की सेनाएँ अथवा फैक्टरियाँ। आणविक मिसाइलें २५०० मील तक की मार करने वाली बनाई गई हैं। वे अब वायुयानों पर नहीं पनडुब्बियों पर ही लाद दी गई हैं।

वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय परम्परा यह है कि किसी देश का निकटवर्ती १२ मील का क्षेत्र उस देश के अधिकार में माना जाता है। इसके आगे का क्षेत्र प्रत्येक देश के लिए समान रूप से खुला है। इसके अतिरिक्त यह भी अन्तर्राष्ट्रीय परम्परा है कि २०० मीटर से अधिक गहराई पर पाई जाने वाली खनिज सामग्रियों को कोई भी साधन-सम्पन्न देश निकाल सकता है। इन्हीं सुविधाओं का लाभ उठाकर रूसी और जापानी मच्छीमार जहाज जहाँ भी 'माल' देखते हैं वहीं उसे समेटने के लिए जा पहुँचते हैं। अब अगले दिनों धरती की तरह ही सारे समुद्र का भी बँटवारा किया जाना है, जिस पर अमुक देश अपना अधिकार जमा सके और उसका अपनी पृथ्वी की तरह ही दोहन कर सके।

धरती माता का दोहन मनुष्य हजारों-लाखों वर्षों से करता चला आ रहा है। समुद्र पिता को अब खटखटाया जा रहा है। अन्तरिक्ष गुरु की भी झोली, झींपड़ी टटोलने के लिए राकेटों, उपग्रहों के जासूस कमर कसकर जुट गये हैं। थल, जल और नभ में जो कुछ भी सम्पदाएँ छिपी पड़ी हैं, उन सबको उदरस्थ-करतलगत करने के लिए मनुष्य की तृष्णा आकुल-व्याकुल हो रही है। अतृप्ति को तृप्त करने के लिए ब्रह्माण्ड का कोना-कोना मँझार लेने की तैयारी पूरे जोश-खरोश के साथ चल रही है।

यों मनुष्य तुच्छ-सा प्राणी है—उसकी आवश्यकताएँ भी नगण्य और स्वल्प प्रयास से सहज पूरी हो सकने जितनी हैं। किन्तु तृष्णा की सुरसा का फैलता हुआ मुख प्रयत्न-पुरुषार्थ के हनुमान से बड़ा ही रहेगा। अतृप्ति को तृप्त किया जा सकेगा इसमें पूरा सन्देह है। पौराणिक रावण, हिरण्याक्ष और ऐतिहासिक सिकन्दर, नैपोलियन अपने को दरिद्र, कङ्गाल अनुभव करते हुए चले गये तो आज का लिप्साग्रस्त विज्ञानी मानव सन्तोष की कोई झाँकी प्राप्त कर सकेगा, इसमें पूरा सन्देह है।

तृप्ति दे सकने लायक विभूतियों की खदान मनुष्य के अन्तरंग में है। अन्तर्मुखी होकर यदि वहाँ कुछ ढूँढ़ा, खोजा गया होता तो इतना अधिक मिल सकता था जितना धरती, समुद्र और आकाश तीनों में मिलाकर नहीं है। यदि यह प्रयास अन्तःकरण को खोजने में लगे होते तो इतनी विभूतियाँ मिल सकती थीं, जिन्हें पाकर हममें से हर मनुष्य इन्द्र-कुबेर से बढ़कर अपने को सुसम्पन्न अनुभव करता।

सफलता का प्रवेश द्वार—पुरुषार्थ

सफलता के लिए नाना क्षेत्र और प्रवेश द्वार हैं। यह नहीं कि पिछले युग के महापुरुष जैसे ईसा, बुद्ध, मुहम्मद या गुरुनानक ही सफल पुरुषार्थी कहे जा सकें। आज के सामाजिक, राजनैतिक और आध्यात्मिक क्षेत्रों में भी सफलता और उन्नति की प्रचुर सम्भावनाएँ भरी पड़ी हैं। क्रान्ति उत्पन्न कर प्रगति के लिए बहुत गुंजाइश है। केवल आवश्यकता इस बात की है कि मनुष्य समय रहते अवसर पहचान ले और अपनी शक्तियाँ विकसित कर द्रुतगति से उन्नति का प्रयत्न करे। अपने लिए क्षेत्र ढूँढ़ना मनुष्य की व्यक्तिगत कुशलता और बुद्धिमत्ता पर निर्भर करता है। श्री सन्तरामजी ने अपनी पुस्तक "सफलता के सिपाही" में कुछ सफल व्यक्तियों की जीवन-झाँकियाँ और उनकी सफलता के रहस्यों पर प्रकाश डाला है। संक्षेप में उन पुरुषार्थी आत्माओं के जीवन-मन्थन का नवनीत यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है। ये व्यक्ति हम और आपकी तरह की हाड़-माँस के शरीर वाले आदमी थे। हमारे समाज की विषमताओं और विरोधों में पले, पनपे थे, ईश्वर या देवता नहीं थे। जो कार्य उन्होंने किया, वह हम सब दृढ़ प्रयत्न और उद्योग से पूर्ण कर सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में अनेक विघ्न-बाधाएँ उपस्थित हुईं, स्वयं उनके शरीर में त्रुटियाँ थीं, जिन्हें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सतत उद्योग और अध्यवसाय से उन्हें दूर करना पड़ा। हर्ष, दुःख, आशा-निराशा के थपेड़े खाते हुए अन्ततः वे सफलता की चरम सीमा पर आसीन हो गए।

पहला व्यक्ति एक आदर्श स्वावलम्बी मनुष्य का उदाहरण है। नाम है श्री सुबोधचन्द्रराय। उन्होंने एम. ए., बी. एल. की परीक्षाएँ पास की थीं, पर दुर्भाग्य से वे अन्धे हो गए थे। अन्धापन उनकी उन्नति में बाधक न बन सका। दृढ़ संकल्प और परिश्रम से वे अपनी उन्नति में लग गये। वे प्रायः सोचा करते थे कि अन्धों की स्थिति का कैसे सुधार किया जा सकता है ? उन्होंने अमेरिका जाकर अन्धों की स्थिति तथा उच्च शिक्षा की व्यवस्था का अध्ययन करने का संकल्प किया। उन्हें छात्रवृत्ति मिली और वे विदेश में उस अन्धेपन की अवस्था में ही अध्ययन करके स्वदेश लौटे। उन्होंने जीविका उपार्जन की और एक अमेरिकन सुन्दरी से विवाह किया। सुखी जीवन व्यतीत करते रहे। उनसे प्रायः पूछा जाता है—

"अन्धे होते हुए भी आपने इतनी शिक्षा कैसे प्राप्त कर ली ?"

इसके उत्तर में राय महोदय कहते हैं, "मैं नहीं समझता इसमें आश्चर्य की बात ही क्या है ? आवश्यक साधन-सामग्री मिल जाय, तब अन्धे क्या नहीं कर सकते ? परन्तु अन्धों के प्रति देखने का बहुत-से लोगों का दृष्टिकोण गलत है। वे अन्धों को दया तथा सहानुभूति की दृष्टि से देखते हैं। जब तक इस दृष्टिकोण को बदला न जायेगा, तब तक अन्धे समाज के उपयोगी अंग न बन सकेंगे। अन्धों के शिक्षण की कोई भी व्यवस्था बिना योग्य कार्यक्रम के सम्भव नहीं है।"

इस पुरुषार्थी व्यक्ति का जीवन इस बात को स्पष्ट करता है कि मनुष्य स्वयं ही अपना सबसे बड़ा शिक्षक है। विशाल संसार के कडुवे-मीठे अनुभव और टक्करें एक सजीव पाठशाला है। इसमें टक्कर खाकर हम पूर्णता प्राप्त करते हैं। दूसरों के कहने से नही, बल्कि स्वयं ही संसार की प्रत्येक वस्तु का तत्त्व ग्रहण करने का प्रयत्न करो और अपनी योग्यता की सीमाएँ भी निर्धारित करो। उसमें दूसरों के कुछ भी कहने-सुनने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। जब अपनी शिक्षा अपने आप ही प्राप्त कर लोगे, जब संसार का अनुभव तुम्हारा ही होगा, दूसरों का जूठन न होगा, तब तुम्हारी शिक्षा पूर्ण होगी। तब तुम विद्वान और ज्ञानवान कहलाने के अधिकारी बन सकोगे।"

दूसरा पुरुषार्थी व्यापार क्षेत्र का व्यक्ति है। नाम अब्दुल भाई। उन्होंने एक छोटे पैमाने पर अचार, चटनी, मुरब्बा का व्यापार आरम्भ किया और अपने कारखाने को सफल करके दिखलाया। साधारण दुकानदारी, कपूर, शर्बत, आदि के धन्धे से बढ़ाकर वे सिरके का व्यापार करने लगे। नींबू, आम के अचार, गाजर का अचार, आम की चटनी, फलों के शर्बत, गुलाब जल, केवड़ा इत्यादि पदार्थ वे अपने कारखाने में बनाने लगे।

वे प्रायः कहा करते हैं कि व्यापार में ईमानदारी और सरल व्यवहार, उदार मन और मीठा बोलना आदि नैतिक गुणों को उन्होंने अपने व्यापार का मूल आधार बनाया। कभी किसी से उनका झगड़ा नहीं हुआ। जिस बात का उन्हें ज्ञान नहीं होता, वे सदा उसे सीखने को तैयार रहते हैं। उनका कहना है कि मनुष्य को अवसर पहचानने के लिए और उसका अधिक से अधिक उपयोग करने के लिए सदा तैयार रहना चाहिए। यदि हमारे अन्दर उपयुक्त अवसर पहचानने और उसका सदुपयोग करने का गुण हुआ, तो हम बहुत शीघ्र उन्नति कर सकते हैं।

तीसरे सज्जन भौर के सुप्रसिद्ध ठेकेदार श्रीयुत नाना साहब थोपटे हैं, जो निर्धनता से श्रीमन्त बने हैं। उन्हें निर्धनता से घोर युद्ध करना पड़ा। पाठशाला छोड़कर चुंगी की चौकी पर तीन रुपये मासिक पर नौकरी करनी पड़ी। इस दरिद्रता को जड़ से उखाड़ने का उन्होंने पक्का निश्चय किया। चौकी पर अपना दैनिक कार्य समाप्त कर वे वहाँ होकर जाने वाले माल के छकड़ों की खरीद और बिक्री का पता लगाते थे। वे कितने में नीलाम होते हैं, ठेका कितने में खरीदने से उन्हें घाटा नहीं उठाना पड़ेगा—आदि बातों पर वे बड़ी बारीकी से विचार करते थे। उनकी वाणी मीठी थी। वे किसी को झिड़कते या तिरस्कारपूर्वक नहीं बोलते थे। जिस कार्य को कर सकने का उनको पूरा निश्चय होता था, उसी का वचन देते थे। इस नियम का पालन करने से उनके वचन का बड़ा मूल्य हो गया था। उन्होंने ठेकेदारी शुरू की। उसमें उन्हें नुकसान भी उठाने पड़े। आरम्भ में ही उन्हें ऐसी ठोकर लगी कि कोई साधारण संकल्प का व्यक्ति होता तो बुझकर बैठ जाता, पर नाना साहब थोपटे ने दूसरा ठेका कर पहली हानि को पूरा किया। इस ठेके में सफल होने का सारा श्रेय वे अपनी बहिन द्रौपदी बाई चौहान को देते थे। ठेकेदारी उनकी महत्त्वाकांक्षा के लिए उपयुक्त क्षेत्र मिल गया। पैसा कम होने से पहले उन्होंने छोटे-छोटे ठेके लिए, फिर क्रमशः बड़े ठेके लिए। इस प्रकार ईमानदारी से उन्नति करते चले गए। सच्चाई से काम करने की सद्प्रवृत्ति से वे अपने अधिकारियों के प्रियपात्र बन गये। दुर्दम्य महत्त्वाकांक्षा, नवीन दृष्टि, अवसर के आते ही उससे लाभ उठाने की तत्परता—ये तीन सूत्र भी थोपटे के उत्कर्ष के रहस्य हैं।

बुरे स्वास्थ्य के विरुद्ध विद्रोह कर स्वास्थ्य और दीर्घ-जीवन पाने वाले पुरुषार्थियों में इटली के कार्नेरी उल्लेखनीय हैं। शरीर से अत्यन्त निर्बल होते हुए भी उन्होंने प्रबल इच्छाशक्ति के योग से आरोग्य प्राप्त किया। इच्छाशक्ति की मदद से हमें दीर्घ-जीवन मिल सकता है, इस बात का उनका जीवन एक प्रत्यक्ष उदाहरण है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उनका जन्म एक अमीर घर में हुआ था। खाने-पीने का कोई नियम न रहने, निद्रा और जागरण में अव्यवस्था, जीभ का स्वाद आदि के दुष्परिणामों से उनका शरीर जर्जर हो गया था। एक दिन एक प्राकृतिक चिकित्सक ने उन्हें सलाह दी—

''तुम्हारे शरीर की जो दुर्दशा हो रही है, वह तुम जानते ही हो। हमारे सब प्रयत्न शिथिल हो गए हैं। अब आशा का केवल एक ही तन्तु शेष रह गया है, वह है तुम्हारी इच्छाशक्ति। अब तक तो तुम अविचारपूर्वक जीवन व्यतीत करते रहे हो, उसे बिल्कुल बदल दो और अत्यन्त व्यवस्थित रूप और मिताचार से रहो। तभी तुम्हारे जीवित रहने की आशा हो सकती है।''

कार्नेरी के मन में नई आशा और उल्लास का भाव पैदा हुआ और उन्होंने सुव्यवस्थित प्राकृतिक जीवन व्यतीत करना प्रारम्भ किया। व्यायाम किया, उपवास रखे। फल यह हुआ कि उन्हें शारीरिक और मानसिक आरोग्य प्राप्त हुआ, जिसके बल पर वे सौ वर्ष तक जीवित रहे। वे जीवन भर मिताहार और मिताचार का महत्त्व तरुणों को समझाते रहे। कार्नेरी से उसकी दीर्घायु का मर्म पूछा गया तो उसने बताया, ''प्रकृति के नियमों का पालन कीजिए और उसी के नियमों पर चलिये। जितनी आवश्यकता हो, उतना ही खाओ और पिओ। खाने-पीने में और प्रत्येक आचार में आपको परमित होना चाहिए अर्थात् कम से कम खाना चाहिए। जीभ को वश में रखना चाहिए। आवश्यकता से अधिक खाना पाप है। इसी से सब रोग उत्पन्न होते हैं और हमारी शारीरिक और मानसिक अवनति होती है।''

ऊपर के उदाहरण हताश व्यक्तियों के लिए प्रेरक हैं। विशुद्ध स्वावलम्बन के उदाहरण हैं। उद्योग और पुरुषार्थ के बल पर आदमी कितनी उन्नति कर सकता है, कैसे आगे बढ़ सकता है ? इसका रहस्य वह स्वयं ही मालूम कर लेता है।

जिन व्यक्तियों ने स्वावलम्बन का सहारा लिया है, उन्होंने सदैव उन्नति की है। जो अपने पाँवों पर चलेगा, उसके पाँव-अवश्य मजबूत होंगे। जो मन उन्नति की अग्नि प्रज्ज्वलित रखेगा, उसे आगे बढ़ने की सतत प्रेरणा ही रहेगी।

मनोबल ही जीवन शक्ति है

इटली के एक प्रमुख शहर गिएरूपे में बारूद के एक कारखाने में फिनोज पी. वेग नामक फोरमैन काम करता था। इस कारखाने में बारूद के मिश्रण की धातुओं की छोटी परतों में छेद करने का काम होता था। फिनोज पी. वेग के साथ एक विचित्र दुर्घटना घटी। हुआ यह कि वह सुराख करने के एक बरमे के पास काम कर रहा था। बरमा करीब पौने चार फीट लम्बा और तेरह पौण्ड वजन का था। काम चल ही रहा था कि अचानक न जाने क्या गड़बड़ी आई, जो मशीन से एक भारी धमाके के साथ बरमा निकलकर उचटा और वेग के मस्तिष्क को बेधता हुए बाहर निकल गया। बरमा चेहरे के बायीं ओर वाले भाग से घुसा था और भीतरी हड्डियों को तोड़ता हुआ आँख के निचले भाग को छेदता हुए बाहर निकल गया। आस-पास काम कर रहे कर्मचारियों को लगा कि वेग के परखचे उड़ गये हैं।

वह झटके के साथ नीचे गिरा और ऐंठ गया। फिर भी आश्चर्य था कि उसमें जान बाकी थी। उसे कारखाने से करीब एक मील दूर स्थित अस्पताल में पहुँचाया गया। अस्पताल के प्रमुख चिकित्सकों ने उसका परीक्षण किया और मुख्य चिकित्साधिकारी इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि घायल के साथ कितना ही परिश्रम क्यों न किया जाये, उसे बचाया नहीं जा सकता। फिर भी चिकित्सकों ने अपना कर्त्तव्य निभाया और साधारण मरहम-पट्टी कर दी। आश्चर्य तो उस समय हुआ जब उसी दिन वेग की बेहोशी टूटी। डाक्टर बेहोशी टूटने की आशा करना तो अलग रहा, इस बात की प्रतीक्षा कर रहे थे के वेग की साँसें कितनी देर तक साथ देती हैं ?

उसका खून बहना बन्द नहीं हुआ था, फिर भी उसने दर्द को सहा और रात के दस बजे वहाँ उपस्थित लोगों से बातें करने लगा। इसके बाद तो डाक्टरों में भी वेग के जीवित बच जाने की आशा जगी। वह तेजी से अच्छा होने लगा और लगभग तीन माह तक अस्पताल में रहने के बाद पूरी तरह स्वस्थ होकर अस्पताल से घर आ गया। अस्पताल के अधिकारियों ने जो अन्तिम रिपोर्ट तैयार की, वह विश्व के मूर्धन्य चिकित्सकों के लिए आज भी अध्ययन और आश्चर्य की वस्तु बनी हुई है। वेग की नेत्र ज्योति तो चली गई थी, पर उसका बाकी मस्तिष्क पूरी तरह ठीक हो गया और वह अपना सामान्य जीवनक्रम ठीक तरह चलाने लगा। इतने भयानक मस्तिष्कीय आघात के बाद भी कोई व्यक्ति जीवित बच सकता है और न केवल जीवित बच सकता है, वरन् स्वस्थ, सामान्य जीवन व्यतीत कर सकता है, इस पर शरीरविज्ञानियों को सहसा विश्वास नहीं हो सकता। परन्तु वेग की टूटी हुई खोपड़ी के अस्थि खण्ड तथा उससे सम्बन्धित पदार्थ और कागजात हार्वर्ड मेडिकल कॉलेज बुकलिन के संग्रहालय में सुरक्षित रखे हैं, साथ ही वह बरमा भी रखा हुआ है, जो वेग की खोपड़ी को चीरता हुआ बाहर निकला था।

यह घटना इस बात की साक्षी है कि जीवन-मृत्यु से अधिक बलवान है। यहाँ जीवन का अर्थ जन्म और मृत्यु के बीच की अवधि से नहीं है, अपितु उस जीवटता से है, जो प्रतिकूल परिस्थितियों में भी मनुष्य को सक्षम बनाये रहती है। शरीर वैसे हाड़-माँस से बना दिखाई देता है। इसे मिट्टी का पुतला और क्षणभंगुर कहा जाता है, परन्तु इसके भीतर विद्यमान जीवटता को देखते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं तो कहना पड़ेगा कि उसकी संरचना अष्ट धातुओं से भी मजबूत तत्त्वों द्वारा मिलकर बनी हुई है। छोटी-मोटी, टूट-फूट, हारी-बीमारी तो रक्त के श्वेतकण तथा दूसरे संरक्षणकर्त्ता, शामक तत्त्व अनायास ही दूर करते रहते हैं, परन्तु भारी संकट आ उपस्थित होने पर भी यदि साहस न खोया जाये, तो उत्कट इच्छाशक्ति के सहारे उनका सामना सफलतापूर्वक किया जा सकता है।

निश्चित ही मृत्यु की विभीषिका और अनिवार्यता से इन्कार नहीं किया जा सकता, न ही विपत्ति का संकट हल्का करके आँका जा सकता है, परन्तु इतना होते हुए भी जिजीविषा की—जीवन आकांक्षा की सामर्थ्य सबसे बड़ी है और उसके सहारे संकटों को पार किया जा सकता है।

जीवन के लिए संकट प्रस्तुत करने वाले क्षण बहुत लोगों के सामने आते हैं। उनमें से आधे लोग तो भयभीत होकर हिम्मत हार बैठते हैं और उस कातर मनःस्थिति में ही बेमौत मारे जाते हैं। पेड़ के नीचे चीते को खड़ा देखकर बन्दर हक्का-बक्का हो जाता है और हड़बड़ी, घबड़ाहट में नीचे आ गिरता है। चीता उसे चुपचाप मुँह में दबाकर चल देता है। विपत्ति की घड़ी सामने आने पर अक्सर लोग ऐसी ही भयभीत स्थिति में फँस जाते हैं और बेमौत मरते हैं। इसके विपरीत यदि उस कठिन समय में उनने अपने मनोबल को स्थिर रखा होता तो बहुत सम्भव है कि वह विपत्ति बच जाती। इच्छाशक्ति की प्रचण्डता अंग-प्रत्यंग में ऐसी अद्भुत सुरक्षा-व्यवस्था उत्पन्न कर देती है, जिसके सहारे माटी का पुतला कही जाने वाली अपनी यही देह मृत्युञ्जय बन जाती है। मनस्वी और मनोबल सम्पन्न लोगों के ऐसे अगणित उदाहरण अपने चतुर्दिक बिखरे देखे जा सकते हैं।

शरीर की शक्ति, सामर्थ्य सीमित है यह ठीक है, पर शरीर से भी अधिक शक्तिशाली और सामर्थ्यवान है—मनोबल। यह मनोबल दुर्बल से दुर्बल काया को भी मृत्युञ्जयी बना देता है, बड़े से बड़े संकटों से पार करा देता है और इसका अभाव साधारण संकटों में भी परास्त कर देता है। स्वामी विवेकानन्द ने मनोबल की महत्ता बताते हुए कहा है, "मनोबल ही सुख सर्वस्व है। यही जीवन है और यही अमरता है तथा मनोदौर्बल्य ही रोग है, दुःख है और मृत्यु है।" मनोबल के द्वारा शरीर को अजेय वज्र के समान बनाया जा सकता है। यदि इस शक्ति का भली-भाँति विकास किया जाये तो साधारण से दीखने वाले मानवीय व्यक्तित्व में ही ऐसी विशेषताएँ उत्पन्न की जा सकती हैं, जो साधारणतया असम्भव मालूम पड़ती हैं। परन्तु जो लोग शरीर पर मन के नियन्त्रण का तथ्य जानते हैं, उन्हें यह समझना कठिन नहीं होना चाहिए कि इस शक्ति के बल पर देह के अवयव अपनी प्रकृति बदल सकते हैं और मन की इच्छानुसार ऐसी हलचलें भी कर सकते हैं, जो सामान्य प्रयत्नों के द्वारा असम्भव ही प्रतीत हों। साम्राज्ञी मेरी-लुइस के सम्बन्ध में प्रसिद्ध है कि वह अपनी इच्छानुसार अपने कानों को बिना हाथ से छुए किसी भी दिशा में मोड़ सकती थी और आगे-पीछे हिला सकती थी।

कहा जाता है कि नींद न आने पर आदमी पागल हो जाता है और अकाल मृत्यु हो जाती है किन्तु ऐसे भी उदाहरण हैं, जिनमें बिल्कुल न सोने वाले लोग सामान्य जीवन जीते रहे और अपना काम ठीक प्रकार चलाते रहे। पेरिस का प्रख्यात वकील जैक्विसल हरवेट ७२ वर्ष तक जीवित रहा। इस अवधि में वह ६८ वर्ष तक एक क्षण के लिए भी नहीं सोया। चार वर्ष की आयु में ही उसकी नींद खो गई थी। हुआ यह था कि फ्रांस के सम्राट सोलहवें लुई को जब सन् १७९३ में फाँसी दी गई, तो जैक्विसल भी अपनी माँ के साथ वह दृश्य देखने गया। शूली पर चढ़ाये जाने का दृश्य देखकर जेक्विसल के मन में ऐसी दहशत बैठी कि वह बुरी तरह डर गया और मूर्छित अवस्था में उसे अस्पताल पहुँचाया गया। वहाँ वह ठीक तो हो गया, पर उसकी नींद बिल्कुल गायब हो गई। वह इसके बाद एक क्षण के लिए भी नहीं सोया। परन्तु इसका उसके स्वास्थ्य पर कोई बुरा प्रभाव नहीं पड़ा।

कहा गया है कि मन की शक्ति का कोई वारापार नहीं है। कई बार तो ये शक्तियाँ अनायास ही जाग्रत हो जाती हैं, परन्तु ऐसा होता अपवाद रूप से ही है। उन्हें जाग्रत करने के अलग अभ्यास हैं, जिन्हें योगसाधना भी कहा जा सकता है।

यदि मनोबल का महत्त्व समझ लिया जाये और उसे अर्जित किया जा सके, संचित किया जा सके तो न केवल बड़े-बड़े विचलित कर देने वाले संकटों को आसानी से पार किया जा सकता है, वरन् चमत्कार कही जाने वाली सफलताएँ भी अर्जित की जा सकती हैं।

मनोबल : एक विभूति, एक प्रत्यक्ष वरदान

यह एक विडम्बना है कि अपना महत्त्व न समझ पाने से मनुष्य परावलम्बी, पराधीन बन जाता है और यथार्थता से वंचित रहकर भ्रम-जंजालों में भटकता देखा जाता है।

संसार में अनेकों परस्पर विरोधी प्रचलनों की भरमार है। उनमें से जिस किसी को हम स्वीकारते हैं, उसमें उन प्रतिपादनों की नहीं, हमारी चयन बुद्धि, वातावरण एवं पूर्वाग्रह के आधार पर बनी हुई अभिरुचि को ही श्रेय जाता है। अस्तु प्रधानता प्रतिपादन की नहीं, अपनी अभिरुचि या विचार क्षमता की ही रही। यदि उस वातावरण से अपना सम्बन्ध उतना घनिष्ट न होता तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वातावरण का प्रभाव हमारे मानस की दूसरी स्थिति भी बना सकता था। तब कदाचित् हम उस भिन्न प्रचलन के अनुयायी रहे होते, किन्तु देखा गया है कि हमारी मान्यताओं और अनुभूतियों में अन्तर आ जाने पर फिर वैसी स्थिति नहीं रहती और मित्रता घटकर उपेक्षा में और कभी-कभी शत्रुता में भी परिणत हो जाती है।

यह ठीक है कि साधारण स्तर के लोगों को वातावरण बनाता और ढालता है, पर यह कथन उन्हीं के लिए सही बैठता है, जिनकी मानसिक स्थिति दुर्बल होती है। मनस्वी लोग वातावरण से प्रभावित नहीं होते। उलटे वे अपने मनोबल से वातावरण को उलट देने में समर्थ होते हैं। कुसंग, सत्संग हर किसी को अपनी विशेषता से प्रभावित नहीं कर सकता। कई बार उत्कृष्ट प्रतिभाओं के सम्पर्क में आकर कुकर्मी भी सुधर जाते हैं और सज्जन बन जाते हैं। यह दो मनोबलों की लड़ाई है। जो प्रबल पड़ता है, वह दूसरे पक्ष को परास्त ही नहीं कर देता, अपने अनुकूल-अनुरूप भी बना लेता है। यहाँ भी व्यक्तित्व की वरिष्ठता ही स्वीकार करनी पड़ती है।

योग साधनाओं में हल्के-फुल्के प्रयोग हैं। न उनमें पहलवानों जैसी कड़ी कसरत करनी पड़ती है और न सरकस में काम करने वाले नटों जैसा कठिन अभ्यास करना पड़ता है। प्राणायाम में साँस लेने का स्वाभाविक क्रम यत्किंचित् ही बदलना पड़ता है। त्राटक में दृष्टि को उतना केन्द्रित करना पड़ता है, जितना अस्त्रों का निशाना लगाने वाले लोगों को करना पड़ता है। आसनों में हाथ-पैरों को यत्किंचित मोड़ना-मरोड़ना ही पड़ता है। यह क्रियाएँ अपने आप में-शारीरिक दृष्टि से कोई विशेष महत्त्व नहीं रखतीं, पर जब उनके साथ मनोयोग जुड़ जाता है और प्रतिफल के माहात्म्य को श्रद्धापूर्वक स्वीकार कर लिया जाता है, तब उन योगाभ्यासों का जादुई प्रतिफल दृष्टिगोचर होता है। इसमें क्रिया का जितना महत्त्व है, उसकी तुलना में बीसियों गुना महत्त्व मनोयोग का है। यदि वह न लगे और मात्र शरीर के अवयवों को हिलाते-डुलाते रहा जाय तो उसका वैसा प्रतिफल नहीं हो सकता जैसा कि होना चाहिए। किसान, मजदूर, लुहार, बढ़ई, शिल्पी, कारीगर दिन भर कठोर परिश्रम करते हैं और उनके हर अंग का संचालन होता है। श्वाँस भी गहरी लेते हैं, इस पर भी उनमें योगियों जैसी कोई विशेषता प्रकट नहीं होती।

देवताओं की कृपा से कई प्रकार के लाभ, वरदान मिलने की बात सोची जाती है और यह भी अनुमान लगाया जाता है कि उनके कुपित होने पर कोई हानि हो सकती है, किन्तु जो लोग उस प्रकार के देवताओं को नहीं मानते, अन्य धर्मावलम्बी या नास्तिक हैं, उनको लगता है कि अविश्वास की मनःस्थिति में कोई देवता लाभ या हानि नहीं पहुँचा सकते। यह मान्यता की ही महत्ता है, श्रद्धा का ही चमत्कार है। यह तथ्य संदेहास्पद ही है कि अमुक देवता ने कोई बनाव या बिगाड़ किया।

इष्टदेव की या गुरु की शरण में आने से उद्धार होने की बात कही जाती है, पर ऐसा होता तभी है जब मान्यता और भावना गहरी हो। उसमें कमी रहने पर वैसा कुछ लाभ मिल नहीं पाता, जैसी की कल्पना की गई थी। रबर की गेंद जितने जोर से जिस दिशा में फेंकी जाय वह अगली वस्तु से टकराकर उसी दिशा में उसी वेग से लौट आती है। यदि फेंकने की शक्ति दुर्बल हो या गेंद ठोस हो तो वैसा बन पड़ना सम्भव नहीं। श्रद्धा का महत्त्व ठीक ऐसा ही है। उसे जितने वेग से जिस दिशा में फेंका जाय, उसकी प्रतिक्रिया भी तदनुरूप ही होती है।

उत्कर्ष के लिए, त्राण के लिए दूसरों पर निर्भर रहने की बात में सबसे बड़ी हानि यह है कि व्यक्ति अपनी क्षमता और गरिमा को भूलता जाता है। अतएव वस्तुस्थिति की जानकारी से वह अनभिज्ञ ही बना रहता है। विज्ञजनों को यथार्थता से अवगत होना चाहिए। इस आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए गीताकार ने कहा है—"आत्मा का अपनी ही आत्मा से उद्धार करो। अपने आपको गिराओ मत। अपना आपा ही अपना मित्र है और स्वयं ही अपना शत्रु।" यह कथन जितना धर्मोपदेश की दृष्टि से सही है, उतना ही मनोविज्ञान की दृष्टि से भी।

परिस्थितियाँ एक सीमा तक ही मनुष्य के उत्थान-पतन में सहायक होती हैं। यदि वह उनके आगे सिर झुकाले और अपनी विवशता स्वीकार कर ले तो फिर हवा के झोंके के साथ उसे सूखे पत्ते की तरह जिधर-तिधर उड़ते रहना पड़ेगा। यदि वह परिस्थितियों के दबाव को अस्वीकार कर दे, तो उसे झुकाने या विवश करने वाला कोई भी नहीं हो सकता। इतिहास के पृष्ठों पर अंकित ऐसी अनेकों घटनाएँ विद्यमान हैं, जिसमें मनस्वी लोगों ने प्रतिकूलताओं को चुनौती देते हुए अपना रास्ता आप बनाया है और गई-बीती परिस्थितियों को तोड़ते-मरोड़ते हुए कहीं से कहीं पहुँचे हैं, जबकि उनके अन्यमनस्क साथी जहाँ के तहाँ उसी स्थिति में बने रहे।

कहा जाता है कि चिकित्सा से व्यक्ति रोगमुक्त होते हैं, पर यह बात उसी हालत में सत्य है जबकि रोगी का विश्वास चिकित्सक एवं चिकित्सा पद्धति पर बना रहे। यदि वह डगमगाने लगे तो उपचार का प्रभाव आधा रह जाता है। इसके विपरीत ऐसा भी देखा गया है कि साधुओं के अभिमंत्रित जल या भस्म को खाने, लगाने भर से लोग कठिन, असाध्य समझे जाने वाले रोगों से मुक्ति पा लेते हैं। चिकित्सा की सफलता में उन्हीं को श्रेय मिलता है, जो अपने रोगी पर अपने ज्ञान, अनुभव एवं औषधि के प्रभाव की धाक जमा लेते हैं। इसलिए चिकित्सा विज्ञान में आधा योगदान मनोविज्ञान का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहने की बात कही गई है। जो मनोविज्ञान से परिचित नहीं हैं, वह कदाचित ही सफल चिकित्सक हो सकता है।

साधना क्षेत्र में भी यही बात है। योगाभ्यास से सम्बन्धित क्रिया-कलापों के, विधि-विधानों के बहुत महत्त्व बताये गये हैं। उनकी सफलता इस बात पर निर्भर है कि साधक के मन ने उस महत्त्व को कितनी गहराई से अपनाया। यदि वह उन्हें मखौल मानता रहे और गरिमा स्वीकार न करे, तो कितनी ही देर तक किसी क्रिया-कलाप को करते रहा जाय, कोई असाधारण बात दीख न पड़ेगी। योगाभ्यासों में गुरु की आवश्यकता पर बहुत जोर दिया गया है। इसका मात्र यही कारण नहीं है कि वह विधि-विधान ठीक से बताता रहे, वरन् यह भी है कि शंका-समाधान करता रहे। यदि कहीं अश्रद्धा के बीजांकुर उगें तो उन्हें अपने व्यक्तिगत प्रभाव से सन्तुलित करता रहे।

आध्यात्मिक या भौतिक जीवन में अनेकानेक प्रसंग, अवसर ऐसे आते हैं, जिसमें प्रतिकूलता भी रहती है और अनुकूलता भी जुड़ी रहती है। यह मनुष्य के स्तर पर निर्भर है कि वह प्रतिकूलताओं से अपनी साहसिकता और सूझ-बूझ के सहारे जूझे और उन्हें सरल बनाने में सफलता प्राप्त करे। इसी प्रकार अनुकूल परिस्थितियों से लाभ उठाना और समय पर उपयुक्त कदम उठाना व्यक्ति के अपने कौशल पर निर्भर है। इसलिए मनोबल को प्रत्यक्ष वरदान माना गया है, जो उसे अर्जित कर लेते हैं, प्रगति उनके चरण चूमती है।

मनोबल की सामर्थ्य

साधनों के आधार पर सफलताएँ मिलती हैं। साधनों को ही बल भी कहते हैं। प्रत्यक्ष बलों में धनबल, बाहुबल, शस्त्रबल, बुद्धिबल आदि प्रमुख हैं। इन सबसे बढ़कर है—मनोबल। मनोबल का तात्पर्य शिक्षा की कल्पना, बहुज्ञता, अनुभवशीलता से नहीं वरन् दृढ़ निश्चय से है। जब यदि आदर्शों के निमित्त प्रयोग किया जाता है तो उसी को संकल्प बल भी कहते हैं। जिसकी संकल्प शक्ति जितनी बलवान है, उसे उतने ही स्तर का बलवान कहना चाहिए।

बहुत साधन होते हुए भी लोग साधारण से काम भी नहीं कर पाते। इनके विचार डगमगाते रहते हैं। जो काम हाथ में लिया है, वह उचित भी है या नहीं। अपने से बन पड़ेगा या नहीं। ऐसे विकल्प मन में उठते रहते हैं। कच्चा मन में एक को छोड़ दूसरा काम हाथ में लेते हैं। कुछ दिन बाद दूसरा भी हाथ से छूट जाता है और तीसरे को अपनाते हैं। इस तरह अनिश्चय की दशा में शक्ति का अपव्यय होता रहता है। दिशा निश्चित न होने पर कुछ दूर पूर्व को, कुछ दूर उत्तर-पश्चिम को चलने वाले दिन-भर घोर परिश्रम करते रहने पर भी थकान सिर पर ओढ़ते हैं। अच्छा यही है कि पहले ऊँच-नीच के हर पहलू पर विचार कर लिया जाय। बुद्धिपूर्वक जो निश्चय निकले उसे दृढ़तापूर्वक अपनाया जाय।

काम देखने को शरीर से किया जाता प्रतीत होता है, पर वास्तविकता यह है कि वह मन में होता है। मनोयोग लगा देने से योजना के सब पक्ष सामने आते हैं। अन्यथा बाल-कल्पनाएँ मन में उठती रहतीं और पानी के बबूले की तरह अस्त-व्यस्त होती रहती हैं। बच्चे सारे दिन उछल-कूद करते रहते हैं। इनमें से हर एक क्रिया के पीछे कुछ उद्देश्य होता है, पर ये उद्देश्य ठहरने नहीं पाते। एक के बाद दूसरी इच्छा सामने आ जाती है और पिछली को छोड़कर अगली में हाथ डालते हैं। इस प्रकार दिन भर में ढेरों मनोरथ सामने आते हैं और वे सभी आधे-अधूरे रहकर अस्त-व्यस्त हो जाते हैं। इसी को बाल-बुद्धि कहते हैं। इसी प्रकार की रीति-नीति कितने ही बड़ी आयु के व्यक्ति भी अपनाते देखे जाते हैं। फलतः उनमें से एक भी पूरा नहीं हो पाता।

काम को पूरा करने के लिए आवश्यक है कि योजना सर्वांगपूर्ण बने। उसके लाभ-हानि पर सांगोपांग विचार किया जाय। साधन जुटाने के लिए जो करना पड़ेगा, उसका मानचित्र मस्तिष्क में रहना चाहिए। जो कार्य वर्तमान साधनों के सहारे किया सकना सम्भव है, उसमें हाथ डाला जाय। भविष्य में जितने साधन बढ़ते जायँ उतने काम बढ़ाते चला जाय। साधन कम पड़ें तो काम की रूप-रेखा में काँट-छाँटकर ली जाय। यह सब तभी बन पड़ता है जब प्रस्तुत योजना पर समग्र मनोयोग एकत्रित किया जाय। अधूरे चिन्तन से न पूरी रूप-रेखा समझ में आती है और न उसका क्रम बनाने का तारतम्य ठीक से बनता है। दिलचस्पी जितनी जिस काम में रहेगी, वह कार्य ठीक तरह बन पड़ेगा। साधनों का नियोजन भी तभी होता है, जब पूरा मन उसमें लग पा रहा है अन्यथा उपयुक्त साधन होते हुए भी उनका उपयोग ठीक तरह नहीं हो पाता। आधे-अधूरे मन से किये हुए काम सदा अधूरे रहे हैं।

मनोबल का एक अर्थ हिम्मत है। जिसमें दिलचस्पी भी शामिल है। किसी काम को रुचिपूर्वक किया जाय तो उसका प्रतिफल दूसरा होगा और बेगार भुगतने की तरह निबटाया जाय तो उसकी उपलब्धि बिल्कुल दूसरी होगी। रुचिपूर्वक बया घोंसला बनाती है तो उसकी सुन्दरता और मजबूती देखते ही बनती है। मंदबुद्धि कबूतर आड़ी-तिरछी लकड़ियाँ डाल देता है, उसका परिणाम ऐसे घोंसले के रूप में सामने आता है, जो जरा-सा हवा का झोंका भी बरदास्त नहीं कर सकता। नौकरों द्वारा कराये गये काम में और मालिक के द्वारा, अपने हाथों किये गये काम में जमीन-आसमान जैसा अन्तर होता है। यही कारण है कि मजूरों द्वारा कराई गई लम्बी-चौड़ी काश्त में भी कुछ लाभ नहीं होता वरन् उल्टा घाटा जाता है। इसके विपरीत जिस खेती को घर मालिक मिल-जुलकर करते हैं। वह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सोना उगलती है। सेना का इतिहास इसी तथ्य से भरा पड़ा है जिसके सैनिक भले ही थोड़े रहे हैं पर जो हार-जीत को निजी प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर लड़ते हैं, वे कमाल दिखाते हैं। सफलता उनके चरण चूमती है, किन्तु जो नौकर की तरह जान बचाते हुए लड़ते हैं, उनकी संख्या बहुत होते हुए भी, साधन बढ़िया होते हुए भी हारते हैं। मनोबल ऊँचा बना रहे तो पीछे हटती हुई सेना भी पुनः आक्रमण करके अपने खोये हुए इलाके पुनः प्राप्त कर लेती है। इसके अभाव में वेखबरी से ग्रसित सेनापति अपने जीते हुए इलाके भी हाथ से गँवा बैठते हैं।

संसार में महापुरुषों का अपना विशेष इतिहास है। कोलम्बस, नैपोलियन आदि के पराक्रम ऐसे हैं कि जिन्हें पढ़-सुनकर दाँतों तले उँगली दबानी पड़ती है। इनकी शारीरिक, मानसिक बनावट में कोई खास विशेषता नहीं थी। वे दूसरे लोगों जैसे ही थे पर बढ़े-चढ़े मनोबल के सहारे बड़ी योजनाएँ बनाने और उसे सफल बनाने में जो पराक्रम दिखाया, उसके पीछे उनका बढ़ा हुआ मनोबल ही जादू-चमत्कार दिखाता रहा है।

कितने ही महान आन्दोलन संसार में चले और व्यापक बने हैं। इनके मूल में एक दो व्यक्तियों का ही पराक्रम काम करता रहा है। जो अपनी उड़ाई आँधी के साथ अनेकों को आसमान तक उठा ले गये, वे न तो महाबली योद्धा थे और न साधन सम्पन्न करोड़पति। गाँधी ने जो आँधी चलाई उसके साथ लाखों पत्ते और तिनके जैसे हस्ती वाले गगनचुम्बी भूमिकाएँ निभाने लगे। ऐसे आन्दोलन समय-समय पर अपने देश और विदेशों में उठते रहे और व्यापक बनते रहे हैं। इनके मूल में एक दो मनस्वी लोगों के संकल्प और प्रयत्न ही काम करते रहे हैं। इसीलिए संसार के मनुष्यों में सबसे बड़ा बल मनोबल ही माना गया है। संकल्प और निश्चय तो कितने ही व्यक्ति करते हैं, पर उन पर टिके रहना और अन्त तक निर्वाह करना हर किसी का काम नहीं। विरोध, अवरोध सामने आने पर कितने हिम्मत हार बैठते हैं और किसी बहाने पीछे लौट पड़ते हैं पर जो हर परिस्थिति से लोहा लेते हुए अपने पैरों अपना रास्ता बनाने और अपने हाथों अपनी नाव खेकर उस पार तक पहुँचाते हैं, ऐसे मनस्वी विरले ही होते हैं। मनोबल ऐसे साहस का नाम है, जो समझ-सोचकर कदम उठाते और उसे प्राणपण से पूरा करते हैं।

चाहे व्यक्तिगत जीवन हो, चाहे सामाजिक, सफलता के लिए मनुष्य का मनस्वी होना स्वाभाविक है। पैसा से पैसा कमाने की विद्या तो वणिकबुद्धि को भी आती है। अपराधियों जैसी हिम्मत तो चोर-उचक्कों में भी होती है। आवेश में आकर लड़-झगड़ बैठना तो क्षुद्र स्तर के व्यक्ति भी कर सकते हैं किन्तु जिसमें अपना कोई व्यक्तिगत लगाव न होता हो, मात्र सिद्धान्तों का परिपोषण अथवा सार्वजनिक हित साधन ही बन पड़ता हो ऐसे कामों में हाथ डालना-उनके मार्ग में आने वाले अवरोधों से टकराना, बिगड़ती हुई परिस्थितियों में धैर्य न खोने और साथियों का उत्साह ढीला न पड़ने देना हर किसी का काम नहीं है। ऐसे लोगों में एक ही विशेषता पाई जाती है, उसका नाम है—मनोबल।

मनोबल किसी-किसी में जन्मजात भी होता है। पर यह आवश्यक नहीं। उसे अभ्यास से बढ़ाया जा सकता है। छोटे कामों में हाथ डालना और उन्हें पूरा करके ही चैन लेना, यह मनोबल बढ़ाने का तरीका है। एक के बाद दूसरा काम हाथ में लेने और उनकी कठिनाइयों से निपटना, यही है वह मार्ग, जिस पर चलते हुए मनोबल अर्जित किया जा सकता है। यह विभूति जिसके हाथ लग गई समझना चाहिए कि महामानव बनने का सूत्र उसके हाथ लग गया।

मनोबल द्वारा आतंक का शमन

सत्साहस जिसे आत्मबल कहते हैं, सामने की कठिन परिस्थितियों को सरल कर सकता है, कठोरों को नरम बना सकता है और आक्रमण की क्षमता को कुंठित कर सकता है।

प्राचीनकाल की ऐसी कितनी ही घटनाएँ हैं। बुद्ध ने दुर्दान्त अंगुलिमाल को पानी-पानी कर दिया था। शंकराचार्य, ज्ञानेश्वर, नारद आदि के चरित्रों में ऐसी घटनाओं का वर्णन है, जिनमें उनके प्राणघातक शत्रु भी उनके समक्ष नतमस्तक हो गये थे और विरोध छोड़कर सहयोगी, आज्ञाकारी के रूप में परिवर्तित हुए थे।

चेतना क्षेत्र की इस महती शक्ति का कभी भी कोई भी प्रयोग कर सकता है और उसके चमत्कारी प्रतिफल हाथों-हाथ देख सकता है।

सर्प का एक नाम विषधर है। विषैले जन्तुओं में वे ही सबसे अग्रणी होते हैं। यों बिच्छू भी कम जहरीला नहीं, उसके दंश की जलन एवं पीड़ा असह्य होती है। जबकि साँप के काटने पर अफीम पीने जैसा नशा ही आता है और पीड़ा नहीं होती। फिर भी सर्प के काटने से जितने मरते हैं, उनकी तुलना में बिच्छू दंश से कम ही मरते हैं। इसके बाद ही अन्यान्य विषैले जन्तुओं की गणना होती है।

यों सभी सर्प तो विषैले नहीं होते। उनमें से बहुत से मात्र आकृति की दृष्टि से ही डराबने होते हैं। जहर उनमें नाम मात्र का होता है। फलतः काटने पर मरने का खतरा नहीं रहता। विषैले सर्पों की कुछ जातियाँ प्रसिद्ध हैं। इनमें से कुछ तो ऐसी हैं कि काटना तो दूर उनकी फुँसकार भर प्राण हरण कर सकती है। विषधर जातियों में भारत में प्रायः १७१ जातियाँ प्रख्यात हैं। इनमें कोबेरा,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बाइपर करैल, रसैल, घोड़ा पछाड़, घामन, तक्षक आदि बहुत प्रसिद्ध हैं।

आमतौर से सर्पों से सभी डरते हैं और उन्हें काल रज्जु मानते हैं, पर अब प्रयोग-परीक्षण में यह सिद्ध हुआ है कि उन पर भी भावना का प्रभाव पड़ता है और यदि उन्हें डराया, छेड़ा जाय और स्वयं भयभीत न हुआ जाय, तो विषैले सर्प भी नरम पड़ जाते हैं और बिना हानि पहुँचाये मनुष्य के साथ रहने के लिए तैयार हो जाते हैं।

इस अविश्वस्त तथ्य को विश्वस्त सिद्ध करने के लिए दक्षिण भारत में पिछले दिनों ऐसे कई प्रदर्शन हुए हैं, जिनमें कुछ साहसी लोगों ने लम्बे समय तक विषधर जाति के सर्पों के साथ निरन्तर रहने का कीर्तिमान स्थापित किया है। इनके निवास ग्रह पारदर्शीकाँच के बनाये गये हैं। भीतर हवा, रोशनी पहुँच सके और रहने वाले को शौच, स्नान, भोजन, शयन आदि की सुविधा रह सके, ऐसे कक्ष बनाये गये। ताकि बाहर के लोग भीतर की गतिविधियों को भली प्रकार देख सकें।

ऐसे प्रदर्शनों का कीर्तिमान स्थापित करने वालों को सर्पों के विषधर होने की बात सिद्ध करनी पड़ती है, साथ ही यदि मृत्यु हो जाय तो उसकी लिखित जिम्मेदारी भी अपनी घोषित करनी पड़ती है।

ऐसे सर्प-सान्निध्य प्रदर्शन की एक घटना 'गिनीज बुक ऑफ रिकार्ड्स' में भी अंकित है। सन् १९७९ में एक अठारह वर्षीय अफ्रीकी लड़की लेइथवान ड्रेनवर्ग ने ६५ विषैले सर्पों के साथ ६५ दिन रहने का कीर्तिमान स्थापित किया था। जिसे पिछले दिनों एक दक्षिण भारत के युवक ने तोड़ा व अपना नाम १९८२ की रिकार्ड बुक में शामिल करवाया।

इस प्रकार के प्रदर्शन गत दो वर्षों में भारत में बहुत हुए हैं। पूना में नीलम कुमार खरे ७० साँपों के साथ ७० घण्टे तक रहे। इसके बाद इन प्रदर्शनों की होड़ लग गई। केरल के एक बिजली कर्मचारी टी. बेला युधन ने ७५ दिन तक ७५ सर्पों के साथ समय बिताया। यह आयोजन बड़ा था। इसे देखने बहुत लोग आये। ख्याति मिली और दर्शकों पर एक रुपया टिकट लगा देने से आजीविका भी अच्छी हुई। तमिलनायडू शिवाकाशी की वेत्रिवन्दन ने १६७ साँपों के साथ रहकर दिखाया। भेलापुरम की एक महिला फातिमा बीबी भी इस प्रदर्शन में अपना स्थान बना गई। वे गाड़ी में एक बच्चा भी साथ लेकर काँच के कमरे में साँपों के साथ रहीं।

मदुराई के टी. पी. हरि ने अपने कक्ष में १०१ साँप रखे। जिनमें ६७ कोबरा, १५ बाइपर, १३ करैत और ६ रसैल बिरादरी के थे। एक साँप के काट लेने पर उन्हें अस्पताल भर्ती होना पड़ा और प्रदर्शन बीच में ही छूट गया। वे बच गए पर अभी भी बड़ा संकल्प लेने को कटिबद्ध हैं। कोयम्बटूर में एन. पार्थ सारथी अपना प्रदर्शन १०० दिन तक करने वाले थे। उनके साथ १५० साँप थे। उनने सर्पों के अतिरिक्त काले बिच्छुओं का एक झुण्ड रखा। पर यह प्रदर्शन ३४ दिन में ही बन्द करना पड़ा।

अन्तिम सफल प्रदर्शन कोच्चि का सत्ताईस वर्षीय डाक्टर टायलाम्बी का था। उनने १२७ दिन १५२ साँपों के साथ बिताये। १२ अक्टूबर, १९८० से लेकर १५ फरवरी, १९८१ तक यह प्रदर्शन चला। इससे आगे की चुनौती और किसी ने नहीं दी तो उसे विश्व रिकार्ड की गिनीज बुक में अंकित करा दिया गया है।

डाक्टर नाम्बी का कथन है कि साँप जहरीला तो अवश्य होता है, पर उसे निर्भयता, निश्चिन्तता और स्नेह-सौजन्य की अनुभूति कराई जा सके तो वह सर्प हानिरहित जन्तु है। यह अकारण हमला नहीं करता। डराने और छेड़ने पर ही उसका क्रोध उमड़ता है। यदि उसे दुलार-सहकार की अनुभूति कराई जा सके, तो वह मनुष्यों से दूर नहीं भागता वरन् उनके साथ रहना पसन्द करता है।

विषैले सर्पों के साथ रहकर खतरे भरा जीवन जीकर दिखाने के पीछे प्रदर्शन वृत्ति काम करती है, यह कहना ठीक नहीं। यह तो अन्तः की एक प्रसुप्त सामर्थ्य की नगण्य-सी अभिव्यक्ति भर है। आत्मबल हर किसी की अमूल्य सम्पदा है। शरीर समर्थ हो, भुजाएँ बलशाली हों पर यदि अन्दर से उसका सुनियोजन करने वाली सामर्थ्य न उभर पाये, तो वह जीवन व्यर्थ है। ऐसा शरीर तो मात्र अपना भार ढोता रहता है। शरीर भले ही बलवान न हो, मन में यदि अनीति से जूझने की, खतरों से खेलने की, आत्म-रक्षा हेतु लड़-भिड़ने की सामर्थ्य है, तो ऐसा व्यक्ति कई गुने अधिक शक्तिशाली व्यक्तियों को भी प्रचण्ड आत्म-बल के सहारे परास्त कर देता है।

आत्मबल सम्पन्न मनुष्य किसी से भी नहीं डरता। सर्प से भी नहीं, सिंह से भी नहीं। शिवाजी सिंहनी का दूध दुहकर लाए थे और बालक भरत सिंह-शावकों के साथ खेलता था। निर्भयतायुक्त आत्मबल के ऐसे चमत्कार कहीं भी देखे जा सकते हैं।

मनोबल से पदार्थों का स्थानान्तरण

महाभारत युद्ध का बारहवाँ दिन था। कौरव सेना के सेनाध्यक्ष द्रोणाचार्य ने उस दिन चक्रव्यूह की रचना करके यह निश्चय किया था कि इसके द्वारा वे पाण्डवों का संहार कर डालेंगे क्योंकि उनमें से कोई अर्जुन के अतिरिक्त चक्रव्यूह को तोड़ने की विधि नहीं जानता और अर्जुन को हम चालाकी से युद्ध क्षेत्र से दूर हटा देंगे। यह चाल किसी हद तक सफल हो गई और जब राजा युधिष्ठिर को इसका रहस्य मालूम हुआ तो वे घबरा गये। इस परिस्थिति में अर्जुन-पुत्र अभिमन्यु आगे बढ़ा और कहने लगा कि घबराने का कोई काम नहीं, मैं निश्चय ही चक्रव्यूह को भंग कर दूँगा—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

द्रोणस्य दृढ़मत्युग्रमनीकप्रवरं युधि।
पितृणां जयमाकांक्षात्रवगाहेऽविलम्बितम्।।
नाहं पार्थे न जातः स्यां न च जातः सुभद्रया।
यदि मे संयुगे कश्चिज्जीवितो नाद्यमुच्यते।।

अर्थात्—"हे महाराज ! मैं अपने पितृवर्ग की विजय अभिलाषा से युद्ध-स्थल में द्रोणाचार्य की अत्यन्त भयंकर, सुदृढ़ एवं श्रेष्ठ सेना में शीघ्र ही प्रवेश करता हूँ। यदि आज मेरे साथ युद्ध करके कोई भी वीर बच जाय, तो मैं अर्जुन का पुत्र नहीं और सुभद्रा की कोख से मेरा जन्म नहीं।"

इसके पश्चात् अभिमन्यु ने शत्रु सेना में घुसकर जो वीरता दिखाई और अकेले ही बड़े-बड़े महारथियों को भगा दिया, उसकी कथा बहुत विख्यात है और उस वीर बालक के अद्भुत शौर्य की प्रशंसा में सैकड़ों पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं। पर चक्रव्यूह वेधन करके फिर लौटने की विधि की जानकारी न होने से अन्त में उस अकेले को कई महारथियों ने मिलकर घेर लिया और अन्यायपूर्वक आक्रमण करके मार डाला। जब यह संशप्तकों को हराकर लौटने पर अर्जुन को ज्ञात हुआ, तो उसने इस घटना के मुख्य जिम्मेदार जयद्रथ को दूसरे ही दिन संध्याकाल तक मार डालने की शपथ खाई और प्रण किया कि "अगर मैं उसे कल सूर्यास्त से पूर्व न मार डालूँ, तो स्वयं जलकर मर जाऊँगा।"

दूसरे दिन युद्ध में अर्जुन ने भयंकर अस्त्र-शस्त्रों से युद्ध किया, उसकी कथा यहाँ वर्णन नहीं की जा सकती। पर फिर भी कौरवों ने अपनी पूरी शक्ति केन्द्रित करके जयद्रथ की रक्षा का प्रयत्न किया। जिससे अति भयंकर युद्ध होते-होते सूर्यास्त का समय निकट आ पहुँचा। यह देखकर भगवान कृष्ण को चिन्ता हुई और उन्होंने सोचा कि इस तरह लड़कर जयद्रथ नहीं मारा जा सकेगा। उन्होंने इस सम्बन्ध में कहा—

एतान्निर्जित्य रणे षड् पुरुषर्षभ।
न शक्या सैन्धवो हन्तुं यतो निर्व्याजमर्जुन।।

"हे नर-श्रेष्ठ ! अर्जुन ! रणभूमि में इन छः महारथियों को परास्त किये बिना सिन्धुराज को केवल माया द्वारा ही मारा जा सकता है।"

योगमन्त्र विधास्याम सूर्यस्यावरणं प्रति।
अस्तंगत इति व्यक्तं ग्रहीत्येकः स सिन्धुराज।।

"अतः मैं सूर्यदेव को ढकने के लिये कोई योगिक क्रिया करता हूँ, जिससे अकेला सिन्धुराज (जयद्रथ) ही उसे अस्त होता हुआ देख सके।"

हर्षेण जीविताकांक्षी विनार्थी तव प्रभो।
न गोप्स्यति दुराचारः स आत्मानं कथंचन।।

"तब वह दुष्टात्मा अपने जीवित रहने और तुम्हारे विनाश की आशा से प्रसन्न होकर अवश्य ही तुम्हारे सामने निकल आयेगा।"

तत्र छिद्रे प्रहर्तव्यं त्वयास्य कुरुसत्तम।
व्ययेक्षर नैव कर्तव्य गतोऽस्तमिति भास्करः।।

"हे कुरुश्रेष्ठ ! ऐसा अवसर आने पर तुम तुरन्त उसके ऊपर प्रहार करना। इस बात का भ्रम मत करना कि सूर्य वास्तव में अस्त हो गया है।"

अन्त में ऐसा ही हुआ और अन्यायाचरण करने वाला जयद्रथ अर्जुन के बाणों से नष्ट होकर भूमिशायी हो गया। इस कथा में भगवान कृष्ण द्वारा समय से पूर्व सूर्य को अस्त दिखला देने और उसे फिर प्रकट कर देने की जो घटना वर्णन की गई है, आधुनिक युग के अनेक शिक्षित व्यक्ति उस पर अविश्वास करते हैं। उनका कहना है कि ऐसा कार्य वास्तविक जगत में हो सकना सम्भव नहीं, यह कवि की कल्पना मात्र है। यद्यपि काव्य-ग्रन्थों में कल्पनाप्रसूत घटनाओं का मेल कोई असम्भव बात नहीं है और पौराणिक कथाओं के लिये पूरे ऐतिहासिक अथवा वैज्ञानिक प्रमाण देना भी आवश्यक नहीं, क्योंकि उनका मुख्य उद्देश्य सामान्य जनता को धर्मोपदेश, धर्माचरण की प्रेरणा देनी होती है।

अब अमरीका के एक मनोविज्ञान-शास्त्री डॉ. राल्फ एलैग्जैण्डर ने इच्छा-शक्ति को जाग्रत करके बादलों को इच्छानुसार हटाने और पैदा कर देने का प्रयोग किया है। वे बहुत वर्षों से मन को एकाग्र कर उसकी शक्ति से बादलों को प्रभावित करने का प्रयोग कर रहे थे। सन् १९५१ में उन्होंने मैक्सिको सिटी में १२ मिनिट के भीतर आकाश में कुछ बरसाती बादल जमाकर दिये। उस अवसर पर कई स्थानों के वैज्ञानिक और अन्य विद्वान वहाँ इकट्ठे थे। पर डा. एलैग्जैण्डर की शक्ति के सम्बन्ध में उनमें मतभेद बना रहा। तो भी सबने यह स्वीकार किया कि जब आकाश में एक भी बादल न था, तब दस-बारह मिनिट में बादल पैदा हो जाना और थोड़ी बूँदा-बाँदी भी हो जाना आश्चर्य की बात अवश्य है।

इसलिये डा. एलैग्जैण्डर ने फिर ऐसा प्रयोग करने का निश्चय किया, जिसमें किसी प्रकार का सन्देह न रहे। उन्होंने कहा कि "वे आकाश में मौजूद बादलों में से जिसको दर्शक कहेंगे, उसी को अपनी इच्छा-शक्ति से हटाकर दिखा देंगे।" इसके लिए ओण्टैरियो ओरीलियो नामक स्थान में १२ दिसम्बर, १९५४ को एक प्रदर्शन किया गया। उसमें लगभग ५० वैज्ञानिक, पत्रकार तथा नगर के बड़े अधिकारी इस चमत्कार को देखने के लिए इकट्ठे हुये। नगर का मेयर (नगर-पालिकाध्यक्ष) भी विशेष रूप से बुलाया गया, जिससे इस प्रयोग की सफलता में किसी को सन्देह न हो। यह भी व्यवस्था की गई कि जब बादलों को गायब किया जाय, तो कई बहुत तेज कैमरे उनका चित्र उतारते रहें। इसकी आवश्यकता इसलिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पड़ी कि कुछ लोगों का ख्याल था कि डा. एलैग्जैण्डर दर्शकों पर 'सामूहिक हिप्नोटिज्म' का प्रयोग करके ऐसा दृश्य दिखा देते हैं, वास्तव में बादल हटता नहीं। इससे मनुष्य का मन भ्रम में पड़ सकता है, पर तब आटोमेटिक कैमरा उस दृश्य का चित्र उतार लेगा, तो सन्देह की गुंजाइश ही नहीं रहेगी। कैमरे के चित्र में भी वही बात आयेगी, जो उसके सामने होगी। आगे की घटना के विषय में एक स्थानीय समाचार-पत्र 'दी डेली पैकेट एण्ड टाइम्स' ने जो विवरण प्रकाशित किया वह इस प्रकार है—

"जब सब लोग इकट्ठे हो गये, तो डा. एलैग्जैण्डर ने उनसे कहा कि वे स्वयं एक बादल चुन लें, जिसको गायब कराना चाहते हों। क्षितिज के पास बहुत से बादल थे। उनके बीच-बीच में आसमान भी झलक रहा था। उनमें बादलों की एक पतली-सी पट्टी काफी घनी और अपनी जगह पर स्थिर थी। उसी को प्रयोग का लक्ष्य बनाया गया। कैमरे ने उसकी कई तस्वीरें उतार लीं।

"डॉ. एलैग्जैण्डर ने थोड़ी देर प्राणायाम किया, भौहें सिकोड़ी (त्राटक की क्रिया की) और टकटकी लगा कर बादलों की उसी पट्टी की ओर देखने लगे। अकस्मात् उन बादलों में एक विचित्र परिवर्तन दिखाई पड़ने लगा। बादलों की वह पट्टी चौड़ी होने लगी और फिर धीरे-धीरे पतली होने लगी। कैमरे चालू थे और हर सैकण्ड में एक तस्वीर उतारे जा रहे थे। मिनट पर मिनट बीतते गये, पट्टी और पतली पड़ने लगी, उसका घनत्व भी कम होने लगा। धीरे-धीरे ऐसा लगने लगा मानो कोई रूई को धुन-धुनकर अलग कर रहा है। आठ मिनट के भीतर सब लोगों ने आश्चर्य से देखा कि वह पट्टी आसमान से बिल्कुल गायब हो गई, जबकि आस-पास के बादल जहाँ के तहाँ स्थिर रहे।"

"लोगों की आँखें आश्चर्य से फटी जा रही थीं। पर डॉ. एलैग्जैण्डर स्वयं अभी संतुष्ट नहीं थे। हो सकता है, कुछ लोग यह समझें कि यह सिर्फ दैवयोग की बात है। बादल तो बनते-बिगड़ते ही रहते हैं। उन्होंने लोगों से फिर किसी दूसरे बादल का चुनाव करने को कहा और फिर कैमरे उस नये बादल पर केन्द्रित कर दिये गये। उस दिन तीन बार यही प्रयोग हुआ और तीनों बार डाक्टर एलैग्जैण्डर ने सफलतापूर्वक बादलों को गायब कर दिया। जब कैमरे की फिल्में साफ की गई और फोटो निकाले गये, तो देखा कि हर बार बादलों का गायब होना उनमें पूरी तरह उतर आया है। तब वहाँ के प्रमुख अखबार ने इस समाचार को 'क्लाउज डेस्ट्रायड बाई डाक्टर' (बादल डाक्टर द्वारा नष्ट किये गये) को बहुत बड़ा हैडिंग देकर प्रकाशित किया।

अमरीका में इस विद्या को 'साइकोकिनासिस' अथवा पी. के. कहते हैं और इसका अभ्यास करने वालों का दावा है कि कुछ समय पश्चात् वे इसके द्वारा बादलों को ही नहीं अन्य अनेक पदार्थों को भी इधर-उधर कर सकेंगे।

जिस विद्या को अमरीका वाले अब सीखना आरम्भ कर रहे हैं, वह पूर्वी देशों में हजारों वर्षों से उपयोग में लाई जा रही है। आजकल भी मलाया के ध्यान-योगी 'बमोह' इसी प्रकार बादलों को हटाकर मेह बरसना रोक सकते हैं। उनकी यह शक्ति इतनी सुनिश्चित मानी जाती है कि आधुनिक विचारों के व्यक्ति भी आवश्यकता पड़ने पर उनकी सहायता लेते हैं। अभी एक क्रिकेट मैच के समय 'बमोह' द्वारा प्रयोग करने के फलस्वरूप मैच कई दिन तक निर्विघ्न चलता रहा, जबकि उसके आस-पास सर्वत्र मूसलाधार वर्षा होती रही।

वास्तव में ये क्रियाएँ योग की साधारण शक्तियों से सम्बन्धित हैं। 'योग-दर्शन' में कहा गया है—

स्थूलस्वरूपसूक्ष्मान्वयार्थवत्त्व समादसय भूतजयः।

अर्थात्—"पाँचों भूतों के स्थल-स्वरूप, सूक्ष्म, अन्वय, अर्थतत्त्व में संयम करने से भूतों पर जय प्राप्त होती है। अर्थात् उस अवस्था में सभी भूततत्त्व योगी की इच्छानुसार चलते हैं।"

बादलों का हटाना तो प्राणायाम् को पूरी तरह सिद्ध कर लेने पर ही सम्भव हो जाता है। ऐसी स्थिति में यदि महायोगी भगवान कृष्ण ने अवसर आने पर दस-पाँच मिनट के लिये सूर्य के सम्मुख कृत्रिम (मायामय) बादल उत्पन्न करके उसके अस्त हो जाने का भ्रम उत्पन्न कर दिया हो, तो इसमें कोई असम्भव बात नहीं। पर भारतीय प्रणाली की मुख्य विशेषता यही है कि उसका लक्ष्य आध्यात्मिक रहा है। ऐसी चमत्कारी शक्तियों की प्राप्ति होने पर भी साधकों के लिए यह स्पष्ट आदेश दे दिया जाता है कि उनका उपयोग स्वार्थ के लिये न करके परमार्थ सम्बन्धी कार्यों के लिये ही किया जाय।

मनोबल अनेकानेक सफलताओं की कुंजी

शरीरबल को बढ़ाने के लिए आहार, व्यायाम एवं विशेष उपचारों का सहारा लिया जाता है। मनोबल की इससे भी अधिक आवश्यकता समझी जानी चाहिए। मन का शरीर पर पूरी तरह नियन्त्रण है। विज्ञान की नवीनतम शोधों ने उन ऋषि-निर्धारणों की पुष्टि की है। संकल्पबल से स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरों का उत्कर्ष होता है। यदि मनोबल गिरे या विकृत दिशा में चले, तो उसका परिणाम पतन और पराभव के रूप में सामने आयेगा। दुर्बलता और रुग्णता चढ़ दौड़ेगी। हारा हुआ मन जीवन में निराशा भर देता है और तरह-तरह के भय, उद्वेग, संदेह की स्थिति बनाकर मनुष्य को चिन्ताओं और आशंकाओं से ग्रसित बना देता है। यह कथन आंशिक रूप से सही है कि शरीर बीमार होने पर मनोबल भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गिरता है, किन्तु यह निष्कर्ष शत-प्रतिशत सही है कि मनोबल गिरेगा, तो शरीर-विचित्र रोगों से घिरने लगेगा। प्रत्यक्षतः कोई रोग चिकित्सकों की समझ में न आये, तो भी स्थिति ऐसी ही बनी रहेगी, मानो रुग्णता ने काया को जराजीर्ण-जर्जर बना दिया है और उसकी क्रिया शक्ति को बुरी तरह खींच लिया है।

इसके विपरीत यदि मनोबल दृढ़ हो, तो गाँधी और विनोबा जैसे दुर्बल दीखने वाले भी अपने संकल्पबल के सहारे बड़े-बड़े संकल्प करते और अपनी मानसिक समर्थता के सहारे उन्हें पूर्ण करके दिखाते हैं। जिनका मनोबल गिर गया, वे साधारण कामों को भी पर्वत के समान भारी मानते हैं। कुछ करने के लिए न हाथ आगे बढ़ते हैं, न पैर चलते हैं। वह उत्साह और साहस ही है, जिसके सहारे सामान्य लोग बड़े काम कर दिखाते हैं। नैपोलियन भी शारीरिक दृष्टि से सामान्य मनुष्यों जैसा ही था, पर जिस भी काम को हाथ में लेता, उसे हर कीमत पर पूरा करके दिखाता था। इतिहास ऐसे ही महामानवों की गरिमा से भरा पड़ा है। जिसके पास बलिष्ठता, शिक्षा, सम्पन्नता और अनुकूलता जैसा कुछ न था, पर वे आत्मविश्वास के सहारे आगे बढ़े और दृढ़ता अपनाकर कठिन दीखने वाले लक्ष्य की पूर्ति तक जा पहुँचे।

शरीर, रक्त-माँस के सहारे ही सब कुछ नहीं कर लेता, उसके भीतर असली शक्ति मनोबल की रहती है, जो मस्तिष्क में उत्पन्न होकर नस-नाड़ियों के सहारे समूची काया में बिजली की तरह दौड़ती रहती है। बिजली ही बल्बों को चमकाती, पंखों को घुमाती, रैफ्रीजरेटर को ठण्डा रखती, हीटर को गरमाती और टेलीफोन को वार्त्तालाप कराने की क्षमता से भरा-पूरा रखती है। यदि इन यन्त्र-उपकरणों में बिजली न पहुँचे, तो वे टूट-फूट न होते हुए भी निकम्मे पड़े रहते हैं। यही बात शरीर के सम्बन्ध में भी है, वह सामान्य स्थिति में रहते हुए भी अपने को अशक्त अनुभव करता रहता है और समर्थ होते हुए भी असमर्थों से गई-बीती स्थिति अनुभव करता है। मनोबल साथ दे, तो बात ही दूसरी है। भीष्म का सारा शरीर बाणों से बिंध रहा था, फिर भी वे उत्तरायण सूर्य आने तक, छः महीने उसी शरीर में प्राण धारण किये रहे। राणा सांगा को साठ गहरे घाव लगे थे, तो भी वे लड़ाई के मैदान में पूर्ववत् अपना जौहर दिखाते रहे। आद्य शंकराचार्य भगंदर के फोड़े की व्यथा १६ वर्ष तक लगातार सहते हुए भी ग्रन्थ लेखन और देशव्यापी भ्रमण करते रहे। विनोबा ने अल्सर के फोड़े की व्यथा सहते हुए भी, बीस वर्ष उसी स्थिति में भू-दान के निमित्त हजारों मील का परिभ्रमण जारी रखा। उसके विपरीत मनोबल के अभाव में पहलवानों जैसी काया वाले भी कुछ कर नहीं पाते। पेड़ के नीचे बैठे चीते से आँखें मिलते ही पेड़ पर बैठा बन्दर भयभीत होकर नीचे गिर पड़ता है और देखते-देखते चीते का शिकार बन जाता है। अजगर को नीचे देखकर भयभीत पक्षी भी इसी प्रकार पेड़ पर से नीचे टपक पड़ते हैं और सहज ही उसके शिकार बन जाते हैं। रस्सी को साँप और झाड़ी को भूत समझकर डरपोक मन वाले, उसी भ्रम-जंजाल में अपने को बुरी स्थिति में डाल लेते हैं और डर के कारण अकारण ही मर जाते हैं।

एक बार यमराज ने किसी क्षेत्र में एक हजार व्यक्ति मार लाने के लिए मृत्यु को भेजा। जब वह मारकर लौटी, तो गिनने पर वे दो हजार निकले। अधिक मारने का कारण पूछने पर मौत ने उत्तर दिया कि उसने तो ठीक नियत संख्या में ही मारे, शेष तो डर के मारे अपने आप मर गये और भीड़ के साथ अपने आप चल दिये। अधिकांश मामलों में ऐसा ही होता है। डरपोकों के जरा सा खटका देखते ही हाथ-पैर फूल जाते हैं और प्रतिकार के लिए जो कर सकते थे, वह भी नहीं कर पाते हैं। जबकि टिटहरी जैसे छोटे पक्षी का समुद्र को सुखाकर अण्डे वापिस लेने जैसा असम्भव दीखने वाले संकल्प भी पूरे होते देखे गये हैं।

हमें अपना शरीरबल ही नहीं, मनोबल भी बढ़ाना चाहिए। छोटे-मोटे काम हाथ में लेकर उन्हें हर हालत में पूरा करने का निश्चय किया जाय, तो कार्य में कई तरह की अड़चनें आने पर भी वे पूरे हो जाते हैं। इस प्रकार धीरे-धीरे बड़े और कड़े कामों को कर गुजरने की प्रतिज्ञा लेकर, उसे करने में जुट जाने वाले लोग, अपना मनोबल क्रमशः बढ़ाते रहते हैं और आन्तरिक और बाहरी कठिनाइयों को पैरों तले कुचलते हुए, सफलता की ऊँची और लम्बी मंजिलें पूरी करते हैं।

शरीरशास्त्रियों ने देखा है कि मनोबल का प्रयोग करने वाले रोगी अपने जीवनेच्छा को प्रखर करके शरीर में प्रवेश कर चुके घातक विषाणुओं को भी मार भगाते हैं, घावों को जल्दी ही अच्छा कर लेते हैं, जबकि ऐसी छोटी-मोटी व्यथाओं को देखकर सकपका जाने वाले लम्बे समय तक उन्हीं व्यथाओं में जकड़े रहते हैं। कई बार तो नगण्य-सी कठिनाइयाँ ही भयभीत लोगों के लिए प्राण-घातक बन जाती हैं।

कालिदास, वरदराज आदि के ऐसे ही उदाहरण हैं, जिनमें वे जब तक उपेक्षा भाव अपनाये रहे, तब तक विद्या प्राप्ति में असफल ही बने रहे, पर जब उनका साहस और उत्साह जगा, तो उसी ठस्स कहे जाने वाले मस्तिष्क ने इतनी प्रगति की कि उपरोक्त दोनों ही देश के मूर्धन्य विद्वान बन गये। बालक ध्रुव, प्रह्लाद ने मनोबल के सहारे ही अनेक संकटों का सामना करते हुए भगवान को प्राप्त करने में सफलता प्राप्त की, जबकि आधे-अधूरे मन से पूजा-पत्री की चिह्न-पूजा जीवन भर करते रहने वाले पुजारी लोग सर्वथा छूँछ ही बने रहते हैं। मीरा और रामकृष्ण परमहंस ने अपने इष्ट देवों को सामने आ उपस्थित होने के लिए विवश कर दिया था। एकलव्य ने द्रोणाचार्य की मिट्टी की प्रतिमा से इतनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शिक्षा प्राप्त कर ली थी, जितना कि कौरव-पाण्डव निरन्तर उनके साथ रहने पर भी प्राप्त नहीं कर सके थे।

मनुष्यों का मन-मस्तिष्क शक्तियों का भाण्डागार है। सामान्यतः लोग उसके सात प्रतिशत का ही उपयोग कर पाते हैं। शेष ९३ प्रतिशत प्रसुप्त स्थिति में पड़ा रहता है। इस प्रसुप्ति का कारण एक ही है, उस भाग से काम लेने की तत्परता न दिखाना। जो इसके कुछ भाग का उपयोग करने लगते हैं, वे कितने ही अतीन्द्रिय क्षमताएँ जगा लेते हैं और ऐसे काम कर दिखाते हैं, जिन्हें ऋद्धि-सिद्धियों की गणना में गिना जा सके, दर्शकों को आश्चर्यचकित रहना पड़े। मैस्मरिज्म-हिप्नोटिज्म आदि के सहारे चमत्कार दिखाने से लेकर, अनेकानेक रोगों को दूर करने की क्षमता का उद्गम-स्रोत, इच्छाशक्ति को विकसित करना और प्रखर बना लेना ही है। योगीजन, योगाभ्यास एवं तपश्चर्याओं की साधनाओं के माध्यम से अपने मनोबल की ही अभिवृद्धि करते हैं। उसी विकसित क्षमता के सहारे वे अपने दोष-दुर्गुणों को उखाड़ फेंकते हैं। अनेकों सत्प्रवृत्तियाँ अपने गुण, कर्म, स्वभाव में सम्मिलित करते हैं। इस सफलता का श्रेय, बढ़े हुए मनोबल को ही है, जिसके माध्यम से वे न केवल अपना व्यक्तित्व प्रखर-परिष्कृत करते हैं, वरन् अन्यान्य-अनेकों को भी सहारा देकर ऊँचा उठाते, आगे बढ़ाते हैं। वह मनोबल ही है, जिसके सहारे साधारण-सी नावों के सहारे कोलम्बस जैसे लोग लम्बी अविज्ञात समुद्र यात्रा सम्पन्न करते हैं और अमेरिका जैसे महाद्वीपों को ढूँढ़ निकालते हैं। संसार में बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ अस्त्र-शस्त्रों की बहुलता से नहीं, सेनापति और सैनिकों के बढ़े हुए साहस के बल-बूते जीती गयी हैं।

आत्म-निर्माण की साधना में अपने अभ्यस्त दोष-दुर्गुणों को छोड़ना पड़ता है। सद्गुण स्वल्प मात्रा में हों, तो उन्हें बढ़ाना पड़ता है। इन आधारों को विकसित मनोबल के सहारे सहज ही सम्पन्न किया जा सकता है, किन्तु आरम्भ में ही हिम्मत हार बैठने वाले, नशेबाजी छोड़ने जैसे छोटे काम भी पूरे नहीं कर पाते। जिस विकसित व्यक्तित्व की सर्वत्र प्रशंसा की जाती है, जिसे सामर्थ्य का पुंज माना जाता है, जिसके सहारे लोग अद्भुत काम करते हैं और महामानव बनते हैं—वह कोई जादू नहीं है, विकसित मनोबल का ही चमत्कार है। जिस प्रकार दुर्बल काया वाले व्यक्ति भी प्रयत्नपूर्वक पहलवान बन जाते हैं, उसी प्रकार कोई यदि सच्चे मन से चाहे और उसके लिए कठोर परिश्रम करे, तो अपने मनोबल को जमीन से उठाकर आसमान तक ले जा सकता है।

कुछ अपवादों को छोड़कर भगवान ने शरीर और मन के अनुदान सभी को समान रूप से दिये हैं। साथ ही यह अवसर और अधिकार भी दिया है कि कोई चाहे, तो उन्हें परिपुष्ट करे या नीचे गिरा दे। सैण्डो और चंदगीराम जैसे आरम्भ में अति दुर्बल स्तर के व्यक्ति स्वास्थ्य सुधार पर अपना ध्यान केन्द्रित करने के उपरान्त संसार के माने हुए पहलवान बन गये। विद्या, सम्पन्नता, कुशलता आदि के सम्बन्ध में भी यही बात है। संसार के माने हुए वैज्ञानिक आइन्सटीन के बुद्धूपन से अध्यापक भी खिन्न थे और उनके बाप ने तो यहाँ तक कह दिया था कि ''तेरी अपेक्षा एक पिल्ला पाल लेता, तो अच्छा रहता''—उस स्थिति को किसी अन्य ने सहारा देकर नहीं, वरन् अपने संकल्प से ही सुधारा और विश्व के अनुपम वैज्ञानिकों में उनकी गणना हुई।

अंगद और हनुमान जैसे बन्दर, नल-नील जैसे रीछ यदि अपनी रीति-नीति और दिशा-धारा बदलकर अद्भुत पराक्रमी और असाधारण आदर्शवादी के रूप में विश्वविख्यात हुए, तो कोई कारण नहीं कि मनुष्य अपनी प्रभुप्रदत्त विभूतियों को सही तरीके से प्रयुक्त करने के उपरान्त, उन्हें प्रखर एवं समुन्नत न बना सके। यहाँ एक बात विशेष रूप से स्मरणीय है कि किसी भी क्षेत्र की सफलता अर्जित करने के लिए मनुष्य को सर्वप्रथम मनोबल को परिष्कृत एवं विकसित करना होता है। कुमार्ग पर चलने वाले उस आदर्शवादी मनोबल को गवाँ बैठते हैं, जो प्रगति के प्रयासों में परिपूर्ण सहायता देता है। मनोबल की अभिवृद्धि, चिन्तन में उत्कृष्टता, चरित्र में आदर्शवादिता और व्यवहार में शालीनता का समावेश करने से होती है। इसलिए व्यक्तित्व को प्रतिभा सम्पन्न बनाने एवं मनोबल को समुन्नत करने के लिए मनुष्य को अपने आप को पवित्र एवं प्रखर बनाने का लक्ष्य सामने रखना चाहिए। यों हत्यारे, डाकू, कुकर्मी और अपराधी भी मनोबल सम्पन्न दिखाई देते हैं। पर वह वस्तुतः उन्माद जैसा होता है, विघातक भूमिका ही निभा सकता है, आदर्शवादी प्रगति में उससे तनिक भी सहायता नहीं मिलती। ऐसा प्रसंग आने पर, वह रेत की दीवार जैसा देखते-देखते बिखर जाता है और कागज की नाव जैसा गलता-डूबता दिखाई पड़ता है। जिस मनोबल में उच्चस्तरीय सामर्थ्य होती है, वह तभी विकसित और हस्तगत होता है, जब उसके साथ आदर्शों का भी समावेश हो और वैसे ही अभ्यास करते-करते उसे बढ़ाया जाय। दुष्ट-दुरात्माओं की ऐंठ-अकड़ तो आदर्शों के प्रसंग में एक भी चोट करने पर, अपनी उद्दण्डता को थोथी पाते हैं, संकल्प बल के साथ आदर्शवादिता जुड़ी हुई हो, तो ही उसे अन्तरात्मा का आशीर्वाद और सहयोग मिलता है। तभी वह किन्हीं महत्त्वपूर्ण कार्यों को करने में समर्थ होता है। यों उचक्के भी दुस्साहस करते और कुकर्मों में अपनी दादागीरी दिखाते रहते हैं, पर अन्तरात्मा का अभिशाप और वास्तविकता का छद्म दोनों मिलकर मनोदशा ऐसी बना देते हैं, जो किन्हीं उच्चस्तरीय काम को पूरा करने में कुछ भी काम न आ सके। उसके सहारे आरोग्य सुधारने, बौद्धिक चमत्कार दिखाने, जन सम्मान-समर्थन प्राप्त करने जैसा कोई प्रयोजन नहीं सधता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनेक क्षेत्रों में प्रगति का एकमात्र रास्ता है—मनोबल की अभिवृद्धि, उस उपार्जित शक्ति को आरोग्य के मार्ग में उत्पन्न करने वाली बाधाओं को हटाया जा सकता है। संयमशील बनकर दीर्घजीवन प्राप्त किया जा सकता है। रोग कीटाणुओं से भिड़ने वाले रक्त घटकों को सशक्त बनाकर, उनके द्वारा जीवनी शक्ति को बढ़ाया जा सकता है। चेहरे पर प्रसन्नता और ओजस्विता के कारण अभिनव सौन्दर्य उभरते देखा जा सकता है। मानसिक सन्तुलन बनाने के लिए जिन मनोविकारों, कुत्साओं और कुंठाओं को निरस्त करना आवश्यक है, वे मनोबल बढ़ने पर ही बिस्तर गोल करती हैं। चिन्ता, आशंका, भय, उद्विग्नता जैसे असमंजसों को इसी आधार पर निरस्त किया जा सकता है। उत्साह और साहस बढ़ाकर प्रगति, प्रसन्नता और सफलता के मार्ग पर चल पड़ना मात्र मनोबल सम्पन्न के लिए ही सम्भव होता है। ऐसे लोग ही दूसरों पर अपनी छाप छोड़ते और रास्ता चलतों को मित्र बनाते हैं। शत्रुता तो वे किसी के भी साथ नहीं टिकने देते। अपव्यय, दुर्व्यसन एवं अव्यवस्था जैसे दुर्गुण केवल मनोबल से रहित लोगों में ही पनपते हैं। वे ही आलसी-प्रमादी होते हैं, जिनकी मानसिक क्षमता बढ़ी-चढ़ी हैं, वे सर्वप्रथम अपने गुण, कर्म, स्वभाव की अस्त-व्यस्तता पर काबू पाते हैं और उन विशिष्टताओं को बढ़ाते हैं, जिनके सहारे कठिन कामों को भी सरलतापूर्वक सम्पन्न किया जा सकता है। जो मनस्वी है, वही ओजस्वी, तेजस्वी और यशस्वी बनता है। प्रतिकूलताओं से जूझकर अनुकूलताओं में बदल लेना ऐसे ही लोगों के बायें हाथ का खेल होता है। वे ही व्यवसायों में सफल होते हैं, ग्राहकों का मन मोहते और बड़ी संख्या में सहयोगी उत्पन्न करके उनके द्वारा बिना माँगी अप्रत्याशित सहायता प्राप्त करते हैं। मनोबल बढ़ाना हर दूरदर्शी के लिए आवश्यक है, जिसको इस प्रयास में सफलता मिल गई, तो समझना चाहिए कि वह अन्य किसी काम में असफल न होगा।

मनोबल की प्रचण्ड शक्ति एवं उसकी परिणति

घटना सन् १९८१ की है। इंग्लैण्ड की एक पैट्रिकमेरी नामक महिला के सीने में कैन्सर हुआ। पता तब चला जब डाक्टरों ने जाँच-पड़ताल के उपरान्त यह बताया कि उसका कैन्सर सीने से बढ़कर सारे धड़ में फैल चुका है। इलाज तो चिन्ह पूजा है पर वह जीवित अधिक से अधिक छः महीने और रह सकेगी। महिला चिन्तित हुई। उसने पूछा "क्या इसका उपचार नहीं हो सकता ? डाक्टरों ने सीधा-सा उत्तर दिया कि "आपकी जाँच-पड़ताल कुछ महीने पहले हो सकी होती और समय रहते वस्तुस्थिति का पता चल गया होता तो यह सम्भव था कि समय रहते इलाज हुआ होता और आपके प्राण बच सके होते" पहले जाँच-पड़ताल क्यों नहीं हो सकी ? इसका कारण एक ही था। इंग्लैण्ड में उस समय ऐसी परीक्षा मशीन जिसे "कैटस्कैनर" नाम से जाना जाता है मात्र एक ही थी, जिस पर जाँच करने के लिए अपनी पारी के लिए मरीजों को लम्बी प्रतीक्षा करनी पड़ती थी। तब तक बात बढ़कर कहीं से कहीं जा पहुँचती थी। पैट्रिकमेरी भी इसी प्रतीक्षा में असाध्य स्तर तक जा पहुँची।

महिला ने विचार किया कि जब मात्र छः महीने ही जीना है, तो इस समय का श्रेष्ठतम उपयोग क्यों न कर लिया जाय। सोचते-सोचते वह इस निष्कर्ष पर पहुँची कि मेरी हैसियत तो ऐसी नहीं है कि ऐसी अनेकों मशीनें देश में लगा सकूँ पर इतना तो हो ही सकता है कि यदि पूरी शक्ति इसी कार्य में झोंक दी जाय तो एक के स्थान पर दो तो हो ही जायँ और आधे रोगियों के तो प्राण बच ही जायँ। उन दिनों ऐसी एक मशीन प्रायः ढाई करोड़ रुपयों में बनती थी।

पैट्रिक ने एक सांगोपांग योजना बनाई। उस देश के टेलीविजन पर अपनी स्थिति, दुर्दशा और सम्भावना प्रसारित की और साथ ही यह भी कहा कि यदि पाँच करोड़ का प्रबन्ध हो जाय तो दूसरी मशीन कुछ ही दिनों में लग सकती है और मेरे जैसे आधी से अधिक संख्या के रोगियों के प्राण बच सकते हैं। उस प्रसारण को सुनकर बहुत से उदारचेता प्रभावित हुए और उनने अपनी श्रद्धानुसार राशि भेजना शुरू कर दी। महिला का हौसला बढ़ा और उसने और भी उपकरणों का सरंजाम जुटाने में अपना सारा समय और मनोयोग लगा दिया। नियत अवधि में दूसरी मशीन बनने, चालू होने के लिए स्थान की, जाँचकर्त्ताओं की सारी व्यवस्था जुट गई। कार्य आरम्भ हो गया। इस बीच उसकी तत्परता और तन्मयता ऐसी रही जिसमें उसे अपनी बीमारी और चिकित्सा की चिन्ता ही न रही और अपने लिए जो सोचना-करना था, उसे भुलाये ही रही।

संकल्पित कामों से निबटने के बाद साथियों के याद दिलाये जाने पर वह फिर डाक्टरों के पास अपनी जाँच-पड़ताल कराने गई कि अब उसकी छः महीने की शेष वाली जिन्दगी किस स्थिति में है ? समय तो दो वर्ष से अधिक बीत चुका था। डाक्टरों ने उसके सारे शरीर की जाँच कर डाली, पर उसमें कहीं कैंसर का कोई नामो-निशान न था। हर दृष्टि से भली-चंगी थी। इस आश्चर्यजनक कायाकल्प का कारण खोजने के लिए विभिन्न स्तर के विशेषज्ञों की समिति बनाई-बिठाई गई। उसने लम्बे अन्वेषण के बाद एक ही प्रतिवेदन प्रस्तुत किया कि यदि मनुष्य का मनोबल मौत, बुढ़ापा, बीमारी आदि को भुलाकर उसके स्थान पर किसी उच्चस्तरीय परमार्थ में लगा दे तो ऐसी अद्भुत शक्ति भीतर से ही उपज सकती है, जो भयंकर रोगों से भी निबट सके और उसके स्थान पर स्वस्थता सम्पन्न करने वाली सामर्थ्यों को उभार सके।

यह घटना एक उदाहरण है। उसके आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि रोग निरोधक शक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जितनी औषधियों में, शल्य-क्रियाओं और चिकित्सकों के कौशल में समाहित है, उससे अनेक गुनी सामर्थ्य व्यक्ति के अपने मनोबल में सन्निहित है, बशर्ते कि उसे उभारा जा सके।

ऐसी घटनाएँ एक नहीं अनेक हैं। फ्लोरेन्स की एक महिला उन दिनों नवयुवती थी। उसकी मँगनी हो चुकी थी। विवाह होने ही वाला था कि पति परदेश चला गया और उसे लौटने में बीस वर्ष लग गये। फिर भी वह निराश न हुई और सोचती यही रही कि जब विवाह हो तो उसका शरीर नवयुवती जैसा ही दृष्टिगोचर होना चाहिए। वह दिन में कई-कई बार अपना मुँह दर्पण में देखती और विश्वास करती कि उसका यौवन घट नहीं रहा वरन् दिन-दिन अधिक निखर रहा है। बलवती आशा ने उसे सजधज का शृंगार करते रहने के लिए और भी अधिक उकसाया। बीस वर्ष बीत गये। तब वह चालीस वर्ष की हो चुकी थी, जबकि उसका मंगेतर बीस वर्ष बाद लौटा। उसे मिलने पर अत्यधिक प्रसन्नता हुई कि उसकी प्रेमिका का रूप-लावण्य जाते समय जैसा था, उससे बढ़ा ही है, घटा नहीं। विवाह हो गया और वे सुखपूर्वक जिये। इस घटना में संकल्प-शक्ति का ही चमत्कार है।

पुराणों में ऐसी घटनाओं का विस्तारपूर्वक बढ़ी-चढ़ी संख्या में वर्णन है। हनुमान सुग्रीव के एक साधारण कर्मचारी थे। उनके सामने सीता की वापसी वाले सन्दर्भ में समुद्र पार करने का प्रश्न आया। वे अपनी सीमित शक्ति को देखते हुए वैसा कर सकने में अपने को असमर्थ पा रहे थे, पर जामवन्त ने जब उन्हें प्रोत्साहित किया और प्रसुप्त शक्तियों को जाग्रत होने पर कुछ भी कर सकने का स्मरण दिलाया तो वे असम्भव को सम्भव कर दिखाने के लिए तत्पर हो गये और इसके उपरान्त वे जीवन भर क्या-क्या करते रहे, इसके सुविस्तृत वर्णन से प्रायः सभी अवगत हैं।

भारत का अध्यात्म तत्त्वदर्शन और योगसाधना विश्व भर में विख्यात है और उसे मनुष्य में देवत्व उदय करने में सर्वथा समर्थ माना जाता है। वैसे अगणित प्रमाण उदाहरण भी हैं। शाप-वरदान देने की शक्तियाँ, ऋद्धि-सिद्धियों का परिचय देने का प्रसंग अगणित उदाहरण समेत इतिहास प्रसिद्ध है। पिछली शताब्दियों में भौतिक विज्ञान के आविष्कारों ने संसार भर को चमत्कृत एवं लाभान्वित किया है। भारत की अपनी विशेषता चिर अतीत से विख्यात रही है। उसके आधार पर ऋषि-मुनियों और महामानवों का इतना बड़ा परिकर उभरता रहा है, जिसने न केवल अपने देश को वरन् सम्पर्क में आने वाले सुविस्तृत परिकर को इतना समुन्नत बनाया, जिसे धरती पर स्वर्ग के अवतरण की संज्ञा दी जा सके। प्रगतिशीलता का इतिहास भारत के महामनीषियों की मनस्विता के आधार पर बन पड़े महान सृजनात्मक पुरुषार्थों के साथ जुड़ा हुआ है। उन्हीं का पराक्रम था, जो धरती पर स्वर्ग के अवतरण वाला सतयुग चिरकाल से संसार के अधिकांश भू-भाग में अपनी गरिमा का परिचय देता रहा।

मनस्वी कौडिन्य ने मध्यपूर्व के सुविस्तृत क्षेत्र में ऐसा प्रचलन, प्रवाह उत्पन्न किया कि वह समूचा विशालकाय क्षेत्र न केवल हर दृष्टि से समुन्नत हुआ, वरन् भारत का एक प्रकार से सांस्कृतिक उपनिवेश ही बन गया। कुमार जीव की कथा-गाथा हर किसी के लिए अभी भी प्रकाश स्तम्भ का काम करती है। बिहार प्रान्त के एक निर्धन परिवार में वह जन्मा और पैदल चलकर काश्मीर के उत्तरी छोर पर बसे तक्षशिला के विश्वविद्यालय में पढ़ा। इस बीच उसकी दृष्टि चीन के विशालकाय क्षेत्र पर गई और उसने चीन को हिन्दू धर्म की बौद्ध शाखा का अनुयायी बनाने की ठानी। साधनों का अभाव रहते हुए भी वह गोबी के दलदल, तिब्बत एवं खोखान के सुविस्तृत हिम रेगिस्तान को पार करते हुए प्राणों की बाजी लगाकर चीन जा पहुँचा। भाषा और संस्कृति के अपरिचय की कठिनाई को पार किया और वहाँ ऐसा मूर्धन्य प्रचारक बना कि न केवल चीन, वरन् उसके समीपवर्ती साइबेरिया, कोरिया, जापान आदि को भी अपनी महान संस्कृति का अनुयायी बनाने में सफलता प्राप्त कर ली।

चाणक्य एक साधारण ब्राह्मण मात्र था पर उसने अपने अपमान के प्रतिशोध में नन्द वंश की ईंट से ईंट बजा दी। एक मोर्चा पूरा हुआ तो भी वह चैन से न बैठा और निश्चय किया कि भारत पर आये दिन होते रहने वाले आक्रमण को वहाँ से उखाड़ फेंकना है, जहाँ से उनकी जड़ें बार-बार हरी होतीं और अपने चमत्कार दिखाती हैं। उसने अपनी दिव्य-दृष्टि से प्रतिभा के पुंज चन्द्रगुप्त को चुना और इस बात के लिए तैयार किया कि वह निरन्तर युद्धरत रहकर आक्रान्ताओं के आतंकवाद को जड़-मूल से उखाड़ फेंके। चन्द्रगुप्त अचकचा रहा था और इस प्रयास में आने वाली असंख्यों कठिनाइयों को विस्तारपूर्वक सुना और गिना रहा था। सुनने वाले चाणक्य ने व्यंग्योक्ति के साथ हँसते हुए भवें तानकर कहा—"तुम दासी पुत्र हो। अपनी सहज भीरुता और दीनता की अभिव्यक्ति कर रहे हो। तुम्हें समझना चाहिए कि चाणक्य जो सोचता है, वही क्रियान्वित भी होता है और इतना ही नहीं वह फलित होकर भी रहता है। तुम बकवास मत करो। जो कहा जा रहा है, उसे करो और गाँठ बाँध लो कि चाणक्य निरर्थक योजनाएँ नहीं बनाता और न उनके कभी असफल रहने की आशंका आड़े आती है।" चन्द्रगुप्त नत मस्तक हो गया। उसने अक्षरशः अनुशासन पाला और/वह कर दिखाया जिसे उसके पूर्ववर्ती असंभव मानकर चुप बैठे रहे थे और मन ही मन कुड़कुड़ाते रहते थे।

मनोबल क्या नहीं कर सकता ? इसका रहस्य जिनने भी समझा, वे व्यवधानों को चीरते हुए पर्वतों के ऊँचे शिखरों पर चढ़ दौड़ने में सफल हुए हैं। भारत का पुरातन विज्ञान "चेतना विज्ञान" है, जिसे तपश्चर्या-योग साधना आदि के नाम से जाना जाता है। उसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फलस्वरूप उपलब्ध हो सकने वाली ऋद्धि-सिद्धियों से पुराण-गाथाओं का पन्ना-पन्ना भरा पड़ा है। यह योगाभ्यास आखिर है क्या ? इसकी गहराई तक उतरने वाले बताते हैं कि यह तितिक्षाओं के साथ जुड़ी हुई कर्मकाण्डों की प्रत्यक्ष फलश्रुति प्रतीत होते हुए भी वस्तुतः मनोबल को उभारने और प्रसुप्त प्राणाग्नि को प्रज्ज्वलित करने की प्रक्रिया मात्र है। देव शक्तियों का केन्द्र-बिन्दु यही है। वृक्ष पर फल-फूल आकाश से टपककर चिपकते रहने की बात सोचने वाले वस्तुतः गलती पर होते हैं। जड़ों के द्वारा सींचा गया धरती पर रस ही तने को मजबूत करता है। पल्लवों को हरियाता और वृक्षों को सुविस्तृत छायादार बनाकर उन्हें फल-फूलों से लाद देता है। उसी जड़ के आधार पर वे आँधी-तूफानों से लड़ते हैं। वे अपनी जगह अकड़कर चिरकाल तक खड़े रहते हैं। सिद्ध पुरुष अभीष्ट प्रगति के उच्च शिखर पर पहुँचते हैं। महापुरुषों की सफलताएँ कापुरुषों को धिक्कारतीं और विजय श्री वरण कर सकने की शिक्षा प्रत्यक्ष प्रमाण बनकर देती हैं। उनसे उत्साहित होकर कभी-कभी तो अर्ध-मृत और अर्ध-मूर्छित भी देवदानवों जैसे पुरुषार्थ करके दिखाने लगते हैं।

शरीर इन सभी आराध्य देवों द्वारा बना हुआ है किन्तु उसे बलिष्ठ और सुन्दर बनाने में मनुष्य की तीन चौथाई क्षमता का नियोजन होता रहता है। इतने पर भी सज्जा, उपकरण, बहुमूल्य आहार, औषधियों के पिटारे काछ काम नहीं आते। अमीर, गरीबों की अपेक्षा अधिक दुर्बल, बीमार और अल्पजीवी पाये जाते हैं। चिकित्सा के व्यवसायी अपने परिवार समेत स्वयं तक बीमारियों के शिकार बने रहते हुए तथाकथित आहार विज्ञान से लेकर औषधि विडम्बना को प्रत्यक्ष न सही, मन-मन तो कोसते ही रहते हैं।

मनोबल इससे सर्वथा भिन्न प्रकार की राह दिखाता है। अफ्रीका के मसाई मात्र भाले के सहारे बबर शेरों से भिड़ते और उन्हें मारकर अपनी शादी के लिए निश्चित शर्त को पीढ़ी दर पीढ़ी पूरी करते रहते हैं। विश्वविख्यात सेण्डो पहलवान जवानी की दहलीज तक पहुँचने तक हड्डियों का ढाँचा, जुकाम के जाल में पूरी तरह जकड़ा हुआ, मरण की प्रतीक्षा में दिन गिनते रहने वाला मरीज था, पर जब उसके मार्गदर्शक ने जीवन की नई विधा सुझाई तो वह दिन-दिन स्वस्थ-बलिष्ठ होता गया और एक दिन वह संसार का माना हुआ पहलवान बन गया। भारत का हिन्द केशरी उपाधि वाला चन्दगीराम, अध्यापक की नौकरी करने वाला कई दिनों का तपेदिक का मरीज था और उसकी छूत न लग जाने के भय से हर कोई दूर रहता था। पर जब उसने अपना मानसिक कायाकल्प साहसपूर्वक कर डाला। आदतों को पूरी तरह उलट दिया तो प्रकृति देवी ने उस पर अजस्र वरदान बरसाया और हिन्दुस्तान का जाना-माना पहलवान बना दिया।

प्राचीनकाल में कायाकल्पों की कथागाथाएँ च्यवन ऋषि से लेकर ययाति के बूढ़े से जवान हो जाने के रूप में प्रसिद्ध हैं। हनुमान बचपन से ही पवनपुत्र—प्राणपुंज कहलाने लगे थे और उनके पाहन पर गिरने से विशालकाय शिला चूर-चूर हो गई थी। पार्वती की युगों तक तप करने से क्षीण हुई काया शिव को वरण करते ही त्रैलोक्य मोहिनी बन गई थी। अर्जुन के बाणों ने पाताल से जल धारा उभारकर मरणासन्न भीष्म-पितामह को ताजा जल पिलाया था। टिटहरी का समुद्र को सुखाकर अण्डे वापस लेने का संकल्प भले ही ऋषि अगस्त्य के माध्यम से पूरा हुआ हो पर वह अधूरा तो नहीं ही रहा।

जमदग्नि के पुत्र परशुराम जब पिता के साथ हुए अनाचार का बदला लेने के लिए उतारू हो गए, तो उनने महाबली सहस्रबाहु की हजारों भुजाएँ हलके से फरसे से मूली की तरह काटकर रख दीं और मचले तो उनके सहयोगियों तक का सफाया करके रख दिया। हारी-हारी बातें करने वाले अर्जुन को महाभारत का विजेता बनाने का श्रेय कृष्ण के उस उद्बोधन को था, जिसने उसे भर्त्सना की लताड़ और प्रोत्साहन भरी पुचकार देकर उसे वह बना दिया जिसका वह अधिकारी था।

इन दिनों मनुष्य को वैभव, स्वास्थ्य और यश के अतिरिक्त और किसी की कामना दीख नहीं पड़ती। इसके लिए जो कुछ भी उचित-अनुचित बन पड़ता है उसे कमाने में औसत आदमी दिन-रात जुटा रहता है। कुछ मिलता भी है पर वह कम दीखता है और असंतोष पहले की अपेक्षा अधिक भड़का देता है। इस घोर असमंजस की बेला में हर किसी को यह समझना और समझाना चाहिए कि अगणित वैभवों का उद्गम प्राणाग्नि केन्द्र है, जिसको उभारना परम पुरुषार्थ और ईश्वर का एकमात्र अनुग्रह कहा जा रहा है। आज इसी की आवश्यकता है कि वैभव स्थिर रहे और दिन-दिन बढ़ता रहे और अन्ततः उस श्रेष्ठतम् सदुपयोग में काम आ सके जो नन्हे से बीज से बढ़कर अन्ततः विशालकाय वटवृक्ष के रूप में परिणत होता है।

वैभव किसका है ? पराक्रम किसका है ? विभूतियाँ किसकी हैं ? इस सबका उत्तर देते समय नाम भगवान का ही लिया जा सकता है। पर भगवान का निकटतम और सुनिश्चितम् स्थान एक ही है—अन्तराल में विद्यमान प्राणाग्नि। उसी को जानने-उभारने से वह सब कुछ मिल सकता है, जिसे धारण कर सकने की पात्रता मनुष्य अर्जित करते हैं। मेघ माला समय पर जलधारा बरसाती रहती है, पर वह जल राशि उन्हीं जलाशयों में एकत्र होती है, जो उस संचय के लिए समुचित गहराई और पात्रता अर्जित कर सकने में समर्थ हो सकें। आकांक्षा ऋद्धि-सिद्धियों की हो या स्वर्ग-मुक्ति की, इन्हें प्राप्त करने के लिए उस प्राणाग्नि को प्रज्ज्वलित किया जाना अनिवार्य है, जो दैवी शक्तियों का प्रत्यक्ष प्रतिनिधित्व करती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अंतरंग की समर्थता ही सफलता की कुंजी है

पराक्रम भीतर से उफनता है

अवसर और साधन की कितनी ही महिमा गाई-सुनाई जाय, यह तथ्य अपने स्थान पर चट्टान की तरह अटल रहेगा कि मनुष्य सामर्थ्य का धनी है। उसका स्तर एवं संकल्प जब प्रखरता से सम्पन्न होता है तो उसकी चमत्कारी परिणति देखते ही बनती है। एकाग्रता, एक दिशा, लगन एवं तत्परता का जिस भी केन्द्र पर नियोजन किया जाता है उसी में ऐसे चमत्कारी परिणाम उत्पन्न होने लगते हैं जैसे कि सामान्य जनों को हस्तगत नहीं होते। चमत्कार की परिभाषा इतनी ही है कि "जिसे सर्वसाधारण के सामान्य जीवन में घटित होते न देखा जाता हो।" कभी रेडियो, टेलीफोन, टेलीविजन की चर्चा ऋद्धि-सिद्धियों के रूप में होती रहती होगी, पर अब वे उपकरण सर्वसाधारण के दैनिक प्रयोग में आने के कारण सुई, माचिस की तरह सामान्य हो गये हैं।

महामानवों के महान व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व के पीछे इतना ही चमत्कार काम करता रहा है कि उनने अपने चिन्तन को शेखचिल्ली जैसा हवाई नहीं बनाया। वरन् यों सोचा उसे आदर्शवादियों की ही नहीं व्यावहारिकता और क्षमता की कसौटी पर बार-बार कसने के बाद ही अपनाया। दूरदर्शी विवेकशीलता के आधार पर जो उचित एवं आवश्यक प्रतीत हुआ, उसे कार्यान्वित करने का सुनिश्चित संकल्प किया। संकल्प भी ऐसा जिसमें उत्साह, साहस और परिश्रम का परिपूर्ण समावेश रहे। ऐसे लोगों के पास निराशा नहीं फटकती। अड़चनें आती हैं तो उनसे निपटने के लिए दूसरा, तीसरा रास्ता खोजते हैं। "खोजने वाले को मिलता है। खटखटाने वाले के लिए खुलता है" की बाइबिल की उक्ति यथार्थता की कसौटी पर असंख्यों पर कसी गई और खरी उतरी है। हो सकता है अनुकूलता उत्पन्न होने में देर लगे। सफलता के लिए अधिक श्रम करना पड़े और अवरोधों से अधिक जूझना पड़े। पर ऐसी अग्नि-परीक्षा के लिए खरा सोना सिद्ध होनें से पहले हरेक को कमर कसकर तैयार होना पड़ता है। हर परिणाम के लिए सन्निद्ध रहना पड़ता है। उथले और मनचले ही गगनचुम्बी महत्त्वाकांक्षाएँ सँजोते, आतुर होकर बबूले की तरह उचकते-मचकते हैं और तनिक सी कठिनाई सामने आते ही अपना अस्तित्व खो बैठते हैं। ऐसे ही लोग आमतौर से भाग्य को, समय को, जिस-तिस को दोष देकर मन हल्का करते रहते हैं। प्रतापी को आरम्भ से ही विदित होता है कि साहस और पराक्रम ही नहीं, कठिनाई से निपटने और अभीष्ट प्रतिफल का समय आने की धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा भी करनी पड़ती है। ऐसें ही लोग पराक्रम प्रकट करते और अन्त समय पर उचित सफलता प्राप्त करते हैं। महामानवों की यही सुनिश्चित राह है। जो इस राजमार्ग पर चला है, उसे न भाग्य का रोना रोना पड़ा और न परिस्थितियों को दोष देकर जी हल्का करना पड़ा। मनस्वी सदा ही यशस्वी होते रहे हैं।

सामान्य परिस्थितियों में उत्पन्न हुए, जन्मजात प्रतिभा की दृष्टि से सामान्य स्तर के, साधनों की कमी वाले अभावग्रस्त वातावरण से घिरे हुए लोगों में से अनेकों ने असाधारण सफलताएँ प्राप्त की हैं। अपने-अपने निर्धारित उद्देश्यों में आश्चर्यजनक सफलताएँ प्राप्त करके रहे हैं। ऐसे लोगों ने किस आधार पर प्रगति की, किसका सहारा पाया ? इसकी गम्भीरतापूर्वक जाँच-पड़ताल करने पर एक ही निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि वे अपने सद्गुणों में निरन्तर विकास करते रहे। योग्यता बढ़ाने में निरन्तर तत्पर रहे। उत्साह, साहस और धैर्य का उच्चस्तरीय अनुपात बनाये रहे और सफलता-असफलता की, अनुकूलता-प्रतिकूलता की परवाह किये बिना सन्तुलित मन से अपने प्रयास में जुटे रहे और अन्ततः सफल होकर रहे।

योरोप तब छोटा-सा महाद्वीप भर था। अपने सीमित क्षेत्र में सीमित साधनों से गोरे लोग भी अन्याय भूखण्डों में रहने वाले किसी प्रकार निर्वाह के साधन जुटाने वालों की तरह दिन गुजारते थे। अनायास ही एक महत्त्वाकांक्षी युवक न जाने कितनी आशाएँ सँजोये समुद्र पार के द्वीपों और महाद्वीपों की खोज का संकल्प लिए निकल पड़ा। आरम्भ में वह एक छोटा नाविक था। अपने बलबूते ही सोचता और लम्बी यात्राओं की योजनाएँ बनाता। उसकी आरम्भिक सफलताएँ सीमित थीं, पर महत्त्वाकांक्षाएँ असीम। तदनुसार सूझ-बूझ और साहस भी उसने जुटाया। चर्चा आगे बढ़ी तो सलाहकारों, सहयोगियों की ही नहीं, साथियों की भी कमी न रही। उसे एक जहाजी बेड़े का कप्तान बनने का अवसर मिला। समुद्री

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यात्राओं की योजनाएँ बनीं। कितने ही उपजाऊ और हरे-भरे और खनिज सम्पदा से भरे-पूरे द्वीप उसके हाथ लगे, जहाँ वह गोरों को उतारता और कब्जा जमाता रहा। अन्त में उसने उस अमेरिका को खोज निकाला जिसका वैभव और वर्चस्व आज संसार में सर्वोपरि गिना जाता है।

जन आकांक्षाएँ तो सदा महत्त्वपूर्ण सोचती और चाहती हैं, पर उनका प्रतिनिधित्व करने वाले अग्रगामी, साहसी कुछ ही होते हैं, वे आत्मविश्वास के बलबूते जब खतरों से खिलवाड़ करते हुए आगे बढ़ते हैं तो ऐसा कुछ कर गुजरते हैं, जिनका असंख्यों के भाग्य पर असाधारण प्रभाव पड़े। ऐसे लोग अपने को धन्य बनाते और पीछे वालों के लिए अनुकरणीय उदाहरण छोड़ जाते हैं। ''कोलम्बस ऐसे ही लोगों में से एक था।''

हेनरी फोर्ड आरम्भ में ठठेरे का काम करते थे। आरम्भ से ही वे मशीनरी कार्यों में अधिक रुचि लेते थे। एक दिन जब वे मात्र १३ वर्ष के थे, उन्होंने एक वाष्प इन्जिन को स्वयं अपनी शक्ति से सड़क पर सनसनाते व फुफकारते देखा। तभी उन्होंने यन्त्र संचालक से इसका कारण पूछा तथा उससे ईंधन डालकर यन्त्र को संचालित करने की प्रक्रिया समझ ली।

१६ वर्ष की आयु में हेनरी मशीन रिपेयर की एक दुकान में कार्य करने लगे। मात्र तेईस वर्ष की आयु में फोर्ड ने एक गैस ऊर्जा से संचालित बग्गी का निर्माण किया। इससे चार हार्स पावर की शक्ति उत्पन्न होती थी तथा इसकी गति २५ मील प्रति घण्टा थी। यहीं से फोर्ड के जीवन में नये इतिहास का आरम्भ हुआ। १९०८ ई. में उन्होंने मोडेल-टी नामक कार की रचना करके सारे विश्व में एक नया कीर्तिमान स्थापित किया। वे संसार के मूर्धन्य धनकुबेरों में गिने गये। उन्होंने फोर्ड फाउण्डेशन भी स्थापित किया, जिससे करोड़ों की लागत के सृजनात्मक कार्य आरम्भ हुए और आविष्कारों को एक सुदृढ़ आर्थिक आधार मिला।

अलबर्ट आइन्स्टीन ने १९वीं सदी के उत्तरार्ध में पहली बार जेम्स क्लार्क मैक्सवेल द्वारा प्रतिपादित इलेक्ट्रो-डायनेमिक्स के सिद्धान्त को पढ़ा, हृदयंगम किया और उनकी 'जीनियस' जाग उठी। इसी मूलभूत थ्योरी को आधार बनाकर सन् १९०५ में इस मनीषी ने ''सापेक्षवाद का सिद्धान्त'' पहली बार विज्ञान जगत के समक्ष रखा, जिसने भौतिकी के क्षेत्र में तहलका मचाकर रख दिया। उनके इस प्रतिपादन ने कि पदार्थ व ऊर्जा भिन्न-भिन्न नहीं, एक ही वस्तु के कई पहलू हैं, सृष्टि विज्ञान सम्बन्धी अनेकों रहस्य खोले व चतुर्थ आयाम की नयी जानकारी विश्व को मिली। इस महामनीषी का पुरुषार्थ ही था कि समस्त पदार्थों के मूल प्रेरक बल की खोज हेतु अनेकों प्रयास चल पड़े जिन्होंने आधुनिकी भौतिकी की, भौतिकी के दर्शन की, चेतना विज्ञान के भौतिकीय आधार की नींव मजबूत कर दी।

दो शताब्दी पूर्व किये गये एक बलिदान का प्रतीक ''नर-कंकाल'' के रूप में काँच की मंजूशा में सजा-सँवार कर रखा गया है—इटली के पोम्पाई नगर में। यह उस वीर की याद में है जिसने अपने प्राणों को होमकर विस्यूवियस पर्वत के ज्वालामुखी में से बहते लावा को शहर में प्रवेश नहीं होने दिया और फाटक बन्द करते-करते स्वयं भी गरम धहकते लावे में फँस गया। लावा ठण्डा होने पर प्रहरी की बन्दूक और जला-भुना कंकाल इस बात का प्रमाण प्रस्तुत करते थे कि यदि वीर प्रहरी ने शहर का मुख्य द्वार न बन्द किया होता तो कीट-पतंगों की तरह न जाने कितने अबोध नर-नारी, बाल-वृद्ध भुन गये होते। धन्य है ऐसे बलिदानी को, जिसने स्वेच्छावरण कर अमरत्व प्राप्त किया। जिसने कर्त्तव्य के पालने में ही अपना जीवन होम दिया।

सत्रहवीं शताब्दी में धार्मिक सहिष्णुता के सबसे बड़े समर्थक, सामाजिक नेता, तत्वचिन्तक एवं एक जागीर के मालिक के रूप में विलियम पेन का नाम इतिहास प्रसिद्ध है। उन्होंने अमरीका में पेन्सिलवेनिया राज्य की स्थापना की थी। यहीं पर उनने अपने धार्मिक एवं राजनीतिक सिद्धान्तों को स्थापित करने का प्रयास किया था। इनके पिता इंग्लैण्ड में एक बड़े एडमिरल थे। उन्होंने बचपन से ही अवांछनीयता से समझौता न करने वाले एक पुरुषार्थी की भूमिका निभाई। चर्च की परम्परागत शिक्षा उन्हें न रुची। जबरन भेजे जाने पर उन्होंने ऐसी विद्या पढ़ने से ही मना कर दिया। उनके पिता ने उन्हें दण्डित कर फ्रांस भेज दिया, जहाँ उन्हें खुलकर अपने सुधारवादी विचारों को व्यक्त करने, लेख आदि लिखने का मौका मिला। इसके लिए उन्हें चार बार जेल भी जाना पड़ा। मात्र चौबीस वर्ष की आयु में वे एक क्रान्तिकारी पत्रकार के रूप में विख्यात हो गए। सात वर्षों के भीतर उन्होंने बयालीस पुस्तकें तथा अनेकों पत्रक, लेख आदि लिख डाले। उनकी सर्वाधिक चर्चित पुस्तक ''नो क्रॉस नो क्राउन'' १६६९ में 'टॉवर ऑफ लन्दन' की कैद में लिखी गयी थी। हालांकि उनके पिता महत्त्वपूर्ण राजनयिक पद पर थे और विलियम पेन उनके प्रभाव का सहारा लेकर आसानी से जेल से छूट सकते थे, तथापि उनने कठोर कारावास में रहना ही अंगीकार किया। फलतः लोगों की उन पर आस्था और भी दृढ़ हो गई।

उनने अपने मुकदमे की पैरवी के लिए (१६७० में) कोई वकील नहीं रखा अपितु 'ए विण्डिकेशन ऑफ दि इण्डिपेण्डेन्स ऑफ दि ज्यूरी' शीर्षक से एक पत्रक प्रकाशित किया, जो इंग्लैण्ड की लीगल हिस्ट्री में एक लैण्डमार्क की तरह याद किया जाता है।

जेल से रिहा होने के उपरान्त उनने साहित्यकार न रहकर आन्दोलनकारी के रूप में अपने को बदल लिया। अपने प्रभाव क्षेत्र पेन्सिलवेनिया में ऐसे सुधार प्रस्तुत किए उनने उस समूचे क्षेत्र को प्रभावित किया और कितने ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसे परिवर्तन होते गये जैसा करने के लिए उनने अपनी युवावस्था में लोक-शिक्षण किया था। एक श्रीमन्त वर्ग के प्रतिनिधि विलियम पेन ने जो कुछ भी किया, वह तत्कालीन परम्पराओं के प्रतिकूल था लेकिन उनके पुरुषार्थ भरे कदम कभी डगमगाए नहीं।

ऐसी प्राणवान प्रतिभाएँ यदि ढलें, उपजें और बढ़ें, साथ ही समय की विपन्नता को उलटने के लिए कटिबद्ध हों, तो कोई कारण नहीं कि प्रस्तुत संकटों को पीछे धकेलना और सुखद सम्भावनाओं को खींच बुलाने की सामयिक आवश्यकता को पूरा न किया जा सके। यही वह राजमार्ग है, जिस पर अगणित महामानव चले हैं और आत्मिक प्रगति का पथप्रशस्त कर सकने में सफल हुए हैं।

आध्यात्मिक साधना की सफलता के लिए सबसे पहला एवं अनिवार्य कदम ''इन्द्रिय निग्रह'' है। यों ज्ञानेन्द्रियाँ पाँच मानी जाती हैं, पर उनमें से दो ही प्रधान हैं—पहली स्वादेन्द्रिय और दूसरी कामेन्द्रिय। इनमें से स्वादेन्द्रिय प्रधान है। उसके वश में आने से कामेन्द्रिय भी वश में आ जाती है। रसना को जिसने जीता, वह विषय-वासना पर भी अंकुश रख सकेगा। चटोरा आदमी ब्रह्मचर्य से नहीं रह सकता, उसे सभी इन्द्रियाँ परेशान करती हैं, विशेष रूप से काम वासना तो काबू में आती ही नहीं। इसलिए इन्द्रिय-निग्रह की तपश्चर्या, संयम-साधना स्वाद को, जिव्हा को वश में करने से आरम्भ की जाती है। चटोरेपन की वेदी पर न केवल आरोग्य और दीर्घ जीवन बलि चढ़ जाता है, वरन् आत्मसंयम की साधना भी मात्र मखौल बनकर रह जाती है।

आरोग्य ही नहीं, मन को वासनासक्त होने से रोकने के लिए भी यह आवश्यक है कि रसनेन्द्रिय पर अंकुश लगाया जाय। इस दृष्टि से नमक या मीठा दोनों में से एक को छोड़ने के रूप में आरम्भिक कदम उठाया जा सकता है। यह एक निराधार भय है कि इन्हें छोड़ देने से स्वास्थ्य खराब हो जायगा। सच तो यह है कि इस संयम से पाचन क्रिया ठीक होती है, रक्त शुद्ध होता है, इन्द्रियाँ सशक्त रहती हैं, तेज बढ़ता है और जीवनकाल बढ़ जाता है। इससे भी बड़ा लाभ यह है कि मन काबू में आता है।

नशेबाजी, अभक्ष्य भक्षण एवं चटोरेपन को रोक देने से वासना पर जो नियंत्रण होता है, वह धीरे-धीरे सभी इन्द्रियों को वश में करने वाला सिद्ध होता है। जिस प्रकार पाँचों ज्ञानेन्द्रियों में जिव्हा और जननेन्द्रिय प्रबल हैं, उसी प्रकार स्वाद के षट्रसों में नमक और मीठा प्रधान हैं। चटपटा, खट्टा, कसैला आदि तो उनके सहायक रस मात्र हैं। इन दो प्रधान रसों पर नियंत्रण कर लेना षट्रसों को त्यागने के बराबर है। जिसने स्वाद और काम प्रवृत्ति को जीता, उसकी इन्द्रियाँ वश में हो गईं, ऐसा ही समझना चाहिए। मन को वश में करने के लिए यह संयम-साधना हर साधक को किसी न किसी रूप में करनी ही होती है।

अन्तर्जगत का प्रबलतम पुरुषार्थ

संयमी और सदाचारी ही प्राणवान, शक्तिवान, स्वस्थ एवं संस्कारी बनते तथा भौतिक और आध्यात्मिक आनन्द की उपलब्धि कर सकते हैं। ओजस्वी, तेजस्वी एवं मनस्वी होने का अर्थ है—मन, वचन तथा कर्म से सभी इन्द्रियों पर नियंत्रण रखना। ब्रह्मचर्य इसे ही कहा जाता है। इसका पालन न तो कठिन है और न ही असंभव। आवश्यकता मात्र ऊर्ध्वरेता बनने और ऊँचा उठने की आकांक्षा की है। इस सम्बन्ध में महात्मा गाँधी का कहना है कि आत्म-संयम की साधना करने वाले को सर्वप्रथम अपनी रसना को वश में रखना अनिवार्य है। इसके लिए स्वाद नियंत्रण परमावश्यक है। उनके अनुसार जो रसना अर्थात् जीभ के स्वाद पर विजय नहीं प्राप्त कर सकता, वह विषय-वासनाओं पर भी विजय नहीं प्राप्त कर सकेगा। इसलिए ब्रह्मचर्य पर जिनकी आस्था है, उन्हें अस्वादव्रत लेना चाहिए और सात्विक आहार भूख से कम खाना चाहिए।

आहारशास्त्रियों एवं मनोचिकित्सा विज्ञानियों का कहना है कि उत्तेजना पैदा करने और वासना को भड़काने वाले कारणों में आहार एक प्रमुख कारण है। इस सम्बन्ध में जर्मनी के मूर्धन्य मनोविज्ञानी **डॉ. कैलाग** ने गहन अनुसंधान किया है और निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए अपनी कृति—''प्लेन फैक्ट्स'' में लिखा है कि प्रायः यह आम मान्यता है कि आहार एक साधारण सी वस्तु है, किन्तु यह सबसे बड़ी भ्रान्ति है। वस्तुतः मनुष्य जैसा भी, जो कुछ भी, भक्ष्य-अभक्ष्य स्वादवश या पोषण हेतु खाता है, उसका सीधा असर उसके मन पर पड़ता है। मन का पोषण खाद्य वस्तुओं के सूक्ष्म प्राण का अवशोषण करने पर होता है। उनकी दूषणता या सात्विकता के अनुरूप ही मन की चंचलता या स्थिरता निर्भर करती है। शरीरक्रिया विज्ञानियों ने भी अब इस तथ्य की पुष्टि कर दी है कि हमारे विचार खाद्य वस्तुओं के अनुरूप ही बनते-बिगड़ते रहते हैं। जो व्यक्ति सुरापान करते, माँस-मछली भक्षण करते अथवा धूम्रपान करते हैं, उनके लिए अपने विचारों को पवित्र रख सकना तथा इन्द्रिय निग्रह कर सकना आसमान में बिना पंख के विचरण करने की आशा करने के समान है। यदि वह पवित्र जीवन व्यतीत कर सकें तो एक चमत्कार होगा, किन्तु मानसिक पवित्रता रख सकना तो उनके लिए सर्वथा असंभव ही होगा।

इसी तरह का शोधपूर्ण निष्कर्ष **डॉ. आर्थर कोवेन** का है। अपनी पुस्तक—''**साइन्स ऑफ न्यू लाइफ**'' में उनने लिखा है कि ''काम वासना को उत्पन्न करने के कारणों में दूषित आहार मुख्य है। यह कल्पना करना कि खान-पान में माँस, मदिरा, अण्डा, बीड़ी-सिगरेट, मिर्च-मसाला, अचार, खटाई, मिठाई और चाय-कॉफी आदि का स्वाद जिव्हा चखती रहे और व्यक्ति कामुकता से बचा रहे, एक असंभव कल्पना है।'' यदि इस तरह का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आहार आसमान के फरिश्ते को भी दिया जायगा, तो उसे खाने से उसमें भी वासना-विकृति उत्पन्न हुए बिना न रहेगी, फिर सामान्य मनुष्य का तो कहना ही क्या, जिसमें हजारों कुसंस्कार पहले से ही विद्यमान हों। ऐसे में न तो इन्द्रिय संयम सध सकता है, न मानसिक नियंत्रण में दृढ़ता आ सकती है। कामुकता से जीवन रस तथा स्नायुशक्ति दोनों का ह्रास होता है और अनेकानेक शारीरिक-मानसिक उपद्रव उठ खड़े होते हैं।

अपनी वासनाओं पर काबू रखना, उन्हें कुमार्ग पर न जाने देना मनुष्य के शौर्य, पराक्रम एवं पुरुषार्थ का प्रधान चिन्ह है। मनःक्षेत्र में कुहराम मचाने वाली उत्तेजनाएँ, आवेश, असंतुलन एवं विकार इन्द्रियों के असंयम के ही परिणाम होते हैं। जब तक स्वाद या चटोरेपन के वशीभूत होकर स्वादेन्द्रिय पेट पर अत्याचार करती रहेगी, तब तक इन विकारों से छुटकारा पाना संभव नहीं।

वस्तुतः आहार का, खान-पान का उद्देश्य शरीर रूपी इंजन को सुचारू रूप से गतिशील रखने के लिए पर्याप्त ईंधन प्रदान करना है, न कि स्वादेन्द्रिय की कभी न पूरी हो सकने वाली इच्छापूर्ति, जैसा कि वर्तमान में प्रचलन है। भोजन को आवश्यकता से अधिक महत्त्व देना तथा स्वादपूर्ण आहार का सेवन करने को बिनोवा ने एक प्रकार की हिंसा कहा है। उनका यह कथन सर्वथा उचित भी है, क्योंकि खाद्य पदार्थों में कृत्रिम रस पैदा करना अंततः शरीर व मन को उत्तेजित करना है। ये विकार ही हिंसा को उत्पन्न करते या वासना को भड़काते हैं। स्वाद-नियन्त्रण की उपलब्धियों के बारे में विवेकानंद का कहना है "मैंने अपने सोने और खाने पर इच्छित नियन्त्रण रखा है। इसी आधार पर मैं अपना मनोबल, पराक्रम और धैर्य विकसित कर सका। इन्द्रिय संयम अर्थात् ब्रह्मचर्य पालन के लाभों में यह लाभ भी सम्मिलित है।

मन को वश में करने तथा कामेन्द्रियों सहित अन्यान्य इन्द्रियों को नियंत्रित रखने—निग्रहीत करने के लिए स्वादेन्द्रिय की संयम साधना हर साधक को किसी न किसी रूप में करनी ही चाहिए, इस दिशा में एक कदम उठना ही चाहिए, भले ही वह आरंभ में अस्वाद व्रत के रूप में ही क्यों न हो। वस्तुतः अस्वाद व्रत अपने आप में एक महाव्रत है। महात्मा गाँधी ने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है और अपने सप्तमहाव्रतों में इसे प्रमुख स्थान दिया है। यह एक ऐसा महाव्रत है, जिसे उन्होंने स्वयं एवं बिनोवा जैसे अनेकों महामानवों ने अपनाया और उस आधार पर अपने आहार-विहार को उत्तरोत्तर शुद्ध-सात्विक बनाते हुए साधना-पथ पर आगे बढ़े और अभीष्ट लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हुए। सप्ताह में एक दिन भी इसे पालन किया जाय, तो मन की संयम शक्ति और दृढ़ता बढ़ती है। यह बढ़ोत्तरी धीरे-धीरे मनुष्य में उन गुणों का भी विकास कर देती है, जो महापुरुषों-महामानवों में होने ही चाहिए।

शक्ति का स्रोत हमारे अन्दर है

आज जैसी भी कुछ हमारी स्थिति है, वह सब हमारी मानसिक स्थिति का परिणाम है। मन कर्त्ता है। संसार की सम्पूर्ण बाह्य रचना की शक्ति और आधार मन है। हमारा आहार, रहन-सहन, चाल-चलन, व्यवहार-विचार, शिक्षा-समुन्नति यह सारी बातें हमारी मानसिक दशा के अनुरूप ही होती हैं। जैसा कुछ चिन्तन करते हैं, विचार करते हैं, वैसे ही क्रिया-कलाप भी होते हैं और तदनुसार वैसे ही अच्छे-बुरे कर्म भी बन पड़ते हैं। सुख और दुःख, बन्धन और मुक्ति चूँकि इन्हीं कर्मों का परिणाम है, इसलिये हमारे उद्धार और पतन का कारण भी हमारा मन ही है।

कोई भी बड़ा कार्य, श्रेष्ठ सत्कर्म या उन्नति करनी हो तो उसके अनुरूप मानसिक शक्ति की ही आराधना करनी पड़ेगी। मन की शक्तियों को यत्नपूर्वक उस दिशा में प्रवृत्त करना पड़ेगा। जो लोग यह कहते रहते हैं कि "क्या करें हमारा तो मन ही नहीं मानता" उन्हें यह जानना चाहिये कि मानसिक शक्तियाँ सर्वथा स्वच्छन्द नहीं हैं। मन इच्छाशक्ति के अधीन है। इच्छाओं के आकार-प्रकार पर उनकी क्रिया शक्ति सम्भावित है। एक व्यक्ति उच्च शिक्षा प्राप्त कर लेता है दूसरा निम्न कक्षाओं से ही अध्ययन छोड़ बैठता है, एक धनी है दूसरा निर्धन, एक डाक्टर है दूसरा वकील, जिसकी जो स्थिति है वह उसकी इच्छा के फलस्वरूप ही है। यदि किसी को अनिच्छापूर्वक किसी स्थिति में रहना पड़ रहा है तो इससे एक ही अर्थ निकाला जायेगा कि उस व्यक्ति ने इच्छाओं के अनुरूप कार्य शक्ति में मन को प्रयुक्त नहीं किया। जिसकी मानसिक शक्तियाँ विशृंखलित रहेंगी वह न तो कोई सफलता ही प्राप्त कर सकेगा और न ही उसकी कोई इच्छा पूर्ण होगी।

असफलता या दुर्भाग्य केवल मनोबल की कमी का ही परिणाम है। यत्न करते हुये थोड़ी सी परेशानी ही प्रयत्न से विचलित कर देने के लिये काफी होती है। थोड़ा-सा शारीरिक दबाव, धन हानि, व्यापार में घाटा, शिक्षा में अनुत्तीर्णता जैसी निराशाजनक घटनाएँ आईं कि प्रयत्न छोड़ बैठे। यह घटिया मनोबल का लक्षण है कि मनुष्य अल्प श्रम से अधिक परिणाम प्राप्त करना चाहे। इच्छाओं का आकार-प्रकार जितना बड़ा है उतने ही बड़े प्रयत्नों की अपेक्षा की जाती है। यदि उतने प्रयत्न न किये जा सके, तो सफलता संदिग्ध ही बनी रहेगी।

विद्यार्थी परीक्षा उत्तीर्ण करने की दृष्टि से अध्ययन करते हैं। फीस के लिये पैसे जुटाते हैं, समय लगाते हैं, सभी शारीरिक सुख त्यागकर अध्ययन में लगे रहते हैं। कदाचित् परीक्षा में ऐसा कोई विद्यार्थी फेल ही हो जाय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो यह नहीं समझना चाहिये कि अपना श्रम, धन और समय व्यर्थ चला गया। परीक्षा में उत्तीर्ण होने का प्रमाण-पत्र नहीं मिला, यह बात महत्त्वपूर्ण नहीं है। मन के महत्त्व का प्रश्न है। महत्त्व इस बात का है कि उस शिक्षा से बौद्धिक बल बढ़ा, विचार शक्ति आई और अनेक उलझनों को सुलझाने की महत्त्वपूर्ण सामर्थ्य प्राप्त हुई या नहीं ? प्रमाणपत्र इन्हीं बातों की गारन्टी का ही नाम तो है जो यदि न भी मिले तो यह नहीं समझना चाहिये कि हमारा प्रयत्न निष्फल चला गया।

परिस्थितियाँ यदि प्रतिकूल हैं तो भी साधनों का उपयोग करते रहना चाहिये। थोड़ी-सी पूँजी से बढ़कर उच्च-स्तर के व्यापार तक पहुँचा जा सकता है, किन्तु मानसिक शक्ति अपने साथ बनी रहनी चाहिये। कार्य करते समय ऊबो नहीं और उत्तेजित भी न हो। यह समझ लें कि हमें तो लक्ष्य तक पहुँचना है। जितनी बार गिरो, उतनी बार उठो। एक बार गिरने में उसका कारण मालूम पड़ जायेगा तो दुबारा उधर से सावधान हो जाओगे। यह स्थिति निरन्तर चलती रहे तो अनेक बाधाओं के रहते हुए भी अपने लिये उन्नति का मार्ग निकाला जा सकता है। हार मन के हारने से होती है। मन यदि बलवान है तो इच्छा-पूर्ति भी अधिक सुनिश्चित समझनी चाहिये।

आज यदि स्थिति ठीक नहीं है तो भविष्य में भी वह ऐसी ही बनी रहेगी, ऐसा कमजोर बनाने वाला विचार अपने मस्तिष्क से निकाल दें। श्रेष्ठता अन्दर सुप्तावस्था में पड़ी हुई है। इसमें संशय नहीं कि हम हर आवश्यकता अपने आप पूरी कर सकते हैं। पर इसके लिये सतत अभ्यास की आवश्यकता है। अपना उद्योग बन्द न करें। अकर्मण्यता और आलस्य का, अधीरता और प्रयत्नहीनता का साथ छोड़कर **''यत्न देवो भव''** की उपासना आरम्भ कर दोगे तो पुरुषार्थ का देवता ही अपने लिये अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न कर देगा। काम करने में शिथिलता न व्यक्त करें, ढिलाई न करें, चिन्तित न हों। आत्म-विश्वास न खोओ। धैर्य के साथ 'यत्न' देव का आश्रय पकड़े रहें तो यह निश्चय है कि आज की यह दीन-हीन अवस्था कल श्री-सम्पन्न अवस्था में बदलकर रहेगी।

ऊँची से ऊँची इमारत की नींव भी नीचे ही रखी होती है। ऊँचे उठने का शुभारम्भ निचली पृष्ठभूमि से किया जाता है। निर्धन धनकुबेर होते हैं। पहलवान कोई माँ के पेट से बनकर नहीं आता। उसके लिये तो विधिवत उपासना करनी पड़ती है।

यह ठीक है कि आज अपनी दशा अच्छी नहीं, कोई विशेष गुण भी दिखाई नहीं देता फिर भी निराशा का कोई कारण नहीं। एक शक्ति अभी भी अपने पास है और वह अन्त तक पास रहेगी। वह है—मन। मन की शक्ति को सम्पादन करने का तरीका जानने का प्रयत्न करें। छोटे-छोटे कामों में मनोयोग का प्रयोग किया करें। एक दिन मनोबल इतना बढ़ जायेगा जब ऊँचे से भी ऊँचा कार्य करने में भी हिचक नहीं होगी और उत्साहपूर्वक, दृढ़तापूर्वक सफलता की मंजिलें पार करते हुये आगे बढ़ सकेंगे। श्रेष्ठतायें अन्दर छिपी पड़ी हैं, उनका समर्थन और अभिवर्धन करें, दूसरों की ओर देखें वे किस तरह आगे बढ़े हैं। दूसरों से उदाहरण लें कि उन्होंने कैसे सफलतायें पाई हैं। बिना हाथ-पाँव डुलाये किसी के भाग्यदेवता ने साथ नहीं दिया। चुपचाप बैठे रहेंगे तो उन्नति का अवसर पास से गुजरकर चला जायेगा, आपको केवल हाथ मसलकर रह जाना पड़ेगा।

आत्म-संयम करें, इससे बिखरा हुआ मानसिक संस्थान जगेगा। निश्चेष्ट मनुष्य इसलिये होता है कि उस की शक्तियाँ इधर-उधर बिखरी हुई होती हैं। मामूली सी शक्ति से कोई काम भी नहीं बनता। बिखरी हुई सूर्य की किरणें सारे शरीर पर असंख्य मात्रा में गिरती हैं तो भी उससे कुछ विशेष हलचल उत्पन्न नहीं होती पर यदि एक-डेढ़ इंच जगह की किरणों को आतिशी शीशे से एक जगह पर एकत्रित कर दिया जाय तो इससे दावानल का रूप धारण कर एकता की क्षमता से सम्पन्न आग पैदा हो जायेगी। हम अपनी शक्तियों को इधर-उधर के, बेकार के कार्यों में खर्च करते रहते हैं जिससे जीवन में कोई विशेषता नहीं बन पाती। आत्म-संयम से बिखरी हुई शक्तियाँ एक स्थान पर एकत्रित होकर अभीष्ट परिणाम के लिये उपयुक्त वातावरण तैयार करती हैं। मन की सूक्ष्म शक्तियों का जागरण आत्म-संयम से होता है।

किसी समय भारतवर्ष ने मन का, शक्तियों का सम्पादन करके अनेकों आश्चर्यजनक शक्तियाँ और सिद्धियाँ प्राप्त की थीं। एकाग्रता के अभ्यास द्वारा यह सम्भावनायें अब भी जाग्रत की जा सकती हैं। इसके लिये अपने आपको गति देने की आवश्यकता है, जी-तोड़ परिश्रम करने की आवश्यकता है, प्रयत्न पर प्रयत्न करने की जरूरत है। हमारे भीतर जो सिद्धियाँ बिखरी हुई पड़ी हैं, उन्हें कार्य क्षेत्र में लगाने भर की देर है, बस हमारी यह विषम परिस्थितियाँ अधिक दिनों तक ठहरने वाली नहीं हैं।

उन्नति के लिये चाहे कितने ही व्यक्ति सहानुभूति व्यक्त क्यों न करें पर यह निर्विवाद है कि हमारा इससे कुछ काम न चलेगा। हमें अपनी स्थिति स्वयं सुधारनी होगी, स्वयं कठिनाइयों से लड़कर नया निर्माण करना पड़ेगा, विशृंखलित शक्तियों को जुटाकर आगे बढ़ने का कार्यक्रम बनाना पड़ेगा। यह बात यदि समझ में आ जाय तो सफलता की आधी मंजिल तय कर ली, ऐसा समझना चाहिये। शेष आधे के लिये मनोबल जुटाकर यत्नपूर्वक आगे बढ़िये, आपका सौभाग्य आपके मंगल-मिलन के लिये प्रतीक्षा कर रहा है, स्वागत के लिये आगे खड़ा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्ति का स्रोत संघर्ष ही तो है

प्रगति के लिए शक्ति की आवश्यकता है। शक्ति ही वह तत्व है जिसके आधार पर सुख-सुविधा और साधन-सामग्री उत्पन्न होती है। अशक्त वस्तु या व्यक्ति को कूड़ा समझा जाता है और प्रकृति की व्यवस्था उसे जल्दी ही नष्ट करने की तैयारी करती है। शरीर जब तक सशक्त है तब तक उसे प्रतिष्ठा, प्रशंसा, प्यार और सहयोग प्राप्त होता है। बीमारी या कमजोरी की स्थिति में आन्तरिक कष्ट और बाहरी दुर्व्यवहार भुगतना पड़ता है। यह शरीर यदि और भी अधिक अशक्त होकर मृतक बन जाय तो परिजन उसे जल्दी ही जलाने, गाढ़ने, बहाने आदि की तैयारी करते हैं। यदि वे देर करें तो उस मृत शरीर में स्वयं ही सड़न पैदा हो जाती है और कीड़े उत्पन्न होकर उसे समाप्त कर देते हैं। जंगलों में पड़े हुए मृत शरीर गिद्ध, कौए , सियार, कुत्तों के आहार बन जाते हैं।

जिस सबल शरीर के द्वारा सिंह का शिकार किया जाता था, खेल प्रतियोगिता में पुरुस्कार मिलता था, रूप और यौवन में भारी आकर्षण रहता था, उपार्जन के सभी द्वार खुले रहते थे, वही शरीर अशक्त होने पर अपनी इन सब विशेषताओं को खो बैठता है और देखने वालों की दृष्टि में कुरूप, दीन, दयनीय बन जाता है, लोग उससे बचने और पीछा छुड़ाने की बात सोचने लगते हैं। जो वस्तुएँ पुरानी हो जाती हैं, सड़-गल जाती हैं, निकम्मी और शक्तिहीन हो जाती हैं वे कूड़े-कवाड़ में फेंकी जाती हैं और उन्हें नष्ट करके उनसे कुछ नया बनाने का विचार किया जाता है। वृद्धावस्था होने पर मौत भी इसी उद्देश्य से आती है।

जीवन और उपयोगिता बनाये रहने के लिए हमें शक्ति का संचय करना और बढ़ाना आवश्यक है। जो जितना शक्तिशाली है, वह उतना ही लाभान्वित रहेगा। जो कुछ हम चाहते हैं उस आकांक्षा की पूर्ति की समस्या सामने आते ही सबसे पहला प्रश्न यह उठता है कि क्या उसके लिए आवश्यक शक्ति हमारे पास है ? यदि अशक्तता छाई हुई हो तो उन्नति की बात तो दूर, सुरक्षा भी संदिग्ध हो जाती है।

अशक्त व्यक्तियों से उनकी कमाई या उचित अधिकार की वस्तु को भी चोर-लुच्चे हथिया लेते हैं। अपने अस्तित्व को बनाये रहना भी दुर्बलों के लिए कठिन होता है। लोमड़ी, खरगोश, मुर्गी, कबूतर, मछली जैसे स्वल्प सामर्थ्य वाले जीव दूसरे हिंसकों द्वारा आये दिन संत्रस्त किये जाते हैं। प्रचंड अग्नि के लिए तेज चलती हुई हवा सहायक होती है, उसकी प्रचंडता को बढ़ाती है। वही हवा बेचारे कमजोर दीपक की लौ बुझा देने की हरकत करने में नहीं चूकती। इस संसार का ऐसा ही विचित्र विधान बना हुआ है।

परमात्मा भी उनकी सहायता करता है जो अपनी सहायता आप करते हैं। प्राचीन इतिहास-पुराणों में अगणित सिद्ध योगियों और ईश्वर भक्तों के आत्म-बल की कथाएँ हम पढ़ते हैं तो परमात्मा की महानता और करुणा पर बड़ी प्रसन्नता होती है। पर जब यह सोचते हैं कि किसी-किसी को ही विशेष कृपा पात्र परमात्मा ने क्यों बनाया और उन्हें ही विशेष अनुग्रह एवं वरदान प्रदान करने का पक्षपात क्यों किया ? तो उसका उत्तर भी सहज ही मिल जाता है। तपस्वियों ने अपने तप, पुरुषार्थ से आत्म-बल एकत्रित करके परमात्मा को वह कृपा प्रदान करने के लिए विवश ही किया है, उसमें ईश्वर की करुणा की जितनी प्रशंसा है, उतनी ही भक्त के पुरुषार्थ की भी है। पुरुषार्थ को आधार और वरदान को उसका प्रतिफल माना गया है। न्याय और निष्पक्षता का तकाजा भी यही है। ईश्वर अपने आपको अन्यायी और पक्षपाती कहलाने वाले काम नहीं कर सकता, उसकी प्रत्येक क्रिया सिद्धान्त और मर्यादाओं के अनुरूप ही होती है।

प्रकृति इस संसार में सब कुछ स्वस्थ, सुन्दर, समर्थ और समुन्नत देखना चाहती है। उसमें जहाँ भी कमी आती है वहीं वह असुन्दर चीज को मिटाकर नई सुन्दर चीज फिर बनाने का प्रयत्न आरम्भ कर देती है। कुम्हार कई तरह के बर्तन और खिलौने बनाता रहता है। उसमें से कुछ कुरूप और दोषयुक्त भी बन जाते हैं। कुम्हार उन्हें तोड़ डालता है और उसी मिट्टी से दूसरी अच्छी चीज बनाता है। प्रकृति भी यही करती रहती है। अशक्तता अपनाकर जिन्होंने अपना जीवन कुरूप बना डाला है, उनके नष्ट होने में ही उसे अच्छाई दीखती है। "दैव को दुर्बल का घातक" बताकर शास्त्रकारों ने एक कटु सत्य का ही उद्घाटन किया है।

ईश्वरीय सहायता हर किसी को मिलती है, मिल सकती है पर उसका नियम वही है जो विद्यालयों में छात्रवृत्ति पाने वाले छात्रों पर लागू होता है। जो अच्छे नम्बरों से उत्तीर्ण होते हैं, अपने प्रबल पुरुषार्थ का परिचय देते हैं, उन्हें आगे बढ़ाने के लिए छात्र-वृत्तियाँ मिलती हैं। सरकार भी और दानी व्यक्ति भी इसी आधार पर अपनी सहायता का हाथ बढ़ाते हैं। जो छात्र अपनी श्रमशीलता का परिचय नहीं दे पाते, फेल होते या फिसड्डी रहते हैं, उन्हें छात्र-वृत्ति देने में क्या अधिकारी, क्या दानी सभी अपनी सहायता का दुरुपयोग होता हुआ सोचते हैं और उस प्रकार के छात्रों को निराश रहना पड़ता है। इस कटु सत्य को हम अपने चारों ओर फैला हुआ देख सकते हैं। प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक पदार्थ इस बात का साक्षी है कि शक्ति जब तक मौजूद है तब तक उसके लिए यह दुनिया स्वर्ग के समान सुखदायक है, पर जैसे ही उसमें न्यूनता आने लगती है वैसे ही स्थिति बदलने लगती है, सुख के उपकरण ही दुखदायक बन जाते हैं। यहाँ तक कि जिस शरीर को इतने प्यार, मनोयोग से पाला था, वह भी पीड़ा और परेशानी उत्पन्न करने लगता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्ति की उत्पत्ति अवरोध से होती है। नदी में जल का प्रबल प्रवाह बहता रहता है, वह अपने क्रम से चलता रहता है और समुद्र में अपना अस्तित्व समाप्त कर देता है पर उस प्रवाह को कहीं रोका जाय तो अवरुद्ध स्थान पर शक्ति का उद्भव होने लगता है। गंगोत्री और उत्तरकाशी के बीच गंगा की मध्य-धारा में पत्थर की बड़ी-बड़ी चट्टानें पड़ी हैं। इन चट्टानों से जहाँ जल-प्रवाह टकराता है वहाँ पानी भयानक रीति से उफनता है, भारी शब्द करता है और तीस-तीस फुट ऊँचे छींटे उछालता है, उस दृश्य को देखने मात्र से डर लगने लगता है। यदि वे चट्टानें हटा दी जायँ तो प्रवाह साधारण रीति से बहने लगेगा और उस भयानक शक्ति-उद्भव का दृश्य सहज ही समाप्त हो जायेगा।

धनुष की डोरी जब तनती है, तब उसमें तीर को दूर फेंकने की शक्ति आती है। यदि वह डोरी ढीली पड़ी रहे तो उससे तीर फेंकने का काम जरा भी न हो सकेगा। मन के अस्त-व्यस्त प्रवाह को एकाग्रतापूर्वक रोककर एक दिशा में लगाने वाले साधक उसकी महान शक्ति से महत्त्वपूर्ण प्रयोजन सिद्ध करते हैं। वैज्ञानिकों से लेकर योगियों तक ने अब तक अगणित सिद्धियाँ प्राप्त की हैं। उन सबका श्रेय मन को रोककर एक दिशा में लगाये रहने की सफलता में ही सन्निहित है। काम-वासना का दमन करके ब्रह्मचर्य से रहने वाले लोग शरीर, मन और आत्मा की तेजस्विता प्राप्त करते हैं। लोभ और मोह को ठुकराकर आदर्शवाद का मार्ग अपनाने वाले महापुरुषों का ही नाम अमर होता है। लालसा और वासना के सामान्य क्रम में बढ़ते रहने वाले लोग किसी प्रकार जिन्दगी काट तो लेते हैं, पर उन्हें उसका वास्तविक लाभ नहीं मिल पाता।

प्राचीनकाल में बालकों को गुरुकुलों में रहकर कष्टसाध्य जीवन का अभ्यास करते हुए शिक्षा प्राप्त करने की व्यवस्था रहती थी। कठोरता से टकराकर विकसित होने वाले बालकों का शौर्य और साहस बिखरता था। अमीरी के वातावरण में पलने वाले लड़के तो विलासी और लुंज-पुंज ही बन सकते हैं। जीवन-संघर्ष में लड़ने की जब बारी आती है तो उनकी सुकोमलता उन्हें असफलता, निराशा और पराजय ही प्रस्तुत करती है।

चट्टानों पर उगने वाले देवदारु के विशाल वृक्ष बहुत ऊँचे बढ़ते हैं और ऋतु प्रतिकूलता की परवाह न करते हुए हिम-प्रदेशों में दीर्घकाल तक जीवित रहते हैं, पर बगीचों में पलने वाली सुकुमार फुलवारी जरा सी सर्दी-गर्मी में अपना अस्तित्व खो बैठती है। पहलवानी का श्रेय उसे मिलता है, जो सदा अखाड़ों की मिट्टी से अपने बदन को घिसता रहता है। पत्थर पर रगड़ खाये बिना हथियारों की धार तेज कहाँ होती है ?

शक्ति संचय में जीवन की प्रखरता इसीलिए है कि उसमें अवरोध की प्रतिक्रिया द्वारा उत्पन्न हुई तेजस्विता भरी रहती है। बिजली की उत्पत्ति रगड़ से ही तो होती है। संघर्ष का ही नाम जीवन है। जहाँ सक्रियता समाप्त हुई कि जीवन का भी अन्त हो जाता है। आलसी और अकर्मण्य मनुष्यों की गणना अर्ध मृतकों में होती है। पूर्ण मृतक तो उन्हें इसलिए नहीं कह सकते कि खाते, पीते, बोलते-चालते, चलते-फिरते आदमी को श्मशान या कब्रिस्तान नहीं ले जाया सकता। पर साथ ही उन्हें जीवित कहना भी कठिन है। क्योंकि जीवन का अर्थ है—संघर्ष-पुरुषार्थ। जिसने पुरुषार्थ करने से इन्कार कर दिया, वह जीवन के प्रति आस्था ही खो बैठा। ऐसे लोगों को भी यदि जीवित कहा जाय तो यह जीवनतत्त्व का उपहास ही माना जायेगा।

जीवन को शक्तिशाली बनाने की आवश्यकता हमें भली प्रकार समझ लेनी चाहिए और यह भी जान लेना चाहिए कि शक्ति का स्रोत संघर्ष ही है। ढर्रे पर लुढ़कने वाला, चैन की जिन्दगी काटने का कार्यक्रम मौत के दिन पूरे करते रहने में तो सहायक हो सकता है पर इस मार्ग में हर दृष्टि से मनुष्य को खाली हाथ ही रहना पड़ता है। श्रम किये बिना सम्पत्ति कहाँ ? पढ़े बिना विद्या कैसी ? संयम बिना स्वास्थ्य कैसा ? तप किये बिना वरदान कैसे ? तत्परता से ही तो प्रसुप्त शक्तियों का जागरण होता है और जाग्रत शक्तियाँ ही तो विभूतियों के रूप में, ऋद्धि-सिद्धियों के रूप में सामने आती हैं।

आत्मविश्वास की शक्ति

जीवन के सभी क्षेत्रों में सफल होने के लिए आत्मविश्वास की आवश्यकता होती है। अच्छे से अच्छा तैराक भी आत्मविश्वास के अभाव में किसी नदी को पार नहीं कर सकता। वह बीच में ही फँस जायेगा, नदी के प्रवाह में बह जायेगा अथवा हाथ-पैर पटककर वापिस लौट आयेगा। यही बात भव-सागर पार करने में भी लागू होती है। जीवन में अनेकों कठिनाइयाँ, उलझनें, अप्रिय परिस्थितियाँ आती रहती हैं। इन झंझावातों में कठोर चट्टान की तरह अपनी राह पर अडिग रहने के लिए आत्मविश्वास की आवश्यकता होती है।

लक्ष्य जितना बड़ा होगा, मार्ग भी उतना ही लम्बा होगा और अवरोध भी उतने ही अधिक आयेंगे, इसलिए उतने ही प्रबल आत्मविश्वास की आवश्यकता होगी। संसार भी आत्मविश्वासी का समर्थन करता है। आत्म-विश्वास चेहरे पर वह आकर्षण बनकर फूट पड़ता है जिससे पराये भी अपने बन जाते हैं। अनजान भी हमराही की तरह साथ देते हैं। विपरीत परिस्थितियाँ भी आत्मविश्वासी के लिए अनुकूल परिणाम प्रदान करती हैं।

आत्मविश्वास का मूल स्वरूप है—आत्म-सत्ता पर विश्वास करना। जिसे अपनी आत्मा की अजेय शक्ति, महानता पर विश्वास है, जो अपने जीवन की सार्थकता, महत्ता, महानता स्वीकार करता है उसी में आत्मविश्वास

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का स्रोत उमड़ पड़ता है और वही जीवन-पथ के अवरोधों, कठिनाइयों को चीरता हुआ, राह के रोड़ों को धकेलता हुआ, अपना मार्ग स्वयं निकाल लेता है। प्रकृति आत्मविश्वासी पुरुष का साथ देती है, अपने नियमों का व्यतिरेक करके भी।

अपने आपको तुच्छ, अनावश्यक समझने वाले संसार सागर में तिनके की तरह कभी इधर, कभी उधर थपेड़े खाते हैं। जिन्हें अपनी आत्म-सत्ता, अपने महान अस्तित्व का बोध नहीं, उन्हें जीवन के समरांगण में हारना पड़े तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। जो अपने आपको तुच्छ और अनावश्यक समझते हैं, उन्हें दूसरे कैसे आवश्यक और महत्वपूर्ण समझ सकते हैं ? आत्मविश्वास के अभाव में सन्देह, भय, चिन्ता आदि मनोविकार पनप उठते हैं और तब दूसरों का विश्वास, आत्मीयता, सहानुभूति भी प्राप्त नहीं होती।

मनुष्य जैसा अपने आपको समझेगा, उसका व्यक्तित्व, आत्मिक स्तर भी वैसा ही बनेगा। अच्छी शिक्षा, साधन, सम्पत्ति पाकर भी मनुष्य आत्मविश्वास के अभाव में तुच्छता एवं हीनता का अनुभव करते हैं और जीवन में कोई विशेष सफलता अर्जित नहीं कर पाते। वे जीवन की घिसी-पिटी राह पर , परिस्थितियों के थपेड़े खाते, रोते-झींकते अपने दिन गुजार देते हैं। साधन-सुविधा एवं सम्पन्नता पाकर भी वे कष्टकारक जीवन बिताते हैं, किन्तु आत्म विश्वासी सामान्य परिस्थितियों में ही खड़ा होकर जीवन में उत्कर्ष प्राप्त करता है।

नेपोलियन की सेना आगे बढ़ रही थी। मार्ग में आल्पस पर्वत पड़ा। सिपाही रुक गये। सेनापति ने नेपोलियन को सूचना दी, इस पर नेपोलियन ने मुस्कराते हुए कहा "सेनापति ! कोई बात नहीं, आल्पस हमारा रास्ता रोकता है, तो आल्पस नहीं रहेगा।" और उस दुर्गम पर्वत को काट-छाँटकर सेना के लिए रास्ता बना लिया गया। यह आत्मविश्वास का चमत्कार है। दुनियाँ में जो कुछ महत्त्वपूर्ण बातें दिखाई पड़ती हैं, उनकी नींव मनुष्य के प्रबल आत्मविश्वास पर रखी गई थीं। नेपोलियन की विजय में प्रमुख हाथ था, उसके आत्म-विश्वास का। वह बड़े ही विश्वास के साथ कहता था "वह गोली अभी नहीं बनी है जो नेपोलियन को मारेगी।" और एक-एक युद्ध में उसे विजय भी मिलती गई। इसका इतिहास साक्षी है। आत्मविश्वास की धरती में से ही पुरुषार्थ का अंकुर फूट निकलता है और पुरुषार्थी ही **"वीर भोग्या वसुन्धरा"** पर स्वर्गीय जीवन का सृजन करता है। अपने आपको दीन, हीन, मलिन, पतित समझने वाले धरती पर बोझ ही बढ़ा सकते हैं, वे ही इस "स्वर्गादपि गरीयसी" धरती को नरकतुल्य बना देते हैं।

आत्मविश्वास की ज्योति को जलाने, उसे प्रज्ज्वलित रखने के लिए आन्तरिक स्वाधीनता की आवश्यकता है। जो मनुष्य अपने मानसिक विकार, चिन्ता, भय, क्रोध, सन्देह आदि से ग्रस्त है, वह स्वाधीन नहीं कहला सकता। वह तो परतन्त्र है। उसे ये विकार अपनी इच्छानुसार जहाँ-तहाँ भटकाते हैं। ऐसी परतन्त्रता में आत्मविश्वास का निवास नहीं होता। जो अपने आन्तरिक और बाह्य जीवन पर स्वयं शासन करता है, वही आत्मविश्वास की शक्ति को प्राप्त कर सकता है और इसी से मनुष्य की साधारण शक्तियाँ भी असाधारण बन जाती हैं। लोहे, ताँबे के सामान्य तारों का कोई महत्त्व नहीं होता किन्तु जब उनमें विद्युत प्रवाह बह उठता है तो वे बड़े महत्त्वपूर्ण हो जाते हैं। विद्या, धन, शक्ति, साधन, सम्पत्ति यह कोई महत्त्व नहीं रखते, यदि उनसे चेतना केन्द्र-आत्मविश्वास जाग्रत नहीं होता।

आत्मविश्वास की वृद्धि के लिए उत्तरदायित्वों एवं जिम्मेदारियों का स्वागत कर उन्हें स्वीकार करने की आवश्यकता है। प्रत्येक जिम्मेदारी के लिए पूर्ण लगन और श्रम से कार्य करके उसे सफल बनाने का प्रयत्न करते रहना आवश्यक है। छोटी-छोटी जिम्मेदारियों को पूरा करते ही मनुष्य में आत्मविश्वास की नींव मजबूत होने लगती है। जिस उत्तरदायित्व को ग्रहण करने का अवसर आये, उसे सहर्ष ग्रहण किया जाय। उससे बचने की, घबराने की वृत्ति आत्मविश्वास को नष्ट करती है। विभिन्न जिम्मेदारियों को पूरा करते हुए ही मनुष्य महत्त्वपूर्ण कार्यों को सम्पादन करने की क्षमता और आत्मविश्वास प्राप्त करता है।

जीवन में जो आदर्श निश्चित किए जायँ, जो आकांक्षायें बनायें, उन्हें जी-जान से, तत्परता से पूर्ण करने का प्रयत्न किया जाय। छोटी-छोटी सफलताओं से ही मनुष्य का आत्मविश्वास बढ़ता है। किसी भी क्षेत्र में दृढ़ निश्चय और प्रयत्न से सफलता किसी न किसी मात्रा में अवश्य मिलेगी, जिससे आत्मविश्वास जगेगा। खासकर जिन बातों में मनुष्य को डर, सन्देह, घबराहट महसूस हो, उनमें तो प्रयत्नपूर्वक हाथ डालना आवश्यक है। क्योंकि आत्मविश्वास के ये प्रबल शत्रु हैं। अन्धेरे से डरने वाले यदि प्रयत्नपूर्वक अन्धेरे में जावें तो उनका अन्धेरे का डर दूर हो जाय। जिस काम में हाथ डालने से दुर्बलता के कारण हिचकिचाहट हो, उस काम को अवश्य किया जाय।

जीवन में थोड़ी बहुत गल्तियाँ एवं असफलता होना भी स्वाभाविक है। उनको सदा के लिए भुला देना ही श्रेयस्कर होगा। उनके बारे में अधिक सोच-विचार न किया जाय। पिछली भूलों की उपयोगिता तो इसी में है कि उनसे अनुभव प्राप्त कर भविष्य में वैसा न किया जाय। असफलताओं, पिछली भूलों का चिन्तन करते रहने पर दिनों-दिन आत्मविश्वास ही नष्ट होता है।

आत्मविश्वास की वृद्धि के लिए ईश्वर पर श्रद्धा और निष्ठा रखना एक सरल मार्ग है। ईश्वर पर आस्था

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रखने से उसकी अनन्तता, व्यापकता पर विश्वास रहता है। साथ ही इससे मानसिक विकारों का समाधान होता है और मन को शान्ति मिलती है, जो आत्मविश्वास को जाग्रत करने के लिए आवश्यक तत्व है।

संसार के बड़े-बड़े कार्य आत्मविश्वास से ही सम्पन्न हुए हैं। प्रबल आत्मविश्वास-सम्पन्न लोगों ने ही संसार का नेतृत्व किया है। नया प्रकाश, नया मार्ग दिखाने वाले प्रबल आत्मविश्वासी ही रहे हैं। हमें आत्मविश्वास का महत्त्व समझना चाहिए और उसके लिए निरन्तर प्रयत्न करते रहना चाहिए।

मल्लाह का साहस

आकाश में काली घटायें और पृथ्वी पर जल। इन दो वस्तुओं के अतिरिक्त लगता था धरती-आकाश में कुछ बचा ही नहीं। प्रलय काल का दृश्य प्रस्तुत था।

दमोह जिले का इटावा गाँव व्यारमा नदी के जल से बुरी तरह घिरा हुआ था। बाढ़ बढ़ती ही जा रही थी। पानी उतरने का नाम भी नहीं ले रहा था। जबलपुर और नर्मदा घाटी में अब भी मूसलाधार वर्षा हो रही थी फलस्वरूप बाढ़ का प्रकोप बढ़ता ही जा रहा था।

छोटे गाँव वैसे भी शहर से दूर होते है, उनकी खोज-खबर अधिकारियों को कहाँ होती है, अपनी लाभ-हानि के जिम्मेदार वे स्वयं होते हैं। जो अपनी व्यवस्था आप नहीं कर लेते, वे आये दिन इटावा गाँव की तरह संकट में ही फँसते रहते हैं।

बाढ़ के कारण सड़क से भी सम्बन्ध विच्छेद हो गया। गाँव एक समुद्री टापू बन गया। शाम होते-होते तक पानी घरों में घुसने लगा। लोगों ने अपने डेरे छतों में डाले तो भी बाढ़ थमी नहीं। घरों के बैठ जाने का खतरा पैदा हो गया।

दुनियाँ में ऐसे लोग थोड़े होते हैं जो संकट आ जाने पर अपनी कम दूसरों के हित की चिन्ता अधिक करते हैं। ऐसे जो भी लोग होते हैं, वंश और धन-सम्पत्ति की दृष्टि से वे चाहे कितने ही छोटे क्यों न होते हों, महान होते हैं। एक दिन समाज उनके समक्ष नतमस्तक होता है। न भी हो तो भी कर्त्तव्य-पालन का सुख सैकड़ों सुखों से भी बढ़कर होता है।

जब सब लोगों को अपना-अपना सामान, अपने-अपने बच्चे बचाने की सूझ रही थी, तब गाँव का एक साधारण मल्लाह हरिया अपनी छोटी-सी डोंगी लेकर निकला और उसने लोगों को गाँव से बाहर सुरक्षित स्थानों पर पहुँचाना शुरू कर दिया। सारी रात उसने बोझा ढो-ढोकर लोगों को बाढ़ से घिरी बस्ती से बाहर निकाला।

पौ फट रही थी। अभी भी ५० के लगभग स्त्री पुरुष और बच्चे गाँव में फँसे हुये थे। हरिया थक गया था। डोंगी में छोटा-सा छेद हो गया था। उससे बार-बार पानी भर जाता था। उसे निकालने का परिश्रम नाव चलाने के परिश्रम से अधिक था।

इधर घर गिरने लगे। जो लोग बच रहे थे उनके लिये व्याकुलता बढ़ती जा रही थी और हरिया निष्काम भाव से अपने हाथ-पाँव चलाता उन्हें निकालने में लगा था। नाव ज्यादा बोझ भरने के कारण फट चुकी थी। पानी तेजी से भर रहा था। पर आखिरी खेप तो उसे लानी ही थी। मानवता के प्रति प्यार का सुख प्राप्त करने वाले संकटों में फँसना, मरना और जीना क्या जानें ? उन्हें तो सेवा में आनन्द आता है।

हरिया फिर गाँव की ओर बढ़ा। जितने लोग शेष बचे थे, सबको नाव में बैठाकर वह चल पड़ा।

घर वालों ने, छोटे-छोटे बच्चों ने पकड़ लिया, बोले—हरिया दद्दा ! अब तुम बहुत थक गये हो, नाव भी अब बोझा भरने योग्य नहीं रही। कहीं ऐसा न हो कि इससे पहले कि बच्चे और कुछ कहें, हरिया ने उनका मुँह बन्द कर दिया। उसने सोचा एक व्यक्ति यदि १० की जान बचा सकता है तो उसे बलिदान से भय नहीं खाना चाहिये। मनुष्य परोपकार से अमर बनता है। हरिया पीछे मत हट, आहतों की आवाज सुन, मोह-ममता का परित्याग कर। सारा संसार अपना ही तो है।

हरिया कूद पड़ा। नाव बढ़ चली। पानी भरता गया। बचे हुये लोगों को सुरक्षित बैठा कर हरिया लौट रहा था तभी नाव पानी में धँस गई और फिर कभी वापस नहीं निकली। हरिया ने एक-एक को किनारे पहुँचाया पर स्वयं किनारे नहीं आ पाया। सारा गाँव हरिया के लिये रो रहा था। लोग कह रहे थे—सैकड़ों के प्राण बचाने वाला हरिया डूब गया। पर डूबा कहाँ ? उसने अपने को अमर कर दिया।

प्रतिकूलताओं की चुनौती स्वीकार कीजिये

संसार में ऐसे व्यक्तियों की भी कमी नहीं है जो अपनी हीनावस्था का कारण अपने दुर्भाग्य को बतलाया करते हैं। उनसे बात कीजिये और पूछिये कि भाई, आप जो इस प्रकार विपन्नता में जीवन काट रहे हैं, इसमें आपको संतोष किस प्रकार हो रहा है और इस दशा को बदलने के बजाय हाथ पर हाथ धरे क्यों बैठे हुए हैं ?

इस सहानुभूति के उत्तर में उनका कथन होगा कि—"क्या करें ? हमारा भाग्य ही खराब है। परमात्मा ने हमारे भाग्य में दुःख-दर्द ही लिखे हैं, सो भोग रहे हैं। यदि हमारे भाग्य में सुख-सुविधा होती तो क्या अन्य लोगों की तरह हमारा जन्म भी अमीर अथवा साधन-सम्पन्न घर में नहीं होता ? हम जानते हैं कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हमारा भाग्य खराब है इसलिये कोई उद्योग करना भी बेकार है।''

लोगों का ऐसा निराशापूर्ण उत्तर सुनकर तरस आये बिना नहीं रहता। यह भाग्य एवं भविष्य के ''जानपांडे'' उपाय एवं उद्योग की अपेक्षा विपन्नावस्था में अधिक विश्वास करते हैं। उनका गरीब होना वास्तव में उतना दुर्भाग्यपूर्ण नहीं है जितना कि उनका यह निराशापूर्ण अन्धविश्वास।

कितने आश्चर्य की बात है कि भाग्य के अन्धविश्वासी अपनी दशा बदलने का उपाय किये बिना ही बड़ी आसानी से यह मान लेते हैं कि गरीबी तो उनका प्रारब्ध भोग है। वह किसी उपाय अथवा उद्योग से नहीं बदली जा सकती। इसलिये इसके विरोध में डटकर मोर्चा लेना बेकार है। इस प्रकार के भाग्य-ज्ञाताओं को जरा सोचना चाहिये कि जब तक उन्होंने परिश्रम एवं पुरुषार्थ नहीं किया, तब तक उन्हें यह किस प्रकार पता चल गया कि कोई भी उद्योग सफल न होगा।

हो यह भी सकता है कि उन्होंने उद्योग किया हो और वे असफल रहे हों। किन्तु एक बार की असफलता से घबराकर बैठ रहना और यह मान लेना कि ''उनका भाग्य ही खोटा है, सफलता उन्हें नहीं मिल सकती'', कोई अर्थ नहीं रखता। उद्योग का अर्थ है, बार-बार उपाय करना, निरन्तर एवं नितान्त परिश्रम करना, अपने काम में तब तक जुटे रहना जब तक उद्देश्य पूरा न हो जाये। मैदान में उतरे और जरा-सी कठिनाई देखते ही भाग खड़े हुए और मान लिया कि सफलता उनके भाग्य में ही नहीं है। परिश्रम एवं पुरुषार्थ करना निरर्थक है, मनुष्यता नहीं कही जा सकती। उपाय एवं उद्योग एक बार में ही सफल नहीं होता, उसके लिए बार-बार प्रयत्न करना होता है।

यदि निराश व्यक्ति बार-बार प्रयत्न करने की बात कहता है तो या तो उसका कथन विश्वास के योग्य नहीं है अथवा उसके प्रयत्न के समानान्तर यह अविश्वास अवश्य चलता रहा होगा कि 'उसका भाग्य खोटा है,। उसका प्रयत्न सफल नहीं होता।' निश्चय ही उसकी बार-बार की असफलता में उसकी यह भावना हेतु रही है। अन्यथा कोई कारण नहीं कि जो व्यक्ति अपने पूरे तन, मन एवं साहस के साथ निरन्तर प्रयत्न करे वह सफल न हो। ऐसा कभी नहीं हो सकता।

अविश्वास के साथ किया हुआ कोई भी कार्य सफल नहीं होता। अपने प्रयत्नों में विश्वास न रखने वाले व्यक्ति की शक्तियाँ अपमानित जैसा अनुभव करती रहती हैं और कभी भी पूरी तरह से काम नहीं करतीं। अपने प्रयत्न को दुर्भाग्य का अभिशाप देने वाले नासमझ लोग शुभ संकल्पों का महत्त्व नहीं जानते, इसीलिए आत्म अभिशापित उनके प्रयत्न निष्फल चले जाते हैं। अपने को किसी दूसरे का शाप लगे या न लगे किन्तु अपना शाप अवश्य लग जाता है।

अपनी समुन्नति में प्रतिकूल सम्भोगों अथवा भाग्यहीनता को हेतु मानना, अपने को भ्रम में रखना और आत्मविश्वास को धोखा देना है। अपने साथ इस प्रकार का विश्वासघात करने वाले निश्चय ही जीवन में सफलता का सौभाग्य नहीं ले पाते। अपने से विश्वासघात करने की निकृष्ट भावना को छोड़कर उन्हें आँख फैलाकर चारों ओर देखना चाहिये और समझने की कोशिश करनी चाहिए कि आज जो उनके सामने ही उन्नति के शिखर पर चढ़ गये और दिन-दिन अग्रसर होते जा रहे हैं वे सब क्या जन्म-जात सुविधाओं के अधिकारी रहे हैं ? इतिहास साक्षी है कि संसार के प्रसिद्धिवादी व्यक्तियों में से अधिकांश ऐसी कठिन परिस्थितियों में जन्मे, ऐसी वज्र-विवशताओं में पले और ऐसे विकट-विकट विरोधों में आगे बढ़े हैं कि ऐसी प्रतिकूलताओं की छाया-मात्र भी उन जैसे निराशावादियों पर पड़ जाती तो कदाचित् उन्होंने रो-रोकर जान ही दे दी होती।

हिम्मत हारकर बैठे व्यक्तियों को सोचना चाहिए कि उनके आस-पास उन्हीं जैसी परिस्थितियों में जो लोग रह रहे हैं, उनमें से आगे चलकर न जाने कितने लोग धनवान् विद्वान , कलाकार तथा जन-नेता आदि बनकर जीवन को सफल बनायेंगे, तब क्या कारण है कि वे वैसा नहीं बन सकते ? कारण केवल यही है कि ये उद्योगशील, आशावादी उन जैसे दुर्भाग्यवादी नहीं हैं। वे बलपूर्वक भाग्य बदलने में विश्वास रखते हैं। यदि जन्म-जात सुविधायें ही उन्नति एवं महानता का कारण होतीं तो निश्चय ही संसार के सारे साधन सम्पन्न व्यक्तियों को चाँद-सूरज की तरह चमकना चाहिये था। किन्तु ऐसा देखा कहीं नहीं जाता। कठिन परिस्थितियाँ अथवा प्रतिकूल संयोग ही किसी की उन्नति एवं विकास में विजयी रहे होते तो न तो आज तक कोई गरीब से अमीर बन पाया होता और न निम्न से महान। और न आगे ही कोई ऐसा परिवर्तन प्राप्त कर सकने की सम्भावना ही रख सकता है। लोग प्रतिकूलताओं को जीतकर आगे बढ़े हैं, बढ़ रहे हैं और भविष्य में भी बढ़ते जायेंगे किन्तु आत्मविश्वास एवं पुरुषार्थ के बल पर।

अपनी दयनीयता का दोष परमात्मा को देने से कहीं अच्छा है कि अपने अपरिश्रमी स्वभाव को दिया जाय। वह समदर्शी परमपिता परमात्मा कभी किसी के साथ अन्याय नहीं करता। उसके पास देने के लिये जो दया का कोष है, उसका भाग वह सबको पात्रता के अनुसार न्यायपूर्वक ही देता है। जगत में आकर जो पुरुषार्थी एवं आत्मविश्वासी व्यक्ति अपनी पात्रता की वृद्धि कर लेते है, निश्चय ही वे उसकी कृपा का अधिक अंश पा लेते हैं। परमात्मा मनुष्य के प्रयत्न पात्र को अपनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कृपा से लबालब भरे रहता है। अब जो अपने प्रयत्न को छोटा कर लेता है, कृपा का अंश उसमें से कम हो जाता है और जो उसको जितना विशाल बना लेता है उसकी कृपा का उतना ही अंश उसमें बढ़ जाता है। अपनी प्रयत्नहीनता को दोष न देकर परमात्मा को दोष देना उसकी न्यायशीलता में एक अक्षम्य अशिष्टता तथा धृष्टता है। वह उनकी इस दुष्ट भावना का भी फल होता है कि आशा की ओर से अन्धे होकर निराशा का हाथ पकड़े हुए जीवन का मार्ग टटोलकर ठोकरें खाते फिरते हैं। यह उनकी इस धृष्टता का ही परिणाम है कि उनका विश्वास सौभाग्य के प्रति होने के स्थान पर दुर्भाग्य के प्रति दृढ़ रहता है। अपना कल्याण चाहने वाले प्रत्येक व्यक्ति का पावन कर्त्तव्य है कि वह परमात्मा को दोष देने के बजाय, उसकी कृपा में न्यूनता खोजने के बजाय अपने निष्क्रिय स्वभाव, उपयोगी प्रवृत्ति एवं निराशापूर्ण विश्वासों को दोष दे और अपनी कमियों, त्रुटियों एवं न्यूनताओं की खोज करे और उन्हें दूर करने का प्रयत्न करे। मनुष्य जब तक भी अपनी विवशताओं की खोज अपने में न करके उनका दोष दूसरों को देता रहेगा, यों ही दयनीय एवं दुर्भाग्यपूर्ण जीवन बिताता रहेगा।

लोग गरीबी को दोष देते-देते सारी जिन्दगी गुजार देते हैं और कभी कुछ नहीं कर पाते। जिसकी बुद्धि, जिसका मन और जिसकी शक्तियाँ गरीबी के अपरिवर्तनीय विश्वास चंगुल में फँसी हुई, उसी को कोसने में लगी रहती हैं, उसके पास कुछ और करने के लिये अवकाश कहाँ रह जाता है। अकर्मण्यता एक छोटा-सा बहाना पाकर ही सामने पथ-रोधक पहाड़ खड़े कर देती है तब गरीबी तो नर-वरों के लिए एक चुनौती जैसी होती है। जिस गरीबी को लोग जीवन को डसने वाली नागिन बतलाकर कोसा करते हैं, उसे ही अनुभवी विद्वान लोग कुछ कर दिखाने का एक अवसर बताया करते हैं। उनका कहना है कि—''गरीबी का अनुभव यद्यपि कटु होता है तब भी वह मनुष्य के लिए बड़ी हितकर सिद्ध होती है। वह औषधि की तरह मनुष्य के स्वभावगत न जाने कितने दोष-दुर्गुणों को दूर कर देती है। आविष्कार की जननी आवश्यकता के अनुसार गरीबी भी मनुष्य में ऐसे अनेक महत्त्वपूर्ण गुणों को उत्पन्न कर देती है जो सम्पन्नता की दिशा में सहज सम्भाव्य नहीं होते, गरीबी को चुनौती मानकर उसका मुकाबला करने के लिये कटिबद्ध होने वाले साहसियों में दूरदर्शिता सहनशीलता, कर्मठता, संलग्नता एवं व्युत्पन्न बुद्धि की हितकारी विशेषतायें आ जाया करती हैं। मनुष्य का बिगड़ा हुआ जीवन सुधर जाया करता है।

निःसन्देह विद्वानों का यह कथन केवल विश्वसनीय ही नहीं श्रद्धेय भी है। उनके इस कथन में आस्था रखकर चलने वाले व्यक्तियों के लिये गरीबी एक स्वर्णावसर, एक हितकारी परिस्थिति एवं एक वरदान सिद्ध होती है। किन्तु कब, जब कोई अपनी इस आस्था के साथ प्रयत्न एवं उद्योग की कारिकायें जोड़ देता है। अन्यथा अकर्मण्यता के लिये गरीबी निश्चय ही एक विषैली नागिन है, जो उसे डसकर नष्ट ही कर देगी।

गरीबी के साथ यदि एक बार इस प्रकार की उच्च भावनायें अथवा आस्थायें तभी जोड़ी जायें और उसे एक विरोधी परिस्थिति ही मान लिया जाये तो क्या विरोधी के हाथ नष्ट हो जाना किसी प्रकार शोभा देता है ? अपने जीवन को केवल इसलिए रो-रोकर नष्ट कर देना कि परमात्मा ने उसे सुख-सम्पत्ति के बीच जन्म न देकर प्रतिकूल परिस्थितियों में पैदा किया है। कहाँ तक उचित है ? गरीबी के प्रति असन्तोषपूर्ण किसी का रोना इस बात की गवाही है कि वह उससे अच्छी परिस्थितियों को पाने के लिए व्यग्र एवं लालायित है। किन्तु क्या यह लालसा केवल लालायित होने और व्यग्र बने रहने मात्र से पूरी हो सकती है ? केवल कामना करते रहने से न तो कोई काम आज तक पूर्ण हुआ और न आगे ही होगा। इसके लिये प्रयत्न एवं पुरुषार्थ, सो भी अवधि एवं अविश्रान्त पुरुषार्थ करने के सिवाय कोई विकल्प नहीं है।

गरीबी को कोसते, कठिनाइयों पर बड़बड़ाते और प्रतिकूलताओं के प्रति क्रोध दिखलाते रहने से कोई काम न चलेगा। यदि वास्तव में आप सच्चे मन से अपनी परिस्थिति बदलना चाहते हैं और जीवन में सफलता का श्रेय लेना चाहते हैं तो आपको कमर कसकर इस संकल्प के साथ उठना ही होगा कि मैं मनोवांछित श्रेय पाने के लिए अपने जीवन की सारी शक्तियों को मैदान में उतारूँगा और हजार असफलताओं के बाद भी सफलता प्राप्त करके रहूँगा। ऐसा संकल्प करके उठते ही आपकी सारी शक्तियाँ, सारी क्षमताएँ एवं सारी विशेषताएँ दूने उत्साह के साथ आपका सहयोग करेंगी और आप अवश्य ही अपने मन्तव्य में सफल होंगे।

अपंग लंगड्या की आत्मिक सामर्थ्य

नागपुर स्टेशन पर एक अपंग युवक पालिश की पेटी लटकाये बहुधा दिखाई देता था। पैरों से लाचार, हाथों के सहारे घिसटता हुआ वह युवक कभी किसी से कुछ माँगते हुए नहीं देखा गया। वह जूतों पर पालिश किया करता था, वह भी उचित मूल्य पर और अच्छे स्तर की। उससे पालिश कराने वाले उसके शिष्ट व्यवहार तथा कार्य से बहुत सन्तुष्ट हुआ करते थे। उसके अपंग होते हुए भी स्वावलम्बन से प्रभावित होकर निर्धारित परिश्रम से अधिक भी कुछ सज्जन उसे देने का प्रयास किया करते थे। किन्तु वह निर्धारित पैसों से अधिक लेता नहीं था। बड़े ही नम्र शब्दों में वह इन्कार कर दिया करता था। वह कहा करता था ''श्रीमान्, निर्धारित राशि ही दें। जितने का मैंने कार्य किया है, उससे अधिक लेना अनैतिकता होगी।'' कोई कहता कि 'रख लो काम आयेंगे' तो उत्तर देता ''काम तो मेरा मेहनत के पैसों से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही चल जाता है। बाबू साहब !- आपकी कृपा बनी रहे, यही बहुत है।''

युवक का नाम क्या था किसी को पता नहीं। उसे लोग 'लंगड्या' ही कहा करते थे। लूले-लँगड़े व्यक्ति किसी न किसी पर भार बनकर ही रहते हैं। अपने दुर्भाग्य का रोना रोकर ही किसी की सद्भावना प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। इस प्रकार हीन तथा उपेक्षित जीवन जीते हैं किन्तु युवक लंगड्या और ही तरह का व्यक्ति था। उसने कभी किसी से दया की भीख नहीं माँगी। अपना सम्मान खोकर सद्भावना पाने के स्थान पर सम्मान सहित सद्भावना पाई जा सकती है, यह उसने अपने छोटे जीवन में सिद्ध कर दिया। उसने पालिश का काम अपने पुरुषार्थ केवल घसिट-घसिटकर लोगों के पास जा-जाकर प्रारम्भ किया था। किन्तु शीघ्र ही उसके प्रति लोगों की सद्भावना जाग गयी और अधिकांश समय उसे एक स्थान पर बैठे-बैठे भी काम मिलने लगा। फिर भी उसने सद्भावना का दुरुपयोग न करते हुये अपना सम्मान बनाये रखा। स्वयं तो उसने कभी मेहनत के मूल्य के अतिरिक्त किसी से कुछ माँगा ही नहीं किन्तु यदि कोई उसके पैरों की दुहाई देकर उसे कुछ पैसे देना चाहता था तो वह साभार अस्वीकार कर देता था। वह कहता था ''महोदय जी ! मेरे पैर ही तो असमर्थ हैं । और सारा शरीर तो ठीक है। मेरे हाथ शरीर की आवश्यकता पूरी करने में समर्थ हैं। यह सहायता किसी असमर्थ को देकर उपकृत करें।''

ऐसा स्वाभिमानी अपंग सैकड़ों की संख्या में हृष्ट-पुष्ट बेकार घूमने वालों से श्रेष्ठ कहा जावेगा। सम्मानपूर्वक जीवन चलाते हुए उसे देखकर लोग प्रसन्न एवं प्रभावित हुआ करते थे। किन्तु उसकी महानता का पता उसकी एक दुर्घटना में मृत्यु हो जाने पर लगा। जब उसके नाम से ४०० रुपये एक स्थानीय अंध-विद्यालय को दान किये गये।

लंगड्या अपने पुरुषार्थ से कमाता था। संयमित जीवन व्यतीत करते हुये उसमें से थोड़ा-थोड़ा धन बचाता भी चलता था। उसे अपनी अपंगता के प्रति खीझ नहीं—अन्य असमर्थों के प्रति करुणा थी। करुणा तथा पर दुःखानुभूति मनुष्य के श्रेष्ठ गुण हैं। यदि अन्तःकरण में मानवीय दृष्टिकोण है, तो शरीर के क्षीण या अपंग होने न होने का कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। युवक लंगड्या ने यह चरितार्थ करके दिखा दिया। अच्छे खाते-पीते व्यक्ति भी किसी पारमार्थिक कार्य में खर्च करते हाथ सिकोड़ा करते हैं। उसका कारण आर्थिक अभाव नहीं, भावना की कंगाली ही होता है। उस अपंग युवक में भावना थी। अतः उसने अपने श्रम का एक भाग नियमित रूप से अशक्तों के हित में लगाने का निश्चय किया था। वह बचाये हुए पैसे स्टेशन कैंटीन के दो कर्मचारियों के पास जमा करता रहा। उसने कह रखा था कि कभी उसकी आकस्मिक मृत्यु हो जाने पर जमा किया हुआ धन किसी अन्धविद्यालय को सहायतार्थ दे दिया जावे। वही पैसे-पैसे की बचत मिलकर ४०० रुपये हो गई थी जो उसकी ओर से जमा कर दी गई।

लंगड्या अपंग था, असमर्थ था। किन्तु उसकी मानवोचित आत्म-सम्मान तथा दया व करुणा की भावना ने उसकी श्रेष्ठता प्रमाणित कर दी। उस भावनाजनित पुरुषार्थ तथा श्रेष्ठता के आगे उसकी असमर्थता तथा दीनता क्षीण हो गई। मनुष्य यदि ईश्वर की दी हुई विभूतियों की उपेक्षा न करे तो इसी प्रकार हीन से हीन भौतिक परिस्थितियों में भी महानता का आनन्द ले सकता है।

सत्साहस की सामर्थ्य

शरीरबल, शस्त्रबल, धनबल, विद्याबल आदि की तरह मनोबल भी एक शक्ति है—सामान्य नहीं असामान्य। वह सत्साहस के रूप में उभरती है और साधन एवं सहयोग के अभाव में भी बहुत कुछ कर गुजरती है।

अनीति की दिशा अपना लेने पर साहस को दुस्साहस कहते हैं। दस्युओं, तस्करों, आतंकवादियों का भी मनोबल सामान्य लोगों की तुलना में अधिक उभरा हुआ होता है। वे जोखिम उठाकर भी नृशंस कृत्य कर गुजरते हैं। इतने पर भी उनकी अंतरात्मा उन्हें धिक्कारती रहती है। समाज में भर्त्सना होती है और राजदण्ड मिलता है। ऐसे प्रयासों के साथ जुड़े हुए मनोबल को क्रूरता, दुष्टता आदि नामों से पुकारा जाता है। इससे लोग भयभीत-आंतकित तो होते हैं, पर उनका कोई सम्मान, समर्थन नहीं करता। लोभ या दबाव से जो उनका साथ देने लगते हैं, वे भी पकड़ ढीली होने पर बिदककर अलग खड़े हो जाते हैं। यहाँ तक कि बन पड़े तो संचित घृणा को प्रतिशोध के रूप में प्रकट करके रहते हैं।

सत्साहस वह है, जिसके साथ आदर्श जुड़े होते हैं। कितने ही पुण्यात्मा उच्च सिद्धान्तों के लिए प्रसन्नतापूर्वक त्याग-बलिदान करते हैं। यदि उनका आत्मबल बढ़ा हुआ न होता तो प्रतिपक्षियों का आक्रमण और स्वजन-संबंधियों का झंझट से दूर रहने का सिखावन उनका मार्ग रोक लेता, पर जिन्हें मानवी गौरव-गरिमा के प्रति आस्था है उन्हें किसी का भी भय नहीं लगता। न वे डरते हैं और न रुकते हैं।

भारत बँटवारे के दिनों नोवाखाली बंगाल में भारी रक्तपात हो रहा था। एक सम्प्रदाय दूसरे सम्प्रदाय का रक्त-पिपासु बन रहा था। इस पागलपन को रोकने के लिए गाँधी जी ने उस क्षेत्र में स्वयं जाना उचित समझा। वे चल पड़े। प्रश्न सुरक्षा का था। हत्यारे गाँधीजी की भी जान ले सकते थे। इसलिए उनके साथी, शुभचिन्तकों ने सोचा कि सुरक्षा व्यवस्था का प्रबन्ध रखा जाय। उन्हें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अकेले न जाने दिया जाय। साथ में अन्य लोग भी चलें ताकि जिन पर पागलपन सवार है, वे गाँधीजी पर हाथ न डालें।

प्रसंग गाँधीजी ने सुना तो वे इस पर सहमत न हुए। सभी साथियों को लौटा दिया और वे अकेले ही चल पड़े। उनने कहा—"सच्चाई और भलमनसाहत की संयुक्त शक्ति इतनी बड़ी है कि अकेला सत्याग्रही भी बड़े से बड़े खतरे के बीच जा सकता है। उसे किसी से भी डरने की जरूरत नहीं। मौत से भी नहीं।" गाँधीजी उस रक्तरंजित क्षेत्र में देर तक अकेले ही रहे और आवेशग्रस्तों का उन्माद उतारते रहे। पीड़ितों को सान्त्वना और हिम्मत देकर उनके घावों पर मरहम लगाते रहे। अनीति अधिक समय तक नहीं ठहर सकती। वह रुकनी तो थी, रुक भी गई। गाँधीजी निर्भयतापूर्वक बिना किसी प्रकार का आक्रोश व्यक्त किये अपना काम सफलतापूर्वक करते रहे।

आदर्शों के लिए गहरी निष्ठा रखने वाले व्यक्ति अपने कर्त्तव्य से इसलिए नहीं रुकते कि उनके मार्ग में खतरा है। खतरे को कमजोर और कायर नहीं उठा सकते, वे घाटा भी नहीं उठा सकते, किन्तु जिन्हें कर्त्तव्य का बोध है, वे समय पर अपनी जिम्मेदारी पूरी करने में चूकते नहीं। मनोबल का सत्साहस उनका समर्थ साथी होता है।

साहसी को साधन अपने आप मिलते हैं

साधन बड़ा या साहस ? इसका निर्णय ढूँढ़ने के लिए नारवे के एक उत्साही युवक **थोर हेयर डेहले** ने एक उदाहरण लोगों के सामने प्रस्तुत किया। उपदेश करने की अपेक्षा यह तरीका उसे अच्छा लगा कि उदाहरण प्रस्तुत करके लोगों को अपनी स्वतन्त्र चेतना द्वारा किसी निर्णय पर पहुँचने का अवसर दिया जाय। यह उत्साही युवक साहस को प्रधान मानता और कहता कि साहसी या तो साधन प्राप्त कर लेता है अथवा न्यूनतम साधनों से भी आगे बढ़ने और सफलता पाने का रास्ता निकाल लेता है।

थोर का प्रयोग यह था कि 'सरकंडे' की नाव के सहारे भी कठिन दीखने वाली लम्बी समुद्र यात्रा सफलतापूर्वक सम्पन्न की जा सकती है। इस लोहे के विशालकाय यन्त्र सज्जित जहाजों के जमाने में सरकंडे जैसे दुर्बल साधनों से बनी नाव की क्या तुलना हो सकती है ? पर उसके उपयोग से यह तो साबित किया ही जा सकता है कि मनुष्य का पुरुषार्थ और मनोयोग इतना प्रबल है कि साधन न होने पर भी उसके द्वारा साधन-सम्पन्नों जैसा कर्त्तव्य दिखाया जा सके।

नारवे के उपरोक्त युवक ने इथोपिया की कैड झील में काम करने वाले मछियारों की सहायता से पहली सरकंडों से बनी नाव बनाई। यह उतनी अच्छी नहीं बनी और अपना लक्ष्य पूरा न कर सकी। वह ४३५२ मील चलकर अटलांटिक सागर में अपना दम तोड़ गई। पर इससे थोर निराश नहीं हुआ। आरम्भिक असफलताओं से उसका मन जरा भी छोटा नहीं हुआ। हिम्मत हारने की तो इसमें बात ही क्या थी। असफलता एक बार के ही प्रयत्न से मिल जाया करे तो फिर उसे कोई भी प्राप्त कर लिया करे। साहस की परीक्षा तो असफलता की कसौटी पर ही होती है।

हेयर डेहल ने दूसरी नाव लैटिन अमेरिका के बोलीविया क्षेत्र में स्थित नितचाचा झील में काम करने वाले मछियारों की सहायता से बनाई। यह भी सरकंडों की ही थी। इस नाव में विभिन्न देशों के सात अन्य यात्री भी अपने सामान सहित सवार हुए। १७ मई, १९७० को मारक्को (अफ्रीका) के साफी बन्दरगाह से यह नाव रवाना हुई और १२ जुलाई, ७० को दक्षिणी अमेरिका के बारण्डोस क्षेत्र के 'ब्रिज' टाउन बन्दरगाह पर पहुँची।

ब्रिज टाउन पहुँचने पर इस सरकण्डे की नाव पर उतना लम्बा और इतना दुस्साहसपूर्ण सफर करने वाले दल की अगवानी बीस लकड़ी की नावों ने पंक्तिबद्ध होकर बड़े भावपूर्ण वातावरण में की। बन्दरगाह दर्शकों की भीड़ से खचाखच भरा हुआ था। स्वागत की आवश्यक सजधज लोगों ने पूरे उत्साह के साथ की थी। दर्शकों को इस निष्कर्ष पर पहुँचने में सहायता ही मिली कि अदम्य साहस स्वल्प साधनों से भी बड़ी सफलताएँ प्राप्त कर सकता है, जबकि मनोबल और पुरुषार्थ के अभाव में विपुल साधन रहते हुए भी असफलताएँ ही हाथ लगती हैं।

इस यात्रा में भी थोर दल को कई बार समुद्री तूफानों और विशालकाय जल-जन्तुओं से टकराना पड़ा। कठिन दिनचर्या को अपनाये बिना तो यह यात्रा हो ही नहीं सकती थी। थोर कितने ही स्थानों से समुद्र जल के नमूने भरकर लाये और उन्होंने संयुक्त राष्ट्र संघ को यह नमूने प्रस्तुत करते हुए कहा कि समुद्री जहाज जिस कदर समुद्र के तल पर विषाक्त चिकनाई छोड़ रहे हैं उसके फलस्वरूप कुछ ही दिन में समुद्री जल-जीवों पर संकट उत्पन्न हो जायेगा और बादलों में यह विषाक्त अंश मिलकर सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिए हानिकारक सिद्ध होगा।

सरकण्डे की नाव ने अपनी यात्रा का उद्देश्य पूरा कर लिया। अब उसे ओसलो (नारवे) के कोनटिकी संग्रहालय में इसलिए सुरक्षित रखा गया है कि दर्शक साधनों के अभाव में भी साहस की प्रबलता का महत्त्व समझ सकें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसी सबलाएँ ही भारत-भूमि की शोभा हैं

भारतीय नारी पुरुष की सच्ची सहधर्मिणी रही है। उस नाते उसमें पौरुष तथा शौर्य के गुण भी रहे हैं। हमारे दुर्भाग्य से बीच में ऐसी स्थिति पैदा हो गई, जब स्त्रियों को खिलौना समझा जाने लगा। उनके बारे में यह मान्यता हो गई कि किसी संघर्ष में भाग लेना तो दूर, उसकी हवा मात्र ही नारियों की सिट्टी-पिट्टी गुम करने के लिये पर्याप्त है। भारतीय इतिहास में भगवती दुर्गा से लेकर रानी लक्ष्मीबाई तक दुष्टों को अकेले तथा पति अथवा सहयोगियों के साथ दण्डित करने वाली वीर रमणियों के अनेक उदाहरण मिल सकते हैं। अभी भी वह तत्त्व भारतीय नारी में विद्यमान है तथा समय पाकर प्रत्यक्ष दिख जाते हैं। भारतीय नारी के इस गौरवमय पक्ष पर प्रकाश डालने वाली एक घटना पिछले दिनों थाना बधूंना क्षेत्र के अन्तर्गत ग्राम असजना में सामने आई।

घटना दिवाली के दिन की है। रात्रि को देर तक आमोद-प्रमोद चलता रहना स्वाभाविक है। महिलायें भी गाँवों मे देर तक लोकगीत गाती रहती हैं। मध्य रात्रि के लगभग उक्त गाँव में सन्नाटा हो गया। सब लोग दिनभर के थके खा-पीकर सो गये। बदमाश ऐसे ही समय में सक्रिय होते हैं। दिवाली के दिन विशेष रूप से हारे जुआरी कहीं न कहीं घात लगाते हैं। अपने पास पैसा न होने पर कहीं से लूट-खसोटकर लाना चाहते हैं। शुभ पर्व, शुभ कार्यों के मुहूर्त माने जाते हैं। किन्तु दिवाली पर बहुत-से बदमाश भी अपना वर्षभर का मुहूर्त मनाते हैं। कुरीतियों तथा विकृत सामाजिक मान्यताओं के कारण पुण्य बेला में भी अशुभ कार्य उन्हें अनुचित नहीं लगता। ऐसी ही एक बदमाशों की टोली एक घर में घुस गई। सोते हुए व्यक्ति को उन्होंने पकड़ लिया तथा धन प्राप्ति के उद्देश्य से उसे मारने-पीटने लगे।

आवाज सुनकर उस व्यक्ति की युवा पत्नी जाग गई। थोड़े ही समय पहले गीत गा-गाकर वह मीठी नींद सोई थी। जागते ही उसने वह दृश्य देखा तो सारे शरीर में बिजली सी कौंध गई। उसने समझ लिया कि दुष्टों से पाला पड़ा है और इनके ऊपर किसी प्रकार समझाने-बुझाने अथवा अनुनय-विनय का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा। पलक मारते उसने अपने कर्त्तव्य का निर्धारण किया। उसने अस्त्र के रूप में 'काँटा' (एक औजार) उठाया तथा बदमाशों पर आक्रमण कर दिया।

समय नाजुक था। यदि युवती चूक जाती तो पति के साथ-साथ उसकी आबरू पर भी बन आती। बदमाश पति पर काबू करने के बाद धन के साथ उसकी भी इज्जत लूट सकते थे। वह संख्या मे भी काफी थे। सामान्य रूप से कोई पुरुष भी उन पर आक्रमण करने का साहस न करता। किन्तु उक्त युवती का संकल्प बल उस समय गजब का काम कर गया। पति की एवं अपने सतीत्व की रक्षा का ध्यान करके वह सिंहनी की तरह उन गुण्डों पर टूट पड़ी।

बदमाश इस अप्रत्याशित आक्रमण के लिए बिलकुल तैयार नहीं थे। उनकी समझ में कुछ आये, तब तक उनके दो साथी धराशायी हो चुके थे। कुछ चोट से घबराकर भागे और कुछ ने एक महिला समझकर आक्रमण का प्रत्युतर देने का प्रयास किया। किन्तु वहाँ मानो साक्षात् चण्डी प्रगट हो गई थी। उनका यह संघर्ष का प्रयास उन्हें महँगा पड़ा। उस वीर युवती ने देखते-देखते दो आतताइयों को और भूमि पर सुला दिया। अब किसी का रुकने का साहस न हुआ, अपनी-अपनी जान बचाकर सब भाग गये।

बाद में गाँव वाले एकत्र हुए। पुलिस को खबर दी गई। शवों को पुलिस ने पोस्टमार्टम के लिये भेज दिया तथा मामले की रिपोर्ट नोट कर ली। सारी तहसील में जहाँ-जहाँ तक खबर मिली, सबने उस युवती की सराहना की। उक्त युवती को अपने कार्य पर प्रसन्नता तो है किन्तु किसी प्रकार का अहंकार नहीं है। उसका कहना है कि समय के अनुसार अपनी तथा पति की रक्षा का अन्य उपाय न देख ऐसा करना आवश्यक हो गया था। अब वह पुनः सामान्य गृहणी है, जो मनोयोगपूर्वक अपने कार्य करती है।

युवक का साहस

अमरनाथ जी के दर्शनों के लिए विशाल भीड़ जा रही थी। सब मिलाकर लगभग ५००० यात्री उस दल में होंगे। पहाड़ी तीर्थयात्रियों में लोग टोलियाँ बनाकर चलते हैं। एक ही अवसर पर एक ही दिशा को जाने वाली अनेक टोलियों के दल स्वतः ही बन जाते हैं। दिन में निर्धारित दूरी तय करके सब लोग निश्चित ठिकानों पर रात्रि विश्राम करते हुए आगे बढ़ते जाते हैं। ऐसा ही एक विशाल दल यह भी था। काश्मीर के बीहड़ पथ पर दोनों ओर गहरे खड्डों के बीच लोग रुकते, विश्राम करते बढ़ते जा रहे थे।

अचानक एक स्थान पर चीख-चिल्लाहट प्रारम्भ हो गई। एक बच्ची गहरे खड्ड में फिसल गई थी। लोगों की भीड़ एकत्र हो गई। कोई माता-पिता को सान्त्वना दे रहा था, कोई असावधानी की आलोचना कर रहा था। बच्ची की माता रो-रोकर कह रही थी "दूर तक बच्ची के फिसलते हुए चीखने की आवाज सुनाई दी है। कोई उतरकर प्रयास करे तो बच्ची मिल सकती है।" एक सज्जन बोले, "भला कौन इस खड्ड में उतर सकता है ?" जाने बच्ची मरी या बची, ऐसे में कौन अपने प्राण संकट में डाले ? जितने मुँह उतनी बातें किन्तु किसी से कुछ करते नहीं बन पड़ रहा था।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तभी लोगों ने देखा एक युवक उस गहरे खड्ड में उतरने का उपक्रम कर रहा है। देखते-देखते वह खड्ड के उतार-चढ़ावों तथा वनों-झाड़ियों के बीच अदृश्य हो गया। अब लोगों की चर्चा का विषय बदल गया। युवक के साहस तथा सहायता की प्रशंसा करने वालों की बीच सन्देहास्पद आलोचना करने वाले भी बहुत थे। खड्ड गहरा तथा दुर्गम था। सीधे उतरना-चढ़ना सम्भव नहीं था अत: चक्करदार रास्ता अपनाना स्वाभाविक था। लोगों ने युवक को घटनास्थल से आजू-बाजू होकर उतरने का प्रयास करते हुये देखा था। जैसे-जैसे समय बीतने लगा—लोगों को शंकायें होने लगीं। कोई कहता पता नहीं कहाँ तक पहुँच सका होगा। कोई टिप्पणी करता। न जाने उतरा भी है अथवा बगल के किसी रास्ते से आगे बढ़ गया, उधर युवक धैर्यपूर्वक एक-एक कदम सम्हालता हुआ उतरता जा रहा था। एक चूक, एक असन्तुलित कदम उसे भी संकट में डालने के लिए पर्याप्त होते किन्तु अदम्य आत्म-बल के सहारे युवक बढ़ता ही रहा।

अन्त में उसका प्रयास सफल हुआ। एक वृक्ष के तने के सहारे बच्ची बेहोश अवस्था में मिल गई। युवक की आँखें चमक उठीं। उसको उठाकर प्राथमिक परिचर्या करके उसे लेकर चढ़ने लगा। अब कठिनाई अधिक थी। जहाँ अकेले चढ़ना कठिन था वहाँ बच्ची को लेकर चढ़ना और भी दुरूह था। किन्तु प्राथमिक सफलता से मनोबल बढ़ गया था। मनोबल सारी बाधाओं एवं कठिनाइयों को पार करने में समर्थ होता है। युवक अपने साहसिक अभियान में सफल हुआ। सकुशल खड्ड के बाहर बच्ची सहित वह पहुँच गया। किन्तु अन्तिम चरण में उसके धैर्य की एक और परीक्षा होनी थी। माता-पिता आने-जाने वाले लोगों के निराशापूर्ण वचनों से प्रभावित होकर आगे निकल गये थे। ऐसी अवस्था में खीझ तथा झुँझलाहट स्वाभाविक थी, किन्तु युवक ने अपनी स्थिरता बनाये रखकर माता-पिता तक बच्ची को पहुँचाकर ही दम लिया।

युवक का नाम राजकुमार था और वह नागपुर का रहने वाला था। उसके साहस तथा सहृदयता ने ५००० तीर्थयात्रियों के बीच उसकी श्रेष्ठता प्रमाणित कर दी। अमरनाथ के दर्शन करके उस भीड़ ने अथवा युवक ने क्या पुण्य कमाया और क्या लाभ उठाया, यह शंकास्पद हो सकता है। किन्तु युवक के अन्त:करण में स्थित श्रेष्ठ भावनाओं के रूप में जिस अमरनाथ की झलक मिली, वह लोक-परलोक दोनों को सम्हालने में समर्थ है, यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है।

नरभक्षी पर साहस ने विजय पायी

अधिकतर व्यक्ति शेर को देखकर अपनी जान बचाने के लिए इधर-उधर भागते हैं पर अकलतरा के पास ग्राम बलौदा में एक ऐसी घटना प्रकाश में आई है कि व्यक्ति को देखकर शेर भाग खड़ा हुआ। बलौदा के प्राथमिक विद्यालय में मानसिंह चौहान प्रधान अध्यापक के पद पर कार्य करते हैं। वह एक निकटवर्ती गाँव से दिन में बलौदा वापस आ रहे थे। रास्ते में एक शेर से उनकी भेंट हो गई। शेर को देखकर श्री चौहान वहीं स्तब्ध खड़े हो गये और थोड़ी देर तक दोनों एक-दूसरे को घूरते रहे। श्री चौहान के निश्चल खड़े रहने के कारण शेर जंगल की ओर चला गया।

यह शेर अभी तक सात व्यक्तियों को अपना शिकार बना चुका है, पर श्री चौहान को अपना शिकार बनाने का साहस वह शेर भी न कर सका। इनके पास इतना शारीरिक बल भी नहीं था, जो आवश्यकता पड़ने पर नरभक्षी शेर से भिड़ जाते। वैसे यह स्वस्थ शरीर के व्यक्ति थे। पर यहाँ उनके जीवन की रक्षा शारीरिक बल ने नहीं, वरन् मानसिक बल ने की थी। शेर की शक्ति तथा शारीरिक बल की तुलना मनुष्य शरीर से की भी कैसे की जा सकती है। उसकी हिंसक वृत्ति के सामने अच्छे-अच्छे व्यक्तियों को भागते ही बनता है।

जंगल में अनेक पशु, हाथी, सूअर, गैंडे आदि शेर से शारीरिक बल में बढ़े-चढ़े रहते हैं, पर मनोबल की कमी से सभी पशु उसका आतंक मानते हैं इसीलिए तो वह जंगल का राजा बना, स्वतन्त्र रूप से इधर-उधर विचरता रहता है। शरीर से शक्तिशाली होने पर भी मन से दुर्बल होने वाले व्यक्ति आपत्तियों के सम्मुख आत्म-समर्पण ही करते देखे जाते हैं। सचमुच शारीरिक बल ही अपने आप में सब कुछ नहीं है। मनोबल के अभाव में शारीरिक बल तो निकम्मा हो जाता है। हीन मनोबल के व्यक्तियों को बात-बात में शंका और भय का अनुभव होने लगता है, भले ही उन कार्यों में तनिक भी भय करने की आवश्यकता न हो।

भय अथवा कायरता का सम्बन्ध व्यक्ति के मन से है। जो ऐसे कार्यों में परिस्थितियों को दोष देते हैं वह अपनी गलती दूसरे पर मढ़ने का प्रयास मात्र है। यदि भय और कायरता का सम्बन्ध व्यक्ति के मन से न होकर परिस्थितियों से होता तो एक सी घटनाओं के परिणाम समान होते। पर ऐसा होता कहाँ है ? किसी भयानक परिस्थिति को देखकर जब एक व्यक्ति घबराता है और भागकर जान बचाने की कोशिश करता है, वहीं दूसरा व्यक्ति उन परिस्थितियों से टक्कर लेकर सफलता प्राप्त करने का प्रयास करता है।

वह नरभक्षी शेर सात व्यक्तियों का शिकार कर चुका था। पर आठवें व्यक्ति चौहान अपने मनोबल के सहारे ही उसे चकमा देकर सकुशल घर चले आये। यदि उन्होंने भी शेर को सामने आते देखकर रोना, चिल्लाना, गिड़गिड़ाना और भागना शुरू किया होता तो वह शेर उन पर भी झपटकर अपना शिकार बना लेता। कमजोर मन वाले कठिनाइयों के समय साहस कहाँ दिखा पाते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भय के भूत और शंकाओं के शेर उन पर हर समय हावी रहते हैं। हर परिस्थिति में उन्हें अमंगल ही दिखाई देता रहता है। कितनी ही बार युद्ध करते समय शारीरिक बल होने पर भी मानसिक बल की कमी से अनेक सैनिक परास्त हो जाते हैं।

मनुष्य की समस्त शारीरिक क्रियाएँ मन द्वारा संचालित होती हैं। यदि मनोबल बढ़ा-चढ़ा हो तो हर परिस्थिति में निर्भयता से कार्य किया जा सकता है। यह आवश्यक नहीं कि शेर के सम्मुख जाकर ही हमारे मनोबल की परीक्षा होती है। ऐसे व्यक्तियों में आत्म-विश्वास की भावना साधारण व्यक्तियों से अधिक होती है। अतः यदि हम शारीरिक बल के साथ-साथ मनोबल बढ़ाने का प्रयत्न करते रहें तो स्वतः ही साहस, अदम्य कार्यक्षमता और संकटकालीन घड़ियों से जूझने की शक्ति आ जाती है।

साहस के रहते अपंगता बाधक नहीं

शरीर में कोई अंग कम हो या अपंग हो तो उस स्थिति में स्वभावतः साधारण जीवनक्रम बिताना कठिन होता है। ऐसे बाधित व्यक्ति आमतौर से दूसरों की कृपा पर निर्भर परावलम्बी जीवन जीते अथवा भिक्षावृत्ति पर निर्वाह करते देखे गये हैं।

इस प्रकार के लोगों को शारीरिक कमी के कारण जितनी कठिनाई उठानी पड़ती है, उससे कहीं ज्यादा मानसिक दुर्बलता से उठानी पड़ती है। हर कोई उन्हें दया का पात्र, बेचारा, अभागा, दैवी कोप का भाजक, प्रारब्ध भोगी आदि कहते बताते रहते हैं। हर किसी के मुँह से जब वह अपने बारे में यही सुनता रहता है तो उसे विश्वास जम जाता है कि वस्तुतः वह दुर्भाग्यग्रस्त ही जन्मा है। अब वह कुछ कर न सकेगा, उसकी प्रगति के मार्ग बन्द हैं। उसे दूसरों के आश्रित होकर जीने की बात ही सोचनी चाहिए। यदि भाग्य में स्वावलम्बी जीवन होता तो फिर विपत्ति ही क्यों आती ? आदि विचार जब निरन्तर मन में घूमते रहते हैं तो फिर उसका साहस टूट जाता है, मन भर जाता है और प्रगति की बात तो दूर, अपने पैरों आप खड़े हो जाने का मनोबल भी जाग्रत नहीं होता।

शरीर की कमी वस्तुतः इतनी बड़ी कमी नहीं है जिसे मनोबल द्वारा पूरा न किया जा सके। महत्त्वपूर्ण काम तो मस्तिष्क करता है, दूसरे अंग तो उसकी आज्ञाओं का पालन भर करते हैं। यदि एक अंग बिगड़ गया है तो उसकी आवश्यकता दूसरा अंग पूरी कर सकता है। यदि उत्कृष्ट इच्छाशक्ति काम करे तो वह अस्त-व्यस्त अंग भी कुछ काम दे सकता है। इस प्रकार शरीर के अन्य अंगों को अधिक सक्षम बनाकर उस विकृत या अपंग अवयव की आवश्यकता पूरी की जा सकती है।

संसार में ऐसे अनेकों मनुष्य हुए हैं, जिनका शरीर किसी दुर्घटना के कारण अथवा जन्मजात रूप से अपंग हो गया। किन्तु उनका मनोबल बना रहा, हिम्मत नहीं हारी और साहस समेटकर प्रबल इच्छाशक्ति के सहारे उन्हीं टूटे-फूटे अंगों से काम लेना शुरू किया, विकारग्रस्त अंग की आवश्यकता दूसरे अंग से पूरी की और इस प्रकार जोड़-तोड़ मिलाकर अपनी गाड़ी धकेलनी आरम्भ कर दी।

सामान्य लोग इच्छाशक्ति दुर्बल होने के कारण सभी अंग सही होने पर भी कुछ महत्त्वपूर्ण काम कर नहीं पाते, ऐसे ही आलस्य में पड़े असफल जीवन बिताते रहते हैं। इसके विपरीत इच्छाशक्ति के धनी मनस्वी व्यक्ति अंगहीन अथवा साधनहीन होने पर भी इतनी प्रगति कर लेते हैं कि जिसे देखकर सर्वांग गठित किन्तु आलसी व्यक्तियों को ही अभागा मानना पड़ता है।

वस्तुतः साहस की प्रखरता सबसे बड़ा अवलम्बन है। इच्छाशक्ति जिसकी तीव्र है, उसे कोई कठिनाई या कमी तिरस्कृत जीवन जीने के लिये बाध्य नहीं कर सकती। वह स्वावलम्बी और प्रगतिशील होकर ही रहता है। पुरुषार्थ और मनोबल में वह शक्ति मौजूद है जिसके आधार पर दुर्भाग्य को सौभाग्य में बदला जा सके।

चार्ल्स फेलू सन् १८३० में बेलजियम के एक छोटे देहात में पैदा हुए और ७० वर्ष की आयु भोगकर सन् १९०० में मरे। वे बिना हाथों के पैदा हुए थे पर १९ वीं सदी के महान चित्रकारों में से एक थे। उन्होंने हाथों के अभाव की पूर्ति पैरों से की और अत्युत्तम चित्र बनाने लगे। इनके हर चित्र के नीचे लिखा रहता था, 'केवल पैरों की सहायता से चित्रित। उनकी कला से प्रभावित होकर वेलजियम और रूस के शासक ने उनकी सहायता भी की। बेलजियम के राजा **लियोपोल्ड द्वितीय** ने उनसे हाथ मिलाने की रस्म पूरी करने के लिए उनका पैर छुआ और उसे हिलाया। राजा कहा करते थे, हाथ मिलाने की ऐसी सुखद अनुभूति मुझे जीवन में अन्यत्र कभी नहीं मिली।

उत्तरी अमेरिका के बाल्टीमोर नगर का निवासी जानी नामक व्यक्ति २७ अगस्त, १९१० को पैदा हुआ। उस विचित्र बालक के शरीर में कमर से नीचे का कोई भाग उसके शरीर में था ही नहीं। पैरों का निशान भी जिसके न हो ऐसा गोल गेंद सा बच्चा देखने के लिए भीड़ बहुत जमा हुई पर किसी को भी उसके कुछ घण्टे से अधिक जीवित रहने की आशा नहीं थी; परन्तु वह मरा नहीं—जीवित बच गया। जीवित ही नहीं रहा, वरन् अपने बुद्धि-बल और अध्यवसाय से एक अनौखा कीर्तिमान स्थापित किया कि यदि साहस और लगन का अभाव न हो तो शारीरिक अपूर्णताओं के रहते हुए भी बहुत कुछ किया जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ज्ञानी ने शिक्षा प्राप्त की। एक कुशल टाइपिस्ट बना, नकशा-नवीस और लेखक बना। इतना ही नहीं, उसने हँसने-हँसाने और जादूगरी तथा नट विद्या में भी प्रवीणता प्राप्त की। वह एक विलक्षण नर्तक था, उसका नृत्य देखने के लिए दर्शकों की अपार भीड़ जमा होती थी।

बचपन में उसने हाथों के बल चलना सीखा और पढ़ने की आयु में बराबर स्कूल जाता रहा। १४ वर्ष की आयु में उसने हाईस्कूल उत्तीर्ण किया। खेलों में भी उसकी रुचि थी। बिना पैर का होते हुए भी केवल हाथों के सहारे उसने वैसवाल, टैना, आँखमिचौनी, तैराकी, गोता-खोरी में प्रवीणता प्राप्त की। वह जीवनभर हँसता और हँसाता रहा। कभी किसी ने पैर न होने की चर्चा चलाई तो उसने यही कहा—मनोबल के रहते किसी अवयव का अभाव मनुष्य की प्रगति और सुख-शान्ति में बाधक नहीं हो सकता।

वेने (न्यूजीलैण्ड) की डच बस्ती में **फ्रान्सिस ए. वरडेट** नामक अन्धे व्यक्ति ने अपने पुरुषार्थ से लगातार १३ वर्ष के परिश्रम से एक विशालकाय मकान बनाया। जिसमें तीन तल्ले, सात कमरे और स्नानघर आदि सभी व्यवस्थायें मौजूद हैं। सब कुछ करीने से बना हुआ है और वस्तुयें इस तरह व्यवस्थापूर्वक कलात्मक ढंग से लगी हुई हैं मानो किसी कुशल इन्जीनियर ने उसे बनाया है।

इस अन्धे व्यक्ति ने मकान की पूरी योजना स्वयं ही बनाई। छोटे से बड़े काम तक बढ़ई, राज, मिस्त्री, लुहार आदि के बहुत से काम उसने स्वयं किये और जहाँ अनिवार्य हो गया, वहीं दूसरों की सहायता ली। तिरेसठ वर्ष की आयु में एक अन्धे व्यक्ति द्वारा आरम्भ कराया गया यह कार्य एक विलक्षण सूझ-बूझ और लगन का ऐसा उदाहरण प्रस्तुत करता है, जिसे देखकर दंग रह जाना पड़ता है। जबकि बुढ़ापे से थके होने और आराम करने की बात दूसरे वृद्धों के मस्तिष्क में रहती है तब वरडेट जैसे उद्योगी की यह पुरुषार्थ-परायणता एक नया ही उदाहरण प्रस्तुत करती है। न्यूजीलैण्ड सरकार ने उस मकान को अपराजेय इच्छाशक्ति, उत्साह, धैर्य और सूझ-बूझ की मूर्तिमान प्रदर्शनी के रूप में खुला रखा है ताकि दूसरे लोग भी उससे प्रेरणा प्राप्त करते रह सकें।

सोलहवीं सदी का प्रसिद्ध नृत्यशास्त्री **सीवस्टीन स्पिनोला**-फ्रेंन्च नृत्य एवं संगीत का पिता माना जाता है। उसकी प्रगति गाथा बड़ी प्रेरक है। ११ वर्ष का जब वह बालक ही था तभी उसके दोनों पैर एक दुर्घटना में घुटनों से नीचे के कट गये। देखने वालों की दृष्टि में वह अपंग और दया का पात्र था। पर उसने अपने को स्वयं वैसा नहीं माना और जब अपनी चर्चा होती तो यही कहता—पैर तो शरीर का सबसे निचला और कम उपयोगी अंश है। जब तक मेरा मस्तिष्क और हृदय मौजूद है, तब तक न मुझे अपंग कहा जाय और न दयनीय माना जाय।' वह कटे हुए पाँवों को ही प्रशिक्षित बनाता रहा और नृत्यविद्या में इतना पारंगत हो गया कि उसकी कला देखकर दर्शक मन्त्रमुग्ध ही नहीं हो जाते थे वरन् उस विषय में रुचि रखने वाले उससे शिक्षा भी प्राप्त करते थे। नृत्य ही नहीं, उसने गायन में भी पारंगतता प्राप्त की। इतना ही नहीं उसने फ्रान्सीसी गायन को महत्त्वपूर्ण दिशायें भी दीं।

ऐसा ही एक और भी उदाहरण है, जिसमें किसी अंग से काम न लिये जाने पर उसमें अतिरिक्त क्षमता उत्पन्न हो जाने का प्रमाण भी मिलता है। बाधित लोग यदि प्रयत्न करके देखें तो उनके अपंग समझे जाने वाले अवयव भी कुछ विशेष काम कर सकने योग्य किसी अद्भुत शक्ति से सम्पन्न भी दिखाई पड़ सकते हैं। कास्पर हासर गेंड उसी राज्य का राजकुमार था। गद्दी के लालचियों ने उसका अपहरण बचपन में ही कर लिया और अपना राज्य को हथियाने का रास्ता साफ कर लिया। अपहरणकर्ताओं ने इतनी तो दया दिखाई कि उसे मारा नहीं, वरन् ऐसे स्थान पर कैद कर दिया जहाँ प्रकाश और हवा की बहुत कमी थी। उनने सोचा कुछ दिन में वह ऐसे ही बीमार होकर मर जायेगा।

कास्पर १८ साल तक ऐसे ही अन्धकार भरे वातावरण में कैद रहा। एक बार उसे अवसर मिला तो उस काल कोठरी से निकल भागा और अन्सपच, वाइवेरिया के जंगलों में भटकते-भटकते अपनी जन्मभूमि जा पहुँचा। तब तक लोग उसे पूरी तरह भूल गये थे।

पर उसमें दो अतिरिक्त विशेषतायें पाई गईं जो वैज्ञानिकों और मनोवैज्ञानिकों के लिए खोज का विषय बनीं और उसकी शारीरिक एवं मानसिक स्थिति का अध्ययन करके नये निष्कर्ष निकालने में उनसे बहुत सहायता ली।

कास्पर दिन में तारे देख सकता था। यह बात असत्य नहीं थी। ग्रह-गणितज्ञों ने जब भी उससे पूछा उसने विदित नक्षत्रों के स्थान सही बताये। उसके कथन में रत्तीभर भी अन्तर नहीं पाया गया। इससे निष्कर्ष निकला कि यदि नेत्र-ज्योति को किसी विशेष परिस्थिति में रखकर विशिष्ट विशेषताओं से सम्पन्न किया जा सके तो वह इतनी तीव्र भी हो सकती है कि सूर्य का प्रकाश रहते हुए भी तारे देख सकने जैसे अद्भुत कार्य कर सके। दूसरी विशेषता यह थी कि बहुत छोटी उम्र में उसका अपहरण किया और उसे एकाकी रखा गया था। ऐसी स्थिति में उसका मानसिक विकास आयु वृद्धि के साथ नितान्त स्वल्प ही हो सका। काम-वासना से वह अपरिचित था और लोक व्यवहार में भी उसकी गति छोटे बालकों से अधिक नहीं थी।

शरीर के किसी अंग का टूट-फूट जाना उतना बड़ा दुर्भाग्य नहीं है, जितना मनोबल खो देना। यदि अपंग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहे जाने वाले लोगों का मनोबल ऊँचा उठाया जा सके, उनमें साहस और उत्साह पैदा किया जा सके तो वे न केवल स्वावलम्बी, वरन् प्रगतिशील भी बन सकते हैं। इच्छाशक्ति की सामर्थ्य शरीर के किसी भी अंग से अधिक मूल्यवान है। यदि यह तथ्य लोग समझ सकें तो फिर इस संसार में एक भी दुर्भाग्यग्रस्त दिखाई न पड़े।

विकलांगता प्रगति में बाधक न बन सकी

प्रकृति ने जन्मजात अपंग पैदा करके उस बालक के साथ एक निर्मम अत्याचार किया था। पर वह उन अपंगों से भिन्न था जो अपनी दयनीय स्थिति से सदा के लिए निराश होकर आशाजनक उज्ज्वल भविष्य की कल्पना करना तक छोड़ देते हैं। छः-सात वर्ष की अवस्था में वह बच्चों को पढ़ने के लिए घर से होकर गुजरने वाली सड़क से आते-जाते देखता तो उसका मासूम हृदय बिलख-बिलखकर रोने लगता। वह भी अन्य बालकों की तरह पढ़ना चाहता था। पर अपनी बेबसी पर मन-मसोसकर रह जाता। अपंगता की हालत में स्कूल कैसे जायेगा, उसे कौन पढ़ायेगा, यह सोचकर उसकी आन्तरिक इच्छा दबकर रह जाती।

निकटवर्ती विद्यालय के एक अध्यापक नित्य ही पढ़ाने के लिए उसी मार्ग से आते-जाते थे। बालक उन्हें जानता था। एक दिन जैसे ही अध्यापक महोदय उधर से गुजरे, छोटे बच्चे ने उनका अभिवादन किया। सड़क के किनारे बैठा देखकर उनने पूछा—कहो बेटे ! चुपचाप यहाँ क्यों बैठे हो ? सहानुभूति का सम्बल मिल जाने से उसके उद्‌गार फूट पड़े—"श्रीमान् ! मेरा मन पढ़ने को बहुत करता है। पर मुझे कौन पढ़ायेगा ?

उस मासूम की बातों से अध्यापक महोदय का हृदय द्रवित हो उठा। उन्होंने आश्वासन दिया कि अगले दिन से वह तैयार रहे, वे स्वयं उसे पढ़ायेंगे। दूसरे दिन से शिक्षक महोदय बालक को कन्धे पर बिठाकर विद्यालय ले जाते। वह दूसरे लड़कों के साथ पढ़ता तथा शाम को पुनः उनके सहयोग से घर आ जाता। अध्यापक एवं शिक्षक के भावभरे सहयोग से बालक का आरम्भिक शिक्षण पूरा हुआ।

संसार में दुष्टों की कमी नहीं है पर सज्जनों एवं सहृदयता के धनी व्यक्तियों का भी सर्वथा लोप नहीं हुआ है। उनके कारण ही मनुष्यता जीवित है। समय-समय पर ऐसे सहृदय व्यक्तियों का सहयोग भी मिलता है। कुछ ऐसा सहृदय व्यक्तियों का सहयोग भी मिलता है। कुछ ऐसा ही सुयोग उस अपंग बालक के साथ बिठा। दिल्ली के इरविन अस्पताल के एक डाक्टर दम्पत्ति नैनीताल के भीमताल में छुट्टियाँ बिताने आये। नौकुचिया ताल के निकट उनकी दृष्टि इस अपंग बालक पर पड़ी। जाने कौन-सी प्रेरणा उठी कि उस बालक के परीक्षण करने में डाक्टर अपने को नहीं रोक सके। निरीक्षण में उन्होंने पाया कि शल्य चिकित्सा के द्वारा बच्चे को चलने योग्य बनाया जा सकता है। उन्होंने बालक एवं उसके अभिभावक से बातचीत की। स्वयं सब खर्च वहन करके डा. कोहली ने इरविन अस्पताल में रखकर बालक का उपचार आरम्भ किया। दर्जनों आपरेशन हुए, जिसके फलस्वरूप बालक लाठियों के सहारे चलने-फिरने योग्य हो गया।

आकस्मिक इस सहयोग को परमात्मा की कृपा मानकर वह किशोर पुनः पढ़ाई में जुट गया। गाँव के निकटवर्ती इन्टर कालेज में दाखिला लेकर उसने आगे की पढ़ाई आरम्भ कर दी। इण्टर परीक्षा उत्तीर्ण करने के पश्चात् नैनीताल के एक कालेज में प्रवेश लिया। पढ़ने के लिए वह नित्य डेढ़ किलोमीटर पहाड़ी, ऊबड़-खाबड़ रास्ते को पार करके आता और जाता। बी.ए. करने के बाद अर्थशास्त्र में उसने मास्टर डिग्री प्राप्त की। अब वह नैनीताल के प्रशासकीय प्रशिक्षण संस्थान में एक कर्मचारी के रूप में कार्यरत है।

परिस्थितियों तथा अभावों का रोना रोते रहने वाले लोगों को इस युवक से प्रेरणा लेनी चाहिए तथा बारम्बार यह विचार करना चाहिए कि क्या उनकी स्थिति सचमुच ही इतनी दयनीय गयी-गुजरी है कि वे आगे बढ़ने के लिए कुछ नहीं कर सकते ? शरीर एवं बुद्धि से सक्षम होने पर भी जो ऐसा सोचते अथवा कहते हैं, स्वाभाविक रूप से उनकी नियत पर शक होता है। आन्तरिक आकांक्षा हो तो आगे बढ़ने तथा ऊँचे उठने के लिए हजार रास्ते निकल सकते हैं। पर जिनने हार मान ली, उनके लिए सचमुच ही प्रगति के रास्ते बन्द हैं। उनको दयनीय स्थिति से कोई देवता भी नहीं उबार सकता।

शारीरिक बाधा पर साहस की विजय

इसमें कोई सन्देह नहीं कि बधिरता और गूँगापन बहुत बड़ी शारीरिक बाधा है, क्योंकि इसके कारण मनुष्य अभिव्यक्ति के एक प्रबल माध्यम (आवाज) से वंचित रह जाता है पर यह कोई ऐसी बाधा नहीं है कि जिससे जीवन में प्रगति के सभी द्वार बन्द हो जायें। आज भी हमारे देश में ऐसे बहुत से मानव-रत्न हैं, जिन्होंने इस शारीरिक बाधा से पीड़ित रहने के बावजूद जीवन में सफलता प्राप्त की है। **श्री चन्द्रमोहन प्रधान** एक ऐसे ही युवक-रत्न हैं।

चन्द्रमोहन का जन्म १० जनवरी, १९३८ को बिहार राज्य के मुजफ्फरपुर नामक नगर में एक वैश्य परिवार में हुआ। बुद्धि इनकी बचपन से ही बड़ी तीव्र थी। मेधावी तो वे इतने थे कि अपनी कक्षा में सदैव प्रथम आते थे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इनका जीवन एक सुखमय बगिया के समान था, जिसमें आशा और उमंग के फूल खिले थे। पर अचानक १९४७ में इन्हें भीषण टायफाइड हो गया और मस्तिष्क पर पक्षाघात का आक्रमण भी। काफी कष्टसाध्य एवं लम्बे उपचार के बाद वे मौत के पंजे से तो बच गये पर पूर्ण रूप से बहरे हो गये। आँखों की ज्योति भी बहुत क्षीण हो गई और आंशिक रूप से गूँगे भी हो गये।

अब तो जीवन का सारा क्रम ही बदल गया। स्कूल की पढ़ाई बन्द कर देनी पड़ी। आशाओं और उमंगों पर जैसे तुषारापात हो गया। पर बालक चन्द्रमोहन ने धैर्य और आत्म-विश्वास का सम्बल नहीं छोड़ा। पिता ने भी साहस बढ़ाया और घर पर ही इनके पढ़ने-लिखने की व्यवस्था कर दी गई। साथ ही साथ यथासाध्य उपचार भी चलता रहा, जिसके फलस्वरूप इनकी वाक्-शक्ति तो कुछ लौट आई है पर बहरापन रह ही गया।

सन् १९५२ तक मोहन का पठन-पाठन घर पर ही चलता रहा। १९५३ में शिक्षकों की सलाह से इनका नाम तिरहुत अकादमी के आठवें दर्जे में लिखा दिया गया। किन्तु अभी भी असली पढ़ाई-लिखाई घर पर ही होती रही। बधिरता और आवाज की अस्पष्टता के कारण इन्हें पढ़ने-लिखने में कठिनाई तो बहुत होती थी पर इन्होंने साहस नहीं छोड़ा और अपने सुयोग्य शिक्षकों के निर्देशन एवं संरक्षण में १९५५ में बड़े अच्छे अंकों से मैट्रिक की परीक्षा में उत्तीर्ण हो गये।

बचपन से ही चित्रकला के प्रति इनकी अभिरुचि देखकर इनके पिता ने इनका नाम पटना के राजकीय आर्ट स्कूल में दर्ज करा दिया। वहाँ जाते ही इनकी प्रतिभा चमक उठी और इन्होंने प्रथम श्रेणी में आर्ट्स डिप्लोमा कोर्स ससम्मान पास किसा।

इसी समय इनकी जीवन-यात्रा में पुनः एक मोड़ आया। अपने पिता की सलाह से इन्हें व्यापार के क्षेत्र में प्रवेश करना पड़ा। इनकी परिश्रमशीलता, लगन और सूझ-बूझ का ही परिणाम है कि आज इनके प्रेस की गणना शहर के प्रतिष्ठित प्रेसों में की जाती है। प्रेस के कार्य में व्यस्त रहने के साथ-साथ इनकी चित्र-कला एवं साहित्य साधना भी सतत चलती रहती है और इनके लेख, कहानी एवं कविता आदि अच्छी-अच्छी साहित्यिक पत्रिकाओं में छपते रहते हैं। इनके चित्र एवं कार्टून 'धर्मयुग' जैसी अग्रगण्य पत्रिका में भी छप चुके हैं तथा मुजफ्फरपुर में १९६५ की कला-प्रदर्शिनी में इन्हें अपने चित्रों पर प्रथम पुरस्कार भी प्राप्त हो चुका है।

प्रेस के अलावा ये 'ज्ञान-कला-केन्द्र' नामक एक 'किण्डर-गार्टन स्कूल' भी चला रहे हैं, जहाँ बाल-शिक्षा के साथ-साथ बच्चों के चारित्रिक एवं भावनात्मक विकास पर भी यथेष्ठ ध्यान दिया जाता है। निराश्रित और उपेक्षित बच्चों के कल्याणार्थ एक 'बाल-भवन' बनाने का भी इनका विचार है। इतना ही नहीं, मुजफ्फरपुर में एक कला-विद्यालय स्थापित करने की भी इनकी योजना है, जहाँ बालकों तथा वयस्कों को मूर्ति-कला, चित्रकला, शिल्प-कला आदि ललित कलाओं की सम्यक शिक्षा दी जा सके। दूसरों को भी उससे अजस्र-प्रेरणा ही मिलेगी।

अपंग जिसने समर्थों को पीछे छोड़ दिया

मार्क्स हिल्स १२ वर्ष की आयु में पेड़ पर शौक-शौक में चढ़ा। पैर फिसला तो धड़ाम से गिरा और उसकी हड्डी-पसली चकनाचूर हो गईं। माँस के लोथड़े की तरह उसे अस्पताल में भर्ती किया गया। बचने की उम्मीद न थी तो भी वह बच गया। हड्डियाँ ज्यो-त्यों करके जोड़ी गईं और उसे दस महीने तक इस प्रकार उलटा-पुलटा अस्पताल के पलंग से कसकर रखा जाता रहा ताकि हड्डियाँ जुड़ सकें। वे ओंधी-सीधी जुड़ तो गईं पर बेचारा हो गया सर्वथा अपाहिज, कुरूप ,दिखने में भौंडा, चलने फिरने में असमर्थ। हाथ भी थोड़ा सहारा भर देते थे। कुछ करने योग्य नहीं बन सके। गर्दन भी इतनी जकड़ गई कि वह थोड़ी सी इधर-उधर मुड़ सकती थी। पहियेदार कुर्सी पर बैठकर ही उसे छोटे बच्चों की तरह इधर-उधर ले जाया जा सकता था।

इस प्रकार दिन काटने उसे भारी पड़ गये। उन दिनों वह कैलीफोर्निया में मैन हैटन तट पर अपने परिवार के साथ रहता था। पिता अध्यापक की नौकरी करते थे। पूरे परिवार का गुजारा उसी से चलता था। इस गरीबी में भी उनने बच्चों की उपेक्षा नहीं की। यहाँ तक कि मार्क्स हिल्स के अपंग होने पर भी उसकी ओर से निराश नहीं हुए और यही समझाते रहे कि आँखें और दिमाग सही-सलामत होने पर हाथ-पैरों की अपंगता प्रगतिपथ पर बढ़ने में बाधक नहीं हो सकती कुछ सोचो और कुछ करो। हम सहायता करेंगे।

मार्क्स जब गिरा था, उससे पूर्व उसे ड्राइंग का शौक था। वह उसे पूरा करना चाहता था, पर हाथ जरा भी सहायता नहीं करते थे। इसी दशा में उसने मुँह से पेन्सिल पकड़कर चित्र बनाने शुरू किये। पेन्सिल छोटी तथ कड़ी होने से आँखें मोड़नी पड़ती थीं तथा दाँतों की जड़ें छिलती थीं। इस कठिनाई का हल उसने पाँव से निकाला। ऐलमुनियम और रबड़ को मिलाकर एक ऐसी नली बनाई, जिसमें पेन्सिल या बुश लगाकर दूर तक ले जाया जा सके। इससे आँखों और दाँतों पर दबाव पड़ना बन्द हो गया और उसे चित्र बनाने में सुविधा होने लगी। पेन्सिल का अभ्यास आगे बढ़ा तो उसने बुश पकड़ा और बढ़िया चित्र बनाने लगा।

आगे पढ़ने के लिए उसने लास एंजेल्स स्थिच 'यूनिवर्सिटी ऑफ कैलीफोर्निया' में प्रवेश पाने का आवेदन किया। इन्टरव्यू के लिए जब वह उपस्थित हुआ तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परीक्षक अवाक् रह गये कि कैसे वह मुँह से लम्बी नली लगाकर बढ़िया चित्र बना लेता है। उसे प्रवेश मिल गया। अब उसके उत्साह का ठिकाना न था। दूने-चौगुने साहस के साथ प्रयत्न करने लगा। खुश भी बहुत रहता था। मित्रों से कभी-कभी मजाक में कहता—"यदि मेरे जबड़े की तरह शरीर की अन्य माँस-पेशियाँ भी मजबूत होतीं तो मैं इस मकान को कन्धे पर उठाये-उठाये फिरता।"

उसने न केवल चित्रकला सीखी, वरन् अध्ययन भी जारी रखा और आर्ट कालेज के मेधावी छात्रों में गिना जाने लगा। सफल चित्रकारों में उसकी गणना होने लगी।

साथी छात्रगण उसकी लगन और साहसिकता पर मुग्ध थे। उनके विश्वविद्यालय के डीन से प्रार्थना की गयी कि अपंगता को चुनौती देने वाली इस प्रतिभा की एक फिल्म बनानी चाहिए जो पिछड़ों में उत्साह जगाने का काम कर सके। छात्रों की समिति के इस प्रस्ताव को डीन ने तत्काल स्वीकार कर लिया। साथ ही ६००० डालर का अनुदान भी मंजूर कर दिया। रंगीन बोलती फिल्म बनी। पैसे की कमी पड़ी तो अन्यत्र से उसकी पूर्ति हुई। अन्ततः उसे अमेरिका के छात्रों में, विशेषतया बाधितों में उसे दिखाया गया। इससे कितनों ने ही नये सिरे से सोचना और प्रयास करना आरम्भ कर दिया।

'गोल्डन ग्रेट' पुरस्कार प्राप्त इस फिल्म का नाम था—'ग्रेविटी इज माई ऐनिमी' अर्थात् गुरुत्वाकर्षण मेरा दुश्मन। इस फिल्म में गिराने वाली परिस्थितियों की तुलना पृथ्वी की ग्रेविटी से की गई है और सिद्ध किया गया कि साहस के आधार पर किसी भी प्रकार की गिरावट के माहौल से जूझा जा सकता है, जीवन को नयी दिशा दी जा सकती है।

अवगति का कारण अभाव नहीं अनुत्साह

संसार में अनेकों आश्चर्यजनक वस्तुएँ पाई जाती हैं और घटनाएँ देखी जाती हैं। इनमें सबसे विलक्षण है—मानवी संरचना और उसमें सन्निहित सम्भावना। लगता है सृष्टा ने अपनी विभूतियों और कुशलताओं को मनुष्य के छोटे से कलेवर में गागर में सागर की तरह भर दिया है। असमंजस इसी बात का है कि वे विशिष्टताएँ प्रसुप्त स्थिति में पड़ी रहती हैं। सामान्यतया इस रहस्यमय भण्डार में से उतना ही प्रकट और विकसित होता है जितनी कि आवश्यकता पड़ती और उभारने की चेष्टा की जाती है। शेष सब कुछ अविकसित एवं अविज्ञात स्थिति में ही पड़ा रहता है।

माना यह जाता है कि कठिन परिस्थितियों और साधनों के अभावों से ही मनुष्य गई-गुजरी स्थिति में पड़ा रहता है और दुःख सहता है, पर वास्तविकता ऐसी है नहीं। स्वल्प साधनों से भी वर्चस्व बनाये रखा जा सकता है और वैभव बढ़ाया जा सकता है। यही बात कठिनाइयों के सम्बन्ध में भी है। वे बाधक तो अवश्य होती हैं और प्रगति-क्रम में विलम्ब भी लगाती हैं। इतने पर भी यह तत्परता और साहसिकता बनी रहे तो अभीष्ट की दिशा में अग्रसर होने में गतिरोध देर तक नहीं रह सकता है। इच्छाशक्ति की सामर्थ्य प्रचंड है। साहस भरे प्रयास ऐसी उपलब्धियाँ अर्जित कर लेते हैं जिन्हें देखने पर चमत्कार जैसा लगता है। देवताओं द्वारा मिलने वाले वरदानों की चर्चा समय-समय पर होती रहती है। देवताओं के अस्तित्व और उनके अनुग्रह के पक्ष-विपक्ष में बहुत कुछ कहा जा सकता है। पर यह तथ्य निर्विवाद है कि मनुष्य का संकल्प, साहस और प्रयास यदि उच्चस्तरीय बना रहे तो उसका प्रतिफल दैवी वरदानों से किसी प्रकार कम नहीं होता। कठिन परिस्थितियाँ अपने स्थान पर बनी रहती हैं और मनुष्य अपनी प्रयत्नशीलता के आधार पर वहाँ जा पहुँचता है, जिसके लिए सर्व-समर्थ भी तरसते पाये जाते हैं।

इतिहास में ऐसी घटनाओं की कमी नहीं जिसमें अभावों के ऊपर साहस ने विजय पाई है। विकट परिस्थितियों में जन्मे, पले और घिरे व्यक्ति आमतौर से पिछड़ेपन से ग्रसित रहकर ही दिन बिताते हैं, पर यह अभिशाप हर किसी पर नहीं लदता। असंख्यों ऐसे भी होते हैं जो परिस्थितियों को चुनौती देते, कठिनाइयों से अठखेलियाँ करते अभीष्ट की दिशा में दन-दनाते और सन-सनाते चले जाते हैं। चेतना के अन्तराल में सन्निहित विशेषताएँ उभारने का प्रयत्न करने वालों को किसी के आगे हाथ नहीं पसारना पड़ता है। प्रतिभा जब उभरती है तो बाहरी सहयोग को अपनी आकर्षण शक्ति के सहारे आस-पास ही खींच लेती है। महामानवों की जीवन-गाथा के साथ जुड़े घटनाक्रमों का विश्लेषण करने पर उनकी सफलताओं में इसी तथ्य का पग-पग पर प्रमाण परिचय मिलता है। ऐसे उदाहरणों से इतिहास के पन्ने तो भरे हुए हैं। दृष्टि पसारने पर इस स्तर के प्रमाण अपने इर्द-गिर्द ही पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो सकते हैं।

सन् १८८३ में अमेरिका की कोलोरेडो खान में एक १७ वर्षीय मेकफर्सन नामक युवक काम करता था। एक दिन चट्टान दुर्घटना में वह अपनी दोनों आँखें तथा हाथ गँवा बैठा। सामान्य व्यक्ति अपना धीरज खो बैठता तथा जीवन में निराश हो जाता। किन्तु इस भयंकर दुर्घटना के बाद भी मेकफर्सन का लगाव जीवन में बना रहा। उसने अपनी जीभ की नोक को धातु के टाइप अक्षरों पर फिराकर पढ़ने का अभ्यास आरम्भ किया। सामान्यतः अंधे व्यक्ति ब्रेल पुस्तकों के उभरे अक्षरों को अंगुलियों से टटोलकर पढ़ते हैं किन्तु जीभ द्वारा पढ़ने का प्रयास करना एक आश्चर्यजनक घटना है। सतत् प्रयास तथा अटूट मनोयोग का अनुकूल परिणाम निकला। कुछ ही दिनों में मेकफर्सन पढ़ने लगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गाजियाबाद (उ. प्र.) के युवक श्री सुरेशानन्द जिन्होंने पैर से रेडियो बजाना, माचिस जलाने से लेकर लिखने-पढ़ने में कुशलता प्राप्त की है, अभी तक दो विषयों में एम. ए. करके स्वस्थ व सबल कहे जाने वाले प्रतिभाशाली छात्रों के लिए एक आदर्श बन गये।

श्री सुरेशानन्द जिनके दोनों हाथ व दोनों पाँव जन्मजात लुंज हैं, बचपन में जब अपने बड़े भाई को पढ़ते-लिखते देखते तो उनके भी दिल में पढ़ने का उत्साह उमड़ता, किन्तु हाथ से असमर्थ कलम पकड़ने तक की भी सुविधा जिसे ईश्वर ने न दी हो, वह रोने के सिवाय और कर ही क्या सकता है। माता-पिता सुरेशानन्द की उत्कण्ठा को समझते किन्तु वह भी तो असमर्थ थे। विवश सुरेशानन्द नित्य अपने भाई का पढ़ना-लिखना देख कर अपनी तृप्ति करते। एक दिन अपने भाई की कलम पैर के अँगूठे और उँगली की सहायता से पकड़ कर एक कागज में सुरेशानन्द ने अ, आ लिख दिया। सुरेशानन्द के यह प्रथम बार के लिखे अक्षर इतने सुन्दर थे कि कोई भी सामान्य बुद्धि का बालक वैसे अक्षर न बना पाता। सुरेशानन्द के भाई ने उनके इन सुन्दर अक्षरों को माता-पिता को दिखाया। माता-पिता को सुरेशानन्द की प्रतिभा व अक्षर लिखने की कुशलता का पता चला तो उन्होंने उसके लिए लिखने पढ़ने की सभी साधन- सामग्री जोड़ दीं।

शिक्षा जारी रही। न उत्साह घटा न प्रयत्न फीका पड़ा। फलतः अच्छे डिवीजन में एक के बाद दूसरी परीक्षा उत्तीर्ण करते हुए अँग्रेजी और राजनीति से एम. ए. पास कर ली। यह युवक कवि भी है और लेखक भी। रचनाएँ कई पत्रिकाओं में छपती रही हैं। प्रतिभा के धनी इस लगनशील को राष्ट्रपति डा. राजेन्द्र प्रसाद ने सम्मानित भी किया था।

अपनी इसी पृथ्वी पर एक ऐसा भी क्षेत्र है जहाँ के सभी प्राणधारी अन्धे ही होते हैं। यह स्थान मैक्सिको के समुद्री क्षेत्र में स्थिति टुलप्पिक नामक स्थान है। यहाँ पर जन्म लेते समय बच्चा तो आँख वाला पैदा होता है किन्तु कुछ ही दिनों में वह अन्धा हो जाता है। यहाँ पर रहने वाले पशु-पक्षी, कीड़े-मकोड़े सभी अन्धे ही होते हैं।

टुलप्पिक में मात्र एक ही सड़क है जिसके दोनों किनारों पर यहाँ के अन्धे निवासियों की बिना दरवाजों और खिड़की वाली झौंपड़ियाँ बनी हैं। यहाँ के लोग पक्षियों के कलकल को सुनकर प्रातःकाल का अनुमान करते और उसी के साथ उठकर पुरुष अपने-अपने खेतों में तथा स्त्रियाँ घर के काम में लग जाती हैं। प्रकृति की यह विलक्षण लीला है कि कोई भी अन्धा न तो एक दूसरे के खेत में धोखे से पहुँचता है और न ही दूसरों की झौंपड़ी में प्रवेश करता है। अन्धा होते हुए भी प्रकृति ने यहाँ के प्रत्येक प्राणी को इतनी प्रज्ञाचक्षु प्रदान की है कि वह अपना जीवन निर्वाह का क्रम बनाये रह सकता है।

अनेकों ऐसे होते हैं जिन्हें सुविधा-साधनों की कोई कमी नहीं होती। सहायक भी बहुत होते हैं। अभिभावकों का लाड़-प्यार और वैभव भी कम नहीं होता। इतने पर भी वे कोई कहने लायक प्रगति नहीं कर पाते। समय की कमी, साधनों का अभाव बताकर कई व्यक्ति अपने पिछड़ेपन का दोष हल्का करते भी हैं। उनकी बात एक सीमा तक स्वीकार भी की जाती है किन्तु जिनके पास किसी प्रकार की कमी नहीं है, उन सम्पन्न परिवारों में जन्मे लोगों को क्या कहा जाय जो पर्याप्त अवसर होते हुए भी किसी दिशा में प्रगति नहीं कर पाते। बैठे-ठाले समय गुजारने वाले और दुर्व्यसनों से ग्रसित होकर उपलब्धियों को नष्ट-भ्रष्ट करते रहने वालों का प्रधान दोष एक ही होता है, अपनी विशेषता को न समझ पाना और उन्हें उभारने के लिए उत्साह न जुटा पाना।

सफलताओं में अवरोध उत्पन्न करने वाले अन्य कारण भी हो सकते हैं, पर सबसे बड़ा कारण है अपनी सामर्थ्य से अनजान रहना, योग्यता को न बढ़ाना और प्रगति के लिए पुरुषार्थ न करना। यदि इन दोषों को हटाया जा सके तो हर व्यक्ति उज्ज्वल भविष्य की संरचना अपने ही हाथों कर सकता है। भले ही उसके इर्द-गिर्द कठिनाइयाँ घिरी पड़ी हों।

जिन्दगी मौत से ज्यादा मजबूत है

फौजी डाक्टर **ई. फ्रैन्सिस** ने अपने युद्धकालीन चिकित्सा अनुभवों का विवरण प्रकाशित करते हुए व्यक्ति किया है कि—मात्र चिकित्सा के बलबूते खतरनाक घायलों को अच्छा नहीं किया जा सकता, इसके लिए घायल में दिलेरी और जीवनेच्छा की प्रखरता नितान्त आवश्यक है। जिनका मनोबल कमजोर होता है, जिनके मस्तिष्क पर मौत छा जाती है और उसकी आशंका से भयभीत मनःस्थिति में फँस जाते हैं। उनके लिए अच्छी चिकित्सा भी कारगर नहीं होती।

डाक्टर ने शेरोथियरी मोर्चे पर घायल हुए एक आयरिश सिपाही **आयोवा** का उल्लेख किया है। एक गोली उसकी दाहिनी ओर पसली में कन्धे की हँसली वाली हड्डी को तोड़ती हुई जा घुसी थी। छर्रों ने फेफड़े, डायफ्राम, पित्त कोष, जिगर और आँतों को छलनी बना दिया था। कुल मिलाकर १३ जगह बड़े-बड़े छेद थे जिनमें होकर खून बहता था।

अस्पताल में वह आपरेशन की मेज पर लाया गया। तब भी उसके चेहरे पर विश्वास और आँखों में चमक थी। बेहोशी की दवा दी गई और उसके मर्मस्थलों में घुसे हुए गोली तथा छर्रों को निकाला। घावों को बन्द किया और मरहम पट्टी बाँधी। होश आने पर ऐसे आपरेशन वाले रोगी अक्सर बुरी तरह कराहते हैं और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उन्हें चैन देने के लिए तन्द्रा लाने वाली दवाएँ देनी पड़ती हैं। पर आयोवा ने एक अनौखा ही अपवाद प्रस्तुत किया। होश में आते ही उसने फिर लगभग वही शब्द दुहराये। डाक्टर मैं अब बहुत अच्छा हूँ, जरूर अच्छा हो जाऊँगा। तन्द्रा की एक दो हलकी सी खुराकें देने से ही वह कष्टदायक वेदना के क्षणों को पार कर गया।

आयोवा वाले वार्ड में ही लगभग एक दर्जन घायल और लाये गये। उन्हें भी घाव तो कितने ही लगे थे पर इतने गम्भीर नहीं थे। फिर भी वे डरे हुए थे और सिसकियाँ भर रहे थे। आयोवा ने लेटे-लेटे ही आवाज तेज की और कहा—मुझ तेरह घाव वाले को देखो। कितनी तेजी से अच्छा हो रहा हूँ। अगले ही महीने मोर्चे पर फिर पहुँचने की आशा करता हूँ। फिर तुम्हें हैरान होने की क्या आवश्यकता है। कुछ ही हफ्तों में तुम भी अच्छे होकर अस्पताल छोड़ सकोगे।'' इन शब्दों में न जाने कैसा जादू था कि सभी घायलों की आँखों में आशा का प्रकाश चमक उठा और सचमुच उनके आपरेशन तथा चिकित्सा-परिणाम बहुत ही उत्साह-वर्धक सिद्ध हुए।

आयोवा आपरेशन के बाद एक सप्ताह तक बहुत बुरी अवस्था में रहा। कई दिन तापमान बहुत ऊँचा रहा, दिल की चाल ने, रक्त-चाप ने तथा नाड़ियों में विष संचय ने ऐसी स्थिति उत्पन्न कर दी मानो वह अब शान्त ही होने वाला है। ऐसी दशा में भी उसे जब थोड़ा होश आया तब यह शब्द मुँह से निकले—मैं जरूर अच्छा हो जाऊँगा।

आयोवा जब तक चलने-फिरने लायक न हो गया तब तक नर्सों के हाथों वार्ड के दूसरे घायलों तक अपना यही सन्देश भेजता रहा—''आपरेशन के बाद फिर कोई विरला ही मरता है। दोस्तो ! जीवन पर विश्वास रखो, मौत खुद ही मोर्चा छोड़कर चली जायेगी।

जब वह थोड़ा चलने लायक हो गया तो उठकर दूसरे घायलों के पास जाता और कहता ''जिन्दगी मौत से ज्यादा मजबूत है।'' घायलों को जल्दी अच्छा करने में इस साहसी सिपाही के मनोबल ने कितनी अधिक सहायता की, इसके परिणामों को देखते हुए हम सभी डाक्टर आश्चर्यचकित थे।

जो मौत से लड़े और अन्ततः विजयी हुए

जीने की अदम्य आकांक्षा मानव की अमूल्य संपदा है। इसके महत्त्व एवं गरिमा को समझने वाले आस्थावान भयंकर परिस्थितियों में भी जीवन से निराश नहीं होते। आये हुए संकट को चीरते हुए अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखने में सफल होते हैं। परिस्थितियाँ ऐसे जीवट-सम्पन्न व्यक्तियों के समक्ष नत-मस्तक होती हैं।

घटना ग्यारह वर्ष पूर्व की है। कनाडा का एक पायलट **राबर्ट गाउची** अपनी नियमित उड़ान उत्तर ध्रुव से फोर्ट स्मिथ को भर रहा था। अब तक वह अपने जीवन काल में ६००० घण्टे की उड़ान भर चुका था। उत्तरी ध्रुव के शून्य से ६० नीचे वाले तापमान क्षेत्र में उड़ान भरने का अभ्यस्त यह अनुभवी पायलट अन्य दिनों की तरह २ फरवरी, १९६७ को कैम्ब्रीज नामक ग्राम में कुछ अधिकारियों को उतारकर अकेला वापसी यात्रा पर रवाना हुआ। कुछ ही दूर आगे बढ़ने पर उसे बर्फीले तूफान का सामना करना पड़ा। लाचार होकर उसे विमान बर्फ की सतह पर ही उतारना पड़ा। प्रतिकूल मौसम के कारण एकमात्र सहायक कम्पास खो जाने पर ढूँढने में मदद करने वाले यंत्र ने भी काम करना बन्द कर दिया। बर्फीले तूफान में किसी अन्य के सहयोग की आशा नहीं थी क्योंकि जिस मार्ग में वह उड़ रहा था, वह आम हवाई मार्ग नहीं था। उसके पास राशन की मात्रा मात्र इतनी थी कि किसी प्रकार २० दिन जीवित रहा जा सके।

दो दिन स्लीपिंग बैग में सोते रहने के उपरान्त तीसरे दिन तूफान कम पड़ने पर उसने बर्फ में से सहायता के लिए १५० फीट ऊँचे अक्षर अंकित किए, जिससे ऊपर उड़ने वाला कोई विमान उन्हें देख सके परन्तु तीव्र हवा के कारण बनाये गये निशान मिट गये। भीषण ठंड में मौत के बीच झूलते हुए भी 'गाउची' ने जीवन के प्रति आशा नहीं छोड़ी।

इसी बीच उसे ढूँढ़ने वायुसेना का खोजी दस्ता ३ फरवरी से १७ फरवरी तक लगातार पेट्रोलिंग करता फिरा किन्तु उसको ढूँढ़ नहीं पाया। अन्ततः निराश होकर वायु सेना ने उम्मीद छोड़ दी तथा अपने शोक-संदेश गाउची की पत्नी तक पहुँचा दिये।

राबर्ट २८ दिन तक थोड़ा-थोड़ा राशन खाकर मृत्यु से संघर्ष करता रहा। एक दिन उसने एक विमान के गुजरने की आवाज सुनी। रोमांचित होकर वह बाहर आया तथा हवा में रायफल से एक फायर किया, जिससे विमान चालक उसकी स्थिति जान सकें। दुर्भाग्य ने उसका साथ यहाँ भी नहीं छोड़ा, विमान सीधे निकल गया। ऐसा ही ४०वें व ४५वें दिन भी हुआ।

बर्फीले पहाड़ में ५५ दिन उसे रहते व्यतीत हो चुके थे। फिर भी साहसी पायलट अपना मनोबल यथावत् बनाये रहा ५६ वें दिन एक लाल विमान उसके २००० फीट ऊपर से गुजरा। यह सौभाग्य ही था कि डूबते सूरज की किरणों के प्रकाश से राबर्ट की चमक ऊपर जा रहे उसके दो साथियों को दिखाई दे गयी। वे वापस लौटे तथा विमान से उतर कर 'राबर्ट' की ओर कदम बढ़ाये। राबर्ट ने अपने साथियों से हँसते हुए कहा, ''क्या तुम्हारे विमान में एक यात्री की जगह है ?''

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किसी भी व्यक्ति के लिए उस बर्फीले पहाड़ पर मृत्यु को चुनौती देते हुए इतने दिन तक जीवित रहना तथा वापस लौट आना एक आश्चर्य ही है। किन्तु जीवन की गरिमा एवं सर्वोपरिता स्वीकार करने वाले के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है।

जीने की उत्कृष्ट इच्छा मनुष्य को कठिनाइयों में भी शक्ति एवं प्रेरणा का संचार करती है, ऐसे व्यक्ति संकटकाल में भी रास्ता ढूँढ़ निकालते हैं। चीनी नाविक **'पुनलिम'** का भीषण समुद्री तूफान में १३३ दिन जीवित रहना तथा सकुशल वापस चले आना जिजीविषा का ही परिचायक है। घटना इस प्रकार है—'पुनलिम' एक छोटे जहाज 'तारपिडो' को लेकर जा रहा था। आकस्मिक समुद्री तूफान के कारण तारपिडो का सन्तुलन कायम नहीं रह सका तथा उलट गया। नाविक लिम ने तारपिडो से टूटे एक लकड़ी के तख्ते को पकड़ लिया। समुद्री लहरों के थपेड़ों के साथ वह तख्ते पर बहता रहा। मानवी संरचना इतनी दुर्बल नहीं है कि छोटे-मोटे संकटों के सामने घुटने टेक दे। उनसे संघर्ष करने की पर्याप्त शक्ति उसमें भरी है। जिजीविषा को दुर्बल न पड़ने दिया जाय तो मौत सदृश दिखायी देने वाली विपत्तियों को पार कर सकना कुछ अधिक कठिन नहीं दिखता। अन्दर की शक्ति ने 'पुनलिम' का पथ प्रशस्त किया।

जीवित रहने के लिए 'लिम' ने समुद्री मछलियों को लकड़ी के तख्ते पर से ही पकड़ना आरम्भ किया। वर्षा के पानी एवं मछलियों से पेट की ज्वाला शान्त रखकर वह मृत्यु से निरन्तर संघर्ष करता रहा। इस प्रकार लहरों के बीच बहता हुआ वह ब्राजील पहुँचा ब्राजील वासियों की ओर से इस साहसी नाविक का स्वागत करते हुए पार्लियामेंट्री सेक्रेटरी 'नोबेल वेकर' ने इस एक आश्चर्यजनक घटना पर 'पुनलिम' को उसके प्रचण्ड साहस के लिए पारितोषिक प्रदान किया।

अपनी गरिमा का अनादर करने वाले भाग्य के भरोसे बैठे रहते तथा परिस्थितियों का रोना रोते रहते हैं। अपनी वर्तमान निकृष्ट परिस्थितियों का कारण समाज एवं ईश्वर को बताते हैं जबकि जीवन की सर्वोपरिता को स्वीकार करने वाले अपनी असामान्य क्षमता को पहचानते हैं तथा ईश्वर प्रदत्त जीवन उपहार का सदुपयोग करते हुए निरन्तर आगे बढ़ते जाते हैं। ऐसे व्यक्तियों के समक्ष परिस्थितियाँ बाधक नहीं होतीं। सामान्य घटनाक्रमों एवं अभावों के कारण अपना मानसिक सन्तुलन नष्ट करते रहने वालों के लिए 'बेल्जियम' निवासी 'चार्ल्स फेलू' का जीवन वृतान्त अधिक प्रेरणास्पद होगा। **'चार्ल्स फेलू'** सन् १८३० में बिना हाथों के पैदा हुआ तथा ७० वर्ष तक जीवित रहा। हाथों के अभाव में भी उसने पैर द्वारा पेंटिंग चित्रकारी कला सीखना आरम्भ किया तथा निरन्तर अभ्यास एवं लगन से प्रसिद्ध चित्रकार बना। सदा प्रसन्नचित्त रहने वाले इस चित्रकार की प्रशंसा तत्कालीन राजा, महाराजा सभी करते थे। 'फेलू' के अन्दर से प्रवाहित उत्साह, प्रेरणा एवं प्राण शक्ति से निराश व्यक्ति प्रेरणा लेते। राजाओं द्वारा हाथ मिलाये जाने पर वह अपने पैरों को आगे बढ़ा देता था।

शारीरिक अक्षमता मनुष्य के विकास में बाधक नहीं हो सकती। अन्तरात्मा की शक्ति का मूल्यांकन करने वाले शरीर से अपाहिज होते हुए भी 'जानी' के समान प्रेरणा के स्रोत बनते हैं। २७ अगस्त, १९१० को 'बाल्टीमोर' सिटी में एक दम्पत्ति के जुड़वाँ बच्चे पैदा हुए। उनमें एक बच्चा सामान्य था किन्तु दूसरे के कमर के नीचे का हिस्सा नहीं था। जीवन के प्रति अदम्य उत्साह एवं प्रेम के कारण यह बच्चा न केवल जीवित रहा अपितु विलक्षण प्रतिभा-सम्पन्न बना। १४ वर्ष की आयु में उसने हाई-स्कूल पास किया। असामान्य विद्वता के कारण 'जानी' का नामांकन सीधे ग्रेजुएट कक्षा में हो गया। कालेज का अध्ययन समाप्त करने के उपरान्त भी उसमें सीखने की प्रवृत्ति सदा बनी रही। परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार की कलाओं में वह निपुण बन गया। जानी अब एक एक्सपर्ट ड्राईवर, ड्राफ्टमैन, संगीत मास्टर, के रूप में पूरे वाल्टीमोर शहर में विख्यात है। असम्भव समझी जाने वाली कला जिसे पैरों द्वारा ही सीखा जा सकता है, में तैराकी, डान्सिग, रस्सी पर चलना, वेसवाल टैग खेल में विशेषता प्राप्त कर जन सामान्य को आश्चर्यचकित कर दिया। अपने जीवनकाल में 'जानी' कभी भयंकर रोग से ग्रसित नहीं हुआ। सदा स्वस्थ, प्रसन्न एवं सन्तुष्ट रहने वाला यह विलक्षण व्यक्ति सदा दूसरों के आकर्षण का केन्द्र बना रहा। उसके सम्पर्क में आने वाले सहज ही प्रेरणा प्राप्त करते। प्रकृति एवं परिस्थितियों को चैलेंज करते हुए इस व्यक्ति ने विश्व के समक्ष अद्भुत उदाहरण प्रस्तुत किया तथा यह सिद्ध कर दिया कि जीवन से असीम प्रेम करने वालों के समक्ष शारीरिक एवं परिस्थितिजन्य अवरोध बाधक नहीं हो सकते।

मनुष्य जीवन ईश्वर का दिया हुआ सर्वश्रेष्ठ उपहार है। इसकी गरिमा को समझने तथा उसका सदुपयोग करने वाले ही अपने लक्ष्य को प्राप्त करते हैं और दूसरों की प्रेरणा के केन्द्र बनते हैं।

प्रतिकूलताओं के रहते हुए भी प्रगति सम्भव है

यह आवश्यक नहीं कि किसी को उन्नतिशील बनने के लिए उसके पास समुचित साधन चाहिए अथवा उसके अभिभावकों द्वारा उसके लिए शिक्षा तथा सुविधा जुटाने का प्रबन्ध किया ही जाय। यह हो तो अच्छी बात है किन्तु इनका अभाव रहने पर भी मनुष्य अपनी इच्छाशक्ति एवं तत्परता के बल पर प्रतिकूलताओं को भी अनुकूलताओं में बदल सकता है और साधारण स्थिति की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रुकावटों को अपने मनोबल के आधार पर दूर करते हुए उन्नति के उच्च शिखर तक पहुँच सकता है।

डिजराइली का कथन है कि "सफलता का रहस्य उस कार्य में दृढ़ता और मनोयोगपूर्वक जुटे रहना है" कुछ लोगों का कहना है कि भौतिक सफलता अर्थहीन और बकवास है। सफलता के प्रतीक के रूप में धन का अपना महत्त्व है। लेखक, संगीतज्ञ, चित्रकार, मूर्तिकार, कृषक अथवा मजदूर; पेटभर भोजन तो सबको चाहिए किन्तु रचनात्मक प्रवृत्तियों का लक्ष्य मात्र धनोपार्जन नहीं होना चाहिए। विश्व के अनेक मेधावी ऐसे हैं जो अभावों में जन्मे, असुविधाओं में पले और संघर्षों में जीकर भी सफलता के चरम लक्ष्य तक जा पहुँचे।

सफलताओं के लिए सुविधाएँ ही आवश्यक हों ऐसी बात नहीं है। जिन्हें जीवनभर सुविधाएँ नहीं मिलीं और गरीबी व अभाव में जीकर भी उन्होंने ऐसे कार्य किये जो सुख-सुविधाओं में रहकर नहीं कर सके। सफलता के लिए सफलता की कामना और दृढ़ इच्छा ही मुख्य है।

अंध कवि **होमर** यूनान का विख्यात भिखारी था। किन्तु अपनी कृति से आज भी अमर है। इसी प्रकार रोम का महाकवि **विर्जिल** साधारण बाबर्ची का पुत्र था। अपने ढंग की बेजोड़ कथाओं का रचनाकार **ईसप** एक कुरूप, काला गुलाम था। **डिमास्थेनस** सिकलीगर परिवार में जन्मा था। उसका पिता छुरी, चाकू बनाकर आजीविका चलाता था, किन्तु डिमास्थेनस के भाषणों को आज भी याद किया जाता है।

सुविख्यात पुस्तक "डान क्विस्कोट" का लेखक **सर बैटेस** सेना का साधारण सिपाही था। अँग्रेजी का महा कवि **कीट्स** एक साधारण सईस का लड़का था। उसने अपने जीवन की शुरूआत दवा विक्रेता के यहाँ नौकरी करके आरम्भ की। होमर की कृतियों का अनुवादक **एलेक्जेण्डर पोप** एक व्यवसायी का पुत्र था। कवि **एके साइड** के पिता का व्यवसाय कसाई का था। स्काटलैण्ड के राष्ट्र कवि **राबर्ट बर्नस** ने अपना जीवन हलवाहे से आरम्भ किया। पैराडाइज लॉस्ट के लेखक **मिल्टन** एक स्कूल में अध्यापक थे। विख्यात कोषकार **जानसन** के पिता साधारण पुस्तक विक्रेता थे। 'पामेला' और कैरिसा जैसे रोमांटिक उपन्यासों के विख्यात लेखक **सैमुएल रिचार्डसन** के पिता साधारण बढ़ई थे।

अमेरिका की खोज करने वाला **कोलम्बस** जुलाहा था। **बेंजामिन फ्रेंकलिन** जो बाद में अमेरिका के राष्ट्रपति बने, छपाई का काम करते थे। **पोप सिक्सटस पंचम** कभी सूअर पालने का काम करता था। कलाकार **होगराथ** बर्तनों पर पच्चीकारी का काम भी करते तथा उन्होंने रेशमी वस्त्र विक्रेता के यहाँ नौकरी भी की। अभी प्रचलित पुच्छल तारे के आविष्कारक **'एडमण्ड हैली'** जिसके नाम से यह प्रसिद्ध है, के यहाँ साबुन बनाने का धन्धा होता था। उसमें से निकलकर वह एक एस्ट्रानॉमर बन गया। **हरशल** एक गरीब संगीतकार था। **रिचार्ड आर्क राइट** बहुत दिनों तक हज्जाम का कार्य करते रहे। विख्यात वकील **ब्लैक स्टोना** बुनकर का पुत्र था।

इतिहास के पन्ने ऐसे प्रतिभाशालियों की पुरुषार्थ गाथाओं से भरे पड़े हैं, जिनने अपने को पुरुषार्थ के बल पर ऊँचा उठाया और स्वयं को कुछ से कुछ बनाकर दिखाया।

कठिनाइयों से डरिये मत

कठिनाइयों के दो स्वरूप होते हैं—एक बाह्य परिस्थितियों के रूप में आने वाली कठिनाई, दूसरी आन्तरिक स्वरूप में उपस्थित होने वाली। साधारणतया लोग बाह्य कठिनाइयों की ही जानकारी रखते हैं। आन्तरिक कठिनाइयों को कोई बिरला ही समझा पाता है। वस्तुतः अन्ततः-बाह्य दोनों के मूल में आन्तरिक कठिनाइयाँ ही प्रमुख होती हैं। बाह्य कठिनाइयाँ आन्तरिक कठिनाइयों की छाया मात्र ही होती हैं।

अनुकूल परिस्थितियाँ, साधन-सुविधा मनुष्य के पतन का कारण बनती देखी गई हैं जबकि विपरीत परिस्थितियों में, कठिनाइयों में भी लोगों ने आगे बढ़कर जीवन में उत्कृष्ट स्थिति प्राप्त की है। कठिनाइयों से भी लाभ उठाकर आगे बढ़ने, जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिये मनुष्य के दृष्टिकोण एवं उसके जीवनक्रम की बुनियाद में सुधार होना आवश्यक है।

अपने कर्त्तव्य, धर्म की जानकारी और उसके प्रति अनन्य निष्ठा पैदा होना सफलता की प्राथमिक शर्त है। कर्त्तव्य की जानकारी और उसके प्रति निष्ठा से मनुष्य कृतसंकल्प होता है और इससे उसमें असाधारण शक्ति का स्रोत फूट पड़ता है। ऐसी स्थिति में मनुष्य भारी कठिनाई को भी सहर्ष सहन करता है। कर्त्तव्य के लिए सर्वस्व लुटा देने को तैयार हो जाता है। हरिश्चन्द्र, पाण्डव, नल, कर्ण, प्रताप, शिवाजी, ईसा, गाँधी आदि ने अपने कर्त्तव्य, धर्म की रक्षा के लिए कितने कष्ट सहे, यह सभी जानते हैं। कर्त्तव्य का ध्यान रखने पर व्यक्ति को आन्तरिक शक्ति मिल जाती है, जिससे वह मार्ग में आई हुई कठिनाइयों को सहज ही सहन कर लेता है, जिससे उसकी शक्ति, साहस, कार्यक्षमता में दिनों-दिन विकास होता जाता है। कर्त्तव्य में लगा हुआ व्यक्ति बाह्य कठिनाइयों पर क्रमशः विजय प्राप्त करता जाता है तो उसके साथ ही उसकी आन्तरिक कठिनाइयाँ भी स्वतः ही हल होती चली जाती हैं।

कर्त्तव्य दृष्टि प्राप्त होने के पहले एवं बाद में भी सबसे बड़ी आवश्यकता है सक्रियता की। कर्त्तव्य को जानकर भी मनुष्य निष्क्रिय रह सकता है। अतः इसके साथ ही आवश्यकता इस बात की है कि मनुष्य सक्रिय बना रहे। अकर्मण्यता की स्थिति में अनेकों ऊल-जलूल विचार आते-जाते रहते हैं और इससे मानसिक शक्तियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का विघटन होने लगता है। शक्तियों का बँटवारा हो जाता है। खाली मन शैतान का घर होता है। मानसिक दुर्बलता से शक्तियों के विघटित हो जाने पर कठिनाइयों से लड़ना और भी कठिन हो जाता है।

कठिनाइयों से भागने की मनोवृत्ति कायरता है। इससे कठिनाई घटती नहीं निरन्तर बढ़ती ही जाती है। भागने वाले मनुष्य को चारों ओर से कठिनाइयाँ घेर लेती हैं। वह कहीं भी भागकर जाय, उनसे छुटकारा नहीं मिलता। कठिनाइयों से भागने वाले की आत्मिक शक्तियाँ कुंठित हो जाती हैं। अत: आवश्यकता इस बात की है कि कठिनाइयों का डटकर मुकाबला किया जाय। उन्हें जीवन में सहर्ष स्वीकार किया जाय, वरण किया जाय। जो कठिनाई का सामना करने का निश्चय कर लेते हैं, उनको कठिनाई का भान नहीं होता, कब आई और कब चली गई; इसका ध्यान तक नहीं रहता उन्हें। कठिनाइयों का सामना करने से ही आत्म-शक्तियाँ जाग्रत होती हैं, उनका विकास होता है। यही कारण है कि साधन-सुविधा-सम्पन्न घरानों में अधिकांश बच्चों का पर्याप्त विकास नहीं होता क्योंकि उनकी आवश्यकतायें सरलता से पूरी हो जाती हैं। उनकी शक्तियों को संघर्ष का स्पर्श नहीं मिलता। दूसरी ओर संसार के अधिकांश महापुरुषों का प्रादुर्भाव कठिनाइयों के बीहड़ वनों में ही हुआ है।

कठिनाइयों को उनसे दूर भागकर, घबराकर दूर नहीं किया जा सकता। उनका खुलकर सामना करना ही बचने का सरल रास्ता है। प्रसन्नता के साथ कठिनाइयों का वरण करना, उनसे उत्पन्न घबराहट का सर्वोत्तम उपाय है। आन्तरिक, मानसिक शक्तियों के विकसित होने का राजमार्ग है। संसार के अधिकांश महापुरुषों ने कठिनाइयों का स्वागत करके ही जीवन में महानता प्राप्त की है।

कठिनाइयों को देखकर मनुष्य जितना रूठता है कठिनाइयाँ भी उतनी ही रूठ जाती हैं। कहावत है "रूठे को मनाना और टूटे को बनाना बुद्धिमानी है।" रूठा हुआ दु:ख समझौता कर लेने पर दूर हो जाता है। एक व्यक्ति को देहाती जीवन छोड़कर शहर में रहना पड़ा। शहर की गन्दगी, घिचपिच, मकानों की असुविधा आदि से वह परेशान हो गया। वह बड़ा दु:खी था किन्तु करता क्या ? आखिर जब उसने इन परिस्थितियों से समझौता कर लिया तो वे शिकायतें फिर न रहीं। प्रसन्नतापूर्वक जीवन बिताने लगा। जो कठिनाइयाँ दु:ख और परेशानी का कारण बन जाती हैं, वे ही समझौता कर लेने पर सरल बन जाती हैं। जटिल से जटिल समस्याओं के हल करने का सरल उपाय है, उनसे समझौता कर लेना। समझौते का अर्थ यह भी नहीं है कि कठिनाइयों के कारण अपने उद्देश्य, आदर्श लक्ष्य को ही छोड़ दिया जाय, वरन् यह है कि उन्हें भी जीवन-यात्रा का एक साथी मानकर अपनी यात्रा जारी रखते हुए साथ रहने दिया जाय। जीवन में आने वाली सभी विषम परिस्थितियों में सहज भाव रखते हुए उन्हें अपने जीवन का अंग मानना घबराहट दूर करने का सरल उपाय है। सुखद और दु:खद घटनाओं में समभाव रखना, मानसिक दृढ़ता प्राप्त करने का एक सुसज्जित मार्ग है।

समझौते को, कठिनाइयों को जीवन में स्वीकार करने का तरीका यह है कि अपने आपकी तुलना स्वयं से निम्न परिस्थितियों में रहने वाले लोगों से करें। आज हमें चार रोटी मिलकर भी बैचेनी है, किन्तु दो रोटी मिलने वाले से अपनी तुलना करने पर इस बेचैनी का निवारण हो जायेगा। आज हमें जीवन निर्वाह की पर्याप्त सुविधायें प्राप्त नहीं हैं, किन्तु अधिकतर अभावग्रस्त लोगों को तथा असुविधामय जीवन में उत्कर्ष प्राप्त करने वालों को देखें तो हमारी यह शिकायत दूर हो सकती है। इसी तरह अपने से गिरी हुई परिस्थिति के लोगों से स्वयं की तुलना करने पर कठिनाइयाँ, परिस्थितियाँ, सुविधाओं का अभाव सब दूर हो जाते हैं।

कठिनाई, दु:ख, कष्टों के निवारण के लिए अथवा इनसे होने वाली क्षति से बचने के लिए अपने अहंकार को कम करना आवश्यक है। जो वृक्ष नम्र होना जानते हैं, वे बड़े-बड़े झंझावातों में भी अपनी जड़ सहित जमे रहते हैं। पानी की प्रबल धारा बेंत का कुछ नहीं बिगाड़ती। किन्तु बड़े-बड़े पेड़ जो कठोर होते हैं, अकड़ कर खड़े रहते हैं वे एक झोंके में ही धराशायी हो जाते हैं। जो मनुष्य नम्रता, निरहंकारता के सद्गुणों से सम्पन्न होते हैं, जो कष्ट-सहिष्णु होते हैं उनका बड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ, कष्ट-मुसीबतें भी कुछ नहीं बिगाड़तीं। सबसे प्रेम करने वाले, शिकायत न करने वालों को अनेक सहयोगी मिल जाते हैं। कठिनाइयाँ भी उनके साथ सहयोग करती हैं, जो समझौता करना जानते हैं। उनकी जटिल समस्यायें भी सहज ही हल हो जाती हैं।

अजीब लोग और उनके विचित्र संकल्प

शारीरिक, बौद्धिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में सफलता अर्जित करने एवं उन्नति की ओर बढ़ने के प्रयास अनेकों व्यक्तियों द्वारा किये जाते हैं, तदनुरूप सफलता प्राप्त करते देखे भी जाते हैं। कभी-कभी यह प्रयास विभिन्न व्यक्तियों में, विचित्र रुचियों के रूप में उभरकर आते हैं जिनकी पूर्ति के लिए वे दुस्साहस भरे कदम उठाने में भी नहीं हिचकते।

शीत ऋतु की भयंकर ठंड में गर्म कपड़ों एवं बिस्तरों में लोग दुबके रहते हैं तथा ठंड से बचाव करते हैं। "म्युनिख नगर" के एक एकाउन्टेन्ट श्री 'पीटरशीत' को अपने साहस एवं क्षमता के प्रदर्शन की सनक सवार हुई। उसने निरन्तर सात रात एवं सात दिन ठंडे फव्वारे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के नीचे भीगते हुए व्यतीत किये तथा एक अनौखा कीर्तिमान प्रस्तुत किया।

इंग्लैण्ड के दो नवयुवक **'फ्रैंकलिन जेम'** एवं **'जेमसन'** जिनकी आयु थी २० वर्ष एवं १९ वर्ष। ये दोनों नौकरी की खोज में भटक रहे थे। एक दिन फ्रैंकलिन को जाने क्या सूझा, वह 'जेमसन' से कहने लगा कि ''क्यों नहीं हम अपने खाली समय का उपयोग कुछ नवीन अनौखे कार्यों के करने में करें ?'' अपने मन में आये विचार को मित्र के समक्ष प्रस्तुत करते हुए उसने कहा—''हम लोग ताली बजाने का नया रिकार्ड प्रस्तुत करेंगे।'' सहमति मिलते ही दोनों ने १४ घण्टे ६ मिनट तक निरन्तर ताली बजायी। अमेरिका के दो किशोर छात्र जिनकी आयु १४ एवं १५ वर्ष थी तथा नाम था **'केरोमिन'** एवं **'विलियम स्कार्ट'** ने उनको ताली बजाने में स्थापित कीर्तिमान को चुनौती दी। एक स्थान पर निरन्तर खड़े होकर १८ घण्टा ताली बजाकर उन दोनों किशोरों ने ''फ्रैंकलिन'' एवं उसके सहयोगी द्वारा स्थापित रिकार्ड को तोड़ दिया।

मनुष्य की संकल्प शक्ति एवं पुरुषार्थ में वे सारी विशेषताएँ हैं, जिनके सहारे असम्भव कार्य भी सम्भव किये जा सकते हैं। इस शक्ति का उपयोग चाहे रचनात्मक दिशा में किया जाय अथवा निरुद्देश्य कौतूहलजनक कार्यों में। यह मनुष्य के स्वयं के विवेक के ऊपर निर्भर करता है।

जापान के पतंगबाज **गोरोकू कुड़ो** को यह जानकारी मिली कि अमेरिका के एक व्यक्ति ने एक ही डोर में १७८ पतंगें बाँधकर उड़ायी हैं। पंतगबाजी कला में वह स्वयं भी निपुण था। इस अमेरिकी रिकार्ड को तोड़ने का अभ्यास 'कुडो' नित्य करने लगा। उसने ३५६ पतंगें अच्छी प्रकार तैयार करायीं। आठ-आठ फुट की दूरी पर एक-एक पंतग को बाँधकर वह उड़ाने लगा। अभी २५० पतंगें ही उड़ा सका था कि पतंग डोरी पर बोझ अधिक पड़ने एवं हवा के तेज दबाव के कारण डोरी टूट गई। ३५० पतंगें तो नहीं उड़ा सका किन्तु अमेरिकी पतंगवाजी के कीर्तिमान को 'गोरोकू' ने तोड़ दिया।

कभी-कभी तो नवीन कीर्तिमान स्थापित करने की सनक में कुछ व्यक्ति जीवन के साथ दुस्साहपूर्ण कार्य करते देखे जाते हैं। रोगी को नवजीवन देने एवं रक्त आपूर्ति करने के लिए रक्तदान एक महान त्याग एवं सेवा है। कितने ही व्यक्ति रक्तदान द्वारा पुण्य कार्य करते देखे जाते हैं। किन्तु मात्र नवीन एवं आश्चर्यजनक कीर्तिमान स्थापित करने के निमित्त रक्तदान करते कम ही व्यक्ति देखे गये हैं। 'हैम्वर्ग' के २८ वर्षीय नवयुवक **'रौकपीटर'** ने अपनी इस आयु तक १७७० बार रक्तदान कर अपने दुस्साहस का परिचय दिया है। रक्तदान में 'पीटर' के शरीर से अब तक ६६० लीटर रक्त निकल चुका है। सारे विश्व में यह एक आश्चर्यजनक घटना है।

नार्वे निवासी **'हैन्सलैंगसेथ'** को दाढ़ी बढ़ाने का भूत सवार हुआ। इस इच्छा से अभिप्रेरित होकर उसने अपनी दाढ़ी ५० मी. ३३ से मी. बढ़ाकर लोगों को आश्चर्यचकित कर दिया।

कहते हैं कि मनुष्य के सिर के बाल गिने नहीं जा सकते। यह असम्भव तो नहीं, पर इसे बेकार काम समझ कर कौन अपनी शक्ति एवं समय को नष्ट करेगा। किन्तु 'हेलसिलासी यूनिवर्सिटी' के एक कर्मचारी **'वाकावाया'** को यह सनक सवार हुई और उसने अपने सिर का मुण्डन कराकर प्रतिदिन बाल गिनना आरम्भ किया। लगभग चार वर्षों में उसने अपने सिर के सारे बालों को गिन डाला, जिनकी कुल संख्या १ लाख १२ हजार ५०३ थी।

मनुष्य की संकल्प शक्ति अद्भुत है और पुरुषार्थ असीम। कितने लोग मात्र कौतूहल खड़ा करने एवं निरुद्देश्य उसका उपयोग करते देखे जाते हैं। श्रेष्ठ कार्यों के लिए इस शक्ति को नियोजित किया जा सके तो कठिन कार्य भी सम्भव बन जाते हैं। संकल्प शक्ति की महत्ता एवं उपयोगिता भी इसी में है। रचनात्मक दिशा में उसका सदुपयोग किया जाना चाहिए।

साहस सबसे बड़ा साधन

रक्त-माँस की दृष्टि से सभी मनुष्यों की शरीर संरचना एक जैसी है। मस्तिष्कीय कल-पुर्जों की बनावट में भी कोई अन्तर नहीं। सबके अंग-अवयव सृष्टा की निर्धारित विधि-व्यवस्था के अनुरूप काम करते हैं। इतने पर भी कई साहस के धनी होते हैं और पराक्रम-पुरुषार्थ में गर्व गौरव समझने के कारण, धैर्य सन्तुलन बनाये रहने के कारण महत्त्वपूर्ण सफलताएँ प्राप्त करते हैं। असंख्यों के सम्मुख अपने शौर्य-साहस का अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत करते हैं।

इसके विपरीत ऐसे लोगों की भी कमी नहीं, जिन पर भीरुता, कायरता, कृपणता की गहरी परतें चढ़ी होती हैं। कठिनाई आने से पूर्व ही उनकी बढ़ी-चढ़ी कल्पना करते हैं और उस स्वनिर्मित भय-भूत से डरकर थर-थर काँपने लगते हैं। विपत्ति का सामना करने का अवसर तो तब आये जब वह सामने प्रकट हो। इससे पूर्व ही जिनकी कुकल्पनाएँ अनिष्ट, अहित और संकट के कल्पना चित्र ही इतने दुष्कर प्रतीत होते हैं, जिनसे निपटना बैतरणी पार करने की तरह कठिन हो जाता है।

ऐसे लोगों के सामने यदि कहीं सचमुच ही विपत्ति आ खड़ी हो तो समझना चाहिए कि मरण की पूर्ववर्ती 'रिहर्सल' हो गयी। सामना करने, उपाय सोचने वाले सारे तन्त्र ही अस्त-व्यस्त हो जाते हैं। ऐसी दशा में उनकी अपनी हड़बड़ी ही एक साथ अनेकों विपत्तियाँ न्यौत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बुलाती हैं। विपत्ति का आक्रमण जितना अनिष्ट करता, उससे कहीं अधिक अपना भयभीत, उद्विग्न, विक्षुब्ध मन ही अपने पैरों आप कुल्हाड़ी मारने और सर्वनाश रचने का काम पूरा कर चुका होता है।

जहाँ ऐसे डरपोक, कायरों की संसार में भरमार है वहाँ ऐसे साहसी, शूरवीरों की भी कमी नहीं जो वास्तविक संकट सामने रहने पर भी मनोबल टूटने नहीं देते। उपाय खोजते हैं, रास्ता बनाते हैं और सन्तुलित सूझ-बूझ के आधार पर विपत्ति को पार कर लेते हैं। पार करना सम्भव न हो तो भी मुसीबत से कटकट जूझते हैं। आघात शरीर भर की क्षति कर सकते हैं। साधनों को छीन सकते हैं, परिस्थितियाँ प्रतिकूल कर सकते हैं। इतने पर भी यदि मनोबल बना रहे-साहस न टूटे और अन्तिम समय तक जूझने की हिम्मत बनी रहे, तो सामान्य शरीर वाले व्यक्ति भी ऐसे पराक्रम कर दिखाते हैं, जिनकी गौरव-गाथा सुनने वालों के भी हौसले बुलन्द होते हैं।

प्रशंसा ऐसे लोगों की है, जिनने अपने साहस और पराक्रम का परिचय दिया। जिनने संकट की घड़ी में धैर्य रखा और मरने के स्थान पर जूझने का निश्चय किया। ऐसे लोगों के उदाहरण, संस्मरण भर से पढ़ने-सुनने वालों में उत्साह भरता है और शूर-साहसियों की पंक्ति में खड़ा होने को मन करता है।

फ्रान्स के न्यूर्स प्रदेश का कप्तान **मैलर मुस्टैमे** जीवनभर युद्धों का अग्रिम मोर्चा सँभालता रहा। उसने १२२ युद्धों में भाग लिया और प्रत्येक में कई-कई घाव लगे। सभी का वह सामना करता रहा और अच्छा होता रहा। उसकी मृत्यु १३४९ ई. में हुई। रात को सोते-सोते ही बिस्तर पर मर गया। किसी को उसकी कराह या बीमारी का पता भी न चला।

फ्रान्सीसी जनरल **वैपटिस्टे मान्टमरिन** की जीवट अपने ढंग की अनौखी है। उनने २० वर्ष की आयु से सेना में प्रवेश लिया। ७५ वर्ष की आयु होने पर सन् १७७९ में मरे। इस बीच वे पूरे ५५ वर्ष सेना में विभिन्न पदों पर काम करते रहे। वे युद्ध मोर्चा पर पाँच बार भयंकर रूप से घायल हुए और मृतक घोषित किये जाते रहे। हर बार वे कब्रिस्तान पहुँचने से पूर्व जी उठे। उनका सारा शरीर अनेकों आपरेशनों से बेतरह कटा-फँसा था। उनने मरने तक हिम्मत कभी भी नहीं हारी।

आस्ट्रिया के एक जनरल काउन्ट एन्टम स्टार ने अपने देश की सेना में ४७ वर्ष तक काम किया। इस बीच उनने ८९ लड़ाइयाँ लड़ीं। इनमें उन्हें ८४ भयंकर और सैकड़ों छोटे घाव लगे। उनकी मृत्यु युद्ध मोर्चे पर ही हुई। मरते समय उनके चेहरे पर कोई विषाद नहीं था।

समुद्र के आर्कटिक क्षेत्र में एक जहाज पालिरस बर्फ में फँसा और एक चट्टान से टकराकर डूब गया। जीवित बचे १९ नाविकों ने एक बहते हुए हिमखण्ड पर सवारी गाँठी और मछलियाँ पकड़ते-खाते हुए उसी चट्टान पर दिन काटते तथा आगे धकेलते हुए बर्फ की चट्टान को नाव बनाकर वे १९६ दिन में १२०० मील की यात्रा करके लैब्रेडोर तट पर पहुँचे और अपने प्राण बचाने में सफल रहे।

मैक्सिको के निकट प्रशान्त महासागर में लारा नामक एक जलयान गुजर रहा था। आग लग जाने से जहाज समेत सभी कर्मचारी जल गये। मात्र ७ नाविक एक छोटी जीवन-नौका पर सवार होकर समुद्र में उतरे। किनारा १५०० मील था। सभी बेतरह थके हुए थे। प्यास से प्राण निकल रहे थे। इसी बीच कुछ ऐसा अद्भुत हुआ कि नाव समुद्र के मध्यवर्ती एक मीठे चश्मे के पास जा पहुँची। वहाँ उनने प्यास बुझाई। फिर उनने हिम्मत बाँधी और किनारे की ओर चले। पूरे २३ दिन बिना कुछ खाये-पिये मैक्सिको तट पर सुरक्षित पहुँचे।

सन् १७८३ में फ्रेंस वैज्ञानिक **प्रो. चार्ल्स** ने पहला गुब्बारा बनाया। इसके बाद उसकी क्षमता और आकृति में क्रमशः सुधार होता गया। उस समय के विकसित गुब्बारे को, जिसका नाम था 'जैपलीन' को लेकर कुछ दुस्साहसी युवक 'नौटिलस' नामक पनडुब्बी जहाज पर सवार हो उत्तरी ध्रुव की कठिन यात्रा के लिए चल पड़े। उस योजना का संचालन किया जर्मन डा. उल्सटीन ने। जैपलीन में कुल ५६ आदमी सवार थे—४० चलाने वाले और १६ अनुसंधान करने वाले। गुब्बारा एक छोटे फुटबाल मैदान के बराबर था और गिरजाघर जैसा ऊँचा जिसमें खटोले जैसे लटकनें थीं। यात्री उन्हीं पर बैठते थे।

लेक कांसटैंस से उड़कर यह गुब्बारा जर्मनी, स्वीडेन, ऐस्थोनिया, फिनलैण्ड, रूस की सीमाएँ पार करते हुए ध्रुव प्रदेश पर पहुँचा। ल्फोरा अन्तरीय से लेकर सुविस्तृत ध्रुवीय क्षेत्र पर इसने उड़ानें भरीं और चित्र-विचित्र फोटो लिए। लगभग एक सप्ताह तक यह गुब्बारा उड़ा और पनडुब्बी को उससे भी अधिक समय लगाना पड़ा।

कैस्टाइन (स्पेन) के एक सैनिक स्वेटो-जवानी के आरम्भिक दिनों में अपनी प्रेमिका के साथ सम्बद्ध था। रिश्ता निभा नहीं और दोनों अलग हो गये। फिर भी उस योद्धा ने गले में एक लोहे का छल्ला अपनी बिछुड़ी प्रेयसी की स्मृति में पहने रखा। वह बाँका लड़ाकू था। उन दिनों भाला प्रधान शस्त्र था। उसने ६८ योद्धाओं के साथ ७२७ भाला आक्रमणों का प्रहार तथा सामना किया। हर संघर्ष में उसने अपने स्मृति-चिन्ह पर आँच न आने देने के लिए भरपूर सावधानी बरती। अन्तिम बार एक संघर्ष में ऐसी चोट लगी कि न केवल उसकी जान गई वरन् यह स्मृति चिन्ह भी टूटकर लाश के साथ ही समाप्त हो गया। उसने दूसरा विवाह नहीं किया था।

एक बार समुद्री यात्रा करते समय रोम के शासक **जूलियस सीजर** को समुद्री डाकूओं ने आक्रमण करके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कैद कर लिया और होडस द्वीप में बन्दी कर दिया, फिर सीजर के सम्बन्धियों को धन भेजने का सन्देश दिया।

इस सम्बन्ध में **प्लूटार्च** ने लिखा है कि सीजर डाकूओं का बन्दी होते हुए भी एक सम्राट के रौबदौब में रहता, जिस किसी डाकू को डाँट देता, वही सुन्न रह जाता। सब डाकू उसकी आज्ञा का पालन करते थे। वह उन्हें धमकाते हुए कहता था कि यहाँ से जाने के बाद तुम सबको फाँसी के तख्ते पर चढ़ा दूँगा किन्तु कोई डाकू चूँ तक नहीं करता था। वहाँ से छुटकारा पाने के बाद उसने वैसा ही किया भी, पर वहाँ तो उसके आत्म-तेज की ही महत्ता थी, जो गिरफ्तार होकर भी डाकुओं पर शासन करता रहा। नैपोलियन कैद से छूटकर भागा उस समय बोबोर्न की सेनायें सतर्क कर दी गईं। सेनापतियों को आदेश दे दिया गया कि नैपोलियन उधर आये तो उसे गोली मार दी जाये पर हुआ कुछ और ही। नैपोलियन उधर ही गया, जहाँ सन्नद्ध सेना राइफलें 'लोड' किये खड़ी थी, पर उसके आगे किसी को भी घोड़ा दाबने का साहस नहीं हुआ। सारी सेना फिर नैपोलियन के सेनापतित्व में आ गई।

एथेन्स के **बियेडोज** ने एक बार शर्त लगाकर नगर के प्रतिष्ठित व्यक्ति **हिप्पेनिकोस** को सबके सामने थप्पड़ लगा दिया और दूसरे ही दिन उसने उसे इतना प्रसन्न कर लिया कि हिप्पेनिकोस ने अपनी पुत्री का विवाह ही उसके साथ कर दिया। बियेडोज के बारे में कहा जाता है कि उसके पास इतनी प्रबल आत्म-शक्ति थी कि दुश्मन को एक मिनट में मित्र बना सकता था।

समझा जाता है कि लोग साधनों के सहारे उन्नति करते हैं। परिस्थितियाँ अनुकूल हों तो सफलता मिलती है। इस कथन में इतनी ही सच्चाई है कि अनुकूलता तथा साधन-सुविधा के सहारे प्रगति का पथ अपेक्षाकृत सरल हो जाता है किन्तु बात ऐसी नहीं है कि जिनके पास साधन नहीं अथवा जो अवरोधों से घिरे हैं, वे उन्नति कर ही नहीं सकते। सफलता के लक्ष्य तक पहुँचने का श्रेय वस्तुतः मनुष्य की जीवट को है। कोई बिना अधीर हुए, प्रतिकूलताओं के साथ तालमेल बिठाते हुए—जो साधन उपलब्ध हैं, उन्हीं का सदुपयोग करते हुए—आगे बढ़ता रहा तो कल न सही; परसों अभीष्ट लक्ष्य तक पहुँच सकना सम्भव हो जायेगा। ऐसे उदाहरणों से इतिहास के पृष्ठ भरे पड़े हैं। जो गई-गुजरी परिस्थितियों से घिरे थे। फिर भी उनने अपने प्रयास पौरुष को मजबूती से पकड़े रखा—निरन्तर चलते पट्टे के क्रम में व्यतिरेक न पड़ने दिया और अभीष्ट सफलता प्राप्त करके कृत-कृत्य हुए।

ईसाई धर्म-प्रचारकों में अग्रणी **ड्वाइटमूडी** जवानी तक अनपढ़ रहा। उसकी स्त्री थी तो कम पढ़ी पर चाहती यह थी कि उसका पति पादरी बने। सो उसने उसे पढ़ना-लिखना स्वयं सिखाया और जोर देकर गिरजे का शौक लगाया। वह लगी ही रही और अन्ततः मूडी को धर्म प्रचारक ही बनाकर मानी। पादरी भी ऐसा जिसने ईसाई जगत में असाधारण ख्याति और प्रतिष्ठा प्राप्त की।

अमेरिका के राष्ट्रपति **अब्राहम लिंकन** का पालन-पोषण उनकी सौतेली माँ ने किया था। गरीबी और कठिनाइयों के बीच दिन काटने वाली उस महिला ने इस बालक को ऐसी प्रेरणाएँ और नसीहतें दीं जिनके सहारे बच्चे की समझ और शिक्षा ही नहीं, आत्मा भी ऊँची उठती चली गई और वह क्रमिक प्रगति के पथ पर चलते हुए अमेरिका का राष्ट्रपति ही नहीं, विश्व के महामानवों में से एक बना।

महान वैज्ञानिक **टामस अल्वा एडीसन** बचपन में अत्यन्त मन्द बुद्धि थे। पढ़ने में उनकी अक्ल चलती ही न थी। सो अध्यापक ने बच्चे के हाथों अभिभावकों को पत्र भेजा। इसे स्कूल से उठा लें, मन्द बुद्धि होने के कारण वह पढ़ न सकेगा। बच्चे की माँ ने भरी आँखों और भारी मन से पत्र को पढ़ा। बच्चे को दुलारा और छाती से चिपकाकर कहा—"मेरे बच्चे, तुम मन्द बुद्धि नहीं हो सकते। मैं स्वयं ही तुम्हें पढ़ाऊँगी।" बच्चे को स्कूल से उठा लिया गया और उसकी माँ ने पढ़ाना प्रारम्भ कर दिया। परिणाम सभी के सामने है। बच्चा विश्व के मूर्धन्य वैज्ञानिकों में से एक बना।

जापान के मुसाशी प्रान्त का निवासी हनावा हाकोची सात वर्ष की आयु में ही अन्धा हो गया था। किन्तु उसने अपनी मस्तिष्कीय चेतना को इतना पखर बनाया था कि ४,००,००० हस्तलिपि की विषयसूची तैयार कर सकता था। कहते हैं वह अँधेरे में भी पढ़ सकता था। उसने एक ऐसी पुस्तक संकलित की जिसके २८२० खण्ड हैं। ऐसी विशाल पुस्तक आज तक दुनियाँ में किसी ने भी नहीं लिखी। उसने बाबाक्सी में स्कूल भी खोला, जिसमें जापानी साहित्य का अध्ययन वह स्वयं किया करता था।

इस प्रकार की क्षमताएँ बीज रूप से होती सभी में हैं, पर उन्हें जगाने, प्रखर बनाने के लिए हर किसी को साहस, संकल्प और अध्यवसाय काम में लाना पड़ता है। मनस्वी ही जीतते हैं। आन्तरिक क्षेत्र की और बाह्य जगत की समस्त सफलताएँ साहसिक पुरुषार्थ पर ही निर्भर हैं।

साहस हो, तो सिंह भी पालतू कुत्ते जैसे सौम्य बनाये जा सकते हैं

"सिंह जैसी खूनी और क्रूर प्रकृति के प्राणी को भी स्नेह-सौजन्य के बन्धनों में बाँधा जा सकता है और उसे मृदुलता एवं सौजन्य के ढाँचे में ढाला जा सकता है।" यह सिद्धान्त या आदर्श ही नहीं एक व्यवहार भी है, जिसे हालेण्ड निवासी एक वन संरक्षक दम्पति ने अफ्रीका में साकार करके दिखा दिया।

उन्होंने समय-समय पर छः सिंह शावकों को उन्मुक्त वातावरण में पाला और बड़ा किया। स्नेह दिया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और स्नेह पाया। विश्वास किया और विश्वास पाया। परम्परागत क्रूर प्रकृति को सौम्य-सौहार्द्र में बदला जा सकता है या नहीं ? इस प्रश्न का उत्तर दार्शनिक विवाद के रूप में नहीं, वरन् प्रत्यक्ष उदाहरण के साथ पिछले ही दिनों प्रस्तुत किया गया है।

सिंहों के बारे में आमतौर से इतना ही जाना गया है कि वे बड़े भयंकर बलवान और क्रूर होते हैं। अपनी सशक्तता और क्रूरता से सारे वन-प्रदेश को आतंकित रखते हैं। उनसे सभी वनचर भय खाते हैं। अस्तु आतंकवादियों को जैसे भूतकाल में शासक मानने की परम्परा थी, उसी के अनुसार सिंहों को भी 'वनराज' कहते हैं। यद्यपि उस क्षेत्र की शासन व्यवस्था तथा सुविधा संचालन में उनका कोई योगदान नहीं होता।

सिंह स्वच्छताप्रिय प्राणी है। भोजन के बाद वह अपने मुँह के बाहरी भाग को पंजों और जीभ से चाटकर इस तरह साफ करता है जैसे हम भोजन के बाद साबुन, पानी और तौलिये की सहायता से मुँह और हाथ की सफाई करते हैं। गन्दगी उसे बिलकुल नापसन्द है। इसी प्रकार सिंह अपनी जाति वालों की हत्या नहीं करते जबकि मनुष्यों ने अगणित मनुष्यों को लड़ाइयाँ लड़कर मृत्यु के मुख में पहुँचाया है।

हालेण्ड निवासी **मि. जार्ज** नेशनल पार्क के वरिष्ठ वन-जन्तु अभियन्ता के पद पर काम करते थे। उनका निवास अधिकतर इन्हीं के साथ रहा। उनकी पत्नी का नाम था—**जाय एडमसन**। इस दम्पति युगल को स्वभावत: वन जीवों से प्रेम था पर जाय एडमसन तो उनके साथ इतनी अधिक घनिष्टता स्थापित करने में सफल हुईं कि उन्हें वनदेवी ही समझा और कहा जाने लगा।

संसार का सबसे बड़ा चिड़ियाघर तंजानिया पूर्वी अफ्रीका में है। नाम है उसका 'सिरेनगेटी'। इसकी लम्बाई १८० मील और क्षेत्रफल ४५०० वर्ग मील है। ऊँचाई समुद्र तल से ४ हजार से लेकर १३ हजार फुट है। वन-जीवों के लिए बने इस उन्मुक्त उद्यान को देखने के लिए संसार भर से लाखों यात्री लम्बी यात्राएँ करके आते हैं। कुछ समय पूर्व उसमें बड़े जानवरों की संख्या ३६६९८० आँची गई थी और अनुमान था दस हजार के करीब ऐसे होंगे, जो गिने नहीं जा सके। इसी उद्यान के पशु संरक्षक थे मि. जार्ज।

एक दिन पार्क के एक वन-रक्षक कर्मचारी को गश्त करने भेजा गया था, जब वह वापिस नहीं लौटा तो खोज-खबर ली गई और पाया गया कि उसे किसी सिंह ने मार डाला। बची हुई लाश से लेकर जहाँ तक सिंह के पंजे गये थे, वहाँ तक पीछा किया गया और अन्तत: झाड़ी में छिपी सिंहनी को ढूँढ़ निकाला गया। मनुष्य के रक्त का एक बार चस्का लग जाने पर सिंह प्राय: नरभक्षी हो जाते हैं। इस संकट से बचने के लिए उन्हें समाप्त ही करना पड़ता है। जार्ज को यही करना पड़ा। वन अभियन्ता के उत्तरदायित्व को निबाहने के लिए यह आवश्यक भी था कि वे उस नरभक्षी को समाप्त करें। वे सधे हुए निशानेबाज थे, सो गोलियाँ चलाकर आसानी से उस नरभक्षी को ढेर कर दिया।

मृत सिंहनी की माँद में कुछ ही दिन के जन्मे बहुत छोटे तीन बच्चे पाये गये। जार्ज को न जाने क्या सूझी कि वे उन बच्चों को पकड़ लाये और पत्नी के सामने खिलौनों के रूप में प्रस्तुत किया। उस समय उनका प्रयोजन कुछ समय मन बहलाने भर का था। सिंहों को पालने की बात उनके मस्तिष्क में रही भी नहीं थी। इतना बड़ा दुस्साहस करने और झंझट मोले लेने की उनकी तनिक भी इच्छा नहीं थी।

पत्नी ने पहले तो सिंह शावकों को आश्चर्य से देखा, पीछे वे डरीं किन्तु बाद में उनका वात्सल्य उभर आया और माता सदृश सहृदय व्यवहार करने लगीं। उन्होंने तीनों बच्चों को उसी चाव-दुलार से पालना शुरू कर दिया जैसे कोई अपने बच्चों को सँभालता है। आरम्भ में उन्हें दूध पीना, सिखाना तक बड़ा कठिन प्रतीत हुआ। मुँह में रबड़ की नली डालकर दूध पिलाया गया। एक बार तो लगा कि वे इसके अभ्यस्त न हो सकेंगे और भूखों मर जायेंगे पर पीछे उन्हें समझ आई और दूध पीने को तैयार हो गये। इस सुधार के कारण ही उन्हें मृत्यु के मुख से बचाया जा सका।

कुछ ही महीनों में बच्चे उछलने-कूदने लायक हो गये। परिवार के सदस्यों की तरह वे रहने में तो अभ्यस्त हो गये थे पर अपनी उछलने-कूदने की आदत को क्या करते। घर में रखी वस्तुओं को मौका पाते ही वे तोड़-फोड़ डालते और फाड़-चीरकर रख देते। लालन-पालन से भी यह कठिनाई अधिक बड़ी थी। इस सिरदर्द को हल्का करने के लिए घर के एक हिस्से में उनके लिए बाड़ा बनाया गया, पर बन्द करते ही वे आसमान सिर पर उठा लेते और बाहर निकलने के लिए बेतरह हैरान करते। जार्ज महोदय उन्हें जल्दी ही किसी चिड़िया घर में भेज देने के पक्ष में थे। उनकी पत्नी ने एक बच्चे को अपने पास ही रखने का आग्रह किया। नादान दो बच्चे हवाईजहाज से हालेण्ड के चिड़ियाघर के लिए भेज दिये गये। एक घर पर रखा गया। यह मादा थी। उसका नाम रखा गया—एल्सा।

जाय एडमसन ने उस छोटी सिंहनी को अपनी दत्तक पुत्री की तरह पालना शुरू किया। वे अपने हाथों उसे भोजन करातीं। उसी के लिए बनाई गई चारपाई पर सुलातीं, मच्छरों से बचाने के लिए मशहरी लगातीं, सर्दी न लग जाय इसके लिए रजाई उढ़ातीं। इस प्रेम व्यवहार से प्रभावित हुए बिना एल्सा भी न रह सकी। वह अपनी इस नर शरीर धारी मौसी के कृतज्ञतापूर्ण हाथ-पैर चाटती, गोदी में जा बैठती और सिर खुजलाये जाने का आनन्द लेती। बिल्ली की तरह वह पीछे-पीछे ही लगी फिरती।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन मौसी भतीजी में प्यार का रिश्ता दिन-दिन सघन होता गया और स्थिति यहाँ तक पहुँची कि कभी एल्सा अपना सिर जाय एडमसन की गोदी में रखकर घण्टों निद्रा मग्न रहती और कभी मौसी का तकिया बनी एल्सा चुपचाप पड़ी रहती।

जब तक तीनों बच्चे साथ रहे, तब तक उन्हें बहुत प्रसन्नता रही। पर जब दो बच्चे हालेण्ड भेज दिये गये तो एल्सा अकेलापन महसूस करके उदास रहती। वह अपनी बहिनों को ढूँढ़ने दूर-दूर तक आस-पास की झाड़ियों में जाती और जब वे नहीं मिलते तो दुखी होकर वापिस लौट आती। जिस गाड़ी में बिठाकर उसकी बहिनों को हवाई अड्डे तक पहुँचाया गया था उसे वह पहचान गई थी अस्तु, उससे सदा दूर रहती। उसे भय हो गया था कि कहीं-वही गाड़ी उसे भी कहीं न भगा ले जाय। भाई-बहिनों का प्यार सिंह शावकों में आमतौर से नहीं होता।

दो वर्ष बाद ऐडम्स दम्पत्ति हालेण्ड के अजायबघर में भी दो सिंहनियों को देखने गये। कई वर्ष तक बिछुड़े रहने के बाद भी जब दोनों ने एक दूसरे को देखा तो प्यार की मधुर-स्मृति बह निकली। दोनों सिंहनियाँ कटघरे के पास एडम्स से सटकर आ खड़ी हुईं और संतुष्ट नेत्रों से उन्हें चाटती रहीं। उन्होंने भी अपनी इन पोष्य सन्तानों की पीठ पर देर तक हाथ फिराने का क्रम जारी रखा। दर्शकों के लिए यह दृश्य अनौखे कौतूहल का विषय था।

यों एल्सा की चारपाई अलग रखी गई थी और जार्ज दम्पत्ति की चारपाइयों के पास ही थी। फिर भी उसे अलग सोने में सन्तोष न होता और यह प्रयत्न करती कि अपनी खाट छोड़कर उन्हीं के पलंग पर जा सोये। कई बार तो उसे गहरी नींद में से जगाना उचित न समझा जाता, तो वे लोग अलग सोकर किसी प्रकार गुजर करते। यों भोजन उसे स्वयं ही करने को दिया जाता था पर वह चाहती यह थी कि उसे प्यारपूर्वक हाथ से खिलाया जाय। जब इसकी इच्छा पूरी न होती तो ही उदास मन से अपने आप खाना खाती।

यह स्नेह-सद्भावना का ही चमत्कार था कि सिंह की क्रूरता इस कदर मृदुल हो गई कि उसके परम्परागत आक्रमणकारी स्वभाव में ममता और आत्मीयता के गहरे अंकुर जम गये और उसकी भयंकरता एक प्रकार तिरोहित हो गई।

वातावरण ने एल्सा की प्रकृति ही बदल दी थी, वह माँस तो खाती थी पर शिकार मारना नहीं आता था। जाय एडमसन के घर के आस-पास तरह-तरह के पक्षी और हिरन, जिराफ आदि पशु निर्भय होकर घूमते रहते थे। उसने कभी किसी पर हाथ साफ नहीं किया। मरे हुए जानवर जब सामने डाले जाते तो वह भली प्रकार देख लेती कि कहीं यह जीवित तो नहीं है। उसने अपनी प्रकृति में शाकाहारी भोजन को सम्मिलित कर लिया था। रोटी, सब्जी और फल भी उसे प्रिय लगते थे और उन्हें वह चावपूर्वक खाती थी।

एल्सा को बहुत से शब्दों का और इशारों का अर्थ मालूम हो गया था। इसलिए उसे कुछ निर्देश करना उतना कठिन नहीं रह गया था। जो उसे कहा जाता, उसे वह कभी उत्साहपूर्वक, कभी आलस के साथ पूरा करती थी। अवज्ञा तो उसने शायद ही कभी की हो।

एल्सा क्रमशः बड़ी होती चली गई। दूसरे लोग उसे शेरनी समझकर डरते पर वस्तुतः उसकी आदत बहुत ही सौम्य थी। आक्रमण करने की बात उसे सूझती ही न थी। ऐडम्स वन यात्रा पर जाते तो अपने काफिले के साथ एक पतली जंजीर में बाँधकर उसे भी ले जाते। गधे, खच्चर, कुत्ते, आदमी और यह पालतू शेर जब बिना किसी भेदभाव के आपस में नोक-झोंक करते हुए रास्ता काटते तो किसी को भी ऐसा नहीं लगता था कि कोई खतरा साथ चल रहा है।

धीरे-धीरे एल्सा प्रौढ़ हो गई। उसके भीतर प्रौढ़ता की उमंगें उभरीं और साथी की आवश्यकता अनुभव करती हुई व्याकुलता प्रदर्शित करने लगी। जार्ज ने उसकी मनःस्थिति को समझा और जंगल के उस क्षेत्र में जा छोड़ा जिधर सिंह रहा करते थे। यौवन गन्ध के आकर्षण ने उसे सिंह साथी मिला दिया और वह फिर उधर ही रहने लगी।

एल्सा इन उलझन भरे दिनों में भी अपनी मौसी को भूल नहीं पाती थी और उनसे मिलने जा पहुँचती थी पर साथ में क्रूर प्रकृति का साथी रहने के कारण उसे वहाँ से जल्दी ही भगा दिया जाता या भागना पड़ता।

सिंह जाति की सुहागरातें भी विचित्र होती हैं। वे लगातार चार पाँच दिन तक हर दिन कई-कई बार जोड़ा मिलाते रहते हैं। तब कहीं वे गर्भ स्थापना में सफल होते हैं। इन दिनों सिंह दम्पत्ति अपने ही गोरखधन्धे में उलझे रहते हैं और खाने-पीने तक की सुध भूल जाते हैं। एल्सा की लगातार गैर हाजरियों से जाय एडमसन को बहुत चिन्ता हुई पर जब उसे सिंह प्रणय प्रक्रिया की जानकारी मिली तो चुप हो गई। गर्भ धारण करने के उपरान्त फिर नया क्रम चलने लगा। एल्सा को पतिव्रत धर्म के अनुसार अधिक समय तो सुसराल में ही रहना पड़ता था, पर नैहर को सर्वथा छोड़ बैठने को भी तैयार न हुई। पति ने आखिर समझौता कर लिया और सुसराल तक अपनी नव वधू को हर रोज पहुँचाने और वापिस लाने के लिए सहमत हो गया।

एल्सा अपने पति के साथ रहती तो भी उसे अपने नैहर की याद भूलती न थी। वह सायंकाल एक फेरी लगाने जरूर आती। उसका पति भी साथ आता पर वह दूर ही बैठा रहता और यह इन्तजार करता रहता कि उसकी पत्नी कब वापिस आये और कब घर चले। बहुत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिन बाद वह भी बँगले को पहचान गया तो सुसराल में स्वादिष्ट भोजन पाने के लालच में कुछ आगे तक खिसक आता और स्वागत-सत्कार का लाभ लेकर फिर पीछे खिसक जाता। ऐडमसन परिवार के साथ वह घनिष्टता तो न जोड़ सका पर इतना जरूर समझ गया था कि वह हमारे शुभ-चिन्तकों का घर है। इसलिए उसने न तो कभी उस क्षेत्र में स्वयं कुछ उपद्रव किया और न किसी अन्य सजातीय को इधर पैर रखने दिया। वह घर-जवाँई तो न बन सका पर वफादार सुरक्षा अधिकारी तो आजीवन ही बना रहा।

गृहस्थ बन जाने के बाद एल्सा यों वनवासी हो गई थी और उसका निश्चित निवास पतिगृह बन गया था तो भी वह अपने मौसी-मौसा को भूली नहीं और न वे लोग ही उसे भुला सके। जार्ज और जाय एडमसन जब कभी वन-विहार को जाते, एल्सा से भेंट करने का उनका प्रोग्राम अवश्य रहता। उन्हें पता रहता था कि वह किधर कहाँ होनी चाहिए। अस्तु, वे पुकार लगाते और देखते कि एल्सा किधर से भी दौड़ी चली आ रही है और उनसे लिपटकर अपनी पूर्व स्थिति पर आँसू बहा रही है। यों उसे गृहस्थ बनना तो पड़ा ही पर उसे यह पड़ा बहुत महँगा। माता-पिता के प्यार से उसे पति का प्यार घटिया भी लगा और महँगा भी पड़ा।

कुछ समय बाद एल्सा ने तीन बच्चे दिये। दो नर एक मादा। सिंहों की प्रकृति है कि वे अपने बच्चों के प्रति अत्यधिक संवेदनशील होते हैं और उनकी सुरक्षा के सन्दर्भ में किसी का भी विश्वास नहीं करते। यह प्रकृति एल्सा की भी रही। वह अपने बच्चों को छिपाकर झाड़ी में रख आती और तब नैहर आती। जार्ज को उसकी चालाकी मालूम थी। वे एक दिन बच्चों की झाड़ी के समीप जा पहुँचे। इस पर एल्सा ने नाराजी व्यक्त की और दूसरे दिन दूर की झाड़ी में उन्हें छिपा आई। लेकिन यह छिपाव-दुराव अधिक दिनों तक न रहा। बच्चे थोड़े बड़े हो गये तो वह उन्हें ननिहाल दिखाने ले गई। नानी ने उनका भी स्वागत-सत्कार किया, फिर तो वे भी अभ्यस्त हो गये और माँ को धकेलकर नानी के यहाँ जल्दी-जल्दी चलने के लिए विवश करने लगे। वहाँ उन्हें अधिक सुविधाएँ, अधिक आव-भगत और अधिक खेलने-कूदने का अवसर जो मिलता था।

बच्चे भी धीरे-धीरे ननिहाल में इतने घुल-मिल गये कि नानी का कुर्त्ता पकड़कर लटकने में उन्हें आनन्द आने लगा। कुछ समय तक तो एल्सा का यह प्रयत्न रहा कि बच्चों के साथ कोई अधिक घुलने-मिलने न पाये। इसमें उसे सुरक्षा में खतरा पड़ने का डर रहता होगा। पीछे जब उसने समझ लिया कि उसका भय आशंका मात्र ही था तो उसने पूरी छूट दे दी और कभी-कभी बच्चों को वहीं छोड़कर घूमने चली जाने लगी।

नानी ने अपने धेवती-धेवतों का चावपूर्वक नामकरण किया। दो लड़के थे। उनके नाम रखे गये जेस्फा और गोपा। लड़की का नाम रखा गया—छोटी एल्सा। माँ बड़ी एल्सा और बेटी छोटी ऐल्सा।

यह लाड़-दुलार विधाता से अधिक दिन न देखा गया। प्रसूति के छः महीने बाद ऐल्सा बीमार पड़ी और मर गई। धेवती-धेवतों के लालन-पालन का भार नानी-नाना के कन्धों पर आया। बाप तो उन्हें अनाथ छोड़कर एक तरफ खिसक गया। पर नानी के मन पर ऐल्सा के प्रति जो स्नेह-वात्सल्य था, उसने अपनी धारा कुंठित नहीं होने दी और यह तीनों बच्चे भी उन्हीं के आश्रय में भली प्रकार पाले गये। पीछे जब वे प्रौढ़ हो गये तो नेशनल पार्क में सर्वथा स्वतन्त्र जीवन जीने के लिए उन्हें उन्मुक्त छोड़ दिया गया।

एडमसन द्वारा उन्मुक्त वातावरण में सिंह पाले जाने और उनकी क्रूरता निरस्त करके सौम्य स्वभाव उत्पन्न करने की कुशलता को सर्वत्र सराहा गया और उस अद्भुत कर्तृत्त्व को देखने के लिए संसार भर के लोग उनके पास आये। पत्र प्रतिनिधियों ने इस सन्दर्भ में उनसे तरह-तरह के प्रश्न पूछे। उनका जो उत्तर वे देते उसका संक्षिप्त सारांश यही होता कि प्रेम और सौजन्य की शक्ति सर्वोपरि है। यदि हमारी सद्भावना एवं आत्मीयता बनावटी न हो तो उसका प्रभाव दूसरों पर ही अवश्य पड़ेगा, फिर भले ही उसकी प्रकृति कितनी ही क्रूरतायुक्त क्यों न रही हो। वे इस बात पर बहुत जोर देती थीं कि यदि भटके हुए दुराग्रही और अपराधी प्रकृति के मनुष्यों को स्नेह-सौजन्य भरे वातावरण में रखा जा सके तो उन्हें सज्जन और सम्भ्रान्त बनाया जा सकना न तो अशक्य ही होगा और न कठिन ही प्रतीत होगा।

क्रूरता को सौजन्य जीत सकता है

आक्रमण उतना हानिकारक नहीं, जितना उसका आतंक। हिंसा उतनी विघातक नहीं होती, जितनी भयग्रस्तता। यदि साहस का सम्बल साथ लेकर चला जाय तो वह जटिल स्थिति भी सामान्य जैसी बन जाती है, जिसकी कि चर्चा सुनते ही डरपोक मनुष्यों के रोंगटे खड़े हो जाते हैं। आदिवासी, वनवासी घने जंगलों में एक-एक झोंपड़ी अलग-अलग बनाकर रहते हैं। उन जंगलों में हिंस्र व्याघ्र भरे पड़े होते हैं। किन्तु इन वनवासियों पर उनका कोई आतंक नहीं होता। रात को गहरी नींद सोते हैं। दिन में आहार की तलाश के लिए उन्हीं झाड़ियों को ढूँढ़ते रहते हैं, जिनमें कि इन हिंस्र पशुओं के घर होते हैं। निर्भीकता का ही परिणाम है कि शेरों से आदिवासी नहीं डरते वरन् आदिवासियों से उन्हें डरना पड़ता है। हर वनवासी अपने जीवन में ढेरों हिंस्र पशुओं को धराशायी करता है, जबकि उनके परिवार में मुद्दतों बाद ऐसी घटनाएँ घटित होती हैं, जिनमें किसी सिंह, व्याघ्र ने आदिवासी की जान ली हो।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अफ्रीका के रायल नेशनल पार्क, सारंगेटो नेशनल पार्क, लकमनी आराने पार्क, क्वीन एलिजाबेथ नेशनल पार्क जैसे सुविस्तृत वन विहार बनाये गये हैं। जिन्हें देखने के लिए दुनियाँ भर के लोग जाते हैं। इनमें वन्य पशु स्वच्छन्दता और सुविधापूर्वक घूमते और अपना प्राकृतिक जीवन जीते हैं। इनमें सिंहों की संख्या भी काफी है। वे स्वच्छन्द घूमते हैं, साथ ही जहाँ वे रहते हैं, वहीं जेबरा, जिराफ, हिरन आदि भी निर्भयतापूर्वक विचरण करते हैं। वे सिंहों को देखकर सतर्क तो हो जाते हैं पर न तो भागते हैं और न चरना छोड़ते हैं। मिल-जुलकर आक्रमण का मुकाबला करते हैं और कोई चपेट में आ भी जाय तो मौत और जिन्दगी के मिले-जुले क्रम के बीच निर्भयतापूर्वक रहते हुए उन्हें कोई संकोच नहीं होता।

अफ्रीकी मसार्क जाति के वनवासी प्रायः उन्हीं क्षेत्रों में रहते हैं, जिनमें सिंहों का बाहुल्य है। न केवल वे स्वयं रहते हैं वरन् अपने पालतू पशुओं को भी रखते हैं। भूखे और भरेपेट सिंहों की स्थिति को वे भली प्रकार जानते हैं और तदनुसार अपनी सुरक्षात्मक व्यवस्था को भी ठीक कर लेते हैं। मौत और जिन्दगी ने जिस तरह आपस में समझौता किया हुआ है, उसी तरह वनवासी और हिंस्र पशु भी अपने ढर्रे से अपना समय गुजारते हैं। भय और आतंक को वे एक ताक पर उठाकर रख देते हैं।

सरकस के साहसी प्रशिक्षक, किस प्रकार जानवरों को सधाते और उनसे तरह-तरह के खेल कराते हैं, यह सभी को विदित है। हिंस्र पशुओं को पालने और उन्हें सामान्य पशुओं की तरह रहने के लिए अभ्यस्त करने में अधिक सफलता मिलती जा रही है, ऐसे एक नहीं अनेक प्रयोग सामने आते रहते हैं, जिनसे सिद्ध होता है कि हिंसात्मक प्रकृति को बदलकर उसे सौम्य स्तर का बनाया जा सकता है।

भेड़िये प्रकृतितः हिंस्र जन्तुओं की बिरादरी में अधिक खूँखार माने जाते हैं। 'छोटा सो खोटा' वाली उक्ति भेड़ियों पर अधिक सही रूप से लागू होती है। उसकी धूर्तता ही नहीं, दुष्टता भी अपने ढंग की अनौखी होती है। इसलिए चिड़ियाघरों के पशु-पालकों से लेकर जंगल में रहने वाले किसानों से लेकर शिकारियों तक को इनके बारे में बड़ी सतर्कता बरतनी पड़ती है। वे कभी भी कुछ भी कर सकते हैं। हिंस्र पशु विशेषज्ञ **विलियम बायरन मोवरी** ने लिखा है—भेड़िया पालने की बात किसी को नहीं सोचनी चाहिए। बचपन में भेड़िया पालतू रह सकता है, पर बड़ा होने पर वह दुष्ट आक्रमणकारी बनकर अपने पालनकर्त्ता की ही खबर ले सकता है।

जेरम हैलयुथ को कुत्ते पालने का शौक था। उनने अलास्किन जाति के शिकारी कुत्ते पाल रखे थे। उनकी पत्नी हेलेन ही नहीं—बच्चे भी इन्हें पालने में रुचि लेते थे।

हैलयुथ का मस्तिष्क बहुत समय यह सोचने में लगा रहा कि प्यार की जंजीर में जब इन खूंखार कुत्तों को बाँधा जा सकता है, तो लगभग उसी जाति से मिलते-जुलते भेड़िये क्यों नहीं पल सकते ? इस प्रश्न का समाधान उनने भेड़िया पालकर ही प्राप्त करने का निश्चय किया।

भेड़िये का बच्चा प्राप्त करने के लिए उन्होंने टकोसा चिड़ियाघर से सम्पर्क स्थापित किया और वहाँ के अधिकारियों से मिलकर यह सफलता प्राप्त कर ली कि अगले दिनों जब मादा प्रसव करेगी, तब एक बच्चा उन्हें मिल जायगा। नियत समय पर एक बच्चा उन्हें मिल भी गया। नाम रखा गया 'कुनू'।

यह नवजात शिशु मात्र छः इन्च की थी। पालना एक समस्या थी, फिर भी उसे जीवित रखने में सफलता प्राप्त कर ली गई। हैलयुथ की पत्नी और उनकी चारों बच्चियों ने इस नये अतिथि के पालन में उत्साहपूर्वक सहायता की और वह पल भी गया। 'कुनू' नर नहीं मादा थी।

कुत्तों के साथ उसकी दोस्ती हो गई। खासतौर से डेरियन कुतिया के साथ तो उसकी इतनी घनिष्टता हो गई मानो वे दोनों माँ-बेटी ही हैं। यह जन्म के समय छः इन्च की थी पर एक वर्ष में बढ़कर ५ फुट लम्बी और ७५ पौंड भारी हो गई। एक वक्त में वह प्रायः डेढ़ पौंड खाना खाती।

बड़े होने पर उसमें भेड़ियों की दुष्टता के कुछ लक्षण उभरे तो पर पालक ने पूरी सतर्कता से काम लिया और प्रकृति प्रदत्त क्रूरता भुलाने एवं अन्य कुत्तों की तरह के लिए लगातार शिक्षा दी। उसे वैसा ही वातावरण दिया जैसा कि अन्य पालतू कुत्तों को उपलब्ध था। फलतः वह उन्हीं के साथ घुल गई और कुत्तों की बिरादरी में पूरी तरह सम्मिलित होकर उन्हीं के आचरण करने लगी।

दुष्टता की किम्बदन्तियों को 'कुनू' ने झुठला दिया और एक नये तथ्य का प्रतिपादन किया कि भेड़िये दूसरे हिंस्र जानवरों की तुलना में अधिक स्नेहिल होते हैं। उसे प्यार करने की प्रकृति भी जन्म-जात रूप से ही मिली थी। भेड़िये एक-दूसरे के मुँह में मुँह डालकर प्यार करते हैं। कुनू का वास्ता मनुष्यों से पड़ता था सो वह उनकी बांहों तथा पैरों को मुँह में रखकर चूमने जैसा आचरण करती। घर की बच्चियाँ इसकी प्रतीक्षा करती रहती थीं कि कुनू उसे कब और कितनी देर चूमेगी, उन्हें इसमें बड़ा आनन्द आता। कभी-कभी कुनू की चूमने की आकांक्षा इतनी तीव्र होती कि घर आने वाले आगन्तुकों के साथ भी वह उसी खेल को खेलती। आगन्तुक पहले तो घबराता पर पीछे जब प्रतीत होता कि खूँखार भेड़िये भी इतने स्नेहिल हो सकते हैं तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अहमदाबाद के प्राणी संग्रहालय की अफसर **ज्योतिवेन मेहता** ने व्यक्तिगत रूप से आक्रमणकारी पशुओं में दिलचस्पी ली है और उन्हें अधिक मृदुल, वफादार एवं सहयोगी बनाने में सफलता प्राप्त की है। उनका कहना है—आत्म-विश्वास, निर्भयता, प्रेम एवं सहानुभूति की समुचित मात्रा यदि अपने पास हो तो हिंस्र जन्तुओं को आसानी से मृदुल एवं वफादार बनाया जा सकता है।

ज्योतिवेन ने एक बाघ का बच्चा 'राजू' बड़े लाड़-प्यार से पाला, वह उनसे बहुत घुलमिल गया। जंजीर में पकड़कर वे उसे खुले हुए सार्वजनिक पार्क में घुमाने भी ले जाती थीं। दो वर्ष का होने तक उसका व्यवहार बहुत ही सज्जनतापूर्ण रहा। वे उसे गोदी में उठाकर अकसर खिलाती थीं। एक बार भारतीय चित्र वृत्त विभाग के द्वारा डाक्यूमेन्टरी फिल्म ली जानी थी, जिसमें वे बाघ को गोदी में लेकर चित्र खिंचवातीं। यह शूटिंग खुले में हो रही थी। दर्शकों की भीड़ बहुत थी। अचानक बाघ भड़क उठा और उनकी जाँघ में ही दाँत गढ़ा दिया। खून से लथपथ होते हुए भी उन्होंने राजू को गोद में लेकर तस्वीर तो खिंचवाई पर वे इस तथ्य को और भी अधिक गहराई से समझने लगीं कि हिंस्र पशुओं की स्नेहशीलता को ही नहीं, उनकी तुनकमिजाजी को भी ध्यान में रखा जाय।

पशुओं में बुद्धिमत्ता की एक मात्रा मानी जाती है, इसलिए यह सोचा जा सकता है कि पालतू पशुओं की तरह हिंस्र पशुओं को भी अधिक परिश्रम करके सधाया या सुधारा जा सकता है। पर सर्प जैसे कीड़ा को क्या कहा जाय, जिसमें समझदारी का नाम भी नहीं होता। दुनियाँ में ऐसे लोग भी हैं, जिन्होंने सर्पों के न केवल विष दन्त चुभोने की क्रूर प्रकृति को बदला है, वरन् उन्हें कलात्मक नृत्य सिखाकर दर्शकों को मुग्ध करने जैसे कठिन कार्य के लिए प्रशिक्षित किया है।

इंग्लैण्ड की सर्प सुन्दरी सान्या के सर्प नृत्यों की इन दिनों यूरोप और अमेरिका में धूम है और जहाँ भी उसके प्रदर्शन होते हैं, दर्शकों को जगह मिलना कठिन हो जाता है।

यह महिला आरम्भ में साधारण नर्तकी थी। पीछे उसने सर्पों को अपना सहचर बनाने का निश्चय किया। अजगर, कोबरा तथा दूसरी विषधर जातियों के सर्प पाले। उनकी प्रकृति समझी, दोस्ती बढ़ाई और स्थिति यहाँ तक उत्पन्न कर ली कि वे उसके साथ-साथ रंगमंच पर घण्टों नृत्य कर सकें। जब यह नाचती है तो वे पालतू विषधर मात्र उपकरण नहीं बन रहते वरन् नृत्य की ताल और मुद्रा का ध्यान रखते हुए स्वयं भी नृत्य निरत अभिनेता होने का परिचय देते हैं। दर्शक यह देखकर मुग्ध हो जाते हैं कि नृत्य में सर्प भी किस प्रकार सहभागीदारी का आश्चर्यजनक एवं नपा-तुला पार्ट अदा करते हैं।

सर्प सुन्दरी सान्या ने जहाँ अपने सर्प नृत्यों से विपुल सम्पत्ति एवं ख्याति अर्जित की है, वहाँ इस तथ्य का भी प्रतिपादन किया है कि क्रोधी और दुष्ट समझा जाने वाला यह विषधर स्नेह-सौजन्य की कोमल रज्जु में बँधने के लिए किस तरह स्वेच्छापूर्वक तैयार हो जाता है।

हमें देर-सबेर में इस निष्कर्ष पर पहुँचना ही होगा कि अनगढ़ क्रूरता को सदाशयता पूर्ण सत्प्रयत्नों से बदला और सुधारा जा सकता है। इसमें कितना श्रम और समय लगेगा, कितने साहस और धैर्य का परिचय देना पड़ेगा; यह बात दूसरी है।

वे साहसी बालक-जिनकी सर्वत्र प्रशंसा है

बालक-बालिकाओं में प्रारम्भ से ही यदि भयभीत होने, घबड़ा जाने की आदत न डाल दी जायें तो वे भी छोटी आयु में भी साहसिक कार्य कर सकते हैं। अपने अज्ञान के कारण अभिभावक बच्चों को भयभीत होना सिखा देते हैं। जो कार्य समझा-बुझाकर प्रेम से कराना चाहिए उसे भय दिखाकर कराते हैं। फलस्वरूप बच्चों में साहस का विकास नहीं होने पाता, जिसके कारण सामान्य घटनायें दुःखदाई दुर्घटनायें बन जाती हैं। बहुधा ऐसे अवसर पर 'बिचारा बच्चा ही तो था क्या करता' कहकर बात टाल दी जाती है। किन्तु प्रस्तुत उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है कि साहस होने पर बच्चे भी आत्म-रक्षार्थ बहुत कुछ कर सकते हैं।

पश्चिम बंगाल जिला बर्दवान की घटना है। एक सात वर्षीय बालिका शम्पा मुकर्जी घर से ट्यूशन पढ़ने निकली। मई माह की तपती दोपहरी में मार्ग पर आवागमन कम होना स्वाभाविक है। एक मोड़ पर सुनसान देखकर एक बदमाश बच्ची को ले भागा। बेचारी अबोध बालिका यह न समझ सकी कि मामला क्या है ? प्रश्न भरी निगाह से उसकी ओर भौंचक्की-सी देखती रह गई। आश्चर्य में चिल्ला भी न सकी। तब तक अपहरणकर्त्ता उसे एक मकान में ले गया तथा कमरे में बन्द कर लिया। कु. शम्पा के कानों में सोने के कुण्डल थे। वह व्यक्ति उन्हें उतारने लगा। अब बच्ची की समझ में बात आई। उसने विचार किया तथा शान्त खड़ी रही। बदमाश बेफ्रिक होकर कुण्डल खींचने लगा। अचानक बच्ची ने उसके हाथ में जोर से काट खाया। इस अप्रत्याशित घटना के लिये वह तैयार न था अतः पीड़ा से छटपटा उठा। जब तक सतर्क हो, बालिका फुर्ती से दरवाजा खोलकर भाग निकली।

यदि "हौआ कान काट लेता है" का भय बच्ची के मन में होता तो उसकी सारी सूझ-बूझ जवाब दे जाती। घर के लोग बदमाशों तथा पुलिस अव्यवस्था को गालियाँ देकर सन्तोष करके रह जाते। किन्तु बच्ची

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साहसपूर्वक भागती हुई घर पहुँची। परिवार तथा पड़ौस के व्यक्ति घटना सुनकर उसके साथ हो लिये। बालिका बिना डरे पुनः सबको उस घर में ले गई। उस व्यक्ति को भी पहचान लिया। प्रमाणस्वरूप उसके हाथ में दाँतों के निशान तो थे ही। व्यक्ति को पुलिस के सुपुर्द कर दिया गया। बालिका अपने साहस से स्वयं भी बची तथा एक अपराधी को भी पकड़वा दिया।

एक और घटना ग्यारह वर्षीय बालक धर्मसिंह द्वारा पागल सियार का निहत्थे मुकाबला करने की है। चूहे या बिल्ली के काटने के भय से चुप होने का अभ्यस्त बालक होता तो क्या वह सियार को देखकर अपने होश भी ठिकाने रख पाता ?

घटना जुलाई ६७ की है। पाठशाला के मध्यावकाश में तीन बालक एक तरफ मैदान में खेल रहे थे। अचानक एक पागल स्यार उधर आ निकला। सियार पागल होने पर कुत्ते की ही तरह आक्रामक हो जाता है। उसने बच्चों पर हमला बोल दिया। खेल में मग्न बालक सम्हलें तब तक उसने तीनों को बुरी तरह काट खाया। वीर धर्मसिंह ने मानसिक सन्तुलन बनाये रखा। मौका पाते ही झपटकर सियार का गाल हाथ का सिरा फँसाकर पकड़ लिया। खूँखार सियार पंजे मारता रहा, छूटने के लिए खींचातानी करता रहा, पर धर्मसिंह की पकड़ ढीली न पड़ी। स्यार का जबड़ा खींचातान में फट गया। तब तक शेष दो विद्यार्थी पास के खेत में काम कर रहे किसानों को बुला लाये। किसान की लाठी के भरपूर वार से सियार ढेर हो गया। धर्मसिंह की बहादुरी पर गाँव के सभी व्यक्तियों ने उसकी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की। साथियों तथा उनके अभिभावकों ने धर्मसिंह के प्रति कृतज्ञता प्रगट की। उसी के साहस से दुर्घटना टल गई अन्यथा पागल सियार कम घातक नहीं होता।

आत्म-रक्षा ही नहीं, आपदग्रस्त साथियों अथवा अपरिचितों की रक्षा भी साहसी बच्चे कर सकते हैं। बच्चों में परदुःखानुभूति का गुण स्वाभाविक रूप से होता हैं। साहस के अभाव में बेचारे भयभीत होकर कुछ करने की स्थिति में नहीं रहते। प्रस्तुत घटनाओं से यह स्पष्ट हो जाता है कि बच्चों में सेवा सहयोग की भावना कम नहीं होती। अपने प्राणों पर खेलकर भी वह साहसिक कार्य कर सकते हैं।

२९ अगस्त सन् ६८ की घटना है। छात्र व छात्रा नाव से भागीरथी पार कर रहे थे। सहसा वर्षा की उफनती हुई नदी के भँवर में फँसकर नाव उलट गई। छात्र तो हाथ-पैर मारकर किनारे पर आ गया किन्तु छात्रा डूबने लगी। किनारे पर लोग शोर करने लगे—पर किसी से रक्षा प्रयास में कुछ करते नहीं बन रहा था। अचानक नाव की प्रतीक्षा में खड़ा एक साहसी बालक भरी नदी में कूद पड़ा। बालक हाथ मारता हुआ जब तक बहती हुई छात्राओं के निकट पहुँचे, तब तक वह डूब गईं। किन्तु बालक ने हिम्मत न हारी। गोता लगाकर पानी के अन्दर से छात्रा को खींच लाया। किनारे पर लाते-लाते बालक थक गया था तथा छात्रा बेहोश हो गई थी। छात्रा के पेट से पानी निकालकर एवं कृत्रिम श्वाँस देकर बचा लिया गया।

उस छात्रा का नाम कु. शुक्लादास तथा बचाने वाले बालक का नाम ध्रुव रुद्र है। ध्रुव रुद्र एक एडवोकेट का पुत्र है। सम्पन्न घरों के बच्चों में बहुधा लापरवाही तथा खतरों से बचकर रहने का स्वभाव होता है। किन्तु संस्कारी बालक ध्रुव रुद्र ने अपने कृत्य से छात्रा की प्राण रक्षा करके स्वयं भी प्रशंसा पाई तथा परिवार को भी गौरवान्वित किया।

इसी प्रकार की प्रशंसा कुमारी स्वर्णलता महती ने भी पाई। २४ मार्च, १९५७ को जन्मी यह बालिका ११ वर्ष की अल्पायु में ही अपने साहस के कारण प्रसिद्धि पा गई। १० फरवरी, ६८ को पुरी (उड़ीसा) की प्रमुख नहर के किनारे बच्चे स्नान कर रहे थे। अचानक तीन वर्ष का एक बच्चा नहर में गिर पड़ा। कई बच्चे तैरना जानते थे, किन्तु नहर की तेज धार में कूदकर उस बालक को बचाने की हिम्मत किसी की नहीं पड़ रही थी। तभी स्वर्णलता ने छलाँग लगा दी। बच्चा तब तक किनारे से लगभग २० फुट दूर जा चुका था। बालिका को नहर की तेज धार में उसे बचाने के लिए भरपूर संघर्ष करना पड़ा। किन्तु अन्त में वह उसे किनारे तक ले आने में सफल हो गई और बच्चे की जान बच गई।

कृष्ण चिल्ड्रन होम के कृष्णदत्तू ने भी अपनी सूझ-बूझ तथा धीरता से अपने एक साथी की जान बचा ली। घटना २६ दिसम्बर सन् १९६७ की है। रात्रि ८ बजे के लगभग कुछ बालक शौचादि के लिये निकले। पास ही एक गहरा कुँआ था। साथियों की प्रतीक्षा में ४-५ बच्चे कुएँ की मुड़ेल पर बैठकर गपशप का आनन्द लेने लगे। एक बालक का सन्तुलन बिगड़ा तथा वह कुएँ में जा गिरा। लड़के घबड़ाकर चिल्ड्रेन घर की ओर दौड़े तथा शोर मचाने लगे। राह चलते कुछ व्यक्ति भी रुककर 'रस्सी लाओ, रस्सी लाओ' चिल्लाने लगे। उधर तैरना न जानने वाला वह बालक कुएँ में डूबा जा रहा था। तभी कृष्णदत्तू भागते हुए वहाँ पहुँचे तथा कुएँ में उतरे। अन्धेरा, गहरा कुँआ। इस प्रकार कूदना खतरनाक था। किन्तु वीर बालक ने अपने साहस के आगे उसे नगण्य सिद्ध कर दिया। कुएँ में अपने साथी को डूबने से बचा लिया। बाहर निकाला जाकर वह बालक अस्पताल भेज दिया गया। वहाँ बालक परिचर्या द्वारा स्वस्थ हो गया। किन्तु उसकी प्राणरक्षा का मुख्य श्रेय तो वीर कृष्णदत्तू को ही दिया जावेगा।

एम. के. कट्टापन नामक बालक ने तो अपने प्राण देकर भी एक ७ वर्षीय बालक को डूबने से बचा लिया। एर्नाकुलम जिले के श्री कुरुमपण के इस पुत्र ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्म-बलिदान करके भी अपने ही विद्यालय (केरल के राजकीय हाईस्कूल) के छात्र की प्राणरक्षा की।

उक्त बालक नदी में नहाते समय फिसल पड़ा। तेज धार में बहने लगा। अपने बचाव के लिये उसके सारे प्रयास विफल हो गये। एम. के. कट्टापन ने उसे संघर्ष करते देख लिया। उसने परिस्थिति की गम्भीरता समझ ली तथा तुरन्त नदी में कूद पड़ा। डूबते हुए बालक को पकड़कर वह किनारे की ओर आने लगा। तेज धार का काटना, वह भी बालक को सम्हाले हुए काफी कठिन कार्य था। कट्टापन की दम फूल गई। किन्तु वह साहस करके किनारे की ओर बढ़ रहा था। किनारा अधिक दूर नहीं रह गया था तभी एक भँवर में वह फँस गया। बरसाती नदी की भयंकर भँवर—थकी हुई अवस्था में उससे निकलना असम्भव दिखने लगा। दोनों बालकों के प्राण संकट में थे। किन्तु वीर कट्टापन ने अपने कर्त्तव्य को उस अवस्था में भी पूरा किया। शरीर की पूरी शक्ति लगाकर उसने उस ७ वर्षीय बालक को जोर से किनारे की ओर ठेल दिया। वह बालक तो किनारे लग गया किन्तु कट्टापन न बच सका। भरपूर प्रयास करने पर भी उसके थके हाथ भँवर को न चीर सके और वह वीर बालक नदी में ही समाधिस्थ हो गया।

साहसी बच्चे अपने पौरुष तथा मानसिक सन्तुलन से एक व्यक्ति नहीं वरन् समुदाय की रक्षा में भी सहयोग दे सकते हैं। प्रस्तुत दो घटनायें ऐसे ही वीर बालकों की यश गाथाएँ हैं।

पहली घटना बंगलौर के कुमार पार्क क्षेत्र की है। दि. २५ सितम्बर, १९६८ की रात्रि को एन. नागराज नामक किशोर ने अपने साहस से अपने भाई-बहनों की प्राणरक्षा कर ली। परिवार एक भयंकर दुर्घटना का शिकार होने से बच गया।

रात्रि को वर्षा पूरे जोर पर थी—रह-रहकर बिजली कड़क रही थी। नागराज अपने दो भाई-बहनों के साथ एक कमरे में सो रहा था तथा उसकी माँ सबसे छोटे बच्चे को लेकर दूसरे कमरे में सो रही थी। तेज आवाज से वह जाग गया। उसने बिजली जलाने का प्रयास किया किन्तु अँधेरे में जल्दी में स्विच न मिला। नागराज ने अनुभव किया कि मकान में पानी आ रहा है तथा तेजी से बढ़ रहा है। देरी करने का अर्थ था, भयंकर संकट। उसने तुरन्त अपने भाई-बहिनों को जगाया तथा खिड़की के रास्ते बाहर आ गया।

तब तक उसकी माँ भी जाग गई। कमरों में ५ फुट पानी आ चुका था। अन्धेरे में माँ अपनी तथा बच्चों की रक्षार्थ चिल्ला रही थी। नागराज ने चिल्लाकर अपनी कुशलता की सूचना दी तथा माँ को धैर्य बँधाया। तब तक पड़ौसी जाग गये तथा दरवाजा तोड़कर माँ को निकाल लिया गया। तभी नागराज ने देखा कि सबसे छोटा भाई वहाँ नहीं है। वह माँ के कमरे में ही पानी में डूब गया था। माँ चीखकर बेहोश हो गई। पर नागराज झपटकर अन्दर गया तथा पानी में से खोजकर भाई को निकाल लाया। थोड़ी देर और हो जाती तो बच्चा दम तोड़ देता। सौभाग्य से पास ही एक डाक्टर रहते थे, जिनके प्रयास से माँ-बेटे की जान बचा ली गई। यदि बहादुर नागराज हिम्मत से काम न लेता तो दुर्घटना में कोई कमी न रह गई थी।

दूसरी घटना पश्चिम बंगाल की है। वहाँ नित्यानन्द मण्डल नामक एक बालक ने ग्रामीणों की डाकुओं से मुठभेड़ में सराहनीय साहस का परिचय दिया। १६ जुलाई, १९५३ में जन्मे इस किशोर ने अपने वीरतापूर्वक कार्य से गाँव वालों को चकित कर दिया।

एक रात गाँव में डाकुओं ने हमला किया। गाँव वाले सम्हलें तब तक वह लूट-पाट करके भाग निकले। गाँव वालों को भयभीत करने के लिये वे गोलियाँ दागते जा रहे थे। किन्तु उन्हें पता नहीं था कि उनकी गोलियों से अप्रभावित एक वीर बालक उनका पीछा कर रहा था। नित्यानन्द दबे पाँव तेजी से डाकुओं का पीछा करता गया, उसके हाथ में अस्त्र के नाम एक कुल्हाड़ी थी। डाकू लूटकर सकुशल निकल भागें, यह उसे सहन नहीं हो रहा था। प्रयास करके वह डाकुओं के निकट पहुँचने में सफल हुआ। लपककर उसने भरपूर कुल्हाड़ी का बार एक डाकू के सर पर कर दिया। वह डाकू वहीं ढेर हो गया। उसका एक साथी और नित्यान्द की कुल्हाड़ी से घायल होकर भाग गया। नित्यानन्द की वीरता से सारे गाँव का उत्साह बढ़ गया तथा डाकुओं को दूर तक खदेड़ दिया गया। भागते हुए डाकू कुछ माल भी छोड़ गये तथा मृत साथी को भी न उठा ले जा सके। उसको पहचानकर गिरोह का अंदाज लगाये जाने में सुविधा हुई।

उक्त सभी घटनायें इस बात की प्रमाण हैं कि बालक-बालिकाओं में साहस तथा शौर्य आदि गुण विकसित किये जावें, तो वे गौरवशाली जीवन व्यतीत कर सकते हैं। देश के भावी नागरिकों में इन वृत्तियों का होना आवश्यक भी है। उक्त थोड़े से बालकों की तरह अनेक बच्चों में भी प्रयासपूर्वक उक्त गुण पर्याप्त मात्रा में विकसित किया जाना सम्भव है।

साहस और सूझ-बूझ के धनी

साहस और सूझ-बूझ के सहारे साधारण स्थिति के मनुष्य भी कई बार ऐसे महत्त्वपूर्ण कार्य कर दिखाते हैं, जो उतावले और डरपोक प्रकृति के मनुष्य समर्थ एवं साधन-सम्पन्न होने पर भी नहीं कर पाते।

सैन मैरिना के एक किसान का हल जोतने वाला खच्चर एक जंगली भालू ने मार दिया था। किसान ने उस रीछ को पकड़ लिया और खच्चर का काम करने के लिए उसे बाधित कर लिया था। इस बूढ़े साहसी किसान के साहस को देखने दूर-दूर के लोग आते थे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जर्मनी के पहलवान **मैक्स सासिस** के शरीर का वजन १४० पौण्ड था पर उसने अपने शरीर से ४० पौण्ड अधिक भारी व्यक्ति को एक हाथ से १६ बार सिर तक की ऊँचाई तक उठाकर दिखाया।

आर्कोट के **नबाब अनवरुद्दीन** १७४९ में १०७ वर्ष के थे। तब भी वे अम्बौर की लड़ाई में हाथी पर चढ़कर लड़ने गये। लड़ाई में उनने जौहर तो बहुत दिखाये पर शत्रु की गोलियों के शिकार होकर मोर्चे पर ही ढेर हो गये।

अटलांटिक सागर ह्वेल मछलियों के शिकारियों के लिए प्रसिद्ध है। उनके शिकार के लिए शिकारी जहाज अक्सर उधर जाते रहते हैं। 'स्टार आव दि ईस्ट' नामक एक जहाज शिकारियों के दस्ते के साथ उधर पहुँचा। एक बड़ी ह्वेल के साथ उनका मुकाबला हुआ। भाले फेंके गये जो ह्वेल को लगे। वह क्रुद्ध होकर जहाज पर टूट पड़ी और एक नाविक को उसने देखते-देखते निगल लिया। नाविक तीस घण्टे उसके पेट में रहा, किसी प्रकार उसने अपना चाकू कमर से निकाला और ह्वेल का पेट चीरकर बाहर निकला। अपने ढंग की यह अनौखी घटना थी।

रोम के एक शासक मैक्सी नियेनस ने एक दरबारी को मौत की सजा दी और यह एक फैसला उसी पर छोड़ दिया कि मृत्यु दण्ड को किस तरह कार्यान्वित किया जाय। दरबारी कास्टेन्टाइन सम्राट का दामाद था। उसने भरे दरबार में सजा की स्वीकारोक्ति की व स्वेच्छा से प्राणघात की याचना की। उसने दोनों हाथों से गला घोंटकर प्राण त्याग दिये।

न्यूजीलैण्ड के ८५ वर्षीय एल्फ्रेड रीड ने एक १७० मील लम्बी यात्रा १० वर्ष में अकेली पूरी की, उसमें उसे ऊँची पहाड़ियों को चढ़कर और नादियों को तैरकर पार करना पड़ा। खाने-सोने का प्रबन्ध उसे परिस्थितियों के अनुरूप स्वयं ही करना पड़ता था।

माटामारा न्यूजीलैण्ड का १२२ वर्षीय आदिवासी अपने कबीले की प्रथा के अनुसार सुनसान टापू में छोड़ दिया गया। ९ वर्ष तक वह वहाँ के पक्षी मारकर खाता रहा और अन्त में निढाल होकर मर गया।

आस्ट्रेलियाई एक सेना का जनरल **एन्टल स्टारे** ४७ वर्ष तक सेना में रहा। उसने ८९ लड़ाइयाँ लड़ीं, ८४ बार गम्भीर रूप से घायल हुआ। शानदार मौत उसने लड़ाई में ही पायी।

लान्स, फ्रान्स एक होटल में मेज पर चढ़कर आपस में लड़ रहे थे कि प्रबन्धक गरदेव रिहार्ड ने मेज समेत उन दिनों को उठा लिया और २० फुट ले जाकर जमीन पर पटक दिया। इतना मजबूत, तगड़ा था यह प्रबन्धक।

मिस्र का सुलतान **बैबार्स** अपना पराक्रम शत्रुओं और निजी सैनिकों के सामने प्रकट करने के लिए ३८ पौण्ड भारी लोहे का कवच पहनकर नील नदी तैरकर पार करता और वापस आता। यह क्रम उसने १७ वर्ष तक निरन्तर चलाया।

फैल्डर्स का **काउण्ट बाडोइन** का एक तगड़े भालू से वन विहार के समय मुकाबला हो गया। काउण्ट ने हिम्मत नहीं हारी और भालू का गला घोंट दिया।

फारसी दार्शनिक **अब्दुल कासिम** ने अपने जीवन में ३० बार मक्का यात्रा पैदल चलकर की। इसमें उसे ८२००० मील पैदल चलना पड़ा। पहली यात्रा तो उसने घुटनों के बल चलकर पूरी की थी।

केनिया नेशनल पार्क का रेन्जर एक दिन घोड़े पर सवार होकर अपने कार्य-क्षेत्र को देखने जा रहा था कि एक बबर शेर ने उस पर आक्रमण करके नीचे पटक लिया। मौत सामने थी। रेन्जर ने अपने छोटे चाकू से नीचे पड़े-पड़े ही शेर का पेट फाड़ डाला और अपनी जान बचाई।

काहिड काउन्टी के **मोड़ सविन्शन** का मुकाबला एक जंगली रीछ से अफ्रीका की घनी झाड़ियों के बीच हो गया। निहत्थे होने पर भी उनने हिम्मत नहीं हारी और कुश्ती लड़ते रहे। कई घाव सहने के उपरान्त भी उनने रीछ को गला घोंटकर मार डाला।

कभी-कभी सूझ-बूझ के सहारे ऐसे काम हो जाते हैं कि दंग रह जाना पड़ता है। न्यू गायना में एक बड़ा दलदल हवाई पट्टी के पास था। उससे जहाजों को खतरा रहता। इस कठिनाई को दूर करने के लिए वहाँ के आदिवासियों का एक उत्सव कराया गया। २४ घण्टे नाच चला। इतने से ही वह भूमि इतनी कड़ी हो गई मानो रौलर से दबाकर सही की गई हो।

बाइनजेटाइन के सम्राट कास्टेन्टाइन ने बलगेरिया पर ८० हजार सैनिकों से हमला बोला। हमला इतना आकस्मिक हुआ कि बलगेरिया के सैनिक शस्त्र तक न सम्भाल सके और भाग खड़े हुए। जीत अनौखी थी, उसमें आक्रमक सेना का एक भी सैनिक न मरा, न घायल हुआ।

ऐसी घटनाओं में बलिष्ठता और साधन जितना काम देते हैं, उसकी तुलना में साहस और सूझ-बूझ का महत्त्व अधिक सिद्ध होता है।

साहस एवं पुरुषार्थ की परिणति

अन्य प्राणियों की तुलना में मनुष्य की विशेषता यह है कि वह अपनी स्थिति पर सन्तुष्ट नहीं रह सकता। मनुष्येत्तर जीव प्रकृति प्रेरणाओं के अनुरूप ढर्रे का जीवनयापन करते हुए प्राय: वैसे ही बने रहे जैसे कि आदिम युग में थे। दूसरी ओर मनुष्य ने असामान्य गति से प्रगति की है। बुद्धि, साहस, पुरुषार्थ के बलबूते उसने पर्वतों के शिखरों को भी रौंदा और अन्तरिक्ष में छलाँग लगायी है। खोज के प्रति अभिरुचि, अनवरत जिज्ञासा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का अवलम्बन एवं साहस का सम्बल पाकर प्रगति-क्रम आगे ही बढ़ता गया है। फलतः उसने दुस्साहस भरे ऐसे काम कर डाले जो कभी असम्भव एवं दुस्तर समझे जाते रहे होंगे।

'ऐंडवेंचर' युक्त खोजों का इतिहास यों ही सम्भव न हुआ। वह अपने साथ साहस एवं बलिदान की रोमांचक दास्तान जोड़े हुए है। पृथ्वी का सर्वाधिक रहस्यमय क्षेत्र उत्तरी ध्रुव कभी उतना ही अविज्ञात था जितना कि आज चेतन जगत एवं उसकी चमत्कारी सामर्थ्य। किन्तु दुस्साहसियों ने अपनी जान को जोखिम में डालकर भी वहाँ तक पहुँचने एवं खोज निकालने का बीड़ा उठाया। फलतः उत्तरी ध्रुव के विषय में रहस्यमय जानकारियाँ मिल पायीं। खोजियों को कितने कष्ट झेलने पड़े, कितनों को प्राण गँवाने पड़े, यह खोज के इतिहास को पढ़ने पर पता चलता है।

सर्वप्रथम डेनमार्क निवासी **'वीनस-बेकिंग'** ने ध्रुव प्रदेशों की खोज का संकल्प लिया। सन् १७२५ में उन्होंने रशिया के आर-पार पैदल ही यात्रा की। यह यात्रा ५ हजार मील लम्बी थी। बेकिंग अपने छोटे से जहाज के सहारे प्रशान्त महासागर से साइबेरिया और अलास्का होकर 'जलडमरू' मध्य को पारकर गया। उसके नाम पर ही इस छोटे से द्वीप का नाम जलडमरू मध्य बेकिंग पड़ा है। अलास्का ध्रुव प्रदेश की खोज के फलस्वरूप अमेरिकी खण्ड पर सोने से भरा विशाल प्रदेश रशिया को मिला, जिसे बाद में अमेरिका ने खरीद लिया। बेकिंग ने अलास्का एवं साइबेरिया से उत्तर पूर्व किनारे के ध्रुव प्रदेश में अपनी खोज जारी रखी। सन् १७४१ में तीसरी यात्रा में उनका जहाज बर्फ की चट्टानों के बीच दुर्घटनाग्रस्त हो गया और उन्हें दम तोड़ना पड़ा।

ब्रिटेन के एडवर्ड पेरी ने १८१९ में उत्तरी ध्रुव तक पहुँचने का निश्चय किया किन्तु बर्फ के पहाड़ों एवं बर्फीली हवाओं के कारण उन्हें अपना निश्चय बदलना पड़ा। ब्रिटिश सरकार द्वारा कुछ समय बाद घोषणा हुई कि जो भी व्यक्ति उत्तर में ८९ अंश तक पहुँचकर समुद्री मार्ग खोज निकालेगा, उसे पाँच हजार पौण्ड का पारितोषिक दिया जायेगा। उन्नीसवीं सदी के पूर्व इन्जन से चलने वाले जहाजों की सुविधा न थी। इसके निर्माण से ब्रिटिश सरकार को आशा बँधी। लकड़ी से बने एवं पालों के सहारे चलने वाले अधिकांश जहाज बर्फ की चट्टानों से युक्त दुर्गम मार्ग एवं तूफानों के थपेड़ों से टकराकर नष्ट हो जाते थे। मोटर इन्जिन के आविष्कार से इस कठिनाई का हल निकला। ब्रिटिश नौसेना के 'एरवस एवं टेटर' नामक दो जहाज आधुनिक यन्त्रों से सुसज्जित होकर सर फ्रेंकलिन के नेतृत्व में उत्तरी ध्रुव की खोज में चल पड़े। इस जहाज का वजन साढ़े तीन हजार टन था तथा उन सारी सुविधाओं से युक्त था जो यात्रा के लिए आवश्यक थीं। १२९ कुशल नाविकों से युक्त जहाज की भव्य विदाई ब्रिटिश नागरिकों ने की।

फ्रेंकलिन को इसके पूर्व दो उत्तरी-यात्राओं का अनुभव भी प्राप्त था किन्तु नियति को प्रकृति के इस दुर्गम प्रदेश पर छेड़छाड़ करना सम्भवतः स्वीकार नहीं था। विशालकाय जहाज बर्फ के बीच फँस गया। नाविकों सहित फ्रेंकलिन को पहला जाड़ा बर्फ की कैद में ही व्यतीत करना पड़ा। पोषक आहार के अभाव में अनेकों नाविक 'स्कर्वी' नामक रोग से मरने लगे। दूसरे जाड़े में फ्रेंकलिन को भी अपने जीवन से हाथ धोना पड़ा। तीसरी ठंड आने तक १०६ नाविक जीवित थे किन्तु दोनों जहाजों के बर्फ के बीच दबकर पिस जाने से उनका जीवन भी मौत के झूले में झूल रहा था। खुराक समाप्त हो गई और मछली आदि के शिकार के लिए कोई साधन न था। फलस्वरूप नाविकों के समक्ष अनजान हिमाच्छादित प्रदेश में यात्रा करने के अतिरिक्त कोई मार्ग अब शेष न रहा। किन्तु रक्त को भी जमा देने वाली ठंड एवं भोजन के अभाव के कारण सभी नाविकों ने दम तोड़ दिया। ब्रिटिश सरकार ने इनकी टोह लेने के लिए एक दूसरा दल 'जान राई' के नेतृत्व में भेजा, जिन्हें तीस नाविकों के शव बर्फ में जमे हुए मिले।

सन् १८७९ में अमेरिकी कप्तान **'द लांग'** तीन नाव, छः बर्फ गाड़ियाँ, २३ कुत्ते एवं ३३ प्रशिक्षित नाविकों को लेकर उत्तरी ध्रुव की खोज में चल पड़े। साइबेरिया से होकर वे गुजर रहे थे, इतने में बर्फ का तैरता हुआ विशाल पर्वत उनके साथियों को विरुद्ध दिशा में नाव सहित बहा ले गया। फलतः एक नाव साइबेरिया के दूसरे किनारे पर जा पहुँची। दूसरी नाव रसद सहित डूब गयी। तीसरी में 'द लांग' अपने कुछ साथियों सहित साइबेरिया की 'लेना' नदी में जा पहुँचे। सभी हिमदंश रोग से पीड़ित हो गये और अन्ततः मौत की गोद में जा पहुँचे। दूसरे खोजी दल को 'द लांग' की लिखी १४० दिनों की प्रवास डायरी प्राप्त हुई, जो आगे यात्रा करने वालों के लिए विशेष उपयोगी सिद्ध हुई।

असफलता एवं सफलता की कड़ियाँ परस्पर एक-दूसरे से आबद्ध हैं। असफलताएँ भी अपने साथ कितने ही अनुभव एवं प्रेरणाएँ छिपाये रहती हैं तथा दूसरों को मार्गदर्शन देने में सक्षम होती हैं। ध्रुव प्रदेशों तक पहुँचने में ये दुस्साहसी असफल तो रहे किन्तु उनका त्याग, बलिदान से भरा पुरुषार्थ निरर्थक नहीं गया। दूसरे खोजियों के लिए उनके अनुभव वरदान सिद्ध हुए तथा पथ-प्रदर्शन में समर्थ रहे। कैप्टिन द लांग की प्राप्त डायरी नार्वे के डा. नानसन की सफलता का कारण बनी। डायरी में वर्णित अनुभवों से डा. नानसन ने निष्कर्ष निकाला कि उत्तरी ध्रुव के आस-पास बर्फ की पट्टी है। अतएव ऐसे जहाजों का निर्माण किया जाना चाहिए जो बर्फ जमने पर उसके बीच पिस जाने के स्थान पर सुरक्षित ऊपर उठकर सतह पर आ जाय। जिस प्रकार साइबेरिया के किनारे से लकड़ी के लट्ठे प्रवाह के साथ बहकर ग्रीनलैण्ड के किनारे पहुँचते हैं, उसी प्रकार जहाज

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी उत्तरी ध्रुव पर क्यों नहीं पहुँच सकते। इन विचारों से प्रेरित होकर उन्होंने 'फ्राम' नामक एक ऐसे जहाज का निर्माण कराया, जो उपरोक्त आवश्यकताओं की पूर्ति कर सके और जहाज को बर्फ पर फिसलने के लिए स्वतन्त्र छोड़ दिया। पौने दो वर्ष बाद जहाज ७८ अंश उत्तर अक्षांश के पास जा पहुँचा। 'नानसन' ने अब उत्तरी ध्रुव के लिए पैदल यात्रा करना अधिक उपयुक्त समझा। अपने साथी 'शालमार जोहानसन' को लेकर वह चल पड़ा। यह बहुत ही दुस्साहस भरा कदम था। मार्च १८९५ में यह यात्रा आरम्भ हुई तथा ८ अप्रैल को ८६ उत्तर अक्षांश १४ मिनट तक जाकर एक ऐतिहासिक कीर्तिमान स्थापित करते हुए समाप्त हुई। अब गरमी के कारण बर्फ पिघलनी आरम्भ हो गई। पानी पर तैरते, बर्फ से होकर वापस लौटा जा सकता था किन्तु देरी हो जाने के कारण बर्फ के अभाव में लौटना कठिन था। फलस्वरूप जाड़े की राह देखने तक फ्रान्ज जोसेफलैंड नामक टापू पर पत्थर की झौंपड़ी में समय व्यतीत करना पड़ा। आठ माह व्यतीत करने के बाद पुनः वे वापस लौटे। 'नानसन' उत्तरी ध्रुव से मात्र २२४ समुद्री मील दूर रहे। इस प्रकार इनकी यात्रा एवं अनुभवों ने आगे का मार्ग प्रशस्त किया।

ऐतिहासिक सफलताओं में किसी व्यक्ति विशेष का एकांगी पुरुषार्थ काम नहीं करता। उनमें अनेकों का योगदान होता है। सफलता का श्रेय भले ही किसी को मिले, उपयोग भले ही कोई करे, किन्तु इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता है कि वे महान उपलब्धियाँ अनेकों के सहयोग से ही सम्भव हो सकीं।

पिछले खोजियों का पुरुषार्थ निरर्थक गया, यह नहीं कहा जा सकता। एक के अनुभव ने दूसरे का मार्गदर्शन किया तथा आगे बढ़ाया। उत्तरी ध्रुव की खोज का अन्तिम श्रेय पाया, अमेरिका के राबर्ट पियरी एवं उनके नीग्रो साथी 'मेथ्यु हेनसन' एवं दो एस्किमों ने। पियरी ने लगभग अपना सम्पूर्ण जीवन ही उत्तरी ध्रुव की खोज में लगा दिया। पिछले खोजियों की असफलताओं का अध्ययन बारीकी से पियरी ने किया। लोहे से विनिर्मित जहाज, छः साथियों, १७७ एस्किमो एवं १३३ कुत्तों के साथ वह जुलाई १९०८ को दुस्साहसी अभियान पर चल पड़ा। १ अप्रैल, १९०९ को वह उत्तरी ध्रुव से मात्र १३३ मील दूर था। अन्य साथियों को वहीं छोड़कर वह एक साथी हेनसन तथा चार अनुभवी एस्किमों को लेकर आगे बढ़ा। प्रकृति ने भी इस दुस्साहसी का साथ दिया। मौसम अनुकूल था। ६ अप्रैल, १९०९ को वह प्रातः ध्रुव से मात्र ३ मिनट के अन्तर पर अर्थात् ८९ अक्षांश ५७ मिनट पर जा पहुँचा। उसकी प्रसन्नता की सीमा नहीं रही। २३ सौ वर्ष पूर्व से ध्रुव प्रदेश की जो खोज आरम्भ हुई थी—उसका अन्तिम श्रेय उसे मिला।

दुस्साहस भरी दो यात्राएँ एवं तदनुरूप सफलताएँ इस तथ्य की ओर इंगित करती हैं कि मानवी साहस एवं पुरुषार्थ के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। छोटे-मोटे अवरोधों के समक्ष सिर झुका लेने एवं अपने लक्ष्य को छोड़ बैठने वालों के लिए ये प्रसंग प्रेरणा देते तथा बताते हैं कि—"परिस्थितियों के समक्ष कभी हार न मानो, लक्ष्य तक पहुँचने के लिए अपना प्रयास जारी रखो।"

दक्षिणी ध्रुव की खोज का इतिहास उत्तरी ध्रुव की तुलना में और भी अधिक रोमांचक एवं दुस्साहस से भरा हुआ है। दक्षिणी ध्रुव पर पहुँचना तो और भी अधिक कठिन था। अठारहवीं सदी के सातवें दशक में ब्रिटेन का जेम्स कुक दक्षिणी ध्रुव की खोज करते ७० अक्षांश दक्षिण तक जा पहुँचा। यह स्थान लक्ष्य से १५० मील दूर था किन्तु बर्फ के विशालकाय शिखरों के कारण 'जेम्स' आगे नहीं बढ़ सका। बर्फ के तूफानों में ही उसे दम तोड़ना पड़ा। सन् १९०१ में जर्मन के कमाण्डर राबर्ट स्काट अर्नेस्ट हेनरी शेकलटन नामक एक आयरिश युवक को साथ लेकर दक्षिणी ध्रुव की ओर चला, किन्तु आपसी मतभेद हो जाने के कारण दोनों को दो दलों में विभक्त होना पड़ा। शेकलटन अपने दस्ते को साथ लिए दक्षिणी ध्रुव की १०० मील दूर तक पहुँच गया। किन्तु ११ हजार ६ सौ फुट ऊपर तथा शून्य से ५६ अंश नीचे भयंकर ठंड के कारण आगे बढ़ना सम्भव न हो सका। इस बीच बचा हुआ भोजन भी समाप्त हो चला था। फलस्वरूप उसने वापस लौटना अधिक उपयुक्त समझा। उसके द्वारा प्राप्त की गई जानकारियों से प्रो. डेविड के नेतृत्व में एक खोजी दल दक्षिण चुम्बकीय ध्रुव तक जा पहुँचा।

दूसरी ओर शेकलटन के साथ दक्षिणी ध्रुव की खोज पर निकला स्काट अपने अभियान में लगा रहा। ध्रुव से १५० मील दूरी पर स्काट चार के अतिरिक्त अन्य साथियों को वहीं छोड़कर आगे बढ़ा। बर्फ गाड़ी खींचने में अत्याधिक श्रम लगने एवं समुचित पोषण के अभाव के कारण बीमार पड़ गये तथा मृत्यु के ग्रास बन गये।

इन्हीं दिनों नार्वे का **'आमुंडसन'** नामक नाविक जो कभी 'नानसन' के साथ उत्तरी ध्रुव की यात्रा कर चुका था, उसने दक्षिणी ध्रुव के खोज का संकल्प लिया। उसके विगत अनुभव काम आये। अपने दल के साथ वह १४ दिसम्बर, १९११ को दक्षिणी ध्रुव पर पहुँचने में सफल रहा और 'नार्वे' का झण्डा फहरा दिया। इसके बाद तो वहाँ आना-जाना सुगम हो गया।

इन दुर्गम प्रदेशों की कठिन यात्राएँ जहाँ मानवी साहस एवं पुरुषार्थ की असाधारण महिमा का प्रतिपादन करती हैं, वहीं दूसरी ओर इस तथ्य की ओर संकेत करती हैं कि मनुष्य के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। जड़ प्रकृति की तुलना में चेतन सूक्ष्म जगत कहीं अधिक 'एडवेंचरस्' रहस्यमय, शक्ति सामर्थ्य से युक्त है। जितना पुरुषार्थ एवं दुस्साहस प्रकृति के 'ऐडवेंचर' को खोजने एवं जानने में किया जाता है उतना ही यदि चेतन जगत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के लिए भी किया जा सके तो इतना कुछ जाना एवं प्राप्त किया जा सकता है, जिसे करतलगत कर और कुछ जानने एवं पाने की आवश्यकता नहीं रह जाती।

न करिये कबिरा गरब

जनवरी १७४० की बात है तब रूस के सभी विदेशी सेवाकर्मी नागरिकों के लिए प्रतिबन्ध था कि वे बिना रूसी सम्राट और साम्राज्ञी की आज्ञा के विवाह नहीं कर सकते। आज्ञा अनुचित थी पर राजाज्ञा का प्रतिरोध करने का साहस कौन करता ?

माइकेल गैलीजाइन नामक रूसी नागरिक उन दिनों इटली में सर्विस करता था। भावुकता में आकर उसने निषेधाज्ञा का पालन नहीं किया और एक इटैलियन युवती के साथ विवाह कर लिया। यह एक सहज मानवीय स्वभाव था, उस पर अनावश्यक क्रुद्ध होने की आवश्यकता नहीं थी किन्तु महारानी जारिना एन्ना एवानोवना बहुत अधिक क्रुद्ध हो उठीं, साधारण से अपराध पर उन्होंने कठोर दण्ड और वह भी भद्दे से भद्दे तरीके से देने का निश्चय किया।

महारानी की आज्ञा से नींवा नदी के किनारे बर्फ का महल बनाया गया। महल के अन्दर की कोई भी वस्तु बर्फ से अतिरिक्त और न तो किसी धातु की थी, न वर्ण की। यहाँ तक कि पलंग, बिस्तर, बिछावन और कम्बल तक बर्फ के बनाये गये। अभी कसर शेष थी, सो महारानी ने राज्य भर के कुरूप, बौने, फूहड़, माँस भक्षी लोगों को आमन्त्रित कर मेहमान बनाया। उनमें से जो सबसे भद्दी स्त्री थी, उसे वधू चुना गया और माइकेल गैलीजाइन के साथ उसका विवाह संस्कार सम्पन्न किया गया। उस समय कर्णकटु बाजे बजे, प्रशिक्षित विदूषकों ने गन्दे भद्दे और गैलीजाइन को नीचा दिखाने वाले गीत गाये। कोई भी प्रयत्न नहीं छोड़ा गया, जिससे गैलीजाइन का अधिक से अधिक अपमान न हुआ हो।

भगवान की सहन शक्ति अपार है। वे कर्म के अनुसार समय पर दण्ड देते हैं पर अति उन्हें भी पसन्द नहीं। यदि कोई अति करता है तो उसका हाथोंहाथ दण्ड देने में वे कभी पीछे नहीं रहते। महारानी इवानोवना का अहंकार इतने से भी जब सन्तुष्ट न हुआ तो उन्होंने नव-दम्पत्ति को उसी महल में बन्द कर चारों तरफ से दरवाजे बन्द कर दिये और बाहर सशस्त्र पहरा बैठा दिया ताकि गैलीजाइन उसके अन्दर से भागने न पावे। जिस समय उन्हें इस बर्फ के महल में सुहागरात मनाने के लिये बन्द किया गया, उस समय कमरे के बाहर का तापमान शून्य से भी ४० डिग्री सेन्टीग्रेड निम्न था। गर्म कपड़ों में भी बाहर लोग ठिठुरे जा रहे थे। उस समय उनके शरीर पर कपड़े भी साधारण थे ऊपर से बर्फ पर ही उठना बैठना, सोना, ओढ़ना। उस भयंकरता की कल्पना भी करना कठिन है।

गैलीजाइन सन्तोषी था, सरल स्वभाव का था। उसने भगवान् से प्रार्थना की प्रभु ! तू जो करता है अच्छा ही करता है—तेरी इच्छा को स्वीकार करूँ, उससे बढ़कर प्रसन्नता की बात मेरे लिए क्या हो सकती है। उसने उस अत्यन्त कुरूप और भद्दी स्त्री को भी विवाह के बाद परम साध्वी और सौन्दर्यवती युवती माना और मरण-काल जैसे भीषण समय में आत्मीयता और सहृदयता का ही व्यवहार किया। इस स्थिति में वे एक वर्ष तक कैद रहे। भगवान की इच्छा से इस बीच उनके जीवन को कोई संकट उत्पन्न नहीं हुआ जबकि उन्हें पहले ही दिन मृत्यु के मुख में चले जाना चाहिए था। ऐसी विलक्षण घटनायें संसार में न घटतीं तो संसार में कोई ईश्वरीय अस्तित्व को मानता ही क्यों ?

नौ माह बाद गैलीजाइन दम्पत्ति को दो स्वस्थ और सुन्दर जुड़वाँ बच्चे पैदा हुए। जिसने भी बच्चों को देखा, प्रभु की महिमा को धन्यवाद दिया। यही अमृत इवानोवना के लिए विष बन गया। उसने बच्चों के जन्म का समाचार सुना था कि अपमान और सन्ताप से उसका हृदय धड़कने लगा और कुकर्म के फलस्वरूप वह तत्काल परलोक सिधार गई।

संकल्प, श्रम और मनोयोग के चमत्कार

उपयुक्त और उच्च स्तर के साधन जुटाने के लिए लोग इन्तजार करते रहते हैं और महत्त्वपूर्ण कार्य आरम्भ करने के लिए यह सोचते रहते हैं कि जब आवश्यक साधन जुट जायेंगे तब उसे प्रारम्भ करेंगे। समुचित साधन जुटाने की प्रतीक्षा में बैठे रहना, इस सम्भावना का ही आभास देता है कि शायद वह कार्य कभी भी आरम्भ न हो सकेगा।

स्वल्प साधनों से भी प्रबल साहस के सहारे बड़े-बड़े महत्त्वपूर्ण काम किये जा सकते हैं। इसके अनेकानेक प्रमाण, उदाहरण इतिहास के पृष्ठों पर भरे पड़े हैं।

उन दिनों हवाई जहाज नहीं चले थे। हाइड्रोजन गैस के गुब्बारे उड़ने लगे थे। उन्हीं में बैठकर लोग आकाश यात्रा का आनन्द लेने लगे थे। फ्रेंच वैज्ञानिक **प्रो. चार्ल्स** ने ऐसा पहला गुब्बारा सन् १७८३ में उड़ाया था। इसके बाद उसकी क्षमता और आकृति में क्रमशः और सुधार होता गया। इस उपलब्धि से प्रभावित होकर कुछ साहसी लोगों ने यह व्यवस्था की कि इन्हीं गुब्बारों में बैठकर उत्तरी ध्रुव की यात्रा की जाय और वहाँ की समुद्रीय, भूगर्भीय तथा आकाशीय परिस्थितियों के विवरण से सर्व-साधारण को अवगत कराया जाय। आकाश यात्रा के लिए यह गुब्बारे जिनका विकसित रूप 'जैपलीन' था, कामचलाऊ मान लिया गया। बहुत प्रयत्न करके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अमेरिकी सरकार से एक पुरानी-धुरानी पनडुब्बी माँग ली गई। उसका नया नामकरण किया गया 'नौटिलस'। इन साधनों के सहारे ध्रुव प्रदेश की अति कठिन यात्रा पूरी कर सकना, उन दिनों एक प्रकार से असम्भव और जान जोखिम में डालकर उठाया जाने वाला खतरा ही कहा गया था। तो भी कुछ दुस्साहसी लोगों ने उसकी योजना बना ही डाली और उसे पूरी करके ही रहे।

उस योजना के संचालक थे, जर्मनी के एक डाक्टर **उल्सटीन**। उनने सारे साधन जुटाये। एक उड़न गुब्बारा जैपलीन—इस कार्य के लिये विशेष रूप से बनाया गया। उसमें कुल ५६ आदमी सवार थे। ४० चलाने वाले और १६ अनुसंधान कार्य के लिए जाने वाले यात्री। गुब्बारा एक छोटे फुटबाल मैदान के बराबर था, ऊँचा एक अच्छे खासे गिरजाघर जितना। उसमें खटोले जैसे लटके होते थे यात्री उन्हीं पर बैठते थे, बैठने के कमरे को एक बड़ी गुफा कहा जा सकता था उसकी छत पर गैस के गुब्बारे टँगे होते थे। गैस को बनाने तथा नियंत्रित रखने तथा दिशा देने के लिए उसमें पाँच यंत्र लगे थे। रस्सों और छड़ों के सहारे पहले-पहले उसे झटका देकर आकाश में उड़ाया जाता था, पीछे तो वह अपने आप ही मन्थर गति से उड़ने लगता था।

लेक कान्सटैस से उड़कर वह गुब्बारा जर्मनी, स्वीडन, एस्थोनिया, फिनलेण्ड रूस की सीमाएँ पार करते हुए ध्रुव प्रदेश पर पहुँचा। ल्फोरा अन्तरीप से लेकर सुविस्तृत ध्रुवीय क्षेत्र पर उसने उड़ान भरी और चित्र-विचित्र विवरण देखे तथा उनके फोटो लिये। लगभग एक सप्ताह यह गुब्बारा आसमान में उड़ा और पनडुब्बी को उससे भी अधिक समय लगाना पड़ा।

जब यात्री लोग वापिस लौटे और उन्होंने वहाँ की परिस्थितियों के विचित्र विवरण से जन-साधारण को अवगत कराया, तो सुनने वालों को सहसा विश्वास न हुआ कि इतनी रोमांचकारी परिस्थितियों में इतने स्वल्प साधनों से इतनी दुस्साहसपूर्ण यात्रा की जा सकती है।

असामान्य को सामान्य और असम्भव को सम्भव बनाने वाले प्रबल पराक्रम का महत्त्व जिन्होंने जाना है उन्हें यह विदित है कि मानवी श्रम, मनोयोग, साहस और संकल्प का समन्वय जहाँ भी हो जाय, वहाँ कठिन से कठिन कार्य भी सरल हो जाता है।

चमत्कारों की जननी संतुलित श्रमनिष्ठा

उच्चस्तरीय दायित्वों को निभाने के लिए जिस प्रतिभा की आवश्यकता है, वह श्रमशीलों में होती है। श्रम और प्रतिभा इन दोनों को अनुक्रमानुपाती कहा जाय तो उचित ही होगा। एक का जितना विकास होता है दूसरे का भी उतना ही अभिवर्धन होता जाता है। यही कारण है कि पश्चिमी देशों में बड़े-बड़े उद्योगपति अपने बच्चों को दायित्व का अनुभव कराने के लिए कारखानों में मजदूरों की तरह श्रम कराते हैं। यह उचित है। जो इस विद्या को नहीं जानता, वह दायित्वों का निर्वाह भी गम्भीरतापूर्वक नहीं कर सकता। इस सत्य के बाद भी व्यावहारिक जीवन में देखा यह जाता है श्रमशील भी सुयोग्य अथवा उतने योग्य नहीं होते जितना अपेक्षित है।

कारण पर विचार करने पर स्पष्ट होता है कि क्रिया व चिन्तन दोनों के क्षमतावान होने के लिए जिस सामंजस्य की अपेक्षा है, उसकी उपेक्षा की जाती है। शारीरिक श्रम करने वाले मानसिक पक्ष को भुला बैठते हैं। इसके फलस्वरूप उन्हें गँवार, मूर्ख जैसे शब्दों से सम्बोधित किया जाता है। मानसिक श्रम करने वाले गँवार भले न कहे जायँ पर शारीरिक पक्ष की ओर ध्यान न दिये जाने के कारण उन्हें दुर्बल, रोगी जैसी स्थिति से गुजरना पड़ता है। दोनों ही स्थितियों में मानवी प्रतिभा का समुचित उपयोग नहीं हो पाता। सारी जिन्दगी स्थिति पक्षाघात के रोगी सी बनी रहती है। यों शरीर और मन बड़े करीबी हैं। एक के प्रभावित होने पर दूसरा प्रभावित होता है। शरीर में कोई रोग हो जाय तो मन बेचैन रहता है। यदि मन में क्रोध, आवेश जैसे विक्षोभ उत्पन्न हो जायें तो रक्त संचालन में तेजी, हाथों-पैरों की हरकत जैसी विचित्र बातें होने लगती हैं। इन दोनों में पारस्परिक सामंजस्य अनिवार्य है। इसके बिना इन दोनों की शक्तियाँ ठीक ढंग से विकसित नहीं हो पातीं।

यह सामंजस्य स्थापित हो जाय तो व्यक्तित्व में प्रौढ़ता आती है। रूस में तो किसी समय समूचे राज परिवार के सभी सदस्यों के लिए शारीरिक श्रम करना अनिवार्य था। इस परम्परा को शुरू करने वाले सम्राट पीटर तब राजकुमार थे। उन्हें युवराज घोषित किया जा चुका था। इसका अर्थ ही था, समस्त सुविधा और साधनों से सम्पन्न होना। परन्तु उन्होंने युवावस्था में ही निश्चय किया कि वे जीवन की खुली पाठशाला में पढ़ सामंजस्यपूर्ण जीवन जियेंगे। उन्होंने शाही शान-शौकत के बाड़े से निकलकर हालैण्ड की जहाज निर्माता कम्पनी में एप्रेंटिस के रूप में काम किया। इंग्लैण्ड की पेपर मिल और आटा मिल में काम किया। एक बार लोहे के बाँट बनाने वाली फैक्ट्री में काम कर रहे थे। फैक्ट्री का मालिक उनके युवराज होने से परिचित था। महीने के अन्तिम दिन १० बाँट की एवज में निर्धारित मजदूरी से अधिक देने लगा। उन्होंने वापस लौटाते हुए कहा कि मैं ३ कोयक हिसाब से ही पैसा लूँगा। मालिक को मानना पड़ा। बाद में इससे फटे जूतों के स्थान पर नए जूते खरीदे। आज भी ये जूते और तौलने के बाँट रूस के संग्रहालय में श्रमनिष्ठा के प्रतीक के रूप में सुरक्षित हैं। ऐसे उदाहरण पुरातन भारत के उन सभी नरेशों पर लागू होते हैं, जो जीवन कला-शिक्षण हेतु एक साधारण बालक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की तरह अपने उत्तराधिकारियों को गुरुकुल भेजा करते थे।

मानसिक विकसित अवस्था तथा सुविधा-साधनों के बीच रहते हुए शारीरिक श्रम जीवन को जितना समर्थ व सक्षम बनाता है, उतना ही इसका विपरीत भी सत्य है। अर्थात् शारीरिक श्रम करते हुए मानसिक श्रम का योग इसी तरह का क्षमतावान बना देता है। जानवान मेकर उन दिनों एक किताब की दुकान पर सवा डालर प्रति सप्ताह की दर पर मजदूरी करते थे। किन्तु इसके साथ मानसिक योग्यता अर्जित करने का श्रम बराबर बनाए रखा। व्यापारिक तौर-तरीके, रीति-नीति सीखने के साथ अध्ययन भी करते। विकसित प्रतिभा की बदौलत बाद में एक दीवालिया फर्म को ले लिया। उस डूबती फर्म को उबार कर जानवान मेकर मजदूर से एक उद्योपति के रूप में विकास कर सके।

इसी तरह का एक और उदाहरण दृष्टव्य है। ''यूथ्स कम्पेनियन'' नामक पत्रिका ने अमेरिका के समृद्धतम व्यक्तियों की गणना में आने वाले साइरस डब्लू, फील्ड का प्रसंग प्रकाशित किया था। भाई से उपेक्षित होकर फील्ड स्टूवर्ट की एक फर्म में साधारण मजदूरी के लिए भर्ती हुए। सुबह ६ बजे काम पर जाते और सूर्यास्त होने तक अपने काम में जुटे रहते। वेतन निर्धारित हुआ करीब ४ डालर प्रतिमास। दूसरा कोई होता तो इस शारीरिक मेहनत से थककर शाम को घर जाते ही चैन से सोता। पर उन्होंने प्रतिभाशाली बनने की कसम उठा रखी थी। वह अपनी आत्म-कथा में लिखते हैं कि इस कठोर श्रम के बाद भी वह वाणिज्य लाइब्रेरी जाया करते। वहाँ व्यवसाय सम्बन्धी पत्रिकाओं तथा पुस्तकों का अध्ययन करते। जहाँ भी कुछ सीखने को मिल जाता, वहाँ पहुँचने का प्रयत्न करते। इसी सामंजस्यपूर्ण परिश्रम के कारण साइरस अमेरिका के सुविख्यात उद्योगपति बन सके।

सामान्य जीवनक्रम में इससे बिल्कुल विरोधी स्थिति देखने में आती है। जो मानसिक कार्यों को करते हैं वे चाहे दफ्तर के क्लर्क हों या अधिकारी अथवा शिक्षक, शारीरिक श्रम से पीछा छुड़ाने की कोशिश करते हैं। यही नहीं, मानसिक योग्यताओं को उभारने का अतिरिक्त श्रम करने से भी जी चुराने की कोशिश में रहते हैं। कोल्हू के बैल की तरह ढर्रे-ढर्रे में चलती हुई जिन्दगी चालीस-पचास की वय तक पहुँचते-पहुँचते तकरीबन इतनी ही बीमारियों की चपेट में आ जाते हैं।

यही दशा शारीरिक मेहनत करने वालों की है। इनकी शिकायत यह रहती है, हाड़-तोड़ परिश्रम के बाद भी चैन नहीं नसीब होता। कारणों की तह में जाने पर बात साफ हो जाती है। रिक्शे, ताँगे वाले भी लगभग तीस-चालीस रुपया नित्य कमा लेते हैं। चार अंकों की मासिक आय उन्हें मध्यम वर्ग में ला सकती है। फिर भी वे गरीब के गरीब क्यों बने रहते हैं ? इसका कारण है सही नियोजन क्षमता का अभाव, दूसरे अर्थों में मानसिक लकवा। उनका जीवन मूल्य, सही जिन्दगी जीने की रीति-नीति सीखने की तरफ ध्यान ही नहीं है। चिन्तन को विकसित करने के प्रयास के बदले उसे भूलने की कोशिश की जाती है। परिणाम भी तद्नुरूप होते हैं। पशुवत् जिन्दगी बीतती रहती है।

प्रतिभावान बनें, इसके लिए अनिवार्य है कि चिन्तन और क्रिया दोनों ही पक्षों में सामंजस्य उपजे। अँग्रेजी विचारक **पैक्टनहूड** के शब्दों में ''इस तरह की सन्तुलित श्रमनिष्ठा जिस गति से बढ़ती है, जीवन में एक अलौकिक निखार आने लगता है। इसे एक बार समझ लिया जाय फिर तो वह आदत बन जाती है। दूसरे लोग भले ही उसे देखकर घबराएँ पर वह हमारी ग्रीवा में पुष्पाहार की तरह सुशोभित हो जाती है।''

यों व्यावहारिक जीवन में सदैव एक पक्ष प्रधान होगा। पर श्रम से आजीविका कमाने वाले भी यदि चिन्तन के विकास में जुटें, कर्त्तव्यों एवं जीवन मूल्यों को जानने के लिए अध्ययन करें अपने ही कार्य की बारीकी जानने का प्रयास करें, तो उपजी सूझ-बूझ तथा व्यवस्थित जीवनक्रम उन्हें सामान्य से असामान्य बना देता है। इस तरह मानसिक श्रम प्रधान जीवन वाले व्यक्ति शारीरिक मेहनत करने लगें। भले ही उसका स्वरूप बागवानी, व्यायाम, खेलकूद क्यों न हो ? इस तरह की उपजी आदत के फलस्वरूप रोग-कष्ट काफूर हो जायेंगे ? अभी तक जिन कार्यों को नहीं सम्पन्न किया जा सका तुरत-फुरत पूरे होने लगेंगे।

सन्तुलित श्रमनिष्ठा के महत्त्व को समझा जाय। हमार जीवन पक्षाघात के रोगी की तरह न रहे। चिन्तन व क्रियाशीलता दोनों को ही उत्तरोत्तर विकसित करने की रुचि जगाई जा सके, तो होने वाले परिणामों को देख चमत्कृत होना पड़ेगा। समूचे व्यक्तित्व का कायाकल्प हो सकेगा। अभी तक की अनगढ़ता के पीछे छुपा प्रतिभाशाली सामर्थ्यवान निज का स्वरूप उभरकर आ सकेगा। जीवन के इस अलौकिक रहस्य को जानें-समझें और आचरण में लाएँ तो हम स्वयं को समाज की अग्रिम पंक्ति में पाएँगे। यह एक प्रकार की जीवन साधना है पर प्रत्यक्ष फल देने वाली चमत्कारी विधा है। यह तथ्य स्मरण रहा तो सिद्धियों की खोज में इधर-उधर न भटककर हम जीवन देवता रूपी जिन्न को ही साधने का प्रयास करेंगे। यही तो नियन्ता को भी प्रिय है।

परावलम्बन छोड़ें, आत्मावलम्बन अपनायें

प्रगति के पथ पर चलते हुए यदि दूसरों का सहयोग मिल सकता है, तो उसे प्राप्त करने में हर्ज नहीं। सहयोग दिया जाना चाहिए और आवश्यकतानुसार लेना भी चाहिए। पर इस तथ्य को ध्यान में रखना चाहिए कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हमारी मूलभूत आवश्यकता हमें स्वयं ही पूरी करनी पड़ती है, दूसरों के सहयोग से तो थोड़ा ही सहारा मिलता है।

अपनी आँखें न हों तो दूसरों द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रकाश-उपकरण अथवा सुन्दर दृश्य निरर्थक हैं। अपना पेट-खराब हो जाय तो दूसरों द्वारा प्रस्तुत सुन्दर व्यंजन कब स्वादिष्ट लगेंगे ? कान बहरे हो जायँ तो किसी के सदुपदेश अथवा गीत-वाद्य अपना कुछ भी प्रयोजन सिद्ध न कर सकेंगे। विक्षिप्त मस्तिष्क से स्नेही स्वजन भी पशुवत् आचरण करते प्रतीत होते हैं। अपनी विकृतियाँ समस्त संसार के सुखद साधनों को दु:ख-दारिद्रय से भरकर रख देती हैं। दूसरों का सहयोग भी ऐसी दशा में अवरुद्ध हो जाता है। यदि वह मिले भी तो उससे लाभ उठा सकने की स्थिति नहीं रहती।

बाह्य सहयोग को आकर्षित करने और उससे समुचित लाभ उठाने के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि अपनी निज की मन:स्थिति सही और सन्तुलित हो। इसलिए प्रथम महत्त्व दूसरों का नहीं रहता, अपना ही होता है। दूसरों के सहयोग की आशा करने में उससे लाभ उठाने की बात सोचने से पूर्व आत्म-निरीक्षण किया जाना चाहिए कि हम सहयोग के अधिकारी भी हैं, या नहीं ? कुपात्र तक पहुँचने के बाद विभूतियाँ भी बेकार हो जाती हैं। पत्थर की चट्टान जल-प्रवाह में पड़ी रहने पर भी भीतर से सूखी ही निकलती है। मात्र बाहरी सहयोग से न किसी का कुछ काम चल सकता है और न भला हो सकता है।

दूसरों का सहारा तकने की अपेक्षा हमें अपना सहारा तकना चाहिए। क्योंकि वे सभी साधन अपने भीतर प्रचुर मात्रा में भरे पड़े हैं, जो सुव्यवस्था और प्रगति के लिए आवश्यक हैं। यदि सूझ-बूझ की वस्तुस्थिति समझ सकने योग्य यथार्थवादी बनाने की साधना जारी रखी जाय, तो सबसे उत्तम परामर्श-दाता सिद्ध हो सकती है। मस्तिष्क में वह क्षमता मौजूद है, जिसे थोड़ा-सा सहारा देकर उच्चकोटि के विद्वान अथवा बुद्धिमान कहलाने का अवसर मिल जाय। हाथों की संरचना अद्भुत है। यदि उन्हें सही रीति से उपयुक्त काम करने के लिए सधाया जा सके तो वे अपने कर्तृत्व से संसार को चमत्कृत कर सकते हैं। मनुष्य का पसीना इतना बहुमूल्य खाद है, जिसे लगाकर हीरे-मोतियों की फसल उगाई जा सकती है।

शरीर-विज्ञान और मनोविज्ञान के ज्ञाता आश्चर्यचकित हैं कि विशाल ब्रह्माण्ड की तरह ही इस छोटे से मानव-पिण्ड में भी एक से एक बढ़कर कैसी अद्भुत क्षमताओं को किसी कलाकार ने किस कारीगरी के साथ सँजोया है ? कोशिकाओं और ऊतकों की क्षमताओं और हलचलों को देखकर लगता है कि जादुई-देवदूतों की सत्ता प्रत्येक जीवाणु में ठूँस-ठूँसकर भर दी गई है। कायिक क्रियाकलाप और मानसिक-चिन्तन-तन्त्र किस जटिल संरचना और किस संचरण, सन्तुलन का प्रदर्शन करता है ? उसे देखकर हतप्रभ रह जाना पड़ता है।

पिण्ड की आन्तरिक संरचना जैसी अद्भुत है, उससे असंख्य गुनी क्षमता बाह्य-जीवन में अग्रगामी और सफल हो सकने की भरी पड़ी है। मनोबल का यदि सही दिशा में प्रयोग हो सके तो फिर कठिनाई नहीं रह जायेगी।

अस्त-व्यस्तता और अव्यवस्था ही है, जो हमें दीन-हीन और लुंज-पुंज बनाये रखती है। दूसरों का सहारा इसलिए तकना पड़ता है कि हम अपने को न तो पहचान सके और न अपनी क्षमताओं को सही दिशा में, सही रीति से प्रयुक्त करने की कुशलता प्राप्त कर सके। शारीरिक आलस्य और मानसिक प्रमाद ने ही हमें इस गई-गुजरी स्थिति में रखा है कि आत्म-विश्वास करते न बन पड़े और दूसरों का सहारा ताकना पड़े। यदि आत्मवलम्बन की ओर मुड़ पड़ें तो फिर परावलम्बन की कोई आवश्यकता ही प्रतीत न होगी।

हमें संकटों का भी सामना करना होगा

जो इस भय से प्रगति के पथ पर पैर नहीं बढ़ाता कि ऐसा करने पर किसी संकट का सामना करना पड़ सकता है तो उस मनुष्य और साधारण जीव-जन्तु में क्या अन्तर है ? उनके बीच का अन्तर केवल प्रगति-भावना ही है। मनुष्य में इच्छा, आकांक्षा और उन्नति करने की भावना होनी ही चाहिए। प्रगति भावना से रहित होना मानवेतर प्राणियों का लक्षण है। हम सब मनुष्य हैं। अप्रगति की भावना से निकलकर हमें उस उत्साह, उस जिज्ञासा और उस आकांक्षा का वरण करना ही चाहिए जो उन्नति और प्रगति की संराधिका होती है।

जो व्यक्ति संकट के भय से प्रगति करने का साहस नहीं करते, उन्हें सोचना चाहिए कि क्या इस जड़ता से वे सर्वथा बच जाएँगे ? माना किसी महत्त्वपूर्ण कार्य में हाथ डालने पर तत्सम्बन्धी कठिनाइयाँ और प्रतिकूलताएँ आ सकती हैं। निश्चय ही वे आएँगी। क्योंकि संसार का कोई भी महत्त्वपूर्ण कार्य संकट और विघ्न से रहित नहीं होता। उसकी महत्ता ही इसलिए होती है कि वह संकट और विघ्नों की संभावनाओं से भरा होता है। जिस कार्य में संकट का सामना न करना पड़े और वह आसानी से पूरा हो जाए तो उसका महत्त्व कम ही रहेगा फिर वह काम देखने में कितना ही बड़ा क्यों न हो। तो क्या इस सहज सम्भावना के भय से संसार में महत्त्वपूर्ण कार्य न किए जाएँ ? यदि संसार के सारे लोग संकट की सम्भावना से डरकर कोई महत्त्वपूर्ण कार्य करना छोड़ दें, तो इस संसार की क्या दशा हो जायेगी ? इसकी कल्पना नहीं की जा सकती।

संसार का सारा विकास, सारी उन्नति, जिसे देखकर आज हम खुश हो रहे हैं और जिसका लाभ उठाकर अधिकाधिक आनन्द अनुभव कर रहे हैं, सब उन्हीं पुरुषार्थियों की कृपा और उनके साहस का ही फल है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिन्होंने संकट की सम्भावना का भय ताक में रखकर अपना जीवन महान और उपयोगी कामों को समर्पित कर दिया। प्रगति की ओर बढ़ना केवल अपना व्यक्तिगत नियम नहीं है, उसका सम्बन्ध संसार और समाज के विकास से भी है। जो अप्रगतिशील है वह परोक्ष रूप से समाज का विरोधी है।

वैज्ञानिकों, अन्वेषकों और समाज-सुधारकों को ले लीजिये। यद्यपि संसार के लिए उपयोगी महान कार्यों के क्षेत्र और भी होते हैं तथापि यह तीन क्षेत्र ऐसे हैं जिनके कार्य समाज के लिए बहुत उपयोगी होते हैं। इन तीन वर्गों के संसार-सेवियों ने संसार के विकास और उसकी प्रगति में सदा से सराहनीय योगदान किया है। संसार की सेवा के यह तीनों क्षेत्र अन्य क्षेत्रों से अपेक्षाकृत अधिक संकट से भरे हैं। विघ्न, असफलताएँ और विरोध इन क्षेत्रों में सबसे ज्यादा सामने आते हैं। इन क्षेत्रों में साधारण संकटों के साथ प्राणों का संकट तक बना रहता है। तब भी संसार का उपकार करने वाले वैज्ञानिकों, अन्वेषकों और सुधारकों की कमी नहीं रही है। बड़े-बड़े भयंकर संकट उठाकर इन लोगों ने संसार की सेवा की है। यदि यह लोग संकटों की सम्भावना से भयभीत होकर अपना कर्त्तव्य न करते तो क्या यह संसार आज जैसा उन्नत और विकसित दिखलाई देता और यदि आज से यह लोग संकटों के भय से अपने महान कर्त्तव्यों से विरत हो जाएँ तो क्या कल से ही संसार अधोगति की ओर तेजी से न चल पड़े ? अपनी और समाज की प्रगति के लिए पुरुषार्थ करना हर मनुष्य का कर्त्तव्य है। संकटों से डरकर अगति में पड़ा रहना अशोभनीय वृत्ति है।

संसार में संकट कहाँ और किस स्थिति में नहीं हैं ? संसार संकटों का आगार कहा गया है। यहाँ संकट उसके लिए भी हैं जो आगे बढ़ता है और उसके लिए भी जो एक स्थान पर पड़ा रहता है। यह संसार सम्पत्ति-विपत्ति और सुख-दुःख के दो सूत्रों से निर्मित हुआ है। जिसने इस संसार में जन्म लिया है, वह केवल अनुकूलता की ही अपेक्षा नहीं कर सकता, उसे प्रतिकूलता का भी अपना भाग ग्रहण करना होगा। संसार में केवल सुख-सुविधा पूर्ण आसान जिन्दगी जीते रहने का कोई अवसर नहीं है। हर शरीरधारी दुःख-सुख की द्वन्द्वमयी जिन्दगी स्वीकार करने के लिये बाध्य है। इस प्रतिबन्ध के रहते हुए इस बात में कोई बुद्धिमानी नजर नहीं आती कि संकट के भय से प्रगति के पथ पर न बढ़ा जाए। जब प्रगति के पथ पर बढ़ने पर भी संकट की सम्भावना है और अगति की दशा में भी संकटों से बचा नहीं जा सकता, तो कौन ऐसा नासमझ होगा जो प्रगति पथ के संकटों को तरजीह न दे, यदि वह पूरी तरह से मनोमृत होकर जड़ नहीं हो गया है ?

मानिए कि आदमी के पास प्रगति करने के साधन हैं और वह व्यापार द्वारा उन्नति की ओर बढ़ सकता है। लेकिन घाटे के भय से व्यापार नहीं करता। वह सोचता है कि यदि मैं व्यापार करूँ और उसमें घाटा हो जाए तो उसे गहरी आर्थिक विपत्ति में पड़ जाना पड़ेगा। चुपचाप बैठे रहने से उस पर आर्थिक संकट आने की सम्भावना नहीं रहेगी। किन्तु उसका यह विचार सही नहीं है। प्रगति के उद्योग में यदि उस पर घाटे का संकट आ सकता है, तो अगति की दशा में भी लूट, चोरी अथवा आग द्वारा भी उस पर संकट आ सकता है। यदि इससे बच सकता है, तो बीमारी अथवा नालायक सन्तानों के द्वारा भी उस पर आर्थिक संकट आ सकता है। संकट के लिए न तो कोई क्षेत्र निश्चित है और न कार्य। वह किसी पर किसी भी स्थिति में आ सकता है। उससे भयभीत होना अथवा उसकी सम्भावना से प्रगति पथ का त्याग कर देना किसी प्रकार भी उचित नहीं है।

मनुष्य जीवन उन्नति और प्रगति के लिए ही मिला है। यदि इसका यह उद्देश्य न होता तो इस शरीर के साथ विद्या, बुद्धि, विवेक और चिन्तन-मनन आदि विशेषताओं की सुविधा न होती। मनुष्य भी सीधा-सादा अन्य प्राणियों की तरह हीं एक निकृष्ट प्राणी होता। मनुष्य को अपने जीवन-लक्ष्य के लिये एक लम्बी प्रगति परम्परा पूरी करनी है। उसका जीवन-लक्ष्य मोक्ष है जो अगतिपूर्ण स्थिति में पड़े रहने से कभी नहीं पाया जा सकता। मनुष्य को अपना वह लक्ष्य पाने के लिये प्रगति-प्रति-प्रगति करते हुए भी बढ़ना होगा। यदि वह साधारण जीवन में ही प्रगति से मुख मोड़ बैठेगा तो उस आत्मिक उन्नति का प्रयत्न किस प्रकार कर सकता है जो जीवन लक्ष्य के लिये आवश्यक है ? छोटी-छोटी प्रगतियों के अभ्यास द्वारा ही बड़ी प्रगति की क्षमता प्राप्त की जा सकती है।

अपना वास्तविक जीवन-लक्ष्य पाने के लिये मनुष्य को सामान्य जीवन से ही प्रगति का उद्योग प्रारम्भ कर देना चाहिए। जो स्थूल उन्नति के क्षेत्र में अपना पुरुषार्थ और पराक्रम नहीं दिखला सकता, वह अध्यात्म के सूक्ष्म क्षेत्र में तो और भी कुछ नहीं कर सकता है। उन्नति और प्रगति की दिशा में सफलता अर्जित करना मनुष्य का शोभनीय कर्त्तव्य संकटों के भय से उसे अपने इस कर्त्तव्य से विरत होकर न बैठे रहना चाहिए। संकटों अथवा विघ्न-बाधाओं के भय से मुक्त होकर उठिए और आज ही प्रगति की ओर पग बढ़ाने का उपक्रम प्रारम्भ कर दीजिए। दुःख उठाकर ही सुख और संकट उठाकर ही सफलता मिलती है। इसी में उसका महत्त्व भी है। जो सफलता जितना अधिक संघर्ष और संकट सहन करने के बाद मिलती है, उसका आनन्द उतना ही अधिक, यथार्थ और स्थायी होता है। यह बात इस छोटे-से उदाहरण से इस प्रकार समझी जा सकती है। एक सम्पन्न व्यक्ति को विविध प्रकार के व्यंजनों की प्रचुर सुविधा है। जरा-जरा-सी देर में उसके सामने खाने-पीने की विविध वस्तुएँ बिना कुछ किए आती रहती हैं, लेकिन उसमें उसे उतना आनन्द कभी नहीं मिलता, जितना आनन्द एक श्रमजीवी को दिनभर कड़ी मेहनत करने के बाद मिली सूखी रोटी में मिलता है। इसी प्रकार उस आलसी और विलासी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धनवान को आराम अथवा नींद का वह स्वर्गिक सुख नहीं मिलता, जो दिनभर आराम ही करता रहता है, जो उस मेहनतकश इन्सान को मिलता है जो दिन में दस घण्टे मेहनत करता और थकान से चूर होकर सोता है। आनन्द की पूरी और सच्ची अनुभूति उसी उपलब्धि में होती है जो कठिनाइयों और कष्टों के बीच से अर्जित की गई है। ऐसी उपलब्धि में ही सन्तोष भी होता है और आत्म-गौरव भी।

सफलता एक उपलब्धि है और उसमें आनन्द भी होता है। इसलिए कि उसको पाने में दु:ख, तकलीफ और संकटों का सामना करना पड़ता है। आनन्द वास्तव में उस सिद्धि में नहीं होता बल्कि उस कष्ट का मूल्य होता है जो पुरुषार्थी हँसता-खेलता उठाया करता है। कोई सफलता श्रेय अथवा सराहना का विषय इसीलिये बनती है कि उसे पाने में उद्योगी को कष्ट और संकट उठाकर अपने पुरुषार्थ का परिचय देना होता है। पुरुषार्थ नाम सिद्धि का नहीं बल्कि उसके मार्ग में आने वाले संकटों की सहनशीलता का है। जीवन की सफलता और महत्त्वपूर्ण कार्यों के मार्ग में यदि संकट और कष्ट न आएँ और उनकी पूर्ति आसानी से हो जाया करे तो उनका कोई महत्त्व ही न रह जाए ? सर्व-सुलभ सफलताएँ यदि आसानी से मिलने लगें तो उनमें और सामान्य दैनिक कार्यों में क्या अन्तर रह जाए और क्या अन्तर रह जाए एक सामान्य पुरुष और महापुरुष में। सफलताओं का श्रेय संकटों के कारण ही है और विशेष पुरुषार्थ के कारण ही आकार-प्रकार में कोई अन्तर न होने पर भी एक साधारण मनुष्य असाधारण पुरुष माना जाता है। दुर्लभता तथा दु:साध्यता के कारण ही सफलता में एक अनिर्वचनीय आनन्द प्राप्त होता है। सोना स्पृहणीय क्यों है ? इसीलिये कि वह कठिनता से मिलता है और दुर्लभ होता है। यदि वह भी अन्य खनिज़ पदार्थों की तरह आसानी से प्रचुर मात्रा में सबको मिलने लगे तो उसका क्या मूल्य-महत्त्व रह जाए ? मनुष्य को कष्ट और संकटों की सम्भावना से निरपेक्ष रहकर जीवन में उन्नति और विकास में सफल होने का प्रयत्न करना ही चाहिए।

उन लोगों को पुरुष नहीं कापुरुष ही माना जाएगा जो संकटों के भय से प्रगति-पथ पर अग्रसर होने का प्रयत्न नहीं करते। सच्चे पुरुषार्थी तो सत्पथ पर आने वाली विपत्तियों को अपने धैर्य, सहिष्णुता और पुरुषार्थ की परीक्षा से अधिक कुछ नहीं मानते। वे तो हँस-हँसकर उनका स्वागत करते हैं, खेल-खेल की तरह सहन करते और विश्वासपूर्वक उन पर विजय प्राप्त करके श्रेय के अधिकारी बनते हैं। संकट और आपत्तियों का अस्तित्व जितना बाहर नहीं होता, उससे कहीं अधिक कायर मनुष्य के हृदय में होता है। कष्ट और संकट मनुष्य जीवन की सामान्य घटनाएँ हैं। यदि कष्टों, संकटों तथा दु:खों का सर्वथा अभाव हो जाए तो मनुष्य की बुद्धि, विवेक और कार्य-क्षमता का कोई महत्त्व ही न रह जाए और एकरसता के कारण संसार के सारे सुख, सारे आनन्द और सारे कार्य नीरस होकर बोझिल बन जाएँ। तब उस दशा में मनुष्य को जीना तक कठिन हो जाए। कठिनाइयाँ और संकट ही मनुष्य जीवन को सक्रिय तथा सरस बनाए रखने में सहायक होती हैं। एकरस सुख मृत्यु की तरह जड़ और शीतल होता है। उसमें रुचि तथा आनन्द की ऊष्मा का संचार संकटों तथा कठिनाइयों का राही होता है। संकट के भय से प्रगति पथ पर न बढ़ना न केवल जीवन को जड़ता की ओर ले जाना है बल्कि उसे नीरस, शीतल और निरुपयोगी बनाना भी है। अस्तु, संकट की भावना को त्यागकर अपनी-अपनी स्थिति-परिस्थिति के अनुसार सबको प्रगति तथा उन्नति का प्रयत्न करना चाहिए, श्रेय पथ पर संकट का भय हृदय क्षुद्र की दुर्बलता के सिवाय और कुछ नहीं। वह तो मानव-जीवन की सामान्य घटनाएँ ही होती हैं। जिनका कोई मूल्य-महत्त्व नहीं होता।

परिस्थितियों पर जीवन विजय पाता रहा है

परिस्थितियाँ प्रगति का मार्ग खोलती हैं या मार्ग अवरुद्ध करती हैं, यह आंशिक सत्य है। सर्वदा ऐसा ही होता हो सो बात नहीं है। कितनी ही बार ऐसा भी होता है कि जो कार्य बहुतों के लिए असम्भव है, वह कुछ के लिए सरल स्वाभाविक बन सके।

उत्तरी ध्रुव पर कड़ाके की ठण्ड पड़ती है और शून्य से नीचे वाले तापमान में कड़ी बर्फ जमी रहती है। छ: महीने की लम्बी रात होती है। पेड़-पौधों का नाम नहीं। इमारतें बनाने और कृषि करने जैसे कोई साधन नहीं। फिर भी उस क्षेत्र में एस्किमो जन-जाति हजारों लाखों वर्षों से वहाँ रहती चली आ रही है। मछलियों का आहार और कुत्तों का सहयोग उन्हें जीवन-निर्वाह के आवश्यक साधन जुटाने के लिए पर्याप्त सिद्ध होता रहता है। अन्य लोग वहाँ रहें तो ठण्ड से हाथ-पैरों की उँगलियाँ गलने लगें और जीवन सम्भव न हो, पर अभ्यास से वे लोग वहाँ मजे में रहते हैं। प्रकृति ने परिस्थिति के साथ तालमेल बिठा लिया है।

अटलांटिक समुद्र में कुछ ऐसे टापू खोजे गये हैं जिनमें न जाने कब से जन-जीवन निवास और निर्वाह करता चला आ रहा है। न वहाँ सभ्यता पहुँची है, न भाषा। रीति और नीति का भी कोई तर्क संगत प्रचलन नहीं है। वनमानुषों जैसी उनकी जीवन-पद्धति और निर्वाह पद्धति है। परस्पर मिल-जुलकर किस तरह रहा जा सकता है। आवश्यक साधनों को किस तरह उगाया और आड़े वक्त के लिए सँजोकर रखा जा सकता है, इतना तौर-तरीका उनने अपनी निजी सूझ-बूझ से ही सीख लिया है। प्रकृति और परिस्थिति का तालमेल ऐसा बैठ गया है कि बाहरी दुनिया में प्रचलित सभ्यता से सर्वथा अपरिचित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होते हुए भी वे लोग बिना कोई कठिनाई अनुभव किये लम्बे समय से दिन गुजारते आ रहे हैं। यह लोग वहाँ किस प्रकार पहुँचे, यह अभी भी रहस्य का विषय बना हुआ है।

समुद्री अष्टभुज प्राणियों को अपनी भुजाओं से कसकर मार डालने के कारण बहुत ही भयंकर समझा जाता है। उससे समुद्र में उतरने वाले सभी को डर लगता है। पर भूमध्य सागर के किनारे बसने वाले यूनानी लोगों का सबसे प्रिय भोजन यह अष्टभुज ही है। वे उसे प्रयत्नपूर्वक पकड़ते और तरह-तरह के व्यंजन बनाते हैं।

न्यू गिनी की कुओर पहाड़ियों पर भयंकर विषधर सर्प पाये जाते हैं। उनकी फुषकार भर से प्राणियों की मृत्यु हो जाती है पर उस क्षेत्र के आदिवासी इन्हीं को स्वादिष्ट भोजन मानते हैं। जब वे अधिक संख्या में हाथ लग जाते हैं तो पेड़ों से बाँधकर सुरक्षित खाद्य का भण्डार बना लेते हैं।

कई बार माँ और बच्चे का मध्यवर्ती अन्तर औसत प्राणियों की तुलना में कहीं अधिक भी पाया जाता है। मादा कंगारू की ऊँचाई २ मीटर और वजन १०० किलोग्राम होता है पर जन्मते समय उसके बच्चे झींगुर जैसे इतने छोटे होते हैं कि एक चाय के चम्मच में तीन बैठ सकें।

बड़ा कीर्तिमान काँटेदार सोई का है। मादा की लम्बाई ८० सेन्टीमीटर होती है पर जन्मते ही उसका बच्चा ८० से. मी. तक लम्बा होता है।

बच्चों की वृद्धि में ब्लू ह्वेल की सन्तति सबसे बाजी मारती है। शिशु सवा तीन ग्राम प्रति घण्टे के हिसाब से बढ़ता है और एक दिन में माँ का तीस लीटर दूध पी जाता है। प्रकृति की यह विचित्रता बताती है कि परिस्थितियाँ ही प्रवृत्तियों का विकास करती हैं।

जीव चेतना विलक्षण है। वह बाधाओं के बीच अपना रास्ता बना लेना और वातावरण के अनुरूप ढलना जानती है। अवरोध, अड़चन तो अवश्य उत्पन्न करते हैं पर सर्वथा रास्ता रोक देने में समर्थ नहीं हो पाते।

मानवी पुरुषार्थ की एक संकल्प भरी यात्रा

अगणित सम्पदाएँ भूगर्भ में छिपी पड़ी हैं जिनमें से कुछ को ही मनुष्य प्राप्त कर सका है। उन्हीं के सहारे अपनी-जीवन यात्रा पूरी कर रहा है। वे न मिली होतीं तो मनुष्य आज की विकसित स्थिति में नहीं पहुँच पाता। आदिम युग की परिस्थितियों में ही पड़ा पशुओं जैसा जीवन जीता रहता। मूलतः मनुष्य ने किसी नयी चीज का निर्माण नहीं किया है। जो कुछ भी प्रकृति के अन्तराल में दबा था, उसे कुरेद कर, सुधारकर एवं सँवारकर बुद्धिबल द्वारा नया स्वरूप भर दिया है। पाषाण न रहे होते तो उससे यह भी पता तक न चल पाता कि अग्नि जैसी शक्ति का अस्तित्व भी प्रकृति में मौजूद है। फास्फोरस का भण्डार न मिलता तो माचिस का आविष्कार न हो पाता। मिट्टी न रही होती तो कृषि कैसे करता ? खाने के लिए खाद्यान्न कहाँ से पाता ? मकान का निर्माण कहाँ से करता ? निवास की व्यवस्था कैसे बनाता ? जमीन में दबा लोहे का भण्डार हाथ न लगा होता तो जीवनोपयोगी यन्त्रों का निर्माण नहीं हो पाता। विशालकाय कल-कारखाने नहीं लग पाते। वाहनों का आविष्कार नहीं हो पाता। आकाश को चीरकर उड़ने वाले वायुयानों, पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण शक्ति को लाँघकर अन्तरिक्ष में जा पहुँचने वाले राकेटों, स्पेस शटलों का बनाना सम्भव न था। मुफ्त में मिले भण्डार ने ही मनुष्य की धरती से छलाँग लगाकर आसमान में जा पहुँचने की स्थिति बनायी है।

प्रगति के इस युग में ऊर्जा के बिना एक कदम भी बढ़ना सम्भव नहीं। जिन साधनों से वे प्राप्त होते हैं वे विशुद्ध रूप से प्रकृति की देन हैं, मनुष्य द्वारा उपार्जित नहीं। लकड़ी, कोयला, पेट्रोलियम के विशाल भण्डार उसे प्रकृति से मिले हैं, जिनका उपयोग करके वह अनवरत रूप से आगे बढ़ता जा रहा है। वे न मिले होते तो मनुष्य को बैलगाड़ी, ढकेलगाड़ी से ही काम चलाना पड़ता तथा घण्टा मील की गति से ही अपनी यात्रा सम्पन्न करनी पड़ती। बिजली ने संसार की काया ही पलट दी है। पर यदि जल के विशाल स्रोत नदियाँ, झरने, समुद्र न रहे होते तो संसार अन्धकार की कालिमा में ही डूबा रहता। उसके सौन्दर्य का प्रकटीकरण न हो पाता।

परमाणु ऊर्जा के शक्ति स्रोत यूरेनियम, स्ट्रांशियम जैसे बहुमूल्य शक्ति-स्रोत हाथ न लगे होते तो उस विस्फोटक असीम ऊर्जा सम्पदा को प्राप्त करना कैसे सम्भव हो पाता? जो इनके नाभिकीय विखण्डन से प्राप्त होती है। तब न परमाणु बमों का आविष्कार सम्भव था और न ही नाभिकीय ऊर्जा संयन्त्रों का। रेडियो, टेलीविजन जैसे मनोरंजन संसाधन आज घर-घर मौजूद हैं। पर आकाश में ईथर तत्त्व का अस्तित्व न होता तो रेडियो वेव्स, इलेक्ट्रो-मैग्नेटिक वेव्स का प्रसारण सम्भव न था। तब सुदूर बजने वाले संगीत, प्रसारित होने वाले समाचार तथा दृश्यों का आनन्द नहीं मिल पाता। संसार के मनोरंजन के इन साधनों की खोज नहीं हो पाती।

सूर्य जीवन का अधिष्ठाता है। जो कुछ भी हलचल इस धरती पर दिखायी पड़ रही है उसका श्रेय सूर्य को है। ताप, गर्मी, प्राण, पेड़, पादपों तथा प्राणियों को उससे ही प्राप्त होता है। इन्हें प्राप्त करने के लिए किसी को भी राई-रत्ती भर कीमत नहीं चुकानी पड़ी है। मुफ्त में अनवरत रूप से मिलता रहता है। ऊर्जा संकट के इस युग में सम्भावना व्यक्त की जा रही है कि अगले दिनों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऊर्जा का प्रमुख स्रोत सूर्य ही होगा। लम्बे समय तक सस्ती तकनीक द्वारा स्थायी रूप से सूर्य ऊर्जा को स्टोर करने की सुगम विधा तो अभी हाथ न लग सकी है वैज्ञानिक आश्वस्त हैं कि कल नहीं तो परसों सूर्य की पर प्रचण्ड ऊर्जा का मनमाना उपभोग करने की स्वच्छन्दता उन्हें प्राप्त होगी।

जीवन की महत्त्वपूर्ण आवश्यकताओं में प्रकाश एवं गर्मी के बाद वायु एवं पानी को मुख्य माना जाता है। पृथ्वी के वातावरण में मीलों तक अरबों-खरबों टन स्वच्छ वायु का भण्डार जमा है। हर प्राणी को उसकी आवश्यकतानुसार वह मुफ्त में मिलती रहती है। इसे पाने के लिए मनुष्य को किसी प्रकार का कोई पुरुषार्थ नहीं करना पड़ा है। पानी का विपुल भण्डार पृथ्वी पर मौजूद है। जिससे जीव-जन्तु अपनी प्यास बुझाते; वृक्ष, वनस्पतियाँ पोषण प्राप्त करते हैं। सूर्य, प्रकाश, ताप, वायु एवं पानी जैसे जीवनदायी स्रोत हाथ न लगे होते तो इस पृथ्वी पर प्राणियों का अस्तित्व ही नहीं होता। वैज्ञानिकगण इन शक्ति स्रोतों का अब अगणित प्रयोगों में उपयोग करके नये प्रकार के आविष्कारों को जन्म दे रहे हैं।

यह तो दृश्यमान प्रकृति परिकर की चर्चा हुई। इस विशाल भाण्डागार से जितना मिला और उपयोग में आया है, उसकी तुलना में अविज्ञात का क्षेत्र कई गुना अधिक है। स्थूल शक्ति स्रोतों का छोटा-सा हिस्सा ही मनुष्य की पकड़ सीमा में आ सका है। बड़ा भाग अभी भी अछूता है। सूक्ष्म शक्तियों तक तो मनुष्य की पहुँच नहीं हो पायी है। कुछ की जानकारियाँ मात्र मिली हैं। जिन्हें अत्यन्त सामर्थ्यवान समझा जा रहा है। एक्स, गामा, रश्मि किरणों, लेसर, मेसर आदि का छुट-पुट प्रयोग विभिन्न क्षेत्रों में होने लगा है। सृजन एवं ध्वंस दोनों ही तरह के प्रयोग उनके माध्यम से हो रहे हैं। कुछ से आयुध भी बन रहे हैं तथा चिकित्सा जैसे क्षेत्र में उपचार प्रयोग भी चल रहे हैं।

सूक्ष्म प्रकृति शक्तियों का जो परिचय मिल रहा है, उनके आधार पर अटकलें लगायी जा रही हैं कि अब तक मनुष्य को जितना हस्तगत हुआ है, वह उन असीम सम्भावनाओं के समक्ष कुछ भी नहीं है। अपने ही इर्द-गिर्द रहस्यों एवं शक्तियों से भरी कितने ही प्रकार की दुनिया मौजूद है, जो इन आँखों से दिखायी भी नहीं पड़ती। एण्टीमैटर, एण्टीपार्टीकल, एण्टीयूनीवर्स की चर्चा इन दिनों जोरों पर है। ये पकड़ में तो नहीं आ सके हैं पर अपना परिचय सैद्धान्तिक रूप से दे चुके हैं। समझा जाता है कि यदि ये किसी तरह वैज्ञानिकों द्वारा खोजे जा सके तो वर्तमान दुनिया का स्वरूप ही बदल जायेगा। एक साथ दो प्रतिद्वन्द्वी शक्तियों के बीच मनुष्य को रहना पड़ेगा, जिनके सहयोग पर असीम शक्ति करतलगत हो सकती है जबकि असहयोग पर संसार का अस्तित्व तक मिट सकता है। विज्ञात के अतिरिक्त ऐसी अगणित प्रकृति की शक्तिधाराएँ अविज्ञात रूप में हैं जो अभी मानवी जानकारी की सीमा से परे हैं।

यह सच है कि प्रकृति की हाथ आयी शक्तिधाराओं का मूलत: निर्माण मनुष्य ने नहीं किया है, पर उतना ही सच यह भी है कि उन्हें करतलगत करने, अपने उपयोग योग्य बनाने के लिए मनुष्य ने अद्भुत पराक्रम का परिचय दिया तथा अपने बुद्धिबल का प्रयोग किया है। शक्ति स्रोत तो पहले भी—आदिकाल में भी मौजूद थे, पर मनुष्य उनका उपयोग कहाँ कर सका, उनसे लाभ कहाँ उठा सका ? प्रशंसा उस आविष्कारक बुद्धि की करनी होगी जिसका वह सतत नियोजन करता रहा और एक से बढ़कर एक उपलब्धियाँ हस्तगत करता गया। अन्यान्य जीवों के समक्ष भी वे शक्ति स्रोत आदि काल से ही पड़े हैं पर उनका सदुपयोग कर सकना तो दूर रहा, उनकी जानकारी तक उन्हें नहीं है। तब भी वे प्रकृति के गुलाम थे, आज भी हैं और भविष्य में भी उस स्थिति से किसी प्रकार उबरने की गुंजाइश नहीं दिखायी पड़ती। प्रकृति ने मुक्त हस्त से जो भी कुछ दिया, कृतज्ञता उसके प्रति तो व्यक्त करनी ही चाहिए,, उतनी प्रशंसा मनुष्य के पुरुषार्थ एवं बुद्धिबल की भी करनी चाहिए जिनके सुनियोजन से आज की सुविकसित स्थिति तक वह पहुँच सका है।

प्रकृति पर प्रयोक्ता के पुरुषार्थ एवं उपलब्धियों की यह एक संक्षिप्त-सी गाथा है, जिसका आरम्भ तो है पर कोई अन्त नहीं। उन उपलब्धियों की सार्थकता तभी सिद्ध हो सकेगी जब मनुष्य स्वयं के स्वरूप एवं सामर्थ्य से परिचित हो। अन्यथा विभीषिका पूर्ण परिस्थितियाँ ही पैदा होंगी जो अन्तत: सबको ले डूबेंगी। सम्पदा का भण्डार प्रकृति के अंचल में बिखरा पड़ा है पर है वह जड़ की शक्ति। चैतन्य बुद्धि का सहयोग न मिला होता तो वह प्रकृति सम्पदा जड़ ही बनी रहती, उसका कोई उपयोग नहीं हो पाता।

जड़ की तुलना में चेतना की शक्ति कई गुनी अधिक है। शोध बुद्धि उसकी एक स्थूल अभिव्यक्ति है जिसके एक नगण्य हिस्से का चमत्कार चारों ओर अगणित प्रकार की भौतिक उपलब्धियों के रूप में दृष्टिगोचर हो रहा है। जिस दिन अवशेष बुद्धि का शेष तिरानवें प्रतिशत हिस्सा भी जागरण की स्थिति में आ जायेगा तथा उसका प्रयोग होने लगेगा, उस दिन की असामान्य स्थिति की तो अभी कल्पना भी नहीं की जा सकती। सम्भव है जन्म-जन्मान्तर की स्मृतियाँ सूक्ष्म रूप में उसी प्रसुप्त भाग में दबी पड़ी हों तथा मनुष्य को अपनी प्रकृति के अनुरूप ऐसी प्रेरणाएँ देती हों, जिनसे अनायास ही वह एक विशेष दिशा में प्रगति-पथ पर चल पड़ता हो, विशेष प्रकार का चिन्तन करने लगता हो, विशेष तरह का आचरण दर्शाता हो जिसका कोई प्रयत्यक्ष कारण मन:शास्त्री तथा व्यवहार विज्ञानी न निकाल पाते हों। वह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूत्र हाथ लगते ही मानवी प्रकृति को मनचाहे रूप में गढ़ने-बदलने का आधार मिल सकता है। ''ब्रेनवाशिंग'' तथा 'जेनेटिक इन्जीनियरिंग' के अँधेरे में तीर छोड़ने जैसे प्रयोगों के खतरनाक परिणामों की तुलना में वे आध्यात्मिक आधार कहीं अधिक सफल सिद्ध होंगे।

चेतना की गहरी परतें तो और भी रहस्यमय हैं। इच्छा आकांक्षा करने, सुख-दुःख की अनुभूति करने, प्रसन्नता, क्रोध व्यक्त करने जैसे सामान्य रूपों में मन का परिचय मिलता है, जो अपनी सहज प्रकृति के रूप में मनुष्य को जीवनपर्यन्त दौड़ाता है। शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति में ही मन की घुड़दौड़ चलती है, पर उसकी क्षमता उतने ही तक सीमित नहीं है। बुद्धि से भी अधिक सामर्थ्यवान उसकी सूक्ष्म गहरी परतें हैं। मनोबल, संकल्पबल, प्राणबल का परिचय किन्हीं-किन्हीं व्यक्तियों में प्रचण्ड रूप में मिलता है। उनके सहारे सामान्य व्यक्ति भी असामान्य कार्य कर गुजरते हैं। व्यक्ति ही नहीं, वातावरण को भी उनके सहारे बदलता देखा जा सकता है।

इससे भी गहरी तथा समर्थ परतें मानवी अन्तराल में विद्यमान हैं, जिनका न तो सामान्य व्यक्तियों को कुछ ज्ञान होता है और न ही वे जीवनपर्यन्त उपयोग कर पाते हैं। दवाखाने की तरह अपनी उन आन्तरिक विभूतियों का वे कभी प्रयोग नहीं कर पाते। मनुष्य की चैतन्य परतों में ऐसी सामर्थ्य भी विद्यमान है कि सुदूर क्षेत्र में घट रही घटनाओं तथा भविष्य में होने वाले परिवर्तनों का एक स्थान पर बैठे वह पता लगा सके। व्यक्तियों एवं पदार्थों के स्वरूप में भी वह अपने प्रचण्ड शक्ति से परिवर्तन ला सकने में सक्षम है। इन अतिमानवी सामर्थ्यों का भण्डार उसके चैतन्य घटकों में प्रसुप्त पड़ा है।

आनन्द की खोज में मृग-मरीचिका में भटकने वाले मनुष्य को जिस दिन यह विदित होगा कि उसका मूल स्रोत अपने ही भीतर है, सचमुच ही वह पक्ष मानवी अनुसंधान-आविष्कार की विधा का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष होगा। तब संसार में दिखायी पड़ने वाले कलह, मतभेद, संघर्ष, वैमनस्य, विग्रह सदा के लिए समाप्त हो जायेंगे।

प्रकृति से जितना मिला है, उससे भी विपुल भण्डार मनुष्य के चेतन संसार में अदृश्य जगत में विद्यमान है। उसे कुरेदा, उभारा, जगाया जा सके तो वह सब कुछ प्राप्त कर सकना सम्भव है, जिसके लिये मनुष्य परेशान रहता तथा अपने को असमर्थ, असहाय महसूस करता है। सन्तुष्टि एवं परितृप्ति की आभा उसके चेहरे पर उस दिन दमकेगी जिस दिन वह अपने भीतर के वैभव को पा लेगा, सारी जगती उससे लाभोन्वित होने लगेगी।

दैवी अनुकम्पा एवं संकल्पशक्ति का चुम्बकत्व

अनगढ़ और पुरुषार्थी दो स्तर के लोग आम जनता के बीच पाये जाते हैं। उन्हीं को गरीब-अमीर, सफल-असफल भी कहते हैं किन्तु इन सबसे ऊँचा एक और स्तर है, जिसे देव मानव कहकर सराहा जाता है। प्रतिभाशाली उपयुक्त सफलताएँ पाते हैं, भले ही उसका दुरुपयोग करके अपयश के भाजन ही क्यों न बनें ? किन्तु जिनने अपने गुण, कर्म, स्वभाव को सुनियोजित, सुसंस्कृत बना लिया है, उनके लिए आत्मिक संतोष, लोक सम्मान और दैवी अनुग्रह तीनों ही सुरक्षित रहते और दिन-दिन समुन्नत होते जाते हैं। वस्तुतः व्यक्तित्व का परिष्कार और उदात्तीकरण ही वह योगाभ्यास है, जिसके माहात्म्य को लोक और परलोक की अभीष्ट सफलताएँ देने वाला बताया गया है। प्रखर प्रतिभा का उद्गम स्रोत ईश्वर है, जिसे दूसरे शब्दों में सत्प्रवृत्तियों का समुच्चय भी कहा जा सकता है। मनुष्य जीवन में वह गरिमामयी आदर्शवादिता और उत्कृष्टता के रूप में ही अवतरित होती है। पूजा-उपासना के समस्त कर्मकाण्डों का उद्देश्य इसी आन्तरिक वरिष्ठता का सम्पादन और अभिवर्धन करना है।

मशीनों में बिजली का प्रवाह कम मात्रा में पहुँचता है, तो उनकी चाल बहुत धीमी पड़ जाती है, पर जैसे-जैसे वह विद्युत प्रवाह बढ़ता है, वैसे ही वैसे उन सब में तेजी, गति, शक्ति बढ़ती जाती है। चेतना का कामचलाऊ अंश तो प्राणि मात्र में रहता है, जिससे वह किसी प्रकार अपनी जीवनचर्या चलाता रह सके। यह जन्मजात है, किन्तु जब कभी इसकी अतिरिक्त मात्रा की आवश्यकता पड़ती है तो यह कार्य योग और तपपरक साधना करती है। इन दोनों का तात्पर्य प्रकारान्तर से प्रतिभा और सेवा साधना में सरसता अनुभव होने की प्रकृति ही समझी जा सकती है।

योगदर्शन में अष्टांग साधना में सर्वप्रथम यम-नियम की गणना की गई है। यह अन्तरंग और बहिरंग सुव्यवस्था के ही दो रूप हैं। जिसने इस दिशा में जितनी प्रगति की, समझना चाहिए कि उसे उतनी ही आत्मिक प्रगति हस्तगत हुई और उसकी क्षमता उस स्तर की निखरी, जिसका वर्णन महामानवों में पाई जाने वाली ऋद्धि-सिद्धियों के रूप में किया जाता है। उपासनात्मक समस्त कर्मकाण्डों की संरचना इसी एक प्रयोजन के लिए हुई है कि व्यक्ति की पशु-प्रवृत्तियों के घटने और दैवी सम्पदाओं के बढ़ने का सिलसिला क्रमबद्ध रूप से चलता रहे। यदि उद्देश्य का विस्मरण कर दिया जाय और मात्र पूजापरक क्रिया-कृत्यों को ही सब कुछ मान लिया जाय, तो यह चिन्ह-पूजा का निर्जीव उपक्रम ही माना जायेगा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और उतने भर से बढ़ी-चढ़ी उपलब्धियों की आशा करने वालों को निराश ही रहना पड़ेगा।

समर्थ पक्षियों के नेतृत्व में अनेकों छोटी चिड़ियाँ उड़ान भरती हैं। बलिष्ठ मृग के परिवार में आश्रय पाने के लिए उसी जाति के अनेक प्राणी सम्मिलित होते जाते हैं। चीटियाँ कतार बनाकर चलती हैं। बलिष्ठ आत्मबल के होने पर दैवी शक्तियों का अवतरण आरम्भ हो जाता है और साधक क्रमशः अधिक सिद्ध स्तर का बनता जाता है। यही है वह उपलब्धि, जिसके सहारे महान प्रयोजन सधते और ऐसे गौरवास्पद कार्य बन पड़ते हैं, जिन्हें सामान्य स्तर के लोग प्रायः असंभव ही मानते रहते हैं।

बड़ी उपलब्धियों के लिए प्रायः दो मोर्चे सँभालने पड़ते हैं। एक यह कि अपनी निजी दुर्बलताओं को घटाना-मिटाना पड़ता है। उनके रहते मनुष्य में आधी-चौथाई शक्ति ही शेष रह जाती है। अधिकांश तो निजी दुर्बलताओं के छिद्रों से होकर बह जाती है। जिनके लिए अपनी समस्याओं को सुलझाना ही कठिन पड़ता है, वह आपके क्षेत्र के बड़े कामों का सरंजाम किस प्रकार जुटा सकेंगे। भूखा व्यक्ति किसी भी मोर्चे पर जीत नहीं पाता। इसी प्रकार दुर्गुणी व्यक्ति स्वयं अपने लिए इतनी समस्याएँ खड़ी करता रहता है, जिनके सुलझाने में उपलब्ध योग्यता का अधिकांश भाग खपा देने पर भी यह निश्चय नहीं होता कि अन्य महत्त्वपूर्ण कार्य सम्पादित करने के लिए कुछ सामर्थ्य बचेगी या नहीं।

बच्चों को लोरी गाकर सुला दिया जाता है। झूले पर हिलते रहने वाले बच्चे भी जल्दी सो जाते हैं। रोने वाले बच्चे को अफीम चटाकर खुमारी में डाल दिया जाता है। इसी प्रकार व्यक्ति को भी कुसंग में, दुर्व्यसन में आलस्य-प्रमाद का आदी बनाकर ऐसा कुछ बना दिया जाता है, मानो वह अर्धमृत या अर्धविक्षिप्त, अनगढ़ स्थिति में रह रहा हो। ऐसे व्यक्ति पग-पग पर भूलें करते और कुमार्ग पर चलते देखे जाते हैं। उपलब्धियों का आमतौर से ऐसे ही लोग दुरुपयोग करते और घाटा उठाते हैं, किन्तु जिनने इस अनौचित्य की हानियों को समझ लिया है, उनके लिए आत्मानुशासन कठिन नहीं रहता वरन् उसके मार्ग में आने वाली कठिनाइयों को उससे कहीं अधिक हल्की अनुभव करते हैं, जो कुमार्ग पर चलने वाले को पग-पग पर उठानी पड़ती हैं। परमार्थ कार्यों में समय और साधनों का खर्च तो होता है, पर वह उतने दुष्परिणाम उत्पन्न नहीं करता, जितने कि संकीर्ण-स्वार्थपरता अपनाकर तत्काल दीखने वाले लाभों के व्यामोह में निरन्तर पतन और पराभव ही हाथ लगता है।

हर महत्त्वपूर्ण कार्य के लिए प्रतिभाशाली व्यक्तित्व चाहिए, अन्यथा असावधान एवं अनगढ़ जितना कुछ कर पाते हैं, उससे अधिक हानि करते रहते हैं। ऐसों की न कहीं आवश्यकता होती है, न इज्जत और न उपयोगिता। ऐसी दशा में उन्हें जहाँ-तहाँ ठोकरें ही खाते देखा जाता है। इसके विपरीत उन जागरूक लोगों का पुरुषार्थ है, जो पूरे मनोयोग के साथ काम को प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाते हैं और उसमें समूची शक्ति लगाकर लक्ष्य तक पहुँचकर दिखाते हैं। बड़प्पन ऐसे लोगों के हिस्से में ही आता है। बड़े काम सम्पन्न करते ऐसे ही लोग देखे जाते हैं, बड़ाई उन्हीं के हिस्से में आती है। साधन तो सहायक भर होते हैं। वस्तुतः मनुष्य की क्षमता और दक्षता उसके गुण, कर्म, स्वभाव के निखार पर निर्भर रहती है।

अध्यात्म जादूगरी नहीं है और न कहीं आसमान से बरसने वाले वरदान-अनुदान। देवी-देवताओं का भी यह धंधा नहीं है कि चापलूसी करने वालों को निहाल करते रहें और जो इनके लिए ध्यान न दे सकें, उन्हें उपेक्षित रखें या आक्रोश का भाजन बनायें। वस्तुतः देवत्व आत्म-जागरण की एक स्थिति विशेष है, जिसमें अपने ही प्रसुप्त वर्चस्व को प्रयत्नपूर्वक काम में लाया जाता है और सत्प्रयासों का अधिकाधिक लाभ उठाया जाता है।

कहते हैं कि भगवान शेष-शैय्या पर सोते रहते हैं। कुसंस्कारी लोगों के भगवान उन बचकानों की बेहूदी धमा-चौकड़ी से तंग आकर आँखें मूँदकर इसी प्रकार जान बचाते हैं, पर जो मनस्वी उनकी सहायता से कठिनाइयों से त्राण पाना चाहते हैं, उनके लिए द्रौपदी या गज की तरह उसकी कष्ट-निवारण शक्ति भी दौड़ी आती है। जिन्हें वर्चस्व प्राप्त करना होता है, उन्हें सुदामा, नरसी, विभीषण, सुग्रीव की तरह अयाचित वैभव भी प्रचुर परिमाण में हस्तगत होता है।

इच्छाशक्ति संसार की सबसे बड़ी सामर्थ्य है। साहस भरे संकल्प बल से बढ़कर इस संसार में और कोई बलिष्ठ नहीं। इन्हीं को अर्जित करते जाना जीवन का वास्तविक लक्ष्य है, क्योंकि स्वर्ग-मुक्ति जैसे आध्यात्मिक और ऋद्धि-सिद्धि जैसे भौतिक लाभ इसी आधार पर अब तक उपलब्ध किये जाते रहे हैं व आगे भी यही राजमार्ग इन उपलब्धियों के लिए खुला पड़ा है।

मन के हारे हार है, मन के जीते जीत

सांसारिक सुख-सुविधाओं की प्राप्ति और उनके उपभोग की दृष्टि से शारीरिक बल का महत्त्व निर्विवाद है। रोगी और दुर्बल शरीर वालों को धरती के सुख के सारे उपहार बेकार हैं। उनसे उसकी परेशानियाँ ही बढ़ती हैं, झंझट ही उत्पन्न होते हैं। कहा भी है—"सर्व सुखी निरोग काया" रोग रहित सशक्त शरीर सब सुखों का मूल है।

किन्तु मन का बल शरीर के बल से भी बड़ा है। इसके अभाव में शारीरिक बल भी किसी काम का नहीं होता। देखा गया है कि उत्तम स्वास्थ्य वाले व्यक्तियों को भी जब कोई मानसिक आघात लगता है तो वे अपनी स्थिति सम्हाल नहीं पाते और अपने सामान्य जीवन-क्रम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से गिरकर स्वयं ही अपनी दशा दयनीय बना डालते हैं। एक व्यक्ति बड़ा धनी था। उसका स्वास्थ्य भी बड़ा अच्छा था। उन्होंने जीवन में कभी असफलता न देखी थी, कभी सफलता के लिये उन्हें संघर्ष करने की आवश्यकता भी न पड़ी थी। पैतृक व्यवसाय हाथ लग गया था, खूब अच्छे खाते-पीते और मस्त रहते थे। किसी तरह का उन्हें कोई अभाव न था।

मित्रों की सलाह पर एक दिन उन्होंने काफी बड़ा सौदा कर लिया। रातों-रात भाव बदला और दूसरे दिन जब ब्रिकी का समय आया तो उन महाशय को पता चला कि इससे उन्हें कई लाख का घाटा हुआ। बस ! सेठ जी का दिल धड़कने लगा। हक्के-बक्के रह गये। दुबारा सही आवाज भी न निकली। विक्षिप्त से हो गये। चाहते तो उनके पास तब भी लाखों की सम्पत्ति बची हुई थी, दुबारा फिर रोजगार खड़ा कर लेते। पर सेठ जी का मनोबल इतना कमजोर था, वे स्थिति की गम्भीरता को बर्दाश्त न कर सके और पागल हो गये और इसी अफसोस में पड़े रहने के कारण अन्त में उनकी मृत्यु भी हो गई।

धन कोई महत्त्व की वस्तु नहीं। उसके आने या चले जाने से किसी का कुछ बनता-बिगड़ता भी नहीं पर मानसिक दुर्बलता के कारण उक्त महाशय को जीवन जैसी बहुमूल्य वस्तु की क्षति उठानी पड़ी।

अपने परिचय के पाठक जी हैं। पन्द्रह वर्ष पूर्व जब वे मिले थे उनका शरीर बड़ा दुबला-पतला था, साधारण से अध्यापक थे। पाँच व्यक्तियों का परिवार था। उनमें भी कोई न कोई आये दिन बीमार ही बना रहता था। पाठक जी कभी मिलते तो उनकी दयनीय स्थिति पर कुछ सहायता करने की इच्छा होती तो वे कहते—नहीं भाई ! स्थिति कमजोर है पर मेरा मन कमजोर नहीं, तन हारा है मन नहीं। आप देखिये तो सही ! मैं आपको क्या करके दिखाता हूँ ?

ऐसी कमजोर स्थिति में भी मास्टर साहब का मन कभी म्लान न हुआ, सदैव हँसते-खेलते, विनोद करते मिलते। भीतर ही भीतर उनकी योजनायें चलती रहतीं। बड़ी गुप्त और बड़ी ठोस योजनायें। आकाश और पाताल को उलट-पलटकर डालने वाली योजनायें।

प्राइमरी स्कूल के मास्टर साहब की स्थिति में परिवर्तन शुरू हुआ। बी. ए. किया, एम. ए. किया और प्रोफेसर बन गये। मस्ती तो जीवन में थी ही। अभाव था, सो भी पूरा हो गया। अब उनकी आय चार हजार मासिक से भी अधिक है। घर-गृहस्थी ऐसी जिसे देखकर मन प्रसन्नता से भर जाय। मास्टर साहब का स्वास्थ्य ऐसा बढ़िया हो गया जैसे उन्होंने वर्षों कसरत की हो। इतना बड़ा परिवर्तन क्या उनके भाग्य ने किया ? नहीं, वह तो उनका तीक्ष्ण मनोबल था, जिसने यह चमत्कार कर दिखाया।

अनिश्चयता की मनोवृत्ति रहने के कारण लोगों के उपाय कारगर नहीं होते। सफलता का एक आधार है व्यक्ति का मनोबल। मनुष्य के मन में कल्पनाएँ उठें और उन्हें पूर्ण करने के प्रयत्न करने का वह साहस करे। न हिम्मत छूटे, न धैर्य टूटे, तो इच्छाएँ पूरी होती हैं। इससे जीवन में आशा का संचार होता है, निराशा दूर भागती है। काम में सफलता मिलती जाती है तो नये काम हाथ में लेने और उन्हें पूरा करने की प्रवृत्ति जगती है।

यह सच है कि प्रत्येक सफलता मनुष्य का मनोबल बढ़ाती है पर क्रिया-क्षेत्र में यह बात सदैव संभव नहीं है। संघर्ष करते हुए सफलता के साथ असफलता मिला सकती है। आशा के साथ ही निराशा की भी उत्पत्ति हो सकती है। मनोबल की परीक्षा का यही समय होता है। आशायुक्त जीवन से निरन्तरता आती है तो निराशा से निकम्मापन भी आ सकता है। यहाँ परिस्थिति न सम्भालें तो मनुष्य के सारे प्रयास व्यर्थ हो सकते हैं। इसलिए यह बहुत जरूरी बात है कि सफलता की आशा रखें पर साथ ही असफलता के समय धैर्य भी जाग्रत रखें। किसी भी अवस्था में मनोबल क्षीण न हो तो रुका कदम रुका नहीं रहता, निराशा आशा में बदलती और हारी बाजी फिर से जीत में बदल जाती है।

इच्छायें करें पर यह न भूलें कि उनका विकास एकाएक नहीं हो जाता। कुछ समय लगता है, कुछ श्रम लगता है। परिस्थितियों की अनुकूलता और प्रतिकूलता का भी विचार करना पड़ता है। इतना सब न करें तो इच्छाएँ कल्पना मात्र रह जायेंगी और उनसे कोई उद्देश्य पूरा न होगा।

पहले छोटी इच्छाएँ कीजिये और उन्हें संकल्प का रूप दीजिये। एक संकल्प पूरा होगा तो आपका मनोबल बढ़ेगा, उत्साह और उल्लास जागेगा। क्रमशः अपने संकल्प का स्तर बड़ा बनाइये और इस तरह अपने मनोबल को और भी ऊँचे उठाते हुए चले जाइये। पर यह याद रहे कि संकल्प टूटना नहीं चाहिये, अन्यथा मन में निराशा उत्पन्न होगी और मानसिक क्रियाशक्ति को छिन्न-भिन्न कर देगी।

उदाहरणार्थ—जब आप प्रातःकाल सोकर उठते हैं तो बिस्तर त्यागने के पूर्व आप कुछ क्षण रुकिये। स्वस्थ और चैतन्य होकर शान्त मुद्रा में बैठिये। परमात्मा की याद कीजिये और यह भावना कीजिए कि आज का दिन आपका एक जीवन है। आज आप अपनी शक्ति का अपव्यय रोकेंगे और ब्रह्मचर्य का पालन करेंगे। दिन-भर कामुक विचारों से बचते रहिये और अन्त तक आज का अपना प्रण पूरा कर ही जाइये। यह आपका एक छोटा संकल्प हुआ। धीरे-धीरे संकल्प के स्वरूप और उसकी अवधि को और भी चौड़ा करते रहिये। आपका मनोबल संकल्प की तौल के अनुसार बढ़ता ही जायेगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्म-विकास के इन कार्यक्रमों में मन को व्यस्त रखिये तो वह आपके बड़े काम आयेगा, आपको बहुत लाभ देगा। ऐसा नहीं करेंगे तो मन स्थिर नहीं रहेगा यह आप निश्चय जान लीजिए। मन को काम चाहिए, प्रोग्राम के बिना तो वह एक क्षण नहीं टिक सकता। यह नहीं तो आत्म-विनाश की खुराफात शुरू कर देगा। ताश-तमाशे के लिये, सैर-सपाटे के लिए, लड़ाई-झगड़ा, कानाफूसी, मजाक आदि की अश्लील दुष्प्रवृत्तियों की ओर वह तभी दौड़ता है, जब उसे कोई रचनात्मक कार्यक्रम नहीं मिलता। इससे सिवाय मनोबल क्षय होने के और कोई कारण नहीं। निर्धनता, दुर्बलता, दैन्यता आदि इसी आत्म-विनाश के फल हैं। इन्हें रोकिये और अपना जीवन बरबाद होने से बचाइये।

आप याद रखिये कि स्वाभिमान ऊँचा रहता है तो मनोबल भी बढ़ा हुआ होता है। हीन भावनायें रखेंगे और गलत काम करेंगे तो आपका स्वाभिमान कौन ऊँचा रहने देगा ? घर वाले डाँट मारेंगे, अध्यापक झिड़कियाँ देगा, प्रधान फटकार लगायेगा, फैक्टरी का मालिक काम से निकाल देगा। इससे आपके अपमान हो जाने का उतना भय नहीं है जितना आपके दुर्बल मन हो जाने का। यदि आप ऐसा करते हैं तो वह आपकी सबसे बड़ी कमजोरी होगी।

आप छोटे होने का विचार अपने मन से निकालकर दूर फेंकिए, आपके मन में अपार सामर्थ्य है। इधर देखिए यह जो विज्ञान फैला पड़ा है, यह सब मन की शक्ति का चमत्कार है। उस शक्ति का अपमान न होने दीजिए। अपने मनोबल को सदैव दृढ़ रखिये। मन हार जाता है तो यह संसार भी दुःख का आगार ही समझ में आता है। आपकी सफलता, आपकी जीत आपके मन की जीत है। मन को बलवान रखना आपका धर्म है, इससे आप संसार में बड़े काम कर सकते हैं, बड़ी सफलतायें अर्जित कर सकते हैं।

सुख चाहिए किन्तु दुःख से डरिये मत

जीवन में दुःख, शोक और संघर्षों का आना स्वाभाविक है। इससे कोई भी जीवधारी नहीं बच सकता। सुख, दुःख मानव-जीवन के दो समान पहलू हैं। सुख के बाद दुःख और दुःख के बाद सुख आते ही रहते हैं। यदि कोई इतना साधन-सम्पन्न भी हो कि उसके जीवन में किसी दुःख, किसी अभाव अथवा किसी संघर्ष की संभावना को अवसर ही न मिले और वह निरन्तर अनुकूल परिस्थितियों में मौज करता रहे, तब भी एक दिन उसका एकरस सुख ही दुःख का कारण बन जायेगा। वह अपनी एकरसता से ऊब उठेगा, थक जायेगा। उसे एक अप्रिय नीरसता घेर लेगी, जिससे उसका मन विषाद से भरकर कराह उठेगा, वह दुःखी रहने लगेगा। मानव-जीवन में दुःख-सुख के आगमन के अपने नियम को प्रकृति किसी भी अवस्था में अपवाद नहीं बना सकती। जो सुखी है उसे दुःख की कटुता अनुभव करनी ही होगी और इस समय जो दुःखी है उसे किसी न किसी कारण से सुख की शीतलता का अनुभव करने का अवसर मिलेगा ही।

दुःख-सुख हैं क्या ? यह किसी भी मनुष्य के लिए परिस्थितियों का परिवर्तन मात्र ही हैं। और यदि ठीक दृष्टिकोण से देखा जाये तो परिस्थितियाँ भी दुःख-सुख का वास्तविक हेतु नहीं हैं। वास्तविक हेतु तो मनुष्य की मनःस्थिति ही है, जो किसी परिस्थिति विशेष में सुख-दुःख का आरोपण कर लिया करती है। बहुत बार देखा जा सकता है कि किसी समय कोई एक परिस्थिति मनुष्य को पुलकित कर देती है, हर्ष-विभोर बना देती है, तो किसी समय वही अथवा उसी प्रकार की परिस्थिति पीड़ादायक बन जाती है। यदि सुख-दुःख का निवास किसी परिस्थिति विशेष में रहा होता तो तदनुकूल मनुष्य को हर बार सुखी या दुःखी ही होना चाहिए। एक जैसी परिस्थिति में यह सुख-दुःख की अनुभूति का परिवर्तन क्यों ? वह इसीलिए कि सुख-दुःख वास्तव में परिस्थितिजन्य न होकर मनोजन्य ही होते हैं।

इस सत्य के अनुसार मनुष्य को सुखी अथवा दुःखी होने का कारण अपने अन्तःकरण में ही खोजना चाहिए। परिस्थितियों को श्रेय अथवा दोष नहीं देना चाहिए। जो मनुष्य अपने दुःख के लिये परिस्थितियों को कोसा अथवा सुख के लिये उन्हें धन्यवाद दिया करता है, वह अपनी अल्पज्ञता का ही द्योतन करता है। यह सर्वदा सत्य है कि कोई भी मनुष्य दुःख की कामना तो करता ही नहीं, वह तो सदा सुख ही चाहा करता है। इसलिए उसे अपनी यह चाह पूरी करने के लिए परिस्थितियों से अधिक मन पर ध्यान देने का प्रयत्न करना चाहिए। उसे ईर्ष्या, द्वेष, चिन्ता, क्षोभ अथवा असन्तोष से अभिभूत न होने देना चाहिये। इस प्रकार का निराभिभूत मानस गोमुखी गंगा जल की तरह निर्मल एवं प्रसन्न होता है। मन प्रसन्न है तो संसार में सभी ओर प्रसन्नता ही प्रसन्नता दृष्टिगोचर होगी, सुख ही सुख अनुभव होगा। तब ऐसी सहज प्रसन्नता की दशा में परिस्थितियों के अनुकूल होने की अपेक्षा नहीं रहती। परिस्थितियाँ अनुकूल हैं, मनभावनी हैं तो बहुत अच्छा। परिस्थितियाँ अनुकूल नहीं हैं तब भी कोई अन्तर नहीं पड़ता। प्रसन्न-मन मानव उन्हें अनुकूल करने के लिए प्रयत्न करेगा, संघर्ष करेगा, पसीना बहायेगा, मूल्य चुकायेगा, कष्ट उठायेगा किन्तु दुःखी नहीं होगा। वह, यह सब हँसते-हँसते, प्रसन्न मनोमुद्रा में ही करता रहेगा। उसे परिश्रम में आनन्द आयेगा। संघर्ष में सुख मिलेगा। असफलता पर हँसी आयेगी और सफलता का स्वागत करेगा। जीवन की विविध परिस्थितियाँ तथा विविध उपलब्धियाँ उसकी प्रसन्नता को बढ़ा ही सकती हैं, घटा नहीं सकतीं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह सही है कि संसार का कोई मनुष्य दुःख की कामना नहीं करता। यदि चाहता है तो केवल सुख ही चाहता है। किन्तु एकमात्र सुख की स्वार्थपूर्ण कामना का अर्थ यह है कि दुःख-क्लेश आ जाने पर हाय-हाय करते हुए हाथ-पैर छोड़कर बैठे रहना और दुर्भाग्य अथवा नियति को कोसते रहना। इस प्रकार की निरुत्साह वृत्ति ही सुख की स्वार्थपूर्ण कामना है जो कि किसी मानव को शोभा नहीं देती।

एकमात्र सुख की आकांक्षा रखने वाले और दुःख-क्लेशों से भयभीत होने वाले न केवल स्वार्थी ही होते हैं, अपितु कायर भी होते हैं। कायरता मनुष्य जीवन का कलंक है। जो संघर्षों, मुसीबतों तथा आपत्तियों से डरता है, उनके आने पर निराश अथवा निरुत्साहित हो जाता है, वह और कोई बड़ा काम कर सकना तो दूर साधारण मनुष्यों की तरह साधारण जीवन-यापन भी नहीं कर सकता है। संसार में न तो आज तक ऐसा कोई मनुष्य हुआ है और न आगे ही होगा, जिसके जीवन में सदा प्रसन्नता की परिस्थितियाँ ही बनी रहें। उसे कभी दुःख-क्लेश के तप्त झोंके न सहन करने पड़े हों। राजा से लेकर रंक तक और बलवान से लेकर निर्बल तक प्रत्येक प्राणी को अपनी-अपनी स्थिति में अपनी तरह के दुःख-क्लेश उठाने पड़ते हैं। कभी शारीरिक कष्ट, कभी मानसिक क्लेश, कभी सामाजिक कठिनाई, कभी आर्थिक अभाव तो कभी आध्यात्मिक अन्धकार मनुष्य को सताते ही रहते हैं। सदा-सर्वदा कोई भी व्यक्ति कष्ट एवं कठिनाइयों से सर्वथा मुक्त नहीं रह सकता। तब ऐसी अनिवार्य अवस्था में किसी प्रकार की कठिनाई आ जाने पर निराश, चिन्तित अथवा क्षुब्ध हो उठना, इस बात का प्रमाण है कि हम संसार के शाश्वत नियमों से सामंजस्य स्थापित नहीं करना चाहते, हम असामान्यता के प्रति हठी अथवा दुराग्रही बने रहना चाहते हैं।

सुख-सुविधा की कामना बेशक की जाये और उसके लिए अथक प्रयत्न भी, पर साथ ही कठिनाइयों का स्वागत करने के लिए भी प्रस्तुत रहना चाहिए। अनुकूलता पाकर हर्षोन्मत्त हो उठना और प्रतिकूलता देखते ही रो उठना मानसिक हीनता का लक्षण है। मनोहीन मनुष्य संसार में कुछ भी करने लायक नहीं होता। वह जीता जरूर है लेकिन मृतकों से भी बुरी जिन्दगी। जिसका हृदय विषाद से आक्रान्त है, चिन्ताओं से अभिभूत है उसका जीना जीने में नहीं गिना जा सकता। जिन्दगी वास्तव में वही है, जिसमें जीने के साथ कुछ ऊँचा और अच्छा करते रहने का उत्साह सक्रिय होता रहे। यह उत्साहपूर्ण सक्रियता केवल उसी में सम्भव है जो हर समय कठिनाइयों से लड़ने का साहस रखता है, आपत्तियों से संघर्ष करने की हिम्मत वाला है। जो व्यग्र है, त्रस्त है और निराश है, वह न केवल संसार पर ही बल्कि अपने पर भी बोझ बना हुआ श्वाँसों का भार ढोया करता है। चिन्तित तथा निराश मनःस्थिति वाला व्यक्ति किसी पुरुषार्थ के योग्य नहीं रहता। जिसकी जड़ में दीमक लग चुकी है अथवा जिसका मूल किसी कीड़े ने काट डाला है उस लता से, उस वृक्ष से सुन्दर फल-फूलों की आशा नहीं की जा सकती।

सुख-सुविधा की कामना अवश्य करिए। यह उपयुक्त है किन्तु साथ ही कठिनाइयों से लोहा लेने के लिए भी सदैव तत्पर रहिये। कठिनाइयाँ स्वयं कष्ट लेकर नहीं आतीं। वे केवल आती हैं आपकी मानसिक प्रसन्नता, आपकी आशा तथा आपके उत्साह पर आवरण डालने। यदि आपने उनको अपनी इन आत्म-किरणों पर परदा डाल लेने दिया तो आपके मनो-मन्दिर में अन्धकार हो जायेगा और तब तमोजन्य निराश, क्षोभ, दुःख, भय तथा असन्तोष की अशिव भावनायें आपको तरह-तरह से त्रस्त करने लगेंगी और आप अकारण ही पीड़ित रहने लगेंगे।

आशा और उत्साह मनुष्य जीवन के दो बहुत बड़े सम्बल हैं। मनुष्य की प्रसन्नता के यह दोनों प्रामाणिक आधार हैं। जो बुद्धिमान किसी भी दशा में इनको मन्द नहीं होने देते; अभाव, दुःख, कष्ट तथा प्रतिकूलतायें उस पर वैसे ही प्रभाव नहीं डाल पातीं जैसे कवच-सज्जित शरीर पर शत्रु के बाण। कष्ट आयेगा, कठिनाई खड़ी हो जायेगी, आशा उनका सत्य स्वरूप समझने और उनके हल के लिये मार्ग दिखलायेगी, उत्साह आगे बढ़ायेगा। और बढ़ते हुए व्यक्ति का मार्ग कोई भी अवरोध रोक नहीं सकता। दुःख-क्लेश होता उन्हीं को है जो किसी कारण से किंकर्तव्यविमूढ़ होकर एक जगह ठिठके रहते हैं। जो ठिठककर रुकना नहीं जानता, वह कठिनाइयों को परास्त कर आगे निकल ही जाता है।

आशा और उत्साह की शक्ति अपरिमित है। उसका परिमाण लगाया ही नहीं जाता। प्राणान्तक संकट में पड़े हुये न जाने कितने वीर व्यक्तियों ने केवल आशा और उत्साह के बल पर इतिहास-प्रसिद्ध विजयों का वरण किया है। आशा और उत्साह के अभाव में एक नगण्य से कारण से परास्त होकर न जाने कितने व्यक्ति आत्महत्या कर लिया करते हैं, जबकि उनका वह दुःख, वह क्लेश अथवा वह अभाव—प्राण तो दूर, एक रोम के बलिदान योग्य भी नहीं होता। आशा और उत्साह का अभाव तिनके जैसी कठिनाई को पहाड़ जैसी बना दिया करता है। निराशा अन्धकार है और निरुत्साह व्याधि। अन्धेरे में एक छोटी-सी आशंका प्राणलेवा बन जाया करती है और व्याधिग्रस्त व्यक्ति एक कदम आगे बढ़ने का साहस नहीं रखता।

दिनों, महीनों और वर्षों के संचित विषाद को आशा की एक छोटी-सी किरण क्षणभर में दूर करके जीवन में उल्लास तथा उत्साह का संचार कर देती है। मरणशैय्या पर पड़ा रोगी औषधि की अपेक्षा आशा के सहारे रोग या मृत्यु पर अधिक विजय पाता है। जीवन से क्षुब्ध, परेशानियों से परेशान होकर आत्महत्या को उद्यत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यदि किसी व्यक्ति को किसी संयोग से आशा की किरण मिल जाती है तो वह तुरन्त अशुभ विचार छोड़कर जीवन-पथ पर हँसता हुआ बढ़ चलता है। तिल-तिल भूमि पर बलिदान देता हुआ कोई भी योद्धा विजय की आशा से ही युद्ध-भूमि में बढ़ता चला जाता है।

अनेक बार अनुभव किया जा सकता है कि कभी-कभी जीवन में ऐसी परिस्थितियाँ आ जाती हैं जिनसे जीवन का हर क्षेत्र निराशा, कठिनाइयों तथा आपत्तियों से भरा दिखाई पड़ता है। हर समय वही अनुभव होता है कि अब जीवन में कोई सार नहीं रहा है, उसके अस्तित्व को हर प्रकार से खतरा पैदा हो गया है। किन्तु किसी भी माध्यम से आशा का एक प्रकाश कण दीख जाने से परिस्थिति बिल्कुल बदल जाती है और वही निराश व्यक्ति एक बार फिर कमर कसकर जीवन-संग्राम में योद्धा की तरह उतर पड़ता है व निश्चय ही विजय प्राप्त किया करता है। हानि के धक्के अथवा असफलता के क्षोभ से जब भी किसी व्यक्ति के मरने अथवा निराश, निकम्मे हो बैठने का समाचार सुनें तो समझ लें कि उसने अपनी भौतिक हानि के साथ अपनी आशा की भी हानि कर ली है, अपने उत्साह का पल्ला छोड़ दिया है।

आशा तथा उत्साह कहीं से लाने अथवा आने वाली वस्तु नहीं हैं। यह दोनों तेज आपके अन्तःकरण में सदैव ही विद्यमान रहते हैं। हाँ, आवश्यकता के समय उनको जगाना तथा पुकारना अवश्य पड़ता है। जीवन की कठिनाइयों तथा आपत्तियों से घबराकर अपने इन अन्तरंग मित्रों को भूल जाना अथवा इनका साथ छोड़ देना बहुत बड़ी भूल है। ऐसा करने का अर्थ है कि आप अपने दुर्दिनों को स्थायी बनाते हैं, अपनी कठिनाइयों को पुष्ट तथा व्यापक बनाते हैं। किसी भी अन्धकार, में किसी भी प्रतिकूलता अथवा कठिनाई में अपने आशा-उत्साह के सम्बन्ध को कभी मत छोड़ियेगा, कठिनाइयाँ कुछ भी नहीं कर सकेंगी।

सुख की कामना करिये, किन्तु दुःख से डरिये नहीं। आशा और उत्साह के तल पर उन्हें जीतकर सुख के रूप में बदल डालिये। चिर प्रसन्न, आशान्वित तथा उत्साहित रहिये। आपको सुख की याचना करने की आवश्यकता न होगी। वह स्वयं ही दरबान की तरह आपके जीवन की हर ड्योढ़ी पर खड़ा आपका स्वागत करता हुआ मिलेगा।

हम मुसीबतों से घबराएँ नहीं

संसार में ऐसा कोई मनुष्य नहीं, जिसे जीवन में कभी मुसीबतों का, विपत्तियों का सामना न करना पड़ा हो। दिन और रात के समान सुख-दुःख का काल-चक्र सदा घूमता ही रहता है। जैसे दिन के बाद रात्रि का आना अवश्यम्भावी है, वैसे ही सुख के बाद दुःख का भी आना अनिवार्य है। दुःख भी इष्टापत्ति है। इससे मनुष्य के साहस, धैर्य, सहिष्णुता और आध्यात्मिकता की परीक्षा होती है। जैसे सुवर्ण अग्नि में तपकर अधिक सतेज बनता है, वैसे ही धैर्यवान मनुष्य विपत्तियों का साहस के साथ सामना करते हुए जीवन-संग्राम में विजय प्राप्त करता है। विपत्तियों की हम किस तरह उपेक्षा कर सकते हैं और अनिवार्य होने पर उनका किस तरह मुकाबला कर सकते हैं, इस पर हम विचार करें।

विपत्तियाँ वास्तव में कुछ नहीं, केवल हमारी प्रतिकूलताएँ हैं। हम जिन वस्तुओं की, जिन परिस्थितियों की इच्छा करते हैं, उनका प्राप्त न होना ही विपत्तियाँ कहलाता है। हमारी इच्छा के प्रतिकूल, हमारे स्वार्थ के प्रतिकूल जो भी बात सामने आई, उसे ही हम विपत्ति मान लेते हैं। यदि हम अपने स्वार्थ को, मोह-ममता को और इच्छाओं को मर्यादित और संयमित रखें तो हमें जीवन में बहुत कम मुसीबतों का सामना करना पड़ेगा। हमारा जीवन सादा, स्वावलम्बी और सहिष्णु बनने पर विपत्तियों से हमें बहुत कम पाला पड़ेगा और यदि पाला पड़ा भी तो हम उसे हँसते हुए सहज भाव से स्वीकार कर उस पर हावी हो सकेंगे।

विपत्तियाँ साहस के साथ कर्मक्षेत्र में बढ़ने के लिए चुनौती हैं। हम उनसे घबरायें नहीं। बहुत-सी मुसीबतें तो केवल काल्पनिक होती हैं। छोटी-मोटी बातों को तूल देकर हम व्यर्थ ही अपने चारों ओर भय का भूत खड़ा कर लेते हैं। किसी भी कार्य को हाथ में लेने के पहले ही हम उसकी असफलता का चित्र अपने मनःचक्षु के सम्मुख उपस्थिति कर लेते हैं और केवल मजबूर होकर उस कार्य को बेमन से किया करते हैं। ऐसी दशा में कार्य में सफलता कैसे प्राप्त होगी ? और फिर असफल होने पर भाग्य को कोसते हुए निराश होकर बैठ जाते हैं। हमारी बहुत-सी विपत्तियाँ इसी प्रकार के हमारे अधूरे मन की उपज हुआ करती हैं। इनके अतिरिक्त परिस्थिति, भाग्य, अज्ञान या अन्य अनभिज्ञ कारणों से भी मनुष्य को विपत्तियों का सामना करना पड़ता है। पर यदि हम इन्हें ईश्वर द्वारा हमारी आस्तिकता, आत्म-विश्वास, धैर्य एवं सहिष्णुता की परीक्षा के लिए प्रदत्त उपकरण मानकर हँसते हुए साहस के साथ सहने का अभ्यास डाल लें तो कोई भी मुसीबत, मुसीबत नहीं मालूम पड़ेगी बल्कि उन्हें हम हँसी-खेल समझकर आसानी से झेलते हुए अपने कर्त्तव्य मार्ग पर अबाधित गति से अग्रसर होते रहेंगे।

ऐसी भी कई विपत्तियाँ हो सकती हैं, जिनका साहसपूर्वक मुकाबला करने पर भी हमारा घोर अनिष्ट कर दें, पर हमें उसे भी ईश्वरी विधान मानकर सहर्ष स्वीकार करना चाहिए। इससे हमारा आन्तरिक मनोबल बढ़ेगा और हम कठिन से कठिन परिस्थितियों का सामना करने की शक्ति अर्जित कर सकेंगे। हमें हर परिस्थिति में अपने मन को सन्तुलित, शान्त और स्थिर रखने का प्रयत्न करना चाहिए। हमें अपने से अधिक सम्पन्न और सुखी व्यक्तियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को देखकर ईष्यालु एवं खिन्न होने की बजाय करोड़ों अपने से अधिक साधनहीन, दु:खी एवं अभावग्रस्त लोगों की ओर देखकर संतोष मानना चाहिए कि हम पर भगवान की बड़ी दया है।

किसी वस्तु के अभाव का नाम ही विपत्ति है अंत: अभाव के लिए रात-दिन चिन्ता करते रहना व्यर्थ है। हम अपनी परिस्थिति को सुधारने का भरसक प्रयत्न करते रहें और उसके मार्ग में आने वाले संकटों का धैर्यपूर्वक मुकाबला करें। पर यदि प्रयत्नों के बावजूद हमारी आकांक्षा और इच्छाओं के अनुसार हमारी परिस्थिति में किसी अज्ञात कारणवश शीघ्र वांछित परिवर्तन या सुधार नहीं होता है तो हमें घबराकर प्रयत्नों को नहीं छोड़ देना चाहिए बल्कि दुगुने उत्साह के साथ हमें अपनी उद्देश्य-प्राप्ति में जुट जाना चाहिए। कष्ट या विपत्ति के आने पर कभी-कभी हमारी विचार शक्ति भ्रमित और कुंठित-सी हो जाती है, ऐसे समय हम अपने आत्म मित्र एवं हितचिन्तकों से इस विषय में परामर्श और मार्गदर्शन प्राप्त करने का प्रयत्न करें। संभव है, उनकी सूझबूझ और सहायता से हमारा संकट अनायास निवारण हो जाय। समस्या को हम अपने परिवार के सदस्यों के सम्मुख उपस्थित कर उनकी सलाह भी लें। इस प्रकार हमें कहीं-न-कहीं से ऐसे प्रेरक विचार मिल जायेंगे, जिनके द्वारा हम अपनी कठिनाई का आसानी से निवारण कर सकेंगे।

यह जीवन एक संग्राम है। इसमें वही व्यक्ति विजय प्राप्त कर सकता है जो या तो परिस्थिति के अनुकूल अपने को ढाल लेता है या जो अपने पुरुषार्थ के बल पर परिस्थिति को बदल देता है। हम इन दोनों में से किसी भी एक मार्ग का या समयानुसार दोनों मार्गों का उपयोग कर जीवन-संग्राम में विजयी हो सकते हैं।

स्मरण रखिए ! विपत्तियाँ केवल कमजोर, कायर, डरपोक और निठल्ले व्यक्तियों को ही डराती, धमकाती और पराजित करती है और उन लोगों के वश में रहती है जो उनसे जूझने के लिए कमर कसकर तैयार रहते हैं। ऐसे व्यक्ति भलीभाँति जानते हैं कि यह जीवन फूलों की सेज नहीं वरन् रणभूमि है, जहाँ हमें प्रति क्षण दुर्भावनाओं, दुष्प्रवृत्तियों और आपत्तियों से निडर होकर जूझना है। वे इस संघर्ष में सूझबूझ से काम लेते हुए अपना जीवन-क्रम तदनुसार ढाँचे में ढालने का प्रयास करते रहते हैं और हमेशा इस बात का स्मरण रखते हैं कि किसी भी तात्कालिक पराजय को पराजय न माना जाय बल्कि हर हार से उचित शिक्षा ग्रहण कर नये मोर्चे पर युद्ध जारी रखा जाय और अन्तिम विजयश्री का वरण किया जाय। इस प्रकार के दृढ़ संकल्प वाले कर्मठ व्यक्ति कभी अपने जीवन में निराश नहीं होते अपितु वे दूसरे निराश एवं हताश व्यक्तियों के लिए प्रेरणा के केन्द्र बन जाते हैं।

बहुत से मनुष्य अकारण ही अपने मार्ग में काल्पनिक विघ्न-बाधाओं का खयाल करते रहते हैं। इससे उनका मन कमजोर हो जाता है, उनमें किसी प्रकार का साहस नहीं रहता और उनकी बौद्धिक शक्ति भी नष्ट हो जाती है। उनका मन निषेधात्मक हो जाता है। ऐसे मनुष्यों को अपने चारों ओर विघ्न-बाधायें ही दिखाई देने लगती हैं। उनका आत्म-विश्वास नष्ट हो जाता है और वे सारा जीवन रोते-झींकते निराशा में व्यतीत करते रहते हैं। वास्तव में आशा और आत्म-विश्वास ही महान शक्तियाँ हैं, जिनके बल पर हम अनेक महान और कठिन दिखाई देने वाले कार्यों को आसानी से एवं सफलतापूर्वक सम्पन्न कर सकते हैं।

जीवन-संग्राम में विजय प्राप्त करने के लिए अपने कार्यक्षेत्र रूपी अखाड़े में निडर होकर खम ठोंककर लड़ते रहने की आवश्यकता है। इसी तरीके से आप सभी सामान्य संकटों और विपत्तियों से लोहा लेकर उन्हें परास्त कर सकते हैं। राम, कृष्ण, महावीर, बुद्ध, ईसा, मोहम्मद, स्वामी दयानन्द, महात्मा गाँधी आदि महापुरुषों के जीवन संकटों और विपत्तियों से भरे हुए थे, पर वे संकटों की तनिक भी परवाह न करते हुए अपने कर्त्तव्य मार्ग पर अविचल और अबाध गति से अग्रसर होते रहे। फलत: वे अपने उद्दिष्ट में सफल हुए और आज संसार उन्हें ईश्वरी अवतार मानकर पूजता है।

विपत्तियों एवं कठिनाइयों से जूझने में ही हमारा पुरुषार्थ है। हमारे राष्ट्रनायक पं. जवाहर लाल नेहरू का कथन है 'हमेशा खतरों से भरा जीवन जियो।' बिना संकटों के मनुष्य का जीवन निखर नहीं सकता और न उसमें त्याग, तितिक्षा एवं सहिष्णुता का ही विकास हो पाता है। अत: कठिनाइयों को खिलवाड़ समझकर उनका हँसते-हँसते मुकाबला करना सीखिए। धैर्य की परीक्षा आपत्तिकाल में ही होती है—

धीरज, धर्म, मित्र अरु नारी।

आपतिकाल परखिए चारी।।

रामायण की इस चौपाई को हम अहर्निश ध्यान में रखते हुए आने वाली हर मुसीबत का निर्भीकता और दृढ़ता के साथ सामना करें। आप देखेंगे कि ज्यों ही हम विपत्तियों का मुकाबला करने के लिए कटिबद्ध होंगे, त्यों ही विपत्तियाँ दुम दबाकर भाग खड़ी होंगी, संकटों के सारे बादल छँट जायेंगे और परिस्थिति निष्कंटक होकर हमारे लिए अनुकूल हो जायेगी।

कठिनाइयाँ हमारे व्यक्तित्व को प्रखर बनाती हैं

कठिनाइयों का मानव-जीवन में बड़ा महत्त्व है। यह बात सुनने में बड़ी अजीब सी लगती है, लेकिन है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सत्य। कोई सोच सकता है कि जिन कठिनाइयों से कष्ट होता है, प्रगति में बाधा पड़ती है, वे किसी के जीवन के लिये महत्त्वपूर्ण किस प्रकार हो सकती हैं ? जीवन में महत्व तो सुविधा का होता है, जिससे आराम मिलता है और प्रगति का लक्ष्य आसान होता है। यह विचार किसी हद तक सही होने पर भी अपूर्ण है। यदि कठिनाइयों के महत्त्व पर गहराई से विचार किया जाय तो पता चलेगा कि कठिनाइयाँ मानव-जीवन की सार्थकता के लिये जरूरी हैं।

सोने के लिये आग का जो महत्त्व है, वही महत्त्व मानव-जीवन के लिये कठिनाइयों का है। सोना जब आग में अच्छी तरह तप लेता है तभी वह पूरी तरह निखरता है और हर प्रकार से इस संसार में अपना उचित मूल्य पाता है। इसी प्रकार जब मनुष्य कठिनाइयों के बीच से गुजरता है ,तो उसकी बहुत सी कमियाँ और विकृतियाँ दूर हो जाती हैं। वह शुद्ध सोने जैसा खरा और मूल्यवान हो जाता है। जब तक मनुष्य पूरी तरह सुख-सुविधा में रहता है, तब तक एक प्रकार से उसकी आँखें बन्द रहती हैं। अपनी मौज में वह जो चाहता है करता रहता है। इस प्रकार के अल्हड़ जीवनयापन में मनुष्य में अनजाने में ही अनेक दोष और विकार आ जाते हैं किन्तु उस सुख-सुविधा की स्थिति में उसे उनका पता नहीं चलता। अपने उन विकारों तथा दोषों का पता उसे तभी चलता है जब किसी कठिनाई के आने पर उसकी आँखें खुलती हैं।

यह मानव-स्वभाव की विचित्रता ही है कि वह सुख-सुविधा के समय तो असावधानी बरतता है किन्तु मुसीबत आने पर अधिक से अधिक सावधान, शुभ तथा शुद्ध रहने का प्रयत्न करता है। बड़े-बड़े आस्तिक लोग भी सम्पत्ति की स्थिति में ईश्वर को भूले रहते हैं, उन्हें सुख के नशे में उसकी याद तक नहीं आती। पर जब कोई विपत्ति सिर पर आ जाती है तो वह बड़ी तत्परता से परमात्मा का स्मरण ही नहीं, उसकी उपासना तक करने लगता है। इस विरोधी प्रतिक्रिया को देखते हुए यही मानना होगा कि वे कठिनाइयाँ वास्तव में बड़ी महत्त्वपूर्ण तथा उपयोगी हैं जो मनुष्य को शुद्ध-बुद्ध और आस्तिक बनने में सहायक होती हैं। पावनता मानवता की विशेष शोभा है, जिसकी प्राप्ति कठिनाइयों की प्रेरणा से ही होती है। यह बात मानव-जीवन में कठिनाइयों के महत्त्व का ही प्रतिपादन करती है।

किसी शस्त्र के लिये 'सान' का जो महत्त्व है वही महत्त्व मानव-जीवन में कठिनाइयों का है। रखे अथवा पड़े रहने से हथियारों में जंग लग जाती है। उनकी धार उतर जाती है और वे कुन्द होकर बेकार हो जाते हैं। किन्तु जब वे शरण पर चढ़ाकर तराश दिये जाते हैं तो पुनः तीव्र, प्रखर तथा शानदार होकर चमकने लगते हैं। उनका विकार दूर हो जाता है और वे शुद्ध तथा नए होकर उपयोगी बन जाते हैं। तब उनसे उनका काम बखूबी लिया जा सकता है। इसी प्रकार कठिनाइयों के चक्र पर चढ़कर, उनसे रगड़कर मनुष्य की सारी शक्तियाँ और सारे गुण प्रखर हो उठते हैं। उनमें नई सज-धज और नई योग्यता आ जाती है। आराम का जीवन बिताते रहने पर शक्तियों में कुण्ठा आ जाती है। अप्रयुक्त होने से वे बेकार लगती हैं। पर जैसे ही कोई कठिनाई अथवा मुसीबत सामने आती है, मनुष्य उससे बचने और छूटने के लिये सक्रिय हो उठता है, साथ ही उसकी शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक शक्तियाँ भी संघर्ष में पड़कर अपना योगदान करने लगती हैं। इस संघर्ष से उनकी सारी कुण्ठा और निरुपयोगिता समाप्त हो जाती है। मनुष्य हर ओर से नया और तरोताजा हो जाता है। कठिनाइयों के अवसर पर ही उसे अपनी शक्ति और गुणों का ठीक-ठीक पता चलता है। मानव-जीवन में शक्ति तथा गुणों की सक्रियता की जो महती आवश्यकता है, उसकी पूर्ति कठिनाइयों द्वारा ही होती है।

मानव-मस्तिष्क की प्रकृति ही कुछ ऐसी है कि इससे ज्यों-ज्यों काम लिया जाता है यह त्यों-त्यों अधिक प्रौढ़, प्रबुद्ध तथा शक्तिशाली होता जाता है। इसके विपरीत ज्यों-ज्यों इसे आराम दिया जाता है, त्यों-त्यों सुस्त और चेतनाहीन होता जाता है। सुख-सुविधा के समय तो मनुष्य निष्क्रिय होकर आलस्य में पड़ा रहता है। उसे प्रायः न किसी बात पर सोचने की जरूरत होती है और न मगज मारने की। ऐसी दशा में मस्तिष्क का सुस्त और कुण्ठित होना स्वाभाविक ही है। किन्तु कठिनाई तथा विपत्ति के अवसर पर स्थिति बिल्कुल भिन्न होती है। उस दशा में मुसीबत से बचने और कठिनाई को हल करने के लिये उसे बहुत कुछ सोचना, विचारना, योजना और कार्यक्रम बनाने पड़ते हैं। मस्तिष्क को हर समय सक्रिय तथा कार्यरत रखना पड़ता है। इस बौद्धिक परिश्रम से उसका मस्तिष्क बड़ा ही विचारक, निर्णायक तथा विवेकवान बन जाता है। मानव-प्रगति के लिये जिस विवेकशीलता, विचारशीलता और निर्णय शक्ति की आवश्यकता होती है, वह कठिनाइयों की कृपा से सहज ही पूरी होती रहती हैं।

किन्तु कठिनाइयों से यह सब लाभ होता उन्हीं लोगों को है जो उनका सहर्ष स्वागत करता है, डटकर उनसे लोहा लेता है और उन्हें परास्त करने में गौरव और पुरुषार्थ की सार्थकता समझता है। ऐसे धीर तथा बुद्धिमान व्यक्ति के लिये कठिनाइयाँ उसी प्रकार हितैषिनी होती हैं जिस प्रकार अखाड़े का वह गुरु जो अपने शिष्यों को रगड़-रगड़कर मजबूत तथा पकड़ लड़ने में दक्ष बनाता है। कायर और भीरु व्यक्ति के लिये मुसीबत वास्तव में मुसीबत ही होती है। जो कठिनाई अथवा आपत्ति को देखकर भयभीत हो जाते हैं, जिनका मन-मस्तिष्क निराशा से अंधेरा हो जाता है, कर्तव्यमूढ़ता से जिनके हाथ-पैर रुक जाते हैं, साहस और शक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जवाब दे जाती है, वे निश्चय ही उसके शिकार बनकर बरबाद हो जाते हैं। कायर मनुष्य की कठिनाइयाँ नहीं बल्कि उनके प्रति उसका भय ही उसे खा जाता है। जो कठिनाइयों से हार मान लेते हैं, वे निश्चय ही जीवन का दाँव हार जाते हैं और जो उनकी चुनौती स्वीकार कर खम ठोककर उद्यत हो जाते हैं वे उन्हें निश्चय ही परास्त कर देते हैं।

कठिनाइयों का वास्तविक स्वरूप क्या है इसकी व्याख्या दार्शनिक 'चुर्निंग तो हांग' ने ठीक ही की है। वे लिखते हैं—"कठिनाई एक विशालकाय, भयंकर आकृति के किन्तु कागज के बने हुए शेर के समान होती हैं। जिसे दूर से देखने पर बड़ा डर लगता है, पर एक बार जो साहस करके उसके पास पहुँच जाता है, वह उसकी इस असलियत को जान लेता है कि वह केवल एक कागज का खिलौना मात्र ही है।"

कठिनाइयाँ वास्तव में कागज के शेर के समान ही होती हैं। वे दूर से देखने पर बड़ी ही डरावनी लगती हैं। इस भ्रमजन्य डर के कारण ही मनुष्य उन्हें देखकर भाग पड़ता है। पर जो एक बार साहस कर उनको उठाने के लिए तैयार हो जाता है, वह इस सत्य को जान जाता है कि कठिनाइयाँ जीवन की सहज प्रक्रिया का अंग होने के सिवाय और कुछ नहीं होतीं। संसार में सम्पत्ति-विपत्ति, लाभ-हानि, सुख-दुःख का जोड़ा दिन-रात की तरह एक-दूसरे से बँधे घूमते रहते हैं। इस द्वन्द्व चक्र से संसार में कोई नहीं बच सकता। हम साधारण लोगों की बात ही क्या ? बड़े-बड़े महापुरुष भी कठिनाइयों और विपत्तियों से न बच सके। सर्व साधनसम्पन्न राम, कृष्ण, हरिश्चन्द्र, नल, पाण्डव, प्रताप, शिवाजी, गुरु गोविन्दसिंह जैसे लोग तक विपत्ति के चक्र से नहीं बच सके। कठिनाइयाँ मानव-जीवन की सामान्य प्रक्रिया का ही एक अंग हैं। जो संसार में जन्मा है, उसे कठिनाइयों का सामना करना ही पड़ेगा। ऐसी अनिवार्य स्थिति से घबराना अथवा भयभीत होना बुद्धिमानी नहीं है। बुद्धिमानी है विपत्तियों तथा कठिनाइयों से लड़ने और उन पर विजय पाने में।

जो चेतन है, विवेकवान और जीवनपूर्ण है, वह मनुष्य जीवन और उन्नति करने के लिये अवश्य ही जिज्ञासा करता है। प्रायः सभी मनुष्य अपने को चेतन तथा जीवन्त मानते हैं और सभी जीवन में कुछ न कुछ उन्नति करने के लिए उत्सुक रहते हैं। लेकिन संसार में ऐसे मनुष्यों की संख्या अधिक नहीं होती जो किसी उल्लेखनीय शिखर पर पहुँचते हैं। ऐसा केवल इसलिए होता है कि सब मनुष्य समान रूप से न तो पुरुषार्थ करते हैं और न कठिनाइयों से टक्कर लेने का साहस रखते हैं। उन्नति का पथ सरल अथवा सुगम नहीं होता। उसमें पग-पग पर विघ्न-बाधाओं का सामना करना पड़ता है। श्रेय की प्राप्ति, परिश्रम तथा संघर्ष द्वारा होती है। संसार का ऐसा कोई भी महत्त्वपूर्ण कार्य नहीं जो कठिनाई उठाए बिना ही पूर्ण हो जाए। जिसमें कठिनाई सहने और विपत्ति से लड़ने का साहस होता है, वह ही सफलता के उन्नत शिखर पर पहुँच जाता है। जिन-जिन ने अपने जीवन में आपत्तियों का सामना किया है, कठिनाइयों के बीच से अपना अभियान आगे बढ़ाया है वे ही महान कार्य कर सके और महापुरुष कहला सके।

महापुरुषत्व का प्रमाण इस बात में नहीं कि कोई किस ऊँचे स्थान पर पहुँच सका है। महापुरुषत्व का प्रमाण इस बात में है कि उस स्थान पर पहुँचने में किसने कितनी कठिनाई उठाई, कितनी आपत्तियों और प्रतिकूलताओं से संग्राम किया और उनको परास्त किया। जो पद अथवा प्रतिष्ठा जितनी आसानी से मिल जाती है वह उतनी ही सस्ती और कम महत्त्व की होती है। आज अमेरिका का प्रेसीडेण्ट कोई न कोई व्यक्ति हर पाँच साल बाद होता रहता है किन्तु उस सर्वोच्च पद पर हर व्यक्ति उतना महान नहीं समझा जा सकता जितने कि जार्ज वाशिंगटन और अब्राहम लिंकन माने जायेंगे। आज सामान्यतः राष्ट्र के उस सर्वोच्च पद पर पहुँचने वाला व्यक्ति महत्त्वपूर्ण तो हो सकता है लेकिन महापुरुष नहीं। उस श्रेणी में महापुरुष जार्ज वाशिंगटन अथवा अब्राहम लिंकन ही माने जा सकते हैं। इस अन्तर का कारण केवल यही है कि जार्ज वाशिंगटन ने अपने पूरे जीवन को लगाकर और अपार संघर्ष करने के बाद अमेरिका का निर्माण तथा संचालन किया था। अब्राहम लिंकन और उस पद में जमीन आसमान का अन्तर था। तथापि सब साधनहीन एक लकड़हारे के बेटे लिंकन ने अपने पुरुषार्थ, अध्यवसाय तथा लगन के साथ ही असंख्यों बाधाओं, विपत्तियों, असफलताओं, विरोधों, संकटों और कठिनाइयों के बावजूद भी न हिम्मत हारी, न भय माना और न निराशा को पास आने दिया। वे निरन्तर श्रेय पथ पर विरोध-बाधाओं से लड़ते हुए आगे बढ़ते गए और राष्ट्र के उस सर्वोच्च पद पर पहुँचे जो उनकी स्थिति को देखते हुए असम्भव कहा जा सकता था। महापुरुषत्व का मानदण्ड पद अथवा स्थिति नहीं है, उसका मानदण्ड वह कठिनाई तथा विपत्ति है जो वहाँ तक पहुँचने में आई होती है। अपने श्रेय पथ पर जो जितना ही कष्ट-सहिष्णु और साहसी रहता है, जितनी अधिक कठिनाइयाँ सहन कर सफलता पाता है, वह उसी अनुपात से महापुरुष माना जाता है।

श्रेय पथ पर कठिनाइयों का आना बहुत जरूरी है। यदि उन्नति और प्रगति का पथ सरल हो, श्रेय और लक्ष्य यों ही आसानी से मिल जाया करें तो उसका कोई महत्त्व ही न रह जाये। वह तो पकी-पकाई रोटी खा लेने के समान ही सस्ता और सामान्य काम हो जाए। ऐसी सरल सफलता पाने पर उसमें न तो आनन्द का लेश रह जाएगा और न वह आत्म-गौरव जो इस स्थिति में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपेक्षित हो जाता है। लक्ष्य का महत्त्व कठिनाइयों से और पुरुष का गौरव उनको पार कर लक्ष्य पाने में ही होता है।

कठिनाइयों का मानव-जीवन में बड़ा महत्त्व तथा उपयोग है। किसी को उनसे घबराना नहीं चाहिए। उन्हें कागज का शेर समझकर, टक्कर लेनी और विजय पाने के लिए प्रस्तुत रहना चाहिए। कठिनाइयाँ ही मानव को महामानव और पुरुष को महापुरुष बनाती हैं।

अपने भाग्य-भविष्य का निर्माण हम स्वयं ही करते हैं

दूसरों की सहायता से अपनी सुविधाएँ बढ़ती हैं और उनके असहयोग एवं आक्रमण से अपनी प्रगति का मार्ग अवरुद्ध होता है, विद्वेषी लोग विपत्ति खड़ी करते हैं और सहयोगी सुखद सम्भावनाएँ उत्पन्न करते हैं; यह तथ्य सर्वविदित है। इसलिए हर किसी की इच्छा यही रहती है कि उसके सहयोगी बढ़ते रहें और विद्वेषी घटते जायँ। इस स्वाभाविक आकांक्षा की पूर्ति का जो सही तरीका है, उससे बहुत कम लोग परिचित होते हैं। यही बहुत बड़े दुर्भाग्य की बात है। अनुभवहीन प्रयास में भटकते हुए पैर कहीं से कहीं जा पहुँचते हैं और भटकाव के कारण उल्टे उलझन में फँसते तथा कष्ट सहते हैं।

संसार का सुस्थिर, सनातन, शाश्वत नियम यह है कि व्यक्ति का स्तर अपने स्तर की ओर आकर्षित होता है और आकर्षित करता है। चुम्बक लोहे के टुकड़ों को अपनी ओर खींचता है और लौह चूर्ण चुम्बक की ओर दौड़ता है। चोरों के पास चोर, जुआरियों के पास जुआरी, नशेबाजों के पास नशेबाज ढूँढ़ते-टटोलते जा पहुँचते हैं और परस्पर घुल-मिलकर अपने ढंग का ताना-बाना बुनते हैं। ठीक यही बात साधु, सज्जन, सद्गुणी लोगों के सम्बन्ध में लागू होती है। उनके भी सत्संग जुड़ते और जमातें बनती हैं और सदुद्देश्य पूरा करने वाली योजनाओं को कार्यान्वित करने के प्रयास चलते हैं। उस समूह में भी सहयोगियों की संख्या बढ़ती ही जाती है। दूसरी ओर चोर, दुराचारियों के गिरोह भी बढ़ते और मजबूत होते जाते हैं। यह समान स्तर के लोगों का समान स्तर वालों के साथ जुड़ते-घुलते जाने के सिद्धान्त का प्रत्यक्ष प्रमाण है।

धातुओं की खदानें क्रमशः बढ़ती ही जाती हैं। इसका कारण यह है जहाँ जितनी धातु जमा होती है, वहाँ उस स्तर का उतना ही चुम्बकत्व बढ़ता है और वह अपने सजातीय धातु कणों को दूर-दूर तक धूलि में पड़े बिखरे होने पर भी प्रभावित करता है। उस आकर्षण से वे खिंचते चले जाते हैं और जहाँ धातु की खदान थी, वहाँ इकट्ठे होते रहते हैं। खदानें इसी आधार पर दिन-दिन विस्तृत होती रहती हैं। यह सिद्धान्त मनुष्यों पर भी लागू होता है। उनका आन्तरिक चुम्बकत्व सजातियों को अपनी ओर खींचता रहता है और तरह-तरह के समूह बनते रहते हैं। अपने गुण, कर्म, स्वभाव के अनुरूप जिस स्तर का व्यक्तित्व विनिर्मित होता है, उसी प्रकार के व्यक्ति घनिष्ठ बनते चले जाते हैं और फिर उनके संयोग से जो प्रतिक्रिया होनी चाहिए वह होती है। दुष्ट-दुर्जनों के मिलने पर एक प्रकार की हलचलें उत्पन्न होती हैं और स्नेही, सज्जनों का सद्भाव सम्पन्न आदान-प्रदान चल पड़ता है। देखने में यह दोनों परिस्थितियाँ एक दूसरे से भिन्न हैं और ईश्वरीय कोप अथवा अनुग्रह का परिचय देती हैं। तो भी वे एक ही क्रम व्यवस्था के कारण उत्पन्न हो रही होती हैं। अपना दूषित व्यक्तित्व दूसरे दुर्जनों को एकत्रित कर रहा होता है अथवा अपनी सज्जनता दूसरे सज्जनों को आमन्त्रित करने में जुटी होती है। एक स्थिति में विग्रह और अनाचार उत्पन्न होता है, दूसरी में स्नेह, सहयोग की वर्षा होती है। यह भिन्नताएँ अपनी भीतरी स्थिति की ही प्रतिध्वनियाँ-प्रतिच्छाया हैं, मालूम ऐसी होती हैं मानो कहीं बाहर से वे अप्रत्याशित रूप से आ धमकी हैं।

हर मनुष्य के अन्दर कुछ न कुछ अच्छाई और कुछ न कुछ बुराई पाई जायेगी। उनमें से जिस भी अंश का हम स्पर्श करेंगे, वही अपने लिए फलप्रद बन जायेगी। गाय दूध भी देती है और गोबर भी। अपनी रुचि जिसमें होगी, वही खोजा जायेगा और वही मिलेगा। बगीचे में फूल भी रहते हैं और गन्दगी भी। भौंरे फूलों का आनन्द लेते हैं, गुबरीले कीड़ों को सारे उद्यान में गन्दगी के ही ढेर लगे मिलते हैं। अपनी रुचि के अनुरूप हम किसी भी व्यक्ति के दुर्गुणों के, सद्गुणों के सम्पर्क में आते हैं और उसी के सम्पर्क की प्रतिक्रिया अनुभव करते हैं। हरा चश्मा पहन लेने पर हर वस्तु हरे रंग की दीखती है, पर उसे बदलकर लाल रंग का पहन लें तो सब कुछ लाल रंग का दिखाई पड़ने लगेगा। चश्मे की तरह ही दृष्टिकोण का प्रभाव होता है। सन्त, सज्जन इस संसार को विराट् ब्रह्म के रूप में देखते हैं और **''सियाराम मय सब जग जानी''** की भावना से लोक-मंगल में निरत रहते हैं। इसके विपरीत दोष दृष्टि भरी रहने से यह विश्व भव-सागर दिखाई पड़ता है और सर्वत्र पाप-अनाचार की असुरता, आधि-व्याधि की बहुलता ही दिखाई पड़ती है।

स्वर्ग किसी स्थान विशेष का नाम नहीं है। किसी लोक विशेष में वैसी इमारतें या परिस्थितियाँ नहीं हैं जैसी कि स्वर्ग का वर्णन करते हुए कथा-पुराणों में बताई गई हैं। न किसी ग्रह-नक्षत्र में वैसा नरक है जैसा यमदूतों द्वारा उत्पीड़न दिये जाने के कथा-विवरणों में बताया जाता है। इन दोनों का अस्तित्व इसी लोक में है और हर व्यक्ति के दायें-बायें साथ-साथ चलता है। जब चिन्तन की धारा उत्कृष्ट और क्रिया-प्रक्रिया आदर्श होती है तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्त:करण में अपार सन्तोष और आनन्द भरा रहता है। कस्तूरी के हिरन को अपनी नाभि की महक से दसों दिशाएँ सुगन्धित दीखती हैं। यही स्वर्ग है। दर्पण में अपना ही प्रतिबिम्ब दीखता है। अपनी सज्जनता बाहर के लोगों की श्रद्धा, सहानुभूति एवं सहायक योगदान लेकर वापस लौटती है। ऐसे व्यक्ति घटिया व्यक्तियों, वस्तुओं तथा परिस्थितियों के बीच भी उल्लास भरा वातावरण विनिर्मित कर लेते हैं। यही स्वर्ग का सृजन हुआ। **सन्त इमर्सन** कहा करते थे—"मुझे नरक में भेज दो, मैं वहीं अपने लिए स्वर्ग बना लूँगा।" इस कथन में ठोस सत्य भरा हुआ है। सज्जन अपनी प्रखर उत्कृष्टता के सहारे सम्पर्क में आने वाले हर जड़ चेतन को अपने अनुरूप बहुत कुछ बदल लेते हैं। यदि अभीष्ट परिवर्तन न हो सके तो वे अपने व्यवहार को मैत्री, करुणा, उपेक्षा की त्रिविधि नीति अपनाकर कामचलाऊ ताल-मेल बिठा लेते हैं। सुविकिसित लोगों के साथ मैत्री, दु:खियों के साथ करुणा और अवांछनीय लोगों के साथ उपेक्षा का व्यवहार करते हुए टकराव बच सकता है और अपनी सौम्य प्रवृत्ति सुरक्षित रह सकती है।

ठीक इसी प्रकार नरक का सृजन है। दुर्बुद्धि वाले मनुष्य अपनी दूषित दृष्टि और दुष्प्रवृत्तियों के कारण अच्छे वातावरण के बीच भी विक्षोभ उत्पन्न करते हैं। तंग करने पर भोली गाय भी लात मारती है। अनुचित छेड़खानी करने पर सरल लोगों को भी क्रोध आता है और वे भी कठोरता बरतने पर उतारू हो जाते हैं।

अपने से अधिक सम्पन्न लोगों के साथ तुलना करने पर दरिद्रता लदी दीखेगी और दुर्भाग्य का दु:ख होगा। इसके विपरीत यदि अपने से अभावग्रस्त लोगों अथवा कठिनाइयों से संत्रस्तों के साथ तुलना की जाय तो फिर अपनी स्थिति पर सन्तोष व्यक्त करते और ईश्वर को धन्यवाद देते ही बनेगा। दरिद्रता और सम्पन्नता स्वयं में कुछ भी नहीं। वे सापेक्ष हैं। ऊँची स्थिति से तुलना करते हुए हम दरिद्र बन जाते हैं और गिरी स्थिति के मुकाबले में सम्पन्न लगते हैं। इस तुलना मापदण्ड में थोड़ा हेर-फेर करके कोई भी दरिद्र अपने को सम्पन्न और कोई भी सम्पन्न अपने को दरिद्र अनुभव कर सकता है।

परिस्थितियाँ नहीं, मन:स्थिति ही हमें नरक में डुबोती है और स्वर्ग के शिखर पर चढ़ाती है। नरक को नीचे पाताल में बताया गया है और स्वर्ग को ऊपर आसमान में। इसका तात्पर्य इतना ही है कि पतित और निष्कृष्ट व्यक्तित्व अपनी दुर्भावनाओं और दुष्प्रवृत्तियों के कारण दु:खद अनुभूतियों और परिस्थितियों से घिरा रहता है और यमदूतों द्वारा उत्पीड़न दिये जाने जैसी पीड़ा सहता है। यह यमदूत और कोई नहीं अपने ही कुविचार हैं। अपना आपा ही नरक है। गया-गुजरा स्तर भीतर ही भीतर जलता है और बाहर से प्रतिकूलताएँ सहता है। यही यमदूतों का दण्ड प्रहार है।

ठीक इसी प्रकार स्वर्ग का सृजन भी मनुष्य के अपने हाथ में है। उत्कृष्ट चिन्तन और आदर्श कर्तृत्व अपनाकर कोई भी मनुष्य आन्तरिक प्रसन्नता और बाहर से सज्जनों का सद्भाव-सम्पन्न सहयोग पाकर यह अनुभव कर सकता है कि वह स्वर्गीय आनन्द का रसास्वादन कर रहा है। उर्ध्व गमन ही स्वर्गारोहण है। पाण्डव इसी शान्त शीतलता की तलाश में हिमालय की चोटियों पर चढ़े थे। इस उपाख्यान में यह अलंकार व्यक्त किया गया है कि जितनी अधिक मात्रा में उत्कृष्टता अपनाई जायेगी, अपनी स्थिति दूसरों की तुलना में उतनी ही ऊँची उठ जायेगी और उतनी ही मात्रा में शान्त-शीतलता का अनुभव होगा। स्वर्ग इसी प्रकार पाया जाता है।

दूसरे सहायता तो करते हैं, पर वह उसी दिशा में होती है जिसमें कि अपना प्रवाह बहता है। यदि अपनी दिशा पतन की ओर चल रही है और दुर्गुणों, दुर्व्यसनों में लिप्त हैं तो उसी प्रकृति के लोग अपने इर्द-गिर्द जमा होते चले जायेंगे और पतन की गति और भी तीव्र बनाने में पूरी-पूरी सहायता करेंगे। इसके विपरीत यदि अपनी यात्रा सदुद्देश्य की दिशा में सत्प्रवृत्तियाँ अपनाये हुए चल रही है तो उस स्तर के सहयोगियों की भी कमी न रहेगी। श्रेष्ठ, सज्जन ऊँचा उठाने और आगे बढ़ाने का मार्ग-दर्शन एवं सहयोग देने के लिए भी कहीं न कहीं से मिल ही जायेंगे। इस प्रकार अपने प्रयास की सफलता और भी सरल हो जायेगी। पतन और उत्थान में से किसी एक को चुनना अपना काम है। जैसा निश्चय होगा उसी के अनुरूप चुम्बकत्व उत्पन्न होगा और उसी स्तर के सहयोगियों को आमन्त्रित करके प्रगति-क्रम में तीव्रता उत्पन्न कर लेगा।

दूसरों से सहयोग की अपेक्षा करने में कोई हर्ज नहीं, वह मिलता भी है और मिलना भी चाहिए। पर एक बात सदा ध्यान में रखकर चलना होगा कि अपने स्तर के अनुरूप ही यह बाहरी सहयोग जुटाया जा सकेगा। रात भर भले ही पानी बरसता रहे, पर अपने को उसका उतना ही लाभ मिलेगा, जितना बड़ा बर्तन पास में हो। पात्रता से अधिक बाहरी सहायता मिलती भी कहाँ है ? दरिद्र, भिखारियों को कौन सोने की मुहरें बाँटता है, उनके पल्ले दो-पाँच पैसे के सिक्के ही पड़ते हैं। इसके विपरीत महत्त्वपूर्ण कार्यों के लिए प्रभावशाली व्यक्ति, प्रयोजन की गरिमा समझाकर लाखों रुपया चन्दा इकट्ठा कर लेते हैं। जो दानी, घिनौने, भिखमंगे को उपेक्षापूर्वक दस पैसे का सिक्का फेंकता है, वही व्यक्ति दूसरे सत्पात्र को खुशी-खुशी सौ रुपये का नोट थमा देता है। इस अन्तर में दानी की उदारता को न्यूनाधिक के रूप में नहीं, प्राप्तकर्त्ता की पात्रता को, घट-बढ़ को ध्यान में रखते हुए समझा जाना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परावलम्बन की, दूसरों की गुलामी की सर्वत्र निन्दा की गई है। स्वावलम्बन को, आत्म-निर्भरता को मनीषियों ने भरपूर सराहा है। स्वर्ग की भाँति मुक्ति को भी सर्वोच्च आध्यात्मिक सफलताओं में गिना गया है। मुक्ति का अर्थ है—बन्धन से, परावलम्बन से छूटना और स्वावलम्बी बनना। इस दृष्टिकोण को अपनाते ही अनेक महान सत्यों का रहस्योद्घाटन होता है और मनुष्य को विश्वास हो जाता है कि अपनी भली-बुरी परिस्थितियों के लिए पूर्णतया हम स्वयं ही जिम्मेदार हैं। भगवान ने अपने भाग्य निर्माण का दायित्व पूरी तरह हमारे हाथ में सौंपा है। चिन्तन और कर्तृत्व के दोनों पैरों के सहारे से किसी भी दिशा में, कितनी ही लम्बी यात्रा भली प्रकार कर सकते हैं। दूसरे तो यत्किंचित सहारा भर ही दे सकते हैं। उनके बलबूते कोई बड़ी योजना बनाना और उसके पूरा होने का स्वप्न देखना निरर्थक है।

यदि हम स्वास्थ्य, शिक्षा, सम्पन्नता, सम्मान, सफलता से वंचित रहते हैं, तो इसके लिए दूसरों को दोष देना व्यर्थ है। गहराई से उन कारणों को तलाश करना चाहिए जिनके द्वारा विपन्नता विनिर्मित होती है। आलस्य, प्रमाद, उपेक्षा, उदासीनता, आवारागर्दी जैसे दुर्गुणों में लोग अपनी अधिकांश शक्तियाँ नष्ट करते रहते हैं। महत्त्वपूर्ण कार्य करने के लिए उनका श्रम, समय, मनोयोग लगता ही नहीं, फिर वे सफलताएँ कैसे मिलें, जो प्रगाढ़ पुरुषार्थ का मूल्य माँगती हैं। असफलताओं का दोष भाग्य, भगवान, ग्रह-दशा अथवा सम्बन्धित लोगों को देकर मात्र मन को बहलाने की आत्म-प्रवंचना की जा सकती है, उसमें तथ्य तनिक भी नहीं है। संसार के प्राय: सभी सफल मनुष्य अपने पुरुषार्थ से आगे बढ़े हैं। उन्होंने कठोर श्रम और तन्मय मनोयोग का महत्त्व समझा है। यही दो विशेषताएँ जादू की छड़ी जैसा काम करती हैं और घोर अभाव की, घोर विपन्नताओं की परिस्थितियों के बीच भी प्रगति का रास्ता बनाती हैं। सफल मनुष्यों में से प्रत्येक के जीवन पर गहरी दृष्टि डालने से यही तथ्य उभरता दिखाई पड़ेगा कि वे अपनी साहसिकता और श्रमशीलता के सहारे ही आगे बढ़े हैं। उठने वाले या गिरने वाले को उनकी दिशा में प्रोत्साहन देना संसार का काम है। बाहर की कोई शक्ति किसी को उठाती, गिराती नहीं। यह सब पूर्णतया अपनी स्थिति पर निर्भर है।

यह भ्रम जितनी जल्दी हटाया जा सके, उतना ही अच्छा है कि कोई देव, दानव, मन्त्र-तन्त्र, गुरु, सिद्ध पुरुष, मित्र, स्वजन, धनी, विद्वान हमारी कठिनाइयाँ हल कर देंगे या हमें सम्पन्न बना देंगे। इस परावलम्बन से अपनी आत्मा कमजोर होती है और अन्त:करण में छिपी प्रचण्ड आत्म-शक्ति को विकसित होने में भारी अड़चन पड़ती है। अस्तु, परावलम्बी मनोवृत्ति को जितनी जल्दी छोड़ा जा सके, आत्म-निर्भरता को जितनी दृढ़ता से अपनाया जा सके; उतना ही कल्याण है।

भाग्य अपने हाथों बनाइये

वैयक्तिक शक्ति से परे, सनातन सत्ता को यदि स्वीकार न करें तो इसे हमारा अहंकार ही माना जायेगा। यह भूल मनुष्य को करनी भी नहीं चाहिए। इस सृष्टि के कण-कण का विधान परमात्मा के हाथ में है। उसे चाहे अटल नियम कहें, काल कहें; विधाता या परमेश्वर कहे बात एक ही हैं। उसे मानना अवश्य पड़ता है। इससे बुद्धि को एक स्थिति प्राप्त होती है। इसके बिना मनुष्य को न तो विश्राम मिलता है, न अहंकार छूटता है। बुद्धि भी भ्रमित रहती है।

किन्तु मनुष्य का निज का भी अपने भाग्य-विधान से कुछ सम्बन्ध अवश्य है। इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि मनुष्य स्वाधीन नहीं है, उसका जीवन परमात्मा के विधान के अनुसार ही चलता है। न्याय की दृष्टि से उसका विधान भी स्वतन्त्र होना चाहिए। यह बात ठीक भी है। ईश्वर ने कर्म-फल का एक सुदृढ़ नियम बना दिया है, इसी के अनुसार मनुष्य का भाग्य बनता-बिगड़ता है।

भ्रम इस बात से पैदा हो जाता है कि कई बार प्रत्यक्ष रूप से कर्म करने पर भी विपरीत परिणाम प्राप्त हो जाते हैं, तो लोग उसे भाग्य-चक्र मानकर परमात्मा को दोष देने लगते हैं। किन्तु यह भाग्य तो अपने पूर्व संचित कर्मों का ही परिणाम है। यहाँ मनुष्य जीवन के विराट् रूप की कल्पना की गई है और एक जीवन का दूसरे जीवन से संस्कारजन्य सम्बन्ध माना गया है। इस दृष्टि से भी जिसे आज भाग्य कहकर पुकारते हैं, वह भी कल के अपने ही कर्म का परिणाम है। सृष्टि के प्राणियों में चेष्टा न होती, तो अब तक जो ऐतिहासिक विकास हुआ है, उसकी कल्पना न की जा सकती थी।

भाग्य का रोना रोने का अर्थ तो इतना ही समझ में आता है कि हम अपने कर्म के लिये सचेत नहीं हो पाये हैं। अपनी शक्तियों का दुरुपयोग 'अब' नहीं तो 'तब' किया था, जिसका कटु आघात भोगना पड़ रहा है। पर प्राकृतिक विधान के अनुसार तो यह भाग्य अपनी ही रचना है। अपने ही किए हुए का प्रतिफल है। मनुष्य भाग्य के वश में नहीं है, उसका निर्माता मनुष्य स्वयं है। परमात्मा के न्याय में अभेद देखें तो यही बात पुष्ट होती है कि भाग्य स्वयं हमारे द्वारा अपने को सम्पन्न करता है। उसका स्वतन्त्र अस्तित्व कुछ भी नहीं है।

वास्तव में हमें शिक्षा लेनी चाहिए कि कर्म-फल किसी भी दशा में नष्ट नहीं होता। किसी न किसी समय वह अवश्य सामने आता है। विवशतावश उस समय उसे भले ही भाग्य कहकर टाल दिया जाय, पर इससे कर्म-फल का सिद्धान्त तो नहीं मिट सकता। हम जैसा करेंगे वैसा ही तो भरेंगे। यदि स्वेच्छापूर्वक परमात्मा ही जिसे जो जी चाहे देने लगे तो इस सृष्टि की सारी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

न्याय-व्यवस्था बिगड़ जायेगी। हम उस स्वतन्त्रता को किस तरह काम में लावें यह एक अलग बात है किन्तु अपना कल्याण करने का अधिकार हमें ही है। न इसके लिए किसी को दोषी ठहराया जा सकता है और न किसी के भरोसे ही बैठा जा सकता है।

अपने सुख-दुःख, उन्नति-अवनति, कल्याण-अकल्याण, स्वर्ग और नर्क का कारण मनुष्य स्वयं है फिर दुःख या आपत्ति के समय भाग्य के नाम पर संतोष कर लेना और भावी सुधार के प्रति अकर्मण्य बन जाना ठीक नहीं है। ऐसी स्थिति आने पर तो हमें यह अनुभव करना चाहिए कि हम से जरूर कोई भूल हुई है और उस पर पश्चाताप करना चाहिए।

यथा, संयम न रखने के कारण आपका स्वास्थ्य गिर गया है। शरीर में ऋतु-परिवर्तन को भी बर्दाश्त करने की शक्ति नहीं रही, थोड़ी-सी असावधानी से कभी पेट में गड़बड़ी पैदा हो जाती है, कभी सिर दर्द करता है, जुकाम हो जाता है, सर्दी लग जाती है। आप कहेंगे—क्या करें ? हमारा भाग्य ही खराब है। वस्तुतः यह भाग्य का दोष नहीं है। आप थोड़ा-सा भी निष्पक्षता और कठोर सत्य की साक्षी में विचार करें तो आप यह मानने के लिए विवश होंगे कि आपने असंयम के कारण ही वह स्थिति बना ली है। जिसके कारण आपको इन कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। यदि आप संकल्प से काम लें, जिह्वा तथा कामेन्द्रियों पर कसकर अंकुश रखें, तो आपका खोया हुआ स्वास्थ्य फिर से वापस आ सकता है। पाना या खोना भाग्य के हाथ की बात नहीं है। वह तो मनुष्य के पौरुष-अपौरुष का फल है। इसे ही बाद में चाहें तो भाग्य कह सकते हैं।

दूसरे व्यक्ति अपने पास के साधन-सम्पन्न व्यक्तियों को देखकर ईर्ष्या से जलते रहते हैं। सोचते हैं, यह व्यक्ति कितना भाग्यशाली है। भगवान ने उसे मोटर दी है, रहने के लिए सुसज्जित कोठी है, नौकर-चाकर सभी कुछ हैं। धन से तिजोरियाँ भरी पड़ी हैं, किन्तु अपना तो जीवन ही कठिनाई से बीतता है। बड़ा कष्ट है। एक-एक पैसे के लिए दूसरों का मुँह ताकना पड़ता है। सच है, आप बड़ी मुसीबत में हैं, किन्तु दरअसल क्या आप उन गहराइयों में गये हैं, जिसके कारण आप निर्धन हैं। संसार के ८० प्रतिशत व्यक्ति विधिवत् खाते-कमाते हैं। आप ही क्यों परेशान हैं ? आप देखिए आपके जीवन में जरूर कहीं आलस्य, अकर्मण्यता, निरुद्योगिता का चोर छुपा हुआ है। इसे भगाइए , इस दुष्ट ने ही आपको निर्धन बनाया है। भगवान को तो आप नाहक कोसते हैं। महान विचारक **बर्जिल** ने कहा है—"भाग्य साहसी और कर्मठ व्यक्ति की सहायता करता है।" **डिजरायली** का भी ऐसा ही मत है—"हम अपना ऐश्वर्य स्वयं बनाते हैं और उसी को अपना भाग्य कहते हैं।"

भाग्यवाद का नाम लेकर अपने जीवन में निराशा, निरुत्साह के लिए स्थान मत दीजिए। आपका गौरव निरन्तर आगे बढ़ते रहने में है। भगवान का वरद-हस्त सदैव आपके मस्तक पर है। वह तो आपका पिता, अभिभावक, संरक्षक, पालक सभी कुछ है। उसकी अकृपा आप पर भला क्यों होगी ? क्या यह सच नहीं है कि उसने आपको यह अमूल्य मनुष्य शरीर दिया है। बुद्धि दी है, विवेक दिया है, कुछ अपनी इन शक्तियों से भी काम लीजिए। देखिए आपका भाग्य बनता है या नहीं ? भाग्य सदैव पुरुषार्थी का ही साथ देता है।

परिस्थितिवश यदि प्रयत्न के करने पर भी आपको उचित सफलता नहीं मिली तो आप इसे अपने पूर्वकृत-कर्मों का फल मानकर तात्कालिक सन्तोष प्राप्त कर सकते हैं, किन्तु अपने प्रयत्नों को यों ही ढीला मत छोड़िए। आज जो कर लेंगे, वही तो कल भाग्य बनेगा। कल आप अधिक सुख प्राप्त करें, इसकी तैयारी आज नहीं करेंगे तो कब करेंगे ? प्राणी की प्रकृति ही उसके कर्मों का कारण कही जाती है, इसलिए आज आप अपनी विश्वास-शक्ति को जगाकर अपने जीवन में सद्गुणों को बढ़ाने का प्रयत्न कीजिए। इससे आपका भावी जीवन निश्चय ही सुखी तथा समुन्नत हो सकेगा।

दुर्भाग्य के प्रमुख कारण मनुष्य के मनोविकार हैं। इन्हीं से जीवन बर्बाद होता है। काम, क्रोध, लोभ तथा मोह आदि के द्वारा ही मनुष्य का जीवन अपवित्र बनता है। संक्षेप में इसी को ही दुर्भाग्य की संज्ञा दी जा सकती है। अतः मनुष्य को चाहिए कि वह इन्द्रिय, मन और बुद्धि की अस्वच्छता को शुद्ध बनाने का सदैव अभ्यास करता रहे, इससे वह भविष्य सुन्दर बना सकता है। अनावश्यक वस्तुओं के अधिक से अधिक संचय को ही भाग्य नहीं कहते। वह मनुष्य जीवन में अच्छाइयों का विकास है, इसी से उससे शाश्वत सुख और शान्ति की उपलब्धि होती है। सत्कर्मों का आश्रय ही एक प्रकार से सौभाग्य का निर्माण करता है।

कर्म चाहे वह आज के हों अथवा पूर्व जीवन के, उनका फल असंदिग्ध है। परिणाम से मनुष्य बच नहीं सकता। दुष्कर्मों का भोग जिस तरह भोगना ही पड़ता है, शुभ कर्मों से उसी तरह श्री-सौभाग्य और लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। यह सुअवसर जिसे उपलब्ध हो, वही सच्चा भाग्यशाली है और इसके लिए किसी दैव के भरोसे नहीं बैठना पड़ता। कर्मों का सम्पादन मनुष्य स्वयं करता है। अतः अपने अच्छे-बुरे भाग्य का निर्णायक भी वही है। अपने भाग्य को वह कर्मों द्वारा बनाया-बिगाड़ा करता है। हमारा श्रेय इसमें है कि सत्कर्मों के द्वारा अपना भविष्य सुधार लें। जो इस बात को समझ लेंगे और इस पर आचरण करेंगे उनको कभी दुर्भाग्य का रोना नहीं रोना पड़ेगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दुर्भाग्य सौभाग्य बना

मैक्सिको, अमेरिका की मध्यरात्रि। कड़ाके की सर्दी पड़ रही थी और सुनसान सड़क पर एक व्यक्ति चला जा रहा था। अचानक वह फालिज का शिकार हो गया और सड़क पर ही लुढ़क गया। अचेतावस्था में ही बहुत देर तक पड़ा रहा। एक ट्रक उस रास्ते से गुजरा तो ड्राइवर का ध्यान गया और उसने अचेत व्यक्ति को कम्बल में लपेटकर गाड़ी में सुला लिया।

एक विशाल भवन के सामने ट्रक रोका। उस इमारत का नाम था 'पुनर्वास संस्थान'। जो अपंगों की आवास और निर्वाह-व्यवस्था करती थी। अपंग व्यक्ति को संस्थान में ले जाया गया और परिचारकों ने उसकी आठ महीने तक सेवा-सुश्रूषा की। तदुपरान्त वह 'पट्टी' के सहारे अस्पताल से बाहर निकल आया।

दान देने वाले के मन में बड़प्पन और लेने वाले के मन में दीन भाव स्वाभाविक रूप से आ जाते हैं। संस्थान ने इस बात को ध्यान में रखते हुए अपंगों को आत्मनिर्भर बनाने का कार्यक्रम हाथ में लिया ताकि कहीं भी रहते हुए उन्हें पराश्रित न होना पड़े। इसी संस्थान से उस व्यक्ति ने घड़ीसाजी का धन्धा सीखा और उसी के सहारे अपना तथा अपने परिवार का समुचित निर्वाह करने लगा।

ऐसे महान संस्थान के संस्थापक हैं—**डान रोमुलो ओ फेरिल**। वह मैक्सिको का सबसे बड़ा प्रकाशक और समाज-सेवक है। सारा लैटिन अमेरिका उसके सत्कार्यों से परिचित है। समाज-सेवा के लिए इस दिशा में लगने की प्रेरणा भी उसे एक ऐसी ही घटना से मिली जो उसके स्वयं के साथ ही बीती थी।

जुलाई १९५५ की बात है। जैनेवा की एक व्यस्त सड़क पर रोमुलो की कार का एक पहिया पंचर हो गया। रोमुलो ने कार को यहीं रोक दिया और तेजी से पहिया बदलने लगा। उसी समय पीछे से आती हुई एक मोटरसाइकिल उससे टकरा गई और उसकी बायीं टाँग को कुचलती हुई निकल गयी।

मैक्सिको के अस्थि विशेषज्ञ डा. जुआन फैरिलजा रोमुलो के अभिन्न मित्र थे। उन्होंने तुरन्त रोमुलो की मदद की और टाँग बचाने की पूरी-पूरी कोशिश की। परन्तु सारे प्रयत्न असफल रहे। एक के बाद एक ग्यारह बार आपरेशन किये गये, मगर एक भी आपरेशन सफल नहीं हुआ। अन्त में निराश होकर बारहवीं बार टाँग ही देनी पड़ी।

सामान्य व्यक्ति के लिए ऐसी घटना बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण और निराशाजनक हो सकती है। परन्तु रोमुलो के लिए आशा और एक नये प्रकाश का उदय हुआ। संकल्प के धनी और आशावादी लोगों के लिए जो घटनाएँ सामान्य लोगों को स्मरण से भी ज्यादा भयभीत करती हैं, नय जीवन की प्रेरणा देती हैं। रोमुलो मात्र दौलतमन्द ही नहीं, संकल्प का भी धनी था। उसने निश्चय किया कि मैं वैसाखियों का सहारा नहीं लूँगा। उस समय वह ६० वर्ष का था परन्तु तरुणों से भी ज्यादा उत्साही था। इष्ट मित्रों ने उसे ऑकलैण्ड कैलिफोर्निया के विख्यात सैनिक अस्तपताल में भर्ती करवाया। एक और कृत्रिम जल सिद्ध (वाटर प्रूफ) टाँग लगाई गयी। जिसे पहनकर तैरा भी जा सकता था। रोमुलो ने इस टाँग का इतनी कुशलता से उपयोग करने का अभ्यास कर लिया कि जब वह चलता था तो यह अनुमान भी नहीं होता कि यह टाँग शरीर के अंगों से भिन्न है।

जिस समय रोमुलो को कृत्रिम टाँग का उपयोग करने की विधि सिखाई जा रही थी, अस्पताल के डाक्टर ने चर्चा के दौरान बताया कि मैक्सिको में कोई छः लाख ऐसे अपंग हैं, जिनकी चिकित्सा आदि की कोई व्यवस्था नहीं है और न ही राजकीय सहायता का कोई प्रबन्ध है। रोमुलो का मानवीय अन्तःकरण आन्दोलित हो उठा और इस दिशा में कुछ करने के लिए उसका अन्तःकरण छटपटाने लगा। उसने अबकी बार संकल्प किया कि उन छः लाख अपंगों की सेवा करना मेरा धर्म है। ईश्वर ने मुझे फिर से काम करने की क्षमता दी है तो उसके ऋण से उन्मुक्त होने के लिए मुझे इन छः लाख लोगों को समर्थ बनाने में ही आत्मार्पण करना होगा।

उसने निश्चय किया कि अपंगों के अंग-भंग से लेकर पुनर्वास तक की व्यवस्था के लिए प्रयत्न करेगा। मैक्सिको लौटकर रिहैबिलिटेशन—एसोसियेशन नाम से एक संस्था की स्थापना की। लोकमंगल की दिशा में जब भी कोई नया कदम उठाया जाता है, तो बहुत से सहयोगी लंका विजय अभियान में रीछ-वानरों की तरह दौड़ उठते हैं। मैक्सिको के तत्कालीन राज्यपाल से लेकर सामान्य व्यक्ति ने रोमुलो के अभियान में अपनी सेवा-सहायता प्रस्तुत की। राष्ट्रपति ने एक विशाल दोमंजिली इमारत इस संस्थान के लिए देने की घोषणा की।

अपनी टाँग कटने के ठीक पाँच वर्ष बाद रोमुलो ने सन् १९६० में लाजयान नामक स्थान में रिहैबिलिटेशन—ऐसोसियेशन संस्थान का उद्घाटन किया। जैसे ही इस संस्थान की स्थापना का समाचार फैला, देश के कोने-कोने से अपंग लोग आने लगे। संस्थान में केवल चालीस व्यक्तियों के ठहरने का ही प्रबन्ध था परन्तु आगन्तुक अपंगों की संख्या कम से कम हजार तक पहुँच चुकी थी। विवशता भरी लाचारी के कारण वे सब शहर में ही ठहरते थे। यह देखकर श्रीमती रोमुलो को बड़ी व्यथा हुई और उन्होंने एक अतिथि-गृह का निर्माण करवा दिया। असमर्थ मानव परमात्मा की सेवा का लाभ मिल सके, इसलिए श्रीमती रोमुलो ने अतिथि-गृह में अपंगों की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वयं ही परिचर्या करना शुरू कर दिया। कुछ दिनों के बाद सेवाभावी स्त्रियों का एक स्वयंसेविका दल श्रीमती रोमुलो के नेतृत्व में गठित कर लिया गया।

संस्थान की ओर से यह सार्वजनिक घोषणा कर दी गयी कि जहाँ कहीं भी कोई अपंग किसी को भी दीख पड़े, उसे तुरन्त संस्थान तक पहुँचाने का प्रयत्न करें। संस्थान में ऐसी व्यवस्था है कि अपंग व्यक्ति स्वयं ही बिना किसी की सहायता लिए सामान्य लोगों की तरह अपना दैनन्दिन जीवन व्यतीत कर सके तथा निर्वाह के लिए दूसरों पर निर्भर भी न रहना पड़े।

रोमुलो के इस संस्थान ने अपंग लोगों में नवजीवन का संचार किया है। इसमें से ही एक भूतपूर्व शिक्षक हेरीबरतो कास्त्रों की कहानी बहुत ही हृदय-द्रावक है। बचपन में ही एक दुर्घटना में उसके दोनों हाथ और दोनों पाँव नष्ट हो चुके थे। उसके कई वर्ष बाद अपने फार्म पर जब उसने रोमुलो के इस संस्थान के बारे में सुना तो आशा की एक क्षीण रेखा दीख पड़ी और मैक्सिको आया। उसके माता-पिता ने कास्त्रों के सम्बन्ध में आवेदन भेजा और उसे संस्थान में भरती कर दिया। कास्त्रों को कृत्रिम अंग लगा दिये गये और वह शीघ्र ही बिना किसी की सहायता के चलने-फिरने लगा। इन कृत्रिम अंगों से वह अन्य सामान्य लोगों की तरह चलने लगा। संस्थान में ही सेरानो प्रशिक्षण लेकर वहाँ शिक्षक भी हो गया और अपने कृत्रिम हाथों से ही टाइपिंग सीखकर कुशल टाइपिस्ट बन गया। उसके साहस और कौशल ने रोमुलो को बड़ा प्रभावित किया। उसने सेरानो को नगर के जकाते ऑफ यूनिवर्सिटी में भर्ती करवा दिया। प्राकृतिक अंगों से विहीन अपंग सेरानो ने अपने कृत्रिम अंगों से भी इतनी योग्यता अर्जित कर ली, जितनी कि समर्थ व्यक्ति भी नहीं कर पाते।

प्राय: लोकसेवी संस्थाएँ दान और चन्दे पर चलती हैं। रोमुलो ने इस परम्परा तो तोड़कर संस्थान को एक स्वावलम्बी आधार दिया। यद्यपि संस्थान में अपंगों से किसी भी प्रकार का चिकित्सा शुल्क नहीं लिया जाता फिर संस्थान को आर्थिक आत्म-निर्भरता प्रदान करने के लिए रोमुलो ने कृत्रिम अंग बनाने का एक कारखाना खोल दिया है तथा जब रोमुलो ने देखा कि पूरे मैक्सिको में कार-रेडियो बनाने का कोई कारखाना नहीं है तो अमेरिका की बेडिक्स कम्पनी से एक समझौता किया। जिसके अनुसार बेडिक्स ने संस्थान के कुछ कार्यकर्त्ताओं को कार-रेडियो बनाने का प्रशिक्षिण दिया। इन प्रशिक्षित कार्यकर्त्ताओं ने अपंग-रोगियों को प्रशिक्षण दिया। इस योजना के सफल होने पर संस्थान प्रति वर्ष एक हजार से भी अधिक कार-रेडियो तैयार करने लगी।

डान रोमुलो के इस संस्थान की सबसे बड़ी विशेषता यह रही है कि आज तक किसी भी अपंग रोगी को निराश कर नहीं लौटाया गया। जो भी कोई आया, अपनी आशा के अनुरूप लाभ उठाकर और उससे भी अधिक योग्य बनकर वापस गया। यहाँ तक कि किसी दुर्घटना में जिन लोगों का चेहरा कुरूप या विकृत हो चुका होता है, उनके लिए संस्थान ने एक अलग विभाग, जो सौन्दर्य प्रसाधन विभाग के नाम से सक्रिय है, खोला है। जहाँ प्लास्टिक कान, नाक, हाथ आदि लगाये जाते हैं और आकार की दृष्टि से मनोनुकूल उपयुक्त उपकरण तैयार किये जाते हैं। इस विभाग के पीछे रोमुलो का यह विचार मूल सिद्धान्त है कि रूप और सौन्दर्य का अपना मनोवैज्ञानिक महत्त्व है। व्यक्ति को उत्साही और साहसी बनाने के लिए सुन्दरता भी एक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है।

संस्थान के व्यावसायिक प्रशिक्षण विभाग, विद्युत यन्त्रों से लेकर घड़ीसाजी, टाइपिंग, टाइपराइटर सुधारने की कला, सिलाई और मोचीगिरी तक का प्रशिक्षण दिया जाता है। रोगी बच्चे तो अपनी चिकित्सा के दौरान स्कूल पढ़ने भी जाया करते हैं। इस प्रकार रोमुलो का रिहैबिलिटेशन एसोसियेशन अपने ढंग का एक अनूठा और अद्वितीय चिकित्सा संस्थान है। जिसकी कार्य-पद्धति स्वयं रोमुलो ने अपने ऊपर किये गये प्रयोगों के आधार पर निर्धारित की।

डान रोमुलो अपनी कृत्रिम टाँग के माध्यम से कूद-फाँद लेता है, दौड़ सकता है। उसे देखकर यह अनुमान लगाया जा सकना असम्भव प्राय: है कि यह व्यक्ति प्रकृति और नियति से अभिशाप लेते हुए भी स्वयं के साहस और श्रम के बल पर अपने भाग्य पर विजयी हुआ।

डान रोमुलो अभी भी अठारह घण्टे श्रमरत हैं। यद्यपि उनका पुनर्वास संस्थान पर्याप्त रूप से लोकसेवा कर रहा है। परन्तु रोमुलो को इतने मात्र से ही सन्तोष नहीं है। वस्तुत: महत्त्वाकांक्षी व्यक्ति का सन्तुष्ट हो जाना प्रगति में बाधक ही है। ज्यों-ज्यों वह अपनी उपलब्धियों से असन्तुष्ट होता है, विकास-पथ पर आगे बढ़ने की लगन उसी तीव्रता से बढ़ती चलेगी। रोमुलो का एक सपना है कि इस प्रकार के पुनर्वास संस्थान सारे विश्व के कोने-कोने में स्थापित किये जायँ, जिनसे विकलांग और अंगहीन लोगों के जीवन में नये प्रभात का प्रकाश फैल सके।

स्थूल रूप से ईश्वर पूजा के लिए कोई क्रियाकांण्ड ही अपनाते रहने की अपेक्षा साकार ईश्वर मानवता की सेवा शुश्रूषा उनकी श्रेष्ठ उपासना है।

प्रगति में लगन का योगदान

किन्हीं-किन्हीं बच्चों में छोटी आयु से ही पढ़ने में असाधारण रुचि होती है। जो वे पढ़ते हैं वह याद भी हो जाता है और भविष्य में भी चिरकाल तक स्मरण बना रहता है। ऐसे बच्चे परीक्षाओं में साथियों की तुलना में अधिक जल्दी उत्तीर्ण होते जाते हैं और अपनी प्रतिभा से सम्पर्क में आने वाले सभी को प्रभावित करते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन दिनों आयु का भी बन्धन है पर कुछ शताब्दियों पूर्व ऐसा बन्धन नहीं था। प्रतिभा और योग्यता की कसौटी पर खरे उतरने वाले पदाधिकारी बना दिये जाते थे चाहे उनकी आयु कम ही क्यों न हो। जो स्वयं पढ़ने के अतिरिक्त दूसरों को भी पढ़ाने की क्षमता प्रदर्शित करता था, वह बिना रोक-टोक कम आयु होते हुए भी अध्यापन कार्य करने लगता था।

जिन्हें विद्या में वास्तविक रुचि है, उनका शिक्षाकाल आजीवन चलता है। वे आजीविका उपार्जन भी करते रहते हैं और साथ ही विद्यार्थियों की भाँति आगे का शिक्षण कार्य भी जारी रखते हैं। ऐसों को ही उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँचने का अवसर मिलता है।

शिक्षा में अभिरुचि का असाधारण स्तर का होना पूर्व जन्मों के संचित संस्कारों का भी प्रतिफल है।

जिन्हें विद्याध्ययन में रस आने लगता है, उनके लिए उस क्षुधा पूर्ति करते रहना एक प्रिय विषय बन जाता है। उसी तरह जिस तरह कि व्यसनी अपने शौक चाव की पूर्ति को ही एक बड़ी उपलब्धि मानकर उसके लिए किसी भी प्रकार समय निकाल लेते हैं और तन्मयतापूर्वक बिना ऊबे, उकताये अपनी गतिविधियों को निरन्तर जारी रखते हैं।

इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध रोज पब्लिक स्कूल में जब फिलिप हैरंग्टम हैडमास्टर बने, तब वे पूरे १८ वर्ष के भी नहीं होने पाये थे। वे व्यवस्था बड़ी कुशलतापूर्वक चलाते थे और साथ ही विद्यार्थियों को पढ़ाते भी थे। इसके अतिरिक्त उनने आगे की अपनी पढ़ाई भी जारी रखा।

अरकन्सास के एक असाधारण विद्वान और प्रबन्धक अपने जीवन-काल में पाँच कालेजों के अध्यक्ष रहे और उन्हें आजीवन व्यवस्थापूर्वक चलाते रहे।

केन्टुकी लेबनान का एक प्रतिभाशाली बालक १४ वर्ष की आयु में सेन्ट मेरीज कालेज की उच्च कक्षाओं को गणित पढ़ाने वाला अध्यापक नियुक्त हुआ। बिना किसी की सहायता के वह अपनी प्रतिभा के बल पर ऊँचा उठता गया और वाल्टीमोर का आर्क बिशप बना।

सन् १९०० में रदरफोर्ड कालेज से चार्ल्स वीबर सर्वोच्च परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ। वह प्रतिभाशाली छात्र उसी वर्ष कालेज का अध्यक्ष भी चुन लिया गया।

शिकागो विश्वविद्यालय के संस्थापक विलियम रैनेहायर ने हाईस्कूल परीक्षा उत्तीर्ण करके मरकिंगम कालेज में प्रवेश पा लिया था। वे प्रसिद्ध शिक्षाविद् रूप में प्रख्यात हुए। ९ कालेजों के अध्यापक बनाये। उनका प्रत्येक क्षण शिक्षा सेवा में ही संलग्न रहा।

सन् १६३० में जन्मा एक जर्मन छात्र १६ वर्ष की आयु में यूनानी लेटिन और हिब्रू भाषाओं में कविता लिखने लगा था। तभी वे छपने भी लगी थीं।

आँखें चली जाने और शरीर को लकवा मार जाने के बाद फ्रांसीसी इतिहासकार अगास्टि ने मुँह से बोलकर और दूसरों से लिखवाकर इतिहास के अत्यन्त सम्पादित २८ ग्रन्थ लिखाये।

अँग्रेजी उपन्यासकार चार्लोट योन्ज ७ वर्ष की आयु से एक रविवासरीय स्कूल में धर्मशिक्षा लेने जाया करता था। बड़ा होने पर उसने उसी स्कूल में पढ़ाना शुरू किया और ७१ वर्ष की आयु तक उस व्रत को निवाहा।

वोडोइन कालेज के अध्यापक एल्फ्रुअस लगातार ६६ वर्ष तक अध्यापक का काम करते रहे। रिटायर होने के नियमों को उन्होंने स्वीकार नहीं किया। बिना वेतन लिए भी वे मरण तक अध्यापन करते रहे।

बेंजामिन शुल्ज को १०० विदेशी भाषाएँ आती थीं। उसने आजीवन उन भाषाओं में बाइबिल का अनुवाद किया। शुल्ज की मृत्यु १७६० में हुई।

एम्बडन की अध्यापिका ओजियन्स को नये स्कूल खोलने की भारी लगन थी। उसने ३० वर्षों तक पढ़ाया। प्रथम वर्ष स्वयं ही संचालिका और अध्यापिका रही। इस प्रकार उसे ३० स्कूलों की संस्थापिका और प्रधानाध्यापिका रहने का गौरव प्राप्त हुआ।

जहाँ तक प्रकाशन का सम्बन्ध है, पहला नम्बर बाइबिल का है। बाइबिल और उसके अन्यान्य हिस्से १७३५ भाषाओं में अनुदित हुए। १८७५ से १९७५ के बीच इसकी २५० करोड़ प्रतियाँ छपीं। इसके बाद दूसरी पुस्तक चीन के अधिनायक माओ लिखित 'लाल किताब' का नम्बर आता है जो अब तक १०० करोड़ बिकी या वितरित हुई। यह किसी एक व्यक्ति ने नहीं किया पर यह भी एक समूह की लगन का परिणाम है।

इस प्रकार की विद्या, लगन और प्रतिभा कोई भी अर्जित कर सकता है। शर्त एक ही है कि अपने विषय में समूची तन्मयता और तत्परता को नियोजित कर दिया जाय और अपने विषय में रस आने लगे।

शिक्षा की ही भाँति चिकित्सा भी जनसेवा का कार्य है। उसमें दूसरों का स्वास्थ्य सुधारने के अतिरिक्त अपने स्वास्थ्य की साज-सम्भाल रखने का भी ध्यान रहता है। ऐसे सेवाभावी चिकित्सक प्रायः दीर्घजीवी पाये जाते हैं और लम्बे समय तक उनका शरीर उस कार्य को करते रहने योग्य बना रहता है।

हारवर्ड विश्वविद्यालय में डाक्टर की डिग्री प्राप्त करने वाला एडवर्ड होलियोक सन् १७२८ में जन्मा और पूरा सौ वर्ष का होकर १८२८ में मरा। उसने ८० वर्ष तक चिकित्सा-कार्य पूरी तत्परता के साथ किया। घर में अस्पताल तक वह ७ मील रोज पैदल चलकर जाता था। गम्भीर आपरेशन करने योग्य उसका शरीर ९० वर्ष की आयु तक बना रहा।

लैग हाम्स (स्काटलैण्ड) का एक डॉक्टर जेम्स पुअट सन् १६५६ में पैदा हुआ और १७७६ में १२०

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वर्ष जीवित रहने के उपरान्त मरा। वह ९५ वर्ष की आयु तक सर्जरी में अपनी निपुणता सिद्ध करता रहा।

इस प्रकार की सफलताएँ भाग्य के ऊपर नहीं, लगन और रुचि के ऊपर निर्भर हैं। इन विशेषताओं को अपने में उत्पन्न करके कोई भी ऐसी ही सराहनीय स्थिति तक पहुँच सकता है।

मानवी क्षमता का कोई पारावार नहीं

वर्तमान ओलम्पिक खेलों के बाद पर्यवेक्षकों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि मानवी प्रगति का कोई अन्त नहीं। पिछले दिनों खेल-कूदों में बाजी मारने, प्रवीणता और पूर्णता के लिए एक सीमा निर्धारित की गई थी और कहा गया था कि मानवी अवयवों की संरचना तथा विकसित प्रयत्नशीलता के सहारे वह अमुक खेल में इतनी क्षमता तक का ही परिचय दे सकता है।

अब उन अनुमानों से बहुत आगे बढ़कर खिलाड़ियों ने कीर्तिमान स्थापित किये हैं। इसी प्रकार शिक्षाशास्त्रियों का अनुमान था कि बच्चों के बौद्धिक विकास-क्रम को देखते हुए कोई प्रतिभाशाली बालक इतनी कक्षाएँ उत्तीर्ण कर सकता है। किन्तु वह अनुमान भी गलत साबित हुए और कितने ही बालकों ने निर्धारित मापदण्ड से कहीं अधिक प्रगति करके दिखाई है।

मध्यकाल में वीरता का मापदण्ड युद्धकौशल रहा है। कोई व्यक्ति शस्त्र चलाने में जितना कौशल दिखा सकता है और परिस्थितियों के प्रतिकूल होते हुए भी कितना साहस दिखा सकता है, इसकी भी एक सीमा निर्धारित की गई थी पर पिछली शताब्दी में आग्नेयास्त्रों का सामना करने और उनके बीच सनसनाते हुए आगे बढ़ते जाने तथा शत्रु के बारूदखाने पर कब्जा करने का नया कीर्तिमान स्थापित किया गया है।

विद्वानों की बिरादरी का कोई भी व्यक्ति कितने ही ग्रन्थों में पारंगत हो सकता है और उसकी स्मरण-शक्ति कितनी तीव्र हो सकती है, इसका अनुमान भूतकाल के सर्वोत्तम समझे जाने वाले विद्वानों की सफलताओं को देखते हुए किया गया था। पर वर्तमान शताब्दी में वे पुरातन निर्धारण टूट गये और यह कहना पड़ा कि मानवी बुद्धि की कोई सीमा निर्धारित नहीं हो सकती।

विज्ञान, अन्वेषण, समीक्षा के क्षेत्रों में मानवी आयुष्य को देखते हुए कितनी सफलता सम्भव है, इस पुरातन आधार का अब व्यतिरेक कर दिया गया है और समझा गया है कि मनुष्य की प्रतिभा का कोई अन्त नहीं। इच्छाशक्ति की तीव्रता और निरन्तर अभ्यास के सहारे मनुष्य कितना आगे बढ़ सकता है, इसकी कोई सीमा निर्धारित नहीं की जा सकती। मनुष्य असीम है उसकी प्रगति और सफलता के सम्बन्ध में यह नहीं कहा जा सकता कि भूतकाल में जो अधिक से अधिक हो सकता है, भविष्य में उससे बढ़कर नहीं हो सकता।

किस क्षेत्र में मनुष्य किस सीमा तक आगे बढ़ सकता है और अपने कर्त्तव्य को कहाँ तक अग्रगामी बना सकता है ? इस सम्बन्ध में कुछ सीमा बन्धन नहीं बाँधा जा सकता। कोई रिकार्ड बुक नहीं बनाई जा सकती कि यही अन्तिम है। मनुष्य की क्षमता असीम है। पर वह विकसित तभी होती है जब मनुष्य अपने संकल्प और प्रयास को ऊँचा उठाता चले। उसके उत्साह और साहस में कमी न पड़े।

दूसरों के लिए आदर्शवादिता का अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत करने में भूतकाल के त्यागी-तपस्वी ही चरमोत्कर्ष का स्पर्श करते रहे हैं, उससे आगे बढ़ने और अपने को महान सिद्ध करने की अब अधिक गुंजायश नहीं रही यह सोचना व्यर्थ है। स्वयं को कठिनाई में डालकर दूसरों की सेवा-साधना में निरत रहने वाले वर्तमान उदाहरण यही बताते हैं।

जहाँ साधनहीनों ने अपने सद्गुणों और श्रेष्ठता सिद्ध करने वाले प्रयासों के आधार पर उन्नति के उच्च शिखर तक पहुँचने में सफलता प्राप्त की है। वहाँ ऐसे लोग भी कम नहीं हैं, जिन्हें सब प्रकार की सुविधा, अनुकूलता होते हुए भी अपने आलस्य, प्रमाद में पूर्वजों की सम्पदा और ख्याति को भी धूलि में मिला दिया और दूसरों की सलाह और सहायता मिलने पर भी पतन पराभव के गर्त में गिरते चले गये। इसीलिए कहा जाता है कि मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है। उसकी सम्भावनाएँ महान हैं।

अध्यवसाय से अर्जित प्रामाणिकता

आगे बढ़ने, ऊँचा उठने, कीर्तिमान स्थापित करने की महात्त्वाकांक्षा उस हद तक सराहनीय भी मानी जाती है और अन्यायों के लिए प्रेरणाप्रद भी बनती है, जब वह नीति-मर्यादाओं के अन्दर रहती है। आतुरता अपनाकर जब लोग बड़े बनने के लिए अनीति का अपवाद अपनाते हैं तो उन प्रगति प्रयासों का स्वरूप अनाचार जैसा बन जाता है। उस तरह अपनाई गई सफलता भी गर्हित मानी जाती है और बड़प्पन लूटने की अभिलाषा को जन-समुदाय की दृष्टि में हेय एवं घृणित बना देती है।

अपने देश में संतोष के उच्च अध्यात्म आदर्श को आलस्य और प्रमाद में परिणित कर लिया जाता है। फलतः उत्कर्ष की प्रगतिशीलता अपनाने के लिए मन में उत्कण्ठा ही नहीं उभरती। उभरती भी है तो उस सन्दर्भ में यह समझा जाता है कि इसके लिए अनीति अपनाना, चालबाजी, धोखेबाजी, बेईमानी का आश्रय लेना अनिवार्य है। वे उसी कुपंथ पर चल पड़ते हैं और इस प्रकार जो कमाते हैं, उसकी तुलना में अपनी बहुमूल्य प्रामाणिकता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गवाँ बैठते हैं। दबाव या प्रलोभन के बिना उस सहयोग को अर्जित नहीं कर सके जो प्रगति का मूलभूत आधार है।

एकाकी व्यक्ति अपने बलबूते एक छोटी सीमा तक ही उत्कर्ष कर सकता है। व्यापार से लेकर लोक-नेतृत्व तक में किसी न किसी प्रकार जन सहयोग की आवश्यकता पड़ती है। यह सम्बन्ध घनिष्ट और भाव भरे होने चाहिए। आत्मीयता और मैत्री का आधार यही है। शिष्टाचार लोकाचार से तो मात्र इतना ही लाभ है कि गाड़ी अपनी लाइन पर चलती रहे, किसी से टकराये नहीं। उसे उस स्तर तक विकसित करना जिससे स्वेच्छा-सहयोग एवं आत्मभाव उभरने लगे; यह अनायास उपलब्ध नहीं होता। इसके लिए आवश्यक तो प्रतिफल लेकर लौटने वाली सेवा सहायता भी चाहिए पर उतना न बन पड़े तो भी इतना तो होना ही चाहिए कि व्यक्ति को कर्मठ और प्रामाणिक समझा जाय। इसकें बिना श्रद्धा नहीं जगती और सहयोग नहीं मिलता।

जिस प्रकार बड़े क्षेत्र में नेतृत्व करने वाले लोगों को जनता का व्यापक समर्थन चाहिए, उसी प्रकार अपने क्षेत्र में जिनसे काम लेना है, जिनकी सहायता करनी पड़ती है, उनकी सद्भावना अर्जित करना न्यूनतम वह कार्य है जो सफलता एवं प्रगति के इच्छुकों को करना ही चाहिए। परिवार को अनुशासित, सुसंस्कारी, प्रगतिशील एवं समुन्नत बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उस परिकर में सद्भावना का स्तर बढ़ा-चढ़ा हो। इसके उपरान्त उन्हें मार्गदर्शन देना, किसी दिशा में मोड़ना सरल पड़ता है। अन्दर दुर्भावनाएँ भरी हों तो सत्परामर्श का भी उपहास उड़ाया जाता है और अनुशासन के शिकंजे में कसने पर विद्रोह खड़ा होता है। परिवार की तरह व्यवसाय, कारोबार, उत्पादन, संगठन आदि के बारे में यही बात है। प्रगतिशीलता के इतिहास में इन्हीं तथ्यों का समावेश है। आकाश से टूटकर अनायास ही सफलता तो किसी विरले को ही मिलती है। जमीन में गड़ा खजाना तो किसी को कदाचित् ही मिलता है।

वैज्ञानिक, विद्वान, पहलवान, धनवान स्तर के लोगों के प्रगतिक्रम का पर्यवेक्षण किया जाय तो उनमें से कदाचित ही कुछ मिलें जो सरलतापूर्वक सस्ती सफलताएँ पा सके हों। उन सभी ने अध्यवसाय का आश्रय लिया है। अपने स्वभाव को मृदुल एवं लगनशील बनाया है। जिम्मेदारियों को समझा है और कठोर परिश्रम नियमित रूप से करने का उपक्रम बनाया है। वैज्ञानिकों, विद्वानों, संगठनों, सृजेताओं में अन्य विशेषताओं की तुलना में यही वर्चस्व बहुलतापूर्वक पाया गया है, जिसमें सफलताओं के पीछे परिष्कृत व्यक्तित्व काम करता हुआ दिखाई देता है।

अमेरिका और योरोप के देशों में कितने ही व्यक्ति ऐसे हैं, जिनकी जन्मजात परिस्थितियाँ गई-गुजरी थीं पर उनकी प्रगति आकांक्षा सही दिशा में चली और सफलता के घेरे में सीमा तक पहुँची। कार्यक्षेत्र कोई भी क्यों न हो, उपलब्धियाँ किसी भी प्रकार की क्यों न हों पर उन सब के मूल में एक ही तथ्य काम करता है—कर्मनिष्ठ उत्तरदायित्वों से भरा साहसी और मधुर जीवन, मिलनसार स्वभाव और आत्मीयता-सद्भावना। इसी आधार पर वे सम्पर्क क्षेत्र के कार्यकर्त्ताओं को विशिष्ट सहयोगी बना सके। उनकी प्रशंसा सहकारिता के आधार पर ऊँचे उठ सके, आगे बढ़ सके।

गत वर्ष अमेरिका के अरबपतियों की गणना हुई। जिनके पास अरबों-खरबों की सम्पदा थी, उनकी संख्या ४०० के लगभग पाई गई। इनमें से मात्र ५ ही ऐसे थे जिन्हें पैतृक सम्पदा के रूप में कुछ काम आरम्भ कर सकने योग्य पूँजी मिली थी। शेष सभी ऐसे थे जिनने गरीबी की स्थिति में जन्म लेते हुए भी अपने सद्गुण बढ़ाये और सम्पर्क में आने वालों को अपनी प्रामाणिकता से प्रभावित करके उनके सहयोग आकर्षित किये। इसी आधार पर उनके व्यवसाय पनपते रहे और बढ़ते रहे।

उपरोक्त ४०० अरबपतियों में ७८ महिलाएँ भी हैं। उनमें से कुछ की शिक्षा तो मैट्रिक से भी कम है। वे धनिकों की पत्नियाँ या बेटियाँ भी नहीं हैं। उनने अपने स्वतन्त्र अध्यवसाय और परिश्रम से प्रगति की। इस मार्ग में सबसे अधिक कारगर हुआ उनका मधुर स्वभाव, प्रामाणिक व्यक्तित्व तथा दृढ़तापूर्वक अपनाया गया आत्मानुशासन।

यह ठीक है कि प्रगति के लिए परिस्थितियों की अनुकूलता भी अपनी महती भूमिका निभाती है। सम्पन्न देशों में फलने-फूलने वाले व्यवसाय आसानी से हाथ लग जाते हैं और उनके गति पकड़ने में देर नहीं लगती। निर्धन देशों की आर्थिक स्थिति ऐसी नहीं है जिसमें सफलतापूर्वक धनी बना जा सके। फिर भी इतना तो निश्चित है कि समृद्धि के सम्बन्ध में अपवाद मानते हुए भी अन्यान्य सभी क्षेत्र ऐसे हैं, जिनमें आसानी से प्रगतिपथ पर बढ़ा जा सकता है। उदाहरणार्थ, स्वास्थ्य और ज्ञान जैसे क्षेत्र ऐसे हैं जिनमें आत्मानुशासन और उत्साह भरा प्रयास ही अनेकानेक उपलब्धियाँ प्रस्तुत कर देता है। कालिदास और बरदराज जैसे जन्मतः मूढ़मति समझे जाने वाले भी जब धुरन्धर विद्वान बन सकते हैं तो कोई कारण नहीं कि मध्यवर्ती मानसिक संरचना के व्यक्ति अध्ययनशील बनकर मन की तत्परता एवं तन्मयता के सहारे आरम्भिक स्थिति की तुलना में असाधारण रूप से प्रगतिशील न बन सकें। यही बात स्वास्थ्य के सम्बन्ध में भी है। सुविधा-साधनों की दृष्टि से गई बीती स्थिति में रहने का व्रत लेकर गान्धी, विनोबा, कबीर और बुद्ध जैसे व्यक्ति भी दीर्घजीवन के अधिकारी बन सके।

वैज्ञानिकों में से कितने ही ऐसे हैं जिन्हें पिता की प्रयोगशाला या खोज के लिए आवश्यक पूँजी नहीं मिली

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फिर भी वे अपनी आकांक्षा के अनुरूप वातावरण एवं सहयोग प्राप्त कर सके और ऐसे आविष्कार कर सकने में सफल हुए, जिनकी परिणति पर संसार भर को चकित होना पड़ा है। यह लगनशीलता और प्रमाणिकता ही है जो किसी को भी प्रगतिपथ पर आगे बढ़ाने में संमर्थ होती है।

संकल्पशक्ति ही पहुँचाती है साधक को लक्ष्य तक

आत्मिक प्रगति का द्वार जिन दो कपाटों में बन्द रहता है, उनमें से एक का नाम है ललक तथा दूसरे का नाम है लिप्सा। ललक अर्थात् जिव्हा का चटोरापन और लिप्सा से तात्पर्य है, मन पर छाई रहने वाली कामुकता। यही दोनों मिलकर शरीर को जीर्ण-शीर्ण बना देती हैं और असमय ही अकाल मृत्यु मरने के लिये बाधित करती हैं। इन्हीं के कारण मनुष्य अनेक प्रकार के साधनापरक योगाभ्यास करते रहने पर भी सफल नहीं हो पाता। फूटे बर्तन में दूध दुहने पर भी वह नीचे ही टपकता रहता है और दुहने वाले का दुधारू पशु पालने का प्रयास निरर्थक चला जाता है। जो इन छिद्रों को जिस सीमा तक बन्द कर पाता है, उसका बर्तन साधना की कामधेनु के दूध से भरा-पूरा पाया जाता है।

अध्यात्म प्रयोजन में पग-पग पर संकल्पशक्ति के प्रयोग की आवश्यकता पड़ती है। दुनिया के प्रवाह से, प्रलोभनों और दबावों से निरन्तर टकराना पड़ता है। यदि वैसा साहस, पुरुषार्थ मनोबल न हो तो जन्म-जन्मातरों के संचित कुसंस्कार और इस जन्म के अवांछनीय अभ्यास बार-बार समुद्री लहरों की तरह उफनने लगते हैं और तटवर्ती बालू की दीवार को देखते-देखते बहा ले जाते हैं। संसार का प्रचलन भी अनौखा है। अधिकांश व्यक्ति लोभ, मोह और अहंकार में ग्रसित पाये जाते हैं। इन प्रयोजनों की पूर्ति में उन्हें रस भी आता है और हर्ष, दर्प और गर्व का अनुभव भी होता है।

साधना मार्ग में विघ्न आने की चर्चा प्रायः होती रहती है। आसुरी शक्तियाँ उसे गिराने का प्रयत्न करती हैं। कोई साधक सिद्धावस्था तक पहुँचना चाहता है तो अनेक यक्ष-गन्धर्व अनेकों रूप बनाकर उसे डराने या लुभाने का प्रयत्न करते हैं। इसी समुदाय ने मेनका भेज कर विश्वामित्र का तप खण्डित कर दिया था। इन्द्र को अपना इन्द्रासन छिनने के भय से अनेक तपस्वियों का, याज्ञिकों का प्रयास नष्ट करने की सूझती है। दक्ष का यज्ञ इन्द्र के ऐसे ही षड्यन्त्रों से भंग हुआ था।

भगवान कृष्ण को जन्म से ही पूतना, तृणावर्त, वृत्रासुर, अघासुर, कालियानाग, कंस आदि नष्ट करने पर उतारू थे। राम को भी बचपन में ही ताड़का, सुबाहु, मारीच से जूझना पड़ा था। पतंगा दीपक को बुझाने के लिये उस पर टूट पड़ता है और अपने प्राण होम देता है। इस संसार का भी यही प्रचलन है। अधिकांश अनाचारी इस संसार में भरे पड़े हैं। वे नहीं चाहते कि धर्म पक्ष बलवान हो, इसलिये उन्हें लुभाने, डराने, गिराने के लिये जो कुछ संभव होता है वे करते हैं। इस समुदाय में निकटवर्ती मित्र-सम्बन्धी भी सम्मिलित हो जाते हैं और संसार की राह पर चलने में ही भलाई समझते हैं। ये लोग आदर्शवाद के मार्ग पर चलने वालों को, खतरों को इतना बढ़ा-चढ़ा कर बताते हैं, मानो किसी आत्महत्या करने वाले को रोकने में अपनी समूची बुद्धिमत्ता दाँव पर लगा रहे हों। साधक प्रहलाद की तरह अकेला होता है और उसे रोकने के लिये हिरण्यकश्यप का समूचा समुदाय सामने खड़ा होता है। ऐसी स्थिति में साधक किस अवलम्बन के सहारे खड़ा रह सके और समस्त प्रतिपक्षियों के साथ कैसे लोहा ले सके, यह एक टेढ़ी खीर है। इससे जूझने के लिये उसके पास एक ही शस्त्र होता है मनोबल का, संकल्पशक्ति का अक्षय भण्डार। इस क्षमता को कैसे अर्जित किया जाय ? यह एक टेढ़ा प्रश्न है। यदि इस नाव का आश्रय न मिला तो भँवरों वाली, ग्राहों वाली इस वैतरणी से पार होना मुश्किल है। साधक असमंजस में, संकोच में पड़ा, तो समझना चाहिये कि उसका आरम्भ किया प्रयास निरर्थक गया।

गीताकार ने योगी की उस मनःस्थिति को समझते हुये उनकी उपेक्षा करने और अपने मार्ग पर चट्टान की तरह दृढ़ रहने का परामर्श दिया है। कहा है कि "दुनिया जब सोती है तब योगी जागता है और जब योगी जागता है तब दुनिया सोती है। दुनिया के लिये जो रात है, वही योगी का दिन है और जो लोगों का दिन है, वह योगी की रात है।" इसका तात्पर्य यह हुआ कि अध्यात्म मार्ग के साधक को सिद्धियों का टीला लूटे जाने का सुयोग नहीं मिलता वरन् उसे मोर्चे पर डटकर जूझना पड़ता है।

गीता की संरचना उसी रहस्यवाद को उदाहरण देते हुये समझाने के लिये हुई है। एक ओर राम का उदाहरण है, जिसमें उनने भाई के लिये सब कुछ त्यागना अंगीकार किया, दूसरी ओर महाभारत का कथानक है जिसमें अर्जुन के अनिच्छा व्यक्त करने पर भी कृष्ण द्वारा उसे लड़ने के लिये विवश-बाधित किया जाता है। इस असमंजस का समाधान लोकाचार की दृष्टि से नहीं, आध्यात्मिक रहस्यवाद की दृष्टि से ही होता है। अपने संचित कुसंस्कारी स्वभाव तथा मित्र-सम्बन्धियों के परिकर से आदर्शवाद के मोर्चे पर जूझना पड़ता है।

प्रत्यक्षतः आदर्शवाद अपनाने में अध्यात्म मार्ग पर चलने में घाटा ही घाटा दीखता है। भले ही अन्ततः उसमें असीम लाभ की ही संभावना क्यों न हो। इसी प्रकार अवांछनीयता अपना कर तुरन्त लाभ उठाने की बात

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दीखती है, पर अन्ततः उसमें इतना अधिक घाटा है जिसकी क्षतिपूर्ति किसी भी प्रकार नहीं हो सकती। अर्जुन को कृष्ण ने इसी आन्तरिक विग्रह में उतारा था। यही महाभारत है। इसमें अपनों के साथ ही लड़ना पड़ता है। अपनों अर्थात् अपने स्वभाव, व्यक्तित्व, परिवार एवं सम्पर्क क्षेत्र से, उनमें से किसी के साथ भी जो अनीतिपूर्वक समझौता करने से इन्कार कर देता है, और प्राण हथेली पर रखकर धर्म क्षेत्र में उतरता है, वही सच्चा कृष्णभक्त और सखा है। जो निर्देश-अनुकरण से दूर रहे और चन्दन पुष्प चढ़ाकर अपनी भक्ति-भावना का दावा करे, उसका छद्म ऐसा है जो न आत्मा को प्रभावित करता है और न परमात्मा को।

पहले निषेधात्मक तत्त्वों से जूझना पड़ता है, उसके उपरान्त विधेयात्मक क्रिया-कलापों का अवलम्बन बन पड़ता है। पहले 'ना' कहने की हिम्मत अर्जित करनी पड़ती है, पीछे 'हाँ' कहने का संकल्प निभता है। आत्मा में परमात्मा की ज्योति प्रज्ज्वलित करने के लिये जिस तेल की जरूरत पड़ती है, वह तिलहन को कोल्हू में पेलने के उपरान्त ही निकलता है।

इन्द्रिय निग्रह संकल्प शक्ति बढ़ाने का सर्वसुलभ और सर्वप्रथम प्रयोग है। इसके उपरान्त या साथ-साथ कुछ और संयमों को भी अपनाना पड़ता है। वे हैं—अर्थसंयम, समयसंयम, विचारसंयम। यदि ध्यान दिया जाय तो प्रतीत होगा कि कितने आवश्यक एवं उपयोगी काम आर्थिक अभाव के कारण रुके पड़े रहते हैं और कितने ऐसे हैं जो निरर्थक होते हुये भी हेय प्रयोजनों की पूर्ति के निमित्त ढेरों पैसा खर्च करा लेते हैं। हमें कृपण की तरह एक-एक पाई बचानी चाहिये और उदारतापूर्वक सत् प्रयोजनों में लगानी चाहिये। इस नीति को अपनाने में भी अपनी आदतों और सम्बन्धियों से लड़ना पड़ सकता है। हमें उस मोर्चे पर भी मजबूती से अड़े रहना चाहिये, पलायन नहीं करना चाहिये।

इससे भी बढ़कर समयसंयम है। समय ही जीवन है। घड़ियों के घटकों से ही मिलकर जीवन मिला है। यदि उन्हें बरबाद करते रहा जाय तो जिन्दगी लाश ढोने भर की बात बन पड़ती है। उसमें कोई उपयोगी कार्य नहीं हो सकता। जिन महामानवों ने अधिक महत्त्वपूर्ण कार्य किये हैं, उनमें से प्रायः सभी ने अपने समय का एक-एक क्षण हीरे मोतियों की तरह सँभाला-सँजोया है, और वे गई-गुजरी परिस्थिति में रहते हुये भी तेजी से बढ़े हैं और कहीं-से-कहीं पहुँचे हैं। जिनने समय गँवाया, वे रोते-चिल्लाते और हाथ मलते ही रह गये हैं।

समय की ही तरह विचारों की सम्पदा है। जो उन्हें अस्तव्यस्त कल्पनाओं में खर्च कर डालते हैं—असंयत, अनुपयुक्त और असंभव कल्पनाओं में उलझे रहने वाले शेखचिल्ली की तरह बिना पंखों की उड़ानें उड़ने में गर्वाँ देते हैं या चिन्ता, उद्वेग, आवेश, निराशा, ईर्षा, द्वेष आदि अचिन्त्यचिन्तन में बरबाद कर देते हैं, इसके स्थान पर वे विचार यदि रचनात्मक कार्यों में प्रयुक्त किये जायँ तो व्यक्ति साहित्यकार, वैज्ञानिक, कलाकार, दार्शनिक आदि बन सकते हैं व अपनी प्रतिभा में चार चाँद लगा सकते हैं। कालिदास, वरदराज के नाम ऐसे ही हैं, जिनने विद्या की ओर से उपेक्षा की तो अनपढ़-अनगढ़ बने रहे, पर जब उनने अपने विचारों का केन्द्रीकरण संकल्पपूर्वक विद्याध्यन के लिये किया तो ऐसे बदले कि चमत्कार ही हो गया।

आध्यात्मिक साधनाओं में संकल्पशक्ति का समग्र नियोजन ही सफलता का एकमात्र कारण है। कर्मकाण्ड तो श्रृंगार मात्र है। कर्मकाण्ड औंधी-तिरछी रीति में करते रहा जाय, पर संकल्प, दृढ़ निश्चय और भावनाओं का समावेश न हो तो उस लकीर के पीटने से कुछ भी नहीं बनने वाला है। इसलिये हमें अपनी संकल्पशक्ति को भीतरी और बाहरी अवांछनीयता के विरुद्ध प्रयुक्त करके तीखी बनानी चाहिये, इसके बाद साधनाओं की सफलता में संदेह नहीं रह जाता।

साधक की तन्मयता

महान चित्रकार **आगस्टी केन्वायर** जितने अधिक वृद्ध होते गये, उतना ही उनका कला-प्रेम बढ़ता गया। युवावस्था में वे एक अच्छे चित्रकार थे। उनकी रोजी-रोटी उसी से चलती थी, पर दुर्भाग्य से यह न देखा गया। उनके हाथ-पैरों में गठिया की शिकायत आरम्भ हुई और इतनी बढ़ी कि पैरों ने दो कदम चलने से भी इन्कार कर दिया। पहियेदार कुर्सी के सहारे ही वे घर के एक कोने से दूसरे कोने तक खाने, सोने जैसी दैनिक आवश्यकताएँ पूरी करने जा सकते थे। हाथों का यह हाल हो गया कि बुश पकड़ना उँगलियों के लिए कठिन हो गया। तब वे उँगलियों के साथ रस्सी से बुश बाँध लेते और चित्रकारी में तन्मय रहते।

यों दर्द उन्हें चौबीस घण्टे बना रहता था। कई बार वह इतना बढ़ जाता कि पहियेदार कुर्सी से उतरने और चढ़ने का अवसर आने पर उन्हें कराहना पड़ता। बुश को रंग की प्लेट तक ले जाने, डुबाने और उठाने में कई बार उँगलियों में बेतरह कसक होती और वे उसे जहाँ की तहाँ रखने के लिए मजबूर हो जाते। थोड़ा चैन मिलने पर ही हाथ उठता, पर चित्रकला की उनकी तन्मयता में इससे भी कुछ अन्तर न आया।

अपंग कलासाधक की लगन और कला देखने के लिये दूर-दूर से नौसिखिये चित्रकार उनके पास आया करते थे और उस सन्दर्भ में गूढ़ प्रश्न पूछते थे। एक प्रश्न यह तो होता ही था, सत्तर वर्ष से अधिक आयु हो जाने के कारण जरा-जीर्णता और रुग्णता के रहते हुए भी वे किस प्रकार अपने प्रयास में इतने दत्तचित्त रह पाते हैं ? उत्तर में वे नये कलाकारों को अपनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मन:स्थिति का सार बताते हुए यही कहते—यदि कोई कलाकार अपनी कृति और प्रगति को देखकर सन्तोष कर बैठे या अहंकार करने लगे तो समझना चाहिए उसके विकास का अन्त हो गया। प्रगति का एक ही मार्ग है—अकल्पनीय प्रगति तक पहुँचने की उत्कट आकांक्षा और उसके लिए मजदूर जैसी कठोर श्रम-साधना। जिसने थोड़ी सफलता पर अहंकार व्यक्त किया समझ लो वह मारा गया। प्रगति तो अनन्त है इसलिये उसकी साधना भी असीम ही होनी चाहिए।

७८ वर्ष की आयु में जबकि आगस्टी केन्वायर बहुत अधिक वृद्ध हो गये थे और बीमारी ने उन्हें नर-कंकाल मात्र बना दिया था तो भी उन्होंने अपनी कला-साधना छोड़ी नहीं। फेफड़ों की खाँसी बेतरह तंग करती थी और लगता था कि वे अब महाप्रयाण करने ही वाले हैं तो भी उन्होंने अपनी साधना छोड़ी नहीं। अन्तिम दिनों वे महिला मित्र नामक अत्यन्त कला-पूर्ण चित्र बनाने में निमग्न थे और अपने बेटे की मेज पर रखने के लिए एक गुलदस्ता चित्रित कर रहे थे।

डाक्टरों ने पूर्ण विश्राम के लिए कहा तो उन्होंने एक ही उत्तर दिया—कुछ न करने की, कुछ न सोचने की बात मेरी प्रकृति स्वीकार ही न कर पायेगी। अन्तिम दिन उन्हें साँस का ऐसा विकट दौरा पड़ा जो उन्हें साथ लिए बिना गया ही नहीं। वे फर्श पर बेहोश होकर गिर पड़े, वे होश में आये तो गृहसेविका लूसी ने पूछा अब आपकी तबियत कैसी है ? तो उन्होंने तबियत का मतलब अपनी कला-साधना से समझा और बुझती हुई आँखों को नये सिरे से चमकाते हुए कहा—लूसी मैं समझता हूँ कि चित्रकला के बारे में अब कुछ-कुछ समझ सकने योग्य हो चला। इसके बाद उन्होंने सदा के लिए आँखें बन्द कर लीं।

समग्र सफलताओं का मूलभूत आधार

ईसामसीह ने अपने शिष्यों को उपदेश देते हुए कहा है, "जो द्वार खटखटायेगा उसके लिए दरवाजा खोला जायगा और जो माँगेगा वह दिया जायगा।" इस उक्ति में आध्यात्मिक और भौतिक जीवन के, सम्पूर्ण क्षेत्रों में सफलता प्राप्त करने का अचूक रहस्य उद्घाटित किया गया है। सफलता का द्वार खटखटाने का अर्थ है, उसे प्राप्त करने का दृढ़ संकल्प और माँगने पर मिलने का अर्थ पूरी शक्ति के साथ अपनी शक्तियों का उपयोग। स्मरणीय है कि सफलताएँ भौतिक हों अथवा आध्यात्मिक, उन्हें प्राप्त करने के लिए कोई बाहरी साधनों की आवश्यकता नहीं पड़ती। मूल आवश्यकता तो अपनी आन्तरिक शक्तियों को जाग्रत करने तथा उन्हें सक्रिय बनाने की होती है। बाहरी साधन और उपकरण भी आवश्यक होते हैं, पर वे एक सीमा तक ही उपयोगी सिद्ध होते हैं। यदि उनका ठीक प्रकार से उपयोग करने की कला न आती हो, संकल्प, साहस और पुरुषार्थ न किया जाय तो वे साधन एक तरह निरर्थक और व्यर्थ ही सिद्ध होते हैं। मनुष्य जिस प्रकार की इच्छा करता है, हृदय से पूरे प्राण से जो संकल्प करता है, उसी के अनुरूप परिस्थितियाँ उसके निकट एकत्रित होने लगती हैं। इस इच्छा या संकल्प को एक प्रकार का चुम्बक कहा जा सकता है, जिसके आकर्षण से अनुकूल शक्तियाँ खिंची आती हैं। जहाँ गड्ढा होता है वहाँ चारों ओर से वर्षा का पानी बहता हुआ सिमट आता है और गड्ढा भर जाता है। लेकिन जहाँ ऊँचा टीला है। वहाँ भारी वर्षा होने पर भी पानी नहीं ठहरता। इच्छा और संकल्प एक प्रकार का गड्ढा है, जिसमें सब ओर से अनुकूल स्थितियाँ खिंच-खिंचकर चली आती हैं।

प्रश्न उठता है कि सफलता और सुख-शांति की इच्छा तो सभी करते हैं, प्रत्येक व्यक्ति उन्नति करना और आगे बढ़ना चाहता है, फिर सभी की इच्छाएँ पूरी क्यों नहीं होतीं ? इस प्रश्न का समाधान खोजने के लिए एक उदाहरण देना पर्याप्त होगा। पैर में काँटा चुभता है और पीड़ा होती है तो मनुष्य सभी काम छोड़कर अपना पूरा ध्यान उस काँटे को निकालने में लगा देता है। उसे तब तक चैन नहीं आता जब तक कि पैर से काँटा नहीं निकल जाय। इच्छा या आकांक्षा का यही वास्तविक स्वरूप है। सुख-शांति से सभी रहना चाहते हैं, प्रगति और उन्नति करने की आकांक्षा हर कोई करता है, पर कितने व्यक्ति हैं जो इन इच्छाओं को पूरा करने के लिए समग्र तत्परता से प्रयत्न करते हैं। स्पष्ट है कि जिन्हें इच्छा या आकांक्षा कहा जाता है वे सतही स्तर की होती हैं। यदि पूरे मन और प्राण से इच्छा की जाती है, वर्तमान परिस्थितियाँ शूल की तरह चुभती हैं तो उन्हें दूर करने के लिए भी उसी स्तर की तत्परता होनी चाहिए।

इस स्तर की इच्छा जहाँ भी रहेगी वहाँ अभिरुचि, मनोयोग और आवश्यक साधन जुटाने के लिए समस्त शक्तियाँ सक्रिय हो उठेंगी। इसके विपरीत सतही इच्छाएँ तथा आकांक्षाओं की कमी रहने पर विभूतियाँ प्राप्त नहीं हो सकेंगी। स्मरण रखा जाना चाहिए कि मन में जो इच्छा प्रधान रूप से काम करती है, उसे पूरा करने के लिए शरीर की समस्त शक्तियाँ काम करने लगती हैं। निर्णय शक्ति, निरीक्षण शक्ति, आकर्षक, अन्वेषण, चिन्तन और कल्पना आदि मस्तिष्क की सभी शक्तियाँ उसी दिशा में सक्रिय हो जाती हैं और तब एक जीवित चुम्बकत्व तैयार हो जाता है। जिस प्रकार चुम्बक को कूड़े-कचरे में भी फिराया जाय तो धातुओं के इधर-उधर बिखरे हुए टुकड़े उससे चिपक जाते हैं उसी प्रकार विशिष्ट आकांक्षाएँ मन में उत्पन्न होती हैं, तो व्यक्ति की जाग्रत शक्तियाँ उन सभी तथ्यों को ढूँढ़ और प्राप्त कर लेती हैं जो सफलता प्राप्त करने के लिए आवश्यक हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ईसामसीह के उक्त कथन का यही रहस्य है कि खटखटाने पर द्वार खुलता है और माँगने पर मिलता है अर्थात् आकांक्षा उत्कट और बलवती होनी चाहिए। उत्कट और बलवती आकांक्षा मनुष्य में वह तत्परता उत्पन्न करती है जो प्रत्येक क्षेत्र में अवरोधों को चीरती, रुकावटों को हटाती और बाधाओं को मिटाती, अभीष्ट दिशा में बढ़ती जाती है। तत्परता के बल पर ही किसी भी क्षेत्र में सफल हुआ जा सकता है, क्योंकि उसके द्वारा प्रेरित क्रियाशीलता अभीष्ट शक्ति सम्पादित कराती है और यह सुविदित है कि सक्रियता अथवा निरन्तर अभ्यास से पूरे शरीर को या उसके किसी भी अंग को अथवा व्यक्तित्व के किसी भी पक्ष को बलवान बनाया जा सकता है। लुहार का दाहिना हाथ अपेक्षाकृत अधिक मजबूत होता है, क्योंकि अधिक काम में आने के कारण उसकी क्षमता बढ़ी हुई रहती है। पैदल चलने के अभ्यासी लोगों की रगें मजबूत पाई जाती हैं। नफीरी बजाने वालों के गलफड़े-फेफड़े दूसरे लोगों की तुलना में अधिक पुष्ट होते हैं। इसका एकमात्र कारण उन अंगों की क्रियाशीलता ही है।

उत्कट आकांक्षा और तज्जन्य तत्पर क्रियाशीलता के बल पर कितने ही लोगों ने विभिन्न क्षेत्रों में आश्चर्यजनक प्रगति की है। दुबले-पतले शरीर वाले कितने ही लोगों ने बलवान बनने की उत्कट आकांक्षा से प्रेरित होकर व्यायाम, आहार, विहार-संयम, नियम का पालन कर अपने को उच्च श्रेणी का बलवान तथा पहलवान बना लिया। विश्वविख्यात पहलवान सेंडो बचपन में बहुत दुबला-पतला और प्रायः बीमार रहा करता था। परन्तु जब उसमें बलवान बनने की भावना जागी और इसके लिए नियमित रूप से व्यायाम करने के साथ-साथ आहार-विहार का संयम अपनाया तो उसने अपनी पहलवानी की धाक सारे संसार में जमा दी। भारत के माने हुए पहलवान मास्टर चन्दगीराम २१ वर्ष की आयु तक जुकाम, सर्दी, बुखार आदि रोगों से इस बुरी तरह ग्रस्त रहते थे कि उनका शरीर सूखकर काँटा हो गया था। चलते-चलते उन्हें चक्कर आने लगते। किन्तु जब उन्होंने अपना ध्यान शारीरिक बल वृद्धि पर केन्द्रित किया और व्यायाम, कसरत करने लगे तो फिर शरीर का काया-कल्प ही हो गया। ऐसे अगणित उदाहरण हैं जो मनुष्य की उत्कट आकांक्षा, एकाग्रता, लगन और तत्परता के समन्वय द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में आश्चर्यजनक प्रगति के प्रमाण प्रस्तुत करते हैं।

मस्तिष्क की स्मरण शक्ति और बुद्धि की प्रखरता बढ़ाने में इंग्लैण्ड के डब्ल्यू. जे. एम. बाटन की कोई सानी नहीं रखता। इंग्लैण्ड के केंट कस्बे में जन्मा बाटन आरम्भ में इतना मन्दबुद्धि था कि उसे पढ़ी हुई कोई बात याद नहीं रहती। वह कमजोर भी काफी था और कमजोरी, बीमारी के कारण उसे ११ वर्ष की आयु में ही स्कूल छोड़ देना पड़ा। अब मस्तिष्क या बुद्धि के विकास की क्या कल्पना या आशा की जा सकती थी ? लेकिन इस स्थिति में भी बाटन ने अपने पिता की प्रेरणा से मनोरंजन का एक शौक बढ़ाया। वह इधर-उधर की बातें याद कर लेता और उनका स्थान, समय, घटनाक्रम आदि का ठीक-ठीक विवरण बताकर लोगों पर अपनी स्मरण शक्ति का रौब जमाता।

धीरे-धीरे उसने अपनी स्मरण शक्ति को इतना अधिक विकसित कर लिया वह चलता-फिरता विश्वकोश समझा जाने लगा। यह अभ्यास उसने इस लक्ष्य के प्रति गाँठ-बाँधकर किया कि उसे अपनी याददाश्त को बढ़ाना है। पूरी तत्परता के साथ इस दिशा में लगे रहने के बाद उसने अपनी याददाश्त को इतना तेज कर लिया कि उसकी ख्याति चारों दिशाओं में फैलने लगी। एक बार उससे यूरोप के प्रमुख ज्योतिषियों, राजनीतिज्ञों और प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने ऐसी घटनाओं के विवरण पूछे जो विस्मृति के गर्त में गुम गये ही प्रतीत होते थे, पर उसने पूछी गई सारी घटनाओं को सिलसिलेवार सन्, तारीख सहित इस प्रकार बताया कि पूछने वालों को आश्चर्यचकित रह जाना पड़ा। बाटन अपने समय में इतना प्रसिद्ध हो गया था कि उसकी मृत्यु के बाद अमेरिका के एक स्वास्थ्य संस्थान ने उसका सिर १० हजार डालर में खरीदा ताकि उसकी मस्तिष्कीय विलक्षणताओं का रहस्य मालूम किया जा सके।

इच्छाशक्ति का केन्द्रीकरण तथा पूरी तत्परता के साथ प्रयत्नशील रहना ही वह आधार है जिसके बल पर इच्छित उपलब्धियाँ प्राप्त की जा सकती हैं। मनुष्य उन्हीं वस्तुओं अथवा उपलब्धियों को प्राप्त कर सकता है जिनके लिए वह आग्रहपूर्वक प्रयत्न करता है। अगर किसी लक्ष्य विशेष का निर्धारण न कर काम किया जाय तो उनका परिणाम भी शून्य या नगण्य ही रहेगा और कहना नहीं होगा कि लक्ष्य का निर्धारण तभी होता है जब मन में किसी विशिष्ट आकांक्षा का निवास हो और उसे प्राप्त करने के लिए तत्परता के स्तर की व्यग्रता हो। अनेक जीव-जन्तु, कीट-पतंगे फूलों के आसपास घूमते रहते हैं, पर उनमें से केवल मधुमक्खी ही शहद निकालती है, क्योंकि उसे मधु प्राप्त करने की आकांक्षा और व्यग्रता रहती है। इस सम्बन्ध में ब्रिटेन के प्रसिद्ध विचारक **कार्लाइल** का कथन है कि ''एक ही विषय पर अपनी शक्तियों को एकाग्र करने से कमजोर व्यक्ति भी बहुत कुछ कर सकता है, जबकि बलवान व्यक्ति भी यदि अपनी शक्तियों को कई दिशाओं में बिखेर देता है तो वह बलवान होते हुए भी कुछ नहीं कर सकता। एक-एक बूँद पानी अगर एक ही स्थान पर निरन्तर पड़ता रहे तो कड़े-से-कड़े पत्थर में भी छेद हो जाता है लेकिन यदि पानी का बड़ा भारी बहाव उसके ऊपर से शीघ्रतापूर्वक निकल जाय तो उसका नाम-निशान भी उस पर नहीं दिखाई पड़ता।''

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अँग्रेजी भाषा के प्रख्यात साहित्यकार **बुल्वर लिटन** शौकिया तौर पर ही लिखा करते थे लेकिन उन्होंने जो कुछ भी लिखा, वह इतना श्रेष्ठ था कि उसके कारण लिटन की गणना अँग्रेजी के अग्रणी लेखकों में की जाती है। एक बार किसी ने उनसे इसका रहस्य पूछा तो लिटन ने कहा कि, ''मैं कभी शीघ्रतापूर्वक बहुत अधिक काम कर डालने की कोशिश नहीं करता बल्कि उसे उत्तम रीति से करना ही ज्यादा पसन्द करता हूँ। अगर आज अपनी शक्ति से अधिक काम कर डाला जाय तो कल तक थकान आ जायगी और फिर थोड़ा-सा काम भी ठीक ढंग से नहीं हो सकेगा। जब मैंने कालेज छोड़ा और सांसारिक कामों में पड़ा तो उसके पहले वास्तव में मैंने ऐसे कामों का कोई अध्ययन नहीं किया था। लेकिन इसके बाद मैं पढ़ने लगा और मेरा विश्वास है कि मैंने सामान्य लोगों से कम नहीं पढ़ा। मैंने बहुत-सी दूर-दूर देशों की यात्राएँ कीं, राजनीति में भाग लिया और उद्योग-धन्धों में भी समय बिताया। फिर भी साठ से अधिक किताबें लिख डालीं। आपको विश्वास नहीं होगा कि मैंने इस पढ़ने-लिखने में कभी तीन घण्टे से अधिक समय खर्च नहीं किया। लेकिन इन तीन घण्टों में जो भी पढ़ता-लिखता था वह पूरी एकाग्रता, तन्मयता और तत्परता के साथ।''

सफलता का मूलभूत आधार उत्कट इच्छा, तत्पर सक्रियता और क्रियाशीलता ही है। इसके बिना कोई भी व्यक्ति ऊँचा नहीं उठ सका है और कोई उल्लेखनीय सफलता नहीं प्राप्त कर पाया है। तत्परता, तन्मयता, सक्रियता और मनोयोग के मूल में भी उत्कट आकांक्षा ही उत्प्रेरक का काम करती है। यद्यपि सुख-दुःख भली-बुरी परिस्थितियों और उत्थान-पतन का मुख्य कारण मनुष्य का कर्म समझा जाता है। लेकिन कर्म रूपी वृक्ष भी तो विचार और इच्छा रूपी बीज से ही उत्पन्न होता है। इच्छा से प्रेरणा की और प्रेरणा से कर्म की उत्पत्ति होती है।

मनुष्य अपनी आकांक्षा के अनुरूप सोचता है और जैसा वह सोचता है वैसे ही साधन उपलब्ध करता है। जैसे साधन उपलब्ध होते है वैसा ही कर्म वह करने लगता है। जैसे कर्म किये जाते हैं वैसी ही परिस्थितियाँ सामने आ खड़ी होती है और उसी तरह के परिणाम प्रस्तुत करती हैं। इसे भाग्य, कर्मों का फल, किस्मत, चाहे जो नाम दे दिया जाय, पर सचाई यह है कि यह सब अपनी ही इच्छाओं की परिणति और फलश्रुति है। जो चाहा जाता है वही प्राप्त होता है। इसीलिए कहा गया है कि प्रत्येक मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता और तकदीर का लेखक स्वयं है। संसार में जितने भी व्यक्तियों ने सफलताएँ प्राप्त की हैं, उन्होंने अपने प्राप्तव्य के लिए पूरे मन से अभिलाषा की है और वे इस बात के लिए तड़पते, बेचैन होते रहे हैं कि किस प्रकार अपनी अभीष्ट वस्तु प्राप्त की जाय। इस आकांक्षा और तड़प ने ही उन्हें क्रियाशील बनाया तथा समस्त बाधाओं से जूझते हुए, असफलताओं की घड़ी में भी आशान्वित रहते और पराजय के बाद भी नये प्रयत्न करते रहकर अन्त में अपने अभीष्ट को प्राप्त किया। अस्तु, उत्कट आकांक्षा ही एक शब्द में सफलता का मूलभूत आधार कही जा सकती है।

क्या मनुष्य क्रमशः घटता ही चला जायगा

देखा जाता है कि जानवरों की नस्लें जैसी भी हैं, वैसी ही बनी रहती हैं। खुराक या सुविधा के कारण दुबले-मोटे तो हो जाते हैं, पर ऐसा कदाचित् ही किसी जीवधारी में होता है कि अपनी नस्ल की दृष्टि से गिर रहा हो।

यह आश्चर्य मनुष्यों में ही देखने को मिलता है कि उनकी नस्ल क्रमशः छोटी होती जा रही है। कद और वजन की दृष्टि से वह निरन्तर घटता जा रहा है, फलतः उसकी प्रतिभा और क्षमता भी न्यून होती जा रही है। कुछ शताब्दी पूर्व के लोगों पर दृष्टिपात करें तो ज्ञात होगा कि कद, ऊँचाई, वजन, क्षमता, पराक्रम और पुरुषार्थ की दृष्टि से वे अब के लोगों की तुलना में कहीं अधिक समर्थ और बलिष्ठ होते थे। पर आज स्थिति विपरीत नजर आ रही है, क्रम उल्टा हो चला है। लोग हर दृष्टि से कमजोर होते जा रहे हैं। शारीरिक बल तो गँवाया ही, अपनी स्वाभाविक लम्बाई भी खोते चले जा रहे हैं। यदि यह क्रम अविराम चलने लगे तो इसे चिन्ता की बात समझनी चाहिए।

ऐसे अपवादों में कुछ समय पहले लाख के पीछे एक बौना दृष्टिगोचर होता था। अब वह संख्या बढ़ रही है। अब दस हजार के पीछे एक बौना होने लगा है।

बौनों में आमतौर से तीन फुट के बौने पहले देखने में आते थे, पर अब कुछ उदाहरण ऐसे भी सामने आ रहे हैं, जिसमें वे दो फुट से भी कम रह गये हैं। अनुमान लगाया जा सकता है कि उनका पराक्रम कितना कम रह जायेगा और उनका जीवनकाल भी कितना स्वल्प होगा। विश्व में ऐसी घटनाएँ अब बढ़ती जा रही हैं।

मवूत्ती (अफ्रीकी) आदिम जाति के लोग सामान्य ऊँचाई से अब काफी कम के रह गये हैं। पुरुष ४ फुट ७ इंच तथा स्त्रियाँ ४ फुट ३ इंच तक की होती हैं।

अफ्रीका का कांगो प्रदेश तो पूर्ण रूप से बौनों का हो चला है। वहाँ अब ३ फुट से अधिक का कोई विरला ही दीखता है। अब से सौ वर्ष पूर्व वे तीरकमान के सहारे शिकार मार लेते थे। अब वे गुलेल के सहारे पक्षियों पर निर्भर रह गये हैं। लक्षणों को देखने से संभावना और भी अधिक घटने की है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसके अतिरिक्त जहाँ-तहाँ जो बौने पाये जाते हैं, उनका कद और भी घटा हुआ है। ऐसे लोगों को लोग मनुष्य में न मानकर खिलौना समझते हैं और उन्हें उसी दृष्टि से पालते हैं। संसार के कुछ प्रसिद्ध बौनों ने तो घटते-घटते अपनी स्थिति आश्चर्यजनक स्तर तक पहुँचा दी है।

रियलिंग ब्रदर्स के सर्कस में काम करने वाली एक बौनी का कद मात्र २१ इंच था। नाम था—लिया ग्राफ। इसकी सर्वत्र बड़ी धूम थी। हिटलर ने उसे जासूसी के अपराध में गिरफ्तार कर लिया था। किन्तु मृत्युदण्ड से वह बच गयी।

रूसी शासक 'पीटर' के नाम पर बौनों की एक छोटी बस्ती बसायी गई थी। नाम था—'पीटर्सबर्ग'। इसमें प्रावधान ऐसा था कि अत्यन्त छोटे बौने ही रह सकते थे।

कोनी आइलैण्ड में 'लिलीपुट' नाम की कई बस्ती भी ऐसी ही बनी थीं, जो पीछे आग में जलकर नष्ट हो गईं। संभवत: गुलीवर की कहानी की कल्पना का आधार लेखक ने इसे ही बनाया हो। रूस के बादशाह जार ने एक बौने जोड़े की शादी में खुद बहुत दिलचस्पी ली। राजकुमारी की एक बौनी सेविका के लिए उसने खुद वैसा वर ढूँढ़ा और शादी सजधज के साथ की। उनकी औसत ऊँचाई २ फुट ३ इंच थी।

इंग्लैण्ड के जाफरी हडसन ने बौने जासूसों की एक सेना बनायी थी। उसके पास एक ऐसा बौना था जो १६ वर्ष की उम्र में भी ९ इंच का था। महारानी मारिया ने उसे निजी सेवा में रखा। एक मुकदमे में एक बार वह फँस गया। जलयान द्वारा छिपकर भागा, पर समुद्री डाकुओं ने उसे पकड़ लिया और ऊँचे दाम में बेच दिया। फिर इंग्लैण्ड का शाही जासूस बन गया। गिब्सन नामक एक और बौना महारानी मारिया का मुँहलगा बन गया था। इसी प्रकार फ्रांस का नन्दा जासूस रिशबोर्ड जासूसी के बड़े-बड़े कारनामे दिखाता रहा। मैक्सिको की लूरिया जारेस पूर्ण वयस्क होने पर २० इंच की हो सकी। उसका वजन २ कि. २७ ग्रा. तक बढ़ा। शिकागो के एक मेले में सन् १९३३ में तथा न्यूयार्क में हुए १९३९ के विश्व मेले में संसार भर के बौने एकत्रित किये गये थे। इसमें सबसे नन्हा बौना ९ इंच का था। उसकी आयु २० वर्ष थी।

अमरीकी फिल्मी कम्पनियों में काम करने वाले हेरी, टिनी, ग्रेस और डेजी नामक बौने बहुत ख्याति अर्जित कर चुके हैं। साढ़े बत्तीस इंच के मंचू ने भी सर्कस में नाम कमाया था। २ फुट १ इंच के थम्ब और टाम अमेरिका भर का मनोरंजन करते रहे। टाम-थम्ब का बाद में वैसी ही लड़कियों से विवाह भी हो गया था।

हालैण्ड की पार्लिन नामक लड़की जब जन्मी तब २० से. मी. थी। १६ वर्ष की होकर मरी तब तक उसकी लम्बाई ३० से. मी. हो पायी थी तथा वजन डेढ़ कि. ग्रा. था। 'लाइफ' पत्रिका के अनुसार स्पेन के एक बौने की लम्बाई ५० से. मी. थी तथा वजन दो कि. ग्रा.। फ्रांस की एक सर्कस कम्पनी 'लिक फोक्स' के सभी कलाकार बौने थे। कम्पनी ने बड़े प्रयत्नपूर्वक करीब-करीब समान ऊँचाई के ३५ बौने इकट्ठे किये थे। वे अपने आश्चर्यजनक करतबों से दर्शकों का मन मोह लेते थे। एक बार यह प्रदर्शन फ्रांस के तत्कालीन शासक लुई चौदहवें के समक्ष किया गया। राजा उनके कारनामों से बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने बौनों को भरपूर उपहार दिया।

इसी प्रकार रूस की एक सर्कस कम्पनी 'कास्लोव' में एक ढाई फुट का बौना था। वह तरह-तरह से लोगों का मनोरंजन करता था। कम्पनी वालों ने उसकी शादी एक बौनी लड़की से यह सोचकर कर दी कि इसके जो बच्चे होंगे, उससे कम्पनी में बौनों की संख्या बढ़ेगी। जिससे उनके करतबों को देखने के लिए लोगों का आकर्षण भी बढ़ेगा, फलत: कम्पनी की आय बढ़ेगी। दुर्भाग्यवश उनके दो बच्चे हुए भी, पर कोई भी लम्बे समय तक ठहर न सके। वे एक-एक दिन ही जी सके।

पहले के योरोपीय राजाओं को भी बौने पालने का शौक था। वे दूर-दूर से उन्हें एकत्रित कर अपने राजदरबार में रखते थे। रोम सम्राट **आगस्टस** का एक योद्धा मात्र २ फुट ऊँचा था। सम्राट डोमेसियन को भी यह शौक जीवनभर लगा ही रहा। वह उनसे मनोरंजन का काम लेते थे। लीबिया के बादशाह में भी यह प्रवृत्ति थी। सोलहवीं और सत्रहवीं सदी में बौने संग्रह करने का शौक बहुत बढ़ गया था और वे ऊँची कीमत पर बिकने भी लगे थे।

यह सब आँकड़े निश्चय ही चिन्ताजनक हैं और बताते हैं कि हवा का रुख किधर है। यदि यही हाल रहा तो वह दिन दूर नहीं, जब आदमी खरगोशों की समता करने लगेगा और प्रकृति का एक खिलौना मात्र रह जायेगा। आदमी घटेगा-गिरेगा तो आखिर उसका यही हश्र होना है। पौराणिक मिथक बताते हैं कि द्वापर व त्रेता युग में मनुष्यों की अच्छी-खासी ऊँचाई होती थी। किन्तु अब बौनों की बढ़ती संख्या बताती है कि आने वाले समय में मनुष्य शरीर संरचना व क्षमता की दृष्टि से अब से छोटा ही होता जाएगा। अक्ल की दृष्टि से भले ही उसने प्रगति कर ली हो, कम्प्यूटर, माइक्रोचिप्स व सुपरकण्डक्टर्स की शोधों द्वारा न्यूनतम आकार में बड़े-बड़े यन्त्रों की कार्यपद्धति को समाहित कर दिया हो, एक भय मन में उठता है कि कहीं वही 'माइक्रो' वाला छूत का रोग मनुष्य को तो नहीं लग गया जिस कारण वह छोटा और छोटा होता चला जा रहा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बौने शरीर से भले हों, मन से नहीं

मानवी क्षमता असीम एवं अप्रत्याशित है। काया का रंग, रूप, आकार, प्रकार ऊँचाई-निचाई कैसी भी क्यों न हो, यदि मनुष्य शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक रूप से स्वस्थ है तो प्रतिभा-प्रखरता के क्षेत्र में वह कीर्तिमान स्थापित कर सकता है। शरीर से छोटे लोग मन से भी छोटे होते हैं, यह मान्यता किसी हद तक ठीक हो सकती है, पर उसे निर्विवाद एवं सुनिश्चित नहीं कहा जा सकता। चेतन सत्ता पर कोई सीमा बन्धन नहीं लग सकते। वह इच्छा और संकल्प लेकर खड़ी हो जाय तो अद्भुत एवं असाधारण प्रगति हर परिस्थिति में करके दिखा सकती है।

प्राय: शरीर का बौनापन उपहासास्पद माना जाता है और समझा जाता है कि असाधारण कम ऊँचाई के कारण बौनेपन से ग्रस्त व्यक्ति सामान्य लोगों की तरह पुरुषार्थ नहीं कर पाते, फलत: उनकी प्रगति भी अवरुद्ध हो जाती है। जो लोग उन्हें अपनी तुलना में छोटे पाते हैं और कौतुक-कौतूहल की दृष्टि से देखते तथा उपहास करते हैं, वे इस तथ्य को भूल जाते हैं कि वास्तविक बौनापन तो मन का बौनापन है, जो शरीर की ऊँचाई कम होने से भी कहीं अधिक उपहासास्पद है। शरीर की वृद्धि रुक जाने में मनुष्य के अपने पुरुषार्थ का दोष नहीं होता। उसके कारण अविज्ञात होते हैं और उन्हें हटाने में व्यक्ति के प्रयत्न प्राय: कुछ अधिक काम नहीं आते, किन्तु मन के बौनेपन के बारे में ऐसी बात नहीं। मनुष्य चाहे तो अपने गुण, कर्म, स्वभाव की, चिन्तन, चरित्र, व्यवहार की उत्कृष्टता ही नहीं, मस्तिष्कीय चेतना की प्रखरता भी बढ़ा सकता है। मानसिक दृष्टि से ओछे एवं पिछड़े हुए मनुष्यों को बौने मन वाला कहा जाना और भी उपहासास्पद माना जा सकता है।

इतिहास में अनेक बौने व्यक्तियों की प्रतिभा का उल्लेख मिलता है। हिन्दू धर्म की अवतार शृंखला में एक 'बामन अवतार' भी थे, यह नाम उन्हें इसलिए दिया गया कि वे बावन अंगुल के थे, शब्द शास्त्र की दृष्टि से बामन और बौना लगभग एक ही अर्थ का बोधक है। अष्टावक्र ऋषि, जो महाराज जनक के भी गुरु थे, आठ जगह से टेढ़े-मेढ़े थे। उनके हाथ-पैर मुड़े-तुड़े थे, अपंग पीठ, कूबड़ के होते हुए वे ऊँचाई की दृष्टि से बौने जितने ही रह गये थे। इतने पर भी वह प्रतिभा के धनी थे और सर्वत्र पूजनीय माने जाते थे! यह इस बात का प्रमाण है कि चेतन सत्ता पर शारीरिक अपंगता या बौनेपन का कोई बन्धन नहीं है। प्रयास एवं पुरुषार्थ के बल पर उसे हर कोई विकसित कर महानता का वरण कर सकता है। बौने व्यक्तियों में भी कभी-कभी ऐसी विशेषतायें देखी जाती हैं, जिनसे भाग्य पर पुरुषार्थ की विजय का प्रत्यक्ष प्रमाण मिलता है।

प्रख्यात ग्रीक कवि **फिलेटास** की गणना बहुत छोटे कद के लोगों में होती है। पैरों में बहुत भारी जूते वे इस डर से सदैव पहने रहते थे कि हल्के होने के कारण कहीं हवा में उड़ न जायँ। वे मिश्र देश के राजगुरु भी थे। इसी तरह होमर, हैरोडोट्स, प्लिनी पोम्पोनियम, अरस्तु आदि विश्व-विख्यात मनीषियों का शारीरिक दृष्टि से बौने के रूप में उल्लेख हुआ है।

फ्रांस का प्रसिद्ध चित्रकार और फिल्म अभिनेता तुलूज लात्रे यों तो अपनी प्रतिभा के कारण ही प्रख्यात हुआ था, पर उसके बौनेपन ने इस प्रसिद्धि में और भी चार चाँद लगा दिये थे। इसी प्रकार इंग्लैण्ड के एक बौने ने रोते हुए व्यक्ति को भी हँसा देने की कला में भारी ख्याति और प्रवीणता प्राप्त की थी। जेफरी हडसन नामक इस बौने ने इसी आधार पर अच्छी आजीविका भी उपार्जित करने में सफलता पायी थी। ड्यूक आफ, वर्मिंघम की रानी छोटे कद के कारण राजपरिवार में कृपा पात्र मानी जाती थी। एक बार चोरों ने उनका अपहरण कर लिया तो रानी ने अपनी सूझ-बूझ से एक बड़ी राशि फिरौती के रूप में देकर किसी प्रकार उनके पंजे से छुटकारा पाया।

अमेरिका में गत शताब्दी में जनरल टाम थम्ब अपनी प्रतिभा के लिए प्रख्यात थे। जटिल से जटिल गुत्थियों को सुलझा देना उनके बायें हाथ का खेल था। वे मात्र इकत्तीस इंच के थे। अपने नाटे कद के कारण वे चाहे जहाँ प्रवेश पा लेते थे। इनके समान या छोटे कद की पत्नी न मिली तो उन्हें अपने से दो इंच ऊँची लेविनिया वारेन नामक बौनी महिला से विवाह स्वीकार करना पड़ा।

फ्रांस में एक तेईस इंच ऊँचा बौना रिचीवर्ग जासूसी दुनिया में सबसे अधिक विख्यात है। युद्धकाल में वह जासूसी की अति महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता रहा। दुश्मन सेना उसे बालक समझती थी और वह युद्ध मोर्चे तक बहुत महत्त्व के कागज पहुँचाने और लाने का काम सरलतापूर्वक करता। ९० वर्ष की दीर्घायुष्य तक वह जीवित रहा।

फ्रांस के मूर्धन्य नृतत्ववेत्ता ब्रेसचिन ने अपनी पुस्तक में बौने व्यक्तियों में सामान्य व्यक्तियों की तुलना में कई गुणों की अधिकता रहने की बात लिखी है। उनके अनुसार बौने व्यक्ति अपने आकार की तुलना में अधिक फुर्तीले और हिम्मत वाले होते हैं। वे मिल-जुल कर रहने और प्यार-मुहब्बत का परिचय देने में किसी से कम नहीं होते। सहयोग-सहकार की प्रवृत्ति इनके नैसर्गिक गुण हैं। विद्वान मनीषी **बैफोन** ने भी इसी तरह मैडागास्कर में पायी जाने वाली कीमोस नामक एक बौने कबीले का कई दृष्टियों से विवेचन किया है। अपनी कृति में उन्होंने कहा है कि शरीर छोटे होने के साथ-साथ यद्यपि मनुष्य की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनेक क्षमतायें घट जाती हैं, फिर भी चेतनात्मक स्तर पर वह सामान्य कद वालों की तुलना में किसी से कम नहीं ठहरते। उनका भावनात्मक स्तर तो देखते ही बनता है।

इतिहासवेत्ता जानते हैं कि संसार में पहले बौनापन अधिक था, अब वह क्रमशः घट रहा है। वंशानुक्रम की परतों तक जहाँ इस कमी ने प्रवेश कर लिया है वहाँ अब भी पीढ़ी दर पीढ़ी यह कमी चलती रहती है और बौनी जातियाँ ही बन जाती हैं। अभी भी फिलीपीन्स, मलेशिया, न्यूगायना, मध्य एशिया, अफ्रीका में कितने ही कबीले कद की दृष्टि से बौने ही बने हुए हैं। अफ्रीका का कांगो देश तो बौने नागरिकों के लिए ही प्रसिद्ध है। वहाँ के वन्य प्रदेश में चार फुट से भी कम ऊँचाई के लोगों की बहुत बड़ी आबादी है। पिछली सहस्राब्दी में लंका, भारत, जापान, चीन, फ्रांस, जर्मनी, स्विटजरलैण्ड आदि एशिया एवं योरोप के कई देशों में बौनी जातियाँ रहती थीं। अनुसंधानकर्त्ताओं का कहना है कि वे या तो अविवाहित रहने के कारण अथवा बड़ी आयु के लोगों के साथ रक्त मिश्रण कर बैठने के कारण समाप्त होते चले गये।

यह मान्यता सही नहीं है कि शरीर के छोटे होने से मन भी छोटा है और सूझ-बूझ तथा परिस्थितियों का सामना कर सकने की कुशलता में भी कमी आ जाती है। कद की ऊँचाई-निचाई का प्रतिभा-प्रखरता से कोई सीधा सम्बन्ध नहीं है। इसका एक उदाहरण बाल्टीमोर में पिछले दिनों सम्पन्न हुए एक बौने सम्मेलन में बौने लोगों ने ही प्रस्तुत किया था। यह सम्मेलन इस विकृति के कारणों को खोजने और निवारण उपायों की खोज करने के साथ ही शारीरिक कमी के कारण उन्हें अर्थोपार्जन एवं नागरिक सम्मान पाने में जो कठिनाई होती है, उसके निवारण में सहयोग देने के लिए आयोजित किया गया था। जब यह सम्मेलन चल रहा था, उसी समय एक बहुत छोटे कद के बौने इंजीनियर अपने निजी विमान को स्वयं उड़ाते हुए भाग लेने पहुँचे तो उपस्थिति सदस्यों का साहस बढ़ा और उनने समझा कि शरीर की ऊँचाई कम होने से भी अन्य विशेषताओं को ऊँचा उठाने में कोई अड़चन उत्पन्न नहीं होती है। अमेरिका में बौने लोगों का संगठन "दी लिटिल पीपुल्स आर्गेनाइजेशन" की स्थापना विलीवार्टी नामक एक प्रतिभावान व्यक्ति ने की थी। वह माना हुआ विद्वान और प्रतिभाशाली होने के साथ-साथ बौना भी था।

वंशानुक्रम में उत्पन्न हुई खामी एवं हारमोन ग्रन्थियों की विकृति शारीरिक बौनेपन के दो प्रमुख कारण माने जाते हैं। जिस तरह पिछड़ेपन के अनेकों अभिशाप विभिन्न कारणों से मनुष्य पर बरसते रहते हैं और व्यक्तित्व को दबाने का प्रयत्न करते हैं, उसी प्रकार बौनापन भी है। यह प्रकृति प्रदत्त लगते हुए भी वस्तुतः मनुष्यकृत है। उसे अन्य रोगों की तरह प्रयत्नपूर्वक हटाया जा सकता है। कोई भी कठिनाई ऐसी नहीं जो सरल न की जा सके। बौनापन भी इसका अपवाद नहीं है। मानवी संकल्प और पुरुषार्थ सर्वोपरि है। वह हर कठिनाई से लड़ने और हर स्थिति में आगे बढ़ने में सफल हो सकता है। शारीरिक एवं मानसिक बौनेपन के कारण उत्पन्न पिछड़ेपन को निरस्त कर सकना मानवी पुरुषार्थ के लिए नितांत संभव है।

युग-भेद से मानव देह का अपकर्ष

यह तो प्रायः सभी विद्वानों ने स्वीकार किया है कि काल-चक्र अनादि है और इसमें प्रत्येक पदार्थ का उत्थान और पतन होता रहता है। पर हिन्दू शास्त्रों में इस परिवर्तन को एक निश्चित योजना पर आधारित बतलाया है और एक-एक काल-खण्ड के चार भाग करके उनका नाम सतयुग, त्रेता, द्वापरयुग और कलियुग कहा है। शास्त्रकारों का मत है कि सतयुग में सब पदार्थों और प्राणियों का उत्कर्ष होता है जो धीरे-धीरे पतन के मार्ग पर अग्रसर होता हुआ कलियुग में सबसे निम्न कोटि पर पहुँच जाता है। इस नियम का प्रभाव सब प्रकार के प्राणियों के शरीरों पर भी पड़ता है। सतयुग में मानव-शरीर आजकल की नाप से इक्कीस हाथ का होता था, त्रेतायुग में चौदह, द्वापरयुग में सात और कलियुग में साढ़े तीन हाथ का माना गया है।

विष्णु पुराण में लिखा है कि राजा शर्यांति के वंशधर कुशस्थली के राजा रैवत बहुत अन्वेषण करने पर भी अपनी कन्या रेवती के योग्य पात्र न पा सके। अन्त में इस विषय में ब्रह्मा से जिज्ञासा करने के लिए वे अपनी कन्या को साथ लेकर ब्रह्मलोक गये। वहाँ वेद-गान हो रहा था, अतएव उनको एक-दो घड़ी प्रतीक्षा करनी पड़ी। तत्पश्चात् ब्रह्मा ने उनको बतलाया कि "जब तक तुम वहाँ प्रतीक्षा में रहे तब तक अनेक मानवीय युग समाप्त हो गये, क्योंकि ब्रह्मा का एक दिन अनेकों कल्प के बराबर होता है। अब पृथ्वी पर तुम्हारा समकालीन कोई नहीं है। इसलिए अब तुम यहाँ जाकर श्रीकृष्ण के भाई माया मानुष श्री बलदेवजी के साथ इसका विवाह कर दो।" पृथ्वी पर लौटने पर रेवती अन्य मनुष्यों की अपेक्षा तीन गुनी से भी अधिक लम्बी दिखलाई पड़ने लगी। तब—

उच्चप्रमाणामिति तामवेक्ष्य

स्व लांगलाग्रेण च तालकेतुः।

विनम्रायामास ततश्च सापि

वभूव सद्यो वनिता यथान्या।। **(विष्णु पुराण ४/१/३८)**

"ताल की ध्वजा वाले भगवान बलदेवजी ने इस रेवती को बहुत लम्बे शरीर वाली देखकर अपने हलास्त्र के द्वारा उसे नम्राकार कर दिया। तब रेवती उस समय की अन्य कन्याओं के समान छोटे आकार वाली हो गई।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूर्यवंशी भक्तराज अम्बरीष के भाई और सम्राट मान्धाता के पुत्र राजा मुचुकुन्द सतयुग में देवताओं के लिए असुरों से युद्ध करते-करते थक गये। देवताओं ने उनको वरदान दिया, जिसके प्रभाव से वे एक गुफा में दीर्घ निद्रा में सो गये। द्वापर में जब श्रीकृष्ण कालयवन को न मार सके तो उसे छल से उसी गुफा में ले गये, जहाँ मुचुकुन्द सो रहा था। कालयवन ने भ्रम से राजा मुचुकुन्द को ठोकर से मारा, पर उनकी दृष्टि पड़ते ही वह जलकर भस्म हो गया। मुचुकुन्द ने भगवान की स्तुति करके इच्छित वरदान प्राप्त किया। इसके बाद—

इत्युक्तः प्रणि प्रत्येशं जगतामच्युतं नृपः।

गुहा मुखाद्विनिष्क्रान्तः स ददर्शाल्पकान नरान्॥

ततः कलियुगं मत्वा प्राप्तं तपुं नृपस्ततः

नरनारायणस्थानं प्रययां गन्धमादनम्॥

(विष्णु पुराण ५/२४/४-५)

"राजा मुचुकुन्द ने गुफा से बाहर आकर देखा कि दूसरे मनुष्य उसकी अपेक्षा बहुत छोटे आकार के हैं और समझा कि कलियुग आरम्भ हो गया है।"

महाभारत के वन पर्व में भी हनुमान-भीम संवाद में युग-भेद से तेज, शक्ति और आकार के घटते जाने की बात आई है।

अनेक विदेशी विद्वानों ने पूर्व समय में मनुष्य देह की अत्यधिक उच्चता की बड़ी हँसी उड़ाई है। भारतीय शिक्षित वर्ग का भी ऐसा ही विश्वास हो चला है। पर अब अनेक ऐसे प्रमाण मिल रहे हैं, जिनसे उपर्युक्त मत की पुष्टि होती है।

भारत में शवदाह की प्रथा सदा से चली आई है, इस कारण यहाँ प्राचीन कंकालों का प्राप्त हो सकना बहुत कठिन है। तथापि बीच-बीच में कहीं कंकाल मिल ही जाते हैं। सप्तम शताब्दी में प्रसिद्ध चीनी यात्री **ह्वेनसाँग** भारत भ्रमण के लिए आया था। उसने कुरुक्षेत्र (धर्मक्षेत्र) का वर्णन करते हुए लिखा है कि "मृत-देह लकड़ी के समान स्तूपकार हो गये हैं और इस प्रांत में सर्वत्र उनकी हड्डियाँ बिखरी हुई पाई जाती हैं। यह बहुत प्राचीन समय की बात है, क्योंकि हड्डियाँ बहुत बड़ी-बड़ी हैं।"

सन् १९४१ ई. में कुरुक्षेत्र के समीप एक विलक्षण मनुष्य की खोपड़ी पाई गई थी जो अब से बहुत बड़ी थी। लगभग १५ वर्ष पूर्व मध्यप्रदेश के सोहागपुर के निकट एक बहुत बड़े आकार का कंकाल पाया गया था। सन् १९४६ के लगभग अमरीका के कोलोण्डो मरुभूमि की गुफा में अनेकों ९ फीट लम्बे कंकाल पाये गए थे। अनुमान किया जाता है कि यह स्थान लगभग आठ हजार वर्ष पहले किसी प्राचीन जाति के राजवंश का समाधि स्थल था। इसी प्रकार डा. लीकी ने केनियाँ की मैगजी झील में से कितने ही कंकाल प्राप्त किये थे, वे भी आजकल से बहुत बड़े थे। डा. लीकी ने बतलाया है कि ये मनुष्य अब से एक लाख पच्चीस हजार वर्ष पहले वहाँ रहते थे। ये कंकाल अब पत्थरों में मिलकर पत्थर ही बन गये हैं। उनके अध्ययन करने से यह सिद्ध होता है कि ये लाखों वर्ष पुराने प्राणी खेती करते थे, वस्त्र पहनते थे और सीधे खड़े होकर चलते थे।

'फान कोनिग्सवाल्ड' ने द्वितीय महायुद्ध से पूर्व जावा द्वीप में खुदाई कराके कुछ कंकाल निकाले थे, जो प्राचीन 'जावामैन' की अपेक्षा भी बड़े और पूर्ववर्ती काल के थे। इन हड्डियों को लगभग ५ लाख वर्ष पुराना समझा गया था और इनकी खोपड़ी आजकल के मनुष्य की खोपड़ी से लगभग दुगुनी थी। इसी समय चीन में प्राचीन समय के तीन दाँत मिले थे, जो आजकल के मनुष्य के दाँतों से दुगुने बड़े थे।

इन सब खोजों पर जब विचार किया जाता है तो हमको डार्विन के विकास-सिद्धान्त पर घोर सन्देह होने लगता है। भारतीय शास्त्रों का मत तो इस विकासवाद के सर्वथा विपरीत है ही। यद्यपि डार्विन ने भगवान को अस्वीकार नहीं किया, फिर भी उनके नवीन सिद्धान्त के सम्पर्क में आकर बहुत से लोग ईश्वर की सत्ता में सन्देह करने लगे हैं।

परमेश्वर सर्व शक्तिमान हैं। वे ब्रह्मा से लेकर तृण पर्यन्त समस्त विशाल सृष्टि की रचना, पालन और संहार करते हैं। फिर वे क्या वानर के स्थान पर मनुष्य की रचना नहीं कर सकते थे ? दो वृक्ष के पत्ते—यही क्यों, घास के दो तिनके, कभी एक-से नहीं रचे गये। एक बूँद जल की बीच भी असंख्य जीव रहते हैं, जो केवल अनुवीक्षण यन्त्र की सहायता से देखे जा सकते हैं।

आर्य-शास्त्रों में मनुष्य का एक विशिष्ट स्थान है, क्योंकि चतुर्दश भुवन में एकमात्र पृथ्वी ही कर्म-क्षेत्र है और मानव-शरीर ही एकमात्र कर्म करने का साधन है। दूसरे सभी लोक भोग भूमियाँ हैं और दूसरे सारे शरीर (यहाँ तक कि देव शरीर भी) भोग शरीर हैं। उनमें तथा उनके द्वारा मुक्ति के उद्देश्य से कोई कर्म नहीं होते। अतएव मनुष्य भगवान की सृष्टि का श्रेष्ठ जीव है, नर-देह अत्यन्त दुर्लभ है। देवताओं को भी मुक्ति के लिए धराधाम में आकर मनुष्य-देह ग्रहण कर जन्म लेना पड़ता है।

आज जो अनुसन्धान हो रहे हैं, उनसे तथा पाश्चात्य अन्वेषकों के मत से भी निःसन्देह सिद्ध हो रहा है कि प्राचीन काल से मानव-देह क्रमशः छोटा होता आ रहा है तथा आज से दस लाख वर्ष पूर्व भी सभ्य मानव का पृथ्वी पर अस्तित्व था। इससे शास्त्रों में जो युग-भेद से क्रमशः सब विषयों में अवनति होने की बात लिखी है, वह सर्वथा सत्य सिद्ध होती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बलिष्ठ दैत्य बनें, कि प्रतिभा-सम्पन्न देव

मनुष्य शरीर-शक्ति और आकार-प्रकार में चाहे कितना भी बढ़ा-चढ़ा क्यों न हो, यदि परस्पर स्नेह-सौजन्य, सहयोग-सहकार का अभाव रहा, तो वह लम्बे समय तक अपना अस्तित्व किसी भी प्रकार बनाये रखने में असफल ही रहेगा। इतिहास साक्षी है कि पिछले दिनों की दैत्याकार मानवी प्रजातियाँ सिर्फ इसलिए लुप्त हो गईं कि उनने प्रेम-सद्भाव की जगह शरीर बल को अधिक महत्त्व दिया, फलतः वे एक-दूसरे को अपने अधीन बनाने में ही लड़-भिड़कर मर-खप गयीं और आज उनकी स्मृति मात्र शेष है। इतिहास में यदा-कदा उनकी चर्चा भर होती है। अविस्मरणीय तो वही बन पाते हैं, जो बुद्धिबल का प्रयोग करते और दूरदर्शिता अपनाते हैं। लम्बे समय तक अपनी सभ्यता को सुरक्षित ऐसे ही लोग रख पाते हैं। दूसरे तो स्वयं डूबते और साथ-साथ अन्यों को भी डुबा ले जाते हैं।

पिछले दिनों के पुरातात्विक गवेषणाओं एवं यात्रा-विवरणों से विश्व के अनेक हिस्सों में ऐसी मानवी प्रजातियों का पता चला है, जो कभी अपनी दैत्याकार आकृति के कारण प्रसिद्ध थीं पर विवेक-बुद्धि की कमी ने उन्हें समूल नष्ट कर दिया। ऐसा ही एक विशालकाय अस्थि-पिंजर सन् १५७७ में स्विटजरलैण्ड के ल्यूसर्न प्रांत के विलिसायू स्थान में उत्खनन के दौरान प्राप्त हुआ था। उसके मानव अस्थि होने के सम्बन्ध में तत्कालीन अस्थि विशेषज्ञ फेलिक्स प्लैटर से सलाह ली गई। उन्होंने गहन जाँच-पड़ताल के उपरान्त उसके मानव-अस्थि होने की पुष्टि कर दी। कंकाल के अध्ययन के आधार पर जीवित स्थिति में उसकी ऊँचाई नौ फुट के करीब बतायी गई। इसी प्रकार की एक अन्य कब्र खुदाई के दौरान सेण्ट एण्टोनी के निकट चाउमोण्ट किले के पास देखी गई। कब्र की लम्बाई-चौड़ाई आश्चर्यजनक ढंग से विशाल थी, जिसमें लगभग १२ फुट लम्बा, ३ फुट चौड़ा तथा २ फुट ऊँचा कंकाल पड़ा था, जिसके मानवी होने में किसी भी प्रकार का सन्देह नहीं किया जा सकता था। कब्र के ऊपर पिंजर का नाम—"ट्यूटोबोक्ट्स रेक्स" खुदा था और आस-पास अनेक पदक, सिक्के आदि पड़े हुए थे। आज भी इसकी अस्थियाँ "म्यूजीम डी पैलिओण्टोलोजी" नामक पेरिस के एक संग्रहालय में पड़ी हुई हैं। अन्वेषणकर्ताओं का कहना है कि एक युद्ध के दौरान सिम्ब्री के भीमकाय राजा ट्यूटोबोक्टस को बन्दी बना लिया गया और दूसरे विजयी सम्राट मेरियस द्वारा मार डाला गया, तत्पश्चात् उसे चाउमोण्ट किले के समीप एक कब्र में सुरक्षित दफना दिया गया।

इसी प्रकार के एक दैत्याकार मनुष्य का उल्लेख प्रसिद्ध इतिहासकार **जैफरसन** ने अपनी पुस्तक "हिस्ट्री एण्ड एण्टीक्विटीज ऑफ ओलरडेल एबव उरवेण्ट" में किया है। वे लिखते हैं कि मूर्धन्य नृतत्वविज्ञानी **ह्यूज हडसन** का यह कथन गलत नहीं है कि प्राचीन समय में मनुष्य का आकार-प्रकार असाधारण रूप से बड़ा हुआ करता था। इस संदर्भ में प्रमाण प्रस्तुत करते हुए वे लिखते हैं कि सेण्ट बीज के समीप कुम्बरलैण्ड में प्राप्त मानवी अवशेष इस बात की पुष्टि करते हैं कि हमारे पूर्वज असंदिग्ध रूप से विशालकाय रहे होंगे। सेंट बीज के उक्त कंकाल की चर्चा करते हुए वे कहते हैं कि जहाँ यह अद्भुत कब्र मिली, इन दिनों वहाँ धान का खेत है। बीज बोते श्रमिकों को उसका कुछ हिस्सा एक दिन दिखाई पड़ा तो वे उत्सुकतावश उसे खोदने लगे, फलस्वरूप वहाँ उस कब्र के होने की जानकारी मिली। कब्र जमीन से १२ फुट नीचे थी, पर बरसात के कटाव से अब वह उतनी गहरी नहीं रह गई थी और उसका कुछ हिस्सा बाहर निकल आया था। उसे खोदने पर उसके भीतर साढ़े बारह फुट लम्बा मानवी पिंजर सुरक्षित प्राप्त हुआ। उसके मानवी न होने का भ्रम गड्ढे से प्राप्त वस्तुओं से जाता रहा। वहाँ कई विशाल कलेवर के आयुध पड़े थे। इनमें उसका स्वयं का लौह कवच और कुल्हाड़ा विशेष उल्लेखनीय हैं। कवच की लम्बाई ५ फुट थी, जो सिर और कमर तक शरीर के सम्पूर्ण भाग को ढकता था। शरीर के एक ओर उसका विलक्षण कुल्हाड़ा था तथा दूसरी ओर ६ फुट लम्बी तलवार। कुल्हाड़ा कितना विशाल था, इसका अनुमान उसके आकार से लगाया जा सकता है और इस आधार पर इसके प्रयोक्ता के आकृति की सहज कल्पना की जा सकती है कि वह कैसा पर्वताकार रहा होगा ? कुल्हाड़े का सिर तीन फुट लम्बा था और इसका हत्था जो पूर्णतः लोहे का बना था, ६ फुट लम्बा था और मोटाई एक औसत मानवी जाँघ के बराबर थी।

यह तो कब्रों और अवशेषों के आधार पर मानवी आकार के सम्बन्धों में लगाये गये अनुमानों की चर्चा हुई, पर समय-समय पर सुदूर क्षेत्रों की यात्रा करने वाले यात्रियों की यात्रा-विवरणों से भी इस बात को बल मिलता है कि उन दिनों भीमकाय मनुष्य अस्तित्व में थे। ऐसा ही एक साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए "जाइण्टस ऑफ पैंटागोनिया" पुस्तक में **मैगेलन** लिखते हैं कि जब उनका बेड़ा कथित पैंटागोनिया (चिली और आर्जेन्टीना का दक्षिणी भाग) के पोर्ट सैन जुलियन के तटवर्ती क्षेत्र में खड़ा था, तो एक दैत्याकार मानव उनके जहाज के निकट समुद्र तट पर आया। उसकी लम्बाई इतनी अधिक थी कि नाविकों के सिर मुश्किल से उसकी कमर को छू पाते थे। उसकी आवाज साँढ़ जैसी तेज और कर्कश थी। कुछ ही देर में उसी डील-डौल के कुछ और लोग वहाँ आ पहुँचे। मैगेलन और उनके साथी उनमें से दो को पकड़ने में सफल रहे। उन्हें लोहे के एक बड़े पिंजड़े में रखा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गया और योरोप की ओर यात्रा प्रारम्भ की गई, पर योरोप पहुँचने से पूर्व ही रास्ते में उनकी मृत्यु हो गई।

ड्रेक, पेड्रो सरमिएण्टो, एन्थोनी, नीवेट एवं कैवेंडिश आदि सभी यात्रियों ने पैंटागोनिया क्षेत्र में रहने वाले दानवाकार मानवों का अपने यात्रा-वृत्तान्तों में उल्लेख किया है। उनकी लम्बाई के सम्बन्ध में उनमें मतैक्य है। सभी ने उनकी ऊँचाई साढ़े दस फुट से बारह फुट के बीच बतायी है। कइयों ने उनके मृत शरीरों को नापा भी। ऊँचाई उपरोक्त सीमान्तर्गत ही पायी गई। सीबाल्ड डी वीयर्ट, जोरिस स्पीलबर्जेन, जैकब ली मेयर एवं विल्हेल्म साउटेन जैसे बाद के भ्रमणकर्ताओं ने भी अपने पूर्व साथियों के विवरणों की सत्यता की पुष्टि की है।

यद्यपि आज के लोगों को ऐसे दानवाकार मनुष्यों के अस्तित्व पर सहज ही विश्वास नहीं हो सकता, पर इस प्रकार की संभावना से सर्वथा इन्कार भी नहीं किया जा सकता। इस सम्बन्ध में कोम्मोडोर बोयरन के साक्ष्य और तथ्य सबसे अधिक प्रामाणिक और विश्वसनीय माने जाते हैं। वे अपने ग्रन्थ 'इक्सटिंक्ट पैंटागोनियन जाइण्ट' में लिखते हैं कि निस्संदेह पूर्व काल में पृथ्वी पर भीमकाय मनुष्य निवास करते थे। इसके प्रमाण न सिर्फ पैंटागोनिया क्षेत्र में मिले हैं, वरन् विश्व के अनेक हिस्सों में असामान्य आकार-प्रकार के ऐसे नरपिंजर मिले हैं, जो यह साबित करते हैं कि प्राचीन समय में धरती पर कभी ऐसे मानव निश्चय ही रहते थे।

उनका लोप कैसे हो गया ? इस संदर्भ में गहन अनुसंधान के उपरान्त वे कहते हैं, तब के मनुष्यों में काया की स्थूलता जिस प्रकार बढ़ी-चढ़ी थी, बुद्धि भी वैसी ही स्थूल व मोटी थी। फलतः उनमें आये दिन इस बात की प्रतिद्वंद्विता छिड़ी रहती थी कि कौन किसे पराजित कर अपने अधीन बनाता है। जो सहजता से दूसरों की अधीनता स्वीकार लेते, उन्हें गुलामों जैसी जिन्दगी जीनी पड़ती। ऐसे लोग प्रायः कम ही होते, जो सहयोग, सद्भावपूर्वक रहने के लिए उद्यत होते। अधिकांश लोग गुलामी की तुलना में लड़-भिड़ कर मर जाना पसंद करते। इस प्रकार शरीर-बल की अहंता और इसकी प्रतियोगिता तथा असहयोग के कारण धीरे-धीरे उनकी संख्या घटती गई। बाद में जब उनकी स्थूल बुद्धि को इसका दुष्परिणाम समझ में आया, तो एक जगह रह कर लड़ने-भिड़ने की तुलना में बिखर जाना उन्होंने उपयुक्त समझा। उन्हीं बचे लोगों की आनुवंशिकता लम्बी आनुवंशिक-यात्रा के उपरान्त यत्र-तत्र प्रकट होती और अपना प्रमाण-परिचय प्रस्तुत करती है। शारीरिक बलिष्ठता आवश्यक तो है, पर मानसिक प्रखरता के बिना उसका सुनियोजन बन पड़ना शक्य नहीं।

मनुष्य देवता और दैत्य

पौराणिक मिथकों में मनुष्य की ही तरह देवताओं और दैत्यों का भी वर्णन है। मनुष्य भूलोक में, देवता स्वर्ग लोक में और दैत्य पाताल में रहते थे। यह तीनों क्या थे ? कहाँ रहते थे ? किस आकृति-प्रकृति के थे, इस सम्बन्ध में जो वर्णन उपलब्ध है उनमें कितनी कल्पना का मिश्रण और कितना यथार्थता का समावेश है यह कहना कठिन है। फिर भी सामान्यतया यह सोचा जा सकता है कि मनुष्य प्राचीनकाल में भी ऐसी ही आकृति, प्रकृति के रहे होंगे जैसे आज हैं। साधन सुविधाओं के अभाव में वन्य क्षेत्र अधिक और जन्मसंख्या कम होने की परिस्थिति में मनुष्यों को आज की तुलना में अधिक कष्ट-साध्य परिस्थितियों का सामना करना पड़ता होगा तो भी वे निर्वाह की स्वाभाविक आवश्यकताएँ पूरी कर लेते थे और प्रकृति से संघर्षरत रहने के कारण बलिष्ठ भी रहते थे।

सुविधाएँ बढ़ने पर छीन-झपट चल पड़ती है किन्तु असुविधाग्रस्तों में परस्पर अधिक सहयोग-सद्भाव रहता है। इस आधार पर प्राचीनकाल के मनुष्य अपेक्षाकृत अधिक पुरुषार्थी, सन्तोषी और सहयोगी प्रकृति के रहे होंगे यह कहा जा सकता है।

देवताओं की स्थिति का बुद्धिसंगत स्वरूप सोचा जाय तो एक ही निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि अधिक सुयोग्य, समर्थ, बुद्धिमान एवं उदारचेता प्रकृति वाले देव श्रेणी में गिने जाते रहे होंगे। हो सकता है कि प्रकृति की विशिष्ट शक्तियों और भावना क्षेत्र को सज्जनता को देवत्व का प्रतिनिधि माना गया होगा। उनके साथ जुड़ी हुई विशेषताओं-विभूतियों को आलंकारिक रूप में चित्रित किया गया होगा। देवताओं के वाहन, आयुध, ऐसे ही रहस्यों को अपने में छिपाये हुए हैं। उनकी अनेक भुजाओं, मुखों, नेत्रों का अंकन भी सम्भवतः इसी आधार पर हुआ है। देने वालों को देव कहा जाना स्वाभाविक है। जिन शक्तियों द्वारा सर्वसाधारण का हित साधन होता है, उन्हें देव रूप में प्रतिष्ठा एवं मान्यता देना युक्ति संगत भी है।

दैत्य का भावार्थ है—विशाल, समर्थ एवं उद्धत। दैत्य, दानव, असुर यों एक ही अर्थ में लिये जाते हैं पर वे सब हैं वस्तुतः अलग-अलग। सुर समुदाय के अतिरिक्त अन्यान्यों को असुर कहा गया है। मध्य एशिया में बसने वाली एक जाति भी थी-अहुर। जिसे असुर शब्द का अपभ्रंश कह सकते हैं। उन क्षेत्रों में जीवनोपयोगी सामग्री का अभाव रहने से वे दूर-दूर तक आक्रामक धावे बोलते थे। क्रूर प्रकृति के कारण उन्हें यह नाम दिया गया होगा अथवा परम्परागत यही नाम उनके हिस्से में आया होगा। दानव शब्द भी क्रूरता का बोधक है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

'दैत्य' शब्द आकार एवं वैभव का बोधक है। अँग्रेजी में उसे 'जॉइन्ट' कहा जाता है। रावण, कुम्भकरण, सहस्त्रबाहु आदि के शरीर सामान्यों की अपेक्षा अधिक बड़े माने जाते हैं। उनकी बलिष्ठता भी उसी अनुपात में बढ़ी-चढ़ी होनी चाहिए।

प्रागैतिहासिक काल में महागज, महासरीसृप, महागरुड़ जैसे विशालकाय प्राणियों का इस धरती पर आधिपत्य था। इन्हीं दिनों मनुष्य स्तर के प्राणियों की उत्पत्ति हुई होगी तो वे नर-वानर भी विशालकाय ही रहे होंगे। अब भी साधारण वनमानुषों की तुलना में गोरिल्ला, चिम्पाजी नस्ल के बन्दर कहीं अधिक बड़े भारी और बलिष्ठ होते हैं। हिम मानवों के देखे जाने, पाये जाने की चर्चा अभी भी होती रहती है। उन्हें मनुष्य की तुलना में दूनी लम्बाई चौड़ाई का कहा जाता है। पैरों के निशान भी उसी अनुपात के पाये गये हैं।

ऐतिहासिक खोजों में विशालकाय मनुष्यों के अस्तित्व का पता चला है। फ्रांसीसी पुरातत्ववेत्ता लुई बरबलिटा ने अपनी खोजों में किसी समय के विशालकाय मनुष्यों के अवशेष प्राप्त किये हैं। उनकी कृतियों के आधार पर ड्यौढ़े से लेकर दूने तक आकार का उन्हें बताया गया है। सीरिया के सासनी क्षेत्र की खुदाई में चुम्बक पत्थर के बचेने आठ पौण्ड भारी हथियार मिले हैं। उत्तरी मोरक्को में भी प्रायः इतने ही भारी और बड़े आकार के शस्त्र मिले हैं। वे ऐसे हैं जिन्हें १२ फुट से कम ऊँचाई वाले मनुष्य प्रयुक्त नहीं कर सकते।

लेवनान में एक-दो लाख पौण्ड भारी विशेष पत्थर मिला है, जिस पर कई ओर से बढ़िया नक्काशी की गई है। यह कार्य दैत्याकार मानवों का ही हो सकता है। इस ऐतिहासिक पत्थर का नाम 'हज्रएल गुल्ले' रखा गया है। उसे देखने संसार भर के लोग पहुँचते हैं।

इटली और आस्ट्रेलिया के कई दुर्गम शिखरों पर ऐसी ही कलाकृतियाँ पाई गई हैं। इतने ऊँचे पहुँचकर उतने कठिन काम कर सकना, विशालकाय मनुष्यों के लिए ही सम्भव हो सकता है। मिश्र के पिरामिडों में लगे पत्थर इतने वजनी हैं और इतनी ऊँचाई पर अवस्थित हैं कि उन्हें इस प्रकार जोड़ना वर्तमान आकृति के मनुष्यों के लिए किसी भी प्रकार सम्भव नहीं हो सकता। दक्षिण अमेरिका में पाये गये पिरामिड खण्डहर इनसे भी अधिक आश्चर्यजनक हैं।

प्राणिविज्ञान के शोधकर्त्ताओं का एक वर्ग ऐसा भी है जो कहता है कि प्राणि विकास की एक मंजिल ऐसी भी रही है जिसमें मनुष्यों और पशुओं के बीच की विभाजन रेखा पूरी तरह नहीं बन पाई थी और उनके मध्य यौनाचार चलता था। उस संयोग से शंकर प्राणि भी उत्पन्न होते थे और उनमें दोनों के गुण समन्वित रहते थे। मनुष्य की बुद्धिमत्ता और पशुओं की बलिष्ठता के संयोग से उत्पन्न प्राणी दैत्याकार थे।

प्लेटो ने अपने ग्रन्थ 'सिम्पोजियम' में मनुष्य और पशुओं के संयोग से दैत्याकार प्राणियों की उत्पत्ति का वर्णन किया है। ''टैटीक्स एनेल्स'' में भी ऐसे ही विवरणों का उल्लेख है, जिनमें मनुष्यों और पशुओं के बीच चलने वाले यौनाचार का विवरण मिलता है। इतिहासकार 'हैरोयोतस' ने अपने विवरणों में ऐसे ही प्रचलनों का विवरण दिया है। बगदाद और लन्दन के संग्रहालयों में ऐसी कई पाषाण प्रतिमाएँ हैं जिनमें उन दिनों ऐसा प्रचलन रहने की साक्षी मिलती है।

सुमेर सभ्यता के पुराण कथानकों में निपुर क्षेत्र के निवासी ऐनेलिल नामक देव समुदाय में निनलिल नामक मानवेतर मादाओं के साथ संयोग करके अर्ध पशु और अर्ध मनुष्य स्तर की प्रजा उत्पन्न करने का वर्णन है। भारतीय पुराण मिथक इससे भी एक कदम आगे हैं। उनमें हनुमान पुत्र मकरध्वज, मत्स्य कन्धा आदि का वर्णन है। नृसिंह, हयग्रीव जैसे अवतारों की आकृति अर्धपशु और अर्ध मनुष्य जैसी दर्शाई गई है। गणेश को भी ऐसा ही चित्रित किया गया है। भीम का एक ऐसा ही पुत्र घटोत्कच भी था जो किसी अविकसित वर्ग की नारी से जन्मा था और सामान्यजनों की अपेक्षा कहीं अधिक बलिष्ठ था।

इतिहासकार पाताल अमेरिका को कहते हैं और वहाँ किसी समय मय सभ्यता का चरमोत्कर्ष मानते हैं। महाभारत में 'मय' दानव पारकर है, जो सूर्योपासक था। ज्योतिर्विज्ञान का उसे आविष्कर्ता एवं मूर्धन्य भी माना है। अहिरावण पातालपुरी का ही एक शासक था। भौतिक विज्ञान और बलिष्ठता-सम्पन्नता की दृष्टि से बढ़े-चढ़े होने के कारण यह लोग दैत्य कहे जाते थे।

पुरातत्त्व विशेषज्ञ हैविट्ट मैकेन्जी, थेड आदि का कथन है कि मय सभ्यता के दिनों में भारतीय सभ्यता के अनुरूप ही मान्यताएँ प्रचलित थीं। नाग जाति के लोग रहते थे, अतएव उस क्षेत्र को नागलोक भी कहा जाता था। नागलोक पाताल का ही दूसरा नाम है। मय शासकों को दैत्य कहा जाता था। वे भूलोक में भी आते थे। मायावी कहलाते थे। जल से थल और थल से जल का भ्रम उत्पन्न करने वाला भवन उन्होंने द्रौपदी के मनोरंजन हेतु बनाया था। उसी से भ्रमित होकर दुर्योधन को उपहासास्पद बनना पड़ा था।

देवता और दैत्य यों उपाख्यानों में मनुष्य से भिन्न प्रकार के प्राणी माने गये है, पर वास्तविकता यह है कि तीनों ही वर्ग प्रकृति से तो भिन्न होते ही हैं पर तीनों की आकृति एक जैसी ही होती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धर्म युद्ध में लड़ने वाले सच्चे शूरवीर

सच्चा शूरवीर वह है जो आत्म-बलिदान की भावना लेकर आगे बढ़ा है। हत्या की कला तो कसाई भी जानता है। बगुला छल-कपट से आये दिन ढेरों मछली मारता है और भेड़िया कितने ही जीवों का नित्य प्राण हरण करता है। दीमक खाने में तीतर की कुशलता देखते ही बनती है। सर्प तो इनसे भी आगे है। वह अपना आहार न मिलने पर भी दूसरों को मृत्यु के घाट उतार देता है। बिच्छू के कौशल से कौन अपरिचित है। प्राण-हरण में किसने कितनी सफलता प्राप्त की ? इस आधार पर किसी को शूरवीर ठहराने की बात सर्वथा अनुपयुक्त है।

शूरवीर वह है जो अनीति से लड़ता है और उसके लिए दूसरों का प्राण-हरण करने को नहीं; आत्म-बलिदान को प्रधानता देता है। उसे अवांछनीयता से घृणा होती है। अनीति के आधारों को वह नष्ट करना चाहता है। इसके लिए उसे प्रबल और परिपुष्ट अन्याय के विरुद्ध जूझना पड़ता है। स्पष्ट है कि सदाशयता का पक्ष सदा असंगठित रहा है और दुरभिसंधियाँ अपने समर्थकों को संगठित रखती हैं। इस प्रकार अनीति पक्ष की प्रबलता और नीति पक्ष की दुर्बलता ही बहुत करके देखने में आती है। शान्ति की रट लगाने वाले मैत्री, करुणा के समर्थक अनीति से जूझने में प्राय: हिचकते हैं। फलत: संगठित अनीति क्रमश: अधिक परिपुष्ट और अधिक सफल होती चली जाती है। देव पक्ष की दुर्बलता और असुर पक्ष की प्रबलता एक तथ्य है जो आये दिन आँखों के सामने ही खड़ा रहता है।

इस स्थिति को बदलने के लिए उन साहसी शूरवीरों को आगे आना पड़ता है, जो साथी-सहायकों की प्रतीक्षा किये बिना, शक्ति सन्तुलन का लेखा-जोखा लिए बिना अकेले ही आगे बढ़ चलते हैं। और अनीति को अपने ही आत्मबल के बलबूते पर ललकारने का दुस्साहस भरा कदम उठाते हैं। प्रत्यक्ष ही इसमें हानि दिखाई पड़ती है। अनीति पक्ष के साधन और सहायक बहुत होते हैं। वे अपने विरोधी को सहज ही भारी क्षति पहुँचा सकते हैं। बहुत करके अनीति का प्रतिरोध करने वालों को बहुत आघात सहने पड़ते हैं और बहुत कष्ट उठाने पड़ते हैं। कई बार तो अनीति मिटाने के स्थान पर वह योद्धा स्वयं ही मिट जाता है।

शूरवीर वह है जो इस वस्तुस्थिति को समझते हुए अपने आपको संकट में फँसाने की पूरी तैयारी के साथ सोच-विचार कर आगे बढ़ता है। वह जानता है कि अनीति का विरोध किया जा सकता है, पर उसे तुर्त-फुर्त उखाड़ फेंकना उतना सरल नहीं है। संगठित और समर्थ प्रतिपक्षी अपने बचाव के लिए और प्रतिपक्षी को कुचलने के लिए बुरे से बुरे कदम उठा सकता है। आवश्यक नहीं कि विरोध सफल हो जाय और जिस अनीति का उन्मूलन करने चले थे, उसका अन्त हो ही जाय। किन्तु इसका अर्थ यह तो नहीं ही होना चाहिए कि अन्याय को चुनौती देने के लिए कोई इसलिए आगे बढ़े ही नहीं कि उसमें जोखिम भरा हुआ है। इस जोखिम से जूझने और उस प्रयास में आने वाले कष्टों की पूरी तरह कल्पना कर लेने के बाद भी जिसने बलिदानी वीर की भावना अपनाई, वस्तुत: सच्चा शूरवीर उसी को कहना चाहिए।

अनीति के पैर उखाड़ने में आत्म-बलिदान से बढ़कर दूसरा शस्त्र हो ही नहीं सकता। इससे असुरता की हिम्मत आधी टूट जाती है। निर्बाध और निर्विरोध रीति से कुकृत्य करते चलने वालों का बढ़ता हुआ मनोबल टूटता है और उन्हें सोच-समझकर ही कुकृत्य करने की अकल आती है। विरोध खड़ा हो गया तो जिनके मन में रोष तो था, पर कुछ कर नहीं पा रहे थे, आगे चलने की हिम्मत न होने से चुपचाप बैठे सहन करते थे, उनका भी साहस बढ़ता है और आत्म-बलिदानी के समर्थकों की पिछली पंक्ति में वे भी खड़े दिखाई पड़ते हैं। इस प्रकार देव पक्ष क्रमश: समर्थ होता जाता है। अनीति का दम तोड़ने के लिए उसके पक्ष में विरोधी वातावरण का बनना भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। आग की छोटी-सी चिनगारी घास के बड़े ढेर को जलाकर भस्म कर देती है। अनीति भी घास के ढेर की तरह है। जब विरोध और प्रतिरोध की चिनगारियाँ उस पर पड़ने लगें तो समझना चाहिए कि इसकी बढ़ी-चढ़ी विभीषिका का अन्त आ गया।

दीपक स्वयं जलता है। उसका जलने का संकल्प और साहस ही सुविस्तृत क्षेत्र में फैले हुए अन्धकार को नष्ट करने के लिए पर्याप्त है। वस्तुत: शक्ति अन्धकार में नहीं होती। समर्थ तो प्रकाश होता है। पाप कितना ही बढ़ा-चढ़ा क्यों न हो, उसमें देर तक टिक सकने की, प्रतिरोध का सामना करने की क्षमता नहीं होती। वह तभी तक टिकता है जब तक निर्विरोध और निर्बाध रीति से गुजर होती रहे। असुरता को सफलता इसलिए नहीं मिलती कि वह वस्तुत: समर्थ होती है। गुण्डा वस्तुत: परले सिरे का कायर होता है। पकड़े जाने पर उसका गिड़गिड़ाना और कातर पुकार करना देखते ही बनता है। उसकी सारी सामर्थ्य इस केन्द्र पर टिकी रहती है कि भले आदमी कहलाने वाले शान्ति के नाम पर कायर बने बैठे रहते हैं और आततायी के विरुद्ध आवाज उठाने से डरते हैं।

इस दयनीय स्थिति को चीरने के लिए जिसने एकाकी साहस सँजोया, उसे सच्चे अर्थों में शूरवीर कहना चाहिए। साथियों की प्रतीक्षा न करके जो अपने आत्मबल को ही पर्याप्त मानता है, उसे योद्धा कहना चाहिए। शत्रु को कमजोर और अपने को समर्थ मानकर चलने वाले और प्रतिद्वन्द्वी को बात की बात में ढेर करके आने का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विश्वास कितने ही लोगों को बहादुर बना देता है। विजय प्राप्त करने का आवेश उन पर छाया रहता है और सफलता सामने खड़ी दीखती है। ऐसी मन:स्थिति में किसी की भी लड़ाकू प्रवृत्ति उभर सकती है और तलवार घुमाता हुआ आगे बढ़ सकता है। यह साधारण सैनिक की बात हुई। सच्चे शूरवीर की आन्तरिक स्थिति इससे कहीं ऊँची होती है। वह विजय और पराजय को समान मानकर चलता है। अन्याय के विरुद्ध वह अकेला ही खड़ा हो सका, स्वल्प साधनों के रहते हुए भी समर्थ प्रतिपक्षियों के विरुद्ध सीना तानकर खड़ा हो सका; यह दुस्साहस जिसने सँजोया, वह वस्तुत: शूरवीर है। विजय माल तो उसके पहले चरण में ही उसके गले में डाल दी गई। उसने अपने शौर्य, साहस और प्रखर आदर्शवाद को प्रामाणित करके मनस्वी महामानवों की पंक्ति में अपने को बिठा दिया।

बढ़ी-चढ़ी अनीति को समूल मिटाने में देर लगती है, उसके लिए बलिदानों की लम्बी शृंखला प्रस्तुत करनी पड़ती है। धैर्य और साहस के साथ लम्बी लड़ाई लड़ने की तैयारी करनी पड़ती है। अनीति को उखाड़ने में वीर बलिदानियों को देर तक जूझना पड़ता है। प्रथम चरण में, प्रथम प्रयास में ही इतना बड़ा प्रयोजन सहज ही पूरा नहीं हो जाता है। अन्याय से जूझने वालों में से कितनों को ही स्वयं मिटना पड़ा है, ऐसे बलिदानी वीरों को आत्मबल के धनी शहीदों के चरणों पर लोक-श्रद्धा के सुमन सदा ही चढ़ाये जाते रहेंगे। प्रत्यक्षत: वे पराजित और असफल ही रहे, पर परोक्ष रूप से अपनी साहसिकता को इतना सम्मिलित और सफल बना दिया जितना कदाचित् वे शत्रु का विनाश करने के उपरान्त भी न हो पाते।

अनीति से जूझने में आवश्यक नहीं कि आततायियों को एक ही झटके में उखाड़ फेंकना सम्भव हो जाय। आवश्यक नहीं कि प्रतिरोध की मशाल जलाने वाले को विजयी कहलाने का श्रेय मिल जाय। यह सब समझते हुए भी, पराजय और विपत्ति की सम्भावना को ध्यान में रखते हुए भी जो कर्त्तव्य बुद्धि से आदर्शों का पालन करने के लिए समरभूमि में उतरा, वह सच्चा शूरवीर है।

शत्रु पक्ष के कितने लोगों को किसने मारा। कितना बड़ा प्रयोजन किसने किस प्रकार पूरा किया, यह उतने महत्त्व की बात नहीं। महत्त्व इस बात का है कि उस संघर्ष में कितने लोग उच्च आदर्श के लिए आत्म-बलिदान की भावना से आगे आये। ऐसे धर्मयुद्ध ही धन्य हैं और धन्य हैं उनमें लड़ने वाले सच्चे शूरवीर।

हमारी वीरता अक्षुण्ण रहनी चाहिये

धर्म, संस्कृति, शिक्षा, कृषि विज्ञान, चिकित्सा, ज्योतिष, ग्रह-विज्ञान आदि में अग्रगण्य भारतवर्ष अपनी वीरता के कारण भी संसार में प्रसिद्ध है। यहाँ की धरती को वीर-प्रसूता कहा गया है। इतिहास साक्षी है कि इस देश ने जहाँ संसार को सत्य-अहिंसा, न्याय-नीति, धर्म-परायण का पाठ पढ़ाया है, वहाँ असुरत्व के दमन के लिए, आत्मरक्षा के लिए उसने वीरता भी प्रदर्शित की है। वीरता हमारी शक्ति है, जिससे हम संगठित रहे हैं और हमारे धर्म तथा संस्कृति की रक्षा हुई है। किन्तु आज जो परिस्थितियाँ हमारे आगे दिखलाई पड़ रही हैं, उनसे भारी असंतोष होता है। अन्य आध्यात्मिक तत्त्वों की तरह राष्ट्र की वीर भावनायें भी घटती चली जा रही हैं।

वीर संस्कार प्रत्येक युग में आवश्यक रहे हैं। भगवान राम ने रावण की दुष्टता का दमन किया था। कृष्ण ने कौरवों का मान-मर्दन किया था। शिवाजी, राणाप्रताप, झाँसी की रानी की वीरतापूर्ण कहानियाँ इतिहास के पन्नों-पन्नों में अंकित हैं और वे युग-युगान्तरों तक असत्य, अनीति और अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने की प्रेरणा देती रहेंगी। यहाँ वीर भावना केवल काव्य का विषय नहीं, वह सर्व-साधारण की उद्दात्त जीवन-पद्धति रही है। शत्रु से युद्ध करते हुये मृत्यु का आलिंगन करना यहाँ शोक का नहीं, आल्हाद और उत्सव का विषय माना जाता रहा है। शास्त्रों का गहन अध्ययन करने वाले पंडित अपनी पीठ पर तर्कस और कंधों पर प्रत्येक-क्षण धनुष डाले घूमते थे ताकि आवश्यकता पड़ने पर वे दुष्टों से संघर्ष भी कर सकें। जो उपदेश से न मानें उन्हें शक्ति और बल के द्वारा भी सिखाया-जगाया जा सके। "शक्ति और सरस्वती की" समवेत् साधना इस देश की विशेषता रही है।

मातायें अपने बालकों को पालने में झुलाती हुई कहती थीं—

इला न देणी आपणी, हालरिया हुलराय।

पूत सिखावै पालणै मरण बड़ाई—पाय।।

"ओ ! मेरे प्यारे पुत्र ! अपनी धरती शत्रु के हाथ न जाने देना चाहे तेरे प्राण क्यों न चले जायँ। मृत्यु तो मनुष्य का बड़प्पन है।" माताओं के इन शब्दों में क्या ही अनौखी शान थी, कितना गौरव था उनकी आत्माओं में। तभी तो उनकी आत्मा का रस पीकर परिवर्द्धित होने वाले बालक भी इतन प्रौढ़-भावनाओं के होते थे जो इस संसार में जीवन और मृत्यु को खेल समझते थे। उन्हें न जीवन के प्रति कोई राग होता था न मृत्यु से भय। देश की रक्षा के लिए, धर्म की रक्षा के लिए सब से आगे बढ़ कर प्राण देने की प्रतिद्वन्द्विता होती थी। मौत भी उन शूरवीरों की वीरता के आगे सिर झुका देती थी।

किन्तु आज वह संस्कार जाने कहाँ लोप होते जा रहे हैं। न तो हमारी माताओं में वह तेजस्विता रही है कि बेटों को जीवन-संग्राम के लिये विधिवत् तैयार कर सकें और न अब वह वातावरण ही रहा है। अपने से गई-गुजरी स्थिति के व्यक्ति को डराने, धमकाने और रौब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिखाने को ही लोग वीरता समझते हैं। पड़ौसियों को नीचा दिखाने में लोग शान समझते हैं। हतवीर्य बालक अल्प अवस्था से कायर, कमजोर और जरा-सी परिस्थिति में घबड़ा जाने वाले होते हैं। लड़ाई तो वह स्वप्न में भी देख लें तो दिल धक-धक करने लगे। इस साहस की कमी का एक ही कारण है—वीरतापूर्वक संस्कारों का जागरण न किया जाना। पहले शिक्षा के साथ युद्ध का भी अभ्यास कराया जाता था। शास्त्र के साथ शस्त्र की भी पूजा की जाती थी। छोटे-छोटे बालकों को प्रारम्भ से ही कठोर जीवन बिताने का अभ्यास कराया जाता था। कथा-कहानियाँ भी उन्हें ऐसी ही सुनाई तथा पढ़ाई जाती थीं जो सच्ची और घटनात्मक होती थीं। इससे बालकों का साहस जाग्रत होता था और वीरता के संस्कार परिपुष्ट होते थे। आहार आदि की व्यवस्था भी ऐसी ही होती थी, जिससे उनका शरीर शक्तिशाली बना रहता था। आने वाली मुसीबत का वे वरदान की तरह स्वागत करते थे। प्रत्येक नवयुवक इस प्रतीक्षा में रहा करता था कि कब कोई ऐसा समय आये जब उन्हें अपनी प्रतिभा एवं शक्ति प्रदर्शन का अवसर मिले। उनका शौर्यत्व सदैव जाग्रत बना रहता था। पर यह परिस्थितियाँ अब कहीं दिखाई नहीं देतीं।

वीरता के संस्कार संघर्ष, शक्ति और कठोर जीवन-पद्धति से बनकर आते हैं। किन्तु अब इनमें से एक भी परिस्थिति दिखाई नहीं देती। लोगों के मनोबल इतने गिरे हुये हैं कि अपने सामने अन्याय होता हुआ देखकर भी तमाशबीन की तरह चुपचाप खड़े रहते हैं। बुरे तत्त्वों और बुराइयों से टक्कर लेने की उनकी जरा भी हिम्मत नहीं पड़ती। विलासिता, राग-रंग, सिनेमा-शौकीनी बढ़ने के कारण लोगों के दिल बिलकुल छोटे होते जा रहे हैं। अन्धकार में पैर रखते हुए काँपते हैं। शरीर में थोड़ी-सी पीड़ा हो जाय तो यों चिल्लाते, रोते और कराहते हैं मानो उन पर कोई मुसीबत का पहाड़ टूट पड़ा है। शरीरों में सहन शक्ति रही नहीं, हृदय कमजोर पड़ गये हैं, सरल जीवन में ही सुख अनुभव करने की भद्दी आदतों ने आज देश की वीर-भावनाओं को मटियामेट करके रख दिया है।

क्षात्र-धर्म मनुष्य जीवन की अनिवार्य आवश्यकता है। उसका पालन न किया जाय तो न देश की सुरक्षा संभव हो सकती है न जाति, धर्म और संस्कृति की। **''वीर-भोग्या वसुन्धरा''** की कहावत के अनुसार धरती में जीने का सच्चा आनन्द वीरों को मिलता है। पर यह वीरता उद्धतपन, अत्याचार या डाकुओं जैसा साहस नहीं है। राणासाँगा, रणजीत सिंह, गोरा बादल, फतेहसिंह, जोरावर सिंह, भगतसिंह, महात्मा गाँधी तथा ब्रिगेडियर शैतान सिंह की तरह किसी आदर्श की रक्षा के लिये आत्म-बलिदान की भावना का नाम ही वीरता है। प्रेम और मृत्यु वीरों के लिये समान होते हैं। धर्म और कर्त्तव्य-पालन के लिए जो बड़े से बड़े प्रलोभन को ठुकरा सकता है, जिसे न जीवन में आसक्ति होती है न मौत से घबराहट, वही सच्चा वीर है। वीरता से मनुष्य की स्थिर भावना और उसकी निष्ठा की परीक्षा होती है। जो इस कसौटी पर सही उतरते हैं उन्हें ही वीर कहा जायेगा, फिर भले ही रणक्षेत्र में प्राण-त्याग करें या सामाजिक जीवन के किसी सत्य आदर्श के लिए संघर्ष करते हुये जीवन बलिदान करना पड़े।

हमारी इस शानदार परम्परा का ह्रास नही होना चाहिये अन्यथा इस देश का गौरव मिट जायगा। हमारी भावनाओं में यदि वह शक्ति न हुई, जिससे आस-पास फैली हुई दुष्टता से मुकाबला किया जाता है तो हमारे हित भी सुरक्षित न रह सकेंगे। निर्बल चिड़ियों को जिस तरह बाज झपट ले जाता है उसी तरह हम भी लूट लिये जायेंगे। कायर को कहीं शरण नहीं मिलती। अपनी रक्षा मनुष्य स्वयं कर सकता है। अपने मुकाबले के लिये उसे स्वयं कठोर और साहसी बनना पड़ता है। दूसरों के सहारे जिन्दगी बिताने में कुछ आनन्द भी नहीं आता। यह संभव भी नहीं है कि किसी दूसरे व्यक्ति या राष्ट्र का संरक्षण सदैव ही मिलता रहे, क्योंकि दूसरों के भी अपने हित होते हैं और उनकी सुरक्षा भी उन्हें करनी पड़ती है। अतः हमारे लिये परम आवश्यक है कि हम अपने जीवन में वीरता के संस्कारों का स्वतः जागरण करें अपने पैरों पर आप खड़े हों।

अब वह युग आ गया है जब हमें इस बात पर गम्भीरता से विचार करना है कि आत्म-रक्षा और आत्म-कल्याण के योग्य हम में शक्ति, सामर्थ्य तथा उत्कट भावनाएँ जाग्रत हों। आत्म-पतन की ओर इसी गति से बढ़ते रहे तो जो गौरव अभी तक अन्य जातियों के समक्ष हम को जीवित किये हुये हैं वे भी नष्ट हो जायेंगे और हमारी गणना संसार के निकृष्ट श्रेणी के लोगों में होने लगेगी।

''वीरता हमारा स्वभाव है, हम शक्ति के उपासक हैं, संघर्ष से हम नहीं घबराते।'' इन मान्यताओं को फिर से जगाने की जरूरत है ताकि हमारे धर्म, संस्कृति तथा आदर्शों की रक्षा हो सके। आओ आज वेद भगवान की इस प्रार्थना को फिर दोहरायें—

त्वं शुष्मिन् पुरुहूत याजयन्तमुपब्रुवे शतक्रतो।
स नो रास्व सुवीर्यम्।।

ऋ० वे० ८/९८/१२

हे प्रभो ! आप उन्हें अधिक प्यार करते हैं जो शक्तिशाली होते हैं, अतः हम भी शक्तिशाली, वीर और बलवान बनेंगे।''

आत्मबल का मूल उद्गम केन्द्र

पशुओं में शरीर बल काम करता है किन्तु मनुष्य का प्रधान बल उसका मनोबल ही है। शरीर उसका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधारण-सा है पर यदि मनोबल पर्याप्त हुआ तो साधारण शरीर होते हुए भी वह महान कार्य सम्पादन कर सकता है इसके विपरीत देह से हट्टे-कट्टे होते हुए भी कितने ही व्यक्ति मनोबल की दृष्टि से दुर्बल होने के कारण बड़े दीन-हीन देखे जाते हैं। महात्मा गान्धी ठिंगने और दुबले-पतले आदमी थे। उनका वजन कुल ९६ पौंड अर्थात् ४७ सेर के करीब था, फिर भी वे अपने अपार मनोबल के सहारे उस ब्रिटिश सिंह से लड़ पड़े जिसके राज्य में सूर्य कभी अस्त नहीं होता था और जिसके पास हर किसी को कुचल डालने लायक पर्याप्त शक्ति मौजूद थी।

साहस के बल पर लोगों ने बड़े-बड़े कठिन कार्य पूरे किये हैं। असहाय फरिहाद अपनी प्रेमिका शीरी की खातिर एक बड़े पर्वत को काटकर लम्बी नहर खोद लाने में सफल हुआ था। उसके पास एकमात्र बल—मनोबल ही था। संसार में अगणित ऐसे नर-रत्न हुए हैं जिनने अभावग्रस्त परिस्थितियों में रहते हुए अपने साहस के बलबूते किन्हीं असंभव दीखने वाले महान कार्यों की ओर कदम बढ़ाये और भारी संघर्ष में उलझते हुए अन्त में सफलता के शिखर तक जा पहुँचे। इसके विपरीत सब प्रकार की सुविधाओं से सम्पन्न होते हुए भी अनेक व्यक्ति असफल और हताश रहते देखे जाते हैं। इसका कारण बहुधा उनके मनोबल की दुर्बलता ही होती है।

मनोबल की न्यूनता

इच्छा-शक्ति और संकल्प-बल की कमी का नाम ही कायरता है। कायर व्यक्ति हर घड़ी डरते रहते हैं। उन्हें अपने चारों ओर आशंका, अविश्वास और असफलता के चिह्न ही दीखते रहते हैं। थोड़ी-सी कठिनाई को देखकर वे बहुत घबराते हैं और जरा-सी विपत्ति आने से किंकर्तव्यविमूढ़ होकर पागलों जैसी चेष्टाऐं करने लगते हैं। आत्महत्या ऐसे ही उद्विग्न लोग कर बैठते हैं। हर समय चिन्ता, शोक, भय, आशंका में डूबे रहकर अपनी नींद हराम कर लेते हैं। कायर व्यक्ति निरन्तर परेशान बने रहते हैं। कोई न कोई छोटा-मोटा कारण उन्हें डराने और चिंतित करने के लिए पैदा होता ही रहता है। इसके विपरीत जिनमें साहस है, मनोबल है वे मौत के साथ जूझते हुए भी हँसते देखे गये हैं। युद्ध के मोर्चे पर जहाँ दोनों ओर से गोलियाँ सनसनाती रहती हैं, उस मौत के साये में भी वीर-योद्धा हँसते, विनोद करते और नींद आने पर खर्राटे की गहरी नींद सोते रहते हैं। बड़ी से बड़ी आपत्ति में वे अपने धैर्य, साहस और विवेक को स्थिर रखते हैं तथा कठिन परिस्थिति आने पर दूने उत्साह से उसे पार करने का प्रयत्न करते हैं। डरते वे किसी से भी नहीं। अपने पर और अपने भगवान पर जिसे भरोसा है वह क्यों किसी से डरेगा ? क्यों निराश एवं हतोत्साहित होगा ?

सांसारिक सभी कार्यों को सफलतापूर्वक सुसम्पन्न करने के लिए मनोबल की आवश्यकता होती है। इसी के आधार पर दुर्बल शरीर प्रचुर पराक्रम दिखा देता है और उसी के आधार पर साधारण मस्तिष्क महत्त्वपूर्ण निर्णय करते हैं। इसलिए जीवन की महत्त्वपूर्ण सम्पदाओं में मनोबल का होना एक बड़ी विभूति मानी जाती है। जिसके पास यह है, उसके पास कुछ न होते हुए भी बहुत कुछ है। वह अपना तो रास्ता बनाता ही है, अन्य अनेकों का भी नेतृत्व करता है।

संकल्प शक्ति की दुर्बलता

आध्यात्मिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भी इस मनोबल की नितान्त आवश्यकता है। इसके अभाव में कोई व्यक्ति न तो वासना पर नियन्त्रण कर सकता है। और न तृष्णा के बन्धनों से छूट सकता है। बार-बार वह किन्हीं दुर्गुणों को त्यागने की इच्छा करता है, उनके परित्याग का संकल्प भी करता है पर आन्तरिक दुर्बलता के कारण वह बात निभती नहीं। मनोवेगों का उफान जब आता है, तो उस परित्याग के दुर्बल निश्चय को बात की बात में उखाड़ फेंकता है। जप, तप, ध्यान, भजन, पूजन आदि करने का कार्यक्रम बनता है। थोड़े दिनों में वह जोश ठंडा होते ही आलस आ घेरता है और बनाया हुआ कार्यक्रम छूट जाता है। कई बार इस प्रकार आत्मोन्नति के प्रयत्न असफल हो जाने पर फिर हिम्मत ही नहीं रहती। मनुष्य सोच लेता है कि यह सब हमारे वश का नहीं, हम से यह सब नहीं निभेगा। भगवान की इच्छा हमारा कल्याण करने की नहीं दीखती।

लौकिक और पारलौकिक पुरुषार्थों की सफलता का प्रमुख आधार मनोबल है। साहस और धैर्य के बिना किसी को इस संसार में कोई कहने लायक सफलता नहीं मिली। इसलिए मानव-जीवन का पूरा लाभ उठाने के इच्छुक सदा से अपने मनोबल को बढ़ाने का प्रयत्न करते रहे हैं। जिसे यह तत्त्व जितनी अधिक मात्रा में उपलब्ध हो गया उसका मनोरथ उतना ही सफल होता देखा गया है।

आन्तरिक सामर्थ्य की प्रधानता

यह इतना उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण पदार्थ 'मनोबल' आखिर है क्या ? आइए इस पर विचार करें। मनोबल को शरीरबल या बुद्धिबल नहीं कहा जा सकता क्योंकि देह के दुर्बल होते हुए भी कितने ही व्यक्तियों में भारी मनोबल पाया जाता है। कुख्यात 'ताँतिया' डाकू बहुत दुबला था। उसका असली नाम कुछ और था पर शरीर रुई धुनने की ताँत-सा पतला देखकर लोगों ने उसका नाम 'ताँतिया' रख दिया था। इसी प्रकार शिक्षा या मस्तिष्क की उर्वरता से भी मनोबल का कोई संबध नहीं है। पंजाब-केशरी रणजीतसिंह, बादशाह अकबर और संत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कबीर शिक्षा की दृष्टि से अशिक्षितों में गिने जाते हैं पर उनका मनोबल प्रचंड था। तेज दिमाग वाले अनेक वकील अदालतों के आगे धरना दिये बैठे रहते हैं। उनमें से कितने हैं जो अपने मनोबल के आधार पर कोई महान पुरुषार्थ कर सकने में सफल हुए हों ?

शरीर और मस्तिष्क के बल भी उपयोगी एवं आवश्यक हैं पर मनोबल उन दोनों में भिन्न है। वस्तुत: इस महान तत्त्व की अपनी एक स्वतन्त्र सत्ता है, जिसका असली नाम 'प्राणतत्त्व' है। प्राण ही जीवन है। भीष्म पितामह के शरीर में यह प्राण ही प्रचुर मात्रा में था जिसके बल पर वे छ: महीने शरशैय्या पर पड़े हुए अपना जीवन धारण किये रहे। जन्मजात रूप से यह प्राण किसी को कुछ अधिक मात्रा में मिलता है, कोई इसे अपने प्रयत्नों से बढ़ाते हैं, पर जिनके पास भी इसकी समुचित मात्रा होगी, वह वीर पुरुषों की भाँति जियेगा। उसके प्रत्येक कार्य में से पराक्रम और पुरुषार्थ छलक रहा होगा। साहस और धैर्य उसमें भरे होंगे और निराशा एवं अधीरता उससे कोसों दूर रही होगी। उत्तेजना के अवसर आने पर भी वह आत्म-नियन्त्रण रख सका होगा, विपत्ति में भी उसे मुसकराता हुआ देखा जा सकता है।

प्राणशक्ति की महिमा

रोगी में यदि प्राणतत्त्व की समुचित मात्रा रही हो तो वह देर तक बीमारी से मुकाबला कर सकता है और असाध्य लगने वाले रोगों को भी परास्त कर सकता है। प्राणायाम द्वारा योगी लोग इसी प्राणतत्त्व का संग्रह करते हैं और इच्छित समय तक जीवित रह सकने की सिद्धि प्राप्त करते हैं। प्राण की प्रचुरता होने पर अपनी कितनी ही समस्याओं को हल कर लेना, दूसरों को प्रभावित करना, उन्हें आवश्यक शक्ति प्रदान कर सकना, दूसरों के शारीरिक, मानसिक रोगों का निवारण कर सकना कैसे संभव हो सकता है ? इसकी चर्चा हम अपनी 'प्राण चिकित्साविज्ञान', 'परकाया प्रवेश' और 'मानवीय विद्युत के चमत्कार' पुस्तकों में लिख चुके हैं। तनबल, धनबल, बुद्धिबल आदि से जितने प्रयोजन सिद्ध हो सकते हैं, प्राणबल के द्वारा उससे अनेक गुनी महत्त्वपूर्ण सफलताऐं प्राप्त कर सकना संभव हो सकता है।

'प्राण' भी हवा, गर्मी (बिजली), आकाश (ईथर) आदि की तरह एक तत्त्व है, जो इस निखिल विश्व में संव्याप्त ही रहता है। परमाणुओं से यह विश्व भरा पड़ा है परमाणु शक्ति से ही संसार का सारा व्यापार चल रहा है पर अपने प्रयोजनों के लिए अणुशक्ति को काम में लेना एक विशेष विद्या है। जो उस विद्या को जानते हैं, वे ही अणुशक्ति चालित यन्त्रों का निर्माण एवं अणुबमों का उत्पादन कर सकते हैं। प्राणविद्या के सम्बन्ध में भी यही बात है। ऐटम जड़ है इसलिए उसकी शक्ति सीमित है। प्राण चेतन है इसलिए उसकी सामर्थ्य भी असीम है। प्राचीनकाल के अध्यात्म विज्ञानवेत्ता अणुशक्ति को तुच्छ और प्राणशक्ति को महान मानते थे, इसलिए उनने अध्यात्म विज्ञान में प्राण विद्या को प्रमुख स्थान दिया था, प्राणायाम को आत्मोत्थान का प्रधान साधन माना था।

गायत्री की प्राण-विद्या

'गायत्री' प्राण-विद्या ही है। 'गाय' का अर्थ है प्राण, 'त्री' का अर्थ है त्राण करने वाली। प्राण शक्ति की मानव जीवन में सुरक्षा एवं अभिवृद्धि करने वाली विद्या गायत्री ही है। 'गायत्री' का देवता 'सविता' माना गया है। सविता का मोटा अर्थ सूर्य होता है, पर उसका वास्तविक अर्थ प्राण ही है। प्राण ही गायत्री का देवता है। इस रहस्य पर 'अखण्ड ज्योति' में 'गायत्री का देवता सविता' लेख में कुछ प्रकाश डाला भी जा चुका है। गायत्री की उच्चस्तरीय भूमिका में प्रवेश करने वाला साधक अपने को जिन शक्तियों तथा सिद्धियों से ओत-प्रोत पाता है वस्तुत: वह प्राण शक्ति का ही प्रसाद एवं चमत्कार होता है।

आत्म-उत्कर्ष मार्ग के पथिकों का कार्य प्राण साधना के बिना नहीं चल सकता। इस तत्त्व का संग्रह किये बिना उनका मनोबल दुर्बल रहेगा। संकल्प बीच में ही टूट जायेंगे और लक्ष्य की ओर चलते हुए थोड़ी ही दूर पर पैर लड़खड़ाने लगेंगे। साधना का पहिया निर्जीव यंत्र की तरह घूमता तो रहेगा पर उसमें कुछ चमत्कार उत्पन्न न होगा। प्राण को मनोबल नहीं, आत्मबल का प्रतीक मानना चाहिए। हमारी प्राण-साधना जितनी ही प्रबल होगी, उतने ही मनोबल से, आत्मबल से हम सम्पन्न होते जायेंगे।

आत्मबल की दिव्य प्रेरणा

पतन के मौसम में गये-गुजरे ही बढ़ते हैं और उन्हीं का विस्तार होते देखा जाता है, किन्तु उत्थान का समय आते ही उसके भी चिन्ह समय से पूर्व प्रकट होने लगते हैं। वह लक्षण है—प्रतिभाओं का अभिवर्धन और उनकी भावनाओं में, गतिविधियों में, उत्कर्षवादी तत्त्वों का अभिवर्धन।

अन्य जीव-जन्तुओं की भाँति मनुष्यों में भी अनगढ़ों की, गये-गुजरों की संख्या बढ़ती रहती है। यही वह चिन्ह है, जिसके सहारे अगले दिनों अशुभ संभावनाओं का विस्तार होने जैसा अनुमान लगाया जा सकता है। अनीति का, अवांछनीयता का जब भी विस्तार हुआ है, तब उससे पूर्व यह पाया गया है कि घटिया व्यक्तित्व ही बढ़ने और क्रियाशील होने लगे हैं। इसी की प्रतिक्रिया परिस्थितियों में विपन्नता बढ़ने के रूप में देखी जाती है, किन्तु जब भावनाशील उत्कृष्टता की पक्षधर आशावादी व्यक्तियों की समर्थता और अभिवृद्धि होने लगे तो समझना चाहिए कि वे संभावनाएँ निकट आ गईं, जो अनौचित्य को गिरातीं और प्रगति के उत्साह भरे आधार खड़े करती हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पिछलों दिनों जब भी सराहनीय क्रान्तियाँ हुई हैं, तब अनुकूलताएँ आकाश से नहीं बरसीं, वरन् मात्र इतना हुआ है कि औचित्य की पक्षधर प्रतिभाएँ बढ़ीं, सुविस्तृत हुईं और कार्यरत् दृष्टिगोचर हुई हैं। मनुष्य की सामर्थ्य असीम है। जब वह प्रकट होती है तो प्रतिभा कही जाती है। यदि वह उच्च स्तर की हो, तो समझना चाहिए कि उनका समुदाय छोटा अथवा स्वल्प साधन वाला होते हुए भी अपने मनोबल के आधार पर महत्त्वपूर्ण अनुकूलताएँ उपार्जित कर लेता है। साथियों की भी कमी नहीं रहती, अनुयायियों का अभाव भी नहीं देखा जाता। सबसे बड़ी बात यह है कि उनके अन्तराल में ऐसे तूफान उठते हैं, जो उच्चस्तरीय वातावरण बनाये बिना रह सकते ही नहीं। व्यक्तिगत वरिष्ठता के चरितार्थ होने पर ऐसा भी होते देखा गया है कि उस उत्साह में असंख्यों भाव-तरंगित होने लगते हैं। यह समुदाय ही उन महाक्रान्तियों की भूमिका बनाता है, जिसे ऐतिहासिक माना और सराहनीय कहा जाता है। कुछ के अन्तराल में उठी आदर्श उमंगें अन्यान्यों को भी अपने रंग में रंग लेती हैं और देखते-देखते उस दिशा निर्धारण पर चल पड़ने वाले असंख्यों मनस्वी ऐसे कार्य कर गुजरते हैं, जिनके अनुकरण करने वाले आश्चर्यजनक संख्या में दीख पड़ते हैं। अनुकूलता भी अपने अनुरूप अनेकों साधकों को एकत्रित कर लेते हैं।

जिन परिस्थितियों में कोई बड़ा काम बन पड़ने की संभावना नहीं होती है, उनमें अनौचित्य को घटाने या मिटाने की संभावना इसलिए नहीं दीखती कि प्रतिकूलताओं का पलड़ा बहुत अधिक भारी दीखता है और टकराने पर जीतने के लक्षण कम ही दीख पड़ते हैं। हार की संभावना को देखते हुए उत्साह भी ठंडा पड़ जाता है। किन्तु होता कुछ ऐसा विलक्षण एवं विपरीत है, जिसमें आशा और अपेक्षाओं का अनुकूल प्रवाह बहने लगता है और अप्रत्याशित सफलताओं के आधार न जाने कैसे और कहाँ से बन जाते हैं। क्रान्तियाँ प्राय: अप्रत्याशित ही हुई हैं उनके लिए न जाने कहाँ से उत्साह उभरा, उफना कि सहयोगियों का दल दौड़ता चला आया और वे परिस्थितियाँ बन गईं जिनकी साधारण बुद्धि से कोई आशा या संभावना नहीं दीख पड़ती थी। हल्के प्रतीत होने वाले व्यक्ति भारी पड़ते हैं और इतने बड़े काम कर दिखाते हैं, जिनकी पूर्व कल्पना कदाचित ही किसी में रही हो। असाधारण शक्ति आदर्शों को अपनाने से उभरती है। प्रतिकूलताओं को अनुकूलताओं में बदल देने वाले अवसर यों कभी-कभी सामान्य मनस्वियों को भी मिल जाते हैं, पर सर्वांगपूर्ण सर्वतोमुखी प्रतिभा उन्हीं में उभरती है जिनमें आदर्शों के पराक्रम कर गुजरने के उल्लास की उमंगें अपने अन्तर में ज्वारभाटों की तरह उठती-उमगती दीखती हों।

व्यवसाय-बुद्धि सदा हानि-लाभ का हिसाब लगाती है और वही करती है, जिसमें अनुकूलता दृष्टिगोचर होती है। सफलता की संभावना के अवसर असंदिग्ध रूप से नजर आते हैं, किन्तु आदर्शवादी पराक्रमों में तात्कालिक घाटा ही दीख पड़ता है। व्यवसाय-बुद्धि ऐसे जोखिम भरे कदम उठाने से रोकती है। मात्र आदर्शों से प्रेरित साहस ही ऐसे समर्थन करता है, जिसमें आदर्शों की रक्षा में घाटा स्पष्ट दीखता है, किन्तु अन्त:करण वैसा कर गुजरने के बिना रुकता ही नहीं। बलिदानियों की परम्परा मात्र उन्हीं के गले उतरती है, जिनके अन्त:करण में दैवी प्रयोजनों के लिए अपना सब कुछ, बहुत कुछ निछावर कर देने हेतु संकट उठाने के साथ-साथ उत्साह भरी उमंगें ही हिलोरें लेती हैं और घाटे में नफा तथा नफे में घाटा देखती हैं। यह दैवी प्रेरण है। वह अपने साथ अकूत शक्ति लेकर कार्य क्षेत्र में उतरती है और न जाने कहाँ-कहाँ से सम्बन्धी-सहयोगियों की प्राणवान मंडली बुलाकर साथ चलने के लिए विवश कर देती है। ऐसे प्रसंगों में देखा यह गया है कि संख्या में कम और क्षमता की दृष्टि से साधारण दीखने वाले लोग भी साहस की दृष्टि से अतिशय बलिष्ठ सिद्ध होते हैं। यों आरम्भ में ऐसे लोगों के बारे में सामान्यतया यह धारणा नहीं बनती कि वे इतने बड़े शौर्य-बलिदान कर गुजरने के लिए उच्चस्तरीय साहस दिखा सकेंगे।

शरीर-बल, साधन-बल, संगठन-बल आदि कितने ही लोगों में होते हैं, पर वे उनका उपयोग भी साधारण या हेय स्तर के कार्यों में ही कर पाते हैं। त्याग-बलिदान में एक प्रकार घाटे की, जोखिम की स्थिति दीखती है, साथ ही वहाँ यह भी प्रतीत होता है कि घाटे के साथ ही असफलता भी मिल सकती है। इतने पर भी यदि आत्मबल उच्चस्तरीय साहस उभार दे तो यही समझना चाहिए कि आत्मबल के रूप में दैवी प्रेरणा कुछ अद्भुत कर गुजरने की प्रेरणा भर रही है। नवयुग के अवतरण पर व्यक्ति में ऐसी ही प्रेरणाओं का बाहुल्य उभरता है और असंभव को संभव बना देता है।

महान परिवर्तन इसी प्रकिया द्वारा सम्पन्न होते रहे हैं व आगे भी महाकाल साधारण मनुष्यों को ही माध्यम बनाकर उनमें नवीन चेतना फूँककर जीवन्त प्राणवान के रूप में उभारकर उनसे असंभव प्रतीत होने वाले कार्य सम्पन्न कर दिखाएगा। मानव में निहित यह संभावना ही युग परिवर्तन का आधार है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संकल्प शक्ति और उसकी अद्भुत परिणतियाँ

जिल्दसाज से महान वैज्ञानिक

माइकल फैरिडे निर्धन के पुत्र होने के कारण प्रारम्भ में एक जिल्दसाज के यहाँ बहुत थोड़े वेतन पर नौकर थे। दुकान पर जिल्द बाँधने के लिए जो पुस्तकें आतीं, उनमें से वे विज्ञान की पुस्तकें चुपचाप पढ़ा करते थे। यह उन्हें अच्छी लगती थीं।

पढ़ते-पढ़ते विज्ञान जैसे विषय में उसकी रुचि जाग्रत हो उठी। कुछ समझ में आने लगा। शौक उत्तरोत्तर बढ़ता गया। तनिक भी समय फालतू मिलता कि फैरिडे किताबों में डूब जाता। जब तक किताब पूरी न पढ़ लेता, उसे न छोड़ता।

अब उसे ज्ञान के प्रति सच्ची लगन लग गयी थी। विज्ञान को समझने की उत्कृष्ट इच्छा पैदा हो गई पर सुविधाएँ और साधनों की बड़ी कमी थी। बड़ा गरीब था।

एक दिन रायल कैमिकल सोसायटी में घोषणा हुई कि सर हैम्फी डैवी का विज्ञान सम्बन्धी भाषण होने वाला है। इस विज्ञप्ति को सुनकर बालक फैरिडे के मन में उसे सुनने की बड़ी इच्छा हुई। इस वैज्ञानिक की बड़ी प्रशंसा सुनी थी। मालिक जिल्दसाज से आज्ञा लेकर वह उस भाषण को सुनने गया। साथ में नोट करने के लिए कागज और पैन्सिल भी लेता गया।

उसे हैम्फी डैवी का भाषण इतना महत्त्वपूर्ण और रोचक लगा कि उसने उसे जल्दी-जल्दी समूचा ही लिख डाला। फिर सुवाच्य अक्षरों में लिखकर उसे हैम्फी के पास दिखाने गया। उन्होंने उसे पढ़ा तो चकित रह गये। इतनी जल्दी उस महत्त्वपूर्ण भाषण को लिख डालने वाला अवश्य ही उस विषय का अच्छा ज्ञाता होना चाहिए।

हैम्फी डैवी ने आश्चर्य से पूछा—"माइकिल फैरिडे हम तुम्हारी लगन और विज्ञान के प्रति असीम उत्साह से बड़े प्रसन्न हैं। तुम आखिर हमसे क्या चाहते हो ?"

माइकिल फैरिडे उनके साथ रहना और विज्ञान का गहरा अध्ययन करना चाहता था। वह किसी समय अध्यापक की शागिर्दी करना चाहता था। इस अवसर से लाभ उठाने की दृष्टि से उसने तुरन्त कहा—"मुझे आप अपनी प्रयोगशाला में कोई छोटा काम दे दीजिए। मैं जिन्दगी गुजारना चाहता हूँ।"

हैम्फी डैवी ने उसकी सेवाएँ स्वीकार कर लीं। अब वह उनकी प्रयोगशाला में तन्मयता से कार्य करता, नई-नई विज्ञान की पुस्तकें पढ़ता, तरह-तरह से अपना ज्ञान बढ़ाता और हैम्फी डैवी के भाषणों को सुनता रहता। जीवन में अध्ययन की जो सुविधा पहले कभी न मिलती थी, वह उसे अब मिल रही थी। अध्ययन और योग्यताएँ बढ़ाने का कार्य ऐसा है कि कभी भी किया जा सकता है। कुछ बड़ी उम्र में ही, माइकल फैरिडे ने तन्मयता और बड़ी लगन से पढ़ना शुरू कर दिया। उत्कृष्ट इच्छा के कारण उसकी योग्यताएँ निरन्तर बढ़ती ही गयीं। बुद्धि प्रखर होने लगी।

एक दिन उसकी जिन्दगी ने नई करवट ली। रात्रि का समय था। अपनी प्रयोगशाला में हैम्फी डैवी कोई महत्त्वपूर्ण घोल (सौल्यूशन) तैयार कर रहे थे। दैवयोग से उन्हें किसी आवश्यक कार्य से प्रयोगशाला से बाहर आना पड़ा। उन्होंने फैरिडे को बुलाया और बोले, "मुझे एक जरूरी काम से अभी बाहर जाना है। इस सौल्यूशन को हिलाना बेहद् जरूरी है। इसमें मेरा एक नया प्रयोग चल रहा है। यदि तनिक भी रुक गया, तो सारा श्रम नष्ट हो जायेगा। तुम इसे इसी प्रकार हिलाते रहना, मैं जल्दी लौटता हूँ। लो सम्हालो काम।"

माइकल फैरिडे ने वह कार्य प्रारम्भ कर दिया। लेकिन न जाने क्या हुआ कि एक घण्टे के बाद भी डैवी वापिस न लौटे। वह प्रतीक्षा करता रहा।

उसका कार्य फिर भी जारी रहा। अब दो घण्टे बीत चुके थे। माइकल फैरिडे के हाथ घोल हिला रहे थे, नेत्रों में नींद आ रही थी। वह नींद को भगा रहा था और समय बीता।

यहाँ तक कि सारी रात ही बाट देखते-देखते बीत गयी। प्रातःकालीन रंगीन रश्मियाँ क्षितिज पर हँसने लगीं।

सुबह जब हैम्फी डैवी आये तो उन्होंने देखा माइकल फैरिडे अब भी तन्मयता और लगन से उनका घोल पूर्ववत् हिला रहा था। वहाँ तनिक शिकायत न थी।

वह लड़के की परिश्रमशीलता और तन्मयता पर दंग रह गये और विज्ञान के प्रति इतनी लगन, इतनी असीम एकाग्रता। अपने शरीर तक की कोई परवाह नहीं। नींद की एक झपकी तक नहीं। जरूर इस लड़के में बड़ा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आदमी बनने के गुण हैं। वही श्रम, वही उद्योग, आज्ञाकारिता, लगन और उत्साह। क्यों न लड़के को ऊँचा उठने का मौका दिया जाय। उनका वात्सल्य जैसे जाग उठा।

वे फैरिडे से बोले, ''तुम्हें विज्ञान के प्रति सच्चा और गहरा लगाव है। पूर्ण निष्ठा है। यह लगन और उत्साह तुम्हारी आदत का एक अंग है। ऐसा कोई कार्य नहीं जो उत्कृष्ट इच्छा और उद्योग से पूर्ण न हो सकता हो। उत्साहपूर्वक मेहनत से तुम विज्ञान में बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकते हो। दृढ संकल्प से तुम जरूर ऊँचे उठोगे । मुझसे थोड़ा-थोड़ा विज्ञान पढ़ा करो मैं तुम्हें उच्चकोटि का वैज्ञानिक देखना चाहता हूँ।''

फैरिडे को जैसे मन की मुराद ही मिल गई। अन्धा क्या माँगे ? दो नयन।

उसने नियमित रूप से बड़ी लगन और उत्साह से व्यवस्थित रूप में विज्ञान का अध्ययन प्रारम्भ कर दिया। उसने अपनी सारी ताकतें उसी में लगायीं और आश्चर्य जनक योग्यता उपार्जित की। अन्त में उसके परिश्रम से बड़े बहुमूल्य परिणाम निकले।

फैरिडे ने विद्युत परिचालित डाइनमा, चुम्बक से बिजली पैदा होने के सिद्धान्त तथा इलेक्ट्रोनिक्स के नियम मालूम किये। रसायन शास्त्र तथा भौतिक शास्त्र दोनों में ही फैरिडे का नाम अति आदर के साथ लिया जाता है।

एक जिल्दसाज से उच्चतम वैज्ञानिक ? उत्साहपूर्वक कार्य कभी भी प्रारम्भ किया जा सकता है। वह सदैव ऊँचे फल पाता है।

गुप्त मन की विराट शक्ति

एक व्यक्ति था, जो अपनी पत्नी द्वारा ''महामूर्ख'' कहा गया, बुरी तरह तिरस्कृत और लांछित हुआ। बात उसके गुप्त मन में लग गई। उसे बड़ा बुरा लगा। उसने पत्नी को छोड़ा और बड़ी आयु में विद्या-अध्ययन में लग गया। दीर्घकाल के अभ्यास और अटल संकल्प के बल से वह संस्कृत का महाकवि कालिदास बना। समग्र भारत उसकी प्रतिभा और विद्या से चमत्कृत हो उठा। उसके गुप्त मन में काव्यशक्ति का वृहत् भण्डार छिपा हुआ था।

एक डाकू था, जिसकी जीविका का उपार्जन मुसाफिरों को लूटने और हत्याएँ करने से चलता था। एक दिन एक मुनि उसकी पकड़ में आ गये। उसने उन्हें भी मारना चाहा पर उन्होंने विनीत भाव से उससे कहा, जिन व्यक्तियों के पालने के लिए तुम इतने व्यक्तियों का पाप अपने ऊपर ले रहे हो, क्या वे तुम्हारे इस पाप में हिस्सेदार बनेंगे ? जाओ और अपने परिवार वालों से पूछो।'' डाकू चला गया। उसने यह बात पूछी लेकिन उनका उत्तर सुनते ही उसका चेहरा उतर गया। उनका उत्तर था, ''हम तुम्हारे आश्रित हैं। तुम्हारा कार्य हमारे लिए भोजन की व्यवस्था करना है। वह पाप से होती है या पुण्य से इससे हमें क्या प्रयोजन ?'' उसे ज्ञान हुआ, वह बदलकर महर्षि वाल्मीकि बन गया। उसकी गुप्त शक्तियाँ यकायक खुल गईं। उन्होंने संसार को अपनी बुद्धि से चमत्कृत कर दिया।

इसी प्रकार न जाने कितने महान पुरूष हुए हैं, जिन्हें किसी मानसिक आघात या आकस्मिक झटके से अपने गुप्त मन में सोई पड़ी गुप्त शक्तियों का ज्ञान हुआ, उनके जीवन का पृष्ठ बदला और वे अपने गुणों से संसार को चमत्कृत, विस्मित कर गये।

आप में भी आसाधारण गुप्त शक्तियों—मन, शरीर, आत्मा की असंख्य शक्तियों का भण्डार छिपा हुआ है। खेद है कि आप अपने को साधारण प्राणी मानते हैं। आप कभी भी ऐसा विचार नहीं करते कि हम में दिव्य और आश्चर्यमयी शक्तियाँ छिपी पड़ी होंगी। सच मानिये, आप शक्तियों के वृहत् भण्डार हैं।

घोड़ों को यदि शारीरिक शक्ति का ज्ञान हो जाये, तो वे हमारे वाहन न रहें। हाथी अपनी शारीरिक ताकतों से विश्व को अपने वश में ही कर लें। शेर, चीता, रीछ, भैंसे, बैल, खच्चर इत्यादि पशुओं को अपनी शक्तियों का ज्ञान हो जाय, तो वे हम पर राज्य ही करने लगें।

ये पशु हमारे लिए इतनी तेजी से बड़े-बड़े बोझ ढोते हैं, भारी काम करते हैं, जो मनुष्य नहीं कर सकता। यदि वे सब अपनी शक्तियों को मनुष्य के विरुद्ध लगायें तो कदाचित वे हमें अपना वाहन बना सकते हैं। हमारे ऊपर सवारी कर सकते है।

जिस प्रकार ऐसे उपयोगी प्राणियों को अपनी शक्ति का ज्ञान नहीं है, ऐसे आपको भी अपनी शक्तियों का पता नहीं है। हम अशक्त हो, अन्धेरे में भटक रहे हैं। हम रास्ता ढूँढ़ रहे और पंगु बने हुए हैं।

यदि हमें अपनी शक्तियों का ज्ञान हो जाय, तो हमें दुःख, भय, चिन्ता, आपत्ति, शोक, द्वेष आदि का बिल्कुल भी भान न हो, ये दुष्ट मनोविकार हमारा कभी भी कुछ न बिगाड़ सकें। हमारे स्वास्थ्य, मन और जीवन पर इनका कोई भी बुरा प्रभाव न हो। खेद है कि हम इन दुष्टों के आसानी से वश में आ जाते हैं और अपना सर्वनाश कर लेते हैं। हम अपना भाग्य बुरा समझ लेते हैं, संसार फीका-फीका मालूम होने लगता है। जीवन भार स्वरूप प्रतीत होता है।

खेद है कि कभी तो हम ईश्वर पर भरोसा करते हैं, कभी प्रारब्ध को मानने लगते हैं फिर कभी ''पुरुषार्थ, पुरुषार्थ'' कहकर गला फाड़ने लगते हैं। हम कभी स्थिर नहीं रहते। हमारा मन सदैव इसी प्रकार डाँवाडोल रहता है। हम पूजा-पाठ भी करते हैं, पर जब अल्पकालिक और अस्थिर मन से करने के कारण धन-दौलत या सिद्धि प्राप्त नहीं होती, तो हमारा विश्वास सब पर से उठ जाता है। हम इन्हें ढोंग मानने लगते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वास्तविक कमजोरी यह है कि अभी हमें स्वयं अपने ऊपर विश्वास नहीं है। हम दूसरों को धनवान और शान-शौकत से रहते देख उन्हें सुखी समझते हैं, पर यदि हम उन्हें अन्दर से देखें तो हमारे विचार बदल जायँ।

आप पूछेंगे कि लोगों के पास बहुत-सा धन है, सुख है, इतना वैभव-बड़प्पन और अधिकार हैं फिर भी दुःख कैसे ? उन पर ईश्वर की बड़ी कृपा है, पर हम पर प्रकोप या ईश्वर की अकृपा कैसे ? हमारे पास ऐश्वर्य के साधन नहीं हैं और उनके बिना हम दुःखी हैं और उनके पास सब साधन हैं इसलिए वे सुखी हैं।

पर यह आपका केवल भ्रम है। ईश्वर का इसमें कोई पक्षपात नहीं है। ईश्वरीय शक्तियाँ, विपुल ताकतों, मानसिक, शारीरिक, आत्मिक सम्पदाओं का जो अंश उनमें है, वही वास्तव में आप में भी मौजूद है। यह याद रखिए कि सतत् परिश्रम और एक लक्ष्य सिद्धि से ही भाग्य बनता है। जनता की सतत इच्छा साधना से देश उठता है। इच्छा एक प्रबल शक्ति है, जो अपना मार्ग खोज निकालती है। मूर्खों का प्रारब्ध एक बहाना मात्र है। वास्तव में प्रारब्ध या तकदीर कोई वस्तु नहीं है।

जहाँ कार्य-कारण का अटूट सम्बन्ध है, वहाँ प्रारब्ध और तकदीर मानना मूर्खता के अतिरिक्त क्या है ? जिसे विचार करने का मार्ग मालूम नहीं है, जो प्रत्येक कार्य के पीछे काम करने वाले कारण को नहीं जानता है और जीवन के तूफानों से सदा डाँवाडोल रहता है, वही अपने कल्पित भूत-प्रेतों और बुरे ग्रहों का दास बना रहता है।

संकल्प ने परिस्थितियों को परास्त किया

अँग्रेजी के प्रसिद्ध लेखक सर वाल्टर स्काट ने किताबें लिखकर स्वयं साझीदार के साथ उन्हें छापने का काम चालू कर दिया। प्रेस भी चलने लगा।

दुर्भाग्य से उसका साथी ईमानदार और लगन वाला न था। दोनों में ही व्यापारिक चातुर्य की कमी थी। नतीजा यह हुआ कि प्रेस घाटे में चलने लगा। अनेक वर्ष तक उसके लाभ में चलने की आशाएँ लगाते रहे। कर्ज दिन दूना, तो रात चौगुना बढ़ता है। प्रेस पर ऋण का बोझ बढ़ गया। साझीदार भाग खड़ा हुआ और सारा ऋण वाल्टर स्काट के ऊपर आ गया।

दिन-रात पर्वत जैसे कर्ज का बोझ सोचते-विचारते कोई साधारण मनोबल का व्यक्ति होता, तो सम्भव था पागल हो जाता अथवा मानसिक भार से परेशान होकर आत्म-हत्या ही कर बैठता। उसका मानसिक सन्तुलन समाप्त हो जाता।

पर वाल्टर स्काट विषम परिस्थितियों से हार मानने वाले लेखक न थे। वे जीवन युद्ध के वीर सिपाही थे।

उन्होंने ऋण उतारने के लिए लेखन व्यवसाय से सम्बन्धित कई कार्य प्रारम्भ किये। कभी कोई मासिक-पत्र प्रकाशित किया, कभी दूसरों की पुस्तकें छापीं, अखबार निकाले, असंख्य उद्योग किये। वे विषम परिस्थिति से निकलने के निरन्तर कोशिश करते ही रहे। आशा और उत्साह बनाये रहे।

आखिर एक गोली निशाने पर बैठ ही गई। लेखन के प्रयोग में ऐतिहासिक उपन्यासों के क्षेत्र में यकायक उनका नाम चमक उठा। वे जमकर महीनों, वर्षों तक लिखते ही रहे, उनके पाठक बार-बार उनसे ऐतिहासिक उपन्यासों की माँग करते ही रहे। अन्त में उनकी लेखन शैली इतनी परिष्कृत हो गई कि उनका यह व्यवसाय अच्छे लाभ में चल निकला। उन्होंने अनेक सुन्दर उपन्यास लिखे जिनका खूब स्वागत हुआ और उनकी आय से कर्ज का भुगतान हुआ।

अपनी लेखनी के बल पर स्काट ने अपने ऊपर चढ़े लाखों रुपयों के कर्ज को उतार डाला। यही नहीं और भी असीमित धन उपार्जित किया। सदा के लिए उनकी गरीबी गई और स्थायी यश-समृद्धि की प्राप्ति हुई। ऐतिहासिक उपन्यास के क्षेत्र में वे अमर हो गये।

वाल्टर स्काट की सफलता का रहस्य क्या था ?

कभी भी विकट परिस्थिति से हार न मानो। बल्कि जितनी भी कठिन परिस्थिति हो, उतना ही अधिक धैर्य और उत्साह बाहर निकालो। तरह-तरह की कोशिशें करो, कई-कई जगह काम करो। कहीं न कहीं से सफलता प्राप्त हो ही जायेगी। संकल्प की मजबूती, धैर्य और साहस से आदमी जीतता है।

उन्होंने कभी असफलता में हार नहीं मानी और निराशा को पास नहीं फटकने दिया। जिसके पास कभी भी जीतने की आशा है, काम में उत्साह है और मन में धैर्य है, उसका संकल्प एक न एक दिन निःसन्देह सफल होकर रहता है।

नाविक लड़के का उत्साह

दूसरों को देखते समय भी प्रधानता हमारे अपने ही दृष्टिकोण की हुआ करती है। हताश व्यक्ति को चारों ओर अर्थहीनता, नीरसता ही दिखाई पड़ती है। संकल्पहीन व्यक्ति सदैव दूसरों की विफलता देखते और स्मरण करते रहते हैं तथा भयभीत—आशंकित बने रहकर कभी कोई महत्त्वपूर्ण काम शुरू ही नहीं कर पाते। यह निषेधात्मकता अस्वाभाविक है। इसे मनोविकृति ही कहा जा सकता है। दूसरों को मरते देखकर स्वयं भी मृत्यु भी निश्चित मानना एक बात है और उस मृत्यु से भयभीत रहकर जीने से ही कतराने लगना भिन्न बात है। निराश दृष्टिकोण पाल लिया जाय, तब तो किसी भी काम में हाथ लगाते न बनेगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक नदी में मल्लाह का लड़का नाव चला रहा था। नदी में काफी पानी था और नाव गहरे में थी, सहायता के लिए कोई पास न था । एक सौदागर गौर से देर तक उस नाविक लड़के को देखता रहा। लड़का बराबर पतवार चलाता रहा। हिम्मत से आगे बढ़ता ही गया। अन्त में नाव किनारे पर आ लगी। सौदागर उससे बातें करने का इच्छुक था।

उसने पूछा—"क्यों जी, तुम्हारे बाबा की मृत्यु कैसे हुई ?"

लड़का आश्चर्य में पड़ गया। अजीब-सा सवाल था वह। इस तरह के सवाल के लिए कदापि तैयार न था।

बाल-नाविक ने दुःख भरे स्वर में उत्तर दिया—"नाव चलाते समय दुर्भाग्य से तूफान आ गया। दुर्भाग्य से लहरों का पानी बहुत ऊँचा उठ आया। यकायक नाव पानी में पलट गई और इसी नदी में डूबकर मेरे बाबा की मृत्यु हो गई।" —लड़के की आँखें गीली हो गयीं। लड़के का उत्तर सुनकर सौदागर विस्मय में पड़ गया। वह कुछ देर तक चुप रहा, फिर आगे पूछा—

"और तुम्हारे पिताजी ?"

अभी सवाल पूरा भी न हुआ था कि बालक ने छूटते ही उसी करुण स्वर में जबाव दिया—"उनकी भी मृत्यु इसी तरह नदी में तूफान से हुई थी। दोनों एक ही तरह मरे।"

अब सौदागर दुःख से उद्विग्न था। मन में परेशानी दबाये था। कुछ देर तक चुप रहकर बोला—

"मेरे नन्हें दोस्त ? जब तुम्हारे बाबा और तुम्हारे पिता दोनों ही नाव चलाने के इस खतरनाक काम में मौत के शिकार हुए हैं तो तुम जान-बूझकर यह खतरनाक काम क्यों कर रहे हो ? मौत के मुँह में क्यों खेल रहे हो ?"

बालक कुछ देर तक चुप रहा। उसने अपने आँसू पोंछे, कुछ सोचता रहा। क्या करे, अपने से बड़े को क्या उत्तर दें ? उसे कोई जबाव नहीं सूझ रहा था ।

फिर बोला—"महाशय माफ कीजिए, मैं भी अब आप से दो-एक सवाल पूछ लूँ ?"

सौदागर—"हाँ, हाँ ! शौक से पूछो !"

नाविक बालक ने कुछ सकुचाते हुए पूछा—"महाशयजी ! क्या आप बता सकते हैं कि आपके बाबा और पिताजी की मृत्यु कैसे हुई थी ?"

प्रश्न सुनकर सौदागर विस्मित हुआ। नाविक बालक अपनी उम्र से ऊँचा सवाल कर बैठा था। उस पर अपनी बुद्धिमत्ता की छाप डालनी थी । इसलिए सौदागर ने उत्तर दिया—

"उन दोनों को तो बीमारी हुई थी और वे घर पर चारपाई पर पड़े-पड़े ही मृत्यु को प्राप्त हुए थे ।"

"तो फिर आप उस घर में क्यों रहते हैं, जिसमें उन दोनों की मृत्यु हुई थी ?"

इस प्रश्न का सौदागर के पास कोई जबाव नहीं था ।

मल्लाह के पुत्र ने अपनी बात जारी रखते हुए आगे कहा—"श्रीमान्, यहाँ या वहाँ, मृत्यु तो सब जगह आती ही है, फिर हम जिन्दा हैं, तब तक हमें आशा और उत्साह मन में रखकर सुन्दर से सुन्दर भविष्य की कल्पना करनी चाहिए । अभी से ही परेशानी में पड़ने की बात ही क्यों सोचें ? जैसी अच्छी या बुरी स्थिति आगे आयेगी, साहस और उत्साह से उसका सामना किया जायगा, अभी तो आशा लगाकर उन्नति की बात ही सोचें । साहस से आगे बढ़ें।"

यह उत्तर सुनकर सौदागर चकित हो गया। कैसा विलक्षण था उस बालक का उत्साह ! कैसी रंगीन और सशक्त थी उसकी आशा !

उज्ज्वल भविष्य की आशा और लक्ष्य प्राप्ति में सतत प्रयत्न हेतु दृढ़ संकल्प सफलता की सीढ़ियाँ हैं।

उन्नति और विकास का मार्ग कठिनाइयों के कंकरीले पथ से ही जाता है। जो व्यक्ति जीवन में कठिनाइयों से घबराता है, उसे उन्नति की आकांक्षा नहीं करनी चाहिए। उन्नति का अर्थ ही ऊँचाई है, जिस पर चढ़ने के लिए अधिक परिश्रम करना पड़ता है। समतल पर चलने की अपेक्षा कहीं अधिक पसीना बहाना पड़ता है। पतन की ओर चलने में मनुष्य को न तो कोई विशेष श्रम करना पड़ता है और न उसे अधिक विलम्ब लगता है। यदि दो आदमियों में से एक को निम्नगामी और दूसरे को ऊर्ध्वगामी मार्ग पर चलाया जाये तो जहाँ एक निश्चित दूरी तक पहुँचने के लिए निम्नगामी को एक दिन लगेगा ओर निम्नगामी को कोई परिश्रम न करना होगा तथा उर्ध्वगामी पसीना-पसीना हो जायेगा।

उन्नत मार्ग में कठिनाइयाँ स्वाभाविक हैं। यदि ऐसा न होता तो संसार में सभी महान बन सकते, कोई साधारण, सामान्य अथवा पतित होता ही नहीं। कठिनाइयों पर विजय पाने का संकल्प जाग्रत रहे, तो वह पूरा होगा ही।

कैसा बीज, कैसे फल

खेत में जिस प्रकार का बीज बोया जायेगा उसी तरह के पौधे उगेंगे और वैसी ही फसल उगेगी। किसान जो फसल उगाना चाहता है उसके लिए उसी प्रकार के बीज की व्यवस्था करता है। साथ ही यह भी ध्यान रखता है कि वह बीज सड़ा, घुना, छोटा, पुराना, कमजोर न हो।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीवन एक खेत है। उसमें प्रगति और सफलता की फसल उगाई जानी है तो ऐसे विचारों का मनःक्षेत्र में आरोपण करना चाहिए, जो प्रगति के लिए आवश्यक शक्ति का उद्भव कर सकें। साहस और पुरुषार्थ के बिना किसी का आगे बढ़ सकना सम्भव नहीं। आलस्य और अनियमितता का अवरोध रहते कोई व्यक्ति किसी प्रयोजन में सफल नहीं हो सकता। इन दुर्बलताओं को हटाने के लिए खेत के खर-पतवार उखाड़ने जोतने की तरह हमें किसान का अनुकरण करना होगा।

जीवन का स्वरूप संकल्प बीज की लहराती हुई हरी-भरी फसल है। आशा है, अन्न की राशि। मनःक्षेत्र में किन विचारों को स्थान मिले इसके लिए अत्यधिक सतर्कता की आवश्यकता है। कुछ भी—कैसा ही-बीज बो देने से कुछ भी उग सकता है और उपलब्धि कैसी भी हो सकती है ? बीज की ओर से उपेक्षा बरतने वाला किसान अभीष्ट फसल काटने में सफल मनोरथ कैसे होगा ?

प्रगति के लिए प्रयास बहुत किये जाते हैं पर यह भुला दिया जाता है कि निर्धारित दिशा में प्रेरणा देने वाले और पथ-प्रशस्त करने वाले समर्थ विचारों की अभीष्ट मात्रा संकलित कर ली गई या नहीं ?

वैयक्तिक दोष-दुर्गुणों की कंटीली झाड़ियाँ प्रगति के पथ को अवरुद्ध और दुरूह बनाती हैं। यह दुर्गुण और कुछ नहीं उन विचारों के प्रतीक प्रतिनिधि हैं, जिन्हें बहुत समय से—ज्ञात या अविज्ञात रूप में मनःक्षेत्र में सँजोये जमाये रखा गया है। सर्प के काटने पर उसका विष एक बूँद ही रक्त में प्रवेश करता है। पर वह कुछ ही देर में समस्त शरीर में फैल जाता है और अपना असर दिखाता है। कुविचार सर्प-दंश की तरह हैं—वे ही अपना विस्तार करके दोष-दुर्गुणों के रूप में फैल जाते हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि आंतरिक शत्रु-मनोविकार—बाहर के शस्त्रधारी शत्रुओं की अपेक्षा हजार गुने अधिक बलिष्ठ और घातक होते हैं। दूर रहने वाले बाहरी शत्रुओं से बचने और उन्हें निरस्त करने के अनेक उपाय हो सकते हैं पर अहर्निश सामने रहने वाले इन घर के भेदियों को क्या कहा जाय ? आस्तीन के साँप की तरह वे सदा विघातक ही सिद्ध होते हैं।

क्षतिग्रस्त दुर्बल और मरणासन्न शरीर वस्तुतः उस रोग के विषाणुओं का ही खाया हुआ होता है। घुन का कीड़ा चुपचाप लगा रहता है और विशाल सहतीर को खोखला कर देता है। कुविचार विषाणुओं से अधिक घातक और घुन से अधिक अदृश्य होते हैं। वे भीतर जमकर बैठ जाते हैं और गुण, कर्म, स्वभाव की सारी सम्पदा को खोखली और विषाक्त बना देते हैं।

ओछे स्वभाव के आदर्शरहित और लक्ष्यविहीन व्यक्ति जीवन की लाश ढोते रहते हैं। उनके मनोरथ सफल हो ही नहीं सकते क्योंकि प्रगति के लिए-प्रखर व्यक्तित्व की आवश्यकता है।

सफल जीवन जीने की आकांक्षा यदि साकार करनी हो तो पहला कदम आत्म-निरीक्षण में उठाया जाना चाहिए। अपने विचारों, मान्यताओं और अभिमान की समीक्षा करनी चाहिए और उनमें जितने भी अवांछनीय तत्व हों उन्हें उन्मूलन करने के लिए संकल्पपूर्वक जुट जाना चाहिए। संकल्प शक्ति की साधना और आत्म-निरीक्षण से व्यक्तित्व को इच्छित ऊँचाई तक पहुँचाया जा सकता है।

प्रबल संकल्प शक्ति की प्रचण्ड प्रतिक्रियाएँ

नदी जब समुद्र में मिलने की प्रबल आकांक्षा से अभियान करती है तो उसकी गति रोकने वाले अवरोधों को परास्त ही होना पड़ता है। समुद्र से मिलने की प्रबल आकांक्षा, आवश्यकतानुसार उसे विरोधी चट्टानों को कभी काटने पर विवश करती है तो कभी इधर-उधर घूमकर रास्ता निकाल लेने की प्रेरणा देती है। उसकी प्रबल इच्छा उसे अपनी लक्ष्य सिद्धि के लिए कभी टक्कर लेने, कभी निम्न होने, कभी रास्ता बदलने और कभी मन्द मंथर हो जाने का ज्ञान देती है। उसका वांछित लक्ष्य सागर से मिलन होता है और वह उसे किसी न किसी प्रकार संघर्ष अथवा सामंजस्यपूर्ण नीति से प्राप्त ही कर लेती है। वह किन्हीं कारणों से हारकर निराश अथवा निरुत्साह होकर गतिहीन नहीं होती। इसलिए कि उसकी इच्छाशक्ति में सच्चाई और प्रबलता होती है।

नदी की तरह ही वह मनुष्य भी अपनी सफलता के लिए मार्ग निकाल ही लेता है, जिसकी इच्छा शक्ति दृढ़ और बलवती होती है। उसकी इच्छा स्वयं ही उसका मार्ग प्रदर्शन करती चलती है। सफलता का मूल मनुष्य की इच्छाशक्ति में सन्निहित रहता है। मानवीय शक्तियों में उसकी इच्छाशक्ति सबसे प्रबल और प्रमुख होती है। जिन मनुष्यों की इच्छाशक्ति निर्बल होती है, वे साधन सम्पन्न होने पर भी कोई उल्लेखनीय सफलता नहीं प्राप्त कर पाते। निर्बल इच्छाशक्ति वाले लोग मार्ग में आई एक साधारण-सी कठिनाई अथवा सामान्य विरोध को देखकर हिम्मत खो बैठते हैं।

मनुष्य की शारीरिक शक्ति का अपना महत्व है। लेकिन उसकी संचालिका शक्ति इच्छाशक्ति ही होती है। यदि इच्छाशक्ति का अभाव हो जाय तो मनुष्य की शारीरिक शक्ति भी कुण्ठित हो जायेगी। शरीर पर इच्छा शक्ति का ही शासन होता है। शरीर क्या है ? इन्द्रियों का संगठित समूह। इन्द्रियों का कार्य ही शरीर का कार्य होता है। इन्द्रियाँ इच्छाशक्ति से ही कार्य की प्रेरणा पाती हैं। कोई कितना ही आवश्यक काम क्यों न हो, इन्द्रियाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सक्षम और प्रस्तुत क्यों न हों, जब तक इच्छा शक्ति की प्रेरणा न होगी, वे बँधी बैठी रहेंगी, किसी काम में हाथ न लगायेंगी। जब इच्छा का स्फुरण होगा, उसकी प्रेरणा होगी तभी इन्द्रियाँ कार्यरत हो जायेंगी। शरीर इन्द्रियों के और इन्द्रियाँ इच्छाशक्ति के अधीन होती हैं। इच्छाशक्ति की जागरूकता के बिना मनुष्य कोई भी कार्य करने में सक्षम नहीं हो सकता।

संसार के छोटे-बड़े सभी कार्य शक्ति द्वारा ही पूरे होते हैं। शक्ति के बिना मनुष्य एक पग भी आगे नहीं बढ़ सकता। श्वाँस लेने की सामान्य प्रक्रिया से लेकर पहाड़ काटने तक के कठिन काम शक्ति द्वारा ही सम्पादित किये जाते हैं। जब तक शक्ति है, तब तक कर्म है, तब तक जीवन है। शक्ति के समाप्त होते ही क्रिया स्थगित हो जाती और क्रिया के स्थगित होते ही जीवन समाप्त हो जाता है। अपाहिज, असाध्य, अकर्मण्य आदि सब, जिनकी क्रियाएँ स्थगित हो गई होती हैं, जो किसी मतलब और मसरफ के नहीं रहते वे एक बार प्राण भले ही ढो रहे हों पर होते मृतक समान ही हैं।

किन्तु मनुष्य की वह वास्तविक शक्ति है क्या ? वह वास्तविक शक्ति मनुष्य की इच्छाशक्ति ही है क्योंकि यही जीवन के चिन्ह-कर्म की विधायिका तथा प्रेरिका होती है। जहाँ इच्छा नहीं वहाँ कर्म नहीं-और जहाँ इच्छा है वहाँ कर्मों का होना अनिवार्य है। इच्छा की प्रेरणा से ही मनुष्य कर्मों में प्रवृत्त होता है। यदि उसमें इच्छा की स्फुरणा नहीं उसकी प्रेरणा न हो तो मनुष्य भी जड़ बनकर पड़ा रहे। आदिकाल से मनुष्य अब तक जो विकास और उन्नति करता आया है, वह सब इच्छाशक्ति का ही चमत्कार है। मनुष्य में यदि इच्छाशक्ति की विशेषता न होती तो वह अब तक भी दो हाथ-पैरों वाला वनमानुष बना, अन्य पशुओं की तरह ही जीवन बिताता, गुफा-कन्दराओं में पड़ा होता। इस प्रकार आश्चर्यजनक साधनों के साथ शान से देवताओं से एक पद पूर्व न रह रहा होता। तथापि जिनमें इच्छाशक्ति का प्राबल्य होता है वे अब भी अपनी साधना और तपश्चर्या के बल पर देवताओं के समकक्ष होना तो क्या परमात्मा के समकक्ष हो जाते हैं। जीवन की समग्र उन्नतियाँ और सारी सफलताएँ इच्छा शक्ति के ही अधीन होती हैं।

नव सृजन, नव चेतना, नव निर्माण की जो भी क्रान्तियाँ संसार में हुई हैं अथवा होती हैं उनका आधार मनुष्य की प्रबल इच्छाशक्ति ही होती है। संसार में अब तक जो भी महान और उल्लेखनीय काम हुए हैं, उनको उन्हीं महामानवों ने सम्पादित किया है, जिनकी इच्छाशक्ति प्रबल और प्रखर रही है। निर्बल इच्छाशक्ति वाले लोग संसार में अब तक न कोई उल्लेखनीय कार्य कर सके हैं और न आगे ही कर सकेंगे। निर्बल इच्छा शक्ति वाले व्यक्तियों के मन में महानता, सफलता और उन्नति के विरोधी भाव, जैसे—सन्देह, आशंका, भय और अविश्वास आदि भरे रहते हैं। उसे अपने कुविचारों, कुकल्पनाओं और कुप्रवृत्तियों के जाल से निकलने का अवकाश ही नहीं मिलता जिससे वह श्रेय-पथ पर अग्रसर हो सकें। वह स्वभावत: अस्थिर विचार, अस्थिर उद्देश्य और अस्थिर निश्चय वाला होता है। एक काम को तब तक करते रहने का धैर्य उसमें नहीं होता जब तक कि उसका अन्तिम निष्कर्ष न निकल आये। वह जल्दी ही एक काम को छोड़कर दूसरा और दूसरे को छोड़ कर तीसरा पकड़ता रहता है। अपनी इच्छाशक्ति की अदृढ़ता के कारण वह एक छोटी-सी कठिनाई से ही भयभीत तथा उद्विग्न हो जाता है और जल्दी ही कर्त्तव्य से हट जाता है। इच्छाशक्ति की निर्बलता मनुष्य के समग्र जीवन की निर्बलता है।

निर्बल इच्छाशक्ति की हानियाँ

प्रबल इच्छाशक्ति जहाँ एक प्रकार की अमोघ औषधि है, वहाँ निर्बल इच्छाशक्ति विविध प्रकार के रोगों की जननी होती है। जिसकी इच्छाशक्ति निर्बल होती है वह एक छोटे-से रोग में ही अपनी मृत्यु की कल्पना करने लगता है। उसके विचार प्रतिगामी होते हैं। वह रोगों का उपचार भी करता है तो भी सोचता रहता है कि औषधि उसे लाभ नहीं कर रही है। बहुत बार तो वह काल्पनिक रोगों के भय से ही त्रस्त बना रहता है और देर-सबेर उस प्रकार का रोग उत्पन्न ही कर लेता है। मानस चिकित्साशास्त्रियों ने अपने अनुभव के आधार पर बतलाया है कि वास्तविक रोगियों की अपेक्षा ऐसे रोगियों की संख्या अधिक होती है, जो अपनी प्रतिगामी कल्पना के कारण अपने को रुग्ण तथा अस्वस्थ समझते रहते हैं। यह अनेक प्रयोगों के आधार पर सिद्ध किया जा चुका है कि यदि मनुष्य की इच्छाशक्ति प्रबल हो तो वह बिना किसी उपचार के रोगों पर विजय प्राप्त कर सकता है।

निर्बल इच्छाशक्ति की हानियाँ केवल व्यक्ति तक ही सीमित नहीं रहतीं। वे समाज पर भी अपना प्रभाव डालती हैं। मनुष्य की इच्छाशक्ति में एक प्रकार की अदृश्य तरंगें होती हैं, जो मानसिक गतिविधियों से निकलकर वातावरण में फैल जाती हैं और दूसरों को प्रभावित करती हैं। उनके मानसिक भावों को अपने प्रकार का बनाने का प्रयत्न करती हैं। यही तो कारण है कि जिस स्थान पर कमजोर और कायर मन वाले लोग रहते हैं, वहाँ प्राय: भय और आशंका का वातावरण बना रहता है। किसी संगठन में दुर्बल इच्छाशक्ति वाले अपनी गतिविधियों से औरों को भी निर्बल और हतोत्साह बना देते हैं। युद्ध में एक कायर सैनिक भागकर और भी अनेक सैनिकों को भागने की प्रेरणा देता है। जिस देश, समाज अथवा राष्ट्र के नेता निर्बल इच्छा शक्ति वाले होते हैं वह देश, समाज अथवा राष्ट्र बहुधा अवनति और पराभव के ही अधिकारी बनते हैं। नेता का प्रभाव विस्तृत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होता है, उसमें जनगण का विश्वास होता है। इसी कारण, नेता यदि निर्बल इच्छा शक्ति वाला होता है तो उसकी संक्रामकता, निर्बलता जनता का भी हृदय दुर्बल बना देती है। सारे राष्ट्र में भय, आशंका और कायरता का वातावरण उत्पन्न हो जाता है। जहाँ इस तरह के पाप-अभिशाप जनगण को दबाये होते हैं, वहाँ उन्नति, प्रगति अथवा विजय श्री का पदार्पण नहीं होता।

इसके विपरीत जिस समाज अथवा राष्ट्र के नेता प्रबल इच्छाशक्ति वाले होते हैं, वह समाज और राष्ट्र भी प्रबल तथा शक्तिशाली बना रहता है, फिर चाहे वह विस्तार और जनसंख्या की दृष्टि से छोटा ही क्यों न हो। जापान, इंग्लैंड और जर्मनी आदि देश इस बात के ज्वलंत प्रमाण हैं। भारत में भी राणा प्रताप, शिवाजी, गुरुगोविन्दसिंह, हम्मीर देव आदि के अनेक ऐसे उदाहरण मौजूद हैं जो साधन और सैन्य शक्ति की दृष्टि से नगण्य होने पर भी सर्वसम्पन्न मुगल बादशाहों के अत्याचारों से टक्कर लेते रहे। महात्मा गाँधी तो प्रबल इच्छाशक्ति के एक जीते-जागते आदर्श थे। उनके पास एकं प्रबल, दृढ़ तथा प्रखर इच्छाशक्ति को छोड़कर और क्या साधन थे ? न सेना, न शस्त्र और न साम्राज्य तथापि उन्होंने अपनी एक उस अमोघ इच्छाशक्ति के आधार पर उदयास्तपर्यन्त फैले अँग्रेजी साम्राज्य से टक्कर ली और अपनी शान्ति अहिंसा की नीति से ही उनकी तोपों, बन्दूकों, गनमशीनों और सेनाओं की शक्ति को पराभूत कर दिया। महात्मा गाँधी की प्रबल इच्छा शक्ति का ही तो यह चमत्कार था कि उनके नेतृत्व का भारत आबाल वृद्ध स्त्री-पुरुषों के साथ साधनहीन होने पर भी अजेय बन गया था। इच्छाशक्ति की महिमा अपार और अपूर्व है।

यदि हमें अपने जीवन को उन्नति और प्रगति के द्वारा सार्थक बनाना है, तो अपनी इच्छाशक्ति को बढ़ाना और प्रबल बनाना होगा। तभी हममें दृढ़ता, साहस और कार्य क्षमता का विकास होगा। हम उत्साही वीर और संकल्पवान बनेंगे। हममें वह कर्मठता आएगी जो जीवन पथ की बाधाओं तथा विपत्तियों से भी कुण्ठित न हो सकेगी। सफलता का पथ निश्चय ही बड़ा कठिन और दुर्गम होता है। उसको सरल और प्रशस्त बनाने में मनुष्य की इच्छाशक्ति का बड़ा उपयोग है। इच्छा शक्ति की दृढ़ता और प्रबलता मनुष्य को पराक्रमी, पुरुषार्थी और धीर-गम्भीर बना देती है। प्रबल इच्छा शक्ति वाला जिस काम में हाथ डालता है, उसे तब तक नहीं छोड़ता, जब तक पूरा नहीं कर लेता। वंह बाधाओं, विरोधों से साहसपूर्वक लड़ता हुआ बढ़ता रहता है। उन्नति और सफलता का इसके सिवाय और कोई उपाय नहीं है।

संसार की सारी सफलताओं का मूल मन्त्र है, प्रबल इच्छाशक्ति—इसी के बल पर विद्या, सम्पत्ति और साधनों का उपार्जन होता है। यही वह आधार है, जिस पर आध्यात्मिक तपस्याएँ और साधनाएँ निर्भर रहती हैं। यही वह दिव्य सम्बल है, जिसे पाकर संसार में खाली हाथ आया मनुष्य वैभव और ऐश्वर्यवान बनकर संसार को चकित कर देता है। यही वह मोहन और वशीकरण मन्त्र है, जिसके बल पर एक अकेला पुरुष कोटि-कोटि जनगण को अपना अनुयायी बना लेता है। जीवन में उन्नति और सफलता की आकांक्षा करने से पहले अपनी इच्छाशक्ति को प्रबल तथा प्रखर बना लेने वालों को न कभी असफल होना पड़ता है और न निराश। वे अपनी मनोवांछित विजय-माल पहनकर ही मानते हैं। किसी वस्तु की प्राप्ति की लालसा को इच्छा कहते हैं। इस लालसा की तीव्रता को इच्छाशक्ति कहते हैं।

शारीरिक शक्ति से कई गुनी अधिक इच्छाशक्ति

इच्छाशक्ति के प्रभाव के सन्दर्भ में श्री योगानन्द ने अपनी पुस्तक ''आटोवायग्राफी ऑफ ए योगी'' में बंगाल में उन दिनों 'टाइगर योगी' के नाम से प्रसिद्ध सोहंग स्वामी का विवरण उन्हीं के शब्दों में यों दिया है—

''कह नहीं सकता, किस जीवन के कौन-से संस्कार थे कि शरीर तो दुबला-पतला ही था किन्तु बाल्यावस्था से ही मन किया करता कि कोई शेर या चीता मिले तो उससे कुश्ती लडूँ ? यह कमजोर शरीर ही था जो निराश करता था वरना राजकुमार भरत की तरह छोटे में ही कई बार बाघ के दाँत तोड़ चुका होता।

जो इच्छाशक्ति कुछ दिन पहले जंगली जानवरों से लड़ने की ओर मुड़ी थी अब वह अन्तर्मुखी हो उठी। मैं दिन-रात यही सोचा करता कि मैं बहुत शक्तिशाली हो जाऊँ, मेरा शरीर बलवान हो जाये, मेरे रग-पुट्ठे सुदृढ और सुडौल हो जायें, मुट्ठी भीचूँ तो गदेलियों से पसीना छूट जाये। मुझे तब पता नहीं था कि इच्छाशक्ति में भी कुछ जादू होता है, पर मैंने उसे अपने आप में सचमुच जादू पाया। मेरा स्वास्थ्य दिनों-दिन अच्छा होता गया और मैं एक हट्टा-कट्टा युवक बन गया।

अब मनचीती करने का समय आ गया तो मेरी प्रसन्नता का वारापार नहीं रहा। मैं विचार करता कि जंगल के यह बड़े जन्तु छोटे जीव-जन्तुओं को पकड़कर खा जाते हैं, तो गुस्से से मेरी आँखें लाल हो जाती थीं। बड़े जीवों द्वारा छोटों का सताया जाना मुझे कतई पसन्द नहीं था। इसलिए मैंने निश्चय किया, जंगल के इन हिंसक जन्तुओं को सबक सिखाना चाहिए। इसी निश्चय के साथ मैं जंगल जाने लगा।

अब तक मेरी इच्छाशक्ति पूर्ण प्रौढ़ और प्रखर हो चुकी थी। भय नाम की भी कोई वस्तु होती है, यह मैंने पूरी तरह भुला दिया। एक बार जब जंगल में प्रविष्ट हो जाता तो वहाँ के हिंसक—बाघ, शेर, चीते भी मुझे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मूषकों और भेड़-बकरियों की तरह लगते। एक बार जब निश्चित कर लिया तो यह मेरे प्रतिदिन के जीवन का एक अंग बन गया। मैं प्रतिदिन जंगल जाता, हिंसक जीव मुझे साक्षात् काल के समान देखते और दूर से ही भाग जाते। वह बड़ा दुर्भाग्यशाली होता जो एक बार भी मेरी दृष्टि में पड़ जाता। आँख से आँख मिलाते ही मेरी प्रखर इच्छा शक्ति उसके मन पर बुरी तरह आघात करती और वह जन्तु भले ही शेर ही क्यों न रहा हो बिल्ली बन जाता, पूँछ दबाकर दया की भीख माँगता, पर मुझ निष्ठुर 'सोहंग स्वामी' से बचकर जाना उसके लिए कठिन होता। जी भर पीटता पटकता और जिस पर दया न आती मारकर ही छोड़ता। स्मरण नहीं ऐसे कितने बाघ, चीते, लकड़बग्घे मारे होंगे। मेरी इन वारदातों का ही परिणाम था कि लोग मेरा 'सोहंग स्वामी' नाम तो भूल गये पर मैं एक नये 'टाइगर योगी' के नाम से सारे बंगाल प्रान्त में विख्यात हो गया। मेरे पास इससे सम्बन्धित जानकारी के लिए प्रतिदिन देश-विदेश से सैकड़ों पत्र आते पर मुझे इस व्यवसाय से ही फुरसत कहाँ मिलती थी ? जो उनके उत्तर देता।

एक दिन की बात है एक साधु मेरे घर आये। मैं तब जंगल में ही था। उन्होंने मेरे पिताजी को बुलाकर कहा-आपका लड़का जंगली जीवों को सताता है, यह अच्छी बात नहीं है। उसे तुम रोको अन्यथा कभी कोई भयंकर परिणाम भी निकल सकते हैं।

पिताजी ने साधु को प्रणाम करते हुए कहा—महात्मन् ! मेरा लड़का छोटे कमजोर जीवों को नहीं सताता। वह तो हिंसक जीवों को मारता है, वह भी निहत्थे, तब फिर इसमें दोष क्या है ?

दोष ! साधु बोले—किसको कब दण्ड देना है कैसे देना है ? यह ईश्वर का काम है, मनुष्य का नहीं। तुच्छ जीवों की उत्पत्ति सम्भवतः इच्छाशक्ति का निम्नगामी रूप है। परमात्मा नहीं चाहता कि मेरी सृष्टि में कायर कमजोर और अमंगल इच्छाएँ रहें। निर्बलता तो प्रकृति को भी कतई पसन्द नहीं। तभी तो शेरनी अपने चोट खाये या उस जखमी बच्चे को भी खा जाती है, जो दौड़ने, चलने फिरने में उसका साथ दे नहीं सकता। **''जीव जीवस्य भोजनं''** छोटा जीव बड़े जीव का आहार प्रकृति के किसी उपयोगी सिद्धान्त के आधार पर ही काम करता है, यह काम पूर्णतया प्रकृति का है, मनुष्य को अपने कल्याण का मार्ग बनाना और उस पर चलना ही कौन-सा कम कठिन है ? जो वह प्रकृति के सिद्धान्तों से व्यर्थ टक्कर ले।

साधु की सारी बातें पिताजी ने ध्यान से सुनी और फिर जब मैं जंगल से लौटा तो मुझसे भी कहीं। एक बार तो मुझे उन बातों में कुछ सार सा प्रतीत हुआ किन्तु मैंने दूसरे ही क्षण उस उपदेश की भी उपेक्षा कर दी। अब मुझे हिंसक जन्तुओं से भिड़ने और उन्हें मारने में आनन्द आने लगा था। उसे छोड़ना कठिन बात थी, तो भी मुझे ऐसा लगा कि मेरे सामने कोई ईश्वरीय सत्ता भी अवश्य है और उसके क्रिया-कलापों में हस्तक्षेप का पाप मुझे नहीं करना चाहिए। इसलिए अब कई बार मैं अपने आप को कुछ कमजोर और भयभीत भी अनुभव करता। मुझे इसके लिए उस साधु पर कभी-कभी गुस्सा भी आ जाया करता।

संकल्प-विकल्प के इन दिनों में मेरी ख्याति कम से कम बंगाल में तो घर-घर थी ही। कूँच विहार के राज्याध्यक्ष ने भी यह खबर सुनी। उन्हें जंगली जानवर पालने का बड़ा शौक था। इसलिए वे जंगली जन्तुओं के हिंसक स्वभाव से भी अच्छी तरह परिचित थे। मेरे करतब उन्हें अद्भुत, आश्चर्यजनक और तान्त्रिक से लगे। फलतः उन्होंने अपनी जिज्ञासा शान्त करने के लिए मुझे कूँच विहार आने और उक्त प्रदर्शन करने का निमन्त्रण दिया। वहाँ की प्रजा भी मेरी बाघ से कुश्ती देखने को बहुत लालायित थी। कई चुनौती भरे पत्र मेरे पास आते थे। इसलिए न चाहते हुए भी मुझे यह निमन्त्रण स्वीकार करना ही पड़ा।

ईश्वर के विधान बड़े विलक्षण हैं, उन्हें मानवीय बुद्धि समझ सके ऐसा सम्भव नहीं है। जिन दिनों यह पत्राचार चल रहा था उन दिनों कूँच विहार में कहीं से एक बहुत खूँखार बाघिनी आ गई। उसका इतना आतंक होने पर भी पता नहीं कैसे वह जीवित कैद में आ गई, वह भी स्वयं वहाँ के राजकुमार द्वारा। शाही कटघरे में रहने वाली इस वाघिन का नाम 'राजबेगम' था और मुझे उसी से लड़ाये जाने का वहाँ के राजा साहब ने निश्चय कर लिया था।

उन्होंने कुछ छल किया हो सो बात नहीं थी। उनने तो सारी बातें वहाँ पहुँचने पर मुझे स्पष्ट बता दी थीं। पर यदि मैं अपने बचन से हटता तो यह मेरे आत्माभिमान पर आघात होता, अतएव मैंने राजबेगम से लड़ने का निश्चय कर लिया। पर न जाने क्यों उस दिन मुझे साधु के वह शब्द जो उन्होंने पिताजी से कहे थे, एक चेतावनी की तरह बार-बार याद आते थे, तो भी मैं यों ही एकाएक भयभीत होने वाला न था। मेरा निश्चय आखिर तक अटल रहा।

यह दृश्य देखने के लिए अखबारों में पहले से ही समाचार छापे गये। भीड़ बरसात के पानी की तरह उमड़ पड़ी। जिस मैदान में यह प्रदर्शन होना था कंटीले तारों से सुरक्षित कर पिंजरा जिसमें बाघिन बन्द थी मैदान में रख दिया गया। हजारों लोगों के सामने मैं लँगोट पहनकर निहत्था ही पिंजड़े की ओर बढ़ा।

बाघिन मुझे देखकर गुर्राई किन्तु मुझे उससे कुछ भी भय न लगा। पिंजरा खोलकर उसमें प्रविष्ट हो गया। चाभी मैंने वहीं फेंक दी, केवल एक चैन मेरे हाथ में थी, जिससे बाघिन को बाँधने के लिए कहा गया था।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मेरे पिंजरे में प्रवेश करते ही बाघिन टूटकर मेरे ऊपर आ झपटी और मेरी पीठ के दाहिने पुट्ठे पर घाव करती हुई मुट्ठीभर माँस नोंच ले गई। मैं हक्का-बक्का रह गया। एक बार दर्द से सारा शरीर ही काँप उठा। खून दाढ़ में लग जाने से बाघिन और भी उत्तेजित हो उठी। उसने देर किये बिना दूसरा झपट्टा लगाया पर अब मैं सम्भल चुका था, मैंने अपना वही इच्छाशक्ति वाला दाँव लगाया। बाघिन की आँखों में आँखें डालकर मैंने उसके मन में दुर्दान्त प्रहार किया और ऐसा करना भर था कि बाघिन कटे वृक्ष की तरह अपने आप धराशायी हो गई। अब पूरे गुस्से के साथ मैं उस पर टूटा और लात-घूँसों की बौछार से उसे बेदम कर दिया। मेरी इच्छाशक्ति बराबर काम कर रही थी इतनी खूँख्वार बाघिन उसी का परिणाम था कि मरी बिल्ली जैसी सिमटी-सी पड़ी थी। अब उसमें आक्रमण करने की शक्ति नहीं थी तथापि वह गुर्राकर अपना क्रोध अवश्य प्रकट कर रही थी। ऐसे में ही आगे बढ़कर मैंने उसको चैन बाँध दी और विजयी योद्धा की भाँति चारों ओर खड़ी भीड़ की ओर देखा। सब लोग आश्चर्य मिश्रित प्रसन्नता से उछल पड़े। मेरा हार्दिक स्वागत किया गया। उपस्थित लोगों ने मुझे फूल और हारों से लाद दिया बहुत-सा पुरस्कार भी मुझे मिला।

किन्तु घर लौटा तब पता चला कि साधु का कथन असत्य नहीं था। घाव होने के कारण शरीर में विष हो गया और उसे ठीक होने में लगभग ६ महीने लगे।

इसी बीच एक दिन वह साधु फिर प्रकट हुए, उन्होंने समझाया—"बेटा अब ऐसा नहीं करना। उन्होंने योगाभ्यास की कुछ क्रियाएँ भी बतलाईं और कहा इच्छा शक्ति का बल तुम्हारे पास है। चाहते तो आत्म-कल्याण और ईश्वर दर्शन जैसी महान उपलब्धि प्राप्त करते पर व्यर्थ ही खेल-खिलौनों में लगे रहे। योगी लोग ईश्वर प्राप्ति और आत्म-दर्शन का पुरुषार्थ साधते हैं, चमत्कारों के चक्कर में नहीं पड़ते। उन्होंने मुझे दवा भी दी उसी से मेरा घाव ठीक हुआ। साथ ही उनकी बात भी अच्छी तरह समझ में आ गई और मैंने आत्म-कल्याण के लिए उच्चस्तरीय योग साधनाएँ करने का निश्चय कर लिया।"

अपने जीवन में इच्छाशक्ति के प्रयोग का यह महत्त्वपूर्ण वर्णन सुनाने वाले यह सोहंग स्वामी कलकत्ता में जन्मे एक महान योगी हो गये हैं। उन्हें बंगाल में टाइगर स्वामी के नाम से आज भी लोग याद करते हैं। एक बार उनकी ख्याति सुनकर श्री स्वामी योगानन्द जी उनसे मिलने गये, उन्होंने पूछा—आप खूँख्वार जानवरों से कैसे लड़ते हैं? तो उन्होंने उत्तर दिया—"शारीरिक शक्ति से मानसिक शक्ति कहीं अधिक प्रखर होती है। यदि हम दृढ़ विश्वास कर ले कि बाघ नहीं बिल्ली है, तो वह बिल्ली ही हो जायेगा। जरूरत पड़े तो मैं अभी भी चीतों के दाँत—यह कहते हुए वे उठे और सामने सीमेण्टकी लगी दुकान में धँसे साबित ईंट को पकड़कर निकालते हुए बोले—इस तरह पकड़कर निकाल सकता हूँ। स्वामीजी को उनकी क्षमता पर बड़ा आश्चर्य हुआ।

किन्तु बताया—इसमें आश्चर्य जैसी कोई बात नहीं है। अब तो विज्ञान भी सिद्ध करता है कि मस्तिष्क ही है, जो माँसपेशियों को नियन्त्रित करता है। मस्तिष्क जितना बलवान होगा उतना ही सूक्ष्म शरीर काम करेगा। जितनी शक्ति से हथौड़े का प्रहार किया जाता है उतनी ही गहरी चोट लगती है। उसी प्रकार शरीर हथौड़ा है और उसे शक्ति देने वाली मशीन तो मन या इच्छाशक्ति है। शारीरिक शक्ति का प्रदर्शन इस बात पर है कि इच्छाशक्ति में कितना बल है ? शरीर एक यन्त्र है। उसका उपयोग चाहे जैसे कर सकते हैं, इसके विपरीत यदि मन, शरीर और इन्द्रियों का दास होगा तो वह कुछ भी नहीं कर सकेगा।

श्री योगानन्द ने प्रश्न किया—क्या मैं भी बाघ से लड़ सकता हूँ-इस पर उन्होंने हँसते हुए कहा—भाई बाघ से कोई भी लड़ सकता है। पर अपनी लालसाओं, कामनाओं, वासनाओं, से लड़कर उन पर विजय पाना अति दुस्तर कार्य है। जो वह कर ले, समझ लो वह सैकड़ों बाघों को जीत चुका। अब मैं भी उसी दिशा में आ रहा हूँ, जो मुझे पहले ही करना चाहिए था, वह अब कर रहा हूँ। शक्ति प्रदर्शन में तो मैंने व्यर्थ ही इतना जीवन बिता दिया। इस प्रकार सोहंग स्वामी ने इच्छा शक्ति का महत्त्व तो स्पष्ट किया ही, उसके सदुपयोग की दिशा भी बतलाई।

परन्तु शुभ या अशुभ संकल्प एक साथ मनुष्य पर अपना प्रभाव नहीं डाल सकते। इन दोनों में जो बलवान् होगा, उसी का प्रभाव पड़ेगा, क्योंकि बलवान् संकल्प कमजोर को नष्ट कर देता है।

यदि हमारा मन बलवान् है और हम सद्प्रवृत्ति या शुभ स्थाई वृत्ति वाले हैं, हमारे संस्कारों में शुभ प्रभाव प्रबल हैं, तो हम पर किसी बुरे विचार का प्रभाव नहीं पड़ सकता। हम पहाड़ पर एक चट्टान के सदृश अपने मन को दृढ़ और अटल बना लें, जिस पर आँधी, पानी, ठण्ड, गर्मी का असर बाह्य में भले ही पड़े, परन्तु अन्तर में नहीं पड़ता। ऐसी दृढ़ मानसिक स्थिति बना लेने पर कोई दुष्ट भाव हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। चाहे हमारे शत्रु हम पर अशुभ और दुष्ट संकल्प प्रेरित करते रहें, पर उनका प्रभाव नहीं के बराबर होगा।

दृढ़ मानसिक स्थिति उस शिला की तरह है जिस पर पानी की फटकार का कोई भी प्रभाव नहीं होता। इसी प्रकार शत्रु के अशुभ विचार हमारे चारों ओर कुछ समय तक विचरण करते रहेंगे या सदैव ही विचरण करते रहें, पर उनका प्रभाव हम पर कुछ नहीं होगा।

मन में किसी प्रकार का अशुभ संकल्प या विचार मत आने दीजिये। दूसरे के अशुभ या विरोधी विचारों को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ग्रहण न करने से वे पुनः वाप्रिस भेजने वाले के पास लौट जाते हैं और उसी को हानि पहुँचाते हैं।

शुभ और अशुभ संकल्पों की तुलना देवताओं और राक्षसों से की जा सकती है। देवता हमारा भला करते हैं और राक्षस हमारी हानि करते हैं। इसलिए जो पुरुष उदार शुभ और परोपकारी संकल्प वाला है, उसे हम देवता कहकर पुकारते हैं। जो व्यक्ति अशुभ, दुष्ट और कटु संकल्प वाला है, उसे हम राक्षस के बराबर कहते हैं।

कारण यह है कि मनुष्य के जैसे विचार होते हैं वैसे भाव ही वह अपने शब्दों और कार्यों द्वारा व्यक्त करता है। अर्थात् उसमें दुष्ट संकल्प आने से वह कुवचन बोलता है और कुकर्म करता है, जिससे दूसरों को दुःख होता है।

शुभ संकल्प वाला पुरुष सदा सबसे प्रेम करता है। सदा मन, वचन और कर्म से सबका उपकार करता है। अपनी शुभ संकल्पयुक्त मीठी वाणी से सबको हर्षा देता है। अतः लोग उसे देवता-तुल्य मानते हैं।

पुनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु वसवो धिया।

विश्वेदेवा पुनीत मां जातवेदः पुनीति मां पुनातु मां।।

(ऋग् ९, ६७, २७)

"देवजन मुझे पवित्र करें। मननशील लोग विचार द्वारा पवित्र करें। सब पदार्थ मुझे सत् संकल्प दें। पवित्रता मेरा आधार हो। भगवान मुझे पवित्र करें।"

"संकल्पों की पवित्रता मनुष्य के समग्र जीवन को पवित्र और तृप्त बनाने वाली है।"

संकल्प शक्ति का आकर्षण

एक विद्वान का कथन है कि बलवान और कार्य के लिए तैयार विचार वाले मनुष्य के बहुत से हाथ होते हैं। अपने लिए उपयोगी हो सके ऐसी नजदीक की प्रत्येक वस्तु के ऊपर वह हाथ रखता है। अपने अनुकूल वस्तुओं को अपनी तरफ खींचने की उसमें आकर्षण शक्ति होती है।

पर्वत के शिखर पर स्थिति एक किला जब फतह न किया जा सका तो एक सैनिक अधिकारी ने कहा कि "यह किला हम नहीं जीत सकते। यह एक असम्भव कार्य है।"

महान सिकन्दर ने गर्जकर कहा—"दूर हटो, जो कोशिश करेगा उसके लिए कुछ भी असम्भव नहीं है।" यह कहकर उसने एक सैन्यदल का स्वयं संचालन किया और थोड़ी ही देर में शत्रुओं को भगा दिया।

मिश्र पर आक्रमण करते समय जब नैपोलियन की सेना में प्लेग फैला तो वह स्वयं बीमार सिपाहियों के पास जाकर पूछताछ करता। इस प्रकार वह यह प्रकट करता था कि उसके हृदय में डर नहीं है, जिसका स्वभाव भयभीत होने का नहीं है, वह प्लेग जैसी महामारी को भी हरा देता है। ऐसी दृढ़ इच्छाशक्ति शरीर को भी एक बड़ा आश्रय बन जाती है। उस समय मनुष्य ऐसे अद्भुत कार्य कर सकता है, जो अन्य लोगों को असम्भव जान पड़ते हैं।

पचपन वर्ष की आयु में अँग्रेजी के सुप्रसिद्ध लेखक सर वाल्टर स्काट पर बीस लाख रुपये का कर्ज हो गया था। उन्होंने निश्चय किया कि उसे पूरा-पूरा चुकाना चाहिए। इस दृढ़ संकल्प से उनकी शारीरिक, मानसिक अन्य शक्तियों को बड़ा बल मिला और उनके शरीर के प्रत्येक तन्तु से यही ध्वनि निकलने लगी कि 'कर्ज अवश्य चुकाना चाहिए। वे लिखकर आमदनी करने और कर्ज चुकाने में लग गये और कुछ वर्षों में अपने उद्देश्य को पूरा करके दिखा दिया।

डगलस जेरन्ड को डाक्टरों ने बताया कि 'तुम जीवित नहीं रह सकते।' वह बोला- "क्या मैं निराधार बालकों को ऐसे ही छोड़ जाऊँगा ? मैं नहीं मर सकता।" इसके बाद वह बहुत वर्षों तक जीवित रहा। इसी प्रकार 'सेनेका' बहुत समय तक रोग-शय्या पर पड़े रहने के पश्चात् उठकर खड़ा हो गया। उसने कहा कि मेरे मरने की बात को मेरा पिता सहन नहीं कर सकता था, इस भावना से मैंने जीवित रहने का निश्चय किया और प्राणघातक व्याधि को हटा देने में समर्थ हुआ।

एक लेखक का कथन है कि जगत में तीन प्रकार के मनुष्य होते हैं—करूँगा', 'नहीं करूँगा' और 'कर नहीं सकता।' पहली प्रकार के सब कामों को पूरा कर डालते हैं, दूसरी प्रकार वालों को सब बातों का उल्टा फल मिलता है और तीसरी प्रकार के सदैव असफल होते हैं। आत्म-श्रद्धा में इतना बल है कि कोई कार्य असम्भव जान पड़ता है, उसको भी करने का जो दृढ़ निश्चय कर लेता है तो वह कार्य उसके जीवन में कभी न कभी पूरा हो ही जाता है।

फ्रांस के प्रसिद्ध लेखक बाल्जाक का पिता उसके लेखन व्यवसाय के विरुद्ध था। उसने उसे समझाया कि साहित्य-जीवन में मनुष्य तो भिखारी बन जाता है या राजा हो जाता है। लड़के ने उत्तर दिया कि "अच्छा, तब मैं राजा ही बनूँगा।" इस पर उसके माँ-बाप ने उसको किसी प्रकार की सहायता न देकर अपने परिश्रम के आधार पर ही छोड़ दिया। वह दस वर्ष तक संकट और गरीबी के साथ लड़ता रहा और अन्त में उसने महान विजय प्राप्त की।

एक बढ़ई किसी मजिस्ट्रेट की मेज को बहुत अधिक सावधानी से तैयार कर रहा था। किसी ने पूछा कि तुम इसे इतने परिश्रम से क्यों बना रहे हो ? बढ़ई ने उत्तर दिया कि "जब मैं मजिस्ट्रेट होकर इस मेज पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बैठकर काम करूँ तो मुझे यह सुन्दर लगे।'' कुछ वर्ष बाद वह वास्तव में मजिस्ट्रेट बनकर उस मेज पर बैठा।

अमरीका के महान जन-सेवक गैरीसन ने अन्यायी रूढ़ियों का उच्छेद करने के लिए जब 'लिबरेटर' नाम का सामयिक पत्र प्रकाशित किया तो उसके प्रथम अंक में ही उसने लिखा था—''सच्चे दिल से मैं यह कार्य कर रहा हूँ। मेरे हृदय में किसी प्रकार की शंका नहीं है। मैं कभी किसी प्रकार का बहाना करके एक इन्च भी पीछे नहीं हटूँगा और मेरी बात को सब कोई सुनेंगे।'' ऐसी अचल निष्ठा से गैरीसन का चरित्र विकसित हुआ था। इतना ही नहीं लिंकन, ग्राण्ट आदि जो बहुसंख्यक महा आत्माएँ प्रतिष्ठा की रक्षा करते हुए वीरगति को प्राप्त हुईं, वे भी ऐसे ही दृढ़ निश्चय वाली थीं। इस प्रकार की इच्छाशक्ति होना वास्तव में महत्त्व की बात है।

दृढ़ संकल्प शक्ति वाले पुरुष मरते हुए भी उस बात से पीछे कदम नहीं हटाते जिसे उन्होंने सच मान लिया है। फ्रांस-इंग्लैण्ड के युद्ध के अन्तिम दिनों में 'छोटा पिट' इंग्लैण्ड का प्रधानमन्त्री बना और उसने फ्रांस की राज्य-क्रान्ति के विरुद्ध जोरदार अभियान आरम्भ किया। उसे बहुत-सी सफलतायें प्राप्त हुईं परन्तु उधर भी महान नैपोलियन जैसा व्यक्ति उसका मुकाबला कर रहा था जिससे अन्त में इंग्लैण्ड का प्रधान सेनानायक वीरगति को प्राप्त हुआ। इस घटना से 'पिट' को बड़ा आघात पहुँचा। नैपोलियन की विजय का समाचार सुनकर उसने यीरोप के नक्शे की तरफ उँगली उठाते हुए कहा—''इस नक्शे को जला दो, अब दस वर्ष तक उसकी आवश्यकता नहीं पड़ेगी।'' यह कहकर वह मूर्छित हो गया। उसे केवल एक बार होश आया तो उसके मुख से धीरे से ये ही शब्द निकले—'हाय, मेरा देश।' वह इतना बुद्धिमान था कि समय की घटनाओं की पूरी शक्ति और महत्त्व का ठीक अनुमान लगा लेता था। उसके कथनानुसार ठीक दस वर्ष बाद वाटरलू के युद्ध में अँग्रेजों ने नैपोलियन को हराकर ब्रिटिश साम्राज्य की पताका पुनः संसार भर में फहरा दी।

विकासवाद के आचार्य डार्विन की इच्छाशक्ति कैसी बलवान थी ? वह हमेशा बीमार रहता था, दुःख पर दुःख उसे उठाने पड़ते थे। वह जितना सहन करता था उसे उसकी स्त्री के अतिरिक्त कोई नहीं जानता था। उसके पुत्र ने लिखा है कि चालीस वर्ष तक एक भी दिन ऐसा नहीं निकला, जबकि उसकी तबियत ठीक रही हो। पर इन चालीस वर्षों में वह लगातार इतना काम करता रहा कि अच्छे-अच्छे मन और शरीर वाले भी उतना काम नही कर सकते। किसी भी विषय में पूर्णतः संलग्न हो जाने की उसमें अद्भुत क्षमता थी। वह हार जाने को निर्बलता का चिन्ह मानता था और इसलिए पराजय को सहन नहीं कर सकता था। उसकी एक प्रिय कहावत यह थी कि ''आग्रहपूर्वक करने वाला ही कार्य को सिद्ध कर सकता है।'' उसके अद्भुत धैर्य और साहस का प्रत्यक्ष उदाहरण यह है कि 'प्राणियों की उत्पत्ति' ग्रन्थ की सामग्री इकट्ठी करने में उसे बीस वर्ष का समय लगा और 'मनुष्य का विकास' तीस वर्ष तक निरन्तर श्रम करने पर लिखा जा सका।

एक प्राचीन लेखक दृढ़ संकल्प शक्ति के विषय में जो लिख गया है, वह आज भी सर्वथा सत्य जान पड़ता है कि ''विश्वास मनुष्यों के ऊपर विजय प्राप्त करता है। वह उनमें ऊपर ही नहीं भीतर भी विजय प्राप्त करता है। एक बलवान हृदय की इच्छा के आगे हजारों काँप जाते हैं। एक छोटा व्यक्ति भी यदि निर्भय होकर निश्चय करले तो उससे संघर्ष का स्वरूप ही बदल जाता है और उसे देखकर भागने वाले बड़े-बड़े व्यक्ति पुनः लौटकर जूझने लग जाते हैं।''

जीवन-निर्माण के प्रत्येक क्षेत्र में संकल्प शक्ति को विशिष्ट स्थान मिला है। यों प्रत्येक इच्छा एक तरह की संकल्प ही होती है किन्तु तो भी सब इच्छायें संकल्प की सीमा का स्पर्श नहीं कर पातीं। उनमें पूर्ति का बल नहीं होता, अतः वे निर्जीव मानी जाती हैं। किन्तु वही इच्छाएँ बुद्धि, विचार और दृढ़ भावना द्वारा जब परिष्कृत हो जाती हैं तो संकल्प बन जाती हैं। ध्येय सिद्धि के लिए इच्छा की अपेक्षा संकल्प में अधिक शक्ति होती है। संकल्प उस दुर्ग के समान है, जो भयंकर प्रलोभन, दुर्बल एवं डाँवाडोल परिस्थितियों से भी रक्षा करता है और सफलता के द्वार तक पहुँचने में मदद करता है। शास्त्रकार ने **''संकल्पमूलः कामः''** अर्थात् कामना पूर्ति का मूल संकल्प बताया है। इसमें सन्देह नहीं है। प्रतिज्ञा, नियमाचरण तथा धार्मिक अनुष्ठानों से भी वृहत्तर शक्ति संकल्प में होती है।

महान विचारक **एमर्सन** ने लिखा है, ''इतिहास इस बात का साक्षी है कि मनुष्य की संकल्प शक्ति के सम्मुख देव, दनुज सभी पराजित होते रहे हैं।''

उत्कृष्ट या निकृष्ट जीवन यथार्थतः मनुष्य के विचारों पर निर्भर है। कर्म हमारे विचारों के रूप हैं। जिस बात की मन में प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है, वह अपनी पसन्द या दृढ़ इच्छा के कारण गहरी नींव पकड़ लेती है, उसी के अनुसार बाह्य जीवन का निर्माण होने लगता है।

विचार यों अव्यक्त मन से भी प्रस्फुटित होते हैं, किन्तु वे प्रभावशाली नहीं होते, अतः संकल्प भी एक तरह की विचार-उत्पादक शक्ति है। इस तरह के विचार क्रमिक एवं योजनाबद्ध होते हैं, अव्यक्त विचारों की अपेक्षा उनकी शक्ति भी अधिक प्रखर होती है। इसलिए जो काम विशेष संकल्प के साथ किये जाते हैं वे प्रायः असफल नहीं होते।

यहाँ संकल्प शक्ति के स्वरूप को समझने की आवश्यकता है। हवा के आघात से जिस प्रकार जल में तरंगें उठा करती हैं और एक कोने से दूसरे कोने तक दौड़ा करती हैं। जो लहरें अधिक शक्तिशाली होती हैं, वे अधिक वेग और कम्पन के साथ किनारों से थपेड़े

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मारती हैं, उसी तरह मन में भी शुभ-अशुभ विचारों के कम्पन या तरंग उठा करती हैं जो सूक्ष्म आकाश में सुदूर तक प्रसारित होती रहती हैं, प्रत्येक विचार का एक निश्चित स्वरूप होता है जो दूसरे सजातीय प्रवाहों के साथ मिलकर और भी शक्तिशाली बनता रहता है। इस तरह के अनेक संकल्प-विकल्प इस सूक्ष्म जगत में विद्यमान हैं पर उनका लाभ मनुष्य को तब मिल पाता है जब वह विशेष मनोयोगपूर्वक किसी एक इच्छा की पूर्ति की ओर प्रवृत्त होता है। इस तरह का मस्तिष्क उन सजातीय विचार-तरंगों को सूक्ष्म आकाश से उसी तरह खींचता है जैसे—भूखा अजगर साँस की तेजी के साथ छोटे-छोटे अनेक जीव-जन्तु, कीट-पतंगों को खींच लेता है। सजातीय तत्त्वों की एक अदृश्य शक्ति काम करने लगती है और सफलता के अनेक मार्ग अपने आप सूझने लगते हैं। ऐसा लगता है कोई दैवी-शक्ति आपका साथ दे रही है किन्तु वह शक्ति संकल्प की ही होती है, जो मस्तिष्क में अनेक पुरुषों की वैसी ही कल्पनाएँ तथा सूझ-बूझ ढूँढ़-ढूँढ़कर लाती रहती है और विचारवान व्यक्ति उनमें से अपनी परिस्थितियों के अनुरूप साधनों को ग्रहण करता हुआ चला जाता है। इससे सफलता प्राप्त करने में कुछ अधिक देर नहीं लगती ।

इस संसार में भलाई अधिक है। अत: भले विचारों के सूक्ष्म प्रवाह भी सूक्ष्म आकाश में अधिक विद्यमान हैं, अत: अच्छे काम को करने में धन की आवश्यकता उतनी नहीं, जितने शुद्ध हृदय और सात्विक संकल्प की आवश्यकता होती है। जब संकल्प दृढ़ हो जाता है और अध्यवसाय में भी कुछ शिथिलता नहीं रहती तो उद्देश्य की सफलता भी निश्चित हो जाती है। निश्चयात्मक विचारों का कार्य-सिद्धि में बड़ा महत्त्व है।

एक बार खूब अच्छी तरह से विचार करने के बाद कोई संकल्प कर लें और फिर उसे छोड़ें नहीं तो कैसा ही कठिन कार्य हो उसमें भी सफलता की बहुत कुछ सम्भावनाएँ बढ़ जाती हैं।

पर इसके लिए उचित उद्योग तथा साध्य की तत्परता होना भी आवश्यक है। इसके बिना संकल्प में वह सामर्थ्य नहीं आ पाती जो सफलता के लिए अभीष्ट होती है। जिस बात का संकल्प लिया जाय उस पर उसी क्षण से अमल भी होना चाहिए। विचार और क्रिया दोनों के सम्मिश्रण से ही सफलता मिलती है।

मान लीजिए आपने संकल्प लिया है कि इस वर्ष अच्छे नम्बरों से परीक्षा पास करेंगे, तो इसके लिए आपको प्रात:काल उठना ही पड़ेगा, पढ़ाई भी करनी पड़ेगी। इसमें ढील देने से आपकी कामना अधूरी ही रहेगी। दृढ़ संकल्प में मनुष्य की मति स्थिर और शरीर क्रियाशील बना रहना चाहिए। यदि हमारा मन बलवान है और कार्य करने की लगन है तो कोई अशुभ या अवरोध विचार सफलता के रास्ते में अपना प्रभाव नहीं डाल सकता। अपने मन को तूफानी आघातों से भीषण, गर्मी-बरसात, ओलों के बीच अडिग अटूट रहने वाली चट्टान की तरह बनालें, तो परिस्थितियाँ और सांसारिक अड़चनें आपका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकेंगी।

इंग्लैण्ड के प्रधानमन्त्री **सर विन्स्टन चर्चिल** ने अपनी डायरी में लिखा है "मेरे पुन: स्वस्थ हो जाने का कारण कोई नई दवा नहीं थी। दवा का काम तो मेरी दृढ़ संकल्प शक्ति ने किया। मुझे दृढ़ विश्वास था कि परमात्मा ने अभी मेरे लिए कुछ काम शेष रखा है और उसे मुझे पूरा करना ही है।" कहते हैं यह बात उन्होंने अपनी पक्षाघात की बीमारी के समय सन् १९४५ में लिखी थी, तब उनके प्राय: सभी मित्रों ने यह विश्वास कर लिया था कि उनके दाहिने हाथ का पक्षाघात ठीक नहीं होगा। किन्तु चर्चिल की संकल्प शक्ति के आगे पक्षाघात को झुकना ही पड़ा।

साहस और निश्चयात्मक विश्वास संकल्प के दो पहलू हैं, इन्हीं से मनुष्य की जीत होती है। साहस निरन्तर आगे बढ़ते रहने की प्रेरणा देता है। इसमें कर्म की गति बनी रहती है। निश्चयात्मक विचार डाँवाडोल परिस्थितियों में भी सन्तुलन बनाये रहते हैं, इस तरह से मनुष्य अविचल भाव से अपने इच्छित कर्म पर लगा रहता है।

स्वास्थ्य की तरह शिक्षा, उद्योग, साधना आदि अनेक क्षेत्रों में संकल्प शक्ति से द्रुतगामी सफलता अर्जित की जा सकती है।

किन्तु यह न भूलना चाहिए कि कभी-कभी परिस्थितियों की गम्भीरता का संकल्प के साथ संघर्ष हो जाता है। अपने साधनों को दृष्टि में रखकर भी जो संकल्प लिये जाते हैं, उनमें भी आकस्मिक रुकावटें आ सकती हैं। ऐसी अवस्था में मनुष्य की सारी विचार शक्ति लड़खड़ा जाने का खतरा रहता है। ऐसे अवसर जब कभी आयें उस समय दैवी-संकल्प को महत्तर समझकर धैर्य करना ही लाभदायक होता है। घबराहट की-सी बात क्यों ? आगे के लिए फिर कोई नया मार्ग तलाश कर लेना चाहिए। विवशता या विभ्रम से बचने के लिए यह पहले अनुमान कर लेना ही ठीक है कि आप जो कार्य करने जा रहे हैं या जिस बात को आप उठा रहे हैं, उसके पूरा करने की कितनी शक्ति आप में है। यदि संकल्प करते रहें किन्तु तदनुसार कार्य न हो तो आत्म शक्ति का ह्रास हो जाता है, जब कोई संकल्प लिया जाय तो, जहाँ तक बन पड़े उसे पूरा ही करके छोड़ना चाहिए। हाँ, परिस्थितियाँ ऐसा असम्भव बना दें, तो भिन्न बात है।

अत: प्रथमत: संकल्प अपनी यथार्थ स्थिति और उपलब्ध साधनों को दृष्टि में रखकर ही लेना चाहिए। दूसरे, परिस्थितियों के कारण उनकी पूर्ति सम्भव नहीं हो, तो उस पर अड़ने की बजाय, परिस्थितियों के अनुरूप संकल्प एवं कर्म की नई दिशा-नीति निर्धारित करनी चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संकल्प की दृढ़ता—विचारों की गहराई से

कर्मयोग के लिए अपने विचारतन्त्र को सही करना-असम्भव और असम्बद्ध कल्पनाओं में उड़ते-फिरने की अस्त-व्यस्तता को निरस्त करना आवश्यक है। भविष्य के सुनहरे सपने देखते रहने की अपेक्षा यही उचित है कि आज की समस्याओं को—आज के साधनों से हल करने का ताल-मेल बिठाया जाय। कल जब अधिक अच्छी परिस्थितियाँ सामने होंगी तो कल उससे आगे की बात सोची जा सकती है। भूतकाल चला गया वह लौट नहीं सकता। इसलिए "बीती ताहि बिसार दे" की उक्ति को सही मानकर गढ़े मुर्दे उखाड़ने की बात भुला देने में ही बुद्धिमत्ता है। भूतकाल की समीक्षाओं का लाभ इतना ही है कि पिछले अनुभवों से लाभ उठा लिया जाय। बीती घटनाओं की बात सोचकर रंज करने और पछताने से वर्तमान भी नष्ट होता है। सबसे महत्त्वपूर्ण समय वर्तमान ही है। भविष्य की कल्पनाओं में उड़ना भी भूत चिन्तन की तरह ही निरर्थक है। कहते हैं बुढ्ढे भूतकाल की बातें सोचते और बच्चे भविष्य की कल्पनाओं में उलझे रहते हैं। प्रौढ़ावस्था की बुद्धिमत्ता इसी में है कि वर्तमान को देखा समझा जाय और प्रस्तुत अवसर का अधिक सदुपयोग करने में तत्पर हुआ जाय। हमारा चिन्तन यथार्थवादिता पर निर्भर होना चाहिए और भावी प्रगति के लिए आज जो किया जाना सम्भव है, उसी पर ध्यान केन्द्रित रहना चाहिए।

आवेशों से जितना बचना सम्भव हो उतना बचना चाहिए व मन को अव्यवस्थित भाग-दौड़ करने से रोकना चाहिए। मन की अव्यवस्थित भाग-दौड़ का तात्पर्य एक ही है कि उसे कोई महत्त्वपूर्ण काम सुनिश्चित रूप से सौंपा ही नहीं गया। यदि सौंपा जाय तो वह अपनी अस्त-व्यस्तता छोड़कर निर्धारित दिशा में कार्य संलग्न बना रहेगा। वैज्ञानिक, कलाकार, साहित्यकार, शिल्पी, व्यवसायी, कृषक आदि अपने को नियत निर्धारित काम में लगाये रहने का अभ्यास करते हैं। फलतः चिन्तन क्रम अस्त-व्यस्तता में भ्रमण नहीं करता और बिना ननुनच किये अपने निर्धारित क्रम में जुटा रहता है।

आरम्भ में अनगढ़ मन को एकाग्र करना थोड़ा कठिन पड़ता है, पर यह कठिनाई तो हर नये काम में आती है। हल में चलने के लिए नया बछड़ा सहज ही कहाँ रजामन्द हो जाता है। नये घोड़े ताँगे में जुतते समय कितनी गड़बड़ी फैलाते हैं। यदि मालिक लोग इस असहमति से निराश होकर अपना प्रयास छोड़ दें तो फिर उनका बछड़ा पालना और घोड़े खरीदना ही व्यर्थ है। तब वे हल जोतने और ताँगा चलाने के लाभ से वंचित ही रहेंगे। हिम्मत के साथ देर तक डाँट-पुचकार कर लगे ही रहने पर सरकस के जानवर कैसे-कैसे करतब दिखाने लगते हैं। फिर कोई कारण नहीं कि मन को निर्दिष्ट दिशा में ही अपनी चिन्तन प्रक्रिया केन्द्रित किये रहने के लिए अभ्यस्त न किया जा सके।

उथले विचार ऊपरी सतह पर घूमते रहते हैं और गोता मारकर कीमती मोती पाने में सफल नहीं होते। किसी भी विषय पर जितनी गम्भीरतापूर्वक उसके पक्ष प्रतिपक्ष का मन्थन करते हुए निष्कर्ष निकाला जायेगा उतनी ही वस्तुस्थिति स्पष्ट रूप से सामने आवेगी। एकांगी-एकपक्षीय-विचार भावुकता कहलाते हैं। होना यह चाहिए कि पक्ष और विपक्ष के दोनों विचार काम करें-सरलता और कठिनाई की दोनों तस्वीरें सामने रखी जायें और सोचा जाय कि अधिक अनुकूलता उत्पन्न करने के लिए क्या-क्या करना होगा और उसके लिए क्या साधन जुटाने होंगे? मात्र कठिनाइयों की बात सोचकर किसी प्रयास के लिए साहस न करना जितना अबुद्धिमत्तापूर्ण है, उतना ही यह भी उपहासास्पद है कि अभीष्ट मनोरथ को चुटकी बजाते सफल होने की बाल-बुद्धि अपनाई जाय। ऐसे उतावले लोग आये दिन असफलता का मुँह देखते, दुर्भाग्य का रोना रोते पाये जाते हैं।

हर छोटा-बड़ा काम आवश्यक मनोयोग, परिश्रम, साधन और समय की अपेक्षा रखता है। उन्हें जुटाने के लिए प्रबल-पुरुषार्थ करना पड़ता है। जिनमें इसके लिए धैर्य, साहस और संकल्प होगा वे ही कुछ कर सकने और पा सकने में सफल होंगे। योग्यता का अभाव और साधनों की कमी पूरी करने के लिए घनघोर प्रयास करने को ही सफलता की पदयात्रा कहते हैं। उछलकर क्षणमात्र में आकाश चूमने के आतुर लोगों ने कभी कुछ कहने लायक सफलता पाई हो—ऐसा देखने-सुनने में नहीं आया। क्योंकि प्रखर संकल्प को ही सफलता की जननी कहा गया है। यह इच्छाशक्ति का ही सघन रूप है। इच्छा-आकांक्षा ही घनीभूत होकर व्यक्ति को कर्म मार्ग पर अग्रसर करती है और उसे अपने अभीष्ट लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रेरित करती है। किसी भाप से चलने वाली रेलगाड़ी को पटरी पर दौड़ाने के लिए भाप आवश्यक है। यद्यपि उसके साथ चालक की इच्छा-आकांक्षा और नियन्त्रण दक्षता भी आवश्यक है। चालक की कुशलता और दक्षता को इच्छाशक्ति का प्रतिरूप करें तो अकेले रेलगाड़ी और चालक होना ही पर्याप्त नहीं है। उसके लिए वाष्प से उत्पन्न की गई शक्ति, जिसके कारण कि रेल के पहियों में गति आती है का होना भी अति आवश्यक है।

मन को रोकें नहीं संकल्पवान बनायें

मनोविज्ञानी **फ्रायड** अपनी पत्नी और बच्चे समेत एक उद्यान में सैर करने गये। बैठे गप-शप कर रहे थे। इतने में एक छोटा चार वर्ष का बच्चा गायब हो गया। निगाह दौड़ाई तो कहीं भी दिखाई नहीं दिया। पत्नी बहुत घबराने लगी और ढूँढ़ने के लिए आतुरता प्रकट करने लगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फ्रायड ने सान्त्वना देते हुए कहा—घबराने की कोई बात नहीं है। पास के उद्यान में वह झूले पर झूल रहा होगा, अभी चलते हैं उसे पा लेना।

सब लोग चले और देखा कि सचमुच बच्चा पास वाले उद्यान में झूले पर झूल रहा है।

फ्रायड की पत्नी को बहुत आश्चर्य हुआ। उसने पूछा आपको कैसे मालूम हो गया था कि बच्चा यहाँ इस झूले पर झूल रहा ?

उन्होंने उत्तर दिया। मैं सुनता चला आ रहा था। रास्ते में जब वह पार्क पड़ा, तब बच्चे ने उस पर झूलने का आग्रह किया था। तुमने मना कर दिया था। बच्चे की उत्सुकता बढ़ी होगी। उसने ज्ञान और अनुभव बढ़ाने की अन्तः प्रेरणा से वहाँ जाना और वस्तुस्थिति को देखना आवश्यक समझा होगा। मना करने से उसके रहस्य जानने की उत्सुक इच्छा ने भी अधिक इसके लिए उत्साहित किया होगा और वह आँख बचाकर यहाँ चला आया होगा। इस वस्तुस्थिति को मैं समझता था। सो ही मैंने निश्चित रूप से यह कह दिया कि वह पड़ौस के बगीचे में झूले पर होगा।

फ्रायड ने पत्नी से इस सन्दर्भ में इतना और कहा कि मन का बिल्कुल यही हाल है। जिसे न करने के लिए कहा जाता है—जिधर से रोका जाता है उधर ही उसकी प्रवृत्ति और अधिक होती है। रहस्य जानने, ज्ञान बढ़ाने और अनुभव, इच्छा करने के लिए वह ऐसे प्रसंग के सम्पर्क में अधिक आतुरता पूर्वक आने का प्रयत्न करता है, जहाँ से उसे रोका जाय।

मन को रोकना काफी नहीं। उसे ऐसी दिशा देनी चाहिए, जिसमें अधिकाधिक रस मिले और रुचि जुड़े । जहाँ अधिक आकर्षण होगा मन वहीं जायेगा। कुमार्ग पर से मन को रोकने का बार-बार निषेध करना एकांगी है। उसकी दिशा परिवर्तन के लिए यह आवश्यक है कि मन के लिए कोई अधिक आकर्षक क्षेत्र काम करने और विचरण करने के लिए उपलब्ध हो।

एक साधक साधना कर रहे थे। मन काबू में न आता था, वह निर्धारित लक्ष्य पर न रुककर अन्न माँगता था। इस कठिनाई का समाधान करने के लिए वे अपने गुरु के पास पहुँचे।

गुरू ने उस समय तो कुछ उत्तर न दिया पर अगले दिन एक नई साधना बताने के लिए उसे बुलाया।

साधक पहुँचा तो उन्होंने कहा-आज बहुत ही शुभ मुहूर्त है। ऐसा मन्त्र बताता हूँ जो आज ही सिद्ध हो जायगा और मनवांछित फल देगा। साधक को बड़ी प्रसन्नता हुई और उसने वह छोटा मन्त्र भली प्रकार याद कर लिया तथा सरल-सा विधि विधान भली प्रकार समझ लिया।

चलने लगा तो गुरु ने उसे रोका और कहा-एक छोटा-सा प्रतिबन्ध और है, जिसे इस साधना के समय पालन करना आवश्यक है।

साधक ने उत्सुकतापूर्वक उसे भी पूछा—उसने कहा जप के समय बन्दर का ध्यान नहीं आना चाहिए। प्रतिबन्ध जरा सा था उसे पालने करने में क्या कठिनाई हो सकती थी ? साधक प्रसन्न होता हुआ चला गया।

जब वह जप करने बैठा तो प्रतिबन्धित बन्दर का ध्यान ही मस्तिष्क पर हावी होने लगा, उसने जितना ही मन को रोका उतना ही अधिक तीव्रता के साथ बन्दर का ध्यान आया पूरा। दिन इसी खींचा-तान में चला गया। साधन न हो सका। पूरे समय बन्दर ही मन पर सवार रहा।

सन्ध्या होने पर साधक दुःखी होता हुआ गुरु के पास आया और अपनी असफलता बताई।

गुरु मुस्कराये और उनने कहा—पिछले दिन की तुम्हारी शंका का यही उत्तर है। मन के निरोध में यही कठिनाई है कि जिस काम से उसे रोका जाता है उसी के लिए वह आतुर होता है। ज्ञान और अनुभव बढ़ाने की उसकी स्वाभाविक प्रवृत्ति इसके लिए उसे विवश करती है। इसलिए मन को साधने में प्रतिबन्ध कड़े करने की अपेक्षा यह अधिक उपयुक्त रहता है कि सम्मुख प्रस्तुत कार्य में अधिक आकर्षण उत्पन्न किया जाय। बन्धन ढीले रखे जायें और यदि बहुत अनुचित न हो तो तथा-कथित बन्धनों को कभी कुछ ढीला करके मन को यह देख-समझ लेने दिया जाय कि जिसके लिए वह आतुर था वह कितना निसार और निरर्थक क्षेत्र है। अनुभव के बाद निकाला हुआ निष्कर्ष अधिक स्वस्थ और परिपक्व होता है।

वस्तु प्राप्त न होने पर अभाव की स्थिति में किया हुआ त्याग कच्चा है। उपयोग और उपभोग के बाद जो वस्तु छोड़ी जाती है उसकी निरर्थकता के बारे में मन निश्चिन्त रहता है । जहर खाने, आग छूने जैसे अनुभव करना तो बहुत महँगा पड़ता है पर जहाँ तक इन्द्रियों की अनुभूति का सम्बन्ध है, उन्हें उचित सीमा में छूट देकर यह अनुभव कर लेने देना चाहिए कि वह रस-लिप्सा निरर्थक भी है और हानिकारक भी।

एक साधु ने एक दिन एक विचित्र आचरण किया—इसके उस कौतुक को देखने के लिए बहुत लोग इकट्ठे हो गये।

उनने एक बड़ा वर्तन भर के कढ़ी पकाई। खाने पर ऐसे जुटे कि हटे ही नहीं। अधिक मात्रा खा जाने पर उल्टी हुई। कुल्ला किया और फिर खाने पर जुट गये। इस प्रकार वे सारे दिन कढ़ी खाने और उल्टी करने में लगे रहे। अन्त में उन्होंने बची हुई कढ़ी को कुत्तों के आगे फेक दिया।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस अद्भुत प्रसंग का कारण उपस्थित लोगों ने पूछा तो उनने यही कहा कि-बहुत दिन से मन कढ़ी के लिए मचल रहा था। उसे कितनी ही बार समझाया कि मेरी वात प्रकृति शारीरिक स्थिति में वह हानिकारक है और मानसिक स्थिति में इस प्रकार की लिप्सा अशोभनीय। पर यह ज्ञान चर्चा उसके गले उतरती ही न थी। जब भी कढ़ी देखता, मचलने लगता। एकान्त में भी उसी की इच्छा और कल्पना करता। समझाने बुझाने के प्रयत्न सफल न हुए तो फिर यह निश्चय किया कि मन को वस्तुस्थिति समझ लेने और उसका अनुभव कर लेने का अवसर दिया जाये। आज मैंने वही किया। मन मर्जी जितनी कढ़ी खाने की ही छूट नहीं दी वरन् इस बात के लिए विवश किया कि कढ़ी खाने की अति करे। उल्टी होने पर भी कढ़ी खाते रहने की प्रक्रिया इसीलिए अपनाई। शाम तक मन को कढ़ी से घोर अरुचि हो गई। उसे बार-बार कहा—अभी और खा-जब उसने बिल्कुल इन्कार कर दिया तो फिर बची-खुची कुत्ते को डाल दी। अब मन ने वस्तुस्थिति समझ ली। तृप्ति कर ली और घृणा की स्थिति तक कदम बढ़ा लिए। अब उसके ललचाने और मचलने का अवसर न आवेगा।

जहाँ तक इन्द्रिय संयम का प्रश्न है, वहाँ तक मन को थोड़ी छूट देकर रसानुभूति का अनुभव प्राप्त कर लेने देना चाहिए। अपने यहाँ गृहस्थ उपयोग के बाद शमं, दम, तितीक्षा का विधान बताया गया है। युवावस्था में उपयोग का अवसर मिल जाता है और उस ओर का आकर्षण समाप्त हो जाता है। इसके बाद वानप्रस्थ और संन्यास में संयम साधना ठीक स्वाभाविक और बिना व्यवधान के चलने लगती है। किन्तु यदि बिना उपयोग के बालकपन से ही इन्द्रिय भोग का निषेध रहे तो मन की स्वाभाविक प्रकृति दूसरे को उस मार्ग पर चलते हुए देखकर तीव्र हो उठती है और उस संयम साधना के कभी भी भाव प्रवाह के दबाव से खण्डित होने की आशंका बनी रहती है।

जहाँ तक इन्द्रिय संयम का प्रश्न है, मन में उपयोग की हानियों को समझना चाहिए और ऐसे अवसरों से बचना चाहिए, जिनमें उस प्रकार के उभार उत्पन्न होते हों। पर कड़े प्रतिबन्ध नहीं लगाने चाहिए। युवावस्था में तो विशेष रूप में ढील रखनी चाहिए और मर्यादित एवं वैध इन्द्रिय तृप्ति पर कठोर प्रतिबन्ध नहीं लगाने चाहिए न बहुत आकर्षण, न अति का निषेध, इस बीच की मनोभूमि में संयम साधना बहुत ही सरलता के साथ सधती चली जाती है।

निर्धारित लक्ष्य के महत्त्व और माहात्म्य पर पूरा चिन्तन करना चाहिए। उसके मधुर कल्पना चित्र बनाने चाहिए और इस मार्ग पर चलते हुए लक्ष्य तक पहुँचने पर जो उपलब्धियाँ मिल सकती हैं, उनका लाभ कल्पना क्षेत्र में भली प्रकार जमाना चाहिए। सामान्य जीवन क्रम और उस असामान्य आदर्शवादी लक्ष्य की पूर्ति के परिणामों को अलग-अलग देखना समझना और फिर उनकी तुलनात्मक समीक्षा करना यह सिद्ध कर देता है कि नर पशु जैसे लोभ-मोह ग्रस्त जीवन और आदर्शवादी मार्ग पर चलने पर प्राप्त स्थिति में कितना अधिक अन्तर है। यह कल्पना क्षेत्र जितने प्रखर होंगे। यह तुलनात्मक निष्कर्ष जितना प्रखर होगा, उतना ही महानता का लक्ष्य अपनाने की गरिमा स्पष्ट होती जायेगी।

तब मन पूरी संकल्प-शक्ति के साथ उस दिशा में लगेगा और इधर-उधर भागने-बहकने के लिए रस्सी नहीं तुड़ायेगा। संकल्प की दृढ़ता विचार विश्लेषण और स्पष्ट समय से ही स्थिर रह सकती है और तभी उसे प्रचंड प्रतिक्रिया-उत्पादन में समर्थ शक्ति बनाया जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुनिश्चित संकल्पों की महान उपलब्धियाँ

कठिनाइयों से डरें नहीं—लड़ें

प्रकृति के कुछ नियम हैं, जिनके अनुसार यह संसार चलता है। जड़ जगत् ही नहीं चेतन प्राणियों का नियमन-नियन्त्रण भी प्रकृति के उन नियमों के अनुसार होता है। इन नियमों के या प्रकृति के विधान के अनुसार स्थिति में परिवर्तन आते रहना एक स्वाभाविक क्रम है। मनुष्य की स्थिति में भी परिवर्तन होते रहना प्रकृति नियमों के अन्तर्गत आता है। जीवन में उतार-चढ़ाव आना प्रकृति विधान के अनुसार स्वाभाविक है। इसे मनुष्य मन की दुर्बलता ही कहा जायेगा कि वह उतार-चढ़ाव की नियति को स्वीकार नहीं कर पाता और अनुकूल परिस्थितियों में सुख का अनुभव करता है तो प्रतिकूल परिस्थितियों में दुःखी होता, पीड़ा अनुभव करता है।

उस दुर्बलता के कारण ही मनुष्य ने कठिनाई, मुसीबत, कष्ट आदि समानार्थी शब्दों की रचना की और सदैव यह चाहा कि किसी न किसी प्रकार इनसे बचते रहा जाये। जबकि कठिनाइयाँ जीवन प्रवाह का एक सहज स्वाभाविक क्रम है जो आता है, कुछ देर रुकता है और बहकर चला जाता है। यदि इस सत्य को स्वीकार कर लिया जाए तो कठिनाइयाँ भी अपने लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं और उनका सहयोग जीवन तथा व्यक्तित्व के विकास में किया जा सकता है। किन्तु इस सत्य को स्वीकार नहीं किया जाता अथवा यह बात गले नहीं उतरती इसलिए कठिनाइयाँ विकरालता बनकर मनुष्य को डराती, दबाती और विपण्ण करती हैं। वस्तुतः कठिनाइयाँ इतनी भयंकर नहीं होती, जितना कि उन्हें समझा जाता है। जिन प्रतिकूल परिस्थितियों में कई लोग रोते-कलपते हैं, उन्हीं प्रतिकूलताओं में दूसरे व्यक्ति नई-नई प्रेरणाएँ प्राप्त कर सफलता का वरण करते हैं।

कठिनाइयों को यदि मनःस्थिति पर निर्भर कहा जाये तो गलत नहीं होगा। एक कमजोर और दुर्बल मनोभूमि के व्यक्ति के लिए प्रतिकूलताएँ अभिशाप बनकर बरसती हैं तो दूसरे सबल और सशक्त मनोभूमि वाले व्यक्ति उन्हीं कठिनाइयों को ऐसा उपयोग करते हैं कि वे उनके लिए वरदान तुल्य बन जाती हैं। इस प्रकार कठिनाइयाँ अपने आप में कोई विशेष महत्त्व नहीं रखतीं या कहा जा सकता है वे कुछ हैं ही नहीं बल्कि मन की स्थिति से ही उनका स्वरूप बनता है। निर्बल मनोभूमि तो अपनी कल्पनाजन्य कठिनाइयों में ही अशान्त हो जाती है, जबकि मनोबल सम्पन्न व्यक्ति कठिनाइयों को सहज भाव से स्वीकार करते हुए आगे बढ़ते हैं। सन्तुलित रहने वाले व्यक्तियों की जीवन-यात्रा इसी सहज गति से आगे बढ़ती चलती है।

कठिनाइयों में, प्रतिकूल परिस्थितियों में सन्तुलित किस प्रकार रहा जाए ? इसके उत्तर में अपनी मनःस्थिति को सुधारने, सन्तुलन साधने की आवश्यकता ही बताई जा सकती है। स्मरण रखा जाना चाहिए कि परीक्षा की कसौटी पर कसे बिना कोई भी वस्तु अपनी उत्कृष्टता सिद्ध नहीं कर सकती। सोना अग्नि में तपकर ही शुद्ध बनता और निखरता है। आग की गोद में पिघलाकर ही लोहा साँचे में ढलने योग्य बनता है। इसी प्रकार मनुष्य भी कठिनाइयों की आग में तप-गलकर ही उत्कृष्ट, सौन्दर्ययुक्त, प्रभावशाली और महत्त्वपूर्ण बनता है। अस्तु, कठिनाइयाँ मनुष्य के विकास में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। उनके साथ खेलने पर इच्छाशक्ति प्रखर बनती है और उन्हीं में व्यक्तित्व की परख होती है।

जो व्यक्ति कठिनाइयों या प्रतिकूलताओं से घबड़ाकर हिम्मत हार बैठा, वह हार गया और जिसने उनसे समझौता कर लिया, वह सफलता की मंजिल पर पहुँच गया। इस प्रकार हार बैठने, असफल होने या विजयश्री और सफलता का वरण करने के लिए और कोई नहीं मनुष्य स्वयं ही उत्तरदायी है। चुनाव उसी के हाथ में है कि वह सफलता को चुने या विफलता को। यदि वह चाहे तो कठिनाइयों को वरदान बना सकता है और चाहे तो अभिशाप भी। कठिनाइयाँ वरदान बनती हैं या अभिशाप यह इस बात पर निर्भर करता है कि मनुष्य उनसे समझौता करता है, उनका स्वागत करता है अथवा उनसे घबड़ाकर भागता है।

संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं या जिन लोगों ने भी अपने क्षेत्र में उल्लेखनीय सफलताएँ प्राप्त की हैं, उनकी जीवनियाँ उठाकर देखी जाएँ तो स्पष्ट प्रतीत होगा कि कठिनाइयों से गुजरे बिना उनमें से कोई भी अपने लक्ष्य तक नहीं पहुँच सका है। कठिनाइयों की अग्नि परीक्षा से गुजरे बिना किसी भी व्यक्तित्व में कोई चमत्कार नहीं आता। कठिनाइयाँ एक खराद की तरह हैं,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जो मनुष्य के व्यक्तित्व को तराशकर चमका दिया करती हैं। उनका जीवन में वही अस्तित्व है, जो श्रम का और भोजन का।

देखा जाय तो श्रम भी क्या है ? श्रम भी एक प्रकार की कठिनाई है। कठिनाई अर्थात् प्रतिकूलता। रोटी खाना है तो आटा गूँथने से लेकर तवे पर सेकने और आग पर फुलाने तक न जाने क्या-क्या करना पड़ता है ? जो चाहें वे इसे कठिनाई भी कह सकते हैं क्योंकि सुविधा तो सीधे थाली में रोटी आ जाने से ही बन पड़ती है। उपार्जन के लिए श्रम, स्वास्थ्य के लिए श्रम, शिक्षा के लिए श्रम प्रत्येक महत्त्वपूर्ण कार्य या उपलब्धि के लिए श्रम करना पड़ता है। सीधे और सहज कुछ भी प्राप्त नहीं होता। अतः श्रम को कठिनाई भी तो कहा जा सकता है। परन्तु श्रम और कठिनाई में अन्तर यह है कि श्रम के प्रति सहज स्वीकार का भाव होता है, जबकि कठिनाई के प्रति असहिष्णुता का भाव रहता है। कठिनाई थोड़े अधिक श्रम की माँग करती है और श्रम करने में थोड़ी कम कठिनाई सहनी पड़ती है। दोनों में मात्रा भेद है, गुण या स्वरूप में कोई विशेष अन्तर नहीं है।

कठिनाइयाँ अथवा प्रतिकूलताएँ चरित्र निर्माण के लिए भी उपयोगी हैं। उत्तराधिकार में जिन्हें सम्पन्नता प्राप्त होती है, उनमें से अधिकांश व्यक्तियों को दुर्व्यसनों और विलासिता में फँसे देखा जा सकता है। किन्तु जो कठिनाइयों से जूझ रहा है, उसे संसार की फिजूल बातों के लिए अवकाश कहाँ ? कष्ट और कठिनाइयाँ मनुष्य के अहंकार को नष्ट करके, उनमें विनम्रता तथा श्रद्धा भक्ति भर देती हैं। इतना ही नहीं उसे स्वस्थ और सुदृढ़ भी बनाती हैं। इस रूप में कठिनाइयों को वरदान ही कहा जाना चाहिए। परिश्रमी, पुरुषार्थी और साहसी व्यक्ति कठिन परिस्थितियों में अनेक विभूतियाँ अर्जित कर लेते हैं। किन्तु जो कायर हैं, क्लीव हैं, आत्मबल से रहित हैं, वे प्रतिकूलताओं को देखकर डर जाते हैं तथा हाय-हाय करते हुए जीवन के दिन पूरे करते हैं।

छान्दोग्य उपनिषद् में कहा गया है कि—''जब तक यह शरीर बना हुआ है, तब तक सुख और दुःख का निवारण नहीं हो सकता।'' कठिनाइयाँ जीवन का उसी तरह अंग हैं जिस तरह दिन के बाद रात्रि का होना, ऋतुएँ बदलते रहना। अतः आवश्यकता इस बात की है कि कठिनाइयों या प्रतिकूलताओं को अपने ऊपर हावी न होने दिया जाये और उनके बीच से रास्ता निकालकर आगे बढ़ते रहा जाए।

कठिनाइयों को अपने ऊपर हावी न होने देने का एक मार्ग व्यस्त रहना है। मनुष्य के व्यस्त रहने से कठिनाइयों के प्रति शोक, चिन्ता एवं उद्विग्नता में डूबने के लिए समय ही नहीं मिलेगा। स्वामी विवेकानन्द ने एक स्थान पर लिखा है कि 'व्यस्त मनुष्य को आँसू बहाने के लिए भी समय नहीं मिलता।' यह ठीक भी है, जो व्यस्त रहेंगे, उन्हें कठिनाइयों के सम्बन्ध में सोच-सोचकर दुःखी होते रहने का अवकाश ही कहाँ रहेगा ? इसके अतिरिक्त इन्हें जीवन में एक सहज क्रम मानकर भी निश्चिंत रहा जा सकता है। यह सोचकर भी प्रसन्न हुआ जा सकता है कि आपत्तियों का झंझावत नरसिंहों को झकझोरकर, उनका प्रमाद तोड़कर उन्हें पुरुषार्थ के लिए खड़ा कर देता है।

विपत्तियाँ, प्रतिकूलताएँ अथवा कठिनाइयाँ जीवन का सहज स्वाभाविक क्रम है। उनसे प्रभावित होना हो तो इस रूप में होना चाहिए कि वे मनुष्य को शिक्षा देने के लिए आती हैं, जाती हैं और आती रहेंगी। इसलिए उनसे न तो भयभीत होने की आवश्यकता है और न ही उनसे भागने की।

आत्मविश्वासी सदैव सफल होता है

एक साधारण परिवार में पलकर अपनी योग्यता, लगन व पुरुषार्थ के बल पर बैंजामिन डिजरायली ब्रिटेन के पार्लियामेन्ट में सदस्य चुने गए, तो धनी परिवार से आये सांसद उन्हें बड़ी उपेक्षा से देखने लगे। न जाने क्यों पुराने सांसद उन्हें अपने पास तक नहीं फटकने देते। शायद इसलिए कि डिजरायली का वेष-विन्यास अथवा रहन-सहन राजसी नहीं था। वे साधारण वस्त्र पहनते और गरीब लोगों की तरह रहते। अर्थ प्रधान दृष्टिकोण वाले लोग गरीब व्यक्ति का क्यों कर सम्मान करते ? उलटे उनके साथी सांसद उनकी इतनी उपेक्षा करते कि जब वे सदन में बोलने के लिए उठते थे, तो उन्हें बोलने तक नहीं देते लेकिन इन परिस्थितियों में भी डिजरायली का मनोबल नहीं डिगा। जब उनके भाषणों में व्यवधान उपस्थित किया जाता तो वे कहते, 'आपको एक दिन मेरी बातें अवश्य सुननी पड़ेगी।'

यह डिजरायली नहीं उनका आत्मविश्वास बोल रहा था। उन्हें अपनी आन्तरिक शक्तियों पर पूरा विश्वास था। वे अपना उचित मूल्यांकन करना जानते थे। भविष्य के सम्बन्ध में उनके सामने एक सुनिश्चित योजना थी और उस योजना को भी दृढ़तापूर्वक क्रियान्वित करने के लिए वे कृत संकल्प थे। इसी का परिणाम था कि वे अपने प्रयत्न और परिश्रम के बल पर वे एक दिन ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री बन गये। लोगों ने उनके प्रति, उनकी योग्यताओं के प्रति इतना विश्वास व्यक्त किया, उन्हें इतना ठीक-ठीक पहचाना कि वे ब्रिटेन के सफल तथा योग्यतम प्रधानमन्त्री सिद्ध हुये। पहले जो लोग उनका उपहास किया करते थे, वे ही उनके प्रशंसक बन गये और उनका गुणगान करने लगे।

यदि डिजरायली अपने साथियों द्वारा की जाने वाली उपेक्षा से, उनके द्वारा हुए उपहास से हतोत्साहित होकर चुपचाप बैठ जाते, तो संसार उन्हें उस रूप में नहीं जान पाता, जिस रूप में कि आज जानता है। उनकी सफलता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का एक ही कारण है कि उन्होंने अपनी योग्यताओं को पहचाना, मूल्यांकन किया और उसके बल पर सफलता की सीढ़ियाँ चलते गये। इस संसार का यह विचित्र नियम है कि बाजार में वस्तुओं की कीमत दूसरे लोग निर्धारित करते हैं, पर मनुष्य अपना मूल्यांकन स्वयं करता है और वह अपना जितना मूल्यांकन करता है, उससे अधिक सफलता उसे कदापि नहीं मिल पाती है, प्रत्येक व्यक्ति जो जीवन में सफलता प्राप्त करना चाहते हैं तथा आगे बढ़ने की आकांक्षा रखते हैं, उन्हें यह मानकर चलना चाहिए कि परमात्मा ने उसे मनुष्य के रूप में इस पृथ्वी पर भेजते समय उनकी चेतना में समस्त सम्भावनाओं के बीज डाल दिये हैं। इतना ही नहीं उसके अस्तित्व में सभी सम्भावनाओं के बीज डालने के साथ-साथ उनके अंकुरित होने की क्षमताएँ भी भर दी हैं लेकिन प्रायः देखने में यह आता है, कि अधिकांश व्यक्ति अपने प्रति ही अविश्वास से भरे होते हैं तथा उन क्षमताओं और सम्भावनाओं के बीजों को विकसित तथा अंकुरित करने की चेष्टा तो दूर रही उनके सम्बन्ध में विचार तक नहीं करना चाहते।

जीवन में कई बार अनपेक्षित परिस्थितियाँ आती हैं, जिनके कारण अपने प्रति विश्वास डगमगाने लगता है और व्यक्ति उन परिस्थितियों में किंकर्त्तव्यविमूढ़ होकर उपलब्ध साधनों का उपयोग करने में संकोच करने लगता है अथवा यह सोचने लगता है कि वह इन साधनों के योग्य नहीं है। एक घटना नैपोलियन के सम्बन्ध में विख्यात है, उसका एक सैनिक अपने सेनापति के पास कोई महत्त्वपूर्ण सन्देश लेकर भेजा गया था। सन्देश इतना महत्त्वपूर्ण था कि जितना जल्दी हो सके उसे पहुँचाना और उसका उत्तर लेकर तुरन्त वापस आना आवश्यक था। सौंपे गये दायित्व को तत्परता से पूरा करने के लिए उस सैनिक ने अपना घोड़ा इतनी तेजी से दौड़ाया कि गन्तव्य स्थल पर पहुँचते ही उसने दम तोड़ दिया।

नैपोलियन ने उसकी कर्त्तव्यनिष्ठा को सराहा तथा पत्र का उत्तर लेकर उसी शीघ्रता से जाने के लिए कहा लेकिन सैनिक का घोड़ा तो मर चुका था। नैपोलियन को यह मालूम था। सैनिक को असमंजस में देखकर वह बोला, 'यह लो मेरा घोड़ा और जल्दी से यह उत्तर ले जाओ।' सैनिक भौचक्का होकर अपने सेनापति की ओर देखने लगा। उसने कहा, 'लेकिन श्रीमान्.....', सैनिक ने यह दो शब्द ही कहे थे कि नैपोलियन बीच में टोकते हुए बोला, 'मैं जानता हूँ तुम क्या कहना चाहते हो ? पर याद रखो कि दुनिया का कोई भी घोड़ा ऐसा नहीं है, जिसकी सवारी तुम न कर सको।

घटना छोटी-सी है, पर उन सभी लोगों के लिए लागू होती है, जो स्वयं को किसी महत्त्वपूर्ण उपलब्धि के लिए अयोग्य समझते हैं। दुनिया उस सिपाही जैसे असंख्य लोगों से भरी पड़ी है, जो यह सोचते हैं कि अधिकांश सुख उनकी पहुँच से बाहर है। इस सम्बन्ध में एक विचारक का कथन है कि "दुनिया के कई लोग अपने आपको उन सौभाग्यशाली लोगों से अलग समझते हैं, जो महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ प्राप्त कर चुके हैं। ऐसा सोचना कितना हानिकारक है, इसका अनुमान सिर्फ इसी बात से लगाया जा सकता है कि ऐसे विचार मात्र व्यक्ति को कई ऊँचाइयों पर पहुँचने से रोक देते हैं। अपने आपको बौना समझने वाला व्यक्ति देवता कैसे बन सकता है ?"

इसमें कोई सन्देह नहीं कि कोई भी व्यक्ति केवल उतनी ही सफलताएँ प्राप्त कर सकता है या उतनी ही उपलब्धियाँ अर्जित कर सकता है, जितनी कि वह चाहता है, चाहने को तो लोग न जाने क्या-क्या चाहते, न जाने क्या-क्या आकांक्षाएँ रखते हैं, पर वैसा चाहना और बात है तथा उसका फलित होना और बात। लोग चाहते हैं कि उसके पास खूब सम्पत्ति जमा हो, पर सौ में से दस प्रतिशत भी सच्चे मन से यह नहीं चाहते हैं कि वे सम्पन्न बनें। उन्हें विश्वास ही नहीं होता कि वे सम्पन्न भी बन सकते हैं। पानी में डूबते समय जैसे तीव्र आकांक्षा होती है कि बच जाया जाये और डूबने वाला व्यक्ति हाथ-पैर मारने लगता है, अपने शरीर के दबाव और पानी की उछाल शक्ति में सन्तुलन बिठाने के लिए हड़बड़ाहट में ही सही प्रयत्न करने लगता है। यही तीव्र आकांक्षा का परिचय है। कोई व्यक्ति दरिद्रता से छुटकारा पाना चाहता है तो उसे दरिद्रता में वैसी ही घुटन अनुभव करनी चाहिए जैसी कि डूबने वाला व्यक्ति पानी में डूबते समय करता है, पर वैसी घुटन कहाँ अनुभव होती है ?

आत्म-विश्वासी भाग्य को अपने पुरुषार्थ का दास समझता है तथा उसे अपना इच्छानुवर्ती बना लेता है। इसके लिए आवश्यकता केवल इस बात की है कि उचित मूल्यांकन किया जाए और आत्मविश्वास को सुदृढ़। यदि अपना उचित मूल्यांकन किया जाये तो वह निष्कर्ष अपनी प्रतिभा का स्पर्श पाते ही जीवन्त हो उठता है तथा व्यक्ति बड़ी से बड़ी कठिनाइयों को लाँघ सकता है। नैपोलियन को अपने विजय अभियान में जब आल्पस पर्वत पार करने का अवसर आया तो लोगों ने उसे बहुत समझाया कि आज तक आल्पस पर्वत कोई भी पार नहीं कर सका है और इस तरह की चेष्टा करने वाले को मौत के मुँह में जाना पड़ा है। उन व्यक्तियों को नैपोलियन ने यही उत्तर दिया कि मुझे मौत के मुँह में जाना मंजूर है, पर आल्पस से हार मानना नहीं और इस निश्चय के सामने आल्पस को झुकना ही पड़ा।

स्मरण रखा जाना चाहिए और विश्वास किया जाना चाहिए कि इस संसार में मनुष्य के लिए न तो कोई वस्तु या उपलब्धि अलभ्य है तथा न ही कोई व्यक्ति किसी प्रकार अयोग्य है। अयोग्यता एक ही है और वह है अपने आपके प्रति अविश्वास। आत्मविश्वास ही वस्तुतः

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आस्तिकता है। ऐसे आस्तिक उन ढर्रों पर चलने वाले व्यक्तियों से अलग होते हैं, जो कभी इस शक्ति स्रोत को उभारने का प्रयास भी नहीं करते।

परमात्मा ने मनुष्य को इस संसार में उन विभूतियों से विभूषित कर भेजा है, जो अन्य प्राणियों को प्राप्त नहीं हैं। उन विभूतियों का उपयोग कर ही वह आदिम काल की जंगली पिछली स्थिति से विकसित होकर आधुनिकतम सुविधा-साधनों का विकास कर सका है। निश्चित ही सभ्यता और संस्कृति के विकास में थोड़े बहुत गिने-चुने प्रतिभाशाली व्यक्तियों का योगदान रहा है। अधिकांश व्यक्ति तो सामान्य क्रम से ढर्रे का जीवन ही व्यतीत करते रहे हैं। उन्हें अपने भीतर निहित शक्तियों और सम्भावनाओं पर विश्वास ही नहीं होता और वे दीन-हीन जीवन जीते रहते हैं। कई लोगों की मान्यता रहती है कि सफलता किन्हीं सौभाग्यशाली व्यक्तियों को ही प्राप्त होती है तथा उन्हें जन्म से ही अनुकूल परिस्थितियाँ मिलती हैं, जिनमें आगे बढ़ने के अवसर अनायास ही प्रस्तुत होते रहते हैं।

इस तथ्य को भूल जाना चाहिए कि अनुकूल परिस्थितियाँ और आगे बढ़ने के अवसर प्रदान करने वाली पृष्ठभूमि किन्हीं गिने-चुने लोगों को ही प्राप्त होती है, जबकि अधिकांश व्यक्तियों को अपना मार्ग स्वयं खोजना पड़ता है और स्वयं के बलबूते पर ही प्रगति पथ पर अग्रसर होना पड़ता है।

प्रस्तुतः सफलता या प्रगति न अनुकूल परिस्थितियों पर निर्भर करती है और न उपयुक्त अवसरों पर। सफलता बहुत कुछ व्यक्ति के अपने आत्म-विश्वास और उस आधार पर संचित किए गए आत्मबल पर ही निर्भर करती है। यदि अपने भीतर, अपनी शक्तियों के प्रति विश्वास कूट-कूटकर भरा हो तो कदाचित ही किसी को असफलताओं का सामना करना पड़े। असफलताओं का सामना तभी करना पड़ता है, जब सामर्थ्य और साधनों का विचार न करते हुए ऐसे कदम उठा लिए जाते हैं, जो विचारशीलता और विवेक की दृष्टि से उपयुक्त नहीं कहे जा सकते। इसके अतिरिक्त आत्मविश्वास का अभाव भी सफलता का एक कारण है। आत्मविश्वास का अर्थ अनियन्त्रित भावुकता नहीं है, वरन् यह उस दूरदर्शिता का नाम है जिसके साथ संकल्प और साहस भी जुड़ा रहता है। ऐसे आत्मविश्वासी जो भी काम करते हैं, उसमें न तो ढील-पोल होती है और न ही अनुत्तरदायित्व। इस स्तर के आत्मविश्वास को लेकर जो भी कार्य किये जाते हैं, उनमें पूरा मनोयोग, तन्मयता, तत्परता तथा परिश्रम का समावेश रहता है।

इस नीति को अपनाकर कई व्यक्ति प्रतिकूलताओं में भी आशातीत प्रगति कर चुके हैं। अमेरिका के प्रसिद्ध राष्ट्रपति स्वर्गीय अब्राहम लिंकन का नाम ऐसे व्यक्तियों में अग्रणी तौर पर लिया जा सकता है, जिन्होंने प्रतिकूल परिस्थितियों में रहते हुए भी सफलता के शिखरों को स्पर्श किया। उनका पालन-पोषण उनकी सौतेली माँ ने किया था। गरीबी और कठिनाइयों के बीच रहते हुए उसने अपने बेटे को ऐसी प्रेरणाएँ दीं और उसके अन्तःकरण में ऐसे बीज बोये, जिनके अंकुर लिंकन की शिक्षा और समझ को ही नहीं, उसकी आत्मा को भी ऊँचा उठाते चले गए। उनमें पढ़ने और ज्ञान प्राप्त करने का ऐसा भाव हुआ कि वे पुस्तकें प्राप्त करने के लिए मीलों पैदल चलकर जाते और अपने मित्रों से पुस्तकें माँगकर लाते। पढ़ने के बाद उसी प्रकार पुस्तक को वापस करने के लिए वापस जाते।

लक्ष्य के प्रति निष्ठा, लगन और तन्मयतापूर्वक आत्मविश्वास के साथ अपने काम में लगे रहकर प्रगति करते हुए लिंकन न केवल अमेरिका के राष्ट्रपति बने, बल्कि उनकी गणना विश्व के महामानवों में की जाने लगी। इस बीच उन्हें कई बार असफलताओं का सामना करना पड़ा, पर क्या मजाल कि उन्होंने अपने मन को छोटा किया हो। एक बार लिंकन से किसी ने उनकी उन्नति का कारण पूछा तो उन्होंने बताया कि जन्मदात्री न होते हुए भी जिसने मेरी निर्मात्री होने का कार्य पूरा किया मैं अपनी उस माँ का हाथों बनाया गया एक खिलौना मात्र हूँ।

अस्पताल की एक साधारण-सी नर्स फ्लोरेंस नाइटिंगेल के पास न साधन थे न सुविधाएँ, पर उनके मन में रोगियों और दुर्घटनाग्रस्त लोगों के प्रति अपार वेदना का समाधान करने और घायलों, विपत्ति के मारे लोगों की सहायता-सुश्रुषा करने के लिए उन्होंने रेडक्रास सोसायटी की योजना बनाई और संस्था के उद्देश्य तथा स्वरूप को लेकर बड़े-बड़े लोगों के पास गई। नाइटिंगेल की स्थिति, सामर्थ्य और कार्य की गरिमा में इतना भारी अन्तर देखते हुए लोगों ने उन्हें यही परामर्श दिया कि इस तरह की हवाई कल्पनाएँ करना व्यर्थ है। अच्छा हो आप अपनी नौकरी ही ठीक-ठाक ढंग से करें और इसी में अपनी भावनाओं का सन्तोष खोजें। कइयों ने उन्हें प्रत्यक्ष रूप से भी निरुत्साहित किया परन्तु नाइटिंगेल हताश नहीं हुईं। कहीं से भी कोई सहायता न मिलने पर उन्होंने अपनी सामर्थ्य के अनुसार काम आरम्भ कर दिया और संस्था जब धीरे-धीरे विकसित होने लगी तो, वही लोग जिन्होंने नाइटिंगेल को आरम्भ में निरुत्साहित किया था, सहयोग की भावना लेकर आये। यह लक्ष्य के प्रति निष्ठा और तन्मयतापूर्ण समन्वय का ही परिणाम है कि फ्लोरेंस नाइटिंगेल द्वारा स्थापित रेडक्रास सोसायटी तथा उनका मिशन देश-काल की सीमाओं को लाँघकर विश्व भर में फैली हुई है और सार्वभौम बन गई है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साहसी ही जीवन को सार्थक बनाते हैं

शरीर बल और बुद्धि बल का अपना महत्त्व, अपनी उपयोगिता है। उपार्जन, श्रम और समस्याओं का हल वैचारिक स्तर ढूँढ़ने में इनका योगदान आवश्यक है। पर कितने ही अवसर ऐसे आते हैं, जब जीवन-मरण की समस्या उत्पन्न हो जाती है और मात्र शरीर की सामर्थ्य और बुद्धि बल उनका समाधान निकाल पाने में समर्थ नहीं हो पाते। प्रस्तुत संकट के हल के लिये अभीष्ट परिमाण में साहस जुटाये बिना कुछ काम नहीं बनता। साहस के अभाव में ऐसे अवसरों पर कितने ही व्यक्ति अपना सन्तुलन गँवाते, भयभीत हो उठते तथा जान गँवाते तक देखे जाते हैं।

कितने ही दुस्साहसी ऐसे भी होते हैं, जो विकट से विकट परिस्थितियों में भी नहीं घबराते और ऐसे साहस भरे उदाहरण प्रस्तुत करते हैं, जिन्हें देखकर दाँतों तले उँगली दबानी पड़ती है। शेर, बाघ, चीता, रीछ जैसे हिंसक जीवों से सामना पड़ने पर प्रायः अधिकांश व्यक्ति इतना अधिक घबड़ा उठते हैं कि उस समय अपने बचाव के लिए जो कर सकते थे, वह भी नहीं कर पाते। हिम्मत हार बैठने से कुछ भी करते नहीं बनता। ऐसे लोगों के उदाहरण भी मौजूद हैं, जो अपने साहस के बलबूते बिना किसी घातक हथियार के ही हिंसक जीवों को परास्त करने में सफल हुए।

बस्तर जिले की एक बारह वर्षीय बालिका जंगल से लकड़ी काटकर वापिस लौट रही थी। अचानक सामने से जंगली रीछ ने आक्रमण कर दिया। आगे-पीछे कोई भी सहयोग देने वाला नहीं दिखाई पड़ रहा था। लकड़ी के गट्ठर से एक टुकड़ा निकाला और रीछ के मुँह में घुसेड़ दिया। क्रुद्ध रीछ ने प्रत्याक्रमण में बालिका को घायल कर दिया, पर वह लड़की डण्डा रीछ के मुँह में पूरी शक्ति से दबाये रही। परिणाम यह हुआ कि थोड़ी ही देर बाद रीछ ने दम तोड़ दिया। थोड़े समय बाद कुछ राही उधर से निकले तो देखा बालिका अपने जख्मी शरीर से कपड़े से खून साफ कर रही थी। उसके साहस युक्त कार्य के लिए जिलाधीश द्वारा पुरस्कृत किया गया।

कगहेड काउण्टी का मोजराविन्सन नामक व्यक्ति शिकार के लिये निकला। एक शेर से सामना होते ही उसके हाथ से बन्दूक अचानक छूटकर गिर पड़ी। शेर ने राविन्सन पर छलाँग लगा दी। किसी तरह शेर का सिर उसकी पकड़ में आ गया। दोनों पैरों के बीच उसका सिर फँसाकर वह हाथ से सिर को पूरी शक्ति से दबाने लगा। इस बीच भारी भरकम शेर ने राविन्सन को कितनी ही बार उछालने का प्रयास किया पर उसने शेर के सिर की पकड़ ढीली न की और दोनों हाथों से दबाता रहा। वह स्वयं लहूलुहान तो हो गया पर दम घुटने के कारण शेर भी निश्चल-निष्प्राण होकर गिरा तो फिर नहीं उठा।

अँग्रेजी शासन काल में भी मद्रास के सेन्टजार्ज विले का अँग्रेज कमाण्डर सर एडवर्ड विक्टर का नाम भी साहसियों की श्रेणी में उल्लेखनीय है। बिना किसी हथियार के ही उसने एक पूर्ण और वयस्क बाघ को खाली हाथों गला घोंटकर मार डाला।

ई. क्रौंज विल्यार नामक एक अँग्रेज शिकारी अफ्रीका के जंगलों में शिकार के लिए निकला। उसकी बन्दूक खराब हो गई। उसी समय एक शेर ने भी आक्रमण कर दिया। दोनों के बीच देरी तक द्वन्द्व युद्ध चलता रहा। शरीर के २३ स्थानों का माँस शेर ने अपने खूँखार पंजों से नोंच लिया। शरीर की शक्ति क्रौंज की क्षीण होती जा रही थी पर साहस अभी भी यथावत् बना हुआ था। उसने निश्चय किया कि हिम्मत हारकर मर जाने की अपेक्षा लड़कर मरना कहीं अधिक श्रेष्ठ है। पूरी ताकत से उसने शेर के मुँह में अपना पूरा दाहिना हाथ घुसेड़ दिया और दूसरे हाथ से शेर का जबड़ा पकड़े रहा। थोड़ी देर बाद शेर गिर पड़ा और मर गया। स्वयं भी क्रौंज इतना अधिक जख्मी हो गया था कि चलने-फिरने में असमर्थ था। बेहोशी की स्थिति में मार्ग गुजरने वालों ने उसे निकटवर्ती अस्पताल पहुँचाया। उपचार से स्वस्थ होने पर उसने पूरी दास्तान बताई।

संसार में ऐसे दुस्साहसियों की भी कमी नहीं है, जो स्वतः संकटों को आमन्त्रित करते हैं तथा अपने अदम्य शौर्य का परिचय देते हैं। फ्रांस के मेधावी अभिनेता चार्ल्स डर्लिन के विषय में प्रामाणिक विवरण मिलता है कि उसने शेरों के एक कटघरे में अभिनय का प्रशिक्षण वर्षों तक प्रतिदिन कविता का पाठ करके प्राप्त किया था।

स्पेन के सुप्रसिद्ध सेनानायक रौड्रिगो पान्स डि लियोन का नाम आज भी वहाँ उसके वीरतायुक्त कार्य के लिए लिया जाता है। एक विशाल राजकीय समारोह में वहाँ के तत्कालीन राजा और महारानी उपस्थित थे। जमीन के नीचे एक गहरा गड्ढा बनाया गया था, जिसमें खूँखार शेरों को रखा गया। महारानी को जाने क्या सूझा कि उन्होंने अपने हाथ का एक कीमती दस्ताना निकालकर शेरों वाले गड्ढे में गिरा दिया तथा उपस्थित सैनिकों में से प्रत्येक को चुनौती दी कि वे दस्ताने को शेरों के बीच से निकालकर अपने साहस का परिचय दें। रौड्रिगो पान्स ने रानी की चुनौती को सुनकर उस मौतरूपी खाई में छलाँग लगा दी। विस्मित नेत्रों से सभी यह रोमांचक दृश्य देख रहे थे। बड़ी ही फुर्ती से पान्स ने दस्ताना उठाया और एक शेर के सिर पर पैर रखते हुए ऊपर की ओर छलाँग लगा दी। इसके पूर्व शेर आक्रमण करें वह गड्ढे से बाहर था। उस अदम्य साहस से प्रभावित होकर राजा ने उसे देश की वीरता का सबसे बड़ा पदक प्रदान किया तथा सेना में प्रमुख सेनानायक के पद पर आरूढ़ किया।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भारत का प्राचीन कालीन इतिहास पढ़ने पर आश्चर्य होता है कि शकुन्तला-पुत्र भरत शेरों के बच्चों के साथ खेलता था। पर 'जान ब्लू नामक एक फ्रांस का युवक शेरों द्वारा घोड़ागाड़ी खींचने का कार्य करता था, यह जानकर वह प्राचीन घटना असम्भव नहीं लगती तथा इस सत्य को प्रमाणित करती है कि दुस्साहसियों के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है।

साक्षात् मृत्यु से जूझने और उसे उलटे पैर वापिस लौटने के लिए बाध्य करने वालों के ये अविस्मरणीय उदाहरण इस बात की ही पुष्टि करते हैं कि यदि साहस उभर आये तो मनुष्य असम्भव कार्य भी कर सकता है। हर मनुष्य के जीवन में ऐसे अवसर आते हैं, जब किसी न किसी प्रकार के आतातायी, आक्रमणकारियों का सामना करना पड़ता है। ऐसे अवसरों पर यदि मनःसन्तुलन बनाकर साहसपूर्वक सामना किया जा सके तो कोई कारण नहीं है कि सामूहिक रूप से उन आततताइयों के दुष्प्रयोजन को निष्फल नहीं किया जा सके। वस्तुतः मनुष्य के व्यक्तिगत और सामाजिक जीवन में साहस का महत्त्वपूर्ण स्थान है। साहस लक्ष्य को प्राप्त करने अथवा किसी कार्य को सम्पन्न करने के लिए उठाया गया जोखिम है। किसान जानता है कि बीज बोया तो जा रहा है किन्तु कभी भी फसल सूख सकती है, पाला पड़ सकता है, चोरी हो सकती है पर वह इन आशंकाओं के लिए अपने काम को नहीं छोड़ता। व्यापारी, सैनिक, डाक्टर आदि सभी यही करते हैं। विपत्ति, बाधा, अवरोध और असफलता की सम्भावनाओं के रहते हुए भी जब किसी काम को करने का दृढ़ संकल्प कर लिया जाता है तो मार्ग की बाधाओं की चिन्ता किये बिना आगे बढ़ने की भावभूमि को ही साहस कहते हैं।

यह सामान्य जीवन क्रम में बरता जाने वाला सामान्य साहस हुआ। असामान्य साहस वह है, जिसमें स्वार्थ की भावना तनिक भी न हो। साहस को दैवी, अप्रतिम, सत्साहस आदि नामों से अलंकृत किया जाता है। अपना निज का कोई स्वार्थ न होने पर भी जब व्यक्ति अन्तःकरण की प्रेरणा से विशुद्ध लोकहित या परिहित के लिए दुष्कर ही नहीं असम्भव जैसे लगने वाले काम कर बैठता है तो उसका सत्साहस मात्र सराहनीय ही नहीं वन्दनीय और अभिनन्दनीय भी बन जाता है।

मध्य प्रदेश के होशंगाबाद जिले की सत्साहस की एक घटना उल्लेखनीय है। मैया के रूप में लोक श्रद्धा का केन्द्र बनी नर्मदा मानो किसी के सत्साहस की परीक्षा के लिए रौद्र रूप धारण किए बाढ़ पर उफन रही थी। इसी बाढ़ की चपेट में आ रहा था गाँव—माला खेड़ी। लगता था नर्मदा इस गाँव को निगलने के लिए निरन्तर बढ़ती आ रही है। सम्भवतः मानवता से पतित होते जा रहे अपने बच्चों को हल्की-सी प्रताड़ना देने का उपक्रम था वह। लोगों ने अपने जीवन में ऐसा जल प्लावन पहले कभी नहीं देखा था। नर्मदा की विकराल लहरों में मृत्यु की फुफकार सुनाई दे रही थी। ऐसा लग रहा था कि इसी बाढ़ में फँसकर गाँव के लोग मृत्यु के करालगाल में समा जायेंगे।

त्राहि-त्राहि और चीख-पुकार से सारा वातावरण गूँज रहा था। ऐसे अवसर पर लोगों के करुण स्वरों को सुनकर धीवर कन्या सरस्वती अपने को न रोक सकी। अन्तःकरण में छिपे सत्साहस के देवता ने उसे चैन से बैठने नहीं दिया। यह अपने रुग्ण पिता को पड़ौसियों के भरोसे छोड़कर एक छोटी-सी डोंगी लेकर लोगों की प्राण रक्षा के लिए चल पड़ी। कहाँ नर्मदा की उफनती-उछलती हुई ऊँची लहरें और कहाँ एक साधारण-सी डोंगी। ऐसी विषम स्थिति में जबकि कोई अच्छा से अच्छा तैराक भी नर्मदा से खेलने, उसमें उतरने की हिम्मत न करता वहाँ सोलह वर्षीय सरस्वती के संकल्प ने नर्मदा से होड़ लेने की ठान ली। लोगों की प्राणरक्षा के लिए उसका निकल पड़ना अनूठा एवं अद्वितीय साहस का परिचायक है। अठारह घण्टे तक भूख एवं प्यास की चिन्ता किए बिना वह नर्मदा से सतत संघर्ष करती रही और उसने करीब १५० व्यक्तियों की प्राण रक्षा की। नर्मदा शांत हो गई। उसने अपनी बेटी के साहस से प्रसन्न होकर अपनी विकरालता को समेट लिया।

साहस मनुष्य का सहज स्वभाव है। इसे विकसित करना पड़ता है। मात्र रस गुण के अन्दर होने से व्यक्ति पराक्रमी, शूरमा नहीं बन जाता। तलवार किसी के हाथ में हो तो इतने भर से वह वीर नहीं हो जाता। पौरुषहीन व्यक्ति के लिये तो वह स्वयं ही खतरा बना जाती है। साहस वाला इसका भय दिखाकर औरों को आतंकित भी कर सकता है और दीन-दुर्बल की रक्षा भी। जहाँ पहला कृत्य निन्दनीय है, वहाँ दूसरा सराहनीय है। व्यक्ति के अन्दर जो सत्साहस विद्यमान है, वह उभरे-फूट पड़े तो सामान्य से नजर आने वाले व्यक्ति भी वे कार्य कर जाते हैं, जिन्हें मानवता पीढ़ियों तक याद रखती है।

आशा ही जीवन और निराशा ही मौत है

पुरुषार्थी, साहस एवं जीवट से सम्पन्न व्यक्ति मौत को भी चुनौती देते-उसे खेल-खिलवाड़ समझकर जूझते हैं। उनके प्रचण्ड पुरुषार्थ, मनोबल एवं जीवन के प्रति अदम्य प्रेम को देखकर कुछ समय के लिये मौत भी ठिठक जाती और अपनी राह बदल देने को विवश हो जाती है। परिस्थितियों को उनके समक्ष नत-मस्तक होना पड़ता है। मृत्यु के निकट पहुँचकर भी वे अपना अस्तित्व बनाये रखने में सफल होते हैं। वे मृत्यु से तनिक भी घबराते नहीं वरन् हँसते-हँसते उसका स्वागत करने को उद्यत रहते हैं। ऐसे अनेकों उदाहरण समय-समय पर मिलते हैं,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिन्होंने भयंकर परिस्थितियों में मौत की घाटियों में कार्य की सफलता प्राप्त करके अद्भुत साहस का परिचय दिया है।

सन् १९७४ में इटली के रेनहोल्ड मेसनर एवं आस्ट्रिया के पीटर हवेलर नामक साहसी पर्वतारोहियों ने 'आल्पस' पर्वत की एक खतरनाक चोटी पर मात्र १० घण्टे में चढ़कर एक कीर्तिमान स्थापित किया। इस चोटी पर चढ़ने के प्रयास में इससे पूर्व ३८ कुशल पर्वतारोहियों की मृत्यु हो चुकी थी।

उनकी इस सफलता में कोई दैवी अनुकम्पा या विशेष तकनीकी युक्त उपकरणों का सहयोग नहीं था। इसके पीछे उनका किशोरावस्था से चला आ रहा पर्वतारोहण का सतत अभ्यास था। उन्होंने न तो ऑक्सीजन का ही प्रयोग किया, न रस्सी जैसे सरल उपयोगी साधन का। उनको यह अस्वाभाविक-सा लगता था। अस्तु उन्होंने अपनी पर्वतीय चढ़ाई में एक तो बर्फ पर चलने की लोहे की खड़ाऊँ और दूसरे बर्फ काटने की कुल्हाड़ी मात्र दो साधारण समझे जाने वाले प्रमुख सरलतम उपकरणों का ही प्रयोग करने का निश्चय कर लिया था और केवल उन्हीं के सहारे पर्वतारोहण का यह सफल अभियान पूरा किया।

सन् १९७५ में इन दो साहसी युवकों ने हिमालय की पश्चिमी पर्वत-श्रेणी काराकोरम की 'हिडेनपीक' (छिपी अज्ञात चोटी) पर चढ़ने का निश्चय किया। इस चोटी की ऊँचाई ८ किलोमीटर ६८ मीटर है। पूरे संसार में ८ किलोमीटर से अधिक ऊँचे केवल १४ पहाड़ हैं। इस चढ़ाई के लिए इन दोनों पर्वतारोहियों ने इतना अभ्यास किया कि १ मिनट में लगभग २६ मीटर ऊँचाई चढ़ सकें तथा मात्र अपनी उँगलियों के सहारे अपने पूरे सामान सहित लटक सकें।

'मेसनर' और ह्वेलर के इस अभियान की सफलता के सम्बन्ध में बहुत-से अनुभवी लोगों ने आशंका व्यक्त की तथा ऑक्सीजन, रस्सी आदि के बिना इसे खतरा मोल लेना बताया। परन्तु आत्मविश्वास और पुरुषार्थ के धनी मानने वाले कब थे। १३ जुलाई, १९७५ की प्रातः को ये दोनों अपने अभियान में 'बाल्टोरी ग्लेशियर' की ओर चल पड़े। वहाँ तक पहुँचने में उनको एक सप्ताह का समय लग गया। इसके पश्चात् ६५ किलोमीटर दूरी पार करके २४ जुलाई, १९७५ को वे ग्लेशियर के अन्तिम छोर पर ५१ हेक्टोमीटर की ऊँचाई पर पहुँच गये। वहाँ उन्होंने अपने साथ के बाहकों को छोड़ दिया और गहन निरीक्षण में संलग्न हो गये।

२७ जुलाई, १९७५ को उन्होंने हिमाच्छादित, 'हिडेनपीक' के उत्तरी-पश्चिमी भाग को देखा। दस-ग्यारह दिन तक वे प्रारम्भिक निरीक्षण कार्य करते रहे। दूरदर्शी, विवेकशील, बुद्धिमान मनुष्य सम्भावित कठिनाइयों पर विचार कर उनके आने पर सजगता, सतर्कतापूर्वक मुकाबला करके सफलता की ओर बढ़ जाते हैं। अदूरदर्शी बिना सोचे-समझे कार्य प्रारम्भ कर विषम परिस्थितियाँ आने पर उसे छोड़ बैठते और असफल होने पर दुर्भाग्य का रोना रोने लगते हैं।

'हिडेनपीक' के उत्तरी-पश्चिमी भाग से उन्होंने ८ अगस्त, १९७५ को अपनी चढ़ाई-यात्रा प्रारम्भ की। लगभग ८०० मीटर की ऊँचाई-चढ़ाई के बाद ४९ हेक्टोमीटर की ऊँचाई पर पहला अस्थायी पड़ाव डाला। 'ह्वेलर' को ४ घण्टे तक जोर का सिर-दर्द रहा पर जीवट वाले व्यक्तियों के पास बीमारी ठहरती कब है ? दूसरे दिन दूने उत्साह से चढ़ाई प्रारम्भ कर दी। बड़ी कठिनाइयों के साथ एक-एक पग आगे बढ़ रहे थे। ८ घण्टे के अथक परिश्रम के बाद वे ऐसे स्थान पर पहुँच गये, जहाँ से ऊपर की चढ़ाई अत्यन्त दुर्गम थी। रात्रि हो रही थी। मेसनर आगे और 'ह्वेलर' पीछे उँगलियों से दरारों का सहारा लेते हुए एक-एक सेन्टीमीटर सरक रहे थे और ७१ हेक्टोमीटर की ऊँचाई पर दूसरा पड़ाव डालकर रात्रि विश्राम किया। अत्यधिक ठण्ड से हाथ-पैर बिल्कुल सुन्न हो रहे थे, साँस लेने में भी कठिनाई हो रही थी। यह वह स्थान था जिसे 'मृत्यु का क्षेत्र' कहा जाता है।

वे दोनों मत्यु से अठखेलियाँ करते हुए आगे बढ़ते ही जा रहे थे। गिरते, पड़ते, हाँफते वे ८०६८ मीटर ऊँची, 'हिडेनपीक' के शिखर पर पहुँच गये। उनके आनन्द की सीमा न रही। हृदय उल्लास से उमगने लगा। अपने पहुँचने का उन्होंने वहाँ संकेत भी लगा दिया। अपने अटूट अभ्यास और प्रबल इच्छाशक्ति के बल पर यह अद्भुत सफलता अर्जित की।

इतना ही नहीं अपनी लगन, परिश्रम और निष्ठा के बल पर उन्होंने मई, १९७८ में संसार के सर्वोच्च शिखर 'एवरेस्ट' पर भी बिना ऑक्सीजन आदि के सहारे चढ़ने में सफलता पाई और अपने मनोबल से संसार को चकित कर दिया।

मनुष्य के समस्त कार्य उसके ही सत्प्रयास और तत्परता के परिणामस्वरूप सिद्ध और सफल हुआ करते हैं। संकल्पवान, कर्मनिष्ठ, उद्यमी व्यक्ति ही सफलताएँ उपलब्ध करते हैं। मनस्वी व्यक्ति के लिए इस संसार में कुछ भी अप्राप्त नहीं और कोई भी स्थान अगम्य नहीं है। साधनों की अपनी उपयोगिता तो है पर उनका लाभ मनस्वी एवं परिश्रमी कर्मनिष्ठ व्यक्ति ही उठा पाते हैं। मनोबल, जिजीविषा मानव की अमूल्य सम्पदा है। इसका महत्त्व एवं गरिमा समझने वाले कठिन परिस्थितियों में भी आशान्वित रहते और आये हुए संकट को चीरते हुए अपने लक्ष्य तक पहुँचने में सफल होते हैं। ऐसे जीवट सम्पन्न व्यक्तियों के सामने प्रस्तुत प्रतिकूलताएँ उनमें और निखार लाती हैं और वे परिस्थितियों की परवाह न करते हुए उद्देश्य प्राप्ति में सफल होते हैं। सामान्यतः हर मनुष्य के जीवन में भली-बुरी दोनों ही प्रकार की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परिस्थितियाँ आती हैं। सामान्य व्यक्ति उनसे प्रभावित होता, अनुकूल में प्रसन्न एवं प्रतिकूल में खिन्न होता दिखायी देता है। असामान्य व्यक्ति दोनों में ही एकरस रहते और उन्हें सहर्ष स्वीकार करते हैं। प्रतिकूलताओं में वे घबड़ाते नहीं, वरन् अपना सन्तुलन बनाये रखते हैं। कितने ही व्यक्ति छोटे-मोटे आघातों को भी सहन नहीं कर पाते ? साहस एवं सन्तुलन के अभाव में सामने आये संकट का सामना नहीं कर पाते। थोड़े प्रयत्न, पुरुषार्थ से प्रस्तुत संकटों को टाला जा सकता था, उनसे भी जूझ पाने में असमर्थ होते हैं। जबकि कितने ही साहसी, जीवट सम्पन्न व्यक्ति जीवन-मरण के तुल्य संकटों में भी धैर्य नहीं खोते। साहस एवं सन्तुलन बनाये रखते हैं तथा भविष्य के प्रति आशान्वित रहते हैं।

जिन्दगी को जिन्दादिली से जीयें

मनुष्य जीवन की असफलताओं का एक सबसे बड़ा कारण यह है कि अधिकांश व्यक्तियों में परिस्थितियों के अनुरूप ढलने-उनसे समायोजन करने की कल्पना नहीं विकसित हो पाती। उपलब्ध से तालमेल न बैठ पाने और अनुपलब्ध अनुकूलताओं की कामना करते रहने से असन्तोष ही हाथ लगता है। मानव जीवन इतना समर्थ और जीवट सम्पन्न है कि वह हर प्रकार की प्रतिकूलताओं को चुनौती दे सकता है—उनमें रहते हुए भी अपनी सत्ता को अक्षुण्ण बनाये रख सकता है। मन की प्रसन्नता और अप्रसन्नता का, संतोष-असन्तोष का भी उपलब्ध परिस्थितियों से राई-रत्तीभर सम्बन्ध नहीं है। ये मनःस्थिति की प्रतिक्रियाएँ मात्र हैं। किस व्यक्ति ने समायोजन की कला कितनी अधिक विकसित करली, इस तथ्य पर ही उसकी प्रसन्नता अवलम्बित होगी। जिसमें इस विशेषता का जितना ही अभाव होगा वह उतना ही अप्रसन्न, असन्तुष्ट होगा। अभावों, विपन्नताओं का रोना रोने वाले तथा परिस्थितियों को अत्यधिक महत्त्व देने वालों को उन व्यक्तियों एवं जातियों से प्रेरणा लेनी चाहिए, जिनके साथ प्रकृति ने भी घोर प्रतिकूलताएँ प्रस्तुत करके क्रूर मजाक किया है। पर आश्चर्य यह है कि भीषण कठिनाइयों में भी वे जातियाँ अपना अस्तित्व बनाये हुए हैं। उनकी मस्ती, प्रसन्नता, प्रफुल्लता से युक्त उन्मुक्त जीवन क्रम को देखकर प्रचलित यह मान्यता बदलनी पड़ती है कि साधनों की सम्पन्नता एवं अनुकूलताओं से ही सुख और संतोष की प्राप्ति होती है।

चारों ओर बर्फ ही बर्फ, पेड़-पौधों का कहीं नामोनिशान भी नहीं, शून्य से भी नीचे ३० से ४० अंश के तापमान की खून को भी जमा देने वाली भयंकर सर्दी, महीनों सूर्य के दर्शन नहीं हो पाते तथा सौ मील प्रति घण्टे की रफ्तार से चलने वाली बर्फीली हवा से युक्त वातावरण में भी चिरकाल तक कोई रह सकता है, सामान्य व्यक्ति इसकी कल्पना भी नहीं कर पाते। पर ऐसी जातियाँ भी हैं, जो ऐसे निर्जन और कठोर परिस्थितियों में हजारों वर्षों से प्रकृति से लोहा लेती रही हैं। अमेरिका के उत्तर पूर्व में स्थिति ध्रुव से सटे हुए ग्रीनलैण्ड के विशाल द्वीप से लेकर पश्चिम में अलास्का और वेयरिंग जलडमरूमध्य के उस पार साइबेरिया के उत्तर-पूर्वीय किनारे का क्षेत्र लगभग पूरे वर्ष एक अखण्ड बर्फ की चादर से ढँका रहता है। एस्किमो जाति का स्थाई निवास हजारों वर्षों से इसी वातावरण में है। सचमुच ही एस्किमो इस तथ्य के जीते-जागते प्रमाण हैं कि मनुष्य के भीतर कठोर से कठोर वातावरण में भी सामञ्जस्य स्थापित कर लेने की विलक्षण सामर्थ्य विद्यमान है।

उत्तरी ध्रुव के निकट उत्तरी नार्वे, स्वीडन और फिनलैण्ड में भी सर्दी के दिनों में प्रायः तापक्रम शून्य से भी ३६ डिग्री फारेनहाइट नीचे रहता है। हड्डियों को कँपा देने वाले इस क्षेत्र में 'लाप' नामक जाति रहती है। जिनका जीवनक्रम एस्किमो से विशेष रूप से मिलता-जुलता है। समुद्र की मछलियाँ और शैवाल इनके आहार के प्रमुख स्रोत हैं। बर्फ की शिलाओं पर आप घण्टों बैठकर मछलियों का शिकार करते रहते हैं। इस क्षेत्र में बारहसिंघा जानवर पाया जाता है, जिसको पकड़कर वे स्लेज गाड़ी खींचने के काम में लाते हैं। भीषण प्रतिकूलताओं एवं अभावों में रहते हुए भी लाप जाति के लोग अत्यन्त ही सौम्य, उदार और मिलनसार स्वभाव के होते हैं। सभ्य समाज में पाई जाने वाली नाना प्रकार की बुराइयों से ये अभी भी अपरिचित हैं। इनके चेहरे से सदा टपकने वाली मस्ती को देखकर कोई यह कल्पना भी नहीं कर सकता कि इन्हें प्रकृति विक्षोभों एवं प्रतिकूलताओं का सर्वाधिक सामना करना पड़ता होगा। ऐसा लगता है कि संसार की सारी प्रसन्नता इनके भीतर ही सिमट गई हो।

प्रकृति प्रदत्त कठिनाइयों को चुनौती देने वाली जातियों में प्रशांत महासागर की 'पोलिनेशियन', 'फ्यूजियन' जातियों का नाम भी उल्लेखनीय है। अपने कठोर श्रम और पुरुषार्थ के बलबूते इन जातियों ने यह सिद्ध कर दिया है कि मानवी सत्ता इतनी कमजोर नहीं है कि वह कठिनाइयों के समक्ष दम तोड़ दे—वह हर परिस्थिति का सामना करने में पूर्णतया समर्थ है।

एक ओर ये जातियाँ हैं जिनके समक्ष अनेकों प्रकार की असुविधाएँ उत्पन्न करके प्रकृति ने भी उनके साथ क्रूर उपहास किया है पर हर कठिनाई का समाधान उन्होंने अपने साहस, धैर्य एवं प्रचण्ड पुरुषार्थ के आधार पर निकाल लिया है। अनुकूलताओं के लिए रोते रहने की तुलना में उपलब्ध नगण्य साधनों का ही मात्र सदुपयोग कर इन्होंने निर्वाह की आवश्यक व्यवस्था बना ली है। दूसरी ओर बहुतायत ऐसे व्यक्तियों की भी है, जिनका साथ प्रकृति ने भी उन्मुक्त हृदय से दिया है। उन्हें हर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तरह के प्राकृतिक साधन उपलब्ध हैं। मात्र अपने श्रम एवं पुरुषार्थ का भली-भाँति नियोजन करके किसी भी क्षेत्र में वे सफलता अर्जित कर सकते हैं। पर दुर्भाग्य कि अधिकांश व्यक्ति अपनी निष्ठा की सामर्थ्य और सहज ही उपलब्ध प्रकृति की अनुकूलताओं का ठीक तरह मूल्यांकन नहीं कर पाते। अनुपलब्ध साधनों को अत्यधिक महत्त्व देने, अपनी क्षमता की उपेक्षा-अवहेलना करने से सामर्थ्य का एक बड़ा भाग यों ही व्यर्थ चला जाता है। परिस्थितियों के साथ मनःस्थिति का समायोजन नहीं बैठ पाने से निराशा, असंतोष का सामना करना पड़ता है। ऐसे व्यक्ति जीवनपर्यन्त अभावों एवं विपन्नताओं का रोना रोते रहते और कुछ महत्त्वपूर्ण काम नहीं कर पाते हैं। समय, श्रम और पुरुषार्थ मनुष्य जीवन की सबसे मूल्यवान सम्पदाएँ हैं जिनका सदुपयोग कर मनचाही सफलता प्राप्त की जा सकती है।

उत्तरी-दक्षिणी ध्रुव की भीषण ठण्ड एवं प्रतिकूलताओं से भरे जीवन में व्यक्ति अलमस्त बना अठखेलियाँ कर सकता है तो कोई कारण नहीं है कि उपलब्ध परिस्थितियों के बीच रहकर अपनी प्रसन्नता एवं मस्ती को जीवन्त न बनाये रखा जा सके।

मानवी जीवट की परीक्षा वस्तुतः प्रतिकूल परिस्थितियों में ही होती है। उस समय दूसरा विश्व युद्ध चल रहा था। अमेरिका और जापान की सेनाएँ मोर्चों पर आमने-सामने डटी हुई थीं। जापान की सरकार ने अपने एक छोटे-से टापू गुआम को बचाने के लिए १९ हजार सैनिक तैनात कर दिये थे और अमरीका जल्दी से जल्दी इस टापू पर अपना अधिकार देखना चाहता था क्योंकि गुआम सैनिक दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण था। यहाँ से दुश्मन पर सीधे वार किया जा सकता था।

गुआम पर कब्जा बनाये रखने और उस पर अधिकार करने के लिए दोनों देशों की सेनाएँ घमासान लड़ाई लड़ रही थीं। जब जापानी सैनिकों के हारने का मौका आया तो उन्होंने आत्मसमर्पण करने के स्थान पर लड़ते-लड़ते मर जाना श्रेयस्कर समझा। संख्या और साधन बल में अधिक शक्तिशाली होने के कारण अमेरिकी सैनिकों को जल्दी विजय मिल गई और गुआम का पतन हो गया। सैकड़ों जापानी सैनिक निर्णायक युद्ध की अन्तिम घड़ियों तक लड़ते रहने के बाद, कुछ बस न चलता देख जंगलों में भाग गये क्योंकि सामने रहते हुए उन्हें हथियार डालने पड़ते, समर्पण करना पड़ता, पर उन्हें यह किसी कीमत पर स्वीकार नहीं था।

सन् १९७३ में इन्हीं सैनिकों में से एक सैनिक सार्जेण्ट शियोचायोकोई वापस लौटा, जिसे जापान ने सर्वोच्च राष्ट्रीय सम्मान से सम्मानित किया। योकोई अट्ठाईस वर्षों तक जंगल की खाक छानता हुआ, पेड़-पौधों को अपना साथी मानते हुए, प्रगति की दौड़ रही दुनिया से बेखबर सभ्य संसार में लौटा था। उसके इस वनवास की कहानी बहुत ही रोमांचकारी है। योकोई को किन-किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ा ? और उसने इन सबको किस सहजता से स्वीकार किया ? उसके मूल में है—आत्मसम्मान और राष्ट्रीय गौरव को अक्षुण्ण बनाये रखने की भावना। 'टूट' जायेंगे पर झुकेंगे नहीं, यह निष्ठा।

अट्ठाईस वर्षों तक जंगल में रहते हुए योकोई को यह पता ही नहीं चला कि दूसरा विश्वयुद्ध समाप्त हो गया है। इस सम्बन्ध में वह क्या सोचता था ? पत्रकारों ने योकोई से यह प्रश्न किया तो उसने बताया, 'मैंने यह सीखा था कि जीते-जी बन्दी बनाने की अपेक्षा मर जाना अच्छा है। गुआम की लड़ाई में आसन्न पराजय को देखते हुए सैकड़ों सैनिकों के साथ में भी जंगल में भाग गया। मेरे साथ आठ सैनिक और थे। हमें लगा कि सबका एक साथ रहना खतरे से खाली नहीं है। इसलिए हम टोलियों में बँट गये। मेरी टोली में दो सैनिक और थे। हम तीनों टोलोफोफोखिर किले की ओर चले गये। यहीं पर हमें पता चला कि जापान हार गया है। अब तो नगर में जाने की सम्भावना और भी समाप्त हो गई।

अट्ठाईस वर्षों तक योकोई ने आदिम जीवन बिताया। उसके पास केवल एक कैंची थी, जिससे वह पेड़ों की शाखाएँ काटता और उनका उपयोग भोजन पकाने तथा छाया करने के लिए करता। कपड़े सीने के लिए उसने अपने बढ़े हुए नाखूनों का सुई के रूप में इस्तेमाल किया। रहने के लिए उसने जमीन में गुफा खोद ली और वह बिछौने के लिए पेड़ों की पत्तियों का उपयोग करता। भोजन में जंगली फल काम आते।

समय की जानकारी तो कैसे रखता ? परन्तु महीने और वर्ष की गणना तो वह रखता ही था। पूर्णिमा का चाँद देखकर वह पेड़ के तने पर एक निशान बना देता। वह गुफा से बाहर बहुत कम निकलता था। प्रायः रात को ही वह बाहर भोजन की तलाश में आता था। कभी-कभार बाहर आना उसे पुनः सभ्य संसार में ले आया।

एक बार वह टोलोफोको नदी के किनारे घूम रहा था कि दो मछुआरों ने उसे देख लिया और सन्देह होने के कारण वे उसे पकड़कर ले आये तथा पुलिस को सौंप दिया। वहाँ पूछताछ करने पर पता चला कि वह जापान की शाही सेना की ३८वीं इन्फैक्ट्री रेजीमेण्ट का सिपाही है। जापान की सरकार ने उसे करीब ३५० सेन वेतन सहायता के रूप में काफी रकम देने की घोषणा भी की।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिकूलताओं को चुनौती देती मानवी जीवट

परिवर्तन जीवन्तता का प्रतीक है। स्थिर और अचल स्थिति में जड़-पदार्थ और निष्प्राण शरीर ही रहते हैं। यदि जीवन चेतना का अस्तित्व है तो परिस्थितियों में परिवर्तन उतार-चढ़ाव भी नितान्त स्वाभाविक एवं अनिवार्य हैं, उनका प्रभाव भी पड़ता है। बहुत-से लोग समझते हैं कि अनुकूल परिस्थितियाँ विकास एवं प्रगति में सहायक होती हैं तो प्रतिकूलताएँ अवरोधक। एक सीमा तक यह सही है, लेकिन जीवटदार और मनोबल सम्पन्न व्यक्तियों को प्रतिकूलताएँ भी चुनौती देती हैं और अनुकूलताओं की अपेक्षा कहीं अधिक सहायक सिद्ध होती हैं। इस चुनौती भरी स्थिति में मनुष्य की अन्तर्निहित ऊर्जा प्रसुप्त स्थिति से जाग्रत होकर अवरोधों को हटाने, मिटाने में लग जाती है। सामान्य अवस्था में वह शक्ति प्रसुप्त ही रहती है, जो प्रतिकूल परिस्थितियों में किसी दैवी सहायता की तरह उभरकर आती है।

कई व्यक्ति प्रतिकूलताओं के भय से वर्तमान ढर्रे को बदलते हुए घबराते हैं और सोचते हैं कि परिवर्तन को सहन करना उनके लिए सम्भव न होगा लेकिन यदि मानव सत्ता का विश्लेषण किया जाय तो प्रतीत होगा कि परिस्थितियों के अनुरूप अपने को ढाल लेने की उसकी क्षमता अद्भुत है। जिन परिस्थितियों में उसे रहना पड़ता है, वह उसी के अनुरूप अपनी रुचि और प्रकृति को ही नहीं, शारीरिक क्षमता को भी ढाल लेती है।

परिवर्तन को सहन कर पाने का भय या आशंका उस स्थिति में विशेष रूप से उत्पन्न होती है, जब सुविधाजनक जीवन में से निकलकर किसी महान् उद्देश्य के लिए कष्टसाध्य जीवन अपनाने की जरूरत पड़ती है। निस्सन्देह सेवा, साधना और परमार्थ प्रयोजनों का मार्ग सुख-सुविधाओं से भरा नहीं है। उसमें अपेक्षाकृत अधिक श्रम करना पड़ता है और सुख-सुविधाओं में भी कटौती करनी पड़ती है, लेकिन उस आदर्श को अपनाने से ऐसा कोई संकट उत्पन्न नहीं होता कि मनुष्य के लिए वह सहन करना भी दुष्कर हो जाय।

फिर भी इस तरह का भय तो उत्पन्न होता ही है कि सुविधाएँ छोड़ देने पर उनका अभ्यस्त अपना जीवनक्रम किस प्रकार चलेगा ? परमार्थ प्रयोजनों में सुख-सुविधाओं की कटौती तभी तक डरावनी और शंकित लगती है जब तक कि उस क्षेत्र में प्रवेश नहीं किया जाता। जिसने तैरना नहीं सीखा है, उसे पानी में घुसना संकट को निमन्त्रण देना जैसा लगता है, पर जब नौसिखिए पानी में घुसते और हाथ-पैर चलाना आरम्भ करते हैं तो विश्वास होता है कि न तो पानी में घुसना उतना संकटापन्न था और न तैरने की प्रक्रिया ही इतनी जटिल थी।

अभ्यास हर कठिनाई को सरल बना देता है क्योंकि मनुष्य में परिस्थितियों के अनुरूप अपने आपको ढालने की क्षमता अद्भुत और आश्चर्यजनक रूप से विद्यमान है। उसकी इस क्षमता का कहीं अन्त ही नहीं है और अभ्यास किया जाय तो कोई भी व्यक्ति ऐसी विकट परिस्थितियों में भी सन्तोष तथा आनन्द के साथ जीवन व्यतीत कर सकता है जो अनभ्यस्त लोगों को मृत्यु जैसी प्रतीत होती है। उदाहरण के लिए, शीत सम्बन्धी सहनशीलता को ही लिया जाए। साधारण सर्दी भी कई लोगों के लिए बाहर निकलना दुश्वार कर देती है। उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव की सर्दी तो इतनी भयंकर होती है कि उसकी कल्पना ही नहीं की जा सकती। जहाँ सदैव असह्य शीत पड़ता है और सर्वत्र बर्फ की मोटी परतें ही नजर आती हैं, बर्फीली हवाएँ अधिक चलती हैं। वहाँ कैसे निर्वाह हो सकता है, सामान्य व्यक्ति के लिए इसकी कल्पना कर पाना कठिन है।

परन्तु जब से यह पता चला कि ध्रुव प्रदेशों में पहुँचकर वहाँ पृथ्वी के गहन रहस्यों का पता लगाया जा सकता है। वहाँ के अन्तर्ग्रहीय विकिरण के पृथ्वी पर पड़ने वाले प्रभाव का आसानी से अध्ययन किया जा सकता है। इतना ही नहीं उस क्षेत्र में दबी पड़ी प्रचुर धातु सम्पदा का हस्तगत होना भी सहज सम्भव है। इन सम्भावनाओं को जाँचने के लिए यह आवश्यक हो गया कि शोधकर्त्ता वैज्ञानिकों का दल देर तक वहाँ रहे और अपना खोज कार्य जारी रखे। ध्रुव प्रदेश के बर्फीले भू-भाग पर हमेशा दो सौ मील प्रति घण्टे की चाल वाले बवन्डर, तूफान चलते हैं। इन बवन्डरों से बर्फ के टुकड़े और कण उसी तरह उड़ते, लहराते है, जिस प्रकार हवा और आँधी में धूलि कण। वहाँ का तापमान शून्य से १२५ डिग्री नीचे रहता है। चारों ओर बर्फ ही बर्फ जमी रहती है, जमीन के कहीं दर्शन तक नहीं होते। नीरवता का साम्राज्य है, चारों ओर सन्नाटा तथा सुनसान वातावरण। सूर्यास्त के समय वहाँ ऐसी चित्र-विचित्र भयंकर आकृतियों वाली ज्योतियाँ दिखाई देती हैं कि लगता है, प्रेतलीला हो रही हो।

ऐसे प्रदेश में जाना, मौत के मुँह में घुसने जैसा ही हो सकता है। पर दुस्साहसी मनुष्य प्रतिकूल से प्रतिकूल परिस्थितियों की चुनौती स्वीकार कर अपने शौर्य एवं साहस का परिचय देते हैं। ध्रुव प्रदेशों की खोज के लिए वही साहस आगे आया और उस हिमाच्छादित प्रदेश में बस्ती बसाकर रहना स्वीकार कर लिया गया। यह कार्य कई वर्षों से निरन्तर चल रहा है और सुविधापूर्ण जीवन-यापन करने वाले अब इस असुविधा भरी परिस्थितियों के न केवल अभ्यस्त हो गए हैं, वरन् आनन्द भी अनुभव करते हैं।

इस शोध कार्य में बारह देशों के वैज्ञानिक भाग ले रहे हैं। ब्रिटेन, अमेरिका और रूस के वैज्ञानिकों ने तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दक्षिणी ध्रुव प्रदेश में अपने स्थायी कैंप भी डाल दिये हैं। दक्षिणी ध्रुव प्रदेश का धरातल ऐसा है कि वहाँ हल्के से हल्का खेमा भी गाड़ा जाय तो भी प्रतिवर्ष खेमा छह फुट बर्फ में धँस जाता है। इस कठिनाई से बचने के लिए वैज्ञानिक डेरे गाढ़ते समय अपने साथ जहाजों में पत्थर लेकर आते हैं ताकि धँसने की अड़चन अपेक्षाकृत कम उठानी पड़े। इस क्षेत्र में केवल पैंगुइन पक्षी ही रहते हैं, जो वहाँ पहुँचे वैज्ञानिकों की हलचलें कुतूहलपूर्वक देखने के लिए अक्सर पंक्तिबद्ध आकर खड़े हो जाते हैं।

इस प्रदेश में शोधरत वैज्ञानिकों और उनके कर्मचारियों को चमड़े के कपड़े पहनने पड़ते हैं और दुहरे तिहरे गरम मोजे। फिर भी ठण्ड की अधिकता से बचा नहीं जा सकता। बिजली के उपकरण, तेल, आवश्यक यन्त्र तथा खाद्य पदार्थ आदि जरूरी वस्तुएँ, वहाँ जहाजों द्वारा पहुँचाई जाती हैं। वस्तुओं और कुछ भारी उपकरणों को ढोने के लिए वहाँ हल्के टैंक भी पहुँचा दिये गये हैं। अब वहाँ शोधकर्त्ताओं और उनके साथ गये कर्मचारियों के लिए कुछ बस्तियाँ भी बसा दी गई हैं। विर्डस्टेशन, मैकमर्डो, अपडसन, स्कार्ट, एल्सवर्थ हैलट आदि वैज्ञानिकों के नाम पर बनी इन बस्तियों में ही आवश्यक संयन्त्र लगे हुए हैं, जो उन सम्भावनाओं की खोज में निरत हैं, जिनसे अगले दिनों संसार के भाग्य और भविष्य निर्माण में भारी सहयोग मिल सकेगा।

दक्षिणी ध्रुव प्रदेश में ग्रीष्म ऋतु प्रायः जनवरी, फरवरी के महीनों में आती है। पर उन दिनों भी अधिकतम तापमान जीरो डिग्री सेन्टीग्रेड रहता है। इसी ऋतु में वहाँ जहाजों से माल पहुँचाया जाता है। इस प्रदेश का क्षेत्रफल भारत से लगभग पाँच गुना अधिक है। करीब दो हजार मील दूर इस प्रदेश से कहीं कोई आबादी है। अब तक की खोज-खबर से इतना तो स्पष्ट हो गया है कि इस भू-भाग के नीचे सोना, चाँदी, टिन, कोयला, लोहा, जस्ता, अभ्रक, सीसा, यूरेनियल, क्रोफाइट आदि धातुओं का विपुल भण्डार है। सम्पदा को यदि निकाला जा सके तो संसार की समृद्धि में भारी बढ़ोत्तरी हो सकेगी। यदि इस प्रदेश को यातायात के उपयुक्त बना लिया गया और उधर से वायुयानों का गुजरना सम्भव हो सका तो पृथ्वी के किसी भी दूरवर्ती कोने में पहुँचना अपेक्षाकृत अधिक सरल हो जायेगा।

यह भी सम्भावना बताई जा रही है कि यदि मनुष्य दक्षिणी ध्रुव तक सरलतापूर्वक पहुँच सका तो वहाँ से राकेट, भारी वायुयान आदि चलाना सरल पड़ेगा। अमेरिका से अफ्रीका की ओर, आस्ट्रेलिया से अलास्का की ओर वायुयान द्वारा यात्रा करने में बहुत कम समय लगेगा तथा बहुत कम दूरी तय करनी पड़ेगी। यही नहीं इस क्षेत्र से अन्तरिक्षयान छोड़ने में भी भारी सुविधा रहेगी। समस्त पृथ्वी की सूचनाएँ एक स्थान पर एकत्रित करना इस एक जगह पर अपेक्षाकृत अधिक आसान रहेगा। धरती पर सर्वत्र फैले परमाणुओं तथा इलेक्ट्रॉन किरणों का प्रभाव दक्षिणी ध्रुव पर बहुत कम है। यहाँ कास्मिक किरणों की अधिकता के कारण अन्तरिक्ष सम्बन्धी शोध कार्य भी आसानी से किये जा सकेंगे।

दक्षिण ध्रुव की अपेक्षा उत्तरी ध्रुव की परिस्थितियाँ भिन्न और अधिक जटिल हैं। वैज्ञानिक इस क्षेत्र में और फूँक-फूँककर पैर रख रहे हैं, इतने पर भी यह एक आश्चर्य की बात है कि इस क्षेत्र में मनुष्य जाति का अस्तित्व बहुत पहले से विद्यमान पाया गया। वैज्ञानिक जब-तब और जहाँ-तहाँ जाते हैं, पर आश्चर्य इस बात का है कि उन जैसे उपकरणों और सुरक्षा साधनों से वंचित रहते हुए भी घोर शीत के वातावरण में भी वहाँ मनुष्य चिरकाल से रह रहा है और उस गला डालने जैसी शीत की विभीषिका को चुनौती देता हुआ जीवन व्यतीत कर रहा है।

वैज्ञानिक पीटर स्कालेंडर ने उत्तरी ध्रुव प्रदेश के मूल निवासी एस्किमो लोगों की जीवनचर्या का गहन अध्ययन किया और पता लगाया है कि इन लोगों ने न केवल अपने शरीर में ही शीत सहने की क्षमता एकत्रित की है, वरन् उससे निपटने के लिए ऐसी तरकीबें भी खोज निकाली हैं जिसे देखकर उनकी विज्ञानबुद्धि को सराहे बिना नहीं रहा जा सकता। उदाहरण के लिए, वे बर्फ की सतह पर बर्फ से ही अपने लिए घर बनाते हैं जो काफी गर्म रहते हैं। कारण कि उनके भीतर जिससे जो हवा कैद रहती है, उसे ईंधन से गर्म कर लिया जाता है कि वह गर्मी देर तक बनी रहती है, जिसमें मनुष्य लम्बे समय तक सुविधापूर्वक साधारण वस्त्र पहनकर भी रह सके।

बर्फ पर बर्फ से बने मकानों के भीतर भी गर्म वातावरण रह सकता है, यह वैज्ञानिक बुद्धि का ही कमाल है और परिस्थितियों ने यह वैज्ञानिक बुद्धि कथित सभ्य संसार से पिछड़े होने के बावजूद भी उन लोगों में उत्पन्न कर दी। मोमबत्ती की तरह चर्बी भरी मछली को वे लोग न जाने कहाँ से ढूँढ़ लाते हैं और उससे अपनी प्रकाश सम्बन्धी आवश्यकता पूरी करते हैं। आमतौर पर देर तक बर्फ में रहने से हाथ-पैर की अँगुलियाँ गलने लगती हैं और शरीर के अन्य अंगों का भी यही हाल होता है, पर एस्किमो लोगों के शरीर में परिस्थितियों के अनुरूप अपने आपको ढाल लिया है। उनका रक्त प्रवाह शीत के प्रतिरोध करने जितना ही तीव्र हो जाता है और गर्म बना रहता है तथा अँगुलियों सहित उनके शरीर का प्रत्येक अंग बर्फ को चुनौती देता हुआ उछलता, कूदता रहता है।

यह तो हुई वहाँ रहने वालों की बात। अब उस क्षेत्र के भू-गर्भ में छिपी उस सम्पदा का अध्ययन ही किया जा रहा है, जिसे हथिया लेने के बाद मनुष्य कुबेर जैसा सम्पत्तिशाली बन जायेगा। ध्रुव प्रदेश के निकटवर्ती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हिमाच्छादित क्षेत्रों में भी शीत की कमी नहीं, वहाँ भी शोधकार्य चल रहा है और पता लगाया गया है कि साइबेरिया में स्वर्ण, अलास्का में पैट्रोल, उल्जावा में लोहा, उत्तरी कनाडा में ताँबा प्रचुर परिमाण में बर्फ की मोटी परतों के नीचे दबा पड़ा है।

पृथ्वी की इस विशाल सम्पदा को दुस्साहस भरे शोध कार्यों द्वारा ही हस्तगत किया जा सकता है। इसके लिए उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों के असह्य शीत को चुनौती देते हुए दुस्साहसी लोगों ने वहाँ अड्डा जमाया है—ठीक उसी स्तर का दुस्साहस उच्चस्तरीय आध्यात्मिक प्रयोजनों के लिए भी चाहिए, जिससे नव-निर्माण जैसे महान् लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। यदि वे इस दिशा में सचमुच चल पड़ें तो समय बतायेगा कि उस मार्ग में आने वाली जिन असह्य असुविधाओं की कल्पना की जा रही थी वे कितनी सरल हैं ? मनुष्य का यह छोटा-सा दिखाई देने वाला काय-कलेवर अद्भुत आश्चर्यों से भरा हुआ है। आवश्यकता केवल उसे चुनौती देने और साहस जुटाने भर की है।

मनुष्य के लिए कुछ भी असंभव नहीं

आगे बढ़ने, ऊँचा उठने और सामान्य से कुछ अधिक कर गुजरने की आकांक्षा हर व्यक्ति की होती है। इसके लिए बाह्य सहयोग और अनुकूलताओं की प्रतीक्षा में कितने ही व्यक्ति रहते हैं ? ऐसे विरले ही होते हैं जिन्हें अभीष्ट परिमाण में जन्म से ही ऐसी परिस्थितियाँ मिल भी जाती हैं। फिर भी बहुसंख्य ऐसे होते हैं, जिन्हें अपना मार्ग स्वयं बनाना पड़ता है। अपनी परिस्थितियाँ स्वयं गढ़नी होती हैं। संकल्प शक्ति के सहारे ऐसे पुरुषार्थी असम्भव को भी सम्भव कर दिखाते हैं। निराशा के घोर अन्धकार और प्रतिकूलताओं के अम्बार ऐसे प्रचण्ड संकल्प बल वालों के समक्ष बहुत दिन टिकते नहीं। ये बादल शीघ्र ही छटते चले जाते हैं। शारीरिक अपंगता जैसी प्रतिकूल परिस्थितियाँ भी उनके आड़े नहीं आतीं। कालान्तर में ऐसे पुरुषार्थियों को सम्मान मिलता है, सफलता उनके कदम चूमती है।

अमेरिका के टेनेसी राज्य में रहने वाली एक बालिका पाँच वर्ष की अवस्था में ही लकवे का शिकार हो गयी। उसे अपना बायाँ पैर गँवाना पड़ा। परन्तु वह जीवन से निराश नहीं हुई। निरन्तर खेलते रहने, घूमने, व्यायाम आदि का क्रम उसने बनाये रखा। धीरे-धीरे लांग जम्प व जिमनेस्टिक में उसने ऐसी महारत हासिल कर ली कि उसे १९६० के ओलम्पिक खेलों में भेजा गया। विल्मा गोल्डीन नामक इस साहसी महिला ने तीन स्वर्ण पदक प्राप्त कर कीर्तिमान स्थापित किया। पत्रकारों ने उसकी सफलता का रहस्य पूछा—तो उसने बताया—"मैं अपने पैरों के कारण शरीर से तो अपंग हूँ परन्तु मन तथा विचारों से नहीं। मेरे संकल्प व दृढ़ इच्छाशक्ति ने ही आज मुझे यह विजयश्री दिलाई है।"

अभी कुछ वर्ष पूर्व ही एक अन्धे युवक ने अमेरिका में चिकित्सक की डिग्री प्राप्त की है। विश्व का वह पहला अन्धा चिकित्सा स्नातक है, जिसे एक मान्यता प्राप्त मेडीकल स्कूल द्वारा एम. डी. की डिग्री दी गयी। उसने दृढ़ संकल्प बल से अपनी स्पर्शेन्द्रियों को इस प्रकार विकसित कर लिया था कि कोई भी अन्य स्वस्थ बुद्धिमान छात्र उससे सीखने की क्षमता में पीछे ही रहता था। उसने सर्वोच्च स्थान पाकर यू. एस. मेडीकल हिस्ट्री में एक कीर्तिमान स्थापित किया।

परिस्थितियों को दोषी ठहराने व अनुकूलताओं की ताक में बैठे रहने वाले उन व्यक्तियों को जो शरीर से समर्थ-स्वस्थ हैं, पुरुषार्थ को ये उदाहरण चुनौती देते हैं। साहस के रहते अपंगता कभी बाधक नहीं होती।

'एबिलिटीज इन्कारपोरेटेड' एक ऐसी असाधारण संस्था है जिसके जन्म, विकास की गाथा, वर्तमान तथा भविष्य की प्रतिज्ञाओं को पढ़-सुनकर रोमांच हो उठता है। हेनरी विस्कार्डी जूनियर, जो स्वयं विकलांग हैं, ने एक मार्मिक पुस्तक लिखी है—'गिव अस द टूल्स' ('हमें औजार दीजिए') प्रकाशित होने के कुछ ही माहों में इस पुस्तक ने तहलका मचा दिया है। नवनीत (अक्टूबर ८१) ने इसका सार प्रस्तुत किया है। इस हृदयस्पर्शी वृतान्त को स्वयं उस व्यक्ति ने लिखा है कि जो जीवन के इन हादसों से गुजर चुका है, जो किसी भी व्यक्ति को तोड़ दे सकने में समर्थ है। 'एबिलिटिज इन्कारपोरेटेड' उन्हीं की स्थापित संस्था है। इसके सदस्यों से जुड़े प्रसंगों पर एक नजर डालने से स्वयं स्पष्ट हो जायेगा क्योंकि यह वृतान्त यहाँ प्रस्तुत किया गया।

यह संस्था एक उद्योगशाला है, जिसका संचालन अपंग व्यक्ति अपंगों की खातिर ही करते हैं। इसकी स्थापना इसी उद्देश्य को लेकर हुई कि यदि अवसर दिया जाय तो विकलांग स्वयं अपनी मदद कर सकते हैं और अपने पुरुषार्थ से अपने विकलांग भाईयों की ही नहीं, सारे समाज की सेवा कर सकने में समर्थ हो सकते हैं। इसका शुभारम्भ हुआ एक छोटे-से गैराज से, एक लकवाग्रस्त रोगी हेनरी विस्कार्डी द्वारा। पाँच वर्षों के भीतर ही उसका इतना विकास हुआ कि यह एक विशाल कर्मशाला में रूपान्तरित हो गया, जिसमें मात्र विकलांग काम करते हैं, लाखों डालर का उत्पादन करते हैं और स्वाभिमान से जीते हैं। हेनरी विस्कार्डी जो इस संस्था के अध्यक्ष और पुस्तक के लेखक भी हैं कहते हैं, "मैं उस भगवान को लाख धन्यवाद देता हूँ, जिसने मुझे अपंग बनाया और फिर जूझने की शक्ति दी। इसी शक्ति की फल श्रुति है—'यह संस्था।"

जन्म से ही हेनरी पावों के स्थान पर ठूँठ लिये पैदा हुए थे। छह वर्ष की उम्र तक वे अस्पताल में ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहे। चिकित्सकों ने 'विकलांग शूज' पहनाकर अपनी छुट्टी की व समझाया, अब इसी प्रकार तुम्हें रहना होगा। पौने चार फुट का हेनरी जब अपनी बाहें नीचे लाता तो जमीन से छूतीं। ऐसे में जब घर वालों की सहज करुणा इन पर टपकती तो उन्हें बुरा लगता था, हँसी उड़ाने पर नहीं। एक चिकित्सक ने अल्मूनियम के जूते पहनाकर उसकी ऊँचाई ५ फुट ८ इन्च कर दी। चिकित्सक डॉ. यानोवर ने फीस न लेते हुए एक ही प्रार्थना की, ''हेनरी ! तुम यदि किसी और अपंग को प्रेरणा दे सके या मदद कर सकने में समर्थ हो सके तो मैं समझूँगा मुझे मेरी फीस मिल गई है।'' इन शब्दों ने हेनरी पर चमत्कारिक प्रभाव डाला। उसे जीने का मूलमन्त्र मिल गया ''अपने ही जैसे और भाईयों की सहायता कर उन्हें भी जिन्दगी जीना सिखलाया।''

विवाहोपरान्त कुछ वर्षों तक तो हेनरी ने नौकरी की। अपनी बौद्धिक प्रखरता के बलबूते उसे अपंग होने के बावजूद एक बड़ी सूती मिल में ऊँचे वेतन पर कार्मिक निदेशक का पद मिल गया। पर बार-बार उसका मन कचोटकर **डॉ. यानोवर** के शब्दों की याद दिलाता रहा। एक दिन अन्ततः निर्णय लेने का समय आ ही गया। उन्होंने अपनी संस्था से त्याग-पत्र देकर कम वेतन पर ''जस्ट बन ब्रेक'' नामक संस्था के व्यवस्थापक का पद सम्भाल लिया। यह संस्था अपंगों का पुनर्वास करती थी, उनका काम था सर्व साधारण से अनुरोध कर, उद्योगपतियों से अपील करके संस्था को पंजीकृत विकलांगों को रोजगार दिलाना। पर इसमें उन्हें न केवल कठिनाई का सामना करना पड़ता था, अपितु अपने विकलांग साथियों का सहयोग भी कम मिल पाता था। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद बेरोजगारी के बढ़ने, अपंगों की संख्या भी अधिक होने से अधिकांश विकलांग काम पर नहीं लग पाए थे, न ही मालिकों की उनके प्रति रुचि थी।

एक छोटे उद्योगपति द्वारा दी गयी आर्थिक सहायता, कुछ विकलांग भाईयों का सहयोग और हेनरी के स्वयं के आत्मविश्वास के समुच्य ने जादू किया। उन्होंने पिछली संस्था छोड़ी और एक गैराज से अपनी उद्योगशाला आरम्भ की इसका नाम उन्होंने प्रारम्भ से ही विधेयात्मक रखा 'अयोग्यता' नहीं 'योग्यता' ''एबिलिटीज संस्था'' का जन्म हुआ। धीरे-धीरे साथी बढ़े और यह गैराज एक विशाल वर्कशाप में बदल गया। इससे जुड़ने की हेनरी ने तीन ही प्रारम्भिक शर्त रखी थीं—केवल विकलांग को कर्मचारी के रूप में रखना, मुनाफे का सभी में बराबर बँटवारा तथा किसी से भी धन की आर्थिक सहायता की याचना नहीं करना।

कितनी मेहनत व साहस से इस संस्था ने प्रगति की है, इसके साक्षी विकलांग कर्मचारियों के कुछ उदाहरण हैं। ये व्यक्ति जिन्हें बेकार, समाज का कूड़ा-कर्कट समझा जाता है, कितने आत्म निर्भर, कितने स्वाभिमानी हो सकते हैं ? इसका आभास मिलता है, उनके द्वारा सरकार के पुनर्वास विभाग द्वारा दी गयी अनुदान राशि को अस्वीकृत किये जाने से। सरकारी पूछताछ व हरेक के बायोडेटा की जानकारी प्रतिमाह लिये जाने से सभी असंतुष्ट थे। **हेनरी** ने कहा, ''यदि आप सभी कुछ समय किफायत से काट लें व कम धन से गुजारा कर लें तो हम एकमात्र इस अनुदान को भी नकार सकते हैं। सबने समवेत स्वरों में सहमति दी और अधिक श्रम, कम राशि पाकर करने को संकल्पित हो गए ताकि पहिया जाम न होने पाये व संस्था जीवित आत्म-निर्भर बनी रहे।

ऐसे-ऐसे कठिन दुष्कर कार्य इन अपंग कर्मचारियों ने छोटे-छोटे 'अप्लाए सेज' हाथ की जगह हुक, उँगलियों के स्थान पर तारों की बनी झीनी सींकों तथा पैर के स्थान पर नकली धातु के पैड्स इन सभी की मदद से इन विकलांगों ने इलेक्ट्रॉनिक्स के बहुत छोटे उपकरणों से लेकर बड़े-बड़े खराद वाले उपकरण चलाये हैं। अष्टावक्र की भाँति टेढ़े जिम एलबर्ट, अन्धा एंजेलो, कुल्हा व पैर रहित बिल ग्राहम, गूँगा-बहरा तथा एक लूले हाथ वाला अल्पेण्टो, रुमेटांइड अर्थराइटिस से ग्रस्त अपंग रॉक्स एलफंसन इस तथ्य के जीते-जगाते उदाहरण हैं कि जीवनेच्छा के रहते शारीरिक असमर्थता, विकलांगता विकास में कभी बाधक नहीं होती।

इन कर्मचारियों में से किसी को मिर्गी का रोग था, किसी की उँगलियाँ काँपती थीं, कोई आधे घण्टे से अधिक एक स्थान पर बैठ सकने में असमर्थ था; फिर भी सामूहिक चेतना व अन्तः की जीने की प्रबल आकांक्षा ने कुछ ऐसा जादू किया कि काम करते-करते कोई दुर्घटना तो दूर, इनमें से अधिकांश के रोगों का कोई बाह्य चिन्ह भी शेष नहीं रहा। इन सभी का विश्वास था कि काम से बढ़कर कोई चिकित्सा नहीं विशेषकर ऐसा काम जिसे लगनपूर्वक जीने के लिए आत्मसम्मान की रक्षार्थ किया जाय। इनमें बीमारी की छुट्टी लेने का औसत १०० काम के दिनों में १-३ है जो कि किसी भी सरकारी अथवा निजी प्रतिष्ठान के इन्हीं आँकड़ों में न्यूनतम से भी बहुत कम है। अनुपस्थिति का औसत अन्य आदर्श प्रतिष्ठानों के मुकाबले एक तिहाई है। इसका कारण एक ही है कि लोगों की काम के प्रति निष्ठा, समर्पण व सतत संघर्षशीलता। इस संस्था के इतिहास में इतने उतार-चढ़ाव आये, पर किसी ने निराशा को पास नहीं फटकने दिया।

उत्साह एवं मनोबल अवरोधों को भी हटा सकते हैं

संसार में अनेकों आश्चर्यजनक वस्तुएँ पाई जाती हैं और घटनाएँ देखी जाती हैं। इन सबसे विलक्षण है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मानवी संरचना और उसमें सन्निहित सम्भावना। लगता है कि सृष्टा ने अपनी विभूतियों और कुशलताओं को मनुष्य के छोटे से कलेवर में गागर में सागर की तरह भर दिया है। असमंजस इसी बात का है कि वे विशिष्टताएँ प्रसुप्त स्थिति में पड़ी रहती हैं। सामान्यतया इस रहस्यमय भण्डार में से उतना ही प्रकट और विकसित होता है, जितनी कि आवश्यकता पड़ती और उभारने की चेष्टा की जाती है। शेष सब कुछ अविकसित एवं अविज्ञात स्थिति में ही पड़ा रहता है।

सफलताओं में अवरोध उत्पन्न करने वाले अन्य कारण भी हो सकते हैं, पर सबसे बड़ा कारण अपनी सामर्थ्य से अनजान रहना, योग्यता को न बढ़ाना और प्रगति के लिए पुरुषार्थ न करना। ऐसे कई उदाहरण मिलते हैं, जिनमें व्यक्तियों ने कमियों के रहते जीवन सफलता से जिया, प्रतिकूलताओं से स्वयं को अप्रभावित रखा।

इंग्लैण्ड का प्रसिद्ध कलाकार 'स्टेगमान' ६ वर्ष की अल्पायु में लकवे का शिकार हो गया। टट्टी-पेशाब जाने एवं खाना खाने तक में पराश्रित हो गया। चारपाई पर लेटे-लेटे अपनी असहाय स्थिति पर विचार करता रहता एवं अपने जीवनयापन के लिए स्वावलम्बी बनने का उपाय सोचता रहता। दूसरों की दया पर जीवन बिताना उसे अच्छा न लगा। उसने अभिभावकों से अपने मन की व्यथा कही। कलाकार की आकांक्षा के अनुसार उसे प्राथमिक विद्यालय में प्रवेश दिला दिया गया।

हाथ-पैरों से बेकार स्टेगमान ने मुख में कूँची दबाकर चित्र बनाने का अभ्यास प्रारम्भ कर दिया। अपने प्रयास-लगन और श्रमशीलता से यह सिद्ध कर दिखाया कि अपंगता कला साधना में बाधक नहीं हो सकती। आवश्यकता केवल अपने अन्दर श्रम-निष्ठा एवं दृढ़ संकल्प उभारने की है। स्टेगमान का तो यहाँ तक कहना है कि कोई कलाकार हाथ से चित्र नहीं बनाता, वरन् हृदय के अन्तराल से उद्भूत भावनायें ही कागज पर यथार्थ रूप से साकार होती हैं। चित्रकारी के बाद स्टेगमान ने मूर्तिकला का अभ्यास किया तथा मुख और पैर की यत्किंचित सहायता से बड़ी सुन्दर मूर्तियाँ बनाना प्रारम्भ कर दिया, जिन्हें देखकर कोई कह नहीं सकता कि किसी अपंग व्यक्ति ने इन्हें बनाया होगा। ब्रिटेन के इस कलाकार ने 'लाइसतेन्स्तीन' में मुख और पैर से मूर्तियाँ बनाने का एक संघ स्थापित किया, जो आज अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति की संस्था का रूप ले चुका है।

आशा के दीप बुझे न हों और संकल्प दृढ़ हो तो असम्भव बातें भी सम्भव होती देखी गई हैं। विश्व प्रसिद्ध ओलम्पिक खिलाड़ी अमेरिका के 'रेसीयूरी' के साथ कुछ ऐसे ही घटनाक्रम जुड़े हुए हैं। उनकी समवय के बच्चे जब दिनभर खेला करते थे, उछल-कूद मचाते थे, यूरी बिस्तर पर पड़ा रहता था। उसको कमर से नीचे के भाग में लकवा हो गया था। चाहते हुए भी अपने मित्रों के साथ खेल नहीं पाता था।

ऐसी स्थिति में भी वह आशान्वित बना रहा। उसके मन में अन्य व्यक्तियों की तरह स्वस्थ और सामान्य बनने की इच्छा थी। चिकित्सकों ने असाध्य रोग कहकर अपनी असमर्थता व्यक्त कर दी किन्तु यूरी के मन में आशा का दीप बुझने नहीं पाया। भीतर के संकल्प बल ने साथ दिया और यूरी ने नये सिरे से स्वयं अपना इलाज आरम्भ कर दिया। व्यायाम के रूप में धीरे-धीरे बिस्तर पर पड़े-पड़े ही उन्होंने पैरों का चलाना शुरू कर दिया। महीनों तक यह प्रयास अबाध गति से चलता रहा और सहसा एक दिन उन्हें अपनी टाँगों में कुछ चेतना का आभास होने लगा। फिर भी वे चल सकने में समर्थ न हो पाये, पर उनका स्वयं का खोजा हुआ व्यायाम लगातार चलता रहा और उसी से शक्ति मिलती चली गयी। तब तो सामान्य व्यक्तियों की तरह चलने-फिरने लगे।

क्रीड़ा के प्रति अभिरुचि तो यूरी के भीतर पहले से ही थी। चलने-फिरने की स्थिति बनते ही उसने उसे साकार रूप देना आरम्भ कर दिया। उसके उत्साह, धैर्य एवं साहस की कहानी क्रीड़ा जगत् में अपना विशेष स्थान रखती है। आगे चलकर वह विश्व प्रसिद्ध हो गया। लोगों को आश्चर्य होता था कि जो यूरी बिस्तर पर पड़े-पड़े मलमूत्र त्याग करता था, वह आज विश्व विख्यात खिलाड़ी कैसे बन गया ? ओलम्पिक के इतिहास में वही एक ऐसा खिलाड़ी हुआ, जिसने सन् १९०० में पेरिस के, १९०४ में सेंटलुई के और १९०८ में लन्दन के ओलम्पिक में ८ स्वर्ण पदक प्राप्त किये। स्टैण्डिग हाई जम्प, स्टैण्डिग लांग जम्प और स्टैण्डिग हाप स्टेप एण्ड जम्प में जो कीर्तिमान उन्होंने स्थापित किया, उसे आज तक कोई खिलाड़ी तोड़ न सका। १९०८ के बाद इन खेलों को बन्द कर दिया पर यूरी की सफलता आज भी प्रत्येक खिलाड़ी के लिए प्रेरणास्रोत बनी हुई है।

ऐसी ही एक महिला चित्रकार की धैर्यशीलता एवं उत्साह भरी कहानी है। इंग्लैण्ड में जन्मी कुमारी फिलिस आइटीन नार्थ कौट अपनी योग्यता, कार्यकुशलता एवं खेलकूदों में विशेष अभिरुचि रखने के कारण पूरे विद्यालय में लोकप्रियता प्राप्त कर चुकी थीं। एक दिन पिकनिक पर जाते समय मोटर साइकिल दुर्घटना की शिकार हो गईं। उनके पैर बिल्कुल बेकार हो गये। असह्य पीड़ा होते हुए भी वह न तो घबरायीं और न ही जीवन से निराश हुईं। क्रिसमस का पर्व नजदीक ही था, उसकी इच्छा हुई कि अपने मित्रों को हाथ से चित्रकारी करके शुभ कामनाओं के कार्ड भेजे। फिलिस के पिता एवं मामा दोनों चित्रकार थे। उन्होंने उसकी आशा एवं आकांक्षा को और प्रबल बना दिया।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

४.१५ मनस्विता, प्रखरता और तेजस्विता

अब तो फिलिस को चित्रकला से विशेष लगाव हो गया। साथ ही जीवन की नयी दिशा धारा मिल गयी। वह कहने लगी—शरीर ही सब कुछ नहीं होता, यदि शरीर अस्वस्थ भी हो किन्तु मन स्वस्थ हो तो प्रसन्नता-प्रफुल्लता की जिन्दगी जी जा सकती है। वह अपने को पंगु अनुभव नहीं करती वरन् सदैव खिल-खिलाती एवं हँसती-हँसाती रहती है। आस-पास के निवासी जब किसी समस्या में उलझ जाते हैं तो सशक्त हृदय वाली फिलिस के पास समाधान को आते हैं और परामर्श के बाद अपनी परेशानियों को हल्का अनुभव करते हैं।

इस प्रकार के अनेकों उदाहरण समाज में देखे जा सकते हैं, जो अपाहिज एवं अपंग होते हुए भी अपने धैर्य, संकल्प एवं पुरुषार्थ के बलबूते न केवल आत्म-निर्भरता का जीवन जी सके, वरन् असामान्य कार्य करने में समर्थ हुए तो कोई कारण नहीं है कि जो शरीर एवं मन से स्वस्थ हैं, उनकी सफलता में परिस्थितियाँ बाधक बन सकें। व्यक्ति अपने आत्म-विश्वास, धैर्य एवं परिश्रम से प्रतिकूल एवं विपन्न परिस्थितियों में भी महत्त्व के कार्य सम्पन्न कर सकता है।

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिभावानों का अजेय अस्त्र—इच्छाशक्ति

सामान्य से असामान्य बनाने वाली शक्ति

मनुष्य शरीर में सबसे अधिक संवेदनशील अवयव मस्तिष्क है। वह मात्र सोचने-विचारने के ही काम नहीं आता, वरन् उसमें उत्पन्न होने वाली विद्युत सम्पूर्ण शरीर का क्रिया संचालन करती है। अचेतन मस्तिष्क से सम्बन्धित असंख्यों तार शरीर के प्रत्येक घटक तक पहुँचते हैं, उसकी सुव्यवस्था रखते हैं, आवश्यक आदेश देते हैं तथा समस्याओं का समाधान करते हैं।

यह शरीर चर्चा की बात हुई, इसके अतिरिक्त सचेतन भाग द्वारा विभिन्न आवश्यकताओं की पूर्ति के लिएं मन और बुद्धि द्वारा निर्णय किए जाते हैं और उनकी पूर्ति के लिए योजना बनाने और कार्यान्वित करने का उत्तरदायित्व उठाया जाता है। इसके प्रखर होने पर मनुष्य प्रतिभावान बनता है और अनेक सफलताएँ अर्जित करता है। बाह्य मस्तिष्क का स्तर मन्द होने पर मनुष्य मूर्ख कहलाता है और उसका चिन्तन अटपटा रहता है।

जीवन के हर क्षेत्र को मस्तिष्क प्रभावित करता है। उसके स्तर के अनुरूप शारीरिक स्वास्थ्य के उतार-चढ़ाव आते रहते हैं। मनोविकार स्वास्थ्य को गिराने और व्यक्तित्व को अटपटा बनाने के प्रधान कारण होते हैं। इसी प्रकार किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व की—गुण, कर्म, स्वभाव की दिशाधारा इसी आधार पर बनती है कि मस्तिष्क को किस प्रकार प्रशिक्षित एवं अभ्यस्त किया गया ?

यों कोई व्यक्ति आकांक्षाओं के अनुरूप अपने मनोबल को विकसित कर सकता है, तदनुरूप साधन जुटा सकता है और उस दिशा में सहायक सिद्ध होने वाले व्यक्तियों के साथ सम्पर्क बना सकता है, पर यह अपवाद रूप ही होता है और साथी, सहयोगी, कुटुम्बी जिस मार्ग पर चलते हैं, उसी का अनुकरण होने लगता है। सत्संग की ही तुलना में स्वाध्याय भी प्रभावशाली होता है। यदि उन्नतिशील बनाने वाले तथ्यों से भरा-पूरा साहित्य मिलता रहे और उसमें प्रस्तुत किए गये विवेकपूर्ण तथ्यों को विवेकपूर्वक अपनाया जाता रहे तो भी संवेदनशील मस्तिष्क उसी प्रकार के ढाँचे में ढलने लगते हैं जैसे कि वातावरण प्रभावित करता है।

प्रकृति भी ऋतुओं के वय के अनुरूप मनुष्य में कई परिवर्तन करती रहती है। कामवासना, मनोरंजन के लिए उमंग यों हारमोनों से सम्बन्धित है किन्तु संचित संस्कार भी भले-बुरे कामों के लिए उत्साह प्रदान करते हैं। मस्तिष्क माता के गुण-कर्मों से अत्यधिक प्रभावित होता है। इसलिए कहा जाता है कि सुसन्तति प्राप्त करने की आकांक्षा की पूर्ति के लिए जननी का स्तर ऊँचा उठाया जाना चाहिए। उसके स्वास्थ्य, शिक्षण के अतिरिक्त ऐसा वातावरण दिया जाना चाहिए, जिसमें प्रसन्नता के साथ-साथ नैतिकता की प्रेरणा भी मिलती रहे। सुयोग्य सन्तान के लिए जननी का स्तर उठाने का प्रयत्न करना चाहिए। दूध पीने की तरह वह स्वभाव की विशेषताएँ भी बहुत कुछ माता से ही प्राप्त करता है।

यह मानसिक विकास का प्रथम अध्याय है। दूसरे अध्याय में स्कूली प्रशिक्षण को महत्त्व दिया जाता है। पाठ्यक्रम के सहारे विविध-विधि जानकारियों की आवश्यकता है। किन्तु अध्यापकों और साथियों के स्वभाव से बनने वाला वातावरण भी मानसिक विकास में कम सहायक नहीं होता। इसलिए जिन्हें बुद्धिमान बनना है, उन्हें ऐसे वातावरण में पढ़ाया जाना चाहिए, जहाँ मूर्खतापूर्ण बातें न होती हों।

मानव मन की भिन्नताओं और विशेषताओं में प्रकृतिगत सूक्ष्म प्रवाहों का भी प्रभाव पड़ता है। हर मस्तिष्क की संरचना देखने पर एक जैसी लगते हुए भी उसके न्यूरोन घटकों के आकार-प्रकार में बहुत अन्तर होता है। जिस प्रकार हथेली की लकीरें और पोरवों पर रहने वाले अंकनों में प्रत्येक मनुष्य की स्थिति भिन्न होती है, उसी प्रकार मस्तिष्कीय न्यूरोन, जीन कोष तथा विद्युत कम्पनों में भिन्नता रहती है। मस्तिष्क में दो प्रधान ग्रन्थियाँ हैं। एक पिट्यूटरी, दूसरी पीनियल। इनसे हारमोन स्तर के स्रावों का प्रवाह बहता रहता है। उसकी न्यूनाधिकता तथा दिशाधारा के अनुरूप मनुष्य की अभिरुचि तथा प्रतिभा प्रवाहित होती है। वंशानुक्रम से पीढ़ियों के मिले उत्तराधिकार भी इसी क्षेत्र में विद्यमान रहते हैं। ग्रह-नक्षत्रों के विकिरण एक मस्तिष्क पर एक प्रकार का प्रभाव डालते हैं, तो दूसरे पर दूसरे प्रकार का। ऐसे ही अनेक कारणों से हर मस्तिष्क दूसरों से भिन्न स्तर का होता है। इन सब कारणों को देखते हुए लगता है कि मस्तिष्क

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक प्रकृतिगत देन है और उसी आधार पर मनुष्य मूर्ख या बुद्धिमान होता है। स्वभाव और चिन्तन की दृष्टि से भी वह इन्हीं कारणों से प्रभावित रहता है। यह तथ्य बताते हैं कि सौन्दर्य और कुरूपता की तरह मस्तिष्कीय विलक्षणताएँ भी प्राकृतिक कारणों एवं जन्मजात संस्कारों से प्रभावित होती हैं। इतने पर भी वातावरण एवं संकल्प का अपना महत्त्व है। वह इन सब प्राकृतिक कारणों को बदल सकने में समर्थ है। कालिदास, वरदराज आदि के उदाहरण ऐसे हैं, जिनमें उनकी आरम्भिक स्थिति देखते हुए अनुमान होता था कि ये सदा मूर्ख रहेंगे। विध्याध्ययन में भी इन्हें सफलता न मिलेगी, पर जब उनने संकल्पपूर्वक विद्वान बनने का निश्चय किया तो प्राकृतिक संरचना को उलटकर उनने तीक्ष्णता अर्जित कर ली और सामान्यजनों की अपेक्षा अधिक ऊँचे स्तर के विद्वान बन गये। इससे प्रतीत होता है कि संरचना और वातावरण का प्रभाव कैसा ही क्यों न हो, मनुष्य उसमें आश्चर्यजनक परिवर्तन कर सकता है। सुधारना ही नहीं बिगाड़ना भी सम्भव है।

जिस प्रकार औषधियों का शरीर के विभिन्न अवयवों पर प्रभाव पड़ता है, उसी प्रकार संकल्प भी शरीर के ढाँचे को, स्वास्थ्य को ही नहीं, मानसिक क्षमता को भी प्रभावित करता है और स्वभाव तक में आश्चर्यजनक परिवर्तन लाता है। जिस प्रकार आहार का शरीर-क्रम के साथ भारी सम्बन्ध है, उसी प्रकार आकांक्षा, चिन्तन-प्रक्रिया और संकल्पशक्ति मनःसंस्थान को प्रभावित करती है। उसकी संरचना का कितना ही महत्त्व क्यों न हो ? वातावरण से, प्रकृति प्रवाहों से वह कितना ही प्रभावित क्यों न रहता हो, पर इन सबमें इतनी शक्ति नहीं है कि वह निश्चयपूर्ण संकल्पों के दबाव से अस्वीकार कर सके। शरीर के अन्यान्य अवयवों को हम इच्छानुसार मोड़ने-मरोड़ने में एक सीमा तक ही सफल हो सकते हैं पर मस्तिष्क के सम्बन्ध में बात दूसरी है। उसे सुधारा, बदला ही नहीं उलटा तक जा सकता है। इस दृष्टि से वह जितना सशक्त और महत्त्वपूर्ण है, उतना ही कोमल भी है। वह शरीर में सबसे ऊँचे स्थान पर अवस्थित है। इतने पर भी वह संकल्पशक्ति से ऊपर नहीं है। संसार में ऐसे अगणित व्यक्ति हुए हैं, जिनका आरम्भिक जीवन साधारण ही नहीं हेय स्तर का भी था, किन्तु जब उनने अपने आपे को उच्चस्तरीय बनाने का निश्चय कर लिया तो अभ्यस्त आदतें जो परिवर्तन स्वीकारने में आना-कानी करती थीं, संकल्प शक्ति के दबाव से आमूल-चूल परिवर्तित हो गयीं। सामान्य व्यक्ति असामान्य बन गये।

मनुष्य में छिपी इच्छाशक्ति की सामर्थ्य

संकल्प शक्ति के रूप में मनुष्य को मिला वरदान इतना सामर्थ्यवान है कि वह भौतिक अथवा आत्मिक किसी भी क्षेत्र में प्रगति मार्ग में सम्पन्न होने वाली प्रत्येक बाधा को पैरों तले रौंदकर आगे बढ़ाता तथा सफलताओं को मनुष्य के कदमों में बिछाता देखा जा सकता है।

संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं अथवा जिन्होंने अपनी असाधारण प्रतिभाएँ प्रदर्शित की हैं, उसके मूल में उनका दृढ़ संकल्प ही कार्यरत रहा है। यही वह बल है, जिसके आधार पर महान लक्ष्य को लेकर साहसिक यात्राएँ सम्पन्न की गयी हैं। नैपोलियन ने इसी के सहारे अजेय आल्पस पर्वत को सेना सहित पैदल पार कर संसार में अनौखा कीर्तिमान स्थापित किया था। शेरपा तेनसिंह और हिलेरी ने संसार के सर्वोच्च पर्वत शिखर गौरीशंकर (एवरेस्ट) पर जा पहुँचने का दुस्साहस किया था और वहाँ अपनी विजय पताका फहराते हुए यह उद्घोष किया था कि इस संसार में कुछ भी ऐसा दुष्कर कार्य नहीं है, जिसे संकल्प बल से सम्पन्न न किया जा सके।

आत्मिक क्षेत्र में उच्चस्तरीय लक्ष्य तक जा पहुँचने वालों में ध्रुव और सप्त ऋषियों की गणना होती है, जो अभी भी आकाश में ज्योति पुंज बनकर चमकते हैं। दिशासूचक ध्रुव और आत्मबल की सर्वोच्च सिद्धि करने वाले ऋषि मण्डल अभी भी अपनी गरिमा की ओर जनसाधारण का ध्यान आकर्षित करते हैं और कहते हैं कि सामान्य स्थिति में जन्मे और पले मनुष्य को हमारी तरह अजस्र श्रेय साधने में निश्चित रूप से सफलता मिल सकती है, पर आवश्यकता मात्र एक ही वस्तु की है और वह है—साहसिक सत्संकल्प।

पूर्व अभ्यासों, आदतों एवं कुसंस्कारों को बदलना कठिन तो है पर इतना नहीं जिसे प्रचण्ड संकल्प शक्ति के सहारे निरस्त न किया जा सके। तुलसीदास, सूरदास युवाकाल तक कामुकता तथा नैतिकता की मर्यादाओं की दृष्टि से हेय जीवन जीते रहे, किन्तु जब उनने अपने को बदल डालने का दृढ़ निश्चय कर लिया तो पुरानी आदतों तथा मान्यताओं को बदलते देरी न लगी। आन्तरिक परिवर्तन प्रस्तुत करने में दृढ़ संकल्प के अतिरिक्त और शक्ति काम नहीं करती। सामान्य लोग असमंजस में पड़े रहते तथा आत्म-नियन्त्रण में सफलता न मिलने का रोना रोते रहते हैं, पर दृढ़ संकल्प का आश्रय लेने वाले मनस्वी के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है। वाल्मीकि तथा अंगुलिमाल जैसे डाकू सन्त बने हैं। किसी समय का महान क्रूर शासक अशोक जब बदला तो उसने धर्म चक्र प्रवर्त्तन की मूर्धन्य भूमिका निभायी। वासना के दलदल में पड़ी अम्बपाली बदली तो बौद्ध धर्म की महान प्रचारिका बन गयी। आन्तरिक परिवर्तन से वह परम साध्वी कहलायी तथा ऋषियों से श्रद्धा के साथ सराही गयी। अजामिल, सदन जैसे अगणित व्यक्तियों के समय-समय पर ऐसे ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आन्तरिक परिवर्तन उनकी संकल्प शक्ति के माध्यम से ही सम्भव हो सके हैं।

असफलताएँ सिर्फ यह सिद्ध करती हैं कि सफलता के लिए जो तत्परता बरती जानी चाहिए, उसमें कहीं कोई कमी रह गयी है। मनस्वी हारते नहीं, वे हर असफलता के बाद दूने साहस, चौगुने उत्साह के साथ-साथ अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते हैं। अब्राहम लिंकन १७ बार पराजित होने के उपरान्त चुनाव जीत पाये थे। कठिनाइयों के साथ पग-पग पर संघर्ष करते हुए आगे ही बढ़ते चले गये। जार्ज वाशिंगटन अमरीका के श्रद्धा पात्र राष्ट्रपति बने। जन्म से ही उन्हें घोर गरीबी का सामना करना पड़ा पर अपने ही पुरुषार्थ के सहारे आगे बढ़ते गये।

व्रतशील अपने संकल्पों के प्रति दृढ़ रहते तथा हर हालत में उन्हें पूरा करते हैं। भीष्म ने आजीवन ब्रह्मचारी रहने का व्रत लिया और उसे पूरा कर दिखाया। गिरता शरीर नहीं, मन है। मनोबल ऊँचा रहने पर मानसिक दुर्बलताओं की दाल नहीं गलती। पशु प्रवृत्तियाँ भी सिर पर चढ़ बैठने का साहस नहीं करती हैं। भागीरथ को गंगावतरण अभीष्ट था। वे प्रचण्ड तपश्चर्या में संलग्न होकर उसे पूरा करने में सफल हुए। जगद्गुरु शंकराचार्य की आरम्भिक परिस्थितियाँ ऐसी नहीं थीं, जिनमें उनके द्वारा किसी बड़े उपक्रम की आशा की जा सके, किन्तु उन्होंने अपनी प्रचण्ड प्रतिभा का उपयोग किसी महान प्रयोजन में करने का निश्चय किया और उसमें सफल रहे।

कोलम्बस अपनी नाव लेकर भारत की खोज में निकला। समुद्र यात्रा की प्राणघातक चुनौतियों का सामना करते हुए नई दुनिया अमेरिका को खोज निकालने में सफल हो सका। यह उसके प्रचण्ड संकल्प की ही परिणति थी। अन्धी, गूँगी, बहरी हेलन केलर का विद्या की मूर्ति भाण्डागार बन सकना, सत्रह विश्वविद्यालयों से डाक्टर का सम्मान दिला सकना उसकी संकल्प शक्ति का ही चमत्कार है। इसके विपरीत साधन सम्पन्न छात्र भी अपनी असफलता का रोना रोते रहते हैं। इसमें अन्य कारण कम और मनोबल की दुर्बलता ही प्रमुख अवरोध उत्पन्न कर रही होती है।

प्रख्यात अँग्रेजी साहित्यकार ए. जी. वेल्स की माता घरों में बर्तन माँजने की मजदूरी करके अपना और अपने बच्चों का पेट पालती थीं। ऐसी विकट परिस्थितियों में भी वे बड़े उत्साह से शिक्षा अर्जन के हर अवसर ढूँढ़ते रहे और उस प्रयास से उच्चकोटि के साहित्यकार बने। वैज्ञानिक **एडीसन** की जीवन गाथा भी वेल्स से मिलती-जुलती है। ढूँढ़ने पर ऐसे अन्य प्रमाण भी देश-विदेश में मिल सकते है, जिसमें विषम परिस्थितियों से जूझते हुए मनस्वी लोगों ने इतनी बड़ी-बड़ी सफलताएँ पायी हैं, जिन्हें चमत्कार कहा जा सकता है। वस्तुतः संकल्प शक्ति ऐसा दैवी अनुदान है, जिसकी अनुकम्पा से लाभान्वित हो सकना हर किसी के लिए सम्भव है।

नर हो या नारी, बालक हो या वृद्ध, स्वस्थ हो या रुग्ण—धनी हो या निर्धन, परिस्थितियों से कुछ बनता-बिगड़ता नहीं, महत्त्व शक्ति का है मनस्वी अपने लिए परिस्थितियाँ स्वयं बनाते तथा सफल होते हैं। समय और श्रम कितना लगा, उसमें अन्तर हो सकता है, पर आत्म निर्माण के लिए प्रयत्नशील व्यक्ति अपनी आकांक्षा को प्रयत्नों के अनुरूप देर-सबेर पूरा कर लेते हैं। नर की तुलना में नारी की परिस्थितियाँ, कई दृष्टियों से न्यून मानी जाती हैं, पर यह मान्यता वहीं तक सही है जहाँ तक कि उनका मनोबल गया-गुजरा बना हुआ है। अपनी गरिमा को समझकर यदि वे संकल्प शक्ति को जगा लें तो कोई कारण नहीं है कि वे पुरुष से किसी क्षेत्र में भी पीछे रहें।

विद्वान **कैयट** व्याकरण शास्त्र की संरचना में लगे थे। उसकी पत्नी भामती मूँज की रस्सी बँटकर उससे गुजारे का प्रबन्ध करती थीं। साम्यवाद के जनक **कार्ल मार्क्स** भी कुछ कमा न पाते थे। यह कार्य उनकी पत्नी 'जैनी' करती थी। पुराने कपड़े खरीदकर उनमें से छोटे बच्चों के कपड़े बनातीं तथा फेरी लगाकर उनको बेचती थीं। आदर्शों के लिए पतियों को इस प्रकार कष्ट उठाकर भी प्रोत्साहित करने एवं सहयोग देने में उनका उच्चस्तरीय संकल्प बल ही कार्य करता था। बंगाल के निर्धन विद्वान प्रतापचन्द्र राय ने अपनी सारी शक्ति और सम्पत्ति को लगाकर महाभारत का अनुवाद कार्य हाथ में लिया पर बीच में ही चल बसे। उनकी पत्नी ने अवशेष कार्य को अपना संस्कृत ज्ञान बढ़ाकर पूरा किया।

संकल्प बल—एक ईश्वरीय अनुदान

मनुष्य को बुद्धिबल एवं साधनों के अतिरिक्त संकल्पबल का इतना बड़ा ईश्वरीय अनुदान मिला है, जिसके द्वारा वह असम्भव को भी सम्भव करके दिखा सकता है। घटना सन् १९१० की है—एक जर्मनी ट्रेन में एक सोलह वर्षीय किशोर यात्रा कर रहा था। घर से भागकर वह कहीं दूर जाना चाहता था, पैसे के अभाव में वह टिकट न ले सका। टिकट निरीक्षक को देखते ही उसने सीट के नीचे छिपने की कोशिश की, पर वह टिकट निरीक्षक की निगाहों से बच न सका। उसने किशोर से टिकट माँगा, टिकट तो उसके पास था नहीं। पास में अखबार का टुकड़ा पड़ा था, किशोर ने उसे हाथ में उठाया, मन में संकल्प किया कि यह टिकट है और उसने टिकट निरीक्षक के हाथों में वह टुकड़ा थमा दिया। मन ही मन यह संकल्प दुहराता रहा—हे परमात्मा ! उसे वह कागज का टुकड़ा टिकट दिखाई पड़ जाय। उसके आश्चर्य का तब ठिकाना न रहा जब देखा कि निरीक्षक ने उसे कागज के टुकड़े को वापिस लौटाते हुए यह कहा कि—"क्या तुम पागल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गये हो ? तुम्हारे पास टिकट जब है तो सीट के नीचे छिपने की क्या आवश्यकता है ?''

'एबाउट माई सेल्फ' पुस्तक में **वुल्फ मैसिंग** नामक एक रशियन परामनोवैज्ञानिक उपरोक्त घटना का उल्लेख करते हुए लिखता है कि ''उस दिन से मेरा पूरा जीवन बदल गया।'' पहले मैं अपने आप को असमर्थ, असहाय तथा मूर्ख मानता था, पर उस घटना के बाद यह विश्वास पैदा हुआ कि मेरे भीतर कोई महान शक्ति सोयी पड़ी है, जिसे जगाया-उभारा जा सकता है—उन प्रयत्नों में मैं प्राणपण से लग गया तथा सफल भी रहा।

सन् १९१० से १९५० तक मैसिंग को दुनिया भर में ख्याति मिली। उसकी संकल्प शक्ति की विलक्षणता का परीक्षण अनेकों बार विशेषज्ञ-वैज्ञानिकों के समक्ष किया गया। स्टालिन जैसा मनोबल सम्पन्न व्यक्ति भी मैसिंग से डरने लगा, भयभीत होकर स्टालिन ने उसे गिरफ्तार करा लिया, स्टालिन को सुनी हुई बातों पर विश्वास न था, मैसिंग की परीक्षा उसने स्वयं ली। उसने मैसिंग से कहा—''तुम मेरे सामने अपनी सामर्थ्य का परिचय दो।'' वह सहर्ष इसके लिए राजी हो गया।

स्टालिन ने आदेश दिया—''बन्द कमरे से कल दो बजे तुम्हें छोड़ा जायेगा, एक व्यक्ति तुम्हें मास्को के एक बड़े बैंक में ले जायेगा, तुम्हें बैंक के कैशियर से एक लाख रुपये निकलवाकर लाना होगा। पर ध्यान रहे तुम मात्र अपनी वाणी का प्रयोग कर सकते हो, किसी शस्त्र का नहीं।''

दूसरे दिन पूरी बैंक को सैनिकों से घिरवा दिया गया। दो व्यक्ति पिस्तौलें लिए छद्मवेश में मैसिंग के पीछे-पीछे चल पड़े ताकि वह किसी प्रकार की चाल न चले सके। ट्रेजरर के सामने उसे खड़ा कर दिया गया, मैसिंग ने जेब से एक कोरा कागज निकाला—एकाग्र नेत्रों से देखा तथा ट्रेजरर को दे दिया। ट्रेजरर गौर से उस कागज को उलट-पलट कर देखकर आश्वस्त हो गया कि वह एक चैक है एवं सही है। उसे अपने पास रखकर उसने एक लाख रुपये मैसिंग को दे दिये, उसे लेकर वह स्टालिन के पास पहुँचा तथा सौंप दिया। सारा विवरण जानकर स्टालिन के आश्चर्य का ठिकाना न रहा।

इतने पर भी स्टालिन को उसकी संकल्प शक्ति पर पूर्ण विश्वास न हुआ। उधर मैसिंग वह धनराशि लेकर खजान्ची के पास पहुँचा, पूरी बात बतायी। उसने चैक समझकर रखे हुए कागज को दुबारा देखा तो वह अब मात्र कोरा कागज था। धनराशि को वापस करते हुए मैसिंग ने खजान्ची से कहा—''महोदय ! क्षमा करें, यह संकल्प शक्ति का एक छोटा-सा प्रयोग था। आपको इसका दण्ड न भुगतना पड़े इस कारण लौटाने आया हूँ।'' वह क्लर्क इस घटना से इतना अधिक हतप्रभ हुआ कि हार्टअटैक का दौरा पड़ा और कई दिनों तक भयावह सपने आते रहे।

इस रहस्य की और भी पुष्टि करने की दृष्टि से उधर स्टालिन ने मैसिंग को दूसरा आदेश दिया कि सैनिकों की देखरेख में बन्द कमरे से निकलकर वह ठीक बारह बजे रात्रि को स्टालिन से मिले। स्टालिन के लिए सैनिकों की कड़ी सुरक्षा वैसे भी रखी जाती थी, लेकिन यह व्यवस्था और कड़ी कर दी गई ताकि किसी प्रकार मैसिंग निकलकर स्टालिन तक पहुँचने न पाये, पर इन सबके बावजूद भी निर्धारित समय पर वह स्टालिन के समक्ष पहुँचकर मुस्कराने लगा। स्टालिन को अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा था, पर जो सामने घटित हुआ था उससे इन्कार भी कैसे कर सकता था ? भय मिश्रित स्वर में उसने मैसिंग से पूछा कि यह असम्भव कार्य तुमने किस प्रकार, किस शक्ति के सहारे किया—थोड़ा विस्तार में बताओ।

मैसिंग बोला—यह और कुछ भी नहीं, संकल्पबल का एक छोटा चमत्कार है। मैंने मात्र इतना किया कि मन को एक विचार, एक लक्ष्य के लिए एकाग्र किया तत्पश्चात् दरवाजे पर आकर सैनिक से निर्देश के स्वर में बोला 'मैं वेरिया हूँ।' ज्ञातव्य है तब वेरिया को रूसी फौज का सबसे बड़ा अधिकारी, स्टालिन के बाद सर्वशक्तिमान अधिकारी माना जाता था।

आपसे मिलने की इच्छा जाहिर करते ही सैनिकों की पहली कतार ने मुझे एक कमरे का नम्बर बताया। वहाँ पहुँचने पर मैंने पुनः अपना परिचय पहले की भाँति दिया। सुरक्षा पर तैनात सैनिकों ने एक-दूसरे दिशा वाले कमरे की ओर संकेत किया, वहाँ भी सशस्त्र सैनिकों की एक टोली मौजूद थी। जनरल वेरिया का नाम सुनकर व उन्हें प्रत्यक्ष सामने देखकर उन सैनिकों ने भी अभिवादन करते हुए आगे का रास्ता बताया। इस प्रकार सैनिकों की सात टोली पार करने के बाद निश्चित रूप से यह मालूम हुआ कि आप कहाँ हैं ? अपना पूर्व की भाँति परिचय देकर मैं यहाँ आ सकने में सफल हुआ।

मैसिंग के द्वारा स्टालिन को एक नया सूत्र हाथ लगा कि मनुष्य के भीतर कोई ऐसी अविज्ञात शक्ति विद्यमान है, जो प्रत्यक्ष सभी आयुधों से भी अधिक समर्थ है, उसके द्वारा असम्भव स्तर के कार्य भी पूरे किये जा सकते हैं। स्टालिन ने मैसिंग की अतीन्द्रिय सामर्थ्य के परीक्षण के लिए 'नामोर' नामक एक मनःशास्त्री को नियुक्त किया, जो अपने समय का मनोविज्ञान का मूर्धन्य विशेषज्ञ माना जाता था। लम्बे समय तक उसने मैसिंग का अध्ययन किया, अन्ततः उसने घोषणा की कि—'मन की अचेतन शक्ति चेतन की तुलना में अधिक सबल है, उसे उभारकर अच्छे-बुरे दोनों ही तरह के काम किए जा सकते हैं। मैसिंग के भीतर का अचेतन प्रचण्ड रूप से जाग्रत है, उसी के माध्यम से वह प्रचण्ड संकल्प की प्रेरणा देकर दूसरों को सम्मोहित कर लेता है तथा अपने प्रयोजन में सफल हो जाता है।''

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मन:शक्ति का ही है यह चमत्कार

निश्चय ही मनुष्य को ईश्वर प्रदत्त दिव्य अनुदानों में इच्छाशक्ति का स्थान सर्वोपरि है। भौतिक एवं आध्यात्मिक जीवन में सफलताओं का मूल बीज दृढ़ इच्छाशक्ति को ही माना गया है। समस्त शक्तियों का उद्‌भव प्रबल संकल्प बल के द्वारा ही होता है। 'द इमोशन्स एण्ड विल' नामक अपनी पुस्तक में ब्रिटिश मनोविज्ञानी वेन **अलेक्जेण्डर** ने कहा कि संकल्प बल की प्रचण्डता मानवी व्यक्तित्व को उच्च सोपानों पर पहुँचा देती है। उनके अनुसार मनुष्य में अनेकों कमजोरियाँ होती हैं, जिनसे पिण्ड छुड़ाने के लिए मनोबल को ऊँचा रखना एवं इच्छाशक्ति को प्रखर बनाना पड़ता है। सफलता वहीं मिलती है जहाँ इच्छाशक्ति की प्रचण्डता होती एवं तद्‌नुरूप प्रयास किये जाते हैं। प्रबल इच्छा शक्ति मस्तिष्क को अपने ढाँचे में ढाल लेती है और उसी के अनुरूप शारीरिक—मानसिक गतिविधियाँ परिचालित होने लगती हैं।

शरीर क्रिया क्षेत्र में आये दिन योगाभ्यासियों द्वारा ऐसे ही क्रिया-कौतुक प्रदर्शित किये जाते रहे हैं, जिन्हें देखने से सहज विश्वास तो नहीं होता, पर वैज्ञानिक निरीक्षण-परीक्षणों के दौरान वे बिल्कुल सही पाये गये और उनकी इस क्रिया-कुशलता को सर्वसम्मति से स्वीकारा गया। ऐसा ही एक प्रयोग-परीक्षण 'हारवर्ड इन्स्टीट्यूट फॉर साइकिक एण्ड कल्चरल रिसर्च' की ओर से डा. थेरेस ब्रोसे नामक एक फ्रांसीसी शरीरविज्ञानी के संरक्षण में आयोजित किया गया। इसके लिए वे अपने मित्र डा. माइकलोवेनोविच के साथ योग की विलक्षणताओं की शोध करने के लिए भारत आये। अपने प्रयोगों के दौरान उनने अपने सन्देहों के निवारणार्थ कई प्रकार की जाँच-पड़ताल के आधार पर जो निष्कर्ष निकाले उसमें दिल की धड़कन बिल्कुल बन्द कर लेने का दावा भी उनने सही पाया। ऐसे योगी तो काफी संख्या में मिले जो सामान्यतया ७२ बार प्रति मिनट की धड़कन को ३० तक घटा लेते हैं। ३ दिन से २८ दिन तक बिना साँस लिए, बिना अन्न-जल ग्रहण किये, बिना मल-मूत्र विसर्जन किए समाधिस्थ रहने वाले योगियों में से अधिकांश के दावे सही पाये गये। उनके संज्ञाशून्य होने की बात उनका हाथ बर्फ में दबाये रहने और आग का स्पर्श कराने पर भी परीक्षाएँ खरी उतरीं। एक योगी संकल्प बल से जिस भी अंग से कहा जाता है, उसी से पसीना निकाल सकते थे। इससे उनने पूर्वार्त्त अध्यात्म के मर्म को समझा व पाश्चात्य जगत में भारत के वास्तविक स्वरूप को प्रकट किया। यही नहीं एक बार लन्दन में एक भारतीय योगी ने सन् १९२८ में ऐसा ही एक सार्वजनिक प्रदर्शन किया था, उसने नाड़ी की गति को न्यूनतम २० और अधिकतम १२० करके डॉक्टरों को आश्चर्यचकित कर दिया। वह अपनी माँस-पेशियों और त्वचा को इतनी कड़ी कर लेता था कि सामान्य हथियारों का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता था।

पंजाब के राजा रणजीतसिंह ने अँग्रेज गवर्नर को हरिदास नामक साधु के छः महीने लम्बी भूमिगत समाधि का प्रमाण परिचय दिया था। वे साधु पूरे महीने गड्ढे में बन्द रहे, गड्ढे को बन्द करके ऊपर से फसल बो दी गई थी ताकि उसमें किसी चालाकी-हेराफेरी की गुंजाइश न रहे। छः महीन बाद समाधि खोदी गई तो वे साधु जीवित निकले और कुछ ही समय में पूर्ववत् सामान्य हो गये।

इस सम्बन्ध में 'हिस्ट्री ऑफ दि सिख्स' नामक पुस्तक में (लेखक डा. मैकग्रेगर) महाराजा रणजीत सिंह के गुरु स्वामी हरिदास द्वारा सन् १८३७-३८ में किये गये भूमिगत समाधि के प्रदर्शन का विस्तृत विवरण मिलता है। इसका निरीक्षण पंजाब में नियुक्त ब्रिटिश राज्य के तत्कालीन अन्य उच्चाधिकारियों ने भी किया था। स्वामी हरिदास को एक मजबूत सन्दूक में सीलबन्द करके जमीन में खोदे गये गहरे गड्ढे में उतार दिया गया फिर ऊपर से मिट्टी डालकर प्लास्टर से बन्द कर दिया गया। ४० दिन पश्चात् गड्ढा खोदकर सन्दूक बाहर निकालने पर स्वामीजी का शरीर निश्चेष्ट पाया। हृदय और नाड़ी में भी स्पन्दन नहीं था लेकिन सिर से शिखा वाला स्थान इतना तप्त था कि छूते ही हाथ जल जाता था। कान-नाक से मोम निकालकर पूर्व निर्दिष्ट विधि के अनुसार शरीर पर शीतल जल का छिड़काव करते ही उनका शरीर चैतन्य हो उठा तथा सभी उपस्थिति लोगों व विशिष्ट अतिथियों से उसी तरह बातचीत करने लगे जैसे समाधि में जाने से पूर्व कर रहे थे।

सन्त हरिदास की दूसरी समाधि की अवधि दस महीने थी। यह प्रदर्शन उन्होंने अदीना नगर में किया था, उस प्रसंग का संस्मरण कैप्टन ओसवर्न ने अपनी पुस्तक 'रणजीत सिंह' में दिया है। इस बार सुरक्षा, निगरानी और पहरेदारी सम्बन्धी काफी एहतियात बरते गये। जिस जमीन के भीतर स्वामीजी समाधि में थे, उस भूमि पर जौ की फसल बो दी गई ताकि भीतर से निकल भागने की धोखा-धड़ी पकड़ी जा सके लेकिन पूरी सतर्कता के बावजूद ऐसी कोई घटना नहीं घटी।

'ह्वाट मेक्स ए लाइफ सिग्नीफिकेण्ट' नामक पुस्तक में सुप्रसिद्ध मनःशास्त्री **विलियम मोक्स** ने कहा कि मनुष्य के भीतर अतिमानवी सामर्थ्यें विद्यमान हैं, जिन्हें करतलगत कर सकना हर किसी के लिए सम्भव है। इसका आरम्भिक क्रियात्मक चरण है, ढर्रे की गतिविधियों को उलटने तथा दूरदर्शितायुक्त महानता के मार्ग का अवलम्बन करने के लिए अपने संकल्पों को परिपुष्ट तथा दृढ़ करना, इच्छाशक्ति को प्रखर बनाना। संकल्प की दृढ़ता पशुवत अभ्यस्त स्वभावों से छुटकारा पाने तथा आत्म विजय प्राप्त करने का प्रमुख आधार है। इसका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सम्पादन तथा अभिवर्धन निरन्तर के अभ्यास से सम्भव है, जो जितना अधिक संकल्पवान है, वह उतना ही अधिक समर्थ है। आकांक्षा, संकल्प दृढ़ता जब सत्प्रवृत्तियों का पक्षधर बन जाती है तो अतिमानवी सामर्थ्य हस्तगत करने का मार्ग क्रमशः प्रशस्त होने लगता है।

संसार में कितने ही महामानव हुए हैं, जिन्होंने अपने प्रचण्ड संकल्प बल के सहारे असम्भव को भी सम्भव कर दिखाया। दृढ़ इच्छाशक्ति का प्रयोग कर कितने ही भटके हुये लोगों ने सन्मार्गगामी बनाया है।

गुरु गोरखनाथ से एक कापालिक बहुत चिढ़ा हुआ था, एक दिन आमना-सामना हो गया। कापालिक के हाथ में कुल्हाड़ी थी, उसे ही लेकर वह तेजी से गोरखनाथ को मारने दौड़ा पर अभी कुल दस कदम ही चला था कि वह जैसे का तैसा खड़ा रह गया। कुल्हाड़ी वाला हाथ ऊपर और दूसरा हाथ पेट में लगाकर हाय-हाय चिल्लाने लगा—वह इस स्थिति में भी नहीं था कि इधर-उधर हिलडुल भी सके।

मनस्वी महापुरुषों में संकल्प बल का यही चुम्बकत्व काम करता है, वे इसे इस स्तर तक विकसित कर लेते हैं कि जहाँ भी जिस भी क्षेत्र में प्रवेश करते हैं वहीं अपने प्रभाव क्षेत्र से अनेकों को लाभ देते देखे जाते हैं।

ईसामसीह, मुहम्मद, जरथस्तु आदि धार्मिक क्षेत्र के मनस्वी ही थे, जिन्होंने लोगों को अभीष्ट पथ पर चलने के लिए विवश किया। उपदेशक लोग आकर्षक प्रवचन देते रहते हैं, पर उनकी कला की प्रशंसा करने वाले भी उस उपदेश पर चलने के लिए तैयार नहीं होते। इसमें उनके प्रतिपाद्य विषय का दोष नहीं, उस मनोबल की कमी ही कारण है, जिसके बिना सुनने वाले के मस्तिष्क में हलचल उत्पन्न किया जा सकना सम्भव न हो सका। नारदजी जैसे मनस्वी ही अपने स्वल्प पुरुषार्थ से लोगों की जीवनधारा बदल सकते थे। वाल्मीकि, ध्रुव, प्रह्लाद सुकन्या आदि कितने ही आदर्शवादी उन्हीं की प्रेरणा भरी प्रकाश किरण पाकर आगे बढ़े थे।

समर्थ गुरु रामदास, रामकृष्ण परमहंस, विवेकानन्द, गुरुगोविन्दसिंह, दयानन्द, कबीर आदि मनस्वी महामानवों ने अपने समय के लोगों को उपयोगी प्रेरणाएँ दी थीं और अभीष्ट पथ पर चलने के लिए साहस उत्पन्न किया था। गाँधीजी की प्रेरणा से स्वतन्त्रता संग्राम में अगणित व्यक्ति त्याग-बलिदान करने के लिए किस उत्साह के साथ आगे आये ? यह अभी पिछले दिनों की घटना है। वस्तुतः ऐसे चमत्कार महामानवों के व्यक्तित्व में घनीभूत इच्छाशक्ति के कारण ही सम्भव हो पाते हैं।

मनोबल की शक्ति : एक दैवी विभूति

साधनों के आधार पर सफलताएँ मिलती हैं। साधनों को ही बल भी कहते हैं। प्रत्यक्ष बलों में धनबल, बाहुबल, शस्त्रबल, बुद्धिबल आदि प्रमुख हैं, पर इन सबसे बढ़कर है मनोबल। मनोबल का तात्पर्य शिक्षा की कल्पना, बहुज्ञता, अनुभवशीलता से नहीं वरन् दृढ़ निश्चय से है। यह यदि आदर्शों के निमित्त प्रयोग किया जाता है तो उसी को संकल्प बल भी कहते हैं। जिसकी संकल्प शक्ति जितनी बलवान है, उसे उतने ही स्तर का बलवान कहना चाहिए।

किसी-किसी में यह शक्ति जन्मजात भी होती है, पर यह आवश्यक नहीं। उसे अभ्यास से बढ़ाया जा सकता है। छोटे कामों में हाथ डालना और उन्हें पूरा करके ही चैन लेना, यह मनोबल बढ़ाने का तरीका है। एक के बाद दूसरा काम हाथ में लेना और उसकी कठिनाइयों से निपटना, यही है वह मार्ग जिस पर चलते हुए मनोबल अर्जित किया जा सकता है। यह विभूति जिसके हाथ लग गयी समझना चाहिए कि महामानव बनने का सूत्र उसके हाथ लग गया।

प्रायः देखा जाता है कि बहुत साधन होते हुए भी लोग साधारण से काम भी नहीं कर पाते। इनके विचार डगमगाते रहते हैं। जो काम हाथ में लिया है वह उचित भी है या नहीं, अपने से बन पड़ेगा या नहीं ऐसे विकल्प मन में उठते रहते हैं, कच्चा मन एक को छोड़ दूसरा काम हाथ में लेता है। कुछ दिन बाद दूसरा भी हाथ से छूट जाता है और तीसरे को अपनाते हैं। इस तरह अनिश्चय की दशा में शक्ति का अपव्यय होता रहता है। दिशा निश्चित न होने पर कुछ दूर पूर्व को, कुछ उत्तर-पश्चिम-दक्षिण को चलने वाले दिन भर घोर परिश्रम करते रहने पर भी थकान सिर पर ओढ़ते हैं अच्छा यही है कि पहले ऊँच-नीच के हर पहलू पर विचार कर लिया जाय। बुद्धिपूर्वक जो निश्चय निकले उसे दृढ़तापूर्वक अपनाया जाय।

काम देखने को शरीर से किया जाता प्रतीत होता है, पर वास्तविकता यह है कि वह मन में होता है। मनोयोग लगा देने से योजना के सब पक्ष सामने आते हैं अन्यथा बाल कल्पनाएँ मन में उठती रहती हैं और पानी के बबूले की तरह अस्त-व्यस्त होती रहती है। बच्चे सारे दिन उछल-कूद करते रहते हैं। इनमें से हर एक क्रिया के पीछे एक उद्देश्य होता है, पर ये उद्देश्य ठहरने नहीं पाते। एक के बाद दूसरी इच्छा सामने आ जाती है और पिछली को छोड़कर अगली में हाथ डालते हैं। इस प्रकार दिन भर में ढेरों मनोरथ सामने आते हैं और वे सभी आधे-अधूरे रहकर अस्त-व्यस्त हो जाते हैं। इसी को बाल बुद्धि कहते हैं। इसी प्रकार की राजनीति कितने ही बड़ी आयु के व्यक्ति भी अपनाते देखे जाते हैं। फलतः उनमें से एक भी पूरा नहीं हो पाता।

काम को पूरा करने के लिए आवश्यक है कि योजना सर्वांगपूर्ण बने। उसके लाभ-हानि पर सांगोपांग विचार किया जाय। साधन जुटाने के लिए जो करना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पड़ेगा, उसका मानचित्र मस्तिष्क में रहना चाहिए। जो कार्य वर्तमान साधनों के सहारे किया जा सकना सम्भव है, उसमें हाथ डाला जाय। भविष्य में जितने साधन बढ़ते जायँ, उतना काम बढ़ाता चला जाय। साधन कम पड़ें तो काम की रूपरेखा में काट-छाँट करली जाय। यह सब तभी बन पड़ता है जब प्रस्तुत योजना पर मनोयोग एकत्रित किया जाय। अधूरे चिन्तन से न पूरी रूपरेखा समझ में आती है और न उसका क्रम बनाने का तारतम्य ठीक से बनता है। दिलचस्पी जितनी जिस काम में रहेगी वह कार्य ठीक तरह बन पड़ेगा। साधनों का नियोजन भी तभी होता है, जब पूरा मन उसमें लग पा रहा है अन्यथा उपयुक्त साधन होते हुए भी उनका उपयोग ठीक तरह नही हो पाता। आधे-अधूरे मन से किए हुए काम सदा अधूरे रहे हैं।

मनोबल की संजीवनी संकल्प शक्ति का कल्पवृक्ष

निश्चय ही मानव की संकल्प शक्ति में अपरिमित सामर्थ्य है। घोर से घोर प्रतिकूलताओं के बीच भी यदि मनोबल बना रहे, तो व्यक्ति उसी के सहारे अपनी नैया पार लगा सकता है। चूँकि यह सामर्थ्य अधिकांश व्यक्तियों में प्रसुप्त पड़ी रहती है और दिखाई नहीं देती और उनका उपयोग नहीं करते। ऐसे अनेक घटनाक्रम हैं, जिनमें व्यक्ति मरणासन्न स्थिति में पहुँचकर भी वापस लौट आये व किसी कारणवश कोई विकलांगता भी रह गयी हो तो उस दुर्भाग्य को भी वरदान मान लिया। कुछ ऐसी ही घटनाएँ यहाँ वर्णित हैं।

न्यूजर्सी, अमेरिका का एक ट्रैक्टर चालक ऐडीरोबिन्सन अपनी १९००० किलोग्राम भारी गाड़ी को लेकर राजमार्ग पर चला जा रहा था। १२ फरवरी, ७१ सवेरे की बात है, सामने से आती हुई एक कार फिसली और सड़क पर लुढ़क गई। उसने ट्रैक्टर को रोका भी—बैलेंस सधा नहीं। वह पुल के जंगलों को तोड़कर बारह मीटर नीचे गिरा और गाटरों में फँस गया, उसका सिर बुरी तरह फट गया। खून की धारा बह रही थी और मॉस लटक रहा था, तो भी वह घबराया नहीं, किसी प्रकार अपने को सँभाला और निकाला। पंजों के सहारे रेंगता हुआ बाहर आया और पास के अस्पताल में ज्यों-त्यों करके जा पहुँचा। डाक्टरों ने अधिक ध्यान न दिया। ज्यों की त्यों मरहम पट्टी करके घर वापस भेज दिया। इतने पर भी उसका दर्द कम न हुआ।

अस्पताल से फिर बुलाबा आया। दुबारा मुआयना हुआ। उसकी पसलियाँ टूटी मिलीं। खोपड़ी और कूल्हे की हड्डियों में भी भारी टूट-फूट थी। इलाज चलता रहा, पर स्वास्थ्य दिनों-दिन गिरता ही गया और वह घर लौट आया।

मस्तिष्क की गहराई तक में आघात पहुँचे थे। धीरे-धीरे उसकी नेत्र ज्योति चली गयी। अब वह क्या करे? सोचने लगा उसे अन्धों के स्कूल में भर्ती होना चाहिए। सो उसने स्पर्श लिपि के सहारे कुछ पढ़ना-लिखना भी सीख लिया। मन बहलने लगा।

अब नई मुसीबत खड़ी हुई। दाहिने हाथ ने भी जवाब दे दिया। उसे लकवा जैसा मार गया। बात यहीं समाप्त नहीं हुई, उसके कान भी बहरे हो गये। अब उसने एक कान में लगने वाली मशीन का प्रबन्ध किया इससे बहुत जोर से बोलने पर वह मतलब की बात सुन लेता था। इन परिस्थितियों में घिरा रहने पर भी वह हताश नहीं हुआ। कुशल पूछने वालों से इतना ही कहता—"ईश्वर को धन्यवाद है, संसार में अनेक संकटग्रस्तों की अपेक्षा अभी भी मैं अच्छा हूँ।"

बेकार बैठा-बैठा क्या करे ? काम के बिना चैन न पड़ता था। सो उसने पत्नी के काम-काज में हाथ बँटाना आरम्भ कर दिया। इससे पत्नी का समय बचा और वह उतनी देर में कुछ कमा लेने का प्रयत्न करती। सामने पार्क जैसा मैदान था, उसमें घास काटने का काम उसने प्राप्त किया। उसके लिए उसने एक तरकीब निकाली। बीच-बीच मे खूँटा गाड़ा, उसमें रस्सी लपेटी, उसे थामने से यह पता चलता रहे कि कितने घेरे की घास कट रही है। एक घेरा साफ हो जाता तो रस्सी को कुछ और खोलकर घेरा बढ़ा लेता और उसमें घास काटने लगता। इस प्रकार पूरे पार्क की घास मशीन से काटने का अभ्यास उसे हो गया। काम से लगे रहने पर व्यर्थ की चिन्ताओं से बचा रहता और थक जाने पर गहरी नींद सोता।

अब उसने एक नया शौक अपनाया। चिड़ियों की बोली की नकल करना। इस कारण कितने ही पक्षी उसके पास दौड़ आते और हाथ पर रखा भोजन निर्भय होकर खाते। एक अच्छा मनोरंजन हाथ लग गया।

एक दिन कोई मुर्गियों से लदा ट्रक पास में ही उलट गया। उसकी एक घायल मुर्गी रोबिन्सन के घर में घुस गई। टाँगें कट जाने पर भी वह कुछ दिन में अच्छी हो गई और प्यार-दुलार के वातावरण में सहेली बन गई। बिना पैरों के भी किस तरह चला जा सकता है ? यह कला सिखाई गई तो मुर्गी ने सीख भी ली। दोनों की खूब पटती। नाम रख लिया—"टुक-टुक" ऐसा ही कुछ वह बोलती जो थी। दर्द उसके सीने में अभी-भी होता रहता था, पर भगवान को यह धन्यवाद देता रहता कि "मैं जीवित तो हूँ।"

४ जून सन्, १९८० की बात है। शाम होते-होते घटा उठी और तेज वर्षा होने लगी। मुर्गी को पास न देखकर वह उसके किसी संकट में फँस जाने की आशंका से ढूँढ़ने घर से बाहर निकला और टुक-टुक की आवाज

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लगाकर उसे खोजने का प्रयत्न करने लगा। इस प्रयास में वह भीगता भी जा रहा था।

अचानक आसमान से बिजली गिरी। दिल दहलाने वाली भयंकर गर्जना हुई। चौंधियाने वाले प्रकाश से वह सारा क्षेत्र भर गया। रोबिन्सन को भयानक झटका लगा। वह धड़ाम से गिरा और बेहोश हो गया। आधा घण्टे में होश आया, तो प्यास से गला सूख रहा था। सारा शरीर काँप रहा था। पड़ौसी का घर सामने था, वह उसी में घुस गया और माँगकर कितने ही गिलास पानी पीता चला गया। प्यास अभी भी शान्त नहीं हो रही थी, पड़ौसियों ने उसे घर पहुँचा दिया।

आश्चर्य यह कि उसकी दृष्टि लौट आई। सामने दीवार पर टँगे पोस्टरों को वह पढ़कर सुनाने लगा। पत्नी ने घड़ी का समय बताने को कहा तो उसने देखकर वह भी सही बता दिया।

कान में लगने वाली मशीन भी इस झटके में कहीं गिर गई थी, पर अब वह बिना उसके ही सुनने लगा। पत्नी से सामान्यकाल की तरह वार्तालाप करते हुए उसकी प्रसन्नता का ठिकाना न था। सीने का दर्द भी बन्द था और लँगड़ाकर चलने में सहायता करने वाली छड़ी की भी आवश्यकता नहीं रह गई थी।

दूसरे दिन रविवार था। वह गिरजाघर बिना किसी सहायता के पत्नी के साथ पहुँचा और सामान्य लोगों की तरह बैठा तो उपस्थिति लोगों को आश्चर्य से चकित रह जाना पड़ा।

चर्चा दूर-दूर तक पहुँची। टेलीविजन पर उसने अपना विवरण सुनाया और कहा—"मुसीबत के दिनों में मैंने उतना जाना जितना कि पिछली पूरी जिन्दगी में भी नहीं सीख पाया था। मैंने कभी भी हिम्मत और उम्मीद नहीं छोड़ी।" यह घटना मानव की अपराजेय सामर्थ्य, उसकी संकल्प शक्ति का ही सत्यापन करती है और सिद्ध करती है कि कोई भी व्यक्ति प्रतिकूलताओं से जूझकर परिस्थितियों को अपने अनुकूल बना सकता है।

सन्तुलन खोया नहीं

हान्स ह्यूगर एक टैंकर ड्राइवर था और प्रायः दक्षिण-पश्चिम जर्मनी के एक छोटे शहर टेनिनजेन से स्यूलिन एल्युमिनियम फैक्ट्री में एसीटोन लाया करता था। वह अपने इस कार्य में इतना दक्ष हो चुका था कि उसे इस काम में कोई डर-भय का एहसास नहीं होता और इसे भी अपना रुटीन कार्य मानता।

सितम्बर, १९६८ के दिन भी उसने छः हजार गैलन एसीटोन युक्त ३५ फुट लम्बे विशाल टैंकर को लेकर गन्तव्य के लिए प्रयाण किया। रास्ते में किसी प्रकार का कोई अशुभ नहीं घटा, स्यूलिन पहुँचकर उसने टैंकरों को खाली करना आरम्भ किया। एक घण्टे के भीतर टैंकर ह्यूगर ने सुरक्षित खाली कर लिये, छठवें टैंकर का एसीटोन जब भूमिगत स्टोरेज टैंक में डाल रहा था, तभी अचानक न जाने कैसे उस टैंकर में आग लग गई और उससे पाँच फुट लम्बी ज्वाला निकलने लगी। इस समय तक छः बज चुके थे, फैक्ट्री की दिवा पाली समाप्त हो चुकी थी। लोग अपनी ड्यूटी पूरी कर बाहर आ रहे थे और नयी पाली के कर्मचारी अन्दर प्रवेश कर रहे थे, बाहर इनका भारी जमघट था।

ह्यूमर ने सोचा कि यदि यह आग हॉज पाइप के माध्यम से किसी प्रकार स्टोरेज टैंक में पहुँच गई तो क्षण में ही पूरी फैक्ट्री और कर्मचारी राख के ढेर में बदल जायेंगे। फैक्ट्री के पास-पड़ौस के गाँवों को जो हानि उठानी पड़ेगी सो अलग। ज्ञातव्य है कि एसीटोन एक कार्बनिक यौगिक है, जो भारी ज्वलनशील होता है। अस्तु उसने निर्णय किया कि इस भयंकर दुर्घटना को वह घटित नहीं होने देगा और अपना प्राणोत्सर्ग करके भी हजारों जानों की रक्षा करेगा। यह सब विचार क्षण मात्र में ही ह्यूगर के दिमाग में कौंध गये। एक पल की भी देरी करना उसने दुर्घटना को आमन्त्रण करने जैसा ही समझा। अतः तत्क्षण इस दिशा में क्रियाशील हो गया, धधकती लपटों में उसने हाथ डाला और स्टोरेज टैंक का बाल्व बन्द कर दिया, तत्पश्चात् उससे जुड़े हौज पाइप को पृथक् किया। हौज पाइप के खुलते ही आग का एक फब्बारा छूटा और देखते-देखते टैंकर के पिछले भाग को बुरी तरह अपने गिरफ्त में ले लिया। ह्यूगर ने अविलम्ब ट्रक चालू की और धधकते टैंकर को किसी निर्जन सुरक्षित स्थान में छोड़ देने के लिए चल पड़ा। डेढ़ घण्टे पहले वह जिस रास्ते से आया था, उसी से लौट रहा था किन्तु वह इस बात से आश्वस्त था कि उसने शहर का पुल पार लिया था क्योंकि उसके बाद शहर की जनसंख्या विरल होती चली गई थी, मगर दूसरे ही क्षण उसकी नजर टैंकर के पिछले हिस्से पर पड़ी तो वह गहरे शोक में डूब गया। लपटें निरन्तर बढ़ती ही जा रही थीं और अब उसने दस फुट की ऊँचाई प्राप्त कर ली थी।

ह्यूमर ने ट्रक की गति बढ़ा दी। गति बढ़ते ही ज्वाला नीची और चपटी हो गई, दमकल के आने तक किसी सम्भावित दुर्घटना से बचने के लिए उसने गति तेज रखना ही उचित समझा क्योंकि अभी उसे लगातार बढ़ना था। अब तक उसे कोई ऐसा उपयुक्त स्थान मिल नहीं पाया था, जहाँ वह ट्रक को छोड़ सके—पास-पड़ौस के क्षेत्र की आबादी अभी भी घनी थी।

कुछ आगे बढ़ा तो एक रेल रोड क्रासिंग था, जहाँ से एक ट्रक गुजर रहा था। ह्यूमर का टैंकर उसके पिछले डिब्बे से टकराते-टकराते बचा।

कुछ और आगे बढ़ा तो शाम की भीड़ से यातायात पूरा जाम था, उसे अब प्रत्यक्ष मौत सामने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिखाई पड़ने लगी क्योंकि क्षण भर के लिए रुकने से आग कैबिन में पहुँच सकती थी मगर वह लाचार था। अब निकलने के सारे रास्ते बन्द थे, रोड की एक ओर गहरी खाई थी तो दूसरी ओर भीड़भाड़ युक्त शहर जायें तो किधर ? इस वक्त उसे अपनी जान से अधिक प्यारी और कीमती सैकड़ों निरीह लोगों की जान लग रही थी। चिन्ता इसी बात की सता रही थी कि वह इस भयंकर अग्निकाण्ड से धन-जन की रक्षा कैसे करें ? किन्तु इस सयम ह्यूमर मजबूर था, विवशता में गाड़ी रोकनी पड़ी। गाड़ी रुकते ही ज्वाला दुर्धर्ष बनी और ह्यूमर को निगलने की हर चन्द कोशिश करने लगी, पर ह्यूमर अपने दीमक का सा धैर्य का परिचय देता रहा। इस बीच वह लगातार हॉर्न बजाता रहा। अल्प विराम के बाद मैदानी भाग की ओर जैसे ही भीड़ कुछ छँटी उसने उसी ओर ट्रक दौड़ा दी। गाड़ी मैदानी भाग से होते हुए शहर से दूर देहात की ओर भागने लगी। ह्यूमर अभी भी अपने इस निश्चय पर दृढ़ था कि भले ही इस भाग-दौड़ में उसे अपने प्राणों की आहुति देनी पड़े मगर जनहानि को वह हर हालत में रोकेगा और इसी लक्ष्य-पूर्ति के लिए वह अपनी गाड़ी सड़क पर किसी जनहीन स्थान की तलाश में भगाये जा रहा था कि उसके मार्ग में किसी प्रकार का अवरोध न आये। ट्रक निरन्तर दौड़ती जा रही थी, परन्तु ह्यूमर को सड़क के किसी ओर कोई ऐसा स्थान नहीं मिल पा रहा था जहाँ से वह निकलकर किसी मैदानी गाँव में प्रवेश कर सके। रोड के दोनों ओर गहरे खड्ड थे, ऐसी स्थिति में संतुलन का जरा भी बिगड़ना ह्यूमर के लिए मौत का बुलावा हो सकता था। इसी बीच वारिश शुरू हो गई, इससे अग्नि शांत तो हुई नहीं उल्टे सड़क फिसलनयुक्त हो गई, इससे ह्यूमर की परेशानी और बढ़ गई। हल्का ब्रेक भी उसकी जान खतरे में डाल सकता था, मगर इसकी परवाह किये बिना वह लगातार बढ़ता ही जा रहा था, अभी भी कोई उपयुक्त स्थान उसे मिल नहीं पाया था।

अब वह एक ऐसे स्थान से गुजर रहा था, जहाँ ट्रैफिक बहुत विरल था मगर दुर्भाग्य था कि यहाँ पर उसके पीछे कारों की एक टुकड़ी भागी चली आ रही थी मानो पुच्छल तारे की पूँछनुमा ह्यूमर ट्रक से वे सम्मोहित हो खिंचे चले आ रहे हों। इस स्थिति में ट्रक को रोकना अथवा गति कम करना कारों के लिए खतरनाक हो सकता था। अतः वह गाड़ी दौड़ाता ही रहा। १२ मील तक वह उसी गति से बढ़ता रहा तब जाकर उन कारों से पीछा छूटा।

अब तक उसका दाहिना हाथ स्टियरिंग व्हील को पकड़े-पकड़े अकड़ चुका था, बाँये हाथ की अँगुलियाँ हॉर्न दबाते-दबाते सुन्न पड़ चुकी थीं, आगे काम करने में सारे अंग-अवयव इन्कार कर रहे थे। पसीने से वह तर-वतर हुआ जा रहा था। उम्मीदें समाप्त हो गई थीं, वह निराश हो चला था कि तभी उसे अपनी गाड़ी दर्पण में नीली रोशनी खुलती-बुझती दिखाई पड़ी। दो फायर इंजिन उसके पीछे भागे चले आ रहे थे। ह्यूमर को कुछ आशा बँधी, दमकलों के इशारे पर उसने गति कम कर दी। एक दमकल ने आगे बढ़कर गाड़ी रोक दी, फलतः ह्यूमर को भी ब्रेक लगाना पड़ा। एक झटके से गाड़ी रुकी, वह नीचे कूदा और 'एसींटोन' चिल्लाता हुआ भागा। दमकल सावधान हो गये, उनने अग्निशामक पाउडर और हजारों गैलन पानी की सहायता से बीस मिनट के कठिन संघर्ष के उपरान्त उस पर काबू पाया। आग बुझ चुकी थी और रक्ततप्त टैंकर ठण्डा हो गया था।

ह्यूमर इस अग्नि परीक्षा में सफल रहा किन्तु डेढ़ घण्टे के इस जीवन-मौत के झूले में झूलते हुए उसकी सारी शक्ति चुक चुकी थी। वह पूरी तरह बेहोश हो गया था, तत्काल उसे अस्पताल ले जाया गया—जहाँ कुछ दिनों के उपचार के बाद ही वह स्वस्थ हो पाया।

जिजीविषा की चमत्कारी शक्ति

एक घटना १९वीं सदी के आरम्भ की है। लन्दन की टेम्स नदी से 'जूलियन' नामक एक जहाज बैंकाक के लिए रवाना हुआ। उसमें पत्थर का कोयला एवं अन्य सामान भरे हुए थे। जहाज अभी अपनी यात्रा का एक घण्टा भी पूरा नहीं कर पाया था कि मुश्किल में फँस गया। उसके निचले तल में रखे कोयले में जाने कैसे आग लग गयी ? आरम्भिक दौर में इसकी जानकारी नहीं मिल सकी, अतः नाविकों द्वारा तत्काल कोई उपचार भी नहीं किया जा सका। ऐसी स्थिति में आग अन्दर ही अन्दर सुलगती और फैलती रही, जब इसका विस्तार बढ़ा तो लपटें भी बाहर निकलने लगीं। तभी कप्तान को इस अग्निकाण्ड की जानकारी मिल पाई किन्तु अब तक आग निचले तल में बुरी तरह फैल चुकी थी। कप्तान को चिन्ता हुई कि यदि आग को जल्दी ही नियन्त्रित नहीं किया जा सका तो जहाज के साथ उसके कीमती सामान भी जलकर नष्ट हो जायेंगे अतः सबने मिलकर उसे बुझाने का प्रयास आरम्भ किया। उसमें पानी डाला जाने लगा किन्तु पानी डालने से उसकी भाप और धुँए से नाविकों का दम घुटने लगता, अस्तु यह उपक्रम भी देर तक नहीं चल सका और बीच में ही छोड़ना पड़ा। इस समय तक जहाज अन्ध महासागर में प्रवेश कर चुका था। यह सागर अपने भयंकर तूफानों के लिए प्रसिद्ध है। नाविकों को अब तक सिर्फ अग्नि की भयंकरता का ही सामना करना पड़ रहा था, पर इस सागर में आते ही उन पर एक साथ दो-दो विपत्तियाँ टूट पड़ीं। आग सर्वनाश पर तुली थी तो सागर की तूफानी लहरें उन्हें लील जाना चाहती थीं। बचें तो किससे और कैसे ? हर पल उनके लिए परीक्षा की घड़ी सिद्ध हो रही थी।

अनुभवी बूढ़े कप्तान ने सोचा, यदि ऐसे वक्त मनोबल खोया तो सभी की जान चली जायेगी, अतः वह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्य साथियों को ढाढ़स बँधाता रहा और बचाव अभियान भी जारी रखा। लहरें इतनी ऊँची और तेज हो रही थीं कि अब पानी भी जहाज में प्रवेश करने लगा। यह देख नाविकों ने पम्प चालू कर दिया और उससे बराबर पानी निकलता रहा। इधर आग भी दुधर्ष बनती जा रही थी, इसकी प्रचण्डता से लंगर और मसरूल समुद्र में गिर गये। जंजीरें पिघल गयीं और अब डेक भी जलने लगा था, यदि वे चाहते तो लाइफ बेल्ट और छोटी नौकाओं के सहारे अपनी जान बचा सकते थे, मगर अभी भी उन्हें आशा थी कि शायद वे अपने प्रयत्नों से जहाज को पूरी तरह नष्ट होने से बचा सकें और सामानों की रक्षा कर सकें, अतः वे अपने अभियान में जुटे रहे परन्तु उसका कोई प्रतिफल निकलता दिखाई नहीं पड़ रहा था। तभी सामने से एक स्टीमर आते दीखा। तट निकट ही था। इस समय तक इस विकट स्थिति में भी वह लगातार आगे बढ़ता ही रहा था और अब तक बैंकाक तट के काफी निकट आ चुका था। स्टीमर के पहुँचने पर दोनों के कप्तानों ने सलाह की कि जहाज के सभी लोग स्टीमर में आ जायँ और उसे रस्से द्वारा स्टीमर के सहारे बाँधकर बन्दरगाह तक पहुँचाया जाय। ऐसा ही किया गया, दो घण्टे की कठिन यात्रा के बाद जहाज बैंकाक बन्दरगाह पहुँचा, जहाँ अग्निशमन दस्ते ने एक घण्टे के भीतर आग पर काबू पा लिया तथा उसमें लदे सामानों को सुरक्षित उतार लिया गया।

ऐसा वस्तुतः कप्तान और नाविकों के मनोबल और जिजीविषा के कारण सम्भव हो सका। यदि उनमें मनः सन्तुलन नहीं होता, जीवन बचाने की चिन्ता होती तो शायद वे अपने जहाज को खो देते एवं मनोबल गँवा दिया होता तो स्वयं भी समुद्र की लहरों में समा गये होते।

सन् १९६५ की एक घटना है। अमेरिका का एक हवाई जहाज समुद्र पर उड़ते हुए आग लगने के कारण जल गया। उसका पायलट समुद्र में कूद पड़ा। इतनी ऊँचाई से कूदने और समुद्र के जल पर गिरने के कारण उसे चोट भी आयी फिर भी बिना घबराये वह तैरता रहा और बुरी तरह चोट खाये शरीर को खींचता-खींचता ४० घण्टे तक अविराम तैरते हुए किनारे पहुँचा। किनारे पहुँचने पर कुछ लोगों ने उसे देखा तो अस्पताल में भरती कराने ले गये। इतनी अस्वस्थ और आहत दशा में जब लोग उसे इमरजेंसी वार्ड में सर्जरी हेतु ले गये तो जैसे ही सुरक्षा के प्रति उसका मन आश्वस्त हुआ, शरीर की जाग्रत और सक्रिय शक्तियाँ पूर्व स्थिति में जा पहुँची और निमोनिया, थकान, चोटों के दर्द और भूख के कारण वह बेहोश हो गया। उसकी हालत शारीरिक दृष्टि से इतनी गम्भीर थी कि डाक्टरों ने उसके अब तक बचे रहने पर आश्चर्य व्यक्त किया। पाइलट जब वैसी परिस्थितियों में नहीं मरा तो अस्पताल में भर्ती हो जाने पर तो उसकी मृत्यु हो जाने का कोई प्रश्न ही नहीं था। वह जीवित भी रहा, स्वस्थ होने पर पुनः उड़ान भरने लगा।

साहस ही बनाता है मनुष्य को अपराजेय

सामान्य मनुष्य सदैव साधन और अवसर की तलाश करते हैं, किन्तु जो संकल्प और साहस के धनी हैं, वे ऐसे कदम उठाते हैं जिससे विदित होता है कि इनके प्रयासों के पीछे न जाने कितनों का बाहुबल, बुद्धिबल और सहयोग काम कर रहा है। अनेकों ऐतिहासिक प्रसंग एवं आख्यान इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

हनुमान बाल ब्रह्मचारी थे। उनका पराक्रम सर्वविदित है। पर्वत उठाने, समुद्र लाँघने, लंका जलाने जैसे असम्भव कार्य जो उनने सम्पन्न कर दिखाये, मात्र मिथक नहीं हैं। लंका दहन के उपरान्त वे ताप मिटाने के लिए समुद्र में कूदे, तो उनके पसीने को मछली निगल गयी। कथा के अनुसार उस पसीने की शक्ति वह मछली हजम नहीं कर पाई और उससे मकरध्वज की उत्पत्ति हुई। हनुमान से जुड़ी पौराणिक कथाएँ, ग्रीक साहित्य में हरक्यूलिस से जुड़ी कथाएँ एवं कृष्ण के अग्रज बलराम के शौर्य-पराक्रम की गाथायें उस अपरिमित पराक्रम का परिचय देती हैं, जो मानवी काया में असीम संभावनाओं के रूप में रोम-रोम में कूट-कूटकर भरा है। महर्षि दयानन्द ने अपने शक्ति बल से संयम की महत्ता जानने के उत्सुक एक जमींदार की घोड़ों से जुती बग्घी को एक हाथ से रोककर बता दिया था कि विभूतियों का सही उपयोग किया जाय, असंयम के छिद्रों से बहाया न जाय तो मनुष्य की शक्ति कितनी प्रचण्ड हो सकती है।

इतिहास में ऐसे अनेकानेक व्यक्ति हुए हैं, जिन्होंने असाधारण साहसिकता का प्रदर्शन कर जीवनभर योद्धा की तरह जीवन जिया। परिस्थितियाँ उन्हें कभी भी झुका नहीं सकीं।

साहस कहीं आसमान से नहीं बरसता। यह तो सदैव अन्तःकरण में विद्यमान है। उसे समय आने पर जगाने भर की आवश्यकता होती है। सूझ-बूझ, दूरदर्शिता, प्रत्युत्पन्नमति साहसियों को उचित सम्बल देती व श्रेय-सम्मान का अधिकारी बनाती है। फ्रांस के जनरल डुवेले की सेना एक बार किले में घिर गई। राशन भी समाप्त हो गया। शत्रु के चालीस हजार सैनिकों को चकमा दिया गया। रात के सघन कुहासे में घोड़ों पर आटे के बोरे इस तरह बाँधे गये कि दैत्याकार सैनिक लगने लगे। साथ ही जानवरों के सींगों पर मशाल बाँधकर रातभर उनसे किले के बुर्ज पर गश्त लगवाई गई। इतना अपार सेना बल देखकर उनसे लड़ने की शत्रु सैनिकों की हिम्मत न पड़ी और वे भाग खड़े हुए। हार-जीत में बदल गई।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

संकल्प शक्ति के अद्‌भुत चमत्कार

हमारे संकल्पों का प्रवाह

हमारे स्पष्ट संकल्पों के विशेष आकार होते हैं। उनकी बाह्य रेखा स्पष्ट और तीव्र होती है। वे नाना प्रकार के रंगों सहित नाना प्रकार के रूपों में प्रकट होते हैं। ये सब रूप संकल्पों के प्रेरित होने से कम्पन या थर्राहट से बनते हैं, जैसे—स्थूल लोक में ध्वनि या राग की थर्राहट से उत्पन्न होते हैं।

प्रकृति में अनेक विचित्रताएँ होने के साथ-साथ कुछ नियमों का सदा आदर और पालन होता है। वह अपने मित्र लोकों में कार्य करने की उन्हीं रीतियों को बराबर दुहराती है। अर्थात् प्रकृति के कार्यों में पुनरावृत्ति होती रहती है। इसलिए ध्वनि का आकार यहाँ संकल्प के आकार के सदृश है।

संकल्प चिरस्थायी होते हैं और सूक्ष्म जगत में इनका बड़ा प्रभाव पड़ता है। ये मनुष्य के मन पर अपना अधिकार जमाकर उन्हें आकर्षित करते हैं। एक सशक्त संकल्प वाले मनुष्य के मस्तिष्क से दूसरे मनुष्य के मन में कम्पन द्वारा विचारधाराएँ जाती हैं। वे अपना प्रभाव वैसे ही डालती हैं, जैसे आजकल रेडियो, बेतार के तार द्वारा समाचार भेजते हैं या दूर के किसी देश का दृश्य बिना तार द्वारा हम देख सकते हैं। यह आदान-प्रदान गुप्त रीति से होता रहता है। हमें मालूम नहीं पड़ता कि हमारा मन एक प्रकार से बेतार के तार का रेडियो स्टेशन है।

साधारण लोगों का मन विशेष विकसित नहीं रहता, किन्तु यदि हम मन की शक्तियों को पहिचानें और उनका उपयोग करना प्रारम्भ करें, और धीरे-धीरे उन शक्तियों को विकसित करें, तो हम संसार में बड़ा आश्चर्यजनक कार्य कर सकते हैं। एक साधक अपनी इच्छा के अनुसार संकल्पों को दूसरे मनुष्यों तक, जिनके पास वह भेजना चाहे, भेज सकता है। साधक के संकल्प की शक्ति जितनी कम या अधिक होगी, उसी के अनुसार दूसरे मनुष्य पर उसके विचारों का न्यूनाधिक प्रभाव पड़ेगा। इसकी सफलता मनुष्य की मानसिक शक्ति की दृढ़ता, तीव्रता एवं विश्वास पर निर्भर है।

आपने स्वयं अनुभव किया होगा कि एक मनुष्य के क्रोध की भड़क से दूसरे लोग शीघ्र डर जाते हैं। कारण यह है कि क्रोध का आवेश होने से बहुत ही विशेष आकार का लाल रंग का अत्यन्त क्षणिक चमत्कार होता है। चिरस्थायी क्रोध से एक और भी विशेष प्रकार का रूप उत्पन्न होता है, जो लाल रंग का होता है और नोकदार होता है। श्रोताओं पर या जिस पर क्रोध किया जाता है, उस पर उसका वैसा ही प्रभाव होकर कष्ट पहुँचता है, जैसा भाला, बरछी मारने से या काँटा चुभने से होता है।

प्रेम अपने दिव्य गुणानुसार बड़े सुन्दर और मनोहर रंग के आकार उत्पन्न करता है। इसमें सब भाँति के अरुण रंगों से लेकर उत्तम और हल्के गुलाबी रंग उत्पन्न होते हैं ठीक वैसे ही जैसे सूर्योदय और अस्त के समय आकाश में बिखरे दीखते हैं।

प्रेम में बड़ी शक्ति है। यह क्रोध से भी अधिक बलवान है। क्रोध जैसे हिंसक के स्थान पर यह भाव रक्षक का काम देता है। बहुत-से लोगों के प्रेम-विचार उनके सम्बन्धियों या मित्रों के चारों ओर वायुमण्डल में किले के आकार में स्थित होकर उनकी रक्षा करते हैं और उनके समीप के दुष्ट भावों को नष्ट कर देते हैं। साधन की इच्छा से उसकी एक ही प्रेरणा का पालन करते हैं और अपनी लक्ष्य वस्तु पर जमे रहकर ये बलवान संकल्प अन्य दुष्ट बुरे भावों को नष्ट करने के लिए साधक की ओर से अपने सजातीय बलवान संकल्पों की सहायता पाने का अवसर ढूँढ़ते रहते हैं।

जैसे किसी सेठ का नौकर फाटक पर तैनात होकर बगीचे और महल में किसी को प्रविष्ट नहीं होने देता और यदि कोई दुष्ट आए, तो वह अपने मालिक या सेठ के बल से अभिमानपूर्वक शक्ति को बढ़ाकर उत्साहपूर्वक अपना कर्त्तव्य करेगा और इस कठिनाई में मालिक से सहायता की आशा रखेगा, उसी प्रकार दृढ़ और पवित्र संकल्प के रूप में भी साधक की इच्छा के अनुसार अन्तरीय वेग से अन्धवत् कार्य करते रहते हैं। वे दुष्ट संकल्पों को नष्ट करने की प्रतीक्षा देखते रहते हैं।

विजय का संकल्प

हम अपने जीवन युद्ध में, अपने लक्ष्य तथा इष्ट सिद्धि में अवश्य पूर्ण सफल होंगे, विजय हमारे ही पक्ष में रहेगी, हमारे देश, जाति और जीवन की समस्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिकूलताएँ दूर होंगी। हमारे इस संकल्प की दृढ़ता और अडिगता में निश्चय ही हमारी विजय छिपी हुई है।

जब हम विजय को ही अपना लक्ष्य बनाकर सतत उसी की ओर गतिमान होते हैं अपने संकल्प को निरन्तर दृढ़ बनाते रहते हैं तो सफलता स्वयं हमारी ओर खिंच आती है।

निश्चयात्मक विश्वास और साहस से विजय का संकल्प बनता है। ऐसा संकल्प एक बार बन जाने से मनुष्य में अविचलता उत्पन्न होती है।

संकल्प साहस की भित्ति पर ही स्थिर रहता है। ऐसे साहस का एक उदाहरण ही वीर सुभाषचन्द्र बोस थे, जिन्होंने अल्प साधनों से ही भारत को स्वतन्त्र करने का बीड़ा उठाया था।

साहस से विजय—साहस एक संक्रामक गुण है। आपके साहस से दूसरों में हिम्मत बढ़ती है। नेताओं के साहस से देश आगे बढ़ता है। परिवार के बुजुर्ग की हिम्मत से परिवार आगे बढ़ता है। अत: नेताओं, जनता, बुद्धिमान अध्यापकों, युद्ध के सैनिकों का कर्त्तव्य है कि साहसपूर्ण विचार ही प्रगट करें। अपनी विजय के प्रति निश्चित रहें। वेद चिल्ला-चिल्ला कर आपके विजय के संकल्पों को उच्च स्वर से दुहरा रहे हैं। देखिए—

अधि तनुषु वाशी

—ऋग्वेद १/८३/३

अर्थात् हे वीरो ! युद्ध के लिये सदा शस्त्रों से पूर्ण सुसज्जित रहो। साहस पर ही तुम्हारी सफलता टिकी हुई है।

असमं क्षत्रं असमं मनीसा

—यजुर्वेद ३०

अर्थात् तुम महान वीर हो। अतुलित शौर्य और असीम बुद्धि धारण करो। याद रखो जहाँ अदम्य साहस और दूरदर्शिता है। वहाँ विजय निश्चित है।

इन्द्रं वर्धन्तो अतुर:

—ऋग्वेद ९/६३/५

अर्थात् आप यदि विजय चाहते हैं, तो जीवन में स्फूर्ति और साहस से उत्तरोत्तर बढ़ते चलिये। आलसी, प्रमादी, भीरु और सन्देही मनुष्य उन्नति नहीं कर सकते।

स्वयंभूरसि श्रेष्ठे

—यजुर्वेद २/२९

अर्थात् हे वीर ! तुम महान् तेजस्वी और पराक्रमी हो। तेजस्वी कभी दूसरों का मुँह नहीं ताकते। जो वीर और साहसी हैं उन्हीं को दूसरों से सहायता भी मिलती है।

मात्स्वा केचिद वियमन

—अथर्ववेद ७/११

अर्थात् वीरो ! पराधीनता के बन्धन में कभी मत फँसो। गुलामी संसार में सबसे बुरी कैद है।

एक पकड़ और लड़लो—हिम्मत बाँधे रहिये, जीवन के हर क्षेत्र में साहस बाजी मारता है। हिम्मत बनाये रखने के लिये लगातार यह बात मन में बैठाने की जरूरत है कि हम वीर और तेजस्वी हैं। इस कार्य के लिये घूँसेबाज कारबेट का तरीका याद रखिये। यह 'आरोग्य' मासिक से यहाँ उद्धृत किया जाता है—

जिम कारबेट अपनी पुस्तक में लिखता है, "हर घूँसेबाज के पास एक से साधन होते हैं—दो हाथ, दो पाँव, एक धड़ और एक सिर। प्रतिस्पर्धी के घूँसे भी पाँच-सात से अधिक नहीं पड़ते। फिर किसी एक के 'रुस्तमे हिन्द' या 'रुस्तमे जमाँ' बन जाने का रहस्य क्या है ?"

कारबेट इसका जवाब यों देता है 'एक पकड़ और लड़लो।' जब तुम्हारी टाँगें इतनी बेदम हो रही हों कि तुम अखाड़े के एक कोने में चले जाने को लाचार हो रहे हो तो एक मजबूत पकड़ और लड़लो।'

जब तुम्हारी भुजाएँ ऐसी शिथिल हो रही हों कि जरा-सा हाथ उठाना भी तुम्हारे लिए कठिन हो, तो एक बार दुश्मन से और भिड़ लो।

जब तुम्हारी नाक से रक्त की धारा बह रही हो और आँखों के आगे अँधेरा छा रहा हो, जब तुम इतने लस्तपस्त हो रहे हो कि बस यही जी चाहता हो कि प्रतिस्पर्धी पहलवान तुम्हारे जबड़ों पर एक-दो घूँसे जमाकर कुछ देर के लिए तुम्हें चेतना के लोक से बाहर भेज दे, तो आखिरी एक टक्कर और ले लो।

'याद रखो कि जो वीर एक आखिरी टक्कर और ले लेता है एक पकड़ और लड़ लेता है कभी पछाड़ा नहीं जा सकता।'

ऊपर हिम्मत के मनोविज्ञान का निचोड़ आ गया है। वह हम अपने दैनिक जीवन में रोज इस्तेमाल कर सकते हैं। आप एक कार्ड पर 'एक पकड़ और लड़ लो' लिखकर लगा लीजिये। यह एक वाक्य आप में साहस और नई हिम्मत भरता रहेगा।

अखाड़ा छोड़ देने वाला कभी जीतता नहीं है। इसी प्रकार जीवन के युद्ध में वे ही विजयी होते हैं, जो साहसपूर्ण संकल्प बनाये रहते हैं। निश्चयात्मक विश्वास ही आपके सद्-संकल्पों की जान है। आपके एक हाथ में धर्म और न्याय तथा दूसरे हाथ में पुरुषार्थ होना चाहिए।

संकल्प शक्ति की साधना

क्या तुमने अपने चिन्तन के क्षणों में इस तत्त्व पर मन, क्रिया केन्द्रित की है कि मानव की चित्तवृत्ति, स्वभाव, आदतें, भावनाएँ, प्रसुप्त आकांक्षाएँ किस आधार-शिला पर स्थित हैं ? मानसिक स्थितियों, उत्कृष्ट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

या निकृष्ट भूमिकाओं का निर्माण कौन करता है ? वासनाओं अथवा मनोविकारों को प्रदीप्त करने वाला कौन तत्त्व है ? अन्त:करण में विशुद्ध सजातीय पदार्थ अथवा विषैले विजातीय कण क्यों आन्दोलन उत्पन्न किया करते हैं ?

असंख्य व्यक्ति रात-दिन किसी काल्पनिक शत्रु से प्रतिशोध लेने की युक्ति सोचा करते हैं। अमुक हमारा बैरी है, वह हमारी त्रुटियाँ, कमजोरियाँ, बुराइयाँ लोगों को बतलाता फिरता है, हमारी ओर वाक्य-बाण कसता है, हमें अभद्र शब्दावली सुनाता है, हमसे ईर्ष्या, बैर, द्वेष करता है। ऐसे सुकुमार छुई-मुई प्रकृति वाले व्यक्ति तनिक-सी बात में चिढ़ जाते हैं, विक्षुब्ध हो उठते हैं और आत्मबल को क्षय करने लगते हैं।

कुछ व्यक्ति विगत प्रसंगों, पुरानी व्यवस्थाओं, बीते हुए कटु दृश्यों का स्मरण कर अनायास ही विक्षिप्त से हो उठते हैं। यदि ऐसा न कर ऐसा करते, तो सब ठीक हो जाता, रोगी को अमुक औषधि न देकर अमुक प्रदान करते, फलां डाक्टर की औषधि न करा फलां की कराते तो प्रियजन की मृत्यु कदापि न होती। हमने अमुक समय बड़ी गलती कर डाली, बस उसी त्रुटि ने हमारा जीवन लेखा समाप्त कर डाला, अमुक बात हो जाती तो सम्पूर्ण जीवन स्वर्णमय हो जाता।

एक वे भी हैं जो भ्रान्ति के कारण मिथ्या दु:खों के दर्शन किया करते हैं। वे ऐसी बातें सोचते हैं जिनका पृथ्वी तल पर कोई अस्तित्व नहीं। उनके मन:चित्र इतने विकृत होते हैं कि भिन्न-भिन्न हेतुओं में भयंकर उत्क्रान्ति मची रहती है। वे एकान्त में बड़बड़ाते हैं तथा अदृश्य वस्तुओं से तादात्म्य कर विक्षुब्ध हुआ करते हैं।

ये सब मन:स्थितियाँ अन्त:करण की विभिन्न क्रियाएँ केवल एक तत्त्व पर स्थित हैं। यह महान् वस्तु है—विचार। आज तक विश्व में जो महत्त्वपूर्ण आश्चर्यचकित कर देने वाले महान् कार्य हुए हैं, जो कुछ उत्कृष्ट कार्य हो रहा है। वह मनुष्य के उस दिव्य गुण का ही चमत्कार है, जिसे मनोविज्ञानवेत्ता 'विचार' कहते हैं। व्याकुलता, संतुलन, उच्च या निम्न भूमिका, क्षोभ, चित्त की सुस्थिरता, मित्र अथवा शत्रु हमें जो कुछ भी प्राप्त है, हो रहा है, यह सब हमारे विचारों के ही परिणाम हैं।

जीवन में चहुँ ओर से अन्धकार या प्रकाश, विपत्ति या प्रतिकूलता तुम्हें दृष्टिगोचर होती है, वह विचारों के ही फल हैं। भूतकाल की स्मृतियाँ, काल्पनिक दु:ख, जादू की मिथ्या भावना, दूसरों की आलोचना स्वयं हमारे निजी विचारों की प्रतिच्छाया मात्र है।

जीवन की यथार्थता हमारे विचारों पर निर्भर है। आज आप जो हैं, अपने जीवन को जिस उत्कृष्ट या निम्न स्थिति में रखे हुए हैं, आपका अन्त:करण, इच्छाएँ, बाह्य स्वरूप, वातावरण, मानसिक संतुलन प्राय: प्रत्येक तत्त्व हमारे विचारों के परिणाम हैं। मनुष्य की सब महत्ता, जीवन के सर्वोत्तम कर्त्तव्य, उसके प्रबल स्थायी विचारों पर निर्भर हैं।

उत्पादक शक्ति का अखण्ड नियम—कर्म हमारे विचारों के रूप हैं। सर्वप्रथम विचार मन में प्रतिक्रिया उत्पन्न करते हैं और जब ये विचार मन में प्रबलता से अंकित हो जाते हैं, गहरी नींव पकड़ लेते हैं, तदनुकूल ही बाह्य अंग-प्रत्यंग क्रियाएँ करते हैं। अन्त:करण में विचारों का एक वृहत् भण्डार रहता है। वे क्षण-क्षण उत्पन्न एवं विनष्ट हुआ करते हैं। अन्त:करण में विचार के अभाव में कोई भी क्रिया सम्पन्न नहीं होती।

इन विचारों के भी विभिन्न प्रकट, भेद-प्रभेद हैं। कुछ तो ऐसे होते हैं, जो पानी के क्षणिक बुलबुले के अनुरूप क्षत-विक्षत होते रहते हैं। वे बनते-बिगड़ते हैं तथा मन पर कोई गहरा प्रभाव नहीं छोड़ जाते। जैसे पानी में नौका-विहार के समय रेखाएँ हो जाती हैं किन्तु क्षणभर में विलीन हो जाती हैं वैसे ही इन क्षणिक विचारों की क्रिया भी है। ये आये और गये, उत्पन्न हुए और विनष्ट हुए।

कुछ विचार दूसरों के संकेत से मन में प्रवेश करते हैं, आन्दोलन उत्पन्न करते हैं, कुछ काल तक टिकते हैं किन्तु तत्पश्चात् विलीन हो जाते हैं।

जिन विचारों से मनोभूमि में स्थायी छाप पड़ती है, जिनसे हमारे अन्त:करण में प्रबल सत्ता अंकित होती है जो पुनरावृत्ति के कारण स्वभाव के एक विशिष्ट अंग बन जाते हैं, उन्हीं विचारों का विशेष महत्त्व है। मानस-शास्त्र इस तत्त्व का दृढ़तापूर्वक निर्देश करता है कि इस प्रबल विचार की सत्ता महान् है—यह स्थूल वस्तु है। जो ठीक सम्यक् रीति से विचार करने की कला से परिचित है वह अपना भाग्य, दृष्टिकोण, वातावरण को परिवर्तित कर सकता है। जो उचित रीति से विचार बोना जानता है, विचार बीजों का पारखी है, औचित्य-अनौचित्य से पूर्णत: परिचित है, वह अपने भाग्य, स्वभाव तथा वातावरण को परिवर्तित कर सकता है।

आज आप जैसे कुछ अच्छे-बुरे हैं, अपने जीवन को जिस स्थिति में रखे हुए हैं, आपका अन्त:करण, इच्छाएँ , बाह्य स्वरूप, वातावरण, मानसिक संतुलन—सब कुछ आपके निज विचारों के परिणाम हैं। जैसे तुम्हारे विचार होंगे तदनुकूल ही तुम्हारे भविष्य का निर्माण होगा।

बीज के अनुसार वृक्ष की उत्पत्ति होती है। जैसा बीज बोओगे वैसा ही पौधा उत्पन्न होगा। जैसे विचार मन में उत्पन्न होंगे वैसा ही जीवन निर्माण होगा। सर्वप्रथम विचार मन में उत्पन्न होता है, मस्तिष्क के संयुक्त गतिवाहक सूक्ष्म तन्तुओं पर उसका प्रभाव होता है। अन्त में प्रबल विचार के अनुकूल ही कार्य करने की बलवत्तर प्रेरणा की उत्पत्ति होती है। पहले-विचार, तत्पश्चात् क्रिया और व्यवहार रूप में परिणित यही नियम है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उत्पादन शक्ति का अखण्ड नियम यह है कि जैसे विचार होंगे वैसा ही निर्माण होगा। जैसे हम विचार करेंगे वैसी ही आदतें बनेंगी। जैसे विचार मनःक्षेत्र में उत्पन्न होंगे वैसा ही स्वभाव का निर्माण होता जायेगा। शोक सन्ताप के विचारों से चिड़चिड़ापन बढ़ता और रोने-चिल्लाने से जीवन की मृदुता नष्ट होती है।

मानव के जैसे विचार होते हैं वह वैसा ही होता है—जिस महापुरुष ने यह महा सत्य मालूम किया वह सचमुच महान दार्शनिक विचार का रहा होगा, क्योंकि विश्व के समग्र व्यक्तियों के भविष्य मनोरथ, उद्देश्य, सिद्धि एवं सफलता इसी महासत्य के इर्द-गिर्द चक्कर लगा रहे हैं। हमारी समस्त आशा, श्रद्धा, लालसा, मनोवृत्ति सबके पृष्ठ भाग से यही महा सत्य अलौकिक सत्य अन्तर्हित है। यह वह सत्य है जो हमें उत्पादक शक्तियाँ प्रदान करता है।

उत्पादन शक्ति का अटल नियम यह है कि जिन विचारों पर हम दृढ़तापूर्वक विश्वास करते हैं, जिनके पीछे बलवत्तर प्रेरणा प्रस्तुत रहती है, जो विचार बारम्बार मस्तिष्क में उठता है तथा जिसका पुनरावर्त्तन चलता रहता है, उन्हीं के अनुसार हमारा जीवन ढल जाता है। बात यह है कि हम अपने आपको जैसा मानने लगते हैं, अपने बारे में जो दृढ़ चिन्तन कर लेते हैं, जिन विचारों में संलग्न रहते हैं, क्रमशः वैसे ही हो जाते हैं। जैसे हमारे आदर्श होते हैं, जैसी हमारी मानसिक अभिलाषाएँ होती हैं, जैसे हमारे हार्दिक भाव होते हैं, ठीक उन्हीं का प्रतिबिम्ब हमारे मुखमण्डल पर द्युतिमान हो उठता है और कुछ काल पश्चात् वैसे ही हो जाते हैं।

संकेतों द्वारा परिवर्तन

यदि मनुष्य अपने आप को स्वस्थ, नीरोग, सामर्थ्यशील माने, निरन्तर इसी भावना का संकेत अपनी आत्मा को देता रहे, इसी विचार में पूर्ण निश्चय एवं विश्वास भरकर अपने आपको इसी की सूचना करे तो वह अवश्य समर्थशाली बन जावेगा। आवश्यकता केवल निरन्तर सूचना या संकेत देने की है। जितने परिपुष्ट संकेत होंगे उतना ही महान परिवर्तन, उतने ही उत्कृष्ट तत्त्वों की सिद्धि होगी।

संकेत क्या है ? पुष्ट एवं दृढ़ विचार, स्पर्श, ध्वनि, शब्द, दृष्टि तथा विभिन्न आसनों एवं क्रियाओं द्वारा किसी के मन पर प्रभाव डालने तथा अपनी इच्छा द्वारा कार्य सम्पन्न कराने का नाम संकेत करना है। संकेत ऐसे वाक्यों से किया जाता है, जिनमें अपूर्व दृढ़ता, गहन श्रद्धा, शब्द-शब्द में शक्ति भरी रहती है। जिज्ञासु बारम्बार कुछ शब्दों, वाक्यों तथा सूत्रों को लेता है, बारम्बार मस्तिष्क में उठाता है, उन पर विचार-क्रिया दृढ़ करता है। इस तरह बार-बार करने से कुछ काल पश्चात् ये विचार स्थायी स्वभाव में परिणति हो जाते हैं। मन को जिस प्रकार का प्रबोध बार-बार दिया जाता है कालान्तर में वही उसकी स्थायी सम्पत्ति हो जाती है। मन हमारे सम्पूर्ण कार्यों का ड्राइवर है, यह प्रचंड शक्ति वाला यन्त्र है। विचारों की उत्पत्ति, परिवर्द्धन करने का कार्य भी इसी के द्वारा संचालित होता है, अतः संकेत का प्रभाव हमारे मन पर पड़ता है।

मन का प्रवाह, उसकी विभिन्न क्रियाएँ तीव्र गति से चलती हैं। ये विभिन्न क्रियाएँ शरीर, हमारे इन्द्रिय, मन एवं बुद्धि इत्यादि प्रत्येक मनोभाव की अधिठाता हैं। बिना इनके मनुष्य का शरीर किसी कार्य में प्रवृत्त नहीं होता। जब तक संकेत दूसरे के मानसिक संस्थान के एक विशिष्ट भाग नहीं बन जाते, तब तक उनका कुछ प्रभाव नहीं पड़ता। यदि हमारा मन उन्हें स्वीकार कर ले, उनसे तादात्म्य स्थापित कर ले, अपना व्यापार, व्यवसाय, क्रिया उनके अनुसार करने लगे तो वे संकेत सफल हो जाते हैं।

ये संकेत हमारे व्यक्तित्व के एक भाग बन जाते हैं, मानसिक क्षेत्र में दृढ़तापूर्वक जमकर कठोर हो जाते हैं। तत्पश्चात् ये अपनी प्रतिक्रियाएँ आरम्भ करते हैं। ये संकेत शक्ति, सामर्थ्य के तत्त्व हैं। अन्तःकरण में आग्रहपूर्वक ये संकेत नवीन संस्कार उत्पन्न कराते हैं। पुराने संस्कारों को नष्ट इन्हीं के द्वारा किया जा सकता है।

जैसे कैस्ट्रायल पेट में प्रवेश करने के उपरान्त विजातीय तत्त्व को निकाल बाहर कर देता है, उसी प्रकार मनःक्षेत्र में प्रवेश कर संकेत महान आन्दोलन उत्पन्न कर देते हैं। पूर्व संस्कारों तथा इन नवीन संकेतों में एक संघर्ष उत्पन्न होता है। निश्चय बल के अनुसार इस युद्ध में सफलता मिलती है, यदि हमारी पूर्व भावना बलवती हुई तो ये संकेत निष्प्रयोजन सिद्ध होते हैं, यदि इनके पीछे दृढ़ निश्चय, विश्वास की बलवत्तर प्रेरणा विद्यमान रही तो इन संकेतों के अनुसार मानसिक निर्माण कार्य प्रारम्भ होता है।

संकेत कहाँ प्रभाव डालता है—हमारे मन के दो स्वरूप हैं—एक चेतन तथा दूसरा अचेतन से निर्मित है। मन की शक्ति इन कोषों पर ही निर्भर है। जिन्हें अपनी बुद्धि इष्ट है, उन्हें उस स्थान के इन कोषों की उन्नति करनी चाहिये। चेतन हमारी बौद्धिक प्रगतिशीलता पर निर्भर है। जो कार्य हम नित्य प्रति सोच-समझ कर करते हैं, जिसके पीछे चेतनता निरन्तर कार्य करती है, जिनका प्रभाव हमारे शरीर पर सीधा पड़ता है, वे सब कार्य इस चेतन मन द्वारा सम्पन्न होते हैं। हम जो काम सोच-विचारकर, आगा-पीछा सोचकर करते हैं, वह यहीं से होता है। यह मन हमारी जाग्रतावस्था तथा चेतनता पर आश्रित है। बिना चेतन मन की आज्ञा के हमारी चेतन शक्तियाँ कार्य नहीं करेंगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अचेतन मन हमारी चेतना का दास नहीं। वह तो सर्वथा उन्मुक्त स्वाधीन है। बिना चेतना की आज्ञा तथा आदेश के वह जो चाहे कर सकता है। वास्तव में मन का यह भाग हमारे बिल्कुल अधिकार में नहीं है, वह जो कार्य किया करता है, अपनी मर्जी से और कभी-कभी तो वह कार्य हमारी इच्छा के विपरीत होते हैं। हम नहीं चाहते कि वे हों, उसमें हमारी कामना, निष्ठा, सहयोग तनिक भी नहीं होता, तब भी यह अचेतन मन निज मनमानी किया करता है।

अचेतन मन का एक विशिष्ट गुण यह है कि यह सोते जागते प्रत्येक अवस्था में कार्यशील रहता है। चेतन मन को हम जिस तरह चाहें दिशा परिवर्तन करा देते हैं किन्तु जब हम एक को आदेश दिया करते हैं तो द्वितीय निज मनोनुकूल जो चाहे करता ही रहता है। निश्चेष्ट चुपचाप नहीं बैठता, न कभी थकता ही है। ऐसा प्रतीत होता है मानों यह हमसे निर्देश करता हो "अपना काम करो, हमें अपना कार्य करने दो" अचेतन मन की उच्छृंखलता सचमुच अद्भुत है।

अचेतन मन ही परोक्ष तत्त्वों का केन्द्र स्थान है। हमारी प्रेरणाएँ भी यहीं से उत्पन्न होती हैं। यद्यपि ये दोनों ही हमारे चेतन मन द्वारा प्रभावित हैं किन्तु इनका केन्द्र स्थान अचेतन जगत ही है, इसी प्रकार अचेतन मन हमारी मूल प्रवृत्तियों तथा अनुभवों से अखण्ड रूप में सम्बद्ध है।

हमारी दबी हुई मनोवृत्तियाँ

हमारी अनेक टूटी-फूटी इच्छाएँ, प्रसुप्त वासनाएँ, अपूर्ण वृत्तियाँ इसी अव्यक्त मन में छुप जाती हैं। जब कभी कोई बात वस्तु जगत में पूर्ण न हुई या अवरोध उत्पन्न हुआ तो ये वृत्तियाँ दब जाती हैं। किन्तु दबने का अर्थ यह नहीं कि ये सर्वथा गायब ही हो जायँ। ये कभी लुप्त नहीं होतीं प्रत्युत जब तक जाग्रत मन का प्रभुत्व अधिक होता है, कुछ काल के निमित्त एक ओर चुपचाप बैठ जाती है। जैसे एक शक्तिशाली सम्राट के राज्य में उसके आतंक से प्रतिद्वन्द्वी दब जाते हैं। कुछ द्वन्द्व नहीं करते किन्तु उसका आतंक हटने से पुनः विरोध करते हैं, उसी प्रकार जाग्रत मन के प्रभुत्व रहने तक तो ये कुछ नहीं बोलतीं, चुपचाप पड़ी रहती हैं किन्तु उसके प्रभुत्व के क्षीण होते ही ये प्रसुप्त चित्त-वृत्तियाँ एकदम शक्तिशालिनी हो उठती हैं, अति सूक्ष्म रूप धारण कर लेती हैं। फिर तो जाग्रत एवं इन प्रसुप्त वासनाओं में भयंकर संघर्ष प्रारम्भ होता है। व्यक्त तथा अव्यक्त के वैषम्य से ही मनोवेगों की उत्पत्ति होती है।

अन्तर्द्वन्द्व का कारण—सामाजिक रूढ़ियाँ इतनी जटिल तथा सख्त हैं कि हमारी उचित-अनुचित इच्छाओं की पूर्ति सम्भव नहीं। अपयश, सामाजिक टीका-टिप्पणी के विचार से हम निकृष्ट वासनाओं को छिपाना चाहते हैं। हमारी विवेक-बुद्धि दुर्वासनाओं को व्यक्त नहीं होने देती। अतः वे वासनाएँ चेतन मन से अचेतन में जा छुपती हैं। ये जब तक परितृप्त न हो जायँ, तब तक शान्ति कदापि न होंगी। अतएव रेंगती हुई ये अव्यक्त मन में बीज रूप से छुपी रहती हैं। प्रसुप्तावस्था में चेतन में प्रविष्ट हो जाती हैं और हमारी विवेक-बुद्धि से द्वन्द्व करती हैं। प्रत्येक वासना परितृप्ति का प्रयत्न करती है अतः जब तक वह पूर्णतः तृप्त नहीं हो जाती, लुप्त नहीं होती, छोटी अथवा वृहत् मात्रा में वर्तमान रहती है, कभी क्षीणातर कभी प्रबलतर हुआ करती है।

स्वप्न में संघर्ष—अव्यक्त की प्रसुप्त वासनाएँ समाज के डर से स्वप्न में निरन्तर निकला करती हैं। स्वप्न में चेतन अथवा व्यक्त मन तो निष्क्रिय हो जाता है, किन्तु अव्यक्त मन रुकी हुई वासनाओं को आगे बढ़ाता है। ये क्रान्तिकारी वासनाएँ स्वप्न में भयंकर तांडव करती हैं तथा अनुकूल परितृप्ति-पाती हैं। ज्यों-ज्यों परितृप्ति का मार्ग ग्रहण करती हैं, त्यों-त्यों इन्हें एक निर्धारित मार्ग अवलम्बन करना पड़ता है। विशिष्ट मार्ग की बागडोर अहंकार के अधीन है। अहंकार को विवेक बुद्धि (चेतन मन) के अधीन रहना पड़ता है। अतः प्रसुप्त वासनाएँ रेंगती आती हैं पर डरती हैं। इस प्रकार चेतन जगत् में चुपचाप चली आने पर अहंकार से इनका संघर्ष होता है। अहंकार अपने अनुकूल वातावरण के अनुसार अव्यक्त वासनाओं को परितृप्त या नियन्त्रित करता है। स्वप्न में देश-काल परिस्थिति की मर्यादा तोड़कर जो वासनाएँ किंचित काल के लिए शान्त होना चाहती हैं, वे पुनः अहंकार द्वारा कुचल दी जाती हैं। जब मनुष्य का चेतन मन अचेतन का तिरस्कार करता है तो व्याधि की उत्पत्ति होती है।

पूर्ण मतैक्य हमारी वास्तविक स्थिति है—आज के समाज का सभ्य मनुष्य जिस वास्तविक मनःस्थिति से दूर जा पड़ा है। उसके मनःक्षेत्र में भावनाओं तथा आकांक्षाओं के अनेक खंडहर, कच्चे तथा टूटे हुए अंश पड़े हैं। अनेक वासनाएँ अतृप्तावस्था में ही कुचल दी गई हैं, कितनी ही हसरतों, आशाओं, दबी हुई भावनाओं पर तुषारापात हो चुका है। उसकी आज की आकांक्षाएँ तो उन पुरातन आकांक्षाओं की छाया मात्र रह गई हैं।

आदि काल का पूर्व पुरुष—देश-काल, समाज के बन्धनों से मुक्त था। सभ्यता का मिथ्याडम्बर, समाज के वज्र जैसे कठोर नियम, लोक-निन्दा का भय, सम्प्रदाय की थोथी उलझनें, उचित-अनुचित का सीमा बन्धन या विवेक का नियन्त्रण न होने के कारण उसकी भीतरी रागात्मक प्रवृत्तियों, वासनाओं तथा मनोविकारों का बाह्य सृष्टि के साथ उचित सामंजस्य था। अव्यक्त की वासनाओं को पूर्ण परितृप्ति का खुला अवसर मिलता था। प्रेम, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, ह्रास, उत्साह, आश्चर्य, करुणा इत्यादि मनोवेगों का प्रवाह अबाध, पूर्ण उन्मुक्त था। उनमें विवेक,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सत्, असत् तथा प्रयत्न की अनेकरूपता का स्फुरण नहीं हुआ था। विशुद्ध सुख की अनुभूति होने पर दाँत निकालकर हँसकर, कूदकर सब व्यक्त कर दिया जाता था। दु:ख की अनुभूति पर हाथ-पाँव पटक कर, रोकर, चिल्लाकर मन की चोट पर मरहम लगा लिया जाता था। दण्ड का भय और अनुग्रह का लोभ या शासन का नियन्त्रण न होने के कारण मनोभाव स्पष्ट रूप से व्यंजित होते थे। इस उन्मुक्त काल में हमारे पूर्व पुरुष के मानसिक संस्थान में पूर्ण मतैक्य या समस्वरता विद्यमान थी। व्यक्त मन के पूर्ण मतैक्य का नाम ही मोक्ष है। यही अवस्था पूर्ण शान्ति, पूर्ण आनन्द, पूर्ण प्रसन्नता की मन:स्थिति है।

व्यक्ताव्यक्त के संघर्ष का प्रतिफल—अनुभूति के द्वन्द्व से ही सभ्यता का जन्म होता है। उत्कृष्ट कहलाने वाला प्राणी उचित-अनुचित का द्वन्द्व लेकर जन्म लेता है। ज्यों-ज्यों सभ्यता का विकास होता है मानव जीवन की जटिलता, इच्छा की अनेकरूपता तथा विषय बोध की विभिन्नता बढ़ती है। मनुष्य का विवेक तथा औचित्य-अनौचित्य का ज्ञान विकसित होता है। शुभ-अशुभ, यश-अपयश की भावना के कारण मनुष्य का आत्म गौरव उद्दीप्त हो उठता है। तत्पश्चात् समाज का नियन्त्रण बढ़ता है और देश-काल एवं परिस्थिति के अनुसार अभद्र, प्रतिकूल समाज में से असम्बद्ध वासनाएँ कुचल दी जाती हैं।

मानसिक ग्रन्थियों का निर्माण—समाज में प्रचलित नैतिक वातावरण के कारण दबी हुई वासनाएँ अव्यक्त मन में बैठी रहती हैं। विवेक उन्हें दबाये रहता है, इस प्रकार की प्रत्येक वासना दबकर एक मानसिक ग्रन्थि या गुत्थी बन जाती है। ऊपर आकर परितृप्ति की बाट देखती रहती है। जब विवेक का नियन्त्रण न्यून होता है तो ऊपर आती है और परितृप्ति का प्रयत्न करती है। मनोवैज्ञानिकों ने हमारी सब गालियों, मजाक, ठठोली, नाच, अश्लील व्यवहार, स्वप्न, उन्माद, कायरता को इन्हीं मानसिक ग्रन्थियों के फलस्वरूप माना है।

डाक्टर फ्रायड के क्रान्तिकारी विचार—प्रसुप्त वासनाओं तथा मानसिक ग्रन्थियों के विषय में पाश्चात्य विद्वान डाक्टर फ्रायड ने हमारी समस्त क्रियाओं को अव्यक्त की प्रसुप्त वासनाओं के फलस्वरूप माना है। इनमें काम वृत्ति को उन्होंने सबसे सबल ग्रन्थि माना है। शिशु का माता के स्तन से दुग्ध-पान से लेकर कवियों की कवित्व-शक्ति प्राय: सब ही को उन्होंने दबी हुई अव्यक्त की कामवासनाओं के फलस्वरूप माना है। मनुष्य की काम वृत्ति या काम-पिपासा शान्त न हो सकी, उसका प्रवाह रुद्ध हो गया और अव्यक्त में बैठकर वह ग्रन्थि बन गया। यह प्रसुप्त वासना जब अवसर मिलता है या जब विवेक ढीला पड़ता है व्यक्त मन में आ जाती है और विभिन्न प्रकार के विकार तथा विचित्र मानसिक तथा शारीरिक चेष्टाओं से प्रकट होती है, डाक्टर फ्रायड ने अनेक स्वप्नों का विश्लेषण करके सिद्ध किया है कि मन में पड़ी हुई गाँठ के फलस्वरूप ही ऐसी विचित्र चेष्टायें होती हैं।

मानसिक ग्रन्थियों का प्रभाव—मानसिक ग्रन्थि के अनेक प्रकार हैं। जितनी भावनाएँ हैं, उतनी ही प्रकार की ग्रन्थियाँ बन सकती हैं। कुछ ग्रन्थियाँ तो प्राय: प्रत्येक व्यक्ति में होती हैं, कुछ किसी विशिष्ट व्यक्ति में ही होती हैं। इसी प्रकार कुछ ग्रन्थियाँ सबल तथा कुछ साधारणत: निर्बल होती हैं। कुछ ग्रन्थियाँ आनन्ददायक तथा कुछ दु:खदायिनी होती हैं। जब मानसिक ग्रन्थि सबल हो जाती है तो उसकी शक्ति रूपान्तर से व्यक्त होने का उद्योग करती है। साधारण विवेक को तोड़कर प्राय: वह बाहर निकल पड़ती है। कभी-कभी इसका फल पागलपन होता है। अनेक अद्भुत चेष्टाएँ, मन की प्रतिक्रियाएँ तथा स्वप्न चेतना का नियन्त्रण तोड़कर मन की दबी हुई वासनाओं के प्रकाशित होने के प्रयत्न मात्र हैं।

मानसिक ग्रन्थियों का प्रभाव अन्तर्मन से चेतन मन पर दैनिक व्यवहार में चलता रहता है। एक नवयुवक एक युवती के प्रेमपाश में आबद्ध होता है। प्रथम दृष्टि मिलने में ही उसके अन्तर्मन में काम भावना जाग्रत हो उठती है। नैतिक बुद्धि उसके मार्ग में बाधा उपस्थित करती है। देश, काल परिस्थिति को देखकर वह उसे दबा डालता है। बस मानसिक-संस्थानों में एक गाँठ-सी पड़ जाती है। अन्तर्मन में उस ग्रन्थि से संयुक्त कामोत्तेजक विचार उसके चेतन मन से सम्पूर्ण क्षेत्र को आवृत्त कर लेते हैं। शनै:-शनै: उसके चेतन मन पर उन्हीं विचारों का आधिपत्य स्थिर हो जाता है, जिनकी जड़ें अन्दर बैठी हुई हैं। उसकी सम्पूर्ण मानसिक क्रियाओं के पीछे कामवासना की झलक दीखती रहेगी। उस पर बीतने वाली प्रत्येक घटना, मस्तिष्क में आने वाले सब विचार उसी ग्रन्थि में जुड़ते जायेंगे। अन्तस्तल की भूमि पर ये विचार उस ग्रन्थि से जुड़कर अंकुरित, पल्लवित एवं फलित हो उठेंगे। ये वृक्ष काँटेदार या मधुर दोनों ही प्रकार के हो सकते हैं। यदि ये काँटेदार हैं तो इनका उन्मूलन करने से मन: शान्ति प्राप्त होगी। ग्रन्थियों की यह परवशता आज के सभ्य मनुष्य को पिंजराबद्ध पक्षी बनाये हुये हैं।

मानसिक ग्रन्थियों से ग्रस्त व्यक्तियों के उदाहरण—हमारे दैनिक जीवन के अन्तर्द्वन्द्व अनेक घटनाओं को लेकर ग्रन्थियों का निर्माण करते हैं। हमारे एक अध्यापक मित्र की पत्नी को स्नान व धोने का रोग हो गया था। वे प्रत्येक वस्तु को तनिक छू जाने पर धोने लगतीं। शौच के पश्चात् सब वस्त्र धोतीं। बाल कटा डाले। नल पर मिट्टी की पट्टी लगाई। खाने-पीने की तमाम वस्तुओं को बार-बार धोतीं, उन्हें यह बहम हो गया कि अन्य सब वस्तुएँ अपवित्र हैं। बहम की अनिष्टकारी ग्रन्थि की छानबीन करने पर प्रतीत हुआ कि एक बार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनजाने में महतर की झाड़ू से छू गई थीं। अपवित्रता की ग्लानि क्रमशः एक सबल ग्रन्थि बन गई। उसी की यह प्रतिक्रिया थी।

डा. दुर्गाशंकर जी ने एक ऐसे व्यक्ति का रोचक वृतान्त लिखा है, जिसकी मुट्ठी बन्द रहती थी। यह व्यक्ति कभी-कभी दो-तीन घण्टे पश्चात् मुक्का मारने का उपक्रम करते। इस चेष्टा से यह बड़े क्षुब्ध थे। मानसिक विश्लेषण में उनसे अपने जीवन की विशेष घटनाओं को स्मृति पट पर लाने को कहा गया। बड़े प्रयत्न के उपरान्त उन्हें बहुत दिन पूर्व की एक घटना याद आई। उनका किसी ने बड़ा अपमान किया था। उसका स्मरण करते ही इनका शरीर जकड़ जाता था। इस विद्वेष-भावना की ग्रन्थि बनकर अव्यक्त मन में बैठ गई और मुट्ठी बँधी रहने लगी। यह घटना तो मस्तिष्क के किसी कोष्ठ में विस्मृति के गर्त में प्रविष्ट हो गई किन्तु उसकी प्रतिक्रिया मुट्ठी बँधी रहकर हुई। अन्तःकरण से विरोधी भावना को हटाने पर कुछ दिन बाद वह पूर्ववत् हो गये।

कुछ दिन पूर्व मैं हरिद्वार में एक ऐसे व्यक्ति से मिला जो हर की पैडी पर बिना गंगाजल में प्रवेश किये लोटे से स्नान कर रहा था। देखकर बड़ी उत्सुकता हुई। पूछने पर कहने लगे कि जल में हड्डियाँ इत्यादि पड़ी हैं अतः दूर से स्नान करना ठीक है। अधिक जान-पहचान हो जाने पर उन्होंने निम्न वृतान्त सुनाया—"बचपन में कुछ मित्रों के साथ मैं नदी पर सैर करने गया। कुछ लड़के लँगोट बाँधकर जल में तैरने, उछल-कूद कर अनेक क्रीडाएँ करने लगे। एक ने कहा—आओ न दूर क्यों खड़े हो ? इतने में पीछे से आकर दूसरे साथी ने मजाक में उठाकर गहरे जल में पटक दिया। मैं बहुत छटपटाया नाक, मुँह और कान में पानी भर गया। जब पुनः ठीक हुआ तो मैं पानी के पास जाने में डरने लग गया।"

मिस्टर मायर ने अनेक ऐसे स्वप्नों के अध्ययन प्रस्तुत किए हैं, जिनकी जड़ें मन की ग्रन्थि में ही प्राप्त हुई हैं। एक नवयुवती ने स्वप्न में देखा मानो वह सुनहरे जूते पहिने हुए है। स्वप्न विशेषज्ञ विश्लेषण करने पर ज्ञात हुआ कि उसने एक दिन पहले अपने प्रेमी को वैसे जूते पहिने देखा था।

एक मनः रोगी मेरे पास आया और उसने अपने पिता के क्रूर व्यवहार की कथा रो-रोकर सुनाई। उनने मुझे बताया कि यद्यपि वह पिता को बहुत आदर की दृष्टि से देखता है, किन्तु पिता उससे क्रुद्ध ही है। पिता का रूखा व्यवहार उनके अन्तर्मन में ग्रन्थि बन गया। कुछ दिनों पश्चात् वह पुनः मेरे पास आया तो मुझे वह कुछ फीका-सा प्रतीत हुआ। उसने बताया कि "मैंने आज दो व्यक्तियों को बड़ी बुरी तरह सताये जाते देखा है। उसी का प्रभाव मुझ पर हुआ है। मन भारी-भारी सा हो रहा है।" विश्लेषण करने पर ज्ञात हुआ कि उस दिन प्रातःकाल उसके पास उसके पिता जी का एक पत्र आया था जिसमें उस पर अनेक दुर्व्यवहारों, कुवचनों की मार पड़ी थी। मन भारी-भारी सा होने का कारण तो यह कटु पत्र था किन्तु उसका आरोप दूसरों को अपमानित होते देखने पर किया गया।

कितनी बार ऐसा देखा है कि काम वासना की ग्रन्थि से ग्रस्त व्यक्ति अपने आपको ब्रह्मचारी दिखाने की चेष्टा करता है। वह दूसरों को ब्रह्मचर्य के नियमों का माहात्म्य समझाता है तथा बाह्य दृष्टि से स्त्रियों को घृणा की दृष्टि से देखता है।

कितने ही व्यक्तियों के अव्यक्त मनःक्षेत्र में हीनत्व की ग्रन्थि बन जाती है। ऐसा व्यक्ति अपने आपको नगण्य, दीन-हीन मानता है। सभा में बोलते शर्माता है। दूसरों से नजर मिलाते डरता है और किसी बड़े दोषी की तरह छिपा-छिपा फिरता है।

संकेत का प्रभाव कहाँ पड़ता है ?

संकेत का प्रभाव हमारे अव्यक्त या अचेतन मन पर जहाँ मानसिक ग्रन्थियों का जाल-सा बिछा रहता है, पड़ता है। वास्तव में अव्यक्त ही हमारी शक्ति का भण्डार है। अव्यक्त की अद्भुत शक्तियों को कम संख्या में पुरुष जानते हैं। इसमें अन्तर्निहित गुत्थियों का मूलोच्छेद तथा नवीन सुख, उत्साहप्रदायक उत्कृष्ट ग्रन्थियों का निर्माण ही सजेशन या संकेत का मुख्य कार्य है। संकेत द्वारा विपरीत ग्रन्थियों को सहज ही में हटाया जा सकता है। यद्यपि भौतिक जगत् से प्रसुप्त वासनाओं की परितृप्ति नहीं होती किन्तु संकेत द्वारा उनकी प्रबलता हट जाती है। वह शीघ्र ही मनोभूमि को साफ छोड़ देती है। तत्पश्चात् नवीन ग्रन्थियों का इच्छानुसार बीजारोपण किया जा सकता है।

मनो-विश्लेषण में इसी अव्यक्त से प्रसुप्त वासनाएँ उठाई जाती हैं। चिकित्सक अव्यक्त का ही सूक्ष्म विश्लेषण करता है। रोगी स्वयं नहीं जानता कि उसके इस निम्न मानसिक स्तर में कौन-कौन-सी टूटी-फूटी भावनाएँ दबी पड़ी हैं।

अव्यक्त बड़ा सतर्क है। वह किसी महत्त्वपूर्ण वस्तु को भूलता नहीं। सब बातें चुपचाप नोट करता रहता है। तुम चाहे किसी बात को भूल जाओ किन्तु वह अव्यक्त में इतनी बैठ जाती है कि आसानी से नहीं भुलाई जा सकती। अव्यक्त मन कभी न सोने वाला पहरेदार है। तुम कभी इसकी क्रियाओं को नहीं पहचान सकते।

जिन विचारों का प्रभाव तुम्हारे मन पर पड़ता है, वे तुम्हारे व्यक्त मन पर तो असर डालते ही हैं, अपना कुछ अंश अव्यक्त पर भी छोड़ जाते हैं। अपने विषय में अपनी शक्तियों, अपनी योग्यता, सामर्थ्यों में तुम जितना विश्वास रखते हो, उसी प्रकार की वृत्ति स्थिर होती है। तुम्हारे मन प्रदेश में जो भावनाएँ प्रवेश करती हैं, उन्हीं के अनुसार तुम्हारी ग्रन्थियाँ बनती हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अव्यक्त मन का पुनर्निर्माण—बुरे वातावरण, कठोर व्यवहार, परिस्थिति के कारण हमारे अव्यक्त मन का निर्माण उचित रीति से नहीं हो पाता। हम उसमें तुच्छता, नीचता या दीनता की ग्रन्थियाँ अनजाने में ही बना डालते हैं। जब माँ अपने पुत्र को कहती है—"तू कपूत है ! तेरा भाग्य खराब है ! तुझे संसार में कोई न पूछेगा।" तो ये ही विचार अन्तर मन के गहरे भाग में उतर जाते हैं, वहीं इनकी ग्रन्थि बन जाती है। यही कारण है कि हजारों युवक आत्महीनता की ग्रन्थियों से ग्रसित रहकर अपना नसीब फोड़ा करते हैं।

दूषित संकेतों से अव्यक्त मन का निर्माण भी दूषित होता है। यदि तुम विरोधी विचार, प्रतिकूल परिस्थिति, अपनी त्रुटियों पर मानसिक क्रिया केन्द्रीभूत करोगे तो वे ही अमिट रूप से मानसिक स्तर पर अंकित हो जायेंगे। हमारे अव्यक्त मन के संसार की रूपरेखा हमारे विचारों द्वारा ही निश्चित होती रहती है।

तुम्हारे अव्यक्त मन की रूपरेखा के अनुसार ही अन्य व्यक्ति तुमसे द्वेष अथवा प्रेम करते हैं तथा जगत् की विविध वस्तुएँ पास या दूर हो जाती हैं। जो कार्य तुम करते हो, उसमें अव्यक्त का योग अवश्य रहता है। दिन भर तुम अपने अव्यक्त में कुछ न कुछ बातें स्थिर किया करते हो। तुम्हारे वातावरण से भव्य या कुत्सित अन्तःकरण में अनेक मानसिक चित्रों की रचना हुआ करती है।

वह मनुष्य धन्य है, जिसने अपने अव्यक्त में अनेक भव्य, शुद्ध एवं पवित्र चित्रों की रचना कर रखी है। जिसकी मनोभूमि स्वभाव से निष्पाप एवं भद्र है। जो अपने भविष्य के विषय में अनेक सुनहरे चित्रों का निर्माण किया करता है, जो दुर्बलता को मन-क्षेत्र में प्रवेश नहीं होने देता।

वांछनीय मनःस्थिति कैसे उत्पन्न कर सकते हैं?—जिन भावनाओं, विचारों, कल्पनाओं का हम दृढ़तापूर्वक चिन्तन करते हैं। जिन आदर्शों में हम अधिक काल तक विचार करते हैं वे अव्यक्त में उतर जाते हैं। बारम्बार चिन्तन करने से ये स्थिरता एवं गठनता धारण करते हैं। यदि दो-एक बार उन्हें अन्तर्निहित कर विचार क्रिया को छोड़ दिया जाय, तो पुनः उनका क्षय हो जाता है तथा मनुष्य पूर्ववत् दयनीय स्थिति में पड़ा रह जाता है।

जैसे नदी में पुल बाँधते समय प्रत्येक पत्थर को दृढ़ता से जमाया जाता है और प्रयत्नपूर्वक हटने नहीं दिया जाता, उसी प्रकार स्मृति पट पर एक शुभ चित्र अंकित किया जाय और तत्पश्चात् उसे मिटने न दिया जाय। उसकी रूपरेखा और अधिक स्पष्ट और भी रंगीन बनाई जाय। मनः प्रदेश में जो सुनहरी, आशापूर्ण तरंगें भोर की सूर्य-रश्मि की तरह उदित होती हैं, आत्मा में जिन महत्त्वाकांक्षाओं का स्वर्णिम प्रकाश होता है, जिन श्रेष्ठ भावनाओं का उदय होता रहता है, वे मर न जायँ उनकी सिद्धि की अग्नि शान्त न हो जाय।

मन के समुद्र में जिन तरंगों का आदान-प्रदान चलता रहता है, वे सत्य हैं। तुम्हारी उच्चता की प्रतीक हैं। तुम्हारी आत्मा में जो दिव्यता है, उसी के फलस्वरूप इन महत्त्वाकांक्षाओं का उदय होता है। इन्हीं दिक-रूपों को लेकर तुम्हें सफलता का विशाल महल तैयार करना है। ये तुम्हारी कार्य-सम्पादिका, तुम्हारी पथ-प्रदर्शक, तुम्हारी सर्वोत्तम सहायिकाएँ हैं।

मनः प्रदेश में तुम्हें उच्च आदर्श के बीज बोने चाहिये। उन्हीं के अंकुर इधर-उधर फैलें, उन्हीं को पल्लवित, पुष्पित एवं फलित होने का अवसर प्रदान करना चाहिए।

अपने अन्तर्जगत में प्रवेश करो—चर्म चक्षुओं को मूँदकर अन्तर्पट खोलो। अपनी अन्तरात्मा का निरीक्षण करो। देखो वहाँ कौन-कौन से असत् विचार, दुर्बल मन्तव्य, निर्बल कल्पनाओं के घास-फूँस उग आये हैं ? कौन-कौन-सी वे चिन्ताएँ तुम्हें उद्विग्न कर रही हैं ? कौन-सी शूलमयी स्मृति तुम्हें क्षुब्ध बना रही है। हजारों भ्रान्तियाँ, भय, संशय इस प्रदेश में मिलेंगे, ये तुम्हारी आत्मशक्ति का क्षय करते हैं, तुम्हारे शरीर को जर्जर एवं मन को निर्बल बनाते हैं। ये व्यर्थ के भूत तुम्हें भीषण प्रतीत होते हैं। इनका दृढ़ता से विरोध करो। तुम्हें इनसे डरना नहीं है। व्यग्र या किंचित चलायमान नहीं होना है। तुममें इतनी शक्ति है कि इन शत्रुओं पर पूर्ण विजय प्राप्त कर सकते हो।

एक मनोवैज्ञानिक कहता है—"जब मैंने अपने मनःक्षेत्र में प्रवेश किया तो प्रतीत हुआ कि अनेक उलझन, मिथ्या कल्पनाओं की घास उगी हुई है। जहाँ-तहाँ कुत्सित एवं अपवित्र विचारों के काँटेदार झाड़ खड़े हैं। दुर्भाग्य एवं परिस्थिति की आँधी चल रही है। असंख्य जन्म-जन्मान्तरों की वासनाएँ तूफान मचा रही हैं। दुश्चिन्ताएँ, अनिष्ट कल्पनाएँ, निराशा के काले बादल घिर रहे हैं। मैंने अनुभव किया कि संसार के थोथे झमेलों, व्यर्थ के धन्धों में फँसकर अशान्ति की तरंगों में इधर-उधर मारा हुआ भटक रहा हूँ। क्षण-क्षण उद्विग्नता और उत्तेजना का अनुभव कर रहा हूँ।

तुम स्वयं अपना अध्ययन करो। तुम्हारे अन्तःकरण का गर्भ भाग किन तत्त्वों से परिपूर्ण है ? किस-किस कोने में अन्धकार है ? कौन-सी विषम बातें तुम्हें परेशान कर रही हैं ? तुम्हारी पीड़ा के लिये कौन जिम्मेदार है ?

जब तुम अपना अध्ययन कर चुको तो स्वयं से प्रश्न करो कि तुम किन-किन दुर्बलताओं को अपने स्वभाव से निकाल बाहर करना चाहते हो ? किन-किन गुणों, तत्त्वों को उत्पन्न करना चाहते हो ? तुम्हारी आकांक्षाएँ, तुम्हारी कल्पनाएँ क्या-क्या हैं ? तुम किस ओर बढ़ना चाहते हो ? तुम्हारे सुनहरे स्वप्न कौन-कौन है ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तुमने अपना आदर्श निश्चित कर लिया है। अब तुम संकेत के लिए तैयार हो। इसी महाशस्त्र के द्वारा तुम अपने आदेशों को फलीभूत कर सकोगे।

संकेत की अद्भुत शक्ति—संकेत हमारे वातावरण में चारों ओर फैले हैं। जिस प्रकार हम हवा में साँस लेते हैं, उसी प्रकार अपने वातावरण में से संकेत खींचा करते हैं। प्रात:काल से सायंकाल तक हम अपने अव्यक्त को, अपनी आत्मा को, अपनी शक्तियों को कुछ न कुछ आज्ञा देते रहते हैं। ये सब संकेत हमारे खुद के लिये हैं, अत: इन्हें स्वसंकेत कहना चाहिए।

संकेत के स्वरूप—हमारे अव्यक्त प्रदेश में निकृष्ट वातावरण की सृष्टि अनेक वर्षों के संकलित निकृष्ट संकेतों के परिणामस्वरूप ही हो जाती है। अनजाने में हम अपनी आत्मा पर अनुचित प्रभाव डालकर उसे इतना निर्बल बना डालते हैं कि उसके वास्तविक गुण का क्षय हो जाता है। ''मैं इस कार्य को कर भी सकूँगा या नहीं।'' ''मुझ में शायद इतनी ताकत नहीं कि इस प्रतिकूलता को सहन कर सकूँ—मैं मामूली-सा आदमी हूँ''—इस प्रकार के अनेक दुर्बल संकेत दे-देकर हमने अव्यक्त प्रदेश में विरुद्ध वातावरण की सृष्टि कर ली है। हम नहीं जानते कि स्वयं अपने शत्रु बन गये हैं।

संकेत विद्या का उचित रीति से ज्ञान प्राप्त कर लेने से पुन: तुम अपने वास्तविक स्वरूप को प्राप्त कर सकते हो। आगे बढ़ने के लिये तुम्हें संकेतों की शरण लेनी पड़ेगी। संसार का प्रत्येक महान पुरुष इस शक्ति से ही आगे बढ़ा है। जगत का यही संचालन करती है। यही तुम्हारे भाग्य का निर्माण भी करती है।

हमारी नूतन शिक्षण-पद्धति में अनेक ओर ध्यान रखा गया है किन्तु वह फिर भी मृतप्राय: है। कारण स्पष्ट ही है—शिक्षा में संकेत का जो स्थान उचित है, वह प्रदान नहीं किया गया है। सच्ची शिक्षा मानसिक क्षेत्र की क्षुद्र ग्रन्थियों को उखाड़ फेंकने तथा नवीन सद्ग्रन्थियों के निर्माण से प्रारम्भ होती है।

जिस दिन मनुष्य अपने वास्तविक स्वरूपों, अपनी उत्कृष्ट शक्तियों, उत्तम तत्त्वों, अपने अधिकारों को पहचान लेगा उस दिन महान जागरण होगा, उसी दिन वह अपने चारों ओर स्वस्थ वातावरण की सृष्टि भी कर सकेगा जैसे रेशम के कीड़े के चतुर्दिक रेशम।

उन्नति का आधार, वास्तविक सुख का आधार किसी बाह्य वस्तु में नहीं है। कोई तुम्हारी सहायता नहीं कर सकता, केवल तुम्हारे संकेतों में ही तुम्हे ऊँचा उठाने की शक्ति है। तुम्हारा प्रारब्ध, तुम्हारे ग्रह, तुम्हारे सुख-दु:ख का रहस्य तुम्हारे संकेतों में अंतर्निहित है। शुद्ध, शुभ संकेतों द्वारा ही तुम उन्नति के उच्च शिखर पर आरूढ़ हो सकते हो।

शुभ संकेत तुम्हारी आत्मा के प्राण हैं। वे तुम्हारे सब से अधिक स्वामिभक्त नौकर हैं। इन भृत्यों से काम लो, यह तुम्हारी सहायता के लिए हाथ जोड़े खड़े हैं।

शुभ संकेतों में रमण करने से शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक अपूर्णताएँ विनष्ट होती हैं। क्षय और कुरूपता, निर्बलता तथा न्यूनता, पराजय, प्रतिकूलता कोसों दूर रहती हैं। पुराने जीर्ण कोष्ठ स्वस्थ हो उठते हैं। नवीन शक्ति का प्रादुर्भाव होता है। संकेत-विद्या कायाकल्प की नवीन रीति है।

संकेत के दो रूप—हमारे समस्त संकेतों के दो रूप हैं—एक निश्चयात्मक तथा द्वितीय निषेधात्मक। ''मैंने अपने अन्त:करण से प्रगाढ़ अज्ञानरूपी तिमिर को भगा दिया है। मुझे में ज्ञानरूपी दीपक प्रकट हुआ है। मेरा मन परम निर्मल हो गया है। मेरे मन में शान्ति का सागर लहलहा रहा है। मैं शान्ति सदन में वास कर रहा हूँ।'' इस प्रकार के संकेत निश्चयात्मक होते हैं। मानसिक परिपुष्टि में इनका बड़ा महत्त्व है। इनका विहार पूर्ण-रूप से निर्मल मानस-प्रदेश विहारियों के लिये सर्वोत्कृष्ट संकेत है।

द्वितीय प्रकार के निषेधात्मक संकेत होते हैं। इनका कार्य मानस प्रदेश की निम्न भूमिका से पुरानी कुत्सित ग्रन्थियों को उखाड़ फेंकना है। जैसे बीज बोते समय ऊबड़-खाबड़, झाड़दार भूमि को साफ करना पड़ता है। कटीली झाड़ी तोड़ डालनी पड़ती हैं, उसी प्रकार निषेधार्थक संकेत मनोभूमि से पुरानी ग्रन्थियों का उन्मूलन करते हैं। मन की निम्न भूमिका में नीच से नीच भावनाएँ दबी-दबाई न जाने कब से पड़ी होती हैं ? निषेधार्थक संकेत इनको निकलने का रास्ता देते हैं।

जब आप कहते हैं कि ''अब दुर्गुणों का बल कौशल मुझ पर नहीं चल सकता, वासना-रूपी दारुण वायु मेरे चित्त को विचलित नहीं कर सकती—विषय मुझे उत्तम मार्ग से विचलित नहीं कर सकते—मेरे अन्त:करण के अज्ञान का राज्य अब मेरे अन्तर्क्षेत्र में नहीं है। स्वार्थ की कामनाएँ मुझे तंग नहीं कर सकतीं—प्रबल से प्रबल दुष्ट आसुरी भावों का मुझ पर न आक्रमण हो सकता है और न वे मुझे दबा ही सकते हैं—''तो ऐसा उच्चारण करने से आपके मन के निम्न प्रदेश में सुप्त वासनाएँ एक-एक करके जाग्रत होती हैं। तथा अपना रास्ता बना कर निकल जाती हैं।

हमें उचित है कि सर्वप्रथम अपने मानस प्रदेश को स्वच्छ, पवित्र एवं शुद्ध बना लें, तत्पश्चात् उसमें उत्तम-उत्तम संस्कारों के वृक्ष लगावें। निकृष्ट के स्थान पर उत्तम तत्त्व जमा देने से ही जाग्रति होती है।

संकेत विद्या की तैयारी—स्व-संकेतों का आधार हमारी श्रद्धा है। जितना ही हमें अपने में विश्वास होगा उतनी ही तीव्रता से संकेत कार्य करेंगे। जितना ही अविश्वास हम अपनी शक्तियों के प्रति [illegible]

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अधोगति को प्राप्त होंगे। अपनी शक्तियों में अविश्वास करना मानो विषपान करना है। श्रद्धा तुम्हारे अणु-अणु को नव जीवन प्रदान करती है। बिना आत्मश्रद्धा के ज्ञान निष्फल है, क्रिया शक्तिरहित है, संकल्प निर्जीव है तथा मनुष्य क्षुद्र प्राणी है।

निज श्रद्धा को विस्तृत करना, दूसरों पर अपने आत्मविश्वास का जादू फेंकना अपने व्यक्तित्व का सम्यक् प्रसार करना है।

सर्वप्रथम छोटी-छोटी वस्तुओं को प्राप्त करके अपने आपको श्रद्धा को बढ़ाने का अवसर दीजिये। प्रातःकाल दो-चार कार्य दिन में करने का निश्चय कर लीजिये। फिर सायंकाल तक चाहे कुछ भी हो उन्हें पूर्ण कीजिये। प्रारम्भ में कार्य छोटे-छोटे हों। तत्पश्चात् कार्यों को बढ़ाते रहिये। ऐसा करने से आपके आत्मविश्वास में पर्याप्त अभिवृद्धि हो जायेगी। ज्यों-ज्यों हमारी आत्मश्रद्धा में बढ़ती होगी, संसार की विशेष सूक्ष्मसत्ता अर्थात् ईश्वरी सत्ता से हमारा तादात्म्य स्थापित होता जायेगा।

जब हम अपने विश्वास को क्रमशः बढ़ा रहे हों तो एक बार ही कोई ऐसा दुष्कर कार्य न ले बैठो जो तुम्हारी पहुँच के बाहर हो। ऐसा करने से अनेक दिन का एकत्रित आत्मविश्वास नष्ट होता देखा गया है। सच्चा विश्वास सदा प्रबल रहना चाहिये। उसमें मिश्री की फाँस न हो। वह जीता-जागता ज्वलंत विश्वास हो।

हमारा आत्मविश्वास ही तो उस दृढ़ संकल्प शक्ति को उत्पन्न करने वाला तत्त्व है। एक बार आत्मविश्वास उद्दीप्त हो जाने से उसका प्रभाव जीवन पर्यन्त बना रहता है।

विश्वासी पुरुष दूसरों के विचारों को सुनता तो है, पर उसका आत्मविश्वास दूसरों के विचारों का जादू उस पर नहीं चलने देता। वह स्वयं अपने मन की प्रेरणा से ही समस्त कार्य करता है।

प्रथम अभ्यास कैसे होना चाहिए ?—एक ऐसे कमरे में चले जाइये, जहाँ आपके अतिरिक्त कोई न हो। सामने एक बड़ा शीशा रख लीजिये, बड़ा नहीं तो छोटा ही सही। अपनी आकृति को ध्यानपूर्वक देखिए, तुम्हारे ललाट पर वीर्य झलक रहा है। तुम्हारे नेत्रों से तीव्र प्रकाश झलक रहा है। क्या तुम्हारे चेहरे से सफल पुरुषों जैसा आत्म-प्रकाश छन-छनकर आ रहा है ? सफलता की आधारशिला यही है कि आप इन संकेतों पर पूर्ण विश्वास कर लें। देखिये यदि आप किंचित भी संशय लायेंगे तो आपकी मनोवांछाएँ अन्दर से घुटकर मर जायेंगी। वे आपके मुखमण्डल, नेत्रों, मुद्राओं से प्रकट न हो सकेंगी।

शीशे के सामने अपने मुख के अंग-प्रत्यंगों को विश्वासपूर्वक देखते हुए धीरे कहो—"मैं आज अपनी सोई हुई शक्तियों को जगा रहा हूँ। मैंने कितना समय व्यर्थ की बातों में खो दिया ? कितना पुराने विचारों की रूढ़ियों में बिता दिया ? कितने ही वर्ष तक अपने जन्म सिद्ध अधिकारों से वंचित रहा ? आज मेरी आत्मा का 'नवीन जागरण' है। मैं उसकी अलौकिक शक्तियाँ प्रकट कर रहा हूँ। मेरी आत्मा में जो गुप्त सामर्थ्य भरे पड़े हैं, उन्हें प्रकाश में ला रहा हूँ। मैं पवित्र हूँ। सत्-चित आनन्द हूँ। सर्वोपरि चेतन घन हूँ। अविनाशी आत्मा समस्त बन्धन, चिन्ता, भय, शंका और क्षोभ से रहित है। मैं अपने आत्म-स्वरूप में स्थिर रहता हूँ। मैं आत्मा में ही रहता, चलता, फिरता निज अस्तित्व रखता हूँ।

जब तुम इन अमृत-तुल्य संदेशों का पान कर चुके तो अपने चेहरे पर हाथ फेरो। पुनः आँखें खोलकर चेहरा देखने पर तुम्हें कुछ परिवर्तन प्रतीत होने लगेगा। यह विश्वासपूर्वक कहे संकेतों की सामर्थ्य है। कुछ देर पश्चात् पुनः कहो—"मैं प्रत्येक क्षण ऊँचा उठ रहा हूँ। मैं समय को व्यर्थ बरबाद नहीं करता हूँ। प्रत्येक क्षण का उत्तम उपयोग कर रहा हूँ। मैं अपनी विशेषताओं को प्रकट करूँगा। मुझे ज्ञान हो गया है कि मैं असाधारण प्रतिभा सम्पन्न पुरुष हूँ। मुझमें अपनी मौलिकता है। अपनी निजी विशेषता है। मैं अपूर्व विचारों का वृहत् भण्डार हूँ। मैं अपने विचारों से संसार को चकित करूँगा। मैं एक दिन बड़ा आदमी बनूँगा। मेरी वृद्धि का मार्ग आज खुल गया है। उसकी ओर अधिकाधिक वेग से गतिमान हो रहा हूँ। मेरी सर्जन शक्ति, मेरी आकर्षक शक्ति संसार की विशेष सूक्ष्म सत्ता अर्थात् ईश्वरीय सत्ता को प्राप्त करने से जाग्रत हो उठी हैं। अपूर्ण को पूर्ण करने की शक्ति में अपूर्व वृद्धि हो रही है।"

"संसार की समस्त वृहत् शक्तियाँ मेरी रक्षा कर रही हैं। मेरे लिए संसार में किसी तत्त्व की न्यूनता नहीं। मैं जो कुछ कहता हूँ, वह मुझे अनायास ही प्राप्त हो जाता है। मेरे मन के पृष्ठ भाग में अनन्त परिमाण में जो दिव्य में सर्जन शक्ति निवास करती है, उसका स्रोत आज खुल गया है। इस प्रेरणा-केन्द्र से मैं आवश्यक परिमाण में क्रियाशक्ति, सामर्थ्य एवं बुद्धिबल को आकर्षित कर सकता हूँ।"

जब तुम इतना कह चुके हो, तो पुनः चेहरे पर हाथ फेरो और सामर्थ्य शक्ति का अनुभव करो। श्रद्धापूर्वक उच्चारण किये गए विचारों का प्रभाव विद्युत की तरंगों से कई गुना तीव्र है। उससे तुम्हारे समस्त अवयव झंकृत हो उठेंगे। तुम्हारी आन्तरिक सामर्थ्य की, जीवन-बल की, गति तीव्र हो उठेंगी। तुम्हारे आन्तरिक संकल्प का प्रकाश उद्भासित हो उठेगा और उसी दिन से तुम्हारे मित्र तुम में एक अपूर्व विलक्षणता का अनुभव करेंगे।

श्रद्धा व पूर्ण विश्वास के विचारों से भरे संकेतों में यौवन-बल और सफलता का महान रहस्य छिपा हुआ है। संकेतों को उच्चारण करते समय अपने अभ्यन्तर प्रदेश में विश्वास करने वाली वास्तविक महत्ता पर ध्यान रखो। मन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में दिव्य संकेत भरने से तुम जैसी चाहो अन्यन्य शक्तियाँ उत्पन्न कर सकते हो।

साधक के लिए अन्य आवश्यक तत्त्व—तुम्हारी दिव्य शक्तियों का अधिकाधिक जागरण हो रहा है। तुममें दिव्य तत्त्वों का संचार हो रहा है। चारों दिशाओं में तुम्हारी आत्म-ज्योति का प्रकाश फैल रहा है। यह धारण तुम्हारी प्रत्येक बात से प्रकट हो। तुम्हारी वेशभूषा सफल व्यक्तियों की-सी होना अनिवार्य है। फटे हुए वस्त्र उतार फेंको। ये दरिद्रता की निशानियाँ तुम्हारे लिए नहीं हैं।

तुम्हारे शरीर के प्रत्येक अवयव में महान परिवर्तन हो रहा है अतः तुम अपने वातावरण को भी भव्य, जागरण के अनुकूल ही बनाने का प्रयत्न करो। गृह के कोनों, आले, अलमारियों को स्वच्छ करो। इस धूल, मिट्टी की गन्दगी से तुम सदा के लिये मुक्त हो रहे हो। तुम्हारा इनसे कोई सम्बन्ध नहीं है। तुम्हारे वातावरण का निर्माण तुम्हारी कामना के अनुकूल होना चाहिये।

तुम्हारे साहित्य का उद्देश्य भी तुम्हें ऊपर उठाने का होना चाहिये। तुम वही पढ़ो जो तुम्हारी महत्त्वाकांक्षाओं को प्रज्ज्वलित करे। वे तुम्हारी प्रगति में सहायक होंगे तथा इच्छा की अग्नि को शान्त न होने देंगे। यदि तुम खरीद सको तो आत्मा को ऊँचा उठाने वाली अच्छी-अच्छी पुस्तकें खरीदो। इनका अध्ययन तुम्हारे जागरण के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

आत्मा को इनके परिपुष्ट विचारों में रमण करने दो। तत्पश्चात् दैनिक कार्य प्रारम्भ करो। सारे दिन तुम में एक विशेष स्फूर्ति-सी रहेगी। मित्रों को तुम्हारे अन्दर एक नवीनता प्रतीत होगी।

रात्रि में शय्या ग्रहण से पूर्व एकान्त स्थान पर शान्त चित्त होकर, नेत्र मूँदकर बैठ जाओ। शरीर और मन को शिथिल कर लो। सब ओर से विचार-प्रवाह हटाकर अपनी प्रगति की भावना पर दस मिनट को चित्त एकाग्र करो। नीचे दी हुई भावना में दृढ़ता से मन लगाओ। इस संदेश को मन में जमा लो—

अपनी उन्नति की भावना— "आज मैंने सब बलों का आश्रय त्याग दिया है, केवल एकमात्र अपनी प्रबल आत्मा का सहारा ग्रहण किया है। मेरा एकमात्र बल मेरी आत्मा है। अब मैं क्षण भर भी दूसरों की सहायता पर निर्भर नहीं रहूँगा।

"जब मैं व्याकुल हो जाता हूँ, एकदम निस्सहाय हो जाता हूँ, तो मैं केवल अन्तरात्मा की ओर दृष्टिपात करता हूँ। मेरा परम मित्र मेरी आत्मा है। मेरा सहायक, मेरा रखवाला मुझे आगे बढ़ाने वाला मेरी आत्मा है। उसी के सहारे मैं आगे बढ़ रहा हूँ।

"मेरा सुख किसी बाह्य वस्तु पर निर्भर नहीं है। मेरा सुख तो मेरी आत्मा की शरण में है। राग-द्वेष से उठने वाली क्षुद्र आवेशों की तरंग मेरे दृढ़ मन को कदापि विचलित नहीं कर सकती, क्योंकि मैं पर्वत के सदृश दृढ़ हूँ। प्रत्येक ओर से मजबूत हूँ।"

"मुझे सच्चा यथार्थ ज्ञान, सत्प्रेरणा अपने अन्तर्मन से ही प्राप्त होती है। सत्य का उपदेश देने वाला, सीधा रास्ता दिखाने वाला सच्चा सद्गुरु मेरी अन्तरात्मा में है। मैं अब किसी अन्य का भरोसा नहीं करता। व्यर्थ में दूसरों की खुशामद नहीं करता। अपनी आत्मा के अतिरिक्त मेरा इस संसार में कोई सच्चा रक्षक नहीं है। जिसने आत्म-देव की शरण ले ली है, उसे भय, चिन्ता अज्ञान व अकल्याण का स्पर्श कैसे हो सकता है ?

"मैं अपने वास्तविक स्वरूप को भूलकर यों ही भटक रहा था। जैसे मृग कस्तूरी की खोज में इधर-उधर मारा-मारा फिरता है, वैसे ही मैं व्यर्थ आश्रय के लिए भटक रहा था। अब मेरे अन्धकार का पर्दा उठ गया है। मुझे आत्मा का भव्य प्रकाश प्रतीत होता है। मैं आत्मा की ध्वनि को स्पष्ट सुन सकता हूँ। मैं उसी के संकेतों पर अग्रसर होता हूँ।

"मेरे संस्कारों, मेरे संकल्पों, मेरे मानसिक संस्थान पर अब किसी अन्य का जादू नहीं चल सकता। मैं प्रकाश के राज्य में निवास करता हूँ, जहाँ भ्रम, अशान्ति और दुःख मुझे स्पर्श तक नहीं कर सकते।

"मेरा विश्राम-धाम मेरी आत्मा है, शक्ति का अक्षय भण्डार मेरी आत्मा है। मेरी आत्मा में आनन्द की लहरें उठती हैं। शुभ प्रकाश जगमगा रहा है और श्रद्धा में मग्न होकर आत्मानन्द में मस्त हो रहा हूँ और उस अवस्था में पहुँच रहा हूँ, जहाँ मोह उत्पन्न नहीं होता शोक-संताप का प्रसंग नहीं उत्पन्न होता और उसकी मस्ती में ऐसा बल उत्पन्न होता है कि सब शंका-सन्देह एकदम दूर हो जाते हैं।"

पुष्ट श्रद्धा एवं प्रगाढ़ आत्मविश्वास से दृढ़तापूर्वक उपरोक्त भावना पर मन केन्द्रित कीजिये। जब तुम उपरोक्त संदेश अपनी आत्मा को दे चुको तो अपने मन की क्रियाओं से पृथक् हो कर अन्तःकरण के अन्तस्थ प्रदेश को देखो कि वहाँ क्या क्रम चल रहा है ? तुम्हारे अन्तःकरण का पुनर्निर्माण हो रहा है। पुराने रूढ़िग्रस्त भग्नावशेष धाराशायी हो रहे हैं। उनके स्थान पर नूतन प्रासाद का निर्माण कार्य चल रहा है।

इस संसार में तुम्हारा कल्याण करने वाली सत्ता तुम्हारे ये संदेश ही हैं। तुमसे बाहर की कोई सत्ता तुम्हारा कल्याण नहीं कर सकती। तुम्हारे संकेत जैसे होंगे वैसा ही तुम्हारा अन्तर्जगत निर्मित होगा। तुम्हारे संकेतों की प्रतिकृति तुम्हारे दैनिक कार्यक्रम पर आवेंगी। वे ही क्रमशः तुम्हारे आन्तरिक प्रदेश में गढ़ जायेंगे। तब ही तुम बार-बार ऊँचा उठाने वाली प्रेरणा को हृदय में अनुभव कर सकोगे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रात्रि में अव्यक्त का निर्माण

संकेत विद्या की साधना करने में तुम्हें अपनी रात्रियों पर विशेष ध्यान रखना चाहिए। हमारा अव्यक्त मन रात्रि में अधिक तीव्रता से कार्य करता है। जिन भावनाओं को दृढ़ता से लेकर तुम सोते हो, वे ही निद्रित अवस्था में अव्यक्त क्षेत्र में प्रवेश करती हैं। प्रारम्भ में कुछ समय तक तो यह प्रतीत नहीं होता कि हमारे अव्यक्त का पुन:निर्माण हो रहा है। किन्तु प्रभाव अवश्य पड़ता है। जितना दृढ़ तुम्हारा संकल्प होगा, उतनी ही दृढ़तापूर्वक इन शुभ्र भावनाओं की जड़ जमेंगी।

प्रत्येक रात्रि में सोने से पूर्व आधे घण्टे का प्रोग्राम निश्चित करो। अच्छी पुस्तकों में से किसी के कुछ अंश पढ़ो।

इस पुस्तक के कुछ अंश अवश्य पढ़ो। तुम्हारे रात्रि के प्रयोगों के लिए कुछ संकेत यहाँ दिये जाते हैं। इनसे एक-एक दिन के लिए सात प्रकार की भावनाएँ दी जाती हैं।

आत्म-ज्योति की भावना—"एक प्रखर आत्म-ज्योति मेरे हृदय-सूर्य से प्रकाशित हो रही है। इसके दिव्य प्रकाश में मुझे निज कर्त्तव्य भलीभाँति दृष्टिगोचर हो रहा है। मेरा अन्तर्जगत सब ओर से प्रकाशित है। उसमें अज्ञान का अँधेरा ठहर नहीं सकता।"

"मेरी समस्त भ्रांतियाँ विलीन हो गई हैं। अब मैं व्यर्थ के मिथ्याजाल में नहीं फँसता, थोथे झमेलों में समय तथा अपनी मन:शान्ति नष्ट नहीं करता। मैं अपनी परम पवित्र आत्मा में अचल और स्थिर हो गया हूँ। मैं सांसारिक लोभ एवं तृष्णा के पंजे से छूट चुका हूँ।"

"मैं अब क्षुब्ध नहीं होता। व्यग्रता मुझे नहीं सताती क्योंकि मुझे सत्पथ का निर्देश करने वाली आत्मज्योति की प्राप्ति हो गई है। अब मैं वासनाओं के मुग्धकारी थोथे जाल में नहीं फँसता, क्षण-भंगुर जिह्वा के स्वादों से भ्रमित नहीं होता। कड़ी से कड़ी विपत्ति आने पर भी व्यग्र नहीं होता। मेरे वातावरण की हलचलें मेरी मन:शान्ति को भंग नही कर सकतीं। मैं बदलती दुनिया की मिथ्या वस्तुओं पर मनोवृत्ति को केन्द्रित नहीं करता।"

"मेरा मन:जगत प्रकाशवान है। वहाँ सर्वत्र शान्ति की शीतलता है। प्रखर परिताप का प्रज्ज्वलन सदा-सर्वदा के लिये चला गया। बाह्य क्लेशों की झंझटें मुझे परेशान नहीं करतीं। उनकी मेरी आत्मा तक पहुँच भी नहीं है। मेरी आत्मा तो संसार की क्षणभंगुरता से निर्दोष है। सर्वथा उन्मुक्त है।"

"मुझे अपनी वृत्तियाँ बाह्य जगत् की हलचलों से हटाकर आत्मा में स्थिर करने से परम आनन्द आता है। नवीन उत्साह, नवीन ज्ञान, नवीन आनन्द प्राप्त होता है।

"मैं निकृष्ट अवस्था से हटकर उत्कृष्ट अवस्था में निवास करता हूँ। उत्कृष्ट भूमिका में संसार की विविध बाधाएँ मेरा पीछा नहीं कर सकतीं। आत्मा में वृत्ति स्थिर करने के उपरान्त मैं पूर्ण निर्मलता का अनुभव करता हूँ। मेरी प्रत्येक क्रिया, प्रत्येक शब्द—यहाँ तक कि अणु-अणु में आत्म-तेज निकल रहा है। मैं अपने परम देव-आत्मदेव की महानता से अनुरंजित हूँ। मुझमें भी वही आनन्द, शक्ति भासमान हो रही है। सबका पल्ला त्यागकर अब मैंने परम देव का आश्रय ग्रहण किया है।

अपनी उन्नति की भावना—"अब मैं अज्ञानान्धकार की मोह निद्रा से जाग्रत हो गया हूँ। मुझे ज्ञान हो गया है कि इस संसार में बिना हाथ हिलाये कुछ भी काम नहीं हो सकता। मैं अब अपनी शक्ति का अनुभव करता हूँ। मेरी शक्तियाँ मेरे अणु-अणु से प्रकाशित हो रही हैं। मेरी नस-नस में शक्तिशाली रक्त दौड़ रहा है।

"मैं अपने भाग्य को दोष नहीं देता। मेरे भाग्य का निर्माण अत्यन्त शुभ मुहूर्त में हुआ है। उसमें अनेक उत्कृष्ट तत्त्व लगाये गये हैं। क्लेश, असंतोष, निराशा, कायरता तथा संशय उत्पन्न करने वाली वृत्तियों का उपयोग मेरे भाग्य-विधान में नहीं हुआ है।

"मैं अपने विचारों का स्वामी हूँ। स्वयं विचार करना जानता हूँ। अपने जीवन की बागडोर दूसरों को नहीं सौंपता। मेरे निश्चयपूर्ण परिपुष्ट हो चुके हैं। अपने जीवन को उच्च बनाने का निश्चय कर, मैं जीवन संग्राम में प्रविष्ट हो रहा हूँ। मैं निरन्तर आगे ही चलता रहूँगा।

"प्रतिकूलता से युद्ध करने की शक्ति मुझ में है। मैं अत्यन्त साहस से प्रतिकूल परिस्थितियों पर अधिकार कर सकता हूँ। विरोधी से विरोधी को भी जीत सकता हूँ। मैं अपने मनोरथों के प्रति पर्वत के सदृश अटल हूँ, स्थिर हूँ। मैं जीवन में आने वाली कठिनाइयों को हटा दूँगा।"

"किसी दूसरे का जादू या सत्ता मुझ पर नहीं चल सकती। सम्पूर्ण ब्रह्मांड में कोई भी ऐसी शक्ति नहीं जो मुझ पर अधिकार कर सके। मैं अपनी शक्तियों का स्वामी हूँ। प्रतिकूल विकट प्रसंग उपस्थित होने पर हिम्मत नहीं तोड़ता हूँ।"

"मुझे अपने जीवन में कितने ही महत्त्वपूर्ण कार्य करने हैं ? साधारण पुरुषों की अपेक्षा बहुत ऊँचा उठ जाना है। अधिक शक्तियाँ प्राप्त करनी हैं। मैं अपनी विशेषता को प्रकाशित कर संसार को चकित करूँगा।"

दृढ़ निश्चय, दृढ़ संकल्प तथा दृढ़ स्थिरता की भावना—आज से मैं दृढ़ निश्चय करता हूँ कि अपने मनोरथों, अपने आदर्शों, अपनी प्रेरणाओं तथा अपनी आत्मा के प्रति सच्चा रहूँगा। जीवन का जो क्रम मैंने निश्चय किया है उसी पर जमा रहूँगा। मैं अपने कर्त्तव्य के विरुद्ध आचरण न करूँगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"मेरे अन्तर प्रदेश में जो भव्य प्रेरणाएँ उद्दीप्त होती हैं, उनका प्रकाश करूँगा उन्हें यों ही नष्ट न होने दूँगा। वे मेरी उन्नति की द्योतक हैं। मेरी सम्पत्ति हैं। इनकी ही पूर्ति से मेरी उन्नति सम्भव है। जिन वस्तुओं की मैं अभिलाषा करता हूँ, वे मुझे अवश्य प्राप्त होंगी। मेरी आशापूर्ण तरंगें, आत्मा की महत्त्वाकांक्षाएँ, मेरे मन की दिव्य भावनाएँ जीवनप्रद हैं। पूरी तरह सत्य हैं, मजबूत हैं, बड़ी प्रबल हैं, प्रभावोत्पादक हैं। मेरी शक्ति की सूचक हैं। मेरी उन्नति की परिचायक हैं। मेरी कार्य सम्पादन शक्ति की द्योतक हैं।"

"जिसकी मैं कामना करता हूँ, जिसकी सिद्धि के लिए मैं अन्तःकरणपूर्वक अभिलाषा करता हूँ, उसकी मुझे अवश्य प्राप्ति होगी। जो आदर्श मैंने सच्चे अन्तःकरण से बनाया है, वह अवश्य ही मेरे सामने सत्य के रूप में प्रकट होगा। मेरे मनोरथ सिद्ध होंगे, मेरे सुख-स्वप्न सच्चे होंगे।

सर्वेश्वर ने मुझे आत्मशक्ति प्रदान की है। मेरे प्रत्येक अंग को शक्ति से परिपूर्ण किया है। अतः दृढ़ निश्चय द्वारा मैं उन दिव्य शक्तियों का विकास करूँगा। मुझ में आत्मज्योति की शुद्धता प्रदीप्त है। मेरे हृदय में उज्ज्वल भाव ही प्रवेश करते हैं।

"मैं दृढ़ हूँ। आजकल की अपेक्षा अधिक सबल हूँ। पर्वत की तरह स्थिर हूँ। संसार के क्षुद्र प्रलोभन या घटनाएँ मेरे दृढ़ निश्चय को चलायमान नहीं कर सकतीं। मैं दृढ़ निश्चय से कितने ही कठिन से कठिन विघ्न-बाधाओं के आने पर भी हटने वाला नहीं हूँ। मैं अब पूर्ण दृढ़ निश्चय वाला व्यक्ति बन गया हूँ।"

आध्यात्मिक विवेक की भावना—"मैं अपना बहुमूल्य समय खान-पान, वस्त्र, आभूषण, पदार्थ-संग्रह आदि में व्यर्थ खराब नहीं करता। शृंगार में समय नष्ट नहीं करता। दूसरों के दोष-दर्शन नहीं करता। मुझे विवेक हो गया है। मैं जगत् का वास्तविक स्वरूप समझ गया हूँ। संसार में मिथ्या जाल की स्थिति को भलीभाँति समझ गया हूँ।"

"अब मैं तुच्छ वासनाओं का गुलाम नहीं बना रहूँगा। क्षुद्र इच्छाएँ अब मुझे नहीं दबा सकतीं। पानी के बुलबुले की भाँति क्षणभंगुर पदार्थों के पीछे अब मैं छटपटाता न फिरूँगा। सांसारिक सम्पदा की अपेक्षा आध्यात्मिक सम्पत्ति में अब मुझे अधिक सुख अनुभव होता है। स्वार्थ की भावनाएँ मुझे विक्षुब्ध नहीं कर सकतीं। संसार की मोहक वस्तुएँ मुझे पथ-भ्रष्ट नहीं कर सकतीं, प्रबल से प्रबल आसुरी प्रवृत्तियाँ मुझे अस्त-व्यस्त नहीं कर सकतीं।

"चारों दिशाओं में मेरी विशुद्ध आत्मा का प्रकाश प्रस्फुटित हो रहा है। मेरे हृदय को परमात्मा का शुभ्र प्रकाश स्पर्श कर रहा है। मेरी आत्मज्योति प्रज्ज्वलित हो रही है। मेरी स्वार्थ की वासनाएँ जड़-मूल से विनष्ट हो चुकी हैं।

"उचित कर्म में प्रवृत्त कराने वाली सद्बुद्धि मेरे हृदय में जागृत हो चुकी है। मेरे हृदय को सत् प्रेरणा प्राप्त हो रही है। परमात्मा के परम पावन पवित्र स्पर्श से मेरा अणु-अणु प्रकाशित हो उठा है। मेरी दुर्मति नष्ट हो चुकी है। मन विशुद्ध हो चुका है। मेरे हृदय में परमात्मा के प्रति अटूट श्रद्धा है। क्षण भर भी मैं इन्द्रियों का दास नहीं बन सकता। मैंने भलीभाँति अनुभव कर लिया है कि संसार जिस सुख को पाने के लिये मरा जाता है, उसमें सुख नहीं है, वास्तविक सुख का भण्डार तो मेरे भीतर है।"

"मेरी प्रबल इच्छाशक्ति के सन्मुख विघ्न-बाधा तिल मात्र भी नहीं ठहर सकतीं। विघ्न-बाधाएँ मेरी अन्तर्ज्योति को प्रज्ज्वलित करती हैं। मैं प्रत्येक संकट का अभिनन्दन करता हूँ।"

"मैं भीषण से भीषण विपत्ति में भी प्रफुल्लित रहता हूँ क्योंकि मेरी आत्मा में सुप्त शक्तियाँ सजग हो उठी हैं। मंगलकारी विपत्तियों आओ ! तुम मुझे झुका नहीं सकतीं क्योंकि मैं अपरिमित बल वाला आत्म पिंड हूँ।"

भय से मुक्ति का निर्देश—मेरे अन्तस्थल में संचित भय के कीटाणु निकल रहे हैं। अब उनके लिए मेरे हृदय-प्रदेश में कोई स्थान नहीं। अविश्वास, चिन्ता, अश्रद्धा, संकोच, कायरता इत्यादि विजातीय तत्त्व मेरे अन्तःकरण में नहीं ठहर सकते।

"मुझे प्रतीत हो गया है कि निश्चित एवं निर्भय पुरुष ही उत्कृष्ट जीवन प्राप्त करते हैं। चिन्तायुक्त पुरुष कभी अग्रसर नहीं हो पाता। मैं भविष्य के लिए दुःखों की कल्पना नहीं करता। भय की पुष्टि द्वारा मैं अपनी स्फूर्ति को नष्ट-भ्रष्ट नहीं होने देता। भयभीत जीवन वास्तविक जीवन से अत्यन्त दूर है। मैं निज अन्तःकरण को भूतों का डेरा कभी नहीं बनाता।"

"मुझे कोई भय नहीं। चिन्ता नहीं। डर नहीं। मैं पूर्ण निर्भय हूँ, पूर्ण प्रकाशित हूँ। मुझे तो संसार से सुख का आनन्द लूटना है फिर भला भय क्यों कर घुस सकता है ? मैं परम निशंक हूँ। मुझे अस्त-व्यस्त करने की किसी को हिम्मत नहीं।"

"मुझे संसार में कोई हानि नहीं पहुँचा सकता। अनुचित रीति से कोई नहीं दबा सकता। मैं निरन्तर आगे बढ़ रहा हूँ। कौन मेरे मार्ग में बाधा पहुँचा सकता है ? मैं सब ओर से पूर्ण सुरक्षित हूँ। मुझे मेरी आत्मा ने ऐसा बल प्रदान किया है कि उसके आगे सबको ही झुकना पड़ता है।

"मैं भय को फूँक से उड़ा देता हूँ। पास तक नहीं आने देता। भय से मेरा कोई नाता-रिश्ता नहीं। भय से मेरा अन्तःकरण निर्मल हो चुका है। अब उसमें उन पवित्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विचारों का समावेश हो चुका है कि भय की दाल नहीं गल सकती। भय मुझसे डरता है। मेरी शक्ति से डरता है। मेरी आत्मश्रद्धा महान है। जहाँ आत्मा का भव्य प्रकाश है, वहाँ भय का अन्धकार कहाँ टिक सकता है।''

''मैं एक ऐसे दिव्यलोक में निवास करता हूँ जहाँ न चिन्ता है, न भय है, न घृणा है, न अहंकार ! वहाँ तो अखण्ड आनन्द, अखण्ड शान्ति तथा अखण्ड प्रसन्नता निवास करती है। मैं तो परब्रह्म के अखण्ड आनन्द स्रोत में विहार करता हूँ, फिर भय मेरे ऊपर किस प्रकार आक्रमण कर सकता है ?''

आत्मावलम्बन की भावना—मैं अपने चित्त को किसी भी प्रकार की परिस्थिति से विक्षिप्त नहीं होने देता। मैं बाह्य दुःखों और चिन्ताओं से परेशान नहीं होता। मेरे इर्द-गिर्द की झंझटें मेरी शान्ति को भंग नहीं कर सकतीं। मैं क्षणभंगुर वस्तुओं पर अपनी चित्त-वृत्ति स्थिर नहीं करता।

''मैं बड़ी से बड़ी विपत्ति, भारी कष्ट, पीड़ा, आघात आने पर भी नहीं घबराता। संसार में जो कुछ है, उसका उद्देश्य महान है, इसी भावना को हृदय में धारण करके मैं संसार का व्यवहार करता हूँ। मुझे अपनी वृत्ति आत्मा में स्थिर करने में आनन्द आता है। आत्मा में मन को एकाग्र करने से मुझे नवीन उत्साह, नवीन ज्ञान और नित नवीन आनन्द प्राप्त होता है।''

''अब मैं प्रकृति के जाल में नहीं फँसता और प्रकृति से हटकर आत्मा की ओर दौड़ता हूँ। मैं अब बाह्य वस्तुओं का आश्रय ग्रहण नहीं करता। मुझे अनुभव हो गया है कि आत्मा से बढ़कर संसार में अन्य कोई वस्तु नहीं है।''

''अब मुझे किसी बाह्य वस्तु की अपेक्षा नहीं है। मेरा मन आत्मा में रमण करने लगा है। जगत् में अब किसी के आधीन नहीं हूँ, मेरे सत्यस्वरूप आत्मा के सन्मुख संसार की विघ्न-बाधाएँ एक क्षण भी नहीं ठहर सकतीं। मैं मेरु की तरह अटल हूँ।''

''मैं अपने परम-देव का साक्षात्कार कर रहा हूँ। आत्मज्योति मेरे हृदय मन्दिर में प्रकाशमान हो रही है, मेरी समस्त भ्रान्तियाँ लोप हो गई हैं। अब मैं कभी भी संसार के क्षणभंगुर अवलम्बन के पीछे नहीं छटपटाता प्रत्युत, अपनी आत्मा में पूर्ण स्थिर हो गया हूँ।''

''मुझे ज्ञात हो गया है कि आत्मा में ही वास्तविक सुख, वास्तविक आनन्द एवं वास्तविक स्वाधीनता है। मैं सांसारिक लोभ और तृष्णा से मुक्त हो गया हूँ। अब मैं क्षुभित नहीं होता। अस्त-व्यस्त नहीं होता। परेशान नहीं होता क्योंकि मुझे अपने आपका अनुभव हो गया है।

विपत्ति पर विजय प्राप्त करने की भावना—''मुझे अनुभव हो गया है कि जीवन में जो विपत्तियाँ, कष्ट और प्रतिकूलताएँ आती हैं, वे सब मेरी भलाई के लिये आती हैं। भारी से भारी विपत्ति सहन करने की सामर्थ्य मुझ में है। मेरे अन्तःकरण के अन्तस्थल में ऐसा असाधारण बल है कि भारी से भारी संकट और विघ्न-बाधाओं को मैं छिन्न-भिन्न कर सकता हूँ।

''मैं विपत्तियों का प्रसन्नता से स्वागत करता हूँ। अग्नि में तपकर हथौड़े के प्रहार सहन कर, लोहे के जैसे सुन्दर हथियार बनते हैं, उसी प्रकार विपत्तियाँ, कठिनाइयाँ और बाधाएँ ही महान गुणों का विकास करती हैं।''

''मैं विरोधी और विपरीत परिस्थिति में रहकर अपने अविचल लक्ष्य पर स्थिर रहता हूँ। मैं भारी से भारी विपत्ति को हँसत-हँसते सहन करता हूँ और अपने जीवन की दुःख-गाथा को लोगों को नहीं सुनाता फिरता। मेरे हृदय में वह देव बल है कि क्षुद्र दुर्भाव या आसुरी विचार मुझे दबा नहीं सकते।''

दैनिक जीवन में संकेत का प्रयोग

हमारे दैनिक जीवन के प्रत्येक कार्य में हमारे संकेत या निर्देश कार्य किया करते हैं। संकेत ही मनुष्य के विविध कार्यों को सफलता प्रदान करता है। हमारे चरित्र विकास में धैर्य, कर्त्तव्यपरायणता और संकल्प की दृढ़ता प्रायः हमारे पुण्य संकेतों पर ही निर्भर है। अपने नित्य प्रति के संकटों से हम अपने वातावरण की सृष्टि करते हैं। मकड़ी के जाले के सदृश्य हम कभी गुनगुनाकर, कभी मूल रूप में अपने आपको कुछ न कुछ आज्ञा दिया करते हैं। अपनी आत्मा को जैसा निर्देश दे देते हैं, वैसी ही सृष्टि सर्वप्रथम हमारे अन्तःकरण में होती है, तत्पश्चात् उन निर्देशों के अनुसार ही वातावरण निर्मित होता चलता है। कितनी ही बार दूसरे के संकेत हमारे ऊपर जादू-सा कर दिखाते हैं। कितने ही मनुष्य दूसरों के संकेतों के दास होते हैं। जब तक उन्हें कोई निर्देश नहीं करता, तब तक वे कार्य में हाथ ही नहीं डालते। लोग उन्हें बुरे संकेत दे देते हैं, तो वे परेशान हो उठते हैं, सर्वत्र तूफान-सा अनुभव करते हैं। उत्तेजना के शिकार हो उठते हैं और मनःस्थिरता खो बैठते हैं। कोई उन्हें आश्वासनयुक्त संकेत प्राप्त करा देते हैं, उनकी चिन्ता, व्यग्रता, उद्वेग, निराशा, दुःख, चिड़चिड़ापन शान्त हो जाता है। वे शान्त होकर आशा की श्वाँस लेते हैं, वातावरण सुख-शान्तिमय बन जाता है, अन्तरात्मा में अपूर्व बल का संचार होता है।

कलुषित निर्देश अन्धकार की वस्तु हैं। वे जीवन का नाश कर सकते हैं। तुम बुरे संकेतों को स्वीकार कदापि न करो। अनायास ही उनके अनुगामी न बनो। उनसे युद्ध करो। दूसरों के विपरीत संकेतों को ग्रहण करना अपना पतन करना है।

संकेत का सूक्ष्म कार्य—एक व्यक्ति दूसरे के संकेतों का अनुगामी बन जाता है किन्तु उसे यह ज्ञान नहीं रहता कि वह क्यों कर दूसरे के विचारों का अनुसरण करने लगा। संकेत बड़ी सूक्ष्म रीति से निर्देशित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यक्ति के अव्यक्त में कार्य आरम्भ करता है। उस व्यक्ति को यह सुधि-बुधि नहीं रहती कि दूसरे के संकेत निरन्तर उसमें विचार-परिवर्तन कर रहे हैं। अपनी मानसिक दुर्बलता के कारण दूसरे व्यक्ति के पुष्ट संकेत उसके दुर्बल मनःक्षेत्र में प्रवेश कर जाते हैं और सरलतापूर्वक जड़ पकड़ लेते हैं। वास्तव में अगर निर्देशित व्यक्ति को इस तत्त्व का ज्ञान हो जाय कि वह दूसरों के संकेतों से प्रभावित हो रहा है या जान-बूझकर उस संकेत का प्रयोग किया जा रहा है, तो फिर उस संकेत का प्रभाव अति न्यून रह जाता है। यदि निर्देशित व्यक्ति कुछ भी संकल्प वाला हुआ तो उस पर संकेत का प्रभाव कुछ भी नहीं रह जाता।

एक व्यक्ति का अद्‌भुत वृतान्त किसी पत्र में छपा था। वह संकेत शक्ति पर व्याख्यान दिया करता है। व्याख्यान प्रारम्भ करने से पूर्व वह अपनी जेब में से एक बोतल निकालकर स्टेज पर तरल पदार्थ छिड़क देता है और निर्देश करता है—

"मैंने थोड़ी-सी सुगन्ध छिड़की है। यह तीव्र गति से आप के पास पहुँचेगी ज्योंही यह सुगन्धि आप तक पहुँचे, आप हाथ उठाते जाइये। इससे मुझे अतीव सहायता प्राप्त होगी और मैं अपना कार्य शीघ्रता से आरम्भ कर सकूँगा। मैं यह जान सकूँगा कि यह सुगन्ध कितनी तेजी से चलती है ?"

ऐसा निर्देश देकर वह अपना भाषण प्रारम्भ कर देता है। पहले अगली पंक्ति में, तत्पश्चात् मध्य की पंक्तियों में और अन्ततः अन्तिम पंक्तियों में क्रमशः हाथ उठते जाते हैं। इसी बीच में व्याख्यानदाता सिर हिलाकर हाथ उठाने वाले प्रत्येक व्यक्ति को धन्यवाद देता जाता है और जब सबसे अन्तिम व्यक्ति अपना हाथ उठा चुकता है तो तब वह कहता है—

"आपको स्मरण होगा कि मैं आज संकेत शक्ति 'पावर ऑफ सजेशन' पर व्याख्यान दे रहा हूँ। मैंने यहाँ स्टेज पर जो कुछ छिड़का वह सुगन्ध नहीं थी, वरन् शुद्ध जल था। आप आगे आकर बोतल को सूँघकर देख सकते हैं।" उपस्थित सज्जनों को बोतल सूँघ कर बड़ा कौतूहल होता है। वास्तव में प्रारम्भ में ही यदि निर्देशित व्यक्ति को यह ज्ञान हो जाय कि उस पर संकेत किया जाने वाला है तो वह उससे साफ बच जाता है। उसका अव्यक्त मन अनायास ही निर्देश करने वाले के विचारों का अनुगामी नहीं बनता।

संकेत की दो अवस्थाएँ—कुछ व्यक्ति ऐसे भोले-भाले होते हैं, जो बिना सोचे-समझे, तर्क-वितर्क किये जो कुछ संकेत उन्हें दिया जाता है, उसे सहर्ष स्वीकार कर लेते हैं। ये उसकी सत्यता के विषय में लेशमात्र भी संशय नहीं करते। यह संकेत की असाधारण अवस्था है जिसमें निर्देशित व्यक्ति हतबुद्धि-सा होकर जो कुछ उसे सुझाया जाता है मान लेता है।

एक समय की बात है। बाजीगर ने एक रुपया हाथ में लिया और बोला—देखिये मैं इसी रुपये में से जैसी आप चाहेंगे उसी प्रकार की सुगन्ध सुँघाऊँगा। ऐसा कहकर वह निर्देशित व्यक्ति से पूछता है—बोलो कौन-सी सुगन्ध चाहते हो ? निर्देशित व्यक्ति कहता है—'गुलाब' और तुरन्त उसे रुपये में से गुलाब की सुगन्ध आती है। इसी प्रकार के अनेक भ्रम असाधारण संकेतों से उत्पन्न किये जा सकते हैं।

एक शिक्षक अपनी कक्षा में एक सुन्दर चित्र लाया और बोला देखो लड़को ! यह एक सुन्दर नदी का चित्र मैं तुम्हें दिखाता हूँ। तुम दूर से देखकर बताना कि इसमें और क्या-क्या है ? ऐसा कहकर वह चित्र को दूर से दिखाता है। विद्यार्थी खड़ा होता है और कहता है—इस नदी में एक नाव तैर रही है। दूसरा कहता है—नदी के किनारे दो वृक्ष खड़े हैं। तीसरा कहता है—नाव में दो व्यक्ति बैठे हैं। चौथा कहता है—नाव पश्चिम की ओर बढ़ती जा रही है इत्यादि। अन्त में एक प्रौढ़ विद्यार्थी से प्रश्न हुआ। वह घबरा गया और अन्त में बोला—"मास्टर साहब, मुझे तो चित्र में नाव भी नहीं दीखती।" सचमुच चित्र में नाव न थी। वह एक साधारण-सा चित्र था, जिसमें एक नदी तथा बादल अंकित किये गये थे। संकेत के कारण लड़कों के मन में भ्रम उत्पन्न हो गया था।

असाधारण अवस्था में निर्देशित व्यक्ति का मन इतना निर्बल होता है कि निर्देशक जो कुछ चाहता है मनवा लेता है। ऐसे व्यक्ति को जो संकेत दिया जाता है वह फौरन स्वीकार कर लेता है। यह सब निर्देशित व्यक्ति की मानसिक दुर्बलता के कारण होता है।

दूसरे प्रकार के संकेत मन की साधारण अवस्था में ही कार्य किया करते हैं। उपरोक्त असाधारण अवस्था में निर्देशित व्यक्ति को यह ज्ञान नहीं रहता कि उसे संकेत किया जा रहा है। किन्तु साधारण अवस्था में संकेत का कार्य स्पष्ट परिलक्षित होता है। एक बालक अपनी माता को प्रातःकाल पूजा करते देखता है तो उसे संकेत मिलता है। वह बोलता है कि मेरी माँ इस कार्य को करती है। मैं भी करूँ और वह चुपचाप ईंट-पत्थरों के ठाकुर जी की पूजा प्रारम्भ करता है। सिगरेट का शौक बच्चों को अन्य घर वालों को सिगरेट पीता देखकर लगता है। वे सोचते हैं अमुक चाचा या काका सिगरेट पीता है तो मैं भी उसे पीयूँगा क्योंकि अन्य व्यक्ति भी पीते हैं इसलिये वह जान-बूझकर धूम्रपान प्रारम्भ कर देता है।

इस अवस्था में मन साधारण अवस्था में है और संकेत का कार्य स्पष्ट रूप में चलता है। इसी प्रकार के अनेक प्रभाव कभी असाधारण अवस्था में तो कभी साधारण अवस्था में हमारे दैनिक जीवन में घटित होते रहते हैं।

शिशु के मन पर संकेत का प्रभाव—बालकों पर असाधारण अवस्था में संकेत अधिक कार्य करता है। वे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जो कुछ संकेत उन्हें प्रदान किये जाते हैं, वे उन्हें सहर्ष स्वीकार भी कर लेते हैं। यदि माता कहती है—तू राजा बेटा है, अच्छे-अच्छे काम करता है, दूसरों को गाली नहीं देता, इम्तहान में पास हो जाता है, सब स्थानों पर विजयी होता है इत्यादि, तो शिशु का अव्यक्त मन तुरन्त इन संकेतों को ग्रहण कर लेता है और भविष्य में ये संकेत उसे ऊँचा उठाये रहते हैं। इसके विपरीत यदि माता शिशु को गाली दे और कहे—"तू जन्मभर रोता फिरेगा, भीख माँगेगा, दुनिया में लोगों का मुँह ताका करेगा, तुझसे कुछ होना जाना नहीं। तू हर जगह हारता है।" इस प्रकार के घातक संकेतों का शिशु के हृदय पर बड़ा विषैला प्रभाव पड़ता है। जो शिक्षक अपने शिष्यों को—'तू तो निरा गधा है', 'दिमाग में निरा गोबर भरा है', 'नालायक कम्बख्त बिलकुल बुद्धू है।' इत्यादि संकेत देते हैं वे अपने शिष्यों के मार्ग में काँटे बोते हैं। बचपन में दिये गये घातक संकेतों से कितने ही होनहार बालकों के जीवन अन्धकारमय हो जाते हैं।

स्वयं अपने आपको संकेत देना

अपने संकेतों से स्वयं प्रभावित होना ही संकेत का चमत्कार है। मनुष्य स्वयं अपना निर्माण करता है। इस बात को यों कह लीजिये कि मनुष्य जो-जो संकेत समय-समय पर अपने आपको दिया करता है, कालान्तर में वे ही उसके भाग्य का निर्माण किया करते हैं।

जो मनुष्य दूसरों के विचारों से प्रभावित न होकर स्वयं अपने ही विचारों पर अपने भविष्य का निर्माण करता है वह धन्य है। उसी का जीवन सुख-शान्तिमय बनता है। दूसरों के विचारों से प्रभावित होना मानो दूसरों को अपना स्वामी बना देना है। यदि मनुष्य अपने जीवन को दूसरों को ही सौंप दे तो उसका अपना रह ही क्या जावेगा ?

अनेक मनुष्यों के मानसिक स्तर बड़े निर्बल होते हैं। संसार के दूसरे मनुष्य चारों ओर से भ्रांति के विचार ला-लाकर उनके मन में डालते हैं। वे उन्हीं को अन्तःकरण की स्थायी वृत्ति बना लेते हैं। वैसे ही बन जाते हैं। यह परम दुःखद अवस्था है।

हम दूसरों के जिन संकेतों को स्वीकार कर लेंगे, वे ही हमारे मानसिक संस्थान की स्थायी सम्पत्ति बन जायेंगे। फिर वैसे ही विचार हमारे मन में स्वतः उत्पन्न होंगे वैसा ही हमारा भविष्य बनेगा। इसमें दोष हमारा ही है। विचारों की यह परवशता मनुष्य को परतन्त्र बना रही है। खेद है कि आज अधिकांश मनुष्य अपने हृदय में जो विचार रखना चाहते हैं, उनको नहीं रख पाते। वे स्वयं अपने शत्रु बन गये हैं।

तुम अपनी परीक्षा करो। तुम्हारे स्वयं अपने विषय में क्या-क्या धारणायें बन गई हैं ? तुमने कहाँ तक अपने आपको समझा है ? तुम्हारी आत्मा की ध्वनि तुम्हें क्या सलाह देती रहती है ? ठीक-ठीक उत्तर दो कि तुमने अपनी आत्म-प्रेरणा को धोखा तो नहीं दिया है ? तुम्हारे विश्वास, तुम्हारे मन्तव्य, तुम्हारी आकांक्षायें क्या हैं ? वस्तुतः तुम चाहते क्या हो ? कौन-कौन व्यक्ति तुम्हारी आलोचना करते हैं ? हृदय की अन्तर्ध्वनि तुम्हारे साथ कहाँ तक है ? कौन-कौन से भय तुम्हें विचलित कर रहे हैं ? तुम अपना अधिकांश समय किस प्रकार के विचारों में व्यतीत करते हो ?

उक्त प्रश्नों का उत्तर समुचित रीति से कागज पर लिख डालो। तुम सर्वप्रथम अपना अध्ययन करो। तत्पश्चात् ही कोई नया कदम उठा सकते हो। जिस मशीन से तुम्हें कार्य लेना है, उसके पुर्जे-पुर्जे से परिचित होना अनिवार्य है। आज अनेक व्यक्ति अपने जीवन का क्षय केवल अनजानेपन में रहकर ही कर रहे हैं। वे अन्धकार में पड़े हैं। उन्हें स्वयं अपने आपका ज्ञान नहीं, उनकी मनःशक्ति व्यर्थ के झमेलों में नष्ट हो रही है।

स्वसंकेत के लिये तैयारी—आप यह धारणा बना लीजिये कि आप जिस ओर प्रवृत्त हो रहे हैं, उस ओर अग्रसर होने की प्रबल शक्ति आप में है। तभी उस बात का विचार अपने मनःक्षेत्र में उदित हुआ। विचार उस कार्य का सूचक है। यही परिवर्द्धित, पल्लवित एवं परिपुष्ट होकर कार्य बन जायेगा। अपनी आशाओं को जीवित रखने का सतत् प्रयत्न करते रहिये। यदि आपकी महत्वाकांक्षायें प्रदीप्त रहेंगी तो आप साक्षात्कार शक्ति शीघ्र प्राप्त कर सकेंगे।

तुम्हारी अभिलाषा एवं निश्चय दोनों मिलकर कार्य में प्रवृत्त हों तब तुम कार्योत्पादक शक्ति में अभिवृद्धि कर सकोगे। अभिलाषा इतनी तीव्र हो कि वह दृढ़ संकल्प में परिणित हो जाय। इच्छा के पर्वत सदृश दृढ़ निश्चय के सम्मेलन से संकेत में विशेष सफलता मिलती है। जो यह विश्वास रखता है कि जिस ओर में चल रहा हूँ, उसे अवश्यमेव प्राप्त कर सकूँगा, उस पर संसार विश्वास करता है। विश्वास ही वह शक्ति है जिससे हमारे संकेत क्रियाशील बनते हैं।

स्वसंकेत का पहला कदम—शीशे के सामने शान्त चित्त खड़े हो जाइये और अपनी प्रतिकृति को देखकर अपने आप से प्रश्न कीजिये—"क्या इस चित्र वाले व्यक्ति में सफलता का संकेत है ? क्या इसमें विजयश्री प्राप्त करने का अभ्यास परिलक्षित होता है ?" पहला कदम यही है कि आप उत्तर में—"इस चित्र वाले व्यक्ति के मुख मण्डल पर सफलता का सूर्य प्रकाशित है। यह प्रकाशवान अवश्य होगा। यह उन्नतिशील एवं विजयी जरूर होगा। इसके नेत्रों से आत्म तेज टपक रहा है।"

तुम्हारे मुखमण्डल से श्रद्धा, दृढ़ता प्रकाशित होनी चाहिए। ज्यों-ज्यों तुम्हारे दिव्य विचार स्थायी सम्पत्ति बनेंगे, ज्यों-ज्यों तुम अपने सम्बन्ध में आशापूर्ण शुभ सूचक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भावों को स्थान दोगे, त्यों-त्यों तुम्हारे मुख मण्डल में अद्भुत परिवर्तन होगा। जब हम किसी वस्तु विशेष की हार्दिक कामना करते हैं, तभी से उसकी ओर अपने विचार प्रवाह को भी खोलते हैं। तभी से उससे सूक्ष्म सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। उसी का प्रकाश मुख मण्डल पर भी होता है।

आप सोचिये कि "मेरे मुख मण्डल से, प्रभावोत्पादकता, शक्ति, सिद्धि स्पष्ट प्रकट हो रही है। जिसकी मैं चाह करता हूँ, जिसकी कामना मेरे अन्तःकरण में उदित हुई है, उसकी मुझे अवश्य ही प्राप्ति होगी। जो आदर्श मैंने सच्चे अन्तःकरण से निर्माण किये हैं, वह अवश्य मेरे सामने प्रकट होगा।"

यही आशासूचक दृढ़ भावना तुम्हारे लिखे हुए पत्रों, बोले हुए वाक्यों, वस्त्रों से प्रकट हो। यही तुम्हारे साहित्य से। तुम इस विचार में डूबे रहो। इसी में गोते लगाओ और प्रतिकूलता की भावना को कदापि पास न फटकने दो।

तत्पश्चात् अपने कार्यों पर दृष्टिपात करो। क्या तुम ढीले-ढाले रूप से कार्य करते हो ? क्या काम से बचने की प्रवृत्ति है ? क्या तुम अपने कार्य को बोझा समझकर करते हो ? परीक्षा करो। तुम्हारे प्रत्येक कार्य से सफलता प्रकट होनी अनिवार्य है। उत्तमता की छाप तुम्हारे प्रत्येक कार्य पर हो।

तुम्हारे ऊपर दूसरों के विचारों का जादू कदापि न चलना चाहिए। ईर्ष्या, द्वेष, घृणा, प्रतिशोध, भय, क्रोधादि विकारों को मनमानी करने का अवसर न मिले। काल्पनिक शत्रुओं के विषय में तुम न विचारो।

नित्यप्रति के जीवन-युद्ध में जो भी देखो, उसमें आशा, उत्साह की आभा हो, तुम्हारा हृदय हरा-भरा हो, पवित्रता का निर्मल स्रोत, वहाँ प्रवाहित होता हो। जीवन का वास्तविक आनन्द जीवन की प्रशान्त अवस्था में ही प्रकट होता है।

तुम मित्रता के वृक्ष लगाओ, जिससे तुम्हारी आकांक्षाएँ पूर्ण हों और शत्रुता की काँटेदार झाड़ियों को उखाड़कर फेंक दो। अमुक व्यक्ति मेरा शत्रु है, अमुक मेरी बुराई चाहता है, अमुक मेरा प्रतिद्वन्द्वी है—ऐसे विचार सदा-सर्वदा के लिए बहिष्कृत कर दो अन्यथा संकेत के प्रयोग में सफलता न होगी।

संकेत की शक्ति तुम्हारी श्रद्धा का अर्थ है, बिना देखी-सुनी वस्तु पर विश्वास कर लेना तथा उसी विश्वास के बल पर निज जीवन का मार्ग निश्चय करना। यदि तुम्हें अपनी बातों में खुद विश्वास न होगा, तो क्यों कर उन्नति कर सकोगे ? केवल श्रद्धा की न्यूनता के कारण न जाने कितने व्यक्तियों का अधःपतन हो रहा है। श्रद्धा जगतजननी जगदम्बा है और विश्वास संकेत का पिता रूप है।

एकान्त में हमारे संकेत—तुम्हें अपनी आत्मा के अपूर्व सामर्थ्यों का भान हो चुका है। तुम उस गुप्त भण्डार को खोलने चले हो। तुम्हें प्रतीत हो गया है कि अनन्त अपार बल का उद्गम स्थान श्रद्धा है। शक्ति और सामर्थ्यों की अभिवृद्धि एकांत के क्षणों में ही सम्भव है। एकांत में मन को तीव्र करो और उसे चिन्तन करने के लिए एक विचार दो। उसी पर मनःशक्ति का तीव्र प्रवाह छोड़ दो। जितनी देर तुम्हारा मन उस एक विचार पर केन्द्रित रहेगा, उतनी देर वह तुम्हारे अव्यक्त मन की स्थायी सामग्री बनेगा।

उदाहरणस्वरूप चित्त को निम्न वाक्यों पर कुछ-कुछ क्षणों के लिए केन्द्रित करो—"अनन्त ज्ञान, अनन्त जीवन, अनन्त प्रकाश, पवित्रता एवं प्रेम का झरना मेरे अन्तर में है। सम्पूर्ण शक्ति व सामर्थ्य का मूल स्रोत अनन्त एवं अपार है। अनन्त परमात्मा में से व्यक्ति रूप में सामर्थ्य मुझमें प्रगट हो रही है।"

"परमात्मा की शक्तियों में से मैं अपना भाग खींच रहा हूँ। चेतन तत्त्व मेरे शरीर, मन और आत्मा में अखण्ड नवीन रचना कर रहा है। मैं चेतन तत्त्व को अन्तर्बाह्य परिपूर्ण देख रहा हूँ। मुझे अपनी अद्भुत शक्तियों का आदि स्रोत प्राप्त हो गया है।"

एकान्त में आप ऐसा सोचिए कि आपके मनोरथ क्रमशः आपकी ओर आकर्षित होकर खिंचे आ रहे हैं। आपका विद्युत-प्रवाह दृढ़ता से आपको आगे ढकेल रहा है। आपकी मुश्किलें आसान हो रही हैं। आप क्रमशः सिद्धि की ओर अग्रसर हो रहे हैं।

एकान्त स्थान आशापूर्ण शुभ-सूचक चित्रों को मनोमन्दिर में सजाने का सबसे उत्तम समय है। शुभ-भावना को एकान्त में अपने अव्यक्त मन में प्रवेश कराना चाहिये। तत्पश्चात् क्रमशः उन्हें संकेत देकर दृढ़ बनाना चाहिए।

मनुष्य का केवल जिह्वा से ही नहीं किन्तु अपने मन, वचन, कर्म तीनों से ही संकेत में विश्वास रखना चाहिए। जो संकेत वह एकान्त में अपने आपको दे, उनमें उत्साह भरा हो, इच्छा की अग्नि प्रदीप्त हो। जैसा मनुष्य भीतर से हो, वैसा ही बाहर से अपने को प्रकट करे।

"उत्तम समय आ रहा है। मैं प्रतिदिन अच्छे और अच्छे जीवन की ओर अग्रसर हो रहा हूँ। मेरा 'कल' आज से सुन्दर होगा"—ऐसी भावना से नवीन प्रेरणा प्राप्त होती है।

"मेरी प्रकृत अभिलाषाओं के पीछे ऐश्वर्य, ईश्वरत्व अन्तर्निहित है। मैं अपने हृदय से आनन्दमय भवन में आदर्श का आभास देखता हूँ, उन्हीं का प्रकाश करता हूँ। मेरी मानसिक वृत्तियों, हार्दिक अभिलाषाओं को प्रकृति देवी सुनती है और उसका उपयुक्त उत्तर भी देती है।" इसी भावना में विहार कीजिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संकेत के दैनिक अभ्यास—प्रत्येक दिन जब-जब तुम श्रद्धापूर्वक एकाग्र मन हो अपने आपको संकेत देते हो, कुछ न कुछ उन्नति कर लेते हो। जब तुम अपने आपसे कोई छोटा कार्य ठीक तरह करा लेते हो, तो तुम्हारी शक्ति में वृद्धि होती है। अव्यक्त रूप से तुम्हारी शक्तियों को संकेत का शक्तिशाली अमृत प्राप्त हुआ करता है, जिससे तुम्हारी परिपुष्टि होती है।

एक ऐसा स्थान निश्चय करो, जहाँ एक विशेष समय बैठकर तुम सब संकेत दे सको। जिस प्रकार तुम भोजन ग्रहण करना नहीं भूलते, उसी प्रकार स्व-संकेत का मानसिक भोजन ग्रहण करने में भूल-चूक कदापि न करो। स्मरण रहे, एक दिन भूलने से कई दिन का प्रभाव नष्ट हो जाता है। तुम्हारी श्रद्धा को भी ठेस पहुँचती है।

प्रत्येक दिन तुम अपने कार्य के किसी विशिष्ट अंग को हाथ में लो और प्राण-पण से लगकर उसे पूर्ण कर डालो। पहले अपेक्षाकृत छोटे कार्य करते रहो, फिर क्रमशः बड़े-बड़े कार्य लेते रहो, तुम्हारी शक्ति दिन पर दिन बढ़ेगी।

प्रत्येक दिन तुम जिस व्यक्ति पर चाहो अपना प्रभाव डालने की कोशिश करते रहो। पहले साधारण व्यक्तियों पर अपनी शक्ति अजमाओ फिर ऊँचे व्यक्तियों को चुनो।

शक्ति प्रत्येक दिन बढ़ानी चाहिए। दो-एक दिन आत्मबल संग्रह करने के पश्चात् आत्म-संस्कार का कार्य छोड़ देने से एकत्रित शक्ति भी नष्ट हो जाती है।

शक्ति-संग्रह का प्रथम सोपान अपेक्षाकृत कष्टप्रद हुआ करता है। प्रायः प्रत्येक उत्तम वस्तु की प्राप्ति का पहला कदम मुश्किल होता है। किन्तु एक बार जागरण होने के पश्चात् मेधावी पुरुष रुकता नहीं। उसका अन्तर्मन उसकी प्रचुर सहायता करता है। अन्तर्मन में सब प्रकार के विषयों का ज्ञान प्राप्त करने की क्षमता है किन्तु दुर्बल श्रद्धा सहित संकेत हमारे अन्तर्मन को प्रदीप्त नहीं करते। निज मन में सर्वप्रथम प्रबल और पूर्ण इच्छा उत्पन्न करो। फिर ऐसा उपक्रम करो जिससे बलवती इच्छा उत्पन्न हो। फिर ऐसा उपक्रम करो कि निरन्तर उसी प्रकार के मनोवेगों का प्रवाह चलता रहे।

कार्य प्रारम्भ करने के कुछ दिन पश्चात् तक कोई विशेष परिवर्तन प्रतीत नहीं होता क्योंकि सर्वप्रथम हमारे अन्तर्प्रदेश में उचित मनःस्थिति का निर्माण होता है। पुरानी ग्रन्थियाँ नष्ट-भ्रष्ट होती हैं तथा नवीन ग्रन्थियों का निर्माण होता है। अतः जिस शक्ति, उद्देश्य, कार्य को तुम प्राप्त करना चाहते हो, उसे स्पष्ट रूप से मन में स्थिर करो। उस वस्तु विशेष के सर्वोत्कृष्ट स्वरूप की मन में रचना करो और प्रत्येक दिन उस उद्देश्य को सुदृढ़ करते रहो, यहाँ तक कि वह मन के गहरे भाग में अंकित हो जाय। प्रतिभा का रहस्य अन्तर्मन को जाग्रत करना है।

दूसरों के अनिष्टकारी संकेत—समय-समय पर संसार के स्वार्थी मनुष्य हमारे मन में मिथ्या विचार लाकर प्रवेश कर देते हैं और हम उन्हें ग्रहण कर लेते हैं। यही पतन का मुख्य कारण है। गुलामों की तरह तुम दूसरों के अनिष्टकारी संकेतों को ग्रहण कर लेते हो और मनः प्रदेश में चारों ओर भ्रांति के विषैले कीटाणु फैल जाते हैं।

दृढ़तापूर्वक कहो "मैं दूसरों के विचारों के अधीन नहीं हूँ, स्वयं अपने विचारों के बल पर खड़ा हूँ। मैं उच्च विचार ही ग्रहण करूँगा। संसार में जितने महत्त्वाकांक्षी पुरुष हुए हैं, उन्होंने संसार की टीका-टिप्पणी की तनिक भी परवाह न की। उन्होंने अपना कार्यक्रम-अपना वातावरण स्वयं बनाया। मैं भी स्वयं अपने पर शासन करूँगा। मैं अपने आपको सांसारिक कुटेवों से दूर रखूँगा। मैं अपने आपको बन्धनों से दूर रखता हूँ। मैं दूसरों के हाथ का खिलौना मात्र नहीं हूँ किन्तु दृढ़ प्रतिज्ञ हूँ। अपने जीवन का, संकल्पों का स्वामी हूँ, मैंने अपने जीवनक्रम पर पूर्ण अधिकार कर लिया है। दूसरों के प्रतिकूल संकेतों से मैं विक्षुब्ध नहीं होता। दूसरे मनुष्य कुछ का कुछ कहकर मुझे पथच्युत नहीं कर सकते। संशय मेरी प्रगति में बाधा उपस्थित नहीं कर सकते।"

यदि कोई प्रतिकूल संकेत आप को मिलता है, तो दृढ़तापूर्वक उसका सामना कीजिये। अपने मनःकेन्द्र में उसे कदापि प्रवेश न होने दीजिये। यदि कोई निर्देश करता है—"आप बड़े दुबले प्रतीत होते हैं। बीमार जान पड़ते हैं। मुँह बड़ा उतरा हुआ है तो संकेतों को कदापि स्वीकार न कीजिए। उत्तर दीजिए—"मैं तो शान्तिस्वरूप हूँ। मेरा स्वास्थ्य बिल्कुल दुरुस्त है। आप भूल करते हैं। मैं दिन प्रति दिन ऊँचा उठ रहा हूँ।" ऐसा करने से भ्रान्ति के उन अनिष्टकारी विचारों का जादू तुम्हारे ऊपर न पड़ेगा। प्रत्युत वे लौटकर अनिष्टकारी संदेश देने वालों को ही हानि पहुँचायेंगे।

यदि कोई आपका मजाक करे, तो उसकी ओर से ध्यान हटा लीजिए। उसके संकेतों पर कुछ भी ध्यान न दीजिए। ऐसा करने से मजाक करने वाले को बड़ा बुरा मालूम होगा। बुरा इसलिए मालूम होगा कि उसके अनिष्टकारी संकेत पुनः उसी को क्षुब्ध करेंगे।

दूसरे के अनिष्टकारी संकेतों को अन्तःकरण में प्रवेश न होने देना, शान्ति स्थापित करने का सर्वोत्तम उपाय है। इस प्रकार तुम अनेक व्यक्तियों के व्यंग-वाणों से त्राण पा सकते हो।

तुम्हारे संकल्प इतने परिपुष्ट हों कि कोई उन्हें हिला न सके। उनकी नींव इतनी गहरी हो कि प्रतिकूल तूफान उसे उखाड़ न सकें। तुम व्याख्यान दे रहे हो। कोई खड़ा होकर कुछ आक्षेप करके तुम्हें लज्जित करना चाहता है। तुम उधर ध्यान ही न दो। उसके अनिष्टकारी संकेतों को ग्रहण ही न करो। उधर से मन हटा लो। जब तुम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर्त्तव्य मार्ग पर अग्रसर होंगे, तो अनेक अनिष्टकारी व्यक्ति तुम्हारा विरोध करेंगे। तुम उनके प्रतिकूल संकेतों को अंतःकरण की शान्ति भंग न करने दो।

जब-जब तुम्हें दूसरों के प्रतिकूल संकेतों का प्रभाव पड़ता प्रतीत हो, अपने की रक्षा करो। उसे नष्ट न होने दो। दूसरों के संकेतों से प्रभावित न हो जाओ। कितने ही मानसिक निर्बल व्यक्ति दवाइयों के विज्ञापन पढ़ने से संकेत ग्रहण कर लेते हैं। वे मान बैठते हैं कि उनमें इधर-उधर रोग छिपे पड़े हैं। कितने ही बीमार पड़ जाते हैं, प्रतिकूल संकेत से मृत्यु तक सम्भव है। यदि विष का लेबिल लगी हुई बोतल का पानी भी पिला दिया तो केवल उस लेबिल मात्र से इतने भयंकर संकेत मिलते हैं कि मृत्यु संभव है। सर्प का विष मनुष्य को इतना नहीं मारता, जितना कि यह संकेत कि उन्हें सर्प ने काटा है और सर्प के दंश से मनुष्य को मर ही जाना चाहिये। सर्प का विष इतना विषैला नहीं जितना विषैला उसका संकेत।

आप प्रण कीजिए कि दूसरे स्वार्थी व्यक्ति जो कहते हैं, उस पर विश्वास न करेंगे, उनके छलयुक्त विचारों में न फँसेंगे। अपने मन की बागडोर स्वयं अपने हाथ में रखेंगे, स्वयं अपना भविष्य निर्माण करेंगे अपने प्रति सच्चे रहेंगे। फालतू विचारों से परेशान न होंगे।

तुम्हारी समस्त चिन्ताएँ, समस्त भ्रांतियाँ दूसरों के प्रतिकूल संकेतों के परिणाम हैं। तुम जब तक अज्ञान में हो तब तक उन से चिपटे रह सकते हो। जब तक ये अनिष्टकारी संकेत तुमसे चिपटे रहेंगे, तुम्हें अशान्त बनाये रखेंगे, चैन न लेने देंगे, तुम्हारी स्वर्ण रूपी आत्मा को विशुद्ध न होने देंगे। जब तक तुम इस मल से युक्त हो, अपने वास्तविक स्वरूप को भूले हुए हो। तुम्हारे अन्तःकरण की दुर्बलता, भय एवं चिन्ता का एकमात्र कारण यह अज्ञान युक्त संकेत ही है। मानव समाज का एक वृहत् भाग इन दुर्बल संकेतों से मानसिक दासत्व का शिकार बन गया है। वे जैसी संकीर्ण मानसिक भूमिका में निवास करते हैं वैसे ही बन जाते है।

तुम दास हो या स्वामी

संसार में दो प्रकार के व्यक्ति हैं—एक वह जिनका जीवन-स्रोत दासत्व, बन्धन एवं परतन्त्रता की कुत्सित विचारधारा के कारण अवरुद्ध हो गया है, जो निरन्तर डरपोक, भयभीत एवं हीनता की भावना के वशीभूत होकर निजत्व को त्याग बैठे हैं और दूसरों के विचारों पर निर्भर रहते हैं। दूसरे वे जिनमें अपनापन, मौलिकता एवं आत्माभिमान अवशेष है, जो पक्षी एवं निस्पन्द वायु की भाँति स्वतन्त्रता के पुजारी हैं, स्वयं अपने स्वामी है, खुद अपने शरीर के मालिक है। उनके विशाल हृदय मे भय, शंका एवं कायरता की अनिष्ट शंकायें उत्पन्न नही होतीं। वे क्षण-क्षण अन्तःकरण की शान्ति भंग करने वाले राग, द्वेष, भय, कमहिम्मती के, स्वनिर्मित बन्धनकारी नियमों को मानस-क्षेत्र में कदापि प्रवेश नहीं होने देते।

क्या तुमने कभी इस तत्त्व पर विचार किया है कि तुम दास हो या स्वयं अपने स्वामी ? तुम अपने को किस श्रेणी में रखते हो ? तुम अपने हो या दूसरे के ? तुम अपनी आत्मा पर भय एवं चिन्ता का बोझ डालते हो ? तुम्हारे मन के अन्तस्थल में भय का संस्कार तो प्रबल नहीं हो गया है ? क्या तुम अपने भीतर दासत्व के, क्षुद्रत्व के विचारों को आश्रय देते हो ? क्या तुम अपनी तुच्छता, दीनता, हीनता, गरीबी, मूर्खता की संशयात्मक विचारधारा में अस्त-व्यस्त रहते हो ? क्या तुम अन्य व्यक्तियों के सहारे खड़े हो ?

तुम्हारे कितने ही दुःख केवल भय के कारण हैं। मनुष्य की जीवन शक्तियों का नाश करने वाले भय महादुष्ट राक्षस हैं। असंख्य मनुष्य आज केवल भय के अनिष्टकारी संकेतों से जीवन बर्बाद कर रहे हैं। भय से उत्पन्न दुष्प्रवृत्तियाँ सब प्रकार के पुरुषार्थ को नष्ट कर देती हैं।

भय का कारण प्रतिकूल संकेत है—भय क्या है ? आदिकाल से अनिष्टकारी संकेतों का वृहत् भण्डार। न जाने कब से हम अधोगामी संकेतों का संचय करते आ रहे हैं। अविश्वास, अश्रद्धा, संकोच, लज्जा, कायरता, ग्लानि आज के नहीं हैं। इनका संग्रह हमारे पूर्व पुरुषों ने दैनिक जीवन में आने वाली अनेक आपदाओं को सहकर किया है।

किसी आती हुई आपत्ति की भावना से मन में एक आवेग उत्पन्न होता है। हम ये सोचते हैं अब यह हुआ तो इसके साथ में कृति-स्वरूप अब अमुक बात होनी चाहिए। कल्पना करके हम डर जाते हैं। भय जब स्वभावगत हो जाता है, तब कायरता या भीरुता कहलाता है। पुरुषों में भीरुता भयंकर दुर्गुण है।

संसार में तुम सर्वथा स्वच्छन्द हो। तुम्हें पूर्ण निर्भय जीवन व्यतीत करना है। किसी से भयभीत नहीं होना है, तुम्हारे अन्तर प्रदेश में जो भय की ग्रन्थियाँ पड़ गई हैं, उनका मूलोच्छेदन करना है। केवल तुम्हारी भय की कल्पना ही तुम्हें चिन्तित करती है। जिस डर की तुम कल्पना कर रहे हों वह कभी आने वाला नहीं है।

भय को दूर करने के लिए दिन में दो-तीन बार अभय होने की भावनाओं में प्रवेश करो। शब्दों को पूर्ण विश्वासपूर्वक अव्यक्त मन में जमाओ।

भय से मुक्ति की भावनाएँ—"मैं भय के चंगुल से सदा-सर्वदा के लिए निकल गया हूँ। अब मै पूर्ण निर्भय, निडर, निःशंक हूँ। कोई मुझे डरा नहीं सकता है। भय की ग्रन्थियों को मैंने उखाड़ फेंका है। जड़-मूल से नष्ट कर दिया है। मैं अब अभ्युदय के पथ पर अग्रसर हूँ। अतः मेरा चित्त पूर्ण स्थिर है। डाँवा-डोल नहीं होता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संसार के भय, आघात-प्रतिघात मेरी मन की शान्ति भंग नहीं कर सकते।

"मैं भय एवं पिशाची चिन्ता के दूषित विचारों की कल्पना को अपने अन्तःकरण में पुष्ट नहीं करता। मुझे भलीभाँति विदित हो गया है कि निश्चित और निर्भय व्यक्ति ही अभ्युदय के मार्ग का पथिक बन सकता है किन्तु डरपोक मनुष्य तो तनिक भी आगे नहीं बढ़ सकता।"

"मैं अपने शत्रुओं की ओर से अभय हूँ। भय की कल्पना नहीं करता हूँ, न भविष्य की कल्पित चिन्ताओं को धारण करता हूँ। भय मेरी विचार सामर्थ्य नष्ट नहीं कर सकता।"

"मैं तो पूर्ण निश्चिन्त होकर यह कहता हूँ कि जिसके अन्तःकरण का भय नष्ट हो गया, उसके समस्त दुःखों का अन्त सदा के लिए हो गया।"

"मुझे कल की चिन्ता नहीं, कोई फिक्र नहीं, मैं उन्मुक्त हूँ, सर्वथा अपने अधीन हूँ। मेरा संसार तो आशा, श्रद्धा एवं उत्साह के सुनहरे डेरों से निर्मित है, भय के पिशाचों की श्मशान भूमि नहीं है।

"अब मैं किसी भी भय तथा चिन्ता के अधीन नहीं होता। भविष्य के दुःखों की कल्पना को हृदय में स्थान नहीं देता। मुझे न तो मृत्यु का भय है, न किसी मनुष्य का डर। मैं पीछे से अभय हूँ, आगे से अभय हूँ। मेरे अंग-प्रत्यंग पूर्ण परिपुष्ट है। उनमें शक्ति भरी हुई है, प्रबल प्रताप उत्साह भरा है। भय मेरी अभिवृद्धि में बाधा नहीं पहुँचा सकता, मैं भय से अधिक ताकतवर हूँ।"

"मैंने आत्म-श्रद्धा, निर्भयता, उत्साह, आशा के शुभ विचारों को अन्तःकरण में आरूढ़ कर दिया है। मेरी आत्म-प्रेरणा आज से जाग्रत हो गई है, मेरी सब क्रियाएँ शक्ति से भर रही हैं।"

"मैं विशुद्ध बलवान वातावरण का विकास करता हूँ। इस स्थान का अणु-अणु निडर है। वही निडरता मेरे रोम-रोम में प्रवेश भी कर रही है। मैं निर्भयता से संश्लिष्ट साहित्य पढ़ता हूँ, वैसा ही सृजन भी करता हूँ। मुझे परमेश्वर ने ऐसी अमोघ शक्तियाँ प्रदान की हैं कि संसार में कोई मुझे हानि नहीं पहुँचा सकता।"

प्रत्येक रात्रि में उपर्युक्त अभय भावना पर मन को केन्द्रित करो। इन स्वस्थ विचारों को तन्मयता के साथ मन प्रदेश में प्रवेश दो। दो मास पश्चात् तुम्हारी भय की ग्रन्थियाँ स्वयं हट जायेंगी। निद्रा में प्रवेश करने से पूर्व मन को भय के विचारों से स्वच्छ कर लो, तत्पश्चात् उपरोक्त संकेत दो। यदि कोई अनिष्ट विचार मन में प्रवेश हों या संस्कार जाग्रत हो उठे तो तत्काल ही उसे निर्मल करो।

आज मैं कल से बलवान एवं सामर्थ्यशाली हूँ—प्रत्येक दिन आपको कुछ न कुछ शक्ति संग्रह कर लेनी चाहिए। रात्रि में जब तुम दिन भर के कार्यक्रम पर मनन करते हो तो कल की अपेक्षाकृत तुम्हें अधिक उन्नत जानना चाहिए। यही संकेत से कार्य निकालने की कला है। यदि तुम कल के ही स्थान पर टिके रहोगे और शक्ति संचय न करोगे तो आत्म-विकास रुक जायेगा। निद्रा में प्रवेश होने से पूर्व जिन विचारों को तुम मन में लाते हो, उनके वैसे ही संस्कार अंकित होते हैं।

प्रातःकाल आप सोचिए कि "मैं कल से अधिक सामर्थ्यशाली हूँ, उन्नत हूँ, सुदृढ़ हूँ। कल से आज तक मैंने बहुत कुछ प्राप्त कर लिया है। मैं उन्नति के पथ पर आरूढ़ हूँ। निरन्तर अग्रसर हो रहा हूँ। मेरी योग्यता व आत्म-श्रद्धा दिन प्रति दिन बढ़ रही है। मुझ में परमात्मा ने अपूर्व बल दिया है। मुझे अपनी सफलता पर पूर्ण निश्चय है। मैं कठिन से कठिन कार्य करने में समर्थ हूँ। मेरे लिए कोई कार्य असम्भव नहीं। मैं निरन्तर आगे बढ़ता ही जा रहा हूँ। मुझे जो कार्य करना होता है, दृढ़ता तथा तत्परता के करता हूँ। मैं कभी कुमार्ग में प्रवृत्त न होऊँगा। मुझे तो महान कार्य कर दिखाने हैं। मैं सुस्त या अकर्मण्य नहीं पड़ा रहता। प्रत्युत अदम्य उत्साह से अग्रसर होता हूँ। मुझे रुकना नहीं है, कोई मेरी वृद्धि को अवरुद्ध नहीं कर सकता। मैं मार्ग के कंटक उखाड़कर फेंकता चलूँगा। मैं अब विषय-वासनाओं के जाल में नहीं बँध सकता।

"मेरे हृदय में सद्बुद्धि का, सद्प्रेरणा का राज्य है। मैं अनासक्त होकर समस्त कार्यों में अग्रसर होता हूँ। मैं सच्चे हृदय से, शुद्ध संकल्प से जीवन को महापुरुषों द्वारा बताये हुए मार्ग पर लगाता हूँ। मेरा मन पूर्ण स्थिर है। मेरा मन सुखदायक, स्फूर्तिदायक विचारों से परिपूर्ण रहता है। यही कारण है कि मैं उत्कृष्ट जीवन व्यतीत कर रहा हूँ। मैं बुराई को त्यागकर भलाई को ग्रहण करता हूँ।

इसी प्रकार के दृढ़ निर्देश बना लीजिए और पूर्ण श्रद्धापूर्वक आत्मा को उसमें स्नान कराइये। प्रतिदिन के अभ्यास से तुम्हें अपूर्व लाभ होगा। तुम्हारे मन में ऊँचा उठने की महत्त्वाकांक्षा प्रदीप्त होगी। यही तुम्हें परमार्थ की ओर ले जावेगी।

डायरी का प्रयोग कीजिये—प्रातःकाल से सायंकाल तक तुमने क्या-क्या किया ? किस-किस दशा में उन्नति की ? कौन-कौन से महत्त्वपूर्ण कार्य किये ? इन सबको एक डायरी में दर्ज करते रहिये। निद्रा से पूर्व कुछ काल के लिए इन कार्यों पर तीव्र आलोचना कीजिए। यदि तुम्हारी अन्तरध्वनि उन कार्यों को उत्तम नहीं कहती तो दूसरे दिन प्रातःकाल उत्कृष्ट जीवन की भावना का दृढ़ निश्चय कीजिए। यदि तुमने कार्य उचित किये हैं तो उसी प्रकार भविष्य में करने का निश्चय डायरी में नोट कर लीजिये।

केवल सोच लेने मात्र से कि कल हम अमुक कार्य करेंगे आप अपने कर्त्तव्य का पालन कर सकेंगे। लिख

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लेने से संकेत और भी दृढ़ हो जायेंगे, सत्य का संचार होगा तथा आत्म-सुधार का दृढ़ संकेत अकस्मात् तुम्हारे अव्यक्त मन में प्रवेश कर जायेगा। लिखने से तुम्हारे कार्य स्पष्ट दृष्टिगोचर होंगे। नियमितता की अभिवृद्धि होगी तथा आत्मबल भी बढ़ेगा।

सब महापुरुष डायरी लिखने के अभ्यस्त रहे हैं और उन्होंने समय का कंजूसों की भाँति उपयोग किया है। वे अपने कटु अनुभव तथा प्रेरणाएँ उन्हीं में लिखते रहे। उन्हें अपनी कमजोरियों के लिये आत्म-ग्लानि हुई। तत्पश्चात् प्रगतिशील जीवन का पथ ग्रहण किया।

डायरी में निम्न प्रकार कार्य प्रारम्भ कीजिये। अपना प्रथम निश्चय मुख पृष्ठ पर लिखिये—"मैं आज से दृढ़ निश्चय करता हूँ कि नित्य नियत समय ईश्वर की प्रार्थना करूँगा, मैं दृढ़ निश्चय करता हूँ कि नित्य नियमित व्यायाम करूँगा, अपने कर्त्तव्य के प्रति सच्चा बना रहूँगा। परम निर्भय होकर निज-कर्त्तव्य पालन करूँगा। मैं किसी भय, चिन्ता या क्लेश से डरकर अपने निश्चित कार्यक्रम से कदापि न हटूँगा। मैं अपने संकल्पों पर अटल जमा रहूँगा। मेरे हृदय में जो उत्तम प्रेरणाएँ उठती हैं उनको अपने जीवन में प्रकट करूँगा।

"परमात्मा ने मुझे अतुल शक्ति से विभूषित किया है, अतः दृढ़ निश्चय भाव से मैं अपने व्रत में स्थिर रहूँगा। संसार के विकार मुझे सत्पथ से च्युत नहीं कर सकते।"

"मुझ में अदम्य उत्साह है। मैं अपनी आत्मज्योति को शुद्धता तथा पवित्रता की भावना से प्रतिदिन प्रदीप्त करता रहूँगा। मेरे हृदय में निर्मल बुद्धि, सत्प्रेरणा, ज्ञान का प्रकाश उदय होता है। मैं ऐसा दृढ़ हूँ और चट्टान के समान स्थिर हूँ कि सांसारिक घटनाएँ मुझे मेरे दृढ़ निश्चय से चलायमान नहीं कर सकतीं। मैंने करुणामय परमात्मा का आश्रय लिया है। अतः अपने दृढ़ विश्वास से कठिन से कठिन विघ्न-बाधाओं के आने पर मैं भी हटने वाला नहीं हूँ। आज से मैं एक नवीन पथ का अनुसरण कर रहा हूँ। वह पथ सर्वथा नवीन एवं उत्कृष्ट है।"

अपने निश्चयों को लिखकर तुम अधिकाधिक कार्य में प्रविष्ट हो सकोगे। नित्य अपने संकेतों को श्रद्धापूर्वक पढ़ो, उनका मनन करो। बुरे, डरपोक विचार आकर तुम्हें अशान्त न करें। तुम्हारी डायरी तुम्हारे आत्मोद्धार की सूचक है। यह हर कदम पर तुम्हारी सहायक है। जितनी बार तुम अपने संकेतों का पालन करोगे, नव प्रेरणा प्राप्त होगी। दीर्घकाल तक शुभ संकेतों पर मन एकाग्र करने से तद्रूप हो जाता है। अतः जीवन को इस दिव्य संकेतों में डुबो दीजिए। आत्मा को इनमें तल्लीन कर दीजिए तथा कुछ काल के लिए सब कुछ विस्मृत कर दीजिए। जो मनुष्य अपने चंचल, अस्थिर विचारों को वश में कर सत्प्रेरणा प्राप्त कर रहा है, वह प्रतिदिन ज्ञान प्राप्त कर रहा है।

जगत् पिता परमात्मा ने सृष्टि में संकीर्णता, सीमाबन्धन, दरिद्रता का स्थान नहीं रखा है। संकीर्णता, सीमाबन्धन, दरिद्रता संसार में नहीं प्रत्युत स्वयं हमारे अन्तर्जगत में प्रविष्ट हो गये हैं। स्वयं हमारे अन्तःकरण में ये विषैले कीटाणु बलात् आ घुसे हैं और उन्होंने हमारे प्राण-तत्त्व का भयंकर ह्रास किया है। पृथ्वी पर तो कोई भी मनुष्य दरिद्र, असमर्थ, क्षुद्र या संकीर्ण नहीं होना चाहिये। दोष स्वयं हमारा ही है। विरोधी भाव रखकर भला हम किस प्रकार उन्नत अवस्था में पहुँच सकते हैं ? आत्मबल और आत्मविश्वास के आधार पर ही हम अपने जीवन को सुखी एवं समृद्धिशाली बना सकते हैं।

आत्महीनता की प्रवृत्ति एक रोग है

आत्महीनता से ग्रसित व्यक्ति अपने अन्तःकरण में नाना प्रकार की भ्रमात्मक त्रुटियों, न्यूनताओं, कमियों, कमजोरियों की कल्पना किया करता है। कल्पनाशक्ति का उपयोग हित तथा अहित दोनों क्षेत्रों में संभव है। आत्महीनता का रोगी चित्त की वृत्तियों को व्याधि, दुःख, न्यूनता तथा निर्बलता की ओर लगाता है। वह निरन्तर प्रतिकूल की धारणा से व्याकुल रहा करता है। विगत प्रतिकूल संयोग उसके स्मृति पटल पर पुनः-पुनः आते हैं। वह किसी विशेष स्थल पर अपने आपको असमर्थ देखता है, अन्य स्थान पर तिरस्कृत, अपमानित पाता है। अमुक ने उसे कैसे कटु वचन उच्चारण किए थे, कैसा घृणित व्यवहार किया था, उसे असंख्य कमियों की याद निरन्तर सताया करती है। व्यर्थ की चिन्ता, फिक्र, भय का बोझ डाल-डालकर अपनी आत्मा को जर्जर कर डालता है।

कमी की कटु अनुभूति काँटे की तरह अन्तःकरण को बेधती है अतः हम उसे जानकर भी अनजान बनने का प्रयत्न करते रहते हैं। हम नहीं चाहते कि कमी का अनुभव हमें बार-बार विक्षुब्ध करे। अतः हम उसे भूलने के लिए अनेक विफल प्रयास किया करते हैं। मन का कोई भी संस्कार व्यर्थ नहीं जाता। हम किसी बात की तरफ से मनोवेग को बाँध नहीं सकते। मन में एक बार प्रविष्ट करने के पश्चात् प्रत्येक संस्कार पत्थर की लकीर हो जाता है। वह निश्चेष्ट नहीं हो सकता, वरन् थोड़ा बहुत सदैव क्रियाशील रहता है। अतः हम जितनी प्रबलता से कटु अनुभवों को दबाने का उद्योग करते हैं, उतनी ही शक्ति से वह मन के पैंदे में बैठ जाता है। यह संस्कार इस भाग में दबा पड़ा रहेगा किन्तु जब मन का दबाव न्यून होगा, फौरन प्रबल हो उठेगा। यह संस्कार कभी व्यर्थ नहीं जावेगा वरन्, सदैव वहीं बैठकर चेतन मन के दैनिक कार्यों को प्रभावित किया करेगा।

परिस्थितिवश, कार्यों के परिवर्तन, समाज के व्यवहारों तथा गृहस्थी के झंझटों के कारण संभव है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ समय के लिए यह प्रसुप्त संस्कार फीका पड़ जाय किन्तु उसकी प्रतिकृति हमारे दैनिक जीवन पर रहेगी अवश्य। विभिन्न अवसरों पर अनुभूत शोक, हर्ष, दुःख तथा सुख, आशा और भय, राग, द्वेष, ज्ञान और अज्ञान सब मनुष्य के अन्तर्प्रदेश में संचित रहते हैं। वे केवल मन की विविध भूमिकाएँ हैं। उसी प्रकार की घटनाएँ, प्रसंगों, वर्णनों को पढ़ने, देखने या सुनने से पुराने अनुभव स्मृति-पटल पर आते हैं।

अव्यक्त मन में दबी हुई पुरानी न्यूनताएँ, कमियाँ, जब अनैच्छिक रूप में गुप्त मन से आना चाहती हैं, तब हमारा चेतन मन उन्हें दबाता है तथा प्रकाशित नहीं होने देता। पर इतने से ही गुप्त मन शान्त या निराश नहीं हो जाता। जब प्रकट मन सुप्तावस्था में आता है तो यह गुप्तमन फिर अपना कार्य नये जोश से प्रारम्भ करता है। यदि देखा जाय तो वास्तव में गुप्त मन के महत्त्व के सम्मुख 'चेतन मन' की कोई गणना नहीं की जा सकती। वास्तविक मालिक तो हमारा गुप्त मन ही है। इस प्रकार मन में दो प्रकार की वृत्तियों का द्वन्द्व चलता रहता है और उसकी प्रतिक्रिया स्वरूप अनेक कार्य होते हैं। मनुष्य के अनेक विक्षेपों, टालमटोलों, बहानेबाजियों, चिढ़ने तथा विवेकशून्य कार्यों का सर्वप्रथम सूत्रपात अचेतन जगत् में ही होता है।

अप्रिय अनुभव का संस्कार अंत तक जमा हुआ देखा गया है। भूत, प्रेत आदि की भयंकर कहानियों के संस्कार बचपन से मन में प्रविष्ट होने पर बुढ़ापे तक लगे हुए पाये जाते हैं। जो भय प्रारम्भ में बैठ जाता है, वह अप्रत्यक्ष रूप में अन्दर से ही अपना प्रभुत्व दिखलाया करता है। आत्महीन व्यक्ति के ये चिरसंचित भय के संस्कार ही उसे गुलाम बनाये रखते हैं। जो कुछ वह चिन्तन करता है, उसमें भय की मिथ्या भावना मिश्रित रहती है अतः ऐसा व्यक्ति अप्राकृतिक लज्जा का अनुभव किया करता है। चाहे उसे कोई बड़ी से बड़ी यंत्रणा दे किन्तु वह चुप्पी धारण किए रहता है। दूसरों से हँसते-बोलते हुए उसे अधिक शर्म-सी आती है। भयभीत होना उसका मानसिक मार्ग बन जाता है। उससे और कुछ भी करा लो किन्तु बातें करने के लिए न कहो। वह हृदय खोलकर स्पष्टतापूर्वक बातें नहीं कर सकता। चार आँख करने में उसे डर-सा प्रतीत होता है।

दृष्टि नीची कर लेना किसी नवयौवना को भले ही सुशोभित करे किन्तु पुरुषों में तो यह बड़ा भारी ऐब है। दृष्टि नीची करने के कारण बिना अपराध के हम अपराधी बन जाते हैं। कितनी ही बार तो नीची दृष्टि देखकर लोग हमें दोषी तक समझ लेते हैं ? उफ ! कैसी कारुणिक मनःस्थिति है ? उस व्यक्ति की, जो भला-चंगा होते हुए भी आत्महीनता की ग्रन्थि के कारण अपमानित होता है।

हीनता की भावना से ग्रसित व्यक्ति जब बाजार में निकलता है या सभा इत्यादि में जाता है तो उसे ऐसा भय लगा रहता है कि संसार के सभी व्यक्ति उसी पर तीखी दृष्टि लगाये हैं। यदि दो-चार व्यक्ति खड़े होकर जरा हँस दें तो ऐसा प्रतीत होता है जैसे जान-बूझकर उसी के लिए सब प्रपंच हो तथा उसका अपमान किया जा रहा हो। चाहे वह कहीं हो, उसे ऐसा भान होने लगता है कि संसार उसकी प्रत्येक क्रिया, प्रत्येक हाव-भाव, कार्य, छोटी-मोटी बात को घूर-घूरकर देख रहा हो। जैसे पत्थर-पत्थर तथा ईंट में सहस्रों नेत्र हों, जो उसे हड़प कर जाने पर तुले हों।

उसकी कृतियाँ निरालापन लिए हुए होती हैं। जिधर जायेगा अपना निरालापन अवश्य ले जायेगा। कभी-कभी वह अपनी कमी को छिपाकर दूसरों पर मिथ्या आरोप करता है। कभी अपने आपको दूसरों की अपेक्षा श्रेष्ठ सिद्ध करने का प्रयत्न किया करता है। यह अति-पूर्ति की प्रतिक्रिया है।

आत्महीनता की ग्रन्थि के निर्मित होने के कारण—यह ग्रन्थि वास्तव में अपने आप में किसी विशेष कमी की अप्रिय अनुभूति से निर्मित होती है। कोई कमी, अप्रिय संयोग, कोई चिन्ता का भाव, कोई भय अचेतन मन में पुष्ट हो जाता है। किसी अवसर पर या किसी विशेष काल में कोई विशेष प्रकार की निर्बलता हमें अपने अन्दर बड़ी बुरी तरह अखरती है। दो-एक बार उसी की आवृत्ति होने के पश्चात् वह अनुभूति गहन हो उठती है। उसका संस्कार इतना गहरा पड़ता है कि भुलाये से नहीं भूला जाता। हमारे अन्तर की वृत्ति इस कटु अनुभव को ग्रहण कर लेती है तो वह सत्वस्थ होकर मन की स्थायी वृत्ति हो जाती है। ज्यों-ज्यों अंतर की अचेतन वृत्ति उस विशेष धारणा को ग्रहण करती है त्यों-त्यों भावना ग्रन्थि मन में प्रबल होती जाती है। एक बार अन्तःदेश में जड़ पकड़ने के पश्चात् यह भावना ग्रन्थि अव्यक्त मन में पूर्ण रूप से वर्तमान हो जाती है। इस ग्रन्थि के अनुभवों की प्रतिक्रिया पर विचार करने से पूर्व उसके कारणों को जान लेना आवश्यक है। निम्नलिखित कारणों के अध्ययन के पश्चात् पाठकों को विदित होगा कि भिन्न-भिन्न स्वरूपों में भी कारण केवल एक ही है और वह है कमी की कटु अनुभूति।

प्रथम कारण—शारीरिक कमी—अधिकांश रोगी अपने शरीर में किसी न किसी प्रकार की कमी का अनुभव करते हैं। शरीर एक प्रकार की मशीन समझिये। जिस किसी की मशीन कमजोर टूटी-फूटी होगी, वह दूसरों के मुकाबलों में निश्चय ही अयोग्य रहेगा। आत्महीन व्यक्ति अपने शरीर की निर्बलता या कमी के कारण बड़ी लज्जा का अनुभव किया करता है। प्रायः बाल्यावस्था में माँ-बाप बच्चों की शारीरिक कमियों, कमजोरियों तथा न्यूनताओं की ओर ध्यान नहीं देते। अतः जब बालक अपने आप को दूसरों की अपेक्षा कमजोर पाता है तो दूसरों से अकारण ही डरता तथा दबता है। दूसरे से दबने का अर्थ है अपने आप को दीन-हीन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समझना। बाल्यावस्था से ही यह आदत बच्चों को पड़ जाती है।

मान लीजिए एक विद्यार्थी अन्यों की अपेक्षा कद में नाटा है। उसका नाटापन खिल्ली का कारण बन जाता है, बात-बात पर उसे दबना पड़ता है। उसकी सही बात भी गलत समझी जाती है। ऐसा ही बार-बार होने के कारण उसका मन बुझ जाता है। लोगों की बातों से वह अपने आपको वैसा ही मानने लगता है। अन्य व्यक्तियों के संस्कार उसके अव्यक्त में गहरे जम जाते हैं। कालान्तर में यही संस्कार आत्महीनता की ग्रन्थि का निर्माण कर देते हैं। उस व्यक्ति में अनजाने में ही पुराने संस्कार उसके जीवन पर प्रभाव डालते रहते हैं।

एक और उदाहरण लीजिए। एक व्यक्ति काला है, उसका कालापन समाज की आँखों में खटकता है। लोग उससे कहते हैं—क्या आप कोयला खाते हैं ? क्या आपका जन्म कोयले की खान में हुआ है ? क्या आप कोयले का व्यापार करते हैं—इत्यादि इन प्रसंगों को सुनते-सुनते वह थक-सा जाता है। निरन्तर प्रतिकूल सन्देशों के संस्कार उसके अव्यक्त पर भयंकर आघात पहुँचाया करते हैं। उसे दु:ख का इतना अनुभव होता है कि वह आत्महीनता की ग्रन्थि का रूप धारण कर छिपकर बैठता है। अपनी कमी का अनुभव, उन अप्रिय कटु क्षणों की दु:खद स्मृति वह भूलना चाहता है पर अव्यक्त मन में ऐसे अनेक अनुभव संस्कारों के रूप में वर्तमान रहते हैं। ये ही संस्कार उस व्यक्ति को अनेक विक्षिप्त जैसे व्यवहार, विवेकशून्य कार्य तथा बहानेबाजी करने को उत्तेजित करते हैं।

पतले-दुबले व्यक्ति इस ग्रन्थि से अधिक ग्रसित रहते हैं। बचपन में पतले-दुबले होने के कारण मजबूत लड़के उनसे दुर्व्यवहार करते हैं। ये दुर्व्यवहार अपना संस्कार उनके मन पर अवश्य छोड़ जाते हैं। बात-बात में उसे अन्य व्यक्तियों का मुख निहारना पड़ता है। कालान्तर में बड़ा होने पर भी वे संस्कार नहीं छूटते तथा आत्महीनता की ग्रन्थि बन जाती है

इसी प्रकार शरीर की अन्य कमजोरियाँ, न्यूनताएँ या अभद्रतायें भी समाज की टीका-टिप्पणी का कारण बनती हैं—जैसे काना होना, लँगड़ा या कुरूप होना। कुछ बालकों में एक और कमी होती है जैसे देखने में लड़के का लड़की जैसा प्रतीत होना। इस दशा में लड़के से वैसा ही व्यवहार किया जाता है, जो विपरीत सेक्स के व्यक्ति से होता है। ऐसा बालक बहुधा यही ग्रन्थि उत्पन्न कर लेता है क्योंकि स्वभावत: स्त्रियों के मन में पुरुषों की अपेक्षा आत्महीनता का भाव अधिक होता है।

जब शिशु शारीरिक शक्ति में छोटा है तो अनेक कार्यों को सही नहीं कर पाता। वह अपने आप को दूसरे लोगों से मिलाकर देखता है तो अपने आप को ही कम पाता है। इसी प्रकार बचपन में माता-पिता के अत्याचार, डाँटना, फटकारना मिलकर शिशु के बच्चे मन में आत्महीनता की भावना-ग्रन्थि बना देते हैं।

दूसरा कारण—निम्न सामाजिक स्थिति—आत्महीनता की भावना-ग्रन्थि विशेषकर निम्न वातावरण में जन्म लेने वाले युवकों में वर्तमान रहती है। जहाँ कहीं समाज में प्रतिष्ठा या श्रेणी का सम्बन्ध होता है वहीं ऐसे युवक को दब जाना पड़ता है। उच्च वर्ग वाले धनिकों के सामने वह छाती ऊँची करके नहीं चल पाता। उनकी तरह वस्त्र, गृह, आमोद-प्रमोद उसे उपलब्ध नहीं होते। ऐसी परिस्थिति में उस व्यक्ति को लज्जा, आत्मग्लानि अथवा किसी अन्य विशेष प्रकार के दु:ख की अनुभूति होती है, जिसे वह विस्मृत करने की चेष्टा करता है। यही कमी की दु:खानुभूति मानसिक ग्रन्थि का कारण बन जाती है। जिस बालक को बचपन में वस्त्र नहीं मिले, ठीक भोजन या आभूषण नहीं मिले, उसमें दु:खानुभूति होना स्वाभाविक है। बड़ा हो जाने पर भी वह न्यूनता की अनुभूति अव्यक्त मन से नष्ट नहीं होती।

प्रसिद्ध अँग्रेजी उपन्यासकार चार्ल्स डिकिन्स बड़े निर्धन गृह में पैदा हुआ था, उसका प्रारम्भिक जीवन होटल में नौकरी करते हुए व्यतीत हुआ था। न उसे अच्छे वस्त्र उपलब्ध हो सके थे, न आभूषण। यही इच्छाएँ उसके अव्यक्त प्रदेश में एकत्रित हो गई, वहाँ दुर्बलता, तुच्छता, दीनता की अनुभूतियाँ दृढ़ हो गईं। ये ही भावना-ग्रन्थियाँ उसके अनेक चरित्रों में बह निकली हैं। अनेक स्थलों, दृश्यों तथा स्थानों का वर्णन अन्त:स्थल की भावना-ग्रन्थि के परिणामस्वरूप हैं। कहते हैं डिकिन्स अपने कोट में सोने के बटन लगाता था। यह भी हीनत्व की ग्रन्थि की एक प्रतिकृति थी। अन्य किसी विद्वान ने इस प्रकार का शौक नहीं दिखाया। स्त्रियाँ वे ही अधिक आभूषणों का व्यवहार करती हैं जिनके अन्त: प्रदेश में आत्महीनता की ग्रन्थि अधिक संख्या में प्रस्तुत रहती हैं।

आत्महीनता की ग्रन्थि के मूल में कमी की दु:खानुभूति अवश्य मिलती है। प्रत्येक दु:खानुभूति अन्त:करण प्रदेश में गाड़ी की लीक की तरह एक मानसिक मार्ग बनाती है। इस लकीर में उसी प्रकार की भावनाओं का उत्थान-पतन चला करता है।

मन में जो विचार नित्य प्रति प्रबल होते हैं, वे ही हमारी अच्छी या बुरी ग्रन्थियों का निर्माण करते हैं। दु:ख अथवा कमी की अनुभूति से जो हीनत्व की भावना ग्रन्थि बनती है, वह बार-बार पीड़ा के विचार तथा कमी की भावना के पुनरावर्तन का परिणाम है। बार-बार वैसे ही दीन-हीन विचार मन-रूपी पृथ्वी के गर्भ-भाग में जड़ पकड़ जाते हैं। फिर वे स्मृति पटल पर तो नहीं आते किन्तु जीवन को प्रभावित करते रहते हैं। सामाजिक निम्नता के विचार सदा सक्रिय रहकर हमारे मन को उद्वेलित किया करते हैं।

निम्न सामाजिक स्थिति के साथ अन्य ऐसे कारण हो सकते हैं, जिनसे मनुष्य कमी या हीनता की भावना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में प्रवेश कर सके। अनुचित सम्बन्ध के द्वारा उत्पन्न बाल-बच्चे, समाज में ऊँची नाक नहीं कर पाते, अतः उनके मानसिक प्रदेश में कटु अनुभूति वर्तमान रहती है। नीच जाति, अछूत गृह या निम्न श्रेणी का व्यवसाय करने वालों में भी यह ग्रन्थि उत्पन्न हो जाती है। उनके कटु अनुभव संस्कारों के रूप में प्रस्तुत रहते हैं तथा उन्हें अग्रसर नहीं होने देते।

कल्पना कीजिए, एक व्यक्ति को आप कहते हैं—"तू नीच, ऊँची बातें क्या जाने ? तेरे घर-बार में भी कोई पढ़ा-लिखा पैदा हुआ था ? तुम्हारा जो काम है वही काम करो। हल, खुरपा चलाकर जिन्दगी बिताओ" इस प्रकार के कुत्सित संकेतों से हृदय संकुचित क्षुद्र, प्रेम-विहीन तथा दरिद्री बनता है। उसमें हीनता की ग्रन्थि अधिकाधिक जटिल बनती है तथा वह अंधकार, पतन तथा दरिद्रता की परिस्थितियों में और अधिक फँसता है।

एक नवयुवक यह विचार करता है मैं तुच्छ हूँ, क्षुद्र हूँ, दीन-हीन हूँ। इतने वृहत् संसार में भला मैं किस प्रकार सफलता प्राप्त कर सकूँगा ? किस प्रकार समृद्ध जीवन व्यतीत कर सकूँगा ?" ऐसी निषेधात्मक विचार धारा का यह परिणाम होगा कि वह वैसा ही बन जावेगा। यदि हम तंगी के, निर्बलता के, कमी के, अकर्मण्यता के विचारों को रखेंगे तो इन्हीं का प्रतिबिम्ब हमारी अवस्था पर पड़ेगा और आत्महीनता उत्पन्न कर देगा।

तीसरा कारण—आर्थिक कमी—निर्धनता की अनुभूति हमें दरिद्री बनाती है। गरीब मनुष्य जो सदैव फटे हाल रहता है, रूखा-सूखा खाकर जीवन को धक्के देता है, प्रायः अपने मनोमन्दिर में ऐसा कलुषित वातावरण बनाता है, जिससे हृदय सीमाक्रान्त हो जाता है। मौलिकता का ह्रास हो उठता है। आदमी वास्तविक मनुष्यता—दया, प्रेम, सज्जनता, पवित्रता, बुद्धिमत्ता तक की रक्षा नहीं कर पाता।

ऋण बड़ा घातक शत्रु है। मनुष्य ऋण से दबकर जैसा-तैसा काम करके, उचित-अनुचित करने पर बाध्य होता है। उसकी आत्मा पर एक बोझ-सा बना रहता है, तब उसे अपने गौरव का, स्वाभिमान का सुरक्षित रखना भी कठिन होता है, जिससे वह अपना सिर ऊँचा करके चलता है।

अनेक उच्चतम तथा लब्ध प्रतिष्ठित विद्वान ऋण के भार से इतने दबे कि उनकी आत्मा तक संकुचित हो गई। बड़ी कठिनाई से वे अपनी रक्षा कर सके। कुछ दारिद्र के भयंकर प्रहारों से सदा के लिये क्षुद्रता के गड्ढे में विलीन हो गये, जो मनुष्य अपने आपको दुस्सह दरिद्रता के पंजे में पाता है, वह असमय ही वृद्ध-सा दीखने लगता है। उसके मुख मण्डल से तेज उठ जाता है। दरिद्रता उसकी सर्वोत्कृष्ट महत्त्वाकांक्षाओं को नष्टकर देती है और समस्त प्रतिभा को धूल-धूसरित कर देती है। यदि आप दरिद्रों के अन्तःकरण को देखें तो आपको वहाँ आत्मविश्वास तथा श्रद्धा की बेहद् कमी मिलेगी। जो मनुष्य आत्मविश्वास को तिलांजलि दे देता है, उसे क्रमशः अन्य गुण, इच्छाशक्ति, मनोबल, तर्क शक्ति भी छोड़ जाते हैं और उसका जीवन भारस्वरूप हो जाता है।

आधुनिक मनोविज्ञान ने एक महासत्य का दिग्दर्शन कराया है और वह यह कि मनुष्य के मन पर पड़ा हुआ कोई संस्कार निश्चेष्ट, व्यर्थ या निष्क्रिय नहीं होता। उसका प्रभाव अवश्य पड़ता है। बार-बार एक ही प्रकार के विचार मनःक्षेत्र में लाने से, गम्भीर चिन्तन करते रहने से मन में उनके संस्कार दृढ़ होते हैं। एक बार जम जाने के पश्चात् वे ऐसे स्थायी हो जाते हैं कि मस्तिष्क से बाहर नहीं होते। दुष्ट विचार, पाप के विचार, भय, उद्विग्नता, गरीबी, लाचारी के विचार जब मन में आने लगें तो समझना चाहिए कि इच्छा-शक्ति की निर्बलता है। डरना, घबराना, हाय-हाय करना, संदेह करना मन के अव्यक्त भाग में बैठे हुए संस्कारों के ही दोष हैं।

दरिद्रता वास्तव में इतनी खराब नहीं है, जितने दरिद्रता के विचार। जिस व्यक्ति के मन में यह विचार उठते हैं कि "मैं तो दरिद्र कुटुम्ब में उत्पन्न हुआ हूँ, गरीब लोगों से मेरी जान पहचान है, मुझे तो गरीब ही रहना पड़ेगा।" वह मनुष्य अपने भावी जीवन में भिखारी के अतिरिक्त क्या हो सकता है ? अज्ञान के कारण वह मन में दरिद्र वातावरण रखेगा और फलतः आत्मा के पवित्र प्रकाश की शान्ति का अनुभव न कर सकेगा।

चौथा कारण—निराशावाद—कुछ व्यक्ति स्वभावतः ही निराशावादी होते हैं। निराशावाद सफलता का विघातक है, विध्वंसक तथा जीवन का काल है। निराशावादी सदैव संकल्प-विकल्प के भ्रमजाल में फँसा रहता है। उदास, उद्विग्न, खिन्न, अशान्त, चिड़चिड़े, शोकातुर शक्ल के व्यक्ति में भला कौन विश्वास करेगा ? निराशा एक प्रकार की नास्तिकता है। "जो व्यक्ति संध्या के डूबते हुए सूर्य को देखकर दुःखी होता है तथा प्रातःकाल के सुनहरी अरुणोदय से उत्फुल्ल नहीं होता वह नास्तिक है। जब रात के बाद दिन आता है, मरण के बाद जीवन होता है, पतझड़ के बाद बसन्त आता है, ग्रीष्म के बाद वर्षा आती है, दुःख के बाद सुख आता है तो क्या कारण है कि हम अपनी कठिनाइयों को स्थायी समझें ? हमें अपनी नास्तिकता का दण्ड रोग, शोक, विपत्ति, प्रतिहिंसा के रूप में भोगना पड़ता है।"

आज के सभ्य कहलाने वाले जगत् में, जिसकी स्तुति करते हुए हम नहीं थकते, ऐसा हिसाब लगाया जाता है कि प्रति वर्ष दस लाख आदमी निराशा के वशीभूत होकर आत्मघात कर लेते हैं। जितने समय में आप अपना पत्र लिखते हैं, उतने समय में कई व्यक्ति सुरपुर के पथिक बन जायेंगे। आत्मघात कर लेने का मानसिक स्वरूप भयंकर आत्मग्लानि है। सौ में निन्यानवे लोग केवल घोर निराशा के कारण ही आत्मघात कर लेते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निराशा से विक्षुब्ध होकर, आक्रान्त होकर, सुधबुध भूले प्राणियों को देखकर अन्य मनुष्यों को भी आत्मघात कर लेना श्रेष्ठ जान पड़ता है और कहते हैं कि तात्कालिक मृत्यु हो जाना उत्तम है, यह दुर्दशा तो देखी नहीं जाती।

निराशा अन्धकार है। उसमें हमें ठहरना कदापि न चाहिये। निराशा मन में एक प्रकार की कमी की अनुभूति उत्पन्न करती है अत: आत्महीनता प्रस्तुत होना स्वाभाविक है। आत्म-पतन और निराशा का जोड़ा है।

देखा गया है कि कुटुम्ब में केवल एक निराश और उदासीन मनुष्य के होने से समस्त कुटुम्ब में आत्महीनता की ग्रन्थि निर्मित होती है। जो मनुष्य अपने आप को पापी, दोषी, अज्ञानी, अधम, मंदमति व दरिद्र मानता है वह अपने चारों ओर वैसा ही वातावरण फैलाता है। फिर उसके सम्पर्क में आने वाला प्रत्येक व्यक्ति क्रमश: वैसा ही बनता जाता है। अनिष्ट चिन्तन कितनी बड़ी भूल है ? संसार के असंख्य व्यक्ति इसी प्रतिकूल चिन्तन द्वारा आत्महीनता की सृष्टि करते हैं।

पाँचवा कारण—विघ्न-बाधाओं की कल्पनायें—स्वेट-मार्डेन ने अपनी एक पुस्तक में आत्महीनता के सिलसिले में विघ्न-बाधाओं की कल्पना का निर्देश किया है। अनेक व्यक्तियों की मानसिक भित्ति इतनी कमजोर होती है कि वे निरन्तर विघ्न-बाधाओं की कल्पना में व्यस्त रहते हैं। उनका हृदय असमय में ही मुरझा जाता है, वे साहसिक कार्य करने योग्य नहीं रहते, उनकी कार्य सम्पादिका शक्ति का ह्रास हो जाता है। मन प्रारम्भ से ही निषेधात्मक स्वरूप ग्रहण कर लेता है।

ऐसे व्यक्ति को चारों ओर विभिन्न प्रकार की कठिनाइयाँ ही दृष्टिगोचर होती हैं, उसकी कार्य-सम्पादिका शक्ति पर एक काला पर्दा पड़ जाता है। दूसरे मनुष्य संशय के विचार ला-लाकर उसके अन्त:करण में प्रवेश करा देते हैं और वह बलात् उसी के अनुसार विचार करने को विवश होता है।

पतन की ओर उन्मुख करने वाली, मानसिक जगत् में तूफान उत्पन्न करने वाली अनिष्ट कल्पना ही है। जैसी कल्पना, वैसा ही उसका फल-मनोविज्ञान का यही अकाट्य नियम है। कुकल्पना का भयंकर परिणाम कितने ही व्यक्तियों में हीनत्व की ग्रन्थि उत्पन्न कर देता है।

कुकल्पना से ग्रस्त व्यक्ति यही सोचता है कि न जाने कल कौन-सी अनर्थकारी घटना घटित होने वाली है ? न जाने कल कैसे व्यतीत होगा ? छींक आने पर वह महा अनिष्ट की बात सोचता है। प्रात:काल देखी गई वस्तुओं को ले-लेकर राई का पर्वत बनाया करता है। कल्पना के बल पर वह अपना गर्हित चित्र खींचता है। वर्षों तक वह निज मन:शक्ति को व्यर्थ के अनिष्ट चिन्तन में व्यस्त रखता है। बारंबार एक प्रकार की कल्पना का उद्रेक होने के कारण वह अनिष्ट चित्र अन्त:करण में इच्छा के विरुद्ध आरूढ़ हो जाता है। चिन्ता, भय, विक्षेप तथा संशय मन के गहन भाग में जम जाते हैं। इस प्रकार मन के संग्रहालय में प्रतिदिन कूड़ा-करकट एकत्रित हुआ करता है।

छठा कारण—लिंग सम्बन्धी न्यूनता—प्रकृति ने पुरुष को स्त्री से स्वभावत: ही साहसी एवं निर्भीक बनाया है। नारी स्वभाव से प्रेममयी, करुणामयी तथा ममतामयी है। उसमें अपेक्षाकृत अधिक लज्जा तथा दुर्बलता है। वह कोमलता तथा सहानुभूति की क्रीड़ा-स्थली है।उसके हृदय में आत्महीनता स्वभाव से ही प्रस्तुत है।

स्त्रियों में आत्महीनता के अनेक कारण हैं। सर्व प्रथम उनका शारीरिक संस्थान ही इतना कोमल होता है, कि पुष्प की पंखुड़ियों के समान टूटकर छिन्न-भिन्न हो जाने को तुला रहता है। शारीरिक कमी के कारण कुछ बहुत मजबूत स्त्रियों को छोड़कर शेष सभी में हीनत्व की भावना का विद्यमान रहना स्वाभाविक-सा है। कुछ मनोवैज्ञानिकों का कथन है कि मजबूत से मजबूत स्त्री में ये ग्रन्थियाँ बनी रहती हैं। वे कितनी भी निर्भीकता का प्रदर्शन क्यों न करें, उनके हृदय को एक भयंकर कमी प्रज्ज्वलित किया करती है।

स्त्री तथा पुरुष दोनों ही एकाकार होकर ही महाशक्तिशाली बनते हैं। पुरुष के बिना स्त्री का नरम हृदय एक कमी का अनुभव किया करता है। उसे कुछ ऐसा प्रतीत होता है मानो कुछ अभाव-सा हो, कुछ अपूर्णता रह गई हो। यह अधूरापन कितनी ही स्त्रियों में आत्महीनता की ग्रन्थि का निर्माण करता है।

कुछ मनोवैज्ञानिकों का कथन है कि "मनुष्य की कमी का अनुभव मात्र आत्महीनता की ग्रन्थि उत्पन्न नहीं करता, ग्रन्थि उसी अवस्था में उत्पन्न होती है, जब कमी का अनुभव मनुष्य को दु:खी करता है। उदाहरणार्थ, सभी स्त्रियों में आत्महीनता की भावना ग्रन्थि का होना आवश्यक नहीं, यद्यपि सभी स्त्रियाँ पुरुषों की अपेक्षा अपने को सभी प्रकार नीचा पाती हैं।" जंगल में आखेट करने वाली चित्रांगदा को अपनी कमी का ज्ञान अर्जुन से मिलने के पश्चात् हुआ था। अत: तभी से हीनता की ग्रन्थि का बीजारोपण हुआ। उससे पूर्व वह उन्मुक्त वीर ललना जंगल में भयंकर कार्य करती रही थी। दु:ख का अनुभव तथा अपनी किसी विशेष कमजोरी, न्यूनता, कमी की भावना आत्महीनता की ग्रन्थि के निर्माण का प्रमुख कारण है।

सातवाँ कारण-समाज की अवहेलना—समाज में ऊँचा मुखकर चलने वाले व्यक्तियों में प्राय: आत्महीनता की ग्रन्थि कम पाई जाती है। समाज से बहिष्कृत अथवा किसी अन्य कारण से समाज की नजर में गिरा हुआ व्यक्ति इस ग्रन्थि से ग्रसित रहता है। भंगी, चमार, भील तथा अन्य निम्न श्रेणियों के बच्चों में प्रारम्भ से ही कमी का, पग-पग पर अपनी निर्बलता की प्रतीति होती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उनका जरा-जरा सी बात पर तिरस्कार किया जाता है। गालियों की बौछार नित्य उन पर पड़ा करती है। समाज के वज्र जैसे कठोर नियन्त्रण के सम्मुख निम्न जाति वाले युवक की तमाम प्रतिज्ञा, मौलिकता, सामर्थ्य विनष्ट हो जाती हैं। उसे अपने घृणित कार्य के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं करने दिया जाता है। वह अपने इस कटु वातावरण से सदैव दुःखी रहता है। एक गुप्त वेदना उसके अन्तःकरण में प्रदीप्त रहती है । ऐसी दुखद, आत्मग्लानि की अवस्था में हीनत्व की ग्रन्थि मन में बनती है।

आठवाँ कारण-आत्मग्लानि तथा पश्चाताप की अधिकता—"हमने अमुक कार्य में बड़ी भारी गलती कर दी है, यह हमारी बड़ी भारी भूल हुई, ऐसा हमें कदापि न करना चाहिए था। अब हमें पापों का प्रायश्चित करना चाहिए। हमारे जैसे महान पापी को तो दुनिया में मुँह तक न दिखाना चाहिए।" इस प्रकार के विचार कुछ अंश तक तो उचित हैं किन्तु जब पश्चाताप अधिक मात्रा में एकत्रित हो जाता है तो लाभ के स्थान पर भयंकर हानि पहुँचाता है। थोड़ा पश्चाताप होना तथा भविष्य के लिए भूल सुधार हो जाना आध्यात्मिक लाभ के लिए बड़ा अच्छा है। प्रत्येक सात्विक वृत्ति वाले व्यक्ति को आत्मनिरीक्षण के पश्चात् आत्मग्लानि होना स्वभाविक है। महात्मा एमरसन का विचार है कि पुरानी गलतियों को सुधारना ही अभ्युदय के मार्ग में आगे बढ़ना है। इस प्रकार के पश्चाताप तथा प्रायश्चित उत्तम प्रकृति के व्यक्तियों को शोभा देते हैं।

आत्म-ग्लानि की उपयोगिता यह है कि वह हमें अपनी भूल बता दे। भविष्य में हम पुनः वही मार्ग न ग्रहण करें, प्रत्युत अपनी स्वाभाविक प्रवृत्ति विजय तथा सफलता की ओर रखें—यदि अपनी गलती से हम इतना पाठ सीख लें तो पर्याप्त है, किन्तु यदि यह अधिकाधिक बढ़ता रहे तो आध्यात्मिक बल का क्षय होता है। अधिक आत्मग्लानि मन की सर्जन या उपज शक्ति को नष्टकर देती है। ऐसे व्यक्ति साहसिक कार्य करने योग्य नहीं रहते। उनकी महत्त्वाकांक्षा असमय ही मुरझा जाती है।

प्रधान कारण दुःख का अनुभव—उक्त प्रकरणों में हमने आत्महीनता की ग्रन्थि के निर्माण के अनेक कारण दर्शाये हैं किन्तु इस सब में प्रधानता केवल एक तत्त्व की ही है। यह महान् तत्त्व है—"कमी के कारण दुःख का घोर अनुभव। अधिक काल तक दुःख की भावना मन में रहने से वह स्थायी वृत्ति हो जाती है। उसकी छाप अमिट बन जाती है। निष्फलता, निराशा, निर्धनता, निरुत्साह सब दुःखानुभूति की ही सन्तानें हैं। अयोग्य वातावरण के कारण अन्तःकरण प्रदेश में विविध भय, द्वेष, न्यूनता तथा अशान्ति के तूफान चला करते हैं। निर्बल कल्पनाओं के कारण दुःख का अनुभव होता है। असंख्य मनुष्य इस प्रकार की निर्बल भ्रान्तियों के शिकार बने हुए हैं। असत् चिन्तन में संलग्न रहकर चिन्ता, भय, शंका, सन्देह और दुष्ट मनोविकारों के पंजे में फँसे हुए, व्यर्थ के सन्देहों तथा कल्पनाओं में निरन्तर ग्रसित रहने के कारण विचार की प्रतिक्रिया भी असत् ही होती और वे विक्षिप्त से रहते हैं।

मनुष्य की कल्पना शक्ति मन की सर्जन-शक्ति है। कल्पना के सहारे मानस-पटल पर जो चित्र अंकित किये जाते हैं, उनके अनुसार ही बाह्य पटल पर निर्माण होता है जो व्यक्ति किसी काल्पनिक शत्रु की कल्पना से त्रस्त रहता है उसके मनःपट पर भय के चित्र निर्मित होते हैं, तत्पश्चात् वे बाहर विभिन्न क्रियाओं में स्थूल रूप में प्रकट होते हैं। अनेक अज्ञानी अनिष्ट कल्पना के कारण ही भयंकर दुःखानुभूति का अनुभव किया करते हैं और इसी मनोजनित अशान्ति के कारण सारे जीवन को शूलमय बना लेते हैं।

दुःखानुभूति तथा हमारी आशाएँ—आत्महीनता की ग्रन्थि के मूल में हमने दो प्रधान तत्त्वों का उल्लेख यत्र-तत्र किया है। ये हैं भय तथा दुःखानुभूति। भय जीवन का भारी शत्रु है। यह मन की स्थिरता का विनाश कर मानसिक शान्ति भंग करता है। मन में प्रचंड द्वन्द्व तूफान मचाया करते हैं और रोगी क्षण-क्षण उद्विग्न तथा उत्तेजित होता रहता है। दूसरा कारण है, दुःखानुभूति। हमारी दुःखानुभूति और मन की कोमलता, सुकुमारता का कारण एक ही प्रकार के दुःख की प्रतिक्रिया होता है, जो विभिन्न मनों पर विभिन्न प्रकार का प्रभाव डालता है।

श्री भगवान रामचन्द्रजी के वनगमन के अवसर पर प्रायः सब ही दुःख का अनुभव कर रहे थे। श्री रामचन्द्रजी की माता को भी अत्यधिक दुःख हुआ, किन्तु महाराज दशरथ उस दुःख को सहन न कर सके तथा प्राण त्याग कर दिया। दुःख उतना ही अधिक या न्यून रहता है जितना मनुष्य का मन कोमल तथा सुकुमार होता है। जितनी ही मनुष्य की आवश्यकताएँ, कल्पनाएँ तथा आशाएँ अधिक बढ़ी-चढ़ी होती हैं, उतनी ही दुःख की अनुभूति भी प्रबल अथवा न्यून होती है। जिस व्यक्ति ने बड़ी-बड़ी कल्पनाएँ अपने विषय में बना रखी हैं, उन कल्पनाओं में व्यवधान उपस्थित होने पर उसे उसी मात्रा में दुःखानुभूति भी अधिक होगी। जिसकी आवश्यकताएँ जितनी अधिक होंगी, उनकी पूर्ति न होने से उसे उतनी ही शोक की पीड़ा होगी। अतः आत्महीनता की ग्रन्थि भी उतनी जटिल बनेगी।

जितनी तीव्रता से न्यूनता की दुःखानुभूति होगी, जितना ही हम अपनी कमजोरी, कुरूपता, कमी, अपूर्णता, असत्यता, बेकद्री, भद्दापन, उद्विग्नता, अभाव का अनुभव करेंगे, चिन्ता-युक्त मनःस्थितियों में पड़े रहेंगे और मन को अंधकारमय पहलुओं पर केन्द्रित रखेंगे, उतना ही बुरा है। मन को भद्दी वस्तुओं में लिप्त रखना विरोधी कुभावनाओं में संलग्न रखना तथा उदासीनता मे पड़े रहने से हम निरन्तर अपना विनाश किया करते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पश्चाताप के दुष्परिणाम—प्रसिद्ध तत्त्ववेत्ता स्पेनोजा पश्चाताप की आदत को एक बड़ा मानसिक रोग मानते थे। उनका विचार था कि पश्चाताप मानसिक आरोग्य का लक्षण नहीं है। यह हमें सिखलाता है कि देव हमारे विपरीत है, हमें कभी सफलता प्राप्त न होगी, हमारे चारों ओर विघ्न-बाधाएँ खड़ी हैं। क्रमशः यह हमारी कार्य सम्पादिका शक्ति को पंगु कर डालता है। आत्मग्लानि के दो भयानक दुष्परिणाम हैं।

१. यह हमारी इच्छाशक्ति तथा मनोबल की निर्बलता दर्शाता है। हमारी साहसिक प्रवृत्ति का दमन करता है। हमें निराशावादी, पापी बना देता है।

२. हम अपने अव्यक्त मन या अचेतन जगत् में अपनी तुलना अन्य सबल व्यक्तियों से करते हैं, अपने आपको, अपनी कमजोरी के लिए कोसते हैं, बुरा-भला कहते हैं, निसत्व एवं निकम्मा, गया बीता ठहराते हैं। बस हमारा मन निषेधात्मक हो जाता है तथा कुछ काल पश्चात् हमारा मन अपनी कमजोरी पर सोचते-विचारते, चिन्तन करते-करते इतना निर्बल हो जाता है कि अपने आप पर, अपनी अद्भुत शक्तियों पर किसी प्रकार का विश्वास नहीं कर पाता।

अपने आपको बुरा-भला कहना, कोसना, अपशब्दों का उच्चारण करना, विकृत मानसिक प्रवृत्ति का परिचायक है। जिस प्रकार पर छिद्रान्वेषण एक रोग है, उसी प्रकार अपने आपको कोसना भी है। इससे मनुष्य के चरित्र में कोई सुधार नहीं हो सकता।

आत्महीनता से मुक्ति के उपाय

नब्बे प्रतिशत व्यक्ति किसी काल्पनिक डर से क्लान्त रहा करते हैं—"हम कुछ नहीं, कमजोर हैं, क्षुद्र हैं, दीनहीन हैं, दूसरे हमसे उत्तम हैं, बड़े हैं, सर्वगुण सम्पन्न हैं।"—ऐसी भावना ही उन्हें विदग्ध किया करती हैं। ये सब मिथ्या कल्पनाएँ हैं। ऐसी भय-सूचक कल्पनाएँ अन्तःकरण की समस्त उत्तम योजनाओं को क्षण भर में धूल में मिला दिया करती हैं।

भय जीवन का सबसे बड़ा शत्रु है। यह एक ऐसा महाराक्षस है, जिसकी कल्पनामात्र से हजारों जीवन बर्बाद हो रहे हैं तथा समय से पूर्व ही काल के ग्रास बन रहे हैं। जिस प्रकार तेज आँधी, वर्षा कोमल पुष्प, पौधों, कलिकाओं को नष्ट-भ्रष्ट कर डालती है। उसी प्रकार भय रूपी दानव की कल्पनाएँ अबोध, अविकसित हृदयों पर अपनी काली परछाहीं डालकर सदैव के लिए उन्हें बरबाद करती हैं।

भय हमारी अज्ञानता का सूचक है । ज्यों-ज्यों मानव में अज्ञानता का अँधेरा बढ़ता है, त्यों-त्यों मनुष्य अपना विकृत स्वरूप देखता है। उसका वास्तविक सिंह जैसा बहादुर व्यक्तित्व अंधकार के बोझ से विलीन-सा हो जाता है। अत्यन्त खेद का विषय है कि अज्ञानी जन केवल अपने तक ही दुःख, दर्द, चिन्ता, कायरता, संकोच, लज्जा, अविश्वास के विचार सीमित नहीं रखते प्रत्युत अपने आसपास के पड़ौसियों, अपने मित्रों, यहाँ तक कि अपने बच्चों तक में वैसे ही अधोगामी संस्कार दृढ़कर देते हैं और इसका दुष्परिणाम उन बेचारों को पूरे जीवनभर भुगतना पड़ता है। कायरता तथा भय हमारे मनोबल को क्षीण करते हैं और हमारे मानसिक विकास में बाधा पहुँचाते हैं। ये हमारी तुलनात्मक शक्तियों को विकृत कर देते हैं।

अपना दृष्टिकोण बदल दीजिए—अभी तक आप मन को अप्रीतिकर, अस्वास्थ्यकर तथा चिन्ता के विचारों में लगाये रहे हैं। इस प्रकार के डरपोक विचारों द्वारा तुमने भय के वातावरण की सृष्टि करली है। विचार एक महाशक्तिशाली चुम्बक है। यह वैसी ही वस्तुएँ वायुमण्डल से आकर्षित करेगा जैसा वह स्वयं है। अतः हमें उचित है कि मन को जीवन के अप्रीतिकर पहलुओं से सदा-सर्वदा के लिए हटा लें। उधर की बातें सोचें ही नहीं। जब मनुष्य का दृष्टिकोण बदल जाता है तो वह लज्जा तथा संकोच के स्थान पर विश्वास तथा श्रद्धा से कार्य लेता है, कायरता बदलकर वीरत्व का तेज धारण कर लेता है, ग्लानि के स्थान पर भविष्य की उज्ज्वल आशा से प्रकाशित हो जाता है।

प्रिय पाठक ! तनिक सोचिए, विचार कर देखिए यदि आप उम्र भर दूसरों से डरते ही रहेंगे, स्वयं अपने आपको नहीं सम्हालेंगे, अपनी आत्मिक शक्तियों को प्रकाशित नहीं करेंगे, तो आप का ठौर-ठिकाना कहाँ रहेगा ? कौन पूछेगा ? तुम क्या कर सकोगे ?

आपको चाहिए कि फिजूल के डरों, कल्पित चिन्ताओं तथा कुविचारों को हृदय केन्द्र से सदा के लिए बहिर्गत कर दें। अपने आजू-बाजू निर्भयता तथा निश्चन्तता के वातावरण की सृष्टि करें। लोगों से कहें कि वे भी हमारी तरह किसी से भयभीत न हों। पुराने आक्रमणों, दुःखदायी प्रसंगों तथा अंधकारपूर्ण घटनाओं को सदा के लिए भूल जायँ। मन को भविष्य के दुःख की गड़बड़ी में न पड़ने दें।

भय के विचार हमें उद्विग्न कर देते हैं। कुछ काल के लिए हम पागल से हो जाते हैं। हमें कर्त्तव्य का मार्ग नहीं दीखता। अन्तःकरण की समस्वरता नष्ट हो जाती है। हमें अच्छा भी बुरा मालूम लगता है। हम अपनी मुसीबतों को स्वयं पैदा कर लेते हैं।

दूसरे क्या सोचते हैं ?—आप इस पचड़े में न पड़िए कि दूसरे आपके विषय में क्या विचार रखते हैं ? क्या-क्या कहते हैं तथा उन्होंने आपको कैसा समझा है ? आप यह क्यों सोचते हैं कि आपके विषय में उनके विचार उत्तम नहीं या वे आपकी आलोचना करने में संलग्न रहते हैं। आप थोड़ी देर के लिए यही सोच लें कि वे हमारे विषय में बड़ी उत्तम धारणाएँ रखते हैं, हमें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऊँचा समझते हैं, हमारे गुणों पर दृष्टि रखते हैं। वे हमारे विषय में कोई भी बुरी बात नहीं सोच सकते क्योंकि हम वैसे हैं ही नहीं, हम तो उन्नति के लिए जन्मे हैं और प्रत्येक दिन कुछ न कुछ उन्नति कर रहे हैं। सुभावनाओं को मनोमंदिर में सजा रहे हैं तथा महत्त्वपूर्ण विचारों के चिन्तन में संलग्न रहते हैं।

जो व्यक्ति दूसरों के विचारों, मन्तव्यों तथा टीका-टिप्पणी पर निर्भर रहता है, वह सदैव नीचे गिरता है। लोगों के हाथों का खिलौना बन जाता है। जरा-जरासी बात में संसार के स्वार्थी पुरुष उसे नाच नचाते हैं। पागल बनाते हैं।

लोगों की हँसी की ओर ध्यान न दीजिए—सर्वोत्कृष्ट सिद्धान्त यही है कि आप लोगों की व्यर्थ आलोचना की ओर से नेत्र मूँद लो। यदि कोई तुम्हें चिढ़ाये, बुरा-भला कहे और तुम उसकी ओर ध्यान न दो, तो हँसी करने वाले को बड़ा दुःख होता है कटु वाक्य उलटकर उसी का हृदय बेधते हैं।

हमें दुनिया में निवास करना है, जहाँ हँसी उड़ाने वाले थोड़े बहुत सदैव रहेंगे। आज चार हैं तो कल आठ हो जायँ या संभव है दो हो जायँ। जब यही संसार-चक्र है तो हमें हँसी उड़ाने वाले की धमकी से भयभीत हो विक्षुब्ध होने का कोई प्रयोजन नहीं। संसार ने, इस परम स्वार्थी दुनिया ने, अच्छे से अच्छे व्यक्ति की आलोचना की तथा खूब हँसी उड़ाई है। यहाँ तक कि इतने श्रेष्ठ पुरुष श्रीरामचन्द्र जी, जो एक-वचनी, एक-पत्नीव्रत धारण करने वाले थे, वे भी लोगों की हँसी का कारण बने। श्रीकृष्ण और सत्यवचनी धर्मराज युधिष्ठिर की भी हँसी उड़ाने में लोगों ने कमी नहीं की। महाराज शिवाजी ने बाल्यावस्था से ही स्वतंत्रता का आन्दोलन प्रारम्भ किया था। उस समय उनके घरवाले तक उनकी हँसी उड़ाते थे। नौकरी तथा दासत्व का मार्ग छोड़कर स्वतंत्र कार्य करने का निश्चय सुनकर कितने ही लोगों ने लोकमान्य तिलक की कम हँसी नहीं उड़ाई ? विज्ञानवेत्ताओं, तत्त्ववेत्ताओं तथा प्रसिद्ध व्यक्तियों के जीवन में एक अवसर ऐसा अवश्य आया जब उनकी खूब अवहेलना की गई, किन्तु वे कर्त्तव्य पथ पर स्थिर रहे।

संसार की बंदर घुड़की—बन्दर जैसे दूर-दूर से घुड़की देकर तुम्हें डराना चाहता है किन्तु यदि तुम उसका सामना करते हो तो उलटे पाँव भागता है, उसी प्रकार की मनोवृत्ति संसार की है। दूर-दूर से लोग तुम्हारी हँसी उड़ाते हैं किन्तु जब तुम उनका विरोध करते हो तो वे दूर भाग खड़े होते हैं। दूरदर्शिता से विचार करो। स्वार्थी मनुष्यों की हँसी के फन्दे में पड़कर भय के बन्धन में न पड़ो। जब कभी ऐसा अवसर सामने आवे तो दृढ़ निश्चय से काम लो। लोगों को हँसने दो, गला फाड़ने दो किन्तु तुम अपने अटल उद्देश्य में प्रवृत्त रहो, जनता की मनोवृत्ति का थोथापन पहिचानो।

साहस हमेशा बाजी मारता है—साहस को देखकर भय, भयभीत होता है। आप साहस से मित्रता कर लीजिए फिर भय स्वयं दूर हो जायेगा। साहस का एक कण मिट्टी के मनुष्य में भी नवजीवन डाल देता है।

कहाँ जटायु और कहाँ बलशाली रावण। कहाँ गगनचुम्बी एल्पस कहाँ नैपोलियन। एक बार दो पठानों ने महाराज रणजीतसिंह की हत्या के निश्चय से उनके यहाँ नौकरी की तथा बनावटी स्वामिभक्ति से उन्हें प्रसन्न कर लिया। महाराज उनके दिल की बात जान तो गये थे पर उन्हें यह मालूम न होने दिया कि वे सब कुछ समझ गए हैं। एक दिन महाराज शिकार के लिए गए। एकान्त में एकाएक महाराज ने घूमकर एक पठान से कहा "मेरा गला घुटता है, अपनी कटार से बटन काट दो।" इस पर दोनों पठान किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गए। तब महाराज ने कहा—"हम पहले से ही सब भेद जानते थे, परन्तु आज हम अपने साहस के प्रभाव को देखना चाहते थे और अब हमें वह ज्ञात हो गया।"

जरा से साहस से तुम्हारी भ्रमात्मक कल्पनाएँ काफूर हो जायेंगी तथा मनुष्यरूपी-पुष्प-तरु को विध्वंस करने वाला भयरूपी कीड़ा स्वयं बाहर हो जायेगा।

जीवन का पौधा साहस की खाद माँगता है, बिना खाद के वह संसार के तेज झोंके नहीं सहन कर सकता मगर इस खाद को आप बाजार में जाकर नहीं खरीद सकते, कोई यार-दोस्त आपको उसकी सौगात नहीं भेज सकता, कोई जादू-मन्तर भी उसे लाकर आपके हाथ में नहीं दे सकता। उसे तो स्वयं ही अपने बल से प्राप्त करना होता है।

न जाने कल क्या विपत्ति आयेगी ?—भविष्य में क्या होगा, हमारे ग्रह शुभ हैं या अशुभ, हमारे भाग्य की रेखाओं की प्रगति किस ओर है ? हमारे शगुन ग्रह-नक्षत्र अच्छे हैं या बुरे ये ऐसे भयंकर प्रश्न हैं, जो कितने ही व्यक्तियों की मानसिक शान्ति भंग किया करते हैं। भविष्य में दुःख आने वाले हैं—भय की यह धारणा मन में आते ही हाथ-पाँव निर्जीव से हो जाते हैं तथा हम निरुत्साह हो उठते हैं।

भविष्य जानने के लिए कितने ही भयभीत व्यक्ति फकीरों, ज्योतिषियों तथा मुल्लाओं के पास भटकते हैं। जिससे तनिक भी भविष्य के विषय में पता चलने की आशा हुई कि उसके पीछे-पीछे लगे रहते हैं और खून पसीने की गहरी कमाई सहर्ष सौंप दिया करते हैं। किसी ने उनके मन की बात कह दी कि वे फूल उठे। किसी ने कुछ भयंकर बात बता दी कि वे मुरझाकर निरुत्साह हो गए और अपने भाग्य को कोसने लगे। कमनसीबी, नाकामयाबी तथा असफलता की घातक कल्पनाओं द्वारा अपनी जीवन शक्ति को पंगु करने लगे। केवल अनिष्ट की कल्पना मात्र से वे झींकने लगते हैं, परेशान हो जाते हैं और यह मान बैठते हैं कि हम तुच्छ हैं, क्षुद्र हैं, हीन हैं। हमारे भाग्य में तंगी, कमजोरी अकर्मण्यता ही है। हमारे पल्ले रूखी-सूखी ही बदी हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिन बातों से डरते हो वे होने वाली नहीं हैं—प्रिय पाठक ! स्मरण रखो कि भविष्य का ज्ञान असंभव है। आज तक कोई उसे जान नहीं सका है। यदि उसका ज्ञान भी हो जाय तो क्या लाभ ? भवितव्य ही होता है। नियति का लेखा बँधा है। उसमें से हम एक अक्षर भी इधर से उधर नहीं कर सकते। फिर उसे जानकर ही क्या करेंगे ? यदि हम उसे इच्छानुसार बदल नहीं सकते, वह अतर्क्य है, शाश्वत है तो उस रहस्य को जान लेने से क्या प्रयोजन ? हाँ, हानि की अधिक संभावना है। यदि हमें यह मालूम हो जावे कि कल इतने रुपये अवश्य प्राप्त हो जायेंगे, तो संभव है कि हम आज गाँठ की पूँजी ही समाप्त कर डालें।

इसी प्रकार यदि हमें यह ज्ञात हो जाय कि हमें कल इस संसार से विदा हो जाना है तो भय, चिन्ता, उद्वेग, क्लेश से कल के स्थान पर आज ही मृत्यु हो जाय। प्रायः देखा गया है कि फाँसी का दण्ड पाने वाले कैदी केवल मृत्यु के विषम विचार द्वारा पहले से अधमरे हो जाया करते हैं।

भविष्य में क्या होने वाला है, इस तत्त्व की अनभिज्ञता जीव को इसलिए प्रदान की गई है कि जिससे भविष्य में आने वाले अनिष्ट की शंका से उस परम शूलमय घटना के पूर्ववर्ती दिनों के सुख को हम खो बैठें।

उस बलि के बकरे को देखिए, जिसके सिर पर मृत्यु पल-पल नाचती रहती है यमदूत उसे हड़प जाने को तत्पर रहते हैं, बधिक पत्थर पर छुरा तेज करता है किन्तु बलि पशु अन्तिम क्षणों तक आनन्द से क्रीड़ा करता है। सत्य तो यह है कि आगम का अज्ञान परमेश्वर का परम अनुग्रह है। यदि उस पशु को यह ज्ञान हो जाय कि जरा देर में वह मृत्यु के घाट उतार दिया जावेगा, तो कदाचित् वध से पूर्व ही उसका अस्तित्व विलीन हो जाय और मृत्यु के पूर्ववर्ती दिनों के सुख को भी वह खो बैठे।

अनिष्ट की कल्पना न कीजिए—सचमुच अनिष्ट की कल्पना विषमय है। भय तथा संदेह से ही हम अपने को कष्टों तथा मुसीबतो में डालते हैं। मृत्यु का भय लोगों को खाये डालता है। मौत आयेगी, सब प्राणी मात्र को आती है। यह निश्चय है पर जिस घटना से हम नहीं बच सकते, उससे डरना भी क्यों ? जब आयेगी देखा जावेगा। जितने दिन हमें रहने को मिले हैं, उनका तो पूर्ण आनन्द उठा लें। आज का सुन्दर दिन हमें विश्व नियंता ने प्रदान किया है। आइये, उसे तो आनन्दपूर्वक प्रेम का अमृत छिड़क व्यतीत कर लें। कल क्या होगा कौन जाने ? किसे यह ज्ञान है कि 'कल' आयेगी भी या नहीं। हम आज के लिए कह सकते हैं कि हमारा अस्तित्व है, हमारे गृह, बाल-बच्चे, बन्धु-बांधव इत्यादि हैं, किन्तु कल क्या होगा यह सब कुछ सात परदों के भीतर छिपा है और जिसको कोई जानता नहीं उसकी फिक्र क्यों की जाय ?

जीवन की पुस्तक का एक पृष्ठ ही, केवल आज वाला ही सफा आपके सम्मुख खुला है। उसे देखकर आप सिर्फ आज की बात जान सकते हैं पर अन्य पृष्ठों में कौन बात छिपी है ? यह तथ्य तुरन्त प्रकाशित नहीं किया जा सकता। परमेश्वर अत्यन्त सावधानी से एक-एक पंक्ति और एक-एक पृष्ठ हमारे सामने आने देता है। यदि पूरी पुस्तक की विचारधारा, जीवन का पूरा लेखा एक बारगी ही हमें बता दिया जाय तो कदाचित् दूर के अनिष्ट की बाट देखते-देखते शायद कुछ दिन में ही हम मृत्यु के ग्रास बन जायँ।

"कल" की चिन्ता छोड़ो—यदि तुम सर्वांगपूर्ण जीवन का आनन्द लेना चाहते हो तो कल के अनिष्ट की मिथ्या चिन्ता को दूर करो। तुम अपने चारों ओर उत्कृष्ट रस भरे, जीवन के बीज बोओ। भविष्य के सुनहरे सपने देखने की आदत बनाओ। सदैव के लिए अपने मन से यह निश्चय बैठालो कि आपका कल अत्यन्त प्रकाशमय, मधुर तथा आनन्ददायक होगा। कल आप अपने को आज से भी अधिक सौभाग्यशाली पावेंगे।

आप ऐसा सोचते रहिए कि हमें कल अपने कार्यों में और अधिक सफलता प्राप्त होगी। कल मेरा मन उत्पादक शक्ति से परिपूर्ण हो जावेगा। मैं अपने जीवन में और अधिक बढ़ जाऊँगा, ऊँचा उठ जाऊँगा, उत्तरोत्तर उन्नतिशील होउँगा, अधिकाधिक उज्ज्वल हो जाऊँगा। प्रतिदिन, प्रतिपल मेरे अन्दर कुछ न कुछ इच्छाशक्ति का प्रादुर्भाव हो रहा है। कल पर मुझे पूर्ण विश्वास है। मेरी कल मुझ में दिव्यता का संचार करने वाली देवी है।

"मुझ में इतनी शक्ति है कि विघ्न-बाधाएँ डरकर स्वयं दूर भाग जायेंगी। कल में आज से अधिक प्रसन्न रहूँगा। मेरे मनोरथ, मेरी महत्त्वाकांक्षाएँ, मेरे स्वप्न खिंचकर मेरे और समीप चले आयेंगे। त्रिकाल में भी कोई मुझे हानि न पहुँचा सकेगा। संसार की कोई भी विरोधी शक्ति मेरे इष्ट मार्ग में बाधा नहीं डाल सकती—ऐसी विचारधारा जब अन्तःकरण में दृढ़ता से बैठ जाती है तो मनुष्य व्यर्थ की भ्रान्तिमय कल्पनाओं से बच जाता है।

जब तुम अपने अन्दर साँस खींचो तो ऐसा ही विचार करो कि उत्कृष्ट प्राण शक्ति को खींच रहे हो। शोक, भय, दुःखों से ऊँचे उठ रहे हो। तुम्हारी आत्मा शुद्ध तथा निर्विकार बन रही है। तुम अपने जीवन को और देदीप्यमान कर रहे हो। अपने मस्तिष्क के प्रत्येक कण के साथ आध्यात्मिक सुख का दृढ़ चिन्तन करो। जब तक तुम इसे पूर्ण रूप से चित्त में गहरा न उतार लो, जब तक निरन्तर उसी का मनन करते रहो। इसे रस की तरह पान कर जाओ। जब तुममें दृढ़ता का संचार होगा तो तुम अपने आपको इसी अवस्था के साँचे में ढलता हुआ पाओगे। तुम्हारे मिथ्या संशय उड़ जायेंगे और तुम्हें अनिष्ट अधिक चिन्तित न कर सकेगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभय होने का अमोघ उपाय

"सैकड़ों मार्गों में बहती हुई नदी में क्या जहाज चल सकता है ? इसी प्रकार सैकड़ों वस्तुओं में बिखरी हुई मनोवृत्ति कुछ भी करने में समर्थ नहीं हो सकती। विचार और क्रिया के परस्पर विरुद्ध दिशा में चलते रहने से किसी भी कार्य में सिद्धि प्राप्त नहीं होती।"

हमारे दु:ख-क्लेश परस्पर विरोधी इच्छाओं के कारण उत्पन्न होते हैं। हमारी व्यथा को कोई दूसरा सहने वाला नहीं है। हम असली अवस्था में ही नहीं हैं। हमारी असली अवस्था वह है, जहाँ दु:ख, अशान्ति, दर्द, शोक और मोह की आवाज बिलकुल ही नहीं पहुँच सकती। वहाँ तो आनन्द ही आनन्द है, प्रसन्नता ही प्रसन्नता का प्रवाह चारों ओर अखंड बहता रहता है।

हमारे मन में जो आज निश्चय है, जो विचार है, जिनको हम अपना मान बैठे हैं। उनमें कितने विचार तो हमारे माता-पिता के हैं, कितने ही मित्र तथा सम्बन्धियों के हैं और कितने ही दूसरों से सुनकर ग्रहण किये हुए हैं। स्थिर चित्त करके अन्तर्मुख होकर अपने अन्त:पुर में प्रवेश करो। अपने अन्त:करण को टटोलो तो तुम्हें ज्ञात होगा कि तुम दूसरों के विचारों के वशीभूत हो रहे हो। दूसरों के विचार ही तुम्हें नचा रहे हैं। ऐसी मानसिक अवस्था में हृदय को कैसे शान्ति प्राप्त हो सकती है ?

जब तुम निद्रा में प्रवेश करो तो मन को परमात्मा पर एकाग्र कर दो फिर तुम्हें अनुभव होगा कि तुम परमात्मा की गोद में सुरक्षित खेल रहे हो, महा निर्भय और आनन्द के समुद्र में मग्न हो रहे हो। निम्नलिखित वैदिक भावना पर अपनी समग्र बुद्धि को गढ़ा दो—

अभयं मित्रात् अभयं अमित्रात

अभयं ज्ञानात् अभयं परोक्षात्

अभयं नक्तं अभयं दिवा

न: सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु

— (अथर्ववेद)

अर्थात् "हम अपने मित्रों से अभय हैं, हम अपने शत्रुओं से अभय हैं, हम अपने जाने हुओं से, जो मालूम हो गये हैं, उनसे अभय हैं और जो अज्ञात रहने वाले हैं उनसे भी अभय हैं। रात्रि के समय हम निर्भय हैं। सब दिशाएँ हमारी मित्र हो रही हैं।"

इस महामन्त्र की भावना को तन्मयता के साथ अपने हृदय में प्रवेश होने दो और फिर कुछ दिन बाद तुम देखोगे कि भय और चिन्ता काफूर हो जाती है। तुम्हारे अन्त:करण की दुर्बलता दूर हो जाती है और तुम्हारे अन्त:करण में आशा, उत्साह विश्वास का संचार होगा। परमात्मा के राज्य में तुम सदैव निर्भय हो और तीनों लोकों में तुम्हें फिर किसका डर है ?

तुम्हारे भय स्वनिर्मित हैं—प्राकृतिक अवस्था में मनुष्य पूर्ण स्वछन्द रहना पसन्द करता है। वह डरता नहीं। भयभीत होना एक अप्राकृतिक बात है। प्रकृति नहीं चाहती कि मनुष्य डरकर अपनी आत्मा पर बोझ डाले। तुम्हारे सब भय, तुम्हारे दु:ख, तुम्हारी नित्य-प्रति की चिन्ताएँ तुमने स्वयं उत्पन्न कर ली हैं। यदि तुम चाहो तो अन्त:करण को भूत, प्रेत, पिशाचों को श्मशान भूमि बना सकते हो। इसके विपरीत यदि तुम चाहो तो अपने अन्त:करण को निर्भयता, श्रद्धा, उत्साह के सद्गुणों से परिपूर्ण कर सकते हो। अनुकूलता या प्रतिकूलता उत्पन्न करने वाले तुम स्वयं ही हो। तुम्हें दूसरा कोई हानि नहीं पहुँचा सकता, बाल भी बाँका नहीं कर सकता। तुम चाहो तो निर्भय, परम नि:शंक बन सकते हो। तुम्हारी शुभ-अशुभ वृत्तियाँ, यश-अपयश के विचार, विवेक बुद्धि ही तुम्हारा भाग्य निर्माण करती है।

भय की एक शंका मन में प्रवेश करते ही वातावरण को संदेहपूर्ण बना देती है। हमें चारों ओर वही चीज नजर आने लगती है, जिससे हम डरते हैं। यदि हम भय की भावनाएँ हमेशा के लिए मनोमन्दिर से निकाल डालें तो उचित रूप से तृप्त और सुखी रह सकते हैं। आनन्दित रहने के लिए यह अत्यन्त जरूरी है कि अन्त:करण भय की कल्पनाओं से सर्वथा मुक्त रहे। यदि हमें यह प्रतीत होता है कि अमुक मनुष्य ज्ञान तथा अनुभव में हमसे श्रेष्ठतर है, तो उससे भयभीत होने के स्थान पर शिक्षा ग्रहण करने का प्रयत्न निश्चय ही मिथ्या भय को निकाल बाहर करेगा।

आप दिमाग में बुरी-बुरी बातें लाते हैं, व्यर्थ के भयों से उद्विग्न रहते हैं, जो कोई बुरा-भला आपको कह देता है उसे एकदम मान बैठते हैं। पर हम पूछते हैं कि क्या इस प्रकार का ताना-बाना बुनते रहने से आपकी दीनता या हीनता दूर हो सकेगी ? क्या बाह्य दु:खों तथा इच्छाओं में घुलते रहने से आप आत्मा के निर्भय स्वरूप को पहिचान सकेंगे ? क्या क्षणभंगुर वस्तुओं पर अपनी वृत्ति स्थिर करने पर आप स्थायी शान्ति की शीतलता का अनुभव कर सकेंगे ? यदि आप समझते हैं कि "हाँ ! हो जायेगी" तो आप भारी भूल करते हैं।

आप साधारण स्थिति के व्यक्ति हैं, पैसा पास नहीं है, एक के बाद एक रोग आप पर आक्रमण कर रहा है, शरीर क्षीण हो रहा है, व्यापार में हानि हो रही है। आपका प्रिय व्यक्ति आपको रोता-बिलखिता छोड़कर चला गया है। आपके बाप-दादा को भयंकर रोग हुआ और वही आपको है, आपके अफसर आप पर अत्याचार करते हैं या किसी भयंकर कमी से आप खिन्न हो रहे हैं, चिंता सताती है, दूसरे लोग हमारे विषय में न जाने क्या-क्या शिकायतें करते होंगे। हम पूछते हैं कि क्या यह भय का मार्ग ही इन विकट परिस्थितियों से मुक्त होने का है ? क्या आप शोक-संताप में डूबकर इन दु:खदायी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भूमिकाओं को हटाना चाहते हैं ? क्या भय ग्रस्त रहने, भय तथा चिन्ता के दूषित विचारों की कल्पना में लिपटे रहने से आपके दु:खों का अन्त हो जायेगा ?

रोने से काम न चलेगा—भय तथा चिन्ता स्वार्थी विकार हैं। तनिक-सा झुकाव देखकर ये धर दबाते हैं। बीती हुई कटु परिस्थितियों पर आँसू बहाना, आने वाले कल को भी वैसा ही बना डालता है तो फिर क्या तुम भविष्य में भी दूषित विकारों की कल्पना से अन्त:करण को भूत-पिशाचों की श्मशान भूमि बनाना चाहते हो ? इसलिए उठिए, फिजूल के डर को, कल्पित दु:खों तथा चिंताओं को दूर भगा दीजिए। आइए, नए 'कल' का मानसिक चित्र आज से ही निर्माण करें और मानसिक चित्रांकन में शोक-संताप, चिंता-निराशा तथा उदासीनता को निकट न आने दें। आइए हम आज से ही प्रतिज्ञा करें कि ''हम अभय हैं, सब समय सदा-सर्वदा, परम निर्भय, परम निशंक हैं। हमें भगवान ने ऐसा बल दिया है कि कोई भी भय, चिन्ता, निराशा हमें नहीं सता सकती। हम भय को फूँक से उड़ा सकते हैं। भय का पिशाच हमारे निकट नहीं आ सकता क्योंकि हमने आत्मश्रद्धा के दीपक को अपने अन्त:करण में सदा के लिए आलोकित कर लिया है।''

उठिए, भय से हाथ झाड़ दीजिए। रोने से काम न चलेगा। रूखी रोटी खाकर हँसिए, कूदिए और कल चुपड़ी खाने का प्रयत्न कीजिए। रोते रहकर विषम परिस्थितियों का निर्माण न कीजिए।

आत्म-परीक्षा कीजिए—गम्भीरता से अपनी आत्म-परीक्षा कीजिए। अर्थात् मन का इस प्रकार विश्लेषण कीजिए कि पुरानी सब स्मृतियाँ एक-एक कर स्मृति-पटल पर आ जायँ। खोद-खोद कर पुरानी बातें याद कीजिए। कभी आपको किसी ने सताया है ? दु:खी किया है ? मान-हानि की है ? किसी ने आप पर आक्रमण तो नहीं किया ? आपके माता-पिता तथा गुरुओं इत्यादि का व्यवहार आपके साथ कैसा रहा है ? इस प्रकार के बहुत-से प्रश्न अपने आप से करते जाइए। आपको यह मालूम करना है कि आपको कौन-कौन-सा मानसिक कष्ट है ? वह कौन-से भय से जुड़ा हुआ है ? कौन-कौन-सी भ्रान्तिमयी धारणाएँ आपके अव्यक्त मन में गहरी प्रतिष्ठित हो गई हैं ?

मनो-विश्लेषण में आप किसी योग्य मनोवेत्ता से सहायता ले सकते हैं। मनोविश्लेषण करने वाला आपसे बहुत-सी बातें करेगा, आपको अपने विचार निर्भयता से प्रकट करने की इजाजत देगा और गौर से आपके उत्तरों को सुनेगा। बीच-बीच में वह आपको विश्वास दिलाता जायेगा कि आपकी गुप्त मंत्रणाएँ दूसरे पर प्रकट न की जायेंगी। उसे तो मन के अन्तिम परदे तक, मन के पेंदे तक में से रोगी का ''भय'' देखना है। अत: जब तक वह भेदी न बने उसका कार्य नहीं चलता।

जब आप विगत स्मृतियों को अपने स्मृति पटल पर लाते हैं, तो कभी, किसी न किसी रूप में अव्यक्त प्रदेश में प्रसुप्त भय निकल आता है। यह प्रसुप्त 'भय' ही आपकी आत्महीनता की ग्रन्थि का कारण है। बस, इसी को बाहर निकाल देना है।

एक डाक्टर ने एक अजीब रोगी का वृतान्त लिखा है। एक शरीर से बलवान युवक जिसका विवाह हुए कुछ ही मास हुए थे, सदा इस बात से खिन्न रहता था कि वह अपने को दाम्पत्य-कार्यों में बहुत निर्बल पाता है। उसकी पत्नी अत्यन्त सुन्दर एवं रूपवती थी। वह युवक जब मनोवैज्ञानिक से मिला और जब उसका मनो विश्लेषण किया गया तो ज्ञात हुआ कि वह युवक बचपन में हस्तमैथुन की आदत में फँसा था। उसके साथियों ने सुझाया कि ऐसी आदत वाले की स्तंभन शक्ति अत्यन्त निर्बल हो जाती है। इस प्रकार की भ्रान्तिमूलक बातों का बहुत-सा वृतान्त उसने विज्ञापनों में भी पढ़ा था। अचेतन ज्ञानशक्ति पर इस बात का बड़ा बुरा प्रभाव पड़ा था, जिससे वह युवक दाम्पत्य-कार्यों में बेतरह भयभीत हो जाता था। उसके मन में यह कल्पना आती थी कि जैसे वह अपने आपको सब कुछ करने में असफल पा रहा हो, जैसे उसे बड़ा बेशर्म बनना पड़ रहा हो। क्रमश: यह ''भय'' हीनत्व की आत्म ग्रन्थि बनकर अव्यक्त में बैठ गया तथा मनोवैज्ञानिक चिकित्सा के समय निकाला गया।

''भय'' निर्मूल था—यदि आप हीनत्व की भावना वाले किसी रोगी की चिकित्सा कर रहे हैं तो कल्पित ''भय'' का कारण विदित हो जाने पर रोगी को यह विश्वास दीजिए कि जो लक्षण उसमें पाये जाते हैं, उनसे कोई गूढ़ बीमारी प्रकट नहीं होती। वह तो स्वभाविक स्थिति है। ऐसा हो ही जाता है। जिन कारणों से रोगी डर रहा है सर्वथा निर्मूल है, व्यर्थ ही दिमाग में प्रवेश कर गए हैं। इस प्रकार की बातचीत करने से, प्रोत्साहन देने से, उसके साथ सहानुभूति प्रदर्शन करने से बीमारी स्वत: दूर हो जाती है।

कभी-कभी रोगी मानता नहीं है। उसे बार-बार निर्देश किया जाता है पर वह पुन:-पुन: निराशावादी बना रहता है। ऐसी परिस्थिति में बहुत-से तर्क-वितर्क प्रस्तुत करने पड़ते हैं। अनेक वृतान्त सुनाने पड़ते हैं। कितने ही उदाहरण पेश करने पड़ते हैं, तब रोगी के मन से भ्रमात्मक भय की भावना निकल पाती है।

आत्म-संकेत का प्रयोग—जो व्यक्ति बिना किसी तर्क-वितर्क के संकेतों को ग्रहण कर लेता है, उसे मनोवैज्ञानिक चिकित्सा से बड़ा लाभ पहुँचता है। मन एक प्रकार की उर्वराभूमि की तरह है। इसमें आप आत्म-संकेत द्वारा जैसे विचार-बीज बो देंगे कालान्तर में वे आपके कार्यों में प्रकट होंगे। अत: आप कायरता के स्थान पर आत्मविश्वास के बीज मनोभूमि में लगाने प्रारम्भ कीजिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आशावाद की शुभ प्रेरणा में गोता लगाइये। मन में से संदिग्धवृत्ति निकालकर स्थिरता तथा दृढ़ता का समावेश कीजिए। अपने कल्पित शत्रुओं के स्थान पर अपने अनन्य मित्रों की मृदुल कल्पना में अवगाहन कीजिए। विनाश भावना की जगह आत्म-कल्याण की नई युक्तियों का निर्माण कीजिए।

आधुनिक मनोविज्ञान ने अनेक खोजों के पश्चात् यह सिद्ध कर दिया है कि आत्महीनता जन्मजात दुर्गुण नहीं वरन् एक प्रकार की आदत है। जिस प्रकार सिगरेट की आदत नित्य के अभ्यास से बढ़ जाती है, उसी प्रकार आत्महीनता की भावना भी दीर्घकाल के अभ्यास से प्राप्त होती है। अभ्यास से हम वीर, पुंगव, महान, साहसी नायक बन सकते हैं तथा अनुचित अभ्यास द्वारा हम डरपोक, कायर भी हो सकते हैं। आत्महीनता ऐसे ही अशुभ अभ्यास का परिणाम है।

जरा विचार कीजिए, यदि आप डरपोक बने रहने का अभ्यास करेंगे, बात-बात में कायरता दिखायेंगे, दूसरों की विनाशकारी बातों में आ जाया करेंगे, तो क्या आप इस कर्म-भूमि में कुछ भी कर सकेंगे ? यहाँ तो पग-पग पर युद्ध करना होता है। जीवन के इस प्रलयंकारी युद्ध में कितनी ही बार आँधी तथा तूफान का वेग आता है और ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे जीवन-नौका उलट कर समुद्र की लैहरों में विलीन हो जायेगी, अब बचने का कोई मार्ग नहीं दृष्टिगोचर होता किन्तु फिर देखते हैं कि आँधी-तूफान शान्त हो गया और नौका पुनः आनन्द से चलने लगी। यदि आप जरा-जरा सी क्षुद्र कठिनाइयों को देख कर भयभीत होंगे या घबरा जायेंगे तो विषम परिस्थितियों का क्यों कर मुकाबला कर सकेंगे ? जो मनुष्य प्रत्येक चीज से डरता है, वह नर्क की घोर यंत्रणा भुगता करता है। ऐसे मनुष्य की मृत्यु जीते जी ही समझिए। दूसरे उसे यों ही हड़प जाते हैं।

तुम्हें दूर से अपनी कठिनाइयाँ दुर्भेद्य प्रतीत होती हैं। किन्तु वास्तव में वे तुम्हारी संदिग्ध वृत्ति की छाया मात्र हैं। जैसा तुम्हारा अभ्यन्तर प्रदेश है, जैसी तुम्हारी भावनाएँ, वृत्तियाँ हैं, उन्हीं के अनुसार तुम्हारा वातावरण भी है। तुम सदा अपने भावों, विचारों, संकल्पों के मेघों से आच्छादित रहते हो। जैसे मकड़ी अपने चारों ओर जाला बुनती है और निरन्तर उसी में निवास करती है, उसी प्रकार तुम अपनी कल्पनाओं से अपना अन्तःकरण बसाते हो। अन्तःकरण एक बस्ती है। इसमें तुमने जिस-जिस को स्थान दिया, वही इसमें बस गया है। तुम्हारी बस्ती में कौन-कौन हैं ? आरोग्य, पुष्ट और आशावादी संकल्प या अनिष्ट की ओर झुकने वाली प्रवृत्तियाँ ?

आज से ही अपनी बस्ती के प्राणियों को देखो। जो अशुभ, दुःख, दुर्दैव और अनिष्टकारी हैं, उन्हें सर्वदा के लिए देश निकाला दे दो। आनन्द के, उत्साह के तथा साहस के संकल्पों को बस्ती में बसाओ। निष्प्रयोजन वासनाओं से मुक्त हो जाओ। मेरे जीवन की देवी उत्कृष्ट अवस्था का प्रत्यक्ष जगत में अवश्य प्रादुर्भाव होगा—ऐसे संकल्प को लेकर मन में गहरे उतर जाइये और मन की समस्त शक्तियाँ उसी पर केन्द्रीभूत कर दीजिए। आपको केवल उस पर 'अटल विश्वास' तथा 'आत्मश्रद्धा' रखने की आवश्यकता है। फिर आप देखेंगे कि शुभ संकल्प की शक्ति आप में कैसा अद्भुत परिवर्तन कर दिखाती है ? संसार के बड़े-बड़े विचारकों और मनीषियों ने इस दृष्टिकोण का समर्थन किया है और उन्नति का सर्वश्रेष्ठ मार्ग यही बतलाया है कि मनुष्य अपने ऊपर विश्वास रखकर सद्विचारों का बीजारोपण करता रहे। देखिये विचार-शक्ति की महिमा को जानने वाले प्रसिद्ध विद्वान 'स्वेट मार्डन' क्या कहते हैं ?

"विचार कर लो मन, वचन, काम से इस बात को मान लो—कि अब भी हम वैसे ही मनुष्य हैं, जैसे कि हम होना चाहते हैं, जैसा कि हमारा आदर्श है। हम कमजोर नहीं, निर्बल नहीं, दरिद्र नहीं, वरन् शक्तियुक्त, समृद्धियुक्त और महान आत्मा हैं। ऐसा करने से थोड़े ही दिनों में आपको मालूम होगा कि आपके आदर्शों की सिद्धि बड़ी शीघ्रता के साथ आपकी आत्मा में हो रही है—उन आदर्शों से आपका चरित्र परिपुष्ट हो रहा है।

"हमें आवश्यकता है, उन सद्गुणों की जो हमें ऊँचा चढ़ावें। हमें आवश्यकता है उन सद्गुणों की जो हमारी आत्मा में दिव्यता लावें। हमें आवश्यकता है उन सद्गुणों की जो हमारे भीतर सद्गुणों का विकास करें। हमें आवश्यकता है उन गुणों की जो हमारी निर्माण शक्ति को तेज करें और हमारी अकर्मण्यता और दुःख-दारिद्रय का नाश करें।"

इसी प्रकार एक भारतीय विचारक श्रेष्ठ विचारों की शक्ति का विवेचन करते हुए कहते हैं—

जीवन-रूपी क्षेत्र में विचार एक बीज के सदृश है। यदि काँटे का बीज बोया जायेगा तो आम कैसे उत्पन्न होंगे ? ऐसे ही, जैसा विचार होगा, वैसा ही उसका फल होगा। इससे हम आम का बीज क्यों न बोयें ? अपने विचारों के रचयिता, पालनकर्त्ता और संहारकर्त्ता तुम्हीं हो। जिस विचार को प्रकट करना चाहो, उसे तुम प्रकट कर सकते हो, जिसे चाहो बढ़कर विकसित और पालन कर सकते हो और जिसे चाहो उसे नाश भी कर सकते हो। इसलिये विचारों के बीज बोने में सदा सावधान रहो। दृढ़ विश्वास रखो कि सूर्य चाहे प्रकाश करना बन्द कर दे पर विचारों का परिणाम कभी निष्फल नहीं होता। इसलिये आत्म-विश्वास से कभी मत डिगो, मन को धैर्य के साथ साधन में लगाये रहो, जिससे तुम सदैव सफलता प्राप्त करते रहो।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मनोबल बढ़ायें—कठिनाइयों पर विजय पायें

धैर्यवान पुरुष सिंह

विशेषकर यदि हम कोई महत्त्वपूर्ण कार्य करना चाहते हैं तो उसमें अनेक आपत्तियों का मुकाबला करने के लिए हमें तैयार ही रहना चाहिए। अनेक व्यक्ति इसी डर के मारे भारी काम में हाथ नहीं डालते। सम्भव है वे इस जीवन में दु:खों से बच जायें पर वे किसी प्रकार की प्रगति, उन्नति भी नहीं कर सकते। उनका जीवन कीड़े-मकोड़ों से बढ़कर नहीं होता।

जिसने शरीर धारण किया है, उसको सुख-दु:ख दोनों का ही अनुभव करना होगा। शरीरधारियों को केवल सुख ही सुख या केवल दु:ख ही, दु:ख कभी भी प्राप्त नहीं हो सकता। जब यही बात है, शरीर धारण करने पर दु:ख-सुख दोनों का ही भोग करना है तो फिर दु:ख में अधिक उद्विग्न क्यों हुआ जाय? दु:ख-सुख तो शरीर के साथ लगे रहते हैं। हम धैर्य धारण करके उनकी प्रगति को ही क्यों न देखते रहें ? जिन्होंने इस रहस्य को समझकर धैर्य का आश्रय ग्रहण किया है, संसार में वे ही सुखी समझे जाते हैं।

धैर्य की परीक्षा सुख की अपेक्षा दु:ख में ही अधिक होती है। दु:ख की भयंकरता को देखकर विचलित होना प्राणियों का स्वभाव है। किन्तु जो ऐसे समय में भी विचलित नहीं होता वही ''पुरुषसिंह'' धैर्यवान कहलाता है। आखिर हम अधीर होते क्यों हैं? इसका कारण हमारे हृदय की कमजोरी के सिवा और कुछ भी नहीं है। इस बात को सब कोई जानते हैं कि आज तक संसार में ब्रह्मा से लेकर कीड़े-मकोड़ों तक सम्पूर्ण रूप से सुखी कोई नहीं हुआ है। सभी को कुछ न कुछ दु:ख अवश्य हुए हैं। फिर भी मनुष्य दु:खों के आगमन से व्याकुल होता है तो उसकी कमजोरी ही कही जा सकती है।

महापुरुषों की यह विशेषता होती कि दु:खों के आने पर वे हमारी तरह अधीर नहीं हो जाते । उन्हें प्रारब्ध कर्मों का भोग समझकर वे प्रसन्नतापूर्वक सहन करते हैं। पाण्डव दु:खों से कातर होकर वे अपने भाइयों के दास बन गये होते, मोरध्वज पुत्र शोक से दु:खी होकर मर गये होते, हरिश्चन्द्र राज्य के लोभ में अपने वचनों से फिर गये होते, राजा शिवि ने यदि शरीर के कटने के दु:ख से कातर होकर कबूतर को बाज के लिए सुपुर्द कर दिया होता तो इनका नाम अब तक कौन जानता ? वे भी असंख्य नरपतियों की भाँति काल के गाल में चले गये होते किन्तु इनका नाम अभी तक ज्यों का त्यों जीवित है, इसका एकमात्र कारण उनका धैर्य ही है।

अपने प्रियजन के वियोग से हम अधीर हो जाते हैं क्योंकि वह हमें छोड़कर चल दिया। इस विषय में अधीर होने से क्या काम चलेगा ? क्या वह हमारी अधीरता को देखकर लौट आयेगा ? यदि नहीं तो हमारा अधीर होना व्यर्थ है। फिर हमारे अधीर होने का कोई समुचित कारण भी तो नहीं क्योंकि जिसने जीवन धारण किया है, उसे मरना तो एक दिन है ही। जो जन्मा है वह मरेगा भी। सम्पूर्ण सृष्टि के पितामह ब्रह्मा हैं। चराचर सृष्टि उन्हीं से उत्पन्न हुई। अपनी आयु समाप्त होने पर वे भी नहीं रहे क्योंकि वे भी भगवान विष्णु के नाभि कमल से पैदा हुए हैं। अत: महाप्रलय में वे भी विष्णु के शरीर में विलीन हो जाते हैं। जब यह अटल सिद्धान्त है कि जायमान वस्तु का नाश होगा ही तो फिर हम अपने उस प्रिय का शोक क्यों करें ? उसे तो मरना ही था, आज नहीं तो कल और कल नहीं तो परसों। सदा कोई जीवित रहा भी है जो वह रहता ? जो जहाँ से आया था, चला गया। एक दिन हमें भी जाना है। इसलिए जो दिन शेष हैं, उन्हें धैर्य के साथ उस परमपिता परमात्मा के गुणों के चिन्तन में लगावें।

शरीर को व्याधि होते ही हम विकल हो जाते हैं। विकल होने से आज तक कोई रोगमुक्त हुआ है? यह शरीर तो व्याधियों का घर है। जाति, आयु, भोग को साथ लेकर ही तो यह शरीर उत्पन्न हुआ है। पूर्व जन्म के जो भोग हैं, वे तो भोगने ही पड़ेंगे।

हारिये मत, जीतने की ही बात सोचिये

जो वस्तु या विषय अनुकूल स्थान पा लेता है, वह बहुत शीघ्र पल्लवित तथा स्थायी हो जाता है। अन्नों के विभिन्न प्रकार होते हैं। किन्तु प्रत्येक अन्न हर क्षेत्र में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नही हो सकता। हर बीज को फलीभूत होने के लिए उसे अनुकूल तत्त्वों वाली भूमि की आवश्यकता होती है। यही कारण है कि किसी भूमि पर गेहूँ, चना होता है तो किसी भूमि पर चावल, मक्का, ज्वार आदि। किसी बाग की भूमि आम के लिए अनुकूल होती है तो किसी की अमरूद के लिए। अनुकूल क्षेत्र, परिस्थिति पाये बिना किसी बात अथवा विषय का विकास एवं दायित्व सम्भव नहीं।

यदि हमारे शरीर में रोगों के अनुकूल हानिकारक तत्त्व मौजूद न हों तो रोगों की शक्ति नहीं कि वे हमको आक्रान्त कर सकें। इसी प्रकार यदि अनिष्ट अथवा अशुभ के अनुकूल निर्बलता हमारे मन में न रहे तो उनका कोई प्रभाव हम पर नहीं पड़े। बहुत बार एक जैसी हानि अथवा अप्रियता से घिरकर दो व्यक्तियों में से एक की दशा दयनीय हो जाती है। उसकी हिम्मत तथा हौंसला समाप्त हो जाता है और वह प्रतिकूलता के समक्ष आत्म-समर्पण करके सदा को निष्क्रिय बन बैठता है, इसके प्रतिकूल दूसरा व्यक्ति उस अनिष्ट से जरा भी प्रभावित नहीं होता। दु:खद परिस्थिति हवा के एक गर्म झोंके की तरह उसे ऊपर से छूकर निकल जाती है। न उसका साहस टूटता है और न उसे निराशा होती है। वह उसी हिम्मत तथा उत्साह से काम करता रहता है और अन्त में विजयी होता है। इस विषय का केवल एक ही कारण होता है और वह है परिस्थितियों के योग्य मानसिक अनुकूलता। निराश व्यक्ति की मनोभूमि निर्बल होने से घटना उसको सहज ही दबा लेती है और सारी शक्ति को व्यर्थ कर निष्क्रिय बना देती है। हार न मानने वाले व्यक्ति की मन:स्थिति उस अप्रियता के अनुकूल नहीं होती इसलिए वह उस पर प्रभाव नहीं डाल पाती, उसकी सारी शक्तियाँ सक्रिय तथा समर्थ बनी रहती हैं। फलत: न तो वह निराश होता है और न निरुत्साहित, यथावत् कार्य करता रहता है और अन्त में प्रतिकूलता पर नियन्त्रण कर विजयी होता है। मनुष्य की बाह्य हार-जीत बहुत कुछ मानसिक हार-जीत पर निर्भर रहती है। बाहर से असफलता मिलने पर भी यदि हृदय से हारा न जाये तो कोई कारण नहीं कि हमारा नाम पराजितों में लिखा जा सके। मानसिक हार-जीत के कारण बहुत-से लोग जीतकर हार जाते हैं और बहुत-से हारकर जीत जाते हैं। कितनी ही विषम परिस्थिति क्यों न आ जायें, संकट की घनी घटायें क्यों न घिर रही हों, कितना ही अन्धकार क्यों न दिखाई देता हो, मन से मत हारिये हृदय से विजय की सफलता एवं निस्तार का तेजस्वी विचार कभी भी तिरोहित मत होने दीजिए। संसार का ऐसा कोई संकट नहीं जो आपके पैर मैदान से उखाड़ दें।

अधिकतर होता यह है कि लोग एक अंश बाहर से हारते ही दस अंश भीतर से हार जाते हैं। उनकी विचारधारा जिन्हें उनका साथ देना चाहिए था प्रतिकूलताओं के पक्ष में हो जाती हैं। प्रतिकूल दिशा में बहने लगती है। संकट के समय में उसे सोचना तो इस प्रकार चाहिए कि यह संकट कुछ नहीं है। यह तो मानव जीवन में आते रहने वाले धूप-छाँह का खेल है। यह साधारण-सी असफलता हमारी अजेय आशा को विचलित नहीं कर सकती, मुझमें शक्ति, साहस तथा संघर्षशीलता की कमी नहीं है। मैं निरन्तर पुरुषार्थ तथा धैर्य के आधार पर अपना हारा दाव जीत लूँगा। किन्तु सोचने इस प्रकार लगता है—'लीजिए काम करते ही हानि होने लगी, शायद मेरा भाग्य खराब है, समय और नक्षत्र हमारे प्रतिकूल है। जब इस प्रकार कदम-कदम पर असफलता मिलेगी तब हमारा आगे बढ़ सकना कैसे सम्भव हो सकता है ? हम पर तो दैवी कोप मालूम होता है, हममें इतनी शक्ति कहाँ कि दैव से टक्कर ले सकें।' इस प्रकार की परस्पर विरोधी—अनुकूल-प्रतिकूल विचारधाराओं का परिणाम यही तो है कि एक हिम्मत से मैदान में डटा रहता है, दूसरा मैदान छोड़ जाता है। स्वाभाविक है कि एक जीते और दूसरा हारे।

मनुष्य स्वभाव से ही अपनी दशा तथा स्थिति का स्वामी बनने के लिए बनाया गया है न कि उनका दास बनकर रहने के लिए। यदि अन्य पशु-पक्षियों की तरह ही अनुकूलता में नाचने-कूदने और प्रतिकूलता में भागने, रोने, चिल्लाने, घबराने, उद्विग्न होने लगे तो उसकी विशेषता ही क्या रह जाये ? उसकी बुद्धि-विवेक तथा संघर्ष शक्तिमत्ता ही क्या रह जाये ? किन्तु खेद है कि मनुष्य सारी शक्तियों तथा क्षमताओं के रहते हुए भी अपनी मानसिक निर्बलता तथा प्रतिकूल विचारधारा के कारण हार मान लेता है। इसका कारण यही समझ में आता है कि ऐसे कायर लोग अपने मनुष्य होने का शायद ध्यान नहीं रखते अथवा मानवीय विभूतियों को निरुपयोगी समझते हैं। परिस्थितियों से हारने-जीतने की शर्म व गैरत उन्हें नहीं होती।

इतना ही क्यों, यदि एक बार दस बार भी असफलता क्यों न आये ? परिस्थितिवश मैदान छोड़ना पड़े तब भी अखाड़े से बाहर शरीर के साथ मन को भी हराकर मत जाइये। उस हार से शिक्षा लीजिए और आगे की जीत के लिए प्रयत्न कीजिए और मैदान में पूरी तैयारी के साथ उतरिये। आप अवश्य विजयी होंगे। यदि शरीर के साथ मन को भी हराकर चले गये तो आपके पास ऐसा कोई उपाय शेष न रह जायेगा, जिसके आधार पर आप आगामी विजय की तैयारी कर सकें। मानसिक अनुकूलता अथवा वैचारिक स्थिति का परिस्थितियों पर बहुत प्रभाव पड़ता है। इस सत्य को कभी विस्मरण न करना चाहिए।

यदि हमारा मन बलवान है, हमारे विचार हमारे साथ हैं, हमारी भावनायें शुभ तथा सृजनात्मक हैं तो हम पर प्रतिकूल परिस्थिति का कोई प्रभाव नहीं पड़ सकता और हम उस पर अवश्य नियन्त्रण प्राप्त कर लेंगे। हमें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चाहिए कि हम अपनी मनोभूमि को संघर्षों के समय पहाड़ की उस चट्टान की तरह दृढ़ तथा अपने अनुकूल बनाये रहें जिस पर आँधी, पानी का कोई प्रभाव बाहर से भले कही दृष्टिगोचर हो किन्तु उसका प्रवेश अन्तर में न हो सके।

आदमी की वास्तविक शक्ति

वह हार कर भी सदा विजयी ही रहा

युवक विजेता सिकन्दर राजमद, अहंकार और लोभ के वशीभूत था। उसने कुछ प्रदेश जीते तो उसकी महत्त्वाकांक्षाएँ अनावश्यक रूप से भड़क उठीं।

''अब मुझे विश्वविजयी बनना चाहिए। दुनिया के कोने-कोने में मेरी विजय-दुन्दभी बजनी चाहिए। संसार के इतिहास में मुझे विश्व का सबसे बड़ा विजेता कहलाना चाहिए।'' सिकन्दर मन ही मन ये शब्द कहता रहता और दुनिया को जीतने के स्वर्णिम स्वप्न देखा करता था।

इन शब्दों में उसका राजमद बोल रहा था। कहते हैं कि संसार में यौवन, धन और सौन्दर्य के मद प्रबल हैं, किन्तु लगता है सत्ता का मद प्रबलतम है। राजमद के प्रमाद में महत्त्वाकांक्षी सिकन्दर ने समग्र पृथ्वी पर अपना राज्य स्थापित करके महान कहलाने की योजना बनाई।

बनाई क्या, वायुवेग से तुरन्त ही उसे कार्यान्वित भी करना आरम्भ कर दिया। मद और अहंकार में आदमी अपना मनुष्यत्व खो बैठता है। प्राय: उसका विवेक शून्य हो जाता है और वह ऐसे गर्हित कार्य करता है जो उसे अर्द्धविक्षिप्त जैसा बना देते हैं।

सिकन्दर ने अकारण ही शान्तिप्रिय निर्बल राज्यों को सताना और जीतना आरम्भ किया। असन्तोष की परिणति अनीतिपूर्ण अत्याचार में होना स्वाभाविक है। व्यर्थ ही किसी को सताने का मतलब विनाश होता है। सिकन्दर के अहंकार और लोभ ने उसे नियति के इस क्रूर गतिचक्र में ला पटका।

फिर क्या था, उसने नए जोश से एक वृहत् सुसज्जित सेना तैयार की और विश्वविजय करने यूनान से निकल पड़ा।

अभी तक इतने विपुल पैमाने पर किसी राजा के पास सेना न थी। शस्त्रों के संचालन में दक्षता की कमी और ऐक्य भाव की भी न्यूनता थी। सिकन्दर की विशाल सेना को देखकर छोटे-छोटे राज्य भयभीत हो उठे, विपुलता के आतंक से बिना युद्ध किये ही अनेक राज्यों ने उसे आत्मसमर्पण कर दिया। कुछ ने युद्ध करने की हिम्मत की किन्तु साधनों, सहयोग और सहायता की कमी के कारण वे अहंकारी सिकन्दर द्वारा पराजित हुए। विजय का अभियान अग्नि की लपलपाती लपटों की भाँति उत्तरोत्तर भड़कता ही गया। उसके पद और अहंकार का घड़ा जैसे लबालब भरकर उद्वेलित होने लगा।

उसे ऐसा लगने लगा मानो विश्वविजयी बनने का उसका सुनहरा स्वप्न साकार होने जा रहा था।

आँधी और तूफान की तरह निर्विघ्न आगे बढ़कर आखिर उसकी सेना ने भारतीय सीमा पर पड़ाव डाल दिया।

यह भारत के लिए अप्रत्याशित संकट की घड़ी थी। दासता का प्रथम डंका था।

दुर्भाग्य से उन दिनों भारत में फूट नामक विकार फैला हुआ था। उन दिनों सहयोग, राष्ट्रीयता और स्वतंत्रता की न्यूनता थी। सिकन्दर ने इस दुर्बलता से लाभ उठाया। फूट की विषैली बेल फैलाने में सिकन्दर ने कूटनीति से काम लिया। तक्षशिलाधीश दम्भी अम्भीक अनेक बार महाराजा पुरु से हारकर विद्वेष-विष में अन्धा बना हुआ था। बिना विचारे उसने सिकन्दर को पुरु के विरुद्ध आक्रमण का निमन्त्रण दे दिया।

दोनों की संयुक्त सेना, फिर कूटनीति, धोखेबाजी तथा कुछ आकस्मिक कारणों से महाराज पराजित हो गये। अचेतनावस्था में वे सिकन्दर द्वारा बन्दी बनाये गये। महाराज पुरु को जब होश आया, तो वे सिकन्दर के सामने थे। उनके मन में पराजय का भारी विक्षोभ था। किन्तु सिकन्दर विजय के मद में अन्धा हो रहा था।

वह हँसा और बोला, ''पोरस, बतलाओ अब तुम्हारे साथ कैसा व्यवहार किया जाये ?''

आप जानते हैं सिकन्दर मन ही मन अपने प्रश्न के जवाब में किस उत्तर का अनुमान कर रहा था ?

''वह सोच रहा था कि पोरस गिड़गिड़ाकर मेरे चरणों पर गिर पड़ेगा और रो-रोकर मेरे पाँव अपने गर्म आँसुओं से भिगो देगा। बार-बार दयनीय हो युद्ध करने की अशिष्टता के लिए क्षमा याचना करेगा। असहाय हो अपने प्राणों की भीख माँगेगा। वह निरुपाय-नि:सहाय होकर कहेगा कि मैं आपका बन्दी हूँ, विजित दास हूँ, अब हर तरह आपके कब्जे में हूँ। मेरी हालत वैसी ही है जैसे पिंजरे में बन्द कैदी पक्षी की होती है। अब आप चाहें तो मुझे रखिये अथवा मार दीजिए। पूरी तरह आपके वश में हूँ। मेरा अब कोई सहारा नहीं है। मैं तो हर प्रकार से हार चुका हूँ। मैं अपनी पराजय को स्वीकार करता हूँ और अपनी हेकड़ी के लिए लज्जित हूँ। अब मुझे प्राणदान दीजिए।''

यह सुनकर वह कहेगा कि ''अच्छा सम्राट पुरु, मैं तुम्हें प्राणदान देता हूँ। भविष्य में मुझसे लड़ने का दु:साहस मत करना।'' फिर वह पुरु की वीरता और रणकुशलता का भारत के अन्य शासकों को दबाने में उपयोग करेगा।

लेकिन पुरु ने सिकन्दर की आशा के विपरीत सवाल का कुछ और ही उत्तर दिया।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

महाराज पुरु ने शासकोचित वीरता से भरा हुआ, यह जवाब दिया, जो आज तक हिन्दुओं में नये प्राण और भारत के बच्चे-बच्चे में नया उत्साह भरता है। इससे स्पष्ट था कि चाहे पुरु का शरीर हार गया हो, पर अपने मन से वह हारा नहीं था। उसमें मनोबल की गुप्त शक्ति विद्यमान थी।

महाराज पुरु ने स्वाभिमानपूर्वक सिर ऊँचा करके उत्तर दिया—

"सिकन्दर! मुझसे वह व्यवहार करो, जो एक राजा दूसरे राजा से करता है। तुमने मेरा शरीर बन्दी जरूर बना लिया है, पर मैं पराजित नहीं हूँ। मेरा मन विजय से भरा हुआ है। मेरा मनोबल अभी तक उसी प्रकार उन्नत है। मुझे छोड़ दो, तो मैं फिर तुमसे लड़ूँगा और आखिरी साँस तक तुमसे स्वतन्त्रता युद्ध करता रहूँगा। मेरी आत्मा अपराजित है।"

सिकन्दर निर्भीक पुरु का समुन्नत मनोबल देखकर चकित रह गया। पुरु के शब्द उसे कचोटने लगे।

वह वीरोचित उत्तर सुनकर इतना प्रभावित हुआ कि उठकर बड़े आदरपूर्वक महाराज पुरु को गले से लगा लिया। यह थी मनुष्य के मनोबल की महिमा।

पुरु की वीरता और भारतवासियों की हिम्मत, पौरुष और शौर्य से सिकन्दर की सेना को बड़ी क्षति हुई थी। वह यह अनुभव कर चुका था कि यदि अब आगे बढ़ने का उपक्रम करेगा, तो उसकी भयभीत सेना अवश्य विद्रोह कर देगी। इसलिए वह महाराज पुरु पर ऐहसान रखता हुआ चुपचाप भारतीय सीमाओं से बाहर चला गया।

इतिहास आज भी साक्षी है कि वीर शिरोमणि महाराज पुरु हारकर भी नहीं हारा और कूटनीतिज्ञ सिकन्दर जीतकर भी नहीं जीता। मनुष्य के मनोबल की शक्ति सर्वोपरि है।

सचमुच आदमी की असली ताकत उसके गुप्त मन में रहने वाला उसका मनोबल ही है। सम्राट पुरु अपने मनोबल की ताकत के कारण ही युग-युग तक भारत के गौरव बने रहेंगे। कहना न होगा जब तक पुरु जैसे मनोबली वीर भारत-भूमि पर जन्मते रहेंगे, इसकी गौरव पताका युग-युग तक विश्व के आकाश में फहराती रहेगी।

जिसका मन हार जाता है, वह बहुत कुछ होते हुए भी अन्त में पराजित हो जाता है। जो शक्ति न होते हुए भी मन से हार नहीं मानता उसको दुनिया की कोई ताकत परास्त नहीं कर सकती।

मन के हारे हार है, मन के जीते जीत।

मुगलों के छक्के छुड़ाये

चित्तौड़ आज भी महाराणा प्रताप के मनोबल के गुणगान कर रहा है।

राजघराने में सुख और आराम की गोद में पले-पनपे, प्रताप ने **'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी'** मन्त्र की उपासना कठोर भूमि राजस्थान में की थी। अनेक हिन्दू राजा मुगलों की अधीनता स्वीकार कर चुके थे, पर प्रताप स्वाधीनता के सच्चे पुजारी थे। वे संघर्ष कर रहे थे।

मुगलों की वृहत् सेना तथा कुछ क्षुद्र बुद्धि राजपूत राजाओं की फूट के कारण चित्तौड़ मुसलमानों के हाथ में जा चुका था। राणा उदयसिंह उदयपुर बसाकर राज्य कर रहे थे। दुर्भाग्य से वे स्वर्गवासी हुए। छोटी आयु में ही प्रताप मेवाड़ के स्वामी हुए।

विरोध और शत्रुता का समुद्र उन पर टूट पड़ा। कठिनाइयों के झुण्ड के झुण्ड उनकी परीक्षा करने आने लगे। उन्हें जंगल की खाक छाननी पड़ी, उनकी धर्मपत्नी और बच्चों को वन में हिंसक पशुओं के खतरे में रहना पड़ा। भूख, प्यास और निवास की असंख्य मुसीबतों से गुजरना पड़ा। उनके चारों ओर उनके खून के प्यासे शत्रुओं का दल हिंसक चील, बाज और कौओं की तरह मँड़राता रहा। थोड़े-से देशभक्त राजपूतों और सच्चा प्यार करने वाले भीलों के अतिरिक्त उनका कोई साथी न था, पर इन हिमालय सदृश परेशानियों के बावजूद प्रताप ने मुगलों की अधीनता स्वीकार न की। वे आन पर डटे रहे।

वह कौन-सी मानवीय शक्ति थी, जिसका उन्हें भरोसा था ? उन्हें कहाँ से गुप्त सहायता मिल रही थी ?

यह उनका दृढ़ और पूर्ण विकसित मनोबल था। इतनी मुसीबतें होते हुए भी उनका मन न हारता था। उनका प्रबुद्ध मनोबल उन्हें निरन्तर संघर्ष करने को बाध्य कर रहा था। सशक्त मनोबल के कारण वह पराजित न हुए। मुगलों की विपुल सेनाएँ उन्हें परास्त न कर सकीं।

प्रताप की विशेषता उनका अजय मन ही था। मनुष्य की वास्तविक शक्ति उसका मनोबल ही है। मनोबल से हीन मनुष्य को निर्जीव ही समझना चाहिए। प्रताप मानते थे कि संसार के सारे कार्य शरीर द्वारा सम्पादित होते हैं, किन्तु उनका संचालक मन ही हुआ करता है। मन का सहयोग पाये बिना शरीर-यन्त्र उसी प्रकार निष्क्रिय रहा करता है, जैसे विद्युत के अभाव में सुविधा-उपकरण अथवा मशीनें इत्यादि।

अपने मनोबल की ताकत लेकर वे मुगल-सैन्य-रूपी समुद्र में कूदे।

शत्रु से लोहा लेने के लिए वे गरीब भूखे-प्यासे राजपूतों को रण-शिक्षा देने लगे। हल्दीघाटी का शौर्य प्रताप के मनोबल की गौरवपूर्ण कहानी है।

थोड़ी-सी शेर-दिल सेना के साथ वे मतवाले हाथी की तरह संग्राम-भूमि में शत्रु संहार कर रहे थे। मानसिंह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के स्थान पर उन्हें सलीम दिखाई दे गया। फिर क्या था शत्रुओं को गाजर मूली की तरह काटते हुए वे सलीम के हाथी के पास जा पहुँचे।

चेतक ने उछलकर उन्हें सलीम के हाथी तक पहुँचा दिया। प्रताप ने निशाना ताका। कैसा खतरनाक था वह आक्रमण ? सलीम की मौत मानो भाले की शक्ल में आ गई थी।

संयोग से वह भाला हाथी के हौदे से टकरा गया, पर पीलबान मारा गया। डरकर हड़बड़ाया-सा हाथी मुगलों की सेनाओं को रौंदता हुआ भाग निकला।

मुगल सेना की संख्या अत्यधिक थी। प्रताप हारे पर उन्होंने आजन्म स्वतन्त्रता के लिए संग्राम किया। वे अपने सीमित साधनों से ही मुगलों को सदैव तंग किये रहते। उनकी स्थिति में कोई दूसरा कभी भी सन्तुलन स्थिर नहीं रख सकता था। उनके स्वाधीनता संग्राम में बड़े कष्टदायक स्थल आये, उनकी धर्मपत्नी और बच्चों को बीहड़ जंगलों में मारे-मारे फिरना पड़ा, प्राणों पर तलवार झूलती रही, पर अपने मनोबल से ही वे निरन्तर आगे बढ़ते रहे। कभी मन से उन्होंने मुगल सम्राट से हार न मानी।

मनुष्य की समस्त शक्ति उसके मन में छिपी हुई है। इससे उसमें अपने अन्दर आत्म-विश्वास उत्पन्न होता है। जब आदमी अपनी गुप्त शक्तियों को पहचान लेता है और दैनिक जीवन में उन्हें जाहिर करने लगता है, तब उसमें क्रान्तिकारी परिवर्तन होने लगते हैं। अपने मनोबल के बल पर ही लोगों ने अपने जीवन की दिशा बदली है।

कोई बड़ा कार्य करने से पूर्व उनके मन में यह भावना दृढ़ हो गई कि मैं अमुक कार्य जरूर कर सकता हूँ । मुझे अपने सीमित साधनों से ही उसे प्रारम्भ कर देना चाहिए। उसमें सफलता पाने के लिए मुझमें सब कुछ मौजूद है।

आत्मविश्वास जाग्रत, होते ही उन्नति का प्रारम्भ हो जाता है। आत्मविश्वास साहस और उत्साह पैदा करता है। ये सब शक्तियाँ मिलकर मनुष्य को आगे बढ़ाती हैं।

जो महत्त्वाकांक्षी है, जिसमे कुछ करने की सच्ची अदम्य लगन है, कभी न हारने वाला सुदृढ़ मनोबल है, उसको साधारण परिस्थितियाँ तो क्या, बड़े-बड़े पर्वत तक नहीं रोक सकते।

वह अपने ध्येय का पक्का पहाड़ चीरता और समुद्र तैरता हुआ आगे ही बढ़ता जाता है। वैर, विरोध और परेशानियाँ। परिवार की समस्या, धन का अभाव, गिरा हुआ स्वास्थ्य आदि सबकी सब शिकायतें मनोबल के द्वारा दूर हो जाती हैं।

मनोबली हिन्दू सिपाही

उन दिनों भारत में मुसलमानों की कट्टरता और हिन्दुओं पर अत्याचार बढ़े हुए थे।

शिवाजी की अद्भुत शक्तियों की ख्याति मुसलमान बादशाह के कानों तक पड़ी। उसकी उत्कट इच्छा हुई कि इस प्रभावशाली बालक को अपने हाथ में लेना चाहिए। उन्होंने शिवाजी के पिता शाहजी सहित उन्हें दरबार में निमन्त्रित किया।

शाहजी प्रसन्न थे कि उन्हें राजकीय सम्मान मिलने जा रहा था। कौन पिता शाहंशाही कृपा, बड़ी जागीरों और विलास से प्रसन्न नहीं होता।

शिवाजी से पूछा गया तो वे अड़ गये। बोले, "मैं मुसलमान बादशाह को मन ही मन घृणा करता हूँ। वह गौ ब्राह्मण का शत्रु है। मैं उसके सामने सिर झुकाना हिन्दू धर्म की शान के विरुद्ध समझता हूँ।"

एक हिन्दू लड़के का मुसलमानों से घिरे रहना कभी भी निरापद नहीं हो सकता था। उन्हें पगपग पर उनसे संघर्ष करना पड़ा।

जैसे-जैसे वे बड़े हुए उन्होंने मुसलमानों के क्रूर अत्याचारों के विरुद्ध अपने सीमित साधनों से ही ऊँची आवाज उठाई। हिन्दुओं को जबरदस्ती मुसलमान बनाने के कुचक्र देख उन्होंने मन ही मन प्रण किया—"चाहे मेरे पास कितने ही सीमित साधन क्यों न हों, मैं हिन्दू साम्राज्य स्थापित करूँगा। हिन्दुओं में राष्ट्रीयता और धार्मिकता के बीज बोऊँगा। मृत प्राय: हिन्दू जाति में नव प्रेरणा का संचार करूँगा।"

एक दिन फिर ऐसा आयेगा, जब इस विशाल देश में इतिहास की पुनरावृत्ति होगी। पहले की भाँति हिन्दू साम्राज्य स्थापित होगा। हिन्दुओं के मुल्क में कोई म्लेच्छ न रहेगा।

सारी परिस्थितियाँ उनके विरुद्ध थीं, मुसलमान शासक उनके लहू के प्यासे थे। कोई बड़ी सेना या रुपये की शक्ति उनके पास न थी।

उनके पास केवल उनका मनोबल ही था। उनका मन साहस, वीरता, हिम्मत, कष्ट, सहिष्णुता से पूर्ण था। वह मजबूत मन कठिनाइयों से कभी भी न हारने वाला था। वह अजेय था। सारी सिद्धियाँ मन की दृढ़ता पर ही आधारित हैं। मनोबल की सहायता से ही शिवाजी ने जीवन को तपस्यामय बनाया।

वे गाँव-गाँव हिन्दू साम्राज्य के लिए सेनायें संगठित करने लगे। हिन्दुओं को किसी सच्चे नेता की आवश्यकता थी। देश को स्वतन्त्र कराने के लिए शिवाजी मिले। बड़े मुगल साम्राज्य से टक्कर लेना एक असाधारण कार्य था। उनका मनोबल ही इन सब मे उनके साथ रहा।

एक दुर्ग के पश्चात् दूसरा, फिर तीसरा उन्होंने अनेक दुर्ग फतह किये।

उनके पास साधनों की बड़ी कमी थी, पर मन मे धैर्य था। यह अन्दर की शक्ति ही उन्हें उत्तरोत्तर आगे बढ़ा रही थी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मालव में रोहिद्र नामक एक किला था। उसमें स्थित रोहिदेश्वर नामक एक मन्दिर था। उसमें बीजापुर राज्य की ओर से एक मुसलमान पुजारी नियुक्त था। शिवाजी ने हिन्दू देव स्थान को मुसलमानों से मुक्त करा कर उसे हिन्दू पुजारी के संरक्षण में रख दिया। यह हिन्दू राज्य स्थापना का प्रथम प्रयास था। तीन वर्ष बाद उन्होंने बीजापुर के 'तोरण' नामक किले पर बिना रक्तपात के अपना अधिकार कर लिया। उसकी मरम्मत कराकर उससे छः मील दूर राजगढ़ नामक एक नया दुर्ग बनवाया।

अफजलखाँ ने शिवाजी को कैद करने की योजना बनाई। उसने एक लोहे का पिंजड़ा बनवाया, जिसमें शिवाजी को कैद कर बीजापुर ले जाने की योजना थी।

शिवाजी ने अपने अँगरखे के नीचे बिच्छू कटार छिपा ली, साथ ही जीवामहाला और सम्भाजी काबू नामक दो निपुण सैनिकों को ले लिया। अफजल ने सोचा था कि अकेले में शिवाजी का सिर उड़ा दूँगा। वह डील-डौल में बड़ा मजबूत भी था।

बड़ी विषम अवस्था थी। शिवाजी ने अपने गुरु रामदास का स्मरण किया। तुरन्त उनका सोया हुआ मनोबल जाग उठा। नई शक्ति और साहस का संचार हुआ। उन्होंने साहसपूर्वक बिच्छू कटार उसके पेट में भोंक दी। खाँ बुरी तरह घायल हुआ। दोनों स्वामी-भक्त रक्षकों की सहायता से उसका वध किया।

शिवाजी अपने मनोबल के ही कारण सदा मुगलों के दाँत खट्टे करते रहे। मुगल सेना को खूब परेशान किया। शाइस्ता-खाँ को परास्त किया। एक बार वे कैद भी हो गये, किन्तु अपने मनोबल की सहायता से ही वे उसमें से भाग निकले। हर मुसीबत में उन्होंने अपने स्वावलम्बन से फतह पाई।

शिवाजी का संग्राम जीवन संघर्षों और विघ्नों से भरा रहा, पर उनका मनोबल महान था। उसी के कारण औरंगजेब जैसे शहन्शाह की समस्त कोशिशें व्यर्थ गईं। साधन और सहायता की कमी की शिकायतें प्रायः वही आलसी, अनुद्योगी व्यक्ति किया करते हैं, जिनको कुछ करना धरना नहीं होता, केवल कुछ करने की कल्पना मात्र किया करते हैं। कुछ ठोस और स्थायी कार्य करने वालों के पास व्यर्थ की शिकायतों के लिए फालतू समय नहीं होता।

महाराज रणजीतसिंह का मनोबल

एक बार दो मुसलमान गुण्डे महाराज रणजीतसिंह की हत्या के लिए उनके पीछे लग गये। गुप्तचरों ने महाराज को इसकी सूचना दे दी। वे वेश बदलकर सदा उनके पीछे रहते तथा किसी उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करते रहते थे।

रणजीतसिंह जी निर्भय और साहसी थे। वे मामूली खतरों से कभी न डरते थे। सदा ही वे शत्रुओं के दाँत खट्टे किया करते थे। उनका उन्नत मनोबल सदा ही उन्हें ऊँचा उठाये रखता था। वे विपरीत परिस्थितियों से कभी भी विचलित नहीं होते थे।

"इन म्लेच्छों को छकाना चाहिए" उन्होंने मन ही मन कहा।

उन्होंने कहा, "हम शिकार के लिए जाना चाहते हैं।"

"आपके साथ कौन-कौन चलेगा, महाराज ?"

उन दोनों की ओर इशारा करते हुए रणजीतसिंह बोले, "मैं अपने साथ बहुत-से आदमियों को नहीं ले जाना चाहता। मैं सिर्फ इन नये सिपाहियों को रक्षा के लिए ले चलूँगा। आप दोनों मेरे साथ शिकार पर रक्षा के लिए चलेंगे। तैयार होकर आइये।"

दोनों दुष्ट मन ही मन कह रहे थे, "जंगल में और कोई न होगा। अकेले में रणजीतसिंह की हत्या का अच्छा मौका मिलने वाला है।"

उन्होंने चुपचाप दो तेज छुरे अपने वस्त्रों में छिपा लिये और महाराज के साथ आखेट के लिये रवाना हो गये।

रणजीतसिंह हिरण का पीछा करते घोड़ा दौड़ाये जा रहे थे, पीछे-पीछे दोनों दुष्ट रक्षक दौड़ते चल रहे थे। काफी दूर निकल गये। एक बीहड़ जंगल आ गया।

यकायक रणजीतसिंह ने घोड़ा ठहराया। जब वे दोनों समीप आ गये, तो बोले—"मेरा गला घुट रहा है। तनिक गले के बटन ढीले कर दो।"

ऐसा कहकर उन्होंने अपना गला उनमें से एक के हाथों में थमा दिया।

यह गला घोंट देने का सबसे अच्छा मौका था।

पर यह क्या !

वे गला न घोंट सके। उनके तीक्ष्ण छुरे न निकले, जैसे बिजली उन्हें स्पर्श कर पंगु कर गई थी।

"मेरा साँस रुक रहा है। गले के बटन ढीले करो" बड़े जोश भरे स्वर में महाराज ने दुहराया। अब उनसे कुछ न सूझा। तुरन्त उन्होंने यह अनुभव किया कि उनकी हत्या की गुप्त योजना महाराज को मालूम हो चुकी थी। वे तुरन्त महाराज के पाँवों पर गिर पड़े और क्षमा माँगी।

ऐसा था रणजीतसिंह का अद्भुत मनोबल !

जिस प्रकार सूर्य के उदय होने पर अंधकार विनष्ट हो जाता है, उसी प्रकार मनोबल आने पर मनुष्य के चरित्र में चमत्कार जग जाते हैं।

पुरुषार्थरहित पुरुष आग के उस बुझे अँगारे के समान है, जो अपने कुल तथा देश को कलंकित करने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के अतिरिक्त कुछ नहीं कर सकता। न उसकी कोई उपयोगिता है, न उपादेयता। संसार की समस्त विभूति से वंचित अभागा जीवन बिताना तो पशुओं को भले ही शोभा दे, मनुष्य को नहीं। मनुष्य का अर्थ है, मनोबल से प्रज्ज्वलित शक्तिपुंज !

सामान्य जनता के मनोबल के चमत्कार

विश्व महायुद्ध के दौरान में होने वाली दो-एक घटनाओं का स्मरण आता है। उन दिनों जर्मनी के तानाशाह हिटलर ने विश्वभर को आतंकित कर रखा था। उसने अपनी बड़ी-बड़ी फौजों और नए अस्त्र-शस्त्रों के कुशल प्रयोग तथा सैन्य-संचालन द्वारा समग्र विश्व में हलचल मचा रखी थी।

उसकी योजना थी कि सारे विश्व पर जर्मनी का राज्य हो जाय। एक के बाद एक उसने यूरोप के अनेक देशों को जीता और रूस के किनारे तक बढ़ आया। किन्तु रूस को छोड़, उसने पहले इंग्लैंड को जीतने का लक्ष्य बनाया।

इंग्लैंड पर तो जैसे तूफान टूट पड़ा। यह ठीक है कि अँग्रेज युद्ध में पर्याप्त प्रतीक थे, पर जर्मनी से युद्ध करना, विशेषत: जब उनके पास इतनी बड़ी फौज और विजित देशों का सहयोग था एक टेढ़ी खीर थी। इंग्लैंड अब गया ! तब गया !! की विषम स्थिति आ गई। किन्तु देखने की बात यह थी कि वहाँ के राजनेता और फौज के अधिकारी भले ही विचलित हो उठे हों, लेकिन जनता ने अपना मनोबल नहीं खोया।

इसका प्रमाण ?

इसका सबूत यह है कि जिस समय डंकर्क के मोर्चे से डरकर प्राण बचाने के लिए ब्रिटेन की लगभग तीन साढ़े तीन लाख सेना भागी थी, उस समय उसकी अधिकांश युद्ध सामग्री भी वहीं छूट गई थी और इंग्लैंड की सेना शक्ति, साधन तथा शस्त्रविहीन हो गई थी। नौबत यहाँ तक आ पहुँची कि शत्रु को भ्रम में डालने के लिए खजूर के पेड़ कोलतार से रंग-रंगकर लन्दन के चारों ओर तोपों के स्थान पर लगाये गये थे।

अब प्रश्न यह था कि नि:शस्त्रता की पोल खुलने से पहले ही सेनाओं को साधन और शस्त्र सम्पन्न कर दिया जाये। यह कार्य इंग्लैंड की जनता के सहयोग से ही सम्भव था।

आप पूछते हैं, ''कैसे ?''

बात यह थी कि हार पर हार हो रही थी। सैन्य सामग्री समाप्त हो गई थी। हिटलर के हमले पर हमले हो रहे थे। ऐसी संकटकालीन परिस्थिति में जनता के हाथ-पैर फूल जाना साधारण-सी बात थी। मामूली हालतों में ऐसा ही होता भी आया है।

किन्तु इंग्लैंड की मनोधनी जनता ने अपना मनोबल नहीं खोया। उनका साहस बुलन्द था। वह हर नुकसान, हर भय, असंख्य विपत्तियों और दिन-रात बढ़ते खतरों की ओर से निरपेक्ष होकर अपने कार्य में दिन और रात जुट गई। उनकी कार्य-तत्परता, उनका मानसिक सन्तुलन, उनका साहस बहुत ऊँचा था।

कैसे ?

एक बार युद्ध कुशल सैन्य-संचालन करने वाले तत्कालीन प्रधानमन्त्री श्री विण्टसन चर्चिल एक कारखाना देखने गये, तो किसी ने उनका अभिवादन करने तक में समय खराब करना उचित न समझा। कोई पद-लोभी या अस्थिर अफसर इस अवज्ञा से क्रुद्ध होता, पर प्रधान मन्त्री जब कारखाना घूमकर बाहर आये तो वे खुश थे।

उन्होंने पत्रकारों को बताया कि जिस इंग्लैंड की जनता का मनोबल इतना बुलन्द है और जो संकटकालीन स्थिति में, संगीनों की छाया में, बन्दूक, तोपों और बमों की गरज-तरज में टूटते खंडहरों और ढहती इमारतों में अपने कर्त्तव्यों को ठीक-ठीक समझकर पूरा करने में इतनी ईमानदार है कि उस ग्रेट-ब्रिटेन को एक हिटलर क्या हजार हिटलर भी परास्त नहीं कर सकते।

और हुआ भी यही !

इस मनोबल का क्या फल हुआ ?

नतीजा यह हुआ कि कुछ संघर्षों के बाद इग्लैंड ऐसी मजबूती से जमा, ऐसे साहस और मनोबल से लड़ा कि कुछ समय बाद हिटलर की हार हुई।

यह विजय किसकी थी ?

विण्टसन चर्चिल की ? फौज के कमाण्डरों की ? सैनिकों की ?

नहीं, इसमें किसी की विजय नहीं थी।

तो फिर किसकी जीत थी ?

यह इंग्लैंड की जनता के उन्नत मनोबल की विजय थी।

जब बहुत-से व्यक्ति किसी सत्कार्य या महान् उद्देश्य के लिए एक मन, एक तन होकर प्रयत्नशील होते हैं, तो उनके साथ ईश्वर की गुप्त शक्ति का प्रादुर्भाव होता है। संयुक्त मनोबल में हजारों तोपों और एटम बमों की ताकत छिपी रहती है। मनोबल ज्ञान, दर्शन, शुभचिन्तन और सत्कर्म का संयुक्त महाबल है।

एक और उदाहरण लीजिये—

यह प्रशस्त घटना फ्रांस की है। वहाँ भी ऐसी परिस्थिति आ उपस्थिति हुई थी। देश पर संकट था। जनता कुछ डरपोक मन:स्थिति में थी।

जनरल पेताँ ने मोह में आकर मनोबल खो दिया और बिना हारे ही पराजय स्वीकार करने का प्रतीक देश का झंडा झुका दिया।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फ्रांस में समझदार लोगों ने इस पर सोच-विचार किया। उनकी स्वतन्त्र भावना और स्वाभिमान ने जोर मारा। अब उन्हें ऐसा लगा मानो जनरल पेताँ ने अपना झंडा झुकाकर उनके देश का बड़ा अपमान किया था।

जनता ने उनके प्राण बचाने की योजना को अकल्याणकारी माना। घृणास्वरूप उसने जनरल पेताँ का बहिष्कार कर दिया।

नया नेता कौन हो ?

उन्होंने जनरल दिगाल को नेता बनाया। पेरिस का पतन हो चुका था।

फिर भी एक बार पूरा जोर लगा कर स्वाभिमानिनी जनता ने अपनी स्वाधीनता को बनाये रखने की योजना बनाई। वे लोग सुलभ साधनों को लेकर बीहड़ जंगलों तथा दुर्गम पर्वतों में छिपकर गुरिल्ला-युद्ध करने लगे। अब स्वाधीनता की रक्षा का गुरुतम कार्य उन्होंने सेना और सेना-नायकों-मुट्ठीभर आदमियों पर न छोड़ स्वयं अपने ऊपर ले लिया।

भूखी-प्यासी फ्रांस की जनता इस मनोबल से लड़ी कि आखिर हिटलर को लेने के देने पड़ गये। उसे अनुभव हुआ कि ये लोग मन से हार मानने वाले नहीं हैं। इनकी आत्मा स्वतन्त्र है और इसका अन्तिम फल क्या हुआ ?

सीमित साधनों वाला फ्रांस स्वतन्त्र हुआ। अगणित लोगों के शहीद होने पर भी फ्रांस अन्ततः स्वतन्त्र हो गया। फ्रांस की हालत एक कब्रिस्तान जैसी थी। धन और जन की बड़ी हानि हुई थी। अगणित लाशों के ढेर लगे थे। गिद्ध और कौवे मँड़रा रहे थे।

पर फिर भी स्वतन्त्रता का प्रतीक उनका राष्ट्रध्वज एक बार फिर शान से फहराने लगा।

यह विजय किसने की थी ?

इस शानदार विजय का कारण वह मनोबल था । जनता के मनोबल ने उन्हें फिर आजाद किया, जिनके नेता जीतने की उम्मीद छोड़ बैठे थे।

एक घटना रूस की है। वहाँ के मन के धनी लोगों ने उन्नत मनोबल का एक रोमांचकारी उदाहरण उपस्थित किया, जो इतिहास के सुनहरे पृष्ठों पर आज भी चमक रहा है।

एक रात को दो बजे।

जब रूस शान्ति की प्रगाढ़ निद्रा में निमग्न था, हिटलर ने धोखे से रूस पर आक्रमण कर दिया। रूस को स्वप्न में भी इस हमले की आशा न थी। वह रक्षा के लिये तैयार न था। बिना तैयारी वह कर भी क्या सकता था ? उनकी हालत बड़ी अस्त-व्यस्त हो गई। जर्मनी की फौजें रूस में घुसकर मास्को तथा लेनिन ग्रेड तक पहुँच गईं।

यह वह युग था जब सारा यूरोप बर्बर विजेता हिटलर की नाटकीय विजयों से आतंकित था। किसी शक्ति को अनायास ही उससे टक्कर लेने की हिम्मत नहीं थी। विकराल गति से वह बढ़ता निरीह जनता को रौंदता चला आ रहा था। हिटलर की फौजें बढ़ते-बढ़ते असावधान और बिना तैयार रूस पर टूट पड़ीं। बाढ़ वाली उन्मत नदी की तरह नुकसान करती और डराती हुई प्रमुख राज-नगर में पहुँच गई। ऐसा प्रतीत होने लगा, जैसे रूस सदा-सर्वदा के लिए जर्मनी का गुलाम बन जायेगा।

संयोग की भयंकरता से यह स्वाभाविक था कि रूस की जनता में अधीरता से डरकर भगदड़ मच जाती, किन्तु उनका मनोबल ऊँचा था, उन्होंने हिम्मत न हारी। वह गली-गली, सड़क-सड़क, कूँचे-कूँचे, घर-द्वार, हाट-बाट दुश्मन से जूझ पड़ी उनके पास हथियार नहीं थे। गोली बारूद की कमी थी। पर मनोबल साथ होने के कारण लाठी, डण्डा, भाला, बल्लम, मुँह, हाथ, प्याले, मेज, कुर्सी आदि उनके शस्त्र बन गये। वे कफन ओढ़कर लड़े। मास्को तथा लेनिनग्राड की गलियाँ खून और लाशों से पट गईं। जहाँ जो मिला, जो हथियार मिले उन्हीं से लड़ा। युद्ध से पीछे नहीं हटा।

लगभग डेढ़ करोड़ रूसी जनता स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए लड़ते-लड़ते बलिदान हो गये। इनमें से छः लाख वे शहीद नागरिक थे, जिन्होंने अपना पूरा राशन सेना को दे दिया था और खुद भूख से तड़प-तड़प कर स्वतन्त्रता रूपी महल की नींव बन गये थे।

इसका फल क्या हुआ ?

रूस के लेनिनग्राड तथा मास्को की भूमि से हिटलर की खूनी फौजें वापिस न आईं। इतिहास बताता है कि वहीं से हिटलर की पराजय प्रारम्भ होकर जर्मनी की बरबादी तक पहुँची ।

यह विजय किसकी थी ?

रूसी फौजों की ? नहीं।

रूसी राजनैतिक नेताओ की ? नहीं, नहीं।

अस्त्र-शस्त्रो की ? नहीं, नहीं, नहीं ! सर्वथा नहीं!

यह विजय थी—रूस की मनोबली जनता की । रूस की पब्लिक के महान मानसिक बल की, जो उस आपत्ति में भी यथावत् बुलन्द और अडिग रहा। यही नहीं, बल्कि और अधिक बढ़ गया।

भारतीय जनता का मनोबल

विगत चीनी आक्रमण और पाकिस्तान के विश्वासघात से भारत पर यकायक दो ओर से विपत्ति आ गई थी। भारत को युद्ध की कोई ट्रेनिंग नहीं थी, युद्ध की अति आधुनिक सामग्री का भी बड़ा अभाव था। चीन और पाकिस्तान का गठबन्धन था और कुछ विदेशी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्तियाँ भी छुपकर इनकी सहायता कर रही थीं। इस संकटकालीन स्थिति में भारत की जनता का मनोबल सदा ऊँचा रहा। समस्त भेदभाव भूलकर सब राजनैतिक पार्टियों ने देश की रक्षा के लिए प्रयत्न किया। भारत के वीरों ने वीरता के ऐसे करिश्मे दिखाये कि शत्रु के दाँत खट्टे कर दिये और उसे पीछे हटना पड़ा। इस दृढ़ मनोबल से संसार में भारत का मान ऊँचा हो गया।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि जनता का मनोबल ऊँचा रहने से सीमित साधनों से युद्ध जीते जा सकते हैं। लेकिन एक-एक व्यक्ति भी अपने वैयक्तिक जीवन में अपने निजी मनोबल से अद्भुत साहस के कारनामे कर दिखाते हैं। मनोधनी व्यक्ति बड़ी से बड़ी आपत्तियों को जीत कर अपना मार्ग स्वयं बना लेते हैं।

एक पत्रकार का मनोबल

पेरिस के एक बलवे की एक घटना है—

दंगा बड़ी विकराल गति से फैला। फसाद करने वालों ने तोड़-फोड़ के कार्य किये, आग लगा दी। जिसे देखा, उसे मारा-पीटा और नुकसान किया। कानून की बुरी तरह अवहेलना की और ऐसा लगा, जैसे अब पूर्ववत् व्यवस्था न स्थिर रह सकेगी। सारे देश की दिलचस्पी पेरिस की ओर थी।

एक प्रसिद्ध समाचार पत्र का रिपोर्टर मेथ्यू डेंजलेट इस खतरनाक दंगे की रिपोर्ट लेने के लिए नियुक्त किया गया। वह बड़ा कर्त्तव्यनिष्ठ था और अनेक संकटकालीन स्थितियों में सफलतापूर्वक खबरें देकर प्रशंसित हो चुका था। उसमें उच्च कोटि का मनोबल था। अपनी दिशा में वह बड़े साहस से कार्य करता था। उसका मन इतना सबल और संतुलित था कि खतरे से विचलित न होता था। इस दंगे की रिपोर्टिंग के लिये उस जैसे मनोबल के आदमी को ही चुना गया। वह घटनास्थल पर पहुँच गया और खतरे से बचता हुआ खबरें रिपोर्ट करता रहा।

उधर स्थिति निरन्तर बिगड़ती चली गई । पुलिस ने बड़ी सरगर्मी से काम किया, किन्तु व्यर्थ। दंगा-फसाद करने वाली बड़ी-बड़ी भीड़ों पर गोलियों की वर्षा की गई, पर निष्फल ! सैकड़ों घायल हो गये, हजारों के चोटें आईं और बहुत-से मर गये।

इसी बीच उसने समाचार पत्र के प्रधान कार्यालय को अपने मित्र द्वारा यह संदेश भेज दिया कि मैं दुर्घटना स्थल पर हूँ। बड़े सनसनीखेज दंगे चल रहे हैं। मारपीट, बलात्कार, हत्या और लूट-खसोट गुंडों का पेशा बन गया है। पुलिस भरसक कोशिश कर रही है, किन्तु स्थिति काबू से बाहर हो रही है। कभी-कभी तो गोलियों में गुजरकर मुझे खबरें भेजनी पड़ती हैं और जान तक का खतरा रहता है। मौत सिर पर नाचती रहती है। बड़ा भयंकर दंगा है। बाद के समाचार शीघ्र ही भेजूँगा।

उधर घटनास्थल पर स्थिति निरन्तर बिगड़ती चली जा रही थी। पुलिस ने शान्ति स्थापित करने के लिए अपनी ओर से कुछ भी उठा न रखा। क्रुद्ध भीड़ ने पुलिस को भी पीटा और राजकीय शक्ति को जैसे पराजित कर दिया। अनेक पुलिस अधिकारी बुरी तरह घायल हुए। कुछ शहीद भी हुए। दंगा करने वालों के हौंसले और भी बुलन्द हो उठे। अतः शहर पर उनका राज्य-सा हो गया । कुछ देर पश्चात् पुलिस के हाथ से मामला निकल गया। शरारती तत्त्वों ने पूरी शैतानियत पैदा कर दी। विवश होकर अधिकारियों को फौज की सहायता लेनी पड़ी। फौज के आने पर भी कुछ देर तक दंगा-फसाद वैसे ही चलता रहा। भीड़ ने समझा कि वे फौज को भी आतंकित कर लेंगे।

मैथ्यू डेंजलेट एक साहसी पत्रकार था। वह अपने उन्नत मनोबल के कारण कर्त्तव्यपालन में डटा था। उसे दंगे की आँखों देखी स्थिति का विस्तृत व्यापक सूक्ष्म वर्णन करना था। क्या-क्या हानि होती है ? कौन-कौन कब गिरता, पड़ता या मरता है ? वस्तुओं और सामान का क्या-क्या नुकसान होता है ? कौन सख्त घायल होता है ? कौन आखिरी दम तोड़ता है ? यह सब स्वयं अपनी आँखों से देखकर लिखना ऊँचे मनोबल की अपेक्षा रखता है। मामूली अखबार नवीस क्या जमेगा ? मैथ्यू डेंजलेट अपने दृढ़ मन के कारण लगातार न्यूज रिपोर्टिंग करता रहा। उसका मनोबल इस खतरे में एक अदृश्य कवच के समान सदा उसके साथ था।

जब डराने-डाँटने और मामूली सजाओं से स्थिति न सम्हली तो मजबूर हो फौज ने गोली चला दी। दंगाइयों को क़ाबू में करने का यही एक मात्र उपाय था।

धाँयँ ! धाँयँ !! धाँयँ !!!

पहले गोलियों के हलके फायर आकाश की तरफ किये गये।

धाँएँ ! धाँएँ ! धाँएँ !!!

फिर भीड़ के पाँवों में गोलियाँ चलीं। अब तो लोग घायल होकर गिरने लगे। भीड़ में खलबली मच गई। लोग जान बचाने के लिए भागने लगे। कई भागते-भागते गिरे और सदा के लिए सो गये। मैथ्यू भी घायल होकर गिर पड़ा। उसको गिरते देखकर फौजी डाक्टर उसके पास आया और कहा—

"अरे, तुम बहुत घायल हो, चलो तुम्हें अस्पताल तक पहुँचा आऊँ। तुम्हारी मरहम पट्टी की जायेगी। इस खतरनाक स्थिति से अलग करना बेहद् जरूरी है। तुम्हें घातक गोलियाँ लगी हैं।"

घायल मैथ्यू फिर भी लिखता रहा। उसका मन अभी तक मजबूती से कर्त्तव्य निष्ठ था। वह मन में घायल नहीं हुआ था।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"तुम्हें हम अस्पताल ले जा रहे हैं, लिखना फौरन बन्द करो।"

मैथ्यू ने इसके उत्तर में उसके हाथ में अपना कलम थमाते हुए कहा—"अस्पताल पीछे भेजना। पहले अखबार के लिए कृपा कर मेरी रिपोर्ट पूरी कर दो। मैंने जो कुछ लिखा है उसी के नीचे यह और लिख दो—"सायंकाल तीन बजकर बीस मिनट-फौज की गोलियों से तीन घायल और एक मरा।" डाक्टर ने कलम उठाकर लिखना शुरू किया। "मरा कौन ?" डाक्टर ने आश्चर्य से पूछा। मैथ्यू कुछ देर बोल न पाया। उसके घावों से रक्त बह रहा था। उसके शरीर में कमजोरी आती जा रही थी। वह काँप-सा रहा था और नेत्र मुँदे जा रहे थे।

"मैं !" मैथ्यू ने उत्तर दिया।

और फिर तुरन्त सदैव के लिए आँखें बन्द कर लीं।

डाक्टर पत्रकार के मनोबल पर चकित था।

मैथ्यू शरीर से चकनाचूर भले ही हो गया था किन्तु मन से वह आखिरी दम तक अपराजित था। अन्त समय तक वह कर्त्तव्य पर सिर्फ अपने दृढ़ मनोबल के कारण ही डटा रहा था। उस सनसनी खेज दंगे की खूनी स्थिति में भी वह अपने स्थिर और सन्तुलित मन के कारण ही सन्तुलित बना रहा।

मनोबल की परीक्षा ऐसे ही खतरों के समय होती है। संकट और विपत्ति में यही हमें शान्त, कर्त्तव्यनिष्ठ और सन्तुलित रखता है। क्रन्दन और कोलाहल में मनोबल ही शान्त और स्थिर रखता है। पुण्य की ओर बढ़ाता है और पाप से कवच की भाँति रक्षा करता है।

श्री चक्रवर्ती का अद्भुत मनोबल

चक्रवर्ती अंकगणित के निर्माता का नाम अंकगणित के क्षेत्र में विख्यात है। उन्हें अपने विषय के प्रति अगाध प्रेम था। बड़े मनोयोगपूर्वक नई-नई समस्याओं का समाधान करते थे, नवीन खोजों में लगे रहते थे। एक बार की बात है कि उन्हें किसी फोड़े का चीरा लगवाने के लिए अस्पताल जाना पड़ा।

डाक्टर क्लोरोफार्म देकर उन्हें बेहोश करने लगा। वे बोले, "नहीं, नहीं, मुझे बेहोश करने की कोई आवश्यकता नहीं है।"

"चीर-फाड़ में समय लग जाता है। भयंकर पीड़ा होती है। मरीज को इस परेशानी से बचाने के लिए उसे बेहोश करने का नियम है।" डाक्टर ने स्पष्टीकरण करते हुए कहा।

बस, तकलीफ की ही बात है, न ? मैं चाहे किसी भी तरह अपने मन को मजबूत बना लूँ या पीड़ा के भाव से हटाकर किसी दूसरी ओर लगा लूँ।"

"तब, तो हमारा काम बन जायगा।"

"ठीक है, तो लीजिये मैं अपने आप को अंकगणित के किसी पेचीदा प्रश्न में इतना एकाग्र कर लेता हूँ कि मेरा सारा शरीर ही निष्क्रिय जैसा हो जायेगा। उसमें तनिक भी पीड़ा का अनुभव न होगा। फिर आप जैसे चाहें, चीर-फाड़ कीजिये।"

"बस, हमें तो ऐसी शारीरिक स्थिति चाहिए, जिसमें आप तनिक भी न हिलें, न डुलें, न चीखें चिल्लायें।"

श्री चक्रवर्ती ने अपने घर से अपनी अंकगणित मँगाई और सिद्ध योगियों की भाँति एक पेचीदा प्रश्न हल करने में दत्तचित्त हो गये।

उनका मन पूरी एकाग्रता से सवाल हल करने में लगा हुआ था। उधर डॉक्टर चीर-फाड़ का काम निर्विघ्न कर रहा था।

श्री चक्रवर्ती को अपने उन्नत मनोबल के कारण शरीर में होने वाली चीर-फाड़ का तनिक भी अनुभव न हुआ।

मन की शक्ति इतनी अधिक है कि समूचा शरीर उसके वश में रहता है। यदि मनोबल बढ़ जाय तो मन जैसे चाहे, शरीर को वैसे ही मोड़ सकता है।

एक अजीब अनुभव

पाकिस्तान से लुटे हुए दो व्यक्ति कोई पचास वर्ष पहले कोटा, राजस्थान आये। वे फटे हाल थे। हाथ में पैसा न था, तो कोई किराये पर मकान कैसे दे ?

एक कहता, "मेरा सर्वस्व लुट गया। मेरी आलीशान इमारतें थीं, बड़ा कारोबार था, अनेक नौकर-चाकर थे, शहर में बड़ी प्रतिष्ठा थी। अब सब कुछ लुट गया। मेरा बुढ़ापा कैसे बीतेगा? मेरे बच्चों का क्या होगा ? कोई मेरी सहायता करो।"

दूसरा कहता—"मेरे मित्र, मेरे भी यह सब कुछ था। अच्छा खाता-पीता आदमी था, पर मुझ में वह मनोबल है जिसकी बजह से मैं फिर हिन्दुस्तान में भी वही इज्जत पैदा करूँगा, जो सिन्ध (पाकिस्तान) में थी।"

दूसरे व्यक्ति को एक सहृदय ने मुफ्त ही अपने यहाँ एक कमरा दे दिया। उसने अखबार बेचने का व्यवसाय किया। वह सारे दिन फेरी लगाता, कमीशन पर अखबार बेचता, उसकी तन्मयता देख उसके मालिक ने कमीशन बढ़ा दिया। फिर उसने अलग से दो चार नये अखबारों की ऐजेन्सी ले ली। पुस्तक बेचने का पेशा भी चालू कर लिया, किराये पर उपन्यास भी पढ़ने को देने लगा, जमीन-जायदाद बेचने की दलाली भी शुरू कर दी। पन्द्रह साल में आज वह शहर का एक लब्ध प्रतिष्ठित मालदार नागरिक गिना जाता है।

पहला निराशावादी व्यक्ति हृदय की गति रुकने के कारण स्वर्गवासी हो चुका है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मजबूत मनोबल के कारण हम बड़ी-बड़ी हानि, मुसीबतें, व्यापार में हानि, सम्बन्धियों की दुःखद मृत्यु, नौकरी छूटना आदि बिना हानि के सहन कर लेते हैं। जिनके पास मनोबल का अभाव है, वे दिल के धक्कों से, मानसिक आघात न सह सकने के कारण अकाल मृत्यु को प्राप्त होते हैं।

पहले छोटे कार्य, मामूली व्यापार, साधारण नौकरी से महान कार्य प्रारम्भ करें। इनमें सफलता पाने से उत्तरोत्तर मनोबल बढ़ता रहता है। फिर उनसे बड़े कार्य हाथ में लेने चाहिए। सफल व्यक्तियों ने किसी विशेष दिशा में जो अद्‌भुत सफलता प्राप्त की होती है, उसका कारण उनकी रुचि, इच्छा, लगन एवं श्रमशीलता का सतेज होकर अभीष्ट मार्ग में संलग्न होना ही रहा है।

जो शक्ति किसी व्यक्ति को सफलता की चरम स्थिति में पहुँचाती है, उत्तरोत्तर उसकी हिम्मत बढ़ती है, उसका नाम मनुष्य के मन का बल ही है।

मन मजबूती, स्थिरता, सन्तुलन और अपनी शक्तियों के प्रति पूर्ण विश्वास अर्थात् लक्ष्य प्राप्त करने के लिये निरन्तर बढ़ते चलने की दृढ़ता का यदि समुचित रीति से विकास किया जाये, तो अन्त में अवश्य सफलता प्राप्त हो जायेगी।

जीवन एक संग्राम है, जिसमें विजय केवल उन्हें मिलती है, जो दृढ़ और उन्नत मनोबल का कवच धारण किये रहते हैं और जो अपने निहित पराक्रम और पौरुष की उत्कृष्टता सिद्ध करते हैं। शारीरिक स्वास्थ्य ठीक हो, पर मनोबल न हो, तो आदमी मानसिक आघात से, अकाल मृत्यु को प्राप्त होता है।

अविकसित मनोबल के कारण हमारी योजनाएँ सफल नहीं होतीं। हमारा मन हारा रहता है, तो शरीर भी हारता है और व्यक्ति भी पराजित होता है। जिन्दगी में मुसीबतों को परास्त करने का आधार है। व्यक्ति का मनोबल! मनुष्य में महत्त्वाकांक्षाएँ उठें और वह उन्हें पूर्ण करने का प्रयत्न करे। पौरुष और साहस से काम ले। न हिम्मत छूटे, न धैर्य टूटे ! इससे जीवन में आशा और उत्साह का संचार होता है। निराशा राक्षसी दूर भागती है। लक्ष्य में सफलता मिल जाती है, तो नये काम हाथ में लेने और उन्हें पूर्ण करने की शुभ प्रवृत्ति जागती है।

प्रत्येक सफलता मनुष्य का मनोबल (मन की ताकत) बढ़ाती है पर क्रिया क्षेत्र में यह बात सदैव सम्भव नहीं है। संघर्ष करते हुए सफलता के साथ असफलता भी हो सकती है। आशा के साथ निराशा की भी उत्पत्ति हो सकती है। मनोबल की परीक्षा का यही समय होता है। आशायुक्त जीवन से निरन्तरता आती है, तो निराशा से निकम्मापन भी आ सकता है। यहाँ परिस्थिति न सम्हालें, तो मनुष्य के सारे प्रयास व्यर्थ हो सकते हैं।

इसलिए यह बहुत जरूरी बात है कि सफलता की आशा रखें, पर साथ ही असफलता के समय धैर्य भी जाग्रत रखें। किसी भी अवस्था में मनोबल क्षीण न हो, तो रुका कदम रुका नहीं रहता, निराशा आशा में बदलती और हारी बाजी फिर से जीत में बदल जाती है।

पहले छोटी इच्छाएँ कीजिये और उन्हें संकल्प का रूप दीजिये। एक संकल्प पूरा होगा, तो आपका मनोबल बढ़ेगा, उत्साह और उल्लास आयेगा। क्रमशः अपने संकल्प का स्तर बड़ा बनाइये और इस तरह अपने मनोबल को और भी ऊँचा उठाते हुए चले जाइये, पर याद रहे कि सत्संकल्प टूटना नहीं चाहिए, अन्यथा मन में निराशा उत्पन्न होगी और मानसिक क्रियाशक्ति को छिन्न-भिन्न कर देगी। आप छोटा होने का विचार अपने मन से निकालकर दूर फेंक दीजिये, आपके मन में अपार सामर्थ्य है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पराक्रम और पुरुषार्थ जीवन के अविच्छिन्न अंग बनें

प्रतिकूलताएँ वस्तुतः विकास में सहायक

अनुकूलताएँ आगे बढ़ने के लिए किन्हीं-किन्हीं को ही जन्मजात प्राप्त होती हैं। अधिकांश तो प्रतिकूलताओं में ही आगे बढ़े और सफलता के उस शिखर पर जा चढ़ें जो सामान्य व्यक्ति के लिए असम्भव प्रतीत होती हैं। ऐसे शूरवीरों-जीवट सम्पन्न साहसियों के समक्ष अन्ततः परिस्थितियाँ भी नत-मस्तक होती हैं।

बहुत समय पूर्व ग्रीस में गुलाम प्रथा का आतंक चरम सीमा पर था। गुलामों की खरीद-बिक्री का कार्य पशुओं की भाँति चलता था। उनके साथ व्यवहार भी जानवरों की भाँति होता था। गुलामों के विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य की बातों पर ध्यान देने की तो बात ही दूर थी, यदि कोई गुलाम पढ़ने-लिखने की बात सोचता था तो इसे अपराध माना जाता था। ऐसी ही विषम, प्रतिकूल एवं आतंक भरी परिस्थितियों में एक गुलाम के घर जन्मे एक किशोर के मन में ललित कला सीखने की उत्कट इच्छा जाग्रत हुई। ग्रीस में यह कानून बन चुका था कि कोई भी गुलाम स्वाधीन व्यक्ति की भाँति ललित कलाओं का अध्ययन नहीं कर सकता था। जबकि स्वाधीनों को हर प्रकार की सुविधा थी और उन पर किसी प्रकार की रोक-टोक न थी।'क्रियो' का किशोर हृदय इस स्थिति को देखकर रोता रहता था। डर था कि उसकी कलाकृति पकड़ी गई तो कठोर दण्ड मिलेगा। सहयोगी के नाम पर एकमात्र उसकी बहिन उसे निरन्तर प्रोत्साहित किया करती थी और कहती थी—''भैया ! डरने की आवश्यकता नहीं तुम्हारी कला में शक्ति होगी तो स्थिति अवश्य बदलेगी, तुम अपनी आराधना में लगे भर रहो।' बहिन की प्रेरणा उसमें समय-समय पर शक्ति संचार करती थी। कला देवता की आराधना के लिए बहिन ने अपने टूटे-फूटे मकान के नीचे तहखाने में भाई के लिए सारी आवश्यक वस्तुएँ जुटा दीं। भोजन-शयन की व्यवस्था भी उसके लिए तहखाने में ही थी। क्रियो ने अपनी समूची कलाकृति संगमरमर की एक मूर्ति बनाने में झोंक दी।

उन्हीं दिनों ग्रीस के एथेन्स नगर में विशाल कला प्रदर्शनी आयोजित हुई। पेरी क्लीज नामक विद्वान प्रदर्शनी के अध्यक्ष नियुक्त किये गये। एस्सेसिया, फीडीयस, दार्शनिक सुकरात, साफोक्लीज जैसे विद्वान भी कला की प्रदर्शनी में आमन्त्रित थे। ग्रीस के सभी प्रख्यात कलाकारों की कलाकृतियाँ वहाँ आयी थीं। एक-एक करके सभी कलाकृतियों के ऊपर से चादर हटा दी गई। सभी पर्यवेक्षकों की निगाहें अन्ततः उस संगमरमर की मूर्ति पर जाकर ठहर गईं। दर्शकों को ऐसा लगा जैसे मानो ललित कलाओं के देवता अपोलो ने अपने हाथों मूर्ति को गढ़ा हो। इसको बनाने वाला कौन है ? सभी का एक ही प्रश्न था। कोई उत्तर न मिला। लोग मूर्तिकार को देखने के लिए आतुर हो रहे थे। इतने में स्थानीय आयोजक एक लड़की को पकड़कर लाये, जिसके कपड़े जरा-जीर्ण हो रहे थे और बाल बिखरे थे। रक्षकों ने बताया कि यह लड़की कलाकार का नाम जानती है किन्तु बताती नहीं। स्थानीय कानून के अनुसार गुलाम व्यक्ति कला में कोई रुचि नहीं ले सकता। लड़की की चुप्पी पर उसे जेलखाने में डाल देने का आदेश हुआ। इतने में एक किशोर सामने आया और 'क्रियो' नाम से अपना परिचय दिया और दृढ़ता के साथ बोला मैंने 'कला को भगवान मानकर पूजा की है, आपका कानून यदि अपराध मानता है तो हम अपराधी हैं।'

किशोर की दृढ़ता, अल्पायु में कला के प्रति अपार लगन और कलाकृति के अनुपम सौन्दर्य ने अध्यक्ष पेरी क्लीज को मुग्ध कर दिया। कानून की कठोरता हृदय को द्रवीभूत होने से रोक न सकी और पेरी क्लीज ने घोषणा की 'क्रियो' दण्ड का नहीं, सम्मान और पुरस्कार का पात्र है। हमें यह कानून बदलना होगा, जिससे कला देवता का अपमान होता हो। उस दिन से पेरी क्लीज के प्रयत्नों से कानून बदला गया। गरीबी और विपन्न परिस्थितियों में भी किशोर कलाकार की कला के प्रति अपार लगन, ध्येय के प्रति दृढ़ निष्ठा ने न केवल उसे विश्व के मूर्धन्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कलाकारों की श्रेणी में पहुँचा दिया वरन् उस कानून में भी परिवर्तन करने के लिए बाध्य किया जो अमानवीय था।

प्रसिद्ध विद्वान विलियम कॉवेट अपनी आत्म कथा में लिखता है कि 'प्रतिकूलताएँ मनुष्य के विकास में सबसे बड़ी सहचरी हैं। आज मैं जो कुछ भी बन पाया हूँ विपन्न परिस्थितियों के कारण ही सम्भव हो सका है। जीवन की अनुकूलताएँ सहज ही उपलब्ध होतीं तो मेरा विकास न हो पाता। कॉवेट के आरम्भिक दिन कितनी कठिनाइयों एवं गरीबी में बीते, यह उसके जीवन चरित्र को पढ़ने पर पता चलता है। वह लिखता है कि "आठ वर्ष की अवस्था में मैं हल चलाया करता था। ज्ञान अर्जन के प्रति अपार रुचि थी। घर से लन्दन भाग आया तथा सेना में भर्ती हो गया। रहने के लिए एक छोटा कमरा मिला, जिसमें चार अन्य सैनिक भी रहते थे। जो पैसा मिलता था, उससे किसी प्रकार दो समय की रोटी जुट जाती थी। मोमबत्ती और तेल खरीदने के लिए पैसा नहीं बचता था। अध्ययन में गहरी रुचि थी। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए मैंने आधा पेट भोजन करना आरम्भ किया, जो पैसा बचता था, उससे स्याही, मोमबत्ती, कागज खरीदकर लाता था। स्थानीय लाइब्रेरी से पुस्तकें अध्ययन के लिए मिल जाती थीं। कमरे में अन्य सिपाहियों के हँसने-बोलने से मुझे निरन्तर बाधा बनी रहती थी किन्तु इसके बाबजूद भी मैंने अध्यवसाय का क्रम सतत् जारी रखा। समय को कभी व्यर्थ नहीं गँवाया। आज उसी का प्रतिफल है कि मैं वर्तमान स्थिति तक पहुँच सका हूँ। जीवन के संघर्षों से मैं कभी घबड़ाया नहीं वरन् उनको विकास का साधन माना।

प्रख्यात विचारक 'टाल्पेज' कहा करता था, 'युवको ! क्या तुम्हें कठिनाइयों को, संघर्षों को देखकर डर लगता है ? क्या गरीबी तुम्हारे विकास मार्ग में बाधक है ? तुम्हारा यह सोचना गलत है। सफलताओं के शिखर पर जा चढ़ने वाले विद्वानों, समृद्धों, महापुरुषों के जीवन चरित्र का अध्ययन करो। तुम पाओगे कि उनमें से अधिकांश तुमसे भी गई-गुजरी स्थिति में थे किन्तु उन्होने आत्मविश्वास नहीं खोया। अपने श्रम-पुरुषार्थ एवं समय के सदुपयोग द्वारा वे असामान्य स्थिति में जा पहुँचे। देखो सुनहरा दिन तुम्हारे अभिनन्दन के लिए सफलताओं का हार लिए खड़ा है। जड़ता छोड़ो चैतन्यता अपनाओ। तुम्हारा निराशावादी चिन्तन ही विकास में अवरोध उत्पन्न कर रहा और आगे बढ़ने से रोक रहा है। तुम गरीब नहीं समृद्ध हो। परमात्मा ने तुम्हें अद्भुत शरीर, विलक्षण मस्तिष्क एवं समय की अपार पूँजी दी है, उसकी तुलना किसी भौतिक वस्तु से नहीं की जा सकती है। इसका सदुपयोग करो सफलताएँ तुम्हारे चरणों में झुकेंगी।

वियतनाम के राष्ट्रपिता 'होचीमिन्ह' को बचपन में ही अपने माता-पिता से अलग होना पड़ा। बचपन से लेकर युवावस्था तक वे संघर्ष करते रहे। फ्रान्सीसी शासन का विरोध करने के अपराध में उन्हें गिरफ्तार कर जेल भेज दिया गया। जेल से निकलते ही वियतनाम की स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करने लगे। इसके लिए उन्हें जेल में कितनी ही बार कठोर यातनाएँ सहनी पड़ीं पर अन्ततः अपने ध्येय में सफल हुए। देशभक्ति के अनुपम त्याग के कारण उन्हें महात्मा गाँधी की भाँति राष्ट्रपिता का सम्मान मिला। शेक्सपियर की तुलना संस्कृत के महाकवि कालिदास से की जाती है। वह एक कसाई का बेटा था। परिवार की गाड़ी चलाने के लिए आरम्भ में उसे भी यही धन्धा करना पड़ा पर अपने पुरुषार्थ के कारण वह अँग्रेजी का सर्वश्रेष्ठ कवि तथा नाटककार बना।

प्रसिद्ध कवि मार्कट्वेन जिस घर में रहता था वह वस्तुतः गायों एवं घोड़ों के लिए बनायी गयी कोठरी थी, माता-पिता सहित वह उसी में रहता था। अर्थाभाव के कारण उनके पिता ऊँची शिक्षा दिलाने की व्यवस्था न जुटा सके। स्कूली पढ़ाई छूट जाने पर भी ट्वेन ने अध्ययन बन्द नहीं किया। साहित्यिक अभिरुचि से उसकी प्रतिभा निखरती गई और वह विश्वविख्यात साहित्यकार बना। उसकी रचनाओं के लिए अनेकों विश्वविद्यालयों ने उसे डाक्टर की उपाधि से विभूषित किया। दार्शनिक कन्फ्यूशियस जब तीन वर्ष का था, तभी पितृ-स्नेह से उसे वंचित हो जाना पड़ा। अल्पायु में ही उसे जीविकोपार्जन जैसे कठोर कामों में लगना पड़ा। गरीबी और तंगी की स्थिति में बड़े परिवार का भार ढोते हुए भी उसने अपनी ज्ञान-साधना जारी रखी। दर्शनशास्त्र के प्रकाण्ड विद्वानों में आज भी कन्फ्यूशियस का नाम विश्व भर में श्रद्धापूर्वक लिया जाता है।

भूमध्य सागर में इटली के निकट एक छोटे-से द्वीप में जन्म लेने वाला नेपोलियन १६ वर्ष की आयु में ही अनाथ हो गया। छोटे कद, लम्बे चेहरे, बेडौल शरीर की आकृति वाले इस बच्चे को कभी भी साथियों से प्यार-प्रोत्साहन नहीं मिला। सदा उपहास और तिरस्कार ही सहना पड़ा। बुद्धि की दृष्टि से भी यह सामान्य बच्चों की तुलना में मन्द था। पर लगन और आत्मविश्वास की पूँजी उसके पास प्रचुर मात्रा में थी, जिसको लेकर वह एकाकी ही बढ़ता चला गया। एक अनाथ, असहाय लड़का विश्वविजयी बना, यह उसके संकल्प, पुरुषार्थ और आत्मविश्वास का ही प्रतिफल था।

मार्जास्कलो दोवास्का नामक बालिका को अपने गुजारे के लिए एक कुलीन परिवार में नौकरी करनी पड़ी। बच्चों की देखभाल, घर की सफाई जैसे काम करने पड़े। उसी परिवार के एक युवक ने 'मार्जा' से विवाह करने की इच्छा अपने माता-पिता से व्यक्त की। फलस्वरूप उसके माता-पिता ने 'मार्जा' को नौकरी से निकाल दिया। इस अपमान से उसकी दिशाधारा बदल गई। बालिका ने निर्वाह के लिए छोटे-छोटे काम करते रहने के साथ-साथ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अध्ययन आरम्भ किया। आगे चलकर उसने पीयो क्यूरी नामक एक युवक से विवाह कर लिया। दोनों ने मिलकर रेडियम नामक तत्त्व खोजकर विज्ञान जगत को एक अनुपम भेंट प्रस्तुत की। इस बालिका को आज भी दुनिया मैडम क्यूरी के नाम से जानती है।

यों तो हिटलर को एक खूँखार अहं केन्द्रित तानाशाह के रूप में ख्याति मिली है। फिर भी उस ख्याति और जीवन में प्राप्त सफलताओं के लिए उसे कठोर संघर्ष करना पड़ा तथा भारी मूल्य चुकाना पड़ा। बचपन में ही माता-पिता दिवंगत हो गये। मजदूरी करके उसे अपना निर्वाह करना पड़ा। पर सामान्य से असामान्य बनने की महत्त्वाकांक्षा और तदुपरान्त प्रयास एवं पुरुषार्थ के कारण वह सफल होता चला गया। रूस के लौह पुरुष स्टालिन का जन्म जार्जिया प्रान्त में एक गरीब परिवार में हुआ। माता-पिता गुलाम थे, इन दिनों गुलाम का पढ़ना-लिखना भी अपराध घोषित था। ऐसी विषम परिस्थितियों में भी यह बालक अध्ययन में जुटा रहा। अपनी देशभक्ति सिद्धान्तवादिता एवं ध्येय निष्ठा के बल पर वह रूस का भाग्य विधाता बना।

अपनी शारीरिक कुरूपता के कारण सैमुअल जॉनसन को किसी भी विद्यालय में नौकरी नहीं मिल सकी। बचपन से साथ चली आ रही घोर विपन्नता ने पल्ला नहीं छोड़ा। नौकरी की आशा छोड़कर वह अध्ययन में लगे रहे। मेहनत-मजदूरी करके वे अपना गुजारा करते रहे। कुछ ही समय बाद उनकी साधना ने चमत्कार दिखाया और एक विद्वान साहित्यकार के रूप में इंग्लैण्ड में ख्याति मिली। जॉनसन का अँग्रेजी विश्व कोष आज भी एक अनुपम कृति माना जाता है। ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय ने उनकी सेवाओं के लिए उन्हें 'डाक्टर' की उपाधि प्रदान की। 'टाम काका की कुटिया' की प्रसिद्ध लेखिका हैरियट स्टो को परिवार का खर्च चलाने के लिए कठिन श्रम करना पड़ता था। गरीबी और कठिनाइयों के बीच घिरे रहकर भी उन्होंने थोड़ा-थोड़ा समय निकालकर पुस्तक पूरी की। अन्तः प्रेरणा से अभिप्रेरित होकर लिखी गई उनकी यह पुस्तक अमेरिका में गुलामी प्रथा के अन्त के लिए एक वरदान साबित हुई।

ये उदाहरण इस तथ्य के प्रमाण हैं कि सफलता के लिए परिस्थितियों का उतना महत्त्व नहीं है, जितना कि स्वयं की मनःस्थिति का। आशावादी दृष्टिकोण, संकल्पों के प्रति दृढ़ता और आत्मविश्वास बना रहे, तदनुरूप प्रयास-पुरुषार्थ चल पड़े तो अभीष्ट लक्ष्य की प्राप्ति कर सकना हर किसी के लिए सम्भव है।

कठिनाइयों से डरिये मत, जूझिये

जेम्स ऐलेन ने अपनी पुस्तक 'फ्राम प्रापर्टी टू प्रास्पर्टी' की शुरूआत इन पंक्तियों से की है, 'वेदना, दुःख और अपवाद जीवन की परछाइयाँ हैं।' संसार में एक भी हृदय ऐसा नहीं मिलेगा, जिसे दुःख ने स्पर्श न किया हो। एक भी मन ऐसा नहीं होगा जिस पर कोई घाव न लगा हो, एक भी आँख ऐसी नहीं होगी, जिससे कभी न कभी खून के आँसू न टपके हों। संसार में एक भी परिवार ऐसा नहीं है, जिसमें मृत्यु ने प्रवेश न किया हो और जो रोग व मृत्यु से त्रस्त न रहा हो, जिसने सगे-सम्बन्धियों का बिछोह न देखा हो। बिल्ली जिस प्रकार चूहे को दबोचती है, दुःख का मजबूत पंजा मनुष्य को उसी प्रकार अचानक आ दबोचता है तो क्या दुःख और विषाद से बचने का कोई मार्ग नहीं ? क्या विपदा की जंजीरों को तोड़ फेंकने का कोई उपाय नहीं ? क्या स्थाई समृद्धि, शक्ति और आनन्द के स्वप्न देखना मूढ़तापूर्ण है ? नहीं मुझे यह कहते हुए हर्ष होता है कि विपदा को समाप्त कर देना सम्भव है। ऐसा एक उपाय, ऐसी एक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा रोग, दरिद्रता अथवा विपरीत परिस्थितियों को हमेशा के लिए समाप्त करके स्थाई समृद्धि लाई जा सकती है और मनुष्य विपदा और दरिद्रता के दोबारा लौट आने के भय से मुक्ति प्राप्त करके स्थाई आनन्द और शान्तिमय जीवन जी सकता है। ऐसे सुख और समृद्धि का मार्ग प्रशस्त करने का एकमात्र उपाय यह है कि मनुष्य दुःख के वास्तविक स्वरूप को भलीभाँति समझ लें।

क्या है दुःख का वास्तविक स्वरूप ? दुःख और कुछ नहीं सुख के अभाव का ही नाम है। प्रकाश के अभाव का नाम अन्धकार है। प्रिय परिस्थितियाँ नहीं होतीं तो अप्रिय की अनुभूति होती है। अनुकूलता के अभाव में प्रतिकूलता भासती है। इन दोनों स्थितियों में सामंजस्य स्थापित किया जा सके तो प्रत्येक परिस्थिति में प्रसन्न और प्रफुल्ल रहा जा सकता है। प्रश्न उठता है कि यह सामंजस्य किस प्रकार स्थापित किया जाय ? उत्तर एक ही है, तथ्यों के प्रति सन्तुलित और समझपूर्ण दृष्टिकोण अपनाया जाय। यह मान्यता बनाकर चला जाये कि दिन और रात की तरह मनुष्य के जीवन में प्रिय और अप्रिय घटनाक्रम आते-जाते रहते हैं। इन उभयपक्षी अनुभूतियों से ही जीवन की सार्थकता और शोभा है। यदि एक ही प्रकार की परिस्थितियाँ सदा बनी रहें तो यहाँ सभी कुछ रूखा और नीरस लगने लगेगा। सदा दिन ही रहे, रात कभी भी न हो, सदा मिठाई ही खाने को मिले, नमकीन के दर्शन ही न हों, सबकी उम्र एक सी ही रहे, न कोई छोटा हो और न बड़ा हो, सर्दी या गर्मी की एक ऋतु रहे, दूसरी बदले ही नहीं तो फिर इस संसार की क्या सुन्दरता रह जायेगी ? सारी शोभा-सुषमा ही नष्ट हो जायेगी। सदा प्रिय, अनुकूल और सुखद परिस्थितियाँ ही बनी रहें, कभी अप्रिय और प्रतिकूल स्थिति न आये तो कुशलता, कर्मठता और सहकारिता की जरूरत ही न पड़ेगी। लोग आलसी, निकम्मा और नीरस जीवन जीते हुए किसी प्रकार मृत्यु की प्रतीक्षा करते रहेंगे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुकूल और प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण सुविधाएँ उत्पन्न होना स्वाभाविक है। प्रश्न यह नहीं कि उसकी क्या प्रतिक्रिया होती है ? महत्त्वपूर्ण तो यह है कि प्रतिकूलताओं और अनुकूलताओं के चढ़ाव-उतार से मनुष्य में कई ऐसे सद्गुण उत्पन्न होते हैं जो उसके व्यक्तित्व की गरिमा को बढ़ाते हैं। प्रतिकूलताओं में पुरुषार्थ, साहस, धैर्य, सन्तुलन, दूरदर्शिता जैसे सद्गुणों का विकास होता है। बल्कि कहा जाना चाहिए कि इन्हीं परिस्थितियों में ये सद्गुण उत्पन्न होते हैं। आवश्यकता केवल इस बात की है कि इन प्रतिकूलताओं में अपना सन्तुलन न खोया जाये। यदि सन्तुलन बना रहे तो जीवन के ऐसे विविध और उपयोगी अनुभव होते हैं, जो व्यक्तित्व की शोभा-सुषमा में चार-चाँद लगाते हैं। वे अनुभव व्यक्तित्व को गुण सम्पन्न-समृद्ध बनाते हैं।

प्रतिकूलताओं के सम्बन्ध में विधेयात्मक दृष्टि अपनाने की आवश्यकता और उपयोगिता बताते हुए किसी विचारक ने लिखा है, "अगर कोई व्यक्ति अपने आपको अन्धेरे कमरे में बन्द करके यह सोचे कि प्रकाश का कोई अस्तित्व ही नहीं है तो यह उसकी भूल है। अन्धकार तो सिर्फ उसके छोटे कमरे में बन्द है, बाहर उजाला ही उजाला है। बेहतर यह है कि आपने अपने इर्द-गिर्द भ्रम-भ्रांतियों की जो दीवारें खड़ी कर ली है, उन्हें गिराकर अन्धेरे बन्द कमरे से बाहर निकलें और सर्वव्यापी प्रकाश से साक्षात्कार करें।"

प्रतिकूलताओं के इस अन्धकार से निकलने के बाद जीवन का जो अनुभव होता है, उसके प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए किसी शायर ने लिखा है—

"गर्दिशे अय्याम तेरा शुक्रिया,
हमने हर पहलू से दुनिया देख ली।"

जीवन में एकरसता न आये, अनेक अनुभव प्राप्त हों इसके लिए परिस्थितियों का अदलना-बदलना आवश्यक है। यदि सदा अनुकूलता ही बनी रहे तो फिर ढर्रे का जीवन जीने वाले लोग गुणों की दृष्टि से पिछड़े ही पड़े रहेंगे और उन्हें विकास की, परिश्रम-पुरुषार्थ की आवश्यकता ही अनुभव नहीं होगी। इस प्रकार के अगणित तथ्यों को ध्यान में रखते हुए सृष्टा ने इस दुनिया में अनुकूलता और प्रतिकूलता उत्पन्न की है। अनुकूल स्थिति से लाभ उठाकर हम अपने सुविधा साधनों को बढ़ायें और प्रतिकूलताओं के पत्थर से घिसकर अपनी प्रतिभा पैनी करें, यही उचित है और उपयुक्त भी।

कई व्यक्ति प्रतिकूल परिस्थितियों में अपना सन्तुलन खो बैठते हैं और वे बेहिसाब दुःखी रहने लगते हैं। एक बार प्रयत्न करने पर भी कष्ट दूर नहीं हुआ या सफलता नहीं मिली तो वे निराश होकर बैठ जाते हैं। कई व्यक्ति इससे भी आगे बढ़े-चढ़े होते हैं और बैठे-ठाले भविष्य में विपत्ति आने की शंका करते रहते हैं। यह नहीं होता कि प्रस्तुत असुविधा या प्रतिकूलताओं के समाधान का पुरुषार्थ करें या उपाय सोचें। उल्टे इसके विपरीत वे चिन्ता, भय, निराशा, आशंका और उद्विग्नता जैसी उलझनें खड़ी करके अपने को उसमें फँसा लेते हैं और खुद ही एक नई विपत्ति गढ़कर खड़ी कर लेते हैं। इस वैभव के अवसाद, प्रभावों और हानियों को समय रहते समझ लेना चाहिए ताकि इस दलदल में फँसने की विपत्ति से बचा जा सके।

देखा गया है कि जिन आशंकाओं से त्रस्त होकर चिन्तित रहा जाता है उनमें से अधिकांश निराधार ही हैं। इस सन्दर्भ में जर्मन वैज्ञानिकों द्वारा किया गया एक सर्वेक्षण बहुत महत्त्वपूर्ण है। वहाँ के मनःशास्त्रियों के एक दल ने जनवरी सन् १९७९ में चिन्तातुर लोगों की पड़ताल के लिए एक प्रश्नावली तैयार की और उसे एक प्रसिद्ध पत्रिका में इस आग्रह के साथ प्रकाशित किया कि पाठक उसके उत्तर दें। करीब ५ हजार पाठकों ने उत्तर दिये। इन उत्तरों का विश्लेषण किया गया और उनसे जो निष्कर्ष प्राप्त हुए उनके अनुसार ४० प्रतिशत व्यक्तियों की चिन्ता ऐसी समस्याओं को लेकर थी, जिनकी केवल आशंका थी, वे सामने नहीं आई थीं। ३० प्रतिशत समस्यायें ऐसी थीं जिनके कारण बहुत मामूली से और उन्हें थोड़ी-सी सूझबूझ से सुलझाया जा सकता था। १२ प्रतिशत व्यक्तियों की चिन्तायें स्वास्थ्य सम्बन्धी थीं और वह भी ऐसी नहीं जो उपचार से ठीक न हो सकें। १० प्रतिशत समस्यायें ऐसी थीं, जिनके लिए दौड़-धूप करना, दूसरों का सहयोग लेना और थोड़ी परेशानी उठाना आवश्यक प्रतीत हुआ। केवल ८ प्रतिशत चिन्तायें ही ऐसी थीं, जिन्हें कुछ वजनदार कहा जा सकता था और जिन्हें पूरी तरह हल न किया जा सका तो उनके कारण कुछ हानि उठाने की सम्भावना विद्यमान थी।

यह तो हुआ चिन्ताओं का विश्लेषण। अधिकांश व्यक्ति ऐसे कारणों से चिन्तित रहते हैं, जो वास्तव में कोई कारण नहीं होते। उनके कारणों को देखकर यही कहा जा सकता है कि उन्हें चिन्तित रहने की आदत है। हालांकि चिन्ता से किसी समस्या का, वास्तव में यदि कोई समस्या है तो भी समाधान नहीं होता। देखा गया है कि चिन्ताग्रस्त रहने वाले व्यक्ति निश्चिन्त व्यक्तियों की अपेक्षा कहीं अधिक घाटे में रहते हैं। निश्चिन्त रहने वाले, मन-मौजी और मस्त लोगों को नियत समय पर ही समस्या का सामना करना पड़ता है, जबकि चिन्तातुर लोग बहुत पहले से ही मानसिक सन्तुलन खो बैठते हैं और हड़बड़ी के कारण अपना अच्छा स्वास्थ्य भी गँवा बैठते हैं। मस्तिष्क जितना भी अधिक समस्याओं से उलझा रहेगा, उतना ही वह समस्याओं को सुलझाने में असमर्थ हो जायेगा। क्रोधी, आवेश ग्रस्त, आक्रोश भरे हुए दिमाग एक प्रकार से विक्षिप्त जैसे हो जाते हैं।

इन चिन्ताओं के कारण उत्पन्न हुए विक्षेपों का कारण क्या है ? जीवन के प्रति सुलझे हुए दृष्टिकोण का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभाव। जीवन के प्रति यदि सहज दृष्टिकोण अपनाकर चला जायेगा। अनुकूलताओं और प्रतिकूलताओं को दिन और रात की तरह स्वाभाविक समझा जायेगा तो कोई कारण नहीं है कि प्रगति पथ अवरुद्ध हो जाय। दृष्टिकोण, इच्छाओं-आकांक्षाओं के सम्बन्ध में किसी विचारक का कथन है कि आप जैसे हैं वैसी ही आपकी दुनिया है। सृष्टि की प्रत्येक वस्तु आपके अभ्यन्तर की छाया है। बाहर जो कुछ है वह गौण है, क्योंकि वह सब आपकी मनःस्थिति का ही प्रतिबिम्ब है। महत्त्वपूर्ण तो यह है कि आप भीतर से क्या हैं ? भीतर से आप जो कुछ भी हैं, उसी के अनुरूप आपकी दुनिया ढल जायेगी। जो कुछ आप जानते हैं, अनुभव द्वारा प्राप्त हुआ है और जो कुछ आप भविष्य में जान सकेंगे वह भी आपके अनुभव द्वारा ही प्राप्त होगा तथा आपके व्यक्तित्व का अविच्छिन्न अंग बन जायेगा।

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि जीवन और जगत के प्रति मनुष्य की अपनी दृष्टि ही उसकी दुनिया का निर्माण करती है। इसीलिये परिस्थितियाँ उतनी महत्त्वपूर्ण नहीं हैं जितनी कि मनःस्थिति। इसीलिए, सौन्दर्य, हर्ष और उल्लास अथवा दुःख, विषाद और पीड़ा का अनुभव मनुष्य बाहरी कारणों से करता है। अस्तु, प्रस्तुत प्रतिकूलताओं का समाधान करने के लिए स्थिर चित्त से तन्मय होना तो उपयुक्त है किन्तु इसके लिए चिन्तित होने, निराश हो जाने से कोई बात नहीं बनती। चिन्ता और निराशा तो समाधान के मार्ग में व्यवधान उत्पन्न करती हैं। प्रतिकूलताओं को देखकर घबड़ाना और उनके लिए चिन्तित होते रहना व्यर्थ ही नहीं हानिकारक भी है।

''मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है'' इस सिद्धान्त को यदि जीवन का मूल मन्त्र बना लिया जाय तो इसमें सन्देह नहीं कि पुरुषार्थ परायण होकर अभीष्ट प्रकार की सफलता सम्पादित की जा सकती है। कहते हैं कि मनुष्य का भाग्य उसके हाथ एवं मस्तक की रेखाओं पर लिखा होता है। तार्किक बुद्धि इस बात को स्वीकार करती है पर थोड़ी गहराई में चलें तथा उक्त कथन का गम्भीरता से विश्लेषण करें तो यही तथ्य निकलता है कि मनुष्य को हाथ अर्थात् पुरुषार्थ का प्रतीक तथा मस्तिष्क अर्थात् बुद्धिरूपी दो ऐसी सम्पदाएँ प्राप्त हैं, जिनका भली-भाँति सदुपयोग करलें मनचाही दिशा में सफलताएँ अर्जित की जा सकती हैं।

जन्म से ही तरह-तरह की अनुकूलताएँ किन्हीं-किन्हीं विरलों को ही प्राप्त होती हैं। अधिकांश को प्रतिकूलताओं का सामना करना पड़ता तथा अपना मार्ग स्वयं गढ़ना पड़ता है। कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी व्यक्ति अपना आत्मविश्वास, साहस एवं सूझ-बूझ बनाये रखें तो कोई कारण नहीं कि उन पर विजय न प्राप्त कर सकें। निराशाजन्य मनःस्थिति ही जीवन की असफलताओं का प्रमुख कारण बनती है तथा चट्टान की भाँति प्रगति के मार्ग में अवरोधक बनकर अड़ी रहती है। अस्तु प्रगति के इच्छुक व्यक्तियों को सर्वप्रथम इस अवरोध को हटाना पड़ता है।

अर्थाभाव के कारण हजारों लाखों नहीं करोड़ों लोग दिन-रात चिन्ता और निराशा की अग्नि में जलते रहते तथा उत्तुंग लहरों के बीच थपेड़े खाती नाव की भाँति अपनी जीवन नैया खेने का प्रयास करते रहते हैं। पर जिन्होंने निराशा के घोर क्षणों में भी आशा और पुरुषार्थ की पतवार का आश्रय लिया उनने न केवल परिस्थितियों को परास्त कर दिखाया वरन् यह भी सिद्ध कर दिया कि प्रयास करने पर मनुष्य के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। ढूँढ़ने पर ऐसे अनुकरणीय उदाहरण असंख्यों मिल जायेंगे।

बहु प्रख्यात नोबुल पुरस्कार से अधिकांश व्यक्ति परिचित होंगे। इसके प्रवर्तक थे, अल्फ्रेड नोवल। इस तथ्य से कम ही व्यक्ति अवगत होंगे कि नोवेल ने अपना प्रारम्भिक जीवन घोर कष्टों में बिताया। उनके पिता एक जहाज में कैविन बॉय के रूप में काम करते थे। बाद में उनकी रुचि विस्फोटक पदार्थों के आविष्कार में हुई। इस कार्य में ही उन्हें अपना जीवन गँवा देना पड़ा। अल्फ्रेड नोवेल और उनकी विधवा माँ के पास गुजारे के लिए पैतृक सम्पत्ति के नाम पर एक कौड़ी भी नहीं थी। निर्वाह के लिए नोवेल मेहनत-मजदूरी करने लगे। सामान्य व्यक्तियों की तरह सम्पन्नता अर्जित करने की चाह तो अल्फ्रेड में भी थी पर इसके पीछे लक्ष्य महान था। आमोद-प्रमोद से भरा विलासिता युक्त जीवन बिताने को वे एक अपराध मानते थे। व्यवसायरत होकर उन्होंने सम्पत्ति तो जुटाली पर कभी भी अपव्यय में उसका दुरुपयोग नहीं किया। सदा सादा जीवन उच्च विचार का ही सिद्धान्त अपनाया। समृद्धि उनकी चेरी बनी पर व्यक्तिगत उपभोग के लिए नहीं, लोक मंगल के लिए। जब वे मरे तो वे बीस लाख पौण्ड से भी अधिक धनराशि छोड़ गये। सामान्य व्यक्तियों की भाँति आगामी पीढ़ियों को गुलछर्रे उड़ाने, मौज-मजा करने के लिए उन्होंने अपनी सम्पदा को नहीं छोड़ा। वे एक वसीयत बनाकर गये जो उन्हें अमर कर गई। मानव की विशिष्ट सेवा में लगे विभिन्न क्षेत्रों के पाँच व्यक्तियों को जो पुरस्कार हर वर्ष वितरित किया जाता है, वह अल्फ्रेड नोवेल की उदारता का ही परिणाम है।

अमेरिका के प्रसिद्ध अरबपति रॉकफेलर की गणना विश्व के समृद्धतम व्यक्तियों में होती है। पर यह कम ही व्यक्ति जानते हैं कि उन्होंने अपना आरम्भिक जीवन घोर विपन्नता में बिताया। अपना तथा अपनी माँ का पेट भरने के लिए वे एक पड़ौसी के मुर्गी खाने में सवा रुपया रोज पर काम करते। यह कार्य भी हफ्ते में कुछ ही दिन मिल पाता था। अतएव मेहनत-मजदूरी का अन्य मार्ग भी ढूँढ़ना पड़ता था। बचत करने का गुण बचपन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से ही उनमें था। थोड़ी-थोड़ी राशि बचाते हुए आगे चलकर उन्होंने स्वतन्त्र व्यवसाय आरम्भ कर दिया। पचास वर्ष की आयु तक पहुँचते-पहुँचते अपने प्रचण्ड पुरुषार्थ एवं आत्मविश्वास के सहारे वे मूर्धन्य समृद्धों की श्रेणी में जा पहुँचे।

आज सारे विश्व के सम्पन्न और प्रसिद्ध व्यक्ति जिस कम्पनी की कारें प्रयोग में लाते हैं तथा जो समृद्धि-प्रतिष्ठा का चिन्ह समझी जाती हैं, वे फोर्ड कम्पनी की ही हैं। इसके अधिष्ठाता एवं संचालक हैं, हैनरी फोर्ड। प्रतिवर्ष फोर्ड मोटर कम्पनी की गाड़ियाँ करोड़ों की संख्या में बिकती हैं। हैनरी के पिता एक सामान्य किसान थे। आजीविका का एकमात्र साधन था कृषि। अर्थाभाव के कारण हैनरी की उच्च शिक्षा की व्यवस्था नहीं बन सकी। पढ़ने के साथ-साथ परिवार के भरण-पोषण के लिए भी स्वयं हैनरी को ही प्रयास करना पड़ता था। एक फर्म में अन्ततः उन्हें पढ़ाई छोड़कर नौकरी करनी पड़ी, नौकरी से ही थोड़ी-थोड़ी बचत करते हुए उनने इतनी रकम एकत्रित करली कि फोर्ड मोटर कम्पनी की नींव पड़ सके। सत्तरह वर्ष के भीतर ही भीतर यह कम्पनी प्रतिवर्ष दस लाख गाड़ियाँ तैयार करके बेचने लगी। गाड़ियाँ अपनी कार्यक्षमता एवं टिकाऊपन के कारण दिनप्रतिदिन लोकप्रिय होती गयीं।

दुनिया के घर-घर में पी जाने वाली लिप्टन चाय के निर्माता की प्रगति की कहानी उन्हीं के शब्दों में इस प्रकार है, ''मैंने अपना जीवन एक स्टेशनरी की दुकान में काम करने वाले एक नौकर के रूप में आरम्भ किया। उस समय मुझे पाँच शिलिंग प्रतिदिन मिलते थे। परिवार का खर्च इससे मुश्किल से चलता था पर मैंने निश्चय कर रखा था जैसे भी होगा थोड़ी बचत अवश्य करेंगे। मेरा लक्ष्य स्वतन्त्र व्यवसाय करने का था। चाय का व्यवसाय मैंने बचत की न्यूनतम राशि से आरम्भ किया। ईमानदारी और श्रमशीलता का पल्ला मैंने नहीं छोड़ा। फिजूलखर्ची से मुझे सख्त घृणा थी। जो काम दो डालर में हो सकता था। उसके लिए कभी भी दो डालर नहीं खर्च किये। यही मेरी सफलता की कहानी है।

हिन्दुस्तान में ऐसे व्यक्तियों की कमी नहीं है, जो अपने आरम्भिक जीवन में अत्यन्त निर्धन और अभावग्रस्त रहे पर आगे चलकर परिश्रम, पुरुषार्थ व लगन के बल पर समृद्ध बने। शापुरजी बारोचा का नाम इनमें उल्लेखनीय है। बारोचा जब छः वर्ष के थे तभी उनके पिता का निधन हो गया। पिता की मृत्यु के चार दिन बाद ही बड़े भाई का भी देहान्त हो गया। माँ ने अपने पहले, पति का सामान आदि बेचकर किसी तरह बच्चों का पालन-पोषण किया। शापुरजी पढ़ने के साथ-साथ खाली समय में मेहनत-मजदूरी करके माँ के ऊपर आये आर्थिक दबाव को कम करने का प्रयास करते थे। मैट्रिक पास करके उन्होंने रेल्वे में नौकरी की, बाद में बैंक में नौकरी मिल गयी। थोड़े समय बाद वे नौकरी छोड़कर स्वतन्त्र व्यवसाय के क्षेत्र में उतर गये। अपनी सूझ-बूझ, ईमानदारी एवं परिश्रमशीलता के कारण वे निरन्तर उन्नति करते गये। सम्पत्ति तो एकत्रित की पर लोकोपयोगी कार्यों में बिना किसी नाम अथवा यश के उद्देश्य से खर्च की। उनके एक मित्र तथा प्रसिद्ध स्वतन्त्रता सेनानी पं. गणेश शंकर विद्यार्थी ने अपने एक संस्मरण में लिखा है कि बारोचा जी मात्र एक सफल व्यवसायी ही नहीं थे, वरन् एक उदार व्यक्ति भी थे। उन्होंने लगभग साठ लाख रुपया जनहित कार्यों में खर्च किया।''

विशालकाय रेल इंजन से लेकर छोटी सुई तक बड़ी से बड़ी तथा छोटी से छोटी वस्तुओं के निर्माता जमशेद जी टाटा का बचपन घोर अभावों में बीता। वे नवसारी में जन्मे। पिता पुरोहित थे। आरम्भिक शिक्षा प्राप्ति के लिए जमशेद जी को एक सम्बन्धी का सहारा लेना पड़ा। विद्यार्थी काल में वे एक ऐसे कमरे में रहे, जिसकी छत बारिश में हमेशा टपकती रहती। इतना पैसा नहीं था कि अधिक पैसे वाला कमरा किराये पर ले सकें। शिक्षा प्राप्ति के बाद एक कपड़े के कारखाने का उद्योग आरम्भ किया और अपनी परिश्रमशीलता, व्यवहार कुशलता के बलबूते निरन्तर आगे बढ़ते गये।

सम्पन्नता ही नहीं प्रतिभा के क्षेत्र में भी सामान्य से असामान्य स्थिति में जा पहुँचने वालों की एक दास्तान है कि उन्होंने परिस्थितियों को कभी भी अधिक महत्त्व नहीं दिया। हमेशा अपनी आन्तरिक क्षमताओं पर भरोसा किया। उनका भली-भाँति नियोजन करके आगे बढ़ते गये। बहुमुखी प्रतिभा के धनी पत्रकार, राजनीतिज्ञ, वैज्ञानिक, दार्शनिक एवं समाज सेवी बैंजामिन फ्रेंकलिन प्रेस में टाइप धोने, मशीन की सफाई करने, झाड़ू लगाने आदि का काम करते रहे पर उस काम को भी उन्होंने कभी छोटा नहीं माना और पूरे मनोयोग का परिचय देकर प्रेस का काम भी सीखते रहे। पन्द्रह व्यक्तियों का बड़ा परिवार था। दस वर्ष की आयु से ही उन्हें घर की अर्थ व्यवस्था में हाथ बँटाने के लिए आगे आना पड़ा। प्रेस के कार्य में उन्होंने प्रवीणता प्राप्त कर ली पर विज्ञान में अधिक अभिरुचि होने के कारण सम्बन्धित पुस्तकों का खाली समय में अध्ययन करते रहे। जिज्ञासा और मनोयोग की परिणति ही सफलता है। उनकी वैज्ञानिक प्रतिभा भी उभरती चली गयी। एक साथ कई क्षेत्रों में विशेषता हासिल करके उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि प्रतिकूलताएँ मानवी विकास में बाधक नहीं पुरुषार्थ एवं जीवन को निवारने का एक माध्यम भर है।

अमेरिका के इतिहास में अब्राहिम लिंकन का नाम सदा अमर रहेगा। यों तो वहाँ राष्ट्रपति कई हुए हैं पर जिस आदर और सम्मान के साथ लिंकन का नाम लिया जाता है, उतना अन्य किसी का नहीं। इसका कारण है उनकी आन्तरिक महानता। लिंकन के पिता जंगल से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लकड़ियाँ काटकर परिवार का गुजारा चलाते थे। किसी तरह काम चलाऊ अक्षर ज्ञान जितनी शिक्षा उन्हें पिता से मिल पायी। पैसे की तंगी के कारण उन्हें विद्यालय में प्रवेश लेने से वंचित रहना पड़ा। पर बालक के मन में पढ़ने की गहरी अभिरुचि थी। लैम्प पोस्ट के उजाले में वे पढ़ते रहे तथा अपनी ज्ञान की वृद्धि करते रहे। प्रतिकूलताओं के आँगन में ही उन्होंने अपनी प्रतिभा निखारी और आगे चलकर राजनीति में प्रवेश लिया। कई बार हारे पर निराश नहीं हुए और अपनी आन्तरिक महानता के कारण वे राष्ट्रपति के सर्वोच्च पद पर चुने गये।

शिक्षा एवं प्रतिभा के सम्बन्ध में अधिकांश व्यक्ति अनुकूल परिस्थितियों को अधिक महत्त्व देते तथा उन्हें ही सफलता-असफलता का कारण मानते हैं। सोचते हैं कि यदि अच्छे घर में जन्म न हो, पढ़ने-लिखने की सुविधाएँ न मिलें, उपयुक्त परिस्थितियाँ लक्ष्य न रहें, तब तो आदमी कुछ भी नहीं कर सकता। जबकि सच्चाई यह है कि अन्य क्षेत्रों में न्यूनाधिक परिस्थितियों का भले ही योगदान हो, विद्या और ज्ञान के क्षेत्र में उनका जरा भी वश नहीं चलता। अनुकूल परिस्थितियाँ होते हुए भी धनवानों के बच्चे अनपढ़ और गँवार रह जाते हैं तथा अनुकूलताएँ व साधन न होते हुए भी कितने ही गरीब बच्चे विद्वान एवं ज्ञानी बन जाते हैं। एक कहावत प्रसिद्ध है कि "लक्ष्मी और सरस्वती की कृपा कभी एक साथ नहीं होती" इस कहावत में सच्चाई का कितना अंश है? यह तो विवादास्पद हो सकता है पर यह उतना ही सुनिश्चित और ठोस सत्य है कि गरीब व्यक्ति भले ही धनवान न बने, ज्ञानवान तो बन ही सकता है। कालिदास, सूरदास, तुलसीदास से लेकर प्रेमचन्द्र, शरतचन्द्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, रामचन्द्र शुक्ल, जयशंकर प्रसाद, सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला, जगन्नाथ दास रत्नाकर आदि कितने ही विद्वान एवं साहित्यकार हुए हैं, जिनकी पूर्व और अन्त की आर्थिक स्थिति अत्यन्त सोचनीय बनी रही फिर भी अपने प्रयासों के बलबूते वे संसार को कुछ दे सकने में सफल रहे।

प्रतिकूलताओं का रोना रोते रहने की अपेक्षा यदि मनुष्य प्रयास करे तो किसी भी प्रकार की सफलता सम्पादित कर सकना कठिन नहीं है। मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है, उपरोक्त उदाहरण इसी तथ्य की पुष्टि करते तथा हर मनुष्य को अपना भाग्य अपने हाथों बनाने की प्रेरणा देते हैं।

आत्मविश्वास क्या नहीं कर सकता?

अमेरिका का हार्टफोर्ड कनेक्टिकट हाल दर्शकों से खचाखच भरा था। १९ नवम्बर, १९०१ के दिन घूँसेबाजी का एक अनौखा मैच था। प्रसिद्ध अमेरिकी घूँसेबाज टेरी मेकगवर्न का एक नये प्रतिस्पर्धी के साथ मुकाबला था। अब तक ६ खिलाड़ी उसे हराने के प्रयत्न में स्वयं ही मात खा चुके थे. टेरी के प्रशंसक आज पुनः उसकी विजय की आशा ही नहीं दृढ़ विश्वास लेकर आये थे। यह स्वाभाविक भी था—घूँसेबाजी में उसकी कुशलता और निपुणता देखते ही बनती थी। प्रतिस्पर्धी पर वह बड़ी फुर्ती एवं निर्ममता. के साथ घूँसे चलाता इसलिए 'टेरिबल टेरी' के नाम से वह जनता में विख्यात था। १८८९ टेरी की उम्र जब केवल १९ वर्ष की थी। तत्कालीन लाइटवेट चैम्पियन 'पेडलरपामर' को केवल ७५ सैकिण्डों में धराशायी कर दिया। उसके बाद १९०० में जॉर्ज डिक्सन को हराकर विश्व फेदरवेट चैंपियन का पद भी हासिल कर लिया। तब से इस पद से हटाने के लिए प्रतिस्पर्धी निरन्तर प्रयत्नशील थे।

लम्बी प्रतीक्षा के बाद रिंग में मदमस्त हाथी के सामने खड़े एक दुबले-पतले अनजान व्यक्ति कार्बेट को देख दर्शकों के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। कई सहृदय व्यक्ति कार्बेट के प्रति सहानुभूति दर्शाने लगे कि 'क्यों बेकार में यह अभागा अपनी जान देने आ गया।' ऐसे कितने ही उद्‌गार चारों ओर सुने जा सकते थे। इन सब बातों से अनभिज्ञ कार्बेट के चेहरे पर दृढ़ विश्वास झलक रहा था।

मैच शुरू हुआ। टेरी ने अपनी आदत के अनुसार प्रारम्भ से घूँसों की बौछार शुरू कर दी। उत्साह-उमंग और चुस्ती-स्फूर्ति से भरा हुआ कार्बेट टेरी का हर बार बचाये जा रहा था। एक ओर टेरी का अन्धाधुन्ध घूँसों की बौछार और दूसरी ओर कार्बेट की गजब की स्फूर्ति। स्थिति यह थी कि कोई नया दर्शक यही समझता कि कार्बेट चैम्पियन है और टेरी नौसिखिया। ऐसी स्थिति में टेरी जैसे मँजे खिलाड़ी का आत्मविश्वास डगमगा गया वह बौखला उठा। अब टेरी इस प्रयास में था किसी भी तरह कार्बेट को एक घूँसा लगाकर अपना खोया विश्वास पुनः प्राप्त कर लें। लेकिन यह सम्भव न हो सका। इसी बीच पहला राउण्ड समाप्त हो गया। दूसरे राउण्ड के शुरू होते ही कार्बेट की दाहिनी मुट्ठी का जबर्दस्त घूँसा टेरी के जबड़े पर पड़ा। वह ऐसा गिरा कि फिर वह उठ नहीं सका। रेफरी की गिनती समाप्त हो गई।

यह तो एक उदाहरण मात्र है, जिसमें एक ने अपने आत्मविश्वास के कारण शरीर क्षमता में असमर्थ होते हुए भी दूसरे समर्थ और बलिष्ठ व्यक्ति पर विजय पाई, जबकि दूसरा सक्षम और समर्थ होते हुए भी आत्मविश्वास खो देने से असफल रहा। आत्मविश्वास को जीवन और निराशा को मृत्यु कहा गया है। आत्मविश्वासी कठिन से कठिन परिस्थितियों को भी अपनी इस विवशता के कारण उनसे जूझने एवं अनुकूल बनाने में समर्थ होते हैं। उनकी सफलता में परिस्थितियों का, शरीरबल एवं बुद्धिबल का उतना महत्त्व नहीं होता, जितना कि स्वयं के मनोबल का।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सामान्यतः समझा यह जाता है कि साधनों के अभावों, गई-गुजरी परिस्थितियों और प्रतिकूलताओं के कारण ही मनुष्य असफल होता है। परन्तु वास्तविकता यह नहीं है। अपनी क्षीण, निस्तेज, अनुत्साही मनोवृत्ति के कारण ही लोग पग-पग पर ठोकरें खाते और असफलताओं का मुँह देखते हैं। कठिनाइयाँ, प्रतिकूलताएँ उन व्यक्तियों के लिए बाधक हैं, जिन्हें अपने आप पर विश्वास नहीं। कुछ करने लिए एक कदम बढ़ाने से पूर्व उनका मन अनिष्ट की आशंका से डरने लगता है। सफलता मिलेगी भी कि नहीं। इसके विपरीत आत्मविश्वास और मनोबल के धनी व्यक्ति पहाड़ जैसी विपदाओं को भी पैरों तले रौंदने की हिम्मत रखते हैं। प्रतिकूलताओं से प्रगति क्रम में विलम्ब तो हो सकता है पर यह कहना गलत है कि सफलता ही नहीं मिलेगी। यदि प्रचण्ड इच्छाशक्ति, तत्परता और साहसिकता बनी रहे तो अभीष्ट लक्ष्य तक अवश्य पहुँचा जा सकता है।

ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं जिसमें प्रतिकूलताओं के ऊपर आत्मविश्वास ने विजय पाई। आत्मविश्वास के अभाव के कारण कितने ही व्यक्ति सामान्यतः पिछड़ेपन से ग्रस्त रहते और अवनति के गर्त में पड़े रहते हैं। कितने ही ऐसे होते हैं जो कठिनाइयों को चुनौती देते, संघर्षों का आलिंगन करते अन्ततः अभीष्ट तक पहुँचते हैं। अन्तराल में छिपी क्षमताएँ उन्हें किसी के आगे हाथ पसारने, गिड़गिड़ाने, दीन-हीन बने रहने के लिए बाध्य नहीं करतीं। सोया आत्मविश्वास जब जागता है, छिपी क्षमताएँ जब उभरती हैं, उत्साह जब उमड़ता है तो वह बाहरी सहयोग को भी अपनी आकर्षण शक्ति द्वारा खींच लेता है। तब वह हवाओं का रुख बदलने, दिशाओं को पलट देने, प्रतिकूलताओं को अनुकूलता में बदल देने की सामर्थ्य रखता है। सीमित सामर्थ्यों के होते हुए भी आत्मविश्वास के बल पर कितने ही व्यक्ति सफलता के शिखर पर पहुँचे, इतिहास में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं।

नेलसन ब्रिटेन का प्रसिद्ध सेनापति था। उसने अनेक युद्धों में विजय पाई। प्रचण्ड साहस और अटूट आत्मविश्वास ही उसकी विजय के आधार थे। नील नदी के युद्ध के लिए नेलसन ने पूर्व योजना बनाई और अपने अधीनस्थ सैनिकों के सामने वह योजना रखी। इसी बीच कर्नल वेरी ने सन्देह प्रकट किया—"यदि हमारी विजय नहीं हुई तो संसार क्या कहेगा ?" नेलसन ने रोषपूर्ण मुद्रा में तमककर उत्तर दिया—"यदि के लिये नेलसन के पास कोई स्थान नहीं। मैंने जो कुछ निर्णय लिया है, उसके अनुसार सभी जुट जायें। निश्चित रूप से विजय हमारी ही होगी यह बात अलग है कि हमारी विजय की कहानी कहने वाले हममें से थोड़े ही रह जायें।"

मोर्चे पर जाने से पूर्व नेलसन ने कप्तान से कहा, "कल इस समय से पूर्व या तो हमें विजय प्राप्त होगी या मेरे लिए वेस्टमिन्स्टर के गिरजे में कब्र तैयार हो जायेगी, जहाँ मैं शान्तिपूर्वक विश्राम करूँगा।" कैसे आत्मबल और आत्मविश्वास से भरे शब्द थे, जो अन्त में सत्य सिद्ध हुए। विजय नेलसन के हाथ लगी।

नैपोलियन का जीवन भी ऐसे दृढ़ संकल्प और मनोबल से भरा था। आल्पस पर्वत की सेण्ट बरनार्ड घाटी का निरीक्षण करके लौटे हुए इन्जीनियरों से नैपोलियन ने पूछा, "क्या रास्ता पार कर सकना सम्भव है?" इन्जीनियरों ने आशंका व्यक्त करते हुए कहा—"शायद, पार कर सकें।" नैपोलियन ने आगे की बात नहीं सुनी तुरन्त सिपाहियों को आदेश दिया। "आगे बढ़ो !" इस दुस्साहसिक निर्णय पर इंग्लैण्ड और आस्ट्रेलिया के लोग आश्चर्य करने लगे कि यह नाटे कद का सामान्य-सा व्यक्ति साठ हजार सैनिकों और हजारों मन युद्धास्त्र के साथ इतने ऊँचे आल्पस पहाड़ को भला कैसे पार कर सकेगा ?

दृढ़ इच्छाशक्ति और आत्मविश्वास के आधार पर वह आल्पस को भेदकर गन्तव्य तक पहुँचने में सफल हुआ, अन्य कई सेनानायकों के पास समर्थ सेना थी, हथियार व अन्य उपयोगी साधन थे, पर उनमें वह आत्मविश्वास नहीं था जिसके कारण नैपोलियन का कलेजा कठिनाइयों को देखकर वज्र बन जाता था। वह स्वयं कहा करता था—"मेरे शब्दकोष में 'असम्भव' नामक कोई शब्द नहीं।"

जापान के एक छोटे-से राज्य पर समीपवर्ती एक बड़े राज्य ने हमला कर दिया। अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित विशाल सेना देखकर जापान का सेनापति हिम्मत हार बैठा। उसने राजा से कहा—"हमारी साधनहीन छोटी-सी सैन्य टुकड़ी इसका सामना कदाचित ही कर पायेगी। नाहक सैनिकों को खत्म करने के बजाय युद्ध न करना ही ठीक है। लेकिन राजा बिना प्रयास के हार मानने के पक्ष में नहीं था। सोचने लगा कि क्या किया जाये ? अचानक याद आया कि गाँव में एक सिद्ध फकीर है शायद वही कुछ समाधान बता सके, यही सोचकर राजा स्वयं फकीर से मिलने चल पड़ा। फकीर तम्बूरा बजाने में मस्त था। राजा ने फकीर की मस्ती तोड़ते हुए कहा कि हमारा राज्य मुसीबत में फँस गया है। दुश्मन ने देश पर आक्रमण कर दिया है और ऐसी विकट स्थिति में सेनापति भी निराश हो चुका है—उसने बताया कि जीत असम्भव है।

फकीर ने बिना विलम्ब किये उत्तर दिया कि "सबसे पहले तो आप सेनापति को पद से हटा दीजिये क्योंकि जिसने युद्ध से पहले ही हार की आशंका बता दी वह भला क्या जीत पायेगा ? जो स्वयं निराशावादी है वह अपने अधीनस्थ सैनिकों में कैसे उत्साह-उमंग का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संचार कर सकेगा ?'' राजा ने समर्थन करते हुए कहा, बात तो ठीक है। लेकिन अब उसका स्थान कौन सम्भालेगा। यदि उसे हटा भी दिया जाता तो इतने कम समय में दूसरा सेनापति कहाँ मिलेगा ? उसी सेनापति से काम चलाने के अतिरिक्त कोई विकल्प दिखाई नहीं देता।''

इस पर फकीर ने उन्मुक्त हँसी हँसते हुए कहा—''आप चिन्ता न करें, सेनापति का स्थान मैं सम्भालूँगा।'' राजा विस्मय में पड़ गया लेकिन इसके अतिरिक्त और कोई चारा भी तो नहीं था।

दूसरे दिन सेना ने कूच कर दिया, सेना का नेतृत्व युद्ध अनुभवों से सर्वथा अपरिचित फकीर कर रहा था। थोड़ी ही दूर वे चले होंगे कि फकीर ने रुकने का संकेत किया, इस नये सेनापति के आदेश पर सेना रुक गई। सेनापति चाहे जो निर्णय ले, सभी सैनिक उसका अनुकरण करने पर मजबूर थे। युद्ध क्षेत्र अभी दूर था। बीच में अकारण रुककर समय बरबाद करने का कोई औचित्य नजर नहीं आ रहा था। सैनिक असमंजस में पड़ गये। इसी बीच सामने के मन्दिर की ओर इशारा करते हुए फकीर ने कहा—''युद्ध से पूर्व इस मन्दिर के देवता से पूछ लेते हैं कि जीत होगी या हार। यदि देवता जीत के लिए कह देते हैं तो फिर किसी का डर नहीं। दुश्मन की सेना कितनी ही विकट क्यों न हो जीत निश्चित ही हमारी होगी। यदि नहीं, तो फिर चलने से क्या लाभ !''

सैनिकों ने कहा कि आप तो एकान्त में देवता से पूछेंगे। देवता क्या उत्तर देते हैं ? यह हमें कैसे पता चलेगा ?'' ''नहीं ! अकेले मैं नहीं पूछूँगा। तुम सबके सामने ही मैं देवता से प्रश्न करूँगा।'' यह कहते हुए फकीर ने झोली से एक चमकता हुआ सिक्का निकाला और बताया कि अगर यह सिक्का चित्त गिरता है तो जीत हमारी ही होगी, यदि पट गिरेगा तो हम वापिस लौट जायेंगे। फकीर ने सिक्का ऊपर उछाला, सिक्के के गिरने के साथ ही उनके भाग्य का निर्णय होना था। सब विस्फारित नेत्रों से एकटक सिक्के को देख रहे थे। सिक्के के गिरते ही सबकी आँखें चमक गयीं। सिक्का चित्त गिरा था जीत सुनिश्चित थी। फकीर ने सबको उत्साहित करते हुए कहा—अब डरने की कोई बात नहीं, देवता का आश्वासन हमें मिल गया है।''

दोनों पक्षों की भयंकर लड़ाई के बाद जीत जापान के पक्ष में हुई। युद्धोपरान्त सैनिकों ने मन्दिर के पास पहुँचकर कहा कि देवता को धन्यवाद दे दें, जिसने हमें जिताया, फकीर ने कहा देवता को धन्यवाद देने की आवश्यकता नहीं बल्कि अपने आपको धन्यवाद दो। तुम स्वयं ही अपनी, जीत के आधार हो।''

''जीत का देवता से कोई सम्बन्ध नहीं।'' यह कहते हुए फकीर ने सिक्का पुनः झोली से निकालकर सैनिकों के हाथ पर रख दिया। सैनिकों के आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा, जब उन्होंने देखा कि सिक्के के दोनों ओर चित्त के निशान थे। यह और कुछ नहीं सैनिकों के सोये आत्मविश्वास को जगाने की एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया भर थी जो अन्ततः जीत का कारण बनी।

संसार की महत्त्वपूर्ण सफलताओं का इतिहास आत्मविश्वास की गौरव गाथा से भरा पड़ा है। उत्कर्ष व्यक्ति का करना हो—समाज का अथवा राष्ट्र का, सर्वप्रथम आवश्यकता है अपने अन्दर सोये आत्मविश्वास रूपी देवता को जगाया जाये। अनुदान-वरदान सहज ही बरसते चले आयेंगे।

उत्साह एवं सक्रियता चिरयौवन के मूल आधार

प्रगति की आकांक्षा किसे नहीं होती ? प्रत्येक व्यक्ति अपनी स्थिति से असन्तुष्ट रहता है और उससे आगे बढ़कर उन्नत स्थिति को प्राप्त करना चाहता है। बहुत-से इसके लिए प्रयास भी करते हैं और अनेकों सफल भी होते हैं। किन्तु अधिकांश व्यक्ति वह प्राप्त नहीं कर पाते, जो प्राप्त करना चाहते हैं। कारण संकल्प का अभाव, प्रयत्नों में प्रखरता की कमी और तत्परता का न होना। बहुत-से व्यक्ति युवावस्था में बड़े जोश-खरोश के साथ अपना लक्ष्य प्राप्त करने के लिए प्रयत्न करते हैं, किन्तु थोड़े-से प्रयत्न करने के बाद ही निराश हो जाते हैं। बहुतों की स्थिति ऐसी होती है, जो प्रयत्न और संघर्ष करते-करते युवावस्था बीत जाती है और वे अपने आपको वृद्ध समझकर हार-थककर बैठ जाते।

वृद्धावस्था क्या सचमुच जीवन है सन्ध्या बेला है ? इस प्रश्न का उत्तर उनके लिए ''हाँ'' में ही होता है किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं। बहुत-से व्यक्तियों ने जिसे वृद्धावस्था कहते हैं इस उम्र तक सामान्य जीवन बिताया और उसके बाद उनमें प्रगति के लिए ऐसी उदात्त आकांक्षा उत्पन्न हुई कि उसके बाद अपने प्रखर प्रयत्नों से उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँचे। संस्कृत के प्रसिद्ध विद्वान श्रीपाद दामोदर सातवलेकर ६० वर्ष की आयु तक एक पाठशाला में ड्राइंग पढ़ाते थे। रिटायर होने के बाद उन्होंने संस्कृत सीखी और संस्कृत भाषा के क्षेत्र में इतना काम किया कि देखने वाले दंग रह गये। वेदों का शुद्ध पाठ तैयार करने से लेकर भारतीय संस्कृति का प्रगतिशील स्वरूप प्रतिपादित करने तक के क्षेत्र में उन्होंने इतनी सफलता अर्जित की कि आज भी जहाँ संस्कृत के सम्बन्ध में कहीं कोई मतभेद उठता है तो उसके समाधान और निराकरण के लिए सातवलेकर के ग्रन्थों को आधार माना जाता है।

महात्मा गाँधी ने ४५ वर्ष की अवस्था में सामान्य जीवन जिया और इसके बाद वे एक क्रान्तिकारी सन्त के स्वरूप में उभरकर सामने आये। दादा भाई नौरोजी ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

५० वर्ष की आयु में अपना राजनैतिक जीवन आरम्भ किया तथा ६० वर्ष की आयु में पहली बार बम्बई कौंसिल के सदस्य चुने गये। ६१ वर्ष की अवस्था में वे कांग्रेस के सभापति बने। गोपालकृष्ण गोखले ने ४० वर्ष की आयु में 'भारत सेवक समाज' की स्थापना की। लोकमान्य तिलक ने यद्यपि ३३ वर्ष की आयु में अपना राजनैतिक जीवन आरम्भ किया था किन्तु उनकी गतिविधियाँ १९०५ में ही अधिक सक्रिय हुईं, तब उनकी आयु ५० वर्ष थी। उसी समय उन्होंने गरम दल की स्थापना की थी।

होमरूल लीग बनाते समय श्रीमती एनीबीसण्ट की आयु ७० वर्ष की थी। उन्होंने ४० वर्ष की आयु के बाद ही सार्वजनिक क्षेत्र में पदार्पण किया था। इसी प्रकार ४५ वर्ष की आयु के बाद राजनैतिक जीवन में प्रवेश करने वाले पं. मोतीलाल नेहरू ५८ वर्ष की आयु में कांग्रेस के सभापति बने। डा. राजेन्द्र प्रसाद का प्रखर और सक्रिय जीवन ४१ वर्ष की आयु के बाद ही आरम्भ हुआ।

यह तो खैर राजनैतिक जीवन से सम्बन्धित उदाहरण हैं और सामान्यतः समझा जाता है कि राजनीति बूढ़ों का खेल है। इस क्षेत्र में व्यक्ति युवावस्था में प्रवेश करे, तभी वृद्धावस्था तक पहुँचने तक सफलता मिलती है, ऐसी धारणा है। किन्तु और क्षेत्रों में भी ऐसे उदाहरण हैं, जिनसे सिद्ध होता है कि प्रगति या सफलता का आयु से कोई सम्बन्ध नहीं है। वह किसी भी उम्र में पाई जा सकती है और वृद्धावस्था में अपने क्षेत्र में कीर्तिमान स्थापित करने वालों के तो ढेरों उदाहरण हैं। यूनानी नाटककार सोफोक्लीज ने ९९ वर्ष की आयु में अपना प्रसिद्ध नाटक 'आडीपस' लिखा था। यद्यपि उन्होंने इसके पहले भी कई रचनाएँ लिखी थीं, पर जिन रचनाओं ने इन्हें साहित्यिक जगत में प्रतिष्ठित किया वे सभी अस्सी वर्ष की आयु के बाद लिखी गई थीं। अँग्रेजी के सुप्रसिद्ध कवि मिल्टन ४४ वर्ष की आयु में अन्धे हो गये थे। अन्धे होने के बाद उन्होंने सारा ध्यान साहित्य रचना पर केन्द्रित किया और पचास वर्ष की आयु में अपनी प्रसिद्ध कृति 'पैराडाइज लास्ट' लिखी। ६२ वर्ष की आयु में उनकी एक और प्रसिद्ध कृति 'पैराडाइज रीगेड' प्रकाशित हुई। जर्मन कवि **गेटे** ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'फास्ट' ७० वर्ष की आयु में लिखी थी। ९२ वर्ष का अमेरिकी दार्शनिक **जानडेवी** अपने क्षेत्र में अन्य सभी विद्वानों से अग्रणी था, उन्होंने दर्शन के क्षेत्र में ६० वर्ष की अवस्था में ही प्रवेश किया था।

जार्ज बर्नार्ड शॉ ९३ वर्ष की आयु तक इतना अधिक लिखते थे कि वे स्वयं ४० वर्ष की आयु में भी इतना नहीं लिख पाते थे। दार्शनिक वैनदित्तो क्रोचे ८० वर्ष की अवस्था में भी नियमित रूप से दस घण्टे काम करते थे। ८५ वर्ष की आयु में उन्होंने दो महत्त्वपूर्ण पुस्तकें लिखीं, जिनकी चर्चा विश्व साहित्य में होती है। बर्ट्रेण्ड रसेल को ७८ वर्ष की आयु में उस कृति पर पुरस्कार मिला जो उन्होंने ७७ वर्ष की अवस्था में पूरी की थी। माटिस मैटर लिंक का देहान्त ८८ वर्ष की आयु में हुआ। जिन दिनों वे मरे, उसके कुछ दिन पूर्व ही उन्होंने अपनी अन्तिम पुस्तक पूरी की थी। इस पुस्तक का नाम था 'द एवार्ट ऑफ से टू आल' यह पुस्तक उनकी सर्वोत्कृष्ट रचना समझी जाती है।

ब्रिटेन के सुप्रसिद्ध अखबार 'डेली एक्सप्रेस' के संचालक लार्ड वीवनवर्क ८० वर्ष की अवस्था में भी दफ्तर में जमकर बैठते और काम करते थे। दार्शनिक काण्ट को ७४ वर्ष की अवस्था में उनकी एक रचना के आधार पर दर्शन के क्षेत्र में प्रतिष्ठा मिली। ६० वर्ष की आयु के बाद चार वर्षों में उन्होंने 'एन्थ्रोपोलोजी', 'मेटाफिजिक्स ऑफ ईथिक्स' और 'स्ट्राइफ ऑफ फैकल्टीज' ये तीन पुस्तकें लिखी थीं, जिनने उन्हें दार्शनिक जगत में प्रतिष्ठित किया। **टैनीसन** ने अपना प्रख्यात् ग्रन्थ 'क्रासिंग द बार' ८३ वर्ष की आयु में पूरा किया। **होम्स** ने ८८ वर्ष की आयु में 'इलियड' अनुवाद प्रकाशित कराया था। चित्रकार टीटान ने विश्व प्रसिद्ध कलाकृति 'वैटल ऑफ लिमाण्टो' ९८ वर्ष की आयु में पूरी की।

इंग्लैण्ड का इतिहास जिनने पढ़ा है, वे ग्लैडस्टन के नाम से अवश्य ही परिचित होंगे। ग्लैडस्टन ने ४० वर्ष की आयु में ब्रिटेन की राजनीति में प्रवेश किया और ७० वर्ष की आयु में राज्य का उत्तरदायित्व सम्भाला। ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी में 'होमर' पर उनने जो भाषण दिया वह अत्यन्त शोधपूर्ण माना जाता है। पर जब प्रधानमन्त्री बने, तब उनकी आयु ७९ वर्ष थी। ८५ वर्ष की आयु में उन्होंने 'ओडेसी ऑफ हाट्स' नामक एक ग्रन्थ की रचना की। वृद्धावस्था में भी वे चैन से नहीं बैठे रहे।

ग्लैडस्टन की तरह ही जार्जलायड भी ब्रिटेन के मूर्धन्य राज नेता रहे हैं। ७५ वर्ष की आयु में उनकी कार्यक्षमता नौजवानों जैसी थी। चर्चिल ने दूसरे विश्व युद्ध में जब ब्रिटेन का प्रधान मन्त्रित्व सम्भाला तो उनकी आयु ८० वर्ष थी। जनरल मेक आर्थर ७३ वर्ष की आयु में वैसे ही सक्रिय थे जैसे कि ४५ वर्ष की आयु में। उल्लेखनीय हैं कि उन्होंने ४५ वर्ष की आयु में ही सैनिक क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण कमान सम्भाली थी।

आठवीं जर्मनी सेना का सेनापतित्व जब पलशान हिण्डैन वर्ग को सौंपा गया था, तब उनकी आयु ६७ वर्ष की थी। ७८ वर्ष की आयु में वे पार्लमेण्ट के अध्यक्ष चुने गये। नौ वर्ष तक उन्होंने यह दायित्व कुशलतापूर्वक सम्भाला और ८७ वर्ष की अवस्था में स्वर्गवासी हुए। हैनरी फिलिप मिटेस जब फ्रांस के प्रधानमन्त्री बने, तब वे ८४ वर्ष के थे। उसी देश की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नेशनल असेम्बली के अध्यक्ष स्टवर्ड हैरियो ७१ वर्ष की आयु में उस पद के लिए चुने गये। ८४ वर्ष की आयु में जब उनका स्वर्गवास हुआ, तब तक वे उस पद के कर्त्तव्यों को बड़ी कुशलतापूर्वक निभाते रहे। दक्षिण कोरिया के राष्ट्रपति सिगमन ८० वर्ष की आयु में भी पूरी तरह क्रियाशील रहे।

कहा जा चुका है कि सफलता और कार्यक्षमता का आयु से कोई सम्बन्ध नहीं है। उत्साह, लगन और संकल्प बना रहे तो किसी भी आयु या स्थिति में युवा रहा जा सकता है। गोस्वामी तुलसीदास ने ५० वर्ष की आयु के बाद रामचरितमानस लिखना आरम्भ किया था और दो वर्ष की अवधि में उसे समाप्त कर विश्व को उपकृत किया। रवीन्द्रनाथ टैगोर ने ९० वर्ष की आयु में अपना एक उपन्यास पूरा किया था।

यौवन अथवा सक्रियता का आयु विशेष से सम्बन्ध नहीं है। वह वृद्धावस्था में भी अक्षुण्ण रह सकता है तो बचपन में भी प्रतिभा बनकर फूट सकता है। कई बार यह सक्रियता अथवा क्षमता बचपन में ही आश्चर्यजनक रूप से विकसित होती देखी गई है। इसे सौभाग्य कहें अथवा पूर्वजन्मों के संचित संस्कार। परन्तु संसार में ऐसी कई विभूतियाँ हुई हैं, जिन्होंने खेलने, खाने की उम्र में ही अद्वितीय उपलब्धियाँ अर्जित कर दिखाईं। मुगल सम्राट अकबर १४ वर्ष की आयु में गद्दी पर बैठा था और १८ वर्ष की आयु में उसने बैरम खाँ को हटाकर स्वतन्त्र रूप से कार्यभार सम्भाला था। सम्राट अशोक जब सिंहासनारूढ़ हुए थे तो उनकी आयु मात्र २० वर्ष थी। छत्रपति शिवाजी ने मात्र १९ वर्ष की आयु में तोरण का किला जीता था। इसी प्रकार महाराजा रणजीत सिंह ने भी १९ वर्ष की आयु में ही लाहौर पर विजय प्राप्त की थी। विश्व विजय के अभियान पर निकलते समय सिकन्दर की आयु मात्र २० वर्ष थी। जूलियस सीजर ने भी २४ वर्ष की आयु में एक भयंकर डाकू गिरोह को गिरफ्तार किया था।

प्रसिद्ध साहित्यकार विक्टर ह्यूगो ने १४ साल की अवस्था तक तीन हजार से भी अधिक कविताएँ लिख डाली थीं। महाकवि गेटे ने २० साल की उम्र में अपना पहला नाटक लिखा था। सन्त ज्ञानेश्वर ने गीता पर अपनी टीका ज्ञानेश्वरी १५ वर्ष की आयु में ही लिख डाली थी। सिगमण्ड फ्रायड ने २९ वर्ष की आयु में ही मनोविज्ञान के क्षेत्र में अपना क्रान्तिकारी सिद्धान्त प्रतिपादित किया था।

प्रसिद्ध कवि गेटे ने १४ वर्ष की आयु में ही अपनी प्रसिद्ध रचना 'थाड्स' इन द डिस्टेटो ऑफ जीजस क्राइस्ट इन टू हेल' पुस्तक लिखी और ख्याति अर्जित की। रूसी कवि पुश्किन ने १० वर्ष की आयु में ही फ्रेंच भाषा में एक कविता और एक नाटक तैयार कर लिया था।

वैज्ञानिक क्षेत्र में कितनी ही ऐसी प्रतिभाएँ हुई हैं, जिन्होंने छोटी उम्र में ही बड़े आविष्कार किये। एलीह्विटवी ने २८ वर्ष की आयु में कपास ओटाने की मशीन का आविष्कार किया। चार्ल्स मार्टिन हाल ने २३ वर्ष की अवस्था में विद्युत संश्लेषण द्वारा अल्युमिनियम तैयार करने की नई विधि पेटेण्ट कराई। सैम्युअल कोल्ट ने १६ वर्ष की आयु में ही रिवाल्वर का मॉडल तैयार किया, जिसे बाद में धातु का बनाकर २१ वर्ष की आयु में रिवाल्वर का आविष्कार कर दिया। एलेग्जेण्डर ग्राह्म वेल ने २० वर्ष की आयु में टेलीफोन आविष्कार के लिए प्रयत्न आरम्भ कर दिया तथा २९ वर्ष की आयु में ही सफल टेलीफोन यन्त्र का आविष्कार कर उसे पेटेण्ट करा लिया। वायुयान के आविष्कारक 'विल्वय राइट' और 'आल्वर राइट' बीस और तीस वर्ष की आयु के बीच ही वायुयान बनाकर उसको उड़ाने का परीक्षण करने लगे थे। शक्तिचालित वायुयान उड़ाकर जब उन्होंने पूरे संसार को आश्चर्यचकित कर दिया था तब आल्वट की आयु ३२ वर्ष, विल्वट की उम्र ३६ वर्ष थी। बिजली का मतदान यन्त्र पेटेण्ट कराने वाले वैज्ञानिक कोलवर्ट की आयु मात्र २१ वर्ष थी। लोगों ने जब इस किशोर को देखा तो दंग रह गये।

वृद्धावस्था में लोगों की सी सक्रियता बरतने वाले और अल्पायु में ही प्रौढ़-परिपक्वता का परिचय देने वाले इन उदाहरणों से सिद्ध होता है कि सफलता और प्रतिभा के विकास का आयु से कोई सम्बन्ध नहीं। आयु न तो कार्यक्षमता को मन्द बनाती है और न ही उसे उत्तेजित करती है। कार्यक्षमता या सफलता का आधार है सुव्यवस्थित योजना, प्रखर बुद्धि और सघन प्रयास। इस आधार पर किसी भी आयु में सफल हुआ जा सकता है, प्रगति की जा सकती है।

साहस का शिक्षण—संकटों की पाठशाला में

शरीर और मन को अनुकूलताएँ रुचिकर लगती हैं। उन्हें जुटाने के लिए मनुष्य का समूचा पुरुषार्थ लगा रहता है। जीवनयापन के लिए आवश्यक सुविधाएँ जुटाई जायँ यह उचित है, पर यह नहीं भूलना चाहिए कि चाहते हुए भी वह जरूरी नहीं कि सदा अभीष्ट प्रकार की परिस्थितियाँ बनी रहेंगी। कठिनाइयाँ, प्रतिकूलताएँ भी जीवन पथ पर प्रस्तुत होती हैं तथा मनुष्य के धैर्य एवं जीवट की परीक्षा लेती हैं। अनभ्यस्त शरीर और मन को ऐसे अवसरों पर अधिक परेशानी होती है। उपस्थित कठिनाइयों, संकटों को वे व्यक्ति अभिशाप मानते हैं जिन्होंने सतत अनुकूलताओं में ही रहना सीखा है।

प्रायः देखा यह जाता है कि संकटों के अवसर पर अनभ्यस्त अपना मन ही अधिक समस्या खड़ा करता है। आरम्भ से ही उसे हर तरह की परिस्थितियों में रहने के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिए प्रशिक्षित और अभ्यस्त किया गया होता तो उपस्थिति होने वाली कठिनाइयाँ भी खेल-खिलवाड़ जैसी महसूस होतीं। पुरुषार्थ एवं जीवट को निखारने का उन्हें भी माध्यम माना जाता है तथा उतना ही उपयोगी उन्हें भी समझा जाता है, जितना कि अनुकूल परिस्थितियों को।

पर विरले होते हैं जो अनुकूल अथवा प्रतिकूल परिस्थितियों में एक जैसे निस्पृह बने रहते हैं और अपने मन को दोनों ही में सन्तुलित बनाये रखते हैं। अन्यथा अधिकांश की प्रसन्नता परिस्थितियों पर अवलम्बित होती है। वे अभीष्ट तरह की सुख-सुविधाएँ उपलब्ध रहने पर मोद-मनाते तथा उनके तिरोहित होते ही शोकातुर हो उठते हैं। थोड़े-से व्यक्ति ऐसे भी होते हैं, जो कठिनाइयों तथा संघर्षों को स्वयं आमन्त्रित करते हैं। सुविधाओं तथा ढर्रे का जीवन उन्हें नहीं रुचता। कठिनाइयों, संकटों से जूझे बिना उन्हें चैन नहीं पड़ता। वे जानते हैं कि उनका सामना किये बिना आन्तरिक जीवट को उभरने और सुदृढ़ बनने का अवसर नहीं मिल सकता। ऐसे व्यक्ति शूरवीर, साहसी, मनस्वी बनते हैं। स्वयं धन्य होते और दूसरों को प्रेरणा-प्रकाश देते हैं।

प्राचीनकाल की ऋषि परम्परा के शिक्षण में ऐसी व्यवस्था रहती थी कि मनोभूमि को सबल, काया को समर्थ और सुदृढ़ बनाने के लिए वे सारे प्रयोग किये जायँ जो अभीष्ट उद्देश्य की पूर्ति में सहायक हों। गुरुकुलों में ऐसा ही शिक्षण चलता था। तप और तितिक्षा का कठोर अभ्यास शिक्षार्थी से कराया जाता था ताकि भावी जीवन में आने वाले किसी भी संकट-चुनौती का सामना करने में वह समर्थ हो सके। गुरुकुलों में प्रवेश लेने तथा प्रशिक्षण प्राप्त करने वाले छात्रों को अनुकूलताओं में नहीं, प्रतिकूलताओं में जीना सिखाया जाता था। उस शिक्षण प्रक्रिया का परिणाम यह होता था कि विद्यालय से निकलने वाला छात्र हर दृष्टि से समर्थ और सक्षम होता था। जीवन में आने वाले अवरोध उन्हें विचलित नहीं कर पाते थे।

परिस्थितियाँ बदलीं और साथ में वह शिक्षण पद्धति भी। मनुष्य के चिन्तन में भारी हेर-फेर आया। यह मान्यता बनती चली गयी कि अनुकूलताओं में ही मनुष्य का सर्वांगीण विकास सम्भव है। फलतः आरम्भ से ही बालकों को अभिभावक हर प्रकार की सुविधाएँ देने का प्रयास करते है, उन्हें तप-तितिक्षामय जीवन का अभ्यास नहीं कराया जाता। यही कारण है कि जब कभी भी प्रतिकूलताएँ प्रस्तुत होती हैं, ऐसे बालक उनका सामना करने में असमर्थ सिद्ध होते हैं।

कुछ विद्यालय आज भी ऐसे हैं जो जीवट को प्रखर बनाने का व्यावहारिक प्रशिक्षण देते हैं। उदाहरणार्थ 'जंगल एण्ड स्नो सरवाइवल स्कूल एण्डियन एयर फोर्स' की ओर से भेजे गये वायुयान चालकों को ऐसी ट्रेनिंग दी जाती है, जिससे वे हर तरह के संकटों का सामना करने में सक्षम हो सकें। हिन्दुस्तान टाइम्स में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार शिक्षण की प्रणाली अत्यन्त रोमांचक होती है। सामान्यतया विमानचालकों को हर तरह के क्षेत्र से होकर उड़ान भरनी होती है। हिमालय की ऊँचाई पर स्थित सघन वनों अथवा हिमाच्छादित प्रदेशों अथवा मरुस्थलों से होकर भी चालकों को गुजरना पड़ता है। यदि इन दुर्गम प्रदेशों में कोई दुर्घटना घटती है तो किन-किन परिस्थितियों का सामना करना पड़ सकता है। इसका शिक्षण एवं अभ्यास चालकों को कराया जाता है। इन स्थानों पर बिना किसी बाह्य सहायता के किस तरह प्रतिकूलताओं से जूझते हुए बाहर निकलना चाहिये, इसका प्रशिक्षण दिया जाता है।

पैराशूट द्वारा रंगरूट को हिमाच्छादित प्रदेश में अज्ञात शिखर पर छोड़ दिया जाता है। साथ में भोजन, पानी तथा अन्य आवश्यक साधन अत्यल्प मात्रा में उसके साथ होते हैं। सर्दी, वर्षा, तूफान, हिमपात तथा वन्य प्राणियों जैसे संकटों का उसे सामना करना पड़ता है। अल्प साधनों के सहारे उसे प्रस्तुत होने वाले हर संकट से जूझना पड़ता है। प्रमुख समस्या सामने आती है प्रकृति विपदाओं से अपनी सुरक्षा किस प्रकार की जाय ? आहार की व्यवस्था कैसे जुटाई जाय ? थोड़ी भी असतर्कता उसे मृत्यु के मुँह में धकेल सकती है। अस्तु उसे पूरी जागरूकता का परिचय देना पड़ता है।

प्रशिक्षण में कितने ही प्रकार के अभ्यास कराये जाते हैं ? अल्प आहार में अधिक से अधिक दिन तक कैसे जीवित रहा जा सकता है ? यह कष्टसाध्य अभ्यास हिमालय के विभिन्न क्षेत्रों में करना पड़ता है। जल के अभाव में कुछ दिनों तक जीवित रहने की क्षमता के विकास के लिए चालक को भीषण तापक्रम वाले रेगिस्तानी इलाकों में छोड़ दिया जाता है। थोड़ी-सी पानी की मात्रा उसके साथ होती है। उसके सहारे उसे अधिक से अधिक दिनों तक मरुप्रदेशों में गुजारा करना पड़ता है। पैदल ही उसे तपते हुए सैकड़ों मील की दूरी तय करके सेना के पड़ाव तक पहुँचना पड़ता है।

बीहड़ जंगलों में उसे प्रशिक्षण काल में छोड़ दिया जाता है, यह परखने के लिए कि अविज्ञात क्षेत्रों से वह अपनी रक्षा करते हुए किस प्रकार निकल सकता है ? थोड़े-से खाद्यान्न और पानी के सहारे वह बीहड़ों में कई दिनों तक भटकता हुआ सुरक्षित स्थान पर पहुँचने के लिए मार्ग ढूँढ़ता है। उसे कितनी बार शेर, बाघ तथा जंगली हाथी जैसे हिंसक जीवों का सामना करना पड़ता है। वनों की बीहड़ता से निकलने के लिए उसे अपने मनोबल एवं साहस का पूरा-पूरा परिचय देना पड़ता है। हिमाच्छादित प्रदेश में रहने का अभ्यास और भी अधिक कष्ट साध्य है। शून्य डिग्री से भी नीचे तापक्रम में शरीर को रहने के लिए अभ्यस्त करना एक कठोर परीक्षा की अवधि होती है। शारीरिक एवं मानसिक क्षमता को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निखारने एवं समर्थ बनाने वाली शिक्षण की इन प्रक्रियाओं से होकर गुजारने के बाद शिक्षार्थी को उत्तीर्ण घोषित किया जाता है। इस अवधि में उसकी मनोभूमि इतनी दृढ़ बन जाती है कि हर प्रकार के संकट, चुनौतियों का सामना वह कर सके।

यों तो कुछ असामान्य कर जाने की ललक अधिकांश व्यक्तियों में होती है पर विरले होते हैं, जो अपनी विशिष्टता का प्रमाण दे पाते हैं। अन्यथा बहुतेरे मात्र काल्पनिक उड़ानें भरते हैं। अभीष्ट स्तर का साहस न जुटा पाने, पुरुषार्थ का परिचय न दे पाने के कारण कुछ कर दिखाने की मुराद उनकी कभी पूरी नहीं हो पाती। जैसे-तैसे वे जीवन के दिन गुजारते और अतृप्त इच्छा लिए हुए इस दुनिया से चल देते हैं।

कुछ ऐसे भी होते हैं जिन्हें खाने, कमाने के ढर्रे का जीवन नहीं रुचता। बिना कुछ असाधारण काम किये चैन नहीं पड़ता। भीतर का जीवन विशेषकर गुजरने के लिए उछाल मारता है। साधनों की प्रतिकूलता में भी वे चल पड़ते हैं अपने दुस्साहस का परिचय देते हैं। साहस की धनी प्रतिभाएँ जिधर भी चल पड़ती हैं, अपने एकाकी बलबूते भी चमत्कारी स्तर की सफलताएँ अर्जित कर लेती हैं। उनके प्रचण्ड पुरुषार्थ के समक्ष प्रतिकूलताओं को भी नत मस्तक होना पड़ता है। उनका प्रयास उस मछली की तरह होता है, जो नदी की प्रचण्ड धारा को उल्टी दिशा में चीरती हुई चली जाती है। रोमांचक साहसिक अभियान ऐसे ही पुरुषार्थी पूरा कर पाने में सफल होते हैं।

जैकी टेरी नामक एक व्यक्ति ने इंगलिश चैनल को साइकिल द्वारा पार करने का निश्चय किया। अनेकों व्यक्तियों ने तैरकर तो चैनल को पार किया था, पर साइकिल से पार करना संकटों से भरा हुआ था। थोड़ा भी सन्तुलन गड़बड़ा जाने से मृत्यु की गोद में जा पहुँचने का खतरा था। उसने विशेष प्रकार की साइकिल बनावाई, जिसके पहिये रबर टायर के थे। साइकिल के डूबने का खतरा तो नहीं था, सन्तुलन बनाये रखना अत्यन्त कठिन कार्य था। टेरी को डोवर (यू. के.) नामक स्थान से कैलाइस (फ्रांस) तक पहुँचना था। साइकिल लेकर वह चल पड़ा। तीव्र प्रवाह में वह कितनी बार गिरते-गिरते बचा पर उसने हिम्मत नहीं हारी। मात्र आठ घण्टे में चैनल के दूसरे किनारे पहुँचकर एक नया और अद्‌भुत कीर्तिमान स्थापित किया।

अधिकांश व्यक्ति बुढ़ापे को जीवन का अभिशाप समझते हैं। ऐसी मान्यता है कि साहस, उमंग और उत्साह की विशेषताएँ युवावस्था तक ही रहती हैं। शरीर भी प्रायः अशक्त हो जाता है। पर इस मान्यता को झुठलाने वाले कितने ही व्यक्ति हुए हैं ? विलिम विलियस नामक व्यक्ति के जीवन का उत्तरार्ध पक्ष ऐसे अभियानों को पूरा करने में खपा, जो अत्यन्त खतरनाक थे। ६१ वर्ष की आयु में उसके मन में विचार आया कि कुछ नये प्रकार का कार्य किया जाय। सात लकड़ी के लट्ठों से बने अस्थायी पोत से पेरु (दक्षिण अमेरिका) से समीमोआ (प्रशान्त महासागर) की यात्रा करने के लिए वह अकेला चल पड़ा। साथियों, सम्बन्धियों ने उसे इस संकट युक्त अभियान के लिए रोका, कितनों ने उसे पागल करार दिया तथा यह कहा कि 'विलिस' अपनी मृत्यु स्वयं आमन्त्रित कर रहा है। पर एक बार निश्चय कर लेने के बाद कोई उसे डिगा नहीं सका। साथी के नाम पर उसने मन बहलाने के लिए एक बिल्ली और एक तोते को अपने साथ ले लिया। मार्ग में कितने ही अवरोध आये ? समुद्र की तूफानी लहरों के बीच लकड़ी के गठ्ठर की नाव को डूबने से बचा लेना विशेष सूझ-बूझ और हिम्मत की बात थी। हर अवरोध को चीरते हुए उसने छः हजार सात सौ मील की लम्बी दूरी मात्र एक सौ बारह दिन में पूरी की।

प. जर्मनी का पीटर नारमैन सत्तर वर्षीय वृद्ध अपनी गोताखोरी के कमाल के लिए प्रख्यात था। खोई वस्तुओं को समुद्र से ढूँढ़ने में उसे विशेष दक्षता प्राप्त थी। इस आयु में सोने-चाँदी से भरे एक अँग्रेजी पोत के समुद्र में डूब जाने पर उसने गोताखोरी के ग्रुप का नेतृत्व किया। अपने प्रयत्नों से उसने इस विपुल सम्पदा का पता लगा लिया, जो समुद्र में डूब गई थी। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में उसकी साहसिक ख्याति पूरे जर्मनी में फैल गई। समुद्र के गर्भ में समाई सम्पदा को ढूँढ़ने पर उसे एक बड़ी रकम पारितोषिक के रूप में प्राप्त हुई।

गोताखोरी के इतिहास में फ्रांसीसी गोताखोर अलैक्जैण्डर लैम्बर्ड का नाम उल्लेखनीय है। उसने अकेले ही कैनेरी द्वीप से कुछ दूर ध्वस्त हुए स्टीमर 'अल्फेन्मो' का एक सौ बासठ फीट नीचे पानी में जाकर पता लगाया। स्टीमर में सोने की सिल्लियाँ भरी थीं। निरन्तर ग्यारह दिन तक वह प्रतिदिन तीन के हिसाब से गोता लगाता रहा। हर बार वह पाँच मिनट से लेकर दस मिनट तक पानी के भीतर रहकर सोने की ईंटों को खोजता था। इस तरह उसने अपने दुस्साहस का परिचय देकर लगभग साढ़े तीन लाख डालर से भी अधिक कीमत का सोना प्राप्त करने में सफलता पाई।

भोजन और पानी जैसे न्यूनतम साधन तो हर व्यक्ति को जीवित रहने के लिए चाहिये। फ्रांस के एक चिकित्सक डॉ. एलेन वाम्बर्ड ने अत्यन्त जोखिम भरा निर्णय लिया, अपने साथ कुछ भी खाने-पीने योग्य वस्तुएँ न लेकर उसने निश्चय किया कि प्रकृति के आँचल में जो कुछ भी मिल जायेगा, उसके सहारे ही वह अटलांटिक महासागर पार करेगा। एक छोटी-सी नौका को लेकर वह चल पड़ा गन्तव्य की ओर। उसे कैनेरीज से बारबेडोस तक की लम्बी दूरी तय करनी थी। पैंसठ दिन तक वह समुद्री यात्रा पर रहा। समुद्र का खारा पानी स्वास्थ्य के लिए हानिकारक माना जाता है पर वह उसी पानी का सेवन करके जीवित रहा और अन्ततः अपने लक्ष्य तक पहुँचने में सफल रहा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शून्य डिग्री से नीचे तापक्रम पर पानी बर्फ के रूप में जमने लगता है। ऐसे अनेकों बर्फीले प्रदेश हैं, जहाँ वर्ष के बारहों माह बर्फ जमी रहती है। विशेष ऊँचे पहाड़ के शिखरों पर भयंकर ठण्डक पड़ती है। सामान्यतया नंगे पैर उन शिखरों पर आरोहण मुश्किल ही नहीं प्रायः असम्भव माना जाता है।जर्मनी के फ्रिट्ज सीगेल ने इस असम्भव को सम्भव कर दिखाया। सन् १९३२ के जुलाई माह में उसने वह ऐतिहासिक चढ़ाई की। जर्मनी के 'जग्स पट्स' शिखर की ऊँचाई नौ हजार सात सौ अट्ठाइस फीट है। शरीर को गला देने वाली ठण्ड को भी उसने अपने जीवट और मनोबल के सहारे सहन किया। पैर तो जख्मी हो गये पर उसकी यात्रा रुकी नहीं। नंगे पैर उस उच्च शिखर पर पहुँचकर 'सीगेल' ने एक अनौखा कीर्तिमान स्थापित किया।

घुड़सवारी का वह बेमिशाल प्रदर्शन था। माउण्ट गैम्बियर आस्ट्रेलिया के एडैमलिण्ड से जॉर्डन नामक व्यक्ति को साढ़े चार फुट ऊँची बाड़ के ऊपर से एक पतली ऐसी कगार पर कूदना था, जहाँ मुश्किल से खड़े होने भर की जगह थी। वह एक चट्टान का किनारा था। चट्टान से फिसलने का अर्थ था—नीचे तीन सौ फुट गहरी खाई में जा गिरना। इस रोमांचक प्रदर्शन को देखने के लिए अपार भीड़ जमा थी। ऐसा लगता था कि सबकी आँखें थम गई हों। किसी को यह विश्वास नहीं था कि जॉर्डन को इस खतरनाक काम में सफलता मिलेगी, कमजोर मनोभूमि के दर्शकों ने सीटी बजते ही अपनी आँखें बन्द कर लीं। अर्जुन के लक्ष्यवेधी बाण की तरह उसने घोड़े पर बैठकर छलाँग लगा दी और ठीक उस स्थान पर गिरा जहाँ से मृत्यु का मार्ग आरम्भ होता था। घोड़े ने भी सन्तुलन बनाने के लिए अपने शरीर को चट्टान पर पहुँचते ही तिरछा कर लिया। दर्शकों की हर्षध्वनि वातावरण में गूँज उठी। यह अदम्य साहस की एक अनौखी घटना थी, जिसका रिकार्ड आज भी आस्ट्रेलिया में मौजूद है।

नंगे पैर हिमाच्छादित शिखरों पर चढ़ने वाले साधारण से व्यक्ति हेनरी ड्यूक का नाम भी दुस्साहसियों की शृंखला में आता है। ड्यूक का वह आरोही जब बरफ से ढके आल्पस पर्वत को पार करने चलने लगा तो सत्रहवीं सदी के स्थानीय सम्राट ने उसे इस जोखिम से भरे कार्य के लिए स्पष्ट मना किया। पर उसने राजा की भी अवहेलना कर दी। अकेले ही वह हिमाच्छादित प्रदेश की यात्रा करता रहा। राजा का आदेश उल्लंघन करने के कारण वह पुनः अपनी जन्मभूमि पर नहीं लौट सका। भयंकर शीत में बर्फ पर नंगे पैर पहाड़ी इलाके से होते हुए वह पेरिस, फ्रांस से रोम और फिर इटली जा पहुँचा। थोड़े दिन विश्राम लेने के बाद उसने आल्पस पर्वत पर चढ़ाई आरम्भ की। आल्पस को लाँघते हुए वह इटली से 'रिवोली' पहुँच गया। जीवन के अन्तिम दिनों तक वह रिवोली में ही रहा। साहसियों के इतिहास में ड्यूक का नाम आज भी लिया जाता है।

एक पारसी सन्त अबुल कासिम जोनिट ने अपने जीवनकाल में मक्का की तीस बार यात्रा की। हर बार वह पैदल चला। उसने कुल ८२ हजार ६ सौ मील की दूरी तय की। अन्तिम यात्रा विशेष कष्ट साध्य थी। यह निश्चय करके वह चला कि मक्का की अन्तिम यात्रा की अन्तिम १४ सौ मील की दूरी पूर्णतया घुटनों के बल चलकर पूरी करेगा। अपने संकल्प के प्रति वह दृढ़ था। इस प्रयास में उसके घुटने जख्मों से भर गये पर अन्तिम क्षण तक उसने अपना संकल्प नहीं छोड़ा। मक्का पहुँचने में वह सफल हो गया।

गुब्बारे से उड़ान भरना आज उतना खतरनाक नहीं रहा जितना कि एक सदी पूर्व था। कारण है कि तब आज जितना तकनीकी ज्ञान का विकास नहीं हुआ था। सैण्टोस डुमीण्ट फ्रांस का पहला व्यक्ति था जिसने एक गुब्बारे का आविष्कार किया था। १९०१ में उसने गुब्बारे से उड़ान का एक सफल प्रदर्शन किया। एफिल टावर के इर्द-गिर्द वह गुब्बारे के सहारे उड़ता रहा। इस अनौखे प्रदर्शन के लिए उसे इनाम की एक बड़ी राशि प्राप्ति हुई। पर उसने उस सम्पत्ति को समाजसेवी संस्थाओं में वितरित कर दिया। तब से उसने समाज सेवा का एक नया मार्ग ढूँढ़ निकाला। वह गुब्बारे की उड़ान का जगह-जगह प्रदर्शन करता। फलस्वरूप उसे पारितोषिक में अपार धनराशि मिलती, जिसे वह मनुष्य जाति के कल्याणकारी कार्यों में मुक्त हस्त से लगा देता। उस सम्पत्ति से डुमोंण्ट ने अनेकों गिरजाघरों का निर्माण कराया।

'दैट इज इनक्रैडीबल' पुस्तक में एक रोमांचक घटना का उल्लेख है। ६ मार्च, १९८० को कोलोराडो नामक नगर में एक प्रदर्शन को देखने के लिए विशाल जन-समूह एकत्रित हुआ। अर्कनास नदी से हजारों फुट ऊँचाई पर एक छोर से लेकर दूसरे छोर तक मोटी रस्सी बाँध दी गई। एक हजार फीट लम्बी रस्सी को हाथों से पकड़कर नदी के दूसरी ओर पहुँचना था। इस रोमांचक प्रदर्शन का हीरो था डेविड किर्क। धरातल से सौ मीटर ऊँचाई पर बँधी रस्सी को किर्क ने सीढ़ी के सहारे चढ़कर पकड़ लिया। दर्शकों की श्वाँस की गति डर के मारे तेज हो गई पर किर्क के लिए जैसे वह कार्य खेल का रिहर्सल हो इस ढंग से उसने अपना प्रदर्शन आरम्भ किया। थोड़ी-सी असावधानी से रस्सी छूट सकती थी, जिसके फलस्वरूप हजारों फुट गहरी नदी में गिरने का खतरा था। इस खतरनाक प्रदर्शन में किर्क पूर्णतया सफल रहा। एक किनारे पर कुछ ही मिनटों में पहुँचकर डेविड ने यह सिद्ध कर दिया कि साहसियों के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। हिम्मत हो तो वह कार्य कर दिखाया जा सकता है, जो प्रायः दूसरे सामान्य व्यक्तियों के लिए असम्भव माने जाते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ध्रुव प्रदेशों को अगम्य माना जाता रहा है। अत्यधिक शीत से भरा हिमाच्छादित यह क्षेत्र निर्वाह के साधनों की दृष्टि से रहने योग्य नहीं है। इतने पर भी साहस के धनी 'एडवेंचर' को ही पसन्द करने वाले लोग वहाँ जा ही पहुँचे और वहाँ रहकर अपनी पृथ्वी की गतिविधियों, भौगोलिक जानकारियों सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनायें ला सकने में सफल हुए हैं। ध्रुव अभियान कितने कठिन हैं, इनकी कल्पना करने मात्र से रोमांच हो उठता है। पर मानवी दुस्साहस तो अजेय शक्ति है। वह असम्भव को सम्भव बनाती रही है। यह मनुष्य का पराक्रम ही तो है, जिसने ध्रुवीय क्षेत्र में जा पहुँचने, रहने और काम करने की कठिनाइयों को भी सरल बना दिया है और वैज्ञानिक अब वहाँ डेरा डालकर रह रहे हैं। जीव-जन्तुओं में विद्यमान बायोलॉजिकल क्लॉक, मौसम के जीव चेतना पर प्रभाव, पृथ्वी चक्र की परिक्रमा के साथ चुम्बकीय उतार-चढ़ाव, ध्रुव स्थानों पर विद्युतीय चुम्बकीय बल आदि सम्बन्धी खोजें इन्हीं साहस के धनी संकल्पवानों के बलबूते ही पाई हैं।

दक्षिण ध्रुव पर सबसे पहला शोधकर्त्ता नार्वे का रोनाल्ड एमण्डसन अपने चार साथियों सहित सन् १९०७ में पहुँचा था। उसे रोवर स्कॉट के रूप में एक सहयोगी भी बाद में मिला। ८ लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैली दस हजार फुट मोटी बर्फ की चादर से ढके, नितान्त नीरव इस स्थान पर कोई हौसले वाला ही टिक सकता है। यह दल लगातार दस वर्ष तक वहीं पड़ा सीमित साधनों में निर्वाह कर विविध प्रकार के अनुसन्धान करता रहा।

उत्तरी ध्रुव क्षेत्र का पर्यवेक्षण करने के लिए सन् १९६१ में अमेरिकी वैज्ञानिकों ने अलास्का में एक तैरती प्रयोगशाला स्थापित की। दो मील लम्बा, डेढ़ मील चौड़ा, ६० फुट मोटा एक हिमखण्ड उस क्षेत्र में इन वैज्ञानिकों ने तैरता पाया, जो अलास्का से १३० मील उत्तर में था तथा ग्रीनलैण्ड की ओर तैरता जा रहा था। उस पर इन वैज्ञानिकों ने अड्डा जमाया और ऐसी झोपड़ियाँ खड़ी कीं, जो ७० मील की गति से चलने वालों अन्धड़ों का दबाव बर्दाश्त कर सकें। मैक्स डीवर इस शोध के संचालक थे। एक अस्थाई जेनरेटर से विद्युत की व्यवस्था बनाई गई। हिमद्वीप पर इस सवारी मण्डल ने चार वर्ष तक यात्रा की। तैरते-तैरते ७५०० मील का सफर पूरा कर इस द्वीप ने अपनी यात्रा ग्रीनलैण्ड और आइसलैण्ड के बीच डेनमार्क की खाड़ी में उत्तरी ध्रुव के समीप समाप्त की। यहाँ बर्फ गलकर धीरे-धीरे समाप्त हो गयी। शोध-संस्थान को भी इस पर से अपना डेरा उठाना पड़ा पर इस बीच वे जो जानकारी इस 'तैरते द्वीप' से लेकर आये थे, उसने भूगोल, विज्ञान, परिस्थिति तथा भूगर्भ विज्ञान को कई नयी दिशायें दीं तथा पुरानी मान्यताओं में परिवर्तन किया। ३५ वर्षीय जान्सटन को तो वह द्वीप इतना सुहावना लगा कि जब इस द्वीप को छोड़ रहे थे। वह प्रकृति की लीला जगत का हतप्रभ हो अवलोकन कर रहा था और गलते हिमखण्ड के साथ उसने भी हिम समाधि ले ली।

आज तो सुविधा-साधन बहुत हैं। इन बीस वर्षों में विज्ञान ने जो प्रगति की है, उससे वातानुकूलित यान, आइसस्कूटर्स व ध्रुवीय परिस्थितियों के लिये ही विशेष रूप से बनाये गये। विशेष तापयुक्त मकान भी प्रयोगशालाओं को उपलब्ध हैं। कई दल वहाँ महीनों डेरा डाले पड़े रहते हैं। पर उनका बलिदान भुलाया नहीं जा सकता, जिन्होंने इस खोज में साधनों के बिना अकेले पुरुषार्थ कर दिखाया और जान की बाजी लगी दी।

जो अपनी सहायता करने को तत्पर हों, उन्हें कोई नहीं रोक सकता

दिन-रात की तरह अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियाँ सभी के सामने आती रहती हैं। सामान्य व्यक्ति अनुकूल परिस्थितियों में तो हर्ष मनाते और विपरीतताओं के आने पर खिन्न हो जाते हैं। प्रतिकूलताओं से जूझने के बजाय वे अपना धैर्य खोते और निराश होते देखे जाते हैं। परन्तु आत्मविश्वासी, निष्ठा के धनी, अध्यवसायी व्यक्ति विषम परिस्थितियों को वरदान स्वरूप समझते हैं, जिन्हें साधारण आदमी अभिशाप मान बैठते हैं। संसार में सफलताएँ उन्हीं को मिली हैं, जिन्होंने अपनी लगन, प्रयत्नशीलता और आत्मविश्वास के सहारे कठिन से कठिन परिस्थितियों पर विजय पाई। कठिनाइयों का उन्होंने उस सान के पत्थर की तरह उपयोग किया, जिसे चाकू, कैंची आदि औजारों को तेज करने में प्रयोग किया जाता है। प्रतिकूल परिस्थितियों की वे प्रखरता बढ़ाने का उपयुक्त अवसर समझते हैं। ऐसे सैकड़ों व्यक्तियों के उदाहरण दुनिया में भरे पड़े हैं, जिन्होंने न केवल विषम परिस्थितियों में अपना मानसिक सन्तुलन बनाये रखा वरन् प्रकृति के अभिशापों के बावजूद भी वह कर दिखाया जो सामान्य व्यक्ति सब कुछ होने पर भी नहीं कर पाते।

कुछ वर्ष पूर्व एक रूसी पत्रिका ने 'गुगो पेटर्स' नामक लँगड़े विमान चालक के साहस का वर्णन प्रस्तुत किया था। गूगो बचपन में ही अपने संगी-साथियों और घर-परिवार के लोगों से कहा करता कि वह 'पाइलेट' बनेगा। किन्तु परिस्थितियों ने उसे 'ट्रैक्टर चालक' के कार्य में लगा दिया। लोग उसका उपहास करते तो भी वह यही कहता—"एक न एक दिन मैं पायलेट अवश्य बनूँगा और ट्रैक्टर के स्थान पर हवाई जहाज चलाऊँगा।"

परन्तु कुछ ही दिनों बाद वह अचानक ट्रैक्टर के नीचे आ गया, उसकी एक टाँग बेकार हो गई, उसे कटवा देना पड़ा। पर गूगो फिर भी मुस्कराते हुए कहता कि 'गूगो परिस्थितियों से हार मानने वाला नहीं है।'

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ महीनों में वह ठीक हो गया और 'कार-ड्राइविंग' सीखकर कार चलाने लगा। अधिकांश लोगों को तो पता भी नहीं चल पाता कि गूगो की एक टाँग कृत्रिम है। उसके मन में 'पायलेट' बनने का बीज ज्यों का त्यों विद्यमान तो था ही—अवसर पाकर उसने हवाबाजी के क्लब में मेकेनिक का कार्य करना प्रारम्भ कर दिया और धीरे-धीरे वायुयान चालक बनने के प्रयास भी शुरू कर दिये। किन्तु डाक्टरी परीक्षण में सफल होने में उसकी एक टाँग बाधक हो रही थी।

पर सच्ची उत्कृष्ट अभिलाषा जहाँ भी होती है वह अपना रास्ता भी बना लेती है। गूगो ने 'चेल्याविंस्क' से मास्को में पहुँचकर हवाबाजी के केन्द्रीय चिकित्सा आयोग के डा. ग्रिगोरी ग्राइफर से 'विमान-चालक' का कार्य करने की अनुमति भी प्राप्त करली। यह 'गूगो पेटर्स' के अडिग विश्वास, अटूट निष्ठा और अथक प्रयासों का ही परिणाम था, उसके मित्र उसे 'उड़ता होल्डर' कहकर सम्बोधित करने लगे।

यह तो उस व्यक्ति की निष्ठा एवं लगन का प्रसंग है, जिसने एक टाँग के न होने पर भी विमान चालक बनने की अपनी चाह अन्ततः पूरी कर ही दिखाई। चीन के प्रसिद्ध चित्रकार 'होनेएकनान' के बचपन में ही न तो हाथ रहे और न पाँव। सामान्यतः हाथ-पैर विहीन बालक परिवार एवं समाज की कृपा पर ही जीवित रह सकता है परन्तु होनेएकनान ने इस धारणा को निराधार सिद्ध करके दिखा दिया।

इस विकलांग पर साहसी बालक ने वर्षों तक अभ्यास करके मुँह में पेन्सिल दबाकर चित्र बनाने में सफलता अर्जित कर ली और लोगों को यह दिखला दिया कि मनुष्य उपलब्ध साधनों से ही बहुत कुछ कर सकता है। पेन्सिल से चित्र बनाने के उपरान्त जीभ से बुश का काम लेता है, मुँह में रंग भरकर पेन्टिंग करता। इस प्रकार अपंग होकर भी होनेएकनान ने चीन के चित्रकारों में अद्वितीय स्थान पाने का गौरव प्राप्त किया। उसने दुर्भाग्य का रोना कभी नहीं रोया।

ऐसा ही एक उदाहरण एक अमेरिकी सिपाही का है। अमेरिका के 'कन्सास' नगर का बहादुर सैनिक 'विलियन मैकफर्सन' युद्ध में लड़ रहा था। युद्ध में उसकी दोनों आँखें चली गईं। बम-विस्फोट की चपेट में आ जाने से दोनों पैर बेकार हो गये और हाथों से भी हाथ धो बैठा। फिर भी वह साहसी सैनिक जीवन से निराश नहीं हुआ, वरन् यही कहता कि जब तक उसका मन स्वस्थ है, तब तक वह हर प्रकार की कठिन परिस्थितियों से संघर्ष करता रहेगा।

उसने सोचा कि हाथ-पाँव भले ही नहीं रहे, मस्तिष्क तो सही-सलामत है। उसने ज्ञान-साधना करने का निर्णय किया। इसके लिए चाहिये था गहन अध्ययन चिन्तन। आँखों की बात तो बहुत दूर थी, पुस्तक तक वह नहीं पकड़ पाता था। परन्तु 'जहाँ चाह वहाँ राह' वाली उक्ति को चरितार्थ करने वाले मैकफर्सन ने अपना अध्ययन का निर्णय अटल रखा। सुनकर व बोलते हुए दुहराकर उसने पढ़ना सीख लिया और थोड़े ही दिनों में इतना निपुण हो गया जितना कि एक सामान्य साक्षर मेट्रोकुलेट को आवश्यकता होती है।

सफलताओं-असफलताओं में बाह्य परिस्थितियों का उतना योगदान नहीं होता, जितना स्वयं की मनःस्थिति का। सन्तुलन, धैर्य, साहस, उत्साह और जीवन के प्रति आशावादी दृष्टिकोण बना रहे तो प्रतिकूल से प्रतिकूल और गई-गुजरी परिस्थितियों में भी आगे बढ़ने के लिए मार्ग निकाला जा सकता है। इसके विपरीत अपना दृष्टिकोण निराशावादी हो तो अनुकूलताएँ भी प्रगति में सहायक नहीं हो पातीं और कितने ही सफलता के स्वर्णिम अवसर देखते ही देखते निकल जाते हैं। किसी भी क्षेत्र में सफलता अर्जित करने के लिए मूलतः सिद्धान्त यही है।

कितने ही व्यक्ति इस फिराक में रहते हैं कि अमुक तरह की अनुकूलताएँ उपलब्ध हों तो अभीष्ट दिशा में कदम उठाया जाय। ऐसे व्यक्तियों को प्रायः जीवनपर्यन्त निराश ही रहना पड़ता है क्योंकि अपने आप ऐसा संयोग शायद ही कभी बैठ पाता है जब बाहरी परिस्थितियाँ निर्धारित लक्ष्य की ओर अग्रगमन में सहयोग देने के लिए हाथ बाँधे तैयार खड़ी हों। असफलताओं का, परिस्थितियों का रोना रोते रहने वालों को उन व्यक्तियों से प्रेरणा लेनी चाहिये, जो घोर विपन्नताओं में जन्मे। प्रकृति ने उन्हें शारीरिक दृष्टि से अक्षम बनाकर उनका उपहास किया और विपत्तियों की शृंखला में एक कड़ी और जोड़ दी। मुक्त कण्ठ से मनोबल, संकल्प बल के धनी इन सत्साहसी व्यक्तियों की सराहना करनी होगी, जिन्होंने प्रकृति प्रदत्त अभिशाप को भी वरदान मानकर गले लगाया और घोर अन्धकार में टिमटिमाते दीपक की भाँति प्रतिकूलताओं को चीरते हुए आगे बढ़ते गये।

(अमेरिका) के अलवामा राज्य के टस्कानिया नामक स्थान में जन्मी हेलनकेलर जब ६ माह की थी तभी कुदरत ने एक क्रूर मजाक किया। मस्तिष्क ज्वर में यह अबोध बालिका अपनी नेत्र ज्योति और श्रवण क्षमता दोनों ही गँवा बैठी। विकास की प्रारम्भिक अवस्था में होने के कारण बहरे होने के साथ गूँगेपन का एक अतिरिक्त श्राप भी जुड़ गया। पर इस बालिका ने जीवन के प्रति आशा की ज्योति को बुझने नहीं दिया। सोचने-समझने योग्य होते ही वह आशावादी सपने सँजोने लगी। उसने सोचा वह समाज के ऊपर भार बनकर नहीं, दीन-हीन के रूप में नहीं स्वावलम्बी बनकर जीयेगी। प्रतिभा संवर्धन के लिए वह दिन-रात एक कर देगी और संसार को यह बता देगी कि देखो ! शारीरिक अक्षमता विकास में बाधक नहीं बन सकती।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपने संकल्प को साकार करने में वह तन-मन से पूरी तत्परतापूर्वक जुट पड़ी। कहावत है कि भगवान भी उन्हीं की सहायता करता है, जो अपनी सहायता के लिए स्वयं सचेष्ट रहते हों। लगन, निष्ठा और असाधारण उत्साह की धनी इस गूँगी, बहरी और अन्धी बालिका के लिए ईश्वरी वरदान के रूप में सहचरी मार्गदर्शिका बनी ''कुमारी मैन्सफील्ड''। डा. होवे द्वारा आविष्कृत सांकेतिक प्रणाली के माध्यम से उन्होंने 'केलर' को पढ़ना-लिखना सिखाया। धीरे-धीरे केलर का गूँगापन कुछ सीमा तक दूर हो गया। वह भावाभिव्यक्ति में सक्षम हो गई। अनवरत् अध्यवसाय के बलबूते वह ग्रीक, लैटिन जैसी अनेकों भाषाओं की विशेषज्ञ बनी। गणित और दर्शन जैसे गूढ़ विषयों में प्रवीणता हासिल कर उसने अपनी प्रखरता का परिचय दिया।

हेलन केलर की प्रतिभा को देखकर सुप्रसिद्ध साहित्यकार मार्कट्वेन ने उसे उन्नीसवीं सदी का मानवीय चमत्कार कहा। जब कोई हेलन की विलक्षण प्रतिभा को देखकर आश्चर्य व्यक्त करते तो वह यही कहती है कि ''मुझे अपनी प्रगति पर तनिक भी आश्चर्य नहीं है। यह सब आशा, लगन, उत्साह और मनोबल का चमत्कार है।''

बिलासपुर (म. प्र.) के एक युवक समीर कुमार घोष ने बी. ए. की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पैर के अँगूठे से लिखकर पास की। आठ वर्ष की आयु में ही वह एक दुर्घटना में दोनों हाथ गँवा बैठे। पर उन्होंने हार नहीं मानी। पैर के अँगूठे से लिखने का अभ्यास करते रहे। बी. ए. की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कर उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि शरीर की अक्षमता, अपंगता सफलता में बाधक नहीं बन सकती। अभी आगे उन्हें भी पढ़ने की इच्छा है। उन्होंने इस वर्ष बम्बई के टाटा इन्स्टीट्यूट ऑफ सोशल साइसेन्स में सामाजिक कार्य के दो वर्षीय पाठ्यक्रम में प्रवेश लिया है।

विकलांगता को चलने-फिरने, कठोर श्रम करने दुस्साहसी यात्राएँ करने में बाधक समझा जाता है पर ब्रिटेन के एक पर्वतारोही ने इस मान्यता को झूठा सिद्ध किया, प्रकृति के अन्तराल में बिखरे सौन्दर्य का दर्शन करने का मन कितने ही व्यक्तियों का करता है। विशाल पर्वत-शृंखलाओं में वह सौन्दर्य प्रचुर परिमाण में बिखरा पड़ा है। पर उसका दर्शन तो दुस्साहसी व्यक्ति ही कर पाते हैं। जो इतनी ऊँचाई पर चढ़ने की हिम्मत सँजोते हैं, वे ही प्रकृति की छटा का आनन्द लेते हैं। पर्वतारोहण आदि में दुहरा उद्देश्य होता है, सौन्दर्य का दिग्दर्शन और श्रेय सम्पादन। आये दिन पर्वतारोहियों की टोली इन्हीं उद्देश्यों को लेकर दुर्गम शिखरों पर चढ़ने का दुस्साहस करती हैं। ब्रिटिश नागरिक नीरमन क्राउचर के मन में भी पर्वतारोहण की उमंग उठी। इस उद्देश्य में विकलांगता अवरोध खड़ा कर रही थी पर वे निराश नहीं हुए। एक ब्रिटिश पर्वतारोही टोली के साथ वैशाखी के सहारे वे भी पर्वतारोहण अभियान में चल पड़े। कश्मीर के निकट हिमालय के नून शिखर की चढ़ाई में कितने ही संकटों का सामना करना पड़ा। पर सभी को पार करते हुए वे २२ हजार फुट की ऊँची चोटी पर पहुँचे। अपनी इस सफलता के बाद क्राउचर का इरादा है हिमालय के और भी उच्च शिखरों पर आरोहण करने का।

ऐसा ही एक दुस्साहसी उदाहरण प्रस्तुत किया—पैराडाइस, वाशिंगटन के नौ विकलांग पर्वतारोहियों ने। शंकर जी की बारात की भाँति इनमें से पाँच नेत्रविहीन थे, दो की कृत्रिम टाँगें थीं। एक की टाँग मुड़ी हुई थी और दो गूँगे, बहरे तथा हाथों से रहित। इन नौ विकलांगों ने पर्वतारोहण का निश्चय किया। स्थानीय व्यक्तियों ने आरम्भ में उनके इस संकल्प का मजाक उड़ाया पर मनोबल के धनी इन व्यक्तियों ने उनके परिहास की ओर ध्यान न दिया और चल पड़े अपने गन्तव्य को।

चढ़ाई शुरू हुई। लक्ष्य था साढ़े चार हजार मीटर ऊँचाई पर उपस्थित पर्वत की चोटी। कितने ही व्यक्तियों ने इनकी शारीरिक स्थिति पर दया दिखाते हुए इस संकट से भरे अभियान के लिए रोका और कितनों ने मार्ग में आने वाले अवरोधों, चलने वाली बर्फीली आँधियों का भय दिखाया पर वे अपने निश्चय पर अडिग रहे। साथ में ब्रैल मानचित्र लेकर चल पड़े। अपंग पर्वतारोहियों की सबसे बड़ी विशेषता थी, उनमें परस्पर आपसी सद्भावना, भाव, स्नेह और सहयोग की। एक साथ चलने, एक साथ जीने-मरने के भाव भरे संकल्प के समक्ष प्रतिकूलताएँ भी नत-मस्तक हो गयीं। कठिनाइयों को झेलते, अवरोधों को चीरते हुए वे निरन्तर आगे बढ़ते गये। ४ जुलाई, १९८१ को उनका आरोहण अभियान पूरा हुआ। साढ़े चार हजार मीटर ऊँचे शिखर पर अन्ततः पहुँचने में यह दल सफल हुआ। शिखर पर पहुँचकर इन्होंने झण्डा फहराया, हर्ष से एक-दूसरे के गले मिले। इस टीम के एक सदस्य २९ वर्षीय 'जस्टिन मेक्डीविट' ने अभियान की सफलता का श्रेय सामूहिक संकल्प शक्ति को दिया।

अपंग, अपाहिज, शारीरिक दृष्टि से अक्षम होते हुए भी ये व्यक्ति विभिन्न क्षेत्रों से सफल और दुस्साहसी कार्य करने में भी समर्थ हो सकते हैं तो कोई कारण नहीं कि जो शरीर से स्वस्थ और मन-मस्तिष्क से समर्थ हैं। अपने निर्धारित लक्ष्य में सफल न हो सके। असफलता का कारण एक ही बनता है कि निश्चित लक्ष्य के प्रति मनोयोग-तत्परता का अभाव। परिस्थितियों को अत्यधिक महत्त्व वे ही देते हैं जिन्हें अपनी आन्तरिक शक्ति पर विश्वास नहीं होता। बाह्य अनुकूलताएँ अभीष्ट मात्रा में मिलें तो प्रगति के लिए प्रयास करें यह कल्पना मात्र कल्पना ही बनकर रह जाती है। अनुकूलताओं की राह ताकते रहने की अपेक्षा ईश्वर प्रदत्त साधन शरीर और मन-मस्तिष्क के रूप में मिले हैं, उनका ही भली-भाँति सदुपयोग कर लिया जाय तो किसी भी दिशा में सफलता अर्जित कर लेना सम्भव है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्रचण्ड पुरुषार्थ ही एकमात्र अवलम्बन

भाग्य तो पुरुषार्थ की छाया भर है

जिस प्रकार अन्धकार हमें वस्तुस्थिति का सही ज्ञान नहीं होने देता है और उसके प्रभाव से बचने के लिए हमें कृत्रिम प्रकाश की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार अज्ञानरूपी अन्धकार से बचने के लिए, वस्तुस्थिति का सही ज्ञान प्राप्त करने के लिए ज्ञानरूपी प्रकाश की आवश्यकता होती है। अन्धेरे में पड़ी रस्सी हमें साँप के होने की भ्रान्ति पैदा कर देती है। छोटी-छोटी झाड़ियाँ, पेड़-पौधे, रीछ, व्याघ्र तथा भूत-प्रेतों के रूप में हमारे अन्दर भय और आशंका उत्पन्न करने का कारण बन जाते हैं। उसी प्रकार अज्ञान या भ्रान्ति का भय तो सबसे अधिक डरावना एवं घातक माना गया है।

वस्तुस्थिति का सही ज्ञान कराने के लिए ही अध्यात्म का सारा ढाँचा खड़ा हुआ है। इसका मूल उद्देश्य मनुष्य को विवेकशील बनाना है। इस संसार में अच्छाई और बुराई दोनों विद्यमान हैं। यहाँ अच्छे से अच्छे एवं बुरे से बुरे विश्वास एवं रीति-रिवाजों का प्रचलन है। ऐसी परिस्थिति में हमारा कर्त्तव्य हो जाता है कि हम उनके गुण-दोषों का नीर-क्षीर विवेक, बुद्धि से विश्लेषण कर औचित्य के साथ ही अपनी निष्ठा जोड़ें और अनौचित्य का त्याग करें। गुण-दोष का विवेचन कर आत्मोत्कर्ष के लिए प्रयत्न करना ही वेदान्त का प्रथम सूत्र है, **''अथातोऽब्रह्म जिज्ञासा।''**

जो व्यक्ति वास्तविकता या अवास्तविकता को जानने का कष्ट नहीं उठाते, निश्चयात्मक रूप से मानसिक आलस के कारण उनकी भौतिकता एवं विशिष्टता नष्ट हो जाया करती है। इस दासता के बन्धन में जकड़ा हुआ कोई समाज या राष्ट्र पतनोन्मुख ही होगा, विकासशील नहीं।

सैकड़ों वर्षों की पराधीनता ने हमारी बौद्धिक प्रतिभा को नष्ट कर दिया है। विदेशी आक्रमणकारियों ने जहाँ हमारी विपुल सम्पदा लूट-लूटकर अपने घर भरे हैं, वहीं हमारे मनोबल को गिराने के लिए अनेक प्रयत्न किये हैं। वे हमें चिरकाल तक शोषित, पतित एवं पराधीन देखना चाहते थे, फलस्वरूप उनका यह प्रयास सदैव रहा कि हम अपनी संस्कृति को हेय और उपेक्षा की दृष्टि से देखें। इसके लिए उन्होंने समाज में अन्धविश्वास मूढ़-मान्यताओं के प्रचलन के लिए भरसक प्रयत्न किये।

आर्ष ग्रन्थों में जहाँ पग-पग पर आत्म-बोध, आत्म-निर्माण, परमार्थ एवं कर्त्तव्यनिष्ठा का निर्देश दिया गया, वहीं आक्रमणकारी इस प्रकार की भ्रान्तियाँ फैलाने का प्रयास करते रहे कि मनुष्य कुछ नहीं है, वह तो किसी अदृश्य शक्ति के हाथों की कठपुतली मात्र है, जो होनी है, वह होकर रहेगी। पुरुषार्थ का कोई महत्व नहीं।

विचारणीय प्रश्न है कि जब मानवीय पुरुषार्थ का कोई मूल्य नहीं रहा तो कठोर एवं साहसपूर्ण कर्म करने का झंझट कौन उठावे ? हानि-लाभ, जीवन-मरण, यश-अपयश को विधाता के हाथ में सौंप देने पर मनुष्य के भीतर पुरुषार्थ करने की प्रेरणा ही नष्ट हो जाती है। जहाँ वह अपने भाग्य का निर्माता कहा जाता है। अब दैव के हाथों का एक खिलौना मात्र रह गया। कर्मवादी मनुष्य अब भाग्यवादी बनकर निष्क्रियता की ओर बढ़ने लगा है।

कर्मयोग के मार्ग का अवलम्बन कर हमने संसार के अन्य देशों से विद्या, कला-कौशल और विज्ञान की होड़ में विजय प्राप्त की थी। मानव-कल्याण की दिशा में किये गये हमारे प्रयासों की गाथा आज भी सर्वत्र गायी जाती है। अन्याय और अत्याचार से जूझने का हममें अपूर्व उत्साह था। हमारी इन्हीं गाथाओं ने हमें तेतीस करोड़ भारतवासियों को तेतीस कोटि देवता कहलाने का श्रेय दिलाया था। पर आज हम दीन-हीन अकर्मण्य, अविवेकी लोगों की तरह भाग्यवाद को ही सब कुछ मानने लगे। भाग्य ही सब कुछ है ऐसा मानकर चलने वालों को तथा अन्याय, अत्याचार और शोषण का शिकार बनना पड़ा तो इसमें आश्चर्य ही क्या ?

यवन शासनकाल में बलात् धर्म-परिवर्तन किये गये। स्त्रियों की लज्जा खुले आम लूटी गई, कन्याओं का अपहरण हुआ और हमने यह कहकर संतोष की साँस ली कि उनके भाग्य में यही लिखा था, जो होना था सो वही हुआ। यही स्वीकार किया जाना चाहिए कि आक्रमणकारियों ने अपने अन्याय से पीड़ित शोषित लोगों को विद्रोह करने पर उतारू न होने देने के लिए यह भाग्यवाद का सम्मोहन मन्त्र चलाया था। जिस प्रकार 'क्लोरोफार्म' सुँघाकर रोगी को मूर्छित कर देने पर मनचाहे ढंग से निश्चिन्ततापूर्वक उसके किसी भी अंग को काट-छाँट किया जा सकता है, उसी प्रकार इस भाग्यवादी

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विचारधारा ने अन्याय और शोषण के प्रति हमें मूर्छित कर दिया। तथाकथित विद्वान और पण्डितों ने भी संस्कृत भाषा में लिखे श्लोकों के उद्धरण दे देकर तथा प्राचीन मनगढ़न्त कथा, उपाख्यानों को सुना-सुनाकर भोली-भाली जनता को इस भाग्यवाद की मूर्च्छना में सोते रहने के लिए विवश किया।

पुरोहित एवं आचार्यों को भी अपनी जीविका के लिए राज्याश्रित होने के कारण शासक की मर्जी को शास्त्रसम्मत सिद्ध करने के प्रयास में लगा रहना पड़ा। भीष्म पितामह और द्रोणाचार्य जैसे मनीषियों को दुर्योधन के अन्न के प्रभाव से अनीति का समर्थन करना पड़ा, तब सर्वसाधारण की तो बात ही क्या ? ''अतः नृशंस शासक यदि क्रूरता का व्यवहार करते हैं, कन्याओं का बलात् अपहरण करते हैं तो उन्हें विधि के विधान से ऐसा अधिकार मिला हुआ है और इन परवशों ने अपने पूर्व जन्म में कोई पाप किया होगा, उसी का परिणाम तो भुगतने को मिल रहा है।'' यह मान्यता भाग्यवाद की वह नशीली गोली थी, जिसने हमारे अन्दर अकर्मण्यता पैदा कर विद्रोह, प्रतिरोध की क्षमता ही नष्ट कर दी।

मुगल शासनकाल में ही भावनाशील एवं कर्त्तव्यनिष्ठ मनीषियों को तलवार के घाट उतारा जाता रहा वहाँ कुछ छद्म-वेषी साधु-पण्डितों को खुली छूट भी मिली हुई थी, जो ''दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा'' का प्रचार कर रहे थे। अर्थात् जो दिल्ली का राजा है, वही जगदीश्वर है, उसे सब करने की छूट है, हमें उसका विरोध नहीं करना चाहिए।

जातिवाद की मूढ़-मान्यता भी भाग्यवाद के सहारे अधिक पुष्ट हुई। भाग्य के कारण ही अमुक व्यक्ति को अमुक जाति में उत्पन्न होना पड़ा और उसे जीवनभर नीच कर्म ही करते रहना पड़े। स्त्री को ''पैर की जूती'' मानते रहना भाग्यवाद का ही तो चक्कर है, जबकि आर्ष ग्रन्थों में नर और नारी को समान अधिकार पाने की बात कही गई।

भाग्य को अनुकूल बनाने के लिए ग्रह-नक्षत्रों की पूजा-पाठ का विधान भी 'फलित ज्योतिष' का आधार लेकर खूब पनपा। सैकड़ों ग्रन्थ इस सम्बन्ध में लिखे गये। परन्तु विचारणीय प्रश्न है कि ''करोड़ों मील दूर आकाश में स्थिति ये राहु, केतु, शनि आदि ग्रह किसी व्यक्ति विशेष को क्या ईर्ष्यावश परेशान करते होंगे अथवा उनका सामान्य प्रभाव सब पर पड़ता होगा ? यह कैसे सम्भव है कि उनका प्रभाव एक ही गाँव या घर में रहने वाले अलग व्यक्तियों पर अलग-अलग पड़े और पूजा-पाठ के विधान से उनके प्रभाव को कम कर दिया जावे या बिल्कुल ही रोक दिया जावे ?'' भाग्यवाद के नाम पर चल रही फलित ज्योतिष' भोली-भाली जनता को ठगने का सबसे सरल तरीका है।

यदि भाग्य ही उन्नति-अवनति का कारण रहा होता तो रूस और अमेरिका अपनी गई-गुजरी स्थिति से कैसे मुक्त होकर संसार के सर्वश्रेष्ठ एवं सम्पन्न राष्ट्र बनते और भारत जैसे धार्मिक देश देवी-देवता, ग्रह,-नक्षत्र, राहु, केतु, शनि, की पूजा करता हुआ अपनी अन्ध स्थिति में पड़ा रहता। इस स्थिति पर हमें पुनः विचार करना होगा और बौद्धिक आलस्य को छोड़कर कर्मवाद का मार्ग अपनाना पड़ेगा।

''दैव'' एक बहुअर्थगामी शब्द है, जिसमें सृष्टि की विधि-व्यवस्था उसके नियम-विधानों का समावेश है। व्यक्ति के स्वयं के शुभाशुभ कर्मों के संस्कार, समूह के संस्कार तथा इनकी मिश्रित प्रतिक्रियाएँ, देश-काल की सूक्ष्मताएँ इन सबका विस्तार इतना व्यापक और अनेकरूपी होता है कि सीमित मानव-बुद्धि के लिए उन सबकी सामान्य जानकारी भी सम्भव नहीं, विस्तृत विश्लेषण तो सम्भव हो ही नहीं सकता। इसीलिए दैव को 'अज्ञेय' कहा गया है। अज्ञेय वह है, जिसे पूरी तरह जाना जा सकना सर्वथा असम्भव है। दैवज्ञता का अर्थ होगा अज्ञेयज्ञ। जो स्वयं ही अपनी काट करने वाला शब्द है। संस्कृत में इसे ही ''स्वतोव्याहत'' कहेंगे जो स्वयं ही अपने को आहत कर रहा हो ऐसा शब्द। जो ''दैवज्ञ'' होने का दावा करते हैं। वे ''अज्ञेय'' को जानने का दावा करते हैं। तब वह अज्ञेय कैसे रहा ?

यह सही है कि विश्व-चेतना के गर्भ में विद्यमान सूक्ष्म हलचलों को पकड़कर भविष्य का आभास प्राप्त किया जा सकता है और उसकी ऐसी पूर्व सूचना दी जा सकती है, जो समय होने पर पूरी तरह सही और प्रमाणित सिद्ध हो। किन्तु यह दैवज्ञ होने का प्रमाण नहीं। घटना प्रवाह की बारीक, सूक्ष्म और विश्व-चेतना से सम्पर्क का प्रतिफल है। किन्तु इस घटना प्रवाह के नियामक घटक जड़ नहीं चेतन हैं। अतः उसके भावी स्वरूप के बारे में पूरी तरह निश्चिन्त नहीं रहा जा सकता है। प्रचण्ड चेतन-सत्ता में भिन्न-भिन्न घटक अपने सामूहिक पराक्रम से सामान्य प्रवाह को पूरी तरह उलट-पुलट सकते हैं। तब भविष्य की वह जानकारी जो विश्व-गर्भ में पल रही घटनाओं को जानकर दी गई थी, गलत सिद्ध हो सकती है। यह तो हुई सूक्ष्मदर्शियों की बात। इसका तात्पर्य मात्र इतना ही है कि दैवज्ञ होना किसी के भी लिए सम्भव नहीं है।

सामान्य व्यक्ति तो ऐसी सूक्ष्म दृष्टि से भी वंचित ही रहते हैं। ऐसी स्थिति में उन्हें तो भविष्य के बारे में और भी कुछ मालूम नहीं हो पाता। विडम्बना यह है कि ऐसे ही लोग भविष्य जानने और बताने के लिए आतुर व्याकुल रहते हैं।

इसका यह अर्थ नहीं कि भविष्य की योजनाएँ न बनाई जायें और विगत का लेखा-जोखा न लिया जाय। ऐसा करना तो अत्यन्त आवश्यक है। किन्तु जरूरत दो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बातों की है—(१) योजना और कल्पना का भेद सदा स्मरण रखा जाए। (२) भविष्य का स्वरूप अनिश्चित है वर्तमान निश्चित है, यह स्मरण रखा जाये और अनिश्चित से बहुत अधिक समय उसे दिया जाए, जो निश्चित है, उपलब्ध है।

योजना व्यवस्थित होती है। कल्पना भी व्यवस्थित हो सकती है, पर वह तब तक कल्पना ही कहलाएगी, जब तक साधनों का विचार न कर लिया जाय और कार्य पद्धति निश्चित कर क्रम-निर्धारण न कर लिया जाय। सामान्यतः तो कल्पनाएँ अव्यवस्थित ही होती हैं। पर उन्हें व्यवस्थित कर लेने भर से काम चलने वाला नहीं। योजना की एक विशेषता यह भी है कि उसमें इच्छाओं की परस्पर पूरकता का ध्यान रखा जाता है। अभी पहलवान बनने की योजना बना ली, दूसरे दिन संगीतकार बनने की योजना तैयार होने लगी और अगले दिन दार्शनिक बनने की योजना सामने आ गई इसे योजना नहीं, काल्पनिक उड़ान ही कहा जायेगा। योजना बनाने पर साधनों, परिस्थितियों का गम्भीर विश्लेषण तथा कार्य पद्धति की व्यापक जानकारी आवश्यक होती है। हम जो कुछ करना चाहते हैं, वैसा ही अब तक जिन लोगों ने किया है, उन्हें कौन-कौन-से साधन जुटाने पड़े, किन-किन परिस्थितियों से कैसे-कैसे मुकाबला करना पड़ा और उन परिस्थितियों से वर्तमान का अन्तर कैसा और कितना है ? यह सब जानना-समझना होता है। इस सबके बाद निष्ठा, लगन की तीव्रता-तत्परता अपेक्षित होती है।

उन्नति और प्रगति की आकांक्षा छोड़ देने पर मनुष्य-जीवन का प्रयोजन ही विलुप्त हो जाता है। संकल्पों-महत्त्वाकांक्षाओं से रहित व्यक्ति तो पशुवत् ही हो जायेगा। उस हेतु प्रयास-पराक्रम आवश्यक है। किन्तु उनकी कल्पना और चिन्ता में ही उलझे रहना मानसिक शक्ति का अपव्यय मात्र है। जो शक्ति आनन्द, प्रसन्नता और क्रियाशीलता बनाये रखने के लिए सौंपी गई है, वह काल्पनिक उड़ानों और विभीषिकाओं में ही डूबते-उतराते रहने और इस तरह निष्क्रियता बढ़ाते रहने का आधार बना दी जाय तो इससे बड़ी मूढ़ता और क्या होगी ?

भविष्य का ताना-बाना बुनने का अभ्यास हो जाने पर सम्भावित विफलताओं-विपत्तियों का भास भी मनः क्षेत्र में सजीव होने लगता है। तब चिन्ता-रोग मनुष्य को अपनी लपेट में लेता है और उसे तहस-नहस करने लगता है। यदि सोचने का क्रम ऐसा हो जाए कि कठिनाइयों की ही कल्पनाएँ सताती रहें, तो भयंकर सम्भावनाओं के चित्र सामने आ-आकर दिन-रात भयभीत और परेशान करने लगेंगे। स्पष्टतः इससे खिन्नता, निराशा बढ़ती है और पुरुषार्थ क्षमता घटती चली जाती है। किसी कार्य को आरम्भ करते ही यदि असफलताएँ ही सामने खड़ी दिखने लगीं तो फिर उत्साह शिथिल हो जाने से कार्य-सिद्धि कठिन ही मानी जानी चाहिए।

भविष्य के प्रति हताश होने या काल्पनिक उड़ानें भरने के स्थान पर एक सुनिश्चित योजना बनाकर, उस पर निरन्तर चलते रहना ही सार्थकता-सफलता का मार्ग है। भविष्य की कल्पनाओं में उलझने के पहले वर्तमान परखना-तौलना जरूरी होता है। वर्तमान में अभावों का ही नहीं उपलब्धियों का भी स्मरण चिन्तन करें। यह सुर दुर्लभ मानव-जीवन बहुत मूल्यवान उपलब्धि है। हमें यह प्राप्त हुआ है, जो कल्पवृक्ष और कामधेनु की तरह फलदायी है। इन उपलब्धियों का स्मरण कर मन को प्रफुल्ल रखें तो प्रगति और उन्नति का उत्साह प्रफुल्ल मन में ही उत्पन्न होता है। भविष्य की मृगतृष्णा के पीछे दौड़ने वालों को सदा दूर के भवन ही लुभाते रहते हैं। उन्हें सदा वहीं सौन्दर्य और प्रसन्नता दिखाई देती है, जहाँ वे आज नहीं हैं। पर यह मृगतृष्णा मात्र निरर्थक दौड़-धूप और थकान का ही कारण बनती है। ऐसी दौड़ कभी भी समाप्त नहीं होती, क्योंकि उसका कोई लक्ष्य नहीं होता। निश्चित लक्ष्य के लिए की जाने वाली दौड़ वर्तमान का भली-भाँति लेखा-जोखा करने और अपनी उपलब्धियों का स्मरण कर प्रसन्न रहने से ही सम्भव हो पाती है।

भविष्य में क्या होने वाला है, जो होना निश्चित हो उसी के लिए प्रयत्न करें, इसका अता-पता लगाना हो तो वह परिस्थितियों, आधारों और लक्ष्यों के आधार पर जानने का प्रयत्न करना चाहिए। इस प्रकार की सम्भावनाएँ तथ्यपूर्ण कल्पनाओं के आधार पर ही की जा सकती हैं न कि ज्योतिषियों द्वारा की गई ग्रह गणना के आधार पर। ग्रह-गणित अन्तरिक्षीय व्यवस्था पर प्रकाश डालता है, उससे ऋतु परिवर्तन जैसे अनुमान लगाये जा सकते हैं। पृथ्वी के वातावरण पर उसका क्या प्रभाव पहुँचा, यह भी ग्रह विद्या का विषय हो सकता है। अन्तर्ग्राही हलचलें व्यापक क्षेत्र पर असर डाल सकती हैं, पर ऐसा नहीं हो सकता कि हर व्यक्ति की हर स्थिति उसी से प्रभावित होती हो। फिर भविष्य में किस व्यक्ति को किस कार्य में, कब, कितनी सफलता-असफलता मिलेगी, इसका आकलन ज्योतिष के आधार पर करने का तो कोई तुक ही नहीं है। ऐसे दुर्बल आधार पर यदि भविष्य की सम्भावना सोची गई और उसके सहारे योजनाएँ बनाई गईं तो समझना चाहिए कि भ्रम-जंजाल में उलझकर अपना अहित ही किया जा रहा है।

वस्तुतः हमें प्रारब्ध के चक्कर में न फँसकर आशावान, उत्साही और कर्मशील बनना चाहिए। मनुष्य के कर्म ही उसका भाग्य बनाते हैं। भाग्य तो कर्मों का पिछलग्गू है। हम अपने भाग्य के निर्माता स्वयं हैं। भाग्य को पुरुषार्थ की छाया मात्र समझना अधिक उचित है। यदि कर्म ही हमारा धर्म बन जाये तो फिर हमें उन्नति के पथ पर बढ़ने से कौन रोक सकता है ? अतः भाग्यवान बनने के लिए हमें विवेकशीलता एवं सच्ची निष्ठा से सदैव कर्म करते रहना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भाग्यवाद के नाम पर पनपती विकृतियाँ

प्राचीनकाल में ज्योतिष का सीधा सम्बन्ध नक्षत्र विद्या से था। सुदूर स्थिति ग्रह-नक्षत्रों का ज्ञान, उनकी गति-गणना और स्थिति का वैज्ञानिक अनुसंधान अपने देश में उस समय चरम सीमा पर पहुँचा हुआ था, जबकि पृथ्वी के कई क्षेत्रों के लोग नदी, सोतों और झरनों के किनारे बैठकर जानवरों की तरह पानी पिया करते थे। जब तक ज्योतिष विशुद्ध विज्ञान का विषय रहा तब तक इस दिशा में काफी प्रगति होती रही और लोगों में कर्म, परिश्रम तथा पुरुषार्थ के प्रति आस्था भी बनी रही। पर न जाने किस काल में यह मान्यता चल पड़ी कि लाखों मील दूरी पर स्थित तारे और नक्षत्र एक-एक व्यक्ति के निजी जीवन पर अपना विशिष्ट प्रभाव डालते हैं।

फलित-ज्योतिष, हस्तरेखा, अंक विज्ञान, आकृति विज्ञान न जाने कितनी विद्याएँ चल पड़ीं, जिनके माध्यम से मनुष्य अनागत को जानने की चेष्टा करने लगा। कहा जाता है कि इन विद्याओं से भविष्य को जानकर व्यक्ति सम्भावित विपत्तियों से बच सकता है। इस मान्यता की संगति भारतीय संस्कृति के प्राण-कर्मफल के सिद्धान्त से कहाँ मेल खाती है ? प्रत्येक भारतीय धर्मानुयायी यह जानता और मानता है कि हम जो कर्म कर चुके हैं उनका ही फल आज भोग रहे हैं और जो आज कर रहे हैं उनके सत्परिणाम या दुष्परिणाम कल भोगने पड़ेंगे तो भविष्य की सम्भावित घटनाएँ जानकर व्यक्ति उनसे कहाँ तक बच सकता है ? पहली बात तो यह कि उन घटनाओं को जाना ही नहीं जा सकता और जान भी लिया जाय तो उनके परिणामों से बच पाना असम्भव है फिर उन्हें जानने से क्या लाभ ?

लाभ तो कुछ नहीं होता। हाँ हानि की ही अधिक सम्भावना रहती है। एक व्यक्ति को यदि पता चल जाये कि वह कल मरने वाला है, तो वह आज से ही मरने के समान हो जायेगा। वह कल मरे या न मरे पर आज उसका खाना-पीना छूट जायेगा, नींद खो जायेगी, बेचैनी, चिन्ता, उद्वेग और शोक की काली छायाएँ उसे घेर डालेंगी और भले ही वह कल मरने वाला न हो पर यदि उसे भविष्य वक्ता पर पूरा विश्वास है तो वह कल की अपेक्षा आज ही मर सकता है और कल तो उसकी मृत्यु जो नहीं आनी हो वह भी निश्चित हो जाती है।

इस तथ्य को किसी कहानीकार ने एक कथा के माध्यम से बड़े सुन्दर ढंग से समझाया है। कहा जाता है कि सृष्टि के निर्माण होने के बाद विधाता ने प्रत्येक मनुष्य को जन्म लेने पर उसका भविष्य सुना देने का नियम बनाया था। उस नियम का बराबर पालन भी किया जाता। एक बार किसी कुकर्मी व्यक्ति ने पुनर्जन्म लिया, पिछले जन्म के पापों का दुष्परिणाम उसे इस जन्म में भोगना था अतः उसका भाग्य बड़े ही भयंकर ढंग से लिखा गया। ६० वर्ष की आयु तक उसकी किस्मत में तमाम कठिनाइयाँ और विपत्तियाँ लिखी गई थीं। फिर उसे एक ऐसे भयंकर रोग से ग्रस्त होना बताया गया कि उसके सारे शरीर में कीड़े पड़ जायें। चालीस वर्ष तक रोग की इन यातनाओं को सहते हुए उसके भाग्य में सौ वर्ष की आयु पार करने के बाद मृत्यु लिखी गयी।

यह भविष्य उस व्यक्ति के जन्म लेते ही नियमानुसार सुनाया गया। एक-एक विपत्ति का वर्णन सुनकर वह व्यथित होता गया और अन्त में जाकर वह इतना चिंतित तथा उद्विग्न हो उठा कि सौ वर्ष की उम्र जीना तो दूर रहा वह तत्क्षण ही भय के कारण मर गया। यह एक रूपक की तरह है, जिसे पढ़कर समझना चाहिए कि दूरदर्शी और करुणालय परमात्मा यदि कर्मफल दृष्टि से किसी का भाग्य निश्चित करता भी हो तो उसे जानने के कोई सूत्र नहीं छोड़ता। यदि इस प्रकार के सूत्र छोड़े जाते तो मनुष्य अपना सारा भविष्य पहले से ही जान लेता और यदि भाग्य में सुख-सुविधाएँ लिखी हैं तो पहले से ही निश्चिन्त होकर बैठ जाता क्योंकि करने से तो कुछ होना ही नहीं है। नियति ने पहले से ही सब कुछ निश्चित कर रखा है। फिर कुछ करने-कराने से क्या अन्तर पड़ता है और यदि भाग्य में कष्ट, विपत्तियाँ ही हैं तो क्यों न पहले से ही आत्म-हत्या कर उनसे छुटकारा पा लें।

कर्मफल के इन सामान्य सिद्धान्तों से परिचित होने के बावजूद भी शिक्षित-अशिक्षित लोगों को अपना भाग्य जानने के लिए इधर-उधर भटकते हुए देखा जा सकता है। लोगों में अपना भविष्य जानने की इतनी उत्सुकता है कि ज्योतिष आजकल एक लाभदायक व्यवसाय के रूप में विकसित है। ज्योतिष, हस्तरेखाविद्, आकृति विज्ञानी, रमलविद् आदि भविष्य-वक्ता भोली जनता को भाग्य सितारों की चाल बताकर दोनों हाथों से अपना उल्लू सीधा करते रहते हैं। यही नहीं, तथाकथित प्रगतिशील अखबारों और पत्र-पत्रिकाओं में भी दैनिक, साप्ताहिक, मासिक तथा वार्षिक राशिफल छपते रहते हैं। कई लोग तो राशिफल देखने के लिए ही अखबार खरीदते हैं। समझ में नहीं आता कि अपनी प्रगतिशीलता का ढिंढोरा पीटने वाले अखबार भी इस अवसरवादिता से लाभ उठाने में क्यों संकोच नहीं करते ?

अखबारों और पत्र-पत्रिकाओं की भविष्यवाणियों में स्पष्ट रूप से अन्तर देखा जा सकता है। यह मान भी लिया जाय कि नक्षत्र और फलित ज्योतिष विद्या सही भी है और उसका प्रभाव भी होता है तो एक-एक व्यक्ति के लिए निश्चित भविष्य रहना चाहिए और फलित ज्योतिष के गणित से सभी ज्योतिषियों को समान निष्कर्ष पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भविष्य विद्या की सत्यता भी इतनी ही निश्चित रहनी चाहिए। दो और दो का जोड़ कोई भी लगाये, योगफल चार ही आता है, उसी प्रकार भविष्य जानने के लिए लगाया गया हिसाब भी निश्चित परिणाम देने वाला रहे। परन्तु ऐसा नहीं होता। एक राशि का भविष्यफल किसी अखबार में कुछ छपा है और किसी में कुछ और। कोई अखबार वृश्चिक राशि के लिए यह सप्ताह शुभ तथा मंगलकारी बताता है तो कोई अखबार अशुभ और खतरे से सतर्क रहने का निर्णय देता है। हालांकि ये भविष्यवाणियाँ कभी सच सिद्ध नहीं होतीं फिर भी लोग प्रति सप्ताह या प्रतिदिन इन भविष्यफलों के पृष्ठ बड़ी बेताबी से उलटते तथा पढ़ते हैं। यह कहाँ तक सच सिद्ध हो सकता है ? कि संसार में केवल १२ प्रकार की घटनायें या परिस्थितियाँ ही होती हैं, जिनमें मेष, वृष आदि राशियों के लोगों को जीना पड़ता है, जबकि प्रत्येक व्यक्ति की अपनी निजी परिस्थितियाँ और घटनाएँ अलग-अलग होती हों।

इस साधारण-सी बात पर भी कोई ध्यान न देते हुए अपना भविष्य जानने के लिए सड़कों पर बैठकर दस या पच्चीस पैसे में भाग्य देखने वाले लोगों से लेकर एयरकण्डीशन होटलों में ठहरने वाले ज्योतिषियों तक के चक्कर काटते रहते हैं। सच तो यह है कि ज्योतिष आज विशुद्ध व्यवसाय बन गया है और इस व्यवसाय में लगे लोग अपने फन में ऐसे माहिर होते हैं कि आस-पास जैसे ही ग्राहक मण्डराता दिखाई दे, वे तुरन्त उसे फाँस लेते हैं। लोग भी इतने आँख से अन्धे होते हैं कि छोटे-छोटे कार्यों से लेकर बड़े अभियानों तक के मुहूर्त ढुँढ़वाने के लिए ज्योतिषियों के आस-पास चक्कर काटते रहते हैं। शादी का मुहूर्त निकलवाना हो या बच्चे को स्कूल में भर्ती करवाना हो, नया घर बनवाना हो अथवा किसी यात्रा पर निकलना हो—बिना ज्योतिषी से पूछे कोई काम करवाने की हिम्मत नहीं पड़ती।

साधारण पढ़े-लिखे या अशिक्षित लोग ही इस तरह की रीति-नीति अपनाते हों, ऐसी बात भी नहीं है। शिक्षित और प्रबुद्ध आधुनिकतावादी भी ऐसे अन्धविश्वासी व्यक्तियों की कमी नहीं है। फिर भी प्रायः साधारण मध्यम वर्ग के लोगों को ज्योतिषियों के चक्कर में फँसते अधिक देखा जाता है, इसका कारण है गरीब आदमी कम से कम मध्यम वर्ग की सी सुविधाओं वाला जीवन जीने की आशा करता है और मध्यम वर्ग का व्यक्ति धनवान व्यक्ति की तरह जीना चाहता है। गरीब व्यक्ति तो फिर भी किसी तरह सन्तोष कर रह सकता है पर मध्यम वर्ग में धनवान की उत्कण्ठा इस कदर व्याप्त रहती है कि वह बिना परिश्रम और पुरुषार्थ किये ही धनवान बनने की आकांक्षा करने लगता है और इसी आकांक्षा की सम्भावना को जानने के लिए ज्योतिषियों के चक्कर में फँसता जाता है।

जिस प्रकार सभी क्षेत्रों में नये प्रयोग हो रहे है और नयी पद्धतियाँ चल पड़ी हैं, उसी प्रकार ही ज्योतिष के क्षेत्र में भी अंक विज्ञान की नई धारा लोकप्रिय होने लगी है। अंक विज्ञानी प्रत्येक अंक की अलग-अलग संख्या निर्धारित रखता है जैसे क की १ तो ख की २। अब प्रश्नकर्त्ता के नाम से या प्रश्न के अक्षरों से हिसाब लगाकर उसका मूल्य निकालता है फिर उसके अनुसार भविष्यवाणी करता है। कहना नहीं होगा कि अंकों की विशेषताएँ पहले से ही निर्धारित रहती हैं और उन्हीं के अनुसार भविष्य बताया जाता है।

अंकों की निर्धारित विशेषताओं का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं होता है, वे केवल कल्पना द्वारा ही निर्धारित किये जाते हैं। अतः उनकी प्रामाणिकता और सत्यता का कोई आधार नहीं बताया जा सकता है। नयी पद्धतियों की तरह भविष्यवाणियों का यह नया ढंग भी आजकल आधुनिक लोगों में काफी लोकप्रिय हो रहा है।

फलित ज्योतिष के पक्षपातियों का कहना है कि यह एक विशुद्ध विज्ञान है और पश्चिम में भी बड़ा लोकप्रिय है। वस्तुतः यह तर्क फलित ज्योतिष की प्रामाणिकता को सिद्ध नहीं करता, वरन् हमारी मानसिक दासता का ही परिचय देता है। बहुते-से विषयों में हम पश्चिमी धारणाओं का हवाला देकर यह बताने की कोशिश करते हैं कि हम गलत नहीं हैं। हम गलत हैं या नहीं हैं यह इससे भले ही सिद्ध नहीं होता पर यह अवश्य सिद्ध हो जाता है कि हम तीस साल बीत जाने के बाद भी मानसिक दृष्टि से पश्चिम के ही अनुयायी हैं।

निस्सन्देह पश्चिम ने विज्ञान के क्षेत्र में आशातीत प्रगति की है पर इसका तात्पर्य यह नहीं है कि वहाँ जो कुछ भी प्रचलित है, वह सब सत्य है। विज्ञान के क्षेत्र में पश्चिम के लोग आगे हैं पर अन्धविश्वास के क्षेत्र में भी वे हमसे पीछे नहीं हैं, बहुत आगे हैं। वहाँ ऐसे-ऐसे अन्धविश्वास प्रचलित हैं कि जिनकी हम कल्पना भी नहीं कर सकते। जैसे कहा जाता है कि पश्चिमी देशों में अधिकांश लोग तेरह का अंक अशुभ मानते हैं। वहाँ के कई होटलों में इस नम्बर का कमरा नहीं रखा जाता। ग्यारह, बारह के बाद सीधे चौदह की संख्या आ जाती है तो फलित ज्योतिष को लेकर भी वहाँ इसी तरह के अन्धविश्वास चलते हैं तो इसमें क्या आश्चर्य ? यह जरूर आश्चर्य की बात है कि हम लोग उनके सन्दर्भ देकर अपने को सही प्रमाणित करने की चेष्टा करते हैं।

ज्योतिष विद्या के अन्तर्गत प्रायः अज्ञात अंकों और कल्पित शक्तियों का आधार लेकर निष्कर्ष निकाले जाते हैं। एक आकृति विज्ञान और हस्तरेखा विद्या ही ऐसी पद्धतियाँ हैं, जो शरीर को आधार बनाकर चलती हैं। हस्तरेखाओं को विधाता की लिपि समझा जाता है और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक मर्मज्ञ कहा जाने वाला हस्तरेखा शास्त्री जो कह देता है, उसे अटल सत्य के रूप में स्वीकार कर लिया जाता है। सब लोगों की रेखायें भी भिन्न-भिन्न होती हैं। इसलिये उनसे अलग-अलग परिणामों के भी निष्कर्ष निकाले जाते हैं तो कहा जा सकता है कि भविष्य ज्ञान के लिए हस्तरेखाएँ तो प्रामाणिक आधार हैं।

यहाँ हस्तरेखाओं के सम्बन्ध में कुछ बातें जान लेनी चाहिए। हस्तरेखाएँ सभी व्यक्तियों की अलग-अलग होती हैं और किसी की एक-दूसरे से नहीं मिलती यह तो ठीक है परन्तु यह कोई भविष्य ज्ञान का स्रोत नहीं है। मनोवैज्ञानिकों के अनुसार हस्तरेखाएँ मनुष्य के मनोभावों और प्रवृत्तियों का संकेत देती हैं, न कि उसके भविष्य का। तीव्र संकल्प शक्ति द्वारा उन्हें कभी भी बदला जा सकता है और वैसे भी सात वर्ष में हस्तरेखाएँ अपने आप बदल जाती हैं, क्योंकि तब व्यक्ति की रुचियाँ और प्रवृत्तियाँ काफी कुछ बदल जाती हैं तो हस्तरेखाओं के आधार पर भविष्य का सुनिश्चित ज्ञान कैसे सम्भव हो, सच्चाई तो यह है कि व्यक्ति का अपने जीवन के भविष्य में झाँकना कठिन ही नहीं असम्भव है।

हमें अनुगृहीत होकर भाग्य के जानने के लिए इधर-उधर भटकने की अपेक्षा परिश्रम और पुरुषार्थ द्वारा अपने भाग्य का निर्माण करने में लगना चाहिए। भाग्य को जानना असम्भव है पर उसका निर्माण किया जा सकता है। यह चेतना जब प्रत्येक व्यक्ति में जागेगी तो समाज में कर्मठता, पुरुषार्थ और लगन की भावना पैदा होगी।

पुरुषार्थ ही समृद्धि का राजमार्ग

लाल बहादुर शास्त्री ने अपने १८ माह के प्रधान मन्त्रित्व काल में वह यश-श्रेय प्राप्त कर लिया, जो संसार का कोई भी नेता नहीं पा सका। शास्त्री जी एक साधारण परिवार के थे। वह स्वयं बढ़ें, विकसे और बड़े बने। आत्मावलम्बन की शक्ति ही उसके जीवन में दृढ़ता बनकर विकसित हुई थी।

यही गुरुमन्त्र उन्होंने अपनी सन्तान को भी दिया। एक बार उनसे किसी मित्र ने प्रश्न किया—"आप अपने बच्चों को थोड़ा सहारा देते तो वे भी आज अच्छे स्थानों पर होते ?" शास्त्रीजी हँसकर बोले—"अवश्य होते, पर उनमें योग्यता न होती। जो स्वावलम्बन और आत्म-विश्वास के साथ बढ़ता है, उसकी योग्यता, दृढ़ता, कर्मठता, साहस और कर्त्तव्य भावना अदम्य होती है।"

उन्होंने कहा—'फूल कहीं भी हो वह खिलेगा ही—बगीचे में हो, जंगल मे हो या कमरे में, बिना खिले उसे मुक्ति नहीं। बगीचे का फूल है, उसकी चिन्ता, स्वयं उसे नहीं रहती। जंगल का फूल इतना चिन्तामुक्त नहीं, उसे अपना पोषण आप जुटाना पड़ता है, अपना निखार अपने आप करना पड़ता है। कहते हैं कि इसीलिए खिलता भी वह मन्दगति से है। सौरभ भी धीरे-धीरे बिखेरता है किन्तु उसकी सुगन्ध बड़ी तीखी होती है। काफी दूर तक वह अपनी मंजिल तय करती है। जंगल का फूल यद्यपि अपने आकार में बहुत छोटा होता है और कई बार वह फूल खिल नहीं पाता है तो भी अपनी सुगन्ध में वह दूसरे फूलों से हल्का नहीं पड़ता, वजनी ही होता है।

यह सिद्धान्त मनुष्य के विकास में भी लागू है। दूसरों का सहारा लेकर बहुत ऊँचे पहुँचे हुए लोगों में न तो साहस-दृढ़ता होती है और न वे 'गड्स' होते हैं, जो अपने आप विकसित हुए व्यक्ति में स्थाई रूप से होते हैं। सफलता की मंजिल भले ही देर से मिले पर अपने पैरों की गई विकास यात्रा अधिक विश्वस्त होती है, मोटर रेल का सहारा लेकर बढ़ने में जहाँ शीघ्र पहुँचना सम्भव है, वहाँ अनियमित होना, रास्ते में टूट-फूट, लेट होना और बिगड़ जाना भी सम्भव है। पद यात्रा से अधिक विश्वस्तता सहारे की यात्राओं में नहीं, भले ही उसमें कुछ अधिक सुविधा हो।

संसार में कार्य करने के लिए स्वयं का विश्वास पात्र बनना आवश्यक है। आत्मशक्तियो पर जो जितना अधिक विश्वास कर पाता है, वह उतना ही सफल और बड़ा आदमी बनता है। वाशिंगटन एक मामूली सिपाही से अमेरिका की स्वतन्त्रता का प्रतिस्थापक बना। अमेरिका के प्रायः सभी राष्ट्रपति अत्यन्त छोटी अवस्था से स्वयं विकसित हुए। नैपोलियन फ्रांस का एक छोटा-सा सिपाही था, वह स्वयं बढ़कर सेनापति बना। एक अस्पताल में साधारण प्यून से बढ़ते-बढ़ते राष्ट्रपति बनने वाले सनयातसेन को कोई नहीं भूल सकता। इन महापुरुषों ने **"यस्य यावांश्च विश्वास्तस्य सिद्धिश्च तादृशी"** 'जिसने अपने आप पर विश्वास किया उसने सिद्धि-सफलता पाई' कहावत को चरितार्थ किया है।

कारडिनल लिखते हैं—"हर व्यक्ति के जीवन में ऐसे अवसर आते हैं, जिनका बुद्धिमानी से उपयोग करके मनुष्य बिना भाग्य की प्रतीक्षा किए बड़ी सफलताएँ प्राप्त कर सकता है।"

नेल्सन की कहानियाँ अँग्रेज बड़े प्रेम से पढ़ते हैं और आत्मविश्वास की शक्ति की व्याख्या करते समय उसके उदाहरण देते हैं। नेल्सन कहा करता था, "अविश्वास के लिए मेरे जीवन मे कोई स्थान नहीं है। मैं जहाँ जुट जाता हूँ, वहाँ सफलता निश्चित रहती है; जिनके पास दृढ़ एवं अडिग आत्म-विश्वास और साहस है, वह निश्चय ही अपना भाग्य निर्माण करता है।"

बहुत-से लोग कहा करते है—'यदि मैं स्वतन्त्र होता और मेरे पीछे बाल-बच्चो का झगड़ा न होता, मेरी शिक्षा इतनी होती, मुझे पूँजी मिल गई होती तो मै बहुत काम कर सकता था। परन्तु यह उनकी निर्बलता है। बड़ा काम करने के लिए न बाल-बच्चे रुकावट है और न धनाभाव। परिस्थितियाँ संसार में न्यूनाधिक एक जैसी ही हैं, जिन्हें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रुकावट समझा जाता है, वे समस्याएँ ही सफल व्यक्तियों की प्रेरक बनी हैं। कई महामानवों ने तो जेल में भी बड़े-बड़े ग्रन्थ लिखे हैं। सोच-समझ के साथ जीवन के प्रत्येक दिन को अमूल्य मानकर अपने मन को ऊँची अवस्था में ले जाने को अपने आप प्रयत्न करते हैं। उनकी थोड़ी-सी सफलता भी चिरस्थाई, सन्तोषदायक और व्यावहारिक होती है।

अपने आप बढ़ने में सच्चाई और ईमानदारी रहती है, मनुष्य की वह बड़ी शक्ति है, उससे उसका हृदय खुला रहता है, वह किसी भी समय अपने आपको व्यक्त कर सकता है। वह घबराता भी नहीं, परेशान भी नहीं होता। यह कष्ट तो परावलम्बियों को ही होते हैं। जो दूसरों के सहारे उठता है, उसे बात-बात पर गिर जाने का भी भय बना रहता है। सच्चे लोग अपने गुण, अपनी प्रतिभा और अपने सौन्दर्य के बारे में नहीं सोचते। अपनी इस सरल अबोधता के कारण वे लोगों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं, उनके हृदय में विश्वास, प्रेम और प्रतिष्ठा का स्थान पाते हैं, यह सफलता ही किसी बड़ी से बड़ी सम्पन्नता जैसी सुखदायक होती है।

अपने भाग्य को स्वयं बन जाने की राह देखना भूल ही नहीं, मूर्खता भी है। यह संसार इतना व्यस्त है कि लोगों को अपनी परवाह से फुरसत नहीं। यदि कोई थोड़ा-सा सहारा देकर आगे बढ़ा भी दे और उतनी योग्यता न हो तो फिर पश्चात्ताप, अपमान और अवनति का ही मुख देखना पड़ता है। स्वयं ही मौलिक सूझ-बूझ और परिश्रम से बनाए हुए भाग्य में इस तरह की कोई आशंका नहीं रहती, क्योंकि वैसी स्थिति में अयोग्य सिद्ध होने का कोई कारण नहीं होता। जितनी योग्यता बढ़ती चले, सफलता की मंजिल उतनी प्राप्त करता चले। रास्ता सबके लिए खुला है, उस पर चलकर कितना पार कर सकता है, यह व्यक्ति की अपनी लगन, साहस और विश्वास पर निर्भर रहता है।

शास्त्रकारों ने पुरुषार्थियों की स्थान-स्थान पर वन्दना की है। कोई महाभाग लिखते हैं—

धीमन्तो वन्द्य चरिता मन्यन्ते पौरुषं महत्।

अशक्ता पौरुषं कर्तुं क्लीवा दैवमुपासते।।

अर्थात्—बुद्धिमान व्यक्तियों ने सदैव व्यक्ति के उत्थान के लिए पुरुषार्थ को प्रधान माना है। भाग्य और देवों के सहारे उन्नति का मार्ग खोजने वाले नपुंसक, पुरुषार्थ-विहीन व्यक्तियों की विद्वज्जन निन्दा करते हैं।

मनुष्य की आध्यात्मिक विभूतियाँ जाति, वर्णजन्म के आधार पर नहीं, उसके गुण, स्वभाव के रूप में विद्यमान होती हैं, उसके बदले में सांसारिक सम्पत्तियाँ आसानी से खरीदी जा सकती हैं। अच्छा स्वास्थ्य, ऊँची विद्या, धन-वैभव, साथियों का सहयोग, जन-सम्मान, पद, नेतृत्व, कला-कौशल, यश-वर्चस्व आदि कितनी ही सुखद सम्पदाएँ मनुष्य को प्रसन्नता प्रदान करती हैं और वह उन्हें पाने के लिए सचेष्ट भी रहता है। फिर भी बहुत कम लोग इन्हें प्राप्त कर सकने में सफल होते हैं, अधिकांश को इनके लिए हाथ मलते हुए ही रहना पड़ता है। लोग तरह-तरह की मनोकामनाएँ करते रहते हैं पर यह भूल जाते हैं कि चाहने और कल्पना करने भर से कोई प्रयोजन पूरा नहीं होता, उल्टे बढ़ी-चढ़ी महत्त्वकांक्षाएँ पूरी न होने पर निराशा और खीझ ही हाथ लगती है। यह तथ्य जितनी अच्छी तरह, जितनी जल्दी समझ लिया जाय उतना ही अच्छा है कि विभूतियों के बदले ही सम्पदाएँ मिली हैं। गुणों के आधार पर ही किसी को सफलताओं का श्रेय उपलब्ध होता है।

लम्बी यात्रा में घर से जाने पर बैंकों से ट्रेवलर चैक प्राप्त कर लिये जाते हैं। उन्हें कहीं भी बैंकों में भुनाया जा सकता है और बदले में नकद पैसा पाया जा सकता है। पैसा जेब में हो तो बदले में कहीं भी सामान या सहयोग खरीदा जा सकता है। ट्रेवलर चैक या नकदी को छोटी-सी जेब में रखा जा सकता है। उनका दूसरों को पता नहीं चलता पर जब बदले में सामान खरीदा जाता है तो उनका ढेर सबको दिखाई पड़ता है और मनचाहे उपयोग में वह काम आता है। ठीक उसी प्रकार मनुष्य के सद्गुण, उसकी ईश्वर प्रार्थना आध्यात्मिक एवं ठोस सम्पत्ति है उनके बदले में भौतिक सुख-साधन खरीदे जा सकते हैं। उन्नतिशील सफल मनुष्यों में से प्रत्येक में कुछ सद्गुण रहते हैं, उनके बिना किसी के लिए भी कोई महत्त्वपूर्ण सफलता शक्य नहीं होती।

प्रशंसनीय सफलताएँ तो सद्गुणों पर आश्रित हैं ही, निन्दनीय सफलताओं के पीछे भी उन्हीं का वर्चस्व काम कर रहा होता है। डाकू अपने अनैतिक आचरण के कारण जेल जाता है, नरक भुगतता है, घृणास्पद बनता है, पर उसे जो धन लूटने में सफलता मिलती है, उसमें साहस का सद्गुण ही काम कर रहा होता है। साहस न हो तो मात्र अनैतिक आचरण अपनाने भर से डाका डालने में सफलता नहीं मिल सकती। ठगों की जितनी निन्दा की जाय उतनी कम है। किन्तु मधुर भाषण करके दूसरों का विश्वास अर्जित कर लेने की कुशलता उन्हें ठगी में सफल बनाती है। यदि उनमें यह गुण न होता तो उनका रूखा, कर्कश व्यवहार किसी से घनिष्ठता ही न बनने देता और विश्वास अर्जित किए बिना ठगी करके कुछ प्राप्त कर सकना सम्भव ही न होता। बेईमान लोग तब सफल होते हैं, जब लोगों पर अपने ईमानदार होने की धाक जमा लेते हैं। दूध में पानी बेचने वाले यही कोई लगाते और प्रचार करते हैं कि हमारे द्वारा बेचा गया दूध पूर्णतया शुद्ध है मिलावट सिद्ध करने वाले को ५०० रु. इनाम मिलेगा। इस प्रकार की घोषणा में ही लोग उसके पास पहुँचते और दूध खरीदते हैं यदि कहीं दूधवाला अपनी वस्तुस्थिति प्रकट कर दे और कह दे कि हमारी दुकान पर आधा दूध आधा पानी" मिलता है, अपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अरारोट का आटा मिलाकर गाढ़ा बनाया जाता है तथा ऊपर जो मलाई है वह ब्लाटिंग पेपर की परतमात्र है। "तब पता चलेगा कि बेईमानी से मालदार बना जा सकता है या नहीं। स्पष्ट है कि वस्तुस्थिति विदित होने पर कोई भी ग्राहक उसकी दुकान पर न फटकेगा और दिवाला पिट जाएगा। ईमानदारी में वह आकर्षण है, जिसकी आड़ लेकर भी बेईमान अपना उल्लू सीधा करते हैं। मधुरता और विश्वसनीयता ही वह सुदृढ़ तत्त्व है जिसका आवरण ओढ़कर ठग और धूर्त एक बार तो काठ की हाँड़ी पका ही लेते हैं। शौर्य और साहस का कवच पहनकर सामान्य स्तर के लोग महामानव बन सके हैं और इतिहास के पृष्ठ अपने चमत्कारी कर्तृत्व से गौरवान्वित कर सके हैं। आश्चर्य यह है कि इसी विशेषता का थोड़ा उपार्जन करके दुरात्मा व्यक्ति भी आतंक फैलाने और लूट-खसोट करने में सफलता प्राप्त कर लेते हैं, जिसमें कोई सद्गुण न हो—केवल भ्रष्ट आचरण ही जिसने अपना रखे हों, उसका अनैतिक एवं अपराधी कार्यों को अपनाने पर सिर मुड़ाते ही ओले पड़ने की कहावत चरितार्थ होती है। अपने पाप कर्मों का उन्हें अगले ही दिन दण्ड मिल जाता है। जितने दिन छिपे बचे रहते हैं और जितनी सफलता कमा लेते हैं, उसमें उनकी सतर्कता, सूक्ष्म दृष्टि, स्फूर्ति, संतुलित मनःस्थिति संगठन क्षमता जैसे सद्गुण ही सहायक बने होते हैं।

क्रमबद्ध रूप से प्रगति करते चलने वाले और उन्नति के उच्च शिखर को छूने वाले व्यक्तियों को उनकी सफलताएँ, उनके सद्गुणों के कारण ही उपलब्ध हुई होती हैं। कहने लायक सभी आत्मिक एवं भौतिक उपलब्धियाँ किसी को भी अनायास नहीं मिलीं। उनके लिए जिन साधनों की, जिस सहयोग की, जिस परिस्थिति की आवश्यकता थी, उनका सरंजाम परोक्ष रूप में मनुष्य की सद्गुण सम्पदा ही जुटाती है। दुर्गुणों से ग्रसित व्यक्ति किसी का सच्चा और स्थायी सहयोग नहीं पा सकता। साधन जुटाने के लिए सूझ-बूझ, अनुभव और जोड़-तोड़ बिठाने की जरूरत होती है, उसके अभाव में साधनहीन परिस्थितियाँ ही सफलता के मार्ग में पर्वत बनकर खड़ी हो जाती हैं। ओछे व्यक्तित्व के मनुष्य पर कोई विश्वास नहीं करता। अस्तु एकाकी और असहाय स्थिति में पड़े-पड़े अभीष्ट दिशा में बढ़ने से रुका ही रहना पड़ता है। कठिनाइयाँ हर काम में आती हैं। जो चाहा सो होता ही चला गया, ऐसा अवसर तो कहीं किसी को भी नहीं मिलता। हर किसी को अपने ढंग से अड़चनों से निपटना पड़ता है। यदि धैर्य, साहस, सन्तुलन और पुरुषार्थ जैसे गुण न हों तो वे अवरोध ही हिम्मत तोड़ देते और व्यक्ति हाथ-पैर फैलाकर बैठ जाता है।

प्रगति का सुनिश्चित क्रम सदा से यही रहा है कि मनुष्य सद्गुणों को अपने स्वभाव का अंग बनाता है, इससे उसका व्यक्तित्व प्रभावशाली बनता है, शरीर में सक्रियता और मस्तिष्क में सजगता उभरती है। इतनी समर्थता आ जाने पर अभीष्ट दिशा में तेजी से कदम बढ़ते हैं और सफलता के अवसर एक के बाद एक बढ़े-चढ़े स्वर से मिलते चलते हैं। यही प्रवाह अन्ततः मनुष्य को ऐतिहासिक सफलताएँ प्रदान करने की स्थिति तक पहुँचा देता है।

सद्गुणों में सबसे प्रारम्भिक और सबसे महत्त्वपूर्ण है श्रमशीलता। निरन्तर काम में लगे रहना, खाली न बैठना एक बहुत ही अच्छी आदत है। इससे शरीर और मस्तिष्क के कल-पुर्जे सदा गतिशील रहते और उनकी तीक्ष्णता बढ़ती रहती है। सर्वविदित है कि निकम्मे पड़े रहने पर चाकू भी जंग खा जाता है, इसके विपरीत बराबर काम में आने वाला औजार तेज रहता है और चमकता है। वह उस्तरा अभागा है जो जंग लगने के कारण नष्ट हो गया। जिसे क्षण-क्षण बाद सिली पर घिसा जाता है और घिसते-घिसते, जिसकी पीठ मात्र रह गयी उस उस्तरे की प्रशंसा ही की जायेगी। श्रमशीलता के आधार पर ही जीवन सम्पदा का पूरा मूल्य वसूल किया जाता है। समय अनमोल है। जीवन का अर्थ है समय। वह तेजी से भागता चला जा रहा है और गया सो गया। फिर उसके लौटने की सम्भावना नहीं। ईश्वर ने समय के रूप में ही जीवन दिया है। इस समय का हम चाहें तो उपयोग कर सकते हैं, बदले में मनचाहे लाभ उठा सकते हैं और उसे आलस में पड़े-पड़े नष्ट भी कर सकते हैं। व्यर्थ में गँवाया गया समय दरिद्रता का अभिशाप देकर चला जाता है। समय को नष्ट करना अपने सुख-सौभाग्य का अपने हाथों विनाश करना है।

कठोर श्रम करने के उपरान्त बीच में थोड़े-थोड़े समय विश्राम की आवश्यकता पड़ती है सो उचित ही है। पर उसका आनन्द तभी है, जब काम इतना पर्याप्त कर लिया हो कि थकान मिटाने की जरूरत पूरी तरह अनुभव होने लगे। भोजन का आनन्द तभी है, जब करारी भूख लगे। भरे पेट पर भी सारे दिन कुछ न कुछ खाते रहा जाय तो कुछ भी आनन्द न मिलेगा। कड़ा परिश्रम करने पर जब गहरी थकान आती है तो थोड़ा-सा विश्राम भी बहुत आनन्द देता किन्तु जिनके पास कुछ काम नहीं, ऐसे ही बैठे-ठाले समय गँवाते हैं—बार-बार विश्राम की रट लगाये रहते हैं, उन्हें उस सुस्ताने में भी कोई रस नहीं मिलता। दिन में कड़ी मेहनत करने वालों को गहरी नींद आती है। पर जिन्हें बिस्तर पर ही पड़े रहना है, उन्हें करवटें बदलते हुए ही समय गुजारना पड़ेगा, उन्हें नींद का आनन्द नहीं मिलेगा। कई व्यक्ति आराम की जिन्दगी जीना चाहते हैं। उनकी दृष्टि से काम न करना, निठल्ले समय गुजारना ही आराम है। ऐसे लोगों के लिए समय काटना भी भारी पड़ जाता है। निरर्थक की गपशप, मटरगश्ती, ताश, शतरंज आदि के सहारे दिन गुजारते हैं। इसके लिए उन्हें अपने जैसे और कुछ साथी तलाश करने पड़ते हैं या बनाने पड़ते हैं। चोर अकेले ही चोरी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं कर पाते। उन्हें एक गिरोह बनाकर चलना पड़ता है। आलसी भी दिन काटने के लिए ठलुआ लोगों की कम्पनी बनाते हैं। इन मन-मौजी लोगों में अन्य निठल्ले लोग भी शामिल हो जाते हैं और छूत की बीमारी की तरह अन्यों में भी यह कुटेव फैलाते हैं।

हम जीवित इसलिए हैं कि शरीर में श्वाँस-प्रश्वाँस, आकुंचन-प्रकुंचन, रक्तभ्रमण, मल विसर्जन आदि क्रियाएँ निरन्तर जारी रहती हैं। यदि यह हलचलें बन्द हो जाएँ तो मरण में थोड़ा अन्तर है। श्रम करने का अपना आनन्द है, जिसे वह मिलने लगा समझना चाहिए जीवन रस के आस्वादन का सौभाग्य-सुअवसर उसे ठीक प्रकार मिल सका। जो इस आनन्द से वंचित रहे, समझना चाहिए कि उन्होंने अपने जीवन देवता को दुलार पाने से वंचित ही रखा है।

स्वेद बिन्दुओं का मूल्य हीरे-मोतियों से बढ़कर है। परिश्रम करने का अर्थ, सफलताओं को भावभरा आमन्त्रण देना है। शरीर की कार्यक्षमता और मानसिक तीक्ष्णता में उत्तरोत्तर वृद्धि करने वाले राजमार्ग पर चल पड़ते हैं। यह सोचना गलत है कि श्रम करने से शक्ति खर्च या नष्ट होती है और आराम करते रहने से स्वास्थ्य सुधरता है तथ्य इसके बिल्कुल विपरीत है। डायनेमो चलता है तो बिजली पैदा होती है। जब उसका चलना बन्द हो जाता है तो बिजली का उत्पादन भी रुक जाता है। ठीक इसी प्रकार श्रमशील मनुष्य की बलिष्ठता स्थिर रहती है और विकसित होती है। लुहार, बढ़ई आदि कठोर श्रम करने वालों की भुजाएँ, छाती, पूरी काया लोहे की ढली मालूम पड़ती है। वनवासी, आदिवासियों को न कोई बीमारी सताती है न कमजोरी। बहुमूल्य पोषक तत्त्वों वाले पदार्थ उन्हें खाने को कहाँ मिलते हैं ? ऐसे ही मकई, ज्वार और कन्दमूल खाकर जीवित रहते हैं इतने पर भी तीर से शेर को मार लेने जैसी बलिष्ठता उनमें बनी रहती है। यह श्रमशीलता का, कठोर कर्मनिष्ठा का परिणाम है, जो उन्हें सुदृढ़, आरोग्य और दीर्घ जीवन के रूप में मिलता है। आलसी लोग इन अनुदानों से सदा वंचित ही रहते हैं।

आराम को हराम कहा गया है। हराम भी एक अपराध है। हरामी शब्द गाली की तरह है। निठल्ले लोग सचमुच गाली खाने जैसी भर्त्सना के हो योग्य हैं। वे अपने शरीर को गलाते हैं और प्रतिभाओं को कुण्ठित करते हैं। शरीर के साथ ही मस्तिष्क भी चलता है। हर काम में मन, बुद्धि का संयोग करना पड़ता है। सक्रिय रहने से मस्तिष्कीय प्रखरता में तेजी आती है। हरामखोर मनुष्यों का शरीर श्रम से अनभ्यस्त रहने के कारण अशक्त, असमर्थ बनता चला जाता है और साथ ही मस्तिष्क को क्रिया-कृत्यों के साथ जुटे रहने का अवसर न मिलने से उसके तन्तु भी जड़ताग्रस्त होते चले जाते हैं। यही कारण है कि आरामतलब लोगों की बुद्धि बहुत ही मोटी हो जाती है, उनके चिन्तन उथले और निर्णय बेतुके होते हैं। सर्वविदित है कि आलस्य की सहचरी मूर्खता भी है। दोनों जोड़ा बनाकर रहते हैं। उन्हें एक ही घोंसले में रहने की आदत है।

हर मनुष्य को परमात्मा ने अपार शारीरिक शक्तियाँ दी हैं। बुद्धि भी सबमें कुछ न कुछ होती है, संसार इतना बड़ा है कि ढूँढ़ने से इच्छित परिस्थितियों का अम्बार मिल सकता है। यहाँ अभाव किसी वस्तु का नहीं, यदि कुछ सच्ची बात है तो यह है कि सब कुछ ढूँढ़ने वाले को मिलता है। जो कुछ स्वयं करता है, वह पाता है। जो चलता है, वही लक्ष्य तक पहुँचता है। सोना-सोना चिल्लाने से पास रखा हुआ सोना भी हाथों में नहीं आ जाता। उसे उठाने के लिए भी प्रयत्न करना पड़ता है। सफलता के हर क्षेत्र में यह सिद्धान्त अटल है।

प्रगति और समृद्धि का सीधा राजमार्ग पुरुषार्थ है। उद्योगी, मेहनती और कर्मठ व्यक्ति अपने प्रबल पुरुषार्थ के बल पर आगे साधना हीन कठिनाइयों में भरी परिस्थितियों के बीच रहकर भी वे सफलताएँ प्राप्त करते हैं, जिन्हें साथियों को चमत्कार हुआ जैसा लगता है 'श्रम करें सफल बनें' का महामन्त्र आदिकाल से सार्थक होता रहा है अनन्त तक होता रहेगा।

अवसर ढूँढ़िए, परिश्रम कीजिए महानता आपके कदम चूमेगी

जब कभी हम अपने किसी मित्र से या कोई मित्र हमसे कहे कि 'क्या बताया जाये हमको अवसर ही न मिला नहीं तो हम भी संसार में कुछ करके दिखला देते'—तब निश्चय करके यह मान लेना चाहिये कि हम दोनों झूठ बोलते हैं। अपने शब्दों के पीछे अपनी निराशात्मक प्रवृत्ति और अपरिश्रमशीलता के साथ अपनी अयोग्यता छिपाते हैं। अवश्य ही हम दोनों अपने प्रति गैर-ईमानदार हैं। अपनी आत्मा का प्रवंचन करने वाले ऐसे व्यक्ति हैं, जो दूसरों की तरक्की देखकर हसरत भरी आह ही भर सकते हैं पर कुछ कर नहीं सकते अन्यथा संसार का ऐसा कौन-सा ऐश्वर्य अथवा उपलब्धि है, जो लगन, पुरुषार्थ एवं निरन्तरता के बल पर नहीं पायी जा सकती। संसार की सारी उन्नतियाँ, समग्र विकास कर्मठ व्यक्ति के पसीने की बूँदें कही गई हैं।

जिसके हृदय में आशा और आकांक्षा में उत्साह की तरंग है, वह संसार की हर सफलता पा सकता है। जो अपने मनोनीत क्षेत्र में लगन एवं उत्साह से डटा रहता है। एकाग्र चित्त होकर अपने लक्ष्य की ओर तिल-तिल बढ़ता रहता है। वह एक दिन हिमालय जैसे ऊँचे उद्देश्य को भी पा लेता है। जिसका संकल्प ढुलमुल है, जिसकी निरन्तरता शिथिल है। जो काम में अपनी शक्तियों का चोर है, उसको यदि तिल जैसा उद्देश्य भी दे दिया जाये तो वह उसे भी पूरा नहीं कर सकता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह मानव जीवन का निश्चित नियम है कि जो अपना दृष्टिकोण विधेयात्मक बना लेता है वह उन्नति की ओर और जिसका विश्वास निषेधात्मक होता है, वह पतन की ओर ही अग्रसर होता है। जिस कार्यक्रम अथवा उद्देश्य के प्रति जिस मनुष्य का जैसा दृष्टिकोण होता है, जैसी भावना होती है, उसका परिणाम भी उसे तदनुरूप ही मिलता है। मनुष्य के गुप्त मन में निर्माणात्मक एवं ध्वंसात्मक दोनों प्रकार की शक्तियाँ निहित रहती है जो कि मनुष्य की भावना एवं विश्वास के अनुरूप जागकर ऊपर आ जाती हैं और अपने स्वरूप की तरह ही प्रेरणा देने लगती हैं। जो काम अविश्वास एवं आशंका की भावना से किया जाता है, उसकी सफलता संदिग्ध और जो प्रारम्भ विश्वास एवं शंकारहित स्थिति में किया जाता है, उसका परिपाक सफलता के रूप में ही हस्तगत होता है। हमारी जगी हुई मानसिक शक्तियाँ यदि सृजनात्मक होंगी तो वे हमारे उत्साह का वर्धन करेंगी। हमें कार्य करने की अधिकाधिक क्षमता प्रदान करेंगी और यदि वे शक्तियाँ ध्वंसात्मक होंगी तो निश्चिय ही हमारी उदात्त भावनाओं को शिथिल और बढ़ने की शक्ति, आशा एवं उत्साह पर धूल डाल देंगी। अतएव उन्नति के आकांक्षी व्यक्ति को भूलकर भी निषेधात्मक दृष्टिकोण द्वारा ध्वंसक शक्तियाँ जगाने की गलती नहीं करनी चाहिए।

जहाँ तक अवसर न मिलने की शिकायत है सो अवसरों का भण्डार कहीं किसी समाज के पास नहीं रहता कि वह उसमें जब चाहे जिसे दे दे अथवा जिसे चाहे वंचित करदे। अवसर की खोज की जाती है, बुद्धिमत्ता तथा व्यवहार कुशलता से उसका निर्माण किया जाता है। अवसर को खोज लेना अथवा उसका निर्माण कर लेना ही तो वास्तविक पुरुषार्थ है अन्यथा पकी-पकाई रोटी खा लेना तो सब के लिये ही सुगम होता है। अवसर न कभी आता है और न कभी निकल जाता है। इस अनन्तकाल का प्रत्येक क्षण एक अवसर है। मनुष्य का प्रत्येक कदम एक उद्योग और प्रत्येक दिशा उन्नति एवं विकास का क्षेत्र है। किन्तु यह सब सामान्य बातें किसी भी अदूरदर्शी अथवा अकर्मण्य के लिए सफलता के रूप में प्रस्तुत नहीं हो सकतीं। संसार के छोटे-छोटे अणु-क्षण उस ही के लिये विशाल कल्पवृक्ष का रूप धारण कर सकते हैं जो किसी सदुद्देश्य के लिए पसीना बहाना जानता है। अपनी व्यक्तिगत सुख-सुविधाओं का बलिदान देना और हृदय की शिथिल एवं विलासी प्रवृत्तियाँ त्याग करना जानता है।

संसार में एक नहीं अनेकों ऐसे व्यक्तियों के प्रमाण मौजूद हैं, जिनके पास किसी प्रकार की सुविधा-साधन, धन-दौलत, विद्या-बुद्धि नहीं थी किन्तु उन्होंने अपने पुरुषार्थ एवं लगन के बल पर उन्नति के उच्च शिखर पर पहुँचकर दिखा दिया।

आज 'वाटा शू कम्पनी' भारत ही नहीं संसार के कोने-कोने में छाई हुई है। उसके बने जूते लोग बड़े शौक तथा विश्वास के साथ पहनते और खरीदते हैं। इस कम्पनी का नाम उसके मालिक वाटा के नाम पर ही पड़ा है, जो प्रारम्भ में एक साधारण मोची का लड़का था।

यह लड़का प्रारम्भ में शहरों की सड़कों के किनारे बैठकर लोगों के फटे-पुराने जूते टाँका और पालिश किया करता था, यही उसकी आजीविका का साधन था। उसके पास तरक्की करने का न तो कोई अवसर था और न उसके पास साधन ही थे। फिर भी उसने अपने जीवन में एक महान उद्योगपति होकर दिखला दिया। उसकी इस उन्नति का रहस्य और कुछ नहीं केवल अपनी मेहनत, लगन और काम के प्रति श्रद्धा भर ही थी।

इस लड़के को ज्यादा काम करने के बजाय अच्छे से अच्छा काम करने की लगन थी। वह जिसका भी काम करता। उसे पराकाष्ठा तक अच्छा और सही करने की कोशिश करता था। उसने कभी भी पैसे के लिए जल्दी-जल्दी काम की बेगार नहीं टाली । वह ग्राहकों के साथ बड़ी नम्रता एवं आदर से बोलता। उनके फटे-पुराने जूते अपने महीन और मजबूत टाँकों से सीकर दीर्घजीवी बना देता। पालिश लगाकर ऐसा चमका देता मानो वे नये हों। जब तक वह जूता गाँठने का काम करता रहा, उसका कोई भी ग्राहक असंतुष्ट नहीं हुआ। वह समय पर ही काम लेता था और समय पर ही उसको करके देता था। इस प्रकार लगन तथा निश्चित समय के बल पर अपने छोटे से काम में एक बड़प्पन का समावेश कर लिया। जिसका फल यह हुआ कि उसके पास ग्राहकों की भीड़ रहने लगी। लोग अपना काम करवाने के लिये अपनी बारी की प्रतीक्षा करने लगे। अब लोगों का विश्वास हो गया कि वाटा के बनाए हुए जूते ही अधिक दिनों तक चल सकते हैं। इस प्रकार एक दिन यह स्थिति आई कि लोग जूतों की मरम्मत के लिये उस पर निर्भर रहने लगे। काम की बहुतायत हो गई। फिर भी वाटा में जरा भी यह दुर्बलता न आई कि वह अधिक पैसे कमाने के लिए उल्टा-सीधा काम करके लोगों को जल्दी-जल्दी देने लगे क्योंकि जिस सच्चाई, लगन तथा ईमानदारी के आधार पर उसको नागरिकों की सद्भावना मिली थी वह उन्नति के उस आधार को त्याग देना मूर्खता समझता था।

धीरे-धीरे उसके पास इतना काम बढ़ गया कि सड़क के किनारे बैठकर उसे कर सकना असम्भव हो गया। निदान उसने एक दुकान खोजनी शुरू की। सद्भावना के कारण उसे स्थान मिलते देर न लगी क्योंकि लोग स्वयं ही इसके इच्छुक थे कि वाटा कहीं ठीक से जूते बनाने का काम शुरू करे जिससे कि अच्छे और मजबूत जूतों की समस्या हल हो जाये।

वाटा ने एक छोटी-सी दुकान में नये जूते बनाना और जूतों की विधिवत् मरम्मत शुरू की। काम बढ़ता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गया और वाटा दिन-दिन तरक्की करता गया। उसने अपनी तरह के अनेक अन्य लड़कों को भी काम पर लगाया और इस प्रकार एक छोटा-सा जूतों का कारखाना प्रारम्भ कर दिया। पैसे के सम्बन्ध में उसे कोई कठिनाई नहीं हुई। कुछ पैसा तो उसने अपने मितव्ययता के गुण से स्वयं बचाया और बहुत-सा पैसा उसकी ईमानदारी तथा सज्जनात्मक वृत्ति के प्रमाण ने इकट्ठा कर दिया। इस प्रकार धीरे-धीरे तरक्की करते हुए वह साधारण जूता टाँकने वाला लड़का एक महान उद्योगपति बन गया और उसका छोटा-सा काम एक बड़ी कम्पनी में बदलकर संसार की सेवा कर रहा है।

देखा यह जाता है कि हजारों लोग जीवन में उन्नति करने की आकांक्षा करते हैं, पर पाते हैं कि मन्जिल उतनी ही दूर हुई जाती है जितनी कि वे आकांक्षा करते हैं। उन्नति चाहने वालों की संख्या हजारों लाखों नहीं करोड़ों में है और प्रत्येक आने वाले दिन को आज के दिन से अच्छा बनाने की आकांक्षा रखता है पर आज का दिन जैसे ही व्यतीत होता है और कल का दिन शुरू होता है, वैसे ही लगने लगता है कि हम जहाँ के तहाँ हैं और जरा भी आगे नहीं बढ़ पाये। पास में साधन हों, सामने अवसर हो तथा समर्थ लोगों का सहयोग हो तो भी लोग उन्नति से वंचित रह जाते हैं। इसका क्या कारण है ? उत्तर एक है—उन्नति करने के लिए आवश्यक सभी गुण भले ही व्यक्ति में रहे हों पर परिश्रम का अभाव रहा है, प्रगति के लिए ईमानदारी से प्रयास नहीं किया गया है।

संसार में जिन किन्हीं गिने-चुने व्यक्तियों ने प्रगति की है। उनमें प्रतिभा थी, उनके पास ऐसी क्षमता और योग्यता थी कि वे आगे बढ़ सकें। फिर भी उन्होंने अपने जीवन में ऐसे अवसरों की प्रतीक्षा नहीं की, जिनमें वे आगे और व्यक्ति विशेष का सहयोग अर्जित कर सकें। अन्त में उन्होंने इस तथ्य को स्वीकार किया तथा महत्त्वाकांक्षी व्यक्तियों को यह दिशा निर्देश दिया कि परिश्रम प्रतिभा का पिता है, प्रतिभा हमारे पास लाख हो, योग्यता में हम किसी से कम न हों पर अगर परिश्रम जैसी चीज हमारे पास नहीं है तो हम कदापि आगे नहीं बढ़ सकेंगे। परिश्रम का महत्त्व समझाने के लिए उस शिला का उदाहरण हर जगह दिया जाता है, जो कुएँ पर पड़ी रही होती है तथा रस्सी की रगड़ से घिसकर निशान खा जाती है। यह इस सिद्धान्त का द्योतक है कि परिश्रम के बिना प्रतिभा का कोई सम्मान नहीं है। वह जारज सन्तान की तरह है, जिसकी कोई चर्चा भी सुनना पसन्द नहीं करता, चर्चा होती है भी तो लोग यह कहकर अवमानना कर जाते हैं कि खाक प्रतिभा है उसमें। यदि प्रतिभा है तो वह उसे सामने क्यों नहीं ला पाता ?

लौकिक हो चाहे अलौकिक जहाँ भी जो कोई विभूति, संपदा और सफलता दिखाई पड़ती है, वे परिश्रम के आधार पर ही प्राप्त की जा सकती हैं। सम्पत्ति हो, कीर्ति अथवा श्रद्धा हो तीनों उपलब्धियाँ केवल पुरुषार्थ के बल पर ही प्राप्त होती हैं। यही कारण है कि किसी की प्रतिभा का तभी परिचय मिलता है, जब वह उस दिशा में पुरुषार्थ करता दिखाई देता है। अन्यथा संघर्ष के अभाव में वह प्रतिभा भी अरणी में आग की तरह दबी पड़ी रह जाती है।

इन दिनों बम्बई का वेंकटेश्वर प्रेस भारत में प्रतिष्ठित और कलात्मक छपाई के लिए प्रसिद्ध है। उसकी यह ख्याति तभी से है, जबकि बड़े-बड़े शहरों में भी नाम मात्र को प्रेस नहीं थे। इस प्रेस की सम्पत्ति और विकास को आँक पाना मुश्किल है तथा आश्चर्य होता है, यह जानकर कि एकाकी व्यक्ति ने किस प्रकार इसकी इतनी गहरी नींव डाली। उससे भी ज्यादा विस्मय विमुग्ध कर देने वाली बात तो यह है कि इस प्रेस के संस्थापक मारवाड़ से रोजी-रोटी की तलाश में बम्बई आये थे। तब न उनके पास प्रतिभा थी और न ही पैसा था। शरीर पर पहने हुए कपड़ों के अतिरिक्त उनके पास कुछ भी नहीं था। गुजारे के लिए उन्होंने एक बुकसेलर के यहाँ नौकरी कर ली। दिन-रात मेहनत करके वे अपने काम में लगे रहते तथा पुस्तकें बेचते। साथ ही उन्होंने अपनी मंजिल भी निर्धारित कर ली, इसे प्राप्त करने के लिए वे बड़ी मितव्ययिता बरतते और एक-एक, दो-दो पैसे इकट्ठे करते रहे। बचाये गये थोड़े बहुत पैसों से उन्होंने छोटी-छोटी पुस्तकें खरीद कर बेचना शुरू किया। सुबह खरीदी हुई पुस्तकों को रात तक बेच लेते। कन्धे पर झोला लटकाये निरन्तर पुस्तकें बेचने वाले उस युवक को लोग पहचानने लगे तथा अधिकांश उसी से पुस्तकें खरीदने लगे।

इस प्रकार धीरे-धीरे वह नवयुवक एक अच्छा पुस्तक विक्रेता बन गया। अपनी दुकान में अथक परिश्रम करते-करते इतना कमा लिया कि वह अब बड़ी पुस्तकें भी बेचने लगे तथा कुछ पुस्तकें छपाना भी आरम्भ कर दीं। इस काम में भी उक्त युवक ने इतना परिश्रम किया कि उनमें एक अच्छे प्रकाशक की प्रतिभा जाग उठी। निदान उन्होंने अपने परिश्रम के बल पर साहस किया और धीरे-धीरे इतना विकास किया कि बम्बई का वेंकटेश्वर प्रेस आज भी उनके परिश्रम तथा पुरुषार्थ की यश गाथा गा रहा है।

न केवल वेंकटेश्वर प्रेस के मालिक वरन् टाटा, वाटा, बिड़ला आदि धनकुबेर कहे जाने वाले परिवारों के पुरखे न तो जन्मजात प्रतिभासम्पन्न थे और नहीं धनीमानी। जहाँ से वर्तमान विकास का दौर आरम्भ हुआ उसकी नींव में अगाध परिश्रम ही छुपा पड़ा है। जमशेदजी नौशेरवाँ टाटा को तो बचपन में अपने पिता के साथ रोजी-रोटी की तलाश में पैतृक निवास छोड़कर बम्बई आना पड़ा तथा वहाँ दर-दर की ठोकरें खानी पड़ी थीं। लेकिन उन्होंने परिश्रम से कभी जी न चुराया और उसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के आधार पर धीरे-धीरे उनमें प्रतिभा का विकास होता गया, जिससे उन्होंने इतने लम्बे-चौड़े कारोबार की स्थापना की। उनके वंशजों ने भी इसी परिश्रम परम्परा का अनुकरण करते हुए अपने औद्योगिक क्षेत्र को आगे बढ़ाया।

यह तो हो गयी उद्योग-धन्धों और व्यवसाय, रोजगार की बात। विभिन्न विषयों के विद्वान, समाज सुधारक, शिक्षाशास्त्री, क्रान्ति के जनक तथा संस्कृत भाषा के पण्डित ईश्वर चन्द्र विद्यासागर को प्रारम्भ में न तो ऐसी परिस्थितियाँ प्राप्त हुई थीं कि वे निर्बाध रूप से अपनी शिक्षा चला सकें और न ही कोई ज्ञान विद्या उन्हें विरासत के रूप में मिली थी। पिता अपनी थोड़ी-बहुत योग्यता के बल पर केवल एक प्राथमिक शाला में अध्यापक बन पाने में ही सफल हो सके। ऐसी परिस्थितियों में यह कैसे कहा जा सकता है कि विद्वत्ता और योग्यता विद्यासागर के सामने पके हुए फल के रूप में सामने आ गयी और उन्हें प्राप्त हुई।

विद्यासागर जी विद्यावान नहीं हो सकते थे यदि वे अठारह-अठारह घण्टे काम न करते और रात-रात भर जगकर पढ़ते न होते। परिस्थितियाँ तो ऐसी थीं कि पैसों के अभाव में अपने घर में रोशनी तक का प्रबन्ध कर पाना कठिन था और वे सड़क पर लगी लालटेनों के नीचे उनकी रोशनी तले रात-रात भर पढ़ते रहते। सोचा जा सकता है कि यदि वे ऐसा न कर पाते तो कैसे आगे बढ़ने में कामयाब हो सकते थे।

अमेरिका के स्व. राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन के पास प्रतिभा से भी अधिक परिश्रम का बल था और उसी बल के सहारे जंगल से लकड़ी काट-काटकर लाते, शहर ले जाकर बेचते तथा बारह मील पैदल घूमकर किताबें लाते और पढ़कर लौटाने जैसी प्रगित साधना सम्भव हो सकी। इसके अतिरिक्त लिंकन को अपने जीवन में जितनी बार असफलताओं का मुँह देखना पड़ा, उतनी असफलताएँ हम अपने सामान्य जीवन में नहीं देख पाते होंगे। लेकिन लिंकन ने हिम्मत न हारी और वे हार-हारकर भी परिश्रम करते गये। पुरुषार्थ से उन्होंने मुँह नहीं मोड़ा और अन्ततः अपने लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल हुए।

प्रतिभा परिश्रम के अभाव में पंगु और असमर्थ है। वहीं परिश्रम के साथ प्रतिभा हो ही यह कोई अनिवार्य नहीं है। प्रतिभा के अभाव में भी परिश्रम और पुरुषार्थ के बल पर लक्ष्य तक पहुँचा जा सकता है, जबकि परिश्रम के बिना प्रतिभा कुछ भी कर पाने में समर्थ नहीं है। अतएव महत्त्वाकांक्षी प्रत्येक व्यक्ति को अपने साधन पथ पर आरूढ़ होने से पहले यह देखना चाहिए कि ऊँचे चढ़ने के लिए जिस श्रम की आवश्यकता है वह श्रमशीलता हमारे व्यक्तित्व में नहीं है तो उसका विकास करना चाहिए और यदि है तो उसमें निखार लाना चाहिए। इसी आधार पर महत्त्वाकांक्षाएँ पूरी हो सकती हैं अन्य और किसी आधार पर नहीं। यह हर व्यक्ति के ऊँचे उठने का मूल कारण रहा है और रहेगा उदाहरणों को सामने रखने का अवसर न मिलने की शिकायत करने वालों से पूछा जाये तो टाटा, बेंकटेश्वर, बिरला आदि के पास प्रारम्भ में कौन-से ऐसे साधन थे जिनके सहारे वे उत्कर्ष कर सके। निश्चय ही ये उदाहरण उनकी शिकायत रोककर उन्हें लगन, पुरुषार्थ एवं सच्चाई में विश्वास करने का अवसर देंगे और यदि उनके हृदयों में उन्नति करने की सच्ची आकांक्षा होगी तो वे अपने पूरे तन-मन से किसी भी क्षेत्र को लेकर आगे बढ़ चलेंगे।

संसार में जितने भी महान एवं महापुरुष हुये हैं, उनके पास यदि कोई साधन-सामग्री थी तो वह उनकी लगन, उत्साह और निरन्तर बढ़े चले जाने की आकांक्षा ही रही है। एक बार जिस उद्देश्य को उन्होंने निश्चित कर लिया फिर जीवन भर उससे विचलित न हुए फिर चाहे उन पर विपत्तियों के पहाड़ ही क्यों न टूट पड़े हों। अपने उद्देश्य के साथ जो भी अपने जीवन को एकाकार कर देता है, वह अपने लक्ष्य को अवश्य प्राप्त कर लेता है। कोई संकट, कोई भी अवरोध उनकी गति को अवरुद्ध नहीं कर पाता।

यदि हम अपने कार्य की सिद्धि में अखण्ड विश्वास लेकर चलते हैं, आशा एवं उत्साह को कम नहीं होने देते, असफलता एवं अवरोधों को महत्त्व नहीं देते तो निश्चय ही हमारा पुरुषार्थ सफल होगा। हमारा आशावाद हमें निरन्तर आगे बढ़ाने में सहायक होगा। लक्ष्य के प्रति हमारी पवित्र भावना, हमारे मनोबल तथा हमारी कार्य-क्षमता एवं योग्यता को निरन्तर बढ़ाती रहेंगी।

जीवन का एक छोटा-सा सिद्धान्त है कि काम करने से काम की क्षमता तथा योग्यता बढ़ती है। निरन्तर के कर्तृत्व में चमत्कार की शक्ति रहा करती है। संसार में हजारों ऐसे विद्वान हो गये हैं जिन्होंने शिक्षा के नाम पर विद्यालय का द्वार तक नहीं देखा किन्तु अपने अध्ययन एवं अध्यवसाय के बल पर वे पारंगत पण्डित हुए हैं।

कितनी ही बड़ी आपत्ति अथवा असफलता क्यों न आ पड़े अपने मनोबल को न गिरने दीजिए अपनी आशा को मन्द मत पड़ने दीजिए—निश्चय ही अन्धकार के बाद प्रकाश की बारी आती है, असफलता के पश्चात् सफलता आयेगी ही। यदि भूल से भी आपने निराशा को एक क्षण को भी प्रश्रय दे दिया तो समझ लीजिये कि आगे का काम तो चौपट होगा या साथ ही पीछे की सफलता भी धुँधली पड़के निर्जीव हो जायेगी।

किसी भी असफलता अथवा प्रतिकूलता से हार मान बैठना जीवन का दाँव हार जाना है। एक बार हिम्मत हारने से मनुष्य का मन लँगड़ा हो जाता है, उसका उत्साह दूषित होकर मन्द पड़ जाता है। इस कायर वृत्ति को अपने पास फटकने भी न दीजिये। मनुष्यता की शोभा हार-हारकर जीतने में है, असफल होने में है। जो संकट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एवं संघर्षों के बीच से रगड़ता हुआ जीवन में आगे बढ़ता है, उसका जीवन परिमार्जित होकर चमक उठता है। न जाने कितने शारीरिक दोष और मानसिक मल यों ही अनायास ही रगड़-रगड़कर दूर हो जाते हैं। संकट एवं असफलताएँ मनुष्य को नये अनुभव और नये पाठ पढ़ाती हैं। इनसे डरना मनुष्य जैसे श्रेष्ठ प्राणी को शोभा नहीं देता।

यह हर नागरिक का कर्त्तव्य है कि वे अवसर तथा साधनों के अभाव की शिकायत छोड़कर अपने अन्दर निहित शक्तियों पर विश्वास करें, अपने पुरुषार्थ एवं अदम्य उत्साह को जाग्रत करें और अडिग लगन तथा सच्चाई के साथ जीवन के किसी भी नैतिक, आध्यात्मिक, धार्मिक, सामाजिक, आर्थिक अथवा राजनीतिक क्षेत्र में उन्नति कर उज्ज्वल उदाहरण उपस्थित कर लोगों को प्रेरणा दें, जिससे कि वे परिश्रम एवं पुरुषार्थ, सच्चाई तथा ईमानदारी, लगन तथा उत्साह का मूल्य समझकर जीवन में इन गुणों का प्रतिपादन करें, जिससे उनका पिछड़ापन दूर हो और वे एक उन्नत मनुष्य के रूप में हर्ष तथा प्रसन्नता के अधिकारी बनें।

इस क्रम में एक और बात ध्यान रखने योग्य है कि शारीरिक और मानसिक शक्ति काम करने में खर्च होती है। इसकी पूर्ति के लिए जहाँ उपयुक्त आहार की, जल की, स्वच्छ वायु की आवश्यकता पड़ती है। वहाँ थकान मिटाने के लिए 'विश्राम' की भी वैसी ही जरूरत है। शरीर को और मस्तिष्क को सक्रिय बनाये रहने के लिए जिस जीवनी शक्ति की आवश्यकता पड़ती है, उसे पुनः संचय करने के लिए 'विश्राम' अभीष्ट है। खर्च हुई शक्ति को पुनः अर्जित करने का यह सर्वविदित और सुलभ तरीका है।

लगातार कठिन काम करते रहने की अपेक्षा यह अच्छा है कि बीच-बीच में थोड़ा सुस्ता लिया जाय और फिर काम में लगा जाय। देखने भर से ही ऐसा लगता है कि बीच वाला विश्राम वाला समय बेकार चला गया पर असल बात ऐसी नहीं। थोड़ी-सी विश्रान्ति मिल जाने से अधिक उत्साह और अधिक परिश्रम के साथ काम किया जा सकता है। निरन्तर काम करते रहने की अपेक्षा यह बीच में सुस्ताने वाली पद्धति सुविधाजनक भी रहती है और काम की मात्रा भी बढ़ा देती है।

अपनी शरीर रचना में ऐसा प्रतीत होता है कि रक्तसंचार, श्वाँस-प्रश्वाँस आदि की क्रियाएँ निरन्तर अनवरत् रूप से होती रहती हैं, पर वस्तुतः ऐसी बात नहीं है। हर अवयव बीच-बीच में स्वल्पकालीन विश्राम लेता रहता है, तभी उसकी 'निरन्तर' चलती-सी प्रतीत होती कार्य पद्धति अक्षुण्ण बनी रहती है। हृदय को ही लीजिए, वह प्रति मिनट लगभग ७० बार धड़कता है। लेकिन रक्त फेंकने के अपने क्रिया-कलाप में वह निर्धारित व्यवस्था के अनुसार काफी विश्राम लेता रहता है। इसका लेखा-जोखा लेने पर स्पष्ट हो जाता है कि हृदय चौबीस घण्टे में सिर्फ नौ घण्टे काम करता है और १५ घण्टे सुस्ताता है। यदि वह ऐसा न करे तो हर दिन उसे जो काम करना पड़ता है वह सम्भव ही न हो सके। उसे रोज ही इतना खून फेंकना पड़ता है, जिससे रेल का एक टेंकर भर जाय। वह उतनी शक्ति उत्पन्न करता है जितनी बीस टन लोहा तीन फुट तक ऊँचा उठाने वाली क्रेन के लिए आवश्यक है। इतना काम हर दिन जीवन भर करते रहने की क्षमता का एक रहस्य उसका एक मध्यावधि विश्राम को भी समझा जा सकता है।

श्री चर्चिल सदा ही बहुत परिश्रमी और अध्यवसायी रहे, पर द्वितीय विश्वयुद्ध के समय तो उन्हें अत्यधिक काम करना पड़ा। उन दिनों वे ब्रिटेन के प्रधानमन्त्री थे। आयु सत्तर साल। युद्ध का जो असाधारण दबाव आ पड़ा, उससे उसमें १६ घण्टे काम करना आवश्यक हो गया। इसके बिना युद्ध का संचालन और अगणित सामयिक समस्याओं का समाधान इससे कम समय में सम्भव ही न था। सत्तर वर्ष का बूढ़ा व्यक्ति यदि निरन्तर इतना काम उत्तेजित स्थिति में करे तो उसका एक सप्ताह जिन्दा रहना ही शक्य नहीं। श्री. चर्चिल ने दूरदर्शिता से काम लिया। वे काम पूरी जिम्मेदारी से करते रहे, पर साथ ही शरीर की जीवनी शक्ति और मस्तिष्क को सन्तुलित रखने के लिये आवश्यक विश्राम का भी ध्यान रखे रहे।

श्री चर्चिल सबेरे ११ बजे तक अपने बिस्तर में ही पड़े रहते और लेटे हुए ही पत्र पढ़ने, उत्तर लिखवाने, टेलीफोन करने आदि के काम निपटाते। बहुत महत्त्वपूर्ण बैठकें भी वे इसी प्रकार लेटे अपने घर पर बुलाते और उनमें आवश्यक निर्णय लेते। मध्याह्न भोजन के उपरान्त वे एक घण्टा सो जाते। रात के भोजन से पहले वे एक घण्टा और सो लेते। कठिन परिश्रम करते हुए भी उनने शरीर को आवश्यक विश्राम देने का पूरा-पूरा ध्यान रखा। मस्तिष्क से काम तो निरन्तर लेते थे पर उस पर भय, चिन्ता, घबराहट, व्याकुलता आदि उद्वेगों का आतंक एक क्षण के लिए भी सवार न होने देते थे। वे जानते थे कि दस घण्टे काम करने पर दिमाग जितना थकता है उससे ज्यादा शक्ति आधा घण्टे के मानसिक उद्वेग में नष्ट हो जाती है। सही दिमाग से जिसे सही काम लेना हो, उसे हर हालत में मानसिक सन्तुलन को बनाये ही रखना चाहिए और बड़ी से बड़ी कठिनाई आने पर भी उद्विग्न नहीं होना चाहिए।

संसार का सबसे धनी व्यक्ति राकफेलर ९८ वर्ष तक जिया, उसे नितान्त गरीबी की स्थिति में आगे बढ़ते हुए तेल सम्राट बनने में भारी प्रयत्न, श्रम और संघर्ष करना पड़ा। इतनी मेहनत आमतौर से आदमी का कचूमर निकाल देती है और ऐसे अति व्यस्त बहुधन्धी लोग स्वल्प काल में ही मौत के मुँह में चले जाते हैं। —

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रकफेलर का अनौखा अकेला ही उदाहरण इस स्थिति के व्यक्ति के लिये इतना लम्बा जीवन जी सकने का है। यह सब अनायास ही नहीं हो गया। उसने अपनी दिनचर्या को सुनियोजित रखकर इतनी लम्बी और नीरोग जिन्दगी पाई।

राकफेलर दोपहर को आधा घण्टा नियमित रूप से सोते थे। दफ्तर में काम करते हुये ही वे कोच पर सो जाते। इसमें किसी भी कारण व्यवधान उत्पन्न न होने देते थे। जरूरी काम आ जाने पर भी उनकी हिदायत थी कि सोने से उन्हें कोई न जगाये।

अमेरिका के प्रेसीडेण्ट रुजवेल्ट अपना अति उत्तरदायित्व पूर्ण कार्य बारह वर्षों तक निबाहते रहे और उनका क्रम था कि कोई महत्त्वपूर्ण काम आरम्भ करने से पूर्व आध्र घण्टे नींद न आये तो आँखें मूँदकर सुस्ता लेते थे।

प्रख्यात खिलाड़ी कोनीमेक कहता था कि जब कभी दोपहर को बिना सोये उसे खेलना पड़ा तब वह हारा। पर जब उसने थोड़ी-सी नींद बीच में लेली तो पूरी मुस्तैदी और ताजगी के साथ खेला और अच्छी तरह जीता।

गाँधीजी के जीवनक्रम में भी यही व्यवस्था जुड़ी रही। लार्ड इर्विन से भेंट करने वायसराय भवन में वे गये। १५ मिनट पहले पहुँच गये तो उन्होंने वह फालतू समय एक झपकी ले लेने में लगाया। वैज्ञानिक एडीसन को भी ऐसी ही आदत थी। ग्रामोफोन वेकुम शक्ति आदि के कितने ही आविष्कार उसने किये। चिन्तन में सदा व्यस्त रहे, पर समय पर मस्तिष्क को विश्राम देने वाली बात वह कभी भी नहीं भूला। रात को ही नहीं दिन को भी वह बीच-बीच में सोकर ताजगी प्राप्त किया करता था।

विश्राम का समय बर्बादी नहीं है, वरन् अधिक काम करने के लिए अधिक शक्ति संचय की एक वैज्ञानिक पद्धति है। इसका उपयोग हर व्यक्ति को अपनी-अपनी स्थिति और सुविधा के अनुसार करना चाहिए। विशेषतया ढलती उम्र के व्यक्तियों को उसका अधिक ध्यान रखना चाहिए।

यहाँ आलस्य का प्रतिपादन नहीं किया जा रहा है और न प्रमाद, दीर्घसूत्रता या काम चोरी की शिक्षा दी जा रही है। वरन् यह कहा जा रहा है कि अधिक काम करने वाली की शक्ति का अनावश्यक अपव्यय न होने देने का यह उपयुक्त तरीका है, कि काम के बीच में थोड़ा सुस्ताते हुए अपने क्रिया-कलाप को जारी रखा जाय, जिसके लिए बीच में झपकी लेने की सुविधा नहीं है वे कुछ देर तक आँखें बन्द करके शरीर को शिथिल बनाते हुए रिक्लेक्ट कुर्सी पर पड़े रहने से थकान मिटा सकते हैं। युवा आदमी यदि लेटे रहकर जरूरी काम निपटा लिया करें तो उन्हें बिना थके अधिक काम कर सकने का लाभ मिल सकता है।

दिमाग को हर हालत में हल्का रखना चाहिए। भावुक व्यक्ति बहुत करके कल्पनाओं की उड़ान में उड़ते हुए अधिक मस्तिष्कीय शक्ति खर्च करते हैं। दार्शनिक, चिन्तक, बुद्धिजीवी व्यक्ति जिन्हें अपने मस्तिष्क पर नियन्त्रण करने की क्षमता नहीं, अत्यधिक मस्तिष्कीय तनाव के कारण कुसमय में ही मरते हैं। डरपोक, शंकालु व्यक्ति चिन्ता, आशंका, रोष, आवेश, शोक, वियोग की कल्पनाओं में उलझे रहकर एक प्रकार से मन्द आत्महत्या की राह पर चलते हैं और तनावजन्य रोगों के शिकार होकर बेमौत मरते हैं।

हमें श्रम का महत्त्व समझना चाहिए। मस्तिष्क से समुचित काम लेते हुए सफलताओं के शिखर पर पहुँचना चाहिए पर साथ ही यह भूल न जाना चाहिए कि अव्यवस्थित रूप से उत्तेजनात्मक स्थिति में किया जाने वाला श्रम न सफलता प्राप्त कराने में सहायक होता है और न स्वास्थ्य को स्थिर रखने में।

पौष्टिक आहार की महत्ता लोगों ने समझी है और "विटामिन," "टॉनिकों" की ओर ध्यान दिया है, पर यह तथ्य भुला दिया गया है कि शक्ति के अनावश्यक अपव्यय की पूर्ति बिना विश्राम की उपयुक्त व्यवस्था के संभव नहीं। शरीर के आराम की व्यवस्था तो बहुत लोग कर लेते हैं। आलसी स्वभाव और जिम्मेदारी की कमी वाले व्यक्ति भी समय बिगाड़ते और मटरगश्ती करते देखे गये हैं। यह विश्राम नहीं है। सुस्ताने की आवश्यकता उन्हें है जो काम का महत्त्व समझते हैं—श्रम की गरिमा का जिन्हें ज्ञान है। उन्हीं के लिए यह पंक्तियाँ लिखी जा रही हैं। आलसी लोगों से तो क्रियाशीलता बढ़ाने की ही बात कही जा सकती है।

मस्तिष्क को विश्राम देने की लिए—हँसने, मुस्कराने, प्रफुल्लित और प्रसन्नचित्त रहने की आदत डालनी चाहिए। कठिनाइयों के सामने होने पर तो इस अभ्यास की और भी अधिक आवश्यकता है। मुसीबत के समय यदि मानसिक सन्तुलन गँवा दिया जाय और शोक, संताप में उलझ जाया जाय तो उस आपत्ति को पार करने के लिए सही उपाय ही न सूझ पड़ेगा। घबराया हुआ व्यक्ति अपनी सोचने की मशीन को ही बिगाड़ लेता है। गलत या अधूरे निर्णय लेता है। हड़बड़ी में कुछ भी नहीं बनता। ऐसी दशा में विपत्ति और भी अधिक बढ़ती चली जाती है।

कठिन समय को पार करने का उत्तम उपाय मानसिक सन्तुलन की स्थिरता ही है। इसे एक प्रकार के मस्तिष्कीय दबाव हल्का करने वाली विश्राम पद्धति ही कहना चाहिए। हँसते-हँसते मुसीबत के दिन आसानी से काटे जा सकते हैं। प्रसन्नचित्त रहने वाले हँसोड़ स्वभाव वाला अपनी आधी-आपत्ति तो अच्छे स्वभाव के द्वारा ही हल्की कर लेता है। यह कथन सर्वथा सत्य है कि जो कठिनाई से नहीं डरता उससे कठिनाई डर जाती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनःसंस्थान शरीर से भी अधिक सामर्थ्य का स्रोत है। लगातार श्रम से उसे थकाया न जाय तो वह अधिक मात्रा में और अधिक सही काम करेगा। इसी प्रकार उद्विग्नता के तनाव से उसकी रक्षा की जानी चाहिए। सन्तुलित और बिना तनाव की मानसिक स्थिति बनाये रखकर अधिक बुद्धिमत्ता, दूरदर्शिता और तज्जनित प्रगतिशीलता का लाभ सहज ही उठाया जा सकता है।

प्रगति पथ के दो अवरोध, जिनसे बचना ही चाहिए

मानव जीवन को भगवान का सबसे बड़ा अनुदान माना गया है। कहा गया है कि देवता भी इस पृथ्वी पर जन्म लेने को तरसते हैं, क्योंकि यही कर्मभूमि है। कर्म के द्वारा ही मनुष्य को, अपवर्ग और मुक्ति की प्राप्ति होती है। कर्म ही ऊँचा उठाने और आगे बढ़ाने की शक्ति रखता है। संसार में जो कुछ प्रशंसनीय है और आदरणीय है, उस सबका आधार कर्म ही होता है, वेद में कहा गया है—

देवस्य सवितुः सर्वेकर्म कृण्वन्तु मानुषाः।
शंनो भवन्त्वप ओषधी शिवाः॥

(अथर्ववेद ६/२३/३)

अर्थात्—"जीवन, प्रेरणा और प्रकाश देने वाले परमात्मा के प्रसाद से हम सदैव अपने नियत कर्म पूरे करते रहें, जिससे अन्न-जल आदि पदार्थों का सुख प्राप्त हो सके।"

असद् भूम्याः मभवत् तद् यामेति महद्यामेव्यधः।
तद् वै ततो विधूपायत प्रत्यक् कर्तारमृच्छतु॥

४/१९/६

"दुष्टता और उद्धततापूर्ण कार्य चाहे कैसे भी क्यों न हों करने वाले को संताप ही देते हैं और उसी पर अपनी प्रतिक्रिया प्रकट करते हैं।"

मानव जन्म की सफलता और उसे सार्थक बनाने का मार्ग यही है कि मनुष्य कर्ममय जीवन व्यतीत करता रहे। अकर्मण्य जीवन संसार में बहुत बड़ा अभिशाप माना गया है। इस प्रकार कर्म विमुख, आलसी, प्रमादी व्यक्ति को संसारी लोग तो क्या देवता भी अपने अनुग्रह का पात्र नहीं समझते और वह सदा दुर्भाग्य, भगवान की प्रतिकूलता का रोना ही रोता रहता है। 'ऋग्वेद' में स्पष्ट शब्दों में कहा गया है—

इच्छन्ति देवाः तन स्वप्नाय स्पृहयन्ति न प्रमादतन्द्राः॥

अर्थात्—"देवता लोग भी शुभ कर्म करने वाले पुरुष की कामना करते हैं। आलसी और प्रमादी व्यक्ति को वे अपना उपहार कभी नहीं देते।"

जो व्यक्ति कर्म से विमुख रहकर निकम्मा जीवन व्यतीत करते हैं, वे वास्तव में बड़े अभागे हैं। वे उस मूर्ख की तरह हैं, जो अपने पैर में आप ही कुल्हाड़ी मारते हैं अथवा एक बहुमूल्य रत्न को पाकर भी उसका मूल्य न समझकर गँवा देते हैं। सन्तों का वचन है कि **"हीरा जन्म अमोल था, मूरख दिया गँवाय।"** इसका आशय यही है कि जो व्यक्ति अपने जीवन को शुभ कर्म द्वारा सार्थक नहीं बनाता, उसका जन्म लेना वृथा ही हुआ। अन्य रोग तो मनुष्य के किसी एक अंग को ही थोड़े समय के लिए बेकार बनाते हैं, पर आलस्य रूपी रोग समस्त शरीर को ही सदा के लिए निरर्थक बना देता है। यह धन, सम्पत्ति, उद्योग-धन्धे को ही नष्ट नहीं करता वरन् मनुष्य के सद्गुणों, यश और सुनाम को भी चौपट कर डालता है। मूर्ख व्यक्ति सुख और आराम की कल्पना करके आलस्य को अपनाता है, सोचता है कि काम का बोझा हट जाने से चैन की जिन्दगी व्यतीत करेंगे, पर यह उसे ऐसा जड़ और निकम्मा बना देता है कि दूसरे तो उसकी सर्वथा उपेक्षा करने ही लगते हैं, कुछ समय पश्चात् स्वयं अपने को भी अपना जीवन भारस्वरूप प्रतीत होने लगता है।

आलस्य का स्वभाव पड़ जाने से मनुष्य काम को टालने का प्रयत्न करने लगता और उसके लिए तरह-तरह के बहाने ढूँढ़ने लगता है। वह उपयोगी कामों को त्यागकर बैठे-ठाले निरर्थक काम करने लगता है जैसे गप्प हाँकना, लम्बी-चौड़ी बातें बकते रहना, वे सिर-पैर की कल्पना करते रहना। ख्याली दुनिया में रहने और व्यर्थ की कल्पनाओं को ही वास्तविक समझते हुए मन के लड्डू खाया करता है। पर मन के लड्डुओं से किसी की भूख कब मिटी है ? जैसे-जैसे वह कल्पना जगत में आगे बढ़ता जाता है, वास्तविकता से वंचित होता जाता है। वह अपनी ख्याली दुनिया में तो अपने लिये बड़े-बड़े रंगीन स्वप्न देखता है, कभी राजा बनता है, कभी नेता, कभी बड़ा अमीर। पर असली दुनिया में उसे जीवन व्यतीत करने को मामूली साधन भी नहीं मिलते। इसलिये सुख-दुःख की लहरों में डूबता-उतराता रहता है। कभी तो वह भविष्य के लिए बड़ी-बड़ी सफलता की सुखद कल्पना करके फूलकर कुप्पा हो जाता है और कभी खाने, पहिनने, रहने का कोई साधन न देखकर घबड़ा उठता है, कभी रोग, शोक, आपत्ति का भय करके रोने लगता है। इस प्रकार कर्म को छोड़कर वह हवा में उड़ने वाले तिनके के समान कभी आकाश में उड़ जाता है और कभी गड्ढे में गिर पड़ता है। उसका अपना कोई अस्तित्व नहीं रहता, परिस्थितियाँ जिस तरफ ढकेल देती हैं, उसी तरफ लुढ़क जाना पड़ता है।

इस तरह के जीवन का अधिक समय तक अभ्यस्त रहने से मनुष्य की दशा दयनीय हो जाती है। मानसिक दृष्टि से उस पर जड़ता का आक्रमण हो जाता है, जिससे उत्साह और साहस का अभाव हो जाता है,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिमाग कुन्द हो जाता है, बुद्धि मन्द पड़ जाती है और मानसिक शक्तियाँ क्षीण होने लगती हैं। शारीरिक दृष्टि से भी किसी तरह के व्यायाम तथा भरपूर परिश्रम के बिना हाथ-पैर कमजोर पड़ने लगते हैं, पाचन शक्ति घटने लगती है। जिससे रक्त निर्बल पड़ जाता है और सम्पूर्ण शरीर में निर्बलता की अधिकता दिखाई पड़ने लगती है। ऐसी स्थिति में तरह-तरह के रोगों का आक्रमण होना स्वाभाविक ही है और मानसिक अवसाद के साथ मिलकर उनका स्वरूप और भी भयंकर हो जाता है। आलसी स्वभाव के कारण वह पहले ही कम हिम्मत, डरपोक हो जाता है, रोगों के आक्रमण से घबड़ाकर उसका रोना-धोना, भाग्य और ईश्वर को कोसना और भी बढ़ जाता है। वह इस प्रकार लोगों की सहानुभूति, सहायता प्राप्त करना चाहता है, पर लोग यह देखकर कि उसने अपनी ऐसी हालत स्वयं ही बनाई है और हराम की कमाई की इच्छा रखने वाला है, उसकी उपेक्षा ही करते रहते हैं।

आध्यात्मिक दृष्टि से भी ऐसे व्यक्ति का पतन होने लगता है, क्योंकि आलस्य तमोगुण का एक प्रधान चिह्न है। अन्य दोष-गुणों में मानसिक, नैतिक या चारित्रिक अधः पतन तो होता है पर काम, क्रोध लोभ में फिर भी कर्मण्यता तो बनी रहती है। अपनी असद् प्रवृत्तियों के लिए ही सही, दूषित आचरण वाला व्यक्ति उल्टा-सीधा काम, उखाड़-पछाड़ तो करता ही रहता है। पर आलसी तो जड़ बनता जाता है और इससे उसके उद्धार की आशा ही समाप्त होती चली जाती है। इस सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द के एक सेवक का किस्सा विशेष शिक्षाप्रद है। वह नौकर उनके बेरूड़ आश्रम में कार्य करता था, पर स्वभाव से बड़ा आलसी था। इस दुर्गुण के कारण आयु का एक बड़ा भाग व्यतीत हो जाने पर भी वह बिल्कुल हीन अवस्था में पड़ा हुआ था। वह कभी-कभी स्वामी जी से कहा करता कि 'महाराज ! आप संसार को उद्धार का, मुक्ति का मार्ग दिखलाते हैं, मैं तो आपका तुच्छ सेवक हूँ, मुझे भी अपनी दशा सुधारने का कोई उपाय बतला दीजिये। स्वामी जी उसे उत्तर देते कि तुम आलस्य को त्याग दो ! अगर कोई अच्छा काम न बन पड़े तो चोरी, बदमाशी, ठगी ही करने लग जाओ, पर आलस्य को छोड़ दो, तो तुम्हारा उद्धार हो सकेगा !' इस कथन का तात्पर्य यही था कि दुष्प्रवृत्तियों के पंजे में फँसे व्यक्ति में और कुछ नहीं तो सजीवता तो रहती है, जिससे कोई उत्तम संयोग मिल जाने पर वह अपना सुधार करके सत्कर्म भी कर सकता है। जैसे वाल्मीकि, अंगुलिमाल, नामदेव, रसखान आदि अनेक सन्तों के उदाहरण मिलते हैं, जो आरम्भ में कुत्सित जीवन व्यतीत करते थे और बाद में सत्संगित पाकर अनुकरणीय चरित्र वाले बन गये। परन्तु आलसी व्यक्ति, जिसने निकम्मापन अपना लिया है और ख्याली दुनिया में रहने से जिसे कर्त्तव्यशून्यता ने घरकर लिया है, वह किस प्रकार अपने उद्धार की आशा कर सकता है ?

आलस्य की तरह बेकारी भी मनुष्य में दोष उत्पन्न करने वाली है। जिसका दिमाग खाली रहेगा, वह कुछ न कुछ खुराफात ही सोचेगा और वैसा ही करेगा। आजकल बेकारी उद्योग-धन्धों की अव्यवस्था के कारण भी पैदा होती है, पर उसका एक कारण यह भी होता है कि लोग परिश्रम का काम न करके हल्का-फुल्का काम करना चाहते हैं। मेहनत-मजदूरी के बजाय कुर्सी पर बैठने के ही काम पसन्द करते हैं। अगर आदमी किसी प्रकार के छोटे-बड़े काम करने में बेइज्जती या छोटेपन का ख्याल न करे और जिस समय जो काम मिल जाये उसी को पूरी लगन से करे तो बेकारी की समस्या कभी पैदा नहीं हो सकती। आदमी के व्यक्तित्व में भी कोई कमी आती है तो खराद न होने से, यह तभी सम्भव है, जब आदमी सतत श्रमशील बना रहे कोई बड़ा न सही तो छोटा काम और ज्यादा वेतन का नहीं तो कम तनख्वाह वाली नौकरी करके भी मनुष्य बेकारी से अपना पीछा छुड़ा सकता है और फिर समय में मौका आने पर वह उससे अच्छा भी काम पा सकता है।

आलस्य की तरह गन्दगी भी मनुष्य के लिए कलंकस्वरूप और पतनकारी है। यह एक ऐसा दुर्गुण है कि जिससे मनुष्य निन्दा का पात्र बनता है और लोग उससे घृणा करने लगते हैं। गन्दगी का एक कारण तो आलस्य होता है और दूसरा लापरवाही तथा गन्दा रहने का स्वभाव। शरीर की, वस्त्रों की, मकान की सफाई करने में समय और परिश्रम लगता ही है। जिन लोगों में निकम्मेपन की आदत पड़ जाती है और कामचोर बन जाते हैं, वे आलस्यवश गन्दे बने रहते हैं। एक कहावत है कि "कुत्ता भी जहाँ बैठता है वहाँ पूँछ से झाड़कर बैठता है।" पर मनुष्य कहलाने वाले ऐसे प्राणियों की कमी नहीं जो अपने निजी घर को ही गन्दा नहीं रखते वरन् जहाँ बैठते हैं, उसे भी गन्दा करके रख देते हैं। ऐसे आदमी अगर धर्मशाला में ठहरते हैं तो उसमें कूड़े का ढेर लगा आते हैं, मुसाफिर खाने में बैठते हैं तो वहाँ पर थूक, पीक, नाक आदि गिरा देते हैं। रेल में जाते हैं तो उसे पानी और छिलकों से दूसरों के बैठने के नाकाबिल बना देते हैं। ऐसे ही लोग नालियों में बच्चों को टट्टी बैठा देते हैं, गली में ऊपर से कूड़ा फेंक देते हैं और अपने घर की नालियों और पाखानों को ऐसा गन्दा रखते हैं कि किसी सभ्य व्यक्ति के लिए उनका उपयोग करना भी कठिन होता है। ऐसे लोग गन्दगी का अनुभव नहीं करते, न उसमें अपने लिए कोई शर्म की बात समझते हैं। इनमें से बहुत-से कपड़े-लत्ते के फैशन और चमक-दमक का तो बहुत शौक रखते हैं, पर जहाँ वे रहते हैं, वहाँ उनके आस-पास सफाई का ध्यान उन्हें कभी नहीं आता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गन्दा रहना एक शारीरिक दुर्गुण ही नहीं मानसिक दृष्टि से भी हीनता का द्योतक है। जिसका शरीर गन्दा रहेगा, उसका मन भी कदाचित ही स्वच्छ रह सकेगा। जो अपनी सफाई नहीं रख सकता वह किसी दूसरे की सेवा, सहायता क्या कर सकेगा ? ऐसे व्यक्ति में आलस्य; प्रमाद, अनुत्साह, निराशा, अव्यवस्था, दीर्घ सूत्रता, पेटूपन आदि दुर्गुण भी प्रायः उत्पन्न हो जाते हैं। ऐसे आदमी से पुरुषार्थ और प्रगति की आशा तो की ही कैसे जा सकती है ? वह जीवन के सच्चे सुख से अपरिचित होता है केवल जिन्दगी के भार को ढोता है। उसके चारों ओर भी परमात्मा के वही अमूल्य वरदान बिखरे होते हैं, जिनका उपयोग कर के अन्य लोग सुखी और समृद्ध बन जाते हैं, पर ऐसे निकम्मे लोग 'पानी में भी मीन पियासी' वाली कहावत के अनुसार सदा भूखे-नंगे ही बने रहेंगे। वे अपनी दुरावस्था के लिये दूसरों को दोषी समझते हैं, पर दरअसल उनका आलसी स्वभाव और गन्दापन ही उनके पतन और दुर्दशा का कारण होता है।

कुछ लोग गन्दगी का सम्बन्ध गरीबी से जोड़ा करते हैं। वे कहते हैं कि हमारे पास इतना पैसा, ऐसे साधन ही नहीं कि हम सफाई से रह सकें। पर इस कथन में वास्तव में कुछ भी सच्चाई नहीं है। सफाई, स्वच्छता में गरीबी को बाधक कहना एक बहाना मात्र है। आप अपने चारों तरफ ध्यान देकर देखेंगे तो सैकड़ों गरीब लोगों के घरों को सदा लिपा-पुता और झाड़ा-बुहारा पायेंगे, जबकि अनेक अमीर कहलाने वालों के यहाँ घर के पदार्थ अस्त-व्यस्त पड़े रहते हैं और सिगरेटों के टुकड़े, पान की पीक आदि की गन्दगी फैली रहती है। शारीरिक दृष्टि से भी बहुसंख्यक गरीब नहा-धोकर स्वच्छ रहते हैं, जबकि अनेक विलासी धनी लोग चाहे कपड़े भले ही बढ़िया पहिन लें, स्वच्छता की निगाह में बड़े गन्दे होते हैं। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि स्वच्छता और सफाई मन की स्थिति पर निर्भर हैं। जिनमें आलस्य न होगा वह चाहे तो प्रत्येक अवस्था में गन्दगी से बचकर रह सकता है। ऐसा मनुष्य ही अपना और दूसरों का कुछ उपकार कर सकता है। आलसी और अकर्मण्य व्यक्ति तो संसार के लिए भारस्वरूप हैं जो दूसरों के परिश्रम पर चैन करना चाहते हैं।

इन्होंने तो कभी शिकायत नहीं की

अपंगता, बीमारी, असमर्थता आदि से संकटग्रस्त, बेकारी का रोना रोने वाले लोगों से दुनिया भरी पड़ी है। इतना ही नहीं कुछ तो स्वास्थ्य शरीर जैसी मजबूत और उपयोगी वस्तु पाकर भी दुर्भाग्य का रोना रोते हैं। वह लज्जा की बात नहीं तो क्या है ? यदि अभावग्रस्त और अपाहिज लोग भी उल्लेखनीय सफलताएँ प्राप्त कर सकते हैं, तो पढ़े-लिखे स्वच्छ नवयुवक, बेकारी, बेरोजगारी और असफलता के लिए बेचैन क्यों हों ? यदि साहस करें, लगन जगायें और जहाँ हों उसी स्थिति से आगे चल पड़ने के लिए कटिबद्ध हो जायें तो संसार में समस्या जान पड़ने जैसी कोई परिस्थिति न रहे। परमात्मा की सृष्टि में विवशता को कोई स्थान नहीं। परिश्रम और पुरुषार्थ से प्रत्येक कठिनाई जीती जा सकती है।

एक जन्मजात रोगी, गरीब घर में पैदा हुआ, कुरूप, काना, असहाय बालक निश्चित लक्ष्य बनाकर अध्यवसायपूर्वक उसमें रत रहा। लक्ष्य था—अँग्रेजी का शब्दकोष तैयार करना। सम्भव है कोई आशंका करे कि कोई उनका सचिव या सहयोगी रहा होगा, जिसने उसकी सहायता की हो ? ऐसी भी कोई बात नहीं। उनकी पत्नी ही रोटी पानी की जितनी सुविधा देकर सहयोग कर सकी, वही था मात्र सहयोग। कोष तैयार हो जाने के बाद जिन व्यक्तियों ने उन्हें उपेक्षित, तिरस्कृत किया था उनने ही बाद में उनका हार्दिक सम्मान किया। वह सुप्रसिद्ध विद्वान जानसन थे। विद्वानों ने इन्हें सिर पर उठा लिया और वे अँग्रेजी भाषा के अद्वितीय विद्वान मान लिए गए। सरकार ने उनके काम के उपलक्ष में जीवनभर के लिए बहुत बड़ी पेंशन बाँध दी। सेम्युअल जानसन देखते ही देखते नीचे से उठकर शिखर पर पहुँच गए।

कोई समान्य व्यक्ति यदि उन परिस्थितियों में रहता तो भाग्य या देव का रोना रोते हुए समाज पर भार बनकर रहने के सिवाय कुछ न कर पाता। वास्तव में साधनों की सुविधा से महान कार्यों का मूल्य कम हो जाता है। किन्तु विपरीत परिस्थितियाँ किसी महान कार्य का मूल्य और भी बढ़ा देती हैं। कोष का जितना महत्त्व है जानसन के उस धैर्य और अध्यवसाय का भी उतना ही है। विलासिता को भोगते रहने वालों का ध्यान जीवन की आदर्शता की ओर आकृष्ट नहीं हो पाता। धन की बहुलता के घमण्ड में अपने आपको बड़ा मान बैठने वालों की नजर, ज्ञान सम्पदा की महानता को समझ नहीं पाती। ऐसे धनी व्यक्तियों से वे साधन सुविधाहीन मानव बड़े हैं, जिनने संस्कृति के उत्थान हेतु ज्ञान के मोती समाज को अर्पण किए हैं। उनके श्रम और सेवा की गाथा उनके द्वारा किए गए उच्च आदर्शों की अमरता सदा ही गाती रहेगी।

लाहौर के पद्मराज अरोरा के जन्म से ही हाथों की उँगलियाँ नहीं थीं। इस अपंगहस्त पुत्र को देखकर अभिभावकों को बड़ी वेदना हुई और उन्होंने लड़के को परिवार पर बोझ समझ लिया। उसके लिए वे सदा चिन्तित रहते थे। किन्तु इस बाधित पुत्र ने अभिभावकों को अधिक दिनों तक चिन्ताग्रस्त नहीं रहने दिया। उसने वह करके दिखला दिया जो प्रायः पूर्ण स्वस्थ एवं शुभांगी भी नहीं कर सकते। केवल एक क्षेत्र में नहीं बल्कि अनेकों क्षेत्रों में अपने पुरुषार्थ की उल्लेखनीय छाप छोड़कर दिखला दिया कि परमात्मा ने इतना कुछ दिया कि बाधाओं में भी शिक्षा से लेकर कार्यालय और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अखाड़े से लेकर खेल के मैदान तक में ख्याति प्राप्त की जा सके।

अबोधावस्था तक तो वह खेलता-कूदता, मस्ती करता रहा, किन्तु चेत आते ही उसने जाना कि प्रकृति ने उसके साथ मखौल ही नहीं अन्याय भी किया है। अपने जैसे हस्तहीन भिखारियों एवं बेकारों को देखकर वह और भी खिन्न हो जाता एवं सोचता रहता है कि क्या इनके समान ही मेरे जीवन को व्यर्थ बनाने के लिए ही प्रकृति ने मेरे दोनों पहुँचे छीने लिए हैं। मनोभावों की धारा में मोड़ आया और जीवन परीक्षा में सफलता के लिए दृढ़ निश्चय, पुरुषार्थ तथा प्रयत्न की महत्ता स्थापित करने और लोगों के सम्मुख यह उदाहरण रखने कि शारीरिक अपंगता प्रगति में बाधा नहीं बन सकती, वे उसी दिशा में बढ़ने लगे। मनुष्य में कुछ कर दिखाने की सच्ची लगन हो तो परिस्थितियाँ बाधक नहीं हो सकतीं। नहीं तो कुछ न करने की मृत इच्छा और लगनपूर्वक निश्चय से रहित मन वाले दो हाथ क्या चार हाथ होने पर भी कुछ नहीं कर सकते। विचार ठीक होते ही श्री पद्मराज अरोरा की शक्तियाँ भी अनुकूल हो उठीं और उनकी उन्मुखता आपसे आप सही दिशा झाँकने लगी। शिक्षा के क्षेत्र में बी. कॉम एवं वकालत की पढ़ाई एक साथ उत्तीर्ण की। एक समय में दोहरे कार्य में समय का उपयोग करने का अर्थ है, शीघ्र ही लक्ष्य के समीप पहुँचना। उल्लेखनीय बात और भी है कि उनकी उँगलियाँ न रहने पर भी अक्षरों को छापकर रख देने जैसे सुन्दर सुलेख को केवल हथेली से दबाकर ही लिखते थे।

शारीरिक निर्बलता एवं कमजोरी के कारण श्री पद्मराज अरोरा शारीरिक कार्यों में प्रायः दूसरों से पीछे रह जाते हैं। प्रतिस्पर्धा की भावना के साथ अरोराजी ने शारीरिक निर्बलता रहने पर भी शारीरिक कार्यों में दूसरों से आगे बढ़ने का विचार किया इस लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु संयम, नियम के साथ व्यायाम का क्रम प्रारम्भ किया। प्रगति का अभिलाषी उद्योगी पुरुष जिस क्षेत्र में भी पदार्पण करता है अपना स्थान बना ही लेता है। श्री अरोरा को भी प्रारम्भ में कुछ सफलताएँ मिलीं। प्रारम्भिक सफलता से प्रोत्साहन मिलता रहता है और उनने प्रान्तीय स्तर की कुश्ती प्रतियोगिता में द्वितीय स्थान पाया। केवल कुश्ती ही नहीं खेल के मैदान में हाकी, फुटबाल में भी विश्वविद्यालय के चैम्पियन बने। यह होता है कि एक सच्चे मनुष्य तथा पुरुषार्थी का लक्षण। ऐसे लोग ही तो समाज की शोभा और देश का गौरव बनते हैं।

साधारण परिस्थितियों में भी उच्च मनोबल और साहस वाले लोग बड़ी से बड़ी सफलता प्राप्त कर सकते हैं। पुरुषार्थी को न बाधाएँ रोकती हैं और न दुर्भाग्य बुरा कर सकता है। मनुष्य कठिनाई में ही अपने भाग्य का निर्माण करता है। मनुष्य का साहस न छूटे और आशा न टूटे तो संसार इतना बड़ा है कि खोजने पर उसमें कठिनाइयों के निराकरण के योग्य उपाय कहीं न कहीं से उपलब्ध हो ही जाते हैं। अनेकों उत्कृष्ट सफलताएँ ऐसे ही साहसी और उद्यमी मनोबल वाले व्यक्तियों ने पाई है। दैव या भाग्य के भरोसे बैठे रहने वालों को आज तक कहीं भी सफलता नहीं मिली। सफलता तो साहसी और पुरुषार्थी की दासी है। अन्धों को वह क्यों वरण करने लगी।

बुडापेस्ट (हंगरी) में तेरह वर्ष की उम्र तक स्जेनसी लकवे का शिकार था, जो चिकित्सा करा सकते थे, अभिभावकों ने व्यवस्था की। परिणाम कुछ न हुआ। बालक के भावी जीवन के लिए माता-पिता का चिन्तित होना ऐसी परिस्थिति में स्वाभाविक ही था। किन्तु बालक के मन में आशा, उत्साह और प्रयत्न की लहरें हिलोरें ले रही थीं। कहीं उसने पढ़ा कि जल चिकित्सा से लकवे की बीमारी दूर हो सकती है। फिर क्या था उसने जल विहार आरम्भ किया और आनन्द भी लेता रहा। घण्टों पानी में तैरता रहता फिर वाटरपोलो खेलने लगा और उसके बाद मीलों तैरने वाला तैराक बना। १९६२ में स्जेनसी ने तिरजा नदी पर तैराकी का विश्व रिकार्ड जीता। इसके पूर्व कई छोटी-छोटी प्रतियोगिताओं में भी सम्मिलित होता रहा, जिससे अभ्यास बढ़ता रहा। ४१ घण्टे ४० मिनट में २३० किलोमीटर की दूरी तैरकर लोगों को आश्चर्यचकित कर, तैराकी में आदर-सम्मान का पात्र बना। यह सफलता उसने अचानक ही नहीं निरन्तर अभ्यास से प्राप्त की थी। पिछले अभ्यासों में जब भी उच्च सफलता मिली, उनसे अहंकार में नहीं डूबा क्योंकि वह जानता था कि स्वल्प सफलता में डूब जाना अपनी सफलता का मार्ग अवरुद्ध करना है। साथ ही हर सफलता ने उसे नया उत्साह और नई प्रेरणा भी दी।

अमेरिका के श्री अब्राहम नेमेथ ने 'ब्रेल साइड रूल' नामक एक अन्ध शिक्षा प्रणाली प्रचलित की है। जिसके आधार पर आज हजारों अन्धे व्यक्ति शिक्षा ग्रहण कर अपने जीवन को स्वावलम्बी बनाकर जी रहे हैं। इतना बड़ा उपकारी कार्य करने वाले को कोई भी यही समझेगा कि वह स्वस्थ, शुभांगी और धनी रहा होगा। तभी तो इतनी महत्त्वपूर्ण शिक्षा प्रणाली की खोज कर सका। किन्तु श्री नेमेथ इस मान्यता के विपरीत थे। वे बिल्कुल अन्धे थे साथ ही निर्धन भी।

प्रयत्न एवं पुरुषार्थ की महिमा न जानने वालों के लिए संसार में कितनी ही बातें असम्भव और आश्चर्यजनक हो सकती हैं किन्तु जो उद्यमी, प्रयत्नशील और ध्येयवान व्यक्ति होते हैं, वे इन निरर्थक बातों में विश्वास नहीं करते और मनुष्य के लिए कोई भी काम असम्भव नहीं मानते हैं। संसार में असम्भव को कर दिखाने वालों की कमी नहीं रही है। अन्धे नेमेथ ने प्राचीन अविकसित एवं अपूर्ण ब्रेल पद्धति पर चलने वाले अन्ध विद्यालय में शिक्षा प्राप्त की। गणित में रुचि होने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर भी उसका अध्ययन न कर सके, वे इसका अध्ययन कर भी कैसे सकते थे ? क्योंकि उस समय बेल पद्धति में गणित की शिक्षा सुविधा भी नहीं थी। निदान उनने मनोविज्ञान में ही एम. ए. पास किया। किन्तु गणित विषय में उनकी जिज्ञासा कम नहीं हुई। वे बेल पद्धति में गणित की शिक्षा-सुविधा उत्पन्न करने पर निरन्तर विचार करते रहे। उनकी लगन एवं आत्मविश्वास ने उन्हें इस बात पर आश्वस्त कर रखा था कि यदि ईमानदारी से प्रयत्न किया जाय तो अन्धे छात्रों को गणित की शिक्षा देने का भी उपाय निकाला जा सकता है। शिक्षा के बाद काम की खोज करने पर भी कोई काम न मिला तब उनने और अधिक समय खराब करना ठीक नहीं समझा और तकियों के खोल सीने का काम हाथ में लिया। योग्यता और उत्तम व्यवहार के बल पर लोगों की बड़ी गहरी सद्भावना और आर्थिक सम्पन्नता को प्राप्त किया।

संयोगवश फ्लोरेन्स नाम की एक अन्धी किन्तु गुणशील युक्त महिला से इनका परिचय हुआ। इनने सहर्ष विवाह स्वीकार कर लिया। फ्लोरेन्स अन्धी होने पर भी पति की सेवा में कोई कमी नहीं रखती थी। वह नेमेथ को निरन्तर पढ़ने, अन्धों की शिक्षा प्रणाली में विकास करने के लिए प्रोत्साहन देती रहती थी। नेमेथ को पत्नी के इस सहयोग से बड़ा उत्साह और अवलम्बन मिला। वे अपने मुख्य कार्य में संलग्न हो गए। इसके लिए उन्होंने अन्य अनेक भाषाओं का अध्ययन आरम्भ कर दिया और जल्दी ही फ्रेंच, हिब्रू, ग्रीक और लेटिन आदि भाषाओं पर अधिकार कर लिया।

पति से आत्मिक स्नेह और आदर पाने के फलस्वरूप फ्लोरेन्स की आन्तरिक प्रसन्नता उभरी और एक आँख की ज्योति के रूप में वह चमक उठी। एक की ज्योति मिलते ही दोनों पति-पत्नी ज्योतिमान हो उठे। फ्लोरेन्स की नेत्र ज्योति अपने से अधिक पति के काम आने लगी और उनका ध्येय आगे बढ़ गया। उसने पति को पुस्तकें पढ़कर सुनानी आरम्भ कर दीं और नेमेथ जो बोलते थे उसे लिखना भी। दोनों के परस्पर अध्यवसाय और लगन का अद्भुत चमत्कार हुआ कि अन्धों के लिए चलने वाली सरकारी शिक्षा योजना में उल्लेखनीय सहायता मिली और उसी की मदद से अन्धों के लिए गणित की शिक्षा सम्भव हो सकी। इससे पूर्व उनने स्वयं गणित में एम. ए. किया। इस प्रकार अन्धे अब्राहम नेमेथ ने अपने परिश्रम और लगन के आधार पर यह सिद्ध कर दिया कि संसार में मनुष्य के लिए कोई काम असम्भव नहीं है यदि वह उसको करने के लिए तन, मन और धन से पूरी तरह ईमानदार है, नहीं तो ऐसी परिस्थिति प्राप्त दम्पति केवल भीख माँगकर भाग्य को ही कोसते रहते।

समय अमूल्य है, इसकी महत्ता समझें

परमात्मा ने मनुष्य को इस सृष्टि में भेजा तो उसे कोई विशेष स्थूल सम्पदा नहीं दी लेकिन जो कुछ भी दिया वह इतना सक्षम है और इतना मूल्यवान है कि उसके माध्यम से संसार की सभी वस्तुएँ प्राप्त की जा सकती हैं। बुद्धि, जीवन, शरीर के अतिरिक्त इन सबसे अमूल्य अनुदान जो परमात्मा ने मनुष्य को दिया है वह है समय। कहा जाता है कि "मनुष्य की साँसें गिनी हुई हैं" और श्वाँस-प्रश्वाँस का आवागमन निरन्तर चलता रहता है। एक श्वाँस के आने-जाने के साथ ही मनुष्य जीवन की अमूल्य निधि से एक इकाई कम हो गयी।

दूसरे शब्दों में इसे समय भी समझा जा सकता है। जीवन एक सूक्ष्म सत्ता है। उसका कोई प्रत्यक्ष रूप पकड़ में नहीं आता, लेकिन उसकी अभिव्यक्ति को अवश्य अनुभव किया जा सकता है, जीवन की सूक्ष्म सत्ता समय के रूप में ही व्यक्त होती है। अतः हमारी उपलब्धियाँ इस पर निर्भर करती हैं कि हम समय का किस प्रकार, किस प्रयोजन के लिए उपयोग करते हैं।

जो समय का महत्त्व और स्वरूप समझ सका और उसके सदुपयोग के लिए समग्र जागरूकता के साथ तत्पर हो गया समझना चाहिए उसे जिन्दगी मिल गई। अन्यथा इस ओर उपेक्षा बरतने वाले-अन्यमनस्क रहने वाले, क्रमिक आत्म-हत्या ही करते चले जाते हैं। बहुमूल्य मणि मुक्ताओं को फटी थैली में भरकर चलने वाले उन्हें टपकाते जाते हैं और घर पहुँचते-पहुँचते उस निधि को गँवाकर खाली हाथ रह जाते हैं। इसी प्रकार समय के साथ उपेक्षा करने वाले अपने आपके साथ एक क्रूर मजाक करते हैं। अपने भविष्य के साथ यह एक मर्मभेदी व्यंग्य है कि जीवन के बहुमूल्य क्षणों को ऐसे ही खोते-गँवाते चला जाय।

हम क्रमशः मर रहे हैं। जीवन की सम्पदा का एक-एक दाना, एक-एक क्षण के साथ समाप्त होता चला जाता है। बूँद-बूँद पानी टपकाते रहने से भरा-पूरा किन्तु फूटा घड़ा कुछ समय में खाली हो जाता है। जीवन की रत्न सम्पदा हर साँस के साथ घटती चली जाती है। क्रमशः हमारा हर कदम मरण की ओर ही उठता है। आयु वृद्धि के साथ-साथ मरण का दिन निकट से निकटतम आता चला जाता है। जो दैवी वरदान जैसा अमूल्य था—जिसके आधार पर कुछ भी खरीदा, पाया जा सकता था, वह किस प्रकार गलता, जलता, टूटता और मिटता चला जा रहा है, इसे देखने की न इच्छा होती है न फुरसत, फलतः हमारा अनुपम अस्तित्व भूत बनता चला जाता है। इस प्रकार असामयिक मृत्यु की भयंकरता तथा कथित भूत-प्रेतों से कम नहीं। जब समय के सदुपयोग और दुरुपयोग के परिणामों का तुलनात्मक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्तर किया जाता है, तब प्रतीत होता है कि तत्परता और उपेक्षा के बीच दीखने वाला नगण्य-सा अन्तर अन्ततः कितने भारी भिन्न परिणामों के रूपों में सामने आता है।

लेकिन लोग इस ओर नहीं देखते और समय की सम्पदा को खोते चलते हैं। उसके परिणामस्वरूप व्यक्तित्व दीन-हीन ही बना रहता है। फिर वे गरीबी का, अशिक्षा-अज्ञान का, अयोग्यता और अक्षमता का रोना रोते हैं, लोग अपने जीवन में विभिन्न अभावों की शिकायत करते हैं। कोई धन के अभाव में दुःखी है तो किसी के पास ज्ञान नहीं, विद्या नहीं। उसके लिए सिर पीट रहा है। समझ में नहीं आता कि यह हनुमान कब अपनी सामर्थ्य को समझेंगे तथा एक छलाँग मारकर लंका पहुँच जायेंगे। विश्व की सम्पदा, विश्व का ज्ञान-भण्डार तो उनकी बाट जोह रहा है। समय जैसी मूल्यवान सम्पदा का, भण्डार भरा होते हुए भी जो विनिमय कर धन ज्ञान तथा लोकहित को नहीं पा सकते उनसे अधिक अज्ञानी किसे कहा जाय ?

समय अमूल्य है। समय को जिसने बिना सोचे-समझे खर्च कर दिया वह जीवन पूँजी भी यों ही गँवा देता है। यह पूँजी अपने आप खर्च होती है। आप कृपण बनकर उसे सोने-चाँदी के सिक्कों की तरह जोड़कर नहीं रख सकते। यह गतिवान है आप अपनी अन्य सम्पदाओं की तरह उस पर अधिकार जमा नहीं सकते। आपका उस पर स्वामित्व वहीं तक है कि आप उसका सदुपयोग कर लें।

अपनी इस प्राकृतिक धरोहर का अधिकांश मनुष्य समुचित सदुपयोग नहीं करते। बचपन में इतना ज्ञान नहीं होता कि इसका मूल्य समझें। खेल-कूद तथा मित्रों व भाई-बहिनों के झुण्ड के साथ यों ही इस सम्पदा को लुटाते चलते हैं। एक दिन यौवन आ खड़ा होता है। यह यौवन समय के बहुमूल्य वरदान के रूप में मिलता है। यह वह सामर्थ्य होती है, जिसे यदि अधिक समय तक स्थायी बनाया जा सके। तन से मन से बूढ़े न हो जायँ तो गिनी हुई साँसों के इस जीवन में बहुत काम कर सकते हैं। इसे निर्दयता से खर्च कर देने पर बुढ़ापा अपनी कमजोर टाँगों व धुँधली आँखों से हमारा स्वागत करता है तब हम चौंक पड़ते हैं, निराश हो जाते हैं। सिर पर हाथ रखकर चिन्ताओं के सागर में डूब जाते हैं। भला जब यौवन काल में कुछ न कर पाये तो अब क्या कर सकेंगे ? यह निराशा ही ले डूबती है। सच्चा व्यापारी तो वह होता है जो घाटा होने पर भी व्यापार बन्द नहीं करता। धैर्य तथा बुद्धिमत्ता से पुनः अपने उखड़े पाँव जमा लेता है। दो-तिहाई जीवन बीत गया तो क्या हुआ एक तिहाई तो बचा हुआ है, उसमें भी बहुत कुछ काम किया जा सकता है।

प्रकृति ने किसी को गरीब-अमीर नहीं बनाया। उसने तो सबको मुक्त हस्त से अपना अमूल्य वैभव लुटाया है। श्रम की सामर्थ्य तथा समय का अनुदान इन दो अस्त्रों से सुसज्जित करके उसने अपने पुत्रों को जीवन के समरांगण में मस्तक पर तिलक कर विजय श्री वरण करने के लिये ही भेजा है। लेकिन हम प्रकृति प्रदत्त इस अमूल्य वैभव से लाभ नहीं उठा पाते और घाटे में ही रहते हैं। जो समय हमारे हाथ में है, यदि हम किसी उपयोगी कार्य में नहीं लगे हुए हैं तो ठीक है अन्यथा यह क्षण भी बीत गया और भूत हो गया। हमारा सारा वर्तमान भूत में बदलता जा रहा है और यह मालूम भी नहीं पड़ता है कि हमारे हाथ से कितनी बहुमूल्य सम्पदा खो गयी ? पास से पैसा खर्च होता है या कहीं गिर जाता है तो मालूम भी होता है और उसका पश्चाताप होता है। लेकिन समय-सम्पदा जब हमारे हाथ से जाती है तो हमें न पता चलता है और न ही उसका कोई रंज-गम होता है।

वर्तमान क्रमशः भूत में बदल रहा है। भूत के सम्बन्ध में कहते हैं कि वह बड़ा डरावना होता है कहते हैं कि मरने के बाद अशांत व्यक्ति भूत बनता है। मरने के बाद किसकी क्या स्थिति होती है, कौन क्यों और कैसे भूत बनता है और वह कैसा होता है ? यह सब कुछ तो अभी रहस्य के गर्भ में है। लेकिन समय जो वर्तमान भूत में बदलता जा रहा है, वह निश्चित रूप से भयावह दुष्परिणाम उपस्थित करने वाला सिद्ध होता है।

देखना यह है कि हमारा समय नष्ट कहाँ हो रहा है ? इस समय तो लोग चौबीसों घण्टे व्यस्त रहते हैं। एक अजीव-सी व्यस्तता चारों ओर दिखाई देती है, जिस भी व्यक्ति से किसी कार्य के लिए कहिए "समय नहीं है" यही एक उत्तर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्राप्त होता है। अधिकतर शुभ कार्यों के करने के लिए तो किसी के पास समय है अथवा नहीं। क्या मनुष्य के पास वास्तव में समय नहीं रह गया है ? क्या वह इतना व्यस्त हो गया है ? यह एक ज्वलन्त प्रश्न है इस पर विचार किया जाना चाहिए। दिन में २४ घण्टे होते हैं। एक वयस्क के लिए ६-७ घण्टे सोना पर्याप्त है। ८ घण्टे कार्यालय, फैक्टरी अथवा व्यवसाय के लिए रख लीजिए। शेष आपके पास ९-१० घण्टे बचते हैं। प्रातः एक घण्टे का समय शौच, भोजन स्नानादि के लिए रख लीजिए और एक घण्टे सायंकाल त्रिविध कार्यों के लिए रख लें। इस प्रकार लगभग ८ घण्टे नित्य बचते हैं। इसमें यदि २ घण्टे हम मनोरंजन, भोजन, मार्ग में आने-जाने का समय निकाल लें तो ६ घण्टे दैनिक हमारे पास रह जाते हैं। रविवार और अन्य दिनों की छुट्टियाँ इसके अतिरिक्त होंगी। अपने आवश्यक कार्यक्रमों के लिए उदारता से समय देने पर भी आपके पास ६ घण्टे शेष रह ही जाते हैं। हम इनका क्या उपयोग करते हैं ? यदि उपयोग नहीं करते तो वर्ष में हम २१९० घण्टे अर्थात् ३ महीने ६ घण्टे बरवाद कर देते हैं। यह समय किसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी राष्ट्र एवं किसी भी व्यक्ति के लिए अमूल्य निधि है। जीवन-पर्यन्त हमारा कितना समय बरवाद होता है ? हम इसका सहज ही अनुमान लगा सकते हैं। अर्थात् चौथा समय व्यर्थ कार्यों में खर्च कर देते हैं ?

हमारा समय कहाँ और कैसे नष्ट होता है ? यह विचारणीय है। इस प्रकार से समय नष्ट होने का मूल कारण यह है कि हम इसकी उपयोगिता के बारे में जागरूक नहीं है। अधिकतर हमारा समय आलस्य, प्रमाद, लापरवाही में जाता है। हमारा जीवन-क्रम अव्यवस्थित है। किसी भी कार्य का समय निर्धारित नहीं है। यहाँ तक कि लोग समय से कार्यालय भी नहीं पहुँचते। ''हिन्दुस्तानी आदमी'' और ''हिन्दुस्तानी समय'' बहुत प्रचलित शब्द हो गये हैं। गेटे का कहना था कि ''काल बेहद् लम्बा है।''

समय नष्ट होने का एक कारण यह भी है कि—हम अपने काम में रुचि नहीं लेते, काम को टालने की एक आदत-सी बन गई है। इससे कितने ही काम तो शुरू ही नहीं हो पाते, कितने ही काम अधूरे रह जाते हैं। जब अधूरे कामों का अम्बार हमारे सामने लग जाता है तो हम सोच-सोचकर ही परेशान हो जाते हैं। न तो फिर हम अधूरे कामों को ही पूरा कर पाते हैं और न ही नये कार्य को ही प्रारम्भ कर पाते हैं। यदि हम अपने कार्यों में रुचि लें और धैर्य तथा लगन से काम करें, तो सभी कार्य पूरे हो जाते हैं।

बहुत-से लोग समय का मूल्य और महत्त्व समझते हैं। परन्तु उसके सदुपयोग की ओर कोई ध्यान नहीं देते। समय खराब न करने पर भी वे कोई काम निर्धारित समय पर करना आवश्यक नहीं समझते। इस वक्त इस काम पर जुटे हुए है तो उस वक्त उस काम पर। दूसरे दिन उनका यह क्रम टूट जाता है और वे इस वक्त उस काम को उस वक्त इस काम को करने लग जाते हैं।

इस प्रकार की अनियमितता बहुधा विद्यार्थी, अध्ययनशील तथा लिखा-पढ़ी का काम करने वाले किया करते हैं। अशिक्षित व्यक्ति के जीवन में अव्यवस्था हो तो एक बात भी है पर शिक्षा के प्रकाश में आगे बढ़ने वाले का अव्यवस्थित होना वस्तुतः खेदजनक है। इसी प्रकार बहुत-से अध्ययनशील व्यक्ति अपना समय तो खराब नहीं करते किन्तु उनका अध्ययन क्रम निश्चित एवं निर्धारित नहीं होता। वे कभी किसी एक विषय के ग्रन्थ को पढ़ते और पूरा किये बिना ही दूसरा शुरू कर देते हैं। कभी-कभी एक ग्रन्थ को कल के लिये अधूरा छोड़कर उसके लिए निश्चित समय पर दूसरा ग्रन्थ प्रारम्भ कर देते है। बहुधा यह भी देखने में आता है कि अनियमित अध्ययनशील पुस्तकों के समय में समाचार-पत्र और समाचार-पत्रों के समय में साहित्यिक पत्रिकाएँ पढ़ रहे हैं। इसमें सन्देह नहीं कि वे अपना समय बिना पढ़े व्यय नहीं करते किन्तु उस कार्य में क्रम को स्थान नहीं देते। इस कमी के कारण अध्ययन से जितना लाभ होना चाहिये उतना नहीं हो पाता।

कार्यालयों में लिखा-पढ़ी का काम करने वाले अनेक परिश्रमी बाबू लोग अपनी इसी असामयिकता के कारण अच्छे कर्मचारियों की सूची में नहीं आ पाते। वे पूरे समय काम में जुटे रहते हैं और कभी-कभी निर्धारित समय से अधिक समय तक भी। तब भी वे अपने उच्च अधिकारी की प्रियपात्रों की सूची में नहीं आ पाते। क्रम के साथ काम तथा फाइलों को उपयुक्त समय में न देने से उनका आवश्यक काम कभी-कभी पड़ा रहता है और गौण काम पूरा हो जाता है। इसी अव्यवस्था के कारण वे बहुत-से तात्कालिक कामों को भूल जाते हैं। इसलिये उनकी कार्य-कुशलता के अंक कम हो जाते हैं। पत्र लिखने के समय फाइलों का अध्ययन और फाइल पढ़ने के समय टाइप पर बैठ जाने से न तो उनका कोई काम समय पर हो पाता है और न कुशलतापूर्वक। इस प्रकार असमय पूरा हुआ काम अधूरे की श्रेणी में ही गिना जाता है। क्रम एवं सामयिकता से करने पर काम भी कुशलतापूर्वक होता है और आवश्यकता से अधिक समय भी नहीं लगता।

इस प्रकार के अव्यवस्थित कार्यकर्त्ता समय की पाबन्दी को एक बन्धन मानते हैं। उनकी अक्रमिक बुद्धि का तर्क होता है कि समय के साथ अपने को अथवा काम को बाँध देने से मनुष्य उसका इतना अभ्यस्त हो जाता है कि यदि कभी संयोग, विवशता अथवा परिस्थितिवश उसे व्यवधान स्वीकार करना पड़ता है तो बड़ी परेशानी उठानी पड़ती है। प्रातःकाल पढ़ने अथवा व्यायाम करने वालों को यदि दो-चार दिन के लिए बाहर यात्रा पर जाना पड़ जाये तो निर्धारित कार्यक्रम में व्यवधान पड़ जाने से उसकी अभ्यस्त वृत्तियाँ विद्रोह करेंगी, जिससे यात्रा अथवा प्रवास के समय पर उसे बड़ी भ्रान्ति, क्लान्ति एवं व्यग्रता रहेगी।

सुख-शान्ति, सन्तोष, सफलता एवं स्वास्थ्य आदि के पारितोषिक असामयिक जीवनक्रम वालों से कोसों दूर रहा करते हैं। जिन्दगी जीने के लिये मिली है, खो डालने के लिये नहीं। समय-व्यवस्था के अभाव में इस सुर दुर्लभ मानव-जीवन को न तो ठीक से जिया जा सकता है और न इसका कोई लाभ ही उठाया जा सकता है। यह सम्भव तभी हो सकता है, जब जीवन का प्रत्येक क्षण किसी निश्चित कर्त्तव्य के लिए निर्धारित एवं जागरूक रहे।

असमय सोने-जागने, खाने-पीने और काम करने वाले आजीवन आरोग्य के दर्शन नहीं कर सकते। वे सदा-सर्वदा शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक अथवा आध्यात्मिक किसी न किसी व्याधि से पीड़ित रहेंगे उनकी शक्तियों में से कुछ को तो उनकी अव्यवस्था नष्ट कर देगी और शेष को व्याधियाँ शोषण कर लेंगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समय पर काम करने वालों की सारी शक्तियाँ उपयोग में आने पर भी अक्षय बनी रहती हैं। समय पर काम करने का अभ्यास एक सजग प्रहरी की तरह ही होता है, जो किसी भी परिस्थिति में मनुष्य को अपने कर्त्तव्य का विस्मरण नहीं होने देता। समय आते ही सिद्ध किया हुआ अभ्यास उसे निश्चित कार्य की याद दिला देता है और प्रेरणापूर्वक उसमें लगा भी देता है । समय आते ही उक्त कार्य-योग्य शक्तियों में जागरण एवं सक्रियता आ जाती है, जिसमें मनुष्य निरालस्य रूप से अपने काम में लगकर उसे निर्धारित समय में ही पूरा कर लेता है। कार्य एवं कर्त्तव्यों की पूर्णता ही जीवन की पूर्णता है, जो कि बिना समय संयम एवं व्यवस्थित और नियमित क्रियाशीलता के प्राप्त नहीं हो सकती।

समय निर्धारित कर लेने के बाद भी नियत समय पर कार्य न करने और बाद में उस काम को हाथ में लेने से वह काम हो तो जाता है—पर उसमें कोई उत्साह नहीं रहता है। पहली बार नियत कर लेने के बाद उसी समय वह कार्य सम्पन्न करने से कार्य में जो उत्साह होता है, उससे काम बड़ी कुशलता के साथ सम्पन्न होता है। किसी काम को करने के ठीक समय पर शरीर उसी काम के योग्य यन्त्र जैसा बन जाता है और यदि उस समय में दूसरा काम किया जाता है तो वह काम लकड़ी काटने वाली मशीन से कपड़े काटने जैसा हो जाता है। कहने का अर्थ यह है कि न उस काम को दक्षतापूर्वक किया जा सकता है और न ही चालू काम में मन भली-भाँति लगता है। फलस्वरूप समय तो नष्ट होता ही है हमारी शक्तियों का भी क्षय होने लगता है।

समय-सम्पदा का सदुपयोग महत्त्वपूर्ण संयम है। क्रम एवं समय से काम न करने वालों या समय को यों ही व्यर्थ के कार्यों में नष्ट करने वालों का शरीर यन्त्र अस्त-व्यस्त प्रयोग, आलस्य और प्रमाद के कारण शीघ्र ही निर्बल तथा निस्तेज हो जाता है। थोड़े समय बाद ही वह किसी भी कार्य के योग्य नहीं रह जाता।

जीवन का एक-एक क्षण उपयोगी है। संसार में जितने भी महापुरुष हुए हैं, वे प्रत्येक क्षण का उपयोग करके ही महान बने हैं। जिन्हें भी महान बनने की आकांक्षा हो या जो भी जन्म सिद्ध अधिकार सफलता को प्राप्त करना चाहते हों वे समय-सम्पदा का अपव्यय न करते हुए उसका सदुपयोग करें।

सफलता का एक ही आधार—समय का सुनियोजन

जापान का एक विशाल कारखाना अपनी पूरी गति से चल रहा था। मशीनों के पहिये अविराम गति से घूम रहे थे। खलासी, ऑयलमैन, मशीन मैन, मिस्त्री, पैकर और इन्जीनियर सभी बड़ी तन्मयता से अपने काम में लगे हुए थे। उसी समय कारखाने का मैनेजर भारत से आये हुए एक औद्योगिक प्रतिष्ठान के निर्देशक को अपना कारखाना दिखा रहा था। वह बारी-बारी से प्रत्येक मशीन के पास ले जाता और बतलाता कि वह मशीन क्या कार्य करती है ? किस ढंग से उत्पादन होता है और श्रमिकों की कार्य क्षमता बढ़ाने के लिए क्या-क्या व्यवस्थाएँ की जा रही हैं ? मैनेजर, निर्देशक को कारखाने के सभी विभागों में निरीक्षण के लिए ले गया। उसने देखा कि प्रत्येक कर्मचारी अपनी ड्यूटी की पाबन्दी बड़ी ईमानदारी से दे रहा है। कर्मचारी एक क्षण को अतिथि की ओर देखकर मन्द-मन्द मुस्कान बिखेकर स्वागत करते और अपने हाथों में ढिलाई न आने देते।

सारे कारखाने का निरीक्षण करने के पश्चात् वह व्यवस्थापकीय कार्यालय में गये और मैनेजर की कुर्सी के पास बैठ गये। पर वह निर्देशक मन ही मन अपने को अपमानित अनुभव कर रहे थे। आखिर वह पूछ ही बैठे—"मैं आपके साथ पूरे कारखाने में घूमा पर किसी भी कर्मचारी ने एक मिनट को भी मशीन बन्द करके बात तक न की। इसका क्या कारण है ? कम से कम शिष्टाचार के नाते दूसरे देश से आने वाले अतिथि से कुछ क्षण बात तो करनी ही चाहिए थी।"

क्षमा कीजिए। आपने श्रमिकों के कर्म कौशल को दूसरी दृष्टि से देखा है। द्वितीय महायुद्ध की मार से इस देश की जितनी क्षति हुई है, वह संसार के किसी राष्ट्र से छिपी नहीं है। राष्ट्रोत्थान की योजनाओं की पूर्ति हेतु लगन से कार्य न किया जायेगा तो हम लक्ष्य से काफी पीछे रह जायेंगे। यहाँ के श्रमिक की यह विशेषता है कि उनके कार्य का कोई निरीक्षण करे या न करे वह आठ घण्टे के समय को भगवान की उपासना का समय मानते हैं। प्रत्येक श्रमिक के हृदय में देश के लिए एक कसक है, एक वेदना है।

"बात यह है कि इस कारखाने की एक शिफ्ट में पाँच हजार श्रमिक कार्य करते हैं। यदि एक-एक मिनट को भी सब मशीनें बन्द कर दें तो आप जानते हैं, पाँच हजार मिनट काम बन्द होता है। पाँच हजार मिनट यानी तिरासी घण्टे बीस मिनट। इतने समय की बरबादी से उत्पादन पर कितना प्रभाव पड़ सकता है ? इसका अनुमान आप सहज ही लगा सकते हैं। यहाँ ऐसा भी नहीं है कि आपको देखकर श्रमिक तेजी से हाथ चलाने लगे हों और जब आप आगे बढ़ जायँ तो काम बन्द करके बातें करने लगें। यह तो आपने अनुभव किया होगा कि कारखाने के सारे कर्मचारी आपको अपने बीच पाकर कितने प्रसन्न थे ? आपके स्वागत में उन्होंने अपनी मधुर मुस्कान बिखेर दी थी।"

निर्देशक के मन में जो अपमान की भावना थी, वह मैनेजर के सुलझे हुए उत्तर से तिरोहित हो गई थी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस घटना के आलोक में जब हम राष्ट्र के सन्दर्भ को लेकर आत्म-निरीक्षण करते हैं तो हम पाते हैं कि समय की अपव्ययता ने ही योजनाओं के लक्ष्यों को पूर्ण नहीं होने दिया। यदि उत्पादन कार्य में श्रमिक, कार्यालय में कार्यरत बाबू, विद्युत गृह, बाँध और निर्माण के कार्यों में लगे हुए छोटे-बड़े सभी कर्मचारी समय की कीमत जान जायँ तो अपने लक्ष्य को समय से पूर्व ही पूर्ण कर सकते हैं।

घटना डालमिया नगर के कागज के कारखाने की है। कारखाने का विशाल फाटक खुल चुका था। साढ़े छः का सायरन बजने वाला था। एक साठ वर्षीय वृद्ध जर्मन इन्जीनियर कुछ गुनगुनाता हुआ साइकिल से फाटक पर पहुँचा। दरवान ने सलामी दी। उसकी साइकिल कुछ धीमी हुई और फिर उसी गति से आगे बढ़ गई। तीन मिनट बाद सायरन बजा। यह चीफ इन्जीनियर मिस्टर लेंज थे। उन्होंने जितने वर्ष उस कारखाने को अपनी सेवाएँ प्रदान कीं, किसी भी श्रमिक ने इन्हें एक मिनट भी देरी से आते न देखा। मिस्टर लेंज के अधीन तीस इन्जीनियर और हजारों श्रमिक और तकनीकी विशेषज्ञ कार्य करते थे। यदि मिस्टर लेंज चाहते तो साढ़े छः बजे क्या दस बजे कारखाने में आते उनसे कहने वाला कौन था ? पर वह जर्मन इन्जीनियर समय के मामले में कारखाने के खलासियों से लेकर इन्जीनियरों तक को अपना अधिकारी मानता था। वह अच्छी तरह जानता था कि यदि मैं ही समय से कारखाने न जाऊँगा तो संस्थान के हजारों कर्मचारी मेरा अनुकरण कर कार्य की उपेक्षा करेंगे, जिसका प्रभाव उत्पादन पर पड़ेगा।

रूस के औद्योगिक प्रतिष्ठानों की कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं, जिन्हें भुलाया नहीं जा सकता। वहाँ कामचोर या समयचोर श्रमिकों की उन्हीं के साथी भर्त्सना करते हैं। कभी-कभी तो ऐसे कर्मचारियों की पीठ पर कागज का लेवल लगा दिया जाता है, जिस पर लिखा रहता है—''यह काम चोर है, यह समय चोर है।'' यदि इसका भी प्रभाव नहीं पड़ता तो उसका व्यंग्य चित्र कारखाने के फाटक पर लगा दिया जाता है।

कारखानों में काम का समय आठ घण्टे निर्धारित रहता है। यदि श्रमिक वर्ग ईमानदारी से कार्य करें तो हमारे देश में भी जापान और पश्चिम जर्मनी की तरह महान औद्योगिक प्रगति हो सकती है और उत्पादन क्षमता को इतना बढ़ाया जा सकता है कि यहाँ का उत्पादित माल विदेशों को भेजकर विदेशी मुद्रा अर्जित की जाये।

सामाजिक, औद्योगिक और राजनीतिक क्षेत्र की तरह व्यक्तिगत जीवन में भी हम समय के रोग को पहचानने में असमर्थ रहे हैं। अस्पताल, न्यायालय में और कारागृह की यदि जाँच की जाय तो पता चलेगा कि अवकाश के समय का दुरुपयोग करने वाले अधिकतर व्यक्तियों को ही वहाँ शरण लेनी पड़ी है। हमारा कितना समय ताश, शतरंज, मजाक और गपशप के नाम पर आये दिन खर्च होता रहता है यदि उसके मूल्य को पहचानने की कोशिश की होती तो जीवन की दिशा बदल जाती।

यदि अवकाश के समय के सदुपयोग की कोई योजना हमारे पास हो तो व्यक्तिगत उत्थान से लेकर मानव जाति के कल्याण तक के अनेक कार्यों का सम्पादन किया जा सकता है। ग्रेगर मेराडेल ने पुरुषानुक्रम सम्बन्धी सिद्धान्त, अध्यापक बेल ने टेलीफोन का आविष्कार, पादरी प्रीस्टल ने ऑक्सीजन की खोज और अमेरिका के खेतिहर क्लाइड टोम ने ज्योति विद्या की चर्चा करके, प्लूटो नामक ग्रह का आविष्कार अवकाश के क्षणों में ही किया था। डाक्टर होम्स की प्रसिद्ध रचना 'दी आटोक्रेट एट दि ब्रेक फास्ट टेबल' अवकाश के समय ही बैठकर लिखी गई थी।

अवकाश के समय किये गये प्रत्येक कार्य का उद्देश्य धन कमाना नहीं होता। अतः उसका पुरस्कार आत्मसन्तोष और मनोविनोद ही होता है। यह तो निश्चित है कि कोई मनुष्य निरन्तर काम-धन्धे में फँसा नहीं रह सकता। अवकाश के समय कार्य के चुनाव तथा उसे इच्छानुसार करने की स्वतन्त्रता होती है। इन्हीं क्षणों में व्यक्ति के चरित्र का निर्माण होता है या बिगड़ता है क्योंकि कार्य की व्यस्तता में चरित्र के बिगड़ने की उतनी सम्भावना नहीं रहती, जितनी अवकाश के समय को बिताने के तौर-तरीके पर। इसलिए उस समय का उपयोग स्वाध्याय, बागवानी, पुस्तकालय और विद्यालय संचालन तथा जीवन शक्ति बनाये रखने वाले खेलों के लिए किया जा सकता है।

ध्यान रहे कि समय ईश्वर प्रदत्त ऐसी सीमित और मूल्यवान सम्पदा है, जिसका महत्त्व प्रत्येक व्यक्ति को जानना ही चाहिए। समय और सरिता का प्रवाह किसी की प्रतीक्षा नहीं करते। एक-एक साँस लेकर हम जीवन-यात्रा को पूर्ण करते चलते है। मृत्यु के निकट बढ़ते जाते हैं फिर क्यों न अपनी जीविका के कार्य को पूर्ण तन्मयता और ईमानदारी के साथ सम्पन्न करें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

साहसी जीतता हैं

हम न तो डरपोक बनें, न कायर कहलाएँ

डर से बढ़कर त्रासदायक वस्तु इस संसार में दूसरी नहीं। यह व्यथा जिस मनुष्य पर आक्रमण करती है, उसे दीन बनाकर ही छोड़ती है। कायरता उसकी नस-नस में घुस जाती है और फिर जो कुछ क्षमता एवं प्रतिभा का ईश्वर प्रदत्त तत्त्व होता है, उसे चूँसकर मनुष्य को खोखला कर देती है।

इस संसार में वस्तुतः भय का कोई कारण नहीं। असफलता एवं कठिनाई मंजिल पर पड़े रोड़ों की तरह पग-पग पर मिलने वाली चीजें हैं। यदि सफलता इतनी सरल होती है कि उसे प्राप्त करने में कोई बाधा न आवे, पग-पग पर सफलता मिलती चले, असफल होने का अवसर ही न रहे, तो जीवन-पथ का सारा आनन्द ही नष्ट हो जाता। पराकम, पुरुषार्थ, प्रतिभा और अध्यवसाय के विकसित होने का कोई अवसर ही न रह जाता। सफलता पाने पर जो प्रसन्नता होती है, वह भी न रहती, क्योंकि सस्ती चीजें भले ही वे महत्त्वपूर्ण ही क्यों न हों, अपना गौरव और आकर्षण खो बैठती हैं। समुद्र की तली में पाए जाने के कारण ही मोती—'मोती' है। यदि वह मटर की तरह बेलों पर फलने लगता तो फिर शायद कोई मोती को बटोरना भी पसन्द न करता।

मनुष्य के पौरुष को कीर्तिवान बनाने के लिए कठिनाइयाँ आती हैं। किसी आदमी के शौर्य का इतिहास उतना ही बड़ा होता है, जितना कि उसे कठिनाइयों से संघर्ष करना पड़ा। धैर्य की परीक्षा के लिए कठिनाइयों के अतिरिक्त और अवसर ही कब आ सकता है ? साहस जैसा महान् मानवीय सद्गुण संघर्षों की खराद पर घिसे जाने के उपरान्त ही चमकता है। यदि उपलब्धियों का मार्ग सरल और निष्कंटक हो, हर कोई जो चाहे वही आसानी से मिला जाया करे तो यहाँ सब कुछ नीरस, उपेक्षित और महत्त्वहीन बन जायेगा। न प्रतिभा की आवश्यकता रहेगी और न उसके निखार का अवसर आयेगा। तब शायद सफलता पाने की इच्छा को भी छोड़कर लोग निकम्मे आदमियों की तरह उदासीन जीवन जीने लगें।

असफलता और कठिनाइयों की रचना करने में ईश्वर ने मनुष्य की आन्तरिक प्रगति का पथ ही प्रशस्त किया है। इस रचना के पीछे उसकी अतुलित अनुकम्पा ही ओत-प्रोत है। वस्तुस्थिति न समझकर हम छोटी-छोटी असफलताओं और कठिनाइयों को देखा करें, घबराएँ, हिम्मत हारें और निराश हो बैठें तो यह मानसिक दुर्बलता ही मानी जायेगी। हर कदम पर सफलता सम्भव नहीं। किसान हजार बीज बोता है, तब सौ फलते हैं। यही इस सृष्टि का नियम है। हमारी हजार चेष्टाओं में सौ फलवती होती हैं। सफलता का मूल्यांकन करने से पूर्व हमें भली प्रकार समझ रखना चाहिए कि हर कदम पर विजय-वैजयन्ती ही मिलते जाना सम्भव नहीं। हमें अपने पराक्रम में असफलताओं का भी स्थान रखना चाहिए और उनका भी एक अतिथि की तरह स्वागत करने को तैयार रहना चाहिए।

हर असफलता के बाद हम दूनी हिम्मत के साथ आगे बढ़ें, यह पुरुषार्थ की चुनौती है। जो एक ही ठोकर में निराश हो बैठा, जिसका आशादीप एक ही फूँक में बुझ गया, उस दुर्बल-मन व्यक्ति ने न जीवन का स्वरूप समझा और न संसार का। यहाँ पग-पग पर संघर्ष करना होता है। कदम-कदम पर साहस, धैर्य और पुरुषार्थ की परीक्षा देनी होती है। जो उस मूल्य को चुकाने के लिए तैयार न हों उन्हें सफलता जैसे वरदान की आशा भी न करनी चाहिये।

अग्रगामी व्यक्तियों का उपहास पिछड़े हुए लोग आमतौर से करते रहते हैं। जो आगे बढ़ता है उसको पीछे धकेलने वाले अनेकों खड़े हो जाते हैं। सफलता के साथ-साथ ईर्ष्या जन्मती है। गिरे हुए की निन्दा की जाती है और उठने वाले से शत्रुता। इस बेवकूफ दुनिया का ऐसा ही अटपटा रिवाज मुद्दतों से चला आता है।

शिकायतें करना बेकार है, कठिनाइयों को सोचते हुए दुःखी रहने से क्या लाभ ? असफलता मिली तो इसका यह अर्थ नहीं कि भविष्य के लिए सफलता का द्वार बन्द हो गया। असफलताओं से लड़ते हुए हम आगे बढ़ते रहें तो कल न सही, परसों विजयश्री को प्राप्त कर ही लेंगे। आज जो कठिनाई सामने हैं, उससे लड़ें और भविष्य के लिए आशा भरे उज्ज्वल भविष्य की कल्पना करें, यही हमारे लिए उचित है। आज की या आगामी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कल की सम्भावित और असम्भावित कठिनाइयों की अशुभ कल्पनाओं में निरत रहकर भयभीत होना या खिन्न रहना तुच्छ श्रेणी के लोगों को भले ही अच्छा लगे। हर सम्मानास्पद व्यक्ति उसे अपने लिए लज्जा की बात ही समझेगा।

लोग मौत से डरते रहते हैं, पर सच तो यह है कि नये वस्त्र पहनने की तरह वह एक हर्षोत्सव मात्र है। मौत से डरने की कोई बात नहीं। शूरवीर आदर्श के लिए मरने को एक दैवी वरदान से कम सौभाग्य नहीं मानते। कायर उसकी कल्पनामात्र से थर-थर काँपते हैं, यह डर वास्तविक नहीं, वस्तुतः उसकी भीतरी दुर्बलता का ही होता है। डर की व्यथा जिसके पीछे पड़ी है, उसे उसकी अशुभ कल्पनाएँ ही निरन्तर एक से एक भयानक रूप बनाकर डराया करती हैं। चाहे उन कुकल्पनाओं में से एक भी कभी सामने न आवे, पर डरपोक आदमी तब तक हजारों बार उनका त्रास सहकर अपना प्राण सुखा चुका होता है। डरपोक से बढ़कर मनुष्य की निन्दा एवं भर्त्सना और किसी प्रकार नहीं हो सकती। हमें कायर नहीं, शूर बनना चाहिये। जीवन-संघर्ष में हमें पग-पग पर प्रमुदित और आशान्वित हुए आगे बढ़ना चाहिए।

कायरता छोड़िये, साहस अपनाइए

मनुष्य का सबसे प्रथम गुण साहस है क्योंकि यही अन्य सब गुणों का प्रतिनिधित्व करता है। साहस ही जीवन की विशेषताओं को व्यक्त होने का अवसर देता है। मनुष्य में सभी गुण हों—वह विद्वान हो, पण्डित हो, शक्तिशाली हो, धनवान हो, सद्गुण सम्पन्न हो लेकिन उसमें साहस न हो तो वह अपनी विशेषताओं का, योग्यताओं का कोई उपयोग नहीं कर सकता है। **एडमस्मिथ** के शब्दों में, ''साहस के अभाव में संसार से अनेकों प्रतिभाएँ खो जाती हैं। प्रत्येक दिन ऐसे अनेकों व्यक्तियों को काल की गोद में सौंपता रहता है, जो योग्य और सम्पन्न होते हुए भी साहस के अभाव में प्रारम्भिक प्रयास भी तो नहीं कर सके, सफलता के लिए।''

सर्व सुसज्जित सेना का यदि नायक न हो तो वह भली प्रकार दुश्मन से लड़ न सकेगी। उसे अस्त-व्यस्त होकर पराजय का सामना करना पड़ेगा। साहस ही मनुष्य के व्यक्तित्व का नायक है। जो उसकी समस्त शक्तियों का प्रतिनिधित्व कर उन्हें उपयोगी दिशा मे लगाता है। सद्गुणों को सामाजिक जीवन में व्यक्त करने के लिए, सदुद्देश्य को पूर्ण करने के लिए साहस की आवश्यकता होती है। बलिष्ठ शरीर, बुद्धि, पाण्डित्य आदि सभी तो असफल हो जाते हैं, जीवन के समरांगण में यदि साहस के द्वारा इनका नेतृत्व न हो।

साहस व्यक्ति को निर्भय बनाता है और जहाँ निर्भयता होती है, वहीं जीवन अपनी पूर्ण अभिव्यक्ति कर सकता है। निर्भयता से ही आत्मविश्वास जाग्रत होता है और इसी से मनुष्य की जीवन-नैय्या संसार-सागर की उत्ताल तरंगों में पार होती है। साहसहीन व्यक्ति तो अपने आप ही डूब जाता है। साहस की शक्ति अजेय और अप्रमेय होती है। वह संसार की समस्त शक्तियों से भी शक्तिशाली है।

साहस ही किसी काम की पूर्ति करने के लिए प्रारम्भिक कदम उठाने की प्रेरणा देता है और काम का प्रारम्भ ही उसकी आधी सफलता है। शेष आधी प्रयत्न से मिल जाती है। जब कार्य को पहले ही असम्भव, कठिन मान लिया जाता है तो वह शुरू भी नहीं होता। जैसे-तैसे शुरू भी हो जाय तो वह अधूरा ही छूट जाता है। साहस सफलता का स्वप्न, संकल्प लेकर चलता है।

हममें से अधिकांश लोग किसी कार्य की शुरूआत इसलिए नहीं करते क्योंकि हममें आने वाले खतरों को उठाने का साहस नहीं होता। हम दूसरों की आलोचना, विरोध से डरते हैं। असफलता या लोक-निन्दा का भय हमें कार्य की शुरूआत में ही निस्तेज कर देते हैं। लेकिन इसी कारणवश हम दीन-हीन जीवन व्यतीत करते हैं। संसार की जो जातियाँ साहस पर ही जीती हैं, वे ही सबकी अगुआ भी बन जाती हैं।

साहस के अभाव में अक्सर हम जीने का वही रास्ता अपनाते हैं, जो सरल और बिना किसी झंझट का होता है और इसी कारण कुछ नया न सोचना पड़े, कुछ नया करना न पड़े, हम अपनी चलती आ रही 'लकीर के फकीर' बने रहते हैं। लेकिन प्रगति और विकास तो नित नया परिवर्तित मार्ग चाहते हैं। संसार में चल रहे परिवर्तन क्रम को अपनाना पड़ता है। बिना इसके हम एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकते। लेकिन परम्पराओं के घेरे से निकलकर नवीनता का मार्ग ग्रहण करना भी साहस पर ही निर्भर करता है क्योंकि इसमें अपने ही बलबूते पर आगे बढ़ना होता है। साथ ही उन तथाकथित पुरातन-पन्थियों के जिनकी संख्या अधिक होती है, विरोध का सामना भी करना पड़ता है।

राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, व्यावसायिक किसी भी क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए साहस की आवश्यकता होती है। समाज की अव्यवस्था दूर करने, नागरिकता पैदा करने, किसी बुरे चलन, कुप्रथा को रोकने के लिए, व्यवसाय संस्थानों को विकसित करने के लिए दूसरों की गालियाँ खानी पड़ती हैं। विरोध सहने पड़ते हैं, कई का बुरा बनना पड़ता है, कई बार जान-माल की भारी हानि उठानी पड़ती है। साहसी व्यक्ति ही इनमें आगे बढ़ता है और सफल होने तक स्थिर रह सकता है। साधारण लोग तब तक ही अनुकूल रहते हैं, जब तक आप उनके स्वर में स्वर मिलाकर गाते हैं। लेकिन ज्यों ही आप कुछ नई बात कहेंगे, कोई नया रास्ता अपनावेंगे, तभी आपका विरोध होने लगेगा। आपको सब तरह से भला-बुरा कहेंगे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आप साहस के साथ ही इनका सामना कर सकते हैं। यदि आपने थोड़ी भी कमजोरी दिखाई तो सड़े-गले पुराने संस्कार और रूढ़ियाँ पुनः आप पर हावी हो जायेंगी।

यदि सम्मानयुक्त जीवन जीना है तो साहसी बनना पड़ेगा। समृद्ध लोगों के बीच गरीबी में भी मस्त रहना साहस है। धोखेबाजी, दगाबाजी से धनवान न होकर गरीब रहना भी साहस है। यदि किसी गलत बात के बहुत लोग भी समर्थक हों तो उसको गलत कहना, सचाई को प्रकट करना भी साहस है। गलत परम्पराओं, रूढ़िवादी, अन्धविश्वासों को न मानकर सचाई का मार्ग अपनाना भी साहस है। न्याय के पक्ष पर कायम रहना भी साहस है। इस तरह जीवन के अनेकों क्षेत्रों में नित्य साहस की आवश्यकता है। लोगों के विरोध करने पर, कीचड़ उछालने पर, हानि पहुँचाने पर भी किसी उत्कृष्ट लक्ष्य पर दृढ़ और स्थिर रहना साहस है। किसी महान् कार्य पवित्र लक्ष्य की पूर्ति में साहस करके आगे बढ़ने पर यदि मृत्यु का भी सामना करना पड़े तो वह जीवन की सर्वोत्कृष्ट सफलता ही होगी।

कठिनाइयों से लड़ें और अपना साहस बढ़ायें

शरीरधारी की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि उसे सुख और दुःख दोनों के बीच से गुजरना पड़ता है। शरीर सुख और दुःख दोनों को भोगने के लिए मिलता है। जीव ने पूर्व-जन्म में जिस प्रकार के कर्म किये होते हैं, उसी के अनुसार उसे शरीर मिलता है और उसी के अनुसार सुख-दुःख देने वाली परिस्थितियाँ। शरीर पूर्व प्रारब्ध पूरा करने का एक संयोग है। इसीलिये मनुष्य को चाहिए कि वह सुख-दुःख की परिस्थितियों में समभाव बनाये रखे।

इस बोध के पाते ही हम शरीरधारी हैं, मनुष्य को निश्चय कर लेना चाहिए कि उसे सुख-दुःख दोनों का भोग करना है और अपने इस बोधजन्य निश्चय के अनुसार हर समय उद्यत भी रहना चाहिये। जब शरीर धारण किया है तो दुःख-सुख दोनों का ही भोग करना होगा। शरीरधारियों में से किसी के लिए भी केवल सुख अथवा दुःख भोगने का कोई विधान नहीं है। इस अटल नियम के होते हुए भी और जानते हुए भी यदि मनुष्य दुःख के अवसरों पर अधिक व्याकुल, उद्विग्न हो उठता है तो इसे उसका दुर्भाग्य ही कहा जायेगा। दुःख और सुख शरीर के साथ लगी रहने वाली दो छायाएँ हैं। उन्हें अपने पास से दूर नहीं किया जा सकता। ऐसी दशा में उत्तम यही है कि सुख और दुःख दोनों योगों में तटस्थ रहकर अपना यथायोग्य कर्त्तव्य करते रहा जाये। जो इस मर्म के अनुयायी रहकर संसार में बर्तते हैं, वे प्रायः सुखी ही रहते हैं।

इस दार्शनिक विवेचन से हटकर यदि व्यवहार क्षेत्र में भी आकर विचार किया जाये तो भी पता चलेगा कि दुःख, कष्ट अथवा आपत्ति के समय व्याकुल होना अथवा धीरज खो देना व्यर्थ है। रोने, चिल्लाने अथवा व्याकुल होने से आज तक किसका दुःख दूर हुआ है ? अधैर्य, दुःख-कष्ट का उपचार नहीं बल्कि उसको बढ़ाने वाला सिद्ध होता है। एक तो दुःख का कारण स्वयं ही उपस्थित है, उस पर यदि धैर्य, साहस, आशा, सहनशीलता और सक्रियता को छोड़कर व्याकुलता, व्यग्रता और कातरता का आश्रय लिया तो परिस्थिति और भी गम्भीर हो जायेगी।

काली रात में घटा घिर आने के समान अन्धकार और भी सघन तथा गम्भीर हो जायेगा। इसके विपरीत धैर्य और साहस को बनाये रहने से बुद्धि और विवेक का दीप जलता रहता है। जिसके प्रकाश में उपाय और उपचार दृष्टिगोचर होते रहते हैं। यही कारण है जो किसी आपत्ति के समय कोई अधैर्यवान तो बुरी तरह हानि की चपेट में आ जाता है और धैर्यवान आपत्ति का आक्रमण विफल कर साफ निकल जाता है। जहाँ अधैर्यवान आपत्ति को अपना बहुत कुछ दे देता है, वहाँ धीर, गम्भीर पुरुष कुछ देना तो दूर उल्टे उससे न जाने कितने अनुभव लूट ले जाता है।

यदि दुःख, संकट और आपत्ति के संयोग की प्रतिक्रिया अधैर्य ही होती है तो संसार में सबको ही उस स्थिति में घबराना और व्याकुल होना चाहिए। किन्तु ऐसा होता कदापि नहीं। जहाँ बहुत-से लोग दुःख का कारण आने पर बुरी तरह व्याकुल और उद्विग्न हो उठते हैं, वहाँ बहुत-से लोग अपने स्वभाव में स्थित रहते हैं। उनकी शान्ति और सन्तुलन अक्षुण्ण बना रहता है। इस अन्तर का कारण और कुछ नहीं, केवल यह होता है कि एक हृदय से निर्बल होता है और दूसरा नहीं। एक विनाश का विश्वासी होने से सोचता है कि अब मैं नष्ट हो जाऊँगा, मेरा सब कुछ बरबाद हो जायेगा। यह संकट अथवा विपत्ति हमें मिटा देगी। कैसे क्या करें, जो इस भयंकर परिस्थिति से बचें ?

दूसरा जीवन और सृजन में विश्वास रखने वाला होने से सोचता है कि आपत्तियाँ अस्थायी होती हैं, दुःख क्षणिक होते हैं। परमात्मा का अंश होने से मनुष्य-आनन्द स्वरूप है। दुःख अथवा संकट के कारण मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकते। मैं एक जीवन्त पुरुष हूँ, मुझे प्रभु ने बुद्धि और विवेक दिया है, धैर्य और साहस दिया है। मैं उसके बल पर मुझे परास्त करने का संकट अथवा आपत्ति के इरादे को चूर-चूर कर दूँगा। अपनी इन्हीं मनो-नीतियों के अनुसार निषेध अथवा संबल पाकर एक दुःख में डूब जाता है और दूसरा उससे पार उतर जाता है।

संसार में संकट और आपत्ति सभी पर आती हैं। इससे कोई भी नहीं बचता। संसार में जिसे भी देखिए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुख-दुःख से द्वन्द्व करता हुआ यात्रा पर बढ़ा चला जा रहा है, तब हम ही क्यों दुःख का रोना लेकर बैठे रहें। सुख-दुःखमय इस संसार में सामान्य पुरुष तो क्या बड़े-बड़े सम्राटों, श्रीमन्तों और महान् पुरुषों को भी संकटों का सामना करना पड़ा। शिवि, हरिश्चन्द्र, मोरध्वज, नल, पाण्डव, प्रभृति न जाने कितने ऐतिहासिक पुरुषों को अपार संकट उठाने पड़े। हजारों साल बाद आज भी जो उनका नाम अमर है, इसका कारण यही है कि उन लोगों ने सारे संकटों को सहर्ष स्वीकार किया, अपने धैर्य और विवेक की परीक्षा दी, पूरी तरह उत्तीर्ण हुए और समय की शिला पर अपना नाम खोदकर अमर हो गये। ऐसे धैर्यवान पुरुष सिंह ही वास्तविक सुख, यश, कीर्ति और पूजा-प्रतिष्ठा के अधिकारी होते हैं और ऐसे पुरुष ही संसार पथ पर अपने आदर्श पद-चिन्हों को छोड़कर जाते हैं, जिनका अनुसरण कर लाखों लोग भवसागर से पार हो जाते हैं।

अपने ऊपर आपत्ति व संकट को आया देखकर धैर्य खोना कायरता है। जब संसार के कोई दूसरे लोग दुःख में धैर्य रख सकते हैं, हँसते-खेलते हुए आपत्तियों को पारकर सकते हैं, तो हम ही क्यों उन्हें देखकर रोने-चिल्लाने लगें। जबकि परमपिता परमात्मा ने हमें भी साहस, आशा और धैर्य के साथ बुद्धि एवं विवेक का सम्बल उनकी तरह दे रखा है। अन्तर केवल यह है कि जहाँ संसार के सिंह पुरुष अन्धकार आते ही अपने गुणों को प्रदीप्त प्रज्ज्वलित कर लेते हैं, वहाँ कायर पुरुष घबराकर उनको प्रदीप्त करना ही भूल जाते हैं।

शरीरधारियों के लिये सुख-दुःख का भोग अनिवार्य है। यह रोकर भोगा जाये अथवा हँसकर। जब यह भोग भोगना ही है, तो बुद्धिमानी इसी बात में है कि हर परिस्थिति को हँसी-खुशी से भोगा जाये। हँस-हँसकर भोगने वाले धीर पुरुषों के लिये दुःख एक शोभा बन जाता है। लोग उन्हें प्रतिकूलता में अविचलित देखकर उनकी सराहना करते हैं। उनके ज्ञान तथा विश्वास में निष्ठा लाते हैं। अपने जीवन में उनके उस चरित्र को आदर्श के समान अंगीकार करते हैं। अपने दुःख में अविचलित रहने वाला श्रेष्ठ पुरुष दूसरों का दुःख भी कम कर देता है। यदि हँस-हँसकर अपने दुःख को साहसपूर्वक भोगने वाला उसे अपनी शोभा बना लेता है तो रोने-चिल्लाने वाला कापुरुष उससे अपनी कुरूपता बढ़ा लेता है। किसी अभाव अथवा व्याधि से घिरा धीर-पुरुष अपना और अपने भगवान का भरोसा लिये उन काली घड़ियों को स्थिर भाव से काटता है तो कोई कापुरुष बुरी तरह रोता-चिल्लाता और निराश होकर दूसरों से सहायता के लिये रिरियाता, अपने भाग्य और भगवान को कोसता है, गाली देता है। इन दोनों की तस्वीर देखने से स्पष्ट विदित हो जाता है कि उनमें से एक मनोधनी है और दूसरा दरिद्री। दुःख में स्थिर और गम्भीर रहने वालों के प्रति जहाँ लोगों की श्रद्धा जाग उठती है, वहाँ रोने-चिल्लाने और प्रलाप करने वालों के प्रति सहानुभूति की अपेक्षा दयनीय भाव ही उत्पन्न होता है।

बहुत बार तो अतिशयता होने पर घृणा तक होने लगती है। इस प्रकार दूसरों का घृणापात्र होकर रहना मनुष्य जैसे प्राणी को जरा भी शोभा नहीं देता। उसकी शोभा तो इसी में है कि प्रतिकूल परिस्थितियों के अवसर पर शान्त, धीर और गम्भीर रहकर उनको बदलने का प्रयत्न किया जाये। रोने-चिल्लाने अथवा कलपने से दुःख का भोग क्षमा तो किया नहीं जा सकता, तो इस प्रकार की दीनता से लाभ क्या है ? शरीर की नियुक्ति ही जब प्रारब्ध भोग करने के लिये हुई है, तब उसे उचित रूप से भोगने में ही सुन्दरता है और कल्याण भी।

विवेक की बात तो यह है कि संकट, आपत्ति अथवा दुःख पाने पर प्रसन्न होना चाहिये। इसलिये कि यही वह विधान है, जिसके द्वारा मनुष्य का प्रारब्ध भोग पूरा होता है। उसके पूर्व कर्मों का परिपाक होता है। एक-एक संकट, एक-एक प्रारब्ध को व्यर्थ करता जाता है, जिसके अनुसार भव-बन्धन की लम्बी शृंखला की एक-एक कड़ी टूटती जाती है। दुःख का संयोग आते ही मनुष्य को उसका उपचार तो करना चाहिए, पर साथ ही यह सोचकर प्रसन्न भी कम नहीं होना चाहिए कि उसके प्रारब्ध भोग की एक किश्त उतर गई।

आत्मा का भार भविष्य का अन्धकार कुछ कम हो गया और प्रकाश का लक्ष्य कुछ समीप आ गया है। ऐसे उपकारी संकटों को देखकर रोना-चिल्लाना वैसी ही मूर्खता है, जैसी कि किसी विषाक्त फोड़े का आपरेशन करने के लिये आए डाक्टर को देखकर भयभीत होने की मूर्खता। दुःख के बाद सुख और संकट के बाद सुविधा, प्रकृति का यह अटल नियम है। इस आधार पर भी दुःख देखकर प्रसन्न ही होना चाहिये। दुःख और संकट उस सुख-सम्पत्ति की पूर्व भूमिका होते हैं, जो निकट भविष्य में मिलनी होती है। बादल और बिजली को देखकर भयभीत होने वाले बाल-बौद्धिक लोग कुछ ही देर में होने वाली प्राण-दायक और धन-धान्य की विधायक वर्षा को नहीं देख पाते। संकट सुख और कल्याण के अग्रदूत होते हैं। उनको देखकर भयभीत न होना चाहिये, बल्कि सहर्ष उनका स्वागत करना चाहिये।

विश्वास रखिये दुःख का अपना कोई मूल अस्तित्व नहीं होता। इसका अस्तित्व मनुष्य का मानसिक स्तर ही होता है। यदि मानसिक स्तर योग्य और अनुकूल है, तो दुःख की अनुभूति या तो होगी ही नहीं और यदि होगी भी तो बहुत क्षीण। तथापि यदि आपको दुःख की अनुभूति सत्य प्रतीत होती है, तब भी उसका अमोघ उपाय यह है कि उसके विरुद्ध अपनी आशा, साहस और उत्साह के प्रदीप जलाये रखा जाए। अन्धकार का तिरोधान और प्रकाश का अस्तित्व बहुत-से अकारण भयों को दूर कर देता है।

आशा, विश्वास और परिवर्तन के अटल विधान में आस्था रखने के साथ ही साथ समय रूपी महान्

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चिकित्सक में विश्वास रखिये। समय बड़ा बलवान और उपचारक होता है। वह धैर्य रखने पर मनुष्य के बड़े-बड़े संकटों को ऐसे टाल देता है, जैसे वह आया ही न था। संकट तथा दुःख देखकर भयभीत होना कापुरुषता है। आप ईश्वर के अंश हैं, आनन्दस्वरूप हैं। आपको तो धैर्य, साहस, आशा, विश्वास और पुरुषार्थ के आधार पर संकट और विपत्तियों की अवहेलना करते हुए सिंह पुरुषों की तरह ही जीवन व्यतीत करना चाहिये।

दृढ़ भावनाओं से जीवन-निर्माण

मनुष्य का निर्माण उसकी भावनाओं की पृष्ठभूमि पर होता है। जैसा वह सोचता, समझता और विचार करता है, प्रायः वैसा ही बन जाता है। भलाई की भावना लोगों को उच्चस्तर की ओर, महानता की ओर अग्रसर करती है। अनिष्टकारी, दीन और निकृष्ट भावनाओं से मनुष्य का जीवन दुःखी, उदासीन तथा पतनोन्मुख होता है क्योंकि भीतरी भावनाओं के अनुरूप ही बाहरी क्रिया-कलाप होते हैं और वैसे ही परिणाम भी उत्पन्न होते हैं। काम से अधिक उस भावना का महत्त्व होता है, जो उस क्रिया का संचालन करती है। जो काम शुद्ध हृदय से होता है, देखने में वह छोटा भले ही हो परन्तु उसका फल बड़ा ही महत्त्वपूर्ण होता है। बड़े से बड़ा काम भी अगर हीन आदर्श लेकर किया जाय तो उसकी बड़ी कीमत नहीं हो सकती।

बुराइयों के प्रति लोगों में जिस तरह आकर्षण होता है, उसी तरह यदि ऐसा दृढ़ भाव हो जाए कि हमें अमुक शुभ-कर्म अपने जीवन में पूरा करना ही है तो उस कार्य की सफलता असंदिग्ध हो जायेगी। यदि सिनेमा न देखने की, बीड़ी-सिगरेट न पीने का, जुआ न खेलने का, माँस-मदिरा न सेवन करने का व्रत ठाना जाय तो उस व्रत का दृढ़तापूर्वक पालन किया जाये, तो इन दुर्गुणों के कारण मलिन होने वाले स्वभाव में स्वच्छता आयेगी, स्वास्थ्य ठीक रहेगा, मानसिक सन्तुलन बना रहेगा। यह लाभ मिल सकते हैं किन्तु उन्हें सत्संकल्पों द्वारा ही प्राप्त किया जाता है।

झूठ बोलना अब लोग व्यावहारिक समझने लगे हैं, इसी कारण से सात्विक-जीवन के अनेक उद्देश्य इच्छा रखते हुए भी पूरे नहीं हो पाते। बीड़ी पीना स्वास्थ्य और आर्थिक अपव्यय की दृष्टि से नितान्त हानिकारक है, यह हर बीड़ी पीने वाला समझता है और उसके अनौचित्य तथा दुष्परिणामों से प्रभावित होकर धूम्रपान न करने की शपथ भी लेता है किन्तु दृढ़ भावना के अभाव में वह प्रतिज्ञा निभ नहीं पाती, पूरी नहीं हो पाती। सत्य के लिए श्रद्धा होती और उद्देश्य में कुछ सबलता रही होती तो यह कार्य ऐसे नहीं हैं, जिन्हें करने पर मनुष्य को कुछ हानि होती। उल्टे इसमें फायदा ही हैं। पर लोगों का मनोबल इतना दुर्बल होता है कि वे संकल्प कर लेने के बाद देर तक उसमें टिक नहीं पाते। शपथ या संकल्प की विजय दृढ़-निश्चय और सुदृढ़ भावना से होती है।

महापुरुषों की सफलता में उनकी दृढ़-भावना, उच्चतम उद्देश्य के लिये अन्यतम कष्ट, सहिष्णुता ही प्रधान कारण होती है। महाराणा प्रताप ने सौगन्ध खाई थी कि मेवाड़ को वापस न लेने तक वे राजसी-जीवन को धारण नहीं करेंगे। महात्मा गाँधी का स्वतन्त्रता आन्दोलन उनके दृढ़-निश्चय का प्रतीक था। महर्षि दयानन्द के हृदय में अपने धर्म, संस्कृति के उत्थान की प्रबल भावना थी—तभी इन महापुरुषों ने अपने लक्ष्य को पूरा भी किया। हवा के झोंके में बुझ जाने वाला दीपक नहीं, निरन्तर संकल्पशील सूर्य ही संसार को प्रकाश दे पाता है। जीवन में किसी सद्उद्देश्य की सफलता के लिये दृढ़-निश्चय होना परमावश्यक है।

दृढ़-भावना रचनात्मक प्रवृत्तियों का विकास करती है। उससे सफलता के अनेकों नये-नये मार्ग स्वतः सूझ पड़ते हैं, जिन्हें सामान्य श्रेणी के व्यक्ति बड़े कौतूहल से देखते हैं। जीवन में जो कुछ करना है, उसके लिये यदि मनुष्य का साहस जाग जाये, तो शायद ही कोई बाधा उसे उसके निश्चय से हटा सके। विद्यावाँकुरे ईश्वर चन्द्र विद्यासागर अत्यन्त निर्धन परिवार के थे। मुश्किल से फीस और किताबों के पैसे जुटा पाते थे, किन्तु विद्याध्ययन की जो उनमें उत्कट चाह थी उससे उनकी वह मनोकामना भी पूरी हुई। विद्यासागर चौराहे की लालटेन के प्रकाश में बैठकर अपना पाठ याद किया करते थे। अपने अदम्य उत्साह और परिस्थितियों से संघर्ष करने की शक्ति के बल पर ही वे सिद्ध मनोरथ हो सके।

मनुष्य के अनेक कर्मों में भावना का सम्मिश्रित होना अनिवार्य है। दृढ़-भावना और कार्य करने की क्षमता के संयोग से ही पूर्ण सफलता सम्भव है। वृक्ष दो तरह से जीवन तत्त्व ग्रहण करता है। जड़ें पृथ्वी से रस खींचती है और पत्तियाँ सूक्ष्म आकाश से प्राण-शक्ति का अवगाहन करती हैं। इन दोनों क्रियाओं के साथ-साथ चलते रहने के कारण ही वृक्ष फल-फूल पैदा करने में सफल हो पाता है। मनुष्य का जीवन भी हरा-भरा, सुखी-सम्पन्न बना रहे, इसके लिए उसमें कर्म और भावना का सम्मिश्रण होना जरूरी है। भावना के अभाव में वे क्रियाएँ पूरी नहीं हो सकतीं जो समृद्धि और सम्पन्नता के लिये आवश्यक हैं। चाहे अपना उद्देश्य आध्यात्मिक हो, चाहे भौतिक भावानाओं में दृढ़ता हो तभी कुछ काम बन सकेगा, कुछ सफलता मिल सकेगी।

मनुष्य की असलियत का सम्बोधन उसकी आन्तरिक भावनाएँ कराती हैं। भावनाओं का प्रभाव बाह्य शरीर पर भी लक्षित हुये बिना नहीं रहता। पापी, कुकर्मी तथा आततायी पुरुषों की मुखाकृति ही बतला देती है कि वह कैसा आदमी है ? गम्भीर व्यक्तियों को देखने से ही उनके प्रभाव का पता चला जाता है। मनुष्य की निकृष्टता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

या उत्कृष्टता के भाव उसकी प्रत्येक क्रिया, रहन-सहन व बोल-चाल से परिलक्षित होते हैं। इन्हीं के आधार पर औरों से मान-सम्मान, मैत्री, आत्मीयता आदि की प्राप्ति होती है। जिनकी भावनाएँ भौंड़ी और कुरूप होती हैं, उनसे लोग घृणा करते हैं। जिनकी भावनाएँ ऊँची होती हैं, दृढ़ और रचनात्मक होती हैं, उनकी समीपता से लोगों को प्रेरणा मिलती है।

कर्त्ता की भावना जब लक्ष्यवान होती है तो वह भीतर ही भीतर प्राण व शक्ति का संचार करती है, इससे उसे अनेक अनुभव और ज्ञातव्य प्राप्त होते हैं। इन्हें वह चुपचाप धारण करता है, पोषण करता है, पर व्यक्त नहीं करता। इसी शक्ति द्वारा प्राणों का जो विस्तार होता है उसे ही निष्ठा कहते हैं। यह चरित्र निर्माण की मूल आवश्यकता है। वहाँ पल-पल, छिन-छिन बदलते रहने वाले इन्द्रियों के आदेश कामयाव नहीं होते। थोड़ी-थोड़ी दूर पर जो प्रलोभन भरे प्रश्न आते हैं, उनका हल स्वतः होता है और बाधाएँ उस दृढ़ता से टकराकर चकनाचूर हो जाती हैं। दृढ़ता का स्वभाव है, गम्भीरता की ओर प्रेरित करना। इसी से मनुष्य के जीवन में आत्म-निर्भरता, सत्यता, कष्ट, सहिष्णुता एवं देवत्व की जाग्रति होती है। मनुष्य के चारित्रिक विकास में भी उसकी भावना ही मुख्य है।

मनुष्य के जीवन में इस प्रकार भावनाओं की गहराई न रहे तो उसका चारित्रिक पतन हो सकता है। शील और सदाचार का अविचलित अविच्छिन्न योग न रहे तो वे सभी भाव-संस्पर्श उसके लिये घातक ही सिद्ध होंगे अर्थात् उसके जीवन में सद्प्रवृत्तियों का भाग नष्ट हो जायेगा और कुविचार एवं कुचेष्टाएँ बढ़ने लगेंगी। ऐसी स्थिति में मनुष्य का जीवन बरबाद और निरर्थक हो जाता है, जिस तरह हरे पेड़ को काट देने पर सूर्य का ताप उसे सुखा देता है। इस प्रकार उत्पन्न हुई चारित्रिक दुर्बलता लोगों को विषय-सुख और भोगों की ओर प्रेरित करेगी, परिणामस्वरूप जीवन के सात्विक लक्ष्य पूर्ण न होंगे और सफलता की पुष्टि का मार्ग बन्द हो जायेगा। दुर्बल तथा क्षीण चित्त के लिये ज्ञान का भी कुछ लाभ नहीं है। वह ज्ञान पूर्णतया लौकिक कामनाओं में ही लगा रहेगा। अतः बुरे परिणाम पैदा होने में कोई सन्देह न रहेगा।

भावनाएँ मनुष्य का जीवन होती हैं। इनके बिना उसमें किसी रस या उल्लास का आनन्द मनुष्य को नहीं मिलता। वह केवल प्रगल्भ विचारों के ही आस-पास चक्कर काटता रहता है, जिससे मनुष्य का जीवन केवल सांसारिक ही बना रहता है। इसीलिये अब जीवन-निर्माण में तब की अपेक्षा अधिक सतर्कता की आवश्यकता है। सत्पथ पर चलते हुए भी मनुष्य धोखा खा सकता है, पथ-भ्रष्ट हो सकता है। अतः अपने जीवन-लक्ष्य का निर्धारण हमें पूरी सावधानी के साथ करना चाहिये और आध्यात्मिक जीवन की आवश्यकता को स्वीकार कर लेने के बाद दृढ़तापूर्वक, मनोयोगपूर्वक उसमें लगा रहना चाहिए। आपकी भावनाएँ दृढ़ बनी रहेंगी, निश्चय बलवान बना रहेगा, तो अनेक कठिनाइयों में भी आप निर्भयतापूर्वक अपने जीवन लक्ष्य की ओर बढ़ते रहेंगे। मनुष्य का पौरुष दृढ़ निश्चय में है। सुदृढ़ भावनाओं वाले व्यक्ति ही आत्मजयी होते हैं।

साहसी बनिये—आप जरूर सफल होंगे

उद्यम और विकास के पथ पर चलते हुए अनेकों बाधाओं का आना स्वाभाविक है। कार्य छोटा हो या बड़ा, आध्यात्मिक हो अथवा सांसारिक, मुसीबतें और कठिनाइयाँ आयेंगी ही। इनसे बचकर सफलता की मंजिल तक पहुँचना असम्भव है। रास्ते की इन रुकावटों का सामना करना वीरोचित कार्य है। जो संघर्षों से कतराता नहीं वह सर्वोपरि साहसी है। वे कायर और कापुरुष होते हैं, जो विघ्नों से हार मानकर उद्यम करना छोड़ देते हैं। इससे किसी प्रकार की सफलता प्राप्त नहीं की जाती, सफलता का व्यापक और विशिष्ट लक्षण उत्साह है मानवीय विकास की अधिकांश सम्भावना साहस, शौर्य और पराक्रम पर सन्निहित है।

आपका स्वास्थ्य खराब हो चुका है, पाचन-संस्थान बिल्कुल विकृत हो चुका है, मिर्च-मसालों के अधिक सेवन से पेट में गड़बड़ी बनी रहती है, खट्टी डकारें आती हैं, जी मिचलाया करता है। किसी चिकित्सक ने आपको सलाह दी कि आप कुछ दिन शाकाहार कर लीजिये। आप उसके महत्त्व को भी भली-भाँति समझ चुके हैं। प्रारम्भ में स्वास्थ्य सुधारने की प्रबल आकांक्षा उठी थी, उसी से प्रेरित होकर आपने शाकाहार आरम्भ कर दिया। अभी तीन दिन ही हुये थे कि आपका मन तरह-तरह के भोजन-पकवानों, मेवा-मिष्ठानों की ओर दौड़ने लगा, शाक ग्रहण करते समय कुछ रूखा लगता है सो आपका ध्यान बार-बार स्वादयुक्त भोजन की ओर दौड़ा-दौड़ा जाता है। आप हार मानने लगते है बाजार से चुपचाप कुछ खा आते हैं, तो जिह्वा-इन्द्रिय जीत जाती है और फिर उसी पूर्व-जीवन के क्रम पर आ जाने को विवश कर देती है। यह पट-परिवर्तन एक क्षणिक विग्रह के कारण हुआ। निश्चयात्मक बुद्धि के अभाव में आप स्वास्थ्य सुधारने के लक्ष्य से गिर गए, फलस्वरूप असफलता आपके हाथ लगी। यदि आपने जिस तत्परता से कार्य शुरू किया था, उसी उत्साह से शाकाहार पर निर्भर रहने, रूखा भोजन करते रहने के साहस पर अडिग बने रहते तो आपका स्वास्थ्य अच्छा हो जाता।

मनुष्य का एक सामान्य जीवनक्रम बना होता है। खाना-पीना, सोना, चलना, उठना-बैठना, रोग-शोक चोट-मोच के क्षण सभी के जीवन में एक से आते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसका सामान्य ज्ञान भी सभी को होता है, किन्तु जीवन की एक दूसरी दिशा होती है, कष्ट और कठिनाइयों की दिशा। इससे जीवन का सही मूल्यांकन होता है। नई-नई अनुभूतियाँ प्राप्त होती हैं, किन्तु यह तभी सम्भव है, जब मनुष्य सामान्य जीवनक्रम को त्यागकर और कष्ट, कठिनाइयों के अनुभवपूर्ण पथ पर चलने का साहस करते हैं। कूप-मण्डूक के समान एक-सी स्थिति पर सन्तुष्ट रहने वाले व्यक्ति क्या तो सफलता प्राप्त कर सकेंगे क्या ही महानता की उच्चतम अनुभूतियाँ प्राप्त कर सकेंगे ? भयभीत बने रहने से जीवन का सच्चा या व्यावहारिक ज्ञान पाना कठिन है।

नैपोलियन बोनापार्ट कहा करता था, "भय से आत्म-सम्मान नष्ट हो जाता है।" यह नीति सम्मत बात है कि साहसी मनुष्य अकेला ही सैकड़ों को मात दे सकता है। जो परिस्थितियों और आलोचनाओं से घबराकर अपने कर्त्तव्य से गिरते नहीं, अन्त में विजय उन्हीं की होती है। कार्य का शुभ आरम्भ करने से पूर्व और एक बार दृढ़तापूर्वक विचार कर कीजिये कि आप विफल नहीं होंगे, फिर अपनी सम्पूर्ण शक्तियों को उसी पर जुटा दीजिए। आप विश्वास कीजिये आपका निश्चय ही अन्त तक साहस देता रहेगा। आत्मशक्ति लेकर निश्चित मार्ग पर चल निकलिए, रुकिए नहीं। यह मत देखिये कि आपका साथी पीछे जा रहा है। युद्ध में लड़ने वाले सिपाही, मरने वालों की तादाद नहीं गिनते। ऐसा करें तो आगे से गोली लग जाने का खतरा बना रहेगा। अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिये चलते ही रहिए, क्षेत्र से बाहर न जाइए तो आप अन्त में अपने निश्चय को अवश्य पालेंगे।

संसार में कुछ कार्य इतने महान् व आवश्यक माने जाते हैं, जिनके लिये दूसरी सभी वस्तुओं को उत्सर्ग कर देना पड़ता है। देश की रक्षा के लिये माताएँ अपने पुत्रों, पत्नियाँ, अपने पतियों को बिना परिणाम की बात सोचे लड़ाई के मैदान में भेज देती हैं। वैज्ञानिक अपने देश की शक्ति बढ़ाने के लिये अपने जीवन को खतरे में डालकर महत्त्वपूर्ण प्रयोग करते रहते हैं। मानवता की प्रतिस्थापना के लिये गौतम बुद्ध का त्याग—देवत्व के विकास के लिये महर्षि दधीचि का अस्थिदान, ये ऐसे विशिष्ट कार्य हैं, जिनमें छोटे-बड़े दूसरे हितों का ध्यान नहीं दिया गया। तभी किसी महान् संकल्प की पूर्ति हो पाई है। विश्वहित की कामना से अपने सुखों का त्याग सर्वोपरि साहस का परिचायक है। इससे व्यक्ति की महानता का परिचय मिलता है। मनुष्य के मूल्यांकन की कसौटी का दूसरा नाम निर्भयता है।

उत्साह में कमी का एक महत्त्वपूर्ण कारण अपनी प्रतिष्ठा के प्रति भ्रान्तिपूर्ण संकल्पना होती है। यह भाव पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में अधिक पाया जाता है। आत्म प्रतिष्ठा, आदर व सम्मान प्राप्त करने की लालसा मनुष्य को अपने लक्ष्य से गिरा देती है क्योंकि इससे अन्तर्चेतना कई क्षेत्रों में विभक्त हो जाती है। यश की कामना से किये हुए कर्त्तव्य में औचित्य का भान नहीं रहता, इससे बाद में पश्चाताप और प्रायश्चित ही भोगना पड़ता है। आत्म-सम्मान का अर्थ है, आप अपने सिद्धान्तों को बलपूर्वक किसी पर थोपना चाहते हैं। इस महत्त्वाकांक्षा का जीवन-लक्ष्य से संघर्ष हो जाता है, फलतः मूल उद्देश्य अस्त-व्यस्त हो जाता है और दीनता का उदय हो जाता है। वह विचारों की दीनता सारे उत्साह पर पानी फेर देती है। इसलिए कर्त्तव्य करते हुए भी फल की कामना न करने को ही भारतीय संस्कृति में जीवन साफल्य का साधन माना जाता है। इसमें सन्देह नहीं है कि सुख व समृद्धि का कारण उत्साह है किन्तु यह ध्यान बना रहे कि आप केवल सम्मान के भाव से प्रभावित नहीं हो रहे हैं, तभी वास्तविक सफलता तक पहुँच पायेंगे।

साहस में कमी का एक कारण, "आत्म निर्भरता का अभाव" भी है। अपने ऊपर विश्वास करना, अपनी शक्तियों पर विश्वास करना एक ऐसा सद्गुण है, जिस पर विचार, योग्यता और साहस उत्पन्न होता है। जो प्रत्येक कार्य में दूसरों का मुँह ताकते हैं, वे जीवन में कोई महत्त्वपूर्ण सफलता प्राप्त नहीं, कर सकते किन्तु जो यह मानते हैं कि कोई भी कार्य उनकी शक्ति से परे नहीं उनमें अदम्य उत्साह भर जाता है, जिसके सहारे वे बड़े-बड़े कार्य तक हँसी-खुशी पूरा कर लेते हैं। कहावत है "परमात्मा उन्हीं की मदद करता है जो अपनी मदद आप करते हैं।" दूसरों पर निर्भर होना मनुष्य की हीनता का बोधक है। इससे अपना बल घटता है, इच्छाओं की पूर्ति में अनेकों विघ्न-बाधाएँ आ उपस्थित होती हैं। सफलता का अच्छा और सीधा पथ यह है कि अपनी शक्तियों पर विश्वास करना सीखें। मनुष्य की प्रतिष्ठा, स्वाधीनता और निर्भयता इसी बात में है।

संसार में हर किसी को एक-सी परिस्थितियाँ उपलब्ध नहीं हैं। सभी मिल मालिक बनना चाहें तो फिर मजदूर रहना कौन स्वीकार करेगा ? जो जिम्मेदारी मिले उसे ही सम्मानपूर्वक निबाहना मनुष्य का सर्वोत्तम कर्त्तव्य है। अपनी जिम्मेदारियाँ दूसरों पर टालने से आत्मिक विकास नहीं हो पाता। दिन-दिन बुरी परिस्थितियों की ओर खिंचते हुए चले जाते हैं। ऐसी स्थिति में किसी प्रकार की सफलता की आशा नहीं की जा सकती। हर परिस्थिति से संघर्ष करने वाले व्यक्ति ही सफल और मुक्तिपथगामी हुए हैं। परिस्थितियों से टकराने से ही मनुष्य की अन्तःप्रतिभा जाग्रत होती है। सोई शक्तियों का विकास होता है। इस जागृत शक्ति को जिस दिशा में लगा देते हैं, वहीं सफलता के दर्शन होने लगते हैं। जो निर्भयतापूर्वक अच्छी-बुरी हर एक स्थिति में अनुकूलता प्राप्त कर सकता है उन्नति, सफलता और आनन्द की उपलब्धि उसी को होती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीवन के उतार-चढ़ावों पर उद्विग्न न हों

जरा-जरा-सी बात पर दुःखी होना बहुत-से लोगों का स्वभाव होता है। यह स्वभाव किसी प्रकार भी वांछनीय नहीं माना जा सकता। मनुष्य आनन्दस्वरूप है, उसको दुःखी होना क्या ? उसे तो हर समय प्रसन्न, आनन्दित तथा उत्साहित ही रहना चाहिए। यही उसके लिए वांछनीय है और यही जीवन की विशेषता है। इस स्वभाव के अतिरिक्त लोग तब तो अवश्य ही दुःखी रहने लगते हैं, जब वे किसी उच्च स्थिति से नीचे उतर आते हैं। इस दशा में वे अपने दुःखावेग पर नियन्त्रण नहीं कर पाते और फूल जैसे जीवन में ज्वाला का समावेश कर लेते हैं, जबकि उस उतार की स्थिति में भी दुःख-शोक की उपासना करना अनुचित है।

उतार की स्थिति में दुःखों का होना तभी ठीक है, जब वह उतार पतन के रूप में घटित हुआ हो और यदि उसका घटना नियत के नियम के 'परिवर्तन' ईश्वर की इच्छा, प्रारब्ध अथवा दुष्टों की दुरभि-संधियों के कारण हुआ हो, तो कदापि दुःखी न होना चाहिए। तब तो दुःख के स्थान पर सावधानी को ही आश्रित करना चाहिये। पतन के रूप में उतार का घटित होना अवश्य खेद और दुःख की बात है। उदाहरण के लिये किसी परीक्षा को ले लीजिए, यदि परीक्षार्थी ने अपने अध्ययन, अध्यवसाय और परिश्रम में कोताही रखी है, समय पर नहीं जागा, आवश्यक पाठ आत्म-सात नहीं किये, गुरुओं के निर्देश और परामर्शों पर ध्यान नहीं दिया, अपना उत्तरदायित्व अनुभव नहीं किया और असावधानी तथा लापरवाही बरती है, तो उसका फेल हो जाना खेद, दुःख व आत्महीनता का विषय है। उसे अपने उस किए का दुःख रूपी दण्ड मिलना ही चाहिए। वह इसी योग्य था। उसके साथ न किसी को सहानुभूति होनी चाहिए और न उसे सान्त्वना और आश्वासन का सहयोग ही मिलना चाहिए।

किन्तु उस पुरुषार्थी विद्यार्थी को दुःख से अभिभूत होना उचित नहीं, जिसने पूरी मेहनत की है और पास होने की सारी शर्तों का निर्वाह किया है। बात अवश्य कुछ उल्टी लगती है कि जिसने परिश्रम नहीं किया, वह तो अनुत्तीर्ण होने पर दुःखी हो और जिसने खून-पसीना एक करके तैयारी की, वह असफल हो जाने पर दुःखी न हो। किन्तु हितकर नीति यही है कि योग्य विद्यार्थी को असफलता पर दुःखी नहीं होना चाहिए। इसलिए कि उसके सामने उसका उज्ज्वल भविष्य होता है। दुःख और शोक से अभिभूत हो जाने पर वह निराशा के परदे में छिप सकता है।

अयोग्य विद्यार्थी का न तो कोई वर्तमान होता है और न भविष्य। वह निकम्मा चाहे दुःखी हो, चाहे प्रसन्न कोई अन्तर नहीं पड़ता। इस प्रकार पतन द्वारा पाई असफलता तो दुःख का हेतु है, किन्तु पुरुषार्थ से अलंकृत प्रयत्न की असफलता दुःख-खेद का नहीं, चिन्तन-मनन और अनुभव का विषय है। आशा, उत्साह, साहस और धैर्य की परीक्षा का प्रसंग है। प्रयत्न की असफलता स्वयं एक परीक्षा है। मनुष्य को उसे स्वीकार करना और उत्तीर्ण करना ही चाहिए।

प्रायः आर्थिक उतार लोगों को बहुत दुःखी बना देता है। जिसका लम्बा-चौड़ा व्यापार चलता हो। लाखों रुपये वर्ष की आमदनी होती हो, सहसा उसका रोजगार ठप्प हो जाए, कोई लम्बा घाटा पड़ जाए, हैसियत बिगड़ जाए और वह असाधारण से साधारण स्थिति में आ गिरे तो वह अवश्य ही दुःखी और शोकग्रस्त रहने लगेगा। फिर भी इस आर्थिक उतार का शोक करना उचित नहीं। क्योंकि शोक करने से स्थिति में सुधार नहीं हो सकता है। यदि शोक करने और दुःखी रहने से स्थिति में सुधार की आशा हो तो एक बार शोक करना और दुःखी रहना उस स्थिति में किसी हद तक उचित कहा जा सकता है। किन्तु यह सभी अच्छी तरह से जानते हैं कि विपन्नता का उपचार दुःखी रहना नहीं, बल्कि उत्साहपूर्वक पुरुषार्थ करना ही है तथापि लोग उल्टा आचरण करते हैं यह कम खेद की बात नहीं है।

सम्पन्नता से विपन्नता में आ जाने पर लोग क्यों दुःखी रहते हैं ? इसके अनेक कारण होते हैं। इसका एक कारण तो है अपनी वर्तमान स्थिति से विगत स्थिति की तुलना करना। दूसरा कारण है, दूसरों की सम्पन्न स्थिति को सामने रखकर अपनी स्थिति देखना। तीसरा कारण है, सामाजिक अप्रतिष्ठा की आशंका करना। चौथा कारण है, लज्जा और आत्महीनता का भाव रखना और पाँचवाँ कारण है, विगत वैभव का व्यामोह। यह और इसी प्रकार के अन्य कारणोंवश लोग अपने आर्थिक उतार पर दुःखी और शोकग्रस्त रहा करते हैं। किन्तु यदि इन कारणों पर गहराई से विचार किया जाए तो पता चलेगा कि इन कारणों को सामने रखकर अपनी विपन्नता पर शोक करना बड़ी हल्की और निरर्थक बात है। इनमें से कोई कारण तो ऐसा नहीं, जिसे शोक का उचित सम्पादक माना जा सके।

अपनी वर्तमान स्थिति से विगत स्थिति की तुलना करने से क्या लाभ ? अतीतकाल की वह स्थिति जो वैभवपूर्ण थी, आज लौटकर नहीं आ सकती। हाँ उसकी तरह की स्थिति वर्तमान में बनाई अवश्य जा सकती है। किन्तु यह सम्भव तभी होगा, जब अतीत का रोना छोड़कर वर्तमान के अनुरूप साधनों का सहारा लेकर परिश्रम और पुरुषार्थ किया जाये। केवल अतीत की याद कर-करके दुःखी होने से कोई काम न बनेगा। जब मनुष्य अपने वैभवपूर्ण अतीत का चिन्तन करके इस प्रकार सोचता रहता है तो उसके हृदय में एक हूक उठती रहती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है—एस समय ऐसा था कि हमारा कारोबार जोरों से चलता था। लाखों रुपयों की आय थी। हजारों आदमी अधीनता में काम करते थे। बड़ी-सी कोठी और कई हवेलियाँ थीं। मोटरकार पर चलते थे। मनमाने ढंग से रहते और व्यय करते थे। लेकिन आज यह हाल है कि कारोबार बन्द हो गया है। आय का मार्ग नहीं रह गया। दूसरों की मातहती की नौबत आ गई है, कोठियाँ और हवेलियाँ बिक गईं। मोटरकार चली गईं। हम एक गरीब आदमी बन गए। अब तो यह जीवन ही बेकार है। इस प्रकार का चिन्तन करना अपने जीवन में निराशा और दुःख को पाल लेना है।

यदि अतीत का चिन्तन ही करना है, तो इस प्रकार करना चाहिए। हमने इस-इस प्रकार से अमुक-अमुक काम किये थे। जिससे इस-इस तरह की उन्नति हुई थी। उन्नति के इस मार्ग में इस-इस तरह के विघ्न आए थे, जिनको हमने इस नीति द्वारा दूर किया था। इस प्रकार का चिन्तन करने से मनुष्य का सफल स्वरूप ही सामने आता है और वह आगे उन्नति करने के लिए प्रेरणा पाता है। विचारों का प्रभाव मनुष्य के जीवन पर बड़ा गहरा पड़ता है। जो व्यक्ति अपनी अवनति और अनिश्चित भविष्य के विषय में ही सोचता रहता है, उसका जीवन-चक्र प्रायः उसी प्रकार से घूमने लगता है। इसके विपरीत जो अपनी उन्नति और विकास का चिन्तन किया करता है, उसका भविष्य उज्ज्वल और भाग्य अनुकूलतापूर्वक निर्मित होता है।

मनुष्य की चिन्तन क्रिया बड़ी महत्त्वपूर्ण होती है। चिन्तन को यदि उपासना की संज्ञा दे दी जाए, तब भी अनुचित न होगा। जो लोग उपासना करते हैं, उन्हें अनुभव होगा कि जब वे अपना ध्यान परमात्मा में लगाते हैं, तो अपने अन्दर एक विशेष प्रकार का प्रकाश और पुलक पाते हैं। उन्हें ऐसा लगता है, मानो परमात्मा की करुणा उनकी ओर आकर्षित हो रही है। यह कल्याणकारी अनुभव उस उपासना, उस चिन्तन अथवा उन विचारों का ही फल होता है, जिनके अन्तर्गत कल्याण का विश्वास प्रवाहित होता रहता है।

इस प्रकार जिस प्रकार का विश्वास और जिस प्रकार का विचार लेकर मनुष्य अपने भविष्य के प्रति उपासना करता है, उसी प्रकार के तत्त्व उसकी जीवन परिधि में सजग तथा सक्रिय हो उठते हैं। अतएव मनुष्य को सदैव ही कल्याणकारी चिन्तन ही करना चाहिये। निराशापूर्ण चिन्तन जीवन के उत्थान और विश्वास के लिए अच्छा नहीं होता।

दुःख मनाने से दुःख के कारणों का निवारण नहीं हो सकता। दुःख के कारण उद्विग्न और मलीन रहने के कारण मन शक्तियाँ नष्ट होती हैं। अधोगत व्यक्ति के भौतिक साधन प्रायः नगण्य हो जाते हैं। उस स्थिति में उसके पास मनोबल के सिवाय अन्य कोई साधन नहीं रह जाता। मनोबल का साधन कुछ कम बड़ा साधन नहीं होता। मनोबल के बने रहने पर मनुष्य में प्रसन्नता, विश्वास और उत्साह बना रहता है। इन गुणों को साथ लेकर जब किसी स्थान पर व्यवहार किया जाता है, तो दूसरों पर उसके धैर्य, सहिष्णुता और साहस का प्रभाव पड़ता है। लोग उसे एक असामान्य व्यक्ति मानने लगते हैं। उन्हें विश्वास रहता है कि इसको दिया हुआ सहयोग सार्थक होगा। यह परिस्थितियों से हार न मानने वाला दृढ़ पुरुष है। इस प्रतिक्रिया से लोग उस व्यक्ति की ओर स्वतः आकर्षित हो उठते हैं—ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार उपासक की ओर परमात्मा की करुणा आकर्षित हो उठती है।

विगत वैभव का सोच करना किसी प्रकार भी उचित नहीं ? क्योंकि अतीत का चिन्तन न तो वर्तमान में कोई सहायता करता है और न भविष्य का निर्माण। बल्कि वह उस व्यामोह को और भी सघन तथा दृढ़ बना देता है, जिसके अधीन मनुष्य विगत वैभव का सोच किया करते हैं। उत्थान अथवा अवनति के माया जाल से बचने के लिए आवश्यक है कि उनके प्रति व्यामोह के अन्धकार से बचे रहा जाय। इस सत्य में तर्क की जरा भी गुंजाइश नहीं है कि संसार परिवर्तन के चक्र से बँधा हुआ घूम रहा है। यहाँ पर कोई भी सदैव एक जैसी स्थिति के प्रति आश्वस्त रहने का अधिकार नहीं रखता। उसे परिवर्तन का अटूट नियम सहन ही करना पड़ेगा। यह सोचकर इस सत्य को स्वीकार करना ही होगा कि पहले गरीब थे, फिर अमीरी आई और अब उसी चक्र के अनुसार पुनः गरीबी आ गई है। पुनरपि यह निश्चित है कि यदि पूर्ववत् पुरुषार्थ का प्रमाण दिया जाय तो सम्पन्नता निश्चित है। इस सहज संयोग में रहते हुए सम्पन्नता, विपन्नता से विचलित होना किसी प्रकार भी बुद्धिसंगत नहीं है।

किन्हीं विगतमान चीजों के प्रति दुःख होने का कारण यह है कि व्यामोह के वशीभूत मनुष्य उससे अपना आत्मभाव स्थापित कर लेता है। सोचने की बात है कि जब यह संसार ही हमारा नहीं है, यह शरीर तक हमारा नहीं है, तो यहाँ की किसी चीज के साथ आत्म-भाव स्थापित कर लेने में क्या बुद्धिमत्ता है ? एक दिन जब मनुष्य खुद ही सबको छोड़कर चला जाता है, तो यदि कोई चीज उसे छोड़कर चली जाती है, तो इसमें दुःख की क्या बात है ? यह संसार और उसकी दृश्यमान अथवा अदृश्यमान सारी चीजें एकमात्र परमानन्द की हैं। उसके सिवाय किसी भी व्यक्ति का यहाँ की किसी चीज पर अधिकार नहीं है, जिसे जो कुछ मिलता है, वह सब परमात्मा का दिया होता है।

मनुष्य की बुद्धिमानी इसी में है कि वह इस सत्य को स्वीकार करे और इस बात के लिये सदैव तैयार रहना चाहिये कि परिवर्तन के नियम के अन्तर्गत उससे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कोई भी चीज किसी भी समय ली जा सकती है। इस सत्य में विश्वास रखने वाले को व्यामोह का कोई दोष नहीं लगने पाता और वह सम्पत्ति तथा विपत्ति में सदा समभाव रहता है।

उसी व्यामोह के जाल से बचने के लिए ही गीता में भगवान ने अनासक्तिपूर्वक जीवनक्रम चलाने का निर्देश किया है। उत्साहपूर्वक अपना कर्त्तव्य करते हुए इस बात के लिए सदा तैयार रहना चाहिये कि इस परिवर्तनशील जगत में कुछ भी अपना नहीं है। सम्पन्नता अथवा विपन्नता जो भी प्राप्त हो रही है, किसी समय भी बदल सकती है। यह अनासक्त भाव मानव-जीवन में सुख-शान्ति का बड़ा महत्त्वपूर्ण विधायक है। मानव-जीवन आनन्द रूप है। दुःखों, सन्तापों तथा आवेगों से इसे अशान्त रखना अन्याय है। ऊर्ध्व स्थिति से अधोस्थिति में आकर अथवा विपन्नता से सम्पन्नता में पहुँचकर किन्हीं अतिरिक्त अथवा अन्यथा भाव से आन्दोलित नहीं होना चाहिये। सम्पन्नता की स्थिति में अभिभूत रहना और विपन्नता में दुःखी होना, दोनों भाव ही जीवन में अशांति के कारण हैं।

विगत वैभव के प्रति व्यामोह के कारण वर्तमान जीवन तो अशान्त रहता है, साथ ही मलीन चिन्तन के कारण भविष्य भी प्रभावित होता है। अनासक्त भाव से, परिवर्तन में विश्वास रखते हुए उत्साहपूर्वक अपना कर्त्तव्य करते हुए जो स्थिति प्राप्त हो उसे मित्र की भाँति स्वीकार करने से जीवन में अशान्ति और असुख की सम्भावना नहीं रहती।

परिस्थितियों के दास नहीं स्वामी बनें

एक परिस्थिति आई, खिल उठे। प्रसन्नता और हर्ष से भर गये। दूसरी परिस्थिति आई, मुरझा गये। दुःख और खेद से आठ-आठ आँसू रोने लगे। पहली परिस्थिति की सजातीय किसी अन्य परिस्थिति का आगमन हुआ फिर हँस उठे और दूसरी परिस्थिति जैसी कोई परिस्थिति फिर आई तो पुनः रोने लगे। ऐसी परिस्थिति के प्रेरणा पात्र, अपने में और किसी के द्वारा संचालित एक कठपुतली में कोई अन्तर बतला सकते हैं ? निःसन्देह ऐसे व्यक्तियों और कठपुतली में कोई अन्तर ही नहीं होता। कठपुतली किसी मनुष्य द्वारा संचालित होती है और ऐसे व्यक्ति परिस्थितियों के अधीन नाचा करते हैं। जिस मनुष्य का अपना अस्तित्व, व्यक्तित्व, हर्ष और विषाद् अपने वश में नहीं होता वह एक कठपुतली से अधिक कुछ नहीं होता।

मनुष्य का अपना एक अस्तित्व और अपना एक व्यक्तित्व होता है। उसका संचालन उसकी अपनी शुद्ध आत्मा के द्वारा होना चाहिए। परिस्थितियों का दास होकर चलना मनुष्य जैसे प्राणियों के लिये अशोभनीय है। मनुष्य पर परमात्मा की विशेष कृपा है। उसने उसे अनेक प्रकार की प्रतिभाओं, योग्यताओं, कलाओं तथा क्षमताओं से सम्पन्न बनाया है। उसके हर्ष, विषाद और सुख-दुःख का स्वामी परिस्थितियों को नहीं बल्कि उसे स्वयं ही होना चाहिए। परमात्मा ने मनुष्य को पराधीन नहीं बल्कि स्वाधीन बनाकर भेजा है। वह अपने आनन्द का स्वयं ही स्वामी है। आनन्द के लिये दूसरे पर निर्भर रहने की कोई विवशता उसके सामने नहीं है। मनुष्य को अपने इस स्वामित्व को अनुभव करना ही चाहिए और उसी के अनुसार अपना आचरण भी।

कोई कारण उपस्थित होने पर उससे अद्भुत आवेग, उद्वेग, हर्ष अथवा विषादादिक विकारों में बह जाना परिस्थितियों की दासता है और उन पर विजय पा लेना स्वामित्व है। दुःख का एक कारण उपस्थित है—गरीबी। निःसन्देह गरीबी एक दुःखदायी स्थिति है। किसी उपचार के लिए पैसा चाहिए किन्तु वह नहीं है। किसी विशेष अवसर के लिए खर्चा चाहिए , लेकिन हाथ तंग है। किसी घटना पर नियन्त्रण करने के लिये धन चाहिए, लेकिन विवशता है। ऐसी दशा में दुःख अथवा क्षोभ होना आश्चर्यजनक नहीं है किन्तु तभी तक जब तक कि उसके प्रवाह में बह जाया न जाये। जो उसके प्रवाह में बहकर रोते-झींकते रहते हैं अथवा उसके उपचार रूपी किसी गलत मार्ग को सोचने अथवा उस पर चलने लगते हैं, वे परिस्थितियों के दास ही कहे जायेंगे किन्तु जो अपने उस अभाव से प्रेरणा और उत्साह ग्रहण कर यह हौसला करते हैं कि यह दुःखदायी परिस्थिति न तो हमें रुला सकती है और न हमारी नैतिकता हिला सकती है। साथ ही अपने हौसले को सार्थक करने में तत्पर हो उठते हैं, वे परिस्थितियों के स्वामी होते हैं। ऐसे वीर पुरुषों के सामने परिस्थितियों को झुकना ही पड़ता है। जो परिस्थितियों से हार न मानकर उन्हें परास्त करने का उत्साह रखते हैं, वे सदैव प्रसन्न और आनन्दित रहते हैं। प्रसन्न पुरुष ही वास्तव में पुरुष हैं, बाकी सब अन्यथा व्यक्ति होते हैं।

अनेक बार लोग संयम, नियम और अनुष्ठानों का कार्यक्रम चलाते हैं, व्रतों का निर्वाह करते हैं। लेकिन जब कभी उनके सामने कोई ऐसी परिस्थिति आ जाती है, जो नियम अथवा समय के प्रतिकूल होती है तो वे दृढ़ता नहीं दिखला पाते हैं। कोई न कोई बहाना लेकर फिसल जाते हैं। परिस्थितियों के अनुकूल विनमन कर जाने वाले ढील-पोले लोग परिस्थितियों के दास ही होते हैं। जैसे किसी ने नियम बनाया है कि वह चाय नहीं पियेगा। अपनी ओर से वह इस नियम का निर्वाह भी करता है। घर पर चाय बनती है। सब लोग पीते हैं। उससे भी पीने को कहते हैं लेकिन वह अपने व्रत का पालन करता है। कहने पर भी चाय नहीं पीता है। लेकिन घर वालों का वह अनुरोध और चाय का दौर एक सामान्य स्थिति होती है, परिस्थिति नहीं। जिस पर उस संयमी को विजयी माना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाए। चाय के सम्बन्ध में यह स्थिति परिस्थिति तब बन जाती है, जब किन्हीं अतिथियों, सम्बन्धियों, मित्रों अथवा सम्पर्कों के बीच किसी विशेष अवसर अथवा उत्सव पर उससे पीने का अनुरोध किया जाये, ऐसे अवसर पर यदि संयमी उस परिस्थिति को पार कर अपने नियम की रक्षा कर लेता है, तो उसे परिस्थितिजयी माना जायेगा और यदि किन्हीं कारणों अथवा दुर्बलताओं से प्रेरित होकर, वह अपना नियम तोड़ देता है, तो उसे परिस्थिति का दास ही कहा जायेगा। बहुत बार किन्हीं हित-अनहितों को ध्यान में रखकर परिस्थिति के अनुसार आचरण करना होता है। उस सामंजस्य को एक-आध बार स्वीकार किया जा सकता है। किन्तु जब यह सामंजस्य क्षिप्र तथा सरल बन जाता है, तो उस संयमी को परिस्थिति का दास ही कहा जायेगा। परिस्थितियों की ऐसी दासता अशोभनीय है। दुर्बलता का लक्षण है।

इसी प्रकार शोक, मोह अथवा दुःख-तकलीफ के अवसर पर भी परिस्थितियों की दासता अथवा स्वामित्व की परीक्षा हो जाती है। कोई घटना ऐसी हो जाती है, जो सामान्यतः रोने-बिलखने और निराश हो जाने को विवश करती है। बहुधा अन्य लोग वैसा करने भी लगते हैं। यदि कोई व्यक्ति अन्यों के साथ ही उस सामान्यता में शामिल हो जाता है तो उसे परिस्थिति का दास ही मानना पड़ेगा और यदि वह उस शोकाकुल परिस्थिति में अपनी मानसिक शांति, मस्तिष्क का सन्तुलन, क्रियाओं की सामान्यता और आशा, उत्साह, साहस आदि को बनाये रहता है, तो उसे उनका स्वामी कहा जायेगा। ऐसे ही साहसी और सन्तुलित लोग, जो परिस्थितियों का दबाव अस्वीकार करते हुए अपने सामान्य पथ पर यथावत् चलते रहते हैं, वे जीवन में न तो पराजित होते हैं और न उनका कुशल क्षेम ही कुण्ठित होता है। परिस्थितियों से टक्कर लेकर बढ़ने और अपना अस्तित्व तथा व्यक्तित्व बनाये रखने वाले कठिनाइयों और आपत्तियों से भरे संसार में कभी हारते नहीं।

सामान्यतः लोग किसी प्रियजन के बिछोह और अर्थाभाव से अधिक विचलित होते हैं। किसी प्रियजन का बिछोह पाकर लोग बेतहाशा शोक-विह्वल हो जाते हैं, उन्हें अपना जीवन निराश और निस्सार दीखने लगता है। बहुत बार तो लोग शोकातिरेक में सामान्य जीवनक्रम से भी उदासीन हो जाते हैं। काम-काज त्याग देते हैं। अपनी स्थिति को दयनीय और दुःखपूर्ण बना लेते हैं। जीवन सम्बन्धी अपनी-अपनी सारी अभिरुचियाँ नष्ट कर डालते हैं। बहुत-से लोग इस शोकानुभूति को यहाँ तक बढ़ा ले जाते हैं कि सनकी, पागल और विक्षिप्त तक हो जाते हैं। बहुत बार तो शोक, खेद, निराशा और निरुत्साह की सम्मिलित प्रतिक्रिया से प्रेरित तथा प्रवाहित होकर आत्म-हत्या का पाप तक कर डालते हैं। क्या उनकी इस हैवत को किसी प्रकार भी बुद्धि सम्मत माना जा सकता है ? कदापि नहीं। ऐसे लोग परिस्थितियों के निकृष्टतम दास होने के साथ-साथ निन्दा और आलोचना के पात्र होते हैं।

यह संसार नश्वर है। यहाँ की हर चीज आने-जाने वाली है। जो आया है वह जाएगा, जो मिला वह बिछुड़ेगा, जो खिला है वह मुरझाएगा, जो जला है वह बुझेगा, यह अटल नियम है। ऐसी दशा में किसी बिछोह-वियोग से अनुचित रूप से अभिभूत हो जाना मानसिक दुर्बलता के सिवाय और क्या हो सकता है ? परिस्थितियों की ऐसी दासता निश्चित रूप से मनुष्य को बरबाद कर देती है। बिछोह होना था हो गया। उसके लिए योग्य शोक भी कर लिया जाए तो भी कोई बात नहीं। किन्तु इस अटल नियम के प्रति निष्ठा न रखकर अपने को शोक के हाथों बेच देना नितान्त रूप से अवांछनीय है। इस विक्रय से न तो गया हुआ वापस आएगा और न वह नियम भविष्य के लिये अपवाद ही होगा। होगा केवल यह कि मनुष्य का अपना सारा अस्तित्व, व्यक्तित्व तथा आशापूर्ण भविष्य नष्ट-भ्रष्ट होकर समाप्त हो जाएगा।

व्यापार में घाटा हो गया। अर्थाघात का धक्का लगा। काम-काज ठप्प हो गया। चलती हुई गाड़ी रुक गई। निराशा की बदली छा गई। ठीक है ऐसा होना अस्वाभाविक नहीं है। किसी हद तक दुःख हो सकता है। खेद मनाया जा सकता है तथापि यह कभी न मान बैठना चाहिए कि अब जीवन में कोई सार अथवा सम्भावना नहीं रह गई है। ऐसा विचार ही विनाश का बीज होता है। संसार की सारी घटनाएँ अस्थायी तथा अचिरंजीवी होती हैं। उनका प्रभाव कुछ ही समय रहकर समाप्त हो जाता है। हाँ स्थायित्व उनमें तब आता है, जब मनुष्य पूर्ण निराश तथा निरुत्साह होकर अपने विनाश का विश्वास उनके साथ जोड़ देता है।

प्रायः लोग यही भूल कर बैठते हैं। घाटा होने पर और व्यापार के प्रसन्न प्रवाह में व्याघात आते ही घबड़ा जाते हैं। सोचने लगते हैं अब मैं दरिद्री हो जाऊँगा। मेरा कारोबार समाप्त हो जाएगा। मेरा घर, मकान रहन चला जाएगा। समाज में मेरी प्रतिष्ठा चली जाएगी, मेरे परिवार का पतन हो जाएगा। इन्हीं सब वितर्कों से अभिभूत होकर लोग निराश होकर किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं। परिस्थितियों को समर्पण कर देते हैं, जिसके फलस्वरूप उन्हें अपनी कल्पना के अनुसार अधोगति में पड़ना पड़ता है।

न जाने लोग ऐसे समय में यह क्यों नहीं सोचते कि यह सब हो कैसे जायेगा ? जब उसका शरीर, मन, मस्तिष्क आदि सब सुरक्षित हैं। संसार में व्यापार, व्यवसाय का दौर चल रहा है। सम्पत्ति समाज की समाज में बनी हुई है, तब क्या कारण है कि अब उनकी उन्नति की सारी सम्भावनाएँ समाप्त हो गई हों। बात दरअसल यह होती है कि मनुष्य परिस्थिति के वशीभूत होकर घटना के अनुसार ही सोचने और चलने लगता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसी कारण उसे चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दिखाई देने लगता है।

उसे चाहिये कि वह गये हुए का सोच छोड़कर, उसके पास जो शेष है, उसका सहारा लेकर पुनः उन्नति के प्रयत्न में संलग्न हो जाये। किन्हीं कारणों से कोई सर्वथा साधन अथवा सम्बलहीन हो जाए यह कुछ भी सम्भव नहीं है। यदि उसे बाह्य सम्बल नहीं रहे हैं तो उसे अपने आन्तरिक सम्बल पर निर्भर हो जाना चाहिए। धन अथवा मौलिक साधनों को ही जीवन का सम्बल मानना भारी भूल है। वास्तविक सम्बल तो मनुष्य के हृदय तथा आत्मा में निवास करते हैं। जिनको आशा, उत्साह, दृढ़ता, तत्परता, साहस के नाम से पुकारा जा सकता है। इसके अतिरिक्त मनुष्य के पास और भी ऐसे सम्बल होते हैं, जिन्हें धन तथा मौद्रिक साधनों का स्रोत कहा जा सकता है। वह है योग्यता, अनुभव, उद्योग, पुरुषार्थ तथा परिश्रम। यही गुण तो मनुष्य की सच्ची पूँजी होते हैं। आर्थिक पूँजी के अभाव में निराश होने के स्थान पर इस सशक्त तथा सार्थक पूँजी का अवलम्बन लेते ही पुनः आशा के द्वार खुलने लगते हैं।

मनुष्य की असली पूँजी तो उसकी योग्यता, अनुभव तत्परता, उद्योग तथा पुरुषार्थ ही है। वित्तीय पूँजी तो नकली पूँजी है। यदि किसी में वास्तविक पूँजी का अभाव हो और उसके सामने धन का ढेर लगा दिया जाए तो क्या वह उसका उपयोग कर कोई योग्य उन्नति कर सकता है ? कदापि नहीं। अयोग्य तथा अनुभवहीन आदमी के लिये धन का कोई सार्थक उपयोग नहीं। किन्तु यदि मनुष्य अपनी वास्तविक पूँजी पर निर्भर रहता है तो वह बिना धन के भी व्यापार तथा व्यवसाय चला सकता है। जीवन में उन्नति का मार्ग प्रशस्त कर सकता है। अस्तु, मनुष्य को आर्थिक क्षति से अभिभूत होकर निराश न हो जाना चाहिये, उसे चाहिये कि वह अपनी असली पूँजी को सँभाले, उसी के आधार पर मैदान में फिर आये और ठीक उसी प्रकार संघर्ष करके अपनी धन सम्बन्धी स्थिति को ठीक करे जिस प्रकार उसने पूर्व में अपने व्यापार को बढ़ाया था। आर्थिक पूँजी के मातहत रहने वाले व्यवसायी निश्चय ही असफल होते हैं।

क्षति अथवा बिछोह की परिस्थिति से पराजित हो जाने वालों में प्रायः दो दुर्बलताएँ होती हैं—वे हैं लोभ और मोह। लोभ प्रधान व्यक्ति जरा-सी क्षति होते ही रोने-चिल्लाने लगते हैं। उन्हें सौ का एक सौ एक होना तो स्वीकार होता है लेकिन सौ का निन्यानवे होना उन्हें असहनीय होता है। यह कितना गलत सिद्धान्त है। जो चीज बढ़ सकती है, वह घट भी सकती है। अस्तु बुद्धिमानी इसी बात में है कि इन दोनों दशाओं को समान रूप से स्वीकृत किया जाये। इसी प्रकार मोह प्रधान व्यक्ति सदैव यही चाहते रहते हैं कि उनसे सम्बन्धित हर वस्तु चिरस्थायी रहे। जो कुछ मिल गया है वह सदा ही बना रहे। आवागमन का ईश्वरीय नियम उनके लिये अपवाद हो जाए। यह एक अयोग्य तथा नास्तिकतापूर्ण वांछा है। जो कभी पूर्ण नहीं हो सकती। अस्तु, मनुष्य को इस आवागमन के चक्र को स्वीकार कर उसके विषय में तटस्थ भाव ही रखना चाहिये।

अपनी तटस्थता तथा प्रसन्नता को परिस्थिति के अधीन रखने वाले उसके दास होते हैं। ऐसे दास प्रवृत्ति के लोग जीवन में कभी सुखी नहीं रह सकते। सुख-शान्ति और आनन्द का अधिकार उन्हीं का है, जो परिस्थितियों के दास न बनकर उनके स्वामी बने रहते हैं और किसी भी दशा में मानवीय गुणों तथा विशेषताओं को प्रभावित नहीं होने देते।

आपत्तियाँ आयें तो उनसे डरिये मत

आमतौर से कुछ लोग अपने सुख-दुःख का कारण बाह्य परिस्थितियों को बतलाते हैं। किन्तु यह उनका भ्रम मात्र है। संसार का घटनाचक्र एक गति से चल रहा है। उसकी गतिमत्ता से उत्पन्न होने वाली कोई भी परिस्थिति अपने में अच्छी बुरी नहीं होती। मनुष्य का मस्तिष्क, उसकी विचारधारा ही परिस्थितियों को अच्छा-बुरा बनाती है। एक ही तरह की परिस्थिति से एक जहाँ लाभ उठा लेता है, वहाँ दूसरा व्यक्ति उनसे कुचलकर नष्ट हो जाता है। परिस्थितियाँ अपना कोई प्रभाव रखती हैं या नहीं यह समझने के लिये महात्मा जेम्स ऐलन का निम्नलिखित संस्मरण एक उत्तम उदाहरण है। उन्होंने लिखा है—

'मेरे परिचय क्षेत्र में दो ऐसे व्यक्ति रहे हैं, जिनकी जीवनभर की कमाई एक साथ ही नष्ट हो गई। एक दिन प्रातःकाल उन्होंने समाचार-पत्र में पढ़ा कि जिस बैंक में उनका रुपया जमा था वह दिवालिया हो गया है। यह समाचार पढ़ते ही एक व्यक्ति इतना दुःखी और निराश हुआ कि उसका मस्तिष्क विकृत हो गया, वह बिल्कुल पागल हो गया। किन्तु दूसरे व्यक्ति ने जब यह समाचार पढ़ा तो एक गम्भीर मुस्कान के साथ शान्तिपूर्वक कहा—''ठीक ही हुआ—परमात्मा जो कुछ करता है अच्छा ही करता है। मेरी अब तक की कमाई का पैसा तो मेरे हाथ से निकल ही गया, अब वह शोक करने से तो वापस मिल नहीं सकता—हाँ परिश्रम करने से पुनः मिल सकता है। मेरा पैसा ही तो गया, हाथ-पैर और हौसला तो नहीं गया। मैं फिर कमा लूँगा।''

ऐसा सोचकर वह व्यक्ति पुनः नवीन उत्साह और दृढ़ आत्मविश्वास के साथ काम में जुट गया, जिसके फलस्वरूप कुछ ही दिनों में वह पुनः धनवान हो गया। किन्तु दूसरा व्यक्ति अपने गये हुए धन के लिए रोता और छाती पीटता हुआ शोक करता रहा। वह केवल परिस्थिति को कोसता, भाग्य को दोष देता और बैंक को बुरा-भला कहता रहा। उसने उद्योग का सहारा न लेकर निराशा का पल्ला पकड़ा, जिससे वह दिन-दिन दयनीय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होता हुआ विपत्ति का शिकार बन गया। यदि वास्तविक रूप में इस पर विचार किया जाये तो पता चलेगा कि वह विपत्ति का नहीं, वास्तव में अपनी मानसिक दुर्बलता और निराशापूर्ण विचारों का ही शिकार बना।

धन नाश के समाचार पर जहाँ पर एक ने साहस का सहारा लिया, वहाँ दूसरे ने निराशा की दासता स्वीकार की और एक ही परिस्थिति में अपने-अपने मनोभावों के अनुरूप उन दोनों को उसका फल मिला। यदि परिस्थितियों में दुःख-सुख देने की शक्ति होती तो एक ही परिस्थितिग्रस्त उन दोनों व्यक्तियों की एक ही दशा होनी चाहिये थी। या तो दोनों दुःख से पागल हो जाते अथवा दोनों उत्साहपूर्ण उद्योगी। उन दोनों की विपरीत दशाओं से स्पष्ट सिद्ध होता है कि किसी भी परिस्थिति अथवा उलटफेर में सुख-दुःख देने की शक्ति नहीं होती बल्कि यह मनुष्य की अपनी मानसिक स्थिति है जो किसी भी परिस्थिति को अच्छा या बुरा बना लेती है।

संसार में मनुष्य के पास आशा, उत्साह और उद्योग का इतना शक्तिशाली सम्बल है, जिसके बल पर वह बड़ी से बड़ी प्रतिकूल परिस्थिति को अनुकूल बना सकता है। जो आशान्वित है, उत्साही है और उद्योगी है अमंगल अथवा अनिष्ट उसके मार्ग में कभी नहीं आते और यदि संयोग अथवा भवितव्यतावश ऐसा अवसर आ भी जाता है तो पुरुषार्थी व्यक्ति उससे भयभीत नहीं होते। अखण्ड आत्मविश्वास के साथ उससे टक्कर लेते हैं और उसे पराजित करते हैं। इसके विपरीत जो प्रतिकूलता की छाया देखते ही काँपने और रोने लगते हैं। उनको वह साधारण-सी प्रतिकूलता भी भयानक प्रेत की तरह लग जाती है और अन्त में विनष्ट करके ही मानती है। लाख अवरोध आयें, प्रतिकूलतायें घेरें, परिस्थितियाँ बदलें, अभाव और आपत्ति क्यों न टूट पड़ें, मनुष्य को कभी निराश नहीं होना चाहिए। धैर्य और साहस संसार की हर आपत्ति का अमोघ उपचार है।

मनुष्य को चाहिए कि वह अपने कर्त्तव्य पथ पर सावधानी के साथ चले। अपनी ओर से संघर्ष, संकट अथवा आपत्ति का कोई कारण उपस्थित न होने दे। तब भी यदि कोई ऐसी स्थिति आ जाती है तो चिन्ता मत कीजिये। दूसरे के द्वारा प्रेरित आपत्ति आप पर एक अन्याय है और अन्यायपूर्ण आक्रमण कभी सफल नहीं होता। यदि आप अपने कर्त्तव्य पथ और व्यवहार के प्रति ईमानदार हैं तो अन्याय प्रेरित आपत्ति को देखकर आप में एक तेजस्विता जागेगी, आपकी शक्ति बढ़ेगी और आगे बढ़कर उसका सामना करने का उत्साह होगा। सत्य आपकी सहायता करेगा, साहस साथ देगा और विजय श्री आपका वरण करेगी।

संसार में संकट असम्भाव्य नहीं। अनुत्तरदायी और अनुचित व्यक्तियों के अकर्त्तव्यों से जन्मी हुई आपत्तियाँ संसार में भरी पड़ी हैं। उनमें से कोई भी किसी पर किसी समय आ सकती है। अपनी ओर से आपत्ति को जन्म न देना और पर-प्रेरित संकट से टक्कर लेना मनुष्यता का एक उदात्त लक्षण है।

संसार में बड़े संकटों से टक्कर लेने के लिये मनुष्य को हर समय तैयार रहना चाहिये। क्या अच्छे और क्या बुरे ? संकट हर मनुष्य पर आ सकता है। किन्तु जिसके पास चरित्र का बल है, विचारों का तेज और आत्मिक आलोक है, वह संकट काल से उसी प्रकार हँसता हुआ बाहर निकल आयेगा जैसे ग्रहण से उग्रह होकर पूर्णिमा का चन्द्रमा। जो चरित्रहीन है, कलुषित है, आत्महत्यारा है, वह संकट का झोंका लगते ही स्खलित नक्षत्र की भाँति टूटकर गिर पड़ेगा।

आपत्तियों से डरिये नहीं, लड़िये

परिवर्तन संसार का स्वाभाविक गुण है। यह एक रस कदापि नहीं रह सकता। ऋतुओं का परिवर्तन, रात-दिन, धूप-छाँह की अदल-बदल यही प्रकट करते हैं कि संसार की शोभा भी इसके परिवर्तनशील होने में है। हर परिवर्तन एक नवीन जिन्दगी लेकर आता है। जब संसार ग्रीष्म में तपकर व्याकुल हो उठता है, तब बरसात उसका ताप दूर करके एक नव-जीवन, 'नये सुख' का संचार करती है। बरसात से जब नदियाँ बढ़ जाती हैं, रास्ते बन्द हो जाते हैं, पानी गँदला हो जाता है, कीड़े-मकोड़े बढ़ जाते हैं, तब इनका निवारण करने के लिये शरद् ऋतु आती है और बरसात से ऊबा हुआ मनुष्य पुनः एक नवीन जीवन का अनुभव करता है। इसी प्रकार जब जाड़ा प्राण लेवा बन जाता है, तब पुनः शीत-रहित ऋतु का आगमन होता है। आशय यह है कि एक-सी स्थिति में रहते संसार के प्राणी ऊबकर विरक्त न होने लगें, इसलिये परमात्मा ने संसार में परिवर्तन का एक अनिवार्य नियम बना दिया है।

संसार का एक अंग होने से मनुष्य का जीवन भी परिवर्तनशील है। बचपन, जवानी, बुढ़ापा आदि का परिवर्तन, तृषा-तृप्ति, काम, आराम, निद्रा, जागरण तथा जीवन-मरण के अनेक परिवर्तन मानव-जीवन से जुड़े हुए हैं। इसी प्रकार सफलता-असफलता तथा सुख-दुःख भी इसी परिवर्तनशील मानव जीवन के एक अभिन्न अंग हैं।

परिवर्तन जीवन का चिन्ह है। अपरिवर्तन जड़ता का लक्षण है। जो जीवित है, उसमें परिवर्तन आयेगा ही, इस परिवर्तन में ही रुचि का भाव रहता है। एकरसता हर क्षेत्र में ऊब और अरुचि उत्पन्न कर देती है।

कठिनाइयों का आगमन भी इसी परिवर्तनशीलता के ही अन्तर्गत हुआ करता है मानव-जीवन संघर्षपूर्ण प्रक्रिया है। अधिकतर लोग संघर्ष को बुरा मानते हैं, उससे बचने का प्रयत्न करते हैं। किन्तु यह संघर्ष ही मनुष्य जीवन के विकास एवं सफलता का कारण है। यदि संघर्ष न हो तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कोई शक्तिशाली, विद्वान, पुरुषार्थी अथवा परिश्रमी बनने का प्रयत्न ही न करें। स्पर्धारूपी संघर्ष ही मनुष्य को एक-दूसरे से ऊँचा कलाकार, कार्यकर्त्ता तथा शिल्पकार बनने की प्रेरणा देता है। यदि मनुष्य को बिना श्रम किये भोजन मिल जाया करे, प्रकृति की कठोरता से संघर्ष किये बिना ही यदि उसकी आवश्यकताएँ पूरी हो जाया करतीं, तो मनुष्य कितना काहिल और निकम्मा होता, इसका अनुमान लगा सकना कठिन है ?

प्राकृतिक कठोरताओं के संघर्ष से ही प्रेरित होकर मनुष्य ने जीवन में सुख-सुविधाओं के रूप में बड़ी-बड़ी सभ्यताओं एवं संस्कृतियों का निर्माण कर डाला है। प्रकृति से पिछड़े हुए संघर्ष ने ही संसार में आश्चर्यचकित कर देने वाले शिल्पों को जन्म दिया है। संघर्ष संसार की न केवल स्वाभाविक प्रक्रिया है, बल्कि परिवर्तन की तरह यह आवश्यक भी है। इसके बिना मनुष्य का विकास रुक जाता और भौचक्की कर देने वाली विज्ञान एवं ज्ञान की प्रगति न होती।

किन्तु कितना आश्चर्य है कि मानव-विकास की इस अनिवार्य आवश्यकता से न जाने मनुष्य क्यों डरता है ? परिवर्तन से डरना और संघर्ष से कतराना मनुष्य की बहुत बड़ी कायरता है।

मनुष्य जब तक जीवित है, उसे परिवर्तनपूर्ण उतार-चढ़ाव और बनने-बिगड़ने वाली अनुकूल एवं प्रतिकूल परिस्थितियों का सामना करना ही होगा। दुःख-सुख, हानि-लाभ, सफलता-असफलता, सुविधा एवं कठिनाइयों के बीच से गुजरना ही होगा। लाख चाहने और प्रयत्न करने पर भी वह इनको आने से नहीं रोक सकता। यह आयेगी ही और मनुष्य को इनसे जूझना ही होगा।

यह बात दूसरी है कि कोई कायर इनकी मार खाकर रोता-चिल्लाता हुआ इनको पार करता है और कोई साहसी अपने आत्म-बल एवं पुरुषार्थ के सम्बल का सहारा लेकर या तो इनको अपने अनुकूल बना लेता है या इनका मुख मोड़ देता है।

रोना-धोना, शोक, चिन्ता और विषाद करने से कोई परिस्थिति नहीं बदलती, कोई कठिनाई दूर नहीं होती। बल्कि वे कमजोर मनोभूमि पाकर और भी विकराल रूप में अपना ताण्डव करती हुई कायर के भय से मनोरंजन किया करती हैं। जहाँ उनके ठहरने का समय एक दिन, दो-दिन होता है, वहाँ वे महीनों, वर्षों के लिये अपना टिकासर लगा देती हैं। रोना-झीकना, भयभीत होना अथवा भागना एक प्रकार से कठिनाइयों एवं आपत्तियों के प्रति आत्मसमर्पण करना है और किसी शत्रु के सम्मुख आत्मसमर्पण करने का जो फल होता है, वही उसे भोगना पड़ता है। ऐसे दुर्बल व्यक्ति का आत्मसमर्पण पाकर आपत्तियाँ उसका सर्वस्व हरण कर लेती हैं। उसकी मानसिक शक्तियों, आत्मिक बल, प्रसन्नता, आशा, उल्लास आदि सम्पत्तियों को हड़प कर नितान्त दरिद्री बना देती हैं।

परिवर्तन के नियम और संघर्ष में प्रबलता के कारण जब जीवन में कठिनाइयों, परेशानियों और आपत्तियों का आना अनिवार्य ही है, तब रोने-धोने, भागने, भयभीत होने के स्थान पर उनसे लड़ना और टकराना ही उचित मालूम होता है।

बिना कठिनाइयों के मनुष्य का पुरुषार्थ नहीं खिलता, उसके आत्म-बल का विकास नहीं होता, उसके साहस और परिश्रम के पंख नहीं लगते, उसकी कार्यक्षमता का विकास नहीं होता। यदि कठिनाइयाँ न आवें तो मनुष्य साधारण रूप से रेलगाड़ी के पहिये की तरह निरुत्साह के साथ लुढ़कता चला जाये। उसकी अलौकिक शक्तियों, उसकी दिव्य क्षमताओं, उसकी अद्भुत बुद्धि और शक्तिशाली विवेक के चमत्कारों को देखने का अवसर ही न मिले। उसकी सारी विलक्षणताएँ, अद्भुत कलाएँ और विस्मयकारक योग्यताएँ धरती के गर्भ में पड़े रत्नों की तरह ही पड़ी-पड़ी निरुपयोगी हो जातीं।

निःसन्देह यह आपत्तियों तथा कठिनाइयों की कृपा है जोकि मनुष्य अपनी शक्तियों तथा अपने स्वरूप को पहचान सका है। कठिनाइयाँ ही मनुष्य के मस्तिष्क को जगाती, उसकी आत्मा को प्रबुद्ध करती और उसको विकास के पथ पर अग्रसर करती हैं। मनुष्य को आपत्तियों से घृणा नहीं बल्कि प्रेम करना चाहिये उनका आभार मानना चाहिये।

मनुष्य के ज्ञानवर्धन में कठिनाइयों का बहुत हाथ है। आपत्ति के समय ही मनुष्य को ठोस अनुभव होते हैं। आपत्तिकाल में ही उसे अपने-परायों की, मनुष्यता एवं पशुता की परख होती है। कठिनाइयाँ तथा आपत्तियाँ ही संसार के वास्तविक रूप को उसके सामने प्रकट करती हैं। कठिनाइयाँ ही मनुष्य को अपने प्रति बहुत-से भ्रमों को दूर कर देती हैं। आपत्ति के बीच अपनी दशा देखकर ही मनुष्य ठीक-ठीक समझ पाता है कि वह कितने पानी में है ? बड़े-बड़े साहसी अपने को कायर तथा कमजोर समझने वाले देखते हैं कि उनमें तो काफी साहस है। इस प्रकार कठिनाइयाँ मनुष्य के लिये हर प्रकार से सहायक तथा उपयोगी ही होती हैं।

किन्तु किसके लिये ? क्या उनके लिये जो उनको देखते ही दुम-दबाकर भागते या रोते-चिल्लाते हैं। क्या आपत्तियों में जिनकी बुद्धि विकल एवं भ्रष्ट हो जाती है, मन का सारा साहस कूच कर जाता है ? क्या उनके लिये जो भीरु हैं, सुकुमार हैं, असहिष्णु अथवा सुखलिप्सु हैं ? नहीं, कठिनाइयों का सहन कर सकना निर्बल हृदय व्यक्ति के वश की बात नहीं है और जो उनको सहन नहीं कर सकता, वह सिद्धि पाना तो दूर उनसे लाभ उठाना तो क्या, उल्टे उनमें जलकर भस्म ही हो जायेगा। आपत्तियों का झंझावात जहाँ नरसिंहों को झकझोर कर उनका प्रमाद दूर करके पुरुषार्थ के लिये खड़ा कर देता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है, वहाँ शृगाल-शशकों को भयभीत करके जीवन-रण में परास्त कर देता है।

आपत्तियाँ संसार का स्वाभाविक धर्म हैं। वे आती हैं और सदा आती रहेंगी। उनसे न तो भयभीत होइये और न भागने की कोशिश करिये, बल्कि अपने पूरे आत्म-बल, साहस और शूरता से उनका सामना कीजिये, उन पर विजय प्राप्त करके ही जीवन से बड़े-से-बड़ा लाभ उठाया जा सकता है।

साहस का देवता और उसकी उपासना

भगवान ने मनुष्य को अगणित शक्तियों का भाण्डागार बनाकर इस धरती पर इसलिये भेजा है कि वह उन क्षमताओं का उपयोग करके अपने लिए सुख-शान्ति, समृद्धि और प्रगति के साधन उपलब्ध करें और दूसरों के लिए मार्गदर्शन एवं सहयोग के सरंजाम जुटाये। मानव जीवन की सफलता इन शक्तियों को पहचानने, उन्हें विकसित एवं उपयुक्त दिशा में प्रयोग कर सकने पर निर्भर है।

जो अपनी इन शक्तियों को जानते नहीं और अभिवर्द्धन एवं प्रयोग की व्यवस्था नहीं बनाते वे इस संसार में दीन-दुःखी, दरिद्र, असहाय और उपेक्षित बने हुए अभाव एवं तिरस्कार का दण्ड पाते रहते हैं। इस आत्म-विस्मृति की दुःखदायी प्रतिक्रिया का नाम नरक है। अपने आपे को भूलकर अपनी क्षमताओं की उपेक्षा कर, अपने साहस को त्यागकर हम स्वयं अपने लिए नरक का सृजन करते हैं। मनुष्य अभाव-ग्रस्त और दीन-दुःखी जीवनयापन करने के लिए पैदा नहीं किया गया। अभाव और क्लेश अपने आपे को ठीक तरह न समझने और उसका समुचित प्रयोग न कर सकने का परिणाम मात्र हैं। अपनी उपेक्षा करना एक बहुत भारी अपराध है। नियति इसे सहन नहीं करती, इस प्रकार के अपराधी दुर्भाग्य के कुचक्र में पिसते हुए निरन्तर काँपते देखे जा सकते हैं।

अध्यात्म की प्रथम शिक्षा अपनी महत्ता को समझना, अपनी शक्तियों को ढूँढ़ निकालना और उनके सदुपयोग में जुट जाना है। इस साधना में प्रवृत्त व्यक्तियों के ऊपर ऋद्धि-सिद्धि छाया किये खड़ी रहती हैं और उस पर चँवर ढुलाती देखी गई है।

उच्च स्तर के लोग अपनी क्षमताओं को समझते और विकसित तो करते ही हैं साथ ही इतना साहस और करते हैं कि अपनी विभूतियों के उपयोग का क्षेत्र लोभ-मोह एवं वासना-तृष्णा तक सीमित न रखकर, उनका प्रयोग क्षेत्र उत्कृष्टता एवं आदर्शवादिता के लिए व्यापक बना देते हैं। ऐसे ही व्यक्ति आत्म-कल्याण का, शाश्वत शान्ति का और जीवन-लक्ष्य की पूर्ति का प्रयोजन पूरा करते हैं। इन्हें इतिहास महामानव के रूप में स्मरण रखता है।

सामान्य सफलता से भी यह मूल्य कीमती है कि उनके लिए प्रबल पुरुषार्थ किया जाए। कृषि, व्यवसाय, शिल्प, अध्ययन, नौकरी, कला, कौशल कोई भी दिशा क्यों न हो प्रगति के लिए कठोर श्रम एवं तन्मयतापूर्ण अध्यवसाय हर हालत में चाहिए। कोई विद्वान, कलाकार, धनी, नेता एवं शीर्षस्थ व्यक्ति ऐसा न मिलेगा जिसे पुरुषार्थ की कसौटी पर कसकर खरा सिद्ध न होना पड़ा हो।

साहस के देवता की प्रथम साधना शारीरिक श्रम से प्रसन्नता अनुभव करने के साथ आरम्भ करनी होती है। आलस्य हमारा सबसे बड़ा शत्रु है। दरिद्रता और अस्वस्थता उसी के अभिशाप हैं। शरीर को आरामतलब बना लेना, बैठे-ठाले रहने में सन्तोष करना, मेहनत से जी चुराना, समय काटने के लिए मटरगश्ती करना, तथाकथित यार-दोस्तों में गप-शप लड़ाते रहना, ऐसे दुर्गुण हैं जो जहाँ भी रहेंगे वहाँ दरिद्रता आकर रहेगी। पूर्व उपार्जित पूँजी धीरे-धीरे समाप्त हो जायेगी। मौका पाकर साथी और कर्मचारी अनुचित लाभ उठाने को उत्सुक होंगे और जो मुट्ठी में है, उसको सुरक्षित रख सकना भी सम्भव न रहेगा। यह विचार सही नहीं है कि जो अमीर होते हैं, वे मौज करते हैं, जो गरीब हैं, उन्हीं को श्रम करना पड़ता है।' सचाई यह है कि जो श्रमशील हैं, वे ही अमीर बनते हैं और जो आरामतलबी के शिकार हैं वे क्रमशः गरीबी के गर्त में चले जाते हैं।

प्रगति किसी भी दिशा में करनी हो, सफलता किसी भी क्षेत्र में पानी हो, उसके लिये कठोर श्रम से ही काम चलेगा। चालाकी और बेईमानी के सहारे कई व्यक्ति बिना श्रम के भी सफलताएँ पाते देखे जाते हैं, पर यह पूरी तरह ध्यान रखना चाहिए कि उन उपलब्धियों की जड़ें खोखली होती हैं। उनके विदा होते इतने भी देर नहीं लगती जितनी बादल की छाँह को। टिकाऊपन केवल परिश्रम के उपार्जन में है। धन ही नहीं स्वास्थ्य भी श्रम पर ही टिका हुआ है। यह गाँठ बाँध रखनी चाहिए कि नीरोग एवं परिपुष्ट वे रहेंगे जिनका शरीर कठोर श्रम में निरत रहेगा, जिन्होंने हाथ-पैर चलाने में आना-कानी की, उन्हें अस्वस्थता की विविध-विधि पीड़ाएँ सहने के लिए विवश होना पड़ेगा। शरीर और धन उनका पुष्ट रहेगा, जो समय को श्रमशीलता के साथ जोड़े रहेंगे। गहरी नींद और कड़ी भूख का आनन्द उन्हें मिलेगा। जो मेहनत-मशक्कत से अपने आपको थकाकर चूर करने में उत्साह एवं आनन्द अनुभव करते होंगे। हमारा साहसिक प्रथम चरण यही हो सकता है कि आलस्य को मार भगावें। एक क्षण भी बेकार बरबाद न करें और निरन्तर क्रमबद्ध कार्य में व्यस्त रहने की आदत डालें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साहस के देवता की साधना का दूसरा चरण है, मन की अस्त-व्यस्तता दूर करना। देखा गया है कि कितने लोगों का मन बड़ा चंचल रहता है। अनर्गल और अनावश्यक विचार मस्तिष्क में घुमड़ते रहते हैं। जिन बातों का अपने से सीधा सम्बन्ध नहीं, उन निरर्थक और अनर्गल बातों को सोचते रहते हैं और चिन्तन की एक बहुत बड़ी शक्ति का महत्त्वपूर्ण अंश यों ही निरर्थक खर्च हो जाता है। अपने स्वभाव में जिन अनावश्यक आदतों की घुसपैठ है, उन्हें हटाने के लिए क्या-क्या किया जाय ? जो सद्गुण एवं सत्प्रवृत्तियाँ अपने में नहीं हैं, उनका अभ्यास अभिवर्धन कैसे किया जाय ? इन प्रश्नों पर कभी सोचने का प्रयत्न नहीं किया जाता। अपना व्यक्तिगत जीवनक्रम कितना अस्त-व्यस्त है और पारिवारिक ढाँचे को सुधारने, बदलने के लिए क्या-क्या किया जाना चाहिए ? जिन कारणों ने अपने प्रगति पथ को अवरुद्ध कर रखा है, उन्हें कैसे व्यवस्थित किया जाय ? यदि इन प्रश्नों पर हम अपनी शक्ति को लगायें, जीवन जीने की कला, समस्याओं के समाधान तथा उत्कर्ष की दिशा में होने वाले प्रयोगों एवं अनुभवों को पढ़ें, सुनें, समझें उन पर चिन्तन करें तो हमारा मस्तिष्क हमारे लिए कल्पवृक्ष का काम कर सकता है। पर उसका अधिकांश भाग तो अनर्गल चिन्तन में ही नष्ट हो जाता है। तृष्णा, वासना, लोभ-मोह, शौक-मौज, द्वेष, दुर्गुणों के द्वारा उत्पन्न की हुई इतनी ज्यादा गुत्थियाँ सामने होती हैं कि उनका हल ढूँढ़ना ही मस्तिष्कीय विचारणा के लिए कठिन पड़ता है। ऐसी दशा में बौद्धिक चेतना की ज्ञानवृद्धि एवं सत्प्रवृत्तियों के अभिवर्द्धन में कैसे लगा जाय ? इसी कुचक्र में पड़े हुए हम अपनी मानसिक क्षमताओं को नष्ट-भ्रष्ट करते रहते हैं और खाली हाथ इस संसार से उठ जाते हैं। यदि इस कुचक्र को तोड़ने की मनस्विता का परिचय दिया जा सके तो समझना चाहिए कि हमने साहस के देवता की पूजा का दूसरा चरण पूरा कर लिया। शरीर और मन को व्यवस्थित और सत्प्रवृत्तियों का अनुगामी बनाने के लिये जो अपने आप से संघर्ष करना पड़ता है, वही गीता में वर्णित महाभारत है। इसमें विजय प्राप्त कर लेना एक ऐसा पुरुषार्थ है, जिसके फलस्वरूप व्यक्ति की महत्ता और उपयोगिता में आशाजनक अभिवृद्धि होती है और वह साधारण परिस्थितियों में रहते हुए भी अपने आप को बहुत समुन्नत एवं सन्तुष्ट अनुभव करने लगता है।

साहस के देवता की पूजा का अन्तिम एवं उत्कृष्ट चरण है, अपने संकीर्ण स्वार्थों की परिधि से बाहर निकलकर परमार्थ के पुण्य-प्रयोजनों में अपनी विचारणा एवं उपलब्धियों को नियोजित कर सकना। अपनी तुच्छता एवं संकीर्णता को रौंदता हुआ विश्व मानव की सेवा साधना की ओर जो जितने कदम बढ़ा सका, समझना चाहिए कि उसने उतने ही बड़े शौर्य का परिचय दे दिया है। शारीरिक और मानसिक वीरतायें कई लोग बड़ी आसानी से दिखा सकते हैं, पर आध्यात्मिक वीरता जिसका अर्थ है—स्वार्थपरता की संकीर्ण परिधि से बाहर निकलकर परमार्थ के लिए, लोकमंगल के लिए , आवश्यक त्याग, बलिदान का परिचय देना, निःसन्देह बहुत ही कठिन है। उसे केवल उदात्त, उदार, वसुधैव कुटुम्बकम् की प्रवृत्ति वाले लोग ही कार्यान्वित कर सकते हैं। आदर्शवाद की लम्बी-चौड़ी बातें बखानना किसी के लिए भी सरल है, पर जो उसे अपने जीवनक्रम में उतार सके, सचाई और हिम्मत का धनी उसी को कहा जायेगा। ऐसे व्यक्ति कम ही होते हैं पर जो होते हैं वे अपने समय की प्रकाशवान विभूति माने जाते हैं।

व्यक्ति वस्तुतः तुच्छ एवं महान् हैं उसकी परीक्षा एक ही कसौटी पर होती है कि उसने अपनी प्रतिभा का लाभ अपने या अपने स्त्री-बच्चों के लिए सुरक्षित रखा अथवा ईश्वर प्रदत्त इन विभूतियों को ईश्वरीय प्रयोजन के लिए, लोकमंगल के लिए लगाने का दुस्साहस कर डाला। दुस्साहस शब्द का प्रयोग इसलिए किया जा रहा है कि इन दिनों लोगों की मनोदृष्टि बेतरह स्वार्थपरता में जकड़ी हुई है। हर कोई केवल अपनी संकीर्ण स्वार्थपरता की पूर्ति में ही संलग्न है। धन, रूप, यश, भोग और पद से अधिक और किसी को कुछ नहीं चाहिए। पूजा-पाठ की आड़ में भी इन भौतिक प्रयोजन की पूर्ति ही छिपी रहती है। राम, रहीम का पल्ला भी इसीलिये पकड़ा जाता है कि सांसारिक सुख-साधनों का वह लाभ मिल जाय जो अपने पुरुषार्थ से प्राप्त नहीं किया जा सका। ऐसे जमाने में जिसमें तृष्णा और वासना की पूर्ति से आगे की बात किसी को सुहाती ही नहीं—इस प्रकार का साहस दिखा सकना जिसमें अपने लिए असुविधा और दूसरों के लिए सुविधा उत्पन्न होती हो, निस्सन्देह बहुत बड़ी हिम्मत का काम है। ऐसे साहस का उच्चारण ही नहीं प्रयोग जो कर सके उन्हें धारा का प्रवाह चीरते हुए उल्टी दिशा में चल सकने वाले राजा की तरह ही प्रबल पुरुषार्थी माना जायेगा। प्राचीनकाल में ऐसे नर-रत्न घर-घर में पाये जाते थे, जो तुच्छ स्वार्थों को कुचलकर आदर्शवादिता के लिए अपना जीवनक्रम सँजाये। पर आज तो वह इतिहास पुराणों की चर्चा रह गई है। एक-दूसरे को बहकाने के लिए इस तरह की लम्बी-चौड़ी कथा, चर्चा परस्पर करते तो देखे, सुने जाते हैं, पर जो व्यवहार में भी उन सिद्धान्तों को ला सकें, दीख नहीं पड़ते। स्वार्थपरता और संकीर्णता की कीचड़ में जहाँ कीड़े कुलबुला रहे हैं, वहाँ कमल पुष्पों का खिलना एक अचरज ही कहा जायेगा। ऐसा अचरज केवल साहसी और दुस्साहसी कर सकते हैं।

विपत्तियों को कैसे जीता जाय ?

उन्नति और विकास का मार्ग कठिनाइयों के कंकरीले पथ से ही जाता है। जो व्यक्ति जीवन में कठिनाइयों से घबराता है, उसे उन्नति की आकांक्षा नहीं करनी चाहिए। उन्नति का अर्थ ही ऊँचाई है, जिस पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चढ़ने के लिए अधिक परिश्रम करना पड़ता है। समतल पर चलने की अपेक्षा कहीं अधिक पसीना बहाना पड़ता है। पतन की ओर चलने में मनुष्य को न तो कोई विशेष श्रम करना पड़ता है और न उसे अधिक विलम्ब लगता है। यदि दो आदमियों में से एक को निम्नगामी और दूसरे को ऊर्ध्वगामी मार्ग पर चलाया जाये तो जहाँ एक निश्चित दूरी पर पहुँचने के लिए निम्नगामी को एक दिन लगेगा वहाँ ऊर्ध्वगामी को चार दिन लग जायेंगे। जहाँ निम्नगामी को कोई परिश्रम न करना होगा, वहाँ ऊर्ध्वगामी पसीना-पसीना हो जायेगा।

उन्नत मार्ग में कठिनाइयाँ स्वाभाविक हैं। यदि ऐसा न होता तो संसार में सभी महान् बन सकते, कोई साधारण, सामान्य अथवा पतित होता ही नहीं, कठिनाइयों पर विजय पाना ही उन्नतिशीलता है।

मनुष्य एक देव है और पशु भी किन्तु इन दोनों में जो अन्तर है, वह यह कि मनुष्य एक प्रगतिशील तथा उन्नतिप्रिय प्राणी है, जबकि पशु आदि से अन्त तक प्राकृत अवस्था में रहता है। प्रगति क्या है ? उन्नति किसे कहते हैं ? इस विषय में वह कुछ भी नहीं जानता। वह जिस अवस्था में उत्पन्न होता है, अन्तिम दिन तक उसी अवस्था में रहता है। कठिनाइयों को समझने, उनसे लड़ने और बचने के विषय में विचार करने की बुद्धि उसमें नहीं होती। अपनी भयवृत्ति की प्रेरणा से ही वह किसी संकट का अनुमान कर पाता है और उसी की प्रेरणा से बचाव के लिये भागता, छिपता या लड़ता-मरता है। जिस समय उसकी यह भयवृत्ति उसको भागने की प्रेरणा देती है, वह भाग खड़ा होता है और जिस समय लड़ने-मरने की प्रेरणा देती है, लड़ने-मरने लगता है। उसका यह काम बुद्धिसंगत नहीं होता। वह धैर्यपूर्वक विचार करके अपना कर्त्तव्य नहीं कर पाता। संकट से भागने अथवा लड़ने में उसकी कायरता अथवा वीरता का समावेश नहीं होता। वह भागता है तो भय की प्रेरणा से और लड़ता है, तो भी उसी की प्रेरणा से।

मनुष्य की विशेषता है, बुद्धिपूर्वक निश्चय करके कोई कर्त्तव्य करना। जो आवेगों, आवेशों और प्रकृत प्रवृत्तियों से प्रेरित होकर कोई काम करता है, उसे मनुष्य के रूप में होने पर भी पशुओं की कोटि में ही मानना चाहिए। बाहर से मनुष्य दीखने पर भी अन्दर से वह पशु ही है।

उन्नति की कामना मनुष्य की दिव्य विशेषता है। अपने को मनुष्य मानने वाले प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि वह जीवन में अधिक उन्नति करने का प्रयत्न करें।

जैसा कि निश्चित है, उन्नति का मार्ग कठिनाइयों के बीच से जाता है। अतएव प्रत्येक उन्नतिकांक्षी व्यक्ति को कठिनाइयों को समझने और उनसे लड़ने की क्षमता प्राप्त कर लेनी चाहिए।

कठिनाइयाँ क्या हैं ? कठिनाइयाँ जीवन की प्रतिकूल परिस्थितियाँ हैं, जो ध्येय-पथ पर चलते हुए व्यक्ति के लिए गतिरोध उत्पन्न करती हैं। यहाँ परिस्थितियाँ मनुष्यजन्य तथा निसर्गजन्य दोनों प्रकार की हो सकती हैं। मनुष्यजन्य परिस्थितियाँ उन अवरोधों को कह सकते हैं, जो एक मनुष्य दूसरे के मार्ग में स्पर्धा, ईर्ष्या, द्वेष अथवा अहंकार से प्रेरित होकर छल-कपट, वंचना, प्रतारणा आदि विश्वासघात, अपवाद, निरोध अथवा विवाद आदि के रूप में उपस्थित करता है। निसर्गजन्य अवरोध आकस्मिक आधि-व्याधि अथवा दुर्घटनाओं को कह सकते हैं। इस प्रकार के गतिरोध किसी भी मनुष्य के जीवन में किसी भी समय सम्भाव्य हैं। अतएव इनका सामना करने के लिये मनुष्य को प्रत्येक क्षण प्रस्तुत रहना चाहिए।

संकट हजार प्रकार के हो सकते हैं। कौन-सा संकट किस समय उपस्थित हो सकता है, इसका पूर्वाभास सदैव सम्भव नहीं और न यही सम्भव है कि हर संकट का सामना करने के लिए कोई उनके अनुरूप हर प्रकार का प्रबन्ध पहले से करके रख ले। अस्तु कोई न कोई एक ऐसा उपाय निकालना ही बुद्धिमानी होगी, जो किसी भी प्रकार के संकट का सफल और सदा सहायक उपचार हो और यह एकमात्र सर्वतोमुखी उपचार मनुष्य का अपना दृष्टिकोण ही है।

मनुष्य के दृष्टिकोण से ही मित्र-शत्रु और शत्रु-मित्र दीखने लगता है। यह मनुष्य के दृष्टिकोण का ही फल है कि कभी अच्छी बात बुरी और बुरी बात अच्छी लगने लगती है। यह मनुष्य का दृष्टिकोण ही मानना चाहिए कि कभी वह साधारण घटना में ही घबरा उठता है और कभी बड़े-बड़े संकटों में हँसता रहता है। अच्छाई, बुराई, शत्रुता-मित्रता, सम्पत्ति-विपत्ति, कठिनता-सरलता, प्रतिकूलता-अनुकूलता आदि सारे द्वन्द्व मनुष्य के अपने दृष्टिकोण के ही प्रतिबिम्ब हैं। वैसे इनका कोई अपना स्वरूप नहीं होता। यदि मनुष्य अपने में समता का दृष्टिकोण विकसित करले तो सारी विषमताएँ आप से आप ही नष्ट हो जायें।

जीवन में अनेक ऐसे अवसर आते रहते हैं, जब मनुष्य का चित्त बहुत खिन्न हो जाता है। कार्यों में निरुत्साह और हृदय में विषाद छा जाता है। चारों ओर निराशा और प्रतिकूलता ही दृष्टिगोचर होने लगती है। इस प्रकार की स्थिति किसी भी उन्नतिकांक्षी व्यक्ति के लिये हानिकारक है। इस प्रकार के प्रतिगामी वातावरण में समय और सामर्थ्य दोनों की क्षति होती है। हर कदम पर आगे बढ़ने वाले को प्रत्येक क्षण प्रफुल्ल, प्रसन्न और उत्साहित रहना बहुत आवश्यक है।

संसार में जो भी विषमताएँ दिखाई देती हैं, वह सब हमारे दृष्टिकोण का ही प्रतिफल है। अँधेरे में बैठकर सारी दुनिया अँधेरी और उजेले में रहकर देखने से उजेली मालूम होती है। यदि शत्रु के प्रति हमारा दृष्टिकोण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बदलकर मित्रतापूर्ण हो जाये तो शत्रु को देखकर हमें जो ईर्ष्या, द्वेष अथवा घृणा होती है वह बदल जाय, जिसके फलस्वरूप हमारे हृदय की प्रसन्नता अक्षुण्ण बनी रहे और उसके अभाव में होने वाली हानि से हम बच जायें।

यही बात परिस्थितियों और कठिनाइयों के विषय में भी लागू होती है। कठिनाइयों को जब हम अपना विरोधी मानकर उनके प्रति अपना दृष्टिकोण भिन्नतापूर्ण बना लेते हैं, तो उनके उपस्थित होते ही हम क्षुब्ध और अधीर हो उठते हैं, जिससे हमारा मानसिक संतुलन बिगड़ जाता है और हम उनका हल निकाल सकने में असमर्थ हो जाते हैं। हल के अभाव में ही कठिनाइयाँ गतिरोध बनकर हमारा पथ अवरुद्ध कर लेती हैं।

यदि कठिनाइयों के प्रति हम अपना दृष्टिकोण सौम्य रखें; उन्हें सावधान, सचेत और अधिक गतिशील बनाने वाला देवदूत समझें तो उनके आने पर हम लाभ ही उठा सकते है।

समतापूर्ण दृष्टि मनुष्य का सबसे बड़ा हित साधक है। इसकी उपलब्धि मनुष्य को तब ही होती है, जब वह संसार की प्रत्येक कार्य विधि को ईश्वर की इच्छा मानता है। अनुकूलताओं से घृणा करने वाला मनुष्य जीवन में कभी उन्नति नहीं कर सकता। संसार में एकमात्र अनुकूलताओं की आशा लेकर चलने वाले मनुष्य को विफलताओं की मरुभूमि में भटकना ही पड़ेगा। अपने सम्पूर्ण मन-मस्तिष्क से जो अनुकूलताओं का ही उपासक बना रहता है और प्रतिकूलताओं के लिए जरा भी स्थान नहीं रखता, उसे यदा सम्भाव्य प्रतिकूलताओं के अवसर पर विचलित, अस्त-व्यस्त हो जाने के लिए सदैव प्रस्तुत रहना चाहिए। अनुकूलता में प्रसन्न और प्रतिकूलता में रोने वाले व्यक्ति भूले की तरह आगे-पीछे जाते हुए एक ही स्थान पर रहते हैं न वे आगे बढ़ पाते है और न उन्नति कर पाते हैं।

संसार के प्रत्येक घटनाक्रम में ईश्वरीय आदेश का दृष्टिकोण रखकर ही अपना कर्त्तव्य करते रहना चाहिये।

ऐसी दशा में उसे खिन्न और हतोत्साह होने का कोई अवसर न होगा। खिन्नताओं, व्यग्रताओं, भयों और विषादों से मुक्त रहकर, जो प्रत्येक परिस्थिति मे परिपूर्ण रहकर कार्य करता है वह अवश्य उन्नति के शिखर पर पहुँचता और यह अहैतुक प्रसन्नता का दृष्टिकोण, ईश्वर में अडिग विश्वास और संसार के प्रत्येक क्रिया-कलाप को उसकी ही इच्छा समझने से उपलब्ध हो सकता है।

कठिनाइयाँ क्या हैं ?

सृष्टि संचालन के सार्वभौम नियमों के अनुसार जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में परिवर्तन होते रहना एक स्वाभाविक बात है। दिन के बाद रात और रात के बाद दिन होता है। वर्षा के बाद शरद और इसके पश्चात् ग्रीष्म ऋतु का आना भी निश्चय प्रायः ही होता है। सूर्य, चन्द्र एवं अन्य ग्रह भी एक नियमबद्ध गति में चलते हैं। इसी तरह मानव जीवन भी इन सार्वभौम नियमों के अन्तर्गत सदैव एक-सा नहीं रहता। मनुष्य की इच्छा हो या न हो, जीवन में भी परिवर्तनशील परिस्थितियाँ आती ही रहती हैं। आज उतार है तो कल चढ़ाव। चढ़े हुए गिरते हैं और गिरे हुए उठते हैं। आज अँगुली के इशारे पर चलने वाले अनेकों अनुयायी हैं तो कल सुख-दुःख की पूछने वाला एक भी नहीं रहता। रंक कहाने वाला एक दिन धनपति बन जाता है, तो धनवान निर्धन बन जाता है। जीवन में इस तरह की परिवर्तनशील परिस्थितियाँ आते-जाते रहना नियतिचक्र का स्वाभाविक नियम है। इनसे बचा नहीं जा सकता, इन्हें टाला नहीं जा सकता।

एकांगी विचार प्रेरित मनुष्य इस नियति के विधान को नहीं समझ पाता। वह अपनी इच्छा, कामना के अनुकूल परिस्थितियों में ही सुख अनुभव करता है तो विपरीत परिस्थितियों में दुःखी हो जाता है। अधिकांश व्यक्ति सुख, सुविधा, सम्पन्नता, लाभ, उन्नति आदि में प्रसन्न और सुखी रहते हैं, दुःख, कठिनाई, हानि आदि में दुःखी और उद्विग्न हो जाते हैं। किन्तु यह मनुष्य के एकांगी दृष्टिकोण का परिणाम है और इसी के कारण कठिनाई, मुसीबत, कष्ट आदि शब्दों की रचना हुई। वस्तुतः परिवर्तन मानव जीवन में उतना ही महत्त्वपूर्ण, सहज और स्वाभाविक है, जितना रात और दिन का होना, ऋतुओं का बदलना, आकाश में ग्रह-नक्षत्रों का विभिन्न स्थितियों में गतिशील रहना। किन्तु केवल सुख, लाभ, अनुकूल परिस्थितियों की ही चाह के एकांगी दृष्टिकोण के फलस्वरूप मनुष्य दुःख, कठिनाई और विपरीतताओं में रोता है। दूसरों को अथवा ईश्वर को अपनी विपरीतताओं के लिए कोसता है। शिकायत करता है इनसे बचने के लिए असफल प्रयत्न करता है। किन्तु इससे तो उसकी समस्याएँ बढ़ती ही जाती हैं, घटती नहीं। वस्तुतः कठिनाइयाँ जीवन का एक आवश्यक नियम है, जिसे स्वीकार करने में ही लाभ है।

कठिनाइयाँ जीवन की एक सहज स्वाभाविक स्थिति हैं, जिन्हें स्वीकार करके मनुष्य अपने लिए उपयोगी बना सकता है और कठिनाइयों को जीवन का विरोधी भाव, मानकर उनमें दुःखी और परेशान होकर मनुष्य अपनी ही हानि भी कर लेता है। कठिनाइयों में रोना, हार मान लेना, निराश और अवसाद से ग्रस्त होना अपने विश्वास के मार्ग को छोड़ बैठना ही है। वस्तुतः कठिनाइयाँ इतनी भयंकर और कष्टदायक नहीं हैं जितना बहुत-से लोग समझते हैं। जिन कठिनाइयों में कई व्यक्ति रोते हैं, हार बैठते हैं, मानसिक क्लेश अनुभव करते हैं, उन्हीं कठिनाइयों में दूसरे व्यक्ति नवीन प्रेरणा, नव उत्साह पाकर सफलता का वरण करते हैं। इस तरह कठिनाइयाँ अपने आप में कुछ नहीं हैं वरन् मन की स्थिति से ही उनका स्वरूप बनता है। सब ओर कठिनाइयाँ सापेक्ष हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सबल मन वाला व्यक्ति बड़ी से बड़ी कठिनाई को भी स्वीकार करके आगे बढ़ता है, तो निर्बल मन वाला सामान्य-सी कठिनाई में भी निश्चेष्ट हो जाता है। निर्बल मन तो अपनी कल्पनाजन्य कठिनाइयों में ही अशान्त हो जाता है।

नियति के नियम अजेय एवं अपरिवर्तनीय हैं। मानव-जीवन में होने वाले परिवर्तन भी इसी के अन्तर्गत होने से ध्रुव सत्य हैं। जीवन में आने वाली कठिनाइयों की जड़ में भी यही है। इस तथ्य को हृदयंगम कर कठिनाइयों में भी सन्तुष्ट, सन्तुलित रहने वालों की जीवन-यात्रा सहज-गति में चलती रहती है। अनेकों विपरीतताएँ भी उनका मार्ग नहीं रोक पातीं। छोड़ी-बड़ी कठिनाइयाँ उनके लिए इसी तरह महत्त्व रखती हैं, जैसे रात और दिन, सर्दी और गर्मी।

परीक्षा की कसौटी पर प्रतिष्ठित हुए बिना कोई भी वस्तु उत्कृष्टता प्राप्त नहीं कर सकती, न उसका कोई मूल्य ही होता है। सोना भीषण अग्नि में तपकर ही शुद्ध और उपयोगी होता है। कड़ी धूप में तपने पर ही खेतों में खड़ी फसल पकती है। आग की भयानक गोद में पिघलकर ही लोहा साँचे में ढलने के उपयुक्त बनता है। जन-जन द्वारा पूजी जाने वाली मूर्ति पर पैनी छैनी की असंख्यों चोटें पड़ती हैं। परीक्षा की अग्नि में तपकर ही वस्तु शक्तिशाली, सौन्दर्ययुक्त और उपयोगी बनती है। मनुष्य भी कठिनाइयों में तपकर उत्कृष्ट, सौन्दर्ययुक्त, प्रभावशाली और महत्त्वपूर्ण बनता है। जीवन को अधिक उत्कृष्ट और महत्त्वपूर्ण बनाने के लिए मनुष्य को उतनी ही अधिक कठिनाइयों और परेशानियों में से गुजरना पड़ेगा। वस्तुतः कठिनाइयाँ, दुःख, परेशानियाँ जीवन की कसौटी हैं, जिनमें मनुष्य के व्यक्तित्व का रूप निखरता है।

कठिनाइयाँ मनुष्य के विकास में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। इन्हें खुले हृदय से स्वीकार करके मानसिक विकास प्राप्त किया जा सकता है। कठिनाइयों में खुलकर खेलने से इच्छाशक्ति प्रबल होती है और बड़े-बड़े काम करने की क्षमता प्राप्त होती है। कठिनाइयों में मनुष्य की आन्तरिक शक्तियाँ एकत्रित और संगठित होकर काम करती हैं। जीवन की कोई भी साधना कठिनाइयों में होकर निकलने पर ही पूर्ण होती है। कठिनाइयों में ही जीवन दर्शन की परीक्षा होती है।

कठिनाइयाँ दुधारी तलवार हैं, जो व्यक्ति इन से घबराकर गिर पड़ा वह हार बैठा। वह अपने जीवन की सम्भावनाओं को नष्ट कर देता है। इसके विपरीत जिसने कठिनाइयों को साधकर उनसे समझौता, समन्वय कर लिया वह व्यक्ति कठिनाइयों को ही अपनी सफलता, उत्कृष्टता का साधन बना लेता है। कठिनाइयाँ एक ओर जीवन में कसौटी बनकर सुधार, नव-निर्माण, उत्थान की प्रेरणा देने में, उत्साह और मनोबल को ऊँचा उठाने में सहायक होती हैं, तो दूसरी ओर मनुष्य को अकर्मण्य, निरुत्साह बना देती हैं। जीवन की आशा-उमंगों को धराशायी कर देती हैं। दोनों ही स्थितियों का उत्तरदायी मनुष्य स्वयं ही होता है। इसमें कठिनाइयों का कोई दोष या गुण नहीं है। जब मनुष्य कठिनाइयों की यथार्थता को नहीं समझता, उन्हें जीवन का स्वाभाविक अंग मानकर सहर्ष स्वीकार नहीं करता तो ये ही कठिनाइयाँ अपार दुःख, अशान्ति, क्लेश का कारण बन जाती हैं भय और घबराहट पैदा हो जाते हैं। इससे मनुष्य का मानसिक सन्तुलन संगठन बिखर जाता है और अन्तर्द्वन्द्व पैदा हो जाते हैं। जब किसी राष्ट्र की आन्तरिक शक्तियाँ विघटित होकर उनमें अन्तर्द्वन्द्व-गृहयुद्ध पैदा हो तो उसका पतन होना स्वाभाविक ही है। उस पर बाह्य आक्रमण भी होने लगते हैं। इसी तरह अन्तर्द्वन्द्व से मानसिक शक्तियाँ नष्ट होने लगती हैं। फिर सामान्य-सी कठिनाइयाँ भी मनुष्य की आशा, उमंग धैर्य को घायल कर उसे निराशा, हीनता, अवसाद की ओर ढकेलती हैं। मनुष्य की बड़ी-बड़ी आशायें, उमंगें, अभिलाषायें इस स्थिति में कठिनाइयों की चट्टान से टकराकर टूट-फूट जाती हैं, छिन्न-भिन्न हो जाती हैं।

इस तरह मनुष्य चाहे तो कठिनाइयों को वरदान बना सकता है और अभिशाप भी। आवश्यकता इस बात की है कि वह बार-बार प्रयत्न करके कठिनाइयों की कसौटी में सफल होने के प्रयास न छोड़ें, अपनी साधना जारी रखें।

जीवन में आने वाली कठिनाइयों का समाधान मनुष्य कैसे करता है ? इसका प्रभाव उसके साथ-साथ समाज और वातावरण पर काफी पड़ता है। जो मनुष्य कठिनाइयों का खुले दिल से स्वागत करता है, उनके साथ खेलता है वह स्वयं तो उनसे मिलने वाले लाभ प्राप्त करता ही है किन्तु दूसरों के लिये भी प्रेरणा और आदर्श बन जाता है। एक कायर सैनिक को रण से भागता देखकर कई सैनिक भाग निकलते हैं। इसके विपरीत एक योद्धा जो अपने कर्त्तव्य को सामने रखकर कठिनाइयों में भी लड़ता है, उसे देखकर अन्य सैनिक भी प्रेरणा और उत्साह प्राप्त कर लड़ते रहते हैं। उनमें वीरता के भाव जाग्रत होते हैं।

कठिनाइयों में निर्द्वन्द्व होकर आगे बढ़ने वालों की समाज के लिए बहुत बड़ी देन होती है। वे समाज के प्रेरणा-केन्द्र बन जाते हैं। उनके पद्-चिन्हों पर दूसरे भी चलते हैं। मेजिनी ने जब इटली का स्वतन्त्रता आन्दोलन चलाया तो उसके केवल पाँच ही साथी थे। पाँच से बढ़कर दस और दस से बीस; इस तरह उनकी संख्या बढ़ती ही गई। इसी तरह लोकमान्य तिलक ने भारत को स्वतन्त्रता के मंत्र की दीक्षा दी, गाँधीजी ने स्वाधीनता आन्दोलन चलाया तो असंख्यों भारतीयों ने अपने आपको सहर्ष कठिनाइयों की आग में डाल दिया।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यदि सबसे बड़ी कोई सहायता है तो वह है, कठिनाई के वक्त किसी की मदद करना और उसका एकमात्र सच्चा उपाय है, उससे भी अधिक कठिनाइयों में पड़कर उसके समक्ष सन्तोष, सन्तुलन, धैर्य, शान्ति का आचरण करना। अन्य सभी भौतिक, बाह्य, धन आदि की सहायताएँ सामयिक होती हैं और उनसे गलत लाभ उठाकर मनुष्य पतित भी हो सकता है। किन्तु कठिनाइयों में अपने आपको डालकर दूसरों को बल देना सच्ची सहायता है। श्रीकृष्ण ने दुर्योधन को उसकी इच्छानुसार अपनी सेनाएँ, भौतिक सहायता प्रचुर मात्रा में दीं किन्तु अर्जुन के लिये निःशस्त्र होकर केवल सारथी का काम करना स्वीकार किया। अपने जीवन की परवाह किए बिना अपने आपको निम्न परिस्थितियों, कठिनाइयों में डालकर श्रीकृष्ण ने अर्जुन को एक आध्यात्मिक बल और मानसिक शक्ति प्रदान की। यदि किसी सहायता से कोई व्यक्ति परालम्बन सीखता है, तो वह अच्छी सहायता नहीं, इससे उसका पतन होना सम्भव है। सच्ची सहायता वह है, जो मानसिक शक्ति की अभिवृद्धि करे।

विपत्ति से बढ़कर हितैषी नहीं

किन्हीं सफल व्यक्तियों और महापुरुषों के जीवन वृत्त पर दृष्टि दौड़ायें तो एक बात सामान्य रूप से दिखाई देगी और वह यह कि उनमें से प्रायः प्रत्येक का जीवन संघर्षों ने पाला, कठिनाइयों, आपदाओं और विपत्तियों ने सँवारा। मुसीबतों ने ही उनकी आत्म-शक्ति को जगाया, उद्वेलित किया और वह पथ-प्रशस्त किया जो साधारण व्यक्तियों के लिए अचरज प्रतीत होता है।

राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, कबीर, नानक, ईसा, सुकरात, टालस्टाय, गान्धी, शिवाजी, महाराणा प्रताप किसी व्यक्ति को उदाहरण बनाइये, एक भी महापुरुष ऐसा न मिलेगा जिसने वैभव, विलास के बीच महापौरुष सार्थक किया हो। राकफेलर, हेनरी फोर्ड, मार्सेल बोजाक आदि प्रसिद्ध उद्योगपतियों ने भी असाधारण सफलताएँ परिस्थितियों से लड़ते और टक्कर खाते हुए ही पाई हैं।

साधारण व्यक्ति कठिनाइयों और प्रतिकूल परिस्थितियों से बचना चाहते हैं, इसलिये घिसावट और टकराव से जो प्रेरणादायी शक्ति उत्पन्न होनी चाहिए थी, हिम्मत, साहस और पुरुषार्थ जाग्रत होना चाहिये, वह नहीं हो पाता। मनुष्य कठिनाइयों से बचता है वैसे ही बड़ी सफलताएँ उससे बचती हैं।

मुसीबतें दरअसल बोझ नहीं, संकेत हैं, जो आत्मविश्वास की दिशा निर्देश करती हैं। इन संकेतों को समझना और उनसे लाभ उठाना ही मनुष्य की बुद्धिमानी है। यदि इतनी कला मनुष्य को आ जाय तो कठिनाई से बड़ा देवता या हितैषी नही विपत्ति से बढ़कर हितैषी नहीं।

बीमारी और शरीर कष्ट को आप बुरा मानते हैं, पर आप कहीं यह जान लें कि प्रकृति आपको असंयम से सावधान कर रही है और आपके शरीर में घुस गये बुरे तत्त्वों को निकाल रही है तो आपकी आधी घबराहट तत्काल दूर हो जाये।

यही तो वह अवसर होता है, जब अपने आत्मीयजनों की पहचान होती है। जो अपना है। जिसके प्रति हमें अपने दायित्वों का परिपालन करना है, वे व्यक्ति ऐसे समय सिमटकर आपके समीप आ जाते हैं। आत्मीयता जाग उठती है और वर्षों का मनोमालिन्य दूर हो जाता है। दाम्पत्य जीवनों में अक्सर वैमनस्य और गुबार भर जाते हैं। अपने साथी की पीड़ा में, बीमारी में वह कैसे दूर हो जाते हैं ? यह हर गृहस्थ अनुभव करता है। आत्मीयता को सजग करने वाली, बिछुड़ों के हृदय जोड़ने वाली, शरीर का गर्द-गुबार निकाल फेंकने वाली और भविष्य के लिये ''स्वस्थ जीवन अपनाओ'' शिक्षा देने वाली बीमारी को फिर क्या आप बुरा कहेंगे ?

आप रह-रहकर बीमार होते हैं तो देखिये कहीं आपकी आदतें तो खराब नहीं हो रहीं। आपने आहार-विहार के असंयम को तो नहीं अपना रखा। तम्बाकू, सिगरेट, शराब आदि किसी दुर्व्यसन के आदी तो नहीं हो गये, किसी मादक द्रव्य ने तो कहीं यह विकृति नहीं ला दी। जरूर कोई इन्हीं में से कारण होगा। उसे मिटाने का संकेत ग्रहण कर सकें तो विश्वास कीजिए वह बीमारी आपके लिये वरदान ही होगी।

अपनी स्वास्थ्य संरक्षण की भावना जगाइये, संकल्प कीजिये आगे आप बलवान बनेंगे। स्वस्थ, सुडौल शरीर बनायेंगे। दीर्घजीवन प्राप्त करेंगे। बीमारी का इशारा इन्हीं की ओर था। यदि नहीं समझ पाये तो आपकी भूल थी। समझ गये तो अपनी जीवन दिशा बदलकर देखिये ! लाभ होता है या नहीं।

आप नहीं आपके घर का कोई सदस्य, आपकी धर्मपत्नी, बच्चा, भाई, पिता बीमार हैं तो क्या आपको निराश होना चाहिये ? नहीं, इससे अच्छा सेवा का, परिजनों का हृदय जीतने का और अच्छा अवसर न मिलेगा। आप उनकी एक बार हृदय से सेवा कर देखिये आपके जीवन में वही बीमारी वरदान लाती है या नहीं। दाम्पत्य जीवन में प्रगाढ़ मैत्री, बच्चों में आज्ञापालन की भावना, भाई का प्रेम, सहयोग और पिता का स्नेह दिलाती है या नहीं ?

चलिये आपकी आर्थिक कठिनाइयों पर भी सोचें। धन की तंगी से, कर्ज से, आजीविका की समस्या से आप घबराये बैठे हैं पर आपको पता नहीं वह विपत्ति आपका सौभाग्य द्वार खोलने आई है, केवल समझने की देर है।

आर्थिक तंगी के अवसर पर देखा गया है कि मानसिक क्रियाशीलता सजग हो उठती है। भले ही वह बेचैनी और घबराहट के रूप में व्यक्त होती हो पर इतना निश्चित है, आदमी के दिमाग में हलचल पैदा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होती है। चाहे तो इस सजगता को विधिवत् विचार का रूप देकर सोचें कि ऐसे गाढ़े समय आप कोई अन्य नौकरी या धन्धा कर सकते हैं क्या ? कहीं से पूँजी उपलब्ध कर कोई उद्योग चला सकते हैं क्या ? अपने घर में जेबर पड़ा है, जमीन है, पुराना मकान पड़ा है। इनमें से कोई ऐसी वस्तु है क्या जो आपको पूँजी देकर कर्ज से से बचा सकती हो ? केवल धन्धा अपने लिये निकाल सकें तो आप विश्वास कीजिये ऐसी परिस्थितिजन्य कठिनाइयों से ही बड़े-बड़े पूँजीपति पैदा हुये हैं।

ऋण का बोझ सवार है ? मनःस्थिति सचमुच बहुत दुःखद होती है। नौकरी में पैसा बचता नहीं, तो क्या यह सम्भव नहीं मोमबत्ती, रबड़ की मोहर, लिफाफा, सिलाई, साबुन, चर्खा आदि से आप कोई सहायक आजीविका की व्यवस्था कर लें और उस ऋण को धीरे-धीरे पटा डालें। अच्छा तो यह हो कि जेबर-जाकड़े का मोह त्यागकर आप उसे एकमुश्त चुका डालें। यह भी देखेंगे कि दुबारा कर्ज लेने से आप बचेंगे ही। फिजूल खर्ची से भी बचेंगे और बेकार के भोज, उत्सव, रंग-रेली मनाने की जो आदतें पड़ गई थीं उनसे भी बचेंगे। भविष्य में बजट बनाकर चलेंगे। सावधानी से खर्च करेंगे। इतनी सारी सूझ-समझ और योग्यता कब आई ? जब ऋण या आर्थिक घाटे की विपत्ति आई।

कई बार परिस्थितियाँ अपनी नहीं औरों की बनाई हुई भी होती हैं। संसार में फूहड़ और राह चलते रोड़ा अटकाने वाले भी कम नहीं। मान लीजिये कोई ऐसा व्यक्ति आपको परेशान कर रहा है, तो बड़ा अच्छा अवसर है अपना शौर्य, साहस जगाने का। शक्ति और संगठन बनाने का इससे सुन्दर अवसर कब आता ? धन्यवाद दीजिये इस विपत्ति को जिसने आप में यह वीरोचित गुण जगा दिये।

बच्चा कहना नहीं मानता, धर्मपत्नी सहयोग नहीं करती, भाई खिन्न रहते हैं, तो आप कुछ अपने आप भी विचार कर डालिये। आपको मालूम न होगा, महात्मा गाँधीजी की पूर्व में कस्तूरबा से नहीं पटती थी, पर आत्मचिन्तन के द्वारा बापू ने अपने आपको सुधारा तो कस्तूरबा स्वयमेव उनकी सच्ची सहचरी बन गई। दाम्पत्य जीवन में वह आनन्द आया कि मृत्युपर्यन्त कोई मनोमालिन्य न आया। सुकरात को दार्शनिक बना देने में उसकी धर्मपत्नी की कर्कशता ही थी। ऐसे अवसर मनुष्य को जीवन-दर्शन की गहराइयों तक पहुँचा सकते हैं, साथ ही पारिवारिक प्रेम, ईमानदारी, सद्व्यवहार, स्नेह, प्रेम, आत्मीयता, प्रसन्नता, प्रफुल्लता को आवश्यकता और उपयोगिता का पाठ सिखा सकते हैं। मनुष्य जीवन की गहराइयों का ज्ञान उपलब्ध करा सकते हैं।

परीक्षा में असफल बोपदेव आचार्य बोपदेव बने। स्वयं पाण्डित्य उनके पैरों गिरा क्योंकि उन्होंने घबराकर अपनी सारी बौद्धिक लगन उधर लगा दी। यह पाठ आपके लिये वैसा ही है ! हारे हुये मनुष्यों के अनेक जीवन चरित्र आप पढ़ सकते हैं, जिनको कठिनाइयों में ही पाथेय मिला है।

यद आप मानसिक सन्तुलन न खोयें, विचारशक्ति को जगाकर सूझ-बूझ से काम लें तो इसमें किंचित सन्देह नहीं कि विपत्तियाँ मनुष्य को परिश्रमी, उद्योगी, सन्तोषी, सहिष्णु और शक्तिशाली बनाती हैं। उनसे लाभ उठाने का दृष्टिकोण समझ में आ जाय तो मुसीबत मनुष्य जीवन के लिये वरदान ही होती है।

जीवन में कठिनाइयाँ भी आवश्यक हैं

किसी भी महापुरुष का जीवन उठाकर देख लीजिये, वह कठिनाइयों का एक जीता-जागता इतिहास मिलेगा। किसी सदुद्देश्य के लिये जीवनभर कठिनाइयों में जूझते रहना ही महापुरुष होना है। कठिनाइयों से गुजरे बिना कोई भी लक्ष्य को नहीं पा सकता। विद्वानों का कहना है कि जिस उद्देश्य का मार्ग कठिनाइयों के बीच से नहीं जाता, उसकी उच्चता में सन्देह करना चाहिए।

अपने व्यक्तित्व को पूर्णता की चरमावधि पर पहुँचाने के लिए ही भारतीय ऋषि-मुनियों ने तपस्या का कष्टसाध्य जीवन अपनाया। घर की सुख-सुविधाओं को छोड़कर अरण्य-आश्रमों का कठिन जीवन स्वीकार किया। भारतीय राजा, महाराजाओं की यह परम्परा रही है कि वे जीवन का एक भाग तपस्यापूर्ण कार्यक्रम में लगाया करते थे। यही नहीं भारत के हर आर्य गृहस्थ का धार्मिक कर्त्तव्य रहा है कि वह जीवन का अन्तिम चरण सुख-सुविधाओं को त्यागकर कठिन परिस्थितियों में व्यतीत करने के लिए वानप्रस्थ तथा संन्यास ग्रहण किया करते थे। भारतीय आश्रम धर्म के निर्माण में एक उद्देश्य यह भी रहा है कि घर-गृहस्थी में सुख-सुविधाओं के बीच रहते-रहते मनुष्य के व्यक्तित्व में जो निस्तेजता और ढीलापन आ जाता है, वह संन्यस्त जीवन की कठोरता से दूर हो जाये और व्यक्ति अपने परलोक साधना के योग्य हो सके। कठिनाइयाँ मनुष्य को चमकाने और उसे तेजवान बनाने के लिए ही आती हैं। कठिनाइयों का जीवन में वही महत्त्व है, जो उद्योग में श्रम का और भोजन में रस का।

जीवन को अधिकाधिक कठोर और कर्मठ बनाने में कठिनाइयों की जिस प्रकार आवश्यकता है, उसी प्रकार चरित्र-निर्माण के लिये भी कठिनाइयों की उपयोगिता है। मनुष्य का सहज स्वभाव है कि उसे जितनी ही अधिक छूट मिलती है, सुख-सुविधाएँ प्राप्त होती हैं, वह उतना ही निकम्मा और आलसी बनता जाता है। एक प्रमादपूर्ण जीवन संसार की सारी बुराइयों और व्यसनों का जन्मदाता है। खाली और निठल्ला बैठा हुआ व्यक्ति सिवाय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खुराफात करने के और क्या कर सकता है ? यही कारण है कि उत्तराधिकार में सम्पत्ति पाये हुए व्यक्ति अधिकतर व्यसनी और विलासी हो जाते हैं।

किन्तु जो कठिनाइयों से जूझ रहा है, परिस्थितियों से टक्कर ले रहा है, असुविधाओं को चुनौती दे रहा है, उसे संसार की फिजूल बातों के लिए अवकाश कहाँ ? उसके लिये एक-एक क्षण का मूल्य है, जीवन की एक-एक बूँद का महत्त्व है। जिस प्रकार मोर्चे पर डटे हुए सैनिकों की साहस और उत्साह की वृत्तियों के अतिरिक्त अन्य सारी वृत्तियाँ सो जाती हैं, उसी प्रकार कठिनाइयों के मोर्चे पर अड़े हुये व्यक्ति की समस्त प्रमादपूर्ण वृत्तियाँ सो जाती हैं।

कष्ट और कठिनाइयों का अनुभव पाया हुआ व्यक्ति दूसरे के दुःख-दर्द को ठीक-ठीक समझ लेता है और सामर्थ्य भर सहायता करने की कोशिश करता है। उसमें सहानुभूति, सौहार्द्र, सहयोग तथा संवेदना जैसे दैवी गुण आ जाते हैं। कष्ट पाया हुआ व्यक्ति दूसरे को सताने और दुःख देने से डरता है। कष्ट और कठिनाइयाँ मनुष्य के अहंकार को नष्ट करके उसमें विनम्रता, श्रद्धा और भक्ति के भाव भर देती हैं। कठिनाइयों की कृपा से ऐसे अनेक गुण पाकर मनुष्य का चरित्र चमक उठता है और वह मनुष्यता से देवत्व की ओर आगे बढ़ने लगता है।

कठिनाइयाँ मनुष्य को स्वस्थ और सुदृढ़ बनाती हैं। कठिनाइयों से निकलने के लिये मनुष्य को जो श्रम करना पड़ता है, वह स्वास्थ्य के लिये अनमोल रसायन सिद्ध होता है। जो परिश्रम करेगा वह स्वस्थ रहेगा ही इस तथ्य में किसी भी तर्क-वितर्क की गुंजाइश नहीं है।

कठिनाई से उपार्जित सुख-साधनों में जितना सन्तोष होता है, उतना सहज उपलब्ध साधनों में नहीं। परिश्रमपूर्ण कमाई से दो रुपये पाकर एक मजदूर जितना प्रसन्न और सन्तुष्ट होता है, उतना ब्याज के दो हजार रुपये पाकर एक साहूकार नहीं।

कठिनाइयाँ मनुष्य जीवन के लिये वरदान रूप ही होती हैं। किन्तु इन अमोघ वरदानों का लाभ वही उठा सकता है, जो इनको सँभालने और वहन कर सकने की सामर्थ्य रखता है, अन्यथा यह बोझ बनकर मनुष्य को कुचल भी देती हैं। जो परिश्रमी है, पुरुषार्थी है, साहसी और उत्साही है वह इनको फलीभूत करके संसार की अनेक विभूतियों को उपलब्ध कर लेता है। जो आलसी, प्रमादी, कायर और अकर्मण्य हैं वह इनकी चपेट में आकर जीवन की समस्त सुख-शान्ति से हाथ धो बैठता है। कठिनाइयों का मूल्य बहुत कुछ पा लेता है और जो इनसे हार बैठता है, उसे बहुत कुछ चुकाना पड़ता है।

कष्ट और कठिनाइयों को जो व्यक्ति विवेक और पुरुषार्थ की कसौटी समझकर परीक्षा देने मे नहीं हिचकते, वे जीवन की वास्तविक सुख-शान्ति को प्राप्त कर लेते हैं। किन्तु जो कायर हैं, क्लीव हैं, आत्मबल से हीन हैं, वे इस परीक्षाग्नि को देख डर जाते हैं; जिसके फलस्वरूप 'हाय-हाय' करते हुये जीवन के दिन पूरे करते हैं। न उन्हें कभी शान्ति मिलती है और न सुख। सुखों का वास्तविक सूर्य दुःखों के घने बादलों के पीछे ही रहता है। जो इन बादलों को पार कर सकता है, वही उसके दर्शन पाता है और जो दुःखों के गम्भीर बादलों की गड़गड़ाहट से भयभीत होकर दूर खड़ा रहता है। वह जीवन भर सुख-सूर्य के दर्शन नहीं कर सकता। वास्तविक सुख को प्राप्त करने के लिये आवश्यक है संसार के दुःखों का झूँठा परदाफास किया जावे। शीतलता का सुख लेने के लिये गर्मी को सहन करना ही होगा।

केवल मात्र सुख-सुविधाओं से भरा जीवन अधूरा है। जब तक मनुष्य दुःखों का अनुभव नहीं करता, कष्टों को नहीं सहता वह अपूर्ण ही रहता है। मनुष्य की पूर्णता के लिये दुःख, तकलीफों का होना आवश्यक है। दुःखों की आग में तपे बिना मनुष्य के मानसिक मल दूर नहीं होते और जब तक मल दूर नहीं होते मनुष्य अपने वास्तविक रूप में नहीं आ पाता।

इसके अतिरिक्त कष्ट-क्लेशों का सबसे महत्त्वपूर्ण उपयोग यह है कि उनके आगमन पर गरीब को बड़ी तीव्रता से ईश्वर की याद आती है। दुःख की तीव्रता मनुष्य में ईश्वरीय अनुभूति उत्पन्न कर उसके समीप पहुँचा देती है। कष्ट और क्लेशों के रूप में मनुष्य अपने संचित कर्मफलों को भोगता हुआ शनैः-शनैः परलोक का पथ-प्रशस्त किया करता है। जहाँ दुःख की अनुभूति नहीं वहाँ ईश्वर की अनुभूति असम्भव है। यही कारण है कि भक्तों ने ईश्वर के समीप रहने के साधन रूप दुःख को सहर्ष स्वीकार किया है।

कष्ट और कठिनाइयों को दुःखमूलक मानकर जो इनसे भागता है, उसे यह दुःख रूप में ही लग जाती हैं और जो बुद्धिमान इन्हें सुखमूलक मानकर इनका स्वागत करता है उसे यह देवदूतों के समान वरदायिनी होती है।

कठिनाइयाँ आपकी सहायक भी तो हैं

जीवन मार्ग पर चलते हुये पग-पग पर कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। जीवन-यापन के पर्याप्त साधनों का अभाव, परिजनों को वह व्यवस्थायें न जुटा पाना, जिनकी वे हमसे अपेक्षा रखते हैं। दूसरे लोगों के विद्वेष व उपहास भरे व्यंग्य आदि अनेकों कठिनाइयाँ हैं जो मनुष्य को उसके लक्ष्य से विचलित करती रहती हैं। इनसे भी बढ़कर अपना निज का आलस्य, मिथ्याभिमान, काम, क्रोध, भय व प्रलोभन ये भी वैसी ही कठिनाइयाँ हैं जैसी औरों द्वारा उत्पन्न की गईं। इनके आते ही व्यक्ति का उत्साह घट जाता है और जिस लक्ष्य की ओर वह बढ़ा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

था उसे बीच में ही अधूरा छोड़ देता है और यह मान लेता है कि उसके वश की बात नहीं।

किन्तु यह बात जानने की है कि कठिनाइयाँ मनुष्य की बाधक बनकर नहीं आती हैं वरन् उसके लक्ष्य को आसान बनाने के लिये ही आती हैं। किसी शायर ने इसी की भावाभिव्यक्ति करते हुये लिखा है—

रंज से खूँगर हुआ इंसाँ तो मिट जाता है जरा।

मुश्किलें मुझ पर पड़ीं इतनी कि आसाँ हो गईं।।

निरन्तर सफलता से तो संसार का केवल एक पक्ष समझ में आता है। कठिनाइयाँ हमें दूसरे भाग का भी बोध करा देती हैं। वे हमें यथार्थ में जीवन जीने की कला सिखा देती हैं। इनके बिना किसी भी प्रयोजन की सिद्धि, चाहे वह आध्यात्मिक हो अथवा सांसारिक, सम्भव न होगी।

सुख और दुःख संसार रथ के दो पहिये हैं। एक का अस्तित्व दूसरे पर टिका है। एक दिन है तो दूसरा रात। एक शरीर है दूसरा प्राण। दोनों के मध्य से ही जीवन की सरिता का प्रवाह बहता है। यदि अन्धकार न हो तो फिर प्रकाश की महत्ता ही क्या रहेगी ? तात्पर्य यह है कि जीवन को क्रियाशील बनाये रखने के लिये दोनों ही आवश्यक हैं। इनसे बचा भी नहीं जा सकता। जब तक शरीर है, तब तक सुख-दुःख का निवारण नहीं हो सकता।

सुख प्राप्ति के मार्ग में जो परिस्थितियाँ बाधा उत्पन्न करती हैं, उन्हें कठिनाइयाँ मानते हैं। धन-क्षय, शारीरिक व्याधियाँ, अप्रिय पुरुषों का संग, प्रियजनों से बिछोह इन्हें हीं मोटेतौर पर कठिनाइयाँ मानते हैं। आध्यात्मिक लक्ष्य की प्राप्ति में मनोविकारों व स्वभावजन्य कुकृत्यों को कठिनाई माना जाता है। इन्हीं के कारण मनुष्य दुःखी रहता है। किन्तु यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो यही परिस्थितियाँ महान् परिणामों की जननी हैं। उपनिषद्कार ने लिखा है **''दिवमारोहत तपसा तपस्वी''**। तप से ही आत्मोत्थान सम्भव है। तप का अर्थ कड़कती धूप में बैठकर जप-ध्यान करना, गहन शीत में स्नान करना अथवा शारीरिक तितीक्षा नहीं। इसका सर्वमान्य अर्थ यही है कि मनुष्य मार्ग में आई हुई कठिनाइयों से निरन्तर संघर्ष करे। इनसे लड़ते हुए अपने लक्ष्य की प्राप्ति करे। हीरा बिना रगड़ खाये चमकता नहीं। मनुष्य बिना परीक्षा दिये पूर्णता प्राप्त नहीं कर सकता। कठिनाइयाँ और कुछ नहीं, वे एक कसौटी मात्र हैं जो आगे के लिए सचेष्ट करती हैं।

कोई विद्यार्थी यह कहे कि छमाही परीक्षा से न तो मैं उत्तीर्ण होता हूँ न ही अनुत्तीर्ण, फिर क्यों कलम, दवात, कापी और कागजों में व्यर्थ खर्च करूँ ? कई बीमारी आदि का बहाना बनाकर उसे टाल भी देते हैं। किन्तु चतुर अध्यापक उन्हें ऐसा करने से रोकते हैं और उन्हें बताते हैं कि यदि परीक्षा न दी तो यह कैसे अनुमान लगा पायेंगे कि वार्षिक परीक्षा में किन-किन विषयों में कितना परिश्रम करना है पहली स्थिति में तो फेल होने की ही अधिक आशंका रहती है। ऐसे विद्यार्थियों की तरह अपने लिये भी यह उचित है कि अपनी प्रगति के लिये कठिनाइयों को जीवन का आवश्यक अंग मान लें।

बिना विपत्ति की ठोकर लगे विवेक की आँखें नहीं खुलतीं। सच्चे ज्ञान की कसौटी यह है कि उसे कठिनाइयों में प्राप्त किया गया हो। प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री प्रेमचन्द ने लिखा है, ''विपत्तियों से बढ़कर तजुर्बा दिलाने वाला विद्यालय आज तक नहीं खुला। कठिनाइयाँ मनुष्य के विकास का साधन हैं। जिस तरह आग की तेज भट्टी में तपाने पर सोने का रंग निखर आता है, वैसे ही सच्चे व्यक्ति का जीवन कठिनाइयों की आग से परिपक्व बनता है। महात्मा गाँधी, बुद्ध, ईसा आदि महारुपुष पग-पग पर कठिनाइयों से लड़े थे। तब महान सामाजिक व राजनैतिक क्रान्तियों का उन्नयन कर सके थे।

विपत्ति में मानसिक शक्तियाँ अन्तर्मुखी हो जाती हैं। इससे मनुष्य को सत्य-असत्य, अपने-पराये का यथार्थ ज्ञान होता है। आत्मीय स्वजनों की पहचान भी ठीक समय आ पड़ने पर ही होती है—

कहि रहीम सम्पति सगे बनत बहुत बहुरीति।

विपति कसौटी जे कसे तेई साँचे मीत।।

सच्चे मित्र की, आत्मीय की पहिचान कठिनाइयों में होती है। इसे और भी स्पष्ट शब्दों में व्यक्त करते हुये कवि ने लिखा है—

रहिमन विपदा हू भली जो थोड़े दिन होय।

हित अनहित या जगत में जानि पड़े सब कोय।।

अपना हितैषी कौन है ? और कौन कपटपूर्वक धूर्तता का, धोखेबाजी का व्यवहार कर रहा है, इसकी परीक्षा मुसीबत पड़ने पर ही होती है। सुखी जीवन के तो हजार साथी होते हैं, पर मुसीबत पड़ने पर कोई सच्चा सगा ही काम देगा।

सन्मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति की सच्ची परीक्षा कठिनाइयों में ही होती है। ऐसे अवसरों पर बहुधा लोगों को यह कहते सुना जाता है कि उन पर परमात्मा रूठा है। उनके दुर्दिन चल रहे हैं। पर स्थिति ठीक इसके विपरीत है। **महात्मा स्वेट मार्डेन** ने लिखा है, ''जितने दुःख, जितनी विपत्तियाँ हमें प्राप्त होती हैं, उनका कारण यह है कि अनन्त ऐश्वर्यशाली एवं सर्वशक्तिमान परमात्मा से हम अलगाव का भाव बनाये हैं।'' कठिनाइयाँ वह वरदान हैं, जिन्हें देकर परमात्मा हमे अपने पास बुलाना, अपनी पवित्र गोद में बिठाना चाहता है। सच्चे अध्यात्मवादी की पहिचान मुसीबतों में होती है। मुसीबतों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में तपे बिना व्यक्ति अपने आपको ब्रह्मवादी घोषित करने का अधिकार नहीं पाता है। सच्चा ईश्वरवादी वह है जो कहता है। ''मालिक मुझे सुख नहीं दुःख दे, ताकि तुम से विलग न होऊँ।''

विपत्ति वह खराद है, जिससे परमात्मा अपने रत्नों की चमक बढ़ाता है। इसलिये आप देखिये कि आपके जीवन में भी कठिनाइयाँ हैं अथवा नहीं। आप अध्यात्मवादी हैं आपके जीवन में निरी कठिनाइयाँ बाघ की भाँति मुँह बाये हैं। आप इनसे विचलित तो नहीं हो रहे। यदि आपके पाँव लड़खड़ाते हैं, तो सम्हलकर खड़े होइये। धर्म और अध्यवसाय का अवलम्बन लीजिये। जिसे धीरज है, जो परिश्रम से पाँव पीछे हटाना नहीं जानता, सफलता की देवी उसी के गले विजय-माला पहनाती है। धैर्य प्रारम्भ में कड़ुआ भले लगे किन्तु उसका फल मधुर होता है।

आत्म-निर्भर बनने का और अपने आत्म-विश्वास जाग्रत करने का, एक ही गुरु-मन्त्र है कि आप अपने जीवन में कठिनाइयों को आने दीजिये, दूसरों के दुःख, तकलीफ और मुसीबतों में हाथ बँटाइये। दूसरों की सहायता कीजिए और परमात्मा आपकी सहायता करेगा। दूसरों के दुःखों को समझिये और अनुभव कीजिए कि आप असंख्यों से सुखी हैं, ऐसा दृष्टिकोण बना लेने से कठिनाई और दुःख की परिस्थितियाँ टल जायेंगी और अपने पीछे सफलता की राह बना जायेंगी। किसी कवि ने कहा—

गम राह नहीं कि साथ दीजे।

दुःख बोझ नहीं कि बाँट लीजे।।

कठिनाइयाँ छोटे मनुष्यों को निस्तेज, निष्प्राण बना सकती हैं किन्तु महान् वे हैं, जो दुःखों की छाया में पलते हैं। औरों के दुःखों, मुसीबतों में हाथ बँटाते हैं। पुरुषार्थ भी इसी का नाम है कि व्यक्ति परिस्थितियों से संघर्ष करे। स्वयं उनके वश न हों वरन् उन्हें वशवर्ती करे।

सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक **एल्फ्रेड एडलर** का मत है कि भयभीत और हीन भावनाओं के व्यक्ति वे होते हैं, जिनके जीवन में कभी कठिनाइयाँ नहीं आई होतीं अथवा जो कठिनाइयों से कतराते या बचते रहते हैं। ऐसे व्यक्तियों का मानसिक विकास रुक जाता है। ऐसे व्यक्ति छोटे-छोटे कार्यों में भी सफलता नहीं पाते। कठिनाइयाँ अपने आप में उतनी भयावह नहीं होतीं जितनी उनकी भयोत्पादक कल्पना। जब कभी किसी कठिनाई का आभास हो, आत्म-विश्वास जगाइये, निश्चय ही उससे आपको हितकर परिणाम प्राप्त होंगे।

पूर्वकाल में दार्शनिक व्यवस्था ऐसी बनाई गई थी, जिसमें अनिवार्य रूप से छोटे-बड़े बालकों को गुरुकुलों में रखकर अक्षर ज्ञान कम और व्यावहारिक जीवन में कठिनाइयों का अधिक पाठ पढ़ाने का क्रम रखा जाता था। जब तक यह पद्धति चलती रही, इस देश में साहसी, पुरुषार्थी, चरित्रवान और प्रतिभाशाली नररत्नों की कमी नहीं रही। किन्तु जब से कठिन परिस्थितियों में रहकर जीवन बिताने का ह्रास हुआ, तब से निर्बल, निस्तेज और दुराचारी व्यक्तियों का ही बाहुल्य होता चला जा रहा है।

इन परिस्थितियों के रहते हुए किसी समाज, राष्ट्र का उत्थान सम्भव नहीं। कठिनाइयों से न जूझने का अर्थ यह है कि व्यक्ति सत्य की अवहेलना कर रहा है और मिथ्याचार को प्रोत्साहन दे रहा है। साहस, सदाचार आदि नैतिक सद्गुण कठिनाइयों से विमुख होते ही पलायन कर जाते हैं, तब फिर व्यक्तित्व के विकास का मार्ग अवरुद्ध होना ही निश्चित मानिये। एक व्यक्ति ने अपना जीवन लक्ष्य प्राप्त करने के लिये साधना, उपासना का क्रम बनाया। पड़ौस वालों ने देखा तो लगे उपहास करने। बस उसका उत्साह ढीला पड़ गया। ऐसी अवस्था में सत्य की खोज करना एवं अपनी दुर्बलताओं से जूझना कहाँ बन पड़ेगा ? पर दूसरे वे होते हैं, जो यह मानते हैं कि उपहास करने वाले व्यक्ति हमें बुराइयों से सावधान रखने वाले पहरुए हैं। जो लोग उपहास और अवरोध की परवाह न करते हुये अपने रास्ते पर चलते रहते हैं, वे स्वयं सफलता प्राप्त करते हैं और दूसरों के लिये प्रेरणा का स्रोत भी बनते हैं। ऐसे ही व्यक्ति समाज का उत्थान कर सकते हैं। उन्हीं से आध्यात्मिक प्रगति की आशा की जा सकती है।

जीवन के विभिन्न व्यवसायों में चाहे वह लौकिक हों अथवा आत्मा-परमात्मा की भक्ति से सम्बन्ध रखने वाले हों सबमें कठिनाइयों के मार्ग से ही गुजरना पड़ेगा। शरीर मिला है तो रोग, शोक, बीमारी आदि आयेंगी ही। जीवनयापन के लिये कोई भी उद्योग करे, उसमें सब ओर लाभ ही लाभ हो यह सम्भव नहीं। सुख-सुविधाओं की सामान्य इच्छा सभी को होती है फिर सारी सुख-सुविधाएँ आपको ही मिल जायेंगी इसकी कोई गारण्टी नहीं है। अतएव आप ऐसे समय में भी संतोष और धैर्य की वृत्ति बनाये रहें और अपने चरम लक्ष्य की प्राप्ति में लगे रहें तो आपका जीवन सफल माना जायेगा।

दुःख और कठिनाइयों में ही सच्चे हृदय से परमात्मा की याद आती है। सुख-सुविधाओं में तो भोग और तृप्ति की भावना बनी रहती है। परमात्मा की याद तब आती है, जब व्यक्ति असहाय-सा चारों ओर से अपने आपको कठिनाइयों से घिरा पाता है। इसलिये उचित यही है कि विपत्तियों का सच्चे हृदय से स्वागत करें। परमात्मा से माँगने लायक एक ही वरदान है कि वह कष्ट दें, मुसीबतें दें ताकि मनुष्य अपने लक्ष्य के प्रति सावधान व सजग बना रहे। कृष्ण के समक्ष अपनी इच्छा व्यक्त करते हुये कुन्ती ने ऐसी ही कामना की थी—

विपदः सन्तु नः शाश्वत तत्र जगद्गुरो।

भवतो दर्शनम् यत्स्याद पुनर्भव दर्शनम्।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"जगद्गुरो ! हमारे जीवन में सदैव पग-पग पर विपत्तियाँ आती रहें, क्योंकि विपत्तियों में ही निश्चित रूप से आपके दर्शन हुआ करते हैं और आपके दर्शन हो जाने पर फिर जन्म-मृत्यु के चक्कर में नहीं आना पड़ता।" अपने अन्तःकरण की कुन्ती भी यदि ऐसी कामना करने लगे तो लक्ष्य प्राप्ति की आधी सफलता आप पा गये समझिये। पूर्णता की प्राप्ति कराने में कठिनाइयाँ आपकी बाधक नहीं, सहायक ही होती हैं। उनके होने से ही तो संघर्ष करने का पौरुष प्रकट होता है और सुविकसित व्यक्तित्व के द्वारा किया हुआ प्रबल पुरुषार्थ कभी निरर्थक नहीं जाता। उससे लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में निरन्तर प्रगति ही होती जाती है।

दुःख से डरिये नहीं, उसका सामना कीजिये

एक ओर मनुष्य ज्यों-ज्यों सभ्यता की ओर बढ़ता और सुख-सुविधा के साधन जुटाता गया, त्यों-त्यों उसमें कष्ट सहन करने की क्षमता कम और दुःख अनुभूत करने की दुर्बलता अधिक बढ़ती गई है। जहाँ दुःखानुभूति की वृद्धि हुई है, वहाँ इससे यह लाभ भी हुआ है कि मानव मस्तिष्क सुख की अधिकाधिक खोज करता हुआ परमानन्द तक पहुँच गया है।

सामान्यतः जन साधारण उस परमानन्द तक नहीं पहुँच सकते, फिर भी दिन प्रतिदिन सिर पर खड़े हुये दुःखों से बचाव करने का उपाय तो करना ही होगा। किसी बात का निराकरण करने के लिये उसके मूल को समझना होगा। जिस प्रकार किसी रोग के उपचार के लिये वैद्य को सबसे पहले रोग का निदान करके उसके उत्पन्न होने के कारण को खोजना और समझना पड़ता है, उसी प्रकार दुःख के निराकरण के लिये उसके स्वरूप और कारण को समझना होगा।

दुःख क्या है ? उसकी उत्पत्ति कैसे होती है ? उससे क्या अहित है ? और उसका निराकरण किस प्रकार हो सकता है ? इन सब बातों पर गहराई से विचार करने की आवश्यकता है।

आकाश की भाँति दुःख भी कोई स्थूल वस्तु नहीं है, वह भी एक निराकार अनुभूति मात्र है। यह अनुभूति जितनी तीव्र होगी, दुःख का अनुभव भी उतना ही प्रचण्ड होगा। दुःख यदि असुविधापूर्ण परिस्थिति विशेष पर निर्भर होता तो अधिक सुविधाओं वाले हर व्यक्ति को सुखी होना चाहिये और असुविधापूर्ण जीवन व्यतीत करने वाले को दुःख से दबकर मर जाना चाहिये। संसार में सुख-सुविधाओं के साधन उतने नहीं हैं जितनी कि जनसंख्या। इस अनुपात से तो यदि दुःख का कारण असुविधापूर्ण परिस्थितियाँ ही होतीं, तो संसार का दो-तिहाई जन समुदाय हर समय रोता, कलपता ही दृष्टिगोचर होता। किन्तु होता ऐसा नहीं। जहाँ सुविधा-सम्पन्न व्यक्ति प्रसन्न दीखते हैं, वहाँ असुविधाग्रस्त व्यक्ति भी और जहाँ असुविधाग्रस्त लोग व्यग्र एवं विकल होते देखे जाते हैं, तो वहाँ सुविधा-सम्पन्न व्यक्ति भी कम परेशान नहीं होते। इस न्याय से तो यही सिद्धान्त निकलता है कि सुख-दुःख का अस्तित्व सुविधापूर्ण परिस्थितियों पर निर्भर नहीं है, बल्कि इनका कोई अन्य कारण है।

दुःख-सुख का मूल बाह्य परिस्थितियों में नहीं, मनुष्य की अपनी मनःस्थिति में है और उनकी न्यूनाधिक का होना उसकी संवेदनशीलता की तीव्रता पर निर्भर करता है। हर समय देखा जा सकता है कि एक ही समान परिस्थिति में रहने वाले दो व्यक्तियों में से एक दुःखी दीखता है और दूसरा प्रसन्न। कभी-कभी यह भी देखा जाता है कि किसी एक ही परिस्थिति में एक व्यक्ति कभी प्रसन्न और कभी खिन्न होने लगता है।

एक समय ऐसा भी था जब संसार में किसी प्रकार की सुविधा का कोई छोटा-मोटा साधन भी नहीं था। मनुष्य प्राकृतिक साधनों पर निर्भर रहकर भी प्रसन्न रहा करता था। यदि असुविधाएँ ही दुःख का कारण होतीं तो उस समय से अब तक मनुष्य को जीवित न रहना चाहिये था। आज भी देखा जा सकता है कि मनुष्य की अपेक्षा पशु-पक्षियों के पास साधनों की कमी ही नहीं पूर्णरूपेण अभाव है तब भी वे मनुष्यों से अधिक प्रसन्न दीखते हैं। मनुष्य की भाँति कोई भी पशु-पक्षी रोते, कलपते नजर नहीं आते। वे एक नैसर्गिक जीवनयापन करते हुए भी प्रमुदित एवं प्रसन्न रहते हैं।

पशु-पक्षी ही क्यों सभ्य मानव संसार को ही ले लिया जाये। आज ऐसे देश, द्वीप और भूखण्ड हैं, जिनके निवासियों को सुख-सुविधाओं के साधन नहीं के बराबर ही उपलब्ध हैं। कोई जातियाँ रेगिस्तान के बीच रहती हैं, कोई पानी के नीचे तो कोई बर्फ से घिरी हुई रह गईं, किन्तु वे भी हँसती-खेलती और प्रसन्न होती हैं। एक किसान और साहूकार की ही तुलना कर ली जाये कि जिस कड़ाके की सर्दी में किसान अपने खेत में गाता हुआ हल जोतता है, उसी सर्दी में कोई अमीर आदमी लिहाफ में लिपटा हुआ अँगीठियों के बीच भी कष्ट अनुभव करता है। किसी एक ही व्यक्ति को ले लीजिये कि जाड़ों में जो प्रातःकाल लिहाफ से मुँह नहीं निकालता वही अपने किसी प्रियजन को लेने के लिये प्रसन्नतापूर्वक दौड़ा-दौड़ा स्टेशन जाता है।

इनके अतिरिक्त ऐसे भी व्यक्ति पाये जाते हैं, जो सुख-सुविधाओं को त्यागकर असुविधापूर्ण जीवन अपनाकर प्रसन्न रहते हैं। साधक तथा तपस्वी सब इसी श्रेणी के व्यक्ति हैं। यदि साग्रह अपनाया हुआ उनका असुविधापूर्ण जीवन दुःख का कारण होता, तो प्रथम तो वे उसे अपनाने की गलती ही नहीं करते अन्यथा पहले से अधिक प्रसन्न, स्वस्थ और तेजवान दीखने के स्थान पर दुर्बल, असन्तुष्ट, खिन्न एवं दीन-हीन दीखते।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस प्रकार हम देख सकते हैं कि दुःख-सुख का कारण बाह्य परिस्थितियाँ नहीं बल्कि मनुष्य की मनःस्थिति ही हैं।

जिसका मन बलवान है, जिसकी बुद्धि ठीक-ठीक क्रियाशील है और जिसकी संवेदनशीलता छुई-मुई की तरह सुकुमार नहीं है, वह मनुष्य अपेक्षाकृत दुःख का अनुभव कम ही करेगा। जिस विवेकशील ने दुःख के अस्तित्व में विश्वास नहीं किया हुआ है, जो कष्टों और आपत्तियों को उद्‌बोधन, सतर्कता, सावधानी और कर्मठता का हेतु मानता है, वह सुखों से अधिक दुःखों से लाभ उठाता है।

सुख-सुविधापूर्ण परिस्थितियों में मनुष्य प्रायः निकम्मा, आलसी और सुकुमार हो जाता है, जिससे मन, बुद्धि के साथ उसकी सारी इन्द्रियाँ निस्तेज तथा निर्जीव हो जाती हैं। उन पर उसी प्रकार विकारों का मोर्चा लग जाता है, जिस प्रकार बेकार पड़ी हुई मशीन पर। चलती हुई मशीन के सारे पुरजे जिस प्रकार चमकदार और चिकने बने रहते हैं, ठीक उसी प्रकार संघर्षरत मनुष्यों की सारी क्षमताएँ एवं अवयव तेजस्वी बने रहते हैं।

आपत्तिकाल में जो मनुष्य दुःख से दबकर निश्चेष्ट हो जाता है, उसके सम्पूर्ण जीवन को एक छोटी-सी विपत्ति भी अमरबेलि की तरह घेरकर सुखा देती है और जो दुःख को एक चुनौती की तरह स्वीकार करता है, वह एक बीज की तरह धरती का पर्त चीरकर पल्लवित हो उठता है।

''संसार दुःखों का सागर है''—यह उक्ति केवल उन्हीं पर चरितार्थ होती है, जो दुःखों से भयभीत और प्रत्येक क्षण सुख के लिये लालायित रहते हैं। सुख-सुविधा की अतिशय चाह भी दुःख का एक विशेष कारण है। इस निरन्तर परिवर्तनशील और द्वन्द्व प्रधान जगत में जो सदा अपने मनोनुकूल परिस्थितियों की अपेक्षा करता है, उसके लिये संसार की लघु से लघु प्रतिकूलता भी एक बड़ा दुःख बन जाती है। हम क्यों चाहते हैं कि हमें केवल शीतल, मन्द, सुगन्ध समीर ही प्राप्त होती रहे, गर्म वायु का कोई झोंका हमारे पास होकर न निकले ? ऐसा किस प्रकार सम्भव हो सकता है ? जिब संसार में दोनों प्रकार की वायु चलती है तो क्रम से वे हमारे पास आयेंगी ही। यदि हम छाँह की कामना करते हैं तो धूप सहन ही करनी होगी।

इसके अतिरिक्त, यदि यह सम्भाव्य भी मान लिया जाये कि मनुष्य के मनोनुकूल परिस्थितियाँ संचित की जा सकती हैं और किसी प्रकार दुःख को पास भी नहीं आने दिया जा सकता है, तब भी कुछ ही समय में एकरसता के कारण सुख-सुविधा की व्यवस्था भी दुःखदायी बन जायेगी। एक जैसी स्थिति में रहते-रहते मनुष्य का मन ऊब उठता है और तब वह प्रिय वातावरण में भी नीरसता अनुभव करने लगता है। जिस प्रकार वियोग, संयोग-सुख का उद्दीपक है, उसी प्रकार सुखानुभूति को पुलकपूर्ण बनाये रहने के लिये दुःख का पुट भी आवश्यक है। कोई वस्तु किसी को कितनी ही प्रिय क्यों न हो यदि वह उसे निरन्तर ही खाने-पीने को दी जाती रहे तो शीघ्र ही उस व्यक्ति को अपनी वह प्रिय वस्तु भी अरुचिकर लगने लगेगी।

विश्वास रखिये कि दुःख का कोई अपना अस्तित्व नहीं है यह आपकी मनोदशा का विकृत स्वरूप है ! दुःख की दशा रोना नहीं मुस्काना ही है ! दुःख को देखकर मुस्कराइये, इसे नियति का छल समझकर हँसिये !

यदि आप दुःख की दशा में हाथ-पैर छोड़कर बैठ जायेंगे उसके प्रति आत्मसमर्पण कर देंगे तो यह काल्पनिक प्रेत आपको विनष्ट कर देगा। दुःखी होने वाला व्यक्ति न कभी स्वस्थ रह सकता और न सुखी, न वह कोई उन्नति कर सकता है और न विकास। दुःखशील प्रवृत्ति के व्यक्ति के मन-मस्तिष्क निष्क्रिय और आत्मा निस्तेज होकर पतित हो जाती है।

विपत्तियों से डरकर नहीं लड़कर ही हम बढ़ सकते हैं

किसी विपत्ति को भयावह परिस्थिति समझना भूल है। विपत्ति वास्तव में संघर्ष के लिए सक्षम बनाने वाले अभ्यास की तरह एक शारीरिक, मानसिक तथा बौद्धिक व्यायाम ही है। शारीरिक व्यायाम अथवा मानसिक साधना भी एक कष्ट अथवा कठिनाई ही है। उस कठिनाई को बार-बार पार करने अथवा कष्ट सहने से मनुष्य का तन, मन पुष्ट होता है। अन्तर केवल इतना है कि व्यायाम का कष्ट स्वामंत्रित होता है और विपत्ति अनाहूत।

मनुष्य व्यायाम की कठिनाई सहता है पुष्ट होने के लिये। किन्तु उक्त कठिनाई तभी पुष्टता प्रदान कर पाती है जब मनुष्य उसे उत्साह तथा हर्षपूर्वक उठाता है। उसी प्रकार विपत्ति भी साहस तथा हर्षपूर्वक सहन करने पर ही बल प्रदान करती है, नहीं तो जिस प्रकार उत्साह एवं हर्षहीन व्यायाम पुष्ट करने के स्थान पर निर्बल बनाता है, उसी प्रकार विपत्ति भी निराशा की स्थिति में अधिकाधिक कंटकित बनकर तन, मन को जर्जर कर देती है।

योद्धा शस्त्राभ्यास में चोट पर चोट खाकर आगामी युद्ध के लिये सक्षम बनता है। कृत्रिम कठिनाइयों में अपने को डालकर ही सिपाही बीहड़ तथा पर्वतों की कष्टकर परिस्थितियों में मोर्चा जमाने योग्य हो जाता है। पहलवान प्रारम्भ में बार-बार पटकी खाकर कुश्ती में दक्ष हो पाता है। बार-बार चोट खाकर निर्बल बलवान बनता है, ठोकर खाने के बाद ही बुद्धि सचेत होती है। बार-बार कठिनाइयों में पड़कर ही मनुष्य जीवन का सच्चा पाठ सीखता है। चोट खाकर ही लोहा फौलाद बन जाता है। खराद पर ही हीरा चमकता है और तपकर ही सोना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुन्दन बनता है। विपत्तियाँ मनुष्य को खरादने तथा उजालने आती हैं। उन्हें दुर्भाग्य अथवा प्राण लेवा परिस्थिति समझकर निराश अथवा हतोत्साह बैठ रहना भारी भूल है।

विपत्ति मानवीय शक्ति की परीक्षा है। कोई विपत्ति अथवा कठिनाई आने पर ही अपने धैर्य एवं स्थैर्य के अनुसार ही मनुष्य समझ पाता है कि उसमें कितनी शक्ति है, कितना दमखम है ? विपत्ति अथवा प्रतिकूलता आने पर अनेक भ्रमों का भेद खुल जाता है। मनुष्य को पता चल जाता है कि वह कितने पानी में है ? उसके शरीर में कितनी जान है, उसके हृदय में कितनी गहराई और पाँवों में कितनी स्तम्भता है ? जब तक परिस्थितियाँ अनुकूल बनी रहती हैं, सुख एवं सौख्य का आगमन होता रहता है, मनुष्य अपने को न जाने क्या समझता रहता है ? किन्तु वास्तव में वह क्या है ? उसमें पुरुषार्थ की कितनी मात्रा है, धैर्य का कितना धन है, सहिष्णुता की कितनी सम्पत्ति है ? ठीक-ठीक तभी समझ पाता है, जब उसका सामना किसी विपत्ति, कठिनाई अथवा प्रतिकूलता से हो जाता है ? उसे अपनी कमियों तथा दुर्बलताओं का पता चल जाता है। वह अपने सही स्वरूप तथा यथार्थ चित्र से परिचित हो जाता है। विपत्ति परीक्षा की तरह आकर मनुष्य को उसकी योग्यता से अवगत कराती है और इस बात की चेतावनी देती है कि वह अपना सुधार करे, अपनी दुर्बलता दूर करे अन्यथा आने वाली किसी आपत्ति के सम्मुख उसे घुटने टेकने पर मजबूर होना पड़ सकता है। इन मानों में विपत्तियाँ मनुष्य की शत्रु नहीं मित्र ही होती हैं। मिटाने वाली नहीं, बनाने वाली ही मानी जा सकती हैं।

इस विविधता एवं वैचित्र्यपूर्ण संसार में प्रतिकूलताएँ सदा सम्भाव्य हैं। विपत्ति किसी भी समय आकर मनुष्य को ललकार सकती है, उसे संघर्ष के लिये, पुरुषार्थ की परीक्षा के लिये आमन्त्रित कर सकती है। वह इस बात का परिचय देने के लिये चुनौती दे सकती है कि आप संसार-समर के योग्य हैं अथवा नहीं, आप में वह गुण है या नहीं जो एक जीवन योद्धा में होना चाहिये। यदि विपत्ति को अपनी योग्यता का परिचय दे दिया गया, उसके दिये हुये द्वन्द्व को हर्षपूर्वक स्वीकार किया गया, उससे बढ़कर दो हाथ किये गये तो वह शीघ्र ही आत्म-समर्पण करके, आपके सुनहले भविष्य के द्वार खोल देगी, नहीं तो वह जिस प्रकार निर्बलों, कायरों अधीरों का आखेट कर डालती है, आपको भी क्षमा नहीं करेगी।

विपत्ति से मोर्चा लेने, उसे परास्त करने के अनेक उपाय हैं। पहले तो विपत्ति को विपत्ति अथवा भयावह परिस्थिति मानिये ही नहीं। अपनी शक्ति की तुलना में उसे हीन एवं हेय समझिये। ऐसी भावना रहने से आपसे आत्मविश्वास आपके पास बना रहेगा। उसका अंकन अनावश्यक रूप से अधिक न होगा। कठिनाई की अपेक्षा अपने को अधिक कठोर समझने से आपकी प्रसुप्त शक्तियाँ सजग होकर आपकी सहायता के लिये खड़ी हो जायेंगी। अपनी धारणा के अनुसार आपका धैर्य चट्टान की तरह अडिग रहेगा। सम्मुख आये हुए विपक्षी को अपने से अधिक शक्तिशाली मान लेने से आपकी बहुत कुछ शक्ति स्वभावतः उसके पास चली जायेगी और अपने विश्वास के अनुसार आप निर्बल न होते हुये भी निर्बल हो जायेंगे। अपनी क्षमताओं में शंका और प्रतिद्वन्द्वी की सामर्थ्य में विश्वास पर-पक्ष को ही लाभ देता है। अपनी सामर्थ्य में विश्वास रखिये और समझ लीजिये कि विपत्ति कितनी ही बड़ी क्यों न हो मानवीय शक्ति की तुलना में छोटी ही होती है। यदि आपने अपने धैर्य, साहस तथा आत्मविश्वास को बनाये रखा तो निश्चय ही आई हुई विपत्ति के दूर होने में कोई देर न लगेगी। थोड़े से संघर्ष से ही आप मैदान में वीर बनेंगे और फिर भविष्य की आशा-ऊषा पहले से भी अधिक चमकती-दमकती आपके सम्मुख उदय होगी। आपकी शक्ति बढ़ेगी, आपकी हिम्मत दुगनी होगी और आप एक नये अनुभव के साथ आगे बढ़ेंगे।

विपत्ति के आने से पूर्व आप चिन्ता कर सकते हैं। उससे बचने, उसका रास्ता काट जाने का प्रयत्न कर सकते हैं। यह दूरदर्शिता एवं बुद्धिमानी हो सकती है। विपत्ति को टालने का पूर्व प्रयास कायरता नहीं चतुरता ही होगी। किन्तु उसके आ जाने पर, सिर पर गरजने लगने पर, अंगद के पैर की तरह अडिग हो जाइये। उससे भागने अथवा कतराने की कायरता मत करिये क्योंकि ऐसा करने से आई हुई विपत्ति टलेगी नहीं। भागने पर वह आपको देर तक, दूर तक मारेगी-खदेड़ेगी। आपका सारा साहस एवं पुरुषार्थ छीन लेगी और पूरी तरह से अशक्त बनाकर कियी योग्य न रखेगी।

विपत्ति में पड़कर विपत्ति के स्वरूप अथवा उसके सम्भावित परिणामों पर अपने चिन्तन को केन्द्रित मत करिये। यह गलत तरीका है। अनेक लोग इस गलत तरीके को अपना लेने से ही बरबाद हो जाते हैं। विपत्ति के अवसर पर निराशापूर्वक चिन्तन हानिकारक है। "मैं संकट में फँस गया हूँ अब मेरा उद्धार कैसे होगा ? बड़ी भारी विपत्ति मेरे सिर पर आ पड़ी है। इससे बच सकना कठिन है। मेरे पास इतनी शक्ति एवं साधन नहीं हैं, जिनके बल पर मैं इसका सामना कर सकूँ। यह मुझे मिटा ही डालेगी।" आदि-आदि भावनाएँ करना विपत्ति को बढ़ावा देना है। आपकी बुद्धि विपत्ति की भयंकरता का चिन्तन करने से निर्बल हो जायेगी। उसमें प्रत्युत्पन्नता का गुण न रहने पायेगा, जिससे आप न तो ठीक से उपस्थित परिस्थिति को समझ पायेंगे और न उससे बचने का उपाय सोच पायेंगे। ऐसी स्थिति में आपकी समस्याएँ सुलझने के बजाय उलझती जायेंगी, आपके प्रश्न पहेली

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बनते जायेंगे और जल्दी ही वे आपके समाधान से परे होकर आपको पछाड़ देंगे।

विपत्ति आने पर चिन्ता करिये किन्तु उसकी भयंकरता की नहीं बल्कि उससे बच निकलने के उपाय की। विपत्ति को अपना अप्रिय नृत्य करने दीजिये और आप तटस्थ भाव से बिना प्रभावित हुये उसके समाधान के उपाय सोचते रहिये। ऐसा करने से आपकी बुद्धि सन्तुलित और चित्त शान्त रहेगा। तब आप अवश्य ही कोई ऐसी युक्ति सोच निकालेंगे जो आपको कठिनाई से निकल सकने में सहायता दे सके। व्यग्रता अथवा व्यस्तता आपकी विपत्ति को अधिक चिरस्थायी एवं कठिन ही बना देगी।

विपत्ति से पराभूत न होना उससे बचने का एक बड़ा योग्य उपाय है। मनुष्य वास्तव में विपत्ति से नहीं, उससे होने वाले कष्ट से डरता है। उसके होने वाले अप्रिय परिणामों से भयभीत होता है। यदि आप उदासीन होकर अपने अन्तःकरण को प्रभाव शून्य बना लें, तो कोई भी कठिनाई आपको त्रस्त नहीं कर सकती। इस उपाय में दार्शनिक दृष्टिकोण अथवा दूसरों के उदाहरण भी सहायक हो सकते हैं। आप यह सोचकर विपत्तियों के प्रभाव से उपराम रह सकते हैं कि विपत्तियों का आगमन संसार की सहज प्रक्रिया है। विपत्ति और सम्पत्ति का विरोधी चक्र तो संसार में चलता ही रहता है। कल यदि मेरे जीवन में सुविधाओं का अवसर था तो आज कठिनाइयाँ आ गई हैं और आज जब विपत्ति का योग है, तो कल सम्पत्ति का संयोग हो सकता है। केवल सुख-सौख्य की कामना करते रहना प्रकृति के विधान का विरोध है, उसके प्रति अश्रद्धा एवं असहमति है। सम्पत्ति, विपत्ति में और विपत्ति, सम्पत्ति में बदलती ही रहती हैं। सम्पत्ति के समय हर्ष-विभोर हो उठना और विपत्ति काल में शोकाकुल बने रहना, मानसिक दरिद्रता का द्योतक है, जो किसी भी मनुष्य, किसी भी कर्मवीर पुरुष के योग्य नहीं है। मनुष्य की शोभा रोने में नहीं आपत्ति के प्रति उदासीन रहकर उसे दूर करने के लिये प्रबल पुरुषार्थ करने में है। मनुष्य जीवन में सुख एवं दुःख ईश्वरीय इच्छा के अनुसार आते हैं। दोनों को प्रभु का प्रसाद समझकर समान रूप से स्वीकार करना चाहिये। अपरिहार्य जैसी आपत्ति में इस प्रकार कुछ ऊँचा उठकर सोचने-समझने से विपत्तियाँ आपको पराभूत न कर सकेंगी। आपका आत्मविश्वास, आत्मबल तथा सहनशक्ति सुरक्षित बनी रहेगी। आप उपाय के प्रति सम्पूर्ण श्रद्धा से सक्रिय बने रहेंगे। आपको दैवी शक्ति, दैवी प्रेरणा तथा दैवी सहायता प्राप्त होगी। जो कि आपके दुर्दिनों को सुदिनों में बदल देगी।

विपत्तियों पर विजय पाने का साहस संचित करने के लिये आप मनु से लेकर महात्मा गाँधी तक अनेक महापुरुषों के उदाहरण अपने सामने रख सकते हैं। पाण्डवों, नल तथा हरिश्चन्द्र जैसे आदर्श पुरुषों का जीवन आपको धैर्य की शिक्षा दे सकता है। आप उनके उदाहरणों से सम्बल लेकर साहसपूर्वक विपत्तियों से संघर्ष कर सकते हैं और इस बात के स्वयं प्रमाण बन सकते हैं कि विपत्तियों से डरने वाला नहीं, उससे टक्कर लेने वाला ही उन पर विजय प्राप्त कर सकता है।

कठिन से कठिन संकट आ जाने पर भी विचलित न होइये। शक्ति, साधन एवं सम्पूर्ण बुद्धि भर उसका सामना करिये। भरसक संघर्ष कीजिये और सोच लीजिये कि यह शरीर नाशवान है। सदा रहने वाला नहीं है। एक दिन इसे नष्ट ही होना है। इसके छूटने का बहाना पूर्व निश्चित है और यदि इसको इस संकट पर ही बलिदान होना है, तब कायरता अथवा अधीरता का कलंक क्यों लिया जाये, क्यों न संघर्ष करते-करते एक वीर बलिदानी का श्रेय प्राप्त किया जाये ? साहसिक अन्त, मृत्यु मनुष्य को भी अनन्तता प्रदान कर देती है।

विपत्तियों से न तो कभी घबराइये और न निराश होइये। कभी मत सोचिये कि जो विपत्ति आप पर आई है वह सदा रहने वाली है। मनुष्य कल का निर्णय स्वयं नहीं कर सकता, वह केवल अपने पुरुषार्थ के आधार पर उसका अनुमान लगा सकता है। मनुष्य जीवन का प्रत्येक नया दिन एक परिवर्तन, एक नई सम्भावना लेकर ही आता है। कौन कह सकता है कि आने वाला कल आपके लिये मनभावन उपहार लेकर नहीं आ रहा है। आज की आपत्ति में कल के प्रति निराश क्यों हुआ जाये ? क्यों न यह विश्वास रखा जाये कि हमारा आज ही केवल सापद है, हमारा कल निरापद एवं निर्विघ्न है। क्यों न आज के कंटकों को सहन कर कल के फूलों का स्वागत करने के लिये सुरक्षित एवं आशान्वित रहा जाये ? इस प्रकार के आशान्वित विचार आपको नित्य नया साहस, उत्साह तथा शक्ति प्रदान करते रहेंगे, जिससे आप बड़ी से बड़ी विपत्ति पर सहज ही विजय प्राप्त कर सकते हैं।

विपत्ति से बचने का उपाय उससे भागना नहीं, उससे टक्कर लेना ही है। अपने आत्म-विश्वास, साहस, धैर्य तथा सहन-शक्ति के दीपक जलाये रहिये अपने उज्ज्वल भविष्य की ओर देखते रहिये, बड़ी से बड़ी विपत्ति आपका बाल भी बाँका नहीं कर सकेगी। आप विजयी होंगे और सफलता के सुन्दर हस्त आपका अभिषेक करेंगे।

अडिग निष्ठा के साथ कार्यक्षेत्र में उतरें

भाग्य के भरोसे अथवा संयोग की प्रतीक्षा में बैठे-बैठे समय बरबाद करने वाले जीवन में कभी सफलता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्राप्त नहीं कर सकते। सफलता परिश्रमपूर्ण तत्परता का ही फल है।

भाग्य के भरोसे अथवा संयोग की राह देखते रहने वाले स्वभाव से आलसी एवं दीर्घसूत्री हो जाते हैं। वे यह नहीं समझ पाते कि भाग्य पुरुषार्थ से बनता है और संयोग कार्यक्षेत्र में उतरने पर ही प्राप्त होता है। जो कार्यक्षेत्र से दूर बैठा-बैठा अलसाता रहेगा, उसके पास संयोग आ जाने की सूचना देने के लिये कोई नहीं आएगा। लोगों को अपनी व्यस्तता में इतना बेकार समय कहाँ जो किसी व्यक्ति को बतलाने के लिये उसके पास चलकर जायें कि भाई अब उठो, आप जिस संयोग अथवा अवसर की प्रतीक्षा कर रहे थे वह आ गया है। फिर चाहे वह किसी का मित्र ही क्यों न हो ?

यदि एक बार यह भी मान लिया जाये कि समाज में आपके ऐसे हितैषी भी हैं, जो किसी अवसर अथवा संयोग की सूचना देने में अपना समय खराब करने की उदारता बरत सकते हैं। तब भी तो जब तक वह सूचना देने के लिये आयेगा और आप तैयार होकर चलेंगे, तब तक वह संयोग अथवा अवसर आगे निकल चुकेगा और आप सिर्फ उसकी पीठ ही देख सकेंगे।

ऐसा होने पर भी कि आपका कोई हितैषी मित्र जो कि दीर्घ-दृष्टि वाला है और आपकी सफलता हृदय से चाहता है, किसी अवसर की सूचना इतने पूर्व दे गया है जितने में आप तैयार होकर यथा समय, यथा स्थान पहुँच सकें। यदि आप आलसी एवं दीर्घ-सूत्री है तब भी उस अवसर का उपयोग नहीं कर पायेंगे। आपका आलस्य दीर्घ-सूत्रता का सहारा पाकर उस बीच के थोड़े समय को भी बहुत समझ लेगा और निश्चिन्तता से पड़े रहने को मजबूर कर देगा। आप जल्दी न कर पायेंगे और यथा स्थान पहुँचकर देखेंगे कि आपको देर हो गई है। अवसर आपकी पहुँच के बाहर जा चुका है ! तत्परता के अभाव में आपने अपनी हानि ही की और उस मित्र को भी यह सोचने पर विवश किया कि आपको समय खराब करके सूचना देने जाना बेकार है और जिसका उसे हार्दिक दुःख होगा।

इस प्रकार अवसर खोते-खोते मनुष्य के मस्तिष्क से अवसरों की महत्ता निकल जाएगी और तब वह अधिक भाग्यवादी बनकर सदा के लिये असफलता में विश्वास करने लगेगा।

जिससे प्रमाद, आलस्य एवं दीर्घसूत्रता के दोष से अपनी तत्परता तथा कार्यक्षमता को शिथिल कर लिया है। यदि वह किसी समय जाकर अवसर को घेर भी लेता है तब भी वह अवसर बिगड़ैल घोड़े की तरह कमजोर हाथों से छूटकर जा सकता है। अवसर मिल जाने पर भी तो पुरुषार्थ के अनभ्यस्त लोग उसका लाभ नहीं उठा पाते।

सफलता चाहिए तो उद्योग, पुरुषार्थ तथा तत्परता के गुणों का विकास करना ही होगा। यह परिश्रमपूर्ण उद्योग घर बैठे-बैठे प्रतीक्षा करने से जाग्रत नहीं हो सकते इसके लिए कार्यक्षेत्र में उतरकर संघर्ष करना होगा। अभ्यास करना होगा। जो मनुष्य तत्परतापूर्वक कार्यक्षेत्र में डटा रहता है, उसके लिये संयोगों एवं अवसरों की कमी नहीं रहती क्योंकि कार्यक्षेत्र ही एकमात्र उनके आवागमन का स्थान होता है, जहाँ वे हर समय आते और जाते रहते हैं। जिस वस्तु का जहाँ मिलना सम्भव है वह वहीं मिलेगी, अन्यत्र बैठकर उसकी प्रतीक्षा करना अथवा खोजना अपनी अज्ञता का परिचय देना है।

अनेक लोगों की तत्परता एवं उद्योगशीलता साहस के अभाव में अनुपयोगी हो जाया करती है। उनमें परिश्रम करने की प्रवृत्ति तो होती है किन्तु आगे बढ़ने का नया और ऊँचा काम हाथ में लेने का साहस नहीं होता, निदान कोल्हू के बैल की तरह उसकी सारी जिन्दगी यथा स्थान चक्कर काटते-काटते समाप्त हो जाती है और उनके हाथ में उतना ही कुछ जीवन के अन्तिम क्षण में रह जाता है जो जीवन के प्रारम्भ में था।

सफलता तो आगे बढ़ने, कुछ नया करने अथवा पुराने को ऊँचा उठाने से ही मिलती है ? एक ही स्थान पर एक ही ढर्रे पर लुढ़कते रहने से सारा परिश्रम, सारी तत्परता उसी सीमित दायरे में समाप्त हो जाती है और प्रगति के नाम पर शून्य ही हाथ रहता है।

जिसमें आगे बढ़ने, कुछ नया करने अथवा ढर्रा बदलने का साहस नहीं है। अच्छा है कि वह प्रगति एवं उन्नति की आकांक्षा न करे। यदि वह ऐसा नहीं करता तो इसका कोई निश्चय नहीं कि उसकी अनाधिकार आकांक्षा उसके लिए एक अनुताप नहीं बन जायेगी।

यदि उन्नति की आकांक्षा है तो साहस संचय कीजिये और आगे बढ़िये, जो कुछ है भी वह जा सकता है, इस अनिष्ट आशंका को दूर भगाइये। संसार में कुछ खोकर ही कुछ पाया जा सकता है। खतरा पार करके ही विजय मिल सकती है। बीज गलाकर ही फसल प्राप्त हो सकती है। बिना साहस किए और खतरा मोल लिए न तो कोई आज तक आगे बढ़ पाया है और न आगे ही उन्नति कर सकेगा। उन्नति एवं प्रगति के इस नियम को प्रकृति किसी के लिए अपवाद बनाकर ईश्वरीय विधान में व्यवधान डालने का साहस नहीं कर सकती।

साहस संचय करने के लिए कहीं जाना नहीं होता। वह मनुष्य की अपनी आत्मा में निवास करता हुआ इस बात की प्रतीक्षा किया करता है कि कब हमारा स्वामी पैर आगे बढ़ाये और कब मैं उठकर अपना अस्तित्व प्रकट कर दूँ।

प्रगति पथ पर अपना कदम बढ़ाइए, आपका साहस साथ देगा। इस सत्य को, यद्यपि प्रमाण की आवश्यकता नहीं, तथापि यदि आप चाहते हैं, तो किसी ऐसे अवसर की याद कर लीजिए जिसकी सम्भावना से आप भयभीत हो रहे थे किन्तु जब वह आ ही गया तो आपने उसका डटकर मुकाबला किया था। यह क्या बात थी ? उस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संयोग का सामना करने का इरादा करते, कदम बढ़ाते ही आपका साहस आपके साथ हो लिया था ? यही साहसहीनता एवं आशंका, आपको तब भी तो रही होगी जब आप पहले-पहल अपनी वर्तमान स्थिति में उतरने के लिए बढ़ने लगे थे, किन्तु जब आप उसमें उतर ही गए तो आपकी सारी आशंका, सारा भय जाता रहा। आपके साहस ने आपका साथ दिया और आप निःशंक होकर अपना काम कर रहे। भय अथवा आशंका अनागत के प्रति होती है। समागत के प्रति नहीं और साहस का जागरण आगे बढ़ने पर ही होता है, ठिठकने अथवा पीछे हटने से नहीं। यह एक स्वाभाविक नियम है। इसे अपनी दुर्बलता, अयोग्यता अथवा साहसहीनता समझकर आगे बढ़ने से कदापि न रुकिये। प्रयत्न से जगाया हुआ एक बार का साहस फिर जल्दी सोता नहीं। यदि उसको निष्क्रियता की अफीम न खिला दी जाए। जो उन्नति चाहता है, प्रगति का आकांक्षी है वह जागे हुए साहस को सुलाने के लिए निष्क्रियता को प्रश्रय ही क्यों देगा ? आप यदि उन्हीं प्रगतिकांक्षियों में हैं तो कदम बढ़ाइये, साहस को जागने का अवसर दीजिए, आगे बढ़िए और आप अवश्य सफलता प्राप्त करेंगे।

और सब कुछ होते हुए अनेक लोग अदृढ़ता एवं अनिश्चय के कारण आगे नहीं बढ़ पाते। कभी-कभी तो उनकी यह दुर्बलता इस अभियान के रूप में आड़े आ जाती है कि ऊँह ! जल्दी क्या है ? मुझमें किसी बात की कमी नहीं, जब जो कुछ चाहेंगे कर डालेंगे ! मनुष्य का यह अति विश्वास भी उसे बहुधा कुछ करने नहीं देता। वह अपनी क्षमताओं के अभिमान में न हुए काम को भी हुआ ही समझता है। ऐसे अति विश्वासी लोग ढुलमुल हुआ करते हैं। एक काम को पूरा न करके बहुत कुछ एक साथ कर डालने के इरादे से दूसरा काम उठा लेते हैं और इस प्रकार उनका कोई कार्य पूरा नहीं हो पाता और वे प्रायः असफल ही रह जाते हैं।

अनेक लोग इस प्रकार ऊहापोही होते हैं कि ''यह करूँ अथवा वह'' करने में ही अवसर एवं समय गँवा दिया करते हैं। इसके अतिरिक्त अनेक लोग तो बहुत ही कमजोर होते हैं। काम प्रारम्भ किया, कदम बढ़ाया किन्तु जरा-सी कठिनाई आते ही पीछे हट जाते हैं। कमजोर निश्चय वाले लोग अनेक बार दूसरों के परामर्श पर ही निर्भर रहा करते हैं, जिसने जो बतला दिया उसी को करने के लिए चल पड़े। विचार-वैचित्र्य होने से हर आदमी—अपनी तरह से ही परामर्श देगा, तब ऐसी दशा में हर एक का परामर्श मानते रहने से कोई काम पूरा ही नहीं हो पाएगा। एकनिष्ठा के अभाव में सफलता की आशा करना दिन में स्वप्न देखने के समान ही है।

इस प्रकार के अनिश्चयी स्वभाव वाले लोग परावलम्बी ही होते हैं, उन्हें अपनी बुद्धि में न तो विश्वास होता है और न अपने निर्णय में पूरी आस्था। अनिश्चय एवं एकनिष्ठा के अभाव में आदमी अस्त-व्यस्त हाथ-पैर मारता हुआ अपनी सारी शक्ति को बिखेर देता है, जबकि किसी सफलता के लिये शक्तियों का संगठित एवं एकाग्र होना बहुत आवश्यक है।

सफलता पानी है तो दृढ़ निश्चयी बनिए। एक बार विवेकपूर्वक जो निश्चय कर लीजिए, उसे पूरा करने में अपनी सारी शक्तियाँ संगठित रूप से नियोजित कर दीजिए। निश्चय करने से पूर्व अपने हितैषियों, मित्रों एवं शुभचिन्तकों से परामर्श कर लेना ठीक हो सकता है किन्तु निश्चय हो जाने के बाद किसी के कहने से उसे बदलना अदृढ़ता का द्योतक होगा। अपनी क्षमताओं एवं योग्यता के अनुरूप जो काम उठाइए उसे पूरा करके ही मानिए। आपकी दृढ़ता निश्चय ही अपना कार्य सफल करेगी और आत्मविश्वास, योग्यता एवं सफलता में वृद्धि करेगी। जब दूसरे काम में भी यही अड़चनें, यही कठिनाइयाँ आ सकती हैं, तब उनके डर से करते हुए काम को छोड़कर नये सिरे से नया काम शुरू करने में कोई बुद्धिमानी नहीं है।

इस प्रकार निरालस्य होकर साहसपूर्वक तत्परता के साथ अडिग उद्योग करते हुए इस सिद्धान्त में आस्था रखिए कि पुरुषार्थ मेरा अधिकार है और फल परमात्मा का। आप अवश्य उन्नति करेंगे और जीवन में मनोवांछित सफलता के अधिकारी बनेंगे।

महान वे बनते हैं जो कठिनाइयों से डरते नहीं

उन निर्बलमना व्यक्तियों को महानता के लक्ष्य प्राप्त कर सकने की आशा नहीं करनी चाहिए, जो असफलताओं, बाधाओं, विरोधों एवं कठिनाइयों से डरते, घबराते हों। यह स्थितियाँ उस पथ के उपहार हैं, जो पथिक को स्वीकार ही करने होते हैं।

महानता इस जीवन में ही मिल जाए यह आवश्यक नहीं। प्रायः होता यही है कि महानता के मार्गगामियों को अपने जीवनकाल में तिरस्कार, उपेक्षा, आलोचना और विरोधों को सहन करना पड़ता है किन्तु जब वे अपना कर्त्तव्य पूरा कर संसार से चले जाते हैं, तब लोग उनकी महानता स्वीकार करते, जीवनगाथा कहते, लिखते और पढ़ते हैं। उनकी पूजा करते और उन्हें जीवन का आदर्श बनाते हैं।

ईसामसीह का पूरा जीवन कठिनाइयों, कष्टों, विरोधों, तिरस्कार तथा अत्याचार के बीच बीता। किन्तु वे अपने ध्येय पर डटे रहे। प्राण दे दिए किन्तु व्रत का त्याग नहीं किया। ईसा प्रेम, दया क्षमा का संदेश संसार को देने चले थे। कितना महान् और कल्याणकारी लक्ष्य था ? उसमें उनका किसी प्रकार का कोई स्वार्थ नहीं था ? वे मनुष्य के बीच फैले द्वेष, घृणा, आक्रोश तथा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संघर्ष से द्रवित हो उठे थे। वे नहीं चाहते थे कि मनुष्य, जो कि परमपिता परमात्मा के पुत्र हैं, इस प्रकार की दूषित प्रवृत्तियों के शिकार बन दुःखी, संतप्त तथा त्रस्त जीवन बितायें। यदि वह अपना अज्ञान दूर कर दें, सद्प्रवृत्तियों का मूल्य एवं महत्त्व समझें। प्रेम, दया, करुणा और क्षमा के दिव्य गुणों की शीतलता अनुभव करें, तो निश्चय ही अन्त में पिता के स्वर्गीय राज्य में स्थान पायेंगे। जीवन में भी सुख-शान्ति के लिये कलपते न रहें। उन्होंने उस दिव्य अनुभूति को अनुभूत किया था इसलिये विश्वास था कि प्रयत्नपूर्वक यदि भ्रम में भटकती मनुष्य जाति का अज्ञान दूर किया जा सके, संदेश दिया जा सके तो सभी मनुष्य उस स्वर्गीय अनुभूति को प्राप्त करके उसका सुख अनुभव कर सकेंगे।

इसी आशा-विश्वास के साथ वे अपना शीतल सन्देश लेकर मानवता की सेवा करने के लिए उतरे थे। उनकी उत्कट इच्छा थी कि हमारे मनुष्य भाई भी उस स्वर्गीय शांति को पायें, जो उन्हें मिली थी। ईसा का यह विचार कितना महान, निःस्पृह, निर्विकार एवं निःस्वार्थ था। इसमें कितना उपकार और मनुष्यों के प्रति मंगल भावना भरी हुई थी। किन्तु मनुष्यों ने उस आलोकदाता के साथ क्या व्यवहार किया ? इतना कष्ट, इतना क्लेश, तिरस्कार एवं त्रास कि उन्हें अनेक बार एकान्त में बैठकर रोना पड़ा, इसलिये नहीं कि उनको कष्ट दिया जा रहा है, बल्कि इसलिये कि आखिर मनुष्य जाति अपना हित सुनना-समझना क्यों नहीं चाहती ? यदि ईसा के स्थान पर कोई दुर्बल-मना व्यक्ति होता, तो वह यह कहकर अपना रास्ता लेता कि जब मूर्ख मनुष्य अपने कल्याण की बात सुनना-समझना ही नहीं चाहते तब मेरी क्या गर्ज पड़ी है, जो इन्हें समझाने की कोशिश करूँ और बदले में पत्थर खाऊँ।

किन्तु संसार के सच्चे हितैषी इस प्रकार कहाँ सोच पाते हैं ? वे एक बार अपने निर्विकार मनोमुकुर में जिस सत्य के दर्शन कर लेते हैं, उसका आलोक संसार को देने के लिए आजीवन प्रयत्न करते रहते हैं। वे विरोध अथवा तिरस्कार की परवाह नहीं करते क्योंकि उन्हें पता रहता है कि लोग जो कुछ प्रतिकूल कर रहे हैं, अज्ञानवश ही कर रहे हैं। यदि उनमें यह अज्ञान न होता तो उन्हें आलोक देने की आवश्यकता ही क्यों होती और क्यों मेरी आत्मा मुझे इस कठोर कर्त्तव्य के लिये कहती ? साथ ही यह विश्वास भी होता है कि मनुष्यों का यह अज्ञान आज नहीं तो कल अवश्य दूर हो जायेगा। मुझे 'आज ही' की जिद के साथ अपने कर्त्तव्य को बोझिल नहीं बना लेना चाहिये। मनुष्य, मनुष्य हैं वे एक दिन समझेंगे और सत्य के दर्शन करेंगे।

ईसा को सफलता की कोई जल्दी न थी, उन्हें चिन्ता थी अपने कर्त्तव्य पालन की। वे लगन और धैर्यपूर्वक अपने कर्त्तव्य में लगे रहे और उसकी पूर्ति में ही अपने प्राणों को उत्सर्ग कर दिया। ईसा जीवन भर अपने ध्येय में असफल रहे। किन्तु एक क्षण को भी विचलित न हुए। आज यह उनके धैर्य एवं निःस्वार्थ प्रयास का ही सत्फल है कि आधे से अधिक संसार उनका अनुयायी है। वह ईसा जिन पर जीवनकाल में पत्थर मारे गये, बड़े से बड़ा त्रास दिया गया, यहाँ तक कि जीवित क्रूस पर लटकाकर मार डाला गया। जीवनोपरान्त ईश्वर के समान पूजे और माने गये। आज उनका नाम संसार में महानतम व्यक्तियों में है।

महानता कोई सुख नहीं है, जैसा कि लोग समझते हैं। यह मनुष्य की जीवनकालीन सेवाओं, लोकमंगल की कामनाओं, प्रयत्नों, कष्टों, बलिदानों और ध्येयधीरता का प्रमाण-पत्र है, जो प्रायः उसके दिवंगत हो जाने के बाद संसार द्वारा घोषित किया जाता है। जीवनकाल में ही सफलता का हठ लेकर चलने वालों को यही उपयुक्त है कि वे या तो अपना कदम पीछे हटा लें अथवा अपनी मनोवृत्ति में सुधार कर लें।

महान् उद्देश्यों में सफलता जीवनकाल में नहीं मिलती, ऐसा नैसर्गिक नियम नहीं है। वह जीवनकाल में भी मिल सकती है। भगवान बुद्ध, महावीर, विवेकानन्द और महात्मा गाँधी प्रभृति सत्पुरुष इसके उदाहरण हैं। किन्तु महान् पथ पर चरण रखने वालों को सफलता-असफलता और उसके आगमन की चिन्ता से मुक्त रहकर ही अपने कर्त्तव्य में लगा रहना चाहिए। उसे जब आना है आ जायेगी। उसके विषय में सोचना और चिन्ता करना क्या ?

श्रेय-पथ पर आने वाली कठिनाइयों से घबराकर निराश, हताश, निरुद्योगी हो जाने वाले अपने लक्ष्य को नहीं पा सकते, संसार में ऐसे न जाने कितने कम-हिम्मत व्यक्ति हुए होंगे और आज भी होंगे, जो किसी लक्ष्य को पाने का इरादा लेकर चले होंगे किन्तु चार-छः कदम चलने पर कठिनाइयों का सामना होते ही पीछे हटकर बैठ रहे होंगे। ऐसे लोगों के उदाहरण तो नहीं बताये जा सकते क्योंकि साहसहीन व्यक्तियों का अंकन न तो समय के स्मरण-पट पर होता है और न वे स्वयं अपना प्रकाश करते हैं। महान् उद्देश्य को लेकर न चलना उतनी लज्जा की बात नहीं होती जितनी कि चलने के बाद कठिनाइयों के भय से रुक जाना अथवा पीछे हट जाना। समय के स्मृति-पट पर वे ही पुरुषार्थी व्यक्ति अंकित होते और लोक प्रेरणा के लिए उदाहरण बनते हैं, जो अपने श्रेय-पथ की बाधाओं, विघ्नों तथा कठिनाइयों से तिल-तिलकर जूझते हुए बढ़ते रहते हैं। अपनी इस शक्ति तथा साहस को सुरक्षित रखने के लिए वे इनकी शत्रु निराशा एवं निरुत्साह को स्वप्न में भी पास फटकने नहीं देते। ऐसे ध्येय-धीर, मनस्वी, वीर पुरुष पहाड़ जैसी असफलता की उपेक्षाकर कण जैसी सफलता पर नजर रखकर उत्साह एवं सक्रियता की जननी प्रसन्नता को विनष्ट नहीं होने देते। उनकी गणना के विषय बढ़े हुए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कदम होते हैं, रुके अथवा परिस्थितियों द्वारा पकड़कर पीछे हटाये हुए नहीं। लड़ाई के मैदान में कभी-कभी रुकना और पीछे भी हटना होता है। भय अथवा कायरता के वशीभूत होकर भागने के लिए नहीं बल्कि सँभलने, समझने और फिर तेजी से आगे बढ़ने के लिए। अब्राहम लिंकन को एक सौ आठ बार असफलता का मुख देखना पड़ा। हुमायूँ इक्कीस बार लड़ाई में हारा। प्रताप को जीवन भर लड़ना पड़ा और सुभाष की असफलता संसार की बड़ी सफलताओं के साथ लिखी गई। किन्तु क्या इन ऐतिहासिक पुरुषों ने कभी निराश अथवा हतोत्साह होकर हार मानी। यदि इनमें यह दुर्बलता रही होती तो आज उनका नाम इतिहास में न होता। सफलता असफलता की सुखद अथवा दुःखद भावना से परे कर्मठ कर्त्तव्यवादी ही महानता के शिखर पर चढ़कर अपने लक्ष्य की उपलब्धि किया करते हैं।

सफलता के लिए साधनों की नहीं साहस एवं संलग्नता की आवश्यकता होती है। अमेरिका के महान प्रेसीडेण्ट विल्सन को आज कौन नहीं जानता ? अमेरिका में गुलामी-प्रथा का विरोध करने वाले इस महापुरुष का नाम बड़े आदर से लिया जाता है। उन्होंने अपना जीवन विवरण देते हुए लिखा है—

"मैं एक अत्यन्त गरीब घर में पैदा हुआ था। घर में इतनी गरीबी थी कि दो-दो, तीन-तीन दिन भोजन के दर्शन नहीं होते थे। जब कभी अबोधावस्था में भूख से व्याकुल होकर किसी से रोटी माँगता था, तो वह भी नहीं मिलती थी। दस वर्ष की आयु में रोटी की तलाश में घर छोड़कर भागना पड़ा। अनेक मासों तक दर-दर की ठोकरें खाने के बाद एक साधारण-सी नौकरी मिली, जिसमें वेतन तो बहुत कम था किन्तु वर्ष में एक माह की छुट्टी मिलती थी। ग्यारह वर्ष तक उस नौकरी को करता रहा। वर्ष में एक माह की छुट्टी का अवकाश मैं पढ़ने में लगाया करता था। इस प्रकार ग्यारह वर्ष की नौकरी में मुझे केवल ग्यारह माह पढ़ने के लिये मिले, जिनका मैंने परिश्रमपूर्वक इतना उपयोग किया कि अच्छी-खासी योग्यता प्राप्त कर ली। अपने कर्त्तव्य कार्य को मैंने किस तत्परता से किया इसका प्रमाण यह है कि मालिक ने काम खत्म होने पर मुझे दो सौ रुपये मूल्य के जानवर इनाम में दिये, जिन्हें बेचकर मैंने वह धनराशि धरोहर के समान आगे के लिये सुरक्षित रख ली। मेरी इच्छा जीवन में तरक्की करने की थी। इसलिए मैं जी तोड़कर मेहनत करता और मजदूरी का एक-एक पैसा बचा लेने की कोशिश करता।"

"इक्कीस वर्ष की आयु तक मैंने बीस रुपये मासिक पर खेत जोतने, लकड़ी काटने, चीरने और ढोने का काम किया, जिसमें मुझे सूर्योदय से एक पहर रात गये तक काम करना पड़ता था किन्तु मैंने निराशा अथवा उत्साहहीनता को पास न आने दिया। इस बीच अवकाश के समय में मैं बराबर अध्ययन करता रहा और आगे उन्नति की युक्ति पर बराबर सोचता रहा, जिससे मैं इस जी तोड़ मेहनत की नौकरी के समय में भी एक हजार पुस्तकें पढ़ सका। अपने बढ़ाये हुए ज्ञान और बचायी हुई पूँजी को लेकर आगे बढ़ा और कोई स्वतन्त्र काम करने के विचार से सौ मील की दूरी पर नाटिक नामक कस्बे में मोची का काम सीखने गया। वहीं मैंने काम सीखकर अपना काम जमाया। मेरी उपार्जित दक्षता एवं शिक्षा ने मेरा साथ दिया और मैं शीघ्र अपने ईमानदार इरादों, विचारों तथा कर्मों से इतना लोकप्रिय हो गया कि वहीं विधान सभा के निर्वाचन में बहुमत पा सकने में सफलता प्राप्त की जोकि बढ़ती-बढ़ती अमेरिका के सम्मानित एवं उत्तरदायित्वपूर्ण पद तक जा पहुँची।"

अन्त में उन्होंने अपने जीवन का उदाहरण देते हुए कहा कि जो लोग उन्नति के लिए साधनों की कमी की शिकायत करते हैं, वे वास्तव में उन्नति चाहते नहीं और अपनी साहसहीनता के साथ अकर्मण्यता का परिचय देते हैं।

हम किसी से क्यों डरें ?

परमात्मा ने अनेक विभूतियों से सुसज्जित कर मनुष्य को इस धरती पर भेजा है। जिन मंगलकारी उपहारों को लेकर वह इस वसुन्धरा में अवतीर्ण होता है, वे इतने हैं कि एक-एक की खोज और गणना करने बैठें तो अतुल श्रम व समय लगाना पड़े। भावनाओं को व्यक्त करने के लिए जैसी बुद्धि व वाणी उसे मिली है, संसार के किसी अन्य जीव-जन्तु को उपलब्ध नहीं। संसार की मशीनें एक ही शरीर के सम्मुख हतप्रभ हैं। खाने, पीने, चलने, फिरने की स्वचालित मशीन और कोई भी ऐसी नहीं जैसी मनुष्य को प्राप्त है। पारस्परिक प्रेम और स्नेह, त्याग और आत्मोत्सर्ग, सौजन्य और सौहार्द्र, संगठन और सहानुभूति के बल पर वह चाहें तो इस धरती पर स्वर्ग उतारकर रख दें। इनसे भी बढ़कर श्रेष्ठ व अनुपम वस्तु उसे मिली है, वह है आत्मिक बल की अनुपम सम्पदा। इसे प्राप्त कर मनुष्य सचमुच देवता बन जाता है।

किन्तु कार्य-जगत् में जब हम इन उपहारों में से एक को भी अधिकतर जीवनों में फलित नहीं देखते तो बड़ा आश्चर्य होता है। इन महत्त्वपूर्ण अनुदानों का स्वामी होकर भी उसकी दीनता, हीनता देखकर बड़ी निराशा होती है। लगता है कि उसने इनका दुरुपयोग कर लिया। बजाय सुखी व समुन्नत जीवन बिताने के बेचारा क्लेश और क्लान्त परिस्थितियों में पड़ा। किसी प्रकार जीवन के दिन पूरे करता रहता है। इसका एक प्रबल कारण है, भय। भय से बढ़कर अनिष्टकारी दूसरा कोई मनोविकार नहीं। यह ऐसा महान् घातक शत्रु है, जो व्यक्ति की विकास-विजय को पराजय में, आशा को निराशा में, उन्नति को अवनति में क्षण भर में बदलकर रख देता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भय के दो रूप हैं—एक क्रियात्मक, दूसरा भावनात्मक। पहला कर्त्ता और परिस्थिति के स्थूल संयोग या संघर्ष की आशंका से होता है। रात के अन्धकार में डर जाना। चोर-बदमाश आदि किसी आततायी के आक्रमण आदि की आशंका को इस कोटि में माना जाता है। इससे शारीरिक, आर्थिक व व्यावसायिक क्षति सम्भव है। किन्तु दूसरी प्रकार का भय जो मनुष्य को देर तक उत्पीड़ित करता, घुलाता रहता है वह है मन का भय। इनके पीछे भी आधार क्रियात्मक हो सकते हैं, किन्तु ऐसे भय अधिकांश निराधार ही होते हैं। पहले से उतना नुकसान नहीं होता, क्योंकि वे घटना के अनन्तर ही समाप्त हो जाते हैं। किन्तु निरन्तर शारीरिक व मानसिक शक्तियों का शोषण करने वाला तो यह मन का भय ही होता है।

भयभीत होने का अर्थ है—आत्मबल की कमी, आत्मविश्वास की न्यूनता। आने वाली कठिनाई या दुर्घटना से आतंकित होने का ही अर्थ होता है कि उससे लड़ने, जूझने और संघर्ष का साहस नहीं है। यह मनुष्य का एक बड़ा दुर्गुण है कि वह बिना जाने-पहचाने केवल कागजी कस से, कपोल कल्पित मान्यताओं से, भयभीत रहे। भय की परिस्थिति के मूल तक पहुँचकर देखें तो वास्तविकता कुछ भी न निकलेगी। मानसिक दुर्बलताओं के अतिरिक्त भय का और कोई कारण नहीं। यदि कुछ हो भी तो उसे अपने सुदृढ़ मनोबल के द्वारा, विवेक और बुद्धि के माध्यम से सुलझाया जाना सम्भव है।

एक आदमी अँधेरे में पाँव धरता है तो आगे भूत खड़ा दिखाई देता है। बेचारा डर जाता है। होंठ सूख जाते हैं। छाती धोंकने लगती है, धैर्य छूटा कि भूत सवार हुआ। फिर जैसी कल्पना करते जाते हैं, भूत वैसी ही क्रियाएँ करने लगता है। पर एक दूसरा व्यक्ति थोड़ी हिम्मत बाँधता है, सारा साहस बटोकर कर आगे बढ़ता है, सोचता है देखें यह भूत भी क्या बला है ? आगे बढ़ता है तो हवा के कारण हिलती-डुलती झाड़ी के अतिरिक्त कुछ भी दिखाई नहीं देता। तब उसे पता चल जाता है कि भूत और कुछ नहीं अपना ही मानस पुत्र है, अपनी ही कल्पना की तस्वीर है। डर जाने के अस्सी फीसदी कारण ऐसे ही होते हैं। कई बार ऐसे समय आ सकते हैं, जब कोई हिंसक जीव या आततायी पुरुष द्वारा ऐसी घटना उपस्थित हो। पर यदि वहाँ भी मनुष्य साहस और शौर्य से काम ले तो उन्हें भी पार कर सकता है। कहावत है, "हिम्मताँ मरदे तो मददे खुदा।" अनेकों ऐसी घटनाएँ घटित हुई हैं, जब छोटे-छोटे बालकों ने खूँख्वार हिंसक जानवरों का मुकाबला करके उनसे अपनी आत्म-रक्षा की है। भयभीत होने का तो एक ही अर्थ है, अपने प्रतिद्वन्द्वी के आक्रमण के सामने सिर झुका देना। डर जाना, जान-बूझकर अपने आपको आपत्तियों के जाल में फँसा देना है।

छोटे-छोटे जीव-जन्तु, पशु-पक्षी घोर जंगलों में भी निर्भय विचरण करते रहते हैं। अनेकों भयदायक परिस्थितियाँ होते हुए भी उन्हें इस तरह निर्भीक घूमते देखते हैं, तो मनुष्य की क्षमता पर, शारीरिक व मानसिक शक्ति पर सन्देह होने लगता है।

भय मनुष्य की योग्यता कुण्ठित कर देने का प्रमुख कारण है। मानवीय योग्यताओं को देखते हुए भी यह आशा की जाती है कि लोग दिन-प्रतिदिन उन्नति की ओर, विकास की ओर बढ़ते चले जायें। आज जिस स्थिति में हैं कल उससे बेहतर स्थिति में हों।आज की अपेक्षा कल कुछ अधिक धनवान, बलवान, गुणी एवं शिक्षित हों। किन्तु इस तरह भयभीत रहकर अपनी विकास गति को शिथिल एवं लुंज-पुंज कर डालने की बात उपहासास्पद-सी लगती है। यह सब इसलिये होता है कि हम आने वाली घटनाओं तथा परिस्थितियों को बहुत बढ़ा-चढ़ाकर देखते हैं और अपनी शक्तियों को उनसे कमजोर मानते हैं। इससे पराक्रम तथा कर्त्तव्य-निष्ठा का ह्रास होता है। जिस कर्म के किए जाने की यथार्थ आवश्यकता थी, वह नहीं हो पाता। कई बार तो उसके स्थान पर अनुचित कार्य तक होते देखे जाते हैं। डरपोक मन, कायरता और सशंकित रहने की विनाशक वृत्तियों के रहते कोई महत्त्वपूर्ण कार्य पूरा कर पाने में समर्थ नहीं हो सकता। सफलता प्राप्त करना हो तो भय-रहित होकर उस कार्य में जुटना पड़ेगा अन्यथा मानसिक चेष्टाओं में वह एकाग्रता, लगन एवं तत्परता न बन पड़ेगी जिनकी कार्यपूर्ति के लिये आवश्यकता अनुभव की गई थी। छिन्न-भिन्न एवं दुर्बल मनोबल से कोई कार्य पूरे नहीं होते। इसलिए पहले साहस का अनुसरण करना होता है।

इस स्थिति पर जितनी जल्दी नियन्त्रण किया जा सके करना चाहिये। लगातार भय की स्थिति में आत्महीनता और दीनता के भावों का उदय होता है। मनुष्य दिन-दिन मानसिक दुर्बलता से ग्रसित होता चला जाता है। इससे बचने का एक ही उपाय है कि जब कभी ऐसा अवसर, ऐसी परिस्थिति आये जो भयोत्पादक हो, उसे ललकारकर संघर्ष किया जाये। भय केवल एक हीन कल्पनामात्र है। इसलिये आत्मबल संवर्द्धित करने वाले कार्यक्रमों को अपने जीवन में धारण करने से इससे सहज ही बचा जा सकता है।

आत्म-सुधार के क्षेत्र की सबसे बड़ी बाधा भी यही है। अविचारी लोगों द्वारा उपहास करने की क्षुद्रता से डरकर लोग संकोच में पड़ जाते हैं। आत्म-शोधन एवं आत्मविकास के इच्छुकों को बहुधा लोक निन्दा एवं जग-हँसाई के भय से अपना रास्ता छोड़ने को मजबूर होना पड़ता है। उन बेचारों ने कभी किसी को ऐसा साहस करते देखा, सुना नहीं होता। पुराने ढर्रे पर ही सबको चलते देखा होता है, इसलिये उन्हें हर नवीनता, चाहे वह कितनी ही हितकर अथवा श्रेयस्कर ही क्यों न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो अटपटी ही लगती है। स्थिति उस समय और भी कठिन हो जाती है, जब आस-पास आसुरी प्रवृत्ति के लोगों का बाहुल्य हो। ऐसे व्यक्तियों के द्वारा उपहास किये जाने से निरुत्साहित होकर प्रायः आत्म-सुधार के इच्छुक अपना सही रास्ता छोड़े देते हैं। प्रगति-पथ पर बढ़ते हुए कदम बिना मंजिल तक पहुँचे बीच में ही रुक जाते हैं।

भय सफलता का सबसे बड़ा बाधक है। साहसी और हिम्मतवान व्यक्ति हजार कठिनाइयों में भी विचलित नहीं होता। जीवन के किसी भी क्षेत्र में व्यवस्था एवं क्रम बनाये रखने के लिए सुदृढ़ मनोबल एवं साहसी होने की अत्यन्त आवश्यकता है। इनके अभाव में पग-पग पर भय उत्पादक परिस्थितियाँ रास्ता रोकती और पीछे लौटने को मजबूर कर देती हैं। विकास की गाड़ी रुके नहीं—सफलता की मंजिल तक पहुँचने में संदेह न रहे—इसके लिये भयभीरुता छोड़नी पड़ेगा। परिस्थितियों से संघर्ष करने की हिम्मत करनी पड़ेगी। तभी किसी महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष तक पहुँचना सम्भव हो सकेगा।

हम किसी से भी न डरें

स्वर्गीय लोकमान्य तिलक ने जब भारत की स्वतन्त्रता का नारा लगाया, "स्वराज्य हमारा जन्म सिद्ध अधिकार है और हम उसे लेकर रहेंगे" तब उनके साथ कुछ गिने-चुने व्यक्ति ही थे और दूसरी ओर संसार प्रसिद्ध ब्रिटिश शासन। किन्तु लोकमान्य का स्वर अनेकों का स्वर बना और एक दिन उस शक्तिशाली सत्ता को उखाड़ फेंका गया। भारत स्वतन्त्र हुआ। जोसेफ मेजनी ने भी इसी तरह इटली की स्वतन्त्रता का संकल्प किया और उस समय की तानाशाही, साम्राज्यवाद के विरुद्ध आन्दोलन उठाया, जिसके लिये मौत की सजा निश्चित थी। किन्तु मेजिनी का प्रेरणा मन्त्र बना और इटली स्वतन्त्र हुआ। महर्षि दयानन्द ने सामाजिक रूढ़ियों के विरुद्ध आवाज उठाई, धार्मिक अन्ध-परम्पराओं पर आघात किया और इसके लिये उन्हें कई बार विष दिया गया और इसी से उनकी अन्त में मृत्यु भी हुई। ईसा मसीह को अपने सुधार कार्य के लिये सूली पर चढ़ाया गया। इस तरह के असंख्यों उदाहरण हैं, जिनमें मनुष्य ने असम्भव से टक्कर ली और उसे सम्भव बनाया। मौत, पीड़ा, कष्टयुक्त यन्त्रणाओं को भी स्वीकार करके सत्य की आवाज लगाई और उनकी आवाज अनेकों की आवाज बन गई।

मनुष्य जितना निर्भय होगा उतना ही वह महान् कार्यों का सूत्रपात करेगा। निर्भयता उत्कृष्ट मानसिक स्थिति का परिणाम है। यह एक नैतिक सद्गुण है जो बड़े तप और त्याग से प्राप्त होता है। मन का जितना विकास होता जायेगा, उसी अनुपात से निर्भयता की उपलब्धि होगी। उत्कृष्ट आदर्श सिद्धान्तों की रक्षा के लिये जितना उत्सर्ग, त्याग, कष्ट-सहिष्णुता होगी, उसी के अनुसार निर्भयता प्राप्त होती जायेगी।

निर्भयता तीन प्रकार की होती है। विज्ञ निर्भयता, विवेकी निर्भयता और ईश्वरनिष्ठ निर्भयता।

विज्ञ निर्भयता—जीवन पथ पर आने वाले विभिन्न खतरों, विघ्न आदि की जानकारी, उनका परिचय प्राप्त कर मनुष्य जब उनके समाधान, इलाज का मार्ग जान लेता है, तो उनके सम्बन्ध में निर्भय हो जाता है। किन्तु जिन खतरों के विषय में वह जानता नहीं उनका भय सदैव बना रहता है। सर्पों के सम्बन्ध में जानने वाले उनके साथ उसी तरह खेल सकते हैं, जैसे बच्चा खिलौने के साथ। ऐसे लोगों के मन से सर्पों का भय दूर हो जाता है। किन्तु सिंह को देखकर वे भय से पीले पड़ जाते हैं। इसी तरह सरकस के खेल में इशारों पर सिंह को नचाने वाला कलाकार सर्प को देखकर भयभीत हो सकता है। इस तरह की निर्भयता मर्यादित है। जिन खतरों के बारे में मनुष्य जानकारी हासिल कर लेता है, उनसे निर्भय हो जाता है। किन्तु अन्य से नहीं।

विवेकी निर्भयता—इसमें परिपक्व विवेक से बुद्धि नियन्त्रित और शान्त रहती है। मन की वृत्तियों पर शासन होता है। भयावह परिस्थितियों में बुद्धि अशान्त, असन्तुलित नहीं होती। भय, शोक, चिन्ता आदि मानसिक वृत्तियाँ मनुष्य पर हावी नहीं हो पातीं। ऐसी स्थिति में उन परिस्थितियों से बचाव के प्रयत्न सूझने की सम्भावना रहती है और मनुष्य बच जाता है। जिन परिस्थितियों में एक साधारण मनुष्य असन्तुलित हो उनसे हार बैठता है, निर्दिष्ट पथ से भटक जाता है, उन्हीं में एक विवेकशील व्यक्ति अपना मार्ग निकालकर आगे बढ़ जाता है। इससे मनुष्य अनावश्यक और ऊट-पटांग साहस भी नहीं करता। अतः फिजूल के खतरों में पड़ता भी नहीं।

ईश्वरनिष्ठ निर्भयता—इसके लिये किसी बाह्य सहायता, साधनों की आवश्यकता नहीं होती। जीवन में ईश्वर के प्रति उसकी सर्वव्यापकता, सर्वशक्ति सम्पन्नता आदि के प्रति दृढ़निष्ठा, गहरी आस्था, अडिग विश्वास जितना बढ़ेगा उतना ही मनुष्य निर्भर होता जायेगा। ईश्वरनिष्ठ निर्भीकता के आधार पर ही संसार के अधिकांश महत्त्वपूर्ण कार्य पूर्ण हुये हैं। यह मनुष्य को पूर्ण निर्भय बनाती है किन्तु यह दीर्घकालीन अभ्यास, पुरुषार्थ और भक्ति से ही प्राप्त होती है। अपने साधनों, चातुर्य आदि पर निर्भय व्यक्ति शत्रु से भी मिलने में बड़ी सावधानी बरतते हैं किन्तु ईश्वरनिष्ठ तो सभी से सीधा व्यवहार रखता है। दिखावट, बनावट की कोई जगह नहीं रहती। ईश्वर पर अनन्य निष्ठा से मनुष्य पूर्ण रूपेण निर्भय बन जाता है क्योंकि वह अनन्त, व्यापक, निर्विकारी सत्य से परिचय कर लेता है।

निर्भयता मनुष्य की प्रगति और विकास का मार्ग खोल देती है। मनुष्य का विकास और प्रगति इस बात

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर निर्भर रहती है कि वह जीवन में आने वाली उलझनों, कठिनाइयों का समाधान किस तरह करता है ? निर्भीकता इन परिस्थितियों में महान् शक्ति, उत्साह, आशा, प्रेरणा की स्रोत बन जाती है। कठिनाई, उलझनों, अवरोध के बीहड़ पथ में यदि मनुष्य का कोई सहारा साथी है तो वह है निर्भीकता। निर्भीकता ही उसके पैरों को गति देती है, हृदय में उत्साह, प्रसन्नता पैदा करती है। नेत्रों में आशा की चमक पैदाकर देती है। इतना ही नहीं एक की निर्भीकता अनेकों का प्रेरणासूत्र बन जाती है।

यूरोप में जहाँ पादरियों और उनकी अन्ध परम्पराओं का खण्डन करने पर जीवित जला देने की सजा थी, 'लूथर' नाम के एक निर्भीक सत्यान्वेषी ने पादरियों के अधार्मिक कृत्य और स्वर्ग के टिकट बेचने आदि के खिलाफ आवाज उठाई। इस पर उसे पोप का कोपभाजन बनना पड़ा। न्यायालय में उसे क्षमा माँगने को कहा गया किन्तु निर्भीक लूथर ने अपने सत्य पर अटल रहकर क्षमा माँगने से इन्कार कर दिया। उसे मरवाने का प्रयत्न किया गया। किन्तु लूथर बच गया लूथर के निर्भीक विचार असंख्य लोगों के विचार बन गये और प्रोटेस्टेन्ट धर्म का प्रसार हुआ। धार्मिक अन्ध विश्वास के प्रति लोग सतर्क हो गये।

निर्भीकता का भाव संक्रामक होता है। नैपोलियन बोनापार्ट जब अपनी सेना के बीच रहता था तो उसकी सेना अजेय रहती थी। प्रत्येक सिपाही अपने आपको नैपोलियन के समान ही शक्तिशाली समझता था। नैपोलियन की सफलता का आधार निर्भीकता थी। वह विश्वासपूर्वक कहता था "वह गोली अभी नहीं बनी जो नैपोलियन को मारेगी।"

निर्भयता, व्यक्ति समाज तथा राष्ट्र की सबसे बड़ी सम्पत्ति है। आगामी पीढ़ियों के लिये बहुत बड़ी धरोहर है। **महात्मा गाँधी** ने लिखा है, "सचमुच वह राष्ट्र महान् है, जहाँ के लोग मौत के तकिए पर अपना सिर रखकर सोते हैं।" जिसने मौत का डर तोड़ दिया उसे कोई डर नहीं।

क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्तोतिष्ठ परंतप

परमात्मा सरल, दयालु और भक्त-वत्सल तो है पर वह शौर्य, वीर्य संयुक्त भी है। सृष्टि संचालन की सूक्ष्म गतिविधियों पर ध्यान जमाकर देखा जाये तो पता चलेगा कि वह कितना निर्भीक है ? विश्व की व्यवस्था के लिये वह कठोर से कठोर काम भी निडर और निशंक होकर किया करता है।

माता, बूढ़ा बाप, प्यारे भाई-बहिन हाय-हाय कर चिल्लाते रह जाते हैं और वह अच्छे, स्वस्थ, सुन्दर, जवान बेटे को क्षणभर में उठाकर ले जाता है। तूफान आता है तो सहस्रों प्राणियों को वह क्षणभर में तहस-नहस कर डालता है। भूचाल के प्रकोप सैकड़ों मील तक के ऐश्वर्यशाली नगरों, भवनों, अट्टालिकाओं को क्षार-क्षार कर धूल-धूसरित बनाकर रख देते हैं। पिछले दिनों समुद्र का तूफान मचल उठा और जब वह शान्त हुआ तो पता चला कि सागर के प्रकोष्ठ में बसे हुए मद्रास के समीप धनुष्कोटि में केवल एक बतख और एक गाय बची है।

वह जब चाहता है एक देश को दूसरे देश से लड़ा देता है। लाशों से जमीनें पट जाती हैं, देखने वालों के दिल दहल जाते हैं पर वह यह दृश्य देखकर भी विदीर्ण नहीं होता। भेड़िया बकरे को, शेर-बैल को पकड़कर फाड़ डालता है और वह चुपचाप इस विश्व व्यवस्था को देखकर हँसा करता है। वह सर्व शक्तिमान परमात्मा शक्ति का ही खेल किया करता है, इसी में उसे आनन्द मिलता है तभी तो वह अर्जुन से कहते हैं—

कुतस्त्वां कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम्।

अनार्यमजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन॥

क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्वय्युपपद्यते।

क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्तोत्तिष्ठ परंतप॥

—गीता २/२-३

अर्थात् हे अर्जुन ! तुझे इस विषम स्थल पर यह अज्ञान किस हेतु से प्राप्त हुआ ? क्योंकि यह न तो श्रेष्ठ पुरुषों द्वारा आचरण किया गया है, न स्वर्ग और कीर्ति को देने वाला है इसलिए तू नपुंसकता को मत प्राप्त हो, यह तेरे योग्य नहीं है। हे परंतप ! तू हृदय की दुर्बलता का परित्याग कर और युद्ध के लिये तैयार हो जा।"

मनुष्य-जीवन में कई बार ऐसी विषम परिस्थितियाँ आती हैं, तब वह एक निर्णय सरलता से नहीं कर पाता। श्रेय के लिये, शक्ति प्राप्ति के लिये, विजय और सफलता के लिये वह कोई उद्योग करना चाहता है पर सांसारिक मोह, माया, आत्मिक दुर्बलता, निराशा और असफलता का भय उसे वह कार्य न करने से रोकता है। यह निराशा, उद्योगहीनता और विमुखता ही मनुष्य जीवन की दुर्बलता है, जो मनुष्य को आगे बढ़ने से रोकती है। सामान्यजन इन्हीं में फँसकर अपने विशाल जीवन का एक छोटा-सा वृत्त बनाकर रह जाते हैं और अपरिमित आनन्द, उल्लास, सफलता और यश से वंचित रह जाते हैं।

सफलता का द्वार उन लोगों के लिये है जो आशा, उत्साह, हिम्मत और शक्तिपूर्वक द्वार पर बैठी हुई दुर्बलता की सिंहनी को पछाड़ सकते हैं। जिनके मन में उत्साह नहीं, आशा नहीं और संघर्षों से लड़ने की चाह नहीं उनके लिये संसार में सर्वत्र डर ही डर, असफलता ही असफलता है।

अर्जुन चाहता तो था कि मेरा राज्य मुझे मिल जाये। शक्तिशाली दुर्योधन उसे दबाये हुए था। वह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खुलकर शत्रुता वरत रहा था, पर अर्जुन था कि उन प्रतीक दुर्बलताओं को अपना सगा-सहचर सम्बन्धी मान रहा था, उन्हें मारने के लिये शस्त्र उठाने से डर रहा था। लेकिन इससे उसे राज्य मिलने वाला नहीं था। भगवान कृष्ण ने उससे कहा—अर्जुन तू युद्ध कर, इन दुर्बलताओं को परास्त कर, यह मत सोच कि यह सब मेरे द्वारा हो रहा है, वरन् ईश्वर की इच्छा मानकर तू इन बुराइयों के विरुद्ध संघर्ष कर, तेरे न मारने पर भी इनका अन्त होगा ही इसलिये पाप-पुण्य के डर से मत हिचक तू वीरोचित कर्म कर।

मनुष्य जीवन में भगवान कृष्ण की यह प्रेरणाएँ धारण कर उसे कीर्तिवान बनाया जा सकता है पर यह केवल हिम्मत वालों के लिये सम्भव है। आत्म-साधना के लिये मोह, ममता, अहंता का परित्याग करना ही होता है। शैक्षणिक योग्यता का प्रमाण-पत्र पाने के लिये असफल होने का भय छोड़ना ही पड़ता है। पूँजी कहीं डूब न जाय।'' इस डर को निकालकर कोई व्यक्ति जोखिम उठाने को तैयार नहीं होता, तब तक वह धनवान और उद्योगपति नहीं हो सकता। यश, लक्ष्मी, सफलता और सिद्धियाँ साहसी व्यक्तियों को मिला करती हैं। जो लोग प्रारम्भ की छोटी-छोटी उलझनों से ही नहीं निबट सकते। ऐसे नपुसंक व्यक्तियों के लिए आध्यात्मिक सफलता का मार्ग उतना ही कठिन है, जितना एक बच्चे के लिये हिंसक जन्तुओं वाले वन में प्रवेश करना।

घर में जेवर रखा रहता है और भी सैकड़ों वस्तुएँ होती हैं, जिन्हें बेचकर कोई उद्योग प्रारम्भ किया जा सकता है, पर कमजोर मन उतना भी करने से डरता है। केवल इच्छाएँ बड़ी भारी बना ली जाती हैं। बहुत धनैश्वर्य की कल्पना तो होती है पर खतरे का सामना करने को कोई तैयार नहीं होता। परीक्षा के बिना पदोन्नति रुकी पड़ी रहती है पर बड़ी उम्र हो जाने, घर से समय नहीं मिलने, ऐसी बहानेबाजी करने से वह परिस्थितियाँ ज्यों की त्यों पड़ी रहती हैं। सामाजिक जीवन में तप, त्याग, आत्मानुशासन, साहस और संघर्ष द्वारा नेतृत्व, पद, प्रतिष्ठा के सैकड़ों अवसर आते हैं पर लोग यह सब करने को तैयार नहीं होते। केवल बैठे-बैठाये इच्छापूर्ति की कल्पना किया करते हैं। ऐसे कायर-कापुरुष व्यक्तियों को आज तक न कभी सफलता मिली है और न आगे मिल सकती है।

वीर-भोग्या वसुन्धरा, धरती वीरों के भोग के लिये बनी है। परमात्मा किसी को न कुछ दे सकता है न किसी से कुछ लेता है, वह द्रष्टा मात्र ही है, उसकी सृष्टि का आनन्द और लोग उठाते हैं। यह कहना चाहिये कि वह स्वयम् ही वीरता के रूप में सांसारिक सुखैश्वर्यों का भोग करता है।

यह जीवन-संग्राम है। इसमें जो युद्ध की सी तत्परता व्यक्त नहीं करता वह हार जाता है पर जो प्रयत्न और पुरुषार्थ का गाण्डीव उठाकर रणोद्यत हो जाता है, वही अन्त में विजय पाता है।

इन्द्रियों को मारना पड़े तो मारना चाहिए, भीतर से यह अपने सगे-सम्बन्धी जैसी लगती हैं पर हैं पक्की शत्रु। इनका दमन करना चाहिये। भय, निराशा, निर्बलता, अस्वस्थता, क्षणिक सुखों की आसक्ति, आलस्य, अनुत्साह, असफलता का भय यह दुर्बलताएँ ही मनुष्य की शत्रु हैं, इनसे डरना नहीं, लड़ना चाहिए। लड़ने वाला ही अन्ततः विजेता होता है।

समान गुणों से प्रेम इस संसार का अटल नियम है। चोर की दोस्ती चोर से होती है, जुआरी, जुआरी के पास बैठता है। खिलाड़ी की खिलाड़ी और पण्डितों की मित्रता पण्डितों से होती है। परमात्मा का भी नियम ऐसा ही है वह स्वयं वीर है, बलयुक्त, शक्तिमान है। इसलिये वह अपने पुत्र-मनुष्य को भी इन गुणों से युक्त देखना चाहता है। जिस मनुष्य में इतनी हिम्मत होती है कि वह संसार की उथल-पुथल, तूफानों की भड़क और बिजली की तड़क में भी घबराये नहीं, जो घमासान जीवन-संग्राम में एक योद्धा की तरह तटस्थ होकर लड़ता है, वही उसका अनुग्रह प्राप्त करता है, उसी को यश और सम्मान भी इस संसार में मिलता है। भौतिक सफलताएँ तो उसकी चरणदासी होती हैं, उनकी कौन परवाह करता है ?

हम धैर्य और साहस के साथ ही आगे बढ़ें

जीवन का कोई क्षेत्र भी क्यों न हो, उसमें सफलता प्राप्त करने के लिए क्रमिक प्रयत्न करना होता है। एक साथ सहसा छलाँग लगाकर कोई भी सफलता के उच्च-शिखर पर नहीं पहुँच सकता और न पहुँचा ही जा सकता। प्रत्येक बात की एक विधि और एक क्रम होता है, उसी के अनुसार चलने से सफलता सम्भव हो सकती है। क्रम का उल्लंघन करने से लाभ के स्थान पर हानि ही होती है। शक्ति का अपव्यय होता है, निराशा की वेदना सहन करनी पड़ती है और उत्साहों में प्रशमन आता है, जीवन गति अस्त-व्यस्त होकर बोझिल बन जाती है।

उदाहरण के लिए शिक्षा को ले लीजिए, विद्यार्थी पढ़ता है, मानिए एम. ए. की ऊँची उपाधि पाने के लिए। उसका लक्ष्य एम. ए. पास करना होता है। उसको वर्णमाला से शुभारम्भ कराया जाता है। धीरे-धीरे वह क्रमपूर्वक आगे बढ़ता है। चतुर अध्यापक उसके उस क्रम-विकास पर बड़ी पारखी दृष्टि रखते हैं और यह देखते हैं कि विद्यार्थी पाठों का नियमित क्रम छोड़कर अक्रमिक तो नहीं होता जा रहा है। कहीं वह पहले पाठ में कच्चा होने पर भी अगले पाठ पर तो नहीं जा रहा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। यदि ऐसा होता है तो वह उसको रोक देता है। पिछला पाठ पक्का करने को विवश करता है। विकास की यही पद्धति है। पिछले पाठों के आधारों पर ही अगले पाठ स्थिर होते हैं।

यदि पहले पत्थर कमजोर होंगे तो सारा निर्माण निर्बल होता चला जायेगा। पिछला पाठ तो कच्चा छूट ही जायेगा, अगला पाठ भी आधार-भूमि न होने से हृदयंगम नहीं किया जा सकता। निदान विद्यार्थी न इधर का रह जायेगा और न उधर का। देखने में शिक्षा पाता हुआ भी अशिक्षित जैसा ही रह जायेगा। जो ज्ञान पूरा और पक्का नहीं होता, वह न होने के समान ही है। बल्कि अधूरे और कच्चे ज्ञान से लाभ के स्थान पर हानि ही अधिक होती है।

इसी क्रमिकता का महत्त्व जानने वाले अध्यापक ही नहीं बहुत-से बुद्धिमान अभिभावक भी विद्यालय में पता लगाकर और शिफारिश करके अपने बच्चे को अगली कक्षा में चढ़ाने के लिए रुकवाकर पिछली कक्षा का ज्ञान पूरा करने के लिए उसी में रहने देते हैं। वे जानते हैं कि यदि बच्चा पिछली कक्षा का ज्ञान पूरा किये बिना अगली श्रेणी में जायेगा तो उसका आधार निर्बल होता चला जायेगा और इस प्रकार उसकी शिक्षा असफल हो जायेगी। क्रमिक विकास ही जीवन का सच्चा एवं सार्थक विकास होता है। इसकी उपेक्षा करने वालों को सफलता के नाम पर शून्य ही हाथ आता है।

बात को और अधिक सरलता से समझने के लिये एक-आध और उदाहरण ले लीजिए। व्यापार का क्षेत्र ले लीजिए। यह जो बड़े-बड़े उद्योग-धन्धे दिखलाई देते हैं, यह सहसा यों ही इसी विशाल रूप में स्थापित नहीं हो गये। प्रारम्भ में इनका आकार बहुत छोटा रहा है और काम भी थोड़ा रहा है। इनके संचालकों ने धैर्यपूर्वक छोटी-छोटी मशीनों, साधनों और आदमियों से इन्हें शुरू किया था। थोड़ा-थोड़ा माल बनाया था और क्रम-क्रम से बाजार बनाया था।

यदि इनको सहसा ही यों ही विशाल रूप में खड़ा करके चलाने का प्रयत्न किया जाता तो न तो इनका सुचारु संचालन हो पाता और न नियन्त्रण। एक भयानक फैलाव और अस्त-व्यस्तता फैल जाती और तब उसको व्यस्थित रूप दे सकना असम्भव हो जाता। सारे काम बिगड़ जाते और उद्योग असफल हो जाता। उद्योग के क्षेत्र में बहुत-से उतावले आज भी इसी अक्रमिकता के कारण नित्य असफल होते देखे जाते हैं।

ऊपर छत पर चढ़ने का इच्छुक ऐसा कौन-सा व्यक्ति होगा, जो नसेनी के डण्डों पर क्रम-क्रम से पाँव रखकर न चढ़ता हुआ, उनका उल्लंघन करके एक साथ ऊपर चढ़ जाने का प्रयत्न करेगा। वह जानता है ऊपर चढ़ने का नियम ही एक-एक डण्डे पर पैर रखकर चढ़ने का है। जो ऐसा न करके इस नियम का व्यतिक्रम करता है और सहसा छलाँग लगाने का उपक्रम करता है, वह निश्चय ही नीचे गिरकर अपने हाथ-पैर तोड़ लेने की तैयारी करता है। विकास में क्रमबद्ध प्रगति का नियम अनिवार्य है। उसका व्यतिक्रम करके लक्ष्य की प्राप्ति कर सकना सम्भव नहीं।

यह नियम जब साधारण भौतिक उपलब्धियों में अनिवार्य है तो आध्यात्मिक प्रगति तो और भी कठिन तथा नियमसाध्य है। इस क्षेत्र में प्रगति करने के लिए तो और भी धैर्य, सावधानी तथा क्रमबद्धता का विचार रखना होगा। उच्च-कोटि की आध्यात्मिक कक्षाओं में क्रमिक विकास करते हुए ही आगे बढ़ा जा सकता है। उतावली करने से जरा भी काम न चलेगा। अध्यात्म की आत्मिक कक्षा का तीसरा नम्बर है। पहली दो कक्षाएँ शरीर और मन की हैं।

इन दोनों को पहले क्रमपूर्वक उत्तीर्ण करना होगा, उसके बाद आत्मा की आध्यात्मिक कक्षा में प्रवेश सम्भव होगा। जो यह चाहता है कि शरीर और मन के क्षेत्रों की उपेक्षा करके आत्मा के आध्यात्मिक क्षेत्र में शीघ्र से पहुँच जाये तो वह अनहोनी बात चाहता है। उसकी यह असंगत इच्छा पूरी नहीं हो सकती। उच्च-कोटि की आध्यात्मिक कक्षा में पहुँचने के लिये की जाने वाली साधना का प्रारम्भ शरीर क्षेत्र से ही करना होगा।

शरीर और मन का क्षेत्र जब तक आध्यात्मिक साधना के अनुरूप न सुधारा जायेगा, तब तक ईश्वर दर्शन, आत्म-साक्षात्कार, समाधि, कुण्डलिनी जागरण आदि की सिद्धिमूलक बात सोचना व्यर्थ होगा। योगशास्त्र के अध्येता अच्छी तरह जानते हैं कि योग का प्रतिपादन करने वाले आचार्यों ने योग के जो सिद्धान्त प्रतिपादित किये हैं, उनमें क्रमिक विकास के नियमों को प्रधानता दी है। उदाहरण के लिये, पातंजलि और हठयोग ले लीजिए। यह दोनों योग बड़े शक्तिशाली और उच्च-कोटि के हैं। महर्षि पातंजलि ने योग के जो आठ अङ्ग प्रतिपादित किये हैं, उनका क्रम इस प्रकार रखा है—यम, नियम, आसन, प्राणायाम और फिर प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि। इनमें यम आदि पहले चार अंङ्ग शरीर-शोधन से सम्बन्धित हैं और बाद के प्रत्याहार आदि मन के शोधन से सम्बन्धित हैं।

इसी प्रकार हठ-योग में भी साधना का जो क्रम रखा गया है, वह इस प्रकार है—नेति, धौति, वस्ति, न्यौली, बज्रोली, कपाल-भाति। प्रथम षट्—कर्म और तदुपरान्त षट्-चक्र वेधन और कुण्डलिनी जागरण आदि का क्रम आता है। स्पष्टतया पूर्व के षट्-कर्म बाह्य-जीवन के परिशोधन के लिए हैं और बाद की साधना मानसिक श्रेणी की है। योग-साधना में इस अनिवार्य क्रम का व्यतिक्रम करने वाले साधकों को न केवल असफल ही होना पड़ता है बल्कि बहुत बार तो वे अस्त-व्यस्त मनोदशा वाले हो जाते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह बात मान लेने में जरा भी संकोच नहीं होना चाहिए कि आज हम सबका बाह्य जीवन बड़ा ही अस्त-व्यस्त, अव्यवस्थित एवं अवांछनीय दशा में चल रहा है। यही कारण है कि जीवन-क्षेत्रों में बहुधा असफलता का ही सामना करना पड़ रहा है। उन्नति और प्रगति के नाम पर हम कुछ कदम भी आगे नहीं बढ़ा पा रहे हैं। व्यावहारिक जीवन की अव्यवस्था एवं अस्त-व्यस्तता हमारी हर साधना को निष्फल बनाती चली जा रही है। हम आध्यात्मिक साधना करते, पूरे समय प्रयत्न भी करते, परिश्रम एवं प्रसार से भी मुँह नहीं मोड़ते, तब भी देखते यही हैं, जहाँ के तहाँ पड़े हुए हैं, जरा भी आगे नहीं बढ़ पा रहे हैं।

इस असफलता का क्या कारण है ? यही कि हम अपना बाह्य जीवन ठीक न करके अक्रमिक रूप से साधना में जुट पड़ते हैं। ''साधना द्वारा आत्म-बल प्राप्त कर जीवन लक्ष्य की ओर अग्रसर हो सकने की स्थिति में पहुँच सकना तभी सम्भव है, जब प्रारम्भिक भूमिका के रूप में बाह्य-जीवन को संतुलित, व्यवस्थित एवं शुद्ध बनाया जाय।'' इस नियम की ओर जरा भी ध्यान नहीं देते।

जो विद्यार्थी चतुर होते हैं और चाहते हैं कि निश्चित रूप से अच्छी श्रेणी में उत्तीर्ण हों, वे परीक्षा का प्रश्न-पत्र पाते ही सबसे पहले उन्हीं प्रश्नों को उठाते हैं, जो अपेक्षाकृत अधिक सरल और उनके अधिकार के होते हैं और हल पहले उन्हीं को करते हैं परीक्षा में पास होने का यही उचित और सरल नियम है। इसके विपरीत जो विद्यार्थी उतावले अथवा अचतुर होते हैं, वे ऐसी खोज-बीन नहीं करते। प्रश्न-पत्र पाते ही सहसा पहले प्रश्न से ही उत्तर लिखने में लग जाते हैं। निदान कठिन-कठिन प्रश्नों में लगे-लगे सारा समय खो देते हैं और तब वे सरल प्रश्न भी नहीं कर पाते, जिनको वे अधिकारपूर्वक आसानी से कर सकते थे। फल यह होता है कि वे उत्तीर्ण होने लायक अंकों से भी वंचित रह जाते हैं। यही बात उतावले साधकों के विषय में भी होती है। वे तन, मन की सरल साधना छोड़कर कठिनतर आत्मिक साधना में प्रवृत्त हो जाते हैं और सोचते हैं कि आत्म-विकास हो जाने पर शरीर और मन का सुधार तो आप ही आप हो जायेगा। यह विश्वास गलत तथा भ्रमपूर्ण है। आत्म-विकास का क्रम शरीर, मन और तत्पश्चात् आत्मा है, न कि आत्मा, मन और तन। उल्टे मार्ग पर चलकर आज तक क्या कोई लक्ष्य पर पहुँच सका है ?

सहसा आत्म-परिष्कार में लगने से पूर्व शरीर और मन को सुसंतुलित एवं परिष्कृत करना चाहिए, क्योंकि सूक्ष्म आध्यात्मिक शक्तियों को जाग्रत करके अलौकिक सिद्धि पाने की अपेक्षा; यह अधिक सरल एवं सुकर है। यह ठीक भी है और नियमानुकूल भी। जो तन, मन ही वश में न कर पाया, वह आत्मा पर क्या अधिकार कर पायेगा ? सरल कार्यों में सफलता प्राप्त करने के उपरान्त ही कठिन कार्यों का भार उठा सकना सम्भव होता है। पहले सरल प्रश्न करिये और तब कठिन प्रश्न हाथ में लीजिए, तभी उत्तीर्ण होने लायक अंक पा सकेंगे, अन्यथा नहीं।

यदि अध्यात्म की उच्च कक्षा में पहुँचने की सच्ची जिज्ञासा है, यों ही खिलवाड़ के रूप में साधना का आश्रय नहीं ले रहे हैं, तो उसका शुभारम्भ शरीर क्षेत्र से करिये। अपना आहार-विहार, रहन-सहन, शयन-जागरण, श्रम, संयम, ब्रह्मचर्य आदि का पूरा-पूरा ध्यान रखिये। अपनी दिनचर्या तथा जीवन-गति अधिकाधिक प्रकृति के अनुकूल बनाइये। आरोग्य और जीवन अवधि को दीर्घ तथा सुनिश्चित करिए। रोगों और व्याधियों की सम्भावना से मुक्त एवं निश्चिन्त बनिये और तब इस प्रकार, शरीर गति पर पूरा नियन्त्रण करने के बाद मन का परिष्कार करिए। उसे अधिकाधिक प्रसन्न स्वभाव वाला बनाइए, प्रयत्नपूर्वक उसके मल-विक्षेप आदि विकार निकाल डालिये। उसमें सद्विचारों, सद्भावनाओं एवं सदाशयता का समावेश कीजिए और इन तन, मन के दोनों साधनों को आपस में अनुकूलतापूर्वक जोड़कर सत्कर्मों के साथ आत्मा की आध्यात्मिक साधना की ओर अग्रसर होइये। तभी सफलता की आशा की जा सकती है, अन्यथा नहीं। जो निश्चित क्रम व्यवस्था को बिगाड़ कर छलाँग लगाने का प्रयत्न किया करते हैं, वे बहुधा असफल ही होते हैं। उतावले अथवा अक्रमिक व्यक्ति अव्यवस्थित साधनों के फलस्वरूप बहुत बार अपना व्यावहारिक जीवन भी बिगाड़ लेते हैं, आध्यात्मिक उन्नति की तो बात ही क्या ? अस्तु क्रमपूर्वक सावधानी से आगे की ओर बढ़िये। आप अवश्य सफल होंगे, सिद्धि प्राप्त करेंगे।

जीवन से भागो नहीं, समझदारी से जियो

हमारे सामने विस्तृत संसार फैला है। उसमें फूल हैं, काँटे भी हैं। पहाड़ हैं, गहरे समुद्र भी। मैदान हैं और ऊबड़-खाबड़ घाटियाँ भी। विविधतापूर्ण संसार में हर वस्तु का विरोधी भाव विद्यमान है। गुण हैं तो दुर्गुण भी, अच्छाइयाँ भी हैं, उनके बिना भलाई की कल्पना की ही नहीं जा सकती थी।

माना बुराइयाँ अधिक हैं, पर क्या उनसे भागकर संसार की शेष बहुत-सी शानदार, सन्तोषप्रद और श्रेयस्कर परिस्थितियों से मुँह मोड़ लेना चाहिये ? मनुष्य जीवन जैसी पुरुषार्थी विभूति को कलङ्कित करना चाहिए ?

सन्त कन्फ्युशस बड़े सबेरे एक बार पद-यात्रा कर रहे थे। यात्रा करते-करते वे निर्जन स्थान में पहुँचे जहाँ एक-दूसरे महात्मा पेड़ की छाया में लेटे विश्राम कर रहे थे। कन्फ्युशस ने पूछा—'महात्मन् ! हरी-भरी बस्ती को छोड़कर आप यहाँ निर्जन एकान्त में क्यों पड़े हैं ?'

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संन्यासी ने उत्तर दिया—भद्र, इस राज्य का राजा बड़ा दुष्ट है, वह स्वयं तो अकर्मण्य और अत्याचारी है ही, उसके राज्य में बहुत-से लोग स्वेच्छाचारी, अनुशासनविहीन, कुटिल, कलह करने वाले, अत्याचारी और बुरे हो गये हैं। ऐसी स्थिति में मेरी तरह हर शान्ति-प्रेमी, सद्गुणों और आत्मा की शान्ति पर विश्वास रखने वाले के लिए समाज में रहना मुश्किल हो गया है। आप भी क्यों नहीं यहीं आकर शान्त और एकान्त प्रकृति का आनन्द लूटते। अत्याचारों के कारण पैदा हुई निराशा से बचने का क्या यह सर्वोत्तम उपाय नहीं ?

कन्फ्युशस मुस्कराये और कहने लगे—"क्या आपका मतलब यह है कि थोड़े-से बुरे आदमियों के कारण अच्छाइयों की रक्षा करना मनुष्य का कर्त्तव्य नहीं है ? थोड़े व्यक्तियों के कर्त्तव्यच्युत हो जाने से क्या भावनाशील व्यक्तियों को भी अपने कर्त्तव्य से मुँह मोड़ लेना चाहिये ? यदि बुराई आगे बढ़ने से हार नहीं मान सकती तो क्या भलाई की शक्ति को प्रयत्न किये बिना आत्मघात कर लेना चाहिये ?"

संन्यासी ने कहा—"सो तो ठीक है, मगर इतने झंझटों की अपेक्षा बुराई से स्वयं हट जाना बेहतर है। हम यहाँ उसी का रसास्वादन कर रहे हैं।"

कन्फ्युशस ने कहा—"भगवन् ! आप भूल रहे हैं कि झंझटों से भरा जीवन आपके जीवन का आधार है। यहाँ रहकर भी आप समाज की कमाई पर जीवित हैं, उसी की कृपा से पल रहे हैं। आप भूल रहे हैं कि जिन्हें आप झंझट, कष्ट और कठिनाइयाँ मान रहे हैं, वे तो नावें हैं, असम्भव को पार करने में सहायता देती हैं। रही बात बुराइयों की। हम उनसे भागें क्यों ? खुद बुराई ही क्यों न भागें ? हमारे भागने का मतलब तो यह है कि सद्गुण और सज्जन, दुर्गुण और दुर्जनों से दुर्बल हैं। सत्य, असत्य की अपेक्षा निर्बल है, जीवन ने नहीं मृत्यु ने जीवन पर अधिकार किया हुआ है।"

महात्मा जी हार मानने वाले न थे—अपनी बात को पुष्ट करते हुये कहने लगे—"हम यहाँ सद्गुणों की ही रक्षा तो कर रहे हैं—बुराइयों की ओर आँख न कर, क्या मैं भलाई को उसके ग्रास से नहीं बचा रहा हूँ ?"

असम्भव महात्मा जी !—कन्फ्युशस ने पुकारा—"हर वस्तु एकान्त में नष्ट होती है और समूह में बहुगुणित होती है। सद्गुणों के बारे में भी ठीक यही बात है। यदि आप समाज में रहकर अपने सद्गुणों का प्रकाश करते और, उनमें अपनी निष्ठा व्यक्त करते तो उसका प्रतिफल भी देखने को अवश्य मिलता। लोग तो बुद्धिमानों की निष्ठा का अनुसरण करते हैं, आप में वह प्रकाश स्पष्ट हुआ होता तो निश्चय ही बुराई की मात्रा घटती और अच्छाई का विकास होता।"

आज की स्थिति भी ठीक ऐसी ही है। यदि लोग जंगलों की ओर नहीं भाग रहे तो भी बुराइयों से उसी तरह दुबक रहे हैं, जैसे कोई माया-मोह से डरकर जंगल में भाग जाय। आज वस्तुतः डरने और छिपने का समय नहीं—सद्गुणों के प्रकाश और विकास की बेला आई है, यह समझने-सोचने का अवसर सच्चे अर्थों में आज ही सामने आया है कि दुःखों और झंझटों का कारण क्या है ? सुख-सन्तोष और भलाई को सम्मानित और सुपूजित किस तरह किया जा सकता है ?

बुराइयों का कारण है, इच्छाओं का विद्रूप। नासमझदारी की इच्छा जहाँ भी पैदा होगी वहीं बुराई पैदा होगी। इसलिए संसार में सुव्यवस्था और सद्गुणों को बनाये रखने के लिए समझदारी का जीवन जीना आवश्यक है। इच्छाओं की विकृति निराशा और अत्याचार के रूप में जन्म लेती है। निराशा से घिरा हुआ व्यक्ति संसार में किसी काम का नहीं रहता। मस्तिष्क लँगड़ा हो जाता है। जीवन में सिवाय चिन्ता, क्षोभ और उद्विग्नता के कुछ भी नहीं रहता। व्यक्ति का हृदय दग्ध हो जाता है, उसमे हीनता की भावना उत्पन्न हो जाती है। आत्मविश्वास कुण्ठित हो जाता है। कायरता आ जाती है, वही व्यक्ति चारों तरफ से अपने वातावरण को विषैला बना लेता है। वह समझता है कि जीवित रहना निष्प्रयोजन है। संसार से भागने की समस्या निराश-जनों को ही मापती है। कर्त्तव्य क्षेत्र से ऐसे ही व्यक्ति दुम दबाकर भागते हैं। यह बात सद्गुणी व्यक्ति में निराशा और दुर्गुणी में अत्याचार के कारण बनती है, दोनों ही स्थितियों में अपनी सुख-शान्ति और समाज की व्यवस्था का एक ही मार्ग रह जाता है और वह यही है कि संसार में समझदारी से जिया जाय। करने से पहले उसके दूरवर्ती परिणाम पर विचार कर लिया जाय।

शोधा हुआ विष उपयोगी हो जाता है, फिर शोधी हुई ज़िन्दगी के आनन्द का कहना ही क्या ? सुख का एक द्वार बन्द हो जाने पर दूसरा खोला जा सकता है। बन्द दरवाजे की ओर दृष्टि किए निराश अवस्था में क्यों पड़ा रहा जाय ? जीतने के लिये बाधाएँ न होतीं, पार करने के लिए सीमायें और रास्ते न होते तो मनुष्य जीवन में क्रियाशीलता का आनन्द ही क्या रह जाता ? मील के पत्थर की तरह एक स्थिति में गढ़े रहने में भी कहीं मनुष्य जीवन की शोभा है ? उसकी शान, खराब हुए को निरन्तर सुधारने, अस्वच्छ और सुथरा बनाने, टूटे को जोड़ने और बुरे को भलाई में परिवर्तित करने में है। यही एक विशेषता तो मनुष्य को भगवान की श्रेणी में पहुँचाती है। उसका निरन्तर अभ्यास कर सामाजिक जीवन में ईश्वरीय शक्ति के विकास का क्रम क्यों न हम निरन्तर चलते रहने दें।

एक स्त्री एकान्त में शीशे में अपना मुँह देखती है, उसमें जो बुराई दिखाई देती है, उसके कारण न वह शीशा तोड़ती है और न मुँह को ही खरोंच डालती है। वह बड़े यत्न से उस खराबी को साफ करती है और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फिर दूसरे साधनों से अपने मुख को सुन्दर और आकर्षक बनाती है। हमारे समाज की स्थिति भी ऐसी ही है। आवश्यकता पैदा और बढ़ी हुई बुराई से खीझने और असन्तुष्ट होने की नहीं, इस बात की चतुराई बरतने की है कि हम उस बुराई को किस तरह साफ कर लेते हैं और समाज में उज्ज्वल चरित्र की, नैतिकता और सत्यता की प्रतिष्ठा कर लेते हैं ?

प्रत्येक देश और जाति का अपना निहितार्थ होता है। अपनी समस्याएँ होती हैं। हर समाज में उसी तरह कुछ बुराइयाँ होती हैं, अड़चनें और बाधाएँ होती हैं। उस अर्थ को पूर्ण करना पड़ता है, निरन्तर प्रयास द्वारा। प्रयास से ही देश के चरित्र की सृष्टि होती है। रचनात्मक शक्तियों को बल मिलता है। कठिन बाधाओं और बुराइयों को दूर करने का पथ ही स्वास्थ्य और सम्पदा का पथ है। मनुष्य दुर्गम को सुगम और बुरे को भला बनाने आया है। उसके समाधान में ही देश और समाज का हित सन्निहित है। जिन्होंने समाधान करने में भूल की, उनका विनाश हुआ और जिन्होंने उन समस्याओं से मुँह मोड़ा उनकी दुर्गति हुई।

जब तक जीवन है, शरीर में प्राण है, साँस चलती है, बाधाओं और बुराइयों से संघर्ष करने में ही सच्ची जीवन क्रिया है। जहाँ, जिस समाज में यह उत्कंठा, यह प्रयास और बुराई से भलाई की ओर अग्रसर होने की अभिभावना रहती है, वहीं विश्व के सिरमौर सिद्ध होते हैं। औरों के लिए प्रकाश बनते हैं, उनकी सन्तुष्टि तो अपने इसी प्रयत्न में ही हो जाती है।

चलते रहो-चलते रहो

ऐतरेय ब्राह्मण में इन्द्र और रोहिताश्व का एक प्रसंग आता है। उसमें इन्द्र रोहिताश्व को जीवन की सफलता का रहस्य बतलाते हुये कहते हैं—

"हे रोहित ! जो पुरुष अपने आपको श्रम से थका नहीं डालता, उसे लक्ष्मी प्राप्त नहीं होती।"

"बैठे हुए मनुष्य को पाप दबा लेता है। मेरा स्नेह और मित्रता वही पाता है, जो निरन्तर चलता रहता है। इसलिए चलते रहो, चलते रहो।"

"जो मनुष्य चलता है उसकी जंघाओं में फूल खिलते हैं। उसकी आत्मा भूषित होकर फल प्राप्त करती है। चलने वाले का पाप थक कर सो जाता है। इसलिये चलते रहो, चलते रहो।

"बैठे हुए का सौभाग्य बैठा रहता है, खड़े होने वाले का सौभाग्य खड़ा हो जाता है और उठकर चलने वाले का सौभाग्य चल पड़ता है। इसलिये चलते रहो, चलते रहो।"

"सोने वाले का नाम कलि है, अँगड़ाई लेने वाला द्वापर है। उठकर खड़े होने वाला त्रेता है और चलने वाला कृत-युग है। इसलिये चलते रहो, चलते रहो।"

"चलता हुआ मनुष्य ही मधु पाता है। चलता हुआ ही फल चखता है। सूर्य का परिश्रम देखो, जो नित्य चलता हुआ, कभी आलस्य नहीं करता। इसलिये चलते रहो।"

रोहित और इन्द्र के इस प्रसंग में गतिशीलता का महत्त्व बतलाया गया है। गति जीवन का पर्यायी है, जो गतिशील है, वह जीवित है, जो स्थिर है वह मृतक ही माना जायेगा। जो जीवन में उन्नति, विकास और श्रेय का आकांक्षी है, उसे निरन्तर गतिशील रहना चाहिये। आलस्य, प्रमाद अथवा अकर्मण्यता मनुष्य के सौभाग्य के शत्रु हैं।

इन्द्र ने जो उपदेश रोहित को दिये हैं उनकी विवेचना करने और भावार्थ पर विचार करने से यही पता चलता है कि मनुष्य का सारा सौभाग्य उसकी गतिशीलता पर ही निर्भर रहता है। इस गतिशीलता का अर्थ केवल चलते रहने से नहीं है। इसका तात्पर्य व्यापक है और इसके अन्तर्गत सारे पुरुषार्थ, सारे उद्योग और सारे कर्तृत्व का भाव आ जाता है।

इन्द्र कहते हैं कि जो पुरुष अपने आपको श्रम से थका नहीं डालता, उसे लक्ष्मी प्राप्त नहीं होती। कितनी सरल और सार्थक बात है कि यद्यपि संसार में चारों ओर श्री और श्रेय फैले पड़े हैं तथापि कहीं भी कोई ऐसा स्थान नहीं है, जहाँ पर इनका कोई भण्डार एक स्थान पर रखा हो, जिससे मनुष्य जब चाहे जाकर अपनी वांछित लक्ष्मी अथवा श्रेय उठा लाये। श्री और श्रेय पसीने के मूल्य पर, परिश्रम के उपलक्ष में मिलते हैं। वह भी केवल साधारण परिश्रम के बल पर नहीं। उसके लिये अपने को परिश्रम से थका डालना पड़ेगा।

रोहित एक राजकुमार था। उसके पिता के राजकोष में अपरिमित लक्ष्मी थी, जिसका वह अधिकारी था। तब इन्द्र को उसे इतने कड़े श्रम का उपदेश देने की क्या आवश्यकता पड़ गई ? यह विचारणीय बात है। बात यह है कि इन्द्र यह जानते थे कि जो अपनी पैतृकता अथवा किसी संयोग से पाई लक्ष्मी पर निर्भर हो जाता है, वह आलसी और अकर्मण्य बन जाता है। यहाँ पर महात्मा इन्द्र ने रोहित को धनवान बनने और जीविका चलाने के लिए श्रम का उपदेश नहीं दिया है। यहाँ पर रोहित को उस पुरुषार्थ का उपदेश दिया गया है, जिसका सम्बन्ध आध्यात्मिक उन्नति से है।

आध्यात्मिक क्षेत्र की सफलता अखण्ड-पुरुषार्थ और कठोर कर्मण्यता पर निर्भर है। उसमें जिन साधनों, नियमों और संयमों का पालन अपेक्षित है, वह किसी आलसी के वश की बात नहीं होती है। उनका निर्वाह तो कठिन परिश्रम और स्वावलम्बन पर निर्भर व्यक्ति ही कर सकता है। आध्यात्मिक पुरुषार्थ का अभ्यास भी भौतिक पुरुषार्थ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के स्रोत से ही निकलता है। जो अपने दैनिक जीवन में पुरुषार्थ और परिश्रम नहीं कर सकता, उसका अध्यात्म क्षेत्र में पुरुषार्थ बन सकना सम्भव नहीं।

साथ ही रोहित के माध्यम से पुरुषार्थ एवं परिश्रम का यह उपदेश समाज को भी दिया गया है। इन्द्र का स्पष्ट उपदेश है कि यदि किसी तरह धन-सम्पत्ति अनायास भी मिल जाय तब भी उसे श्री एवं श्रेय प्राप्त करने के लिए कड़ा परिश्रम करना ही चाहिये क्योंकि आत्म-अर्जित श्री में जो सौन्दर्य एवं सन्तोष होता है, वह अनायास प्राप्त हो गये में नहीं। फिर जो सम्पत्ति किसी को यों ही मिल गई है, पता नहीं किन संस्कारों से दूषित अथवा भूषित है और उसका प्रभाव अपने संस्कारों पर क्या पड़े ? आत्म-अर्जित श्री में ऐसा संशय नहीं होता। वहाँ विश्वास ही होता है और जीवन पर अनुकूल प्रभाव डालती है। यह नितान्त आवश्यक है क्योंकि अर्थ के पुरुषार्थ के बाद मोक्ष के पुरुषार्थ की ओर भी तो जाना होता है।

इन्द्र ने दूसरी बात कही है—''बैठे हुए मनुष्य को पाप दबा लेता है। मेरा स्नेह और मित्रता वही पाता है, जो निरन्तर चलता रहता है। इसलिए चलते रहो, चलते रहो।'' इसमें श्रम के सम्बन्ध में एक मनोवैज्ञानिक तथ्य का उद्‌घाटन किया गया है। 'बैठे हुए मनुष्य को पाप दबा लेता है।' अर्थात् जो कुछ करता नहीं, आलस्य और प्रमाद में पड़ा रहता है, उसका मानसिक पतन हो जाता है। खाली मस्तिष्क शैतान का घर कहा गया है। जब मनुष्य किसी काम में व्यस्त रहता है, तब उसका शरीर ही नहीं मन और मस्तिष्क भी उसी में संलग्न रहते हैं। काम के सम्बन्ध में ही विचार आते हैं और काम में ही अभिरुचि रहती है।

बेकार के विचार और बेकार की कल्पनाओं से वह मुक्त रहता है। लेकिन जब मनुष्य खाली रहता है, तो उसका मन, मस्तिष्क भी खाली रहता है। लेकिन वे निष्क्रिय कभी नहीं होते। काम के अभाव में भी वे सक्रिय रहते हैं। ऐसी स्थिति में वे कुविचार आ-आकर मन-मस्तिष्क में जमा होते रहते हैं। इधर शरीर के कुछ करने से इन्द्रियाँ आजाद होती हैं। उन पर जब किसी काम का भार नहीं होता, तो वे विषयों की ओर भागने लगती हैं। इस प्रकार एक जैसी स्थिति में होने से इन्द्रियों और मन-मस्तिष्क के बीच सन्धि हो जाती है और तीनों मिलकर मनुष्य को पापों की ओर खींच ले जाते हैं। अस्तु अकर्मण्य का पापी हो जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं।

इन्द्र आगे कहते हैं, मेरा स्नेह और मित्रता उन्हें ही मिलती हैं, जो निरन्तर चलते रहते हैं अर्थात् सक्रिय रहते हैं—कुछ काम करते रहते हैं। इन्द्र देवता हैं—जो स्वयं शहादत देते हैं कि मेरी अर्थात् देवों की कृपा उन्हें ही मिलती है, जो निरन्तर कर्मशील रहते हैं। अर्थात् देवता उनसे ही प्रसन्न होते हैं, जो निरन्तर काम करते रहते हैं। पहली बात तो यह है कि श्रमशील और परिश्रमी से सभी स्वभावतः प्रसन्न रहते हैं। फिर कर्मठ व्यक्ति पापात्मा नहीं होता। पापरहित व्यक्ति से देवता प्रसन्न होने के लिये विवश हैं। उन्हें अनिवार्य रूप से प्रसन्न होना ही होता है।

काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या-द्वेष, बैर-विरोध आदि जितने भी मूल और तद्‌जन्य पाप होते हैं, मनुष्य कार्यकाल में बिल्कुल भूला रहता है। इन्हीं को क्यों, सच्चा कार्यकर्त्ता तो काम में अपने तक को भूल जाता है। ऐसी निर्विकल्प समाधि की स्थिति में पापों के आने का कोई प्रश्न ही नहीं होता। सच्चा कर्मयोगी वास्तव में एक योगी होता है। देवताओं का उसका मित्र होना स्वाभाविक है। अस्तु निर्देश दिया गया है कि निरन्तर चलते रहो-सदैव कार्य में व्यस्त रहो, बेकार मत बैठो।

इन्द्र ने आगे कहा है—''जो चलता है, उसकी जंघाओं में फूल खिलते हैं। आत्मा-विभूषित होकर फल लाती है।'' सुन्दरता और प्रसन्नता श्रम के प्रतीक हैं। यह दोनों विशेषताएँ श्रम के अधीन हैं। श्रम करने से स्वास्थ्य मिलता है और स्वस्थ मनुष्य ही प्रसन्न रह सकता है और सच्चा सौन्दर्य भी स्वास्थ्य ही होता है। श्रम करने से रक्त तपता है, जो शरीर के सारे रोगों के कीटाणुओं को मार देता है। श्रम करने से जो पसीना बहता है, वह वास्तव में शरीर का विष और विकार ही होता है, जो वह बहकर बाहर हो जाता है। श्रम करने से क्षुधा तीव्र होती है, भोजन पूरी तरह अनुकूलता के साथ पचता है। गहरी निद्रा आती है। अवयव स्वस्थ और सुदृढ़ बनते हैं। इससे अधिक आरोग्य तथा स्वास्थ्य के लिए कुछ और नहीं चाहिये।

जंघाएँ आधार अथवा नींव की प्रतीक हैं। मनुष्य जीवन का आधार श्रम के सिवाय और कुछ नहीं। श्रम से ही धन मिलता है। श्रम से ही अन्न और वस्त्र। श्रम से ही विद्या मिलती है और श्रम से ही सम्मान। जिसके जीवन का आधार ही खोखला होगा, वह कितने दिन खड़ा रह सकता है। हवा का एक झोंका ही उसे गिरा देगा। जीवन की स्तम्भता श्रम पर ही निर्भर है, इसीलिए निरन्तर चलते रहने अर्थात् सक्रिय रहने को कहा गया है।

'चलते रहने वाले की आत्मा विभूषित होकर फल लाती है'—इसका तात्पर्य इस सिद्धान्त वाक्य की ओर संकेत करता है कि स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ आत्मा का निवास होता है। जब शरीर और मन-मस्तिष्क स्वस्थ होंगे तो आत्मा का स्वस्थ होना स्वाभाविक है। जिसकी आत्मा स्वस्थ एवं पुष्ट होती है, उसे ही आध्यात्मिक लाभ होता है। स्वस्थ आत्मा वाला व्यक्ति ही धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के पुरुषार्थ चतुष्टय का सम्पादन करने में समर्थ हो सकता है। विभूषित अथवा जागरूक आत्मा वाला वैसा किये बिना रह ही नहीं सकता और जब वह पुरुषार्थ करेगा,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परमार्थ पथ पर चलेगा, तो परम फलों को पायेगा ही, इसमें सन्देह नहीं। इसीलिए निरन्तर चलते रहने, पुरुषार्थ करते रहने का उपदेश किया गया है।

फिर कहा है—'बैठे, उठे और चलने वाले का सौभाग्य क्रम से बैठा रहता है, खड़ा हो जाता है और चल पड़ता है—मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है। सौभाग्य क्या है ? कर्म फलों का उदय, उनका भोग। कर्म कौन करता है ? मनुष्य। अस्तु भाग्य का निर्माता स्वयं मनुष्य को ही माना जायेगा। जो बैठा है। अर्थात् अकर्मण्य बना हुआ है, उसकी सौभाग्य-लिपि किस प्रकार निर्मित हो सकती है ? हाँ जो उठ पड़ा है अथवा कर्म करने को उद्यत हो गया है, उसकी भाग्य-लिपि की तैयारी विधाता के घर होने लगती है और जब इधर मनुष्य चल पड़ता है अर्थात् पुरुषार्थ करने लगता है तो उधर दैवी लेखक की लेखिनी भी चलने लगती है और भाग्य-लिपि तैयार होने लगती है। इसलिये बैठने का निषेध कर चलने का आदेश दिया गया है।

अन्त में सोने, अँगड़ाई लेने, खड़े होने और चलने वाले को क्रम से कलियुग, द्वापर, त्रेता और कृतयुग अर्थात् सत्युग बतलाया गया है। युग और कुछ नहीं व्यक्ति, समाज, राष्ट्र अथवा संसार की परिस्थिति-दशाओं का ही नाम है। जो सोता रहता है अथवा जब जहाँ सुषुप्ति होती है, वहाँ अचेतनता और अन्धकार होता है, वहाँ पाप, ताप और परिताप से भरा कलियुग रहता है। जब जिस समय लोग जागकर चेतना में आने लगते हैं, अर्थात् कलि के स्थान पर द्वापर अर्थात् सुन्दर समय आने लगता है, लोग उठकर खड़ हो जाते हैं। जब वे पुरुषार्थ के लिए उद्यत होते हैं, उसकी तैयारी करते हैं तो त्रेता अर्थात् उत्कृष्ट समय आ जाता है और जब लोग पूरी तरह से चलने लगते हैं अर्थात् अपने कर्त्तव्यों में संलग्न हो जाते हैं तो सुन्दरतम् समय अर्थात् सतयुग आ जाता है। कर्त्तव्यों की महिमा के कारण ही सतयुग को कृतयुग भी कहा जाता है।

इन्द्र के इस सब कथन का सारांश यही है कि यदि मनुष्य सुख-शान्ति, उन्नति और अभ्युदय चाहता है, अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष के फल चाहता है तो उसे निरन्तर अनुकूल श्रम करते रहना चाहिये। इसके सिवाय सफलता तथा सार्थकता का कोई और उपाय नहीं है।

इसमें सन्देह नहीं कि चाहे व्यक्तिगत जीवन को देखें और चाहे सामाजिक को, कर्मण्यता का महत्त्व सर्वाधिक है। व्यक्ति और समष्टि दोनों की प्रगति उपयोगी कार्यक्षमता पर ही निर्भर है। यदि किसी राष्ट्र के निवासी अधिकांश में आलसी और प्रमादी हों तो वह निश्चय ही अवनति की दशा में पड़ा रहेगा और अन्य देशों की दृष्टि में उसका कुछ भी सम्मान या महत्त्व न होगा। यही बात व्यक्ति के सम्बन्ध में भी है, निठुल्ले और निकम्मे मनुष्य का सम्मान गैर तो क्या घर के भी नहीं करते, उल्टा उसे जली-कटी बातें सुनाते रहते हैं। कहावत है कि दुधारू गाय की दो लातें भी मनुष्य सह लेता है। जो मनुष्य परिश्रमी है, मेहनत द्वारा उपार्जन करके चार लोगों का पेट भरता है, उसकी सब कोई प्रशंसा करेगा ही। इसीलिये उपरोक्त आख्यान में जीवन के गतिशील रहने को इतना अधिक महत्त्व दिया है। यहाँ गतिशीलता का आशय कर्मण्यता से ही है।

एक बात और स्पष्ट समझ लेनी चाहिए कि वर्तमान समय में समाज में एक प्रकार की विपरीत आर्थिक-व्यवस्था चल रही है। आजकल बहुसंख्यक व्यक्ति ऐसे भी हैं, जो तनिक भी शारीरिक श्रम नहीं करते, अपना अधिकांश समय ऐश आराम या व्यर्थ के मनोरंजन में निकाल देते हैं और फिर भी वे समाज में सम्मान का दर्जा प्राप्त कर लेते हैं। ऐसे व्यक्ति ब्याज, भाड़ा, कम्पनी-शेयर्स आदि की आमदनी से घर बैठे हजारों, लाखों रुपया पा जाते हैं और आलसी जीवन बिताकर भी सब प्रकार के सुखोपभोग के अधिकारी बने रहते हैं। यह एक अत्यन्त ही अस्वाभाविक और अनुचित स्थिति है और इसी के कारण संसार में अनगिनती दोषों, बुराइयों, पापों की वृद्धि हुई है। ऐसे अकर्मण्य अमीरों को देखकर लोगों को 'पसीने की कमाई' की यथार्थता में सन्देह होने लगता है और वे भी कोई ऐसी ही तरकीब ढूँढ़ने लगते हैं, जिससे बिना मेहनत किये ही बहुत-सा रुपया मिल जाय। सट्टा, फाटका, जुआ, लाटरी आदि ऐसी ही मनोवृत्ति की उपज होते हैं। जिन लोगों के पास इनके लायक भी साधन नहीं होते वे जालसाजी, ठगी, धोखाधड़ी, विश्वासघात आदि से काम लेते हैं। जो लोग दुष्ट और गुण्डा प्रकृति के तथा दुस्साहसी भी होते हैं, वे चोरी, डकैती, जेबकटी का रास्ता अख्त्यिार करते हैं। सारांश यही है कि इन्द्र और रोहित के उपाख्यान में जिस गतिशीलता तथा चलते रहने की प्रेरणा दी गई है, उससे ऐसे लोगों की ''गतिशीलता'' बिल्कुल उल्टी तथा व्यक्ति और समाज के लिये पतनकारी ही होती है।

अगर अपना और समाज का हित चाहते हैं तो हमको निश्चय ही सच्ची गतिशीलता को अपनाना चाहिये और श्रम, उद्यम तथा साहस के साथ कार्य में लगा रहना चाहिये। इसमें तनिक भी सन्देह नहीं कि परिश्रमी और उद्योगी मनुष्य कभी दुर्दशा को प्राप्त नहीं हो सकता। चाहे वह ब्याजखोरों, सट्टेबाजों और ब्लैक मार्केट वालों की तरह हराम की अनाप-शनाप कमाई न कर सके, पर वह जो कुछ भी कमायेगा और खायेगा वह सदैव उसकी शारीरिक और मानसिक प्रगति में सहायक होगा, जबकि हराम अथवा पाप की कमाई का अन्तिम परिणाम जैसा का तैसा ही होता है। इसलिये मनुष्य को सदा ईमानदारी और पसीने की कमाई के मार्ग का ही निर्भय होकर अनुगमन करना चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साहस का यह अभाव ही आत्महीनता

भारतीय प्रशासनिक सेवा आयोग दिल्ली के इन्टरव्यू में एक उम्मीदवार से पूछा गया कि भारत कब स्वतन्त्र हुआ ? युवक मैसूर के कॉलेज का कुशाग्र बुद्धि छात्र था पर यहाँ आकर ऐसा घबड़ा गया कि उससे बोलते भी नहीं बना था। बड़ी कठिनाई से उसने दो-तीन बार उन्नीस सौ-उन्नीस सौ कहा और जब सदस्यों को मुस्कराते देखा तो रही सही हिम्मत टूट गयी और आगे तेरह करके चुप रह गया। बहुत आश्वस्त करने पर भी वह प्रश्नों के सही उत्तर न दे पाया, जबकि लिखित परीक्षा में उसे सर्वश्रेष्ठ अंक मिले थे।

दिल्ली की ही एक और घटना नेताजी नगर की है। एक जालसाज ने तेजसिंह नामक व्यक्ति को पुलिस का दारोगा बनकर ठग लिया। तेजसिंह गुरुद्वारे के लिये चला था, सरफि में भी कुछ काम था सो वह ८०० रुपये और पत्नी का कोई जेबर भी लिए था। रास्ते में तथाकथित थानेदार मिल गया, उसे देखते ही तेजसिंह बुरी तरह घबड़ा गया। इस स्थिति का जालसाज ने लाभ उठाया। उसने कहा—दिखाओ तुम्हारे पास क्या है ? लगता है अफीम लिए हो ? तेजसिंह ने घबराहट में थैला ही उसके हाथ में दे दिया। जालसाज थैला लेकर चलता बना और घबड़ाया हुआ तेजसिंह तब तक कुछ नहीं बोल पाया जब तक कि वह आँखों से ओझल नहीं हो गया। उसी दिन किसी और को ठगते हुए वह जालसाज पकड़ा गया तब यह रहस्य खुला।

साधारण-सी विपरीत परिस्थिति में इतना भयभीत हो जाना कि मानसिक संतुलन भी स्थिर न रह पाये आत्महीनता का ही प्रतीक है। जब हम जानते हैं कि हमारे गलत उत्तर दे देने से भी कोई सजा हो जाने वाली नहीं, अधिक से अधिक नौकरी ही नहीं मिलेगी तो उसमें घबड़ाने जैसी कोई बात नहीं थी। पुलिस मान लीजिये पकड़ ही लेती तो उससे क्या हो जाता ? महात्मा गाँधी, जवाहरलाल नेहरू, पटेल, पंत, यह सब तो निरपराध जेल गए थे और हौंसले के साथ सत्याग्रह के लिए गये थे। भगतसिंह, सुखदेव, राजगुरु और रामप्रसाद को तो फाँसी भी लग गई थी तो उनमें भय या विषाद नाम की थोड़ी भी झलक दिखाई न दी थी फिर भी आज की पीढ़ी में इस तरह साहस की कमी क्यों ? यह एक विचारणीय प्रश्न है।

लन्दन से मनोविज्ञान सम्बन्धी एक मासिक-पत्र ''साइकोलॉजिस्ट'' छपता है। दिसम्बर १९६५ के अंक में एक मनोवैज्ञानिक चिकित्सा (साइकोथेरेपिस्ट) का लेख छपा है उसमें इस तरह के कुछ और विचित्र उदाहरण दिये हैं, जो यह बताते हैं कि इस तरह की घटनाएँ अपनी ही आत्महीनता के कारण होती हैं, घटनाएँ यह हैं—

(१) एक व्यक्ति मेरे पास आया उसने बताया कि मैं अपने घर से बाहर निकलता हूँ तो कुछ ही दूर जा पाता हूँ और मुझे अकारण ऐसा भय हो जाता है कि कोई दुर्घटना हो जायेगी और मैं मर जाऊँगा।''

(२) एक और व्यक्ति ने बताया मैं जब कोई वस्तु खरीदने किसी दुकान पर जाता हूँ और कोई मुझे देखने लगता है तो मुझे ऐसा लगता है कि यह लोग मुझे पागल न समझते हों। इसी हड़बड़ी में जो कुछ अच्छा-बुरा दिखा खरीदा और वहाँ से चटपट भाग निकलता हूँ। बाद में पता चलता है कि वस्तु खराब और अनावश्यक ले आया।

(३) एक व्यक्ति ने बताया कि मुझे बस या रेल देखते ही परेशानी हो जाती है कि यदि टट्टी-पेशाब लगी तो क्या करूँगा ? मुझे यही बात बार-बार ध्यान में आती है और नहीं लगी होती तो भी टट्टी या पेशाब को जाना पड़ता है।

लेखक अन्त में निष्कर्ष देते हुए लिखता है—ऐसी आशंकाएँ और भय जिनके कोई उपयुक्त हल नहीं मनुष्य की अपनी व्यक्तिगत कमजोरी है, इसे ही आत्महीनता कहते हैं। यह कहना अनुपयुक्त है कि केवल पिछड़े परिवारों में जन्म लेने से ही लोगों में ऐसी हीन मनोवृत्ति पनप जाती है। संत रैदास चमार थे, दादू भाई छोपी थे, तुर्की का कमाल पाशा एक साधारण लोहार था, राष्ट्रपति जानसन प्रारम्भ में बूट पालिश करते थे, बम्बई के प्रसिद्ध उद्योगपति अब्दुल भाई करीम पहले गुब्बारे बेचते थे और ऐसे ही साधारण व्यक्तियों के मुहल्ले में रहते थे पर उनकी अपनी व्यक्तिगत दृढ़ता, साहस और सूझ-बूझ के भाव ने उन्हें आगे बढ़ा दिया। जो नहीं बढ़ पाते उनके लिये तो यही कहा जा सकता है कि उनकी गतिविधियाँ, कर्मकलाप, विचार-चिन्तन, ओछी और ओंधी बातों तक ही सीमित रहते हैं। ऐसी बातें करने और सोचने से जो दूसरों की दृष्टि में हीन और पाप हों, उनको करना ही मनुष्य को इस कदर कायर और आत्महीन बनाता है। दृढ़चरित्र, नेक, ईमानदार लोग ही सच्चाई से संघर्ष कर सकते हैं। वही हिम्मती हो सकते हैं। इसलिये जीवन में सफलता के लिये आत्महीनता के पाप से बचना आवश्यक है। अपने चरित्र को दृढ़ बनाकर ही हम इन बुराइयों से बच सकते हैं।

अपने स्वभाव की छोटी-छोटी बुराइयाँ बाद में मन को कमजोर कर देती हैं और तब पढ़े-लिखे लोग भी ऐसा ही सोचते और करते हैं जैसे कुछ उदाहरण ऊपर दिये हैं। भय और अपने आप को भीतर से गिरा हुआ, ओछा, पापी-सा अनुभव करते-करते मन में एक प्रकार की गाँठ-सी पड़ जाती है, तब मनुष्य उतनी ही बातें सोचता रहता है। उसके विकास का क्षेत्र सीमित पड़ जाता है। यही वृत्ति अपराध के लिये उकसाती है। जीवन की छोटी-छोटी बुराइयाँ ही बड़े अपराधों के रूप में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फलती-फूलती हैं। उनसे स्वयं को और समाज को बचाने का एक ही उपाय है, वह यह कि हमारे चरित्र में दृढ़ता आये और दूसरे लोग भी चरित्रवान बनें। पुण्यात्मा ही साहसी हो सकता है और वही जीवन में कोई सफलता प्राप्त कर सकता है।

भय का कारण और निवारण

डर का सबसे बड़ा कारण है अज्ञान। जिसे हम ठीक तरह नहीं जानते उससे प्रायः डरा करते हैं। सृष्टि के आरम्भ में आदिम मनुष्य सूर्य, चन्द्र, समुद्र, बादल, बिजली, पर्वत, आँधी, आग, सर्प का स्वरूप ठीक तरह समझ न पाया था, इसलिए चेतना विकास के प्रथम चरण में उनकी स्थिति, शक्ति और मर्यादा की समुचित जानकारी न थी, फलस्वरूप उनसे डर लगा। देवता के रूप में उन्हें कल्पित किया गया और अनेक पूजा-विधानों से उन्हें सन्तुष्ट करने का प्रयत्न किया गया ताकि वे अपना कोई अहित न करें। मृत्यु के उपरान्त का जीवन अभी भी रहस्यमय है पर पूर्वकाल में वह और भी रहस्यमय बना हुआ था। इस अज्ञान ने प्रत्येक मृतक को भूत-प्रेत की मान्यता प्रदान कर दी और आकस्मिक दुर्घटनाओं, विपत्तियों एवं बीमारियों का मूल कारण विदित न होने से उन्हें भूत की करतूत समझ लिया गया। प्राग ऐतिहासिक काल में मनुष्य की मनोभूमि का अधिकांश भाग इन देवताओं और भूतों का सन्तोष समाधान करने में ही व्यतीत होता था।

ज्ञान का जैसे-जैसे विकास हुआ वे भय छूट गए। बीमार होते ही भूत को बलि चढ़ाने की तैयारी ही जिनके मस्तिष्क में एकमात्र उपाय सूझता हो, ऐसे लोग अब बहुत थोड़े हैं, जो हैं वे सभ्य समाज में उपहासास्पद माने जाते हैं। इसी प्रकार अलग-अलग सत्ता वाले, एक-दूसरे से लड़ने-झगड़ने और ईर्ष्या करने वाले देवताओं के स्थान पर अब इन्हें एक ही ईश्वरीय शक्ति के विभिन्न काम माना जाने लगा है। ग्रह-नक्षत्रों की विद्या की सही जानकारी जैसे-जैसे बढ़ रही है वैसे-वैसे शनि और राहू की अनिष्टकर ग्रहदिशा का आतंक समाप्त होता चला जा रहा है।

अधिकांश भय अवास्तविक होते हैं। साँप से आमतौर से लोग डरा करते हैं पर सही बात यह है कि केवल सत्तरह प्रतिशत साँप ही ऐसे होते हैं, जिनमें मारक विष रहता है। यह वास्तविकता जिन्हें विदित होती है, जो साँपों के स्वभाव की गहरी जानकारी रखते हैं, वे उनसे जरा भी नहीं डरते, वरन् कई बार तो उनसे अपना मनोरंजन लाभ भी करते हैं। सरकस के कर्मचारी खूँखार जानवरों के बारे में अधिक जानकारी होने के कारण उनसे डरना तो दूर उल्टा अचरज भरे काम कराते रहते हैं। घने जंगलों में सिंह, व्याघ्रों के बीच निवास करने वाले आदिवासी उनसे जरा भी नहीं डरते बल्कि आँख-मिचौनी खेलते रहते हैं, जबकि सामान्य लोगों को सिंह, व्याघ्र की बात सुनने से भी डर लगने लगता है।

अजनबी आदमी को देखकर तरह-तरह की आशंकाएँ मन में उठती हैं पर जब उसका पूरा परिचय हो जाता है तो पूर्व आशंका मित्रता में बदल जाती है। अन्धेरे में जाते हुए डर केवल इसलिए लगता है कि वहाँ क्या कुछ होगा, इसकी जानकारी न होने से चित्त में अनेक तरह की डरावनी बातें उठती हैं। नदी में थोड़ा पानी होने पर भी अनजान आदमी उसमें प्रवेश करते दुर्घटना से सशंकित रहता है। सही जानकारी होने पर डर सहज ही दूर होता है। प्रकाश में तो सुनसान में जाते हुए और नदी के उथले पानी का सही पता लगाते हुए, उसमें प्रवेश करते हुए किसी को कोई झिझक नहीं होती।

इस संसार में लगभग सारे डर अज्ञानमूलक हैं। हानि, घाटा, दुर्घटना, असफलता, आक्रमण, दुर्भाग्य, ग्रह-दशा, भूत आदि की आशंका से जितना डरा जाता है। वस्तुतः उसका सौवाँ भाग भी वास्तविक नहीं होता। अज्ञान ही कायरता या भीरुता का रूप धारण कर मनुष्य को भयभीत करता रहता है। जिसे जितना वास्तविक ज्ञान है, वह उतना ही निर्भय रहेगा। तत्त्वज्ञानी की पहचान यह है कि वह पूर्णतया निर्भर हो। ज्ञान की उपासना को अध्यात्म मार्ग का प्रथम सोपान इसीलिए माना गया है कि उसके आधार पर मनुष्य सब प्रकार के भय और संशयों से छुटकारा पाकर अभीष्ट लक्ष्य की ओर अपनी मानसिक शक्तियों को लगा सकने में समर्थ होता है। वह अज्ञानी जिसे अनेक प्रकार के भय सताते रहते हैं, अपनी मानसिक क्षमता का अधिकांश भाग उसी गोरख-धन्धे में खो बैठता है फिर आत्म-कल्याण जैसे श्रेष्ठ कार्य के लिए उसके पास मनोबल बचेगा ही कैसे ?

ज्ञान का प्रकाश उत्पन्न होने से मनुष्य संसार की हर वस्तु का स्वरूप समझ जाता है, तब उसे उनमें डरने लायक कुछ भी कारण दिखाई नहीं पड़ता। निर्भीक लोग उन परिस्थितियों में भी हँसते, प्रसन्नचित्त रहते और मानसिक सन्तुलन बनाये रहते देखे जाते हैं, जिनमें कि साधारण मनुष्य आशंकाओं और कुकल्पनाओं से भयभीत होकर किंकर्त्तव्यविमूढ़ बन जाते हैं। संसार के महापुरुष एवं राजनेता अगणित महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्वों और अशुभ संभावनाओं से घिरे रहते हैं। समस्याओं का हल वे सोचते हैं और जो सम्भव है वह करते हैं पर यह होता तभी है, जब मानसिक सन्तुलन को सही रखने की, उत्तेजित न होने की क्षमता विद्यमान हो। श्रेष्ठ और निकृष्ट व्यक्तियों में धैर्य और अधीरता का ही अन्तर रहता है। जिसने इस संसार को एक नाटक मात्र समझ लिया है, वह अपना सर्वोत्कृष्ट अभिनय करने मात्र का ध्यान रखता है। जैसी परिस्थितियाँ आती हैं, उनके अनुरूप परिवर्तन करने और ढलने की क्षमता जिनने सम्पादित कर ली वे संसार को, समस्त परिजनों को एक क्रीड़ा-कौतुक मात्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समझते हैं। डरना उन्हें मानवीय दुर्बलता और अज्ञान का एक उपहासास्पद कारण प्रतीत होता है। जो डरते हैं वे कर कुछ नहीं पाते। डर के मारे अधमरे बने रहने वाले, आशंकाओं और संशयों से उद्विग्न रहने वाले व्यक्ति तो अर्धमूर्छित, अर्ध-स्थितियों में पड़े हुए निकृष्ट और असफल जीवन ही किसी प्रकार पूरा करते हैं।

जिसे अपनी शक्ति का सही ज्ञान होता है वह उतने बड़े कदम उठाता है, जो अपनी सामर्थ्य और मर्यादा के अन्तर्गत हों। शेखचिल्ली इसलिए असफल हुआ कि वह अपना अर्थ-व्यवस्था के क्रमिक विकास और योजनाओं की पूर्ति में लगने वाले समय और श्रम के बारे में भ्रम-ग्रस्त बना रहा। किस असफलता के लिए कितनी तैयारी, मेहनत और प्रतीक्षा करनी पड़ेगी, यह जानकर कोई व्यक्ति अपनी गतिविधियों को निर्धारित करे तो उसे कदाचित ही कभी असफलता का मुँह देखना पड़े।

बड़े से बड़ा भय मृत्यु का होता है, पर यदि उसे वस्त्र परिवर्तन जैसी जीव के लिए भूतकाल में करोड़ों बार घटित हुई एक सामान्य प्रक्रिया मान लिया जाय तो मरने का अवसर आने पर भी मनुष्य अपना साहस बनाये रह सकता है। मृत्यु के संघर्ष में भी देर तक लड़ सकता है। कम से कम शान्तचित्त से ईश्वर का नाम लेते हुए तो मर ही सकता है अन्यथा मृत्यु का स्वरूप ही ठीक तरह समझ में न आने से ही त्रास मिलता है तथा मृत्युदण्ड की आज्ञा सुनकर फाँसी लगने के दिन तक खुशी से सत्तरह पौण्ड वजन बढ़ा लेने वाले क्रान्तिकारियों के उदाहरण सुनने को क्यों मिलते ?

उचित-अनुचित का विवेक जाग्रत होने पर भी मनुष्य निश्चिन्त हो सकता है। उसके सामने लक्ष्य और मार्ग स्पष्ट रहने से न तो उलझन रहती है और न परेशानी। हवा में उड़ते हुए पत्ते की तरह जो चारों ओर मन डुलाता है, उसे सफलता-असफलता का भय बना ही रहता है। सच्ची निर्भयता उसे मिलती है, जिसके सामने अपना कर्त्तव्य ही प्रधान है। परिणाम को अधिक महत्त्व देने वाला व्यक्ति असफलता को न तो अधिक महत्त्व देता और न उससे डरता है।

ईश्वर विश्वास निर्भयता का सर्वोपरि उपाय है। पुलिस गारद के पहरे से रहने वाले को जब आक्रमणकारी शत्रुओं से निश्चिन्तता मिल जाती है, सुरक्षा अनुभव होती है, तो सर्व शक्तिमान परमात्मा को अपना साथी-सहचर बना लेने वाले के लिए डरने की गुंजाइश कहाँ रह जाती है ? जिसने धर्म को अपना आधार बना लिया, उसका भविष्य अन्धकारमय हो ही नहीं सकता। फिर किसी से भी डरने की ऐसे व्यक्ति के लिए बात ही क्या रह जाती है ?

मन को दुर्बल न बनने दें

सिद्धि का आधार शक्ति माना गया है। शक्ति और साहस एक वस्तु के दो पहलू ही हैं, संसार का कोई भी उद्योग कोई भी पुरुषार्थ और कोई भी कार्य, शक्ति के बिना नहीं किया जा सकता। कोई बड़ा ही नहीं एक साधारण और सामान्य काम में भी शक्ति की आवश्यकता पड़ती है। निःशक्त मनुष्य संसार में कुछ भी नहीं कर सकता।

संसार में प्रधानतः दो शक्तियाँ काम करती हैं—एक शारीरिक बल, दूसरा मानसिक बल। आगे की अन्य शक्तियाँ—जैसे बौद्धिक बल, आध्यात्मिक अथवा आत्मिक बल भी पूर्वोक्त दो बलों के आधार पर ही पाये और विकसित किये जाते हैं।

शारीरिक बल और मानसिक बल में भी मानसिक बल की प्रधानता है। शारीरिक बल का अपने-आप में कोई अधिक महत्त्व नहीं है। मनोबल का सहयोग पाए बिना शारीरिक बल निकम्मा बना रहता है। बहुत बार देखा जा सकता है कि शारीरिक बल कम होने पर भी लोग मनोबल के आधार पर बहुत से काम कर जाते हैं। शरीर-बल प्रधान सैनिकों से परास्त हो जाते हैं। जंगल में शेर की तुलना में हाथी, गैंडे, सूअर आदि बहुत-से जानवर शरीर-बल में बहुत अधिक होते हैं, किन्तु मनोबल की कमी के कारण शेर से डरते और उसका आतंक मानते रहते हैं। वास्तविक बल मनोबल ही होता है—शारीरिक बल तो मात्र यान्त्रिक बल ही होता है।

शरीर में क्षमता होते हुए भी जब मनुष्य का मन असहयोगी हो जाता है तो वह जरा देर भी काम नहीं कर सकता। मन में उत्साह और सहयोग होने पर यदि एक बार शरीर थका भी हो तो भी मनुष्य बहुत देर तक काम करता रहता है। शरीर की सारी क्रियाएँ मन की सहायता से ही सम्पादित होती हैं।

बौद्धिक बल उत्पन्न करने के लिये भी मानसिक अभ्यास की आवश्यकता होती है। मनुष्य की बुद्धि का विकास, अध्ययन, अनुभव और विषय में गहरे पैठने से होता है। जिसका मन निर्बल है, असहयोगी या उत्साहहीन है, वह न तो अध्ययन का परिश्रम कर सकता है और न उत्साहपूर्वक किसी विषय में गहरे पैठ सकता है। यदि वह यह सब करेगा भी तो भी मानसिक सहयोग के अभाव में कुछ लाभ नहीं उठा सकता।

न जाने कितने उत्साह अथवा अभिरुचि से रहित मन वाले लोग वर्षों पढ़ते रहते हैं, नौकरी और व्यापार करते हैं, किन्तु प्रगति के नाम पर एक कदम भी आगे नहीं बढ़ पाते। पूरी सिद्धि तो उनके लिए असम्भव होती है। मन का असहयोगी, विद्रोही, निरुत्साही, चंचल आदि होना उसकी निर्बलता के ही लक्षण होते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिन मनुष्यों के मन बलवान और सतेज होते हैं, वे कम समय में ही पर्याप्त विकास कर लेते हैं। जो काम हाथ में लेते हैं, उत्साह और अभिरुचि से करते हैं। इस गुण के कारण उनकी ग्राहकता भी बढ़ी-चढ़ी रहती है। क्रम-क्रम से ज्ञान और गुणों को हृदयंगम करते चले जाते हैं। मनोबली लोगों का आत्म-विश्वास बड़ा प्रबल होता है। उनको संसार का कोई काम कठिन और दुसह मालूम ही नहीं होता। आत्मविश्वास के कारण वे अपने को हर काम के योग्य समझा करते हैं। जो भी काम उन्हें सौंप दिया जाता है, उसे पूरा करके दिखलाते हैं।

आध्यात्मिक विकास तो मनोबल के अभाव में असम्भव है। आध्यात्मिक विकास के लिये वृत्तियों और इन्द्रियों पर नियन्त्रण करना होता है। वृत्तियाँ तथा इन्द्रियाँ मन के अधीन होती हैं। यदि मन बलवान और स्वस्थ है तो उसकी सहायता से वृत्तियों और इन्द्रियों को वश में किया जा सकता है। यदि मन कमजोर और अस्वस्थ है तो मनुष्य की वृत्तियाँ और इन्द्रियाँ शासनहीन हो जायेंगी। वे अपनी सत्ता स्वतन्त्र कर लेंगी। तब किसी दशा में भी उन्हें वशवर्ती नहीं किया जा सकता।

आध्यात्मिक विकास के लिये अनेक तरह के नियम, संयम और व्रतों का निर्वाह करना पड़ता है। बहुत-सी साधनाओं में उतरना पड़ता है। साधन और संयम का यह कार्यक्रम केवल शारीरिक बल के आधार पर नहीं किया जा सकता। इसके लिए मनोबल की आवश्यकता होती है। जिसका मन शक्तिशाली और अनुकूल होता है, वह किसी भी विकार, वेग अथवा उद्वेग पर आसानी से नियन्त्रण कर सकता है। जिसका शरीर शक्तिशाली हो पर मन निर्बल हो तो ऐसे आदमी की आसुरी प्रवृत्तियाँ बड़ी प्रबल रहती हैं। वह तो अपने वेगों और विकारों को जरा देर भी नहीं रोक सकता। संसार के सारे शासन, अनुशासन, नियम और संयम मनोबल के आधार पर सफल बनाये जा सकते हैं, शारीरिक बल के आधार पर नहीं। किसी भी क्षेत्र की सफलता के लिये मानसिक बल की अनिवार्य आवश्यकता है। उसे जाग्रत और विकसित करते ही रहना चाहिये।

निर्बल मन वाले कोई बड़ा काम तो दूर सामान्यतम कामों में भी घबरा जाते हैं। कोई भी प्रसंग उपस्थित होते ही वे भय, आशंका और सन्देह के वशीभूत हो जाते हैं, फिर चाहे उसे उस प्रसंग में भय, आशंका अथवा सन्देह का कारण हो या न हो। वास्तविकता यह है कि भय का कारण प्रसंग अथवा परिस्थितियों में नहीं होता, उसकी जड़ मनुष्य के अपने निर्बल मन में हो होती है। भय, आशंका, कायरता आदि दोषों का जन्म मनुष्य के हृदय से ही होता है। इनका हेतु वह मानसिक कमजोरी ही होती है, जो किन्हीं भूलों से पैदा हो जाती है।

यदि भय और आशंकाओं का सम्बन्ध मनुष्य की हृदय-स्थिति से न होता और उनका निवास प्रसंग अथवा परिस्थितियों में होता तो वह उस स्थिति में सभी मनुष्यों पर समान रूप से प्रतिक्रियान्वित होना चाहिये। जब ऐसा होता नहीं, किसी भयानक परिस्थिति को देखकर जहाँ कोई एक बुरी तरह डरकर, घबराकर भागने का रास्ता खोजने लगता है, वहाँ कोई दूसरा उसी परिस्थिति में अपने सन्तुलन और साहस के आधार पर वीरतापूर्वक उसका सामना करने के लिये उत्साहित हो उठता है। यह अन्तर परिस्थिति से उठता है। यह अन्तर परिस्थिति का नहीं केवल मनःस्थिति का होता है, जिसका मन निर्बल और कायर होगा, उसका घबरा जाना स्वाभाविक है। जिसका मनोबल बढ़ा-चढ़ा होगा, उसके मन में भय अथवा पलायन का भाव ही न आयेगा। वह तो ताल ठोंककर टक्कर लेने को उद्यत हो उठेगा।

मनुष्य की सारी बाह्य क्रियाओं की जड़ उसके मन में ही होती है। मनुष्य की शारीरिक क्रियाओं का संचालक मन ही होता है। मन स्वस्थ, बलवान और सन्तुलित होगा, क्रियाएँ भी सुन्दर, सतेज और व्यवस्थित होंगी। मन निर्बल और अस्थिर होगा, तो क्रिया-कलाप भी सारहीन और अस्त-व्यस्त होगा।

कारण कोई भी रहे हों, किन्तु जिनके मन क्षीण, निर्बल और निस्तेज हो जाते हैं, उनका सारा जीवन भय, आशंकाओं, कट्टरता और सन्देहों से भरा रहता है। मनोहीन मनुष्य हर बात में भयानक घटनाओं, सम्भावनाओं और परिणामों की कल्पना किया करते हैं। उन्हें सब ओर, सब जगह अमंगल और अकल्याण ही दिखाई देता है। जिस प्रकार कायर और भीरु सिपाही को मोर्चे पर सिवाय मौत के और कुछ दिखाई नहीं देता, जबकि वहाँ पर विजय, यश और प्रतिष्ठा की भी सम्भावना होती है, उसी प्रकार निर्बल मन वाले को सब जगह असफलता और आशंका ही दीखती रहती है, जबकि सभी क्षेत्रों और कार्यों में दूसरे लोग सफल और कृत-कृत्य होते रहते हैं।

निर्बल मन वालों की विचारधारा प्रतिगामिनी हो जाती है। ऐसा मनुष्य यदि एक सफल और एक असफल आदमी को एक साथ देखता है तो भी वह असफल व्यक्ति की स्थिति से प्रभावित होता है। वह सोचता है यदि मैं भी इस काम को करूँ, तो असफल हो जाऊँगा। उसका विश्वास उस सफल व्यक्ति पर नहीं जाता और न अपने लिये उसे उदाहरण ही बना पाता है। कायर व्यक्ति जिस प्रकार मैदान छोड़कर भागने वालों को अपना आदर्श बनाता है, मोर्चे पर डटने वालों को नहीं, उसी प्रकार मनोहीन व्यक्ति भी असफल, अकर्मण्य और अग्राह्य उदाहरणों को अपना आदर्श बनाता है।

निर्बल मन वाला व्यक्ति स्वभावतः निराशावादी होता है। उसे पग-पग पर अनर्थ ही दिखाई देता है। साधारण-सी बीमारी जैसे सर्दी-जुकाम, खाँसी या बुखार आ जाने पर बुरी तरह घबरा उठता है। सोचने लगता है कहीं सर्दी बढ़कर निमोनिया न बन जाये। कहीं ऐसा न हो कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खाँसी-बुखार मिलकर हमें यक्ष्मा कर दें। जरा-सी चोट लग जाने पर उसे ऐसा लगता है मानो उसकी हड्डी टूट गयी है, किसी ऐसे अंग में चोट आ गई है जिससे उसकी मृत्यु हो सकती है। नौकरी में जरा-सी भूल हो जाने पर ऐसा घबरा जाता है, जैसे उसकी बरखास्तगी का फरमान आने वाला हो। व्यापार में जरा-सा घाटा आते ही उसे अपना घर-मकान नीलाम होता दिखाई देता है। निराशा के दोष के कारण उसे अनर्थ के सिवाय यह विचार कदाचित ही आता है कि मनुष्य की जीवनी शक्ति बड़ी बलवती होती है। यह जरा-सी बीमारी मेरा क्या बिगाड़ सकती है ? मैं इसे उपचार, आहार-विहार और नियम, संयम पर जड़-मूल से नष्ट कर दूँगा।

नौकरी में भूल हो जाने पर वह यह नहीं सोच पाता कि धोखे से गलती हो गई, आगे के लिये सावधान रहूँगा। आवश्यकता होगी तो अपनी गलती के लिये क्षमा माँगकर सारी स्थिति सुधार लूँगा। व्यापारिक घाटे के प्रसंग में वह इस प्रकार सोच सकने से वंचित रहता है कि व्यापार में हानि-लाभ तो चलता ही रहता है। आज यदि हानि हो गई तो आगे लाभ भी होगा। मैं परिश्रम, पुरुषार्थ, सावधानी और साख के बल पर सारी कमी पूरी कर लूँगा। इस प्रकार अपनी निराश भावना के कारण मनोहीन व्यक्ति प्रकाश के स्थान पर अन्धकार ही देख सकता है।

मानसिक दौर्बल्य अथवा मनोहीनता मानव-जीवन के लिये भयानक अभिशाप है। अदम्य शारीरिक शक्ति और प्रचुर साधन होने पर भी मनोहीन व्यक्ति जीवन में असफल ही रह जाता है। जबकि मनोबली व्यक्ति सामान्य शारीरिक क्षमता और साधनों की कमी में भी अपने साहस, उत्साह और संलग्नता के बल पर क्षमता और साधनों की वृद्धि कर लेते हैं और संसार के सफल व्यक्तियों की पंक्ति में अपना स्थान बना लेते हैं।

यदि किन्हीं कारणों से कोई मानसिक दौर्बल्य का बन्दी बन गया है, तो ऐसा नहीं कि उसका यह अभिशाप दूर नहीं हो सकता। अवश्य ही दूर हो सकता है। प्रयत्न द्वारा संसार का हर काम सम्भव हो जाता है। यदि कोई अपने में मनोबल की कमी पाता है, तो उसे चाहिये कि वह धीरे-धीरे उन कामों में पड़ना आरम्भ करे, जिनसे उसे भय लगता है और अपनी सारी प्राप्त एवं प्रबुद्ध शक्ति को लगाकर पुरुषार्थ करे। असफल होने पर जरा भी निराश न हो और बार-बार प्रयत्न करते चले। इस प्रकार धीरे-धीरे अभ्यास द्वारा उसका मनोबल बढ़ने लगेगा और एक दिन वह सुयोग्य बन जायेगा।

मोटर, रेल और हवाई-जहाज चलाना सीखने वाले आरम्भ में डरते हैं किन्तु तब भी वे लगनपूर्वक उस काम में लगे ही रहते हैं। धीरे-धीरे उनका मनोबल बढ़ता जाता है, एक दिन वे इतने आत्मविश्वासी हो जाते हैं कि बिना किसी शंका के दुरुह स्थानों पर भी अपना यान चलाते चले जाते हैं।

मनोबल मनुष्य का प्रधान बल है। इसकी वृद्धि किए बिना क्या जीवन के, क्या सामाजिक, क्या आर्थिक और क्या आध्यात्मिक किसी भी क्षेत्र में सफलता नहीं मिल सकती ? अस्तु, इस प्रधान बल को निरन्तर बढ़ाते ही रहना चाहिये। मनोबल की प्राप्ति से ही साहस की सिद्धि और अकारण भय से निवृत्ति सम्भव है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनस्विता के क्षेत्र में चिन्तन की भूमिका

चिन्तन-क्रम व्यवस्थित हो

जीवन एक लम्बा पथ है, जिसमें कितने ही प्रकार के झंझावात आते रहते हैं। कभी संसार की प्रतिकूल परिस्थितियाँ अवरोध खड़ा करती हैं तो कभी स्वयं की आकांक्षाएँ । ऐसे में सन्तुलित दृष्टि न हो तो भटकाव ही हाथ लगता है। असफलताओं के प्रस्तुत होते ही असन्तोष बढ़ता जाता है तथा मनुष्य अनावश्यक रूप से भी चिन्तित रहने लगता है। सन्तुलन के अभाव में चिन्ता-आदत में शुमार होकर अनेकों प्रकार की समस्याओं को जन्म देती है। अधिकांश कारण इनके निराधार ही होते हैं।

चिन्ता किस प्रकार उत्पन्न होती है ? इस सम्बन्ध में प्रख्यात मनोवैज्ञानिक **मैकडूगल** लिखते हैं कि "मनुष्य की इच्छाओं की आपूर्ति में जब अड़चनें आती हैं तो उसका विश्वास, आशंका और निराशा में परिवर्तित हो जाता है, पर वह आयी अड़चनों तथा विफलताओं से पूर्णतः निराश नहीं हो जाता, इसलिए उसकी विभिन्न प्रवृत्तियाँ अपनी पूर्ति और अभिव्यक्ति का प्रयास करती रहती हैं। सामाजिक परिस्थितियाँ तथा मर्यादायें मनुष्य के लिए सबसे बड़ी अवरोध बनकर सामने आती हैं तथा इच्छाओं की पूर्ति में बाधक बनती हैं, जिससे उसके मन में आंतरिक संघर्षों के लिए मंच तैयार हो जाता है। इसी में से असन्तोष और चिन्ता का सूत्रपात होता है, अनावश्यक चिन्ता उत्पत्ति के अधिकांश कारण मनोवैज्ञानिक होते हैं।"

एक सीमा तक चिन्ता की प्रवृत्ति भी उपयोगी है, पर जब वह मर्यादा सीमा का उल्लंघन कर जाती है तो मानसिक सन्तुलन के लिए संकट पैदा करती है। व्यक्तिगत, पारिवारिक तथा सामाजिक जीवन से जुड़े कर्त्तव्यों के निर्वाह की चिन्ता हर व्यक्ति को होनी चाहिए। बच्चों के स्वास्थ्य, शिक्षण एवं विकास की, उन्हें आवश्यक सुविधायें जुटाने की चिन्ता अभिभावक न करें, अपनी मस्ती में डूबे रहें, भविष्य की उपेक्षा करके वर्तमान में तैयारी न करें तो भला उनके उज्ज्वल भविष्य की आशा कैसे की जा सकती है ? विद्यार्थी खेलकूद में ही समय गँवाता रहे—आने वाली परीक्षा की तैयारी न करे तो उसके भविष्य का अन्धकारमय होना सुनिश्चित है।

'जो होगा सो देखा जायेगा', किसान यह नीति अपनाकर फसलों की देख-रेख करना छोड़ दें, निराई-गुड़ाई करने की व्यवस्था न बनाये, खाद-पानी देना बन्द कर दे तो फसल के चौपट होते देर न लगेगी। व्यवसाय में व्यापारी बाजार भाव के उतार-चढ़ाव के प्रति सतर्क न रहे तो उसकी पूँजी के डूबते देरी न लगेगी। सीमा प्रहरी रातों-दिन पूरी मुस्तैदी के साथ सीमा पर डटे चहल-कदमी करते हैं। सुरक्षा की चिन्ता वे न करें तो दुश्मन-घुसपैठियों से देश को खतरा उत्पन्न हो सकता है। मनीषी, विचारक, समाज सुधारक, देशभक्त, महापुरुष का अधिकांश समय विधेयात्मक चिन्तन में व्यतीत होता है। उन्हें देश, समाज, संस्कृति ही नहीं समस्त मानव जाति के उत्थान की चिन्ता होती है। सार्वजनीन तथा सर्वतोमुखी प्रगति के लिए वे योजना बनाते और चलाते हैं। यह विधेयात्मक चिन्ता ही है, जिसकी परिणति रचनात्मक उपलब्धियों के रूप में होती है।

मानव जीवन वस्तुतः अनगढ़ है। पशु-प्रवृत्तियों के कुसंस्कार उसे पतन की ओर ढकेलने के लिए सतत् प्रयत्नशील रहते हैं। उनकी अभिप्रेरणा से प्रभावित होकर इन्द्रियों को मनमानी बरतने की खुली छूट दे दी जाय तो सचमुच ही मनुष्य पशुओं की श्रेणी में जा बैठेंगे, पर यह आत्म-गरिमा को सुरक्षित रखने की चिन्ता ही है जो मनुष्य को पतन के प्रवाह में बहने से रोकती है। मानवी काया में नरपशु भी होते हैं, जिनका कुछ भी आदर्श नहीं होता, परन्तु जिनमें भी महानता के बीज होते हैं, वे उस प्रवाह में बहने से इन्कार कर देते हैं। सुरक्षा प्रहरी की तरह वह स्वयं की प्रवृत्तियों के प्रति विशेष जागरूक होते हैं। हर विचार का, मन में आये संवेगों का वे बारीकी से परीक्षण करते हैं तथा सदैव उपयोगी चिन्तन में अपने को नियोजित करते हैं।

चिन्ता करना मनुष्य के लिए स्वाभाविक है। एक सीमा तक वह मानवी विकास में सहायक भी है। पशुओं का जीवन तो प्रवृत्ति तथा प्रकृति प्रेरणा से संचालित होता है। शिश्नोदर जीवन वे जीते तथा उसी में आनन्द अनुभव करते हैं किन्तु मनुष्य की स्थिति भिन्न है। मात्र इन्द्रियों की परितृप्ति से उसे सन्तोष नहीं हो सकता, होना भी नहीं चाहिए क्योंकि उसके ध्येय उच्च हैं। उनकी प्राप्ति के लिए उसे स्वेच्छापूर्वक संघर्ष का मार्ग वरण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करना पड़ता है। यह मनुष्य के लिए गौरवमय बात भी है कि वह अपनी यथास्थिति पर सन्तुष्ट न रहे।

प्रख्यात यूनानी दार्शनिक सुकरात कहा करता था कि 'एक असन्तुष्ट मनुष्य सन्तुष्ट पशु से कहीं अच्छा है।' सचमुच ही मनुष्य पशुओं की तरह शिश्नोदर जीवन की तृप्ति में ही सन्तुष्ट हो जाय तो उसका विकास अवरुद्ध हो जायेगा। मानव संस्कृति का इतिहास वस्तुत: निषेधों और संघर्षों की एक ऐसी गाथा है, जो असन्तोष से शुरू हुई पर प्रगति की एक प्रमुख आधार भी बनी। अपनी गयी-गुजरी स्थिति से उबरने की चिन्ता मानव को न हुई होती तो आज की प्रगतिशील स्थिति तक पहुँचना सम्भव न हो पाता।

जिस समाज में मनुष्य रहता है, उसमें अगणित प्रकार के लोग हैं। चाहते हुए भी सबको एक जैसा नहीं बनाया जा सकता। अपने आपे को बदलना सामान्य व्यक्ति के लिए कठिन पड़ता है। दूसरों की अभिरुचियाँ बदल देना और भी कठिन है। सभी अपनी मनमर्जी के अनुकूल ढल जाँय—यह एक ऐसी हवाई कल्पना है, जो कभी पूरी नहीं होती। जो ऐसी कल्पना करते अथवा सोचते हैं, वे वास्तविकता से सर्वथा अपरिचित हैं। व्यक्ति तथा समाज की अधिकांश समस्याएँ भी इसीलिए उत्पन्न होती हैं कि मनुष्य सामाजिक मनोविज्ञान को समझ नहीं पाता। अनावश्यक रूप से चिन्तित तथा खिन्न होने का कारण भी यही है कि मनुष्य अपनी कल्पना के अनुरूप समाज और संसार को देखना चाहता है, इस चाह की आपूर्ति कभी नहीं हो पाती।

विभिन्न प्रकृतियों एवं अभिरुचियों वाले व्यक्तियों से मुक्त समाज से जो जितना अधिक तालमेल बिठा लेता है, वह जीवन में उतना ही सफल रहता है। तालमेल बिठाने का अर्थ यह कदापि नहीं है कि अनौचित्य से समझौता किया जाय वरन् यह है कि अच्छाई का जितना अंश जहाँ दिखाई दे उतने अंश से सामंजस्य स्थापित किया जाय। व्यक्तियों की बुराइयों को सुधारने के लिए प्रयत्न तो किया जाय, पर यदि नहीं दूर होतीं तो उनकी उपेक्षा की जाय। समाज में यदि प्रसन्नतापूर्वक रहना है तो सामंजस्य की प्रवृत्ति विकसित करनी होगी। दूसरों को बदलने की अपेक्षा अपने को बदलना सुगम और हितकर है।

ध्यान यह रखा जाना चाहिए कि चिन्ता को इस सीमा से आगे न बढ़ने दिया जाय, जिससे कि मनोबल और मानसिक सन्तुलन को ही खतरा उत्पन्न होने लगे। मनोबल एवं मन:सन्तुलन को किसी भी कीमत पर नहीं गँवाया जाना चाहिए। चिन्ता को उतना ही महत्व दिया जाय जितना कि वह कर्त्तव्य निर्वाह में सहायक है। मनस्वियों की रीति-नीति ऐसी ही होनी चाहिए।

न आत्म-विश्वास खोयें, न भयाक्रान्त रहें

अपने ऊपर से विश्वास खो बैठने की मन:स्थिति को 'आत्महीनता' (इन्फीरियॉरिटी कॉम्पलेक्स) कहते हैं। इसमें कोई मस्तिष्कीय विकृति नहीं होती। इसे कोई रोग भी नहीं कहा जा सकता। यह किसी कारण से आरम्भ होते-होते आत्म-विश्वास गँवा बैठने की आदत भर है ।

इस आदत का प्रमुख लक्षण अपने आपको तुच्छ, हीन, असमर्थ, उपेक्षित एवं पराजित मानना है। ऐसी दशा में व्यक्ति दूसरों से शर्माता है और उनसे पीछा छुड़ाने की मन होता है। कहीं ऐसी जगह छुपने का मन करता है, जहाँ दूसरे लोग देखें नहीं। देखें तो वार्तालाप न करें। उसे एक प्रकार का डर-सा लगता है। यह डर किस बात का ? कोई मारेगा या त्रास देगा ऐसा भय तो नहीं होता ? पर इतना जरूर होता है कि अपने ऊपर से भरोसा उठ जाता है और लगता है कि दूसरों से सम्बन्ध साधने पर या तो निन्दा होगी या कुछ ऐसा बन पड़ेगा, जिसका अर्थ होता है पराजित या अपमानित होना।

वस्तुत: ऐसी कोई बात नहीं होती कि दूसरे लोग बुरा इरादा रखते हों। द्वेष मानते हों या गिराने, डराने के लिए मिले हों पर दूसरों के साथ मिलने-जुलने, आत्मीयता विकसित करने की सामर्थ्य भीतर से टूट जाती है तो मन की बात किसी के सामने प्रकट करने की हिम्मत नहीं रहती । हौंसला पस्त हो जाता है और मिलने पर यही डर बना रहता है कि न जाने कोई क्या पूछ बैठे ? उसका उत्तर अपने से बने या नहीं ? कुछ उत्तर दिया जाय तो उपहास या विरोध तो न होने लगे ?

यों अकारण कोई किसी से लड़ता नहीं और न तिरस्कार की दृष्टि से मिलता-जुलता ही है। सभी को विचारों का आदान-प्रदान करने की अपनी कहने दूसरे की सुनने की इच्छा होती है क्योंकि वह मनोरंजन का सुगम और अच्छा तरीका है, पर साथ ही यह भी आवश्यक है कि सामने वाले भी मिलनसार हों। वह अकारण दोषी की तरह झेंपता-झिझकता न हो। अन्यथा उपेक्षा दिखाने पर, दबे-दबे, धीमे-धीमे शब्दों में कुछ उत्तर देने में अपनी ओर से वार्तालाप न करने से दूसरा आदमी भी खीझता नहीं तो कम से कम इतना तो करता ही है कि लोकाचार की सामान्य वार्ता करने के उपरान्त अपना मुख मोड़ ले और किसी से बात करने लगे। यह स्वाभाविक भी है, पर वह झेंपू व्यक्ति इसे भी अपनी उपेक्षा या पराजय मानता है और इस मिलन पर कोई प्रसन्नता व्यक्त नहीं करता ।

देहाती परम्परा के अनुसार नव वधुओं को कई दिन तक घूँघट निकालकर चुपचाप किसी कोने में पीठ फेर कर बैठा रहना पड़ता है। कुछ कहना हो तो इतने धीमे शब्दों में, अति संक्षेप में या इशारे से अपनी बात कहती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं। पुरातन पंथी वृद्धाएँ इस संकोचशीलता को सराहती भी हैं और ऊँचे कुल-खानदान की बात कर उसे सराहती हैं। कई पुरुष भी ऐसी ही मन:स्थिति के होते हैं, संकोचशील या डरपोक। इससे सर्वत्र अजनवी वातावरण ही दिखते और परिचित भी अपरिचित जैसे लगते हैं और खुलकर वार्तालाप करते हुए उन्हें संकोच सताता है। अपनी व्यथा एवं समस्या तक मुँह खोलकर कह नहीं पाते फिर दूसरों का परामर्श या समाधान प्राप्त करने का तो प्रश्न ही नहीं उठता।

आमतौर से अशिक्षित महिलाओं में यह दोष उन क्षेत्रों में अधिक पाया जाता है, जहाँ घूँघट-पर्दे का रिवाज अधिक होता है। वे घुटती रहती हैं, पर अपनी कठिनाइयों को कह नहीं पातीं। लगाये गये दोषारोपणों को भी निर्दोष होते हुए सुनती रहती हैं। उत्पीड़न-शोषण भी सहती हैं, पर आँसू बहाने के और चुप रहने के अतिरिक्त और कुछ नहीं कह पातीं। चुप रहना भी अर्ध स्वीकृति मानी जाती है जहाँ दोषारोपण पर सर्वथा चुप रहना—शालीनता का चिन्ह माना जाता है। वहाँ उससे यह भी प्रकट होता है कि आक्षेप सही है अन्यथा सफाई क्यों नहीं दी गई। ऐसी महिलाओं पर गुण्डे-बदमाश भी घात लगाते और छेड़खानी करने में नहीं चूकते क्योंकि उन्हें यह भय नहीं रहता कि विरोध का सामना करना पड़ेगा। असहाय भेड़-बकरियों की तरह हर कोई उन्हें सताने को बैठा रहता है।

ठीक यही बात पुरुषों के सम्बन्ध में भी है। कोई चापलूस उन्हें आध्यात्मिक, दार्शनिक, सज्जन, गम्भीर आदि भी कह सकते हैं, पर असल में उन्हें मूर्ख, प्रतिभाहीन और अयोग्य ही समझा जाता है। निरर्थक वाचालता अपनाने वाले भी अपना मूल्य महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों की आँखों में गिरा लेते हैं पर यह भी स्पष्ट है कि डरपोक और अनावश्यक संकोचशील अपनी योग्यता में कमी होने का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं और जहाँ जाते हैं, वहीं घाटा उठाते हैं। असामाजिक, गैर मिलनसार व्यक्तियों से कोई प्रसन्न नहीं रहता। उन पर दुराव या दोष लगता है और चाहते हुए भी कुछ परामर्श या सहयोग दे सकने की स्थिति तक नहीं पहुँच पाता। इस प्रकार यह आदत मनुष्य को पग-पग पर नीचा दिखाने वाली ही सिद्ध होती है। ऐसे लोग जीवन में कभी महत्त्वपूर्ण सफलता अर्जित नहीं कर सकते। भले ही वे भाग्य को, समय को या सम्बन्धियों को इसके लिए दोषी ठहराते रहें। अस्तु जिन्हें भी इस व्यथा ने घेर लिया हो, उन्हें इसके दुष्परिणाम समझने चाहिए और धीरे-धीरे मिलनसारी की, वार्तालाप की और हँसने-हँसाने की आदत डालनी चाहिए। अपनी कहने और दूसरे की सुनने वाले सहज ही अपने मित्र बढ़ा लेते हैं और शत्रुता की लकीरों को धोकर सहज ही साफ कर देते हैं।

उससे अगला चरण है—भयाक्रान्त रहने का। इसकी मानसिक रोगों में भी गणना होती है और उपचार के लिए चिकित्सकों, मनोविज्ञानियों एवं भूत झाड़ने वाले ओझाओं का दरवाजा खटखटाना पड़ता है। इस भयाक्रान्त मन:स्थिति को चिकित्सकों की भाषा में 'फोबिया' कहते हैं। सनक की तुलना अधिक कष्टप्रद मानते हैं। सनकी व्यक्ति कल्पना करता है और बिना प्रमाण की, खोजबीन की आवश्यकता समझें, अशुभ मान्यतायें गढ़ लेता है और उसी दुराग्रह के कारण अपना और दूसरों का अनर्थ करता है। उन पर किसी के समझाने का भी असर नहीं पड़ता। ऐसे लोगों की अर्ध-विक्षिप्तों में गणना होती है। सनकी लोग उन्मादियों की तरह बिना आगा-पीछा सोचे कुछ भी भला-बुरा कर सकते हैं। वे किसी की बात पर ऐसा भरोसा भी कर सकते हैं जैसा कि अन्ध-विश्वासी करते हैं। आवेश उतरने पर उन्हें पछताते, सिर धुनते देखा गया है।

'फोबिया' भयाक्रान्त मन:स्थिति के रोगी हर समय डरते-रहते हैं और कारण न होने पर भी कल्पना के सहारे गढ़ लेते हैं। ऐसे लोग वयस्क होते हुए भी अन्धेरे में उठकर पेशाब तक नहीं जा सकते। चूहों की खट-खट उन्हें चोरों की सेंध लगाने जैसी प्रतीत होती है। झुरमुट या पेड़ की हिलती डालियाँ भूत-चुड़ैलों जैसी लगती हैं। ऐसे लोग ज्योतिषियों के चंगुल में आसानी से फँस जाते हैं। डर का लाभ उठाकर ग्रह शान्ति करने वाले या भूत भगाने वाले उनकी उलटे उस्तरे से हजामत बनाते रहते हैं।

भयाक्रान्त के मन में निरन्तर आक्रमण, प्रतिशोध और विश्वासघात छाया रहता है। वे अकारण अपना जीवन भार बना लेते हैं और मित्रों पर भी शत्रुओं जैसे आरोप लगाते हैं। भविष्य उन्हें कठिनाइयों और विपत्तियों से भरा हुआ दीखता है।

इस मन:स्थिति को अपने भीतर विवेकशीलता, यथार्थवादिता, साहसिकता अपनाकर दूर किया जा सकता है। यह कार्य भले ही स्वयं कर लिया जाय या किसी विचारशील का आश्वासन, प्रोत्साहन उपलब्ध कर लिया जाय।

आत्म-विश्वास ही सफलता का मूल-मन्त्र

स्वामी रामतीर्थ कहते थे—"धरती को हिलाने के लिए धरती से बाहर खड़े होने की आवश्यकता नहीं है, आवश्यकता है आत्मा की शक्ति को जानने-जगाने की।" इस उक्ति में आत्मा की शक्ति की उस महत्ता का प्रतिपादन किया गया है, जिसका दूसरा नाम आत्म-विश्वास है। जिसका साक्षात्कार करके कोई भी व्यक्ति अपने परिवार में तथा अपने में आशातीत परिवर्तन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर सकता है। विवेकानन्द, बुद्ध, ईसा, सुकरात और गाँधी की प्रचण्ड आत्म-शक्ति ने युग के प्रवाह को मोड़ दिया। अभी हाल के स्वतंत्रता संग्राम में महात्मा गाँधी ने सशक्त ब्रिटिश साम्राज्य की नींव उखाड़ दी। उन्होंने अपनी दृढ़ संकल्प शक्ति तथा आत्म-विश्वास के सहारे अँग्रेजों को भारत छोड़ने पर विवश किया। स्वामी विवेकानन्द एवं रामतीर्थ जब संन्यासी का वेश धारणकर अमेरिका गये तो उपहास के पात्र बने किन्तु बाद में उन्होंने आत्म-विश्वास के सहारे विश्व को जो कुछ दिया वह अद्वितीय है।

आत्म-विश्वास के समक्ष विश्व की बड़ी से बड़ी शक्ति झुकती रहेगी। इसी आत्म-विश्वास के सहारे आत्मा और परमात्मा के बीच तादात्म्य उत्पन्न होता है तथा अजस्र शक्ति के स्रोत का द्वार खुल जाता है। कठिन परिस्थितियों एवं हजारों विपत्तियों के बीच भी मनुष्य आत्म-विश्वास के सहारे आगे बढ़ता जाता है तथा अपनी मंजिल पर पहुँचकर रहता है।

मानव जाति की उन्नति के इतिहास में महापुरुषों के आत्म-विश्वास का असीम योगदान रहा है। भौतिक दृष्टि से तात्कालिक असफलताओं को शिरोधार्य करते हुए भी उन्होंने विश्वास न छोड़ा और अभीष्ट सफलता प्राप्त की। आत्म-विश्वास का जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। लौकिक एवं अलौकिक सफलताओं का आधार यही है। उसके सहारे ही निराशा में आशा की झलक दीखती है। दुःख में भी सुख का आभास होता है। इससे बड़े-बड़े कार्य सम्पन्न किए जा सकते हैं, किए गये हैं। चीन की दीवार, मिस्र के पिरामिड, पनामा नहर एवं दुर्गम पर्वतों पर विनिर्मित सड़कें व भवन इसका प्रत्यक्ष प्रमाण देते हैं।

वस्तुतः समस्त शारीरिक एवं मानसिक शक्तियों का आधार आत्म-विश्वास ही है। इसके अभाव में अन्य सारी शक्तियाँ सुप्तावस्था में पड़ी रहती हैं। जैसे ही आत्म-विश्वास जाग्रत होता है, अन्य शक्तियाँ भी उठ खड़ी होती हैं और आत्म-विश्वास के सहारे असंभव समझे जाने वाले कार्य भी आसानी से पूरे हो जाते हैं।

वैयक्तिक जीवन में भी आत्म-विश्वास ही संपूर्ण सफलताओं का आधार है। विश्वास के अभाव में ही श्रेष्ठतम उपलब्धियों से लोग वंचित रह जाते हैं। असफलताओं का कारण है, अपनी क्षमता को न पहचान पाना और अपने को अयोग्य समझना। जब तक अपने को अयोग्य, हीन, असमर्थ समझा जायेगा, तब तक सौभाग्य एवं सफलता का द्वार बन्द ही रहेगा।

व्यक्ति जब अपने अन्दर छिपी हुई शक्तियों के स्रोत को जान लेता है, तो वह भी देव तुल्य बन जाता है। विश्वास के जाग्रत होते ही आत्मा में छुपी हुई शक्तियाँ प्रस्फुटित हो उठती हैं। हमारे अन्दर के श्रेष्ठ विचार महत्त्वपूर्ण कार्य के रूप में परिणित हो जाते हैं। इसके विपरीत अपने प्रति अविश्वास से तो शक्ति के स्रोत सूख जाते हैं और लोग भण्डार के होते हुए भी दीन तथा दरिद्र ही बने रहते हैं।

अपने विषय में जैसी मान्यता बनायी जाती है, इसके द्वारा भी वैसा ही व्यवहार किया जाता है। जो व्यक्ति अपने को मिट्टी समझता है, अवश्य कुचला जाता है। धूल पर सभी पाँव रखते हैं किन्तु अंगारों पर कोई नहीं रखता। जो व्यक्ति कठिनतम कार्यों को भी अपने करने योग्य समझते हैं, अपनी शक्ति पर विश्वास करते हैं, वे चारों ओर अपने अनुकूल परिस्थितियाँ उत्पन्न कर लेते हैं। जिस क्षण व्यक्ति दृढ़तापूर्वक किसी कार्य को करने का निश्चय कर लेता है, तो समझना चाहिए कि आधा कार्य पहले ही पूर्ण हो गया। दुर्बल प्रकृति के व्यक्ति शेखचिल्ली के समान कोरी कल्पनायें मात्र किया करते हैं किन्तु मनस्वी व्यक्ति अपने संकल्पों को कार्यरूप में परिणित कर दिखाते हैं।

विराट् वृक्ष की शक्ति छोटे-से बीज में छिपी रहती है। यही बीज खेत में पड़कर उपयोगी खाद-पानी प्राप्त करके बड़े वृक्ष के रूप में प्रस्फुटित होता है, उसी प्रकार मनुष्य के अन्दर भी समस्त संभावनायें एवं शक्तियाँ बीज रूप में छिपी हुई हैं, जिनको विवेक के जल से अभिसिंचित कर तथा श्रेष्ठ विचारों की उर्वरा खाद देकर जाग्रत किया जा सकता है। यदि व्यक्ति अपने अन्दर की अमूल्य शक्ति एवं सामर्थ्य को जान लेने में सफल हो जाय तो वह सामान्य से असामान्य और असामान्य से महान् हो सकता है।

मनुष्यों की संगठित शक्ति यदि श्रेष्ठ मार्ग पर चल पड़े तो विश्व का काया-कल्प ही हो सकता है। शक्ति के उदित होते ही असम्भव समझे जाने वाले कार्य भी सम्भव हो जाते हैं। जिनको पूर्ण हुए देखकर आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहता।

मानव जीवन ईश्वर का दिया हुआ सर्वोपरि उपहार है। इसका महत्त्व एवं गरिमा तभी है, जब व्यक्ति इन पंगु विचारों को अपने मन में स्थान न दे। उनसे शक्ति का प्रवाह बन्द हो जाता है। ईश्वरीय अनुदान एवं दी हुई शक्ति का महत्त्व जीवन के सदुपयोग में है। अपने को उठाना तथा दूसरों को भी उठाने में सहयोग करने में ही मानव जीवन की सार्थकता है।

जब तक हम किसी कार्य में अपनी समस्त शक्तियाँ लगा नहीं पाते, मन एकाग्र नहीं करते, तब तक वह कार्य पूर्ण नहीं हो सकता। कार्य जितना कठिन होता है, उसके लिए उतने ही दृढ़ विश्वास एवं योगी की तरह तन्मय होकर निरन्तर प्रयत्न करने की आवश्यकता होती है। ईश्वरीय सत्ता भी उन्हीं की सहायता करती है, जो स्वयं प्रयत्नशील हैं।

आत्म-विश्वास, सतत परिश्रम एवं दृढ़ निश्चय के समक्ष कुछ भी असम्भव नहीं है। इन्हीं गुणों के प्रकाश में ऐतिहासिक कार्य संसार में सम्पन्न हुए हैं। विद्वानों,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

महापुरुषों, धर्म-प्रवर्तकों, योद्धाओं, सृजेताओं, शोधकर्त्ताओं के ज्वलन्त उदाहरण इस बात के साक्षी हैं कि उन्होंने आत्म-विश्वास के आधार पर क्या नहीं कर दिखाया ?

छोटी-छोटी बैटरियों की शक्ति शीघ्र ही समाप्त हो जाती है किन्तु जिन बत्तियों का सम्बन्ध पावर हाउस से होता है, वह निरन्तर जलती रहती हैं। आत्म-विश्वास वह सम्पर्क माध्यम है, जिसके सहारे अकूत शक्ति के भण्डार परमात्मा के साथ सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है। मनुष्य को चाहिए कि वह अपने विचारों को कार्यरूप में परिणित करे। स्वार्थ से दूर रहकर अपनी दृष्टि का विकास करे। सद्गुणों को धारण कर इसी जीवन में गौरवान्वित एवं सम्मानास्पद बना जा सकता है।

श्रेष्ठ मार्ग पर नियोजित व्यक्तियों की शक्तियाँ श्रेयस्कर परिणाम उपस्थित करती हैं, जिसे लोग भाग्य चमत्कार समझते हैं। वास्तव में वे व्यक्ति की दृढ़ निष्ठा एवं आत्म-विश्वास का परिणाम ही होती हैं।

प्रतिकूलताओं से जूझें, सन्तुलन बनाये रखें

जीवन जीते समय खिलाड़ी द्वारा खेले जाने जैसी मनःस्थिति होनी चाहिए। आये दिन घटित होने वाले घटनाक्रमों को संसार में निरन्तर चलने वाली अनुकूल-प्रतिकूल लहरों में से एक मानना चाहिए। समुद्र में ज्वार-भाटे आते रहते हैं, तालाबों में लहरें उठती रहती हैं, पर इससे उनके अन्तराल में स्थिरता ही बनी रहती है, कोई विक्षेप नहीं होता। उसी प्रकार समय-समय पर आती-जाती रहने वाली अनुकूलताओं और प्रतिकूलताओं के सम्बन्ध में भी मन को संयमित-संतुलित बनाये रहना चाहिए। यह तभी सम्भव हो सकता है, जब बदलती परिस्थितियों की क्रमबद्धता को सामान्य माना जाये, उन्हें असामान्य होने का महत्त्व न दिया जाये।

मनोवैज्ञानिक **जैम्स** का कथन है कि "यह सम्भव नहीं कि सदा अनुकूलता ही बनी रहे, कभी प्रतिकूलता न आये।" दिनमान की कितनी ही महत्ता क्यों न हो, पर उसका भी संध्याकाल में अवसान होता ही है। दिन के समय जो प्रकाश था, ऊष्मा का जैसा प्रवाह था, उस सबका रात्रि का आगमन होते ही अन्त हो जाता है। परिस्थिति सर्वथा विपरीत बन जाती है, सघन अन्धकार छा जाता है—इस परिवर्तन को रोका नहीं जा सकता। अन्धकार से कितना ही डरा जाय और कोसा जाय वह नियतिक्रम के अनुरूप आता ही है। उस आगमन को रोकने के लिए सिर खपाने की अपेक्षा यही उचित है कि अपनी गतिविधियों में ऐसा हेर-फेर कर लिया जाय जो परिवर्तित परिस्थितियों के साथ तालमेल बिठा सकें।

रात्रि को आमतौर से सभी सो जाते हैं, इस विवशता के पीछे एक लाभ भी है कि दिनभर के किए हुए श्रम की थकान मिटती है। दूसरे दिन नई स्फूर्ति के साथ काम करने का अवसर मिलता है। दिन छिपने पर सभी घर लौट आते हैं और परिवार के साथ रहने, मौज मनाने का अवसर प्राप्त करते हैं। रात्रि निरर्थक, असुविधाजनक और डरावनी प्रतीत होती है, तो भी विचार करने पर प्रतीत होता है कि उसकी भी अपनी उपयोगिता और आवश्यकता थी। प्रकृति ने इसी आधार पर उसका अहर्निश चलते रहने वाला चक्र घुमाया है।

ऋतु परिवर्तन में एक-दूसरे से सर्वथा भिन्नता रहती है। वर्षा के दिनों वाली स्थिति सर्दी में नहीं रहती, जो दृश्य सर्दी के दिनों में दृष्टिगोचर होता है वह गर्मी में नहीं रहता। बसन्त और शरद की परिस्थितियाँ अपने ढंग की अनौखी हैं। उस समय जैसी परिस्थितियाँ अन्य किसी ऋतु के साथ नहीं बनतीं। हो सकता है किसी को कोई ऋतु अनुकूल पड़ती हो किसी को प्रतिकूल। बुवाई के दिनों में वर्षा उपयोगी लगती है और कटाई के दिनों गरम मौसम सुहाता है। कुम्हार पूरे साल सूखा पसंद करता है और माली का उद्यान तब उमँगता है, जब बदली छाई रहे, बूँदाबाँदी होती रहे। भावुकों की उमंग बसन्त में इतराती है। काँस फूलने से शरद में समूचा क्षेत्र सुहावना लगता है। यह पसंदगियाँ किन्हीं को कितनी ही प्रिय क्यों न लगती हों, पर उनका सदा बने रहना सम्भव नहीं। थोड़े-थोड़े समय के लिए वे अपनी छटा दिखाती हैं और फिर दूसरे दौर में बदल जाती हैं। उन्हें इस बात की परवाह नहीं रहती कि उनका आगमन-पलायन किनको प्रिय लगता है और किनको अप्रिय ? नियति का क्रम नहीं बदला जा सकता, अपने को ही उस परिवर्तन के अनुरूप ढालना-बदलना पड़ता है।

खेल-खिलाड़ी निरन्तर हारते-जीतते रहते हैं। ताश-शतरंज में भी हार-जीत होती रहती है, किन्तु खेलने वाले उसकी परवाह नहीं करते। चेहरे पर शिकन तक नहीं आने देते, जो इतना कर पाते हैं, उन्हीं को खेल का आनन्द आता है। जो हर हार पर उदास होते हैं और जीत पर इतराते हैं, उनका खिलाड़ी होना व्यर्थ है।

मध्यवर्ती सन्तुलन स्वाभाविक स्थिति है। तापमान बढ़ जाने से ज्वर माना जाता है। शरीर ठण्डा रहे तो वह भी शीत प्रकोप माना और चिन्ताजनक समझा जाता है। रक्तचाप बढ़ने की ही तरह उसका घटना भी रुग्णता का चिन्ह है। किसी अनुकूलता से लाभान्वित होने पर हर्षातिरेक में उछलने लगना भी असंगत है और असफलता की प्रतिकूलता का सामना करने पर विषाद में डूब जाना और सिर धुनना भी अविकसित-अनगढ़ व्यक्तित्व का चिन्ह है। इन असंतुलनों से बचा ही जाना चाहिए।

सभी व्यक्ति इच्छानुकूल आचरण करेंगे—यह आशा रखना व्यर्थ है। सभी अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व रखते हैं। जन्म-जन्मान्तरों के संचित भले-बुरे संस्कार साथ लेकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आते हैं। पलने और विकसित होने की परिस्थितियों में भिन्नता रहती है। किसी पेड़ के पत्तों का गठन आपस में मिलता-जुलता है, पर उनमें भिन्नता अवश्य रहती है। हर आदमी के अँगूठे के निशानों में अन्तर होता है। एक आकृति-प्रकृति के दो मनुष्य कहीं नहीं देखे गये। भिन्नता ही इस संसार की विशेषता है। उसके आधार पर बहुत तरह से सोचने और स्थिति के अनुरूप बदलने, व्यवहार करने की कुशलता आती है। मनुष्य बहुज्ञ, बहुश्रुत, बहुकौशल सम्पन्न इसी आधार पर बनता है। उतार-चढ़ावों का सामना करते रहने से ही व्यावहारिकता में निखार आता है।

हल्के बर्तन चूल्हे पर चढ़ते ही आग-बबूला हो जाते हैं और उसमें डाले गये पदार्थ उफनने लगते हैं, पर भारी-भरकम बर्तनों में जो पकता है, उसकी गति तो धीमी होती है, पर परिपाक उन्हीं में ठीक से बन पड़ता है। हमें बबूले की तरह फूलना, फुदकना और इतराना नहीं चाहिए—ऐसी रीति-नीति स्थिर नहीं रहती, वह कुछ क्षण में टूट-फूट जाती है। प्रवाह झरने जैसा होना चाहिए जो नियत क्रम से नियत दिशा में प्रवाहमान रहे। तभी वह अपने स्वरूप को सही बनाये रह सकता है, सही रीति-नीति से सही काम कर सकता है।

चंचलता, व्यग्रता की मन:स्थिति में सही निर्धारण और सही प्रयास करते-धरते नहीं बन पड़ता। असंतुष्ट और उद्विग्न व्यक्ति जो सोचता है, एकपक्षीय होता है और जो करता है, उसमें हड़बड़ी का समावेश रहता है। ऐसी मन:स्थिति में किये गये निर्धारण या प्रयास प्राय: असफल ही होते हैं, उन्हें यशस्वी बनने का अवसर नहीं मिलता।

आवेश या अवसाद दोनों ही व्यक्ति को लड़खड़ाती स्थिति में धकेल देते हैं। ऐसी दशा में निर्धारित कार्यों को पूरा कर सकना, साथियों के साथ उपयुक्त तालमेल बिठाये रह सकना कठिन जान पड़ता है। प्रतिकूलतायें बाह्य परिस्थितियों के कारण जितनी आती हैं, उससे कहीं अधिक निज का असन्तुलन काम को बिगाड़ता है। व्यक्ति को उपहासास्पद, अस्थिर, अप्रामाणिक बनाता है।

सबसे बड़ी बात यह है कि उत्तेजना शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालती है। आक्रोश में भरे हुए उद्विग्न व्यक्ति न चैन से रहते हैं, न दूसरों को रहने देते हैं। रक्त उबलता रहता है, विचार क्षेत्र में तूफान उठता रहता है। फलत: जो व्यवस्थित था, वह भी यथास्थान नहीं रह पाता। पाचन तन्त्र बिगड़ता है, रक्त प्रवाह में व्यतिरेक उत्पन्न होता है। असंतुलित मस्तिष्क अनिद्रा, अर्द्ध-विक्षिप्तता जैसे रोगों से घिरकर स्वास्थ्य सन्तुलन को गड़बड़ाता है। हमें हँसती-हँसाती स्थिति में ही रहना चाहिए एवं हर परिस्थिति के लिए स्वयं को तैयार रखना चाहिए।

स्वयं को दुर्भाग्यग्रस्त मत मानिए

प्रकृति के नियमों में एक रहस्य बड़ा ही विचित्र, अद्भुत एवं रहस्यपूर्ण है। वह यह है कि हर विपत्ति के बाद उसकी विरोधी सुविधा प्राप्त होती है। जब मनुष्य बीमारी से उठता है, तो बड़े जोरों की भूख लगती है। निरोगता शक्ति बड़ी तीव्रता से जाग्रत होती है और जितनी थकान बीमारी के दिनों आई थी, वह तेजी के साथ पूरी हो जाती है। ग्रीष्म की जलन को चुनौती देती हुई वर्षा की मेघमालायें आती हैं और धरती को शीतल, शान्तिमय हरियाली से ढक देती हैं। हाथ-पैरों को अकड़ा देने वाली ठण्ड जब उग्र रूप से अपना जौहर दिखा चुकती है तो उसकी प्रतिक्रिया से एक ऐसा मौसम आता है, जिसके द्वारा यह शीत सर्वथा नष्ट हो जाता है। रात्रि के बाद दिन का आना सुनिश्चित है, अन्धकार के बाद प्रकाश का दर्शन भी अवश्य ही होता है। मृत्यु के बाद जन्म भी होता ही है। रोग, घाटा, शोक आदि विपत्तियाँ चिरस्थायी नहीं हैं, वे आँधी की तरह आती हैं और तूफान की तरह चली जाती हैं। उनके चले जाने के पश्चात् एक दैवी प्रतिक्रिया होती है, जिसके द्वारा उस क्षति की पूर्ति के लिए ऐसा विचित्र मार्ग निकल आता है, जिस बड़ी तेजी से उस क्षति की किसी न किसी प्रकार पूर्ति हो जाती है, जो आपत्ति के कारण हुई थी।

एक बार नष्ट हुई वस्तु फिर ज्यों की त्यों उसी रूप में नहीं आ सकती यह सत्य है, परन्तु यह भी सत्य है कि मनुष्य को सुसम्पन्न, सुखी बनाने वाले और भी कितने ही साधन हैं और उन नये साधनों में से कई एक उस क्षतिग्रस्त व्यक्ति को प्राप्त होते हैं—हो सकते हैं। जब घास को हम बार-बार हरी होते हुए देखते हैं, जब अन्धकार को हम बार-बार नष्ट होते देखते हैं, जब रोगियों को पुन: आरोग्य लाभ करते देखते हैं तो कोई कारण नहीं कि विपत्ति के बाद पुन: सम्पत्ति प्राप्त होने की आशा न की जाय। जो उज्ज्वल भविष्य की आशा नहीं करता, जिसे यह विश्वास नहीं कि मुझे पुन: अच्छी स्थिति प्राप्त होगी—वह नास्तिक है। जिसे ईश्वर की दयालुता पर विश्वास न होगा, वही ऐसा सोच सकता है कि मेरा भविष्य सदा के लिए अन्धकार में पड़ गया। जो पर्वत को राई कर सकता है उसकी शक्ति पर यह भी भरोसा करना चाहिए कि वह राई को पर्वत भी कर सकता है, जो आज रो रहा है, उसे यह न सोचना चाहिए कि उसे सदा ही रोता रहना पड़ेगा। निराशा परमात्मा के परमप्रिय पुत्र को किसी प्रकार शोभा नहीं देती।

जब किसी की एक टाँग टूट जाती है उस समय ऐसा प्रतीत होता है कि एक टाँग से चलना तो दूर, खड़ा रहना भी मुश्किल है—अब उससे किसी प्रकार चला-फिरा न जा सकेगा। पर जब अधीरता छोड़कर विवेक से काम लिया जाता है तो कामचलाऊ तरकीब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निकल आती है। लकड़ी का पैर लगाकर वह लँगड़ा आदमी अपना काम करने लगता है—इसी प्रकार अन्य कोई अंग-भंग हो जाने पर भी उसकी क्षतिपूर्ति किसी अन्य प्रकार से हो जाती है और फिर कुछ दिन बाद उस अभाव का खटकना बन्द हो जाता है।

'मैं पहले इतनी अच्छी दशा में था, अब इतनी खराब दशा में आ गया'—यह सोचकर रोते रहना और अपने चित्त को क्लेशान्वित बनाये रहना कोई लाभदायक तरीका नहीं। इससे लाभ कुछ नहीं होता, हानि अधिक होती है। दुर्भाग्य का रोना रोने से, अपने भाग्य को कोसने से मन में एक प्रकार की आत्महीनता का भाव उत्पन्न होता है। मेरे ऊपर ईश्वर का कोप है, देवता रूठ गये हैं, भाग्य फूट गया है—इस प्रकार का भाव मन में आने से मस्तिष्क की शिरायें शिथिल हो जाती हैं। शरीर की नाड़ियाँ ढीली पड़ जाती हैं, आशा और प्रसन्नता की कमी के कारण नेत्रों की चमक मन्द पड़ जाती है। निराश व्यक्ति चाहे किसी भी आयु का क्यों न हो, उसमें बूढ़ों के से लक्षण प्रकट होने लगते हैं, मुँह लटक जाता है, चेहरे पर रूखापन और उदासी छाई रहती है, निराशा और नीरसता उसकी हर एक चेष्टा से टपकती है। इससे आदमी अपने शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार के स्वास्थ्य को खो बैठते हैं। मन्दाग्नि, दस्त साफ न होना, दाँत का दर्द, मुँह के छाले या सोते समय मुँह से लार बहना, सिर दर्द, जुकाम, बाल पकना, नींद कम आना, डरावने स्वप्न दीखना, पेशाब में पीलापन व गदलापन, मुँह या बगलों से अधिक बदबू आना, हाथ-पैरों में हड़-फूटन, दृष्टि कम होना, कान में सनसन होना—जैसे रोगों के उपद्रव आये दिन खड़े रहते हैं। निराशा के कारण शरीर की अग्नि मन्द हो जाती है, अग्नि की मन्दता से उपरोक्त प्रकार के रोग उत्पन्न होने लगते हैं। शनैः-शनैः स्वास्थ्य को घुलाता हुआ वह व्यक्ति अल्पायु में ही मृत्यु के मुख में चला जाता है।

जो व्यक्ति अपने आपको दुर्भाग्यग्रस्त मान लेते है, उनमें मानसिक शिथिलता भी आ जाती है। कपाल की भूरी मज्जा कुम्हला जाती है, उसमें से चिकनाई कम हो जाती है, विचार शक्तियों का संचालन करने वाले नाड़ी तन्तु कठोर और शुष्क हो जाते हैं, उनमें से जो विद्युत धारा बहा करती है, उसका प्रवाह नाममात्र का रह जाता है। स्फुरण, कम्पन, संकुचन, प्रसारण सरीखी वे क्रियायें जिनके द्वारा मानसिक शक्तियों में स्थिरता एवं वृद्धि होती है, बहुत ही धीमी पड़ जाती हैं। फल यह होता है कि अच्छा-भला मस्तिष्क कुछ ही दिन में अपना काम छोड़ बैठता है, उसकी क्रियाशक्ति लुप्त हो जाती है।

कहते हैं कि विपत्ति अकेली नहीं आती, वह अपने साथ और भी अनेक विपत्तियों का जंजाल लाती है। एक के बाद दूसरी आपत्ति सिर पर चढ़ती है—यह बात असत्य नहीं है। निस्संदेह एक कष्ट के बाद दूसरे कष्टों का भी सामना करना पड़ता है। इसका कारण यह है कि विपत्ति के कारण मनुष्य निराश, दुःखी और शिथिल हो जाता है। भूतकाल का स्मरण करने, रोने-धोने और भविष्य का अन्धकारमय कल्पना चित्र तैयार करने में ही उसका मस्तिष्क लगा रहता है। समय और शक्ति का अधिकांश भाग इसी कार्य में नष्ट होता रहता है। जिससे पुनः सुस्थिति प्राप्त करने की दिशा में सोचने और साहसपूर्ण, मजबूत कदम उठाने की व्यवस्था नहीं बनती। उधर शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य चौपट होने लगता है। एक ओर स्वभाव के बिगड़ जाने के कारण विरोधी बढ़ जाते हैं और मित्रों में कमी हो जाती है। सब ओर असावधानी पर असावधानी होने लगती है। दुष्टता की सत्ता का ऐसे ही अवसरों पर दाँव लगता है, मौका देखकर उनके बाण भी चलने लगते हैं। निर्बल एवं अव्यवस्थिति-मनोस्थिति का होना मानो विपत्तियों को खुला निमन्त्रण देना है। मरे हुए पशु की लाश पड़ी देखकर दूर आकाश में उड़ते हुए चील-कौवे उसके ऊपर टूट पड़ते हैं। इसी प्रकार निराशा से शिथिल और चतुर्मुखी अव्यवस्था से ग्रस्त उस अर्धमृत मनुष्य पर आपत्ति और कष्टों के चील-कौए टूट पड़ते हैं और इस उक्ति को चरितार्थ करते हैं कि विपत्ति अकेली नहीं आती।

आकस्मिक विपत्ति का सिर पर आ पड़ना मनुष्य के लिए सचमुच बड़ा दुःखदायी है। इससे उसकी बड़ी हानि होती है किन्तु उस विपत्ति की हानि से अनेकों गुनी हानि करने वाला एक और कारण है वह है—'विपत्ति की घबराहट।' विपत्ति कही जाने वाली घटना—चाहे वह कैसी ही बड़ी क्यों न हो किसी का अत्यधिक अनिष्ट नहीं कर सकती, वह अधिक समय ठहरती भी नहीं, एक प्रहार करके चली जाती है परन्तु 'विपत्ति की घबराहट' ऐसी दुष्टा-पिशाचिनी है कि वह जिसके पीछे पड़ती है उसके गले से खून की प्यासी जौंक की तरह चिपक जाती है और जब तक उस मनुष्य को पूर्णतया निःसत्व नहीं कर देती तब तक उसका पीछा नहीं छोड़ती। विपत्ति के पश्चात् आने वाले अनेकानेक जंजाल इस घबराहट के कारण ही आते हैं। शारीरिक, मानसिक और सामाजिक सुस्थिति का सत्यानाश करके वह मनुष्य की जीवन शक्ति को चूस जाती है।

आकस्मिक विपत्तियों से मनुष्य नहीं बच सकता। राम, कृष्ण, हरिश्चन्द्र, नल, पाण्डव, प्रताप, शिवाजी, गुरु गोविन्दसिंह जैसी आत्माओं को विपत्ति ने नहीं छोड़ा तो अन्य कोई उसकी चपेटों से बच जायेगा—ऐसी आशा न करनी चाहिए। इस सृष्टि का विधि-विधान कुछ ऐसा ही है कि हानि-लाभ का चक्र हर एक के ऊपर चलता रहता है, फिर भी सृष्टि का क्रम रुकता नहीं। प्रतिकूलतायें आती हैं, जाती हैं। उनसे न घबराकर सामंजस्यपूर्ण जीवन जीना ही बुद्धिमत्ता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिकूलताएँ कभी बाधक नहीं बनतीं

अल्फ्रेड एडलर के अनुसार मानवी व्यक्तित्व विकास में कठिनाइयों, प्रतिकूल परिस्थितियों का होना आवश्यक है। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक—'ह्वाट लाइफ शुड मीन टू यू' में उन्होंने लिखा है कि—''यदि हम किसी एक ऐसे व्यक्ति अथवा मानव समाज के विषय में यह कल्पना करें कि वे इस स्थिति में पहुँच गये हैं, जहाँ अब कोई कठिनाइयाँ नहीं रहीं तो हमारे विचार से ऐसे वातावरण में मनुष्य का विकास रुक जायेगा और जीवन आकर्षणहीन रह जायेगा। ऐसी स्थिति में भविष्य में प्रतीक्षा योग्य उत्साहवर्धक कोई बात नहीं रह जायेगी। सब कुछ पूर्व निश्चित होने से तत्परता का, प्रयास का स्थान जड़ता ले लेगी। ऐसी दशा में न तो ज्ञान का विकास होगा और न ही विज्ञान का। कला और धर्म जो अप्राप्य ध्येयों की कल्पना हमारे सामने रखकर हमें प्रफुल्लित रखते हैं, सब अर्थहीन हो जायेंगे। वस्तुतः हम सौभाग्यशाली हैं कि हमारा जीवन कष्ट-कठिनाइयों से भरा है, उतना सरल नहीं है।'

बहुत-से लोग कठिनाइयों से बचने के लिए दूसरों को अपनी ओर आकृष्ट करने और अपना काम बनाने के अनेकानेक तरीके अपनाते हैं, पर प्रायः देखा यही जाता है कि अन्ततः उन्हें निराशा ही हाथ लगती है। प्रख्यात मनोवैज्ञानिक **ग्रीनवी** ने अपनी पुस्तक 'सुपर पर्सनलिटी' में लिखा है कि 'यह मान्यता सही नहीं है कि लोगों को प्रभावित करने के लिए आकर्षक शरीर संरचना, बढ़ी-चढ़ी विद्वता, प्रचुर सम्पदा, ठाठ-बाट की साज-सज्जा या किसी विशेष प्रकार की कला-कुशलता अनिवार्य रूप से आवश्यक है। यह विशेषताएँ दूसरों का ध्यान भर आकर्षित करती हैं, बहुत हुआ तो कोई इनसे किसी प्रकार लाभान्वित होने के लिए पीछे लग सकता है, पर जब वैसा कुछ हाथ लगते दीखता नहीं, तो निराश होते ही मुँह मोड़ लिया जाता है। वैभव से अपना ही स्वार्थ सिद्ध हो सकता है, दूसरे जिन्हें उनसे कोई लाभ मिलने वाला नहीं है—देर तक आकर्षित नहीं रह सकते।'

वस्तुतः जिसका दूसरों पर प्रभाव पड़ता है, वे सद्गुणों एवं सत्प्रवृत्तियों से युक्त विभूतियाँ होती हैं। उन्हें जहाँ भी पाया जाता है, उनके प्रति अन्तःकरण में सहज श्रद्धा उमड़ पड़ती है। सज्जनता, नम्रता, उदारता और शिष्टता का अर्थ है—परिपक्व व्यक्तित्व। खिला हुआ फूल अपनी सुन्दरता और सुगन्ध से दर्शकों को सहज प्रसन्नता प्रदान करता है। सद्गुणों की विभूतियों से भरे-पूरे व्यक्ति भी इसी प्रकार सहज श्रद्धा के पात्र बनते हैं। सही तरीके से प्राप्त की गई सफलता सर्वत्र सराही जाती है क्योंकि इनसे प्राप्त करने वाले की लगन और तत्परता का परिचय मिलता है। इनकी शालीनता देखकर भी यही अनुमान लगता है कि यहाँ आत्म-परिष्कार के लिए दूरदर्शिता से भरी-पूरी सतत साधना की गई है।

विभिन्न स्तर की सफलताओं में सर्वोपरि है—सामान्य स्तर के अनगढ़ व्यक्तित्व को उच्चस्तरीय बना सकना है। मूर्तिकार पत्थर को गढ़ते और प्रतिमा बनाते हैं, चित्रकार कागज और कलम की सहायता से हृदयगाही चित्र विनिर्मित करते हैं। वादक बंसरी से राग-रागनियों की स्वर लहरी बहाते हैं। कलाकारिता के क्षेत्र में सबसे महत्त्वपूर्ण और प्रभावोत्पादक कला है, पेट-प्रजनन भर में व्यतीत होते रहने वाले जीवन को उत्कृष्ट चिन्तन और आदर्श गतिविधियों का अभ्यस्त कर लेना। इस सफलता के श्रेयाधिकारियों को जन-जन का सहज सम्मान मिलना ही चाहिए।

पेड़ की शीतल छाया और सुषमा में बैठने वालों को ही नहीं, उसे देखने वालों को भी प्रसन्नता होती है और शान्ति मिलती है। इसी प्रकार सहृदयता, नीतिमत्ता, साहसिकता, सज्जनता, नम्रता, उदारता, सुरुचि, सुव्यवस्था जैसे सद्गुणों का जहाँ भी विस्तार दीखता है वहाँ सम्पर्क में आने वाले हर किसी की सहज श्रद्धा उमगने लगती है।

एल० एच० स्नीडर अपने ग्रन्थ 'बिहेवियोरल साइकॉलाजी' में लिखते हैं कि ''विचारों और कार्यों का स्तर सुनिश्चित होना चाहिए, तभी उन्हें निजी पुरुषार्थ का, उपलब्ध साधनों का परिपोषण मिलेगा और सफलता का द्वार खुलेगा। दूसरों का समर्थन-सहयोग भी प्रायः उन्हीं को मिलता है, जिन्हें दृढ़ निश्चयी और प्रयास में समग्र तत्परता जुटा सकने वाला समझा जाता है।

चंचल, उथले और अधूरे मन से किये जाने वाले काम ही प्रायः असफल होते हैं। ऐसा क्यों होता है ? अस्थिरता का कारण क्या है ? यह खोजने पर प्रतीत होता है कि सैद्धांतिक अपरिपक्वता ही चंचलता का प्रमुख कारण है। दृढ़ता उन निर्णयों में नहीं हो सकती जो उथली स्वार्थ पूर्ति पर अवलम्बित हैं। लाभ की न्यूनाधिकता का प्रसंग सामने आते ही मन डगमगाने लगता है और एक काम को छोड़कर दूसरे को अपनाने लगता है।

आदर्शवादिता का आधार लोभ या लाभ नहीं, आत्म-संतोष एवं आत्म-कल्याण होता है। ऐसी दशा में एक बार पकड़े हुए काम को इसलिए छोड़ने की आवश्यकता नहीं पड़ती कि उसे हटाकर दूसरा करने लगे तो अधिक लाभ मिलेगा। कोई काम न तो छोटा है न बड़ा, हर कार्य की गरिमा उसके पीछे काम करने वाली निष्ठा के साथ जुड़ी होती है। इस प्रकार छोटे दीखने वाले काम भी सन्निहित सदाशयता को सुविस्तृत करने में सहायक हो सकते हैं और बड़े दीखने वाले काम भी अन्तःक्षेत्र की निकृष्टता से प्रेरित होने पर सदाशयता के संवर्धन में सर्वथा निष्फल रह सकते हैं। उच्चस्तरीय सिद्धांत अपनाकर किसी काम में हाथ डालने पर उसमें आत्म-संतोष का रसास्वादन होता है। फिर प्रतिक्रिया में शिथिलता रहने पर भी उत्साह गिरने या मनोयोग घटने जैसी कोई बात नहीं होती।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्म-विश्वास और आत्मानुशासन ही उच्चस्तरीय कामों में अन्त तक निष्ठा बनाये रहने में समर्थ होते हैं। आत्म-विश्वास श्रेष्ठ कामों की सफलता में ही सुनिश्चित रह सकता है। ओछे और खोटे काम अन्तःकरण में ऐसा विश्वास जगने ही नहीं देते कि कार्य की सफलता एवं उपयोगिता मिल ही जायेगी या मिलने पर सराही ही जायेगी। यही कारण है कि ओछे मनोरथों से प्रेरित कार्य सदा कर्त्ता को अविश्वासी बनाये रहते हैं। उस अस्थिरता में पूरे मनोयोग से काम नहीं हो पाता और न केवल सफलता संदिग्ध रहती है वरन् उसमें उदासी, निराशा एवं ऊब तक उत्पन्न हो सकती है। आये दिन काम बदलते रहने वालों में अधिकांश आदर्शविहीन ही होते हैं। जिन्हें परिस्थितियों ने काम बदलने के लिए विवश-बाधित कर दिया, ऐसे अपवाद तो कम ही देखने को मिलते हैं।

दरबारी-बगीचों में लगे कोमल पौधे तनिक-सी गर्मी-सर्दी पाते ही हिचकियाँ भरने लगते और दम तोड़ने लगते हैं। छुई-मुई किसी की उँगली छू जाने से ही सकुचाती, सिकुड़ती और मुरझाई दीखती है। किन्तु पर्वतों और रेगिस्तानों में उगने वाले पौधे ऋतु प्रभावों की कठोरता को धैर्यपूर्वक सहन करते हुए अपना अस्तित्व सुरक्षित रखे रहते हैं।

इसके विपरीत जिन्हें अभावों, प्रतिकूलताओं का सामना करना पड़ता है,वे अपने भीतर ऐसी क्षमता विकसित करते हैं, जो आगत कठिनाइयों का सामना करते हुए अस्तित्व की रक्षा कर सकने में समर्थ हो सकें। हिमाच्छादित पर्वतों पर उगने वाले पेड़ों को उस तरह पाला नहीं मारता जैसे कि मध्यम ताप वाले प्रदेशों में तनिक-सी ठंड बढ़ते ही उनका सिकुड़ना-सूखना आरम्भ हो जाता है। रेगिस्तानी सूखे इलाकों की तपती बालू और पानी की कमी में भी कैक्टस आदि पौधे भली प्रकार हरे-भरे बने रहते हैं। उत्तरी ध्रुव पर रहने वाले 'एस्किमो' बर्फ की मोटी परतों पर ही समूचा जीवन-यापन करते हैं। कठोर श्रम से आहार प्राप्त करने वाले वनवासी स्थिति के अनुरूप सुदृढ़ भी रहते है और अभ्यस्त तथा प्रसन्न भी।

कठिनाइयों से, प्रतिकूलताओं से घिरे होने पर भी जीवन का वास्तविक प्रयोजन समझने वाले व्यक्ति कभी निराश नहीं होते, वे हर प्रकार की परिस्थितियों में अपने लक्ष्य से ही प्रेरणा प्राप्त करते तथा श्रेष्ठता के पथ पर क्रमशः आगे बढ़ते जाते हैं। वे संसार को संतुलित दृष्टि से देखते हैं व जीवन नौका खेते हुए इस सागर को पार कर जाते हैं।

दृष्टिकोण बदला तो सब कुछ बदल गया

यह संसार जिन तत्त्वों से बना है, उनमें भलाई-बुराई, नेकी-बदी, कुरूपता-सुन्दरता, अनुकूलता-प्रतिकूलता के परस्पर विरोधी स्तरों का समावेश है। इन दोनों ही परिस्थितियों से कोई बच नहीं सकता। समुद्र की बनावट ही ऐसी है कि उसमें ज्वार-भाटे आते रहते और हर वस्तु हिलती रहती है। परमाणुओं से लेकर सौर मण्डल और ब्रह्माण्ड में कहीं स्थिरता नहीं। सर्वत्र हलचल की धूम है, इतना ही नहीं उसके साथ ही प्रिय-अप्रिय भी जुड़ा है। यदि अपने चिन्तन को मात्र अप्रिय निषेधात्मक पक्ष के साथ जोड़ा जाय तो दुःखदायी घटनायें ही स्मरण रहेंगी और उन्हीं का स्मरण बाद में भी बना रहेगा। जो प्रिय एवं अनुकूल है, वह सरसरी नजर से देखने पर आँखों के आगे से निकल जायेगा, उसकी विशेषता और स्थिति भी अनुभव में न आ सकेगी। निषेधात्मक चिन्तन के कारण जो श्रेष्ठ है, वह भी निकृष्ट प्रतीत होगा। रंगीन काँच का चश्मा पहन लेने पर सभी वस्तुएँ उसी रंग में रंगी हुई दिखाई पड़ती हैं।

यदि अपना चुनाव अशुभ के पक्ष में हो तो असंख्य लोगों में असंख्यों प्रकार की बुराइयाँ दीख पड़ेंगी। अपने साथ किसने क्या और कैसा दुर्व्यवहार किया है ? यदि इसकी स्मृति दौड़ाई जाय तो प्रतीत होगा कि संसार में दानव स्तर के लोग ही रहते हैं और अनीतिपूर्ण अनाचार करने में ही निरत रहते हैं। अपने को कब, कितने दुःख भुगतने पड़े और दूसरों में से किसको कितने दुःख दिये ? इसकी गणना करने पर प्रतीत होता है कि यह संसार सचमुच ही नरक है—भवसागर है। यहाँ से जितनी जल्दी, जिस प्रकार भी सम्भव हो छुटकारा पाना चाहिए। ऐसी मनःस्थिति में जीवन भार रूप बन जाता है और उसका प्रभाव उद्विग्न-अशान्त बने रहने के रूप में ही सामने आता है। यहाँ तक कि इस ऊबड़-खाबड़ दुनिया को बनाने वाले के प्रति भी आक्रोश उत्पन्न होता और भरपेट गाली देने को मन करता है। प्रतिकूलताएँ ही सर्वत्र छाई देखकर मनुष्य नास्तिक स्तर का बन जाता है, उसे कोई भी विश्वसनीय नहीं जँचता, सबके प्रति अविश्वास रहता है।

इसके विपरीत एक दूसरा दृष्टिकोण भी है, उसके अनुरूप अपनी दृष्टि बदल लेने पर समूचा दृश्य ही बदल जाता है और सुन्दरता, सज्जनता एवं सदाशयता का माहौल इतना बड़ा दीखता है, जिसे देखते हुए लगता है कि भलाई की भी कहीं कमी नहीं। ईश्वर ने ऐसी अद्भुत विशेषताओं वाला शरीर दिया, साथ ही जादू की पिटारी जैसा मनःसंस्थान भी। अभिभावकों और कुटुम्बियों की दुलार भरी उदारता की एक घटना का स्मरण किया जाय तो प्रतीत होगा कि वे औरों के लिए कैसे भी क्यों न हों, अपने लिए तो देवतातुल्य ही रहे हैं। मित्र, सहपाठियों का स्नेह-सौजन्य, अध्यापकों का ज्ञानदान ऐसे पक्ष हैं, जिनकी उपलब्धि बिना वह स्थिति न आ पाती जो आज है।

पत्नी का सौजन्य और सेवाभाव यदि उदार दृष्टि से देखा जाय तो प्रतीत होगा कि वह किसी भी प्रकार ऐसा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं है, जिसे देवोपम न माना जाय। घर को खुशी और किलकारियों से भर देने वाले बच्चों को, परिवार के अन्यान्य आश्रितजनों को सभी की सद्भावना मिलती है। समाज का ऐसा सुगठन है जिसमें आजीविका के साधन सहज ही उपलब्ध हो जाते हैं। दैनिक उपयोग की इतनी, इतने प्रकार की वस्तुयें मिलती रहती हैं, जिनके सहारे प्रसन्नता और तृप्ति ही मिलती रहती है।

प्रकृति की ओर दृष्टि उठाकर देखा जाय तो चलते-फिरते खिलौनों जैसे पशु-पक्षी, जीव-जन्तु, सरिता-सरोवर, पहाड़-वन, सूर्य–चन्द्र और तारागण, बादलों वाला आकाश, वृक्ष-वनस्पतियाँ सभी कुछ ऐसा है, जिसका मनोरम सौन्दर्य देखते-देखते मन नहीं भरता।

सत्प्रयोजनों में संलग्न, चरित्रवान, उदारमना मनीषियों की खोज की जाय तो उनकी गाथाओं से इतिहास भरा पड़ा मिलेगा। आज भी उनकी कमी नहीं है। संख्या भले ही कम हो और वे निकट नहीं दूर रहते हों, किन्तु उनका अस्तित्व इतना अवश्य है कि प्रसन्नता व्यक्त की जा सके और सन्तोष की साँस ली जा सके।

तथ्य एक ही है कि अपना दृष्टिकोण किस स्तर का है ? उद्यान में भौंरे को सुगन्ध की मस्ती और मधुमक्खियों को शहद की मंजूषाएँ लटकती दीखती हैं, पर गुबरीला कीड़ा पौधों की जड़ों में लगे हुए सड़े गोबर तक जा पहुँचता है और सर्वत्र दुर्गन्ध ही दुर्गन्ध पाता है। एक बार गुरु ने दुर्योधन और युधिष्ठिर को एक ही गाँव में भले और बुरे लोगों की सूची बना लेने के लिए भेजा। दुर्योधन को सभी दुष्ट और युधिष्ठिर को सभी सज्जन दीखे। वहाँ थे दोनों ही प्रकार के लोग, पर अपने दृष्टिकोण के अनुरूप उनने उसी नजर से देखा तो उन्हें बहुलता अपनी खोजबीन के अनुरूप ही दिखाई दी।

संसार में बुराइयाँ न हों सो बात नहीं है, पर वे ऐसी हैं कि उन्हें सुधारने के माध्यम से हम अपना पुरुषार्थ जगा सकें, प्रगतिशीलता परिचय दे सकें। अनीति न हो तो संघर्ष किससे किया जाय ? शौर्य-साहस प्रकट कर सकने का अवसर किस प्रकार आये ?

दुष्टता की उपेक्षा की जाय या उसे सहते रहा जाय, बढ़ने दिया जाय यह कोई नहीं कहता। उन्हें सुधारने-बदलने के लिए भी भरपूर प्रयास करना चाहिए, पर इसमें खीजने की, असन्तुलित होने की आवश्यकता नहीं है। डाक्टर को सारे दिन उन्हीं के बीच रहना पड़ता है, जिनने असंयम बरतकर अपने स्वास्थ्य को बिगाड़ लिया है। वे उनके घाव धोते, मरहम लगाते और आवश्यकतानुसार चीर-फाड़ भी करते हैं। वे रोग को मारते और रोगी को बचाते हैं, इस रीति-नीति को अपनाकर कुरूपता को सुन्दरता और दुष्टता को सज्जनता में बदला जा सकता है। प्रेम-सौजन्य से काम न चलता हो तो आवश्यकतानुसार दण्ड नीति भी अपनाई जा सकती है और प्रताड़ना का प्रयोग भी किया जा सकता है, पर इसमें भी अपनी सुधार-परायण सज्जनता की भाव संवेदना का ही अनुभव प्रयुक्त किया जा सकता है।

फिर अपनी निज की सद्भावना ही अपने लिए कम आनन्ददायक नहीं होती। वस्तुतः मनुष्य उद्विग्न अपने दृष्टिकोण के कारण ही होता है। ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, छिद्रान्वेषण, असन्तोष, असंयम आदि के कारण ही ऐसी मनःस्थिति बनती है, जिसमें खीज, खिन्नता और विद्वेष से मन भरा रहता है। कभी स्वल्प कारण होने पर भी तिल का ताड़ बनता है और चिन्ता, भय, निराशा, आशंका, अविश्वास आदि मनोविकारों का समूह चढ़ दौड़ता है और स्थिति ऐसी पैदा कर देता है, जिसमें चैन से रहना और सम्पर्क वालों को चैन से रहने देना बन ही नहीं पड़ता।

स्मरण रखने योग्य यह है कि अन्धकार कितना ही विस्तृत क्यों न हो, पर वह प्रकाश से अधिक मात्रा में नहीं हो सकता। संसार में अशुभ कितना ही क्यों न हो, पर वह शुभ से अधिक नहीं है। गन्दगी और स्वच्छता का अनुपात लगाया जाय तो स्वच्छता ही अधिक मिलेगी। यदि ऐसा न होता तो आत्मा इस संसार में आने और रहने की इच्छा न करती। कठिनाई अपना दृष्टिकोण उलझा लेने भर की है और वह ऐसा नहीं है, जिसे सुधारा-बदला न जा सके।

सफलता आपका जन्म-सिद्ध अधिकार है

मनुष्य की असफलता के कारणों में एक कारण अयोग्यता भी है। जिसने किसी काम को करने का सही ढंग सीखने में प्रमाद किया है, उसकी रीति-नीति के सम्बन्ध में ज्ञान अर्जित का कष्ट नहीं उठाया है, वह उस काम को ठीक से अन्जाम दे सकने की आशा अपने से नहीं रख सकता। यदि वह हठ अथवा लोभ के वशीभूत उस काम को हाथ में ले भी लेगा तो दूसरों के साथ अपनी दृष्टि में भी उपहासास्पद बन जायेगा। किसी काम को सफलतापूर्वक करने के लिए तत्सम्बन्धी योग्यता का होना अत्यन्त आवश्यक है।

योग्यता किसी दैवी वरदान के रूप में नहीं मिलती। वह एक ऐसा सुफल है, जिसकी प्राप्ति परिश्रम एवं पुरुषार्थ के पुरस्कार स्वरूप ही होती है। जो आलसी हैं, अकर्मण्य हैं, काम करने में जिनका जी नहीं लगता, परिश्रम के नाम से जिनको पसीना आ जाता है, वे किसी विषय में समुचित योग्यता प्राप्त कर सकेंगे, ऐसी आशा दिवास्वप्न के समान ही मिथ्या सिद्ध होगी। योग्यता की उपलब्धि, परिश्रम एवं पुरुषार्थ द्वारा ही सम्भव है।

किसी विषय में सफलता हस्तगत करने के लिए, उस विषय की पर्याप्त योग्यता का होना आवश्यक है और योग्यता की उपलब्धि परिश्रम एवं पुरुषार्थ पर निर्भर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि सफलता का मूलभूत हेतु परिश्रम ही है।

जिनको संसार में कुछ सराहनीय दिखाने की इच्छा है अथवा जो चाहते हैं कि सफलतायें उनके जीवन का शृंगार करें उन्हें चाहिए कि वे पूरे तन-मन और पूरी सच्चाई के साथ अपने में परिश्रम तथा पुरुषार्थ का स्वभाव विकसित करें। एक बार ध्येयपूर्वक परिश्रमी स्वभाव का विकास कर लेने पर फिर वह ऐसा सहज स्वभाव बन जाता है कि किसी के लिए अकर्मण्य रहकर कुछ क्षण बिता सकना ही पहाड़ हो जाता है।

कर्मण्य स्वभाव वाला व्यक्ति इतना कर्मशील बन जाता है कि यदि विवशतावश उसे एक-आध दिन निकम्मा होकर बैठना पड़े तो उसके लिए वह समय कारावास की दु:खदायी स्थिति से कम नहीं बैठ सकता। परिश्रमी स्वभाव वाला व्यक्ति एक क्षण के लिए भी बेकार नहीं बैठ सकता। उसे काम करने की आवश्यकता उसी प्रकार अनुभव होती है, जिस प्रकार भूख लगने पर खाने की आवश्यकता। भूख लगने पर जब तक कुछ खा न लिया जाय तब तक चैन नहीं पड़ता, उसी प्रकार परिश्रमी स्वभाव वाला व्यक्ति काम के अभाव में तब तक बेचैन बना रहता है, जब तक कि उसे मनमाना काम करने के लिए नहीं मिल जाता। जिसने अपने स्वभाव को इस सीमा तक परिश्रमी एवं पुरुषार्थी बना लिया है, मानना होगा कि उसने अपने भाग्य का निर्माण कर लिया है और सफलता की जयमाल लेकर विचरण करने वाले देवदूतों को अपनी ओर आकर्षित करने की योग्यता उपलब्ध कर ली है।

जिन सुविधाजनक परिस्थितियों को प्रारब्ध की संज्ञा दी जाती है, जिन साधनों और उपादानों को मानव जीवन की सफलता का सहायक माना जाता है और जो सौभाग्य फलों के रूप में जन-जन को स्पृहणीय होते हैं, वे सब परिश्रम एवं पुरुषार्थ के पुरस्कार के सिवाय और कुछ नहीं होते। मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता स्वयं है—इस सूक्ति वाक्य को कर्मठ व्यक्तियों ने पुरुषार्थ द्वारा, असंभव को संभव सिद्ध करके, विचारकों को, संसार के सम्मुख एक सिद्ध मंत्र के रूप में प्रस्तुत करने के लिए विवश कर दिया।

सुख-दु:ख, हानि-लाभ, सफलता-असफलता दैवाधीन हैं, इनमें मनुष्य की गति नहीं है। इस प्रकार की भावना आध्यात्मिक साधना के क्षेत्र में भले ही अर्थ रखती हो किन्तु भौतिक धरातल पर इसका अधिक महत्त्व नहीं माना जा सकता। यदि इस दार्शनिक भावना को देश, काल और परिस्थितियों का विचार किए बिना सामान्य जीवन क्रम में प्रवृत्त कर दिया जाय तो निश्चय ही संसार का विकास अवरुद्ध हो जाय और इस कर्म-लोक में अकर्मण्यता का साम्राज्य स्थापित होते देर न लगे। लोग असमय में अकारण ही उक्त भावना का बहाना लेकर कंधा डाल दे और तब सारे संसार का यह सक्रिय स्वरूप वैसे ही समाप्त हो जाय जैसे पक्षाघात का आक्रमण होने पर चलते-फिरते मनुष्य की गति स्थगित हो जाती है।

कभी-कभी देखा जाता है कि प्रयत्न करने पर भी कुछ लोग वांछित सफलता प्राप्त नहीं कर पाते और तब दृष्टिकोण में इस भ्रम की संभावना हो उठती है कि प्रयत्न और पुरुषार्थ व्यर्थ हैं, मनुष्य का भाग्य ही प्रबल होता है। किन्तु यह भ्रम सर्वथा भ्रम ही है, सत्य का इससे दूर का भी सम्बन्ध नहीं होता। ऐसे प्रयत्नशील व्यक्ति की असफलता को लेकर भाग्यवाद में आस्था की स्थापना करने लगना मानसिक निर्बलता का लक्षण है। निश्चय ही उस असफल व्यक्ति के प्रयत्न में कुछ न कुछ खोट अथवा कमी रही होगी, जिससे कि उसे उस समय असफलता का मुँह देखना पड़ा। यदि प्रयत्न पूरा और सावधानी के साथ किया जाय तो किसी के सम्मुख असफलता के आने का अवसर ही शेष नहीं रह जाता। पूरा और सुचारु प्रयत्न सफलता की एक ऐसी गारण्टी है जो कभी असिद्ध नहीं हो सकता।

किसी एक प्रयत्न से कोई निश्चित सफलता मिल ही जाये, यह आवश्यक नहीं। सफलता के लिए कभी-कभी प्रयत्नों की परम्परा लगा देनी होती है। परिश्रम एवं पुरुषार्थ के रूप में उसका उतना मूल्य चुका ही देना होता है, जितना चुकाना उसके लिए अनिवार्य है। एक बार असफलता का सामना हो जाने पर किसी को असफल मान लेना उसके साथ अन्याय करने के समान है। संसार में लिंकन जैसे हजारों व्यक्ति हुए हैं जिन्होंने सैकड़ों बार असफल होकर भी अन्त में अभीष्ट सफलता का वरण कर ही लिया। सच्चा पुरुषार्थी वास्तव में वही है जो बार-बार असफलता को देखकर भी अपने प्रयत्न में शिथिलता न आने दे और हर असफलता के बाद एक नये उत्साह से सफलता के लिए निरन्तर उद्योग करता रहे। जो पत्थर एक आघात से नहीं टूटता उसे बार-बार के आघात से तोड़ा ही जा सकता है।

असफलता को अंगीकार करने का अर्थ है—निराशा को निमंत्रण देना। निराशा के दुष्परिणामों के विषय में अधिक कुछ कहना व्यर्थ है। निराशा की भावना को यदि नागपाश की भाँति कह दिया जाय तो कुछ अनुचित न होगा। निराशा मनुष्य की क्रियाशीलता पर सर्प की भाँति लिपटकर न केवल उसकी गति ही अवरुद्ध कर देती है प्रत्युत अपने विषैले प्रभाव से उसके जीवन तत्त्व को भी नष्ट कर देती है।

यह अधिक अस्वाभाविक नहीं है कि असफलता की स्थिति में कभी-कभी निराशा मनुष्य के विचारों पर अपनी काली छाया डालने का साहस कर ही जाती है। किन्तु उस छाया को देर तक ठहरने न देना चाहिए। यदि यह गलती की जायेगी, तो सच मानिये आपके वर्तमान पर ही नहीं भविष्य पर भी उसका दूरगामी कुप्रभाव पड़े बिना रह न सकेगा। वे सारे स्वप्न, सारी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वर्ण-कल्पनायें जिनको मूर्तिमान करने की आकांक्षा लेकर आपने कर्म क्षेत्र में कदम बढ़ाया है, साहस धूमिल पड़ जायेंगी। आपका आत्म-विश्वास, उत्साह और साहस धीरे-धीरे साथ छोड़ने लगेगा, विचारों के माध्यम से जीवन-क्षितिज पर अन्धकार घनीभूत हो उठेगा और तब कुण्ठा और कायरता के सिवाय आपके पास कुछ भी तो शेष न बचेगा। इसीलिए बुद्धिमानी इसी में है कि असफलता के साथ निराशा को जोड़कर ऐसी हानि न की जाये जो कभी भी पूरी न हो सके।

इस अनुभव सिद्ध सत्य को स्वीकार कर लेने में सब प्रकार से हित ही हित है कि निरन्तर काम में जुटा रहना निराशा का सर्वश्रेष्ठ और सृजनात्मक उपचार है। काम में संलग्न रहने से मन की सारी वृत्तियाँ एकाग्रता के साथ उस काम की ओर ही प्रवृत्त रहती हैं। विचारों का प्रवाह कार्य के साथ चलता रहता है। इस संलग्नता के कारण विचारों में ऐसा कोई स्थान रिक्त नहीं रहता, जहाँ आकर निराशा अपना अधिकार जमा सके। जहाँ अकर्मण्यता की स्थिति में निराशा के विचार मस्तिष्क को घेरने लगते हैं, वहाँ इसके विपरीत सक्रियता की स्थिति में सृजनता के कारण आशापूर्ण विचारों का उदय होता चलता है।

जीवन में सफलता की आशा रखने वालों को चाहिए कि सामयिक असफलता को चुनौती की भाँति स्वीकार करें और अपनी सृजन शक्ति के बल पर असफलता की पोषक निराशा को पास न फटकने दें। जिसने निराशा से दूर रहकर असफलता को सफलता में बदल देने का दृढ़ निश्चय किया होता है, उसने मानो दूर तक अपनी मंजिल का मार्ग निरापद बना लिया होता है।

सफलता के मार्ग में कठिनाइयों का आना असंभव नहीं, उनका आना स्वाभाविक है। जिस मार्ग में कठिनाई नहीं, जिस पर विरोध अथवा अवरोध की संभावना नहीं वह मार्ग किसी महान् ध्येय की ओर जा रहा है—ऐसा मान लेने में जल्दी नहीं करनी चाहिए। आज तक के प्रत्येक महापुरुष का जीवन बतलाता है कि महानता की ओर जाने वाला आज तक ऐसा कोई मार्ग अन्वेषण नहीं किया जा सका, जिस पर कठिनाइयों का सामना न करना पड़े। बीच-बीच में आने वाली कठिनाइयाँ इस बात की साक्षी हैं कि अमुक मार्ग किसी असामान्य ध्येय की ओर जाता है।

अपने ध्येय मार्ग पर विघ्न-बाधाओं को देखकर अनेक लोग हतोत्साहित हो उठते हैं। ऐसे व्यक्तियों को यह मान लेने में संकोच न करना चाहिए कि किसी महान् सफलता को वरण करने की उनकी आकांक्षा परिपक्व नहीं है। इस प्रकार की आकांक्षा जिनके हृदय में लगन बनकर लगी होती है वे हँसते-खेलते विघ्न-बाधाओं से टक्कर लेते हुए साहसपूर्वक अपने ध्येय मार्ग पर बढ़ते चले जाते हैं। मार्ग की कठिनाइयों से टकराने में जिस आत्मिक-आनन्द की उपलब्धि होती है, उसे पाने के अधिकारी ऐसे पुरुषार्थी पुरुषों के सिवाय और कौन हो सकता है?

ध्येय मार्ग का कोई भी सच्चा पथिक इस सत्य के समर्थन में उत्साह प्रकट किए बिना नहीं रह सकता कि मार्ग में यदि कठिनाइयों से टकराने का अवसर न मिले तो असहनीय नीरसता का समावेश हो जाये और वह नीरसता लक्ष्य पर पहुँचकर दूर नहीं हो सकती। उस नीरसता के साथ मंजिल पर पहुँचने पर कौन-सी नवीनता, कौन-सा संतोष और कौन-सा हर्ष उपलब्ध हो सकता है ? यह मार्ग की बाधाएँ दूर करने में किये गये संघर्ष की ही विशेषता है, जो मंजिल पर पहुँचकर विश्राम संतोष और आनन्द के रूप में अनुभव होती है। प्रगति का वास्तविक आनन्द इसी में है कि कठिनाइयों का संयोग आता रहे और उन पर विजय प्राप्त की जाती रहे। हलचल के बिना जीवन सूना और नीरस हो जाता है।

कठिनाइयों से भय मानना अंतर में छिपी कायरता का द्योतक है। अपनी इस कायरता के कारण ही मार्ग में आई कठिनाई पहाड़ के समान दुरूह मालूम होती है। किन्तु जब उस कठिनाई को दूर करने के लिए साहसपूर्वक जुट पड़ा जाता है तो यह विदित होते देर नहीं लगती कि जिस कठिनाई को हम पर्वत के समान दुर्गम समझ रहे थे, वह उस बादल के समान ही हीन अस्तित्व थी, जो थोड़ी हवा लगने पर टुकड़े-टुकड़े होकर छितरा जाता है।

सफलता को आसान समझकर उसकी कामना करने वाले व्यक्ति प्रौढ़ बुद्धि के नहीं माने जा सकते। सफलता की उपलब्धि सरलता से नहीं, कठोर संघर्ष से सम्भव होती है। अध्ययन, अध्यवसाय एवं अनुभव की साधना किए बिना अभीष्ट सफलता को पा सकने की कल्पना भी नहीं की जा सकती। अपने को योग्य बनाकर पूरे संकल्प के साथ लक्ष्य की ओर बढ़ना होगा। मार्ग में आने वाली बाधाओं का, यह मानकर स्वागत करना होगा कि वे हमारे साहस, निश्चय और संकल्प की परीक्षा लेने आयीं हैं। कठिनाइयों को देखकर भयभीत होने के स्थान पर उन्हें दूर करने के लिए जी-जान से जुट जाना होगा। इस प्रकार पूरे मनोयोग और साहस के साथ लक्ष्य की ओर अभियान करने पर सफलता की आशा की जा सकती है। इसमें संदेह नहीं कि ऐसा अदम्य उद्योग और उत्साह की क्षमता प्रकट करने वाले पुरुषार्थी पुरुषों के गले में जयमाल पड़ती ही है और वे समाज द्वारा अभिवंदित होकर उन्नति के उच्च सिंहासन पर अभिषेक के अधिकारी बनते हैं।

सफलता की सिद्धि मनुष्य का जन्म सिद्ध अधिकार है। जो व्यक्ति अपने इस अधिकार की उपेक्षा करके यथा-तथा जी लेने में ही संतोष मानते हैं, वे इस महामूल्य मानव-जीवन का अवमूल्यन कर एक ऐसे सुअवसर को खो देते हैं, जिसका दुबारा मिल सकना संदिग्ध है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

व्यवस्था-बुद्धि की महिमा और गरिमा

क्षमता का अभाव कहीं भी है नहीं

साधनों और परिस्थितियों का अपना मूल्य और महत्त्व तो है ही। उनकी न्यूनाधिकता से होने वाली असुविधाओं को भी नकारा नहीं जा सकता। उतने पर भी यह मानकर चलना होगा कि जो कुछ उपलब्ध है, इसका सदुपयोग कर पाना इतना बड़ा कौशल है कि उतने से भी आवश्यकताओं को पूरा करना और प्रगति पथ पर आगे बढ़ चलना संभव हो सकता है। सृष्टा ने किसी में भी इतनी कम क्षमता नहीं रहने दी है कि उसे निर्वाह साधनों एवं प्रगति पथ पर बढ़ चलने में प्रतिरोध जैसा दृष्टिगोचर हो। अभावग्रस्त और कठिन परिस्थितियों में भी लोगों को जीवन साधन ढूँढ़ निकालने में समर्थ पाया गया है। उत्तरी ध्रुव की परिस्थितियाँ अत्यन्त विकट हैं। शून्य तापमान से कम वाली कड़ाके की सर्दी, वनस्पतियों का अभाव, किन्हीं उपयोगी साधनों का दृष्टिगोचर न होना, चुम्बकीय तूफान जैसी विकट परिस्थितियों में भी वहाँ के निवासी ''एस्किमो'' कहलाने वाले मनुष्यों ने आवास, निर्वाह, आहार, जल, प्रकाश, आवागमन एवं पारस्परिक सहयोग से मिलने वाली सुविधाओं का तारतम्य बिठा लिया है।

सघन वनों में वन-मानुषों की तरह रहने वाले विभिन्न क्षेत्रों के आदिवासी सभ्यताजन्य सुविधाओं से अपरिचित होते हुए भी कहीं आस-पास उपलब्ध हो सकने वाले साधनों के आधार पर सहस्रों वर्षों से काम चलाते आ रहे हैं और अस्तित्व बनाए हुए हैं। समुद्रों के बीच पाये जाने वाले छोटे-छोटे टापुओं पर भी मनुष्य रहते और फलते-फूलते देखे गये हैं, जबकि उन्हें उस क्षेत्र में आदिम कालीन न्यूनतम सुविधाएँ ही उपलब्ध हैं। कहीं-कहीं ऋतु विपर्यय भी कम हैरान करने वाला नहीं होता। फिर भी उन क्षेत्रों के मनुष्य एवं प्राणी अपनी सुरक्षा और वंश वृद्धि करते रहने में समर्थ पाए गए हैं। स्पष्ट है कि प्राणि समुदाय सहित मनुष्यों में वह जन्मजात क्षमता विद्यमान है, जिसके सहारे उन्हें प्रतिकूलताओं पर विजय प्राप्त करते रहने का श्रेय मिलता रहा है।

मिट्टी और पानी में घुले रहने वाले सूक्ष्मजीवों, अपने निर्वाह और सुख-साधनों की व्यवस्था उन्हीं अति कठिन दीखने वाली परिस्थितियों में जुटा लेते हैं। परिस्थितियों को अनुकूल बनाने हेतु सृष्टा ने हर किसी को क्षमता प्रदान की है। मनुष्य अपने दृष्टिकोण से उन सामान्य प्राणियों की क्षमताओं को सामान्य समझकर हेय मान सकता है, पर और किसी को उन्हीं परिस्थितियों में रहने का अवसर मिले, तो वह अनुभव करेगा कि मनुष्य को अपनी परिस्थितियों से निपटने के लिए जो विशेषताएँ मिली हुई हैं, उनकी तुलना में उन प्राणियों को मिला अनुदान किसी भी प्रकार कम नहीं है। हवा में तैरते दिखने वाले बैक्टीरिया एवं वायरस स्तर के जीवों का भी अपना संसार है, वे प्राणियों के शरीरों और वृक्षों के कलेवरों में चाहे जहाँ पहुँच जाते हैं। अपने लिए अनुकूल परिस्थितियाँ हर जगह पर प्राप्त कर लेते हैं। परिवर्तन की नियतिस्वरूप तो उनकी स्थिति भी बदलती रहती है, पर अस्तित्व को चुनौती देने वाला कभी कोई सम्बन्ध उनके आड़े नहीं आता। अनादि काल से उनकी प्रजातियाँ विद्यमान हैं।

शरीर से छोटे घटकों, जीव कणों की भी अपनी सत्ता है। वे जल्दी-जल्दी जन्मते-मरते तो रहते हैं, पर उनका व्यवस्थाक्रम ऐसा सुनियोजित है-जिसकी तुलना में चलते-फिरते दृश्यमान प्राणियों में से किसी के भी क्रिया-कलाप को उतना सुव्यवस्थित एवं अनुशासित होने का श्रेय नहीं मिल सकता। यह धरती के प्राणियों में से कुछ की बात हुई। अंतरिक्ष में विद्यमान ग्रह-उपग्रहों और नीहारिकाओं का अपना एक अनौखा संसार है, जिसमें महाछिद्रों, महासागरों, महामेघों और महान ऊर्जा स्रोतों का अपना संसार विद्यमान है। मनुष्यों की तरह वे वार्तालाप आदि में समर्थ नहीं, पर उनके बीच विद्यमान अनुशासन और तारतम्य ऐसा है कि वे एक विराट वृक्ष के अविच्छिन्न घटकों की तरह आदान-प्रदान का सुनियोजित क्रम चला रहे हैं। इसी अनुबन्ध के परिपालन पर उनकी सत्ता और गतिविधियों की सुनियोजित शृंखला अनादि काल से चलती आ रही है और अनन्त काल तक चलती रहेगी। पदार्थ जगत से प्रत्येक अणु-परमाणु में वह व्यवस्था चक्र अपने-अपने ढंग से काम करता पाया जा सकता है। आणविक संरचना, उनकी मध्यवर्ती नाभिकीय ऊर्जा तथा परिभ्रमण की गति कक्षा का निर्धारण भी ऐसा है, जिसे देखते हुए सौर मण्डल से लेकर विश्व ब्रह्माण्ड की संरचना तक में काम करने वाले व्यवस्थाक्रम को

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सर्वत्र एक जैसा विद्यमान समझा जा सकता है। यहाँ सब सुव्यवस्थित और सुनियोजित हैं। **''अणोरणीयान महतो पर महीयान''** वाली प्रकृति विस्तार के प्रत्येक घटक में, इसी आधार पर समस्वरता विद्यमान है।

सृष्टिक्रम के पीछे विद्यमान इस सुनियोजन को यदि समझा जा सके, तो सहज ही जाना जा सकेगा कि मनुष्य की मौलिक सत्ता कितनी प्रबल और प्रखर होनी चाहिए। कारण कि उसे दुहरा अतिरिक्त अनुदान उपलब्ध है। उसकी शरीर सरंचना अन्य प्राणियों की तुलना में अनेक गुनी विशेष है। इतने सुनियोजित हाथ किसी भी प्राणी को मिले हुए नहीं हैं। यदि इस सरंचना में कमी रही होती, तो कला-कौशल, संगीत, वादन, मूर्तिकला, चित्रकला, वैज्ञानिक विशेषज्ञता में से एक को भी प्रदर्शित कर सकना, उसके लिए संभव न रहा होता। उसके हाथों ने अनेकों यंत्र उपकरणों का आविष्कार किया और उनके कुशल संचालन में प्रवीणता प्राप्त की। खड़े होकर चलने वाली रीढ़ और लम्बी, ऊँची-नीची यात्राएँ कर सकने में समर्थ पैर भी किसे मिले हैं। अन्य ज्ञानेन्द्रियों के सम्बन्ध में भी यही बात है, उनकी अपनी विलक्षणता और आन्तरिक क्षमता है। मानवी उपलब्धियों में से प्रायः सभी उसी कारण बन पड़ीं कि उसे अनुपम स्तर का शरीर संसाधन मिला हुआ है।

मन-मस्तिष्क की क्षमता तो और भी अधिक विलक्षण है। उसमें सोचने की, अनुकरण करने की, स्मृतियाँ धारण करने की, अनुभवों की, सुसंस्कारों की एक से बढ़कर एक विशेषताएँ उपलब्ध हैं। कल्पना शक्ति, बौद्धिक प्रखरता एवं निष्कर्ष निर्धारण इस स्तर का पाया जाता है, जिसकी उपमा अन्यत्र कहीं भी नहीं मिलती। यदि मानसिक विलक्षणताओं से वह सम्पन्न न रहा होता, तो एक से एक विशेषताओं से भरे-पूरे प्राणि जगत में उसकी गणना मुकुटमणि स्तर पर न हुई होती ? गज, ग्राह, सिंह, व्याघ्र जैसे जीव ही उसे पछाड़ देने के लिए पर्याप्त थे। वह पक्षियों की तरह उड़ने-जलचरों की तरह तैरने में भी कहाँ समर्थ है ? घोड़े और चीते जैसी दौड़ने की क्षमता उसमें कहाँ है ? पौधों के भीतर घुसकर अपनी दुनिया बसाने और चलाते रहने वाले कृमि-कीटकों जितनी क्षमता भी उसमें कहाँ है ? यहाँ तक कि मक्खी-मच्छरों जैसे अल्पजीवियों की वंशवृद्धि की क्षमता को देखते हुए भी उसे अपने को बहुत पिछड़ा हुआ अनुभव करना होगा। इतना सब होने पर वह जिस कारण सृष्टि का मुकुटमणि कहला सका, वह उसकी मानसिक विलक्षणता का ही फल है। उसी ने इस अनगढ़ धरातल को कला-कौशल और शोभा-सज्जा से सज्जित बनाकर रख दिया है।

सृष्टा ने थों किसी को भी असमर्थ नहीं छोड़ा है। क्या जड़ पदार्थ और क्या वनस्पतियाँ-प्राणी जगत, सभी को अपनी-अपनी आवश्यकता के अनुरूप प्रचुर मात्रा में क्षमता एवं दक्षता प्रदान की है। फिर सृष्टा का युवराज ज्येष्ठ पुत्र होने के नाते उसके कंधों पर तो यह दायित्व और लदा है कि सम्बद्ध पदार्थों को सुनियोजित और प्राणियों को समुन्नत बनाए रखे। सृष्टा ने अपना कार्यभार हल्का करने के लिए मनुष्य को सहयोगी के रूप में रचकर योजनाबद्ध रूप से निरूपित किया है। इन परिस्थितियों में उसे अधिक भारी दायित्वों का निर्वाह कर सकने वाला सिद्ध होकर, अपनी वरीयता की सार्थकता सिद्ध करनी चाहिए। उसका चिन्तन, कौशल एवं क्रिया-कलाप ऐसे होने चाहिए, जो इस सुव्यवस्था को अधिक सक्षम रख सकें।

मनुष्य साधारण प्राणियों के बीच रहते हुए उन्हीं के जैसा व्यवहार न अपना ले, तत्त्वदर्शियों ने उसके लिए अतिरिक्त प्रकाश प्रेरणा का निर्धारण किया है। इसी को आत्मबोध, दिशा निर्धारण एवं कर्त्तव्य पालन की दिशा धारा अपनाने वाला, उत्कृष्टता बनाए रखने वाला तत्त्वज्ञान कहा गया है। उसी को अध्यात्म कहते हैं। धर्म धारणा भी यही है।

छोटे बच्चे अक्सर गड़बड़ाते और लड़खड़ाते रहते हैं। उनकी चेष्टाएँ अटपटी होती हैं। जो बोलते हैं वह भी असम्बद्ध होता है। फिर व्यवस्था की दृष्टि से और भी अधिक पिछड़े हुए हैं। आवश्यकताओं की पूर्ति प्रकट कर सकने में समर्थ नहीं होते। सर्दी-गर्मी से बच सकने की विद्या तक उन्हें नहीं आती। मल-मूत्र तक को यथास्थान त्यागने और उस गन्दगी को दूर हटाने की युक्तियाँ तक उनसे नहीं बन पड़तीं। ऐसी दशा में मनुष्य-जन्म प्राप्त कर लेने पर भी बचपन में स्थिति ऐसी ही बनी रहती है, जिसे अपंगों और अनगढ़ों के स्तर का कहा जा सके। यह स्थिति कई वर्ष तक बनी रहती है और अभिभावकों के निरन्तर सहयोग से धीरे-धीरे सुधार-परिष्कार की दिशा में चल पड़ती है। प्रौढ़ता तो किशोरावस्था तक को पारकर लेने के उपरान्त ही दृष्टिगोचर होती है।

यह प्रत्यक्ष कलेवर का प्रगतिक्रम हुआ। अब चेतना क्षेत्र के अनगढ़पन को सुसंस्कृत बनाने का प्रश्न सामने आता है। उसे सम्पन्न कर सकने में यह तत्त्वदर्शन ही समर्थ है, जिसे शालीनता का पक्षधर अनुशासन कहा जाता है। नागरिकशास्त्र, नीतिशास्त्र, समाजशास्त्र, मनोविज्ञान शास्त्र मिलकर इसी की पूर्ति करते हैं। अध्यात्म और धर्म के विशालकाय ढाँचे को खड़ा करने वाले भी इसी लक्ष्य की पूर्ति के लिए आवश्यक ताना-बाना बुनते रहे हैं। आस्तिकता, धार्मिकता के नाम पर चेतना को इसी प्रयोजन की पूर्ति के लिए प्रशिक्षित किया जाता है कि वह अनुशासन में तत्परतापूर्वक उसी तरह बँधा रहे, जैसे कि पदार्थ जगत और प्राणि जगत प्रकृति प्रेरणा के अनुबंधों में विवश होकर जकड़ा हुआ है।

मनुष्य को स्वतन्त्र चिन्तन और स्वतन्त्र रूप से क्रिया-निर्धारणों की छूट है। यह सुविधा किसी और घटक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को नहीं मिली। ऐसी दशा में उसका यह निजी उत्तरदायित्व बनता है कि अपने को स्वयमेव नियति की अनुशासन व्यवस्था में बाँधे रहे। संयम इसी का नाम है। मानवी मर्यादाओं और वर्जनाओं के विधि-निषेध के अन्तर्गत उसे यह प्रशिक्षण दिया गया है कि अन्तःप्रकाश के आधार पर राजमार्ग को अपनाए रहे, भटकावों में न भटक पाए। धर्म-धारणा के आधार पर मनुष्य को अपने चिन्तन-चरित्र, व्यवहार को शालीनता के अणुबंधों में बँधे रहने के लिए कहा गया है।

इसके बाद उस तत्त्वज्ञान का आरम्भ होता है, जिसे सेवा-साधना के नाम से जाना जाता है। इसका विस्तार तो बहुत लम्बा है, पर संक्षेप में इसे चिन्तन-उपक्रम एवं साधना का सुनियोजन कहा जा सकता है। यदि इस दिशा में सही निर्धारण के साथ चल सकना संभव हो तो मानना चाहिए कि पुण्य-परमार्थ का, सेवा-साधना का वह प्रकाश अपनाया गया, जो जीवन-लक्ष्य की पूर्ति में पूर्णतया समर्थ है।

शारीरिक और मानसिक कायाकल्प कैसे सम्भव हो

सामर्थ्य का होना एक बात है और उसका सुनियोजन कर सकना सर्वथा दूसरी। माचिस की तीलियों में अग्नि प्रज्ज्वलन की प्रचण्ड क्षमता विद्यमान रहती है, फिर भी उसे जला सकना किसी बुद्धिमान प्राणी के लिए ही संभव है। कृषि कार्य और पशुपालन ऐसे काम हैं, जिन्हें मामूली मजदूर और ग्वाले भी करते रहते हैं। पर उससे अतिरिक्त लाभ उठाना उन्हीं से बन पड़ता है, जो अपने विशेष ज्ञान, अतिरिक्त तत्परता एवं मनोयोग और तन्मयता का परिचय दे पाते हैं, इस विशेष विनियोग के बिना खेत मुश्किल से अपनी लागत की भरपाई कर पाते हैं। पशुओं के झुण्ड भी अनाड़ी ग्वालों के हाथ किसी प्रकार दिन गुजारते हैं। वे न समर्थ बन पाते हैं और न पालने वाले को ही कुछ यश या श्रेय दे पाते हैं। व्यवस्था के अभाव में समस्त साधनों के रहते हुए भी प्रगति कर सकना तो दूर, यथास्थान बने रहना भी कठिन पड़ता है। प्रगति की तरह अवनति भी पग-पग पर विद्यमान रहती है। जो प्रगति कर सकने में समर्थ नहीं, अवनति उनके पल्ले बँधे बिना रहेगी नहीं। यथास्थिति बनी रहने का इस संसार में कोई विधान है नहीं। सूरज या तो ऊपर चढ़ता जाता है अथवा उसका गिरना आरम्भ हो जाता है और उस क्रम के चलते रहने से उसे अस्ताचल में डूब मरना पड़ता है। उसी चढ़ाव-उतार के क्रम को दूसरे शब्दों में प्रगति और अवनति कहते हैं।

कौशल अनेकानेक हैं। कला की दिशाधाराएँ अगणित हैं। सुयोग और कुयोग का सिलसिला भी चलता है। अन्धकार और प्रकाश की तरह सम्पन्नता-विपन्नता का क्रम भी परिस्थितियों पर निर्भर रहता है। पर जिस सद्गुण में अधिक उत्पादन क्षमता है, उसका नाम है सुव्यवस्था—उपलब्धियों का सुनियोजित प्रबन्ध कर सकने की क्षमता। भौतिक प्रगति के क्षेत्र में यदि इसे सर्वोत्तम स्तर की प्राथमिकता दी जाय, तो कुछ भी अनुचित न होगा। सुनियोजित ही है जिनके कारण कम योग्यता और अभावग्रस्तता के बीच रहते हुए भी व्यक्ति न केवल प्रसन्न रह सकता है, वरन् समुन्नत भी बन सकता है।

सुदृढ़ स्वास्थ्य और दीर्घायुष्य का भण्डार हर काय-कलेवर में विद्यमान है। विषाणुओं को परास्त करने की क्षमता रक्त के श्वेत कणों में इतनी भरी पड़ी है, जिसे अजेय कहा जा सके। पेट के अपने रासायनिक घटक इस उच्चकोटि के हैं कि वे भुने सत्तू जैसे शक्तिहीन कहे जाने वाले पदार्थ खाकर भी अपने बलबूते पूर्ण भोजन की आवश्यकता पूरी कराते रह सकते हैं। फिर भी अस्वस्थता क्यों आ घेरती है ? अकालमृत्यु क्यों मरना पड़ता है ? इसके उत्तर में यही कहा जा सकता है कि आरोग्य के नियमों की अवहेलना ही कुछ अपवादों को छोड़कर प्रधान कारण है। यदि आरोग्य के अनुबन्धों में बँधकर आहार-विहार को सुव्यवस्थित रखा जा सके तो अन्य प्राणियों की तरह मनुष्य भी निरोग रह सकता है और दुर्घटनाओं के व्यवधानों को छोड़कर परिपूर्ण आयु तक जीवित रह सकता है। हमीं हैं जो शरीरचर्या के साथ अस्त-व्यस्तता अपनाकर खिलवाड़ करते हैं और दुर्बलता को आग्रहपूर्वक आमंत्रित करके उसके मुँह में हठपूर्वक जा घुसते हैं।

देव उद्यान की तरह हरा-भरा, फूला-फला, शोभा-सुषमा से भरा-पूरा सुगंधित एवं समृद्ध है यह अपना संसार-अपना भूलोक। इसे रंगमंच की तरह किसी ने चित्र-विचित्र और मणि-मुक्तकों से सुसज्जित इस स्तर का बनाया है कि इसके कण-कण को निहारते हुए हर घड़ी आनन्द विभोर रहा जा सके। प्रकृति की अपनी शोभा है। उमड़ते बादल, झिलमिलाते सितारे, चहकते पक्षी, हरियाली बिछे मखमली फर्श, सरिता-सरोवरों की हिलोरें किसका मन पुलकन से नहीं भर सकतीं ? जहाँ सूर्य रोशनी-गर्मी और चन्द्रमा शांति-शीतलता बरसाने के लिए अपनी-अपनी ड्यूटी देते हों, जहाँ पवन पंखा चलाता है, जहाँ निद्रा की परी अपनी गोदी में सुलाने के लिए रात्रि होते-होते दौड़ आती हो, जहाँ की वनस्पतियाँ नन्हें-मुन्ने शिशुओं की तरह खिलती-खिलाती हैं, प्राणीगण सहकार के लिए बढ़कर खड़े रहते हैं, वहाँ किसी को असुविधा, हैरानी और विपिन्नता से खिन्न रहने की क्या और क्यों आवश्यकता पड़ेगी ? इतने पर भी किसी का मन खिन्न-विपन्न रहता है, तो समझना चाहिए कि खोट परिस्थितियों का नहीं, मनःस्थिति में ही कहीं से, आँख में आ पड़ने वाली धूल-किरकिरी की भाँति घुस पड़ी है। दृष्टिकोण को गड़बड़ाने से ही झाड़ी का भूत, रस्सी का साँप दिख पड़ा है। अस्त-व्यस्त मन ही इस सुरम्य उद्यान को जलते-जलाते मरघट जैसा बना देते हैं और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुकल्पनाओं के भूत-पलीत यहाँ नंगे होकर नाचते, डरने-डराने का खेल खेलते हैं। यह संसार दर्पण भर है, जिसमें अपने प्रतिबिम्ब के अतिरिक्त और कुछ मिलता नहीं। इसे विशाल आकार वाला गुम्बद भी कह सकते हैं। जिसमें भय की प्रतिध्वनि गूँजती और मीठे-कड़वे शब्द कह-कहकर हँसाती-रुलाती रहती है।

मन को यदि दिशाविहीन घोड़े की तरह किधर भी बेहिसाब दौड़ पड़ने से रोका जा सके, तो वह शत्रु न रहकर मित्र भी बन सकता है। आरोपित विषमताओं के स्थान पर सम्भावनाओं का अम्बार लगा सकता है। छिद्रान्वेषण यदि हट सके, तो गुण-ग्राहकता के उदय होते ही यह सब कुछ शुभ, सुन्दर और सहयोग में निरत ही देखा जा सकेगा। यह अपना मन ही है जो रंगीन चश्मा पहन-पहनकर अपनी दृष्टि में स्वयं इच्छित रंग का आरोपण कर लेता है। चश्मा उतरे तो यथार्थता दीखे। नरक जैसे डराबने भ्रम-जंजाल अनगढ़ मन ही बुनता है और उनमें अपने आप को फँसाकर रोता-कलपता रहता है।

यहाँ यह नहीं कहा जा रहा है कि विपन्नताओं के पीछे सारा खोट-कसूर अपना ही होता है, दूसरे कोई उसमें दोषी नहीं होते, विपरीत परिस्थितियों की उनमें कोई साझीदारी नहीं होती। स्पष्ट है कि संसार गुण-दोषों का बना हुआ है। यहाँ प्रकाश भी है और अंधकार भी। सर्दी और गर्मी की तरह अनुकूलताएँ और प्रतिकूलताएँ भी आती-जाती रहती हैं। उन सबको सुधार या बदल सकना अपने वश की बात नहीं। सब कुछ अपनी इच्छा के अनुरूप ही बनकर रहे, यह संभव नहीं। दूसरों को अपने से सहमत करने के लिए एक सीमा तक ही समझाया या दबाया जा सकता है। ऐसी सर्वशक्तिमान सत्ता किसी के पास नहीं है कि जो कहना न माने, उसे तोप के गोले से उड़ा दिया जाय। यहाँ तालमेल बिठाकर चलना ही एक सरल और संभव तरीका है। अनौचित्य के प्रति असहयोग या अधिक से अधिक विरोध प्रदर्शन कर सकते हैं। पुलिस, जेल तक की नौबत दैनिक व्यवहार में नहीं आती। हर काम में लड़ाई भी नहीं ठानी जा सकती है। संघर्ष सिद्धान्ततः तो अच्छा है, पर उसके आक्रमण-प्रत्याक्रमण का सिलसिला चल पड़ता है, जो कई समस्याएँ उत्पन्न करने के अतिरिक्त भारी भी पड़ता है। उससे भी यह निश्चित नहीं होता कि जैसा चाहा गया, वैसा ही प्रतिफल निकलेगा। वस्तुस्थिति को समझते हुए बुद्धिमानी उसी में रहती है कि तालमेल बिठाये रखा जाय और विचार-विनिमय द्वारा पूरे या आंशिक समाधान का कोई स्वरूप बनाया जाय, इसी में व्यावहारिकता भी है और बुद्धिमत्ता भी।

विग्रहों के पीछे दूसरों की खोट भी हो सकती है, पर अपने पक्ष की कमी इतनी तो रह ही जाती है कि तालमेल बिठाने की सोचना छोड़कर, मात्र अड़ या डट जाने को ही प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाया गया। दुनिया का काम ऐसे नहीं चलता। परिवार के सदस्यों के बीच उसी प्रकार की तना-तनी रहे तो विघटन निश्चित है। मित्रों के बीच साधारण से मतभेदों को लेकर शत्रुता चल पड़ती है और एक-दूसरे के लिये सहयोग का मार्ग छोड़कर संकट खड़ा करने पर उतर आते हैं। सभी प्रयास निष्फल हो जाने पर ही ऐसी स्थिति आने देनी चाहिए। साथ ही यह भी समझ लेना चाहिए कि उसमें लाभ कम और घाटा अधिक है।

गड्ढों वाली ऊबड़-खाबड़ सड़क पर मोटर जैसे वाहन तभी चल पाते हैं, जब उनके स्प्रिंग लचकदार हों। ताली दोनों हाथ से बजती है। एक हाथ तैयार न हो तो दूसरा चाहते हुए भी टकरा नहीं सकता। अनिवार्य संकट आ खड़ा होने पर तो दो देशों की सेना भी एक-दूसरे के सामने डट जाती हैं। पर यह नीति बड़े क्षेत्रों में ही अपनाई जाती है। सामान्य जीवन में तो आये दिन सुलह-सफाई की नीति अपनाकर ही चलना पड़ता है। अन्यथा उलझते-उलझाते रहने पर कोई सृजनात्मक प्रयास बन पड़ना और प्रगति की दिशा में आगे बढ़ सकना संभव नहीं हो सकेगा। विग्रहों को इसी नीति के अनुसार टाला जाय। सुधार दूसरों में बन ही पड़ेगा यह अनिश्चित मानकर, अपनी भूलों को सुधारते रहने का एकपक्षीय फैसला करना चाहिए।

मन को खिन्न करने वाले प्रसंगों की यथासंभव उपेक्षा करनी चाहिए और वह सोच खोजनी चाहिए, जिसके आधार पर मनोबल बनाये रहने वाली स्थिति बनी रहे। भूतकाल की अनुपयुक्तताओं को भूलकर, हमें उज्ज्वल भविष्य की संरचना पर ही ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। जो उपलब्ध है, उस पर संतोष किया जाय और आगे अधिक प्राप्त करने के लिए आतुर-व्याकुल होने की अपेक्षा, उस दिशा में योजनाबद्ध रीति से, क्रमिक गति से आगे बढ़ा जाय।

अमीरों के साथ तुलना करने पर अपनी स्थिति गरीब जैसी प्रतीत होती है और गरीबों के साथ माप करने पर आज की स्थिति कहीं अच्छी प्रतीत होती है। सन्तोष का सुख पाने के लिए यही नीति अपनानी चाहिए। प्रयत्न अच्छे से अच्छे के तो किये जायें, पर बुरे से बुरा फल पाने के लिए भी तैयार रहा जाय। असफलता का प्रभाव इतना न पड़ने दिया जाय कि वह निराशा बनकर उभर आये और भविष्य की आशा को ही धूमिल कर दे। हमें खिलाड़ियों की तरह जीवन का खेल खेलना चाहिए। जिसमें हार और जीत को हल्के मन से लिया जाता है और हर स्थिति में उत्साह बनाये रखा जाता है। हँसती-हँसाती फूल की जिन्दगी ही सफल और सुखद मानी जाती है। क्षति और पराजय को भूलकर भावी उपक्रम बनाने और जिस स्थिति में है, उससे अधिक प्राप्त करने के लिए प्रयत्नरत होना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गड़बड़ाती हुई मशीन को ठीक करने से पहले मिस्त्री वह जाँच-पड़ताल करता है कि कहाँ क्या नुक्स आ जाने से मशीन बन्द हुई है। ठीक करने का क्रिया-कलाप इसके बाद ही चलता है। चिकित्सक रोग का कारण जाँचता और इसके बाद इलाज आरम्भ करता है। सब कुछ ठीक-ठाक रहने पर भी यह देखभाल होती रहती है कि अगले दिनों किसी अड़चन की आशंकाएँ तो नहीं ? कारण भूतकाल में छिपे मिलते हैं, गड़बड़ी वर्तमान में दीख पड़ती है, आशंका का अनुमान भविष्य के संदर्भ में लगाया जाता है। सड़क पार करते समय सामने ही नहीं, दोनों ओर देखकर भी चला जाता है। ठीक इसी प्रकार शरीर और मन की वर्तमान स्थिति के सम्बन्ध में पिछली गल्तियाँ, अब की आदतों और अगले दिनों की घटित हो सकने वाली आशंकाओं को ध्यान में रखते हुए यह निर्णय करना पड़ता है, कि किस सुधार परिवर्तन की आवश्यकता है। उसे किस प्रकार कार्य रूप में परिणित किया जाना चाहिए।

व्यवस्था बुद्धि उसी को कहते हैं, जिसमें मात्र तात्कालिक स्थिति को ही नहीं, उससे जुड़े हुए भूतकालीन तथ्यों पर भी ध्यान दिया जाता है और उनमें जो हेरफेर करना हो, उसे करने के लिए बिना समय गँवाये कदम उठाया जाता है। भविष्य को और भी अधिक अच्छा बनाने के लिए यह निर्धारण भी किया जाता है कि अधिक महत्त्वपूर्ण को पाने के लिए क्या मूल्य चुकाना पड़ेगा और उसे जुटाने के लिए क्या तारतम्य बिठाना पड़ेगा ? इस प्रकार के समग्र चिन्तन को ही व्यवस्था कहतें हैं, भले ही वह किसी भी प्रयोजन के लिये अपनाई गई है। शारीरिक और मानसिक स्वस्थता, समर्थता का महत्त्वपूर्ण आधार है। इसलिए उसकी रखवाली और प्रगति के लिए उसी प्रकार सतर्क रहना चाहिए, जैसा कि कोई अनेक दिशाधाराओं वाले उद्योग-व्यवसाय को चलाने, समस्याओं का हल निकालने के लिए रहता है।

घर में रोज बुहारी लगायी जाती है। उपयोग में आने वाली वस्तुओं को सही स्थिति में रखने के लिये उन्हें प्रतिदिन झाड़ा, पोंछा जाता है। शरीर और मन चूँकि जीवन का समूचा भार वहन करते हैं, उसके लिए उनमें उत्पन्न होते रहने वाली गड़बड़ियों को बिना आलस्य किए सुधारते रहना आवश्यक है। घोड़े से लम्बी अवधि तक काम लेना हो, तो उसके चारे-दाने का प्रबन्ध तो करना ही पड़ता है, साथ ही उसे सर्दी-गर्मी, गन्दगी से बचाने की भी सतर्कता रखनी होती है। शरीर और मन की दोनों साधना दो हाथों या पैरों की तरह है। इनके गड़बड़ा जाने पर अपनी समूची क्षमताएँ अस्त-व्यस्त हो जाती हैं। प्रगति करना तो दूर यथास्थिति बनाये रहना और अवगति से बचना तक कठिन हो जाता है। अन्यान्य जिम्मेदारियों का वहन करते हुए जिस प्रकार जीवनचर्या चलाई जाती है, उसी में एक महत्त्वपूर्ण पक्ष यह भी जुड़ा रहना चाहिए कि आरोग्य की स्थिति ठीक है या नहीं ? भूख, नींद और मल-विसर्जन के तीन कार्य यथावत् हो रहे हैं या नहीं ? मन-उत्साह, साहस और उल्लास की तीनों विशेषताओं को अपने स्थान पर ठीक से रखे हुए हैं या नहीं ? यदि नहीं तो उपेक्षा में समय गँवाने की अपेक्षा तुरन्त उसके उपचार में लगना चाहिए।

यहाँ यह ध्यान रखने की बात है कि चिकित्सकों की सहायता से किसी भी रोग में नगण्य जितना ही सुधार होता है। सुधार तो अपने निज का आहार-विहार व्यवस्थित करने के रूप में करना पड़ता है। नियमितता अपनाना, संयम बरतना और स्वच्छता के लिए स्फूर्ति बनाये रहना ऐसा प्रयास है कि जिसके आधार पर खोये स्वास्थ्य को फिर से पाया जा सकता है। अच्छा हो तो उसे और भी अधिक अच्छा बनाया जा सकता है।

मन के सम्बन्ध में भी यही बात है। दूसरों की ओर से जो अवांछनीयता बरती गई है, उसका प्रतिशोध लेने की अपेक्षा यह सोचना चाहिए कि अपनी ढाल कैसे मजबूत की जाय, जिस पर किसी आक्रमणकारी का प्रहार कारगर न हो सके। इसी प्रकार अपने संतुलन को बनाये रहकर यह सोचना चाहिए कि अगणित असुविधाओं से निपटने का क्या उपाय हो सकता है और उसे वर्तमान परिस्थितियों में किस आधार पर, किस सीमा तक निरस्त किया जा सकता है ? इतने पर भी यदि कुछ संकट आ ही खड़ा हो तो इतना धैर्य और साहस सँजोये रहना चाहिए कि आगत आपदा से हँसते-हँसते किसी प्रकार निपट लेने का उपक्रम बन सके। अपनी स्थिति सुधार लेना बाहर की अनेकों प्रतिकूलताओं को अनुकूलता में बदल लेने का गुरुमंत्र है।

बुद्धि की तीक्ष्णता और सक्रियता को पैनी रखें

अगणित विशेषताओं से युक्त मानवी काय-कलेवर की उपलब्धि, ईश्वर की देन है। इसे सँजोना, संभालना उपलब्धकर्त्ता का अपना काम है। कोई चाहे तो निर्वस्त्र रहकर पागलों की तरह उपहासास्पद स्थिति में भी बना रह सकता है। किसी में सऊर हो तो उसी काया को परिधान-आच्छादनों में शृंगारित-सुसज्जित करके मन-मोहक बनाया जा सकता है। यह अपनी मर्जी और सम्मान को विषय है। भगवान ने मानव की बुद्धिमत्ता और पात्रता को इसी कसौटी पर परखा है कि वह दिये गये अनुदान का उपयोग करने में अपनी कुशलता और प्रगतिशीलता का परिचय दे सकता है या नहीं ? प्रभावी प्रगति या अवगति की सम्भावना इसी कसौटी पर कसे जाने के उपरान्त बन पड़ती है।

आलस्य मनुष्य का प्रथम शत्रु है। शरीर को वह सजीव होते हुए भी निर्जीव स्तर का बनाकर रख देता है। जब स्फूर्ति, उत्साह और परिश्रम को अपनाया ही न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जायेगा, तो काया स्वयं ही दौड़ती और कुछ उपयोगी करती रह सके, ऐसा कहाँ बन पड़ेगा ? सभी व्यक्ति न अपनी कमी खोज पाते हैं और न उसमें सुधार करने का कुछ प्रयास करते हैं। फलतः दिन ज्यों-त्यों करके गुजरते रहते हैं, शरीर यात्रा किसी प्रकार चलती रहती है, किन्तु निरन्तर श्रमरत न रहने की कुटेव उनके लिए कोई ऐसी उपलब्धि नहीं बुला सकती, जिसके आधार पर समुन्नत कहलाने का श्रेय मिल सके। जब आलस्य शरीर से आगे बढ़कर मन तक पर सवार हो जाता है, तब उसे प्रमाद कहते हैं। प्रमादी को न अवगति अखरती है और न उन्नति के लिए उमंग उठती है। यथास्थिति बने रहने में ही उसका चिन्तन सिकुड़ जाता है। न उसे सीखने की इच्छा होती है और न ऐसी योजना बनाने की, जिसके आधार पर आज की तुलना में आने वाला अगला कल अधिक समर्थ और समुन्नत बन सके। ऐसे लोगों को जब कभी दीनता-हीनता का आभास होता है, तो किन्हीं अन्य को कारण मानकर उसी पर दोषारोपण करने लगते हैं। भाग्य, विधि-विधान, ईश्वर की इच्छा, समय का फेर, ग्रह-नक्षत्र द्वारा उत्पन्न किये गये अवरोधों की बात सोचकर संतोष कर लिया जाता है। बहुत हुआ तो शासन, समाज, वातावरण, कलियुग या किन्हीं व्यक्ति को दोषी मानकर उसके प्रति वैर-भाव जमा लिया जाता है। आलसी और प्रमादी प्रायः इसी अवसाद एवं अचिन्त्य चिन्तन में घिरे रहकर किसी प्रकार जिंदगी के दिन पूरे कर लेते हैं।

इसके बाद विकृत मस्तिष्क के लोगों की बड़ी संख्या सामने आती है। उन पर दुर्भाग्य या आक्रोश छाया रहता है। असंतोषजन्य खीझ, जीवनक्रम को असाधारण रूप से प्रभावित करती है। शत्रुओं की संख्या अनायास ही बढ़ती है। या तो अपनी ओर से उन पर आक्रमणों की तैयारी की जाती है, या फिर वे किसी प्रसंग पर चिढ़कर कुछ छेड़खानी आरम्भ करते हैं। आक्रमण-प्रत्याक्रमण का कुचक्र चल पड़ता है। विचारणा इसी जंजाल में उलझ जाती है। योजनाएँ इसी परिधि में बनती रहती हैं। ऐसी दशा में यह सोचने या सूझने की गुंजायश ही नहीं रहती कि प्रगति के लिए क्या किया जा सकता है और उसे किस प्रकार सम्पन्न करना चाहिए। घृणा और आक्रोश, कितनों की ही बहुमूल्य शक्तियों को विघटन और विनाश खड़ा करने या उससे बचने में ही उलझाये रहता है।

ऐसा ही एक और भी भारी व्यवधान है, जो मनुष्य की आधी से अधिक शक्तियों का अपहरण कर लेता है। उसका नाम है लिप्सा-लालसा, जो कभी तृप्त होने का नाम नहीं लेती। कामुकता का यौनाचार स्वरूप तो स्वल्प है। उससे तो कुछ क्षणों में ही तृप्ति मिल जाती है, पर उसका चिन्तनपरक अश्लील कलेवर ऐसा ही है, जो मस्तिष्क पर कल्पनाओं के रूप में समय-कुसमय छाया ही रहता है और महत्त्वपूर्ण चिन्तन को कुछ करने के लिए अवकाश ही नहीं देता। धन की ललक भी ऐसी ही है। उसका कितना ही संग्रह क्यों न बन पड़े, पर तृष्णा कितना ही मिलने पर भी बलवती बनी रहती है। ठीक उसी प्रकार महत्त्वाकांक्षाओं का समुच्चय है, जो बड़प्पन प्रदर्शन, अधिक अधिकार के द्वारा अपने को अधिक प्रतापी बनाने के लिए, उद्वेग स्तर पर छाई रहती हैं। न दिन में चैन पड़ता है न रात में। चुनाव के दिनों में प्रत्याशियों को किस प्रकार पापड़ बेलने पड़ते हैं, इसे सभी ने देखा होगा।

यह आवेशग्रस्त मनःस्थितियाँ हैं। वे चिन्ता, निराशा, आशंका, भय, क्रोध, आवेश, तनाव आदि के रूप में हैं तो कितने ही प्रकार की, पर उनमें से चार प्रमुख हैं। (१) वैर भावना, (२) कामुकता, (३) तृष्णा, (४) बड़प्पन की असीम महत्त्वाकांक्षा। इनका अनुपात जितना बढ़ा-चढ़ा होगा, मनुष्य उसी अनुपात में नशेबाजी जैसी खुमारी से ग्रस्त रहेगा। मन पर बुखार चढ़ा रहेगा और शरीर ऐसा अशक्त दीख पड़ेगा, मानो लंघन में पड़ा हुआ रोगी हो। आलसी-प्रमादी, पक्षाघात पीड़ित अपंगों की तरह, एक प्रकार से किसी महत्त्वपूर्ण उपलब्धि की दृष्टि से अशक्त-असमर्थ ही माने जाते हैं। उस पर भी, यदि उन पर स्वार्थ, लोलुपता, कामुकता, बेतुकी महत्त्वाकांक्षाओं की तिजारी चढ़ बैठे, तो समझना चाहिए कि दुहरा संकट सवार हो गया। वे अपने जीवनक्रम को ही सुव्यवस्थित न रख सकेंगे, फिर उच्चस्तरीय प्रगति की योजना बनाना तथा लोकमंगल के क्षेत्र में प्रवेश करके, कोई कहने लायक श्रेय साधन अर्जित कर सकना तो और भी अधिक कठिन पड़ेगा। इन आधि-व्याधियों से छुटकारा पाने का उपाय एक ही है कि जो अवसाद-आवेश शरीर और मन पर छाये रहते हैं, उन्हें उतार फेंका जाय और सन्तुलन इस प्रकार बनाया जाय कि गहराई में उतर सकना, गम्भीरतापूर्वक विचार कर सकना, समस्याओं का समाधान खोज सकना संभव हो सके। प्रगति का मार्ग ऐसी ही मनःस्थिति में खोजा और अपनाया जा सकता है।

शारीरिक, मानसिक विशेषताओं वाले स्रष्टा के अनुदानों का सही प्रकार सही उपयोग बन सके, इसके लिए चिन्तन को सदा हल्का-फुल्का बनाये रखने की आवश्यकता है। उसे सदातीक्ष्ण बनाने और क्रियाशील रखने की आवश्यकता है। संयम अपनाने, सूझ-बूझ उभारने और दूरवर्ती परिणामों को ध्यान में रखते हुए जागरूकता बनाये रहने की आवश्यकता है। इसी मनःस्थिति को प्रतिभा कहते हैं। प्रस्तुत आधारों के अनेक पक्षों पर विचार करने के साथ ही, अपनी तथा दूसरों की गतिविधियों का निर्धारण सुव्यवस्था के आधार पर बनाये रहना, प्रतिभावानों के लिए ही संभव होता है। प्रमादी तो आरम्भ का कुछ कार्य करते और शेष को फिर कभी के लिए, किसी और की ओर खिसका देने के लिए अधूरा छोड़ देते हैं। फलतः वह आरम्भ किया गया थोड़ा सा काम भी उपहास और तिरस्कार का निमित्त बनता है। जिम्मेदार व्यक्ति जिस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कार्य को भी हाथ में लेते हैं, उसे पूरी तरह सँजोते हैं और आरम्भ का उत्साह अंत तक बनाये रहकर, समग्रता का, कुशलता का प्रमाण देकर अपनी जिम्मेदारी का परिचय देते हैं।

प्रतिभा निखारने के लिए जिस सूक्ष्म दृष्टि को अपनाना पड़ता है, उसका आरंभिक अभ्यास निरन्तर बनी रहने वाली दो समस्याओं के साथ जोड़ा जाना चाहिए। शरीर से लम्बे समय तक महत्त्वपूर्ण काम लेने हैं, इसलिए इस मशीन को इस प्रकार चलाया जाय कि उसमें न कहीं अड़चन खड़ी हो और न गतिशीलता में न्यूनता ही पड़े। इसके लिए इतनी सतर्कता भर से काम चल जाता है कि उसके आहार, विश्राम एवं क्रिया-कलाप को सही संतुलित रखा जाय। स्वस्थता की गारण्टी इन तीन प्रयोजनों को सही रखने तक से चल जाती है। प्रतिभा का प्रथम चरण, स्वास्थ्य संरक्षण की सफलता को महत्त्व देकर जगाया जा सकता है। अगली सीढ़ी है—चिन्तन को गड़बड़ाने न देना। अवसादग्रस्त या उत्तेजित न होकर, शान्त चित्त रहने पर ही सही निष्कर्ष निकालना और निर्धारण करना संभव होता है। जब तक कार्य की सुसंतुलित रूपरेखा न बने, तब तक उसको उस रूप में सम्पन्न नहीं किया जा सकता कि करने वाले की गरिमा एवं दक्षता बढ़ी-चढ़ी समझी जा सके। अच्छी तरह किये गये काम ही सफल होते तथा अपनी विशिष्टता का परिचय देकर प्रशंसा का पात्र बनते हैं।

शरीर और मन की व्यवस्था बना लेना, बाह्य जीवन या बाह्य संसार की सफलता का पूर्वार्ध पूरा कर लेना है। यह दोनों हर घड़ी साथ रहते हैं। अवसर मिलते ही इन्हें टटोलने और सुधारने के क्रम निर्धारित किए जाते रह सकते हैं। अनुशासन की साधना और गतिविधियों का निर्धारण, इन दो माध्यमों के सहारे बुद्धि की तीव्रता विकसित की जाती रहे, तो समझना चाहिए कि उसकी तीक्ष्णता कुछ ही समय में इतनी बढ़ी-चढ़ी स्थिति अपना लेगी, जिसके सहारे उलझनों को सुलझाना और श्रेयस्कर दिशाधारा अपना सकना संभव हो सके।

नित्य कर्म तथा दैनिक क्रिया-कलाप से जोड़ने वाली वस्तुओं को साफ-सथुरा, सुनियोजित, व्यवस्थित रखना तीसरा काम है, जिसके सहारे सुव्यवस्थित बुद्धि के विकसित होने का प्रमाण मिलता है। कपड़ों का साफ-सुथरा होना तथा करीने से पहना जाना इस बात का प्रमाण है कि व्यवस्था बुद्धि ठीक तरह काम करने की दिशा में चल पड़ी है। कलम, कागज, पुस्तकें, हजामत बनाने के सामान, जूते-चप्पल, बिस्तर, बर्तन, साबुन आदि ऐसी अनेक वस्तुएँ होती हैं, जो दैनिक जीवन में आमतौर से काम आ रही हैं। इनकी स्थिति अस्त-व्यस्त न रहे, तो देखने वालों के जागरूकता के स्तर पर पता चलता है। इसके एक कदम आगे घर ,दफ्तर, फर्नीचर आदि का नम्बर आता है। उन्हें टूटी-फूटी स्थिति में नहीं रहना चाहिए, अस्त-व्यस्त भी नहीं। सही जगह पर सही रीति से रखी हुई वस्तु सज्जा कहलाती है। यदि उसी को अस्त-व्यस्त ढंग से बिखरा दिया जाय तो फिर समझना चाहिए कि वस्तुतः वे अपनी मूक भाषा में हर दर्शक के कान में चुगली करती हैं "जो हमारी और हम जैसी सदा काम आने वाली वस्तुओं की साज-सँभाल नहीं कर सकता, उसकी जिम्मेदारी, तत्परता और सफलता पर विश्वास कोई किस प्रकार कर सकता है ?"

गन्दगी और टूट-फूट पर हर घड़ी ध्यान रखा जाना चाहिए। वस्तुएँ साफ करने तथा सही स्थिति में रखने के लिये तुरन्त प्रयत्न होना चाहिए। ऐसे काम प्रायः नौकरों पर या घर के दूसरे लोगों पर छोड़ दिए जाते हैं। समय काटने के नाम पर यह सब होता रहता है। ऐसी टाल-मटोल करने वाले, अपने स्वभाव और कौशल में जो तीक्ष्णता का समावेश कर सकते थे, उस लाभ का अनुमान लगाना भूल जाते हैं। प्रश्न यह नहीं कि दूसरों के कंधों पर खिसकाया गया काम कम महत्त्व का था या अधिक मूल्यवान। दूसरों की ओर खिसकाये गये काम के सम्बन्ध में यह आशा नहीं की जा सकती कि वह सही समय पर सही रीति से सम्पन्न हो जायेगा। जो अनख, आलस्य स्वयं अपनाया गया है, उसे सहयोगी लोग क्यों न अपनायेंगे ? इस प्रकार व्यवस्थाओं के अनेक छोटे-मोटे कामों में औरों को फँसाने और स्वयं निश्चिंत हो जाने की आदत ऐसी है, जो प्रतिभा के विकास एवं व्यवस्था बुद्धि के परिष्कार में बहुत बड़ी अड़चन उत्पन्न करती रहती है।

सूझ-बूझ का सुनियोजित विस्तार हो

विकास की दिशा में अग्रसर होने की प्रमुख पहचान यह है कि हर व्यक्ति अपने वर्तमान और भविष्य के सम्बन्ध में व्यापक विचार करे। संभावित कठिनाइयों का अनुमान लगाये और उनके निराकरण का समय रहते उपाय-उपचार सोचे। भविष्य को अधिक उज्ज्वल बनाने के लिए ऐसी रूपरेखा बनाए, जो वर्तमान परिस्थितियों और उपलब्ध साधनों के सहारे अग्रगामी बनायी जा सके। वर्तमान को भविष्य के साथ जोड़ते हुए ही सुनिश्चित कदम बढ़ाने के निर्णय तक पहुँचना चाहिए।

प्रगतिशील दृष्टिकोण अपनाने के अतिरिक्त देखना यह भी चाहिए कि हाथ में लिए हुए काम क्या हैं ? उन पर तत्परता और तन्मयता केन्द्रित करने से ही यह संभव है कि बुद्धि की तीक्ष्णता, व्यवहार की कुशलता का अभ्यास बढ़े। हाथ में आये कार्यों को सफलतापूर्वक सम्पन्न करते रहने से जहाँ अपना साहस बढ़ता है, वहाँ दूसरी ओर कर्त्ता की वरिष्ठता पर विश्वास होता है और उस उत्साह में अन्य लोग अधिक सहयोग देने या लेने के लिए लालायित रहने लगते हैं। यह उज्ज्वल भविष्य की ओर इंगित करने वाले अच्छे लक्षण हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिभाशाली कहे जाने वालों में से प्रत्येक में व्यवस्था बुद्धि होती है। व्यवस्था तब बनती है, जब कार्य से सम्बन्धित समयगत आवश्यकता के तथा भावी संभावनाओं के सम्बन्ध में जागरूकता बरती जाय और अधिक सही कल्पना कर सकने की क्षमता विकसित की जाय। साथ ही यह भी सूझ पड़े कि समस्याओं से निपटना और आवश्यकताओं को जुटाना किस प्रकार संभव हो सकता है ? भूतकाल के अनुभवों से लाभ उठाया जा सकता है, पर ऐसा नहीं हो सकता है कि किसी समय की, किसी की क्रियापद्धति का अनुकरण मात्र करके काम चला लिया जाय। परिस्थितियाँ बदलती रहती हैं, साथ ही हर किसी की शैली एवं विशेषता भी अपनी होती है। एक व्यक्ति जिस प्रकार, जिस राह से आगे बढ़ा हो, उसी का अनुकरण करके वैसी सफलता दूसरे भी प्राप्त कर लेंगे, यह आवश्यक नहीं। होना यही चाहिए कि आज की अपनी परिस्थितियों के अनुरूप कदम बढ़ाये जायें। इसके लिए प्रत्युत्पन्नमति और सामयिक सूझ-बूझ की आवश्यकता पड़ती है।

अनुपयुक्त साथियों का चयन भी असफलता का ही निमित्त कारण बनता है। साधन थोड़े हों, हर्ज नहीं। साथी कम हों, तो भी काम चल जाता है, किन्तु उनका स्तर सदा ऊँचा ही रखना चाहिए। उनका मिल सकना अपनी चयन सम्बन्धी सूझ-बूझ पर निर्भर है। घटिया दृष्टि में यही प्रमुख दोष होता है कि घटिया व्यक्तियों की ओर आकर्षित हो जाती है। उन्हें अपेक्षाकृत सस्ता देखकर ललचाती है। अन्तत: उनके सहारे जो कुछ बन पड़ता है, वह भी घटिया होता है और उनके द्वारा किया गया काम भी गये-गुजरे स्तर का होता है। इसलिए उपयुक्त कार्य के लिए उपयुक्त साथी चुनने चाहिए। यदि वैसा कुछ कर सकना संभव न हो, तो अधिक अच्छा यह है कि उतावली में निजी कार्य हाथ में लेने की अपेक्षा, किसी व्यवस्था बुद्धि वाले तंत्र के साथ सहायक बनकर काम किया जाय। इसमें भले ही श्रेय कम मिले, वेतन सीमित होने से महत्त्वाकांक्षा भी बड़ी न सधे, पर अनुभव तथा सूझ-बूझ का बढ़ना तो निश्चित ही है।

उथले दृष्टिकोण वाले मात्र इतना ही कर पाते हैं कि जो प्रयोजन सामने है, उतने भर की ही बात सोचें। उसके साथ जुड़ने वाले अनेक पक्षों के सम्बन्ध में वे विचार नहीं कर पाते। पहले से यदि सम्बद्ध विषयों पर विस्तारपूर्वक विचार नहीं किया गया है, तो अनभ्यस्त परिस्थिति सामने आते ही किंकर्त्तव्यविमूढ़, हक्का-बक्का रह जाना पड़ता है। उस स्थिति को ताड़कर धूर्त लोग अनुचित लाभ उठाते हैं, गिरे में दो लात लगाने का मजा लूटते हैं।

विकसित व्यक्ति की पहचान यह है कि वह अपनी ही नहीं, साथियों की प्रस्तुत या भावी समस्याओं के सम्बन्ध में समय रहते विस्तृत विचार करे और किसी ठोस निष्कर्ष पर पहुँचे। इतना ही नहीं इसकी पूर्व तैयारी में भी लगा रहे।

मार वही खाते हैं, जो व्यापक जानकारी और अभीष्ट अनुभव एकत्र करने में उपेक्षा बरतते रहते हैं। बहुज्ञ, दूरदर्शी, वस्तुस्थिति की गहराई तक पहुँचने वाले लोग, उलझनों को व्यावहारिक स्तर पर सुलझाने का प्रयत्न करते हैं। आवेशग्रस्त, आतुर या चिन्ता में डूबते-उतराते रहने वाले लोग, अव्यवस्थित चित्त में प्राय: कुछ ऐसा कर बैठते हैं, जिससे कठिनाइयाँ हल होने के स्थान पर और भी अधिक बढ़ जाती हैं। मानसिक संतुलन बनाये रहने पर ही कोई छोटी से लेकर बड़ी व्यवस्थाएँ बना सकने में समर्थ हो सकता है।

युद्ध मोर्चे पर कितने ही सैनिक मरते और घायल होते रहते हैं। उनमें सेनापति के कोई निकटवर्ती या घनिष्ठ भी हो सकते हैं। उनका शोक मनाने वाला सेनापति क्षण-क्षण में बदलती रणनीति को सही रूप में सम्हाल ही न सकेगा और स्वयं को तथा समूची सेना को खतरे में डालेगा। हानि हो या लाभ, दोनों ही परिस्थितियों में जो आवेशग्रस्त नहीं होते, उन्हीं के लिए यह संभव है कि वर्तमान का निरीक्षण और भविष्य का निर्धारण सही रूप में कर सकें। व्यवस्था के लिए मानसिक संतुलन बनाये रहने में समर्थ होना अनिवार्य रूप से आवश्यक है।

हर कार्य में विचार-विनिमय की, सहयोग और आदान-प्रदान की आवश्यकता पड़ती है। यह मनुष्यों में ही एक-दूसरे के बीच चलता है। सभी की प्रकृति एक-दूसरे से भिन्न होती है। स्वभाव सर्वथा एक जैसे ही हों यह आवश्यक नहीं। आपसी तालमेल बिठाने, कमियों को निबाहने और सहयोग के लिए आकर्षित करने की नीति हीं सदैव काम देती है। समझदार उसे कहा जाता है, जो टूटे को बनाने और रूठे को मनाने का प्रयत्न करता है। वैमनस्य में अपनी और पराये की हानि ही हानि है, जबकि स्नेह-सद्भाव बने रहने में हर दृष्टि से लाभ ही लाभ है। इस तथ्य को उन्हें तो समझना ही चाहिए, जो किन्हीं व्यवस्थाओं को बनाये रहने का दायित्व सँभालते हैं।

शतरंज का खेल-खेलने वाले को अनेक गोटियों की चाल पर एक साथ नजर रखनी पड़ती है। जो एकाध पर ही ध्यान रखते और बाकी के सम्बन्ध में कुछ सोचते नहीं, वे मात खाते हैं। प्रत्येक कार्य शतरंज की तरह है। उसके हर पक्ष पर ध्यान रखना पड़ता है। कल्पना शक्ति का इतना विकास करना होता है कि सम्बन्धित सभी उतार-चढ़ावों पर पूरा ध्यान रहे।

नया कारखाना जमाना हो या बीमार फैक्टरी को नये हेरफेर के साथ नये स्तर पर नया मोड़ देना हो, तो उस निमित्त प्रखर कल्पना शक्ति द्वारा सम्बन्धित सभी पक्षों पर समुचित ध्यान देना होता है और तदनुरूप जो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परिवर्तन किया जाना हो, उसका सरंजाम आद्योपान्त जुटाना होता है। यदि इसमें एक-दो छोटी-मोटी भूलें भी रह जायें, तो उन्हीं के कारण काम रुका पड़ा रहता है और ढेरों समय बर्बाद होता तथा ढेरों घाटा पड़ता है। कारखानेदारों को अपनी व्यवस्था के सभी पक्षों पर समग्र ध्यान देना पड़ता है। इतना सोचने से ही काम नहीं चल जाता कि उत्पादन कार्य होता रहे, वरन् कच्चा माल खरीदने, बने माल को बेचने के लिए विक्रेता और ग्राहक जुटाने की समूची प्रक्रिया ध्यान में रखनी पड़ती है। सोचना यह भी होता है कि बाजार में माल का स्तर या मूल्य टिक सकेगा या नहीं ? उधार देन-लेन को भी समय पर निपटाना पड़ता है। जिनकी इतनी विस्तृत और पैनी सूझ-बूझ है, व्यवस्था करना, कारखानों को चलाना उन्हीं के लिए संभव है। जो एक ही काम को पकड़कर रह जाते हैं, वे कारखानेदार नहीं बन सकते, मात्र कर्मचारी भर रहकर दिन गुजारते हैं।

इमारतें बनाने वाले कारीगर जिन्दगी भर उसी मजूरी में लगे रहते हैं। पर जिनका दिमाग चलता है, वे निर्माण कार्य से सम्बन्धित सभी पक्षों को समझ लेते हैं। उसी अनुभव के आधार पर छोटे ठेके लेने लगते हैं और बड़े ठेकेदार बन जाते हैं। एक ही योग्यता वाले दो व्यक्तियों में से एक का जहाँ का तहाँ बना रहना और दूसरे का कहीं से कहीं जा पहुँचना, यह सुनियोजित कल्पना शक्ति के होने न होने का चमत्कार भर है।

आयोजनों, समारोहों, उत्सवों, प्रीतिभोजों में भी ऐसा ही बहुमुखी और भारी उतार-चढ़ाव वाला झंझट जुड़ा रहता है। जो सम्बन्धित पक्षों की समग्र कल्पना कर सकते हैं और उन्हें जुटाने के लिए आवश्यक आधार खड़ा कर लेते हैं, उन्हीं को सफलता का श्रेय मिलता है। घटिया लोग थोड़ा सोचते और बहुत कुछ बिना सोचे छोड़ देते हैं, फलतः थोड़ी सी गलतियाँ सारा मजा किरकिरा कर देती हैं। नब्बे प्रतिशत किया गया परिश्रम, दस प्रतिशत रही हुई भूलों के कारण अपयश का निमित्त कारण बनता है। इसलिए अपेक्षा की जाती है कि व्यवस्थापक जन, सौंपे गये कार्य से जुड़ी हुई गतिविधियों को आदि से अन्त तक सही कल्पना कर सकने की कसौटी पर खरा उतरना चाहिए।

साहित्यकार अपनी संरचना का पहले आद्योपान्त खाका खड़ा करते हैं। उसे बार-बार सुधारते और अधिक ऊँचे स्तर तक पहुँचाने के लिए भरपूर प्रयत्न करते हैं। जो ऐसा नहीं कर पाते, उनकी रचनाएँ दोषपूर्ण रह जाती हैं। चित्रकारों, मूर्तिकारों, अभिनेताओं आदि कलाकारों के सम्बन्ध में भी यही बात है।

पदों में गवर्नर का पद सबसे बड़ा माना जाता है। इसका अर्थ भी 'मैनेजर' से मिलता-जुलता है। जो इस कला में जितना प्रवीण है, वह अपने कार्यक्षेत्र में उतनी ही अधिक सफलता प्राप्त करेगा और यशस्वी बनेगा। इस विशेषता के अभाव में ही, साधन-सम्पन्न होते हुए भी लोग घाटा उठाते और असफल रहते देखे गये हैं। नेताओं में यही गुण होता है कि वे न केवल अपने निजी काम संभालते हैं, वरन् सुनिश्चित क्षेत्र में उन्हें जिन गतिविधियों को अग्रगामी बनाना है, उसके लिए दौड़-धूप करते और मानसिक ताना-बाना बुनते हैं। चुनाव जीतने की रणनीति ऐसे ही कौशलों पर, जोड़-तोड़ों पर निर्भर रहती है। किसानों से लेकर शिल्पियों तक में से जिन्हें अधिक सफलता मिलती है और जो अधिक सम्मान पाते हैं, ऊँचा उठते हैं, उन्हें उनकी विकसित सूझ-बूझ ही काम देती है।

शारीरिक दृष्टि से आलसी और मानसिक दृष्टि से प्रमादी भी निकम्मों जैसी भूमिका ही निभाते हैं। पूर्व तैयारी न कर पाने पर, समय पर भाग-दौड़ भी बहुत करते हैं और आधा-अधूरा ही काम बन पड़ने के कारण घाटे में भी रहते हैं। जो विद्यार्थी अपनी पढ़ाई में सोते हैं, अस्त-व्यस्तता बरतते हैं, उन्हें फेल होते ही देखा गया है। खिलाड़ियों को भी इन्हीं कमियों के कारण असफलता का मुँह देखना पड़ता है।

जिन्दगी जीना अपने आप में एक बहुत बड़ा व्यवसाय है। सूक्ष्मदर्शी, क्रिया-कुशल, सुव्यवस्था का आश्रय लेने वाले ही अपने आयुष्य का ठीक तरह उपयोग कर पाते हैं। समय, श्रम, चिन्तन और कौशल को सही दिशा में, सही योजना बनाकर जो जीवन पद्धति का निर्धारण करते हैं, उन्हीं सूझ-बूझ के धनियों को महामानव बनने का श्रेय मिलता है। दीर्घसूत्री लोग तो हाथ मलते हुए ही रह जाते हैं।

अपनों को उत्कृष्टता के ढाँचे में भी ढाला जाय

समाज को अनेक वस्तुओं की आवश्यकता रहती है और उसकी पूर्ति के लिए बहुमुखी चेष्टाएँ होती रहती हैं। इस प्रयास में इतना और जुड़ना चाहिए कि परिष्कृत व्यक्तित्वों का निर्माण सर्वोपरि है। उन्हीं के पास वैयक्तिक और सामूहिक प्रयोजनों को पूरा कर सकने की क्षमता एवं साहसिकता होती है। शेष लोग तो खर्चने और बर्बाद करने में ही लगे रहते हैं। वे उत्कर्ष के स्थान पर अपकर्ष खड़ा करने में ही अपने स्वभाव और प्रयास को निरर्थक करते रहते हैं। इनके द्वारा खोदी गयी खाई को भी वे प्रतिभाएँ ही भरती हैं, जिनका व्यक्तित्व उस स्तर की विशेषता से सम्पन्न होता है। इन्हीं का उपार्जन देश-समाज की महती आवश्यकताओं को पूरा करने का प्रमुख उपाय है।

प्रगति किसी भी क्षेत्र में ही क्यों न हो, उसे प्रतिभाशाली लोग ही सम्पन्न करते हैं, यहाँ तक कि हेय दुरभिसंधियाँ रच सकना भी उन्हीं से बन पड़ता है, फिर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

श्रेष्ठता की दिशा में बढ़ सकना तो उनके बिना बन ही कैसे पड़े ? सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण प्रसंग यही है। इतिहास में जिनने भी कुछ अविस्मरणीय काम किये हैं, उन सभी में ऐसी प्रतिभा विद्यमान थी, जिसमें सज्जनता का समुचित समावेश रहा। इसी प्रयोजन में अभिभावकों और अध्यापकों की सबसे बड़ी भूमिका रहती है। क्योंकि उठती उम्र उन्हीं के संरक्षण में गुजरती है। हरी लकड़ी को किसी भी दिशा में मोड़ा जा सकता है। गीली मिट्टी से किसी भी प्रकार के बर्तन या खिलौने बन सकते हैं, किन्तु सूखी लकड़ी या मिट्टी, जैसी भी कुछ है, वैसी ही बनी रहती है। टूट जाती है पर बदलती नहीं। यही बात मनुष्यों के सम्बन्ध में भी लागू होती है। तरुण हो जाने के उपरान्त प्रायः कम ही लोग सुधर पाते हैं।

परिवार की तरह विद्यालय भी सामूहिकता के साथ जुड़े हुए सद्गुणों के विकास का एक महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्राचीनकाल में बालकों को गुरुकुलों में पढ़ने के लिये इसी दृष्टि से भेजा जाता था कि वहाँ की पारिवारिकता उच्च कोटि की रहने से, उसमें रहकर छात्रों को व्यक्तित्व-विकास का समुचित आधार मिल सके। वहाँ अभिभावक की भूमिका अध्यापक निभाते थे। माता का दुलार, संरक्षण एवं समर्थन उन्हें गुरु पत्नी से मिल जाता था। ऐसी दशा में छात्रों को घर छोड़ने का अभाव खटकता नहीं था।

इन दिनों शिक्षा प्रणाली की उस समग्रता में बहुत कुछ कमी रह जाती है। सरकार द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रम पूरा करके, किसी प्रकार पास होना ही एकमात्र लक्ष्य रह जाता है। अध्यापक और छात्र इतने भर से ही अपने स्कूली कर्त्तव्य की पूर्ति मान लेते हैं। जबकि होना यह चाहिए कि अभिभावकों की कमियों को अध्यापक पूरा करें। इतना ही नहीं, सद्भाव भरा सम्बन्ध दोनों पक्षों में इस स्तर का बना रहे कि व्यक्तित्व विकास सम्बन्धी परामर्श अध्यापकों द्वारा दिये जाने पर छात्र उसे अपना सकें।

पाठ्य-पुस्तकों की पढ़ाई आवश्यक तो है, पर समझना चाहिए कि इतना ही पर्याप्त नहीं। उठती आयु ही, प्रवृत्तियों को अपनाने की अवधि होती है। बड़े होने पर तो जो आदतें अपना ली जाती हैं, वे ही परिपक्व होती रहती हैं। उनमें सुधार करना कठिन पड़ता है। बचपन और किशोरावस्था में शरीर यात्रा के उपरान्त का अधिकांश समय स्कूली परिसर में ही बीतता है। वहाँ अध्यापक वर्ग आमतौर से अभिभावकों की तुलना में अधिक योग्य भी होता है। इसलिए आशा की जाती है कि उनके सम्पर्क में शिक्षार्थी न केवल पढ़ाई अच्छी तरह पूरी करेंगे, वरन् उन सद्गुणों का अभ्यास भी करेंगे, जो घर की तुलना में स्कूलों के सहकारी वातावरण में अधिक अच्छी तरह उपलब्ध हो सकता है। अध्यापक यदि इस ओर भी ध्यान दें और सच्चे मन से प्रयत्न करें, तो अभिभावकों की कमी को इन विद्या मंदिरों से पूरा किया जा सकता है। शिक्षा की समग्रता इसी प्रकार बनती है। अन्यथा उसे मात्र पढ़ाई का शिल्प-शिक्षण भर कहा जा सकता है।

कारीगरों के साथ रहकर श्रमिक जिस प्रकार उस विषय की योग्यता प्राप्त कर लेते हैं, यदि उतना ही स्कूलों में भी बन पड़ा, तो समझना चाहिए कि गुरु-शिष्य परम्परा की गरिमा समाप्त हो गयी है। पढ़ाई तो घर रहकर भी की जा सकती है। ट्यूटर लगाकर या पत्राचार उपक्रम के सहारे भी पूरी की जा सकती है। स्कूलों की उपयोगिता तभी बनती है, जब वहाँ छात्रों को अपने व्यक्तित्व विकास का भी समुचित अवसर मिलता रहे। यह कार्य पढ़ाई जारी रहने के साथ भी चलता रह सकता है। इसके लिए छात्रों की उत्सुक जिज्ञासा और अध्यापकों की गुरु-गरिमा को सजीव-सक्रिय बनाये रखने की अत्यन्त आवश्यकता है। भले ही इसके लिए सरकारी अनिवार्यता न हो, पर उस पर कोई रोक भी तो नहीं है। अच्छाई सीखने और सिखाने के प्रयत्न तो सदा सराहे ही जाते हैं। इसमें छात्रों का हित होता है, अध्यापक की गरिमा बढ़ती है, अभिभावक इस सुयोग के लिए कृतज्ञ रहते हैं। समाज यह अनुभव करता है कि राष्ट्र को सुयोग्य नागरिक प्रदान करने की महती सेवा-साधना शिक्षण तंत्र द्वारा सम्पन्न की गयी।

कारखानों में मशीनें, श्रमिक और अफसर काम करते हैं। उनके हर पक्ष की साज-सँभाल किये रहने वाले को ही मैनेजर कहते हैं। वह यह भी प्रयत्न करते हैं कि बने माल को खपाने के लिए ग्राहकों को संतुष्ट रखने की व्यवस्था भी बनी रहे। कर्मचारियों को कर्त्तव्यनिष्ठ तथा कार्य कुशल बनाये रखना भी उनका दायित्व होता है। उसकी प्रतिष्ठा एवं पदोन्नति भी इसी पर निर्भर है। यही बात परिवार संचालन एवं स्कूली अध्ययन-अध्यापन पर लागू होती है। उस तंत्र का सुसंचालन ही उसकी सर्वतोमुखी सफलता का आधार है। प्रबन्धक बुद्धि यों आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक कार्यों में भी इतनी ही अभीष्ट समझी जाती है, पर तब उसकी जिम्मेदारी और भी अधिक बढ़ जाती है, जब मनुष्य को अधिक शिष्ट, सभ्य और आदर्शवादी बनाने का लक्ष्य सामने हो। सरकस के प्रशिक्षकों को इसलिए अधिक सराहा जाता है कि वे अनगढ़ ही नहीं, खूँखार जानवरों को भी कलाकारों जैसे कौतुक करने के लिए अभ्यस्त बना लेते हैं। पारिवारिक वातावरण एव स्कूल परिकर की सार्थकता-प्रतिष्ठा तब ही है, जबकि अनगढ़ स्तर के समुदाय को सुसंस्कारी बनाने में इस स्तर तक सफल हो सकें कि उनके माध्यम से प्रतिभाओं का निर्माण हो।

अभिभावक बच्चों को हँसाने, खिलाने, सजाने जैसे कृत्यों में ही लगे रहते है। उन्हें यह नहीं सूझता कि आँगन में खेलने वाले बालकों को यदि सुसंस्कारिता के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साँचे में ढाला जा सके, तो वे अपनी गरिमा बढ़ाने और दूसरों की असाधारण सेवा-साधना कर सकने में समर्थ हो सकते हैं। इसके लिए केवल हँसाने-खिलाने के कौतुक काम नहीं देते, वरन् उनकी प्रवृत्तियों का सूक्ष्म पर्यवेक्षण करते हुए, उनमें उत्कृष्टता के बीज सावधानीपूर्वक बोये जाने चाहिए। यह कार्य उथली दृष्टि से नहीं हो जाता, वरन् उसी प्रकार करना होता है, जिस प्रकार स्वर्णकार सोने की डली को अपने हस्त कौशल के सहारे आकर्षक आभूषणों के रूप में गढ़कर यशस्वी एवं लाभान्वित होता है। बालकों के सम्बन्ध में भी यही नीति अपनायी जानी चाहिए।

अध्यापकों का काम भी इससे कम गंभीर एवं कम जटिल नहीं है। मोटेतौर पर, निर्धारित पाठ्यक्रम को पूरा करा देना ही उनका काम माना जाता है। छात्र भी उतने से ही संतुष्ट हो जाते हैं और अभिभावक इससे अधिक आशा-अपेक्षा नहीं करते। यह शिथिलता, उपेक्षा एवं अपूर्णता तीनों ही पक्षों पर लांछन लगाती है और छात्र के भविष्य तथा समाज के प्रति कर्त्तव्य पालन में एक बाधा बनकर अड़ी रहती है। अच्छे डिवीजन से पास होने और अच्छी-अच्छी नौकरी पा लेने भर से उसकी उपयोगिता सिद्ध नहीं हो सकती। कमाई की दृष्टि से तो कई बहुत कम पढ़े व्यवसायी भी उनसे कहीं अधिक कमा लेते हैं। शिक्षा की सार्थकता तब बनती है, जब उसकी छत्र-छाया में अधिक सुसंस्कृत, अधिक प्रतिभावान एवं अधिक क्रिया-कुशल व्यक्तित्व का निर्माण हो। इसके लिए उपयुक्त वातावरण बनाना अध्यापक तंत्र का कर्त्तव्य है।

सामूहिक उपदेश देने भर से बात नहीं बनती, वरन् यह भी आवश्यक हो जाता है कि प्रत्येक छात्र की मनःस्थिति एवं रुझान, प्रवाह पर भी ध्यान दिया जाय। उसके साथ आत्मीयता का सम्बन्ध सूत्र जोड़ा जाय और परिस्थितियों के अनुरूप, ऐसा ज्ञान देते रहा जाय, जिससे भटकाव से बचना और प्रगति पथ पर सही रूप से चल सकना संभव हो सके। इसके लिये मार्गदर्शक का निज का व्यक्तित्व ऐसा होना चाहिए, जो न केवल ज्ञान की दृष्टि से वरन् चरित्र की दृष्टि से भी प्रभाव छोड़ने में समर्थ हो। जिन विद्यालयों के छात्र न केवल बुद्धिमान वरन् चरित्रनिष्ठ एवं समाजनिष्ठ बनकर निकलें, समझना चाहिए कि शिक्षा को सार्थक करने वाली विशिष्टता बन पड़ी। हर शिक्षक, हर विद्यालय इन विशेषताओं को उत्पन्न करने के लिए प्राण-प्रण से प्रयत्न करे तभी उसका गौरव है।

उद्योग व्यवसाय के क्षेत्र में भी कारखानों, दफ्तरों के अन्तर्गत बड़ी जनसंख्या काम करती है। यदि वहाँ श्रमिकों को रोटी और मालिकों को रोजी भर मिल सकी तो समझना चाहिए कि यहाँ शरीर रक्षा में काम आने वाले निर्वाह भर की व्यवस्था है। इतना ही पर्याप्त नहीं, होना यह भी चाहिए कि जितने व्यक्ति जिस परिकर में काम करते हैं, उन्हें जीवन के हर क्षेत्र में कर्त्तव्य-परायण होने की शिक्षा-प्रेरणा भी मिलती रहे। वे न केवल कारखाने के प्रति निष्ठावान रहें, वरन् अपने निजी जीवन में भी क्रिया-कुशल, सुव्यवस्थित एवं नीतिवान बनकर रहें। राष्ट्रीय प्रगति का वास्तविक आधार उत्पादन भर बढ़ा लेना नहीं है, वरन् यह भी है कि नागरिकों में आदर्शवाद के प्रति निष्ठा और समाज में सद्भाव बनाये रहने वाली शालीनता अपनाये रहने की लोक रुचि समुन्नत स्तर की बनी रहे। ऐसा प्रशिक्षण एवं वातावरण भी उन सभी परिसरों में होना चाहिए, जहाँ अनेक लोग एकत्रित होते हैं। भले ही वे रोटी पाने के लिये आते हों, पर उन्हें वहाँ से वेतनों के अतिरिक्त ऐसा उत्साह भी साथ लेकर लौटना चाहिए, जो निजी जीवन को मानवी मर्यादाओं के अनुरूप विकसित कर सके और अपने सम्बद्ध क्षेत्र में श्रेष्ठता की छाप छोड़ सके। जहाँ प्रत्यक्ष प्रयोजनों के लिये कार्यक्रम बनते हैं, वहीं एक कड़ी यह भी जुड़ी रहनी चाहिए कि बिना किसी दबाव के जुड़े हुए घटक सिद्धान्तवादी और कर्त्तव्य-परायण बन सकें। इस व्यवस्था के बन पड़ने पर वे दफ्तर एवं कारखाने सराहने योग्य बन सकते हैं, जहाँ अभीष्ट उत्पादन ही नहीं होता, वरन् लोगों को चरित्रों को उत्कृष्टता के ढाँचे में ढाला जाता है।

कामगार अधिक सुविधा चाहते हैं और मालिक अपने लाभांश अथवा निर्धारण की पूर्ति भर से संतुष्ट हो जाते हैं। होना यह भी चाहिए कि जैसे सेना में युद्ध कौशल की तरह ही अनुशासन, देशभक्ति एवं कर्त्तव्य पालन सिखाने के लिए प्रयत्न किया जाता है, वैसा ही व्यक्तित्व को विकसित करने वाली प्रेरणा उन सभी संस्थाओं में संचालित हो, जो छात्रों या व्यक्तियों को अपने साथ जोड़कर रखती है।

महत्त्वाकांक्षा व्यवस्था बुद्धि की

मनुष्य स्वभावतः महत्त्वाकांक्षी है। सुखोपभोग की इच्छा हर प्राणी में पायी जाती है। इसी हेतु वह अनेक प्रकार के क्रियाकलापों में संलग्न रहता पाया जाता है। घटिया स्तर के व्यक्ति मात्र शरीरचर्या तक सीमित रहते हैं। वे अच्छा खाने, अच्छा पहनने, मनोरंजक दृश्य देखने, कामुकता की ललक सँजोने में लगे रहते हैं। शृंगार सज्जा इसी के अन्तर्गत आती है। इसके एक कदम आगे बढ़ने पर महत्त्वाकांक्षी के मन को उल्लसित करने वाले पक्ष सामने आ खड़े होते हैं। ठाट-बाट, सम्पत्ति संग्रह, पदवीधारी, सत्ताधारी होने की इच्छाएँ मनःक्षेत्र में ही उठती हैं। दूसरों से अधिक समर्थ-सम्पन्न होने की अभिलाषा से प्रेरित होकर लोग अनेक प्रतिस्पर्धा में उतरते हैं और विजयी होने पर गर्व जताते हैं। चुनाव जीतने में लोकसेवा की भावना कम और अपने को विशिष्ट सिद्ध करने की आकांक्षा अधिक होती है। अखबारों में नाम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

छपाने, समारोहों में प्रमुख पद पर आसीन होने, तीर्थ यात्रा आदि के माध्यम से लोगों की दृष्टि में धर्मात्मा जँचने जैसे ताने-बाने इसीलिए बुने जाते हैं। विवाह-शादियों, प्रीतिभोजों में खर्चीली धूम-धाम खड़ी करने में भी अपनी सम्पन्नता का विज्ञापन करने का भाव ही प्रधान होता है। निर्वाह के साधन तो सरलतापूर्वक कम समय और कम परिश्रम में भी जुट सकते हैं, पर निरन्तर व्यस्तता से ग्रसित रहने का प्रमुख कारण एक ही पाया जाता है-दूसरों की तुलना में अपनी विशिष्टता सिद्ध करना। इसी का सरंजाम जुटाने में जीवन का अधिकांश समय, श्रम एवं कौशल खप जाता है।

यह भुला दिया जाता है कि संसार में एक से एक बढ़कर बड़े आदमी भरे पड़े हैं। उनकी तुलना में भरपूर प्रयत्न करने पर भी कदाचित् अपनी बढ़ी-चढ़ी सफलता भी नगण्य समझी जा सके। फिर उत्साह तभी तक रहता है जब तक इच्छित वस्तु या स्थिति प्राप्त नहीं हो जाती। उपलब्धि के कुछ क्षण ही पानी के बबूले जैसा उत्साह प्रदान करते हैं। इसके बाद तो जो मिलता है, उसका बोझ और दायित्व वहन करते रहना ही कठिन पड़ जाता है। विवाह से पूर्व जोड़ीदार के सम्बन्ध में परी लोक जैसी कल्पनाएँ मस्तिष्क में ज्वार-भाटे की तरह उठती रहती हैं। पर जब कुछ ही दिन में गृहस्थी की भारी-भरकम गाड़ी खींचने की बारी आती है, तब पता चलता है कि ललक ने सुविधा कम और झंझट बहुत भारी लाद दिया। जो पाया है, उसे बनाये रहना भी कठिन होता है। ईर्ष्यालु उठ खड़े होते हैं और छीनने या नीचा दिखाने की दुरभिसंधियाँ रचने लगते हैं। फिर जो हर्ष या यश मिला था, वह भी थोड़े ही समय स्थिर रहता है। व्यस्तताग्रस्त दूसरे लोग तो उसे कब तक स्मरण रखे रहेंगे। स्वयं अपने को ही अपनी पिछली बातें याद नहीं रहतीं।

इन सब तथ्यों का गम्भीर विवेचन करने वाले तत्त्वदर्शियों ने क्षुद्र महत्त्वाकांक्षाओं को हेय माना है। उनकी उपमा बाल कौतुक से दी है और कहा है कि जीवन को सार्थक बनाने वाले विचारशीलों को इस क्षुद्रता भरी भूल-भुलैया से बचना चाहिए। शक्ति गँवाने और बदले में मिथ्या अहंकार सिर पर लाद लेने में कोई बुद्धिमानी नहीं है। आकांक्षा से शक्ति उत्पन्न होती है और प्रयास में निरत रहने का उत्साह उभरता है। इस तथ्य को प्रगति की प्रारम्भिक स्थिति के अनुरूप मानते हुए भी, यह देखना चाहिए कि क्या इनकी अपेक्षा, ऐसे महत्त्वपूर्ण निर्धारणों का चयन किया जा सकता है, जो आत्म-संतोष के साथ-साथ चिरकाल तक टिकने वाला श्रद्धा भरा लोक सम्मान प्रदान कर सकें ? इस प्रकार का चयन न कर पाने से ही लोग अजगर को खिलौना मानकर उसकी ओर लपकते और लाभ के स्थान पर भारी घाटे में रहते हैं।

उच्चस्तरीय महत्त्वाकांक्षा एक ही हो कि अपने को इस स्तर तक सुविकसित बनाया जाय कि दूसरों का मार्गदर्शन कर सकना संभव हो सके। यही सच्चा नेतृत्व है। अभिनेता स्तर के नेता क्षणिक उथली और सस्ती वाहवाही लूटकर अपना मन बहलाते हैं। इसके लिए जो प्रपंच रचने पड़ते हैं, उसी में अपनी बहुमूल्य क्षमता खप जाती है। यदि उसका सदुपयोग हुआ होता, तो अपना और दूसरों का कल्याण कर सकने का ऐसा सुयोग बन पड़ता, जिसका अनुकरण, अभिनन्दन करते हुए लोग अपने को धन्य मानते रहते।

सेवा का प्रत्यक्ष पक्ष दीन-दुखियों की सेवा करना, पिछड़ों को ऊँचा उठाना, पीड़ितों की व्यथा पूछना, अभावग्रस्तों के लिए साधन जुटाना है। यह सभी कार्य उचित हैं और दया-धर्म की अभिवृद्धि करते हैं। अपने निर्वाह की तरह दुखियारों को भी अपने सुख-साधनों में सहभागी बनाना मानवोचित कर्त्तव्य है। इसका निर्वाह हर सद्ग्रहस्थ को करना चाहिए।

इससे ऊँची दूसरी सेवासाधना है, जिसे धर्म धारणा कहा जाता है। इसका स्वरूप है, अव्यवस्था को व्यवस्था में और अनगढ़ता को सुसंस्कारिता में बदलने वाले मार्गदर्शन हेतु कटिबद्ध होना। यही सच्ची सेवा है। इसी पर वैयक्तिक और सामूहिक प्रगति का आधार बनता है। लोग अभावों से जितने पीड़ित हैं, उसकी अपेक्षा कहीं अधिक इसलिए दुखी हैं कि वे प्रगति और शान्ति का मार्ग ढूँढ़ने और अपनाने का सुयोग प्राप्त न कर सके। इस अभाव की पूर्ति कर सकने वाले ही भौतिक एवं आध्यात्मिक अभ्युदय का राजमार्ग विनिर्मित करते हैं। साधु-ब्राह्मण, पुरोहित और लोक सेवी इसीलिए जन-जन के श्रद्धा भाजन बनते हैं कि उनने अपने जीवन भर, सर्व साधारण को अधिक उत्कर्ष के मार्ग पर चलाने का प्रयत्न किया और उसमें तत्परता बरतने के कारण सफलता भी पायी। ऐसे मार्गदर्शकों को ऋषिकल्प माना जाता है और उनकी गणना भूसुरों में, धरती के देवताओं में होती है।

किसी समय इसी समुदाय की बहुलता थी, फलतः सतयुगी वातावरण बना रहा। स्वल्प साधनों में ही लोग हिल-मिलकर रहते मिल-बाँटकर खाते, स्नेह-सौजन्य बरतते एवं परिस्थितियों को स्वर्गोपम बनाते थे। यह भावना, विचारणा और क्रिया-कलाप का स्तर ऊँचा उठाने की ही परिणति थी कि मनुष्य में देवत्व की झलक-झाँकी का आभास मिलता रहा। आज की विषम परिस्थितियों में ऐसे मार्गदर्शकों की महती आवश्यकता अनुभव की जा रही है। उन्हीं के अभाव में सर्वत्र समस्याओं और विपत्तियों का सामना करना पड़ रहा है। अच्छा होता, मनीषी वर्ग की प्रतिभाएँ अपनी लेखनी, वाणी और आदर्शवादी जीवनचर्या के आधार पर पुरातन ब्राह्मण धर्म का परिपालन करतीं और पिछड़ेपन को सर्वतोमुखी प्रगतिशीलता में परिवर्तित कर सकतीं। इस समूची प्रक्रिया को सुसंस्कारिता का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभिवर्धन कह सकते हैं। धर्म और अध्यात्म का यही वास्तविक क्षेत्र भी है।

इस क्षेत्र में प्रवेश करने वालों को लोभ, लिप्सा और पारिवारिक मोह पर अंकुश रखने की तरह ही लोकेषणा से भी बचना चाहिए। नेता कहलाने के प्रलोभन में, तथाकथित लोकसेवी आपस में बुरी तरह टकराते देखे गये हैं। इससे उस समूचे तंत्र के प्रति अश्रद्धा फैलती है, जिसकी सेवा करने की दुहाई उन लोगों द्वारा दी जाती है। सार्वजनिक संस्थाएँ प्राय: इसी एक चट्टान से टकराकर टूटती और डूबती रही हैं, क्योंकि कितने ही महत्त्वाकांक्षी अपनी वरिष्ठता के लिए, अन्य साथियों को नीचे गिराने के लिए मल्लयुद्ध करते रहे। इस खतरे को ध्यान में रखते हुए लोकसेवा क्षेत्र में प्रवेश करने से पूर्व ही अपने आपको अति विनम्र बना लेना चाहिए। बड़प्पन का श्रम दूसरे साथियों को देने और स्वयं को अंकिचन स्वयं सेवक मानते हुए परम पुरुषार्थ करने में निरत रहने की मन:स्थिति परिपक्व कर लेनी चाहिए। ऐसे लोग किसी भी पंक्ति में गिने जाते रहें, पर वे सबके मन:मस्तिष्क में राजहंस की तरह सम्मान पाते रहेंगे।

लौकिक क्षेत्र में व्यवस्थापक का पद सर्वोच्च है। अपना काम तो किसी प्रकार सभी निपटाते हैं, पर महत्त्वपूर्ण वे हैं, जो सम्बद्ध तंत्र के हर पक्ष पर ध्यान रखते और उसकी व्यवस्था बनाते हैं। सरकारी काम-काज में जनरल मैनेजर का पद सर्वोपरि होता है अँग्रेजी राज में भारत का सर्वोच्च अधिकारी गवर्नर जनरल कहा जाता था। गवर्नर का अर्थ है, ''व्यवस्थापक'' जो व्यवस्थित रहता और व्यवस्था बनाना जानता है। समझना चाहिए कि उसकी गरिमा एवं उपयोगिता ऊँचे दर्जे की है। कारखानों को, व्यवसायों को, समुदायों को, योजनाओं को ऐसे ही लोग सफल बनाते हैं।

जिन्हें छोटे या बड़े परिवार की सुव्यवस्था बनाकर सफलता के किनारे पर पहुँचने की महत्त्वाकांक्षा हो, उन्हें सर्वप्रथम अपने आपको व्यवस्थित करना चाहिए। वाणी की मधुरता इस संदर्भ में प्रथम गुण है। मीठा बोलने वाले विरोधी, प्रतिस्पर्धी का भी मन जीत लेते हैं, जबकि कटुवादी, कर्कश प्रकृति के अशिष्ट व्यक्ति बिना कुछ हानि पहुँचाए, सम्पर्क में आने वालों के मन में अश्रद्धा उत्पन्न करते रहते हैं। उनके मित्र कम और शत्रु अधिक होते हैं। अधिकतर तो लोग उनसे बचते ही रहते हैं।

मधुर बोलने का अर्थ चापलूसी नहीं है और न यह है कि ऐसा कुछ कहा जाय, जो वास्तविक नहीं है। जो सहयोग अपने से न बन पड़े, उसके लिए झूठे आश्वासन देते समय तो अच्छा लगता है, पर पीछे जब उपेक्षा बरतती देखी जाती है, तो फिर मिथ्याचारी होने का लांछन लगता है। अस्तु, मधुरता के साथ स्पष्टवादिता भी जुड़ी रहनी चाहिए। यह शिष्ट भाषा में शालीनता का निर्वाह करते हुए, हँसते-मुस्कराते अपनी विवशता स्पष्ट करते हुए इस प्रकार कहा जा सकता है कि दूसरा बुरा माने बिना वस्तुस्थिति को समझ ले। वाणी की सुसंस्कारिता का स्वरूप इसी प्रकार बनता है।

अपने समय का नियोजन व्यवस्थापक की दूसरी विशेषता है। जो समय का विभाजन ठीक तरह नहीं कर पाता, अस्त-व्यस्तता के बीच अपनी दिनचर्या गुजारता है, उसके लिए दूसरे साथियों को वैसा उपदेश देने पर उचित प्रभाव नहीं पड़ता। अनुशासन के अनेक पक्ष हैं। उन्हें नियमितता भी कह सकते हैं और लगन या जिम्मेदारी का निर्वाह भी। इसी प्रकार स्वयं व्यवस्थित रहने वाले के साथी भी, संचालक की प्रकृति, मनोरथ, मर्जी, अपेक्षा सभी समझ जाते हैं और तदनुरूप आचरण स्वेच्छापूर्वक करने लगते हैं।

उचित रीति से काम न होना या व्यवहार में गैर जिम्मेदारी बरते जाने पर अप्रसन्नता होना स्वाभाविक है। पर उसे इस प्रकार व्यक्त नहीं करना चाहिए कि गलती करने वाला शरमाकर उसे सुधारने की अपेक्षा, कटुता को अपनी प्रतिष्ठा का प्रश्न बना ले और अधिक उद्दण्डता पर उतरे। इसमें तो दूनी हानि है। अच्छा हो उसके पिछले अच्छे कार्यों की कुछ चर्चा करते हुए इस प्रकार की भूल किये जाने पर आश्चर्य भर प्रकट किया जाय और उसे शरमाने, सुधरने का अवसर दिया जाय। यह नीति ऐसी है, जिससे वर्तमान गलती की क्षतिपूर्ति करने का अवसर मिल जाता है।

अति घनिष्ठता और अति शत्रुता के दोनों ही अतिवाद किसी व्यवस्थापक के स्वभाव में नहीं होने चाहिए। मध्यवर्ती व्यवहार से ही वास्तविकता निभती है। अवांछनीय दबाव डालने की स्थिति तभी आती है, जब मध्यवर्ती सौजन्य से हटकर व्यवहार में अतिवाद का छिछोरापन भर लिया जाय। इस भूल को न करने पर अनेकों असमंजस भरे क्षण आने से सहज बचा जा सकता है। स्वयं और साथियों के तनाव मुक्त रहने, रखने की आदत बनाना ही बड़प्पन है। तनिक-सी प्रतिकूलता में खिन्न-उद्विग्न हो जाने और तनिक सी सफलता में शेखी बघारने लगने की आदतें बहुत बुरी हैं। गम्भीर लोग आमतौर से हर स्थिति में संतुलन बनाए रखते हैं। मुस्कराते रहने की मुद्रा बनाए रहते हैं। ऐसे संतुलित मन:स्थिति में ही प्रतिकूलता से निपटने और अनुकूलता लाने के लिए नया प्रयत्न करने की सूझ उभरती है। आवेशग्रस्त तो आपा खो बैठने पर दुहरी मुसीबत खड़ी कर लेते हैं।

कमजोरियों और खराबियों को सहन न करने की नीति अपनायी जानी चाहिए। उनके बारे में अपनी सहमति वाली प्रतिक्रिया व्यक्त करने में चूकना नहीं चाहिए। गलतियों के प्रति आरम्भिक उपेक्षा बरतने पर, उन्हें दूसरे लोग अपना अधिकार मानने लगते हैं और अभ्यस्त हो जाने पर उन्हें छोड़ने में अपने साथ अन्याय हुआ समझने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लगते हैं। ऐसे उदाहरण भी देने लगते हैं कि अमुक की गलतियाँ सहन की गईं और हमें धमकाया गया। ऐसे अवसर नहीं आने पायें, इसलिये उत्साहीजनों की प्रशंसा करने और लापरवाही बरतने वालों को टोकने का क्रम जारी रहना चाहिए। इस सुधार-परिष्कार का क्रम समय के अनुरूप बनाए रखना हर व्यवस्थापक के लिए आवश्यक होता है। यों अपमान, सौहार्द्र, सौजन्य हर किसी के साथ बरते जाने का उपक्रम रहना चाहिए। इससे पिछली कहा-सुनी को लोग भुला देते हैं और सद्भावना की छाप बनाए रहने पर वफादार बने रहते हैं।

मनुष्यों के बीच खाई प्रायः गलतफहमियों के कारण खुदती है। वास्तविक कारण कम और काल्पनिक भ्रम अधिक गड़बड़ी फैलाते हैं। इसलिए होना यह चाहिए कि जहाँ भी जिनके बीच भी जब गलतफहमी पनप रही हो, तभी उसे आमने-सामने या बिचौलियों की मारफत निरस्त करने का प्रयत्न करना चाहिए। गलतफहमियाँ पैदा न होने पायें, न पनपें, न बढ़ें, इसके लिये हर व्यवस्था बुद्धि को, सम्पर्क के लोगों को वस्तुस्थिति से अवगत कराते रहने का प्रयत्न करना चाहिए। अधिक जिम्मेदारी और अधिक वफादारी रखे रहने पर व्यक्ति किस प्रकार आगे बढ़ता और नफे में रहता है, यह तथ्य यदि परिवार के लोगों को हृदयंगम कराया जाता है, तो वे भटकाने वालों के चंगुल में फँसने से बचे रहते हैं।

प्रतिकूलताएँ आती हैं और प्रतिकूल व्यवहार लोग करते ही रहते हैं। इतने पर भी उनसे अपने चिन्तन को प्रभावित नहीं होने देना चाहिए। अपना चिन्तन सदा सकारात्मक रहना चाहिए। सोचना यही चाहिए कि बिगड़ी को बनाया कैसे जाय ? क्षति की पूर्ति कैसे हो ? खाई किस प्रकार पटे ? खोया सद्भाव कैसे वापिस लौटे ? इसके लिये धैर्य रखना और समय पर उचित उपक्रम अपनाया जाना चाहिए। इसका अर्थ यह नहीं कि अनीति के आगे झुका और तुष्टिकरण की नीति अपनाकर अवांछनीय तत्त्वों का हौसला बढ़ाया जाय। वरन् यह है कि विद्वेष के कारण अपना चिन्तन नकारात्मक-निषेधात्मक एवं आक्रामक न होने लगे। ईर्ष्या, प्रतिशोध, प्रत्याकरण की नीति अपनाने में बहादुरी तो अवश्य प्रतीत होती है, पर उसके कारण एक ऐसा कुचक्र चल पड़ता है, जिसमें शक्ति का अपव्यय ही होता है और जो किया जा सकता था, वह न बन पड़ने के कारण अन्ततः विजयी होने पर भी पराजित होने जैसा प्रतिफल सामने आता है। व्यवस्थापक को पहले अपनी व्यवस्था बनानी चाहिए, ताकि दूसरे व्यक्तियों तथा कार्यों को भी ठीक तरह सम्हाल सकना संभव हो सके। यही व्यवस्था बुद्धि की सच्ची परख है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्रबन्ध-व्यवस्था—एक विभूति, एक कौशल

इस अभाव की पूर्ति करनी ही होगी

घड़ी जैसी अनेक पुर्जों वाली मशीन तभी ठीक प्रकार बन और चल पाई है, जब उनके सभी घटकों का निर्माण ठीक तरह किया गया हो, उनकी गतिविधियों के बीच संतुलन बिठाया गया हो। इस व्यवस्था के बिना उस निर्माण में लगा हुआ धन और श्रम व्यर्थ ही चला जाता है। घड़ी निकम्मी पड़ी रहती है। यही बात अन्य छोटी-बड़ी मशीनों पर पूरी तरह लागू होती है। उसके निर्माता तभी अच्छा लाभ और यश कमा पाते हैं, जब उनके पुर्जे संतुलित रीति से बने और फिट किए गये हों।

स्रष्टा की महिमा इसीलिए भूरि-भूरि प्रशंसा के योग्य है कि उसमें व्यवस्था-क्रम का आश्चर्यजनक सुनियोजन हुआ है। उसमें कमी या गड़बड़ी रहती तो अनियंत्रित, स्वेच्छाचारी ग्रह-गोलक आपस में टकराते और टूट-फूटकर नष्ट होते रहते। प्राणियों और वनस्पतियों के सम्बन्ध में भी यही बात है। वे इसीलिए एक व्यवस्था के अनुरूप उगते, बढ़ते और परिवर्धित होते रहते हैं। यहाँ तक कि खुली आँखों से न दीख पड़ने वाले अणु-परमाणु तक अपने छोटे कलेवर में विशाल सौर मण्डल जैसी गतिविधियों के अनुकरण का उदाहरण प्रस्तुत करते रहते हैं। यदि इस विशाल ब्रह्माण्ड व्यवस्था में कहीं भी असन्तुलन रहा होता, तो यह समूचा पसारा कूड़े-करकट की तरह दीख पड़ता और उस व्यवस्था के बीच टूट-फूट का परिचय मिलता रहता। किसी भी वस्तु को अपना काम कर सकना असम्भव हो जाता। सृष्टा की अनेक महिमाओं में उसके सुनियोजन का कौशल नितान्त प्रत्यक्ष और सर्वत्र आश्चर्य भरा दीख पड़ता है। सृष्टि का सौन्दर्य और उपयोग इसी व्यवस्था कौशल के आधार पर गतिशील हो रहा है।

शरीरों की संरचना और मन:संस्थान की बनावट में भी चकित करने वाला ताल-मेल देखा जाता है। जहाँ भी गड़बड़ी खड़ी हुई, वहाँ विग्रह-विद्रोह खड़े हो जाते हैं और आधि-व्याधियों का दौर चल पड़ता है। परिवार तंत्र जीवित प्राणियों का एक छोटा-सा तंत्र है। यदि उसके सभी नियमोपनियम ठीक तरह से पलते रहें तो समझना चाहिए कि अपने छोटे घर-घरोंदों के आँगन में स्वर्ग जैसा आनन्द मचलता-इठलाता देखा जा सकेगा। यदि पारस्परिक व्यवहार और क्रम-व्यवस्था में अनियमितता घुस पड़े तो समझना चाहिए कि यहाँ देवासुर संग्राम का उदय हुआ। एक-दूसरे की टाँग खींचने का सिलसिला शुरू हुआ और वह समूचा परिवार नरक रूप में परिणत हुआ। यहाँ परस्पर विरोधी परिस्थितियों के उत्पन्न होने का एकमात्र कारण यह है कि व्यवस्था बुद्धि अपनी जगह पर से हट गई है और मनमानी उच्छृंखलता ने उसका स्थान ग्रहण कर लिया है।

व्यवसाय पूरी तरह व्यवस्था बुद्धि की अपेक्षा करते हैं। उसमें गड़बड़ी रहे तो पड़ौसी जिस काम में अच्छा-खासा लाभ उठाते हैं, वहाँ लापरवाही और गैर जिम्मेदारी के बीच चलने वाले व्यवसाय घाटा उठाते और अन्तत: दिवालिया बनते देखे गये हैं। यही बात प्रगति के हर क्षेत्र में लागू होती है। व्यवस्था की पल-पल पर क्षण-क्षण पर आवश्यकता पड़ती है। इसमें जहाँ जितनी कमी या विद्रूपता पाई जायेगी, वहाँ उतना ही असन्तोष छाया मिलेगा। गड़बड़ियों का दोषारोपण एक-दूसरे पर मढ़ रहा होगा। कुल मिलाकर वह तंत्र लड़खड़ा जाएगा और उपहास, लांछन और भर्त्सना का भाजन बनेगा

हर छोटे-बड़े काम को करने से पहले उसकी सही योजना बनानी पड़ती है और सफलतापूर्वक कार्यान्वित करनी पड़ती है। यदि ऐसा न हो तो समझना चाहिए कि घर-आँगन का साफ-सुथरा रखना, ठीक तरह रसोई बनाना, खाना, नियत आजीविका में खर्च चला सकना तक कठिन पड़ जायेगा। ऐसा ही प्रमाद बरतने पर अच्छी आमदनी वाले भी तंगी सहते और कर्जदार रहते हैं।

योजनाक्रम को योजनाबद्ध रीति से चला सकना अपने ढंग का अति महत्त्वपूर्ण कला-कौशल है। जिन्हें यह आता है, वे गई-गुजरी परिस्थितियों एवं कठिनाइयों के बीच रहते हुए भी प्रगति का मार्ग ढूँढ़ निकालते हैं और उस पर समझदारी के साथ चलते हुए उन्नति के उस शिखर तक जा पहुँचते हैं, जिसमें सफलता, प्रसन्नता और प्रतिष्ठा का भरा-पूरा वातावरण रहता है।

बुद्धिमत्ता की जाँच-परख के अनेकों आधार हैं। उसके आधार पर अपने-अपने काम में सभी लोग सफलता पाते और लाभ उठाते हैं। किन्तु उन सभी सन्दर्भों में सबसे प्रमुख गिनी जाने योग्य विभूति सुव्यवस्था की है, जो इस सम्बन्ध में कुशल हैं, समझना चाहिए कि उसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिए पग-पग पर श्रेय प्राप्त करते चलना कुछ कठिन नहीं रह गया। इसके विपरीत जो जितना अस्त-व्यस्त, गैर जिम्मेदार और लापरवाह है, उसे उतना ही निकम्मा समझा जायेगा। भले ही उसके पास सम्पदा, शिक्षा, सुन्दरता जैसी विभूतियाँ कितनी ही क्यों न हों ? अकेली सुव्यवस्था ही है, जो अनेकों गुत्थियों को सुलझाती है और अवरोधों के भँवरों से नाव को बाहर निकाल लेती है।

विकास प्रयोजनों के लिए पंचवर्षीय योजनाएँ बनती हैं। काम-काज चलाने के लिए बजट बनते हैं। भवन बनाने के पूर्व आर्चीटेक्ट के उस नक्शे की आवश्यकता पड़ती है, जिसके अनुसार साधन जुटाने, पूँजी की व्यवस्था करने आदि की आवश्यकता पड़ती है। यदि इसकी उपेक्षा की जाय, तो जो बन पड़ेगा, वह कुरूप तो होगा ही, साथ ही ऐसी त्रुटियाँ भी बनी रहेंगी, जो निर्माणकर्त्ता के लिए सदा सिर दर्द बनी रहें।

अधिकारी गणों में सभी की उपयोगिता और प्रतिष्ठा है, किन्तु यदि उन सब में सर्वोपरि दायित्व का पद देखा जाय तो वह व्यवस्थापक का ही मिलेगा। सरकारी तंत्र में इसे मैनेजर, कन्ट्रोलर, सुपरिन्टेण्डेण्ट आदि नामों से जाना जाता है क्योंकि उसी की समझदारी और नासमझी के आधार पर काम बनते-बिगड़ते रहते हैं। जो मार्गदर्शन कर सकता है, जिसमें किसी कार्य के साथ जुड़े हुए अनेकानेक प्रश्नों को समय रहते समझ लेने और तदनुरूप समाधान निकालने की क्षमता है, समझना चाहिए कि वही अपने उपक्रम का मेरुदण्ड है। ऐसे व्यक्ति जहाँ भी दायित्व सम्भालते हैं, वहीं सफलता के चार-चाँद लगा देते हैं। साथियों की तुलना में दस कदम आगे ही रहते हैं। ऐसे ही लोगों को सेना का सेनापति और कारोबार का मैनेजर बनाया जाता है। यदि उनकी समझदारी अनुभवों पर सही आकलन कर सकने की क्षमता पर आधारित रही तो समझना चाहिए कि सफलता की आधी मंजिल पार हो गयी। महत्त्वपूर्ण काम कर गुजरने वालों में से प्रत्येक को दूरदर्शिता, व्यवहार कुशलता और प्रबन्ध शक्ति का परिचय देना पड़ा है। इसके बिना भटकने, खीजने, घाटा उठाने और अपयश बटोरने के अतिरिक्त और कुछ हाथ नहीं लगता। यदि किसी तंत्र के सुसंचालन का सौभाग्य उपलब्ध नहीं हुआ, वह किसी प्रकार लड़खड़ाते, गिरते-पड़ते चलता तो रहेगा, पर दबाव बढ़ जाने पर जो हाथ में है, वह भी गँवा बैठेगा और सर्वसाधारण की दृष्टि में अयोग्य, अनाड़ी या उपहासास्पद ही बनकर रहेगा।

संस्थाएँ इसी आधार पर ही चलती हैं। कुशल संयोजक उन्हें उन्नति के शिखर पर पहुँचा देते हैं। अयोग्य के उस स्थान पर जा विराजने से पतन का सिलसिला चल पड़ता है और किये-कराये को चौपट करके रख देता है। सद्गुणों में यदि प्रमुखता देने योग्य किसी को गिना जाय तो प्रथम स्थान व्यवस्था बुद्धि को ही देना पड़ेगा। वह विभिन्न प्रकृति के लोगों को एक धागे में बाँधकर रखने में सफल होती है। वहीं संकट की पूर्व सूचना देती है और साथ ही यह काम भी उसी का है कि समय रहते ऐसे उपाय खोज लें, जिसमें आशंकाएँ निरस्त होती चलें और सुसंभावना समय-समय पर सामने आती रहें। सूत्र-संचालन के कार्य व्यवस्था बुद्धि वालों के हाथ जाकर ही श्रेय प्राप्त करते और दूसरों के लिए उदाहरण बनते हैं।

प्रश्न यह उठता है कि क्या हर किसी के लिए इस महान् विभूति का सम्पादन कर सकना संभव है ? इसके उत्तर में एक ही बात कही जा सकती है, मानसिक संरचना की दृष्टि से प्रायः सभी मनुष्य समान स्थिति के होते हैं। जन्मजात रूप से विशिष्ट प्रतिभा का चमत्कार जब कभी अपवाद रूप में देखा जाता है। प्रगतिशीलता किसी भी स्तर की क्यों न हो, वह अपने ही लगन भरे प्रयत्नों से प्राप्त करनी पड़ती है। जन्म से कोई डाक्टर, वकील, प्रोफेसर, इंजीनियर आदि की विशेषता साथ लिए पैदा नहीं होता। इन्हें अर्जित करने के लिए सिखाने वाले विद्यालयों में भर्ती होना पड़ता और व्यावहारिक अनुभव सिखाने वाले के मार्गदर्शन में तब तक अनुभव अर्जित करना पड़ता है, जब तक कि उस विषय में कुशलता उपलब्ध न कर ली जाय। इसमें सिखाने वालों का जितना श्रेय है, उससे अधिक सीखने वाले की दिलचस्पी, लगन और मेहनत का है। यदि ऐसा न होता तो एक ही विद्यालय में, एक ही शिक्षण क्रम के अन्तर्गत रहने वाले छात्रों में से कुछ उत्तीर्ण और कुछ अनुत्तीर्ण क्यों हो जाते ? प्रतिस्पर्द्धाओं में प्रायः वे ही उत्तीर्ण होते हैं, जो निर्धारित विषय की परिपूर्ण तैयारी में जुटे रहते हैं। नकल-टीप के आधार पर, धन, रिश्वत आदि के सहारे जो किसी प्रकार उत्तीर्ण भी हो जाते हैं, उन्हें तब भारी कठिनाई का सामना करना पड़ता है, जब सौंपे हुए कार्य को ठीक प्रकार से नहीं कर पाते और अक्षमता के कारण पदोन्नति की दिशा में आगे बढ़ ही नहीं पाते।

मस्तिष्कीय संरचना ऐसी है, जिसे काम देने और उत्साह भरे साहस के आधार पर विकसित होने का अवसर दिया जाय तो वह आशातीत गति से बढ़ता है, पर यदि उसका उपयोग न किया जाय तो सीलन में पड़े रहने वाले चाकू की तरह उसकी धार भोथरी हो जाती है और जंग चढ़कर निकम्मे स्तर का बना देती है। इच्छाशक्ति की महत्ता गाते-गाते मनोवैज्ञानिक थकते नहीं। संकल्प को प्रगति का मूलभूत आधार माना गया है। दिलचस्पी लेने वाले सम्पर्क परिकर से ही इतना कुछ सीख लेते हैं, जितना कि उपेक्षा वृत्ति वाले हजार कोशिश करने पर भी सीख नहीं पाते।

संसार में असंख्यों व्यक्ति ऐसे हुए हैं, जिन्हें किसी प्रकार सांगोपांग प्रशिक्षण प्राप्त करने का अवसर नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिला। सहायता करने वालों का भी कोई संयोग न बैठ सका, पर अपनी प्रबल उत्कण्ठा के बल पर उपलब्ध साधनों का टूटा-फूटा आश्रय लेकर ही आगे बढ़ते रहे। उत्कण्ठा का चुम्बकत्व अभीष्ट स्तर का आकर्षण बनाये रखता है और जहाँ-जहाँ से अपनी बिरादरी के बिखरे कणों को समेट-बटोरकर अपने ज्ञान भण्डार में भर लेता है। वैज्ञानिक आविष्कारकों में से कितने ही ऐसे हुए हैं जिन्हें अपनी कल्पना, दिलचस्पी और मेहनत के आधार पर अनेकों प्रयोगों का त्याग करना पड़ा और अनेकों बार असफलता प्राप्त करने के उपरान्त भी निराश न होने तथा सतत प्रयास करते-करते शानदार सफलता मिली। जेल के एक कैदी से लेखक को यह जानने का अवसर मिला कि उसने बचे हुए समय का उपयोग लोहे के तसले को सलेट बनाकर कंकड़ों से पेन्सिल का काम लेते हुए साथियों में से जो कुछ जानते थे, उनसे पूछ-पूछकर अँग्रेजी पढ़ना-लिखना सीख लिया। एक पुराना अखबार कहीं से हाथ लग जाने पर उसी से पाठ्य पुस्तक का प्रयोजन पूरा कर लिया। विदेशों में दिन भर मजदूरी करने वाले श्रमिकों में से कितने ही ऐसे होते हैं जो रात्रि पाठशालाओं में दो घण्टे समय लगाते हुए धीरे-धीरे इच्छित भाषा के विद्वान, पदवीधारी बन जाते हैं। कोई प्रयत्नशील प्रकृति का व्यक्ति यह शिकायत करते नहीं सुना गया कि उसे इसलिए पिछड़ना पड़ा कि परिस्थितियाँ अनुकूल नहीं थीं। उदारचेत्ताओं ने आगे बढ़कर उस पर अनुदान नहीं बरसाये। स्मरण रखने योग्य तथ्य यह है कि मनुष्य को परावलम्बी स्तर का प्रकृति ने नहीं बनाया है। उसके पास एक ऐसा व्यक्तित्व जन्मजात रूप से विद्यमान है जो यदि चाहे तो अपने संकल्प, साहस और श्रम के बल पर ऐसे काम कर सकता है, जिनके सम्बन्ध में साधन सम्पन्नों को भी आश्चर्यचकित होकर रह जाना पड़ता है। वर्ल्ड रिकार्ड की गिनीज बुक में ऐसे अनेकों उदाहरण अंकित हैं, जिनने सर्वथा विपरीत परिस्थितियों में से भी अपने सीमित साधनों के सहारे चकित कर देने वाली सफलताएँ अर्जित कर दिखाईं। छोटे-से बड़े बनने वालों में प्रायः प्रत्येक में अपनी प्रचण्ड इच्छाशक्ति के सहारे आगे बढ़ने का साहस उभरा है। साहस ने शक्ति दी है और उसे सुनियोजित करके सामान्य से असामान्य बनने का अवसर मिला है।

प्रबन्ध कर सकने की क्षमता अर्जित कर लेना भी संभावित प्रगति प्रक्रिया से भिन्न नहीं है। सतर्कतापूर्वक ध्यान देने, बारीकी से साधनों को समझने और अवसर मिलते ही अभ्यास करने लगने से कितने ही व्यक्ति उन कार्यों को सफलतापूर्वक करने लगे, जिनके लिए वे आरम्भ से नौकरी भर करते थे और परिश्रम के बदले सीमित पैसे प्राप्त करते थे। साथी जन्म भर मजदूरी ही करते रहे, पर जिन्होंने बारीकी से दृष्टि गढ़ाई और सीखने में इच्छाशक्ति नियोजित की उनकी क्षमता सहज ही बढ़ती चली गई और एक दिन ऐसा आया कि वे उस रास्ते चलते हुए सीखे हुए कार्य को कुशलतापूर्वक सम्पन्न बना गये। 'मजदूर स्तर के व्यक्ति कारखानेदार बने और फलता-फूलता व्यवसाय चला सकने में समर्थ हुए।' पिछड़ेपन को अपने साथ आजीवन लादे रहने वालों में से अधिकांश ऐसे होते हैं, जो यथास्थिति से संतुष्ट रहते और आगे बढ़ने की उमंग को विकसित ही नहीं होने देते। प्रबन्ध शक्ति का विकास भी इसका अपवाद नहीं है। कोई यदि उस सन्दर्भ में दिलचस्पी ही न ले, उत्सुकता ही न प्रकट करे, चिन्तन-मनन के तंत्र को प्रसुप्त स्थिति में ही पड़ा रहने दें, आस-पास की परिस्थितियों पर नजर ही न डालें और उनसे कुछ अनुभव संचित ही न करे, तो फिर मस्तिष्कीय क्षमता अपने आप कहाँ विकसित होने वाली है।

मनुष्यों में से अनेकों ऐसे होते हैं, जो देखने में चलते-फिरते, काम करते और बोलते-चालते दीखते हैं। उन्हें साधारणतया जाग्रत ही कहा जायेगा, पर वस्तुतः उनकी सूक्ष्म दृष्टि सोई हुई रहती है। वे घटनाओं को देखते तो हैं, पर उनके साथ जुड़े हुए कारणों को समझने पर ध्यान नहीं देते। ऐसे लोग जिस-तिस प्रकार जिन्दगी के दिन ही पूरे कर पाते हैं। व्यक्तित्व का विकास न होने से, सूक्ष्म दृष्टि में उभार न आने से वे नर-वानरों की तरह पेट और प्रजनन के कोल्हू में ही पिलते रहते हैं। प्रगति उन्हें देखकर मुँह मोड़ लेती है।

इर्द-गिर्द के वातावरण का भी जन-साधारण पर असाधारण प्रभाव पड़ता है। अनुकरण प्रिय प्रवृत्ति होने के कारण मनुष्य वही सीखता है, जो उनके समीपवर्ती वातावरण में होता देखा जाता है। बच्चे परिवार में बोली जाने वाली भाषा को अनायास ही सीख लेते और आहार-विहार की, आचार-विचार की शैली अपना लेते हैं, जो उनके निकटवर्ती लोगों के द्वारा प्रयुक्त की जाती है। लम्बे समय से हम लोग सामन्तशाही के उत्पीड़न में रहते-रहते न केवल आर्थिक-सामाजिक त्रास सहते रहे हैं वरन् चिन्तन और चरित्र की उत्कृष्टता भी गवाँ बैठे हैं और फूहड़पन की रीति-नीति अपनाए रहने के अभ्यस्त हो गये हैं। ऐसा कुछ प्रकाश पुंज समीप में उगता नहीं जो शालीनता और जागरूकता की समन्वित शिक्षा देकर प्रगतिशीलता अपनाने के लिए प्रेरित कर सके। ऐसी दशा मे ऐसी पुस्तकों का सहारा लेना ही अनिवार्य हो जाता है, जो अधिक सभ्य, सुसंस्कृत बनाने में अधिक कर्त्तव्य परायण और सुव्यवस्थित बनाने का मार्गदर्शन कर सकें। ऐसे घटनाक्रमों, व्यक्तियों एवं प्रगतिशीलों को मस्तिष्क में प्रवेश करा सकें जो अनुकरणीय हों। ऊँचा उठने, आगे बढ़ने के उदाहरण प्रस्तुत कर सकें। जो वस्तु प्रत्यक्ष सामने उपस्थित नहीं होती, उसकी जानकारी कराने के लिए चित्रों, मॉडलों का अवलम्बन करना पड़ता है। सभी आवश्यक वस्तुएँ लाईं और प्रत्यक्ष दिखाई नहीं जा सकतीं। उस अभाव की पूर्ति के लिए साहित्य, संगीत, चित्रकला, प्रतिमा आदि का आश्रय लेना पड़ता है। इन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिनों जबकि निकटवर्ती लोगों में सुविकसित अनुकरणीय व्यक्तित्वों का अभाव है, तो उसकी पूर्ति के लिए आदर्शवादियों द्वारा अपनाई गई रीति-नीति, विचार शैली, कार्य पद्धति को विस्तारपूर्वक समझाने वाले साहित्य का आश्रय लिए बिना और कोई चारा नहीं रह जाता। सीखने और सिखाने के लिए इसी शैली का प्रयोग चिरकाल से होता आया है। अब भी उसी को खोजने, बनाने एवं प्रयोग में लाने की आवश्यकता है।

व्यावहारिक जीवन के उतार-चढ़ावों और प्रगति, प्रयत्नों के सम्बन्ध में वस्तुत: हमारे स्कूली पाठ्यक्रम में सुविस्तृत समावेश होना चाहिए था, क्योंकि राष्ट्र की वास्तविक समर्थता और सम्पन्नता उसके सुविकसित नागरिकों के गुण, कर्म, स्वभाव पर ही निर्भर है। यदि उसमें कमी रह गई तो समझना चाहिए कि पैसा बढ़ जाने पर भी सर्वतोमुखी प्रगति में कमी ही रह गई। यदि पाठ्य पुस्तकों में उसकी कमी है तो भी उस प्रसंग को अनदेखा नहीं किया जा सकता। बालकों से लेकर बड़ों तक को एक ही शिक्षण की प्रमुखता से मिलने की व्यवस्था की जानी चाहिए, जिससे वे निजी जीवन में सच्चे अर्थों में सुयोग्य-समुन्नत बन सकें और सामूहिक जीवन के हर पक्ष को सुव्यवस्थित बनाने में अपने समीपवर्ती क्षेत्र में भाव भरी भूमिका निभा सकें।

इस प्रयोजन के लिए लोक शिक्षण की जो विधाएँ जहाँ उपलब्ध हों, वहाँ उनका प्रयोग करना चाहिए। लोगों को एकत्रित करने के लिए ऐसे आयोजन किए जा सकते हैं जो चलती-फिरती व्यक्तित्व विकास की आवश्यकता पूरी करते रह सकें। कुछ आयोजन परम्परागत रूप से भी सम्पन्न होते रहते हैं, जिनमें जनसमुदाय अपनी मान्यताओं के अनुरूप स्वत: ही एक स्थान विशेष पर अनायास ही पूर्व प्रचलन के अनुसार एकत्रित होता रहता है। ऐसे अवसरों को चूका नहीं जाना चाहिए। उनमें मात्र मनोरंजन या परम्परागत चिह्न पूजा ही नहीं चलती रहनी चाहिए वरन् व्यक्तित्व विकास की अति महत्त्वपूर्ण आवश्यकता को पूरा कर सकने वाले लोक शिक्षण को जोड़ने के लिए नये सिरे से नये प्रयत्न करने चाहिए।

अपने को इंजन स्तर का बनाया जाय

रेलगाड़ी में अधिक महत्त्व इंजन का होता है। उसे अति सावधानी के साथ कुशल निर्माताओं, समुन्नत प्रतिभाओं द्वारा बनाया जाता है। कारण कि पूरी रेलगाड़ी का वजन खींचने और अभीष्ट गति से घसीटते ले चलने की जिम्मेदारी उसी की होती है। इंजन गड़बड़ाने लगे तो समझना चाहिए कि रेलगाड़ी का नियत लक्ष्य तथा नियत समय में पहुँच सकना कठिन पड़ेगा। इसके विपरीत कमजोर डिब्बों को भी वलिष्ठ इंजन अपने बलबूते खींचता चला जाता है। ठीक यही उदाहरण प्राय: सभी सामूहिक क्रिया-कलापों पर लागू होता है।

जीवन का थोड़ा-सा अंश ही ऐसा होता है, जो नितान्त एकाकीपन के रहते हुए भी गुजारा जाता है। ऐसे समय नित्य कर्म, शयन, विश्राम जैसे ही होते हैं, पर उनकी गणना महत्त्वपूर्ण कामों में नहीं होती। औसत व्यक्ति को अपना अधिकांश जीवन अधिक मिल-जुलकर किये जाने वाले कार्यों का भागीदार रहते हुए ही व्यतीत करना पड़ता है। इसमें यों सभी घटकों को अपने-अपने जिम्मे के कार्य सही रीति से करने की आवश्यकता पड़ती है। फिर भी यह आवश्यकता तो बनी ही रहती है कि सबका समन्वय करने, तालमेल बिठाने का कार्य कोई रेल के इंजन जैसी क्षमता सम्पन्न करती रहे। उसकी योग्यताएँ, निर्धारणाएँ यदि ठीक तरह चलती रहें तो ही किसी सामूहिक कार्य के सुनियोजित रूप में सम्पन्न होने की आशा करनी चाहिए। अनुभवहीन, अविकसित मानस वाला संचालक तो अपने साथी-सहयोगियों के श्रम को भी अस्त-व्यस्त कर देता है। इसलिए लोक नेतृत्व करने की क्षमता को अन्य बड़े महत्त्वपूर्ण कार्यों में सम्मिलित किया गया है। डॉक्टर, इंजीनियर, आर्चीटिक्ट, चार्टर्ड एकाउन्टेंट आदि का लम्बा शिक्षण काल इस आधार पर बनता है कि वे अपने दायित्वों के प्रति अधिक जागरूक, अधिक प्रवीण, परिष्कृत सिद्ध हो सकें। प्रबंधन का कार्य भी इससे कम महत्त्व का नहीं है। वह साधारण श्रमिकों की तरह का ढर्रे का काम भारवाही पशुओं की तरह नहीं निपटता, वरन् सम्बन्धित परिकर के हर छोटे-बड़े विभाग पर पैनी दृष्टि रखता है और जहाँ कहीं गड़बड़ी की आशंका लगती है, वहाँ समय के पूर्व ही सचेत होकर समाधान निकालता और दुर्घटना घटित होने से बचा लेता है।

गड़बड़ियों को न होने देने, होने पर उसे फुर्ती से सँभाल लेने का कौशल संचालक द्वारा प्रयुक्त होने की आशा की जाती है। इस प्रकार सूझबूझ न होने पर किसी को कुशल प्रबन्धन का श्रेय नहीं मिल सकता। भले ही वह शिक्षा की दृष्टि से कितनी ही बड़ी डिग्री क्यों न हासिल किये हुए हो।

व्यवस्था में एक और विशेषता भी संचित करनी चाहिए कि वर्तमान की गतिविधियाँ, भविष्य को उज्ज्वल बनाने की दृष्टि में सही रीति-नीति अपनाये हुए हैं या नहीं। ध्यान आज का ही नहीं अगले कल का भी रखना पड़ता है। बड़े व्यवसायों और कारखानों के मैनेजर यह ध्यान रखते हैं कि वर्तमान के विनिर्मित निर्माण की कल खपत कहाँ और कैसे होगी ? कल जिस सामग्री की आवश्यकता पड़ेगी, उसका संचय समय रहते कर लिया गया है या नहीं। पूँजीवादी रुकते नहीं रहे हैं। यदि ऐसी कुछ आशंका हो तो उसका विकल्प पहले से ही तैयार रखना पड़ता है जिसमें इस प्रकार की सुविस्तृत सूझबूझ न हो वह व्यवस्था के पद को तो सार्थक बना ही नहीं सकता। लाभ उठाना और घाटा दे बैठना तो कई बार परिस्थितिवश ही बन पड़ता है। सम्पन्न तो कोई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उत्तराधिकार में प्राप्त सम्पत्ति के आधार पर भी हो सकता है, किन्तु प्रबन्ध की क्षमता तो पूरी तरह अपने द्वारा ही अर्जित करनी पड़ती है। विधाता को उतना ही श्रेय मिलता है जितनी कि नियामक की मनुहार की जाती है। बच्चे जनने की क्षमता तो हर वर्ग के मादा प्राणियों में होती है। उत्पादन तो अनायास भी हो सकता है, पर उसे सुनियोजित करना, समुन्नत करना विशेष प्रकार का कौशल है, उसके जानकारों को ही उत्पादकों की तुलना में अधिक श्रेय मिलता है। यही कारण है कि उद्योगपतियों के स्वामित्व वाले लाभों की अपेक्षा प्रबन्धकों को ही अधिक श्रेय जाता है। राजा की सफलता-असफलता बहुत कुछ उसके मंत्रियों पर ही निर्भर रहती है। स्कूल तो असंख्यों खुले होते हैं, पर उनमें से सफलता का श्रेय उन्हीं को मिलता है, जिनके संचालक अपनी प्रतिभा, लगन और सूझ-बूझ का बढ़-चढ़कर परिचय देते हैं। सेना में अनेकों सैनिक होते हैं। वे अनुशासन भी पालते हैं और देश-भक्ति तथा दक्षता का परिचय भी देते हैं, किन्तु मोर्चा जीतने-हारने का यश-अपयश सेनापति को ही जाता है। तनिक-सी भूल कर बैठने पर उसे अनर्थ करने वाले जैसा दण्ड भुगतना ही पड़ता है। सिपाही का प्रमाद छोटी प्रताड़ना से भी सँभल जाता है, पर सेनापति को क्षमा कैसे किया जाय, जिसने संचालक जैसा भारी-भरकम उत्तरदायित्व स्वीकार करने पर भी गहरी सूझ-बूझ का परिचय देने में भूल की। ऐसी रणनीति न बना सका जिसके सही होने पर पराजय की आशंका नहीं के बराबर ही रह जाती। मजबूत इंजन तो टूटे डिब्बों को भी खींच ले जाता है। यह प्रतिपादन गलत नहीं है। उच्च अधिकारियों को अधिक वेतन और अधिक सम्मान इसी बात का मिलता है कि वे सामान्य लोगों की अपेक्षा किसी भी समस्या के साथ जुड़े हुए असंख्य पहलुओं पर एक ही समय में विचार कर लेने और सही निष्कर्ष पर पहुँचने की क्षमता से सम्पन्न होते हैं। यदि वे भी अविकसित मानस वाले जन साधारण जैसा आचरण करने लगें और अपनी जिम्मेदारी को ठीक तरह न निभा सकने का दोष जिस-तिस पर थोपने की प्रवंचना करें, तो भी उन्हें क्षम्य नहीं समझा जाता है। प्रबंधक से सर्वज्ञ और सर्व समर्थ जैसी आशा की जाती है। यदि किसी के कंधे पर यह भार आ पड़ा है तो उसका कर्त्तव्य है कि उस पद के अनुरूप दक्षता में यदि कहीं कुछ कमी है, तो उसे जल्दी से जल्दी पूरा कर लेने का प्रयत्न करे। ग्रुप लीडर होने का अर्थ ही यह है कि उसने भिन्न-भिन्न प्रकृति के लोगों के बीच तालमेल बिठाने की क्षमता से सम्पन्न होने को आश्वस्त किया है। यह एक ऐसा आश्वासन है, जिसके उपयुक्त सिद्ध होने के लिए अपनी समूची तत्परता और तन्मयता दाँव पर लगाने की आवश्यकता पड़ती है। प्रहरी ही निद्राग्रस्त होकर रखवाली की जिम्मेदारी को भुला बैठे तो उस असावधानी की स्थिति में हुई चोरी के लिए सोने वाले उस प्रहरी की ही खींचतान होगी और आगे से उसे कोई जिम्मेदारी का काम न मिल पायेगा।

संयोजन तो अन्य सहायक भी कर सकते हैं, पर संचालन का कार्य तो एक को ही करना पड़ता है। यदि मण्डल के कई सदस्य हैं तो भी जो प्रमुख है, उसी पर यह जिम्मेदारी आती है कि साथियों में सही कार्यों पर सहमत होने की विशेषता का अभिवर्धन करे अन्यथा संयुक्त नेतृत्व के बीच अहमन्यता के दुर्गुण कुछ विशेष कारण न होने पर भी अपनी हेटी न होने देने की प्रमुखता को सबसे ऊपर मानने वाले परस्पर झगड़े बिना न रहेंगे और उस विग्रह का दुष्परिणाम समूचे कार्य तंत्र के लड़खड़ा जाने के रूप में सामने आयेगा।

हर किसी को प्रबंधक बनने की क्षमता का विकास करना चाहिए। भले ही उसे किसी मिल, कारखाने, पार्टी, फैक्टरी, स्कूल आदि में प्रबन्धक के पद पर नियुक्त होने का अवसर न आये क्योंकि जीवन की अधिकांश प्रक्रिया पारस्परिक आदान-प्रदान, सहयोग पर निर्भर है। सद्भाव अर्जित किये बिना, तालमेल बिठाये बिना प्रगति पथ पर एक कदम भी नहीं चला जा सकता। अपने छोटे-से व्यवसाय में कर्मचारी बनकर रहने में पग-पग पर सहयोग की आवश्यकता पड़ती है। उपेक्षा की स्थिति बनी रहने में घाटा ही घाटा है। फिर यदि किसी से सहयोग की अपेक्षा होती है, तो उस पर दबाव डालने की अपेक्षा यह अधिक सरल है कि अपनी योग्यता को इस रूप में प्रस्तुत करे कि सम्बन्धित व्यक्तियों को यह आशा बँधे कि इनके साथ सद्भाव बनाये रहने में हमें ही लाभ है। यह कार्य मिथ्या शेखीखोरी के आधार पर बन नहीं पड़ता, क्योंकि बनावट, अत्युक्ति प्रकट करते-करते ऐसे अनेकों संदेह के क्षेत्र छोड़ देती है, जिस पर झाँककर किसी का बढ़बोलापन आँका जा सके। कुछ समय बाद तो अत्युक्तियों से घुला हुआ झूठ प्रकट होकर ही रहता है। तब फिर प्रामाणिकता संदिग्ध हो जाने पर साधारण कथन भी संदेह की दृष्टि से देखा जाने लगता है। इसके बाद बचने, दूर रहने की बारी आ जाती है। इस झंझट में पड़ने की अपेक्षा यही उपयुक्त है कि अपनी कार्य शैली में व्यवस्था तत्त्व का समुचित समावेश होने की बात अपने क्रिया-कलापों में ही प्रकट होने दी जाय।

घर-परिवार भी एक पाठशाला, सहकारी समिति या फैक्ट्री के समतुल्य है। उसमें भिन्न-भिन्न स्तर के सदस्य रहते हैं। आवश्यक नहीं कि उनमें सभी समझदार हों। उनमें से कुछ संस्कारवश उद्दण्ड या अनगढ़ भी हो सकते हैं। इनमें से किसी को भी घर से बाहर निकाल बाहर नहीं किया जा सकता। बात तभी बनती है कि अन्यों का स्वभाव, दृष्टिकोण समझते हुए उनके साथ इस प्रकार तालमेल बिठाया जाय कि कम से कम हानि पहुँचायें और जितना कुछ बन पड़े उतना सहयोग करते रहने में किसी प्रकार की बाधा न पड़े। डराने-धमकाने की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आवश्यकता तो विवशता की स्थिति सामने आ जाने पर ही अपनानी चाहिए। प्रयत्न यही रखना चाहिए कि जिनके साथ इच्छा या अनिच्छा से रहना ही पड़ेगा, उनके साथ मनोमालिन्य जैसी स्थिति न बनने दी जाय। दूसरी ओर से उपेक्षा बरती जा रही हो तो भी अपनी ओर से सज्जनता भरा व्यवहार करते रहने की नीति अपनाये रहने में ही लाभ है। सबको अपनी इच्छा के अनुरूप नहीं बनाया जा सकता, पर इतना तो हो ही सकता है, विग्रह को टालते रहने और निरर्थक बातों में अपना समय और चिन्तन नष्ट होने देने की हानि से बचा जाता रहे।

किसी तंत्र में नियमित रूप से व्यवस्था का दायित्व न सौंपे जाने पर भी प्रतिभावान प्रतीक्षा करते नहीं बैठे रहते और न इस प्रकार की हीनता मन में आने देते हैं कि हमसे आग्रह नहीं किया गया। अपनी विशिष्टता का परिचय देने की दृष्टि से ही सही, अवसर पर छोटे कार्य सामने दीख पड़ने पर उनमें आत्मीयता की सेवा, भावना से सहयोग आरम्भ कर देना चाहिए । छोटे कार्यों को सही ढंग से निपटाने की योग्यता का आभास मिलने पर लोगों को स्तर पहचानने का अवसर मिलता है और फिर आग्रहपूर्वक अन्य कार्यों में हाथ बँटाये जाने की आशा करने लगते हैं। योग्यता से अपने स्तर के अवसर देर-सबेर में प्राप्त कर लेता है। लोकनायकों को इसी प्रकार अपनी विशेषता का परिचय देने और क्रमशः अधिक ऊँचे काम कर दिखाने के अवसर मिलते रहे हैं। यदि यह नीति न अपनाई जाय तो गुमसुम रहने वाले व्यक्ति को प्रायः अयोग्य ही गिना जाने लगता है। अपने व्यवहार एवं वाक् कौशल से ही यह प्रकट किया जा सकता है कि अपने में बड़े दायित्व संभालने की क्षमता है। ऐसे लोगों की सर्वत्र माँग है। वैसे लोग न मिलने पर अधिकांश लोग अपने को किसी बड़ी कमी से घिरा अनुभव करते हैं, पर कभी यह पता चलता है कि सम्पर्क क्षेत्र में अमुक व्यक्ति स्वभावतः व्यवस्थित रहने और दूसरों के कार्यों में उत्साहपूर्वक रस लेकर सहायता करने के स्वभाव वाला है, तो उसे हर दिशा से आमन्त्रण मिलता है। एक के बाद दूसरे बड़े काम सौंपे जाने लगते हैं। प्रगतिशीलता का यही क्रम है, जो सदा-सर्वदा बना और चलता रहा है।

परिचय का आरम्भ किसी की निकटता के उपरान्त ही होता है। पहली दृष्टि से व्यक्ति के शरीर, वस्त्र एवं शिष्टाचार के बरते जाने पर यह जानकारी मिलती है कि आगन्तुक का स्तर एवं महत्त्व क्या है ? प्रत्युत्तर भी उसी के अनुकूल मिलने लगता है। गुम्बज की प्रतिध्वनि की तरह ही हमारे व्यक्तित्त्व की प्रतिक्रिया होती है और दूसरों पर छाप पड़ती है। सम्पन्नता के प्राथमिक सिद्धान्तों से परिचित व्यक्ति अपने स्वभाव को ऐसे ढाँचे में ढालता है कि परखने में सहानुभूति का प्रत्युत्तर देने लगे। इस संदर्भ में साफ-सुथरापन और वाणी की सज्जनता का समावेश अत्यधिक आवश्यक है। इन्हीं छोटी-छोटी आदतों का समन्वय, शिष्टाचार बन जाता है और बरतने वाले का मूल्य बढ़ता है।

खर्चीली सज-धज किसी का मान बढ़ाती नहीं, वरन् उसे धारण करने वाले को अधिक बचकाना एवं नट, अभिनेता स्तर का उपहासास्पद ही बनाती हैं। स्वच्छता और सादगी किसी का बड़प्पन प्रकट करने के लिए पर्याप्त है। दूसरों पर रौब जमाने के लिए अपना बड़प्पन प्रदर्शित करने की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिए कई लोग अपनी सजधज, ऐंठ, अकड़, दूसरों की उपेक्षा, अपनी व्यस्तता आदि को अनादश्यक ओढते हैं और आशा करते हैं कि अन्य लोग अपने प्रभाव में आकार दब जायेंगे और जैसा कहेंगे वैसा करने लगेंगे। यह मान्यता आदि से अन्त तक गलत है। कारण कि अहंकार में दूसरों का अपमान जुड़ा होता है। जिसकी गंध किसी भी विचारशील मनःस्थिति वाले को सहज लग जाती है और उसकी प्रतिक्रिया विरोध, तिरस्कार में होती है। फलतः प्रतिष्ठा बढ़ने की अपेक्षा तो पूरी नहीं होती, उलटे सहानुभूति की मात्रा घटती चली जाती है। अन्तर्विरोध बढ़ जाने या बने रहने पर खिंचाई बढ़ती है, खाई चौड़ी होती है और संघर्ष जैसी मनःस्थिति बन जाती है। ऐसे वातावण में तालमेल बैठ नहीं पाता और दिशा भिन्नता बन पड़ने से कटुता, प्रतिद्वन्द्विता, प्रतिशोध जैसे तत्त्व उभर पड़ते हैं। गड़बड़ी के कारणों को समझना और समझाना कठिन हो जाता है। काम बनता नहीं बिगड़ता है। इसलिए अपनी मुद्रा परिधान से लेकर व्यवहार तक में नम्रता ही रहनी चाहिए। सादगी और सज्जनता यह दो गुण ऐसे हैं, जिन्हें अपनाकर कोई प्रबंधक लाभ में ही नहीं रहता, वरन् उलझनों को हँसते-हँसाते, भाई-चारे के वातावरण में ही सम्पन्न कर लेता है। अच्छा होता इस स्तर का स्वभाव ही बन जाता और अभ्यास में उतर जाता, पर यदि ऐसा स्तर इसके पूर्व नहीं बन पड़ा है तो समय की आवश्यकता और कार्य की सुव्यवस्था को ध्यान में रखते हुए उसे प्रयत्नपूर्वक अर्जित कर लेना चाहिए। स्मरण रहे कि बड़प्पन का रौब जमाकर जितना काम कराया जा सकता है, उसकी तुलना में समता और सद्भाव का परिचय देकर कहीं अधिक और कहीं अच्छी तरह बात बनाई जा सकती है।

अनगढ़ व्यक्ति के लिए सिर्फ समय का दबाव ही प्रेरणा का स्रोत बन पड़ता है। वे उतना ही करते है जितना कि तात्कालिक आवश्यकता उन्हें बाधित करती है। ऐसी दशा में मानसिक विकास सीमाबद्ध हो जाता है। कुली, मजदूर उतना ही कर पाते हैं जितनी कि अनिवार्यता होती है। इसके आगे की, पीछे की सोच सकना और कार्य को अधिक सुरुचि रूप से सम्पन्न करने की आवश्यकता बनी रहती है, उसके सम्बन्ध में उनका ध्यान ही नहीं जाता। ऐसी दशा में वह बन ही नहीं पड़ता जिसे देखकर सम्बन्धित व्यक्तियों को उसकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विशेषता का भान हो और बदले में सहानुभूतिजन्य लाभ एवं गौरव प्राप्त हो। यथास्थिति बने रहने का प्रमुख कारण एक ही है कि विषय से संबंधित अन्य अनेकानेक बातों की ओर ध्यान न जाना, एक सीमित परिधि में ही सोचते और करते रहना। यह मानसिकता किसी की भी उन्नति में बाधक हो सकती है और प्रबन्धक का स्तर प्राप्त करने की तो प्रमुख अड़चन समझी जाती है।

एक ही दृष्टि में तीक्ष्ण बुद्धि वाले लोग प्रस्तुत खामियों को खोज लेते हैं। उसके क्या कारण हो सकते हैं, इसकी कल्पना बिना समय गँवाये कर लेते हैं। साथ ही यह उपाय भी सूझता रहता है कि खामियों को किस प्रकार जल्दी से जल्दी और अच्छी तरह कितना जल्दी और सुविधापूर्वक ठीक कराया जा सकता है। न केवल खामियों को ठीक करना वरन् अधिक प्रगति और अधिक सफलता के लिए जिन नये सुधारों, परिवर्तनों की आवश्यकता है, उसका ताना-बाना भी साथ ही बुनते रहते हैं। इस प्रकार मस्तिष्क एक होते हुए भी एक ही समय में अनेक प्रकार सोच सकने और सुव्यवस्था में बाधक सभी तथ्यों को सुधारने लग जाते हैं। प्रगति अनायास ही नहीं आती। उसके लिए प्रतिस्पर्द्धा के क्षेत्र में क्या हो रहा है, क्या होने वाला है, इसकी भी सुविस्तृत जानकारियाँ संग्रहीत करते हैं और इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि हमारे लिए अधिक श्रेय प्राप्त करने के लिए क्या करना संभव और आवश्यक है। मस्तिष्क को बेकार बातें सोचते रहने, काम में अनावश्यक विलम्ब लगाने वाले ही प्रायः पिछड़ते हैं। जागरूक, सावधान, प्रत्युत्पन्नमति को चुस्त-दुरुस्त रहने और रखने वाले लोग ही इस योग्य समझे जाते हैं कि ये किसी तंत्र की सुव्यवस्था ठीक प्रकार चला सकेंगे। यदि इस प्रकार के मानसिक विकास में कुछ कमी पाई जाय तो उसे तत्परतापूर्वक सुधार लेना ही प्रबंधक पद की गरिमा के अनुरूप है।

सुव्यवस्था और सुनियोजन

बुद्धिमत्ता बढ़ाने वाले खेलों में शतरंज का ऊँचा स्थान है। कारण कि उसमें एक ही समय में एक ही साथ अनेक संभावनाओं और पराजयों पर ध्यान रखना पड़ता है। किसी एक ओर से असावधानी रखी जाय तो घाटे में रहने और बाजी हार जाने की स्थिति बन जाती है। प्रबुद्ध लोगों को अन्यान्य प्रयत्नों में अपनी मानसिक क्षमता इतनी विकसित करनी पड़ती है कि एक ही समय में संबंधित कार्य से जुड़ी हुई अनेकानेक दिशाओं के संबंध में गहराई से समझने और बिना समय हल निकालने की कुशलता का परिचय दिया जा सके। प्रबंधक स्तर के हर व्यक्ति को अनिवार्य रूप से यह दक्षता अर्जित करनी पड़ती है अन्यथा दीर्घसूत्री, प्रमादी रहते एक काम ठीक किया जाता है, उतने ही समय में दस नई समस्याएँ और उठ खड़ी होती हैं और उनका परिचय विलम्ब से प्राप्त करने अथवा सुधार में विलम्ब करने पर करा-धरा मिट्टी हो जाता है।

साधारण कामकाजी जीवन तक इतना सरल नहीं है कि उसे अभ्यस्त ढर्रे की समझ के सहारे भली प्रकार संभाला-सँजोया जा सके। एक ही समय में आर्थिक प्रबंध, बाजार की खरीद, घर के किसी सदस्य की बीमारी, अतिथि का आगमन, शोक समाचार, साथियों से विग्रह, नए अन्तर्द्वन्द्वों की संभावना जैसी कितनी ही बातें सामने आ खड़ी हो सकती हैं। उन सबका क्रमबद्ध और यथावत् समाधान सोचना पड़ता है। यदि इनमें से एक को भी अनदेखा कर दिया जाय तो उसकी प्रतिक्रिया इतनी बुरी होती है कि अन्य प्रसंगों को संभाल लेना भी संतोषप्रद नहीं होता। जब सामान्य घर-गृहस्थी की दैनिक परिस्थितियों के संबंध में इतनी उलझनें बनी रहती हैं, तो किसी बड़े दफ्तर, कारखाने, व्यवसाय, समुदाय आदि के संबंध में अधिक कठिनाइयों का उसी अनुपात में आना स्वाभाविक है। इस आगमन को अप्रत्याशित कहकर और 'जो बन पड़ा सो किया' कहकर उस क्षति की पूर्ति नहीं की जा सकती जो एकत्रित तत्परता और दूरदर्शिता के सहारे कम से कम कष्टदायक हो सकती और सुधार में किये गये समग्र प्रयास को यशस्वी बना सकती थी। इसके लिए आगे-पीछे की, दायें-बायें की सभी दिशाओं में सोचना पड़ता है। सही निष्कर्ष निकालते हुए उसका अविलम्ब समाधान करना होता है। जो यह कर सकते हैं, उन्हीं को प्रबंधक का पद शोभा देता है अन्यथा रोते-झींकते, यश-अपयश के थपेडे खाते किसी प्रकार समय गुजारते हुए तो सभी देखे जाते हैं। कोयले की खान में हीरा ढूँढ़ निकालना कठिन किन्तु संभव कार्य है। इसी प्रकार प्रबंधक की, प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति की अपनी गरिमा है। वह स्वयं तो अपना अनुभव, स्तर और वर्चस्व तो निरंतर बढ़ाता ही चलता है, साथ ही जिस दायित्व को पूरा करने का जिम्मा उसने लिया था, उसे भी अधिकाधिक समुन्नत बनाकर अपनी प्रखरता से संबद्ध लोगों को चमत्कृत करता है।

यह गुण जन्मजात नहीं है। प्रयत्नपूर्वक सीखना पड़ता है। प्रबन्ध विद्या की पुस्तकें भी इस संबंध में कुछ तो सहायता देती ही हैं, पर असली प्रयोजन अनुभव सम्पदा के आधार पर ही सम्पन्न होते हैं। अपने या दूसरों के काम में हाथ बँटाने एवं उसे अधिक सांगोपांग बनाने के सहयोग में जहाँ दूसरों को प्रसन्नता होती है, वहाँ अपनी विशिष्टता में भी चार चाँद लगते हैं। प्रबंध संबंधी कार्यों में आगे बढ़कर रुचि लेना, अपने और साथियों के कामों को सुनियोजित करने में योगदान देना जिनका स्वभाव बन गया है, वे श्रम अधिक करना पड़ने की शिकायत भी नहीं करते, क्योंकि अपना या पराया काम सुनियोजित हो जाने पर जो प्रसन्नता होती है, वह अतिरिक्त समय लगने या श्रम करने की क्षति की पूरी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तरह भारपाई कर देती है। सच पूछा जाय तो इस प्रकार की तत्परता बरतने वाले आत्म-संतोष और जन सम्मान पाने के कारण अपेक्षाकृत लाभ में रहते हैं योग्यता की अभिवृद्धि का एक ही तरीका है कि उलझन भरे कार्यों से बचने की अपेक्षा दौड़कर उन्हें हाथ लगाया जाय और समग्र कौशल नियोजित करके उसे सुसम्पन्न करके दिखाया जाय।

इस प्रगतिक्रम में एक बड़ी बाधा मानसिक तनाव ग्रस्तता की होती है। यह मानसिक बीमारी इन दिनों बहुत लोगों को ग्रसित कर रही देखी जाती है। साथियों का इच्छानुवर्ती न होना, काम को समेटने का प्रयत्न करने पर भी काबू में न आना, निर्दोष होते हुए भी विद्वेषियों द्वारा लांछन लगाया जाना, काम में देर लगने या असफल रहने पर खीझने लगना जैसे कारण प्राय: मानसिक तनाव के कारण होते हैं। सिर गरम हो जाता है। चेहरे पर खीज चढ़ी दीखती है। सोचे का तंत्र ठप्प हो गया जैसा लगता है। प्रयत्न करने पर भी कुछ करते-धरते नहीं बनता। इसी से मिलते-जुलते लक्षण तनाव की स्थिति में दीख पड़ते हैं। कई बार तो तन्द्रा सताने लगती है, रक्तचाप बढ़ जाता है और बेचैनी तथा उदासी की स्थिति बन जाती है। स्थिति अर्ध-विक्षिप्तता की समझी जा सकती है, जिसके रहते आवश्यक कामों को निपटाना तो दूर सामान्य मन:स्थिति को बनाये रहना तक कठिन हो जाता है।

यह बुरी व्यथा तो है, पर आकस्मिक नहीं है और न किसी के द्वारा बाहर से थोपी गई। इसका इलाज करने में दवा-दारू भी क्षणिक प्रभाव दिखाते हैं। समुचित चिकित्सा तो अपने आप में समझदारी बढ़ाने पर ही संभव है।

समुद्र में ज्वार-भाटे आते रहते हैं। धूप-छाया का संयोग बना ही रहता है। कोई व्यापारी ऐसा नहीं जिसे कभी हानि, कभी लाभ की परस्पर विरोधी मान्यताओं का सामना न करना पड़ता हो। शत्रु तो मित्र कदाचित ही बनते हैं, पर मित्रों का शत्रु बन जाना तनिक से कारण पर होता रहता है। सर्दी-गर्मी को ऋतुओं का आगमन कैसे रुके ? संसार भी उल्टे-सीधे धागों से बुना हुआ है और उसमें प्रसन्नतादायक ही नहीं अप्रसन्नता अनुभव कराने वाले अवसर भी आते रहते हैं। सदा सुखद स्थिति ही बनी रहे, यह प्रकृति संरचना की क्रम व्यवस्था में शक्य ही नहीं। ऐसे अनेक लोग हैं जो हर हालत में सन्तुलन बनाये रहते हैं और प्रतिकूलताओं से जूझते समय असंतुलित नहीं होते वरन् धैर्यपूर्वक अधिक सावधानी सँजोते हैं और उलझन से निपटने का प्रयत्न करते हैं। वे जानते हैं कि प्रतिकूलता की आग में अधीरता का ईंधन डाला गया तो उससे लाभ तो कुछ न होगा, उलटे जटिलताएँ बढ़ती जायेंगी। आवेशग्रस्त मन:स्थिति में किये गये निर्णय प्राय: गलत ही होते हैं। उनके कारण हैरानी घटती नहीं वरन् और भी अधिक बढ़ जाती है। इस तथ्य को यदि अच्छी तरह समझ लिया जाय तो आधी हैरानी दूर हो जाती है। मात्र मन:स्थिति से ही निपटना पड़ता है, जो विवेकशीलों के लिए बहुत भारी नहीं पड़ता, अधिक भारी पड़ती है, अपनी मानसिक आवेशग्रस्तता जो अदूरदर्शियों में छोटी प्रतिकूलता देखते हुए भड़क उठती है और मानसिक दृष्टि से मनुष्य को अपंग जैसी स्थिति तक पहुँचा देती है।

धैर्य खो बैठना यों हर किसी के लिए बहुत बुरा है। संतुलन गँवा बैठने से बढ़कर और कोई विपत्ति नहीं। तनाव उत्पन्न कर लेना बाहरी घटनाक्रमों से अपने आपको दण्ड देना है। हो सकता है कि ऐसी विपन्नता बिना बुलाये चढ़ दौड़े, पर समझ यह भी लेना चाहिए कि यदि मनोबल बनाये रखा जाय तो हर स्थिति में अपने को सुस्थिर बनाये रखा जा सकता है। सेनापतियों के सामने क्षण-क्षण में उतार-चढाव आते रहते हैं। भले-बुरे समाचार मिलते रहते हैं। बड़े आपरेशन करने वाले सर्जन भी मरणासन्न रोगियों से घिरे रहते हैं, फिर भी वे भावुकता का अतिरेक नहीं होने देते और जो करना है उसी पर समग्र एकाग्रता के साथ ध्यान रखते हैं। डॉक्टर आपरेशन के समय भावुकता के प्रवाह में बहने लगे और सेनापति युद्ध मोर्चे में अप्रिय समाचार पाकर हड़बड़ाने लगे तो उसके अगले क्रियाकलाप एक प्रकार से गड़बड़ा ही जायेंगे। समूह में अनेक प्रकृति के लोग सम्मिलित होते हैं। उनमें से जो उद्दण्डता दिखाने लगें, प्रबन्ध उन्हीं का करना चाहिए, न कि संचालक अपना ही संतुलन गँवा बैठे और ऐसा कुछ कहने और करने लगे जिससे छोटी बात बढ़कर बतंगड़ उत्पन्न हो जाय।

उत्तेजित मनुष्य असंतुलित हो जाता है। आवेश की स्थिति में वह सामयिक वस्तुस्थिति का ठीक से जायजा नहीं ले पाता और न सही सोच पाता है कि हानि से बचने और लाभ की स्थिति बनाये रखने के लिए उसे क्या कदम उठाने की आवश्यकता है। उत्तेजना एक छूत की बीमारी है, जो एक स्थान से उछलकर निहित स्वार्थों के ऊपर सवार हो जाती है। परिणाम सोच सकने की दूरदर्शिता उनके हाथ भी नहीं रहती और उपद्रव ही उन्हें सूझ पड़ता है। ऐसी स्थिति में उजड्डों को तो यत्किंचित ही हानि होती है, क्योंकि उनकी अपनी कोई हैसियत नहीं किन्तु बदनाम और परेशान वह तंत्र होता है, जिसे आगे भी उसका काम चलाते रहना है। इसलिए प्रबंधक का मनोबल, संतुलन हर हालत में बना ही रहता है। ऐसी स्थिति में विरोधियों से निपटते चलना और समाधान ढूँढ निकालना सरल हो जाता है।

स्नेह, सहयोग और सद्भाव के वातावरण में हर किसी को प्रसन्नता रहती है और उत्साह उभरता है। ऐसी मनोदशा में मनुष्य साधारण रीति से काम-काज निपटाने की अपेक्षा सहज ही कई गुना काम कर लेते हैं। काम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की उत्तमता और मात्रा को जो प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लेते हैं, उन्हें ध्यान रहता है कि त्रुटियाँ न रहने पायें और लोग अनगढ़-फूहड़ कहकर उँगली न उठायें, गैर जिम्मेदारी और लापरवाही का लांछन न लगे। ऐसा वातावरण यदि अपने परिकर में बनाकर रखा जा सके तो समझना चाहिए कि प्रबंधक की सफलता सुनिश्चित हो गयी।

हर व्यक्ति हर विषय का जानकार या प्रवीण-पारंगत नहीं होता। सीखने से ही समझदारी और कुशलता बढ़ती है। जिसे जिस काम का उत्तरदायित्व सौंपा गया है या सौंपा जाना है, उसे अनायास ही काम सौंपने की अपेक्षा यह कहीं अधिक उत्तम है कि सौंपे गये काम से संबंधित उतार-चढ़ावों से उसे अवगत-अभ्यस्त करा दिया जाय। यह कार्य उनके द्वारा सम्पन्न होने चाहिए जो तद्विषयक अनुभव सफलतापूर्वक अर्जित कर चुके हैं। मात्र बौद्धिक ही नहीं, व्यावहारिक अभ्यास उचित समय तक कर लेने के उपरान्त ही कोई इस योग्य होता है कि सौंपी गई जिम्मेदारी ठीक प्रकार पूरी कर सके। अजनबी काम में गैर जानकार व्यक्ति को बिना आद्योपान्त उतार-चढ़ाव समझाये काम में लगा देने में अपयश और घाटा उठाना पड़ता है। इसलिए हर कर्मचारी को आरम्भ में ही नहीं बीच-बीच में भी बढ़ते काम के स्तर एवं दायित्व के संबंध में जागरूक कराते चलना चाहिए। कुछ लोग अपनी अकल से, अपनी उमंग से, सूझबूझ से ही अपने काम की स्थिति एवं मात्रा बढ़ाते चलते हैं, पर अधिकांश ऐसे होते हैं जिन्हें बताना, सुझाना ही नहीं जरूरत पड़ने पर स्वयं कर दिखाने की भी आवश्यकता पड़ती है, तब बात गले उतरती है। दूसरों के द्वारा सम्पन्न किये गये बढ़िया कार्यों के नमूने भी सामने प्रस्तुत करते रहने पर तब कहीं किन्हीं-किन्हीं की उनींदी आदत, वस्तुस्थिति समझने में समर्थ हो पाती है। मात्र कह देने, सुझा देने भर से कइयों की मंद गति तदनुरूप कदम बढ़ा सकने में समर्थ नहीं हो पाती। ऐसी दशा में उनकी विवशता समझते हुए जो भूल रहती है उन्हें न होने देने के उपाय बिना खीजे बताते रहने चाहिए। छोटे बच्चों के साथ भी यही करना पड़ता है। साधारण लोगों के साथ भी यही करने की आवश्यकता पड़ती है।

समय का मूल्य और महत्त्व स्वयं समझना चाहिए और साथ ही सहकर्मियों को भी उसकी गरिमा बतानी चाहिए। समय ही वैभव है, उसका जो पूरा-पूरा सही उपयोग कर पाते हैं, वे ही दूसरों की तुलना में अधिकाधिक काम कर दिखाते और तदनुरूप सम्मान पाते हैं। जो उसका महत्त्व नहीं समझते, वे समय, श्रम और मनोयोग का समन्वय नहीं कर पाते। फलतः उनकी प्रगति भी धीमी रहती है और विनिर्मित कार्य में भी पिछड़ेपन की झलक-झाँकी मिलती है। ऐसे लोग जागरूक साथियों की तुलना में पग-पग पिछड़ते रहते हैं, जिनसे काम लेना है, उन्हें समय न गँवाने और पूरे मन से हाथ में लिए हुए काम में तत्परता, तन्मयता बरतते रहने का स्मरण दिलाते रहना चाहिए।

काम को फिर कभी के लिए टालना, उसे बेगार भुगतने की तरह निपटाना, भारभूत समझकर आधे-अधूरे मन से करना न केवल कर्त्ता को बदनाम करता है वरन उसके द्वारा निपटाये काम में भी इतनी त्रुटियाँ रहती हैं कि देखने वालों में से किसी का मन प्रसन्न नहीं होता। फिर जिनका उस काम से सीधा सम्बन्ध है, वे तो खीजते ही रहेंगे। जो लोग अपना स्वभाव ऐसा बना लेते हैं वे आलसी, निकम्मे, मूढ़मति समझे जाते हैं और हर दृष्टि में घटिया समझे जाते और घाटे में रहते हैं।

स्फूर्ति का परिचय देना किसी की दक्षता और क्षमता की बहुलता का प्रमाण है। प्रशंसा और प्रतिष्ठा इसी आधार पर बढ़ती है। जिन्हें अधिक योग्य एवं वजनदार समझा जाता है, उन्हें तदनुरूप उन्नति के अवसर भी मिलते रहते हैं, अधिक जिम्मेदारी के काम सौंपे जाते हैं। छोटे से बड़े बनने का सुयोग स्फूर्तिवानों को, सूझबूझ का प्रयोग करने वालों को ही मिलता है। जो मंद गति वाले ही समझे जाते रहे हैं, ऐसी दशा में उनकी उपेक्षा-अवज्ञा भी होती रहती है। प्रतिफल की दृष्टि से भी घाटे में रहते हैं। इसका दोषारोपण भले ही दूसरों पर किया जा सकता है, पर उससे कुछ बनता नहीं। भूल अपनी अक्सर होती है, अन्यथा पारखियों और खरीददारों को कदाचित ही किसी से वैमनस्य होता है। उनकी पसंदगी तो बढ़िया माल पर ही रहती है। घटिया पड़ा सड़ता रहता है और कौड़ी मोल बिकता है। इसके लिए खरीददारों को दोष देने की अपेक्षा यही देखना चाहिए कि प्रतिस्पर्द्धा के बाजार में अपना कर्तृत्व इतना पिछड़ा क्यों रह गया ? दूसरों की तरह अपने को कुशल, स्फूर्तिवान और सूझबूझ से काम लेने वाला क्यों नहीं बनाया गया ? समय का कसकर उपयोग क्यों नहीं किया गया ?

संचालक एवं व्यवस्थापक का प्रथम गुण यह होना चाहिए कि वह समय पर उपस्थित होने और ठीक समय पर क्रमबद्ध रूप से काम करने की प्रक्रिया अपनाया करे। इन दिनों बड़प्पन की शान जताने और अनेक कामों में व्यस्त रहने का बहाना बनाकर बड़प्पन जताने वाले हर काम में लेट पहुँचते हैं। सोचते हैं कि इससे दूसरे लोग उनका गौरव समझेंगे और अधिक दायित्वों से लदा होने की विशेषता अनुभव करेंगे। पर ऐसा बिल्कुल नहीं होता। जिम्मेदार व्यक्ति सबसे अधिक महत्त्व अपने दायित्व का अनुभव करते हैं और जो काम उस समय करना चाहिए उसे ठीक समय करने में चूक नहीं करते। इसमें दुहरा लाभ है-एक तो ठीक समय पर काम करने का अभ्यास अपनी प्रतिभा को निखारता है, अधिक मात्रा में काम करने का सुयोग प्रदान करता है। साथ ही अन्य साथियों में भी उस अच्छी आदत का अनुकरण करने की आदत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पड़ती है। लेट होने पर वे शर्माते हैं और आये दिन वैसा करने पर भर्त्सना होने, पिछड़ा समझे जाने के लांछन से भी बचना चाहते हैं।

जिन कार्यालयों में काम ठीक समय पर आरम्भ होता है, उनका अधिक प्रगति करना, अधिक लाभ कमाना निश्चित है। लेट होते रहना प्रकारान्तर से प्रगति को धक्के धकेलना है। काम अपेक्षाकृत कम होने की पूर्व सूचना है। कई बार तो इसी बुरी परम्परा को अपनाने वाले समुदाय हर दृष्टि से पिछड़ जाते हैं और जो प्रतिफल कर्मनिष्ठों को मिलना चाहिए उसकी तुलना में हेय समझे जाते हैं और लाभ उठाने की दृष्टि से हाथ मलते रह जाते हैं। समय गँवाते रहना, अपने भाग्य, भविष्य और समुदाय को बदनाम करने के ही समान है।

न केवल उत्पादन-उपार्जन की दृष्टि से वरन सभ्यता, विशिष्टता की दृष्टि से भी यह एक महत्त्वपूर्ण चिन्ह है कि किसी के यहाँ जाना है, किसी को बुलाया हो तो वह निर्धारण सही रीति से सम्पन्न हो ताकि किसी को प्रतीक्षा न करनी पड़े। प्रतीक्षा में दूसरों को भी तो अपना समय बर्बाद करना पड़ता है। समय धन है। अपना या दूसरों का समय बर्बाद करना ठीक ऐसा ही है जैसा कि जान-बूझकर उसे धोखा देना या कुछ चुरा लेना। असभ्य लोग ही समय के साथ खिलवाड़ करते हैं। इस प्रकार बरती गई जिम्मेदारी औरों को इसके लिए बाध्य करती है कि गैर जिम्मेदारी की आदत के कारण यह भरोसा करने योग्य नहीं है। यह मान्यता बनने पर घनिष्ठता घटती और उपेक्षा बढ़ती है।

समय पर हर काम करने की आदत हर परिवार में ही डाली जानी चाहिए। बच्चों तक को इस मूल्यवान नियम का भान होना चाहिए, पर यदि उस वातावरण में ऐसा नहीं बन पड़ता है तो दफ्तर, स्कूल, कारखानों आदि के संचालकों को तो अपने क्षेत्र में व्यवस्था बनाये रखने के लिए इस आदत को अपनाने के लिए सभी सहकर्मियों को ऐसा अनुशासित बनाना ही चाहिए कि उस अधिकार क्षेत्र में समय की बर्बादी का अभ्यस्त कोई भी बनने न पाये।

कड़ाई बुरी लगती है, जब उसके साथ दुर्भावना का, कटुता का समावेश भी हो। शिष्टतापूर्वक व्यवस्था के मूलभूत सिद्धान्तों को समझाते हुए यह अनुभव करा ही देना चाहिए कि उन्हें भी यदि कोई संचालक स्तर की जिम्मेदारी उठानी पड़ी तो समय का अनुशासन अपनाये बिना वे भी अपने कार्य में असफल रहने का लांछन ही सहेंगे।

हर काम साफ-सुथरा रहना, अधूरा, अस्त-व्यस्त छोड़कर न चल देना यह भी समझा और समझाया जाना चाहिए। काम को आधा-अधूरा या अस्त-व्यस्त छोड़कर चल देना बुरी बात है। इससे दुबारा फिर उसे संभालना पड़ने पर कई काम की चीजें अस्त-व्यस्त हो सकती हैं। उनके खोने, खराब होने की जिम्मेदारी से उसी की भर्त्सना होगी, जिसने काम अधूरा छोड़ा है। जिस प्रकार काम आरम्भ करते समय काम में आने वाली हर वस्तु को यथास्थान रखे होने की अपेक्षा की जाती है, उसी प्रकार काम समाप्त करते समय भी सब कुछ झाड़-बुहारकर यथास्थान रखकर ही काम बन्द करना चाहिए। जिस प्रकार प्रातः उठते ही घर-आँगन में बुहारी लगाई जाती है और रात में सोने से पहले बिखरी वस्तुओं को यथास्थान रखने के बाद ही सोया जाता है, उसी प्रकार स्कूल, दफ्तर, कारखाने का भी आरम्भ और अन्त में सफाई कराने का पूरा ध्यान रखना जाना चाहिए। जहाँ इस संबंध में लापरवाही बरती जाती है, वहाँ छोटी उपयोगी वस्तुएँ खराब होतीं और कचरे में जाती रहती हैं।

सुरुचिपूर्ण वातावरण में, अनुशासन युक्त व्यवस्था में काम करना आरम्भ में कुछ लोगों को अखर सकता है, पर जब उन्हें उसके लिए बाधित होना पड़ता है और निर्धारित उपक्रम अभ्यास में उतर जाता है, तब प्रतीत होगा कि इससे काम की और काम करने वालों की प्रतिष्ठा में अभिवृद्धि हो गयी है।

सामूहिक क्रिया-कलापों का संचालन

किसी काम के लिए उपयुक्त योग्यता, तद्विषयक दायित्व संभालने से पहले ही अर्जित कर लेनी चाहिए। काम करते हुए अनुभव बढ़ाना फिर उसे ठीक तरह संभालने की तैयारी करना महँगा पड़ता है। अयोग्य व्यक्ति अनुभव के अभाव में कुछ तो करते रहते हैं, पर वे अधूरे और अस्त-व्यस्त रहते हैं। फलतः सस्ते दामों के कारण या निजी घनिष्टता के कारण उसके कंधे पर भारी-भरकम काम लाद देना पीछे पश्चाताप का कारण बनता है।

जिनसे जो कराना है, उसे उसके सम्बन्ध में सैद्धान्तिक और व्यावहारिक दोनों ही प्रकार की समग्र जानकारियाँ प्राप्त करनी चाहिए। देखना चाहिए कि उतार-चढ़ाव की बदलती परिस्थितियों में वह तदनुरूप तालमेल बिठा सकने की सूझ-बूझ विकसित कर सका या नहीं। समुचित योग्यता परखे बिना किसी को व्यवस्थापक जैसे संचालन सूत्र संभालने वाले पद पर नियुक्त नहीं किया जाना चाहिए अन्यथा सूझबूझ और योग्यता की कमी के कारण वह अपना दायित्व ठीक तरह न निभा सकेगा। प्रगति का तारतम्य बिठाने की अपेक्षा अस्तव्यस्तता का वातावरण खड़ा करेगा और असफलता का दोष समूचे तंत्र पर लगने देगा। सीखने के लिए छोटे-छोटे कामों के सहारे योग्यता सम्पादन करने का क्रमिक विकास चलने देना चाहिए। व्यक्ति को महत्ता न देते हुए उस कौशल को प्रमुखता देनी चाहिए, जो सामूहिक प्रयत्नों के सहारे चलने वाले तंत्र के हर पक्ष पर समुचित ध्यान रख सके और समस्या उठते ही उसका समाधान कर सके। किसी व्यवसाय, कार्यालय आदि की इमारत, पूँजी, महत्ता, सुविधा जितनी ही बढ़ी-चढ़ी क्यों न हो, सुयोग्य संचालक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के अभाव में उसके द्वारा सराहनीय प्रगति सम्पादित न की जा सकेगी।

योग्यता का मापदण्ड किसी डिग्री को मान लेना भूल है। पुस्तकीय ज्ञान एक बात है और घाटे को रोकने तथा अभ्युदय का पथ-प्रशस्त करने के लिए ऐसा अनुभव चाहिए, जिसमें सूझबूझ का भी गहरा पुट हो। उपयुक्त प्रबंधक की नियुक्ति किसी तंत्र की आधी सफलता मानी जानी चाहिए। व्यक्ति विशेष के प्रति आग्रह भाव रखकर अयोग्य व्यक्ति के हाथों संचालन सौंप देना, खड़ा किया गया ढाँचा लड़खड़ा देने का प्रमुख कारण होता है। कार्यारंभ करते समय ही इस कसौटी पर खरे उतरने वाले व्यक्ति को ही जिम्मेदारी सौंपनी चाहिए। यदि इसमें कुछ भूल हो गई है तो उसे सुधारते हुए उपयुक्त व्यक्ति की तलाश एवं नियुक्ति करनी चाहिए। साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिए कि इस हेर-फेर में यथासंभव कटुता उत्पन्न न होने पाये।

इन दिनों लोग महत्त्वाकांक्षाएँ पूरी करने में अत्यंत उतावली करते देखे जाते हैं। अपनी प्रशंसा के ऐसे पुल बाँधते हैं मानो वे ही योग्य लोगों में उच्च स्थान प्राप्त कर चुके। जबकि बात ऐसी है कि छोटे काम करने के लिए भी सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों पर अपनी प्रामाणिकता की छाप डालना कोई कम कला-कौशल नहीं, वरन् विकसित व्यक्तित्व का ऐसा प्रमाण है, जिसे कहीं भी चरितार्थ होते देखा जा सकता है। जिन्हें बड़े काम बड़ी सफलता के साथ सम्पन्न करने हैं, उन्हें व्यक्तित्व विकास के हर पक्ष को परिपक्व करना चाहिए। इसमें देर लगती हो तो छोटे-सरल काम हाथ में लेने भर का साहस करना चाहिए और अधिक योग्य सहायक के रहते हुए अपनी अनुभव सम्पदा में क्रमिक अभिवृद्धि करनी चाहिए। संस्थापक का भी यह कर्त्तव्य बनता है कि अपने प्रमुख कर्मचारियों में से प्रत्येक के अधिक ज्ञान संवर्धन के लिए उपाय करता और व्यवस्था बनाता रहे। इस प्रतिस्पर्द्धा की दौड़ में प्रत्युत्पन्नमति वाले लोग ही बाजी जीत जाते हैं। उन्हें खोजना अथवा अपने प्रयास से तैयार करना यही दो उपाय सुसंचालक के हाथो कारोबार सौंपने के हैं। अयोग्य व्यक्तियों के घटियापन से किसी तंत्र को जितनी हानि और बदनामी सहनी पड़ती है, उतनी और किसी कारण नहीं।

संचालक का अपना स्वभाव ऐसे ढाँचे में ढलना चाहिए कि प्रतिकूलताओं के बीच भी अपना संतुलन बनाये रहे। होठों पर से मन्द मुस्कान को किसी भी दशा में न जाने दें। भवें तरेरने, आँखें लाल करने की आदत ओछेपन की निशानी है। गंभीर लोग अपने ऊपर खीज सवार नहीं होने देते। गड़बड़ हो रही हो तो भी विश्वास रहना चाहिए कि वह साधारण बात है और उस पर निश्चय ही जल्दी काबू कर लिया जायेगा। आत्मविश्वास एक ऐसा गुण है, जिसे साहस, शौर्य एवं पराक्रम का प्रतीक माना जा सकता है। प्रतिकूलता उत्पन्न होते ही हड़बड़ा जाना और आपे से बाहर होने लगना कठिनाइयों को और दूनी बढ़ा लेना है। उत्तेजित मस्तिष्क चढ़े हुए आवेश के कारण समाधान कारक निर्णय कर सकने की स्थिति में नहीं रहता। उस पर क्रोध-प्रतिशोध जैसे बुखार चढ़ बैठते हैं और असमर्थ बनाकर छोड़ते हैं। असमर्थ को असफल होना ही है। आवेश तुरन्त प्रतिक्रिया उत्पन्न करने वाला दुर्गुण है। किसी को उलटी होने लगे तो निकटवर्ती दर्शकों का भी जी मिचलाने लगता है जिस पर क्रोध किया गया है वह दोष स्वीकार करने की अपेक्षा अपमान को प्रतिष्ठा का प्रश्न बना लेता है और ऐसे उलटे व्यवहार पर उतर आता है जिससे बात बनने की अपेक्षा और अधिक बिगड़े। पटरी बिठाने के लिए आवश्यक है कि विचार-विनिमय और आदान-प्रदान का रास्ता निकलने वाली मधुरता बनी रहे। जो सौम्य प्रकृति के, सौजन्य भरे स्वभाव के होते हैं उनके प्रति सहज सहानुभूति उमड़ती है और पराये भी अपनों जैसा समर्थन-सहयोग देने लगते हैं। खीज कोई समाधान नहीं ढूँढ़ पाती, वह जलती आग में ईंधन डालने का काम देती है। इसलिए दुहरा अनर्थ न होने देने की दृष्टि वाली बुद्धिमत्ता इसी में है कि गुत्थियाँ उलझ जाने पर भी कम से कम अपना संतुलन तो बनाये ही रहा जाय। प्रबंधक के अन्य गुणों में यह स्वभाव भी महत्त्व रखता है कि प्रसन्नता और आत्मविश्वास प्रकट करने वाली मुख-मुद्रा बनाये रखी जाय।

मतभेद अक्सर उठते रहते हैं। स्वार्थ टकराते रहते हैं। अनुचित माँगें पेश करते रहना अधिकांश लोगों के स्वभाव में शामिल हो जाता है। उस आदत को इच्छा मात्र से नहीं हटाया जा सकता। सही उपाय विचार-विनिमय ही है। यदि एक पक्ष उत्तेजनाग्रस्त न हो तो दूसरे उत्तेजित को भी विचार-विनिमय के स्तर पर लाया जा सकता है। तर्क, तथ्य, प्रमाण, उदाहरण प्रस्तुत करते हुए औचित्य को स्वीकार करने की स्थिति तक नरम बनाया जा सकता है। समझौता न भी हो सके तो भी कम से कम ऐसी स्थिति तो बन ही सकती है कि अनुकूल स्थिति आने तक धैर्य बना रहे और तत्काल के लिए विग्रह टल जाय। इस स्थिति तक पहुँच जाना भी आधी बला टल जाने के समान है।

कई बार ऐसा भी होता है कि जड़ में और कोई कारण होता है और उसके कारण उत्पन्न हुए आक्रोश को व्यक्ति किसी दूसरे रूप में प्रकट करता है। ऐसी दशा में पत्तों को पोंछने में समय खराब करने की अपेक्षा यह कहीं अच्छा है कि मूल कारण को तलाश लिया जाय और समस्या जिस केन्द्र से उत्पन्न होती है वहाँ तक परिवर्तन प्रयासों में गहराई तक पहुँचा जाय। कभी-कभी जड़ अन्यत्र होती है और उसके अंकुर कहीं से फूटते हैं। ऐसे घुमाव जहाँ भी अड़ रहे हों, वहाँ किसी विश्वस्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मध्यवर्ती से ही उन दाँव-पेचों को सुलझाने में मदद ली जा सकती है।

संक्षेप में काम की बात कर लेना अच्छा गुण है। इससे दोनों पक्षों का अनावश्यक समय बर्बाद होने से बच जाता है, पर साथ ही यह भी आवश्यक है कि इतनी चुप्पी भी बुरी है कि अपनी बात को दूसरे के सामने सही ढंग से प्रस्तुत करते भी न बन पड़े। इससे लोगों को संकोची, झेंपू, अबोध कहने का अवसर मिलता है। अतिवाद की सीमा तक चलते रहने वाली वाचालता पर तो अंकुश रखा जाय, पर किसी सामाजिक व्यक्ति में अपनी कहने और दूसरों की सुनने जैसी उत्सुकता तो होनी ही चाहिए अन्यथा उपेक्षा बरती जाने के संदेह में कोई दूसरे अपने मन की बात ही न कह सकेंगे और अपने को कितनी ही महत्त्वपूर्ण जानकारियों को प्राप्त करने से वंचित रहना पड़ेगा। मध्यवर्ती वार्तालाप कर सकने का गुण तो उस स्तर के लोगों में होना ही चाहिए, जिनका अनेक लोगों से वास्ता पड़ता है और गलतियों को सुधारने से लेकर अच्छाइयाँ बढ़ाते रहने तक अनेक संदर्भों से वास्ता पड़ता रहता है।

जिन्हें कौशल अर्जित करना है और व्यक्तित्व को अधिक परिष्कृत, प्रभावशाली बनाना अपेक्षित है, उन्हें ऐसे अवसरों की भी प्रतीक्षा करते रहना चाहिए, जिसमें अधिक प्रतिष्ठित और क्रियाकुशल समझे जाने की मान्यता है। यदि उनसे कुछ पाने-सीखने का भाव हो तो उनके अनुकरणीय क्रिया-कलापों को गंभीरतापूर्वक देखते रहना चाहिए और प्रयत्न करना चाहिए कि वैसी ही उत्कृष्टता का अनुकरण करने के लिए अपने में आवश्यक परिवर्तन बन पड़े।

घटिया लोग जगह-जगह आसानी से मिल जाते हैं, उनसे वास्ता भी अकारण ही पड़ जाता है, छाप तो भले-बुरे सभी की पड़ती है। यहाँ सावधानी यही बरतने की है कि श्रेष्ठता का अधिग्रहण और दुर्जनों में पाई जाने वाली दुष्टता से आत्मरक्षा करते रहने की जागरूकता बनी रहे। इस प्रकार हर स्तर का व्यक्ति अपने सम्पर्क में आने वाले से उसका उपयुक्त प्रभाव ही ग्रहण करने पाये। किसी की चापलूसी या उजड्डता अपने को असाधारण रूप से प्रभावित न करने पाये, यह शालीनता का एक सुरक्षात्मक कवच है।

निजी जीवन की घरेलू समस्याएँ हर किसी के सामने होती हैं। इनमें कुछ तो प्रसन्नता भी देती हैं, पर अधिकांश ऐसी होती हैं जिनके लिए चिन्ता करनी पड़ती है और बेचैनी अनुभव होती है। ऐसे प्रसंगों को घर छोड़ते समय ही वापस लौटने पर फिर करने के लिए छोड़ देना चाहिए। दफ्तर की मेज तक उनमें से किसी को भी नहीं पहुँचने देना चाहिए। स्थान परिवर्तन करने या क्रिया-कलापो में ही स्थिति के अनुरूप हेर-फेर करना पड़ता है। ऐसा ही परिवर्तन घर के और दफ्तर के वातावरण में, क्रिया-कलापों में अन्तर समझते हुए कर लेना चाहिए। दो जगह की या कई प्रकार की समस्याएँ मस्तिष्क में घूमती रहें तो उसका दुष्परिणाम यह होगा कि हाथ में लिए काम को पूरे समय में, पूरी दिलचस्पी के साथ न किया जा सकेगा। ऐसी दशा में वह वैसी अच्छी तरह न सध सकेगा जैसा कि एकाग्रता के समय वही दिलचस्पी बनाये रहने पर संभव हो सकता है। अन्यत्र की समस्या का हल दफ्तर में बैठकर नहीं हो सकता। उसके लिए अन्यों से परामर्श एवं सम्पर्क बनाना पड़ेगा। ये जिम्मेदारी भरे कार्यालय में बैठकर सम्भव नहीं हो सकती। ऐसी दशा में अनेक प्रकार की चिन्ताओं, समस्याओं, इच्छाओं से मस्तिष्क घिरा रखना किसी भी स्थिति में उपयुक्त नहीं, पर विशेषतया तब तो और भी अधिक जटिल सिद्ध होती है, जब किसी महत्त्वपूर्ण तंत्र की जिम्मेदारियाँ वहन करने को समूचा मनोयोग लगाने की आवश्यकता पड़ रही हो। अच्छे प्रबंधक अपने को ऐसी व्यर्थ की खींचतान में नहीं पड़ने देते।

बढ़ी-चढ़ी भावुकता प्राय: अतिवाद की सीमा छूने लगती है। कल्पनाएँ-योजनाएँ ऐसी बनने लगती हैं, जो व्यवहार में आसानी से नहीं उतारी जा सकतीं। फिर हर महत्त्वपूर्ण कार्य में साथियों से, विज्ञजनों से परामर्श करने की भी आवश्यकता होती है। कल्पना तो आकाश-पाताल की भी की जा सकती है, पर वहाँ तक पहुँचने के लिए न तो साधन होते हैं, न समय, न अनुभव; ऐसी दशा में असंगत स्तर की कल्पनाएँ प्राय: निरर्थक बनकर ही रह जाती हैं। इतने पर भी जब भावुकता की उड़ानें विवेक की मर्यादाएँ तोड़कर हवाई अन्धड़ के साथ उड़ने लगती हैं, तो फिर रंगीन चश्मा पहन लेने जैसी स्थिति हो जाती है। जिस रंग का चश्मा हो, उसी प्रकार की सभी वस्तुएँ दीखने लगती हैं। कभी-कभी ऐसी भली-बुरी, संभव-असम्भव कल्पनाओं का भी दौर आता है कि अपनी सोची हुई बात उचित एवं उपयुक्त लगने लगती हैं। बात यहाँ तक बढ़ जाती है कि उतावली में मनमर्जी के अनुरूप कदम भी उठा लेते हैं।

ऐसी दुर्घटनाएँ युवक-युवतियों के प्रेम प्रसंगों में तो आये दिन होती और पश्चाताप का कारण बनती रहती हैं, पर आश्चर्य तब होता है जब किसी तंत्र के संचालन में भी ऐसी ही घटनाएँ घटित होती देखी जाती हैं। सीमा से अधिक खर्च कर डालना, उधार बाँट देना, चुगली सुनकर अपनी धारणा तदनुरूप बना लेना, वेतन संबंधी महत्त्वाकांक्षाओं को चाहे जिस सीमा तक बढ़ने देना चिन्तन के बचकानेपन का कारण है। मित्रता-शत्रुता के सम्बन्ध में भी ऐसे ही व्यतिरेक होते रहते हैं, जो नहीं होने चाहिए। सामान्य की सीमा में बने रहना ही उचित है। संबंधों को अति घनिष्ठता का या अति उपेक्षा का बना लेना कवि-कलाकारों के लिए उपयुक्त हो सकता है किन्तु प्रबन्धक को तो व्यावहारिकता से ही वास्ता पड़ता है। इसलिए संबंधों की साधना में अतिवाद का समावेश

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं होने देना चाहिए। इसमें किसी कुचक्र की गंध भी सूँघी जा सकती है और उस असामान्यता को देखते हुए सामान्य संबंध वालों की ऐसी ईर्ष्या भी उभर सकती है जो आगे चलकर अनुपयुक्त झंझट अकारण खड़े करे।

चिन्तन, समय, श्रम, मनोयोग, सृजन, प्रयोजन में लगाना चाहिए और उस पक्ष पर अधिक ध्यान देना चाहिए जिससे हाथ में लिए कारोबार को अधिक समृद्ध, अधिक सफल बनाया जा सके। सहयोगियों और सत्परामर्श दाताओं के साथ अधिक सम्पर्क रखना चाहिए। हमें किससे बदला लेना है, कौन अपनी क्या क्षति पहुँचाने वाला है ? इस विषय पर मोटी दृष्टि भर रखनी चाहिए, पर अधिक ध्यान नहीं देना चाहिए। हानि की आशंकाएँ कभी-कभी ही सामने आती हैं, किन्तु सृजन-संवर्धन के संबंध में किया गया चिन्तन ऐसे द्वार खोलता है जिससे अपना गौरव बढ़े और जो काम हाथ में लिया गया है उसमें प्रगति होती रहे। चिन्तन की धारा विधेयात्मक होनी चाहिए। निषेधात्मक पक्ष में सोचते रहने वाले, ओछे व्यक्तियों के साथ सम्बन्ध बढ़ाने वाले पाते तो कुछ नहीं, हानि होने के सरंजाम जुटाते रहते हैं।

परिस्थितियाँ तेजी से बदलती रहती हैं, जिनके साथ ही अपने चिन्तन एवं क्रिया-कलाप को भी बदलना पड़ता है। नई ढंग की, नई सुविधा देने वाली मशीनें बाजार में आ जाने से पुराने ढर्रे को अपनाये रहने वाले पिछड़ जाते हैं। इसलिए समय के साथ चलने में ही भलाई समझी जाती है। लोगों की रुचि और आवश्यकता भी बदलती रहती है, ऐसी दशा में पुराने ढर्रे पर अड़े रहने की अपेक्षा इसी में भलाई है कि समय की माँग के अनुरूप आवश्यक परिवर्तन करते रहा जाय। ऐसे परिवर्तनों में तत्काल खर्चीली व्यवस्था करनी पड़ सकती है, पर उस संदर्भ में किया गया श्रम या खर्च अगले ही दिनों अधिक लाभ देने लगता है। प्रबन्धक में इतनी व्युत्पन्नमति तो होनी ही चाहिए कि चलने वाली प्रतिस्पर्द्धा में अपने कार्य को पिछड़ने न दे और जहाँ परिवर्तन आवश्यक है, वहाँ उसे करते रहने के लिए साथियों को सहमत करता रहे।

कोई भी काम विश्वास, वफादारी और सहयोग के आधार पर चलते और बढ़ते हैं। अपने तंत्र के साथ जुड़े हुए लोगों में यह प्रवृत्तियाँ उत्पन्न करते रहने के लिए आवश्यक प्रशिक्षण देते रहने का प्रयत्न करना चाहिए। भूलों को समझने और समझाने का गुण तो रहना ही चाहिए। इसके बिना खामियों से बचा नहीं जा सकता और गलतियों के कारण जो हानियाँ उठानी पड़ती हैं उससे बचा नहीं जा सकता। इसलिए सूक्ष्म दृष्टि से हर कार्य की समीक्षा करते रहने की जहाँ आवश्यकता है, वहाँ यह भी उचित है कि उत्साह बढ़ाने एवं उत्साहित रखने का वातावरण बना रहे। दोषों के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने पर जितना ध्यान दिया जाना चाहिए उतना ही यह भी आवश्यक है कि गुणों की, पुरुषार्थ की, सद्भावनाओं की प्रशंसा की जाती रहे और वैसा ही बरतने के लिए दूसरों में उत्साह पैदा होता रहे। मन का मुरझा जाना लगभग वैसा ही है जैसा कि शरीर का कमजोर या बीमार हो जाना। इसलिए निकटवर्ती, दूरवर्ती लोगों ने अपने प्रबल-पुरुषार्थ के सहारे जो सफलता अर्जित करके दिखाई हैं, उनकी जानकारी सभी साथियों को मिलती रहे और अधिक कुछ करने की उमंग उठती रहें, ऐसे प्रसंग बताने में भी अभिरुचि रखनी चाहिए। उत्साह भरे वातावरण में जितना अधिक और जितना अच्छा काम बन पड़ता है, उतनी विवशता अनुभव करते हुए अधिक वेतन देने पर भी संभव नहीं हो पाता।

जो काम सामने है उसे कठिन बताने, कठिनाइयों को उजागर करते रहने की अपेक्षा, इस प्रकार का वातवरण बनाना चाहिए जिसमें जो सरल हो वह सरल प्रतीत होता रहे और समझा जाता रहे कि हम लोग मिल-जुलकर इसे आसानी से सम्पन्न कर सकते हैं।

तनाव से जूझना भी एक अनिवार्यता

मनुष्य की इच्छाशक्ति एवं संकल्पबल स्वभावत: इतने प्रबल हैं कि कोई प्रतिकूलता उसे अपने पथ से डिगा नहीं सकती। मानवी काया एवं मस्तिष्क का गठन इतने सामंजस्यपूर्ण ढंग से हुआ है कि सामान्य परिस्थितियों में थोड़ा भी व्यतिक्रम आने पर वह गड़बड़ाता नहीं व अपनी प्रतिरोधी सामर्थ्य, प्रचण्ड संकल्प शक्ति के सहारे जूझते हुए कोई न कोई मार्ग निकाल ही लेता है। एक प्रतिपादन यह भी है कि प्रतिकूलताओं का सामना करते हुए यह सामर्थ्य और भी बढ़ जाती है एवं जीवट, जिजीविषा नाम से जिसे हम जानते हैं, उसका अवलम्बन लेकर वह कभी-कभी असामान्य पुरुषार्थ कर बैठता है। प्रबन्ध व्यवस्था में चूँकि अनुकूलताओं के साथ ही प्रतिकूलताओं का भी सामना करना पड़ता है, उसे अपने प्रसुप्त पड़े इस ऊर्जा स्रोत को जगाना व प्रतिरोधी सामर्थ्य को बढ़ाना ही पड़ता है।

द्वितीय विश्वयुद्ध की एक घटना है। चार लेफ्टीनेन्ट एक जीप से जापानी मोर्चे का निरीक्षण करने जा रहे थे कि दुर्भाग्यवश दुश्मनों के बीच फँस गये। ऊपर से एक और संकट आ पड़ा कि उनकी जीप फिसलकर सड़क के किनारे खन्दक में जा गिरी। चारों ने मनोबल को टूटने नहीं दिया। दोनों ओर से चल रही गोलाबारी के बीच उन्होंने परस्पर निर्णय लिया कि गाड़ी को उलटा जाय व पुन: सड़क पर लाकर वापस लौटा जाय। चारों ने एक-एक पहिया संभाला, पूरी ताकत लगाई एवं कुछ ही क्षणों में जीप को सीधी कर उस पर बैठकर दनदनाते हुए कैम्प वापस लौट आए। मामूली खरोंच के अतिरिक्त किसी को कुछ नहीं हुआ था। कैम्प के बड़े अधिकारियों ने सारा घटनाक्रम सुनकर रुखे स्वर [illegible]

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीप के एक पहिए पर जोर लगाकर उठाने की बात कही। उठाने की बात तो दूर, वे उस भारी पहिए को हिला भी न सके। फिर घटनास्थल पर उनसे क्यों कर ऐसा पराक्रम बन पड़ा कि पूरी जीप को उलटकर सीधी कर वे लौट आए। सर्वोच्च अधिकारी का मत था कि उस समय वे संकट में थे व किसी तरह जान बचाना उनका लक्ष्य था, ऐसे में उनने अपनी सारी ऊर्जा लगा दी जो कि असीम-अनन्त है एवं अपराजेय साहस दिखाते हुए वह कर सके जो सामान्य स्थिति में उनसे नहीं बन पड़ा।

यही है वह ऊर्जा का जखीरा जिसे यदि स्मरण रखा जा सके, समय आने पर जिसका सदुपयोग किया जा सके तो किसी भी उद्दीपन से, प्रतिकूल परिस्थिति से जूझ पाना संभव है। यह तथ्य प्रबंधकों पर पूरी तरह लागू होता है क्योंकि सर्वाधिक तनाव, परिस्थितियों की प्रतिकूलताओं का, मन पर वातावरण के दबाव का उन्हीं को सामना करना पड़ता है। एक अनुमान के अनुसार १० में से ८ प्रबंधक स्तर के व्यक्तियों को तनाव की तीव्रतम स्थिति से गुजरना पड़ता है एवं ऐसा करते हुए वे प्राय: मनोबल खो बैठते हैं, मन:ऊर्जा का भण्डार उनका चुक जाता है एवं प्रतिक्रियास्वरूप उनके मनोरोगी, फिर शारीरिक रोगी होने के अवसर बढ़ जाते हैं। बिरले ही होते हैं, उससे अपनी कार्यक्षमता को दुगुना करते हुए सफलता के शिखर पर जा पहुँचते हैं।

स्ट्रेस या तनाव के बारे में इन दिनों प्रबंध व्यवस्था के प्रसंगों पर काफी विस्तार से चर्चा होने लगी है क्योंकि यह एक ऐसी स्थिति है जो सीधे मानसिक स्वास्थ्य पर एवं इस प्रकार प्रबंधकों की निर्णय क्षमता पर प्रभाव डालती है। यदि निर्णय ही मन की डाँवाडोल स्थिति से प्रभावित होने लगे तो सारी व्यवस्था ही गड़बड़ा जाएगी एवं ग्रुपलीडर की अक्षमता सामने आते ही सारे समूह का मनोबल प्रभावित होगा।

"स्ट्रेस" शब्द पदार्थ विज्ञान से लिया गया है। वहाँ इसका प्रयोग तब होता है जब किसी पदार्थ पर बल, दबाव इस सीमा तक पड़े कि वह खिचाव की चरम सीमा पर पहुँचकर टूटने की स्थिति में आ जाये। जब यही बात मनुष्य पर लागू की जाती है, तो एक तथ्य स्पष्ट होता है कि मनुष्य लौह धातु, लकड़ी या चट्टान नहीं है, वह जीता-जागता सामर्थ्य का पुंज है, ऊर्जा का भाण्डागार है। वह एक स्थिति विशेष तक बिना टूटे तनाव झेल सकता है। किन्तु भावनात्मक दबाव, बाह्य तनाव जब एक सीमा विशेष को लाँघ जाता है, तो या तो मनुष्य टूट जाता है, उस पर तीव्र प्रतिक्रिया होती है अथवा अनुकूल प्रक्रिया द्वारा वह स्वयं को बदली परिस्थिति के अनुरूप ढाल लेता है।

जब भी कोई बाह्य उद्दीपन या वातावरण के असंतुलन का प्रभाव मानव पर पड़ता है तो तुरन्त शरीर में तीन क्रियाएँ होती हैं-पहली अलार्म की स्थिति जिसमें पहले 'शॉक' की स्थिति पैदा होती है, प्रतिरोधी सामर्थ्य कम होती है फिर काउण्टर शॉक जिसमें प्रतिरोधी क्षमता एकदम बढ़ जाती है। शरीर का स्वचालित स्नायु संस्थान सक्रिय हो जाता है। एड्रिनलीन हारमोन का उत्सर्जन बढ़ता है, हृदय की गति भी बढ़ जाती है एवं माँसपेशियाँ कड़ी हो जाती हैं। इस स्थिति के बाद दूसरी स्थिति "स्टेज ऑफ रेजिस्टेन्स" आती है, जिसमें सर्वाधिक अनुकूलन होता है एवं प्रतिरोधी सामर्थ्य बढ़ी हुई ही रहती है। यदि ऐसी स्थिति में वातावरण में विद्यमान स्ट्रेस के लिए उत्तरदायी घटक निष्क्रिय हो जायें तो व्यक्ति का बढ़ा हुआ रेजिस्टेन्स शरीर के लिए लाभदायी व मनोबल बढ़ाने वाला सिद्ध होता है। किन्तु यदि स्ट्रेस बनी रही तो तीसरी स्थिति "स्ट्रेज ऑफ एक्जॉशन" थकान की स्थिति आ जाती है। ऊर्जा समाप्त हो जाती है, आदमी टूटने लगता है, प्रतिरोधी सामर्थ्य गिरती जाती है एवं व्यक्ति के मनोशारीरिक रोगों से ग्रस्त होने के अवसर बढ़ जाते हैं। मनुष्य की यह प्रक्रिया उसके सांस्कृतिक स्तर, मनोवैज्ञानिक बनावट व कई सामाजिक फिल्टर्स से गुजरकर प्राप्त होती है अत: हर मनुष्य में यह तीनों प्रतिक्रियाएँ अलग-अलग ढंग से अभिव्यक्त होती हैं।

हर व्यक्ति के अन्दर एक ऐसा जैविक संतुलन स्थापित है कि जब भी उस पर तनाव को जन्म देने वाले कोई भी घटक प्रभाव डालते हैं तो तुरंत दो प्रतिक्रियाएँ जन्म लेती हैं-फाइट (लड़ो) या फ्लाइट (भाग जाओ)। व्यक्ति की संरचना के अनुरूप एड्रिनलीन हारमोन के उत्सर्जन के कारण ही ये प्रतिक्रियाएँ जन्म लेती हैं। व्यक्ति बहादुर है यदि वह लड़ता है कायर है यदि वह घबराता है एवं बुद्धिमान कहलाता है यदि वह परिस्थितिकीय उद्दीपनों से सामंजस्य बिठा लेता है। यह बात सुनिश्चित है कि स्ट्रेस हर व्यक्ति में उसकी वैयक्तिक विशेषताओं के अनुरूप भिन्न-भिन्न प्रतिक्रियायें उत्पन्न करता है। किसी को संभावित भय ही उद्विग्न बना देता है व किसी में चुनौती से जूझने का भाव पैदा कर देता है। इस प्रकार स्ट्रेस या तनाव की प्रतिक्रिया इस पर निर्भर करती है कि प्रबंधक या व्यक्ति में जूझने की सामर्थ्य कितनी है व उसकी स्वयं की मन:संरचना किस प्रकार की है ?

किसी भी संस्था के सदस्य होने के नाते भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न प्रकार की प्रतिक्रियाएँ तनाव के फलस्वरूप जन्म ले सकती हैं। इन्हें निम्न प्रकार से समझाया जाता है–

(१) इन्टररोलडिस्टेन्स स्ट्रेस- अपनी व्यक्तिगत, पारिवारिक संस्था के मुखिया के नाते भूमिका व सदस्य की भूमिका में टकराव।

(२) रोल स्टेगनेशन स्ट्रेस- अपने वर्तमान स्तर पर रुके रहने की भावना जन्य तनाव।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(३) रोल एक्सपेक्टेशन स्ट्रेस- अपने सहयोगियों, वरिष्ठों व कनिष्ठों की आपस में टकराने वाली माँगों से उत्पन्न तनाव।

(४) रोल इरोजन स्ट्रेस- अपनी भूमिका के गौण हो जाने या किसी और द्वारा श्रेय ले जाने से उत्पन्न तनाव।

(५) पर्सनल इनएडेक्वेसी स्ट्रेस- जो अपेक्षा है उससे अधिक क्रिया-कौशल, योग्यता एवं प्रशिक्षण का अपने अन्दर न होने से जन्मा तनाव।

(६) रोल आइसोलेशन स्ट्रेस-अपनी भूमिका से दूसरों का न जुड़ा होना व स्वयं को अकेला पाने से उत्पन्न तनाव।

(७) रोल ओवरलोड स्ट्रेस- अपनी क्षमता से अधिक काम सिर पर होने से या उसकी अपेक्षा रखे जाने से उत्पन्न तनाव।

(८) सेल्फ रोल डिस्टेन्स स्ट्रेस- अपने आपके बारे में अपनी मान्यता व अपने से की जा रही अपेक्षा के बीच उत्पन्न होने वाली खाई से जन्मा तनाव।

(९) रोल एम्बीग्वीटी स्ट्रेस-अपनी भूमिका का अत्यधिक अस्पष्ट होना व कार्य से अनभिज्ञ होने से जन्मा तनाव।

(१०) रिसोर्स इनएडेक्वेसी स्ट्रेस- जब अपेक्षित संसाधन आवश्यकता के विपरीत कम पड़ने लगें तो इस दबाव से जन्मा तनाव।

जब भी व्यक्ति पर संस्थागत, समाजगत एवं मनोगत दबाव पड़ते हैं, तो तनाव सहने की क्षमता के बावजूद प्रारंभ में तो व्यक्ति अपनी ओर से पूरा अतिरिक्त प्रयास करता है किन्तु तनाव की तीव्रता उसे क्रमशः तोड़ने लगती है, चिन्ताएँ जन्म लेने लगती हैं व अचेतन के स्तर पर पारस्परिक सामंजस्य न बैठ पाने के कारण दवाओं का आश्रय लेने के बावजूद विक्षोभों का सिलसिला बढ़ता ही चला जाता है । धीरे-धीरे मनोयोग में कमी, निर्णय लेने की क्षमता में पैनेपन का अभाव, समय-समय पर काम से अनुपस्थिति, समूहगत कामों में दिलचस्पी का अभाव तथा कभी-कभी उन्माद या उत्तेजना की मनःस्थिति पैदा हो जाती है। शारीरिक लक्षण सिर दर्द, नींद में कमी, भूख चले जाना, अपच, छाती में दर्द व तुनक-मिजाजी स्वभाव जैसे मनो-शारीरिक विकार जन्म लेते हैं।

असामंजस्य की स्थिति बढ़ते-बढ़ते एक चरमसीमा यह भी आ सकती है कि व्यक्ति बुरी तरह टूट जाता है। नींद में चलना, संक्षोभ-विक्षोभ जैसे भावनात्मक मनोविकार तथा मल्टीपल पर्सनालिटी जैसे मनोरोग जन्म लेने लगते हैं। इसके अतिरिक्त कभी-कभी तनाव से दूर भागने की स्थिति में व्यक्ति 'एस्केप एक्टीविटीज' या 'एस्केप मेण्टिलिटीज' का सहारा लेता हुआ भी देखा गया है । उनमें या तो वह अत्यधिक आहार लेने लगता है अथवा धूम्रपान करने लगता है। मन पर इनका प्रभाव नींद के अस्त-व्यस्त होने, पेट में अम्ल का रस स्राव बढ़ने, तनावजन्य सिर दर्द, उच्च रक्त-चाप, स्थायी रूप से पीठ में दर्द के रूप में होता पाया गया है। यह एक ऐसी स्थिति है जो स्पष्ट रूप से चिकित्सा की सहायता चाहती है व यदि यह सही समय पर मिल जाए तो कभी-कभी तनावजन्य शारीरिक रोगों को रोका जा सकता है।

तनाव की एक स्थिति ऐसी वर्णित की गयी है जिसमें व्यक्ति अपनी क्षमता व वातावरण के दबाव के कारण हार मान बैठता है व स्थायी रूप से रोगी हो जाता है। उसे बर्नआउट स्ट्रेस सिण्ड्रोम अथवा 'बॉस' नाम से जाना जाता है। यह तनाव-उद्वेगजन्य एक ऐसी स्थिति है जिसमें कार्य करने से उत्पन्न दबाव इस सीमा तक बढ़ जाता है कि व्यक्ति बुरी तरह कुण्ठित हो टूट जाता है। इसकी चार प्रतिक्रियायें होती हैं। अपने अन्दर छिपे ऊर्जा स्रोत का क्रमशः समाप्त होते चले जाना, व्याधियों से जूझने हेतु जीवनी-शक्ति का क्षय, बढ़ता हुआ असंतोष एवं निराशा का भाव, कार्य में अक्षमता एवं बहाने के रूप में काम से अनुपस्थिति। इस सिण्ड्रोम की पाँच क्रमिक अवस्थाएँ गिनाई गयी हैं। हनीमून, फ्यूएल शार्टेज, क्रानिक सिम्पटम्स, क्राइसिस तथा हिटिंग दवाल।

हनीमून की स्थिति में प्रारंभ में मनुष्य के अन्दर एक नया उत्साह रहता है। वह चुनौती स्वीकार करता तथा ऐसा करते-करते काम में जुट जाता है। क्रमशः शक्ति भण्डार चुक जाता है। फ्यूएल शार्टेज अवस्था में वह पाता है कि अपनी ऊर्जा सीमित है व कार्य का दबाव अधिक। सुरक्षित भण्डार भी चुकने लगता है। थकान,मतिभ्रम, नौकरी में असंतोष, अक्षमता, नींद में गड़बड़ी जैसी प्रतिक्रियाएँ जन्म लेने लगती हैं।

क्रानिक सिम्पटम की स्थिति वह है, जिसमें तनाव जन्य शारीरिक लक्षण तेजी से उभर आते हैं। ये हैं-स्थायी थकान, हृदय और अपच, आँतों के चिढ़ने से पैदा हुई इरिटेबल बॉवेल, अत्यधिक अम्लस्राव से पैदा हुआ पेप्टिक अल्सर, दमा, माँसपेशियों में ऐंठन, अकारण क्रोध तथा अवसाद।

क्राइसिस की स्थिति तब आती है, जब तनाव को पैदा करने वाले घटक वातावरण में विद्यमान रहते हैं। अत्यधिक निराशा भाव, निषेधात्मक चिन्तन व स्वयं पर संदेह की वृत्ति पनपने लगती है। अन्तिम स्थिति है 'हिटिंग द वाल,' जिस तरह एक मेराथन दौड़ लगाने वाला कुछ किलोमीटर रह जाने पर लक्ष्य को सामने मानते हुए पूरी ताकत से दौड़ लगाता व अंततः थक कर गिर जाता है, प्रबंधक भी एक अंतिम छलाँग लगाता एवं दीवार से टकराकर गिर पड़ता है।

बॉस से विपरीत एक रस्ट आउट स्ट्रेस सिण्ड्रोम (रॉस) भी होती है, जिसमें व्यक्ति को क्षमता के अनुरूप काम न मिलने पर उसे जंग लगने लगती है। व्यक्ति की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गुणात्मक क्षमतायें प्रभावित होती हैं। इससे बचने का एक ही तरीका है कि स्वयं चुनौती स्वीकारी जाय, अपने आपको अकेलेपन से बचाया जाय तथा नई से नई जानकारियों के संपर्क में रहा जाय।

वस्तुत: प्रबंधक का मानसिक स्वास्थ्य ठीक रहना एक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है। उसे समय-समय पर बताया जाना चाहिए कि भावनात्मक संतुलन, स्थितप्रज्ञ की स्थिति बनाये रखना उसके लिए बहुत जरूरी है। अपने आस-पास उभरने वाली तनावजन्य परिस्थितियों से जूझने के लिए मनोबल बढ़ाने का भी सतत अभ्यास करना चाहिए। छोटी-छोटी चुनौतियाँ लेकर उन्हें साथियों के सहयोग से पूरे करते रहना चाहिए। काम को हल्के-फुल्के ढंग से, तनावरहित हो प्रसन्नतापूर्वक निपटाने की आदत डालनी चाहिए। संभावित परिणामों का पूर्वानुमान लगाने की अंत:दृष्टि व दूरदृष्टि विकसित करनी चाहिए। जो ऐसा करते हैं, वे कभी भी मनोरोगी नहीं होते।

ध्यान व शिथिलीकरण ऐसी प्रतिक्रियायें हैं जिनका नियमित अभ्यास व्यक्ति को वैचारिक तनाव से मुक्त करता है। ध्यान एक प्रकार की "मेण्टल फास्टिंग" है, जिसमें मन से फालतू विचारों का कचरा-बुहारा जाता है एवं विधेयात्मक चिन्तन में तन्मय होने का अभ्यास किया जाता है। मन को विश्राम मिलने से तनाव काफी सीमा तक कम हो जाता है। विधेयात्मक, ग्रन्थिरहित दृष्टिकोण विकसित होता है एवं व्यक्ति मानसिक रूप से तनाव झेलने में समर्थ हो जाता है। अन्यान्य गुणों के अतिरिक्त यह एक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है कि प्रबंधक की मन:क्षमता उच्चस्तर की हो ताकि उसके द्वारा लिए गये निर्णय सही हों। यदि चिन्तन की विधि सही व सुनियोजित है तो निश्चित ही प्रबंधक की गरिमा बढ़ेगी ही।

अधिक सतर्कताओं का समुच्चय

एक ही समय में अनेक विषयों का चिन्तन करना, उन्हें क्रमबद्ध रूप से हाथ में लेने की योजना बना लेना तो ठीक है, पर साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिए कि मस्तिष्क जैसी संरचना शरीर की नहीं है। उससे एक समय में एक ही काम बन पड़ता है। जो लोग हड़बड़ी में एक ही समय में कई काम एक साथ करना चाहते हैं, वे उन सभी को अस्त-व्यस्त कर देते हैं। समय तालिका बनाना और एक के बाद दूसरा काम करते जाना सुविधाजनक रहता है। यह दूसरी बात है कि कई लोगों से कई काम कराने हों, तो उन सभी का ऐसा मार्गदर्शन करते रहा जाय, जिससे सभी योजनाबद्ध कामों में लगे रहें और सामयिक आवश्यकतायें यथासंभव पूरी होती रहें।

कारखानों में कर्मचारियों को वेतन जैसी सुविधाओं का स्मरण रखते हुए यथासमय निर्धारित काम कर देने के लिए बाधित किया जा सकता है। अवज्ञा करने पर उनकी नौकरी जाने तथा दूसरे प्रकार की पदोन्नति रुक जाने जैसा भय बना रहता है। इसलिए उस वर्ग के साथियों को मीठे शब्दों में किन्तु सौंपा काम ठीक तरह करने के लिए दबाव डाला जा सकता है। किन्तु जब सार्वजनिक प्रयोजनों के लिए, कर्त्तव्य पालन के लिए प्रोत्साहित करने की बात सामने आती है तब प्रसंग दूसरा ही बन जाता है। किसी संगठन या पार्टी के सदस्य मूलत: सेवा-भावना साथ लेकर आये होते हैं। इसका उन्हें गर्व रहता है। पर साथ ही यह व्यवधान भी रहता है कि ऐसी शृंखला के अधिकांश घटकों में अहंकार तृप्ति की महत्त्वाकांक्षाओं की भी कमी नहीं रहती। वे अपने को प्रमुख पद पर देखना चाहते हैं और साथ ही इतना श्रेय चाहते हैं जो दूसरों के लिए कार्यों के बदले भी उन्हीं को प्रशंसा का पात्र ठहराया जाये। यह पेचीदा स्थिति है। इसे सुलझाने के लिए मनो-वैज्ञानिक और भावनात्मक स्तर का कौशल चाहिए। अन्यथा साथियों का इसी अहमन्यता की चट्टान से टकराकर असहयोग करने लग जाना, विरोधी तक बन जाना संभव है। इन्हीं छोटे कारणों से अच्छे-भले संगठन बिखर जाते हैं और कल तक के सहयोगी दूसरे दिन विरोध करने पर उतारू हो जाते हैं। अच्छे-भले संगठन इसी छोटे आधार पर बिगड़ते और बिखरते देखे गये हैं।

बिना घनिष्ठता-निकटता का विचार किये जिनने कुछ प्रशंसनीय कार्य किये हैं, आदर्शवादी सद्गुणों के परिचय दिये हैं, उनकी प्रशंसा समय-समय पर करते रहना चाहिए। इससे अधिक प्रयास करने का प्रोत्साहन मिलता है, पर साथ ही यह भी ध्यान रखा जाय कि अवगुणों की, भूलों की चर्चा मात्र एकान्त में और सुझावपरक मूड में ही करनी चाहिए अन्यथा लोग उसे निन्दा मानने और शत्रुता करने लगेंगे। बड़े परिवार का बिना विग्रह के चलते रहना बड़ा काम है। उससे भी बड़ा किसी टीम, मण्डली, पार्टी में सौमनस्य बनाये रहना है। इसमें संबंधों, मान्यताओं और भावनाओं का विशेष ध्यान रखना पड़ता है और साथ ही तलवार की धार पर चलने जैसा यह व्यवहार भी निवाहना पड़ता है कि साँप मरे न लाठी टूटे की बात बनती रहे। दोष-दुर्गुणों को अनदेखा करने से लेकर सुधार करने तक का काम इस कुशलता से करना चाहिए कि मनोमालिन्य न उभरने पाये। सौजन्य का निर्वाह और लोगों की आकांक्षाओं का यथासंभव तालमेल बिठाते रहने वाले दूरदर्शी और धैर्यवान ही किसी बडे समुदाय को संगठित रख पाते हैं।

जिनके बीच घनिष्ठता होती है। पड़ौस में बसना या आदान-प्रदान का सिलसिला चलता रहता है। उनके स्त्री-बच्चे भी एक-दूसरे के घर आने-जाने लगते हैं। यह दोनों ही वर्ग समझदारी की अपेक्षा भावुकता के प्रवाह में अधिक बहते देखे गये हैं। कोई अप्रसंग आते ही तुनक जाते हैं और लड़ाई-झगड़े के मूड में आ जाते हैं। बात बढ़ जाने पर सूचना बड़ों तक पहुँचती है। उनने भी यदि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आवेश का परिचय दिया और अपने निकटवर्ती की हिमायत की तो निश्चय ही उसका अर्थ दूसरे पक्ष के साथ द्वेष का प्रदर्शन माना जायगा और नासमझों की तुलना में दोनों बड़ों के बीच खाई पैदा कर देगा। ऐसी खाई जो पारिवारिक संबंध भी खराब कर दे और मेलजोल से जो काम चल रहा था, उसमें भारी बाधा खड़ी हो जाय। स्त्री-बच्चे तो कुछ ही समय में झगड़े को भुलाकर एक हो जाते हैं, पर बड़ों के मनों में पड़ी हुई खाई मुद्दतों बनी रहती है। यह स्थिति नहीं आने देनी चाहिए। झगड़े में भूल प्रायः दोनों पक्षों की होती है। किसी की कम किसी की अधिक। एक हाथ से ताली नहीं बजती। अतएव यदि कुछ डाटना-डपटना या समझाना हो तो अपने ही निकटवर्ती प्रियजनों को समझाना चाहिए। सामने वाले को धमकाना नहीं चाहिए। यह कार्य उनके संरक्षकों पर ही समयानुसार करने के लिए छोड़ देना चाहिए।

लड़ाई में अपनों की हिमायत की अक्सर बहुत बुरी प्रतिक्रिया होती है। सामने वाले अनुमान लगाने लगते हैं कि अपने की हिमायत की गई और बिराने पर झूठा दोषारोपण किया गया। वस्तुस्थिति कुछ भी क्यों न हो, पर आमतौर से झगड़े का बीच-बचाव करने की अपेक्षा अपने की हिमायत करने पर पूरा महाभारत मच जाता है। दूसरे पक्ष वाले भी हिमायतियों को खोज लेते हैं और बात बढ़कर बतंगड़ बन जाती है। साम्प्रदायिक व जातीय दंगे प्रायः इसी आधार पर होते रहते हैं। ऐसे नाजुक मामलों में असाधारण समझदारी का परिचय देने की आवश्यकता है। अपने पक्ष वालों को ही यदि डपट दिया जाय, तो सामने वाले के मन में भी यह सूझ उपजती है कि वह अपने साथियों को समझाये-धमकाये। शान्ति स्थापित करने का यही मार्ग है। झंझट भरी घड़ियों को इसी प्रकार टाला जाता है। दूसरे पक्ष की गलती होने पर भी यथासंभव यही प्रयत्न होना चाहिए कि कुसमय को टाल देना, किसी बड़ी हानि से बच जाने की समझ यही है। विग्रह में दोनों ही पक्ष घाटे में रहते हैं भले ही गलती किसी एक पक्ष की ही क्यों न हो ?

समूह संचालन की प्रमुख भूमिका विग्रह होने को बचा लेने और सहयोग के, मुस्तैदी के तत्त्व उभारने की होती है। जो जिस संदर्भ में अनभिज्ञ है, उसकी कच्चाई, कमजोरी को भी ध्यान में रखने की, तदनुरूप काम सौंपने की, अनुभव अभिवर्धन की आवश्यकता पड़ती है। हर किसी में कुछ दोष पाये जाते हैं। वे छोटे एवं थोड़े होने पर भी मौके पर उभरने पर अनर्थ खड़े कर देते हैं। ऐसी समस्याओं को दूरदर्शी दृष्टिकोण अपनाकर समझते रहने वाले अपनी उपयुक्तता और प्रतिष्ठा अक्षुण्ण बनाये रखते हैं। अनौचित्य को अनदेखा तो नहीं करना चाहिए, पर सौ टंच खरा होने की आशा भी किसी से नहीं करनी चाहिए। चतुरता इस बात में है कि जैसे कुछ भी साथी-सहयोगी या साधन उपलब्ध हैं, यदि उन्हें बदला नहीं जा सकता तो किसी प्रकार कामचलाऊ नीति अपनाने से भी गाड़ी आगे धकेले जा सकने की स्थिति बनी रहती है।

कारखानों में अक्सर टूट-फूट, चोरी-बर्बादी होती रहती है और उसके कारण ऐसी हानि होती है जिनका पूर्व अनुमान लगाया नहीं गया था। यदि उन सम्भावनाओं की समय से पूर्व आशंका या कल्पना कर ली गई होती, तो वे उपाय सोचे जा सकते थे जिनके आधार पर काम हर्ज होने की नौबत नहीं आती । आकस्मिक या अप्रत्याशित कहकर विवशता तो प्रकट कर दी जाती है, पर यह ध्यान नहीं रखा जाता कि काम के हर पहलू पर ध्यान रखना कितना अधिक आवश्यक है। मात्र गाड़ी को किसी प्रकार ढकेलते रहना ही प्रबंधक की जिम्मेदारी नहीं होती। उसे लाभ की ही तरह हानि का भी ध्यान रखना चाहिए।

जिस पर सेल टैक्स, इनकम टैक्स, सुपर टैक्स, मृत्यु टैक्स आदि लगते हैं, उन्हें तो हिसाब-किताब के बही-खाते रखने ही पड़ते हैं। न रखने पर उन्हें दण्ड भुगतना पड़ता है। जिनकी आजीविका सीमित है और सरकार को हिसाब दिखाना पड़ता है, उन्हें भी निजी जानकारी के लिए, गति ऊपर की ओर उठ रही है या नीचे गिर रही है, यह जानने के लिए अनुमानित नहीं प्रामाणिक आकलन रखना पड़ता है, ताकि वस्तुस्थिति का पता चलता रहे। गिरावट का सुधार और प्रगति का अभिवर्धन कर सकना संभव हो सके। हिसाब-किताब के अतिरिक्त और भी सामाजिक, पारिवारिक, क्रियाकलाप चल रहे हों, संगठनात्मक प्रयास बन पड़ रहे हों, स्कूल जैसे शिक्षण संस्थानों की गतिविधियों का नियोजन हो रहा हो, उनकी भी प्रगति-अवगति, स्थिरता अथवा संभावित अवरोधों का पता चल सके। इस जानकारी के अभाव में काम का ढर्रा तो चलता रहता है और पैसा भी आता जाता दीखता है, पर यह पता नहीं चल पाता कि अगले दिनों किन सुविधाओं की आशा है। वर्तमान योजनाओं में और कुछ जोड़ा या घटाया जा सकता है। इस जानकारी के अभाव में चलती दीखने वाली गाड़ी एकत्रित होती रहने वाली अनुपयुक्तताओं के कारण कभी भी चरमरा कर बैठ सकती है और कल तक जो साहूकार बने हुए थे, वे दूसरे दिन दिवालिया हो सकते हैं।

ऐसे कई उदाहरण देखने को मिलते रहते हैं, जिसमें उधारी देन-लेन का हिसाब नहीं रखा गया। घाटे और लाभ का अनुमान नहीं लगाया गया। संतोष इतने भर से ही कर लिया गया कि गाड़ी किसी प्रकार भगवान भरोसे चल रही है। इस प्रकार जो अपने को अंधेरे में रखे रहते हैं, बार-बार वस्तुस्थिति का आकलन नहीं करते और उतार-चढ़ावों को ध्यान में रखते हुए उनमें सामाजिक परिवर्तन नहीं करते, उन्हें किसी भी दिन अप्रत्याशित समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है और ऐसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दलदल में फँसना पड़ सकता है, जिससे उबरना कठिन हो जाय और बनी प्रतिष्ठा को हाथ से गँवाना पड़े। अस्तु, जहाँ लेखबद्ध रूप से वस्तुस्थिति का आकलन आवश्यक है वहाँ विचारशीलों के परामर्श से यह निर्धारण करते रहना भी आवश्यक है कि वर्तमान को देखते हुए अधिक अच्छा सुयोग बनने के लिए अगले दिनों किन सुधार-परिवर्तनों की आवश्यकता है और उन योजनाओं को किस क्रम से आगे बढ़ाया जाय, यह निश्चय करने में विलम्ब नहीं करना चाहिए।

काम वितरण करते समय यह ध्यान में रखना चाहिए कि कौन व्यक्ति किस योग्यता का है और उसे किस सीमा तक काम सौंपा जा सकता है। इसका निर्धारण न हो पाने पर प्रिय लगने वाले व्यक्तियों में अति विश्वास के कारण कोई बड़ा काम अति मात्रा में सौंप दिया जाता है। फलत: अनुभवहीनता और रुचि से बाहर होने के कारण वह उसे ठीक तरह कर नहीं पाता और अन्तत: काम सम्पन्न होने के स्थान पर पहले से भी अधिक बिगड़ जाता है। तब परिवर्तन करने में बहुत देरी हो गई होती है और जिसे विश्वास में लिया गया था, उससे भी कटुता बढ़ जाती है। ऐसी दशा में उचित यही है कि कोई अधिक महत्त्वपूर्ण काम सामने आ जाने पर अपने या पराये में से किसी भी योग्य व्यक्ति को उसे सौंपा जाना चाहिए । सम्पर्क क्षेत्र में ही ऐसे व्यक्ति भी खोजे जा सकते हैं, जो कि अपनी योग्यता का पैसा तो लेते हैं, पर काम समय पर और सही करके नहीं देते हैं। अयोग्य अपनों की अपेक्षा सुयोग्य परायों को महत्त्व देना कुछ अधिक बुरा नहीं है।

किसी पुराने व्यक्ति को हटाना हो, तो यह कार्य इतनी सरलता और मधुरता के साथ सम्पन्न किया जाना चाहिए कि कटुता कम से कम बढ़े। पुराने व्यक्तियों को रुष्ट करके उन्हें विरोधी बना लेना बुद्धिमत्ता नहीं है। इससे तो अच्छा यह है कि जिनके कारण गड़बड़ी बढ़ती है, उनका काम बदल दिया जाय।

झंझटों से यथासंभव बचना ही चाहिए, ताकि उस विग्रह को निपटाने वाली शक्ति को बचाकर किसी ऐसे प्रयोजन में लगाया जा सके, जो सृजनात्मक प्रयोजन को पूरा कर सके। साधारण नीति यही होनी चाहिए। कोई असाधारण संकट सामने आ खड़ा हो तो ही लड़ने के मूड में आना चाहिए। अपनी इमेज लड़ाकू के रूप में बनाने की अपेक्षा समझदार और सज्जन की बना लेना कहीं अधिक अच्छा है।

प्रबंधक को ऐसा वातावरण नहीं बनने देना चाहिए जिससे हाथ में ली हुई योजना कठिन मालूम पड़े और करने वालों की हिम्मत टूटने लगे। यदि ऐसी कुछ अड़चन हो तो अपनी सीमा का ध्यान रखते हुए काम को थोड़ा सरल और सीमित कर लेना चाहिए। योजना को क्रमिक विकास के अन्तर्गत लम्बा कर लेना चाहिए। मनोबल हर हालत में बना ही रहना चाहिए। प्रबंधक यदि अपनी जिम्मेदारी के काम को सही रीति से निपटा लेने पर विश्वास रखेगा तो यह स्वाभाविक ही है कि साथियों का भी मनोबल बढ़ा रहे और उसके सहारे बढ़े-चढ़े काम भी किसी प्रकार सरलतापूर्वक सम्पन्न हो जायें। जहाँ भी बढ़े-चढ़े कामों में हाथ डाला जा रहा हो, वहाँ यह भी आवश्यक है कि उसके अनुरूप साथी-सहयोगी एवं साधन, उपकरण, पूँजी आदि की व्यवस्था बनाने में भी ढील न की जाय।

उधार देन-लेन यों इन दिनों एक साधारण व्यवहार बन गया है। व्यवस्था में उसे एक साधारण प्रचलन मान लिया गया है। फिर भी उसमें जोखिम अनेकों हैं। कभी-कभी तो मजबूरीवश भी वापिसी कठिन हो जाती है, पर कितनों की नीति ही यही रहती है कि कुछ दिन व्यवहार सही रखकर बाद में बड़ी रकम का कर्ज चढ़ जाने पर आँखें दिखाना शुरू कर दें और किसी अन्य को उसी अनुदार नीति का अपना व्यवहारी भी बना लें। बाद में उससे भी मुँह मोड़कर किसी तीसरे के साथ संबंध जोड़ें। ऐसी दशा में उधार देकर अधिक बिक्री बढ़ जाने की बात सोचकर जो इस झंझट में पड़ जाते हैं, वे आमतौर से घाटे में ही रहते हैं। कम लाभ लेकर माल बेचने की नीति ऐसी है जिसमें रकम डूबने और ग्राहक हाथ से निकल जाने की जोखिम नहीं रहती। जहाँ तक हो सके, कारोबार इसी नीति के अनुसार चलाना चाहिए। यदि उधार की मजबूरी आ पड़े तो उसे मन में यही समझ लेना चाहिए कि वापिस लौटने की संभावना आधी-चौथाई ही रह गई। उतना अपने में साहस हो तो ही उधारी की बात सोचनी चाहिए। अन्यथा थोड़ा काम करना, थोड़े में सन्तोष करना अन्तत: बिना जोखिम का और बिना सिर दर्द का सिद्ध होता है।

आमदनी की तुलना में खर्च बढ़ तो नहीं रहा है। इस संबंध में सदा सतर्कता रखनी चाहिए। पूँजी घटती रहे और किसी प्रकार पहिया लुढ़कता रहे तो उस असावधानी को अपनाये रहने वाला व्यक्ति कुछ दिन में अपना व्यवसाय और सम्मान दोनों ही गँवा बैठता है।

प्रबंध क्षमता जितनी महत्त्वपूर्ण एवं मूल्यवान है, उतनी ही अधिक सावधानी, तन्मयता, अनुभव सम्पादन, प्रतिस्पर्द्धा, चुनाव में सावधानी, वहन करते समय समुचित सावधानी एवं मनोबल की दृष्टि से सक्षम होने की आवश्यकता पड़ती है। इसका अभ्यास अपने व्यक्तिगत जीवनयापन और परिवार की सुव्यवस्था बनाने की छोटी-छोटी जिम्मेदारियों को भली प्रकार पूरी करने के साथ आरम्भ करना चाहिए। आगे चलकर यही अनुभव बड़े कामों को बड़े रूप में सम्पन्न करने में भी सहायक बन जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आकृति देखकर मनुष्य की पहचान

चेहरा आन्तरिक स्थिति का दर्पण है

अपने रोजमर्रा के जीवन में जितने लोगों के सम्पर्क में आता है, उनकी आकृति देखकर वह इसका बहुत कुछ अन्दाज लगा लेता है कि इनमें से कौन किस ढंग का है, उसका स्वभाव, चाल-चलन और चरित्र कैसा है ? यह अन्दाज बहुत अंशों में सही उतरता है। यद्यपि कभी-कभी बनावट के चकाचौंध में धोखा भी हो जाता है, पर अधिकांश में शक्ल-सूरत देखकर यह जान लिया जाता है कि यह आदमी किस मिट्टी से बना है ? मनुष्यों को पहचानने की कला में जो जितना ही प्रवीण होता है, वह अपने व्यवसाय में उतना अधिक निश्चिन्त रहता है, जैसे आदमी से तैसी ही आशा रखने का मार्ग मिल जाय तो ठगे जाने का भय कम रहता है और लाभदायक सुविधाएँ सहज ही प्राप्त हो जाती हैं।

बहुत पूर्वकाल से इस विद्या की ढूँढ़-खोज जारी है, अनेक अन्वेषकों ने इस दिशा में बहुत खोज की है और गोता लगाने पर जो रत्न उन्हें मिले हैं, उनको सर्व-साधारण के सामने प्रकट किया है। महाभारत एवं वेद-पुराण और कादम्बरी आदि ग्रन्थों से यह पता चलता है कि इस विद्या से भारतवासी पुराने समय से परिचित हैं। वाल्मीक रामायण के युद्धकाण्ड में कथा है कि जब त्रिजटा राक्षसी ने सीता को राम की मृत्यु हो जाने का झूठा संवाद सुनाया तो सीता ने उत्तर दिया कि—"हे त्रिजटा ! मेरे पाँवों में पद्मों के चिह्न हैं, जिनसे पति के साथ राज्याभिषेक होना प्रकट होता है, मेरे केश पतले, समानाकार तथा काले हैं, भौंहें खुली हुई, जंघाएँ रोम रहित तथा गोल, दाँत जुड़े हुए कुन्दकली से, नख गोल चिकने, स्तन मिले हुए, मोटे, रोम कोमल, रंग उज्ज्वल है, इसलिए पंडितों ने मुझे शुभ लक्षण वाली सौभाग्यशालिनी कहा है, विधवाओं के से कुलक्षण भी मुझ में नहीं हैं फिर क्या श्री रामजी के न होने से यह सब लक्षण मिथ्या हो जायेंगे ?" इस कथन से विदित होता है कि त्रेता में आकृति विज्ञान की जानकारी स्त्रियों को भी थी।

आर्यों से यह विद्या चीन, तिब्बत, ईरान, मिश्र, यूनान आदि में फैली। पीछे अन्य देशों में भी इसका प्रचार हुआ। ईसा के २५० वर्ष पूर्व टालेमी के दरबार में एक मेलाम्पस नामक विद्वान रहा करता था, उसने इस विषय पर एक अच्छी पुस्तक लिखी थी। वर्तमान समय में यूरोप अमेरिका के वैज्ञानिक रक्त एवं पसीने की कुछ बूँदों का रासायनिक विश्लेषण करके मनुष्य के स्वभाव तथा चरित्र के बारे में बहुत कुछ रहस्योद्घाटन करने में सफल हो रहे हैं। कीरो (Cheiro) प्रभृति विद्वानों ने तो 'नये' सिरे से इस सम्बन्ध में गहरा अनुसन्धान करके अपने जो अनुभव प्रकाशित किये हैं उनसे एक प्रकार की हलचल मच गई है। आकृति देखकर मनुष्य को पहचान करने की विद्या अब इतनी सर्वांगपूर्ण होती जा रही है कि लोगों का भीतरी परिचय कुछ ही क्षण में प्राप्त कर लेना आश्चर्यजनक रीति से सरल एवं सम्भव होने लगा है।

प्रकृति ने थोड़ा-बहुत इस विद्या का ज्ञान हर मनुष्य को दिया है। प्रायः देखा जाता है कि छोटे बच्चे भी लोगों की शक्ल-सूरत देखकर कुछ धारणा बनाते हैं और उसी के अनुसार बर्ताव करते हैं। साधारणतया हर मनुष्य किसी दूसरे पर दृष्टि डालकर यह अन्दाज लगाता है कि यह विश्वास करने योग्य है या इससे बचकर दूर रहना चाहिए। भले ही आप न जाने कि यह विद्या हमें आती है पर प्राकृतिक नियमों के अनुसार मनुष्य को जो मानसिक शक्तियाँ प्राप्त हुई हैं उनमें मनुष्य को पहचानने की विद्या भी एक है। यह सहज ज्ञान (इनस्टिंक्ट) हर एक के हिस्से में आया है, यह दूसरी बात है कि किसी के पास उसकी मात्रा कम हो, किसी के पास अधिक। जिस प्रकार व्यायाम से बल, पढ़ने से विद्या और प्रयत्न से बुद्धि बढ़ती है, उसी प्रकार अभ्यास से इस ज्ञान की भी उन्नति हो सकती है और उसके आधार पर बहुत कुछ वास्तविकता की जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

अब हम इस प्रसंग पर आते हैं कि किस प्रकार आकृति देखकर दूसरों की पहिचान की जा सकती है ? आप किसी व्यक्ति के चेहरे की बनावट पर, नेत्रों में झलकने वाले भावों पर, पहनाव-उढ़ाव पर, चाल-ढाल पर, तौर-तरीके पर बहुत गम्भीरतापूर्वक इस इच्छा के साथ दृष्टि डालिए कि यह व्यक्ति किस स्वभाव का है। यदि मन एकाग्र और स्थिर होगा तो आप देखेंगे कि आपके मन में एक प्रकार की धारणा जमती है। इसी प्रकार दूसरे व्यक्ति के ऊपर दृष्टिपात कीजिए और उस चित्र में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धारणा जमने दीजिए। इन दोनों धारणाओं का मुकाबला करिए और देखिए, कि किन-किन लक्षणों के कारण कौन-कौन-से संस्कार जमे हैं। तुलनात्मक रीति से इसी प्रकार अनेक व्यक्तियों को देखिए उनके लक्षणों पर विचार कीजिए और मन पर जो छाप पड़ती है उसका विश्लेषण कीजिए। यह अन्वेषण और अभ्यास यदि आप कुछ दिन लगातार जारी रखें तो इस विद्या के सम्बन्ध में बहुत कुछ जानकारी अपने आप प्राप्त होती जायेगी और अनुभव बढ़ता जायेगा।

इस पुस्तक में बताया है कोई दो प्राणी एक-सी आकृति के नहीं होते, सबकी आकृति में कुछ न कुछ अन्तर अवश्य पाया जाता है, कुदरत ने अपनी कारीगरी हर एक प्राणी पर अलग-अलग दर्शाई है, एक साँचे में सबको ढालने की बेगार नहीं भुगती है, वरन् हर एक मूर्ति को निराले तर्ज-तरीके के साथ गढ़ा है। इस विभिन्नता का कारण यह उदाहरण तो नहीं बताया जा सकता है कि इस प्रकार के अंग-प्रत्यंगों वाले इस प्रकार के होते हैं, क्योंकि जिस आदमी की आकृति का उदाहरण दिया जायेगा, उसकी जोड़ी का दूसरा आदमी सृष्टि में मिल सकना कठिन है। फिर भी कुछ मोटी-मोटी रूप-रेखाएँ बताई जा सकती हैं, कुछ ऐसा श्रेणी विभाजन किया जा सकता है कि अमुक ढाँचे की अमुक आकृति हो तो उसका वह परिणाम होगा।

केवल अंग-प्रत्यंगों की बनावट से ही ठीक और अन्तिम निर्णय पर नहीं पहुँचा जा सकता। किसी व्यक्ति का लाक्षणिक परीक्षण करने के लिए उसकी चाल-ढाल, भाव-भंगी, मुख-मुद्रा, तौर-तरीका, बात करने, उठने-बैठने का ढंग आदि बातों पर भी विचार करना होगा। जिस प्रकार गंध सूँघकर आप थैले में बन्द रखी हुई मिर्च, हींग, कपूर इलायची आदि को बिना देखे भी जान लेते हैं उसी प्रकार शरीर के बाहरी भागों पर जो लक्षण बिखरे पड़े हैं, उन्हें देखकर यह भी जान सकते हैं कि इस मनुष्य के विचार, स्वभाव तथा कार्य किस प्रकार के होंगे। यहाँ भ्रम में पड़ने की कोई बात नहीं है।

आकृति की बनावट के कारण स्वभाव नहीं बनता, वरन् स्वभाव के कारण आकृति का निर्माण होता है। स्थूल शरीर की एक धुँधली-सी छाया हर वक्त साथ-साथ फिरा करती है, सूक्ष्म शरीर की भी एक छाया है, जो जरा गहराई के साथ दृष्टि डालने से लोगों की आकृति पर उड़ती हुई दिखायी देती है। पेट में जो कुछ भरा है, वह बाह्य लक्षणों से प्रकट हुए बिना नहीं रहता। प्याज पेट में भीतर पहुँच जाय, तो भी उसकी गन्ध मुँह में आती रहती है, इसी प्रकार आन्तरिक विचार और व्यवहारों की छाया चेहरे पर दिखाई देने लगती है। यही कारण है कि आमतौर पर भले-बुरे की पहचान आसानी से हो सकती है, धोखा खाने या भ्रम में पड़ने के अवसर तो कभी-कभी ही सामने आते हैं।

मनुष्य के कार्य आमतौर से उसके विचारों के परिणाम होते हैं। यह विचार आन्तरिक विश्वासों का परिणाम होते हैं। दूसरे शब्दों में इसी बात को यों कहा जा सकता है कि आन्तरिक भावनाओं की प्रेरणा से ही विचार और कार्यों की उत्पत्ति होती है, जिसका हृदय जैसा होगा वह वैसे ही विचार करेगा और वैसे कार्यों में प्रवृत्त रहेगा। सम्पूर्ण शरीर में चेहरा ऐसा भाग है, जिस पर आन्तरिक विचारधारा और भावनाओं के चित्र बहुत कुछ झलक आते हैं, अन्य अंगों की अपेक्षा चेहरे का निर्माण अधिक कोमल तत्त्वों से हुआ है, मैले पानी की अपेक्षा साफ पानी में परछाई अधिक साफ दिखाई पड़ती है इसी प्रकार अन्य अंगों की अपेक्षा चेहरे पर आन्तरिक भावनाओं का प्रदर्शन अधिक स्पष्टता के साथ होता है। यह विचार और विश्वास जब तक निर्बल और डगमग होते हैं तब तक तो बात दूसरी है पर जब मनोगत भावनाएँ दृढ़ हो जाती हैं, तो उनको प्रकट करने वाले चिह्न चेहरे पर उग आते हैं।

आपने देखा होगा कि यदि कोई आदमी चिन्ता, शोक, क्लेश या वेदना के विचारों में डूबा हुआ बैठा होता है, तो उसके चेहरे की पेशियाँ दूसरी स्थिति में होती हैं किन्तु जब यह आनन्द से प्रफुल्लित होता है, तो होठ, पलक, गाल, कनपटी, मस्तक की चमड़ी में दूसरे ही तरह की सलवटें पड़ जाती हैं। हँसोड़ मनुष्यों की आँखों की बगल में पतली रेखाएँ पड़ जाती हैं, इसी प्रकार क्रोधी व्यक्ति की भवों में बल पढ़ने की, माथे पर खिंचाव की लकीरें बन जाती हैं। इसी प्रकार अन्य प्रकार के विचारों के कारण आकृति के ऊपर जो असर पड़ता है, उसके कारण कुछ खास तरह से चिह्न, दाग, रेखा आदि बन जाते हैं। जैसे-जैसे वे भले-बुरे विचार मजबूत और पुराने होते जाते हैं वैसे ही यह चिह्न भी स्पष्ट तथा गहरे बन जाते हैं।

दार्शनिक अरस्तू के समय के विद्वानों का मत था कि पशुओं के चेहरे से मनुष्य के चेहरे की तुलना करके उसके स्वभाव का पता लगाया जा सकता है। जिस आदमी की शकल-सूरत जिस जानवर से मिलती-जुलती होगी, उसका स्वभाव भी उसके समान होगा। जैसे भेड़ की-सी शक्ल मूर्ख होना प्रकट करती है, इसी प्रकार सियार की चालाकी, शेर की बहादुरी, भेड़िये की क्रूरता, तेंदुए की चपलता, सूअर की मलीनता, कुत्ते की चापलूसी, भैंसे की आलसीपन, गधे की बुद्धिहीनता प्रकट करती है। यह मिलान आज-कल भी ठीक बैठता है पर अब तो इस विद्या ने बहुत तरक्की कर ली है और अन्य बहुत-सी बातें भी मालूम हो गई हैं।

निस्संदेह चेहरा मनुष्य की आन्तरिक स्थिति को दर्पण के समान दिखा देता है। आवश्यकता इस बात की है कि उसे देखने और समझने योग्य ज्योति आँखों में हो। इस पुस्तक में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चेहरे के हाल, भवें, मस्तक, कान, नाक, दाँत, ठुड्डी, मुँह तथा आँखों के सम्बन्ध में हम लिखेंगे।

किसी हाट बाजार में बैठी हुई सुस्ताती हुई रूपवती नवयुवती के समीप खड़े हूजिए और देखते रहिए कि उधर से निकलने वाले लोगों की किस प्रकार की दृष्टि उस पर पड़ती है। स्त्री, पुरुष, बालक, वृद्ध, बालक-बालिका की दृष्टि उस युवती पर जायेगी पर उनमें एक-दूसरे की अपेक्षा बहुत अन्तर होगा। किसी की दृष्टि में वासना, किसी में कामुकता, किसी में स्नेह, किसी में भूख, किसी में लालच, किसी में कुढ़न, किसी में तिरस्कार, किसी में वैराग्य, किसी में घृणा भरी हुई भावना आपको दिखाई देगी।

यह विभिन्नतायें बताती हैं कि उन देखने वालों में से किस-किस का कैसा स्वभाव है। विगत जीवन में इस प्रकार की किसी युवती से जिसे जैसा वास्ता पड़ा होगा उसकी वैसी ही अनुभूति जागृति होगी। जिस वृद्धा को अपनी इतनी ही बड़ी ऐसी ही पुत्री का वियोग सहना पड़ा होगा, उसके नेत्रों में इस अज्ञात युवती के प्रति भी वात्सल्य भाव उमड़ आवेगा। देखने वाला बुढ़िया की आँखों में आँसू देखकर किसी हद तक उसका भूत और भविष्य जान सकता है। भूत यह कि इस वृद्धा को इस प्रकार की कोई लड़की कभी प्यारी रही है, वर्तमान कि अब उसका वियोग इसे सहना पड़ रहा है। यह तो एक सामयिक घटना हुई, किसी घटना का कोई जोरदार प्रभाव पड़े तो उसके संस्कार गहरे उतर जाते हैं और वे किसी साधारण समय में भी नेत्र आदि अंगों में जमे हुए भाव अन्य लक्षणों को देखकर पहचाने जा सकते हैं। आकृति विज्ञान का यही आधार है।

कहानी तथा उपन्यासों का लेखक अपने पात्र का चरित्र-चित्रण करते समय उसकी बोलचाल, रहन-सहन, मकान, कपड़े, शक्ल-सूरत का भी वर्णन करके अपनी रचना को हृदयग्राही बनाते हैं। सुयोग्य लेखक जानते हैं कि भीतरी चरित्र बाहरी रंग-ढंग में प्रकट होकर रहता है, इसलिए उसका वर्णन करने से यह सिद्ध होता है कि लेखक ने मानवीय आकृति विज्ञान से किस हद तक जानकारी प्राप्त की है।

एक आश्चर्यजनक बात यह है कि मनुष्य के स्वभाव के अनुसार, उसके सभी अंगों में लक्षण प्रकट होते हैं। दुष्ट-दुर्जनों के नेत्रों से दुष्टता टपकती हो सो बात नहीं उसके हर एक अंग पर बारीक दृष्टि डालिए, वे सभी एक इस प्रकार की विशेषता लिए हुए होंगे सो प्रत्यक्ष रूप से उसके दुर्गुणों की साक्षी दे रहे होंगे। इसी प्रकार सदाचारी और सज्जनों के चेहरे पर अपने ढंग की एक सज्जनता युक्त विशेषता होती है।

काला, गोरा, सुन्दर, कुरूप कैसा ही व्यक्ति क्यों न हो उसकी बुरी आदतों के कारण सुन्दर अंगों में भी भौंड़ापन आ जायेगा, जो ससुंस्कृत हैं वे अष्टावक्र या सुकरात की तरह कुरूप क्यों न हों, उनके अंग अपनी बनावट में खड़े रहते हुए भी प्रामाणिकता की साक्षी देते रहेंगे। यह रचना आदतों के कारण बनती या बिगड़ती रहती है। एक सज्जन व्यक्ति जब कुमार्ग की ओर चलता है, तो उसके सज्जनता के चिह्न घटते हैं और विभिन्न अंगों में वे लक्षण उदय हो जाते हैं जिन्हें देखकर दुर्जनता को पहचाना जा सकता है। हाथों की रेखाएँ घटती-बढ़ती हैं, उसमें से कुछ नई निकलती हैं, कुछ लुप्त हो जाती हैं, यह परिवर्तन आचार और विचार में अन्तर आने के कारण होता है। इसी प्रकार स्वभाव और व्यवहार के कारण सूक्ष्म रूप से मन और शरीर पर जो प्रभाव पड़ता है, उसके लिए कई प्रकार के विचित्र चिह्न उत्पन्न हो आते हैं तथा अंगों के ढाँचों में कुछ विचित्र तरीके से हेर-फेर हो जाता है।

आध्यात्मिक पुरुष इन्हीं लक्षणों को देखकर मनुष्य की भीतरी जानकारी प्राप्त कर लेते हैं। स्थिति का पता होने से परिणाम की कल्पना सहज ही की जा सकती है, जैसे कोई व्यक्ति विद्वान, वक्ता और सद्गुणी हो तो अनायास ही यह कह सकते हैं कि "इसे जनता में आदर मिलेगा"। इसी प्रकार शारीरिक चिह्नों से भीतरी योग्यताओं का पता लगने से उसके भविष्य फल की भी बहुत हद तक ऐसी कल्पना की जा सकती है, जो अन्त में सच निकले। इस प्रकार आकृति देखकर किसी मनुष्य का चरित्र जानना तथा उसका भविष्य बताना दोनों ही सम्भव हैं।

एक बात स्मरण रखने की है कि आकृति विज्ञान भाग्यवाद का किसी भी प्रकार समर्थक नहीं है। गुण, कर्म और स्वभाव में जो अन्तर आते हैं, उनके अनुसार चेहरे का रंग-ढंग भी बदल जाता है, आकृति विद्या का ज्ञाता एक समय में एक मनुष्य के जो लक्षण बताता है, यदि उस व्यक्ति का स्वभाव बदल जाय तो उसे उसके लक्षण भी बदले हुए मिलेंगे। यह ठीक है कि ढाँचा नहीं बदलता, ढाँचे का सम्बन्ध पूर्व जन्मों के संचित संस्कारों से होता है, सुन्दर-सुडौल अंगों वाला व्यक्ति पूर्व जन्म का शुभ कर्मकर्त्ता तथा कुरूप और बेडौल अंगों वाला पूर्व जन्म में अशुभ कर्मकर्त्ता रहा होगा तदनुसार उन संस्कारों की प्रेरणा से इस जन्म में सुन्दरता या कुरूपता प्राप्त हुई है यह मान्यता ठीक है। यह जन्म-जात ढाँचे और रंग-रूप बदले नहीं जा सकते, उन्हें देखकर जन्म-जन्मान्तरों के कुछ स्वभाव और संस्कारों का परिचय प्राप्त होता है, पर ऐसी बात नहीं कि वर्तमान जन्म में उन संस्कारों में परिवर्तन करना सम्भव न हो। मनुष्य को ईश्वर ने पूर्ण स्वतन्त्र बनाकर भेजा है, वह स्वेच्छानुसार पुराने सब स्वभावों को बदलकर नये ढाँचे में ढल जाता है।

आकृति परिज्ञान विद्या एक वैज्ञानिक क्रिया पद्धति है ऐसा कदापि नहीं कहता कि—"मनुष्य भाग्य का पुतला

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है या विधाता ने उसे जैसा बना रखा है वैसा रहना पड़ेगा।'' भाग्यवाद को इस विद्या के साथ जोड़ना एक बहुत बड़ी गलती करना है। मानसून हवाओं को देखकर यदि कोई वायु विद्या विशारद शीघ्र वर्षा होने की घोषणा करता है या मच्छरों की वृद्धि को देखकर कोई डाक्टर मलेरिया की चेतावनी देता है या गवाहों के बयान सुनकर कोई कानूनवेत्ता मुकदमा हार जाने की बात कहता है तो यह न समझना चाहिए कि यह सब बातें भाग्य में लिखी हुई थीं जिन्हें इन लोगों ने किसी गुप्त ज्ञान से जान लिया है।

वास्तव में वायु विद्या विशारद, डाक्टर तथा कानूनवेत्ता महानुभावों ने जो भविष्यवाणियाँ की थीं वे सामयिक स्थिति को देखते हुए उनके परिणामों के ज्ञान के आधार पर की थीं। यदि उनमें कुछ परिवर्तन किया जा सके तो फल भी बदल सकता है, मच्छरों को यदि मार-भगाया जाय तो डाक्टर की चेतावनी पत्थर की लकीर न रहेगी। यही बात आकृति विद्या के सम्बन्ध में है। किसी मनुष्य का भूत, भविष्य और वर्तमान इसके द्वारा कहा जा सकता है, भूगर्भ विद्या के ज्ञाता जमीन देखकर निकाले हुए एक पत्थर के टुकड़े के आधार पर अनेक ऐतिहासिक तथ्य खोज निकालते हैं फिर आकृति की बारीकियों का निरीक्षण करके मनुष्य जीवन के आगे-पीछे की बहुत-सी बातें भी कही जा सकती हैं, किन्तु स्मरण रखना चाहिए कि यह कथन अन्वेषण और अनुभव की बुद्धिसंगत वैज्ञानिक विधि से ही किया जा रहा है। इसमें ऐसी कोई बात नहीं है कि आदमी को ब्रह्माजी ने एक गोबर गणेश भाग्य का पुतला बनाकर भेजा हो। मनुष्य अपने आप को चाहे जैसा बनाने में पूर्णतया स्वतन्त्र है।

कभी-कभी आकृति विद्या के आधार पर कही हुई कुछ बातें ठीक नहीं बैठतीं, इसके दो कारण है कि एक तो यह कि उस व्यक्ति ने अपना स्वभाव बदल डाला है किन्तु शरीर पर प्रकटित चिह्नों को बदलने में कुछ अड़चन हुई हो अथवा नये चिह्न अभी प्रकट न हुए हों। दूसरा कारण यह है कि फल कहने वाले से लक्षण पहचानने तथा फल कहने में कुछ गलती हुई हो, इन कठिनाइयों का ध्यान रखते हुए जब असफलता मिले तो हताश न होकर कारण को ढूँढ़ना चाहिए और एक अन्वेषक की भाँति वास्तविकता का पता लगाते हुए इस विज्ञान को आगे बढ़ाने में सहायता करनी चाहिये।

बाल

बाल प्रायः हर एक पशु-पक्षी के शरीर पर होते हैं। प्रकृति ने इन्हें भीतरी शक्ति की रक्षा के लिए बनाया है। अन्दर की गर्मी को सुरक्षित रखने और अपव्यय न होने देने का काम इनके द्वारा पूरा होता रहता है।

बड़ी चीज के लिये सुरक्षा का भी बड़ा ही प्रबन्ध करना पड़ता है। इसलिए अधिक बलशाली जीवों के शरीर पर अधिक बाल और कम बल वाले जीवों के शरीर पर कम बाल पाये जायेंगे। साथ ही शरीर में जो भाग अधिक महत्त्वपूर्ण होता है उसमें बाल अधिक होते हैं। जिस मनुष्य के शरीर पर अधिक बाल हों तो समझना चाहिए कि उसमें जीवनी शक्ति अधिक है।

मनुष्य बुद्धिजीवी प्राणी है, इसलिये मस्तिष्क की रक्षा के लिए सिर के ऊपर अधिक बाल पाये जाते हैं। पौरुष एवं ओज की ग्रन्थियों से दाढ़ी, मूछों के बाल सम्बन्धित हैं, जिनका मस्तिष्क अच्छा होता है उनके सिर पर बालों की प्रचुरता रहती है, जिनमें ओज, पौरुष एवं दृढ़ता होती है उनकी दाढ़ी-मूछों पर खूब बाल निकलते हैं। जिनमें कामवासना अधिक होती है, उनके गुप्त अंगों के समीप बालों की अधिकता रहती है। जिनका हृदय और कलेजा मजबूत होता है उनकी छाती पर बाल ज्यादा रहेंगे। इनमें से जिस स्थान के बाल कम, हल्के, निर्बल, टूटे-फूटे से रहें समझना चाहिये कि उस स्थान पर रहने वाली शक्ति में न्यूनता है।

गंजे आदमी अल्प बुद्धि होते हैं। जिसकी दाढ़ी-मूछों पर कम बाल होंगे उसमें बहादुरी, उत्साह तथा पौरुष की कमी रहेगी। छाती पर बाल न हों तो दिल और कलेजा कमजोर होगा। नपुसंकों के गुप्तांगों पर बालों की कमी रहती है। पुराने लोग मूँछ और छाती पर बालों से रहित व्यक्ति को अशुभ मानते हैं, इस मान्यता का यही कारण है। यह प्राचीन विश्वास इसी तथ्य पर निर्भर है कि जो अंग निर्बल होंगे उनका उत्पादन और संरक्षण भी थोड़ा-सा ही दिखाई देगा।

कड़े, मोटे तथा बड़े बाल जिद्दीपन तथा खूँख्वार होने के चिह्न हैं। इसके विपरीत मुलायम और छोटे रोंए वाले समझाने से समझ जाने वाले तथा परिश्रमी होते हैं। जंगली भैंसे के शरीर पर कड़े, मोटे तथा सघन बाल होते हैं, वह परले सिरे का खूँख्वार और जिद्दी होता है, इसके विपरीत छोटे और मुलायम रोम वाला शेर जैसा हिंसक पशु भी कुछ नर्म होता है। सिखाने और समझाने से शेर सरकसों में काम करता है और कहना मानता है पर जंगली भैंसा किसी सरकस में काम करते नहीं देखा गया। ऊँट, बैल, घोड़े, गधे बड़े परिश्रमी और समझ जाने वाले होते हैं, इनके रोम छोटे तथा मुलायम ही होते हैं। उपरोक्त तथ्य के आधार पर यह कहा जा सकता है कि जिस मनुष्य के सिर, शरीर तथा अन्य अंगों पर कड़े, रूखे, टेढ़े, मोटे तथा बड़े बाल होंगे वह क्रूर प्रकृति का कठोरकर्मी होगा।

लड़ाकू, लुटेरे, निडर तथा बहादुर आदमियों के बाल ऐसे ही होते हैं। नैपोलियन, सीजर, सिकन्दर के बाल कड़े और मोटे थे। इसके विपरीत चतुर, राजनीतिज्ञ, कलाकार, धर्मात्मा प्रकृति के व्यक्तियों के बाल मुलायम होते हैं। एक और भी बात है कि कड़े बालों वाले दरिद्री और मुलायम बालों वाले धनी होंगे। कारण स्पष्ट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है कि जिद्दीपन का होना निर्धन रहने की निशानी है तथा नम्रता तथा बुद्धिमता धनी बनने की आधारशिला है।

अफ्रीका के नीओ और योरोप के गोरों की तुलना कीजिए। अफ्रीकन छोटे तथा कड़े बालों के होते हैं उनमें बुद्धि की न्यूनता पाई जाती है, योरोपीयनों के बाल लम्बे और मुलायम होते हैं, नीग्रो लोगों के मुकाबले में गोरों की बुद्धिमत्ता स्पष्टतः प्रकट है। वेशक शारीरिक बल में अफ्रीकन बड़े-चढ़े और गोरे उनसे हेटे होते हैं, पर बुद्धि के मामले में इसके बिल्कुल ही उल्टी बात है। इन बातों पर विचार करते हुए हम इस नतीजे पर पहुँचते हैं कि मुलायम, चिकने और कोमल बाल मानसिक उन्नति, विचारशीलता तथा चतुरता प्रकट करते हैं और कड़े, मोटे, खुरखुरे, कँटीले बालों से शूरता, अकड़, झगड़ा तथा बौद्धिक निर्बलता प्रकट होती है।

काले रंग का रासायनिक विश्लेषण करने से ज्ञात हुआ है कि उसमें लोहे का अंश अधिक होता है। स्याह काले बाल उस मनुष्य के होंगे जिसके रक्त में लौह की मात्रा अधिक होगी। डाक्टर लोग बताते हैं कि रक्त में लौह की पर्याप्त मात्रा का होना निरोगता तथा बलशालीनता का चिह्न है। तात्पर्य यह है कि जिसके बाल स्याह काले रंग के हों उसके बलवान, निरोग और दीर्घजीवी होने की सहज ही कल्पना की जा सकती है। इसी प्रकार कितने ही आधारों से यह बात भी जानी गई है कि पतले बालों वाले कला निपुण तथा मोटे बाल वाले शारीरिक एवं मानसिक बल में बढ़े-चढ़े होते हैं।

किसी पेड़ को यदि उसकी आवश्यक खुराक न मिले तो वह मुरझाने लगता है। जो लोग ज्यादा मानसिक परिश्रम करते हैं उनके सिर पर बाल कम रहते हैं, कम बढ़ते हैं या उड़ जाते हैं। कारण यह है कि बालों की जड़ों को जो खुराक प्राप्त होनी चाहिए थी वह उन्हें प्राप्त न होकर दिमागी कार्यों में खर्च हो जाती है। ऐसी दशा में खुराक की कमी के कारण सिर के बालों का कमजोर या कम होना स्वाभाविक ही है। इसलिये सिर के अगले भाग में बालों को कम देखकर यह कहा जा सकता है कि यह व्यक्ति अधिक मानसिक परिश्रम करने वाला है।

यों तो अनेक रंगों के बालों वाले लोग इस पृथ्वी पर पाये जाते हैं, पर मोटेतौर से सुनहरे, कत्थई, लाल, भूरे, काले और मटमैले रंग के अधिक देखे जाते हैं। ऊपर बताया जा चुका है कि बालों का गहरा काला होना रक्त में लौह की मात्रा से सम्बन्धित है, इसी प्रकार शरीर में रहने वाले विभिन्न रासायनिक पदार्थों की न्यूनाधिकता के असर से बालों के दूसरे रंग हो जाते हैं।

किन्हीं देशों की आबहवा में कोई रासायनिक पदार्थ अधिक होते हैं, इसलिए वहाँ के निवासियों के शरीर में उन्हीं तत्त्वों की अधिकता हो जाती है। इसलिए वहाँ वालों के बालों की भी एक जाति बन जाती है। इटालियन, अमेरिकन, रूसी, चीनी तथा भारतीय लोगों के बालों की तुलना की जाय तो उनमें बहुत कुछ भिन्नता मिलेगी। यह भिन्नता उस देश की आबहवा का जो प्रभाव वहाँ के निवासियों पर पड़ता है—उसके कारण है। यह तो हुई देश-देश और जाति-जाति के लोगों के बालों में फर्क की बात। एक देश के निवासियों में भी हर व्यक्ति में भिन्नता पाई जाती है। जिस प्रकार दो व्यक्तियों की आकृति एक-सी नहीं होती, वैसे ही दो व्यक्तियों के शरीर में रासायनिक पदार्थ भी एक-से नहीं होते और न मानसिक स्थिति एक-सी होती है। इस असमानता का प्रभाव बालों के रंग पर भी पड़ता है। जैसे रक्त में लौह की मात्रा के अनुसार बालों का कालापन होता है, वैसे ही अन्य पदार्थों तथा विचारों की स्थिति से अन्य रंग बन जाते हैं।

काले रंग के अन्तर्गत कुछ किस्में हैं, जो मानसिक कारणों से बनती हैं। पाठकों को उन्हें भी जान लेना चाहिए। काला बाल यदि एकदम सीधा और लम्बा हो तो समझना चाहिए कि यह व्यक्ति निराशा, दुःख, चिन्ता के विचारों से डूबा हुआ उदास रहता है।

जिसके बाल लच्छेदार, घुँघराले, बलखाये हुए हों तो समझना चाहिए कि यह मनमौजी, प्रेमी स्वभाव, उपकारी, नेकी करने वाला, रोगी ... हँसोड़ तबियत का होगा। उसका क्रोध जल्दी ही शान्त हो जाता है और किसी पर कहर नहीं बरपा सकता। साधारणतः ऐसे मनुष्य पर भरोसा किया जा सकता है।

जरा हल्के काले रंग के बालों वाला मनुष्य चंचल स्वभाव, बड़े-बड़े मनसूबे बाँधने वाला, भावुक तथा असन्तोषी होता है। अपने को अभागा और दुःखी कल्पना किया करता है यदि वह हल्के काले रंग के बाल किसी गौर बदन व्यक्ति के सिर पर हों तो समझना चाहिए कि इसकी स्थिरता का कुछ भरोसा नहीं, अभी इस पर जमा हुआ है तो कल किसी के बहकाने में आकर दूसरी तरफ ढुलक सकता है। इस रंग के बाल यदि मुलायम, पतले तथा छोटे हों तो विनोदी प्रकृति तथा खुशमिजाजी के सूचक हैं। वे स्त्री तथा बच्चों में बहुत जल्द मिल जाते हैं, विनम्र परोपकारी, पस्त हिम्मत, खुशामदी स्वभाव के सूचक हैं, यदि हल्के काले बाल कड़े और मोटे हों तो लापरवाही, अक्खड़पन, दूसरों की अपेक्षा, स्वतन्त्र प्रकृति तथा एकाक्रीपन पसन्द करने की सूचना देते हैं।

बाउन रंग जिसमें लालिमा की प्रधानता होती है, ज्योतिष के मत से मंगल ग्रह की विशेषता है। यह रंग बहादुरी, हिम्मत, दृढ़ता तथा अहंकार का सूचक है। बाउन रंग के बालों वाले अक्सर दूसरों के साथ घमण्ड, अविश्वास और तिरस्कारजनक व्यवहार करते हुए देखे जाते हैं। सामान्यतः यह रंग पशुवृत्ति का सूचक है, जो भले-बुरे जिस भी भाग पर लग जाय उसी में मजबूती के साथ बढ़ती चली जाती है। इन बालों में लच्छेदार, सीधे,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मोटे, पतले, कड़े, मुलायम आदि भेदों का भी वैसा ही फल समझना चाहिए जैसा कि पीछे काले बालों की चर्चा करते हुए बताया जा चुका है।

बिल्कुल सुनहले बाल मृदुलता, विलास और खुश मिजाजी का चिह्न है। ऐसे बालों वाले कोई बड़ा काम नहीं कर सकते, किसी संघर्ष में विजय भी कम ही प्राप्त करते हैं फिर भी उनका विनोदी स्वभाव आकर्षक होता है। यदि सुनहरीपन में कुछ कालापन तथा लालिमा मिली हो तो यह मनोबल का सूचक है, ऐसे लोगों की बुद्धि तीव्र होती है और मानसिक शक्तियों का विकास विशेष मात्रा में हुआ देखा जाता है। उसमें लिखने, बोलने, कल्पना करने, निर्माण करने तथा प्रभाव डालने की शक्ति अधिक देखी जाती है।

बिल्कुल लाल रंग के बाल कम ही दीख पड़ते हैं पर जब दीख पड़ें, तो समझना चाहिए कि इस व्यक्ति के शरीर और मस्तिष्क में गर्मी की मात्रा अधिक है। चंचलता, क्रोध, झगड़ालूपन तथा बदला लेने की व्यग्रता उनमें अधिक पाई जायेगी, जो काम करेंगे बड़े उत्साह, लगन तथा जाँफिसानी से करेंगे। जिसके पीछे पड़ेंगे उसका पीछा आसानी से न छोड़ेंगे। जरा-सी बात में उत्तेजित हो जाना, कल्पना जगत में भावुकता के साथ विचरण करते रहना ऐसे लोगों का स्वभाव-सा बन जाता है।

कभी-कभी इस तरह के बाल देखने में आते हैं जो किसी खास रंग के नहीं होते, उन्हें न तो काला कहा जा सकता है न लाल और न सुनहरी। वरन् वे कई रंगों के मिश्रण से बने होते हैं, कालापन, लालिमा तथा सुनहरीपन की मात्राओं का न्यूनाधिक मिश्रण होने से दर्जनों किस्म के रंग बन सकते हैं, बालों के रंग भी इसी आधार पर दर्जनों तरह के होते हैं और हो सकते हैं। आकृति विद्या का अभ्यास करने वालों को वह अनुभव प्राप्त करना चाहिये कि बालों का रंग देखकर यह अन्दाज लगा सकें कि इनमें किस रंग का कम और किसका अधिक मिश्रण हुआ है।

जिस रंग का जो गुण है, वह मिश्रण में भी अपनी मात्रा के अनुसार गुण प्रकट करेगा। जैसे काले रंग में थोड़ा लाल रंग मिला हो तो उस व्यक्ति में काले रंग के गुण अधिक होंगे साथ ही थोड़ा बहुत लाल रंग का भी प्रभाव दिखाई देगा। साथ ही मोटे, पतले, छोटे लम्बे, कड़े-मुलायम तथा लच्छेदार बालों की जो विशेषता होती है, उसका भी समावेश पाया जायेगा। इस तरह इन सभी बालों की विवेचना करते हुए, हर व्यक्ति के सम्बन्ध में अलग-अलग मत निश्चित करना पड़ेगा। इस विद्या के अभ्यासियों को पुस्तक के आधार पर प्राप्त हुए ज्ञान का उपयोग स्वतन्त्र बुद्धि से करना होता है, जैसे कि डाक्टर लोग हर रोगी की विविध मार्गों से परीक्षा करके उसकी बीमारी का केवल पुस्तक के आधार पर नही, वरन् बुद्धिपूर्वक निर्णय करते हैं।

बालों के कड़े और मुलायम होने का भेद महत्त्वपूर्ण है, एक बार फिर उसे दुहरा देना हम अनुचित नहीं समझते। पाठकों को स्मरण रखना चाहिये कि तार से कड़े बाल कठोरता, मर्दानगी, आत्मविश्वास, बल, दृढ़ता तथा अहंकार के सूचक हैं। ऐसे व्यक्तियों में कला प्रेम, ममता, सहानुभूति प्रभृति कोमल गुणों की कमी होती है। इसके विपरीत मुलायम बालों वाले भावुक, मृदुल, कल्पना प्रिय, डरपोक, उपकारी, धार्मिक, दयालु शान्तिप्रिय स्वभाव के होते हैं।

जिनके बालों की जड़ों के खुरंट जमने लगें, सफेद-सफेद भूसा-सी अधिक जमें उन्हें गर्म प्रकृति का, तेज स्वभाव वाला, कठोर प्रकृति का एवं चिन्ताशील समझना चाहिए। शोक, अशान्ति एवं लम्बी बीमारी के कारण बालों की जड़ें कमजोर पड़ जाती हैं और बीच-बीच में से उखड़ने लगते हैं। जिनके बाल स्वतः ही छिर-छिरे हों उन्हें इतनी योग्यता अवश्य होती है कि निर्वाह से अधिक धन कमा सकें।

शूल की तरह जिनके बाल ऊपर को उड़ते हैं वे क्रोधी, चिड़चिड़े और असहिष्णु देखे जाते हैं। अत्यन्त घने बालों वाले धनी और चतुर तो अवश्य होते हैं, पर उन्हें मानसिक क्लेश सदा बने रहते हैं। रेशम से मुलायम बालों वाले व्यक्ति बड़े भावुक होते हैं, उनके मन में प्रेम का प्रवाह स्वयं उमड़ता रहता है।

माथे पर बहुत आगे तक यदि बाल आ गये हों तो वह सदा ही कठिनाइयों के बीच में गुजरने वाला होगा। जिसका मस्तिष्क बहुत ऊँचाई तक बालों से रहित हो, वह अधिक समझदार होता है। कानों की जड़ से जिसके बाल बिल्कुल मिले हुए हों, वह अपनी बात का धनी होता है। गरदन पर बहुत दूर तक बाल चले गये हों तो इसे मानसिक विकास का चिन्ह समझना चाहिए।

बहुत बड़ी और काली मूछों वाले मनुष्य लड़ाकू, बहादुर और स्वाभिमानी होते हैं। छिरछरी, हल्की, मध्यम ऊँचाई की मुलायम मूँछें बुद्धिमत्ता की सूचक हैं। बहुत ही छोटी और थोड़ी मूँछें होना, पुरुषत्व के कई आवश्यक गुणों की कमी प्रकट करती हैं। जिनकी मूँछें बड़ी तेजी से बढ़ती हों, उन्हें उतावले स्वभाव का समझना चाहिए।

पूरी भरी हुई दाढ़ी तेजस्वी पुरुषों की होती है। उथले स्वभाव के मनुष्यों की ठोड़ी पर थोड़े से बाल आते हैं और कान के आस-पास की जगह खाली पड़ी रहती है। जल्दी बढ़ने वाली दाढ़ी भलमनसाहत और विश्वसनीयता प्रकट करती है, जिनकी दाढ़ी बहुत धीरे-धीरे बढ़े उनकी मित्रता अधिक दिन किसी से नहीं निभती और न उनका कोई सच्चा सहायक होता है।

नेत्र

अँग्रेजी भाषा में एक कहावत है कि ''नेत्र अन्तःकरण के झरोखे हैं।'' तात्पर्य यह है कि आँखों में झाँककर मनुष्य की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आन्तरिक स्थिति का परिचय आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। निस्सन्देह यह उक्ति बहुत ही तथ्यपूर्ण है। नेत्रों के द्वारा आन्तरिक स्थिति का जितना परिचय प्राप्त किया जा सकता है उतना अन्य किसी अंग से नहीं किया जा सकता।

पहले यहाँ पुतलियों के रंगों पर विचार कर रहे हैं। आमतौर से काली, लाल, नीली, पीली और नारंगी रंग की पुतलियाँ देखी जाती हैं। इन रंगों के मिश्रण तथा हल्के गाढ़े के भेद से अधिक रंग बनते हैं। उन सब मिश्रणों के बारे में वर्णन करना कठिन है, प्रधान रंगों के बारे में जानकारी हो जाने पर उनके मिश्रण और मात्रा का विश्लेषण करके पहचान करना, अभ्यासियों की कुशाग्र बुद्धि पर निर्भर है। संक्षेप में प्रधान रंगों के बारे में ही कुछ चर्चा करना इन पृष्ठों में हमारे लिए सम्भव है।

नीली पुतलियों वाले कोमल स्वभाव के होते हैं। स्याह काली पुतलियाँ कठोरता, फुर्ती और ताकत का चिह्न हैं। व्यापार कुशलता और बुद्धिमानी भी ऐसे लोगों में अधिक देखी जाती है। गाढ़ा नीला रंग विश्वसनीय होने की सूचना है पर ऐसे लोगों में चतुरता प्रायः कम ही होती है। हल्के नीले रंग से प्रकट होता है कि स्थिरता, विचारशीलता, धैर्य और मधुरता की मात्रा अधिक होनी चाहिये। आमतौर से सभी हल्के रंग चालाकी और ईमानदारी प्रकट करते हैं, पर यह बात नीले रंग पर लागू नहीं होती है, हल्के नीले रंग की पुतलियों वाले व्यक्ति अक्सर अच्छे स्वभाव के पाये जाते हैं।

बाइबिल में शैतान की आँखों को हरी बताया गया है। ऐसी पुतलियों वाले दुराचार अविश्वास, स्वार्थ और विश्वासघात की आदतों में लिप्त पाये जाते हैं, किन्तु यदि साथ ही भूरी फुटकियाँ भी हों तो यह हरापन सुशीलता, सच्चरित्रता, विद्वता और विश्वासनीय का चिह्न है। अगर ऐसी आँखों में किसी अन्य रंग की फुटकियाँ हों तो प्रतिभा, प्रसन्नता, परोपकार, कुशलता एवं कलाप्रियता की अधिक मात्रा होगी।

पीली या नारंगी पुतलियाँ बहुत कम देखी जाती हैं, फिर भी इस तरह की आँखें चंचलता, भावुकता, कवित्व, किफायतशाली, स्वार्थपरता तथा असहिष्णुता की निशानी कही जा सकती हैं। ब्राउन, भूरा थोड़ी लालिमा लिए हुई पुतलियाँ बहुत ही उत्तम हैं, ऐसे व्यक्ति प्रेमी, बात के धनी, चतुर तथा गम्भीर होते हैं, ईमानदारी और व्यवहार की सचाई उनकी विशेषता होती है, फिर भी उनमें दो कमजोरियाँ देखी जाती हैं, एक जरा-सी बात पर नाराज हो जाना, दूसरा लम्पटता की ओर झुक पड़ना।

हल्का काला रंग छल, कपट, बनावट, ढोंग तथा धूर्तता का चिह्न है किन्तु गाढ़ा काला रंग स्थिरता और समझदारी प्रकट करता है। काले रंगे के साथ यदि थोड़ी लालिमा मिली हुई हो तो सदाचारी एवं सद्गुणी होने की निशानी है। बिल्ली की सी कुंजी आँखों वाले अक्सर बिल्ली के स्वभाव के होते हैं। बाहर से बहुत सीधे दिखाई देते हैं पर मौका पड़ने पर करारी चोट करने में नहीं चूकते।

अब इस बात पर विचार करना चाहिये कि कौन मनुष्य किस तरीके से देखता-भालता है। साफ, खुलासा और निधड़क दृष्टि से देखने वाले व्यक्तियों का चरित्र ऐसा होता है जिस पर आप विश्वास कर सकते हैं। जिन लोगों की दृष्टि चंचल होती है, चारों ओर चपलतापूर्वक नजर दौड़ाते हैं वे अक्सर लोभी, चोर, भिक्षुक या कपटी पाये जाते हैं।

आँख मिलते ही झेंप जाने वालों के मन में कुछ और तथा मुँह पर कुछ और होता है। जिसकी आँखें नीली रहती हैं वह अपराधी मनोवृत्ति या डरपोक या कमजोर होता है। ढीठतापूर्वक आँखों से आँखें लड़ाने वालों में उजड्डता, बेवकूफी, ऐंठ ज्यादा होगी। तिरछी नजर से देखने वाले निष्ठुर, क्रूर, तोता-चश्म और झगड़ालू होते हैं।

आँखों के डले यदि कुछ आगे उभरे हुए हों तो इसे विद्या प्रेम और ज्ञान सम्पादन का चिह्न समझना चाहिये। ऐसे लोगों की स्मरण शक्ति अच्छी होती है। साफ और खुलासा आँखों वाले व्यापार कुशल, व्यवहार पटु, परिश्रमी तथा बड़ी लगन वाले होते हैं।

अधिक बड़ी आँखें तेजस्विता, सत्ता, वैभव, ऐश्वर्य तथा भोगविलास से प्रसन्न व्यक्तियों की होती हैं। किन्तु पर स्त्री गमन से इस प्रकार के लोग बहुत ही कम बच पाते हैं। बड़ी आँखों के बीच का फासला थोड़ा हो तो सुस्ती, चालाकी तथा ठगी की बोधक हैं और यदि उनके बीच का फासला ज्यादा हो तो सादगी, सिधाई एवं स्पष्टवादिता का लक्षण जानना चाहिये। छोटी आँखें खिलाड़ीपन, लापरवाही और सुस्ती प्रकट करती हैं। गड्ढे में धँसी आँखों वाले ऐसे दुर्गुणों से ग्रस्त होते हैं जिनके कारण जीवन में कोई कहने लायक उन्नति नहीं हो पाती। चिमचिमी आँखों वाले न तो दूसरों के ऊपर अहसान कर सकते हैं और न किसी के अहसान के प्रति कृतज्ञ होते हैं।

पलक और पलकों के बाल-विरौनी से भी व्यक्तित्व का कुछ परिचय प्राप्त होता है। विरौनी के बाल कम हों तो उनसे डरपोकपन प्रकट होता है, घनी विरौनी वाले धनवान, गहरे रंग की कड़ापन लिए हुए विरौनी वाले शूरवीर, कोमल तथा फीके रंग वाली विरौनी के आकर्षक स्वभाव के होते हैं। मोटे पलकों वाले विद्वान, विचारवान तथा पतले पलकों वाले स्वस्थ एवं तेजस्वी देखे जाते हैं। तेजस्वी और साधुवृत्ति के लोगों के बड़े-बड़े पलक होते हैं। बहुत छोटे पलकों से चटोरपन, लालच, अतृप्तता तथा बेचैनी जानी जाती है।

जिसकी एक आँख एक तरह की और दूसरी दूसरे तरह की हो ऐसा मालूम पड़ता हो कि एक आँख किसी दूसरे की निकालकर फिट की गई है, ऐसे आदमी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रायः अधपगले, बेसनकी, औंधी खोपड़ी के होते हैं। दृष्टि की कमजोरी तथा तीक्ष्णता इस बात पर निर्भर है कि नेत्रों का कैसे उपयोग किया जाता है, फिर भी इतनी बात तो है ही कि नीली आँखें सबसे कमजोर और जरा लाल रंग मिली हुई काली आँखें सबसे बलवान होती हैं। आँखों में काले-काले तिल जैसे निशान होना आत्मबल की दृढ़ता का चिह्न है। यह तिल दो चार और छोटे ही हों तो अच्छे हैं। किन्तु यदि बड़े-बड़े बहुत से तिल हों तो वे ऐसी कमजोरियों के सूचक हैं जिनके कारण मनुष्य को दरिद्रता का दुःख भोगना पड़ता है। जिनकी पुतलियाँ फिरती हैं। ऐसे भौंड़े आदमी जिद्दी, बेसमझ किन्तु बहादुर होते हैं।

जिनकी आँखें अधिक गीली रहती हों वे कातर, बेचैन तथा डरपोक पाये जाते हैं। जल्दी-जल्दी पलक मारने वाले लोग शेखीखोर, झूठे और बेपर की उड़ानों वाले होते हैं। एक आँख को कुछ मिचका कर बात करने वाले दूसरों पर अविश्वास और सन्देह किया करते हैं।

नीली झलक जिनकी आँखों के सफेद भाग में दीखती है, तो यह भोलेपन, गम्भीरता और सदाचार का चिह्न है। पीलापन जिनकी आँखों में छाया रहता है वे उजड्ड, क्रोधी और झगड़ालू होते हैं। पीलेपन में यदि लालिमा मिली हुई हो, तो वह चित्त की अशान्ति की सूचक है। लाल डोरे जिसकी आँखों में अधिक हों, उसे उष्ण प्रकृति का समझना चाहिए, ऐसे लोगों को फोड़े-फुन्सी या पित्त के रोग अक्सर होते रहते हैं।

बिल्कुल गोल छोटी-छोटी आँखें बुद्धि की न्यूनता प्रकट करती हैं। बहुत छोटी आँखों वाले आलसी और लापरवाह होते हैं। सोते वक्त जिनकी आँखें आधी खुली रहती हैं वे चिन्तातुर और लालची देखे जाते हैं। जो व्यक्ति बहुत देर में पलक मारते हैं, वे सुस्त किन्तु विचारवान होते हैं। जो बात करते समय आँखें अधिक फाड़ते हैं उन्हें दृष्टिमांद्य या अन्य नेत्र रोगों का शिकार होना पड़ता है।

भदमैली आँखों से नेकी और सदाचार प्रकट होता है। सामने की ओर कुछ नीची दृष्टि करके चलने वालों का मन पवित्र होता है। पुण्यात्मा और धर्मवान लोग कुछ ऊँची दृष्टि करके चलते हैं। क्रोधी मनुष्य तिरछे देखते हैं। नजर बचाकर चलने वाले चोर, अपराधी या पतित स्वभाव के होते हैं। अंधे आदमियों की मानसिक शक्तियाँ अमूल्य विकसित होती हैं।

भौंहें

सिर के बालों की भाँति भौंहों के बाल भी मानव स्वभाव की बड़ी खरी कहानी कह देते हैं। आकृति विद्या के अभ्यासियों को भौंहों की परीक्षा करते समय निम्न बातों पर विचार करना चाहिए—(१) गोलाई, (२) लम्बाई, (३) मोटाई, (४) बालों की बनावट, (५) आदि स्थान, (६) अन्त स्थान। आगे इन सब बातों पर संक्षेपतः प्रकाश डाला जायेगा।

ध्यानपूर्वक देखिए कि भौं का आरम्भ किस प्रकार होता है। यदि दोनों भवें आपस में मिली हुई हों, दोनों का आरम्भ बिल्कुल सटकर होता हो तो ऐसे व्यक्ति से सावधान रहने की जरूरत है। पुराने जमाने के सामुद्रिक शास्त्री कहा करते थे कि ऐसे व्यक्ति का कभी विश्वास न करना चाहिए पर आपको इतना आगे जाने की जरूरत नहीं है। सटी भौंहों को देखकर इतना समझना ही पर्याप्त है कि इस व्यक्ति का दिल व दिमाग साफ नहीं है। ढिल-मिल यकीन, संशयात्मक प्रकृति, चरित्र की कमजोरी तथा अन्य त्रुटियाँ ऐसे व्यक्तियों में देखी जाती हैं। वचन पलट देने तथा कर्तव्य की अवहेलना कर देने के दोष से भी मुक्त नहीं होते। ऐसे लोगों के बारे में यह ध्यान रखने की आवश्यकता है कि उनके साथ सावधानी से व्यवहार किया जाय। जिन भौंहों का आरम्भ एक-दूसरे से हटकर होता है वे सिधाई, सरलता तथा प्रामाणिकता प्रकट करती हैं।

कवियों ने भौंहों की सुन्दरता का वर्णन करते हुये उनकी उपमा तलवार से दी है। दूसरे शब्दों में यों कहा जा सकता है कि तलवार की बनावट भी भौंहें प्रशंसा के योग्य समझी गई हैं। कमान या तलवार की तरह घुमी हुई, बांकी, तिरछी और पतली भौंहें प्रेमी स्वभाव, सरल प्रकृति, मधुरता तथा कलाप्रियता की निशानी है। परन्तु आँख और भौंहों के बीच में अधिक अन्तर न होना चाहिए, यदि अन्तर ज्यादा होगा तो चरित्र की शिथिलता और मानसिक दुर्बलता का कारण होगा। ऐसे लोग अल्प बुद्धि और व्यवहार के अकुशल होते हैं। यदि भौंहें लकीर की तरह सीधी और बहुत नीची, आँखों के बिल्कुल पास हों तो वे कठोरता, मजबूती तथा स्वाभिमान का कारण होती हैं।

कुछ व्यक्तियों की भौंहें गोलाई लिए हुए प्रारम्भ होती हैं, पर बीच में झुकाव लेकर एक दम आँखों की बगल से नीचे तक आ जाती हैं। ऐसे व्यक्ति साफ-सुथरे खूब रहते हैं, चमक-दमक और फैशन उन्हें पसन्द होती है, पर मानसिक बल की उनमें कमी ही रहती है। जो भौंहें प्रारम्भ में तो सीधी लकीर की तरह चलती हैं पर अन्त में एकदम नीचे को झुक जाती हैं, वे कलाप्रियता प्रकट करती हैं। विचारवान, विवेकी, दूरदर्शी, ज्ञानवान व्यक्तियों की भौंहें मोटी होती हैं। अधूरी, छिरछिरी और अस्त-व्यस्त भौंहों वाले कंजूस, लोभी तथा सूम देखे जाते हैं।

टेढ़ी-मेढ़ी, मोटी, गुच्छेदार भौं वाले मनुष्य चिड़चिड़े, अस्वच्छ, लापरवाह किन्तु चतुर, बुद्धिमान और शासन करने वाले होते हैं। घनी और मोटी भौंहें मजबूती, बुद्धिमत्ता, दृढ़ता का प्रतिनिधित्व करती हैं किन्तु यदि वे पतली, कमजोर और थोड़े बालों वाली हों तो शारीरिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और मानसिक निर्बलता की कथा कहती हैं। बहुत छोटी भवों वाले जल्दबाज, चपल, बहुत बोलने वाले तथा कर्कश स्वभाव के देखे जाते हैं।

सिर के बालों की अपेक्षा यदि भवों का रंग हल्का हो तो यह दुर्बलता एवं शक्तिहीनता की निशानी है किन्तु यदि उनका रंग सिर के बालों की अपेक्षा गहरा हो तो समझना चाहिये कि बल की बढ़ोत्तरी हो रही है। जिनकी भौंहें छोटे-छोटे बालों की होती हैं, उनमें बहुत शीघ्र गहराई तक पहुँचकर वास्तविकता को समझने की योग्यता होती है किन्तु जिनके बाल अपेक्षाकृत अधिक लम्बे होते हैं, उनमें देर से समझ आती है, ऐसे व्यक्तियों को ठोकरें खा-खाकर जीवन में बहुत से कडुए अनुभव इकट्ठे करने पड़ते हैं।

नाक

प्राचीन समय में ग्रीक तथा भारतीय मूर्तिकारों ने मूर्ति निर्माण के लिए कुछ नियम बना रखे थे। उन नियमों के अनुसार वे नाक को इस प्रकार बनाते थे कि जितना ऊँचा माथा हो उतनी नाक की लम्बाई रहे, आँख जितनी लम्बी हो उतनी ही चौड़ी नाक की नोक रहे, जितना अन्तर दोनों भौंहों के बीच में हो उतनी ही नाक की मोटाई रहे। आकृति विद्या के अनुसार यह नाप-तौल बहुत ही सद्गुणी, शक्तिवान, बुद्धिमान, बलवान तथा भाग्यवान व्यक्ति की है। यदि तीन में से एक-दो बातें भी मिलती हों तो समझना चाहिये यह व्यक्ति उतने अंशों में उत्तम गुण धारण किए हुए है।

बीच में कुछ गोलाई लिए हुए तोते की चोंच की तरह नाक कुछ उभरी हुई हो तो यह योग्यता और अधिकार प्राप्ति की सूचक है। ऐसे लोग अपनी जिम्मेदारी को भली प्रकार अनुभव करते हैं और जिस काम को पकड़ते हैं उसे अधूरा नहीं छोड़ते। नाक का मोटा होना पुरुषार्थ का चिह्न है और पतला होना कमजोरी का। मोटी, साथ ही बीच में उभरी हुई नाक प्रायः बहादुरों, सेनापतियों, अधिकारियों तथा अनुशासन मानने तथा मनवाने की रुचि वालों की होती है।

बड़े चेहरे पर छोटी नाक या छोटे चेहरे पर बड़ी नाक इस तरह का बेडौलपन चरित्र में किसी प्रकार की कमी बताता है, पतली नाक के बड़े नथुने, मोटी नाक के छोटे नथुने चौड़ाई अधिक और लम्बाई कम, लम्बाई अधिक चौड़ाई कम, इस प्रकार की कोमल बातें भी चरित्र में किन्हीं दोषों और त्रुटियों का होना प्रकट करती हैं।

सीधी, पतली, लम्बी और समानाकार नाक शुद्ध चरित्र, मान-मर्यादा की रक्षा, कलाप्रियता तथा उत्साह की सूचक है। परन्तु पतली और लम्बी होते हुए भी यदि वह टेढ़ी, गड्ढेदार, माँसरहित तथा बेडौल हो तो खुदगर्जी, निष्ठुरता तथा रूखापन जाहिर करती है।

किसी की नाक की नोक नीचे की ओर इस प्रकार झुकी होती है कि नासिका के छिद्रों का भीतरी भाग बिल्कुल नहीं दिखाई पड़ता, किसी की नाक की नोक कुछ ऊँची होती है, जिससे नासिका के छिद्रों के भीतर का कुछ भाग दीख पड़ता है, यह दोनों ही अपने अन्दर कुछ विशेष अर्थ छिपाए होती हैं।

नीचे की ओर झुकी नोंक वाली नाक, उदासीन स्वभाव, आचरणहीनता, परनिन्दा में रुचि होने की सूचना देती है किन्तु ऊँची नाक से चपटापन, विनोदप्रियता, हँसोड़पन, मनमानी करने में रुचि, चतुरता तथा व्यवहार, कुशलता का होना प्रकट होता है, ऐसे लोग हर किसी को प्रिय लगने वाले होते हैं।

चिपटी हुई नाक न तो देखने में कुछ अच्छी मालूम पड़ती है, न ऐसे लोगों का स्वभाव ही कुछ उत्तम होता है। ऐसी नाक की जड़ यदि कुछ दबी हुई हो तब तो उस आदमी को बहुत ही छोटे दर्जे का आदमी होना चाहिये। हाँ, यदि चिपटी नाक बिल्कुल सीधी तथा समानाकार चली आवे तो विशिष्ट कार्यों का संपादनकर्त्ता, कलाकार तथा वाक् पटु होने की आशा की जा सकती है। चिपटी नाक के ऊपर यदि भौंहें झुकी हुई हों और माथा आगे निकल रहा हो तो यह अन्वेषक, विचारशील, शोध करने वाला तथा दूरदर्शी होने का चिह्न समझना चाहिये।

औसत दर्जे की नाक के बीच का हिस्सा यदि मोटा हो तो विद्या में रुचि, अध्ययन, स्वाध्याय और मनन में दिलचस्पी होना जाहिर होता है। ऐसी नाक वाले पत्र लिखने की कला में बहुत निपुण होते हैं। मोटी नाक वाले धनी, गुणवान, कमाऊ, कथा प्रवासी जीवन बिताने वाले होते हैं।

नाक के ऊपर वाले भाग के साथ-साथ नथुनों की रचना पर भी दृष्टिपात करना चाहिए। देखा जाता है कि कुछ पिचके हुए से नथुनों वाले डरपोक और कमजोर स्वभाव के होते हैं। चौड़े और फूले हुए नथुने भावुकता तथा कामुकता की अधिकता प्रगट करते हैं और बताते हैं कि ऐसा व्यक्ति छोटी बात को बहुत बड़ी करके मानने वाला होता है।

पैने तथा नुकीले नथुने वाले खुदगर्ज और घमण्डी होते हैं तथा दूसरों के मामले में अपनी टाँग अड़ाने में बड़ी दिलचस्पी लेते हैं। मोटे, भारी और अधिक माँस वाले नथुने समझदारी, ईमानदारी, बफादारी, होशियारी तथा बीमारी की अधिकता प्रकट करते हैं। ऐसे व्यक्तियों की आमदनी, व्यय-खर्च दोनों ही बढ़े-चढ़े होते हैं।

सूखी-सी नाक वाले दीर्घायु होते हैं। जिसकी नाक बीच में बैठी हुई हो वह पर स्त्री गामी, मधुरभाषी तथा बहुत कमाने वाले होते हैं, जिसकी नाक अपने अंगुल से साढ़े तीन अंगुल लम्बी हो वह अपने ही पुरुषार्थ से धन पैदा करता है, किन्तु सन्तान की ओर से दुःखी होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिसकी नाक तीन अंगुल लम्बी हो वह दीर्घायु, किन्तु साधारण चित्त वाला होगा। चार अंगुल नाक वाले मूर्ख और लड़ाके होते हैं। ढाई अंगुल नाक वाले दरिद्र होते हैं। भाग्यवानों को प्रायः एक साथ दो छींक आती हैं।

दाँत

आपने देखा होगा कि छोटे शिशुओं के प्रारम्भिक दाँत जिन्हें दूध के दाँत कहते हैं—प्रायः साफ, स्वच्छ, एकसे, पंक्तिबद्ध और एक सीध में निकलते हैं। यह मनुष्य के स्वाभाविक दाँतों का चित्र है। दुनिया में आकर बालक जिन शारीरिक और मानसिक संस्कारों को ग्रहण करता है वे धीरे-धीरे जड़ जमाने लगते हैं और आठ-दस वर्ष की अवस्था तक बहुत कुछ पक्के हो जाते हैं।

मानव शरीर शास्त्र के आचार्यों का कहना है कि छः-सात वर्ष की उम्र तक जितना ज्ञान प्राप्त किया जाता है फिर सारे जीवन में उससे कम मात्रा में ही ज्ञान संचित होता है। बचपन में विभिन्न मार्गों से जो संस्कार बालक के हृदय पटल पर पड़ते हैं, उनसे शरीर और मस्तिष्क एक अदृश्य ढाँचे में ढलता है। यह ढलाई दाँतों को देखकर पहचानी जा सकती है। बचपन की आदतों का कुछ परिचय दाँतों को देखकर प्राप्त किया जा सकता है।

साफ, सीधे, एकसे, बराबर के दाँत मनुष्य की स्वाभाविक स्थिति के द्योतक हैं, ऐसे दाँत वालों में एक भले मानस के प्रायः सभी आवश्यक गुण पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। ऊबड़-खाबड़, टेड़े-मेड़े, असमान और कुरूप दाँत बुरे स्वास्थ्य और बुरे स्वभाव की कहानी कहते हैं। लम्बे दाँत बड़ी आयु वालों के, छोटे दाँत बीमारों के और नुकीले दाँत हिंसक पशुओं जैसे स्वभाव का होना बताते हैं।

आगे की ओर निकले हुए दाँत कंजूसी, लालच, बहुत जमा करने की हबिस का होना प्रकट करते हैं। दाँतों का बढ़ाव जितना ही आगे की ओर होगा, उतनी ही कंजूसी अधिक होगी। खर्चीले आदमियों के दाँत प्रायः कभी भी इस प्रकार के नहीं पाये जाते। निकले हुए दाँतों वाले यदि कुछ उदारता दिखावेंगे भी तो वह यश कमाने, बड़ा बनने, प्रायश्चित करने की भावना से होगी, दया द्रवित होकर, यज्ञ भावना से उनकी उदारता देखने को न मिलेगी। दाँतों का कुछ थोड़ा-सा झुकाव भीतर की ओर हो तो यह दब्बूपन और लज्जाशीलता का चिह्न है यदि वे जरा आगे की ओर झुक रहे हों तो दबंगपन, तेजी, कठोरता और शासक वृत्ति का होना बताते हैं।

जिनके मसूड़े बहुत बड़े भारी और लटके हुए हैं समझना चाहिये यह व्यक्ति बहुत जिद्दी, कट्टर, अड़ियल, आक्रमणकारी और छीन-झपट करने वाला होगा। हल्के और छोटे मसूड़े वाले उदार, प्रतिज्ञापालक, सीधे और साफ दिल के होते हैं। नीलापन लिये हुए मसूड़े स्वाभिमानी, मोहग्रस्त और रुग्ण शरीर वालों के होते हैं। जिन मसूड़ों में लालिमा अधिक हो उन्हें खुश मिजाजी, कोमलता, बुद्धिमानी और सभ्यता की अधिकता का द्योतक समझना चाहिए।

दाँत और मसूड़ों की बनावट के अनुसार ही ठुड्डी की शक्ल बनती है। जिस ठुड्डी में गड्ढा पड़ता है, वह आनन्दी और मिलनसार स्वभाव बताती है, मजबूत आदमियों की बड़ी ठुड्डी होती है, जो बड़ी हो, चौड़ी हो, माँस कम और हड्डी ज्यादा हो तो उसे धीरता, वीरता, गम्भीरता और स्थिरता का लक्षण समझना चाहिए। क्रोधी किन्तु धुन के पक्के लोगों की ठुड्डी देखने में चौकोर-सी मालूम पड़ती है। रूखे, उदासीन, शान्त, निराश, स्वल्प संतोषी लोग चिपटी ठोड़ी के देखे जाते हैं। स्वार्थी अक्सर नुकीली ठुड्डी वाले देखे जाते हैं।

आगे की ओर बहुत नुकीली हो तो उसे चालाकी और धूर्तता बताने वाली समझना चाहिये। मेहनती आदमी दबी-सी छोटी ठोड़ी वाले होते हैं। इस प्रकार के व्यक्ति यशस्वी और धार्मिक वृत्ति के भी देखे जाते हैं। गोल ठोड़ी वालों का ऐश-आराम की कमी नहीं रहती, ऐसे आदमी बहुत मित्रों वाले, धन उपार्जन करने वाले, नई सूझ वाले तथा दूरदर्शी होते हैं। गोल महरावदार ठोड़ी वाले उथले मिजाज के और छछोरी तबियत के होते हैं। लम्बी, आगे को निकली और आगे से एकदम चिपटी ठोड़ी वाले लोग बुद्धिजीवी, पण्डित, वकील, साहित्यकार होते हैं।

आगे के दाँतों के बीच में थोड़ा फासला होना सदाचारी, उदार, सेवाभावी निष्कपट होने का चिह्न है। दाँत पर दाँत चढ़ रहे हों तो वह घमण्डी तथा अपनी बात पर अड़े रहने का लक्षण है। बीच के दो दाँतों की बगल के दो दाँत यदि बीच के दाँतों की ओर मुड़ आये हों, तो उन व्यक्तियों को सर्वत्र आदर प्राप्त होता है। ऐसे लोगों में साहस एवं पुरुषार्थ की मात्रा अधिक रहती है।

लम्बाई-चौड़ाई में बराबर चौकोर दाँत वाले मनुष्य बड़े तार्किक, तेज बुद्धि वाले होते हैं। मोती से गोल दाँत धनी और सौभाग्यशाली होना प्रकट करते हैं। पतले दाँत प्रसन्न जीवन का निर्माण करते हैं। जिन दाँतों की चौड़ाई अधिक और लम्बाई कम हो वे दरिद्रता की निशानी समझे जाते हैं।

बिल्कुल सफेद दाँत हृदय की निर्मलता प्रकट करते हैं। जिन्हें मानसिक चिन्ताएँ अधिक रहती हैं उनके दाँत हल्का पीलापन ले आते हैं। जिन दाँतों पर पीले-पीले धब्बे हैं वे आलस्य, पेट की कमजोरी तथा उष्णता की अधिकता के कारण होते हैं। नीले झलक वाले दाँत मधुर स्वभाव के प्रतिनिधि हैं। मटैले रंग के दाँत जिनके हों उनका जीवन बड़े सुख में कटता है, उन्हें किसी भारी विपत्ति का मुँह नहीं देखना पड़ता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होठ

शरीर के अन्य अंगों पर व्यक्ति के स्वभाव की छाया कुछ देर में पड़ती है और देर तक ठहरती है किन्तु होठों में ऐसी विशेषता है कि उन पर बहुत शीघ्र यहाँ तक कि उसी समय स्वभाव की छाया दृष्टिगोचर हो जाती है। रूठे हुए, संतुष्ट, आनन्दित, विपत्तिग्रस्त, मन-मौजी आदि मनोभावनाएँ होठों पर प्रत्यक्ष रूप से दिखाई पड़ती हैं। जैसे ही यह भावनाएँ बदलती हैं और उनके स्थान पर दूसरी परिस्थिति आती है वैसे ही होठों का रंग-ढंग भी बदल जाता है।

मध्यम वृत्ति के होठों वाला मुँह अच्छा समझा जाता है। बहुत बड़े, बहुत छोटे, बहुत मोटे, बहुत पतले यह सभी बुराई प्रदर्शित करते हैं। जो होठ भली प्रकार बन्द नहीं होते, कुछ खुले रहते हैं उनसे मनुष्य की नासमझी, बकवादीपन, अदूरदर्शिता तथा चरित्र की कमजोरी प्रकट होती हैं। मोटे होठ बताते हैं कि इन्द्रिय सुखों को भोगने की लालसा इसे प्रबल रूप से सताया करती है। पतले होठ सिधाई और सहानुभूति प्रकट करते हैं। मोटे होठ वाले का यदि निचला होठ ऊपर से कुछ आगे बढ़ा हुआ हो तो स्वादिष्ट भोजनों की विशेष इच्छा, दयालुता, कोमल हृदय तथा अनिश्चित स्वभाव का द्योतक है।

मोटे होठ यदि किवाड़ों की तरह बिल्कुल भिड़कर बन्द होते हों तो हिम्मत, मौकापरस्ती और चतुरता जाहिर करते हैं ऐसे लोग मुस्तकिल मिजाज होते हैं। एक बार जिस बात पर विश्वास कर लें फिर उसे बदलना उनके लिए बहुत मुश्किल है। किसी के समझाने-बुझाने का उन पर कोई अधिक प्रभाव नहीं पड़ता। पतले होठ यदि खूब भिड़कर बैठते हों तो कंजूसी, रूखापन, तोता-चश्म, खुदगर्जी तथा शोषक वृत्ति की सूचना देते हैं। ऐसे लोगों को प्रसन्न रहते हुए न पाया जायेगा, व्यापार के मामले में वे दृढ़ होते हैं तो भी अन्य बातों में उनका इत्मीनान करना कठिन है।

नीचे के होठ से ऊपर का यदि बड़ा हो तो कुछ आगे लटकता हो तो समझना चाहिये कि वह शुद्ध चरित्र, भला-मानस, परोपकारी, विनम्र, लज्जाशील तथा झेंपू होगा। उसके बहुत ही थोड़े मित्र होंगे, जो होंगे वह भी आधे मन के। अगर पतले होठों में ऊपर का बड़ा हो तो चिन्ता, उदासीनता, घबराहट से ग्रसित सदा अपना दुःखड़ा रोने वाला तथा अनिष्टों की कल्पना करके सदा डरता रहने वाला होगा। पतले होठों में नीचे का होठ यदि बड़ा हो तो विद्वत्ता, परख, हँसोड़पन साथ ही अभिमान तथा दूसरों की निन्दा करने का स्वभाव पाया जायेगा। नीचे के होठ का अन्तिम सिरा यदि जरा-सा मुड़ रहा हो तो उससे फैशन-परस्ती, प्रतिभा, चतुरता, दार्शनिकता झलकती है ऐसे लोगों का यश दूर-दूर तक फैलता है।

मुँह की दोनों बगलें यदि भीतर को धँसी हुई हों तो प्रसन्नता, मजाक पसन्दगी, प्रेम तथा मधुर भाषण प्रकट करती हैं, यदि ऊपर की ओर उभरी हुई हों तो गम्भीरता, आदरभाव, सन्तोष तथा मिलनसारी का होना बताती हैं। एक होठ के गड्ढे में दूसरे होठ के फुलाव की झड़ मिलकर दोनों होठ फिट बैठते हों तो ऐसे व्यक्ति सच बोलने वाले, प्रेमी विश्वासपात्र होते हैं परन्तु ऐसे लोगों के सामने कोई गुप्त बात प्रकट न करनी चाहिए। क्योंकि उनके पेट में गुप्त भेद छिपाये रहने की जगह नहीं होती।

नीले होठों वाले क्रोध अधिक करते हैं, फीके होठ परिश्रमी मनुष्यों के होते हैं, लाल होठ चतुर, विद्वान और धनियों के होते हैं, जिनका चित्त प्रसन्न रहता है उनके होठ गीले होते हैं। बीमार और दुःखियों के होठ शुष्क देखे जाते हैं। उच्च अन्तःकरण के महापुरुषों के होठ अक्सर फटे, चिथड़े और खुरखुरे देखे जाते हैं।

होठ के बीच की चोंच यदि अधिक फूली हुई हो तो वह मस्तिष्क की कमजोरी प्रकट करती है। यदि ऊपर के होठों पर छोटी-छोटी रेखाएँ हों तो अल्प दीर्घ जीवन का चिह्न है, नीचे के होठ पर छोटी-छोटी रेखायें मनुष्य को घर से बाहर अधिक रहने के लिए विवश करती हैं।

जिनका मुँह बहुत थोड़ा फटा हुआ हो वह गुणी, कलाकार, मोहक स्वभाव का होता है। मध्यम चौड़ाई का जिनका मुँह हो, वे व्यापार कुशल और अपने मतलब में चौकस होते हैं। जिनका मुँह कुत्ते के मुँह की तरह गालों तक फटा हुआ हो, बात करने में मगर का सा मुँह फट जाता हो ऐसे मनुष्य मूर्ख, निर्धन होते हैं और अक्सर दूसरों द्वारा सताये जाते हैं।

गर्दन

बहुत मोटी गर्दन वाले हाथी, मेंढ़ा, सूअर आदि जानवर अपने चारों ओर नहीं देख सकते, क्योंकि बहुत मोटी गर्दन को मोड़कर इधर-उधर देखना कठिन होता है। इसलिए इस प्रकार के जानवर सिर्फ आगे की ही चीज देखते हैं, उन्हें पीछे की और अलग-बगल की चीजें दिखाई नहीं पड़तीं। यही स्वभाव मोटी गर्दन वाले मनुष्यों में पाया जाता है। वे आज की अब की बात पर तो विचार करना जानते हैं, पर पीछे बातों की उपेक्षा करते रहते हैं। ऐसे लोगों को मूर्ख भी कह सकते हैं।

पतली गर्दन वाले अक्सर चतुर, बुद्धिमान और आगा-पीछा सोचकर काम करने वाले होते हैं। बहुत गम्भीर विषयों पर विचार करने वालों की गर्दन आगे की ओर टेढ़ी हो जाती है जिसमें सिर कुछ झुका हुआ सा रहा करता है। किसी भारी चिन्ता तथा सोच-विचार में पड़े हुए लोगों की गर्दन एक तरफ को ढुलकी हुई-सी रहती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। घमण्डियों की गर्दन तनी हुई, बहादुरों की अकड़ी हुई और हँसोड़ों की जरा पीछे की ओर झुकी रहती है।

लम्बी गर्दन वाले पशु-पक्षियों पर दृष्टिपात कीजिए। जिर्राफ, कंगारू, ऊँट, हिरन, सारस, बतख आदि दब्बू डरपोक, दूसरों के शिकार, भागने वाले, दुबले-पतले होते हैं, उनमें कुछ बौद्धिक विशेषता भी नहीं पाई जाती, यही बातें लम्बी गर्दन के मनुष्यों में देखी जाती हैं। मजबूत, भरी हुई, गोल, मंझोली, गर्दन वाले मनुष्य भारी भरकम, गम्भीर तथा तेजस्वी होते हैं। जिसकी लम्बाई बहुत छोटी हो, सिर कन्धों के बिल्कुल पास हो ऐसे मनुष्य खोटे, दुर्व्यसनी तथा ओछी तबियत के देखे जाते हैं। जिसमें नसें और हड्डियाँ चमक रही हैं। ऐसी गर्दन वाले बीमारियों में ग्रस्त रहते हैं। आये दिन उनके शरीर में कुछ व्यथाएँ खड़ी रहती हैं।

गोल भरी हुई गर्दन उत्तम स्वास्थ्य की चिह्न है। जिस गर्दन में जहाँ-तहाँ माँस झूल रहा हो, वह बहु संतान होना सूचित करती है। गले की हड्डियाँ यदि गर्दन में से बाहर दिखाई दे रही हों तो यह जननेन्द्रिय में दोष होने का कारण होती है। जिसकी गर्दन पर नस अधिक उभर रही हों उस पर बार-बार रोगों का आक्रमण होता रहता है। चपटी गर्दन अनिश्चित स्वभाव के मनुष्य की होती है, उनके विचार और कार्य सदा बदलते रहते हैं।

कान

आकृति विद्या के आचार्यों का मत है कि मध्यम आकार के, छोटे छेद वाले, सुन्दर सुडौल आकार के कान बहुत शुभ हैं ऐसे व्यक्ति में वे गुण होते हैं जिनके कारण उसका जीवन बहुत आनन्दपूर्वक व्यतीत होता है।

लम्बे बड़े-बड़े कानों वाला विनम्र स्वभाव, सदाचारी तथा डरपोक होता है। आपने देखा होगा कि खरगोश प्रकृति, डरपोक स्वभाव वालों के कान बड़े-बड़े होते हैं किन्तु यदि उनकी जड़ें मोटी हों तो बड़े कान होना महापुरुष, नेता तथा धर्मात्मा होने के चिह्न हैं। गौतम बुद्ध तथा महात्मा गाँधी के चित्रों में हम उनके मोटी जड़ वाले बड़े-बड़े कानों को देख सकते हैं।

इसी प्रकार चूहे के से बहुत छोटे कानों को छोड़कर साधारणतः छोटे कान प्रेम, प्रीति, स्नेह, सहानुभूति के लक्षण हैं, हाँ यदि बहुत ही छोटे कान हों तो उन्हें छोटे दिल, छोटे दिमाग तथा छोटे हौंसले की निशानी समझा जा सकता है।

पीछे की ओर सिर की बगलों से चिपके हुए कान लज्जा, शीलता, संशयात्मा तथा दब्बूपन के सूचक हैं। इंठे हुए से कान कुटिलता तथा टेढ़ेपन का इजहार करते हैं। हाथी के सीधे खड़े कान हिम्मत, मजबूती, मर्दानगी बताते हैं। जिनकी जड़ें बहुत ही कमजोर हों और कान सींग की तरह शरीर से जुदापन प्रकट करते हुए लग रहे हों तो लालच और क्रूरता की मात्रा बढ़ी-चढ़ी होगी।

मोटे सीधे और ऊँचे कानों वाले बड़े विचित्र स्वभाव के होते हैं, साधारणतः वे सीधे-सीधे तरीके से रहते हैं, पर यदि उन्हें उत्तेजित किया जाय, छेड़ा जाय या सताया जाय तो इतने भयंकर बन जाते हैं, जिसका सम्भालना कठिन है। इस आवेश में वे ऐसे कृत्य कर सकते हैं जिनसे उनका सीधापन देखते हुए कभी आशा नहीं की जाती थी। झांसी की रानी लक्ष्मीबाई के कान ऐसे ही थे, उस महलों में रहने वाली महिला ने अन्त में कैसा भयंकर रूप धारण किया था इस बात को इतिहासवेत्ता भली प्रकार जानते हैं।

कानों की जड़ यदि आँखों की सीध से ऊँची हों तो उससे स्वभाव की गर्मी प्रकट होती है, क्रोधी, खुँख्वार, बदला लेने वाले, झगड़ालू व्यक्तियों की कानों की जड़ें अक्सर आँखों की सीध से ऊँची होती हैं। सामान्यतः कानों की जड़ें आँखों की सीध में रहनी चाहिए, मध्यम श्रेणी के सद्ग्रहस्थ इसी प्रकार के होते हैं, किन्तु यदि कान की जड़ का ऊपरी भाग आँख के ऊपरी भाग से कुछ नीचा हो तो वह उत्तम स्वभाव, स्वस्थ शरीर और अच्छा मस्तिष्क होने का प्रमाण है।

शंख के से कान वाला समाज में प्रतिष्ठा प्राप्त, अगुआ होता है। जिसके कानों पर बड़े-बड़े बाल हों वह बड़ी उम्र वाला होता है। छोटे माँस रहित, पतले कान वाला मनुष्य हेटे काम करने वाला होता है और दुःख-दरिद्र की जिन्दगी बिताता है।

बहुत नसों की भरमार जिसके कानों में चमक रही हो वह दुष्ट स्वभाव और क्रूरकर्मी होता है। सिंघाड़े की तरह जिसका कान सिकुड़कर कुकड़ी बन रहा हो ऐसा व्यक्ति प्रायः अविश्वासी और दरिद्री होता है। पहलवानों पर यह बात लागू नहीं होती क्योंकि वे लोग कुश्ती लड़ने के लिहाज से अपने आप मरोड़-मरोड़कर कानों को इस प्रकार का बना लेते हैं।

आँखों से दूर फासले पर जिनके कान होते हैं उनकी योग्यता एवं विचार शक्ति बढ़ी-चढ़ी पाई जाती है, जिनके कान कनपटी के समीप हों वे उदासीन, वैरागी स्वभाव के होते हैं। कामों में उनका मन कम लगता है और एकान्त सेवन की इच्छा किया करते हैं।

कान की परीक्षा करते समय अभ्यासियों को यह मोटी बातें याद रखनी चाहिये कि छोटे, पतले, हल्के कान, ज्ञान, विद्या, बुद्धि, कोमलता तथा नम्रता के सूचक हैं। मध्यम श्रेणी के कान स्वस्थता तथा आनन्दप्रियता के चिह्न हैं और बड़े झंझड़, लाल और कठफूला से कान कुछ विशेष अपवादों को छोड़कर मोटे स्थूल और हल्के दर्जे के स्वभाव के लक्षण हैं।

कानों के छेद पतले होना बहुत शुभ हैं। ऐसे मनुष्य जहाँ रहते हैं वहाँ सदा आनन्द मंगल बना रहता है। अधिक चौड़े छेद वाले कान ऐसे लोगों के होते हैं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जो अपने लिए तथा दूसरों के लिए कुछ न कुछ बखेड़ा खड़ा किया करते हैं। बाहर से देखने पर जो छेद बहुत दूर तक दिखाई पड़ते हैं अर्थात् जो छेद सीधे होते हैं, वे बड़े परिश्रमी तथा शारीरिक दृष्टि से मजबूत होते हैं। जिनके छेद थोड़ी ही दूर से मुड़े होते हैं, बाहर से देखने पर छेद जरा-सा मालूम होता है, ऐसे लोगों की मित्रता बहुतों से होती है। उनका स्वभाव मिलनसार होता है।

मस्तक

मस्तक की मजबूत हड्डियों के अन्दर अत्यन्त कोमल भूरे रंग का चिकना-चिकना पदार्थ भरा हुआ है, जिसे मस्तिष्क कहते हैं। मस्तिष्क में असंख्य मानसिक शक्तियों का निवास है। इन शक्तियों के पृथक्-पृथक् स्थान हैं, यहाँ संक्षेपतः सार रूप में इतना ही बता देना पर्याप्त होगा कि सिर के अगले भाग यानी माथे की तरफ आशा-धर्म दृढ़ता, इज्जत, बुद्धि तथा विवेक आदि आत्मिक शक्तियों का स्थान है। सिर के पिछले भाग में लालच, लड़ाई, मोह, कामवासना आदि सांसारिक भावनाएँ रहती हैं। सिर की दोनों बगलियों में गाना, बजाना, नृत्य, चित्रकारी, कवित्व, रचना, विज्ञान तथा कला प्रभृति कोमल वृत्तियों का निवास है। सिर के इन तीनों भागों में जो मजबूत, पुष्ट, स्वस्थ तथा उन्नत दिखाई पड़ता हो, समझना चाहिए कि उस स्थान में रहने वाली शक्तियाँ भी बढ़ी-चढ़ी होंगी।

ऊँचे और चौड़े माथे को देखकर विचारशीलता तथा बुद्धिमत्ता का अनुमान किया जा सकता है। छोटा, दबा हुआ, कम चौड़ा माथा अल्पबुद्धि और विवेकहीनता का लक्षण है, उभरे हुए और चमकदार माथे वालों की स्मरण शक्ति तेज होती है तथा विद्याभ्यास का शौक बढ़ा-चढ़ा होता है।

कम ऊँचा माथा यदि लम्बाई में दूर तक फैला हुआ हो तो हाजिर जवाब, चतुर, गहराई तक पहुँचने तथा कुशाग्र बुद्धि का सूचक होता है। ऊँचे और चौड़े मस्तक वाले व्यक्तियों को यदि अवसर मिले तो वे महापुरुष, नेता और आदर्श व्यक्ति हो सकते हैं। इनमें परिश्रम, चतुरता, बुद्धिमत्ता और सच्चाई की काफी मात्रा होती है।

जड़ में अर्थात् भौंहों के पास माथा आगे की ओर बढ़ा हुआ हो और ऊपर बालों के पास पीछे को हटा हुआ हो तो समझना चाहिए कि सद्भावना और सच्चरित्रता की कमी है। नीचे-ऊपर धँसा हुआ और बीच में उभरा हुआ माथा सहानुभूति, गम्भीरता और उदारता का लक्षण है। ऊपर का भाग आगे निकला हुआ और नीचे का भाग भीतर धँसा हुआ हो तो यह व्यक्ति शौकीन तबियत का, यात्रा करने वाला तथा नित नई योजनाएँ बनाने वाला होगा।

गोलाई लिये हुए माथा कृपालुता, आदर, अनुराग तथा धार्मिकता प्रकट करता है। महरावदार अर्थात् बीच में नुकीला और दोनों ओर गोल माथा दार्शनिक, विचारक, विद्वान और नई बातें खोजने वालों का होता है। सीधे सपाट माथे वाले बेफिक्र, मस्तराम, हर हालत में खुश और चैन की बजाने वाले होते हैं, उन्हें दीन-दुनिया की ज्यादा परवाह नहीं रहती।

भवों के ठीक ऊपर माथे की हड्डियाँ यदि कुछ आगे बढ़ी हुई हों तो इसे उत्साह, जोश और लगन का चिह्न समझना चाहिए। देश और जाति की महत्त्वपूर्ण सेवा करने वालों के माथे के बीच में अक्सर गड्ढे देखे जाते हैं। अगर दोनों भवों के बीच में गड्ढा हो तो वाक्पटुता, प्रसन्नता, चतुराई तथा दयालुता का द्योतक समझना चाहिए।

फूला हुआ, भारी-सा, अधिक वजनदार मस्तक ठस्स बुद्धि और अड़ियल स्वभाव वालों का होता है। लम्बाई में बहुत छोटा किन्तु ऊँचा बहुत हो तो कपटीपन, ढोंग और मिथ्या भाषण की भरमार समझनी चाहिए। चौकोर माथा, प्रतिभा, स्थिरता, सच्चाई और दृढ़ता प्रकट करता है। व्यापारी और धनी लोगों के माथे में एक प्रकार की चमक रहती है। ऊबड़-खाबड़ बेडौल मस्तक अस्थिरता और काहिली का भेद खोलते हैं।

सिर का पिछला हिस्सा यदि भरा हुआ हो तो प्रेमी होने का और चिपटा हो तो स्वार्थी होने का लक्षण है। यह भाग यदि गड्ढेदार, सूखा हुआ, पोला-पोला हो तो चिडचिड़ेपन तथा खुदगर्जी की अधिकता बताता है। ठोस, चौड़ा, सीधा हो तो इन्द्रियों पर काबू रखने वाला होना चाहिए। छीपटी-सा पतला और उभरी हुई नसों का हो तो दुनियादारी के धन्धे में बहुत अधिक व्यस्त समझना चाहिए। साधु और त्यागी वृत्ति के लोगों के सिर के पिछले भाग को टटोलने पर एक छोटा-सा गड्ढा मालूम पड़ा करता है।

छोटी कनपटी वाले नीरस स्वभाव के होते हैं। बड़ी, चौड़ी या फैली हुई कनपटी रसीली प्रकृति के संगीत, साहित्य तथा कला-कौशल में रुचि लेने वालों की होती है। कनपटी के नीचे नाक की तरफ जाने वाली जबड़े की हड्डी यदि उभरी हुई हो तो उससे शारीरिक अस्वस्थता प्रकट होती है। कान के पीछे यदि हड्डियों के दो गुटके से उभरे हुए हों तो उस व्यक्ति को कूटनीतिज्ञ, रहस्यमय तथा गहरे स्वभाव का समझना चाहिए।

अब एक दृष्टि में सिर के तीनों भागों को मिलाकर देखिए। यदि 'दो मूँड' वाला सिर हो ऐसा मालूम पड़े कि एक साथ दो सिर जोड़ दिये गये हैं तो ऐसे मनुष्यों को दुर्गुणी तथा दरिद्रता से कष्ट पाने वाला समझना चाहिए। जिसके माथे में कूबड़ से उठे हुए होते हैं, ऐसे मनुष्य अपनी कम अकली से सदा दुःख पाते रहते हैं।

चपटे सिर वाले व्यभिचारी तथा आदरणीय पुरुषों की अवज्ञा करने वाले होते हैं। बहुत छोटे-सिर वाले चंचल और चालाक तो खूब होते हैं पर विद्वता तथा गम्भीरता की न्यूनता ही रहती है। मध्यम आकार का सुडौल सिर धनी विद्यावान, सुखी और सदाचारी लोगों का होता है। जिसके माथे पर रामानन्दी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तिलक का सा चिह्न हो वह बड़ा होनहार, धनी, पुरुषार्थी यथा यशस्वी होता है।

गाल

गोल, उचित मात्रा में माँसयुक्त गाल श्रीमन्तों के होते हैं। बीच में जरा-सी लालिमा की झलक हो तो यह भोगी अभिरुचि का चिह्न है। जिनके चेहरे की त्वचा पर चमक होती है वे स्वस्थ, प्रसन्न और समृद्ध होते हैं। लम्बाई को समतल बनाते हों पर फूले हुए न हों, ऐसे गालों वाले व्यक्ति राजसी आनन्दों से भरे-पूरे रहते हैं।

अधिक फूले हुए गाल आलसी या बेफिक्र लोगों के होते हैं। जिनके ऊपर जिम्मेदारी का बोझ अधिक रहता है उनके गालों का माँस झूल जाता है। अधिक परिश्रमी लोगों के गाल पिचक जाते हैं। जिनकी देह में कोई भीतरी रोग लगा होता है, उनके गालों का माँस बुरी तरह सूख जाता है। विद्या व्यसनी लोगों की कनपटी की हड्डी जो आँख से लेकर कान तक गई है ऊपर उठ आती है।

अधिक गम्भीर रहने और पेचीदा गुत्थियों को सुलझाते रहने से चेहरे पर झुर्रियाँ पड़ जाती हैं। जिनके चेहरे पर मुँहासे अधिक उठते हों, उनके रक्त में अशुद्धता या पाचनशक्ति की खराबी समझनी चाहिए। गालों का नीचे का भाग ऊपर के भाग की अपेक्षा अधिक भारी हो तो ऐसे लोग अभिमानी और दूसरों से बुरा व्यवहार करने वाले होते हैं।

हँसते समय जिनके गालों में गड्ढा पड़ता है वे दीर्घजीवी होते हैं। मुस्कराने में जिनके गालों पर ऊपर से नीचे की ओर रेखाएँ पड़ती हैं, वे सफल व्यापारी होते हैं। हँसी में जिनके गाल किसी एक स्थान पर अधिक फूल जाते हैं, वे पर निन्दक, चुगलखोर तथा छिद्रान्वेषी देखे जाते हैं।

कंधे

भरे हुए माँसल, पुष्ट और भारी कन्धे स्वस्थता, सबलता और तेजस्विता के चिह्न हैं। कन्धों की चोटी पर मोटे तथा स्याह काले बाल हों तो उसे शत्रुओं पर सदा विजय प्राप्त होती है। पर यही बाल यदि मुलायम, थोड़े और फीके रंग के हों तो चतुरता के चिह्न हैं, ऐसे लोग बड़ी-बड़ी कठिनाइयों को आसानी से पार कर जाते हैं। कन्धे पर बिल्कुल बाल न होना अशुभ माना जाता है। ऐसे लोग डरपोक और जल्द घबराने वाले होते हैं।

कन्धे सीधे होने चाहिए, सीधे कन्धों वाले हँसमुख और मिलनसार होते हैं, जिसके कन्धे कमान की तरह आगे को अधिक झुके हुए हों, वे कमजोरी, बीमारी और बेचैनी के शिकार बने रहते हैं। आगे की ओर उभरा हुआ सीना, लड़ाकू प्रवृत्ति के शूरवीरों का होता है। जिन कन्धों में जहाँ-तहाँ हड्डियाँ उभर रही हों, गाँठें-सी आ गई हैं। उन्हें दरिद्रता का प्रतीक समझना चाहिये। बीच-बीच में गड्ढे होना भोलेपन का निशान है। ऐसे लोग चालाकों द्वारा अक्सर ठगे जाते रहते हैं।

कन्धे के आगे की हड्डी जिसे हँसली कहते हैं, बहुत उभरी हुई नहीं होनी चाहिये। यदि वह माँस में दबी हुई हो, दूर से देखने पर उसका थोड़ा चिह्न मात्र दिखाई पड़ता हो तो उसे पारिवारिक सुख की कमी नहीं रहती। यदि हँसली की हड्डी आगे अधिक उभर रही हो तो दम्पत्ति जीवन कष्टमय रहता है।

पीठ

चौड़ी, सीधी, चिकनी और गोलाई लिए हुए पीठ सौभाग्यशाली मनुष्यों की होती है। रीढ़ की हड्डी भीतर धँसी हुई हो, माँस से ऊपर चमकती नहीं हो, तो उसे सुखी जीवन का चिह्न कह सकते हैं। रीढ़ की हड्डी ऊपर उभर रही हो, उसकी गाँठें अलग-अलग दिखाई पड़ रही हों तो उसे शारीरिक व्यथाएँ सताया करती हैं। रीढ़ की हड्डी यदि कन्धों के पास कूबड़ की तरह पीछे की ओर उठी हुई हों तो स्वार्थपरता, अनुदारता और चिड़चिड़ापन प्रकट करती है। जिनकी रीढ़ मध्य भाग से नीचे के हिस्से में उठी हो तो मूत्र रोगों की व्यथा बनी रहती है।

पीठ के दोनों पार्श्वों पर थोड़े से काले एवं मोटे बाल हों तो साहसी होने का चिह्न है। ऐसे मनुष्य खतरे से नहीं डरते और भारी विपत्तियों को हँसते-हँसते सह लेते हैं। पीठ पर मुलायम रोमावली, चपलता और विनोदप्रियता का लक्षण है। ऐसे आदमी गम्भीर नहीं होते और न नफा-नुकसान का कुछ अधिक विचार करते हैं। मन की मौज को पूरा करना उन्हें सबसे अधिक प्रिय लगता है।

पीठ के पिछले भाग में यदि पसलियाँ चमकती हों तो ऐसे मनुष्य को घमण्डी, ईर्ष्यालु तथा फिजूलखर्ची समझा जा सकता है। पीठ पर यदि पाँच के भीतर तिल हों तो शुभ है। पाँच से अधिक तिल हों तो सन्तान की ओर से उस व्यक्ति का जी सदा जलता रहता है। साँप जैसी अधिक लम्बी किन्तु बहुत ही कम चौड़ी पीठ जिनकी होगी वे सदा चिन्ता में डूबे हुए देखे जायेंगे। ऐसे लोग बहुत ही कम हँसते पाये जाते हैं।

छाती

शिला सी चौड़ी और मजबूत छाती बलवीर्य की प्रचुरता का चिह्न है। साहसी लोगों की छाती पर बालों की अधिकता रहती है। पूरी साँस लेने और निकालने में जो काफी फैल और सिकुड़ सकती है, वह दीर्घजीवन की प्रतीक है। स्तन स्थानों पर माँस की अधिक मात्रा होना धनी होने का चिह्न है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिस छाती में माँस की कमी हो, पसलियाँ चमक रही हों, उसे दरिद्रता या अज्ञानता का शिकार कह सकते हैं। साधारणतः स्वस्थ पुरुषों की छाती कमर की अपेक्षा अधिक चौड़ी होती है, परन्तु यदि वह छाती और चौड़ाई की अपेक्षा लम्बाई में चली गई हो तो इसे निर्बलता का चिह्न समझना चाहिए। जिनका धड़ सारंगी की तरह लम्बा परन्तु पतला हो वे कमजोर रहते हैं, पर ऐसे लोगों का मस्तिष्क बड़ा तेज होता है।

दोनों ओर की पसलियों के जोड़ की संधि का भाग यदि भीतर धँसा हुआ हो तो फेफड़ों की कमजोरी प्रकट करता है, ऐसे लोग जुकाम, खाँसी आदि से पीड़ित रहते हैं। यदि संधि भाग ऊपर उठा हुआ हो तो जिगर या तिल्ली में दोष होगा। पसलियों की संधि छाती के समतल हो तो सदा निरोगता बनी रहेगी।

पसलियाँ सीधी गोलाई की चली आवें तो स्वास्थ्य की निर्दोषता समझनी चाहिए। यदि वे एक स्थान पर अधिक उठी हुई दिखाई दें, तो वे गवाही देती हैं कि इसने सामर्थ्य से अधिक काम किया है। पसलियाँ आपस में चिपटी हुई हों तो एक-दूसरे के बीच में फासला कम हो तो यह चुस्ती, स्फूर्ति और निरालस्यता का लक्षण है। जिनकी पसलियों में अधिक फासला होता है, वे अक्सर काम से जी चुराने वाले होते हैं।

पेट

पेट छाती से कम चौड़ा होना चाहिए पर जिनका पेट छाती से बड़ा हो, तूमी की तरह आगे निकला हो और कड़ा हो उसे अपच का कारण समझना चाहिये। भोजन भट्ट मनुष्यों का पेट बाहर निकल आता है। ऐसे व्यक्ति अक्सर दरिद्री देखे जाते हैं।

चर्बी या माँस की अधिकता के कारण बढ़ा हुआ पेट धनवान होने का चिह्न है। जिनके पेट पर सलबटें पड़ती हैं वे सुखी जीवन व्यतीत करते हैं। एक सलबट वाले ज्ञानवान, दो सलबट वाले धनवान और तीन सलबट वाले भरे-पूरे कुटुम्ब के होते हैं। अधिक सलबटों का पड़ना शिथिलता और निराशा का कारण होता है।

जिनके पेट पर नसें उभरी होती हैं, उन्हें दस्त साफ न होने की शिकायत बनी रहती है। यदि पेट की बगलें अधिक फूली हों, बाहर की ओर निकली हुई हों तो ऐसे मनुष्य स्वार्थी, कंजूस किन्तु धनवान होते हैं। नाभि का गड्ढा गहरा हो तो लक्ष्मी उसका साथ नहीं छोड़ती, जिसकी नाभि ऊपर उठी हुई होती है, उन्हें जीवन के कठोर संघर्षों में से गुजरना पड़ता है। नाभि का मुख ऊपर को हो तो सदाचारी, सामने हो तो संचयशील स्वभाव समझना चाहिये कामी पुरुषों का पेडू नाभि से नीचे का भाग सख्त तथा फूला हुआ रहता है।

पेट से छाती पर तिल अधिक हों तो वह मनुष्य दूसरे को ऋण देने वाला साहूकार होता है। परन्तु जिसके छाती से अधिक पेट पर तिल हों वह दूसरों का कर्जदार बना रहता है। पेट पर मुलायम रोमावली होना शुभ और कठोर, कड़े तथा काले बाल होना अशुभ समझा जाता है।

बाहें

सीधी, गोल, भरी हुई लम्बी बाहें राज-ऐश्वर्य प्राप्त करने वाले मनुष्यों की होती हैं। जिनके भुजदण्ड कठोर हों, नसों और माँस का जमाव हो तो ऐसे व्यक्ति बड़े निर्भीक और स्वतन्त्र प्रकृति के होते हैं, जिनके भुजदण्डों पर माँस झूलता हो उन्हें काम से जी चुराने वाले तथा अधिक बातें बनाने वाला कहना चाहिए।

कोहनी के नीचे की हड्डी निकली हो तो वह मानसिक अशान्ति का लक्षण है। कोहनी के इधर-उधर की दो गाँठें बाहर को निकल रहीं हो तो शारीरिक कमजोरी का कारण है, ऐसी बाहें कोई महत्त्वपूर्ण पुरुषार्थ नहीं कर पातीं। बाँह यदि पीछे की ओर जितनी मुड़ेगी उतना ही मनुष्य दुस्साहसी होता जायेगा।

बाँह पर नसें बहुत उभर रही हों तो इसे चिन्ता या कुढ़न का कारण समझना चाहिए। बाँहों पर रोमावली होना कवि या स्वाध्याय प्रिय होने का लक्षण है। जिनकी बाँहों पर अधिक बड़े बाल होते हैं वे उपकारी और उदार स्वभाव के पाये जाते हैं।

कलाई की हड्डी उभर रही हों, कड़ी नसों से ऊपर दिखाई पड़ती हों तो उसे स्वावलम्बी समझना चाहिए, ऐसे पुरुष अपने बलबूते पर कार्य करते हैं और बड़ी-बड़ी सफलताएँ प्राप्त करते हैं। जिनकी कलाई, पतली कोमल, माँस में दबी हुई हो उन्हें दूसरे के उपार्जित वैभव को भोगने का अवसर मिलता है, लम्बी बाँहों वाले महापुरुष या महात्मा होते हैं, पर उनकी बाँहें शरीर को देखते हुए छोटी हों, या अन्य अंगों की अपेक्षा अधिक मोटी हों तो समझना चाहिए कि उन्हें धन की चिन्ता सदा ही बुरी तरह परेशान करती रहेगी।

रहन-सहन

जोर-जोर से कदम पटककर सड़क पर खट-पट करता हुआ चलने वाला मनुष्य अभिमानी, चुस्त और फुर्तीला होता है। पैरों को हाथी की तरह गाढ़-गाढ़कर चलने वाले स्वावलम्बी, शान्त स्वभाव, धैर्यवान और न्यायप्रिय होते हैं। अपने सिद्धान्तों की रक्षा के लिये ऐसे लोग बड़ी-बड़ी आपत्तियों का मुकाबला भी खुशी-खुशी करते हैं।

रास्ता चलते समय दो आदमियों की जगह घेरने वाले ऐसे लोग जो हाथों को इधर-उधर हिलाते चलते हैं, हिलते और झूमते हुये आगे बढ़ते हैं, दूसरों के लिए रास्ता नहीं छोड़ते पर अपने सामने आने वाले को हटा देते हैं, इस प्रकार के लोग बदमिजाज, घमण्डी, अन्यायी,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर-पीड़क और शैतानी नशे में मस्त होते हैं। कमर झुकाकर और कन्धों को आगे लटकाकर चलने वाले कमजोर और निराश देखे जाते हैं।

साँप की तरह टेढ़ी-मेढ़ी रीढ़ वाले विश्वासघाती, धोखेबाज और बेईमान होते हैं। उनकी मीठी बातों के पीछे कपट का पुट लगा रहता है।

जो बहुत अकड़कर बातें करता है, जरा-जरा-सी बात में लाल-पीला हो जाता है, हाथ पटकने और गरजने लगता है, ऐसे मनुष्य को ''मिट्टी के शेर'' से अधिक और कुछ नहीं समझना चाहिए। एक लताड़ में उनकी सारी हेकड़ी काफूर हो जाती है। परले सिरे के कायर और बुजदिल आदमी इस तरह की अकड़बाजी दिखाते हैं, वे किसी का कुछ बिगाड़ नहीं सकते। बहादुर और खूँख्वार आदमी देर में गरम होते हैं और जब गरम होते हैं तो कुछ करके दिखाये बिना चुप नहीं होते।

जिनके पैर छितराये हुए शराबियों की तरह इधर-उधर पड़ते हैं और चलने में पैर एक-दूसरे से लड़ते जाते हैं ऐसे लोग, आलसी, असफल और अन्धविश्वासी होते हैं।

जिनके कपड़े मैले, फटे, बेतरतीब तथा बिखरे हुए हों उन्हें सुस्त, काहिल, लापरवाह और आत्म-गौरव से रहित समझा सकता है, किन्तु स्वाभिमानी और स्वच्छ तबियत वाले गरीब होने पर भी तरकीब और सफाई के साथ कपड़े पहिनेंगे, भले ही वे सस्ते या फट जाने पर मरम्मत किये हुए हों।

बिखरे हुए बाल, मैले हाथ, बढ़े हुए बाल, पीले दाँत टूटे बटन, फटे जूते, बढ़े हुए नाखून, जहाँ-तहाँ लगे हुए दाग प्रकट करते हैं, इस व्यक्ति की आदतें ऐसी हैं जो दरिद्रता के दुःख में ढकेलकर छोड़ेंगी। लापरवाह लोग धन नहीं कमा सकते और न उसकी रक्षा ही कर सकते हैं।

हाथी, सिंह, हंस की गम्भीर गति से स्थिरतापूर्वक जिनके पैर पड़ते हैं, वे विश्वासी, स्थिर मति और मजबूत स्वभाव के होते हैं। उनके विचार और कार्यों में बहुत कम अन्तर देखा जाता है।

जिनके चेहरे पर अनेक भाव क्षण-क्षण में नहीं बदलते, वे प्रतिष्ठित महापुरुष होते हैं। चेहरे पर एकरस, गम्भीर, स्थिर एवं निराकुल देखकर यह सहज ही अनुमान किया जा सकता है कि यह मनुष्य अपने वचन और कर्त्तव्य को पूरा करने की जिम्मेदारी को समझता है। जिनके चेहरे पर क्षण-क्षण में भाव बदलते हैं ऐसे लोगों की बात का भरोसा करना अपने को खतरे में डालना है।

जो बेढंगे तरीके से पैर फैलाकर उकड़ू होकर औंधे पड़कर सभ्य समाज में बैठते हैं, उन्हें बेबकूफ कहना चाहिए। नाक, कान या दाँत का कुरेदना, उँगलियाँ चटकाना, पैरों को हिलाना, होठ चबाना, मुँह मरोड़ना इस प्रकार के निरर्थक काम जिनकी आदत में होते हैं, उन्हें पथ-भ्रष्ट कहते हैं। उनके मस्तिष्क में अनेकों समस्यायें गूँजती हैं, पर किसी प्रश्न का ठीक निर्णय नहीं कर पाते। ऐसे किंकर्त्तव्यविमूढ़ व्यक्तियों को इठलाकर, लड़कपन जैसी बातें करने या चेष्टाएँ करने की आदत पड़ जाती है।

सामुद्रिक शास्त्र साक्षी है कि यदि शरीर और मन की दशा अस्वस्थ होगी तो चेहरे पर ऐसे चिन्ह प्रकट होंगे जो देखने में बुरे लगते हैं, खटकते हैं, कुरूप मालूम पड़ते हैं और अनायास ही एक प्रकार का भय, आतंक तथा सन्देह उत्पन्न करते हैं। बकरी के बच्चे ने अपने छोटे से जीवन में पहले कभी भेड़िये का दर्शन भले न किया हो और न किसी ने उसे भेड़िये के स्वभाव के बारे में कुछ बताया हो, तो भी वह भेड़िये के प्रथम बार दर्शन करते ही क्षणभर में वह जान लेता है कि भेड़िया किस प्रकार के स्वभाव का है और वह मेरे ऊपर क्या कहर बरपा सकता है। प्रकृति ने यह सहज ज्ञान मनुष्यों को भी दे रखा है ताकि किसी के सम्पर्क में आते ही यह जान लिया करें कि सामने वाले व्यक्ति में क्या भले-बुरे गुण हैं और उनसे क्या हानि-लाभ हो सकता है।

यह बात ध्यान में रखने की है कि किसी के शुभ लक्षणों को तो निःसंकोच प्रकट कर देना चाहिये। परन्तु कुलक्षणों सम्बन्धी धारणा प्रकाशित करने में बहुत संयम से काम लेना चाहिए। क्योंकि कदाचित किसी भूल के कारण वे लक्षण ठीक न निकले तो अकारण ही घृणा, कलह, द्वेष तथा दुर्भाव बढ़ेगा, दूसरे वह व्यक्ति यह विश्वास कर बैठा कि-मेरे तो लक्षण ईश्वर ने ही दुर्गुणी होने बनाये हैं, तो वह निराश होकर अपनी बुराइयाँ छोड़ने का प्रयत्न न करेगा। अतएव जहाँ तक हो सके दूसरों को प्रोत्साहित करने, उनके सद्गुण प्रकाशित करने तथा आत्म-गौरव एवं महानता की भावनाएँ जगाने के लिये ही इस विद्या का उपयोग करना चाहिए। किसी व्यक्ति के बुरे चिह्नों को देखकर स्वयं सावधान रहना तो ठीक है पर उसे बदनाम तथा हतोत्साह करके निराश, निर्लज्ज तथा शत्रु बनाना उचित नहीं। आकृति विद्या के अभ्यासियों को इन सब आवश्यक बातों की चेतावनी देते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हस्तरेखा विज्ञान

आकृति से प्रकृति का अनुमान

पशु विद्या के जानकार लोग घोड़ा, गाय, भैंस, बैल, ऊँट आदि के अंगों की बनावट पर बारीकी से नजर डालते हैं और यह बता देते हैं कि पशु इस नस्ल का है। इसके गुण, कर्म, स्वभाव इस प्रकार के होंगे। उस पशु को काम में लाकर परीक्षा करने के लिये बहुत समय चाहिये। इतना समय खरीद-फरोख्त में नहीं मिलता, यह कठिनाई बहुत बड़ी मालूम पड़ती, अगर ''शारीरिक चिन्हों को देखकर स्वभाव जानने की विद्या'' का आविष्कार न हुआ होता। परन्तु अब वैसी कठिनाई नहीं है, एक मामूली किसान मोटेतौर से देख-भाल करके झट बता देता है कि यह बैल कैसा निकलेगा। गाय, भैंस के दूध-घी के बारे में भी वह आसानी से अन्दाजा लगा लेता है। इसी प्रकार ऊँट, घोड़ा, हाथी आदि की खरीद फरोख्त करने वाले लोग भी एक दृष्टि डालकर पशु के भीतर का हाल जान लेते हैं। उनका अन्दाज कुछ अपवादों को छोड़कर आमतौर से ठीक ही निकलता है।

आकृति देखकर पशुओं का स्वभाव जानने की विद्या इतनी सच-साबित हुई कि अब उसमें सन्देह और मतभेद की अधिक गुंजायश नहीं रही। अनुभव ने उसकी प्रामाणिकता साबित कर दी है। यह सब देखते हुए भी जो लोग आकृति देखकर मनुष्य की पहचान के बारे में शक करते हैं, उसे मिथ्या कहते हैं, उनकी बुद्धि को क्या कहा जाय ? वास्तविकता यह है कि जिस प्रकार पशु के बाह्य चिन्ह देखकर उसके भीतर के गुण जाने जा सकते हैं, उसी प्रकार मनुष्य को भी पहचाना जा सकता है। गुणों से आकृति की रचना होती है। जिसका जैसा स्वभाव है, उसकी शारीरिक आकृति भी वैसी ही बनने लगेगी। हम देखते हैं कि जब कोई आदमी झल्लाया हुआ हो, झुंझला रहा हो तो उसके चेहरे की सिकुड़न-झुर्रियाँ एक खास किस्म से तनी होती हैं, मस्तिष्क पर झुर्रियाँ पड़ जाती हैं, भौंहों में ऐंठ पड़ जाती है, कनपटी के पास का चमड़ा सिकुड़ जाता है, आँखें चिपटी-सी रहती हैं, गालों की माँसपेशियाँ तनती हैं। इसी प्रकार शोक, चिन्ता, दुःख, पश्चाताप, विरह, वेदना, दर्द, हानि, खुशी, लाभ, सन्तोष, अभिमान आदि की अवस्था में भी अलग-अलग प्रकार की आकृतियाँ-भाव-भंगिमा बनती हैं। जैसे-जैसे अन्तरंग अवस्था बदलती रहती है, वैसे-वैसे ही चेहरे की भाव भंगी भी बदल जाती है।

जब मन में कोई भाव स्थाई रूप से आता है तो आकृति भी उसी के अनुसार बदल जाती है, किन्तु यदि कोई मनोभाव स्थाई रूप से अपने ऊपर अधिकार जमा ले, तो उसकी छाया अंग-प्रत्यंगों पर स्थाई रूप से प्रकट होने लगती है। क्रोधी आदमी की आँखों में लाल रंग के डोरे पड़ने लगते हैं। स्वार्थी आदमी की आँखों में तिरछापन आ जाता है। माथे पर अधिक सरबटें देखकर यह अनुमान लगाया जाता है कि इस आदमी को भावनाओं का आवेश अधिक आता है। काम, क्रोध, लोभ, शोक, चिन्ता आदि के कारण सैकड़ों प्रकार की बीमारियाँ पैदा होती हैं, कुरूपता आती है और कमजोरी तथा अकाल मृत्यु का सामना करना पड़ता है। इसी प्रकार सद्भावों से, सद्गुणों से 'स्वास्थ्य तथा सौन्दर्य' की प्राप्ति होती है। इन सब प्रमाणों से स्पष्ट है कि मनुष्य का जैसा स्वभाव तथा विचार होता है, वैसी ही उसकी आकृति, शारीरिक दशा बनने लगती है। आकृति और मनोभावों का आपस में बहुत घना सम्बन्ध है, इतना घना कि एक को देखकर दूसरे को पहचानने में कुछ विशेष अड़चन न होनी चाहिये।

शरीर शास्त्र के अनुभवी विद्वानों का कथन है कि मस्तिष्क से निकलकर ज्ञानतन्तु शरीर के विभिन्न अंगों में फैल गये हैं। यों तो यह ज्ञानतन्तु शरीर के हर एक हिस्से में मौजूद हैं परन्तु सबसे अधिक मात्रा में यह तन्तु हाथों की ओर गये हैं। मस्तिष्क में जो विचारधारा काम कर रही है, चित्त में जैसे विश्वास जम गये हैं, हृदय में जैसी धारणा है, उसका प्रकटीकरण हाथ को देखकर आसानी से हो सकता है। आकृति विज्ञान के विशेषज्ञ और शरीर विज्ञान के आचार्य एक स्वर से इस बात का समर्थन करते हैं कि शरीर की भीतरी दशा का हाथों को देखकर परिचय प्राप्त किया जा सकता है। वैद्य लोग हाथ की जड़ में चलने वाली नाड़ी को देखकर रोगों का निदान करते हैं। कारण यह है कि ज्ञानतन्तुओं का हाथ में अत्यधिक बाहुल्य होने के कारण शरीर के अन्य अंगों की अपेक्षा हाथ की नाड़ियाँ अधिक स्पष्ट होती हैं। चिकित्सक लोग नाखून की परीक्षा करने से भी रोगों का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निर्णय करते हैं, इसका कारण भी हाथों में अधिक मात्रा में रहने वाले ज्ञानतन्तु ही हैं।

जिन्होंने डाक्टरी विद्या पढ़ी है, वे जानते हैं कि लकवा रोग से कुछ समय पूर्व हथेली की रेखाओं में बड़ा भारी परिवर्तन होने लगता है। अक्सर बहुत सी छोटी-मोटी रेखाएँ बिलकुल गायब हो जाती हैं। इससे प्रतीत होता है कि हाथ के द्वारा न केवल वर्तमान काल की स्थिति जानी जाती है वरन् यह भी जाना जा सकता है कि भविष्य में कैसी-कैसी घटनाएँ घटित होने वाली हैं। वर्तमान से भविष्य का बहुत बड़ा सम्बन्ध है। अमुक व्यक्ति आज यह कह रहा है, यह जान लेने के पश्चात् यह अनुमान लगाना सहज है कि उसका भविष्य कैसा होगा ? मोटी बुद्धि वालों को भविष्य की जानकारी प्राप्त करना कोई चमत्कार जैसी वस्तु दिखाई पड़ती है परन्तु वास्तव में वह इतनी आश्चर्यजनक नहीं है, जितनी कि समझी जाती है। जब बुखार आने को होता है तो कुछ समय पहले देह टूटने लगती है। बच्चा पैदा होने से भी नौ मास पहले स्त्री का पेट बढ़ने लगता है। आँखें जब दुखने आती हैं तो कुछ समय पहले पूर्व लक्षण प्रकट होने लगते हैं, दाँत गिरने से पहले उनका हिलना शुरू हो जाता है, इसी प्रकार पूर्व लक्षणों के द्वारा मनुष्य का भविष्य भी जाना जा सकता है। जैसी आन्तरिक दशा होती है, बाह्य परिस्थितियाँ उसके अनुसार ही प्राप्त होकर रहती हैं।

हाथ की रेखाओं पर आप विशेष रूप से ध्यान दें, तो आपको मालूम पड़ेगा कि वे घटती-बढ़ती रहती हैं। बहुत सी नई रेखाएँ पैदा होती हैं और बहुत सी गायब हो जाती हैं। कई की लम्बाई कम होती है, कई बढ़ जाती हैं, किसी में शाखा-प्रशाखाएँ फूटती हैं, कुछ एक तरफ से दूसरी तरफ को झुकती हैं, कुछ मोटी से पतली और पतली से मोटी हो जाती हैं। इस प्रकार के परिवर्तन निरर्थक नहीं होते, वरन् उनमें कुछ खास रहस्य छिपा होता है। मनुष्य की आन्तरिक दशा के हेर-फेरों का प्रभाव हस्त रेखाओं पर पड़ता है, तदनुसार उन रेखाओं में लौट-फेर शुरू हो जाता है। इस परिवर्तन को देखकर अनुभवी व्यक्ति आसानी से पता लगा सकते हैं कि अमुक व्यक्ति की सूक्ष्म परिस्थितियाँ किस दशा में चल रही हैं और उनके कारण निकट भविष्य में किस प्रकार की बाह्य परिस्थितियाँ बनना सम्भव है। यह अनुमान कभी-कभी कुछ गलत भी हो सकते हैं, जिसके कारण अक्सर दो देखे जाते हैं—(१) परीक्षक का सूक्ष्म बुद्धि तथा अनुभवी न होना (२) स्वभाव का इतना नया परिवर्तन-जिसका अंकन रेखाओं पर ठीक प्रकार से न हो पाया हो। स्वभाव में अचानक जबर्दस्त परिवर्तन हो जाने पर भविष्य की रचना भी तुरन्त बदल जाती है परन्तु हाथ की रेखाएँ इतनी जल्दी नहीं बदलतीं, उनके बदलने में कुछ देर लगती है। इस नये परिवर्तन की पूरी जानकारी प्रकट न हो तो हस्तरेखाएँ देखकर जो फल बताया गया है, वह गलत साबित हो सकता है। ऐसे अपवाद कम होते हैं, कभी-कभी होते हैं, तो भी होते अवश्य हैं। इसलिये सामुद्रिक विद्या में प्रवेश करने वाले को, परीक्षार्थी तथा परीक्षक को, यह कठिनाई भली प्रकार ध्यान में रखनी चाहिये और आरम्भ में यदि थोड़ी सफलता मिले तो उससे निराश न होकर अधिक सूक्ष्म बुद्धि का प्रयोग करके वास्तविकता तक पहुँचने का प्रयत्न करना चाहिये।

हाथ की रेखाएँ मुट्ठी बाँधने का फल हैं या काम करने से हथेली में सुकड़न पड़ जाती है, ऐसा कहकर सामुद्रिक विद्या के महत्त्व को अस्वीकार करने वालों का मत अधिक बुद्धिसंगत नहीं जान पड़ता। क्योंकि यदि ऐसा ही होता तो धनी लोग जो हाथ से कुछ काम नहीं करते, उनके हाथ में रेखाएँ न होतीं या कम होतीं, इसके विपरीत किसान और मजदूर जो सदा कठिन परिश्रम में लगे रहते हैं, उनके हाथ में बहुत अधिक रेखाएँ हुआ करतीं। परन्तु ऐसा देखा नहीं जाता। आप देखेंगे कि जिन लोगों का जीवन एक निश्चित धारा पर बहता चला जा रहा है और जिनमें कोई सद्गुण या दुर्गुण नहीं है, उनके हाथ में कम रेखाएँ होती हैं क्योंकि उनके जीवन में विशेष हलचलें पैदा होने की संभावनाएँ नहीं होतीं। जो लोग अस्थिर चित्त के होते हैं, चढ़ाव-उतार के कारोवार करते हैं, हलचलों में भाग लेते हैं उनके जीवन में सुख दुःखों की, लौट-फेरों की बड़ी जोखिम रहती है तदनुसार उसके हाथों में रेखाएँ भी अधिक होती हैं। यदि यह बात न होती और गर्भ में बालक के मुट्ठी बाँधे रहने के कारण ही हाथ में सरवटें पड़ा करतीं तो उनकी संख्या सभी बालकों में करीब-करीब समान होनी चाहिये थी, परन्तु देखने से विदित होता है कि नवजात शिशुओं की रेखाओं की संख्या में भी भारी भिन्नता पायी जाती है।

परीक्षणों के आधार पर हमें इसी नतीजे पर पहुँचने के लिये विवश होना पड़ता है कि हाथ की रेखाएँ अपने अन्दर कुछ रहस्य छिपाये हुए हैं। वह रहस्य यह है कि 'मनुष्य की भीतरी परिस्थितियों की और भविष्य में घटित होने वाली घटनाओं की हस्त रेखाएँ एक प्रकार की सचित्र लिखावट हैं, जिसे पढ़कर अपने बारे में और दूसरों के बारे में बहुत सी अज्ञात बातों को जाना जा सकता है।

सामुद्रिक विद्या का इतिहास बहुत पुराना है। भारतवासी पुरातन काल से इससे लाभ उठाते आ रहे हैं। यहाँ से इस विद्या का अन्य देशों में प्रसार हुआ और चीन, तिब्बत, फ्रांस, मिश्र, यूनान आदि देशों में भी यह विद्या फैली। ईसा से तीस हजार वर्ष पहले चीन में हस्त रेखा जानने वाले विद्वान मौजूद थे, ऐसा पता चलता है। यूनान देश में पीलीर्मन, अलातूनिया, प्लिनी, हिस, पानस आदि कितने ही विद्वान इस विद्या के धुरधंर ज्ञाता हो चुके हैं। इतिहास में ऐसा उल्लेख मिलता है कि सम्राट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सिकन्दर को हिसपानिक नामक विद्वान ने हस्त रेखा सम्बन्धी एक पुस्तक स्वर्णाक्षरों में लिखकर भेंट की थी। जब छापेखानों का आविष्कार हुआ ही था कि बाइबिल के बाद सामुद्रिक सम्बन्धी एक 'डिक कुन्ट सिरोमन' नामक पुस्तक जर्मनी में सन् १३७५ में छपी। इसके बाद वहाँ सन् १४९० ई. में एक दूसरी पुस्तक 'श्रोमैटिआ अरिस्टजिज कमफिजुर्टस' छपी। यह दोनों पुस्तकें आज भी ब्रिटिश म्यूजियम में सुरक्षित हैं। इंग्लैण्ड में चौथे जार्ज के शासन काल में यह विद्या इतनी अधिक बढ़ी कि धूर्त लोग इसके द्वारा अनुचित लाभ उठाने लगे। ऐसे लोगों के विरुद्ध वहाँ की पार्लियामेंट ने एक 'एन्टी पामिस्ट्री बिल' पास किया।

योरोपीय देशों ने हस्त रेखा विद्या के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण खोजें कीं और विज्ञान द्वारा यह सावित किया कि यह विद्या शरीर विज्ञान और मनोविज्ञान के आधार पर अवलम्बित है। वैज्ञानिक मेन्सीनर ने अपने परीक्षणों द्वारा यह साबित कर दिखाया कि हाथों में एक विशेष प्रकार के लाल रंग के परमाणु होते हैं, जो रेखाओं के सहारे-सहारे बढ़ते और पीछे हटते हैं। डॉ. ओसकर ने इस विषय में अच्छे ग्रन्थ लिखे हैं। मि. शेरो की पामिस्ट्री दुनिया भर में ख्याति प्राप्त कर चुकी है।

सामुद्रिक विद्या के प्रेमियों को यह बात विशेष रूप से ध्यान रखने की है कि हाथ की विभिन्न रेखाओं पर तथा हाथ की बनावट पर विस्तृत विचार करने के उपरान्त ही किसी निर्णय पर पहुँचना चाहिये। केवल एक रेखा या अमुक चिन्ह को देखकर ही कोई निश्चित सम्मति प्रकट न कर देनी चाहिये। चतुर वैद्य कई प्रकार की परीक्षाओं द्वारा रोग की जानकारी प्राप्त करते हैं। इसी प्रकार विभिन्न पहलुओं पर विचार करके हाथ का फल निर्धारित करना चाहिए।

हाथ

प्राय: दो प्रकार के हाथ देखे जाते हैं। किसी का हाथ मुलायम होता है, दबाने से रूई की तरह मालूम पड़ता है। किसी का हाथ कड़ा होता है, दबाने से कड़ी हड्डियों और कठोर माँसपेशियों का अनुभव होता है। कोमल हाथ वाले धनी, भावुक, आराम पसन्द, मधुरभाषी, मन में छिपाव रखने वाले, चंचल मन वाले पाये जाते हैं, थोड़ी-सी खुशी में वे फूल जाते हैं और थोड़ी-सी चिन्ता, बीमारी, आपत्ति, आशंका उनको भयभीत एवं व्याकुल बना देती है।

जिनका हाथ कठोर, कड़ा और मजबूत होता है, वे विचारशील, गम्भीर, दूरदर्शी, परिश्रमी, धुन के पक्के होते हैं। उनका स्वभाव रूखा और कर्कश होता है। उनके मित्र थोड़े होते हैं पर जो होते हैं, सच्चे और स्थायी होते हैं। कठिनाइयों से भयभीत होने की अपेक्षा साहसपूर्वक मुकाबला करना उन्हें ज्यादा पसन्द होता है। ऐसे व्यक्ति या तो परीक्षार्थी होते हैं या फिर घोर स्वार्थी पाये जाते हैं। साहसपूर्ण और खतरनाक काम करने में कठोर हाथ वालों की रुचि अधिक होती है।

हाथ की बनावट—हाथ की बनावट सात प्रकार की मानी गई है—(१) समकोण, (२) चमसाकार, (३) दार्शनिक, (४) कलाकार या व्यावसायिक, (५) निकृष्ट, (६) आदर्शवादी या विषम, (७) मिश्रित।

बनावट को देखकर यह आसानी से जाना जा सकता है कि कौन हाथ किस श्रेणी का है अब इनका प्रथक्-प्रथक् विवेचन किया जाता है।

समकोण हाथ—चौकोर हथेली वाले हाथ समकोण कहे जाते हैं। जिसकी हथेली की लम्बाई-चौड़ाई बराबर हो तथा चारों उँगलियों को मिलाकर चौड़ाई एवं बीच की उँगली की लम्बाई बराबर हो, वह हाथ समकोण कहा जाता है। ऐसे हाथ सीधे, सपाट, कोमल, मुलायम और भरे हुए होते हैं। समकोण हाथ सबसे अच्छा समझा जाता है।

ऐसे व्यक्ति मिलनसार, उत्साही, नम्र स्वभाव तथा स्वाभिमानी होते हैं। असभ्य व्यवहार उन्हें सहन नहीं होता। वे नेता होते हैं पर आज्ञापालन का गुण उनमें विशेष रूप से होता है। यदि उँगलियाँ गठीली हों तो सत्यवादी, शान्त स्वभाव, विचारशील, गम्भीर और दृढ़ निश्चयी होता है। दयालु होते हुए भी अन्धविश्वास से दूर रहता है। किन्तु यदि उँगलियाँ नरम और सुडौल हों तो सजावट, फैशन परस्ती, सौन्दर्य, मित्रता का भाव अधिक रहेगा। गन्दगी उन्हें जरा भी बर्दाश्त नहीं होती। समकोण हाथ वाले अक्सर सुयोग्य डाक्टर, व्यापारी, वकील, अन्वेषक तथा बुद्धिजीवी होते हैं। वे सच्चरित्र होते हैं पर विचारों में स्थिरता का बड़ा अभाव रहता है।

चमसाकार हाथ—जिस हाथ की उँगलियाँ कुछ मुड़ी हुई टेढ़ी सी रहती हैं और कलाई के पास हथेली की चौड़ाई अधिक होती है और उँगलियों के पास चौड़ाई कम होती है अथवा हथेली के पास चौड़ाई कम होती है और उँगलियों के पास अधिक होती है ऐसे हाथ को चमसाकार हाथ कहते हैं।

जिसकी हथेली कलाई के पास अधिक चौड़ी होती है, उनके कार्य बहुत ऊँचे आदर्शों से भरे होते हैं फिर भी वे आम लोगों को फायदा नहीं पहुँचा पाते। उन्हें अपने कार्यों में बहुत अधिक सहायता नहीं मिलती है। इसके विपरीत वे लोग जिनकी हथेली उँगलियों के पास अधिक चौड़ी होती है, बहुत बड़े आदर्शवादी नहीं होते। समय की प्रगति को देखते हुए वे काम करते हैं। कार्य-कुशलता की अधिकता के कारण वे ख्याति प्राप्त करते हैं और अपने कार्यों में बहुत अधिक सफल रहते हैं।

चमसाकार हाथ की कठोर उँगलियाँ उद्योगी और परिश्रमी होने का प्रमाण है। इनका शरीर और मन किसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

न किसी कार्य से लगा रहता है, ऐसे हाथ आविष्कारक, इन्जीनियर, मल्लाह-व्यापारी तथा समाज सुधारकों के देखे जाते हैं। गाँठदार उँगलियों का होना मन में छिपाव रखने और गम्भीर होने का चिन्ह है। सपाट और चिकनी उँगलियाँ दस्तकारी और कला-कौशल पसन्द लोगों की होती हैं।

ऐसे हाथ में अँगूठा छोटा हो तो झगडालू होना प्रकट करता है। बड़े अँगूठे वाले शासक, विलासात्मक काम करने वाले और शूरवीर होते हैं।

दार्शनिक हाथ—यह हाथ गठीला, लम्बा और बीच में झुका हुआ होता है। उँगलियों की हड्डियाँ तथा जोड़ उभरे हुये और नाखून लम्बे होते हैं।

इस प्रकार का हाथ मनुष्य की दार्शनिकता का द्योतक है। उनकी कल्पना, इच्छा और विचारधारा सामान्य मनुष्यों की अपेक्षा बहुत ऊँची होती है। सुख भोगने की अपेक्षा तत्त्व ज्ञान को प्राप्त करना उन्हें अधिक पसन्द होता है। मित्रतापूर्ण ढंग से लोगों से मिलते हैं तो भी किसी से उनकी घनिष्ठ मित्रता नहीं होती। ऐसे मनुष्यों के पास जो थोड़ा बहुत पैसा होता है, उसका खर्च परोपकारी कार्यों में हुआ करता है। श्रद्धा की अपेक्षा तर्क पर उनका आधार अधिक रहता है।

ऐसे हाथ में गठीली उँगलियाँ हों तो वह व्यक्ति कोई महत्त्वपूर्ण कृति अपने पीछे छोड़ जाता है। चिकनी उँगलियाँ वाले लोग इतने रहस्यमय होते है कि उनके पेट की थाह पाना अत्यन्त कठिन होता है। दार्शनिक हाथ वाले जीवन भर एक प्रकार से स्थायी ही बने रहते है, उनके कार्य और वचनों में सद्भावना तथा प्रामाणिकता की मात्रा ज्यादा पाई जाती है।

व्यावसायिक हाथ—साधारण लम्बाई-चौड़ाई का हाथ जिसकी उँगलियाँ जड़ में मोटी और छोरों पर पतली होती है—व्यावसायिक या कलाकार हाथ कहा जाता है।

इस प्रकार के हाथ वाले लोग उतावले, चंचल स्वभाव, बातून, शेखीखोर, भावुक और बहकावे में जल्दी आ जाने वाले होते है। जरा सी घटना से बहुत अधिक प्रभावित हो जाते हैं। थोड़े से झगड़ों के कारण किसी से लड़ मरना या थोड़ी सी मित्रता से बहुत अधिक त्याग करने को उद्यत हो जाना इनकी विशेषता होती है। कलाकार का अर्थ यह नहीं है कि ऐसे लोग चित्रकार, गवैये या मूर्तिकार आदि होते हैं, इनकी इच्छा तो ऐसे कार्यों की ओर अधिक होती है परन्तु अपनी मानसिक निर्बलता के कारण उतनी सफलता प्राप्त नहीं कर पाते, अतएव दूसरों के कलापूर्ण कार्य, अभिनय, चित्र आदि देखकर इन्हें संतोष करना पड़ता है। काम शुरू करना और अधूरा छोड़ना यह दुर्गुण इनके पल्ले बँधा होता है। बिना सोचे-समझे झट किसी काम के लिए तैयार हो जाने का फल यही हो सकता है कि उसे कठिनाई पड़ने पर अपने कार्य अधूरे छोड़ने पड़ें।

इस प्रकार के हाथ वाले की उँगलियाँ अगर सख्त हों तो कलापूर्ण कार्यों में उसे सफलता मिलती है, व्यापार में धन कमाता है और चुने हुए आदमियों में गिना जाता है। किन्तु यदि उँगलियाँ पतली, इँठी हुई सी हों तो ईर्ष्या, द्वेष, धूर्तता व झूठ, छल, कपट आदि विकारों का होना प्रकट होता है। यदि यह हाथ बहुत अधिक नरम हो तो लापरवाही का प्रतीक है। कर्ज लेकर न देना, विषय-वासना की ओर आकर्षित रहना, मनोरंजन में अधिक रुचि रखना आदि हल्के दर्जे की बातें भी उनके स्वभाव में शामिल देखी जाती हैं।

निकृष्ट हाथ—जरूरत से ज्यादा छोटा, मोटा, भरा, भारी और बेडौल बनावट का यह हाथ होता है। अँगूठे की लम्बाई तो इस छोटेपन के अनुपात से भी कम होती है। हाथ खुरदरा होता है और रेखाएँ बहुत थोड़ी पाई जाती हैं। इस प्रकार के हाथ वाले मन्द बुद्धि होते हैं, दिमाग कोई ऊँची बात नहीं सोच सकता और न उनमें ऐसे गुण होते हैं, जिनके द्वारा मित्रों की संख्या बढ़ा सकें या कोई व्यापारिक सफलता प्राप्त कर सकें। इसलिए ऐसे आदमी मेहनत-मजूरी से अपना गुजारा करते हैं। उजड्डता, असभ्यता और बेहूदगी उनमें अधिक रहती है। अपना स्वार्थ-साधन करने के लिए बुरे से बुरे काम करने को वे तैयार हो जाते हैं। निकृष्ट हाथ वाला कोई व्यक्ति आज तक महापुरुष बनकर नहीं निकला। वे तो आहार, निद्रा, कलह और मैथुन में मग्न रहते हैं और पाशविक इच्छा, आकांक्षाओं के साथ इस दुनिया से कूच कर जाते हैं।

विषम हाथ—सुन्दर, लम्बा-तंग, मुलायम, चिकना, कोमल यह विषम हाथ के लक्षण हैं। उँगलियाँ अधिक पतली व नोकदार, जड़ में कुछ हल्की और ऊपर कुछ भारी होती हैं। इस हाथ को आदर्शवादी भी कह सकते हैं।

ऐसे आदमी बड़े-बड़े मनसूवे बाँधते हैं, बड़ी-बड़ी ऊँची आशा और कल्पनाएँ करते हैं, विचारों की दुनिया में उड़ते-गिरते और डूबते-उतराते रहते हैं। व्यावहारिक ज्ञान दुनियादारी की जानकारी और क्रिया-कुशलता न होने के कारण उनकी इच्छाएँ शेखचिल्ली की खामखयाली बनी रहती हैं। ऐसे आदमी देवी-देवताओं को वश में करने, सन्त-महन्तों की कृपा प्राप्त करने, जन्त्र-मन्त्रों द्वारा सिद्धियाँ प्राप्त करके, चुटकियों में बड़े-बड़े काम कर लेने के मनसूवे बाँधा करते हैं। ज्योतिष, जन्मपत्री, देवकृपा स्वर्ग आदि के कल्पना जगत में विचरण करते हुए उन्हें बड़ा मजा आता है। तर्क का अभाव और अन्धविश्वास की अधिकता रहती है। थोड़ी-सी आशंका, चिन्ता या शोकजनक स्थिति आने पर वे बहुत व्याकुल और भयभीत होते देखे जाते हैं।

योजनाएँ आकाश मे और योग्यता पातालु में होने के कारण यह विषम हाथ कहा जाता है। ऐसी उड़ानें उड़ना जिनको पूरा न किया जा सके कोरा आदर्शवाद है,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसीलिए इस प्रकार का हाथ आदर्शवादी हाथ भी कहलाता है।

मिश्रित हाथ—पीछे जिन छः प्रकार के हाथों का वर्णन किया गया है, उनमें से किसी का भी पूर्ण रूप से लक्षण न मिलता हो, वरन् थोड़े-थोड़े लक्षण कई हाथों के पाये जायँ, तो उसे मिश्रित हाथ समझना चाहिए। जिस-जिस प्रकार के जितने-जितने लक्षण मिलते हों, उन-उन हाथों के उतने-उतने फलों को मिलाकर ही एक मिश्रित परिणाम पर पहुँचना चाहिए। मिश्रित हाथों की संख्या अधिक देखी जाती है, विशुद्ध रूप से इस प्रकार के हाथ कम मात्रा में देखे जाते हैं। मिश्रण का ठीक-ठीक अनुसंधान करके उन सबका यथोचित भाग लेते हुए कोई फल कहना सूक्ष्मदर्शी आत्मविद् लोगों का काम है। सामुद्रिक विद्या को ठीक-ठीक रूप से समझने के लिये ऐसी ही सूक्ष्म बुद्धि की आवश्यकता है।

हथेली

नियमित रूप से परिश्रम के साथ काम करने वालों की हथेलियाँ बड़ी होती हैं। उद्योगी, कर्त्तव्य-परायण, पराक्रमी और उत्साही पुरुषों की हथेलियाँ बड़ी-बड़ी होती हैं। छोटे हाथ वाले उतने पराक्रमी, दृढ़ निश्चयी और लगन के साथ काम करने वाले नहीं होते। बातें बहुत करते हैं। बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनाते हैं परन्तु छोटा हाथ उन्हें कहने लायक काम करने नहीं देता। यह भी देखा गया है कि बड़ी हथेली वाले छोटे अक्षर लिखते हैं और मोटी हथेली वालों से बड़े-बड़े अक्षर लिखे जाते हैं।

जिनकी हथेली मोटी, मुलायम और भारी होती है ऐसे व्यक्ति व्यसनी, विषयी और इन्द्रिय लोलुप देखे जाते हैं। चौड़ी हथेली वाले मनुष्य उदार, भले मानस, दूसरों के साथ नेकी करने वाले और अनुभवी होते हैं। कैसी भी भली-बुरी स्थिति में वे रहें परन्तु दिल उनका ओछा न होगा। उदारता की मात्रा हर हालत में उनमें अधिक रहेगी।

लम्बी और नरम हथेली वाले आराम पसन्द और आलसी देखे जाते हैं। पर जिनकी हथेली सूखी, कड़ी और पतली हो, उनमें निरुत्साह और डरपोकपन भी मिलेगा। देखने में मोटे-तगड़े हों तो भी उनमें शारीरिक और मानसिक जीवनी शक्ति कम पाई जायगी, जरा से परिश्रम में थकान महसूस करने लगेंगे।

जिनकी हथेली में बीचोंबीच गड्ढे की सी गइराई होती है, उन्हें आमतौर से अपने दुर्भाग्य का रोना रोते देखा जाता है। पर गृहस्थ में उन्हें निराशा ही मिलती है। स्त्री, पुत्र तथा अन्य घर वालों से उन्हें सन्तोषजनक सद्व्यवहार नहीं प्राप्त होता। मनो-मालिन्य और गृह-कलह से सदा ही वे उद्विग्न रहते है। स्वास्थ्य भी ऐसे लोगों का गिरा ही रहता है।

मजबूत किन्तु मुलायम हथेली किसी मनुष्य के मनस्वी, साहसी और शूरवीर होने का लक्षण है। ढीली टूटी सी, बिखरी सी या जकड़ी हुई सी हथेली उन अभागों की होती है जो काम के डर से सदा जी चुराया करते हैं, अपनी नालायकी को दूसरों के ऊपर थोपकर झूठा आत्म-संतोष किया करते हैं।

बिलकुल गोल हथेली, जिसकी लम्बाई और चौड़ाई बराबर हो पराधीन, पराश्रित, दूसरों की कृपा पर जीवित रहने वालों की होती है। मनोभावनाओं को दबाना, झिझकना, डरना और झूठ बोलना ऐसे लोगों की विशेषता होती है। पैसा होते हुए भी पैसे से मिलने वाले सुख उन्हें प्राप्त नहीं होते।

जिनकी हथेली इतनी लचकदार हो कि उँगलियों के अग्र भाग से मणिबन्ध (कलाई और हथेली के जोड़ की रेखा) का स्पर्श हो जाय, वे बहुत ही भाग्यवान और धन सम्पन्न होते हैं। उँगलियों से कुछ बड़ी हथेली होनी चाहिये किन्तु जिनकी हथेली उँगलियों से छोटी हो उन्हें नेत्र रोग घेरे रहेंगे। पेट साफ न रहने की शिकायत भी बनी रहेगी।

उँगलियाँ

उँगलियों में फैले हुए ज्ञानतन्तु मस्तिष्क और नेत्रों के साथ शरीर के अन्य अंगों के तन्तुओं की अपेक्षा विशेष सम्बन्ध रखते हैं। देखा जाता है कि लोग पंजा लड़ाने के शौक में व्यस्त होते हैं, उनकी दृष्टि और मानसिक शक्ति कमजोर पड़ जाती है। जब मस्तिष्क किसी विशेष कार्य में व्यस्त होता है तो हाथों की उँगलियाँ अपने आप अनायास ही हिलने लगती हैं। जब काम न होते हुए भी उँगलियाँ काम कर रही हों, मनुष्य जमीन कुरेद रहा हो, उँगलियाँ हिला रहा हो तब समझना चाहिये कि इसका मस्तिष्क इस समय किसी उलझन को सुलझाने में लगा हुआ है।

उँगलियों के बीच में दो गाँठें होती हैं। ऊपर की नाखून की तरफ गाँठ विषयक लक्षणों को प्रकट करती हैं। दूसरी नीचे की हथेली की तरफ की गाँठ भौतिक वस्तुओं तथा स्वभाव का प्रकटीकरण करती है। जो गाँठ बड़ी हो उसी के अनुसार उसके स्वभाव को जाना जा सकता है। यदि ऊपर की गाँठ बड़ी हो तो उस मनुष्य को विचारशील, दूरदर्शी, गुणवान, कलाकार तथा आध्यात्मिक गुणों से युक्त कहा जा सकता है। यदि नीचे वाली गाँठ बड़ी हो तो धनवान, ऐश्वर्यवान, सांसारिक वस्तुओं में रुचि रखने वाला, भौतिक दृष्टिकोण वाला उसे समझा जा सकता है। यदि दोनों ही गाँठें बड़ी-बड़ी हों तो उसे केवल एक कारागार कह सकते हैं। जिसकी दोनों गाँठें पतली और छोटी हों तो उसे थोड़े में सन्तोष कर लेने वाला, भाग्यशाली कहा जा सकता है ऐसे लोग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्राय: कोई बड़ी सफलता अपने जीवन में प्राप्त नहीं कर पाते।

मध्यमा उँगली की लम्बाई से पूरी हथेली की लम्बाई १.५ गुनी होनी चाहिये। यदि उँगलियाँ इससे अधिक लम्बी हों तो उस मनुष्य को श्रद्धालु, ईश्वर भक्त, धर्मवीर, कल्पना शील, तथा फूँक-फूँककर पाँव धरने वाला समझना चाहिए। उनकी उँगलियाँ साधारण अनुपात से छोटी होती हैं। वे अहंकारी, नास्तिक, चिड़-चिड़े, जल्दबाज होते हैं। मोटी-मोटी उँगलियों वालों के स्वभाव में उजड्डपन देखा जाता है। किन्तु यदि वे कोमल और पतली हों तो हँसमुख, खुशमिजाज तथा हास-परिहास पसन्दगी का लक्षण समझना चाहिए।

अँगूठे की तरफ से गिनने पर पहली उँगली को तर्जनी, दूसरी को मध्यमा, तीसरी को अनामिका, चौथी को कनिष्ठका कहते हैं। इनके लक्षणों का विवेचन करते समय अग्र बातों पर विशेष रूप से ध्यान देना चाहिए।

तर्जनी—तर्जनी को मध्यमा से एक अंगुल छोटा होना चाहिये। यदि इतनी लम्बाई उसकी हो तो औसत श्रेणी का स्वभाव होगा। यह लम्बाई अधिक हो तो अभिमान, भोगविलास, प्रिय उच्चपद पाने की इच्छा, शासन सत्ता में रुचि होने का चिन्ह कहा जा सकता है। यदि यह लम्बाई मध्यमा के बराबर हो तो उसे उपद्रवी, निष्ठुर स्वभाव, आत्म-प्रशंसक माना जायगा।

यदि तर्जनी मध्यमा की अपेक्षा एक अंगुल से अधिक छोटी हो तो ऐसे मनुष्य शान्त स्वभाव वाले होते हैं परन्तु कोई जिम्मेदारी का काम अपने कंधों पर लेने से या कोई साहसपूर्ण काम करने से बहुत डरते हैं। शरीरबल और बुद्धिबल की अपेक्षा मनोबल उनमें कम पाया जाता है। टेड़ी-मेड़ी और गाँठ-गठीली उँगलियों वाले प्राय: उद्देश्यहीन एवं अनिश्चित विचार वाले होते हैं, दूसरों पर अपनी धाक जमाने में असफल रहते ही देखे जाते हैं।

मध्यमा—यदि हथेली की लम्बाई मध्यमा से १/८ गुनी हो तो मध्यमा को औसत श्रेणी की ठीक समझ लेनी चाहिए। यदि इस अनुपात से वह कुछ बड़ी हो तो एकान्तवास, उदासी और चित्त भ्रम का कारण बनेगी। अगर वह अधिक लम्बी हो तो निर्बल इच्छा शक्ति, अकर्मण्यता और अस्वस्थता की सूचक मानी जायगी। जिसकी मध्यमा छोटी हो, अनामिका और मध्यमा बराबर हों तो अशिष्ट व्यवहार, ओछे और गन्दे विचारों की अधिकता रहेगी। ऐसे आदमी कभी-कभी जुआरी या सट्टेबाज भी देखे जाते हैं।

अनामिका—तर्जनी की अपेक्षा अनामिका की लम्बाई जितनी ही अधिक होगी, उतना ही जीवन अधिक सुखमय, भोग-ऐश्वर्यों से युक्त होगा, व्यापारिक कार्यों में उसे सफलता भी मिलेगी, मिलनसार स्वभाव का होगा। यश प्राप्त करने की इच्छा रहेगी और बहुत हद तक उसे प्राप्त भी करेगा। यदि उँगली तर्जनी के बराबर हो तो ऐसे मनुष्य का जीवन औसत श्रेणी से अधिक ऊँचा न हो सकेगा। आदर्शवादी विचार करते हुए भी कोई महत्त्वपूर्ण कार्य करने में उसे सफलता न मिलेगी। अगर अनामिका बहुत छोटी हो, तर्जनी से भी छोटी हो, तो ऐसा स्वभाव होगा, जिसके कारण पग-पग पर विघ्न-बाधाएँ और हानियाँ उठानी पड़ा करेंगी।

कनिष्ठका—अपने हाथ से कनिष्ठका की लम्बाई चार अंगुल होनी चाहिए। यदि लम्बाई इससे जरा अधिक हो तो नेतृत्व, व्याख्यान शक्ति, प्रतिभा, विचारशीलता और तेजस्विता की निशानी समझनी चाहिए। यह लम्बाई कुछ और ज्यादा हो तो गम्भीरता और दार्शनिकता की अधिकता रहेगी। किन्तु यह उँगली चार अंगुल से छोटी हो तो कम बोलना, चुप रहना दूसरों द्वारा ठगा जाना, देर में समझ आना आदि कमजोरियाँ उस मनुष्य में देखी जावेंगी।

हथेली और चारों उँगलियों का जोड़ एक सीध में हो तो भाग्यवान, धनवान और विद्वान होगा। तर्जनी का जोड़ अन्य उँगलियों की अपेक्षा कुछ नीचा-ऊँचा हो तो दूसरों पर असर डालने की ताकत कम होगी। मध्यमा का जोड़ अव्यवस्थित हो तो स्वभाव झगडालू होगा, शत्रुओं की अधिकता रहेगी। अनामिका का जोड़ ठीक जगह पर न हो तो निन्दा का पात्र बनना पड़ेगा। कनिष्ठका का जोड़ ठीक न होने से आर्थिक संकट का सामना करने के अवसर अधिक आते हैं।

हर एक उँगली तीन भागों में बटी हुई है। उसका नाखून वाला ऊपर का छोर-आदर्श का ज्ञान, कला कौशल और धार्मिक विचारों का प्रतीक है। बीच का भाग-ज्ञान का निर्णय, विचार शक्ति और बुद्धिमत्ता का प्रतीक है। नीचे का जड़ वाला भाग प्रकृति का, लोक व्यवहार और कार्य-कुशलता का प्रतीक है। जो भाग अधिक पुष्ट, बड़ा, कोमल, चिकना और भरा हुआ होगा उसकी शक्ति मनुष्य में अधिक पाई जायेगी। जो भाग कमजोर, सूखा, छोटा, कठोर होगा उसकी शक्ति निर्बल एवं विकृत होगी। जितना बेडौल, भद्दा और कुरूप जो भाग होगा, उसी अनुपात से वहाँ की शक्ति भी उलटा फल देने वाली, हानिकारक एवं नष्ट-भ्रष्ट पाई जायेगी।

हाथ को बिलकुल ढीला छोड़ देने पर मालुम होता है कि उँगलियों का किसी विशेष ओर झुकाव है। कनिष्ठका, अनामिका और मध्यमा इन तीनों का झुकाव तर्जनी की तरफ हो और तर्जनी सीधी रहे तो मनुष्य उत्साही, स्वतन्त्र विचार वाला बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनाने वाला परिश्रमपूर्वक कार्य में जुटने वाला और विज्ञानी होगा। अगर अन्य उँगलियों का झुकाव भी कनिष्ठका की तरह हो तो वह दुर्गुणों, दुस्वभावों और अनिष्टों का सूचक समझा जायेगा। तर्जनी यदि अँगूठे की तरफ झुकी हुई हो तो बहुत ही उत्तम अच्छे स्वभाव की द्योतक है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तर्जनी को छोड़कर अन्य तीनों उँगलियों यदि सीधी हों तो मन्द बुद्धि की सूचक हैं।

उँगलियों के बीच में फासला जितना अधिक होगा उतना ही मनुष्य दयालु, अनुभवी और सदाचारी होगा। तर्जनी और मध्यमा के बीच का अन्तर विचारों की स्वतन्त्रता का सूचक है। मध्यमा और अनामिका के बीच का अन्तर स्वभाव की दृढ़ता का चिन्ह है। अनामिका और कनिष्ठका के बीच का अन्तर भोगों, इच्छाओं की अधिकता का प्रतीक है। यदि उँगलियाँ अधिक समीप हों, फासला कम हो, कुछ चिपक भी रही हों तो उसे संशय वृति और कुमार्ग की तरफ-झुकाव का चिन्ह समझना चाहिए।

उँगलियों और हथेलियों की पीठ पर अधिक बाल होना रजोगुणी प्रकृति का चिन्ह है। सतोगुणी लोगों के यह बाल थोड़े और मुलायम होते हैं, तामसिक वृत्ति के लोगों के हाथ पर घने, कड़े और बहुत काले बाल पाये जाते हैं। यदि बाल बिलकुल ही न हों, तो उस व्यक्ति में नपुंसकता और कायरता की प्रवृत्ति होगी।

अँगूठा

हाथ में अँगूठे का वही स्थान है, जो मुँह पर नाक का है। नाड़ी विशेषज्ञों का मत है कि मनुष्य के मस्तिष्क का अंगुल भाग की कार्य प्रणाली के अनुसार जो विशेष प्रकार के कम्पन उत्पन्न होते हैं, ये मस्तिष्क से चलकर हाथ के अँगूठे पर ठहरते हैं और उस स्थान पर अपनी हलचलों का प्रभाव डालते हैं। जिससे अँगूठे की बनावट में भी अन्तर आ जाता है। इन बनावटों को देखकर स्वभाव का पता लगाया जा सकता है।

सीधा और सुदृढ़ अँगूठा मनुष्य के दृढ़ निश्चयी स्वछन्द प्रकृति और निरंकुश स्वभाव का चिन्ह है। कोमल झुके हुए अँगूठे वाले का चित्त चंचल और डाँवाडोल रहता है। दूसरों के बहकावे में ऐसा मनुष्य आसानी से आ जाता है।

अँगूठे में दो जोड़ हैं। एक नाखून की जड़ में, दूसरा अँगूठे की जड़ में। अँगूठा जोड़ों पर से समान झुका हुआ नहीं होता वरन् किसी एक जोड़ पर ही झुकाव अधिक होता है। यदि अँगूठे की जड़ वाले जोड़ पर ही झुकाव अधिक हो तो समझना चाहिये कि यह मनुष्य विचारवान्, बुद्धिमान, परिस्थिति को समझकर काम करने वाला होगा। कम खर्च, रूखे स्वभाव का और अपने मतलब में चौकस रहेगा। यदि दूसरे जोड़ पर नाखून के पास वाली गाँठ पर से झुकाव हो तो समझना चाहिए कि अधिक खर्च करने वाला, भावुक, दूसरों के लाभ के लिए स्वयं हानि सहने वाला, सीधा और छल-छिद्र से रहित होगा। अगर थोड़ा झुकाव हो तो समझना चाहिए कि आत्मविश्वास, विपत्ति में धैर्य तथा शत्रु से बदला लेने के भाव अधिक होंगे। अगर झुकाव ज्यादा हो तो समझना चाहिए कि डरपोंकपन, चापलूसी एवं घबराहट की मात्रा अधिक होगी।

अँगूठे को ऊपर से लेकर नीचे की तरफ तीन भागों में बाँटा जा सकता है। अन्तिम सिरा-पोरुआ-जहाँ मुर्दा नाखून बढ़ा करता है, इच्छाशक्ति का स्थान है। बीच का स्थान वह है, जहाँ बीच की गाँठ या मोड़ होता है, यहाँ से विचार शक्ति का पता लगाया जा सकता है। नीचे वाला अन्तिम हिस्सा जिसे अँगूठे की जड़ या पहली गाँठ कहते हैं प्रेम शक्ति की जगह है। इन तीनों स्थानों की कोमलता, स्वच्छता और सुदृढ़ता को देखकर उस स्थान में रहने वाली शक्ति के बलवान होने का परिचय प्राप्त किया जा सकता है। इनमें से जो जगह फटी हुई, सुकड़ी, सूखी, दुर्बल, बेडौल और भद्दी हो तो समझना चाहिए कि यहाँ रहने वाली शक्ति भी अस्त-व्यस्त, अल्प, निर्बल और विकृत होगी।

ऊपर का पोरुआ वाला इच्छाशक्ति का स्थान, मध्यभाग से बड़ा न होना चाहिए अन्यथा झगड़ालू, बकवादी, क्रोधी, जिद्दी स्वभाव का होगा। यह विचार शक्ति का प्रथम स्थान है, यदि किसी कार्य पर विचार करने के पश्चात् उसके करने का दृढ़ निश्चय किया है तो परिणाम अच्छा होता है, परन्तु यदि बिना विचारे चाहे किसी बात पर अड़ जाने की आदत हो तो वह ठीक नहीं समझी जाती। इसलिये अँगूठे का बीच का भाग मोटा, भारी और मजबूत होना अच्छा माना जाता है, आगे का हिस्सा उससे हल्का होना चाहिए। अँगूठे की जड़ जहाँ प्रेम का स्थान है—सीधी और भरी हुई हो तो समझना चाहिए कि यह स्थायी और मजबूत प्रेम करने वाला होगा। यदि जड़ ऊबड़-खाबड़, टेढ़ी मेढ़ी, हो तो ऐसे मनुष्य **'क्षणे रुष्टा क्षणे तुष्टा'** स्वभाव के होंगे। आज गहरी दोस्ती है तो कल गहरी दुश्मनी करते हुए भी उन्हें देर न लगेगी। जड़ की मोटाई साधारण बीच के भाग की अपेक्षा ड्योढ़ी हो तो प्रेम की मात्रा उतनी ही समझनी चाहिए, जितनी कि औसत दर्जे के आदमी में होनी चाहिए। यदि इससे न्यून या अधिक हो तो उसी अनुपात से प्रेम भावना की कमीवेशी का अनुमान किया जा सकता है।

संक्षेप में यों कहा जा सकता है कि लम्बे और समान आकार वाला अँगूठा बुद्धिमत्ता और चुतरता का चिन्ह है। छोटा-मोटा और बेडौल अँगूठा मूर्ख और क्रोधी होना प्रकट करता है। अधिक नुकीला हो तो अस्थिरता, चंचलता एवं उथलेपन का सूचक है। इसी प्रकार पोरुआ मोटा हो तो हठी और जिद्दी होना, बीच में पतला हो तो स्वार्थी, रूखा, निष्ठुर प्रकृति का होना प्रकट होता है। जिसके पोरुवे बहुत मोटे, चौड़े, भारी और फटे-फटे से हों तो वह मनुष्य बहुत ही भयंकर होता है, क्रोध में आकर वह पागल हो जाता है तब उसे अर्थ-अनर्थ कुछ नहीं सूझता। अवसर पड़ने पर वह दूसरों को कत्ल तक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर सकता है और अपनी आत्म-हत्या के लिए भी तैयार हो सकता है।

अँगूठे की बनावट तथा ऊर्ध्व, मध्य और अधोभाग का ढाँचा इन दोनों ही बातों पर विचार करने के पश्चात् किसी परिणाम पर पहुँचना चाहिए।

नाखून

बनावट के अनुसार नाखूनों को चार भागों में विभक्त किया जा सकता है—(१) लम्बे (२) छोटे (३) चौड़े (४) पतले।

लम्बे नाखून वालों के फेफड़े कमजोर और सीने पतले पाये जाते हैं। शारीरिक दृष्टि से वे प्रायः निर्बल होते हैं। ऐसे नाखूनों में यदि धारियाँ पड़ीं हुई हों तो आँतों की खराबी भी होगी, इस प्रकार के लोगों को निमोनिया, मोतीझरा और मयादी बुखार की संभावना अधिक रहती है।

लम्बे नाखून जिनमें नीलेपन की झलक होती है। रक्त की कमी और हृदय की अशुद्धता प्रकट करते हैं। नाखूनों की जड़ में अर्धचन्द्रकार सफेद गोला सा होना स्वस्थता की स्थिरता के लिए आवश्यक है, यदि वह न हो तो नाड़ी संस्थान और मानसिक रोगों की संभावना बनी रहती है। जिन लोगों का ऊपर का धड़ रोगी रहता है। उनके नाखून अपेक्षाकृत लम्बे होते हैं।

बहुत छोटे नाखून वालों को कमर से नीचे के रोग अधिक देखे जाते हैं। जंघाओं में, गुप्तेन्द्रियों में, पैरों में अक्सर उन्हें अस्वस्थता के लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। सीप या कौड़ी की तरह छोटे, आकार के सिरे पर झुके हुए हों चपटे या माँस में गहरे गढ़े हों तो पक्षाघात आदि आकस्मिक रोगों की आशंका अधिक रहती है। नाखूनों के बीच-बीच में छोटे-छोटे सफेद दागों का पड़ना स्नायविक दुर्बलता का पूर्व लक्षण कहा जा सकता है।

साधारण से अधिक लम्बे और अधिक छोटे नाखून शारीरिक दृष्टि से अस्वस्थता के चिन्ह हैं। परन्तु इनके मानसिक फल अलग-अलग हैं। लम्बे नाखूनों वाले व्यक्ति शिष्ट, विनम्र, कोमल स्वभाव के और समझदार होते हैं परन्तु उनमें कभी-कभी कोई खास सनक या बहम भी देखा जाता है। लम्बे नाखून यदि नीचे की ओर मुड़ गये हों तो कठोरता एवं बेरहमी उनमें पाई जायेगी। साधारणतः नाखूनों का रंग हलका गुलाबी होना चाहिए परन्तु वह रंग पीला हो तो चिड़चिड़ेपन का लक्षण होगा, नीली झलक होना बालकों जैसे भोलेपन और श्रद्धा का चिन्ह है।

छोटे नाखूनों वाले लोग बहुत तार्किक और संशयी स्वभाव के होते हैं। दूसरों की हँसी उड़ाने, चिढ़ाने या निन्दा करने में उन्हें बड़ा मजा आता है। ऐसे आदमी चटोरे, मतलबी; ढोंगी और बढ़-बढ़कर बात करने वाले किन्तु काम के वक्त मुँह छिपाने वाले पाये जाते हैं।

नाखूनों में दाग

नाखूनों पर सफेद दाग पड़ना स्नायविक दुर्बलता के साथ-साथ चिन्ता और मानसिक परिश्रम का भी लक्षण है। जो लोग मानसिक कार्य अपनी शारीरिक शक्ति से अधिक करते हैं, उनके नाखूनों पर भी सफेद तिल पड़ने लगते हैं। एक ज्योतिषी ने इनका फल इस प्रकार लिखा है। अँगूठे में सफेद दाग हों तो स्नेह-प्रेम, तर्जनी में हों तो देशाटन, अनामिका में हों तो सम्मान प्राप्ति और कनिष्ठका में हों तो आशाजनक भविष्य की प्राप्ति होती है। काला दाग किसी भी नाखून में होना अच्छा नहीं समझा जा सकता। चोट लगने से जो नीले दाग पड़ जाते हैं, उससे शुभ-अशुभ का कोई सम्बन्ध नहीं है।

शंख-चक्र

हाथ की उँगलियों के अन्तिम सिरे में नाखूनों से नीचे के भाग में शंख और चक्र की आकृतियाँ देखी जाती हैं। यदि दोनों हाथों में बीच की उँगली में शंख और अन्य उँगली-अँगूठा में चक्र हो तो बहुत ही शुभ है, ऐसे लक्षणों वाले राज ऐश्वर्य प्राप्त करते हैं। इसकी अपेक्षा शंख जितने अधिक हों और चक्र जितने कम हों उसी अनुपात से भाग्य निर्बल समझना चाहिए।

उँगलियों के अलावा हथेली के अन्य भागों में तथा उँगलियों के अन्य पोरुओं में भी शंख-चक्र पाये जाते हैं। इनकी संख्या को गिनकर फल का अनुमान किया जा सकता है। एक हाथ में शंखों की संख्या के फल इस प्रकार हैं-एक हो तो अध्ययनशील, दो हों तो दरिद्र, तीन स्त्री से दुखी, चार-राजा के समान सुखी, पाँच-विदेश से लाभ, छः-विद्वान्, सात-दरिद्र, आठ-सुखी जीवन, नौ-नपुंसक, दस-राजा या योगी।

चक्रों का फल इस प्रकार है। एक-चतुर, दो-सुन्दर, तीन-विलासी, चार-दरिद्री, पाँच-ज्ञानी, छः—चतुर, सात-वन्य प्रदेश में विहार करने वाला, आठ-दरिद्र, नौ-शासक, दस-सेवक।

तिल

काले और लाल दो प्रकार के तिल मनुष्यों के शरीर में देखे जाते हैं। लाल तिलों का होना बहुत ही शुभ और भाग्यवान होने का चिन्ह समझा जाता है। परन्तु काले में यह बात नहीं है। काले तिल स्थान भेद से शुभ और अशुभ दोनों प्रकार के हो सकते हैं।

यह भी देखा जाता है कि तिल जोड़ा से होता है। इनकी संख्या ऐसी होती है जिसे दो से विभाजित किया जा सके। एक स्थान पर तिल होगा तो उसके जोड़े का दूसरा तिल भी किसी अंग पर जरूर दीख पड़ेगा। बहुत करके तो जोड़े का स्थान नियत भी होता है। जैसे एक तिल माथे पर दाहिनी ओर हो, तो उसका जोड़ा पेट या

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बाहु पर होगा। यह दाम्पत्ति जीवन के आनन्दमय होने का लक्षण है। माथे पर बायीं ओर हो तो भी पेट या भुजा पर तिल होगा, यह दाम्पत्ति-जीवन में मनोमालिन्य का कारण होता है। जिनकी बायीं भों पर तिल होगा उनकी छाती पर भी बायीं ओर जोड़ा हो जायेगा, ऐसे आदमियों को यात्रायें बहुत करनी पड़ती हैं। दोनों भों के बीच में तिल हो तो बीच पेट में उसका जोड़ा मिलेगा, ऐसे आदमी बकवादी और घमण्डी देखे जाते हैं। नाक के तिल का जोड़ा नाभि के निकट है, यह प्रेम, खुशमिजाजी तथा यार-बास होने का द्योतक है।

कनपटी के तिल का जबाव कुछ पर मिलता है। यह दाहिनी ओर होना शुभ और बायीं ओर होना अशुभ माना जाता है। कान की जड़ के आस-पास के तिल का जोड़ा पेट पर होता है, यह जिगर और आँतों की खराबी प्रकट करता है। नाक की नोक का जोड़ा गुदा पर होगा, यह अल्पायु होने की निशानी है। गाल का जोड़ा कूल्हे पर मिलता है। यह दायें और बायें दोनों तरफ शुभ है। ऊपर के होट पर के तिल का जोड़ा जंघाओं में देखा जाता है, यह कंजूसी का साइनबोर्ड समझा जा सकता है। नीचे के होट पर जो तिल होता है, उसका जबाव घुटने पर होगा, ऐसे आदमियों को विवाह-शादी के मामले में बहुत दिलचस्पी होती है।

तर्जनी उँगली का तिल धनवान होने, अधिक शत्रु होने, झगड़ा-फिसाद रहने का कारण होता है। मध्यमा का तिल सुख-शान्ति का देने वाला है, जिनकी अनामिका में होगा वे यशस्वी, पराक्रमी धनवान और ज्ञानवान मिलेंगे। कनिष्ठका का तिल इस बात का प्रमाण है कि धन सम्पत्ति होते हुए भी वह व्यक्ति सुखी न रह सकेगा। अँगूठे का तिल कार्य-कुशलता और लोक व्यवहार में प्रवीणता प्रकट करता है।

दाहिनी आँख में तिल होना बुद्धि की प्रखरता का चिन्ह है, यह जितनी ही अधिक संख्या में हों उतने ही अच्छे हैं। बायीं आँख में तिल होना यह बताता है कि आदमी को अपना जीवन बड़े संघर्ष और कठिनाइयों के साथ व्यतीत करना पड़ेगा। वस्तुओं की कमी इसे न रहेगी पर आराम की जिन्दगी भी न काट सकेगा।

गरदन का तिल श्रद्धालु, ईश्वर भक्त और विनयी व्यक्तियों के होता है। ठुड्डी का तिल कमजोरी-कायरता और जनानेपन का निशान है। पैरों के तिल मनुष्य को एक जगह बैठने नहीं देते, उसे यहाँ से वहाँ और वहाँ से यहाँ भागना पड़ता।

स्त्रियों की नाक पर तिल होना उनके सौभाग्य का चिन्ह है। ऐसी स्त्रियाँ पति की ओर से असन्तुष्ट नहीं रहती, जिनके दायें तरफ तिल ज्यादा हों तो सन्तानों में पुत्र अधिक होते हैं, दाहिनी ओर तिल होने से कन्याओं की संख्या अधिक रहती है। गाल पर तिल होने से स्त्री की भावुकता और प्रणय सुख की अभिलाषा विशेष मात्रा में पाई जाती है।

भुजाओं पर तिल वाले बहादुर, पेट पर तिल वाले चटोरे व छाती पर तिल वाले पराक्रमी, पीठ पर तिल वाले परिश्रमी, उन्नतिशील और चूतड़ पर तिल वाले उत्साहहीन, पराया आसरा तकने वाले होते हैं। गुप्त स्थानों के तिल कामुकता की मात्रा अधिक होना प्रकट करते हैं। बारह से कम संख्या में तिल होना शुभ है, इससे अधिक हों तो शारीरिक और मानसिक अस्वस्थता के लक्षण समझने चाहिए। आमतौर से दाहिनी ओर के तिल बायीं ओर की अपेक्षा शुभ और लाभदायक होते हैं।

ग्रह—विचार

हाथ में सात ग्रहों के स्थान नियत हैं, जिनके नाम पर सप्ताह के सात दिनों का नामकरण किया गया है। इनमें से छः ग्रहों का स्थान तो एक एक है परन्तु मंगल के दो स्थान हैं। इन नियत स्थानों में से जो स्थान ऊँचा उठा हुआ हो, कुछ बढ़ा हुआ और कड़ाई-सी लिये हुए हों समझना चाहिए कि वह उसी ग्रह की शक्ति प्रधानता है। इस उठे हुए स्थान का फल उस ग्रह के स्वभाव के अनुकूल ही होता है।

हाथ में ग्रहों का स्थान

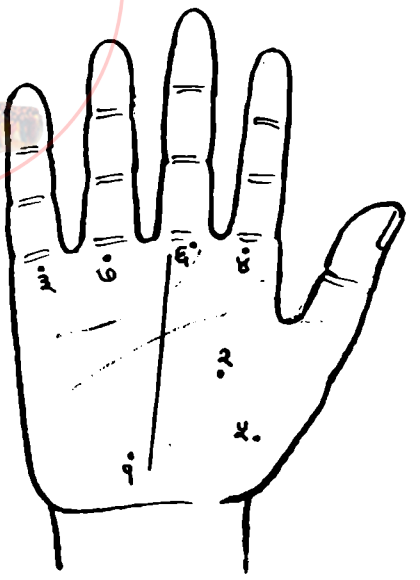

१—चन्द्रमा
२—मंगल
३—बुध
४—वृहस्पति
५—शुक्र
६—शनि
७—सूर्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनस्विता, प्रखरता और तेजस्विता १५.१०

हाथ की रेखाओं का परिचय

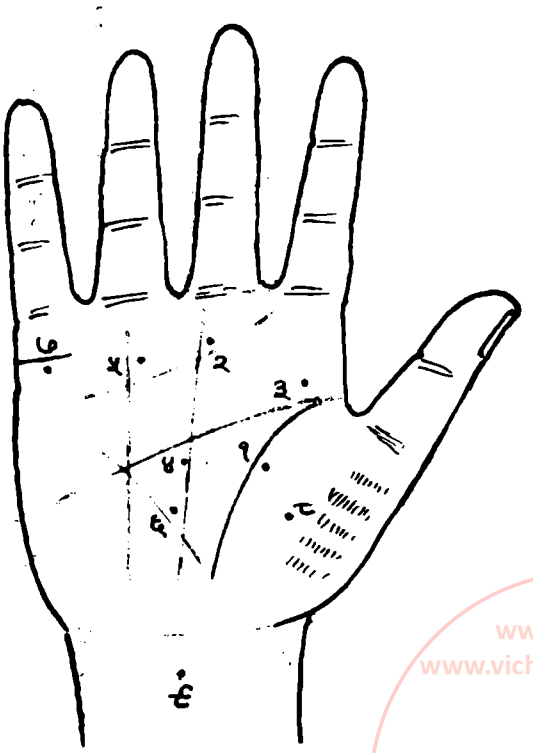

१—जीवन रेखा
२—मस्तक रेखा
३—हृदय रेखा
४—भाग्य रेखा
५—सूर्य रेखा
६—आरोग्य रेखा
७—विवाह रेखा
८—सन्तान रेखा
९—मणिबंध रेखा

पिछली पंक्तियों पर ग्रहों के स्थान बताये गये हैं। नीचे उसका कुछ विवरण दिया जाता है।

सूर्य—अनामिका उँगली की जड़ से नीचे की तरफ का स्थान होता है। इसके ऊँचा होने से निम्न बातें मानी जा सकती हैं—उन्नति की तीव्र इच्छा, कला-प्रेम, चित्रकारी, कविता, साहित्य, सौन्दर्य प्रेम, यश, तीर्थ यात्रा, धर्म रुचि, विद्या, प्रतिष्ठा।

सुन्दरता, शक्ति सम्पत्ति, पितृ सुख, आत्मिक स्थिति का परिचय भी सूर्य स्थान को देखकर किया जाता है।

चन्द्र—मणिबन्ध के पास चन्द्र का स्थान है। इसे देखकर मातृ सुख, मानसिक विचारधारा, स्त्री सुख, धन धान्य, प्रकृति प्रेम, आदर्श, विचार मग्नता, राजा की प्रसन्नता का विचार किया जाता है।

मंगल—मंगल के दो स्थान चित्र में दिये हुये हैं। इन स्थानों को देखकर बल, पराक्रम, पेट के रोग, रक्त विकार, स्वास्थ्य, मातृ सुख, भूमि, पुत्र, कुटुम्ब की स्थिति को जाना जाता है।

बुध—कनिष्ठका उँगली की जड़ में बुध का स्थान है, इसके द्वारा विद्या, बुद्धि, व्यापार, शिल्प, सौभाग्य, काव्य, देशाटन, विचारों की अस्थिरता व उथलापन, वाक् शक्ति विवेक तथा मित्रों का विचार किया जाता है।

बृहस्पति—तर्जनी की जड़ में बृहस्पति का स्थान है। इसे देखकर मान, प्रतिष्ठा, धर्म, स्वाभिमान, उत्साह, न्याय प्रियता, भोग विलास की इच्छा, बड़ा आदमी बनने की लालसा, बुद्धि, विद्या तथा विवेकशीलता का परिचय प्राप्त होता है।

शुक्र—शुक्र का स्थान अँगूठे की जड़ से लेकर मणिबन्ध तक है। इससे स्त्री सुख, विवाह, स्नेह, सौन्दर्य, प्रतिभा, प्रताप, मनोरंजन, सवारी, आभूषण, काम वासना का आभास मिलता है।

शनि—मध्यमा उँगली की जड़ में शनि का स्थान है। यह क्लेश, दुःख पीड़ा, व्यसन, जुआ, असफलता, मौन, एकान्तवास, उदासी-निराशा तथा दुर्भावों को प्रकट करती है। वैराग्य, संन्यास किंकर्त्तव्यविमूढ़ता का भी इसी स्थान को देखकर पता लगाया जा सकता है।

यदि नियत स्थान अच्छी तरह उभरे हुए हों तो ग्रह का नियत फल भले रूप में समझना चाहिए। यदि कोई उठाव न हो तो फल का प्रश्न ही नहीं उठता। गड्ढा, बहुत ऊँचा उठाव, टेड़ा-मेड़ापन, गाँठ या इसी प्रकार की कोई बेडौल स्थिति नियत स्थान पर हो तो जो बातें ग्रह से जानी जाती हैं, वे सभी बातें विकृत और बुरा परिणाम उपस्थित करने वाली समझनी चाहिए।

हाथ की रेखाएँ

हाथ की प्रमुख रेखायें पिछले पृष्ठों में देखी जा सकती हैं। नम्बरों के परिचय इस प्रकार हैं।

(१) **जीवन रेखा**—इसे पितृ रेखा, आयु रेखा, गोत्र रेखा, कुल रेखा, लाइफ लाइन भी कहते हैं। तर्जनी और अँगूठे के बीच से चलकर शुक्र के स्थान को घेरती है। इससे आयु का विचार किया जाता है।

(२) **मस्तक रेखा**—इसे धन रेखा, मातृ रेखा हैडलाइन भी कहते हैं। हथेली के मध्य भाग में होती है। बुद्धिबल का इससे पता चलता है।

(३) **हृदय रेखा**—इसे अन्तःकरण रेखा और हार्ट लाइन भी कहते हैं। मस्तक रेखा के ऊपर समानान्तर में होती है। इससे मनुष्य का दृष्टिकोण, उद्देश्य, लक्ष्य और विश्वास का परिचय मिलता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(४) **भाग्य रेखा**—इसे ऊर्ध्व रेखा या फेट लाइन भी कहते हैं। हाथ के मध्य भाग में होकर शनि के स्थान को स्पर्श करती है। इससे प्रारब्ध का ज्ञान होता है।

(५) **सूर्य रेखा**—इसे विद्या की रेखा या लाइन ऑफ सम भी कहते हैं। हथेली की जड़ में से चलकर अनामिका उँगली की तरफ जाती है। इससे विद्या, यश और प्रतिभा की जानकारी होती है।

(६) **स्वास्थ्य रेखा**—इसे आरोग्य रेखा या हैल्थ लाइन भी कहते हैं। बुध के स्थान से हथेली की जड़ की तरफ तिरछी जाती है। इससे स्वास्थ्य का विचार किया जाता है।

(७) **विवाह रेखा**—इसे अँग्रेजी में लाइन ऑफ मेरीएज कहते हैं। यह बुद्धि की उँगली से नीचे हृदय रेखा की बराबर होती है। इससे स्त्री सुख के सम्बन्ध में ज्ञान होता है।

(८) **सन्तान रेखा**—अँगूठे की जड़ और कलाई के बीच में हथेली पर आरम्भिक भाग में छोटी-छोटी रेखायें हैं। उसको सन्तान रेखा कहते हैं।

(९) **मणिक रेखा**—इसे वेसलेटिन भी कहते हैं। यह तीन रेखायें तिहाई में होती हैं।

इससे अतिरिक्त शुक्र मुद्रिका, चन्द्र रेखा, मंगल रेखा, बान्धव रेखा, प्रवास रेखा आदि अनेक छोटी-छोटी रेखायें पाई जाती हैं। वे इतनी महत्त्वपूर्ण नहीं है। ऐसी रेखाओं का वर्णन इस छोटी पुस्तक में हो भी नहीं सकता; इसलिये उनका समावेश यहाँ नहीं किया जा रहा है।

रेखाएँ सीधी और स्पष्ट होनी शुभ है। जंजीरदार, लहरदार या बहुत गहरी हों तो उन्हें दोषपूर्ण समझना चाहिये। जिन मनुष्यों के हाथ में रेखायें बहुत ही थोड़ी हों तो वह दरिद्री और दुखी होगा। छोटी-छोटी रेखायें एक दूसरे को काटती हुई जाली सी बुनें तो शरीर कमजोरी खासकर नाड़ियों की निर्बलता समझनी चाहिये। ऐसे लोग थोड़े परिश्रम से थक जाते हैं। पल्लवदार रेखायें, क्लेशदायक, टूटी-फूटी रेखायें, अल्प जीवन, कहीं मोटी, कहीं पतली रेखायें होना क्लेशकारक है। टेड़ी रेखायें दरिद्रता की निशानी हैं। चिन्ता और शोक में डूबे रहने वालों की रेखायें पीली पड़ जाती हैं। उग्र, कडुआ और क्रोधी स्वभाव हो तो रेखायें लाल पड़ जावेंगी। पीलापन खून की कमी का और कालिमा कठोर स्वभाव का चिन्ह है। दुहरी या शाखायुक्त रेखायें अधिक फलदायक होती हैं। हृदय रेखा से ऊपर जाने वाली रेखायें शुभ और नीचे जाने वाली अशुभ समझी जाती हैं।

रेखाओं के फल

जीवन रेखा—साधारणत: यह रेखा वृहस्पति के स्थान से कुछ नीचे ही आरम्भ हो जाती है परन्तु यदि ठीक वृहस्पति के स्थान से आरम्भ हो तो दीर्घजीवन, उच्च अभिलाषा और आशावाद का चिन्ह है। शुक्र के स्थान को घेरती हुई मणिबन्ध की रेखा तक चली गई हो तो १०० वर्ष के करीब आयु कही जा सकती है। बीच-बीच में रुक गई हो या बिगड़ गई हो बार-बार बीमार पड़ने की निशानी है। जितनी बार टूटी हो उतनी ही बार भयानक रोग या जीवन संकट का मुकाबला करना पड़ेगा। जीवन रेखा का लम्बा, साफ और स्पष्ट होना निरोगता और बड़ी आयु का सूचक है, यह छोटी होती है तो मनुष्य अल्प आयु ही भोगने पाता है।

जब दो जीवन रेखायें बराबर चलती हैं तो भीतर वाली को मंगल रेखा कहते हैं। जो आपत्तियों से बचाव, धन प्राप्ति, बहादुरी, सच्चरित्रता की निशानी है। जीवन रेखा अँगूठे की जड़ से आरम्भ हो तो सन्तान की ओर से दुख सूचक है।

इस रेखा को तीन हिस्सों में बाँटकर बालकपन, युवावस्था और वृद्धावस्था के भीतर शरीर सुख के बारे में जाना जा सकता है। जो तिहाई मजबूत स्पष्ट और साफ हो, आयु की वह तिहाई अच्छी बीतती है। जो टुकड़ा टूटा-फूटा या पतला हो तो समझना चाहिए कि जीवन का वही भाग शारीरिक दृष्टि से कष्ट के साथ बीतेगा। जड़ में बालकपन, बीच में युवावस्था और अन्त भाग से वृद्धावस्था का विचार करना चाहिए। केवल जीवन रेखा ही नहीं अन्य रेखाओं को भी इसी प्रकार तीन भागों में बाँटकर उस रेखा का फल किस आयु में क्या होगा, यह जाना जा सकता है।

गुरु, शनि या मंगल के स्थान ऊँचे उठ रहे हों और उन स्थानों को जीवन-रेखा आच्छादित कर रही हो तो यह अस्वस्थता का चिन्ह है। चन्द्र स्थान की ओर जाती हो तो व्यसन और बेचैनी की अधिकता रहती है। सूर्य स्थान की ओर जा रही हो तो धनी, इज्जत वाला और राजदरबार में प्रतिष्ठित होता है। जिनकी यह रेखा बुध स्थान की ओर झुकती है, आमतौर से व्यापार में अपना जीवन लगाते हैं। कोई शाखा फूटकर यदि शुक्र स्थान की ओर चले तो ऐसे मनुष्यों को आज यहाँ कल वहाँ रहना पड़ता है।

जिसके हाथ में जीवन रेखा बिल्कुल न हो उसकी मृत्यु अस्वाभाविक तरीके से होती है। यह रेखा यदि किसी अन्य रेखा से मिली हो तो उस रेखा का फल जीवन में विशेष रूप से देखा जाता है। यह नियम प्राय: सभी रेखाओं के बारे में जो-जो रेखायें आपस में मिली हों, उनका सम्मिलित फल अवश्य दृष्टिगोचर होता है। किस उम्र में वह फल मिलेगा इसका निर्णय तीन भागों में बाँटकर बालकपन, यौवन और वृद्धावस्था का निर्णय किया जा सकता है।

रेखा के बीच में गोल चिन्ह को द्वीप कहते हैं। यह जीवन रेखा में या अन्य रेखाओं में विघ्न उपस्थित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

करते हैं। जो रेखा जिस रेखा को काट देती है, उसका फल अशुभ होता है। जैसे धन रेखा विवाह रेखा को काटती हो तो दाम्पत्य जीवन में पैसे का अभाव सदा ही खटकता रहेगा। परन्तु विवाह रेखा धन रेखा में मिलें तो पत्नी के आगमन के साथ-साथ धन का आगमन भी होता है। कोई रेखा जड़ में ही अधिक पुष्ट हो तो समझना चाहिए कि यह गुण या वस्तु इसे पैतृक रूप से बिना परिश्रम के ही अधिक मात्रा में मिल जायेगी। जीवन रेखा यदि इसी प्रकार रुके तो 'हार्टफेल' आदि आकस्मिक कारणों से मृत्यु होना प्रकट होता है।

मस्तक रेखा—मस्तक रेखा चन्द्र व मंगल के उठे हुए स्थानों को आच्छादित करती हो तो तीव्र बुद्धि, विवेक, स्पष्ट विचार प्रकट होते हैं। केवल चन्द्र स्थान को छूती हुई नीचे की ओर झुके तो स्मरण शक्ति की कमी बताती है। बीच-बीच में टूटती-फूटती पूरी हथेली को पार करे तो चालाकी, कूटनीति, धूर्तता और ठगी की अधिकता होती है। इसका अंतिम सिरा यदि कलाई की ओर झुका हो तो व्यवहार कुशलता, हाजिर जबावी, मौकापरस्ती और बढ़ी हुई मानसिक शक्ति का ज्ञान कराती है।

जीवन रेखा और मस्तक रेखा में जितना ही फासला होगा, मनुष्य उतना ही साहसी, उग्रकर्म करने वाला, वैरागी, निर्भीक, जिन्दगी की या हानि-लाभ की परवाह न करने वाला होगा। दुहरी मस्तक रेखा हो तो असाधारण दूनी बुद्धिमत्ता का लक्षण है। यह शाखायें निकल कर सूर्य के स्थान की ओर जायँ, तो प्रभावशाली विचारों का होना और बुध के स्थान की ओर जायँ तो शास्त्रज्ञ होना प्रकट होता है।

लहरदार मस्तक रेखा वाले आधे पागल होते हैं। जंजीरदार रेखा वाले घर में सदा कलह मचाये रहते हैं। बहुत सी छोटी-छोटी लाइनों से वह कट रही हो तो कई प्रकार के मानसिक रोग देखने में आते हैं। यदि बहुत सी छोटी-छोटी शाखायें निकलकर हृदय रेखा की ओर जा रही हों तो ऐसे व्यक्ति धुन के पक्के और स्वभाव के मीठे मिलेंगे।

हृदय रेखा—हृदय रेखा से प्रेम, प्रसन्नता और आदर्श का ज्ञान होता है। यह रेखा बीच में फटी-टूटी हो तो मतलब की मुहब्बत, जरा-सी बात में रंज और जरा-सी बात में खुशी-मौका पड़ते ही धर्म को भूल जाना। यह तीन दुर्गुण देखे जायेंगे। उँगलियों से इस रेखा में जितना ही फासला होगा उतनी ही सचाई, स्थिरता और वफादारी पाई जायगी। गुरु के स्थान के निकट यदि इसमें से दो शाखायें फूटें तो वह साधु, दयालु, परोपकारी और लोक-सेवक मनुष्य होगा। वृद्ध पुरुषों और देवताओं की भक्ति करने वालों के हाथ में हृदय रेखा गुरु स्थान की सीध में पहुँचकर कुछ अधिक मोटी हो जाती है। तर्जनी और मध्यमा के बीच भाग में यह रेखा मिलती हो तो व्यभिचार की ओर झुकाव अधिक रहता है। यदि तर्जनी के नीचे यह रेखा समाप्त होती हो तो अपने मित्र से बार-बार निराशा होती है, प्रेमी और आत्मीय कहलाने वाले लोग समय पर अक्सर उसे धोखा दे जाते हैं।

भाग्य रेखा—पूर्व संचित शुभ कर्मों के कारण क्या-क्या सुख इस जीवन से मिलने वाले हैं, इसका पता भाग्य रेखा के द्वारा बताया जा सकता है। यदि यह रेखा बीच में टूटी हुई फल देने वाली है। ऐसे व्यक्तियों को धन, ज्ञान, स्वास्थ्य, प्रतिभा और प्रेम की कमी नहीं रहती। जिनके हाथ में यह रेखा बिलकुल न हो वे प्रायः निर्धन और दुःखी, दरिद्री रहते हैं। मणिबन्ध से चलकर शनि के स्थान तक पहुँचने वाली भाग्य रेखा बुद्धिमत्ता, समृद्धि और सुख-सौभाग्य का होना प्रकट करती है, इसका अन्तिम सिरा ऊपर की ओर झुका हुआ हो तो ऐसा व्यक्ति सदा सुखी रहेगा। किसी अवसर पर इसे मन मार कर बैठना न पड़ेगा। समय पड़ने पर आवश्यक वस्तुएँ अनायास ही उसके पास आ जावेंगी। जिसका अन्तिम सिरा नीचे की ओर मुड़ गया हो, वह धनवान होते हुए भी आपत्तियों में फँसा रहता है। आये दिन कोई न कोई झंझट उसके सामने खड़े रहते हैं।

अनामिका की जड़ की ओर जा रही हो तो बहुत से लोगों के सहयोग से सुखी हो सकता है। अकेला कुछ बड़ा काम करने से समर्थ नहीं हो सकता। कनिष्ठका के मूल की तरफ जा रही हो तो परदेश में पुजता है और धन लाभ करता है। भाग्य रेखा शुक्र के स्थान से निकलती हो तो दूसरों के ऊपर उसका भाग्य आश्रित रहता है। पैतृक या अनायास धन की प्राप्ति होती है। किन्तु दूसरों के प्रभाव में उसे रहना पड़ता है।

यदि भाग्य रेखा शनि के स्थान पर पहुँचकर वृहस्पति के स्थान की ओर मुड़ जाये तो वृद्धावस्था में अधिक उन्नति होती है। यदि मूल में मस्तक रेखा और भाग्य रेखा जुड़ी हुई हो तो समझना चाहिए कि बौद्धिक कार्यों में सुख मिलेगा। यदि वह नीचे जाकर दो भागो में बँट गई हो तो देशाटन में विशेष रुचि प्रकट करती है।

सूर्यरेखा—यह रेखा मूर्ख, अशिक्षित, भाग्यहीन, निर्धन, बदनाम तथा तुच्छ पुरुषों के हाथों में नहीं होती है। जिसके हाथ में होती है, वह निश्चय ही बड़ा भाग्यशाली और प्रतिभाशाली होता है। भाग्य रेखा यदि हाथ में न हो तो सूर्य रेखा धन रेखा का काम करती है।

यदि सूर्य रेखा की जड़ जीवन रेखा से मिली हुई हो तो वह मनुष्य कोई बड़ा कलाकार होता है। चन्द्र स्थान से निकले तो दूसरों की सहायता से उन्नति करने वाला और यशस्वी होता है। मंगल के स्थान से निकले तो अनेक विघ्न-बाधा और संघर्षों से लड़ने के बाद उसे सफलता प्राप्त होती है। हृदय रेखा से निकले तो अनेक गुणों की विशेषता और वृद्धावस्था में यशस्वी होने का चिन्ह है। दो सूर्य रेखायें हों तो अचानक यश और धन

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में वृद्धि होती है। यदि मस्तक रेखा से निकली हो तो युवावस्था में दिमागी शक्ति द्वारा कोई बड़ी सफलता मिलती है। मणिबन्ध के पास से निकले तो वह आदमी ऐसा भाग्यशाली होता है कि मिट्टी पकड़े तो सोना बन जाय। यदि जीवन रेखा के भीतर से निकले तो प्रेम के द्वारा धन, यश या पद की प्राप्ति होती है। भाग्य रेखा से निकलती हो तो अपने प्रयत्न से ही उसका उत्थान होता है।

यदि सूर्य रेखा अन्त में त्रिशूल की तरह तीन रेखाओं वाली हो जाय तो उसकी शक्ति कई तरफ बट जाती है, इसलिए किसी एक कार्य में अधिक सफलता प्राप्त नहीं होती। सूर्य रेखा जिस ग्रह के स्थान पर जाकर समाप्त होती हो, उसी ग्रह के गुणों को बलवान बनाती है। जैसे बुध के स्थान पर समाप्त हो तो व्यापार, विज्ञान, साहित्य, यश और सार्वजनिक जीवन में सफलता प्राप्त होती है। इसी प्रकार गुरु या शनि के स्थान का फल समझना चाहिए।

स्वास्थ्य रेखा—स्वास्थ्य रेखा का जीवन रेखा से न मिलना शरीर की दृढ़ता, दीर्घायु और बलवान होने का चिन्ह है। यदि मिली हुई हो तो आये दिन कुछ न कुछ शारीरिक कष्ट खड़ा रहता है। सामुद्रिक विद्या के पारंगत पण्डित शेरो ने अपनी पुस्तक में लिखा है कि स्वास्थ्य रेखा तन्दुरुस्ती का थर्मामीटर है। जिन दिनों मनुष्य बीमारी में ग्रस्त होता है या बीमार पड़ने को होता है। उस समय यह रेखा गहरी और भयानक हो जाती है पर जब शरीर स्वस्थ होने लगता है, यह रेखा धुँधली पड़ जाती है। इसमें से जितनी शाखायें फूटती हों उतने ही किस्म के रोगों का अधिक दबाव रहता है।

यह रेखा चन्द्र स्थान तक चली जाय तो मनोविकारों की अधिकता और वीर्य सम्बन्धी रोगों का अस्तित्व प्रकट होता है। स्वास्थ्य रेखा हर किसी के हाथ में हो यह आवश्यक नहीं है। सच तो यह है कि इसका न होना ही होने की अपेक्षा ज्यादा अच्छा है। जिसके हाथ में यह नहीं होती, वे उतने बीमार नहीं पड़ते। इसका दुहरा होना चरित्र की पवित्रता और अच्छे स्वास्थ्य का चिन्ह है। पीले रंग की हो तो कलेजे की बीमारी का होना बताती है। स्वास्थ्य रेखा मस्तक रेखा से मिलती हो तो जीवनी शक्ति का अभाव प्रकट होता है, ऐसे आदमी थोड़े परिश्रम से बहुत थक जाते हैं। यदि यह मस्तक रेखा और हृदय रेखा के बीच में होकर निकली हो और अधिक लालिमायुक्त हो तो मूर्छा, मृगी, पागलपन, सनक आदि मानसिक रोगों की निशानी है।

विवाह रेखा—कनिष्टका उँगली और हृदय रेखा के बीच में जो छोटी किन्तु गहरी रेखा बुद्धि के स्थान की तरफ आती है, वह विवाह रेखा कहलाती है। इसी के द्वारा स्थायी विवाह का परिचय प्राप्त होता है, इसमें से जो शाखायें निकलती हैं उनसे उप-पत्नियों की, अधूरे विवाहों की सूचना मिलती है। विवाह रेखा जितनी गहरी और बिना टूट-फूट की होती है, स्त्री से प्रेम भी उतना ही अच्छा निभता है। बीच में उथलापन या टूटना प्रेम मार्ग को हल्का, ओछा और विघ्नयुक्त बनाता है। यदि रेखा बीच में स्पष्ट रूप से बिल्कुल टूट गयी हो तो पत्नी से सम्बन्ध विच्छेद या मृत्यु की सूचना है। कई जगह यदि टूट गयी हो तो ऐसे ही कटु अवसर कई बार आ सकते हैं।

यदि यह सूर्य रेखा से मिलती हो तो धनी घर से विवाह होना बताती है किन्तु यदि उसे काटकर आगे बढ़ जाय तो विवाह के बारे में किये गये बड़े-बड़े मनसूबे धूल में मिल जाते हैं। विवाह रेखा में से कोई रेखा निकलकर हृदय रेखा तक पहुँचे तो रोगी पत्नी के साथ विवाह होता है। मंगल के स्थान से निकलकर कोई छोटी पतली रेखा विवाह रेखा से जा मिले तो विवाह के फलस्वरूप रोज-रोज झगड़े का और क्लेश का सामना करना पड़ता है। ऐसी ही कोई पतली सी रेखा शुक्र के स्थान से निकलकर विवाह रेखा में आ मिले तो पत्नी परेशानी की जड़ बन जाती है। साँप छछूंदर की गति में उसे सदा उलझा रहना पड़ता है। जीवन रेखा और विवाह रेखा में फासला अधिक हो तो पति पत्नी में सदा मतभेद बना रहता है। सूर्य स्थान से चलकर कोई पतली रेखा विवाह रेखा में मिले तो सब प्रकार सुख-शान्ति और सन्तोष होने का लक्षण है।

विवाह रेखा और हृदय रेखा के बीच के फासले से शादी की उम्र जानी जा सकती है। यदि बहुत समीपता हो तो बालकपन में ही विवाह हो जाता है। यह फासला जितना ही अधिक होता जाता है, विवाह की आयु में उतनी ही देरी समझनी चाहिए। साधु-महात्माओं के हाथ में विवाह रेखा स्त्री की सूचना नहीं देती वरन् भक्त और शिष्यों के सम्बन्ध में ज्ञान कराती है। यह फाँकदार हो तो स्त्री पुरुषों के मनों में फाँक रहना प्रकट होता है।

मणिबन्ध—हाथ को नीचे की ओर झुकाने से कलाई पर जहाँ नाड़ी देखी जाती है, उस जगह कुछ सिलवटें सी पड़ती हैं, इनको मणिबन्ध या कलाई की रेखायें कहते हैं। अक्सर यह तीन होती हैं। इनसे पहली से तन्दुरुस्ती दूसरी से धन और तीसरी से सुख-शान्ति जानी जाती है। किन्तु भारतीय सामुद्रिक विद्या के अनुसार इनमें से पहले से धन, दूसरी से विद्या और तीसरी प्रेम भाव और सत् स्वभाव का पता चलता है।

इन रेखाओं से आयु का अनुमान भी लगाया जाता है। हर एक रेखा से ३० वर्ष की आयु का अन्दाज है। अगर तीन रेखायें साफ हों तो ९० वर्ष की आयु भी कम होती है। जैसे किसी के मणिबन्ध में १.५ रेखा हो तो उसकी आयु लगभग ४५ वर्ष होगी।

संतान रेखाएँ—अँगूठे की जड़ें और कलाई के बीच में हथेली पर आरम्भिक भाग में जो छोटी-छोटी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रेखाएँ हैं, उनसे सन्तान के सम्बन्ध में पता चलता है। यह रेखाऐं जितनी हों उतनी संख्या में सन्तान होंगी। जो रेखाऐं हथेली की ओर से आरम्भ होकर पृष्ट भाग की ओर बढ़ रही हों, वे पुत्र की सूचक हैं। जो पृष्ट भाग की ओर से आरम्भ होकर हथेली की तरफ चल रही हों वे कन्याओं की संख्या बताती हैं। बीच-बीच में ही जो बहुत पतली और खण्डित रेखाऐं होती हैं, वे गर्भपात तथा बालकों की अल्पायु में ही मृत्यु की सूचना देती हैं, जितनी रेखाऐं गहरी स्पष्ट और लम्बी हों, उतनी ही सन्तानों का निश्चय करना चाहिए। इनमें से जितनी कटी-फटी नहीं वे सन्तान सुख देती हैं। जितनी रेखाएँ कटी-टूटी या फाँकदार हों वे सन्तान प्राय: जी को जलाने वाली, विरोधी और कष्टदायी होती हैं।

कुछ अन्य चिन्ह

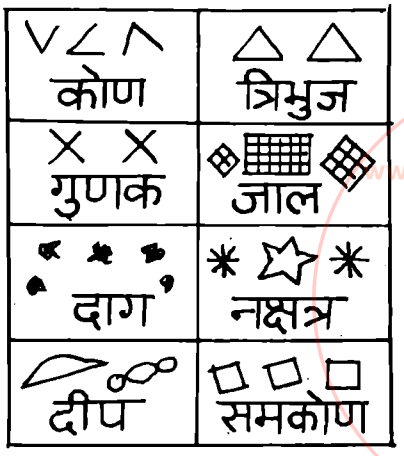

हाथ में कई प्रकार के अन्य चिन्ह भी देखे जाते हैं। इनमें से आठ प्रमुख चिन्ह यह हैं—(१) दाग (२) नक्षत्र (३) द्वीप (४) समकोण (५) कोण (६) त्रिभुज (७) गुणक (८) जाल। चिन्ह की तसवीरें चित्र में दी हुई हैं। उसके आधार पर पाठक इन चिन्हों की आकृति समझ सकते हैं।

इन चिन्हों में नक्षत्र, द्वीप, समकोण और त्रिभुज यह पाँच शुभ हैं। दाग, गुणक और जाल यह तीन अशुभ हैं। जो चिन्ह जिस रेखा के समीप हों या बीच में हों वह उसी रेखा के फल को भला या बुरा बनावेगा। अशुभ चिन्ह उसी रेखा के फल में बुराई पैदा करेंगे, जिसके समीप होंगे। इसी प्रकार शुभ चिन्ह भी अपना फल दिखावेंगे।

यदि उपरोक्त चिन्हों में से कोई चिन्ह किसी ग्रह के स्थान पर हो तो उस ग्रह के फल पर भी उस चिन्ह का प्रभाव पड़ेगा। बुरा चिन्ह उस ग्रह के फल में अपनी बुराई को भी देगा, इसी प्रकार शुभ चिन्ह उस ग्रह के अशुभ फल में सुधार और शुभ फल में वृद्धि करेगा।

सप्त वर्षीय नियम—इस संसार की हर चीज गोल है और हर वस्तु अपनी धुरी पर घूमती है। फलस्वरूप प्रत्येक बात की पुनरावृत्ति हुआ करती है। सूर्य हर चौबीस घण्टे बाद नित्य उदय होता है और हर चौबीस घण्टे बाद ही नित्य अस्त होता है, ऋतुऐं एक साल बाद फिर वापिस आती हैं, समस्त ग्रह-नक्षत्र अपने नियत क्रम पर घूमते हुए अपनी परिक्रमा पूरी किया करते हैं। इसी विधान के अनुसार जीवन का एक चक्र सात वर्ष में पूरा हो जाता है। जो सुख, दुख, हानि, लाभ जीवन के पहले वर्ष में हुए थे, उसी से मिलते-जुलते १, ७, १४, २१, २८, ३५, ४२, ४९ ५६, ६३, ७०, आदि वर्षों में होते जायेंगे। जो हानि, लाभ, सुख, दुख, जीवन के दूसरे वर्ष में हुये थे, वैसे ही २, ८,१५, २२, २९, ३६, ४३, ५०, ५७, ६४, ७१, ७९ आदि वर्षों में होंगे। इसी प्रकार सातवाँ वर्ष वैसा ही आ जाता है जो पहला था। किन्हीं ७ वर्षों का वर्ष फल ध्यानपूर्वक तैयार कर लिया जाय, तो जीवन भर का साधारण वर्ष फल बन जाता है। हाँ विशेष कारणवश उसमें विशेष न्यूनाधिकता हो जाना दूसरी बात है।

हाथ में उपस्थित रेखाओं के शुभाशुभ फल में भी वह सप्त वर्षीय नियम काम करता है। उसकी रीति यह है कि जिस रेखा के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त करनी हो उसकी सम्भावित पूरी लम्बाई नाप लेनी चाहिए। मान लीजिए कि हाथ की बनावट के अनुसार किसी की भाग्य रेखा यदि पूरी बनी होती तो सम्भवत: ४ इंच होने की संभावना थी। अब इसे एक कागज पर नोट कर लीजिए और १०० वर्ष आयु से इसका अनुपात निर्धारित कर लीजिये। जैसे—

४ इंच = १०० वर्ष

अब देखिए कि हाथ में भाग्य रेखा की लम्बाई कितनी है, यदि वह तीन इंच हो तो उसका हिसाब इस प्रकार लगाना चाहिये कि यदि ४ इंच भाग्य रेखा होती तो १०० वर्ष तक फल देती। किन्तु वह तीन इंच है, तो ७५ वर्ष तक ही फल देगी। इसका अर्थ यह न समझना चाहिए कि ७५ वर्ष की आयु में मृत्यु हो जायगी, वरन् यह है कि यदि जीवन कायम रहे तो ७५ वर्ष तक फल देगी, इसके बाद निष्फल हो जायगी। इसी प्रकार यदि कोई रेखा पूरी संभावना की अपेक्षा चौथाई ही हो तो इसका फल २५ वर्ष रहेगा, इसके उपरान्त यह रेखा निरर्थक हो जायगी।

जीवन के आदि-मध्य का अन्त से रेखा का फल रहेगा, यह जानने के लिए यह देखना चाहिए कि रेखा किस भाग में स्पष्ट है, किस भाग में टूटी है, किस भाग में धुँधली है और किस भाग में बिल्कुल नहीं ? रेखा को ४ भागों में बाँटकर हर एक २५, २५ वर्ष वाले भाग का अनुमान कर सकते हैं। जैसे कोई रेखा आदि के एक चौथाई भाग में बिल्कुल न हो और अन्त में भी न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो, सिर्फ बीच ही बीच में हो तो इसका तात्पर्य यह है कि बालकपन और वृद्धावस्था के २५ वर्षों में वह रेखा फल न देगी वरन् २५ वर्ष की आयु से लेकर ७५ वर्ष तक के बीच के ५० वर्षों में ही उसका फल रहेगा। बीच में या आदि, मध्य में यदि कोई रेखा पतली धुँधली, टूटी हुई हो तो उस समय में उसका फल भी उसी अनुपात में कम होता है। जिस स्थान पर कोई रेखा अधिक मोटी या दुहरी हो गई हो इस स्थान की लम्बाई नापकर उपरोक्त प्रकार से हिसाब लगाकर जाना जा सकता है कि जीवन के किस वर्ष में कौन रेखा कितना या कैसा फल देगी। यदि वह रेखा स्थित और शुभ है, तो रेखा के स्पष्ट में जाकर बहुत अच्छा फल और अस्पष्ट भाग में कम अच्छा फल देगी। यदि उस रेखा की स्थिति अशुभ है तो मोटे स्पष्ट भाग में अधिक बुरा फल, अस्पष्ट भाग में कम बुरा फल देगी। डोरे से रेखा की लम्बाई नापकर उपरोक्त रीति से यह हिसाब लगाया जा सकता है कि किसी रेखा का जीवन के किस वर्ष में कैसा फल होगा।

सप्त वर्षीय परिवर्तन नियम के अनुसार रेखाओं का विशेष फल जानने का तरीका यह है कि किसी रेखा के बारे में उपरोक्त रीति से पहले यह मालूम करना चाहिए कि वह जीवन के किसी भाग में कितने वर्ष तक फल देगी। जैसे किसी रेखा की स्थिति देखकर यह मालूम हो गया कि वह रेखा २० वर्ष की आयु से लेकर ७० वर्ष की आयु तक ५० वर्ष फल देगी। इस पचास वर्ष को सप्त वर्षीय परिक्रमा में बाँट दीजिये। सात चक्र पूरे हुए और दो वर्ष बचे। इन चक्रों का हर एक आरम्भिक वर्ष इस रेखा के फल से विशेष रूप से सम्मिलित होगा। जैसे स्थिति के अनुसार उस रेखा का फल धन प्राप्त होगा तो समझ लीजिए कि उपरोक्त रेखा के अनुसार २०, २६, ३३, ४०, ४७, ५४, ६१, ६८, वर्ष की आयु में विशेष रूप से धन की प्राप्ति होगी। यदि उस रेखा की स्थिति के अनुसार फल धन नाश होता तो यही वर्ष विशेष रूप से धन नाश करने वाले होते।

इस प्रकार हर रेखा का सप्त वर्षीय परिभ्रमण के नियमानुसार शुभाशुभ फल की विशेषता जानी जा सकती है। रेखायें डोरे की सहायता से सही रूप से नापकर ध्यानपूर्वक गणित किया जाय, तो जन्म-पत्री की योगिनी एवं विंशोत्तरी दशा के अनुसार हस्त रेखाओं के अनुसार जन्म-पत्री भी बन सकती है। जन्म समय ठीक मालूम न होने से कभी-कभी इष्ट गलत हो जाने से जन्म-पत्री के फलों में अन्तर भी पड़ सकता है, पर हस्त रेखाओं के अनुसार निर्धारित किया हुआ फलादेश अपेक्षाकृत अधिक और ठीक निकल सकता है।

आकृतियों के फल—भारतीय सामुद्रिक शास्त्र में स्त्री का बायाँ हाथ और पुरुष का सीधा हाथ देखने का विधान है। रेखाओं के मिलने से हाथ में कहीं-कहीं कुछ आकृतियाँ सी बन जाती हैं। उन आकृतियों को भारतीय सामुद्रिक शास्त्री विशेष महत्त्व देते हैं और इनके अनुसार फल निश्चय करते हैं।

भारतीय हस्त रेखा विज्ञान के अनुसार जिस व्यक्ति के हाथ में मछली के समान रेखा हो तो उसके काम सिद्ध होते हैं, वह धनाढ्य और सन्तान वाला होता है। जिसके हाथ में तराजू, मकान या वज्र जैसी आकृति हो उसका व्यापार खूब चलता है। जिसके हाथ में कमल पुष्प, धनुष, तलवार चक्र या अष्टकोण का चिन्ह हो वह योद्धा, धनवान होता है और स्वस्थ रहता है। त्रिशूल जैसा चिन्ह हो तो वह राजदरबारी, सात्विक प्रकृति का और शुभकार्य करने वाला होता है। अंकुश या कुण्डल के चिन्ह हों तो राजमन्त्री, नेता एवं महापुरुष बनता है। पर्वत, कंकण, मनुष्य का सिर, पंख जैसे चिन्ह हों तो पराक्रम, यश, आदर एवं विजय का सेहरा उसके सिर पर बँधता है। सूर्य, चन्द्र, बेल, नेत्र, त्रिकोण, मन्दिर हाथ घोड़ा की आकृति हाथ के किसी स्थान में हों तो उसे धनवान, सुखी और समृद्ध होने का चिन्ह समझना चाहिए। अँगूठे के बीच में जौ का चिन्ह हो तो वह ऐश्वर्य प्राप्ति का लक्षण है। तर्जनी (अँगूठे के पास की) और मध्यमा (बीच की उँगली) की जड़ में जौ का चिन्ह हो तो उस व्यक्ति को दाम्पत्य सुख की प्राप्ति होती है और पारिवारिक जीवन आनन्दमय रहता है।

जिसके हाथ में शंख, ध्वजा या नासिका जैसी रेखा हो तो वह असाधारण विद्वान होता है। माला, तार, रथ, कुण्डल, छत्र, जैसे चिन्ह राजाओं के हाथों में होते हैं। हाथ में जितने यव (जौ) के चिन्ह हों तो वे विद्या की अधिकता प्रकट करते हैं। इसी प्रकार मछली की आकृति से यश का, हथियारों से वीरता का, कोठरी से धन का, त्रिकोणों से स्वास्थ्य का परिचय प्राप्त होता है। हाथ में जितने कमल हों वे धर्म वृद्धि सूचित करते हैं।

उँगलियों में आड़ी रेखाएँ''——''इस प्रकार की जितनी होंगी, वे क्रोध एवं लोभ की प्रतीक हैं। सद्गुण और सत्कार्यों के अनुसार उँगलियों में 'ा' इस प्रकार की खड़ी रेखाऐं उत्पन्न होती हैं। एक दूसरे को काटती हुई '+' इस प्रकार की रेखाऐं मानसिक बेचैनी, चिन्ता, शोक एवं वेदना का होना प्रकट करती हैं। दुस्साहसी लोगों की उँगलियों में बहुत छोटी आड़ी, टेढ़ी रेखाएँ देखी जाती हैं।

यदि अँगूठे की जड़ में '४' चार का अक्षर सा बना हो तो वह निष्ठुरता, क्रूरता और लड़ाई-झगड़े की प्रवृत्ति का सूचक है। यदि कलाई में से कटा हुआ सा त्रिकोण हो तो उसका अधिकांश जीवन परदेश में व्यतीत होता है। अनामिका उँगली के तीसरे पोरुवे में पास-पास दो रेखायें हों तो ऐसा व्यक्ति तीव्र बुद्धि वाला, कुशल और पराक्रमी होता है। कनिष्ठका (सबसे छोटी) उँगली की जड़ में जितनी छोटी-छोटी, अस्त-व्यस्त रेखाऐं हों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसी अनुपात से स्वास्थ्य की रेखा समझनी चाहिए। मध्यमा (बीच की उँगली) की जड़ में जिसके दो रेखाऐं होती हैं, वह परिश्रमी और उत्साही होता है। कलाई पर साँप का चिन्ह जिनके होता है वे चोरी, छल तथा निकृष्ट कर्मों में रुचि रखने वाले देखे जाते हैं।

कनिष्ठका के तीसरे पोरुवे में गुणित 'X' का निशान हो तो मन्द बुद्धि और संशयी होने का चिन्ह समझना चाहिए। भोग विलास में अधिक रुचि रखने वालों की अनामिका उँगली की जड़ में टेढ़े-मेढ़े निशान पड़ जाते हैं। अँगूठे के मध्य भाग में सर्प की जैसी टेढ़ी रेखा वाले व्यभिचारी होते हैं। उँगलियों के दूसरे और तीसरे पोरुवे की मध्य रेखा को काटती हुई यदि खड़ी रेखा दिखाई पड़े तो उसे बुद्धि, विवेक, उदारता, सहृदयता का चिन्ह समझना चाहिए। पहले दूसरे पोरुवे की मध्य रेखा को काटती हुई खड़ी रेखा चाहे वह किसी भी उँगली में क्यों न हो धन वैभव, यश और भोग की प्रतीक है।

अँगूठे से स्वास्थ्य, तर्जनी से स्वभाव, मध्यमा से ज्ञान, अनामिका से वैभव और कनिष्ठका से पूर्व संचित शुभ, अशुभ-संस्कारों का पता चलता है। जो ऊँगली कृश, सुन्दर, कुरूप, आदि जैसी आकृति की हों तो उसी के अनुसार उपरोक्त बातों की सूक्ष्म दृष्टि द्वारा जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

सामुद्रिक विद्या के अभ्यासियों को चाहिए कि हाथ का ढाँचा, उँगली, अँगूठा, नाखून, हथेली की बनावट, ग्रहों का स्थान, हस्तरेखाऐं, तिल, शंख, चक्र, मणिबन्ध तथा चिन्हों पर भली-भाँति विचार करके फल की विवेचना करें। इस प्रकार गम्भीरता और सूक्ष्म दृष्टि के साथ किया हुआ विचार प्रायः असत्य नहीं होता, ऐसा हमारा अनुभव है।

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

परमपूज्य गुरुदेव की अभिनव पाँच स्थापनाएँ

युगदृष्टा के स्तर की अवतारी सत्ता के रूप में परमपूज्य गुरुदेव ने अपने अस्सी वर्ष के जीवनकाल में जितना भी कुछ किया, उसकी मिसाल कहीं देखने को नहीं मिलती। करोड़ों व्यक्तियों के मनों का निर्माण, उनके सोचने के तरीके में बदलाव एवं युग निर्माण की पृष्ठभूमि बनाकर रख देने का कार्य इन्हीं के स्तर की सत्ता कर सकती थी, जो लाखों वर्षों में कभी-कभी धरती पर आती है। उनके द्वारा की गयी स्थापनाओं का जब प्रसंग आता है तब ईंट-गारे-चूने-सीमेंट से बने भवनों से पहले उनकी स्नेह-संवेदना से सिक्त हुए, ममत्व में स्नानकर उनके अपने हो गये लाखों व्यक्ति दिखाई पड़ते हैं, जिनने उनके एक इशारे पर अपना सब कुछ उनको अर्पित कर दिया। स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में कभी ऐसा ही वातावरण भारत के कोने-कोने में दिखाई देता था, जब हर घर से सत्याग्रही निकलकर आ रहे थे। भावनाओं का आवेग चिरस्थायी नहीं रहता। वे ही लोग जो कभी राष्ट्र निर्माण के लिए अपना सब कुछ छोड़, पढ़ना-लिखना छोड़ देश को आजाद बनाने के लिए कूद पड़े थे, कभी गड़बड़ाने न पाएँ, उसी के लिए बापू ने आजादी के बाद काँग्रेस भंग कर देने व सभी को एक आदर्श स्वयं-सेवक की तरह दरिद्र नारायण का उत्थान कर राष्ट्र निर्माण में लग जाने की सलाह दी थी।

सभी इस तथ्य को जानते हैं कि ऐसा नहीं हुआ, राष्ट्र का कीर्ति-स्तम्भ रूपी वह महापुरुष भी एक वर्ष के अंदर ही शहादत को प्राप्त हो चला गया। गिने-चुने उनके आदर्शों पर चलने वाले रह गये, अवसरवादियों को राजनेतृत्व भाने लगा एवं राष्ट्र आजाद होकर भी उनके हाथ में आ गया जो ब्रिटिश तो नहीं थे किन्तु, उसी रंग में रँगे सत्ता के उन्माद में काम करने वाले शासक थे- सृजेता नहीं। जिंदा रहा तो मात्र बापू का दर्शन बुनियादी आधार पर टिका- मानव को बनाने का तंत्र-आश्रम तंत्र जो सेवाग्राम-साबरमती आश्रम के रूप में कार्य करता रहा और वह भी शीर्ष-पुरुष के न रहने, बिनोवाजी के चले जाने के बाद अस्तित्व व महत्व की दृष्टि से गौण हो गया। परमपूज्य गुरुदेव ने अपनी दिव्य-दृष्टि से यह सब पूर्व में ही देख लिया था कि कोई भी भव्य निर्माण, आश्रम या तंत्र बनाने से पूर्व राष्ट्र को सांस्कृतिक, भौतिक, आध्यात्मिक आजादी दिलाने वाले अगणित व्यक्ति तैयार करने पड़ेंगे। १९११ में आज से ८४ वर्ष पूर्व वि.संवत् २०८६ में जन्मे, राष्ट्र की आजादी में उन्मत्त बने श्रीराममत्त कहलाने वाले, आचार्यश्री ने पहले स्वयं को तपाया, वैचारिक क्रान्ति के निर्माण का आधारभूत तंत्र स्वयं व परमवंदनीया माताजी के रूप में खड़ा किया, 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका अपनी लेखनी से लिखी, ममत्व भरी चिट्ठियों व छोटी-छोटी एक आने की किताबों से जन-जन के मन को छुआ, तब जाकर अपने एक लक्ष के २४ गायत्री महापुरश्चरणों की पूर्णाहुति पर उन्होंने गायत्री तपोभूमि, मथुरा की स्थापना की बात १९५२-५३ में सोची। सबसे पहली मंत्र दीक्षा वहीं पर १९५३ में दी व यह मानते हुए कि बिना आध्यात्मिक आधार बनाये, मनोभूमि में, भावनाओं के स्तर पर बदलाव लाये कोई क्रान्ति सफल नहीं हो सकती, धीमी खुराक देते हुए हर व्यक्ति को गायत्री व यज्ञ के तत्त्वदर्शन से जोड़ते हुए चले गये। गायत्री परिवार रूपी विराट वृक्ष का मूल आधार वह स्थापना है जो जन-जन के मनों में पहले हुई- उनकी भाव संवेदनाओं के उदात्तीकरण के रूप में सम्पन्न हुई व उनके अंदर अपनी गुरुसत्ता को त्याग करने की, यज्ञीय जीवन अपनाने की प्रेरणा बलवती होने लगी। उन्होंने सर्वमेध के रूप में अपना सर्वस्व बलिदान एवं नरमेध के रूप में अपने आप को समाज के हित न्यौछावर करने की भावना से दो यज्ञ किये। अपनी जमींदारी के बाण्ड बेचकर एवं परमवंदनीया माताजी के कीमती सोने के जेवर (ढाई सौ तोले) बेचकर जो स्वेच्छा से सम्पन्न हुआ, एक स्थापना भवन के रूप में जो हुई- वह थी **गायत्री तपोभूमि, मथुरा** जो वृन्दावन रोड पर ऋषि दुर्वासा की जन्मस्थली पर बनी आज से ४२ वर्ष पूर्व १९५३ में। प्रारंभिक स्थापना यों अखण्ड ज्योति संस्थान को माना जा सकता है जहाँ अखण्ड दीपक अपनी जन्मभूमि आँवलखेड़ा से जो वहाँ से मात्र ४० मील दूर थी, स्थापित किया गया था एवं प्रारंभिक तप-तितिक्षा वहीं पर १९४१ से, तपोभूमि की स्थापना से भी १२ वर्ष पूर्व आरम्भ हो गयी थी। इस प्रकार जन-जन के मनों का निर्माण उनके अंतःस्थल में प्रवेश कर उनके अंदर देवत्व के जागरण की ललक पैदा करने वाली पृष्ठभूमि पर स्थापनाओं का क्रम बना। किराये की ऐसी हवेली जिसे भुतहा हवेली कहा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जाता था, में अखण्ड दीपक की स्थापना, उसके समक्ष तप, **अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा** के रूप में विकसित हुआ एवं एक और दूसरा निर्माण मथुरा में ही गायत्री तपोभूमि के रूप में हुआ जो कि ३ मील दूर वृन्दावन रोड पर १९५३ में बनाई गई। १९५३ में क्रमशः सुसंगठित गायत्री परिवार के बनने की प्रक्रिया चल पड़ी।

इस प्रारंभिक भूमिका को समझने के बाद ही परमपूज्य गुरुदेव की पाँच मूल स्थापनाओं एवं बाद में देश के कोने-कोने में बनी भव्य इमारतों के रूप में शक्तिपीठों, प्रज्ञा संस्थानों, भारत व विश्वभर में घर-घर में स्थापित स्वाध्याय मण्डलों व गायत्री परिवार की शाखाओं, प्रज्ञापीठों, चरणपीठों का महत्त्व समझा जा सकता है। नहीं तो जैसे अन्यान्य आश्रम-संस्थान बनते हैं, ऐसे इनका भी वर्णन किया जा सकता था व यह कहा जा सकता था कि यह वैभवपूर्ण स्थापनाएँ पूज्यवर ने कीं। उनमें यदि प्राण फूँके गये हों, प्राणवान व्यक्ति वहाँ रहते हों व उस शक्ति के महा-अवसान के बाद भी वे सतत् उसी दिशा में चल रहे हों तो माना जाना चाहिए कि प्रारंभिक पुरुषार्थ जो किया गया, वह औचित्यपूर्ण था।

परमपूज्य गुरुदेव की महत्त्वपूर्ण पाँच स्थापनाएँ इस प्रकार हैं–

(१) युगतीर्थ आँवलखेड़ा (२) अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा (३) गायत्री तपोभूमि, मथुरा (४) शान्तिकुंज, गायत्री तीर्थ, सप्तसरोवर, हरिद्वार तथा (५) ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान, सप्तसरोवर, हरिद्वार ।

युगतीर्थ आँवलखेड़ा का नाम सबसे पहले इसलिए लिखा कि यहीं पर वह युगपुरुष संवत् १९६८ की आश्विन कृष्ण त्रयोदशी तिथि के दिन, ब्राह्ममुहूर्त में, जो अँग्रेजी तारीख से २० सितम्बर, १९११ के दिन आती थी, में जन्मा। एक श्रीमंत ब्राह्मण परिवार में, जहाँ धन की कोई कमी नहीं थी, पूरा परिवार संस्कारों से अनुप्राणित, पिता भागवत के प्रकाण्ड पंडित, बहुत बड़ी जागीर के मालिक। आज जहाँ पूज्यवर की स्मृति में एक विराट स्तंभ की, एक चबूतरे की तथा उनके कर्तृत्व रूपी शिलालेखों की स्थापना हुई है- वहीं पूज्यवर ने शरीर से जन्म लिया था। समीप बनी दो कोठरियाँ जो काल प्रवाह के क्रम में गिर सी गयी थीं, जीर्णोद्धार कर वैसी ही निर्मित कर दी गयी हैं- जैसी उनके समय में थीं। जन्मभूमि का कण-कण उस दैवीसत्ता की चेतना से अनुप्राणित है। उनके हाथ से खोदा कुँआ जिसे पूरे गाँव का एकमात्र मीठे जल वाला कुँआ माना गया- वह अभी भी है, उनके हाथ से रोपा नीम का पेड़ एवं वह बैठक जहाँ स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में सब बैठकर चर्चा करते थे, आज भी उन दिनों की याद दिलाते हैं। पास में ही दो कोठरियाँ हैं जिनमें से एक कक्ष में वह स्थान है जहाँ दीपक के प्रकाश में से सूक्ष्म शरीरधारी गुरुसत्ता प्रकट हुई थी तथा जिसने उनके जीवन की दिशाधारा का १९२६ के बाद के क्रम का निर्धारण कर दिया था। यह सब देखकर मस्तिष्क-पटल पर वह दृश्य उभर आता था, जिसे गुरुसत्ता ने कभी देखा था व जो गायत्री परिवार की स्थापना का मूल आधार बना। आँवलखेड़ा में ही उनकी माताजी की स्मृति में स्थापित माता दानकुँवरि इण्टर कालेज है जो उनके द्वारा दान दी गयी जमीन में प्रदत्त धनराशि द्वारा विनिर्मित है। १९६३ से चल रहे इस इंटर कालेज से कई मेधावी छात्र निकल कर आत्म-निर्भर बने हैं व उच्च पदों पर पहुँचे हैं।

१९७९-८० में गायत्री शक्तिपीठ एवं कन्या इंटर कॉलेज की स्थापना का ताना-बाना बुना जाने लगा जो एक विशाल शक्तिपीठ तथा आसपास के दो सौ ग्रामों की बालिकाओं के पठन-पाठन की व्यवस्था करने वाले, उन्हें सुशिक्षित, संस्कारवान, आत्मावलम्बी बनाने वाले कन्या महाविद्यालय का अब रूप ले चुका है। प्रथम पूर्णाहुति हेतु इसी भूमि को जो शक्तिपीठ-जन्मभूमि-ग्रामीण क्षेत्र के चारों ओर है, इसीलिए चुना गया कि यहाँ से उद्भूत प्राण ऊर्जा से यहाँ आने वाला हर संकल्पित साधक अनुप्राणित होकर जाए व राष्ट्र के नव-निर्माण की सांस्कृतिक व भावनात्मक क्रान्ति की पृष्ठभूमि रख सके। यहाँ पूज्यवर १९३६-३७ तक ही रहे, कुछ दिन आगरा रहकर १९४०-४१ में मथुरा चले गये, जहाँ दो-तीन मकान बदलने के बाद वर्तमान मकान किराये पर लिया जिसे आज अखण्ड-ज्योति संस्थान कहते हैं।

अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा में स्थित है। परमपूज्य गुरुदेव सीमित साधनों में अपने अखण्ड दीपक के साथ यहीं रहने लगे एवं यहीं से क्रमशः आत्मीयता विस्तार की जन-जन तक अपने क्रान्तिकारी चिंतन के विस्तार की प्रक्रिया 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका, जो आगरा से ही आरम्भ कर दी गयी थी, की 'गायत्री चर्चा' स्तम्भ व अन्यान्य लेखों की पंक्तियों के माध्यम से सम्पन्न होने लगी। व्यक्तिगत पत्रों द्वारा उनके अंतःस्थल को स्पर्श कर एक महान स्थापना का बीजारोपण होने लगा। यहीं पर अगणित दुःखी, तनावग्रसित

व्यक्तियों ने आकर उनके स्पर्श से नये प्राण पाये तथा उनके व परमवंदनीया माताजी के हाथों से भोजन-प्रसाद पाकर उनके अपने होते चले गये। हाथ से बने कागज पर छोटी ट्रेडिल मशीनों द्वारा यहीं पर अखण्ड ज्योति पत्रिका छापी जाती थी व छोटी-छोटी किताबों द्वारा लागत मूल्य पर उसे निकालने योग्य खर्च निकलता था। बगल की एक छोटी-सी कोठरी में जहाँ अखण्ड दीपक जलता था, आज पूजाघर विनिर्मित है। पूरी बिल्डिंग को खरीद कर उनके सुपुत्र ने एक नया आकार व मजबूत आधार दे दिया है किन्तु यह कोठरी अंदर से वैसी ही रखी गयी है जैसी पूज्यवर के समय में १९४२-४३ में रही होगी। तब से लेकर आगामी ३० वर्ष का साधनाकाल-लेखनकाल पूज्यवर का इसी घीयामण्डी के भवन में छोटी-छोटी दो कोठरियों में गहन तपश्चर्या के साथ बीता। तपोभूमि निर्माण की पृष्ठभूमि यहीं बनी, १९५८ में सहस्र कुण्डी यज्ञ की आधारशिला यहीं रखी गयी, यहीं सारी योजना बनी एवं विधिवत-गायत्री परिवार बनता चला गया। रोज आने वाले पत्रों को स्वयं परमवंदनीया माताजी पढ़ती जातीं एवं पूज्यवर इतनी ही देर में जवाब लिखते जाते, यही सूत्र संबंधों के सुदृढ़ बनने का आधार बना। हर परिजन को तीन दिन में जवाब मिल जाता, शंका-समाधान होता चला जाता एवं देखते-देखते एक विराट गायत्री परिवार बनता चला गया। गायत्री महाविज्ञान के तीनों खण्ड, युग निर्माण परक साहित्य, आर्ष-ग्रन्थों के भाष्य को अंतिम आकार देने का कार्य यहीं सम्पन्न हुआ। जनसम्मेलनों, छोटे-बड़े यज्ञों एवं १००८ कुण्डी पाँच विराट् यज्ञों में पूज्यवर यहीं से गये एवं विदाई सम्मेलन की रूपरेखा बनाकर स्थायी रूप से इस घर से १९७१ की २० जून को विदा लेकर चले गये। इस संस्थान के कण-कण में जहाँ आज १० लाख से अधिक संख्या में हिन्दी सहित सभी भाषाओं में अखण्ड ज्योति पत्रिका के प्रकाशन, विस्तार, डिस्पैच आदि का एक विराट तंत्र स्थापित है, परमपूज्य गुरुदेव की चेतना संव्याप्त अनुभव की जा सकती है। भले ही बहिरंग का कलेवर बदल गया हो, अंदर प्रवेश करते ही परमपूज्य गुरुदेव व परमवंदनीया माताजी की सतत विद्यमान प्राणचेतना के स्पन्दन वहाँ विद्यमान हैं, यह प्रत्यक्षत: देखा जा सकता है।

गायत्री तपोभूमि, मथुरा को परमपूज्य गुरुदेव की चौबीस महापुरश्चरणों की पूर्णाहुति पर की गयी स्थापना माना जा सकता है, जिसे विनिर्मित ही गायत्री परिवार रूपी संगठन के विस्तार के लिए किया गया था। इसकी स्थापना से पूर्व चौबीस सौ तीर्थों के जल व रज को संग्रहीत करके यहाँ उनका पूजन किया गया, एक छोटी किन्तु भव्य यज्ञशाला में अखण्ड अग्नि स्थापित की गयी तथा एक गायत्री महाशक्ति का मन्दिर विनिर्मित किया गया। चौबीस सौ करोड़ गायत्री मंत्रों का लेखन जो श्रद्धापूर्वक नैष्ठिक साधकों द्वारा किया गया था, यहाँ पर संरक्षित कर रखा गया है। पू. गुरुदेव की साधनास्थली व प्रात:काल की लेखनी की साधना की कोठरी यदि अखण्ड ज्योति संस्थान में थी तो उनकी जन-जन से मिलने, साधनाओं द्वारा मार्गदर्शन देने की कर्म-भूमि गायत्री तपोभूमि थी। यहीं पर १०८ कुण्डी गायत्री महायज्ञ में १९५३ में पहली बार पूज्यवर ने साधकों को मंत्र दीक्षा दी। यहीं पर १९५६ में नरमेध यज्ञ तथा १९५८ में विराट सहस्रकुण्डी यज्ञायोजन सम्पन्न हुए। श्रेष्ठ नररत्नों का चयन कर गायत्री परिवार को विनिर्मित करने का कार्य यहीं व्यक्तिगत मार्गदर्शन द्वारा सम्पन्न हुआ। हिमालय प्रवास से लौटकर पूज्य आचार्यश्री ने युग निर्माण योजना के शत-सूत्री कार्यक्रम एवं सत्संकल्प की तथा युग निर्माण विद्यालय के एक स्वावलम्बन प्रधान शिक्षा देने वाले तंत्र के आरम्भ होने की घोषणा की। यह विधिवत् १९६४ से आरम्भ किया गया एवं अभी भी सफलतापूर्वक चल रहा है। जिस कक्ष में परमपूज्य गुरुदेव सभी से मिला करते थे, अभी भी यहाँ देखा जा सकता है। भव्य निर्माण परमपूज्य गुरुदेव की १९७१ की विदाई के बाद यहाँ हो गया है किन्तु, कण-कण में उनकी प्राणचेतना का दर्शन किया जा सकता है। विराट प्रज्ञानगर, युग निर्माण विद्यालय, साहित्य की छपाई हेतु बड़ी-बड़ी ऑफसेट मशीनें तथा युग निर्माण साहित्य जो पूज्यवर ने जीवन भर लिखा, उसका वितरण-विस्तार तंत्र यहाँ पर देखा जा सकता है।

शान्तिकुंज, हरिद्वार ऋषि परम्परा के बीजारोपण केन्द्र के रूप में १९७१ में स्थापित किया गया था, जब परमपूज्य गुरुदेव मथुरा स्थायी रूप से छोड़कर परमवंदनीया माताजी को अखण्ड ज्योति दीपक की रखवाली हेतु यहाँ छोड़कर हिमालय में चले गये। गुरुसत्ता के निर्देश पर वे पुन: एक वर्ष बाद लौटे व तब शांतिकुंज को उनने एक बड़ा विराट रूप देने, सभी ऋषिगणों की मूलभूत स्थापनाओं को यहाँ साकार बनाने का निश्चय किया। इससे पूर्व परमवंदनीया माताजी ने २४ कुमारी कन्याओं के साथ अखण्ड दीपक के समक्ष २४० करोड़

गायत्री मंत्र का अखण्ड अनुष्ठान आरंभ कर दिया था। पूज्यवर ने प्राण प्रत्यावर्तन सत्र, जीवन साधना सत्र, वानप्रस्थ सत्र आदि के माध्यम से विभिन्न क्षेत्र में सक्रिय कार्य करने वाले कार्यकर्त्ता यहीं गढ़े। यह सत्र शृंखला कल्प साधना, संजीवनी साधना सत्रों के रूप में तब से ही ९ दिवसीय सत्रों व एक माह के युग शिल्पी प्रशिक्षण सत्रों के रूप में चल रही है, अभी भी अनवरत उसमें आने वालों का ताँता लगा रहता है। पहले से ही सब अपनी बुकिंग इसमें करा लेते हैं।

शांतिकुंज को गायत्री तीर्थ का रूप देकर सप्तऋषियों की मूर्तियों की स्थापना १९७८-७९ में की गयी, एक देवात्मा हिमालय विनिर्मित किया गया एवं यहाँ सभी संस्कारों को सम्पन्न करते रहने का क्रम बन गया जो सतत् चल रहा है। नित्य यहाँ दीक्षा, पुंसवन, नामकरण, विद्यारम्भ, यज्ञोपवीत, विवाह, श्राद्ध-तर्पण आदि संस्कार सम्पन्न होते हैं। इस बीच परमवंदनीया माताजी ने जागरण सत्र शृंखलाएँ सम्पन्न करना आरम्भ रखा। देव कन्याओं को प्रशिक्षित कर पूरे भारत में जीप टोलियों में भेजा गया। इनके माध्यम से तीन वर्ष तक भारत के कोने-कोने में तुमुलनाद होता रहा।

शांतिकुंज का गायत्री नगर जो आज एक विराट स्थापना के रूप में, एक एकेडमी के रूप में नजर आता है व जिसमें एक बार में एक साथ दस हजार व्यक्ति एक साथ ठहर सकते हैं, १९८१-८२ में बनना आरम्भ हुआ । विलक्षण, दुर्लभ जड़ी-बूटियों के पौधे यहाँ लगाये गये तथा प्रखर प्रज्ञा-सजल श्रद्धा रूपी तीर्थस्थली का पूज्यवर ने अपने सामने निर्माण कराया। यहीं उनके निर्देशानुसार उनके शरीर छोड़ने पर दोनों सत्ताओं को अग्नि समर्पित की जानी थी। स्वावलम्बन विद्यालय से लेकर एक विशाल चौके का निर्माण एवं गायत्री विद्यापीठ से लेकर भारत के सभी सरकारी विभागों के प्रशिक्षण के तंत्र की स्थापना यहाँ पर की गयी है एवं यह एक जीता-जागता तीर्थ अब बन गया है, जहाँ पर उज्ज्वल भविष्य की पूर्व झलक देखी जा सकती है। कम्प्यूटरों से सज्जित विशाल कार्यालय से लेकर पत्राचार विद्यालय जहाँ नित्य हजारों पत्रों के द्वारा पूरे तंत्र का मार्गदर्शन किया जाता है, यहाँ की विशेषता है।

ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान परमपूज्य गुरुदेव की अभिनव पाँचवीं स्थापना है, जहाँ पर विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय का अभिनव शोध कार्य चल रहा है। इसे १९७१ की गायत्री जयंती पर आरम्भ किया गया था। वर्तमान शांतिकुंज- गायत्री तीर्थ से आधा किलोमीटर दूरी पर गंगातट पर स्थित यह संस्थान अपनी आकर्षक बनावट के कारण सहज ही सबके मनों को मोहकर आमंत्रित करता रहता है। इसमें तीन मंजिलों में प्रथम तल पर एक विज्ञान के उपकरणों से सुसज्जित यज्ञशाला विनिर्मित है तथा चौबीस कक्षों में गायत्री महाशक्ति की चौबीस मूर्तियाँ बीजमंत्रों व उनकी फलश्रुतियों सहित स्थापित हैं। द्वितीय तल पर एक वैज्ञानिक प्रयोगशाला है, जहाँ ऐसे उपकरण स्थापित हैं जो यह जाँच-पड़ताल करते हैं कि साधना से पूर्व व पश्चात्, यज्ञादि मंत्रोच्चारण के पूर्व व पश्चात् क्या-क्या परिवर्तन शरीर-मन की गतिविधियों व रक्त आदि संघटकों में देखने में आये। इनके आधार पर साधकों को साधना संबंधी परामर्श दिया जाता है। यहाँ पर वनौषधियों का विश्लेषण भी किया जाता है तथा यज्ञ ऊर्जा-मंत्र शक्ति का क्या प्रभाव साधक की मस्तिष्कीय तरंगों, जैव विद्युत आदि पर पड़ा, यह देखा जाता है। विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक परीक्षण भी यहाँ किये जाते हैं। तृतीय तल पर एक विशाल ग्रंथागार स्थापित है, जहाँ विश्वभर के शोध प्रबंध वैज्ञानिक अध्यात्मवाद पर एकत्रित किये गये हैं। यहाँ प्राय: ४५००० से अधिक ग्रंथ हैं, जिनमें कई पुरातन पाण्डुलिपियाँ हैं। यह अपने आप में एक अनूठा संकलन है जो और कहीं एक साथ देखने में नहीं मिलता।

परमपूज्य गुरुदेव की उपरोक्त पाँच स्थापनाएँ किसी को भी यह परिचय दे सकती हैं कि किस विलक्षण दृष्टास्तर की वह महासत्ता थी जो हम सबके बीच अपना लीली संदोह रचकर चली गयी। प्रत्यक्ष तो यह केन्द्रीय पाँच स्थापनाएँ नजर आती हैं किन्तु ४८०० से अधिक अपने भवनों वाले प्रज्ञा संस्थान ४०००० से अधिक प्रज्ञामण्डल व स्वाध्याय मण्डल तथा अगणित गायत्री परिवार की शाखाएँ यदि इनमें मिलाई जाएँ तो इनका मूल्य राशि में आँका नहीं जा सकता। यही वह सब है जो उस महापुरुष को एक अवतारी स्तर की सत्ता के रूप में प्रतिष्ठापित करता है व जिसके कर्तृत्व पर श्रद्धावनत होने का मन करता है। ❑❑❑

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य का जीवनदर्शन : समग्र वाङ्मय

परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य ने जीवन भर जो अपनी लेखनी से लिखा, औरों को प्रेरित कर उनसे सृजनात्मक लेखन करवाया, पुस्तकों-पत्रिकाओं में जो प्रकाशित हुआ, समय-समय पर उनने अमृतवाणी के माध्यम से जो विचारों की अभिव्यक्ति की, विचारसार व सूक्तियाँ जो वे लिख गये या अनायास कभी कह गये तथा पत्रों के माध्यम से जो अंतरंग स्पर्श जन-जन को दिया, वह समग्र इस वाङ्मय के खण्डों में है । जिनके नाम इस प्रकार हैं :-

१. युगद्रष्टा का जीवन-दर्शन
समग्र वाङ्मय का परिचय
२. जीवन देवता की साधना-आराधना
३. उपासना-समर्पण योग
४. साधना पद्धतियों का ज्ञान और विज्ञान
५. साधना से सिद्धि-१
६. साधना से सिद्धि-२
७. प्रसुप्ति से जागृति की ओर
८. ईश्वर कौन है, कहाँ है, कैसा है ?
९. गायत्री महाविद्या का तत्त्वदर्शन
१०. गायत्री साधना का गुह्य विवेचन
११. गायत्री साधना के प्रत्यक्ष चमत्कार
१२. गायत्री की दैनिक एवं विशिष्ट अनुष्ठान-परक साधनाएँ
१३. गायत्री की पंचकोशी साधना एवं उपलब्धियाँ
१४. गायत्री साधना की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि
१५. सावित्री, कुण्डलिनी एवं तंत्र
१६. मरणोत्तर जीवन : तथ्य एवं सत्य
१७. प्राणशक्ति : एक दिव्य विभूति
१८. चमत्कारी विशेषताओं से भरा मानवी मस्तिष्क
१९. शब्द ब्रह्म-नाद ब्रह्म
२०. व्यक्तित्व विकास हेतु उच्चस्तरीय साधनाएँ
२१. अपरिमित संभावनाओं का आगार मानवी व्यक्तित्व
२२. चेतन, अचेतन एवं सुपर चेतन मन
२३. विज्ञान और अध्यात्म परस्पर पूरक
२४. भविष्य का धर्म : वैज्ञानिक धर्म
२५. यज्ञ का ज्ञान-विज्ञान
२६. यज्ञ : एक समग्र उपचार प्रक्रिया
२७. युग-परिवर्तन कैसे और कब ?
२८. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-१
२९. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-२
(सतयुग की वापसी)
३०. मर्यादा पुरुषोत्तम राम
३१. संस्कृति-संजीवनी श्रीमद्भागवत एवं गीता
३२. रामायण की प्रगतिशील प्रेरणाएँ
३३. षोडश संस्कार विवेचन
३४. भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्त्व
३५. समस्त विश्व को भारत के अजस्र अनुदान
३६. धर्मचक्र प्रवर्तन एवं लोकमानस का शिक्षण
३७. तीर्थ सेवन : क्यों और कैसे ?
३८. प्रज्ञोपनिषद्
३९. नीरोग जीवन के महत्त्वपूर्ण सूत्र
४०. चिकित्सा उपचार के विविध आयाम
४१. जीवेम शरदः शतम्
४२. चिरयौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य
४३. हमारी संस्कृति : इतिहास के कीर्ति स्तम्भ
४४. मरकर भी अमर हो गये जो
४५. सांस्कृतिक चेतना के उन्नायक : सेवाधर्म के उपासक
४६. भव्य समाज का अभिनव निर्माण
४७. यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता
४८. समाज का मेरुदण्ड सशक्त परिवार तंत्र
४९. शिक्षा एवं विद्या
५०. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-१
५१. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-२
५२. विश्व वसुधा जिनकी सदा ऋणी रहेगी
५३. धर्मतत्त्व का दर्शन व मर्म
५४. मनुष्य में देवत्व का उदय
५५. दृश्य जगत् की अदृश्य पहेलियाँ
५६. ईश्वर विश्वास और उसकी फलश्रुतियाँ
५७. मनस्विता प्रखरता और तेजस्विता
५८. आत्मोत्कर्ष का आधार- ज्ञान
५९. प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा
६०. विवाहोन्माद : समस्या और समाधान
६१. गृहस्थ : एक तपोवन
६२. इक्कीसवीं सदी : नारी सदी
६३. हमारी भावी पीढ़ी और उसका नवनिर्माण
६४. राष्ट्र समर्थ और सशक्त कैसे बने ?
६५. सामाजिक, नैतिक एवं बौद्धिक क्रान्ति कैसे ?
६६. युग निर्माण योजना-दर्शन, स्वरूप व कार्यक्रम
६७. प्रेरणाप्रद दृष्टान्त
६८. पूज्यवर की अमृतवाणी (भाग एक)
६९. विचारसार एवं सूक्तियाँ (प्रथम खण्ड)
७०. विचारसार एवं सूक्तियाँ (द्वितीय खण्ड)

वाङ्मय के आगे प्रकाशित होने वाले ३८ खण्ड निम्न विषयों पर होंगे—

७१. मनोविकारों की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि
७२. तनाव के कारण एवं उनके निवारण के उपाय
७३. चिन्तन का विधेयात्मक-निषेधात्मक स्वरूप
७४. पुरुषार्थ और मानवी जिजीविषा
७५. संकल्प बल का अनूठा प्रभाव
७६. बाल-विकास के विविध सोपान
७७. बाल मनोविज्ञान का सही उपयोग
७८. पारिवारिकता में सुसंस्कारों का योगदान
७९. पारिवारिक पंचशील और परिवार-निर्माण
८०. व्यक्तित्व के विकास की प्रक्रिया
८१. विचार-विज्ञान का महत्त्व
८२. सामाजिक समस्याएँ और उनका समाधान
८३. समाज-निर्माण के विभिन्न चरण
८४. सामाजिक जीवन में सद्गुणों की भूमिका
८५. नर-नारी की सामान्य समस्याएँ और उनका समाधान
८६. नारी जागृति की बाधाएँ एवं उनके निराकरण के उपाय
८७. पारिवारिक जीवन: एक तप-साधना
८८. दाम्पत्य जीवन के संयुक्त दायित्व
८९. नीति-विज्ञान और नैतिकता
९०. कृषि, व्यवसाय और उद्योग की उन्नति के आधार
९१. पूज्य गुरुदेव के स्फुट विचार
९२. पूज्यवर की अमृतवाणी-२
९३. पूज्य गुरुदेव की दिव्य अनुभूतियाँ
९४. पूज्य गुरुदेव के लिखे स्मरणीय पत्र
९५. तंत्र महाविज्ञान विवेचन
९६. मंत्र महाविज्ञान विवेचन
९७. महापुरुषों के प्रेरक जीवन-प्रसंग
९८. प्रेरणाप्रद कथा एवं गाथाएँ
९९. हृदयस्पर्शी विविध कथाएँ
१००. शान्तिकुंज का प्रज्ञा अभियान
१०१. युग निर्माण मिशन का क्रमिक इतिहास
१०२. वेद-सार-चिन्तन
१०३. पुराण-शोध-सार
१०४. उपनिषद् और आरण्यकों की दार्शनिक विषयवस्तु
१०५. काव्य-गीत-मंजूषा
१०६. मिशन के रचनात्मक कार्यक्रमों का क्रमिक इतिहास
१०७. मिशन की लोक-व्यवहार संहिता
१०८. गुरुदेव की अपने आत्मीय जनों से अपनी बातें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org